अनूदित
क़ुरआन मजीद

(संक्षिप्त टीका सहित)

मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी (रह॰)

हिन्दी अनुवाद
मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ

निदा-ए-क़ुरआन
मुम्बई-8.

क़ुरआन मजीद का यह हिन्दी अनुवाद ग़ैरमुस्लिम भाईयों के लिए मुफ़्त में दिए जाने के उद्देश्य से प्रकाशित किया जा रहा है।

**The Hindi translation of Holy Qur'an
Not For Sale.**

प्रकाशक : निदा-ए-क़ुरआन
द्वारा- रिच डेकोर, इक़बाल मसालावाला,
247, मौलाना आज़ाद रोड, ताज मंझिल,
बी.एस.सी. बैंक के सामने, मुम्बई - 400008.
दूरभाष : 23063564
फैक्स : 23087950

1000 / जनवरी : 2007

अनुक्रम

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम।

''अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।''

दो शब्द

प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है जो सारे जहान का रब है, जिसने न सिर्फ़ सारी कायनात (सृष्टि) को पैदा किया बल्कि उसकी सभी आवश्यकताओं को भी पूरा किया। जहाँ उसने मनुष्य के लिए रोटी, कपड़ा और मकान की सुविधाएँ निर्माण की, साथ ही साथ उसके मार्गदर्शन के लिए अपना ग्रंथ क़ुरआन मजीद भी अवतरित किया। इसका संदेश दुनिया के सभी लोगों तक पहुँचाने की ज़िम्मेदारी मुसलमानों पर है। क्योंकि अब कोई नबी या रसूल क़यामत तक दुनिया में नहीं आएगा। इसी अहसास के तहत क़ुरआन मजीद का हिन्दी अनुवाद छापा जा रहा है। इस अनुवाद के साथ आवश्यक स्थलों पर संक्षिप्त टिप्पणी भी सम्मिलित की गई है जो क़ुरआन के समझने में अत्यन्त सहायक होगी और आरम्भ में 'क़ुरआन कैसे पढ़े?' यह विषय-प्रवेश दिया गया है जिस से क़ुरआन समझने में मदद मिलेगी। अल्लाह तआला से दुआँ है कि इस छोटीसी कोशिश को क़बूल फ़रमाए।

जनवरी 2007 **इकबाल मसालावाला**

क़ुआन कैसे पढ़े?

विषय-प्रवेश

'विषय-प्रवेश' शब्द देखकर किसी को यह भ्रम न हो कि मैं क़ुरआन का 'विषय-प्रवेश' लिख रहा हूँ। यह क़ुरआन का नहीं, तफ़हीमुल-क़ुरआन (क़ुरआन-प्रबोध) का 'विषय-प्रवेश' है और इसके लिखने के मेरे सामने दो उद्देश्य हैं :–

एक यह कि क़ुरआन का अध्ययन शुरू करने से पहले एक सामान्य पाठक उन बातों को अच्छी तरह जान ले, जिन्हें आरम्भ ही में समझ लेने से क़ुरआन समझने की राह आसान हो जाती है, वरन् ये बातें पढ़ते समय बराबर खटकती रहती है और कभी-कभी तो इन्हें न समझने के कारण एक व्यक्ति क्यों क़ुरआन के अर्थों की ऊपरी सतह पर घूमता रहा है, गहराई में उतरने का रास्ता उसे नहीं मिलता।

दूसरे यह कि उन प्रश्नों का उत्तर पहले ही दे दिया जाये जो क़ुरआन को समझने की कोशिश करते समय आमतौर से लोगों के मन में पैदा हुआ करते हैं। मैं इस 'विषय-प्रवेश' में केवल उन प्रश्नों का उत्तर दूँगा, जो स्वयं मेरे मन में पहले-पहल पैदा हुए थे, या जिन से बाद में मेरा वासता पड़ा। इनके अलावा अगर कुछ और प्रश्न भी उत्तर देने के लिए बाकी रह गये हों, तो उनकी मुझे सूचना दी जाये, उनका उत्तर, अगर अल्लाह ने चाहा, अगले संस्करण के मौक़े पर इस 'विषय-प्रवेश' में बढ़ा दिया जायेगा।

साधारण रूप से हम जिन पुस्तकों के पढ़ने के आदी हैं, उनमें एक निर्धारित विषय पर जानकारियों, विचारों और दलीलों को एक विशेष क्रम के साथ सिलसिलेवार लिख दिया जाता है। इसी कारण, जब एक ऐसा व्यक्ति, जो क़ुरआन से अभी तक अपरिचित रहा है, पहली बार इसके अध्ययन का इरादा करता है, तो वह यह आशा लेकर आगे बढ़ता है कि ''पुस्तक'' होने की हैसियत से इसमें भी सामान्य पुस्तकों की भांति पहले विषय निर्धारित कर लिया गया होगा, फिर मूल विषय को खंडों और अध्यायों में बाँट कर एक क्रम के साथ एक-एक समस्या पर वार्ता की गई होगी और इसी प्रकार जीवन के एक-एक भाग को भी अलग-अलग लेकर उसके बारे में आदेश व निर्देश दिये गये होंगे। पर जब वह पुस्तक खोल कर अध्ययन करने बैठता है, तो यहाँ उसे अपनी आशा के बिल्कुल विपरीत एक दूसरी ही वर्णन-शैली मिलती है, जिसे वह अब तक बिल्कुल नहीं जानता था। यहाँ वह देखता है कि विश्वास से सम्बन्धित समस्यायें, नैतिक आदेश, शरअी हुक़्म (धर्म-विधान सम्बन्धी आदेश), सन्देश, उपदेश शिक्षा-सामग्री, आलोचना, निन्दा, डरावा, शुभ-सूचना, तसल्ली, दलीलें,

गवाहियां, ऐतिहासिक कहानियां, ब्रह्माण्ड में फैली निशानियों की ओर संकेत, बार-बार एक दूसरे के बाद चले आ रहे हैं। एक ही विषय भिन्न-भिन्न ढंगों से, विभिन्न शब्दों में दुहराया जा रहा है। एक विषय के बाद दुसरा, दूसरे के बाद तीसरा अचानक शुरू हो जाता है, बल्कि एक विषय के बीच में दूसरा विषय भी यकायकी आ जाता है। मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष बार-बार बदलते हैं और सम्बोधन रह-रह कर विभिन्न दिशाओं में फिरता है। अध्यायों, खण्डों और अनुच्छेदों में किसी प्रकार का कोई विभाजन नहीं। इतिहास है तो इतिहास की शैली में नहीं; दर्शन व पार-भौतिकी है, तो दर्शन शास्त्र की भाषा में नहीं; मानव और भौतिक वस्तुओं का उल्लेख है तो भौतिक विज्ञान के ढंग पर नहीं, सभ्यता व संस्कृति, अर्थ व राजनीति की बातें हैं तो सामाजिक विज्ञान के तरीक़े पर नहीं; क़ानून और उसके हुक्मों का बयान है तो क़ानूनदानों के ढंग से बिल्कुल अलग; नैतिकता की शिक्षा है तो नीति-दर्शन के पूरे साहित्य से उसकी शैली भिन्न– यह सब कुछ, 'पुस्तक' के बारे में अपनी पिछली कल्पनाओं के खिलाफ़ पा कर आदमी परेशान हो जाता है और उसे ऐसा भास होने लगता है मानो यह एक ऐसी पुस्तक है, जिसमें न कोई क्रम है, वाक्यों का वाक्यों से न कोई सम्बन्ध है, बिखरी और फैली हुई कुछ राणियां हैं जो शुरू से लेकर आखिर तक अगणित छोटे-बड़े विभिन्न बोलों पर सम्मिलित हैं, पर जिन्हें एक ओर से लिख डाला गया है। विरोधी दृष्टिकोण से देखनेवाला इसी पर नाना प्रकार की आपत्तियों व सन्देहों की नींव रख देता है और हिमायती दृष्टिकोण रखनेवाला कभी अर्थ की ओर से आँखें बन्द करके सन्देहों से बचने की कोशिश करता है, कभी इस प्रत्यक्ष क्रमहीनता के कुछ कारण बता कर अपने मन को समझा लेता है, कभी कृत्रिम रूप से क्रम खोज़ कर विचित्र नतीजे निकालता है और कभी 'छोटे-छोटे अंश' सरीखे सिद्धान्त को स्वीकार कर लेता है, जिसके कारण हर आयत अपने सन्दर्भ में हटकर ऐसे-ऐसे अर्थों का योग बन जाती है जो कहनेवाले के तात्पर्य से भिन्न होती है।

–0–

फिर एक पुस्तक को समझने के लिए जरूरी है कि पढ़नेवाले को उसका विषय मालूम हो, उसके तात्पर्य का ध्येय और उसके केन्द्रीय विषय का ज्ञान हो, उसकी वर्णन-शैली की जानकारी हो, उसकी पारिभाषिक भाषा और उसके विचार व्यक्त करने के ढंग से परिचित हो और उसके वर्णन अपने स्पष्ट वाक्यों के पीछे, जिस स्थिति व परिस्थिति से सम्बन्ध रखते हों, वे भी नजरों के सामने रहें। साधारण रूप से जो पुस्तकें हम पढ़ते है, उनमें ये चीज़ें आसानी से मिल जाती हैं, इसलिए उनके विषयों की तह तक

पहुँचने में हमें कोई बड़ी कठिनाई नहीं होती। पर क़ुरआन में ये चीज़ें उस तरह नहीं मिलती जिस तरह हम दुसरी पुस्तकों में इन्हें पाने के आदी रहे हैं। इसलिए एक सामान्य पाठक की मनोवृत्ति लेकर जब हम में का कोई व्यक्ति क़ुरआन का अध्ययन शुरू करता है तो उसे उसके विषय ध्येय और केन्द्रीय विषय का सिरा नहीं मिलता, उसकी वर्णन-शैली और उसके विचार व्यक्त करने का ढंग भी उसे कुछ अजनबी-सा जान पड़ता है और अधिक स्थानों पर उसके वाक्यों की पृष्ठभूमि भी उसकी निगाहों से ओझल रहती है। नतीजा यह होता है कि विभिन्न आयतों में तत्त्वदर्शिता के जो मोती बिखरे हुये हैं, उनसे कम व बेश फ़ायदा उठाने के बाद भी एक व्यक्ति अल्लाह के कलाम (ईश-वाणी) की मूल आत्मा तक पहुँचने से वंचित रह जाता है और पुस्तक-ज्ञान प्राप्त करने के स्थान पर उसे पुस्तक के कुछ बिखरे-से फ़ायदों पर ही सन्तोष कर लेना पड़ता है, बल्कि अधिक लोग जो क़ुरआन का अध्ययन करके सन्देहों के शिकार हो जाते हैं, उनके भटकने का एक कारण यह भी है कि पुस्तक समझने की इन आवश्यक आरम्भिक बातों से अनभिज्ञ रहकर जब वे क़ुरआन को पढ़ते हैं तो उसके पन्नों पर विभिन्न विषय उन्हें बिखरे हुये दीख पड़ते हैं, अधिकांश आयतों का अर्थ उन पर स्पष्ट नहीं होता, बहुत-सी आयतों को देखते हैं कि वे स्वतः तत्त्वदर्शिता की ज्योति से जगमग-जगमग कर रही हैं, पर आयत के सन्दर्भ में बिल्कुल बेजोड़ महसूस होती हैं। अनेक स्थानों पर अर्थ-बोध और वर्णन शैली से अनभिज्ञता उन्हें मूल अर्थ से हटाकर किसी और दिशा की ओर ले जाती है और अधिक अवसरों पर पृष्ठभूमि का सही ज्ञान न होने से भारी ग़लतफहमियां पैदा हो जाती हैं।

–0–

क़ुरआन किस प्रकार की पुस्तक है? इसके उतरने का विवरण और इसके क्रम का रूप क्या है? इसकी वार्ता का विषय क्या है? इसकी सारी वार्तायें किस उद्देश्य से हैं? किस केन्द्रीय विषय के साथ इसके ये अगणित और विभिन्न प्रकार के विषय सम्बन्ध स्थापित किये हुये हैं? तर्क का क्या ढंग और वर्णन की क्या शैली इसने अपने विचार व्यक्त करने के लिए अपनायी है? ये और ऐसी ही सूसरे कुछ जरूरी प्रश्न हैं निका उत्तर साफ और सीधे ढंग से अगर मनुष्य को आरम्भ ही में मिल जाये तो वह बहुत स खतरों से बच सकता है और उसके लिए सोचने-समझने की राहें खुल सकती हैं। जो व्यक्ति क़ुरआन में पुस्तकों का क्रम खोजता है और वहाँ उसे न पाकर पुस्तक के पन्नों में भटकने लगता है, उसकी परेशानी का मूल कारण यही है कि वह क़ुरआन-अध्ययन की इन आरम्भिक बातों से अनभिज्ञ होता है। वह इस विछार को लेकर अध्ययन शुरू

करता है कि वह धर्म के विषय पर एक ''पुस्तक'' पढ़ने चला है। ''धर्म का विषय'' और ''पुस्तक'' इन दोनों के बारे में उसके मस्तिष्क में कल्पना वही होती हैं जो आमतौर से ''धर्म'' और ''पुस्तक'' के बारे में मस्तिष्कों में पायी जाती हैं। पर जब वहाँ उसे अपने मनः विचारों से बिल्कुल भिन्न एक चीज़ मिलती है तो वह अपने आप में उससे लगाव नहीं पैदा कर पाता और विषय का सिरा हाथ न आने के कारण पंक्तियों में यों भटकना शुरू कर देता है मानो वह एक अजनबी मुसाफ़िर है जो किसी नये शहर की गलियों में खो गया है। इस प्रकार भटकने और बहकने से वह बच जाये, अगर उसे पहले ही य बता दिया जाये कि तुम जिस पुस्तक को पढ़ने जा रहे हो, वह पुरे संसार के साहित्य में अपने ढंग की एक ही पुस्तक है। उसकी 'रचना' संसार की समस्त पुस्तकों से बिल्कुल भिन्न रूप से हुई है, अपने विषय और क्रम के अनुसार भी वह एक अनोखी चीज़ है, इसलिए तुम्हारे मस्तिष्क का वह 'पुस्तक-ढ़ांचा' जो अब तक के पुस्तक-अध्ययनों से बना है, इस पुस्तक के समझने में तुम्हारी सहायता न करेगा, बल्कि उल्टी रुकावट डालेगा। इसे समझना चाहते हो तो अपनी पहले से बनी हुई कल्पनाओं का मस्तिष्क से निकाल रक उसकी अनोखी विशेषताओं से परिचय प्राप्त कर लो।

–0–

इस सिलसिले में सब से पहले पाठक को क़ुरआन के मूल से परिचित हो जाना चाहिये। वह चाहे इस पर ईमान लाये, या न लाये, पर इस पुस्तक को समझने के लिए उसे आरम्भ-बिन्दु के रूप में इसका वही मूल मानना होगा जो स्वयं इसने और इसके पेश करनेवाले (अर्थात मुहम्मद सल्ल०) ने बताया है और वह यह है कि :–

1. विश्व-स्वामी ने, जो सम्पूर्ण सृष्टि का पैदा करनेवाला, स्वामी और शासक है, अपने अपार राज्य के भाग में, जिसे पृथ्वी कहते हैं मनुष्य को पैदा किया। उसे जानने और समझने की शक्तियाँ दीं, भले और बुरे में अन्तर करने की योग्यता दी, चयन और निश्चय की आज़ादी दी, वस्तुओं के उपयोग के अधिकार दिये और सब में एक प्रकार का स्वाधिकार (Autonomy) देकर उसे पृथ्वी में अपना खलीफ़ा (नायब, प्रतिनिधि) बनाया।

2. इस पद पर मनुष्य को नियुक्त करते समय विश्व-स्वामी ने अच्छी तरह उसके कान खोलकर यह बात उसके मस्तिष्क में डाल दी थी कि तुम्हारा ोर पूरे संसार का स्वामी, उपास्य और शासक मैं ही हूँ। मेरे इस राज्य में न तुम स्वाधीन हो, न किसी दूसरे के दास हो और न मेरे सिवा कोई तुम्हारी भक्ति, आज्ञापालन और उपासना का

अधिकारी है। संसार का यह जीवन जिसमें तुम्हें अधिकार देकर भेजा जा रहा है, वास्तव में तुम्हारे लिए एक परीक्षा की मुद्दत है जिसके बाद तुम्हें मेरे पास वापस आना होगा और मैं तुम्हारे कर्मों की जाँच करके फ़ैसला करूँगा कि तुम में से कौन परीक्षा में सफल रहा है और कौन असफल। तुम्हारे लिए सही रवैया यह है कि मुझे अपना एक मात्र उपास्य और शासक मानों, जो आदेश मैं दूँ उसके अनुसार संसार में काम करो, और संसार को परीक्षा-स्थल समझते हुये, खूब सोच-समझ कर इस तरह बिताओ कि तुम्हारा मूल उद्देश्य मेरे अन्तिम निर्णय में सफल होना है। इसके विपरीत तुम्हारे लिए हर वह रवैया ग़लत है जो इस से भिन्न हो। अगर पहला रवैया अपनाओगे (जिसे अपनाने के लिए तुम स्वतन्त्र हो) तो तुम्हें संसार में शान्ति-सन्तोष प्राप्त होगा और जब मेरे पास पलट कर आओगे तो मैं तुम्हें शाश्वत सुख-चैन का वह घर दूँगा, जिसका नाम 'जन्नत' है और अगर दूसरे किसी रवैये पर चलोगे (जिस पर चलने के लिए भी तुमको स्वतन्त्रता है) तो संसार में तुमको बिगाड़ और अशान्ति का मज़ा चखना होगा और इस लोक से गुज़र कर परलोक (आख़िरत) में जब आओगे, तो शाश्वत दुख व कष्ट के उस गढ़े में फैंक दिये जाओगे जिसका नाम 'दोजख' है।

3. यह बताकर के विश्व-स्वामी ने मानव-जाति को ज़मीन में जगह दी और इस जाति के सब से पहले व्यक्ति (आदम और हव्वा) को वे आदेश भी दिये जिसके अनुसार उन्हें उनकी औलाद को ज़मीन में काम करना था। ये प्रथम व्यक्ति अज्ञानता और अन्धकार की स्थिति में पैदा नहीं हुये थे, बल्कि अल्लाह ने पृथ्वी पर उनके जीवन का आरम्भ पूरे प्रकाश में किया था। वे सत्य जानते थे। उन्हें उनका जीवन-विधान बता दिया गया था। उनका जीवन बिताने का तरीक़ा अल्लाह का आज्ञापालन (अर्थात् इस्लाम) था और वे अपने औलाद को यही बात सिखा कर गये कि वे अल्लाह के आज्ञापालक (मुस्लिम) बनकर रहें। लेकिन बाद की सदियों में धीरे-धीरे मनुष्य उस सही जीवन व्यवस्था (दीन) से हटकर विभिन्न प्रकार के ग़लत रवैयों की ओर चल पड़ा उसने ग़फ़लत से इसे गुम भी किया और धृष्टता के साथ इसका रूप भी बदल दिया। उसने अल्लाह के साथ ज़मीन व आसमान के विभिन्न मानवीय व अमानवीय, काल्पनिक व भौतिक अस्तित्वों को अल्लाह का शरीक ठहरा लिया। उसने अल्लाह के दिये हुए सत्य-ज्ञान में भांति-भांति के अन्धविश्वासों, दृष्टिकोणों और सिद्धान्तों की मिलावट करके असंख्यों धर्म पैदा कर लिये। उसने अल्लाह की निर्धारित संस्कृति व सभ्यता के सर्वथा उचित नियमों (शरीअत) को छोड़कर या बिगाड़कर अपनी मनोकामनाओं और अपनी मनः संकीर्णताओं के अनुसार जीवन के ऐसे नियम गढ़ लिये जिनसे अल्लाह की

ज़मीन ज़ुल्म (अन्याय व अत्याचार) से भर गई।

4. अल्लाह ने जो सीमित स्वाधीनता मनुष्य को दी थी, उसके साथ यह बात मेल न खाती थी कि वह अपने पैदा करने के नाते इन बिगड़े हुए मनुष्यों को ज़बरदस्ती सही रवैये की ओर मोड़ देता और उसने संसार में काम करने के लिए जो मुहलत इनके लिए और इनकी विभिन्न जातियों के लिए तय की थी, उसके साथ यह बात भी मेल न खाती थी कि विकार व विद्रोह के पैदा होते ही वह मनुष्यों को हिलाक कर देता। फिर जो काम आदि काल से उसने अपने ज़िम्मे लिया था कि मनुष्य की स्वाधीनता को बाक़ी रखते हुये, उसकी कार्यावधि में, उसके मार्ग-मर्शन का प्रबन्ध वह करता रहेगा, अतएव अपनी इस स्वतः डाली हुई ज़िम्मेदारी को अदा करने के लिए उसने मनुष्यों में से ही ऐसे व्यक्तियों को इस्तेमाल करना शुरू किया जो उस पर ईमान रखनेवाले और उसको प्रसन्नता का पालन करनेवाले थे। उसने इनको अपना नुमाइन्दा बनाया, अपने सन्देश इनके पास भेजे, इन्हें सत्य-ज्ञान दिया, इन्हें सही जीवन-विधान दिया और इन्हें इस काम पर लगाया कि आदम के बेटों को उसी सत्य-मार्ग की ओर पलटने को कहें, जिस से वे हट गये थे।

5. ये पैगम्बर विभिन्न जातियों और देशों में आते रहे, हज़ारों वर्ष तक उनके आने का सिलसिला चलता रहा, हज़ारों की तायदाद में वे भेजे गये, उन सभी का एक ही धर्म था, अर्थात् वह सही रीति, जो पहले दिन ही मनुष्य को बता दी गयी थी। वे एक ही आदेश का पालन करनेवाले थे, अर्थात् नैतिकता व संस्कृति के वे आदिकालिक व अनन्त विधान जो आरम्भ ही में मनुष्य के लिए निश्चित कर दिये गये थे, और उन सब का एक ही मिशन था, अर्थात् यह कि इस धर्म और इस मार्गदर्शन की ओर अपनी जातिवालों को बुलायें, फिर जो लोग इसे स्वीकार कर लें, उन्हें संगठित करके एक ऐसा गिरोह बनायें जो स्वयं अल्लाह के क़ानून का पाबन्द हो और संसार में ईश-विधान का अनुपालन स्थापित करने और इस क़ानून के विरोध को रोकने की कोशिश करे। इस पैग़म्बरों ने अपने-अपने युगों में अपने इस मिशन को भली-भांति पूरा किया, पर सदैव यही होता रहा कि मनुष्यों की एक बड़ी संख्या जो उनके आह्वान को सुनने के लिये तैयार ही न हुई और जिन्होंने उसे सुनकर और मानकर के आज्ञापालक गिरोह का रूप धारण कर लिया, वे धीरे-धीरे स्वयं बिगड़ते चले गये, यहाँ तक कि इनमें से कुछ गिरोह ईश्वरीय आदेश को बिल्कुल ही भुला बैठे और कुछ ने ईश-वाणी को अपने संशोधनों और मिलावटों से बिगाड़ कर रख दिया।

6. अन्त में विश्व-स्वामी ने अरब भू-भाग में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को उसी

काम के लिए भेजा जिसके लिए पिछले नबी आते रहे थे। जन-साधारण को भी वह सम्बोधित कर रहे थे और पिछले नबियों के बिगड़े हुए अनुयायियों को भी। सबको सही रीति की ओर बुलाना, सबको फिर से अलह का आदेश पहुँचाना और जो इस पुकार को सुनें और इस आदेश को स्वीकार करें, उन्हें एक ऐसा गिरोह बना देना उनका काम था जो एक और स्वयं अपने जीवन की व्यवस्था अल्लाह के आदेश के अनुसार स्थापित करे और दुसरी ओर संसार के सुधार के लिए जद्दोजेहद करे– इसी आह्वान व आदेश की पुस्तक यह क़ुरआन है जिसे अल्लाह ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) पर उतारा।

–0–

क़ुरआन की इस वास्तविकता के मालूम हो जाने के बाद पाठकों के लिए यह समझना आसान हो जाता है कि इस पुस्तक का विषय क्या है, इसका केन्द्रीय विषय क्या है और इसका उद्देश्य क्या है।

क़ुरआन का विषय मनुष्य है, इस प्रकार कि वास्तव में उसका हित और अहित किस चीज़ में है।

उसका केन्द्रीय विषय यह है कि प्रकट रूप पर कोई राय बना लेने, कल्पना कर लेने या इच्छा के वश में हो जाने के कारण मनुष्य ने अल्लाह और सृष्टि-व्यवस्था, अपने अस्तित्व और अपने सांसारिक जीवन के बारे में जो सिद्धान्त बनाये हैं, और उन सिद्धान्तों के कारण जो रीति अपना ली है, वह सब वास्तविकता को देखते हुए ग़लत और परिणाम के अनुसार स्वयं मनुष्य ही के लिए विनाशक है। वास्तविकता यह है जो मनुष्य को खलीफ़ बनाते समय अल्लाह ने स्वयं बता दी थी और इस सच्चाई के मुताबिक मनुष्य के लिए वही रीति सही और सुफल है, जिसका पिछले पृष्ठों में हम 'सही रीति' के नाम से उल्लेख कर चुके हैं।

उसका उद्देश्य मनुष्य को उस सही रीति की ओर बुलाना और अल्लाह के उस आदेश व सन्मार्ग को स्पष्ट रूप से पेश करना है जिसे मनुष्य अपनी ग़फ़लत से गुम और अपनी दुष्टता से रूप-विकृत करता रहा है।

न तीन बुनियादी बातों को मन में बिठाकर कोई व्यक्ति क़ुरआन को देखे तो उसे साफ़ दीख पड़ेगा कि यह पुस्तक कहीं भी अपने विषय, अपने उद्देश्य और केन्द्रीय विषय से तनिक भी नहीं हटी है। आरम्भ से लेकर अन्त तक उसके नाना प्रकार के विषय उसके केन्द्रीय विषय के साथ इस तरह जुड़े हुये हैं मानों के हार के छोटे-बड़े रंग-बिरंगे जवाहर की लड़ियों में पिरोये हुए हों। यह ज़मीन व आसमान की बनावट पर, मनुष्य की

पैदाइश पर, सृष्टि के चिह्नों के निरीक्षण पर और बीती हुई जातियों की घटनाओं पर वार्ता करता है; विभिन्न जातियों के विश्वास, चरित्र व आचरण पर आलोचना करता है, पारभौतिक मामलों व समस्याओं की व्याख्या करता है, और बहुत सी दूसरी चीज़ों का उल्लेख भी करता है पर इसलिए यहीं कि उसे भौतिकी या इतिहास या दर्शन या किसी और शास्त्र की शिक्षा देनी है, बल्कि इसलिए कि उसे वास्तविकता के बारे में मनुष्य की ग़लतफ़हमियाँ दूर करनी हैं, मूल वास्तविकता लोगों के मन में बिठानी है, अवास्तविक रीति की ग़लती और दुष्फल को स्पष्ट करना है और उस रीति की ओर बुलाना है जो वास्तविता के अनुसार और सफल है। यही कारण है कि वह हर वस्तु का उल्लेख केवल उस सीमा तक और उस शैली में करता है जो उसके उद्देश्य के लिए आवश्यक है। सदैव इन वस्तुओं का वर्णन आवश्यकतानुसार करने के बाद, अनावश्यक विस्तारों में आये बिना अपने उद्देश्य और केन्द्रीय विषय की ओर पलट आता है और उसका पूरा बयान बड़ी ही एकरूपता के साथ सन्देश की धुरी पर घूमता रहता है।

–0–

पर क़ुरआन की वर्णन-शैली, उसके क्रम और उसके विषय को मनुष्य उस समय तक अच्छी तरह नहीं समझ सकता जब तक कि वह उसके अवतरण की स्थिति को भी भली-भाँति न समझ ले।

यह क़ुरआन इस प्रकार की पुस्तक नहीं है कि अल्लाह ने एक ही समय में इसे लिखकर मुहम्मद (सल्ल॰) को दे दिया हो और कह दिया हो कि इसे प्रकाशित करके लोगों को एक विशेष जीवन-पद्धति की ओर बुलायें। साथ ही यह इस प्रकार की पुस्तक भी नहीं है कि इसमें लेखकीय शैली पर पुस्तक के विषय और केन्द्रीय विषय के बारे में वार्ता की गई हो। यही कारण है कि इसमें न लेखकीय क्रम पाया जाता है और न पुस्तकों जैसी शैली। वास्तव में यह इस प्रकार की पुस्तक है कि अल्लाह ने अरब के नगर मक्का में अपने एक दास को पैग़म्बरी की सेवा के लिए चुना और उसे हुक्म दिया कि अपने शहर और अपने क़बीले (क़ुरैश) से सन्देश पहुँचाने की शुरुआत करे। यह काम शुरू करने के लिए आरम्भ में जिन आदेशों की जरूरत थी, केवल वही दिये गये और वे अधिकतर तीन विषयों पर सम्मिलित थे :–

एक, पैग़म्बर को इस बात की शिक्ष कि वे स्वयं अपने आपको इस महानतम कार्य के लिए किस तरह तैयार करें और किस ढंग से काम करें।

दूसरे, वास्तविकता के बारे में आरम्भिक जानकारियाँ और उसके बारे में

ग़लतफहमियों का निवारण, जो आस-पास के लोगों में पाई जाती थीं, जिनके कारण उनका रवैया ग़लत हो रहा था।

तीसरे सही रवैये की ओर आह्वान और ईश-सन्मार्ग के उन मूल नैतिक सिद्धान्तों का वर्णन जिनके अनुपालन में मनुष्य का कल्याण है।

शुरू-शुरू के ये सन्देश आरम्भिक स्थिति की अनुकूलता से छोटे-छोटे संक्षिप्त बोलों पर सम्मिलित होते थे जिनकी भाषा अति शुद्ध, अति मृदु, अति प्रभावकारी और सम्बोधित जाति के स्वभावानुसार अति साहित्यिक रंग लिये हुये होती थी ताकि दिलों में ये बोल बाण की तरह चुभ जायें, कान स्वतः उनके संगीत से आकृष्ट हों और जुबानें उनके सुसन्तुलित होने के कारण अनचाहे उन्हें दुहराने लगें। फिर उनमें स्थानीय रंग अधिक था। यद्यपि वर्णन तो हो रहा था विश्वव्यापी तथ्यों का, पर उनके लिये दलीलें, गवाहियां और उदाहरम उस निकटतम वातावरण से लिये गये थे जिस से सम्बोधित वर्ग अच्छी तरह परिचित था। उन्हीं का इतिहास, उन्हीं की परिपाटियां, उन्हीं के रोजाना के तजुर्बे में आनेवाली निशानियाँ और उन्हीं के विश्वास सम्बन्धी दुर्गुणों पर और नैतिक व सामुहिक दोषों पर सारी वार्तायें होती थीं ताकि वे उस से प्रभावित हो सकें।

आह्वान का यह आरम्भिक काल लगभग चार-पाँच वर्ष तक जारी रहा और इस काल में नबी (सल्ल०) के प्रचार की प्रतिक्रिया तीन रूपों में प्रकट हुई :–

(1) कुछ सदाचारी लोग इस आह्वान के उत्तर में 'मुस्लिम' गिरोह बनने के लिए तैयार हो गये।

(2) एक बड़ी संख्या अज्ञानता या स्वार्थपरायणता या बाप-दादों की रीति से लगाव के कारण विरोध पर तैयार हो गई।

(3) मक्का और क़ुरैश की सीमाओं से निकल कर यह नयी आवाज़ अपेक्षतः अधिक विस्तृत क्षेत्र में पहुँचने लगी।

–0–

यहाँ से इस आह्वान का दूसरा चरण शुरू होता है। इस चरण में इस्लाम के इस आन्दोलन और पुरानी अज्ञानता के बीच एक कठोर प्राणघातक संघर्ष शुरू हुआ जिसका सिलसिला आठ सौ वर्ष तक चलता रहा। न केवल क़ुरैश के क़बीले में, बल्कि अरब के अधिकांश भागों में जो लोग पुरानी अज्ञानता को बाक़ी रखना चाहते थे, वे इस आन्दोलन को सशक्ति मिटाने पर तुल गये। उन्होंने इसे दबाने के लिए सारी चालें चल डालीं, झूठा प्रोपगन्डा किया, आरोपों, सन्देहों और आपत्तियों की वर्षा की। जन-

साधारण के दिलों में भांति-भांति के भ्रम पैदा किये, अनजान लोगों को नबी (सल्ल०) की बात सुनने से रोकने की कोशिशें की, इस्लाम स्वीकार करनेवालों पर अति बर्बरतापूर्ण अत्याचार किये, उनका आर्थिक व सामाजिक बहिष्कार किया और उन्हें इतना सताया कि उसमें से बहुत से लोग दो बार अपने घर छो'कर हब्श की ओर प्रस्थान कर जाने पर विवश हुये और अन्ततः तीसरी बार उन सबको मदीने की ओर प्रस्थान कर जाना पड़ा। पर इस प्रबल और दिन प्रतिदिन बढ़ती कठिनाइयों के बाद भी यह आन्दोलन ज़ोर पकड़ता गया। मक्के में कोई परिवार और कोई घर ऐसा न रहा जिसके किसी न किसी सदस्य ने इस्लाम स्वीकार न कर लिया हो। इस्लाम के अधिकांश विरोधियों के विरोध और शत्रुता में दृढ़ता और कटुता पैदा होने का कारण यही था कि उनके अपने भाई, भतीजे, बेटे, बेटियाँ, बहनें और बहनोई इस्लामी सन्देश के न केवळ माननेवाले, बल्कि प्राण तक न्यौछावर करनेवाले हामी हो गये थे और उनके वंश व परिवारवाले ही उनसे संघर्षरत होने पर उतारू थे। फिर मज़े की बात तो यह है कि जो लोग पुरानी अज्ञानता से टूट-टूट कर इस नव-अंकुरित आन्दोलन की ओर आ रहे थे, वे पहले भी अपनी सोसाइटी के सब से अच्छे लोग समझे जाते थे और इस आन्दोलन में शामिल होने के बाद तो इतने नेक, इतने सच्चरित्र, इतने सदाचारी बन जाते थे कि संसार उस सन्देश व सिद्धान्त की श्रेष्ठता महसूस किये बिना रह नहीं सकता था, जो ऐसे लोगों को अपनी ओर खींच रहा था और यह कुछ बना रहा था।

इस दीर्घकालीन और प्रबल संघर्ष के युग में अल्लाह यथा अवसर और यथा आवश्यकता अपने नबी पर ऐसे जोशीले भाषण अवतीर्ण करता रहा जिनमें नदी जैसा बहाव, बाढ़ जैसी शक्ति और धधकती आग जैसा प्रभाव था। उन भाषणों ने एक ओर ईमानवालों को उनके आरम्भिक कर्तव्य बताये गये, उनके भीतर सामूहिक चेतना पैदा की गई, उन्हें संयम, चरित्र-महत्त्व और आचरण की शुद्धता की शिक्षा दी गई, उन्हें सत्य-धर्म के प्रचार के तरीक़े बताये गये, सफलता के वायदों और जन्नत की शुभ-सूचनाओं से उनमें साहस पैदा किया गया, उन्हें जमाव, ठहराव और उत्साह के साथ अल्लाह की राह में जद्दोजेहद करने पर उभारा गया और प्राण पर खेल जाने का एक प्रबल जोश और हौसला उसमें पैदा किया गया कि वे हर कष्ट को झेल जाने और विरोध की बड़ी से बड़ी आँधियों का मुक़ाबला करने के लिए तैयार हो गये। दूसरी ओर विरोधियों, सन्मार्ग से विमुख होनेवालों और ग़फ़लत की नींद सोनेवालों को उन जातियों के कुपरिणामों से डराया गया जिनका इतिहास वे स्वयं जानते थे, उन नष्ट-विनष्ट की गई आबादियों के चिह्नों से शिक्षा लेने को कहा गया, जिनके खंडरों पर से रात व दिन

अपनी अपनी यात्राओं में नका गुज़र होता था, तौहीद (एकेश्वरवाद) और आख़िरत (परलोक) की दलीलें उन खुली-खुली निशानियों से दी गई जो रात-दिन, आकाश और पृथ्वी में उनकी आँखों के सामने घूमती रहती थीं और जिन्हें वे अपने जीवन में भी हर समय देखते और महसूस करते थे, शिर्क (बहुदेववाद) स्वच्छन्दता के दावे, आख़िरत से इन्कार और बाप-दादों की रीतियों पर अनुगमन सरीखी, ग़लतियां ऐसी खुली दलीलों से स्पष्ट की गई जो मन में बैठ जाने और मस्तिष्क में उतर जानेवाली थीं, फिर उनके एक-एक भ्रम का निवारण किया गया, एक-एक आपत्ति का उचित उत्तर दिया गया, एक-एक उलझन, जिनमें वे स्वयं पड़े हुये थे, या दूसरों को उलझाने की कोशिश करते थे, साफ़ की गई और हर ओर से घेर कर अज्ञानता को ऐसा तंग पकड़ा गया कि बुद्धि व विवेक-जगत में उसके लिए ठहरने की कोई जगह बाक़ी न रही। इसके साथ फिर उसकी अल्लाह के प्रकोप, क़ियामत की भयावहता और जहन्नम के अज़ाब का डर याद दिलाया गया, उनके दुराचारों, ग़लत जीवन-रीतियों, अज्ञानतापूर्ण रस्मों, सत्य-शत्रुता और मुसलमानों को कष्ट पहुँचाने पर उनकी निन्दा की गई और संस्कति व सभ्यता के वे मूलाधार उनके सामने रखे गये जिन पर सदा से अल्लाह को प्रिय शुद्ध सभ्यताओं का निर्माण होता चला आ रहा है।

यह युग स्वतः विभिन्न मंजिलों पर सम्मिलित था, जिनमें से हर मंज़िल में इस्लाम-सन्देश अधिक विस्तृत होता चला गया, जद्दोजेहद के साथ-साथ विरोध में भी अथिक तेज़ी आ गयी, विभिन्न विश्वासों और नाना प्रकार की कार्य-पद्धतियों के रखने वाले गिरोहों से वासता पड़ता गया, और उसी के अनुसार अल्लाह की ओर से आनेवाले सन्देश में नाना प्रकार के विषय बढ़ते गये– यह है क़ुरआन मजीद की मक्की सूरतों की पृष्ठभूमि।

–0–

मक्के में इस आन्दोलन को अपना काम करते हुये तेरह वर्ष बीत चुके थे कि यकायकी मदीने में उसको एक ऐसा केन्द्र मिल गया जहाँ उसके लिए यह सम्भव हो गया कि अरब के तमाम भागों से अपने अनुयायियों को समेट कर एक जगह अपनी शक्ति जुटा ले। अतएव नबी (सल्ल॰) और अधिकतर इस्लाम के अनुयायी हिजरत करके मदीना पहुंच गये। इस तरह यह आह्वान तीसरे चरण में प्रवेश कर गया।

इस चरण में परिस्थितियों का रूप बिल्कुल बदल गया। मुस्लिम गिरोह एक नियमित राज्य की नींव डालने में सफल हो गया। पुरानी अज्ञानता के ध्वजावाहकों से

सशस्त्र मुक़ाबला हुआ, पिछले नबियों के गिरोहों (यहूदियों व ईसाइयों) का भी सामना करना पड़ा। स्वयं मुस्लिम गिरोह की आन्तरिक व्यवस्था में विभिन्न प्रकार के कपटाचारी (मुनाफ़िक़) घुस आये और उनसे भी निबटना पड़ा और दस साल के घोर संघर्ष से गुजर कर अन्त में यह आन्दोलन सफ़लता की इस मंज़िल पर पहुँचा कि पूरा अरब उसके आधीन हो गया और विश्वसुधार के द्वार उसके सामने खुल गये। इस चरण की भी विभिन्न मंज़िलें थीं और हर मंज़िल में इस आन्दोलन को प्रमुख आवश्यकतायें थीं। इन आवश्यकताओं के अनुसार अल्लाह की ओर से ऐसे भाषण नबी (सल्ल॰) पर अवतरित होते रहे जिनकी शैली कभी आग्नेय वक्ताओं की, कभी राजकीय आदेशों की, कभी शिक्षकों के शिक्षा देने की, कभी सुधारकों के समझाने-बुझाने की होती थी। इनमें बताया गया कि सामुहिकता, राज्य और शुद्ध संस्कृति का निर्माण किस तरह किया जाये, जीवन के विभिन्न विभागों को किन नियमों व सिद्धान्तों पर व्यवस्थित किया जाये, कपटाचारियों (मुनाफ़िक़ों) से क्या व्यवहार हो, राज्य के ग़ैरमुस्लिमों से क्या बर्ताव हो, किताबवालों से सम्बन्धों का क्या रूप रहे, लड़ रहे शत्रुओं और समझौता कर लेनेवाली जातियों के साथ क्या रीति अपनाई जाये और ईमानवालों का यह सुसंगठित गिरोह संसार में अल्लाह के प्रतिनिधित्व (खिलाफ़त) के कर्तव्य निभाने के लिए अपने-आपको किस तरह तैयार करे। इन भाषणों में एक ओर मुसलमानों की शिक्षा-दीक्षा की जाती थी, उनकी कमज़ोरियों पर उन्हें सचेत किया जाता था, उनको अल्लाह की राह में जान व माल से जिहाद करने पर उभारा जाता था, उनको विजय और पराजय, सुख-दुःख, खुशहाली-बदहाली, शान्ति और भय, तात्पर्य यह कि हर स्थिति में उसी के अनुकूल सदाचरण का पाठ पढ़ाया जाता था और उन्हें इस तरह तैयार किया जाता था कि वे नबी (सल्ल॰) के बाद आपके उत्तराधिकारी बन कर इस काम को पूरा कर सकें। दूसरी ओर उन लोगों को जो ईमानवाले नहीं थे– किताबवाले, मुनाफ़िक़ (कपचारारी), काफ़िर व मुश्रिक, सबको उनके अलग-अलग हालात के मुताबिक समझाने, नरमी से सन्देश पहुँचाने, सख़्ती से निन्दा करने और उपदेश देने, अल्लाह के अज़ाब से डराने और शिक्षाप्रद घटनाओं व स्थितियों से शिक्षा दिलाने की कोशिश की जाती थी ताकि उन पर युक्ति पूरी हो जाये।

यह है क़ुरआन मजीद की उन सूरतों की पृष्ठभूमि जो मदीने में उतरी हैं।

–0–

इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि क़ुरआन एक आह्वान के साथ उतरना शुरू हुआ और वह आह्वान अपने आरम्भ से लेकर अपने पूर्ण होने तक 23 साल की मुद्दत

में जिन-जिन मरहलों और मंजिलों से गुज़रता रहा, उनकी विभिन्न आवश्यकताओं के अनुसार क़ुरआन के विभिन्न अंश उतरते रहे। स्पष्ट है कि ऐसी पुस्तक में, लेखकीय क्रम नहीं हो सकता जो डाक्ट्रेट की डिग्री लेने के लिए किसी प्रबन्ध में अपनाया जाता है। फिर इसके प्रसार के साथ-साथ क़ुरआन के जो छोटे और बड़े अंश अवतरित हुये वे भी निबन्धों के रूप में नहीं होते थे बल्कि भाषणों के रूप में वर्णित होते और इसी रूप में फैलाये जाते थे। इसलिए उनकी शैली भी निबन्धों जैसी न थी, बल्कि भाषणों की शैली थी। फिर ये भाषणें भी एक प्रोफेसर के लेक्चरों जैसे नहीं, बल्कि एक सन्देशवाहक के भाषणों जैसे थे, जिसे मन व मस्तिष्क, बुद्धि व भावना, हरेक से अपील करना होता है, जिसे हर प्रकार की मनोवृत्तिवालों से वासता पड़ता है, जिसे अपने सन्देश-प्रचार व प्रसार और व्यावहारिक आन्दोलन के सिलसिले में नाना प्रकार की अगणित परिस्थितियों में काम करना पड़ता है, हर सम्भव तरीक़े से अपनी बात दिलों में बिठाना, विचारों की दुनिया बदलना, भावनाओं को उद्वेलित करना, विरोधियों का ज़ोर तोड़ना, साथियों को सुधारना, उन्हें प्रशिक्षित करना, उनमें उत्साह भरना, दुश्मनों को दोस्त, इन्कारियों को इक़रारी बनाना, विरोधियों की उक्तियों को तोड़न, उनकी नैतिक शक्ति की जड़ काटना; तात्पर्य यह कि उसे वह सब कुछ कना होता है जो एक आह्वानकर्ता और एक आन्दोलन के नेता के लिए जरूरी है। इसलिए अल्लाह ने इस काम के सिलसिले में अपने पैग़म्बर पर जो भाषण उतारे उनकी शैली वही थी कि एक आह्वान लगानेवाले के लिए उपयुक्त होती है, उसमें कालेज के लेक्चरों जैसी शैली खोज़ना सही नहीं है।

–0–

यहीं से वह बात भी अच्छी तरह समझ में आ सकती है कि क़ुरआन में विषयों की इतनी पुनरावृत्ति क्यों है। एक आन्दोलन और उसके प्रसार का स्वाभाविक तक़ाज़ा यह है कि वह जिस समय जिस मरहले में हो, उस में वही बातें कही जायें जो उस मरहले के लिए उपयोगी हों, जब तक आन्दोलन एक मरहले की बातों को दुहराया जाता रहे भले ही उसमें कुछ महीने लगे या साल। फिर अगर एक ही प्रकार की पुनरावृत्ति एक ही शैली, और एक ही ढंग पर की जाती रहे तो कान उन्हें सुनते-सुनते थक जाते हैं और लोग उबने लगते हैं, इसलिये यह भी ज़रूरी है कि हर मरहले में जो बातें बार-बार कहनी हों, उन्हें हर बार नये शब्द, नई शैली, और नये ढंग से कहा जाये ताकि अति मनमोहक ढंग से वह दिलों में बैठ जाये और आन्दोलन की एक-एक मंज़िल भली-भांति दृढ़ होती चली जाये। साथ ही यह भी ज़रूरी है कि आह्वान जिन विश्वासों और सिद्धान्तों के आधार

पर हो, उन्हें पहले क़दम से आख़िरी मंज़िल तक किसी समय और किसी दशा में भी नज़रों से ओझल न होने दिया जाये। बल्कि उनकी पुनरावृत्ति हर हाल में आन्दोलन के हर-हर मरहले में होती रहे। यही कारण है कि इस्लामी आन्दोलन के एक चरण में क़ुरआन की जितनी सूरतें उतारी हैं, उन सब में सामान्यतः ेक ही जैसे विषय, शब्द और शैली बदल-बदल कर आये हैं, पर तौहीद (एकेश्वरवाद), अल्लाह के गुण, आख़िरत (परलोक) और उसकी जवाबदेही, जजा व सज़ा (पुरस्कार व दण्ड), रिसालत (ईश-दूतत्व), किताब पर ईमान, संयम (सब्र), अल्लाह पर भरोसा और इस प्रकार वे दूसरे भौतिक विषयों की पुनरावृत्ति पूरे क़ुरआन में नज़र आती है, क्योंकि इस आन्दोलन के किसी चरण में भी उन से चूक भी पसन्द नहीं की जा सकती थी। ये मौलिक धारणायें अगर तनिक भी कमज़ोर हो जातीं तो इस्लाम का यह आन्दोलन अपनी सही आत्मा के साथ नहीं चल सकता था।

–0–

अगर विचार किया जाये तो इसी बात से यह प्रश्न भी हल हो जाता है कि नबी (सल्ल॰) ने क़ुरआन को उसी क्रम के साथ क्यों न संग्रहीत कर दिया जिसके साथ वह उतारा था।

उत्तर आपको मालू हो चुका है कि 23 साल तक क़ुरआन उस क्रम से उतरता रहा जिस से आन्दोलन का आरम्भ और उसका प्रसार हुआ। अब यह स्पष्ट है कि आन्दोलन के पूरे हो जाने के बाद इन अवतीर्ण अंशों के लिए वह क्रम कैसे भी सही नहीं हो सकता था जो केवल सन्देश-प्रसार ही के साथ उपयुक्त हो सकता था। अब तो उनके लिए एक दूसरा क्रम ही चाहिये था, जो आन्दोलन-समाप्ति के बाद की परिस्थितियों के लिए अधिक उपयुक्त हो, क्योंकि आरम्भ में उन लोगों को सम्बोधित किया गया था जो इस्लाम से बिल्कुल ही अनभिज्ञ थे, इस लिये उस समय बिल्कुल आरम्भ से शिक्षा-उपदेश शुरू किया गया, पर आन्दोलन के पूरे हो जाने के बाद उन लोगों को सम्बोधित किया गया जो एक उम्मत (गिरोह, सम्प्रदाय) बन चुके थे और उस काम को जारी रखने के ज़िम्मेदार समझे गये थे जिसे पैग़म्बर ने आचार-विचार दोनों हैसियतों में पूर्ण करके उनके सुपुर्द किया था। अब निश्चित रूप से पहली चीज़ यह हो गई कि पहले ये लोग स्वयं अपने कर्तव्यों से, अपने जीवन-सिद्धान्तों से और उन बिगाड़ों से जो पिछले पैग़म्बरों के अनुयायिों में पैदा होते रहे हैं, भली-भांति परिचित हो लें, फ़िर इस्लाम से अपरिचित संसार के सामने अल्लाह का सन्मार्ग स्पष्ट करने के लिए आगे बढ़ें।

इसके अलावा क़ुरआन मजीद जिस प्रकार की पुस्तक है, उसे अगर आदमी अच्छी तरह समझ ले तो स्वयं ही यह वास्तविकता मालूम हो जायेगी कि एक-एक प्रकार के विषयों का एक-एक जगह इकट्ठा करना, इस पुस्तक के स्वभाव से ही मेल नहीं खाता। इस स्वभाव का तक़ाज़ा तो यही है कि इसके पढ़नेवाले के सामने मदनी मरहले की बातें मक्की युगवाली शिक्षा के मध्य और मक्की मरहले की बाते मदनी युगवाले भाषणों के मध्य और आरम्भिक वार्तायें अन्त के उपदेशों के बीच में और अन्तिम युग के आदेश आरम्भिक काल की शिक्षाओं के पहलू में बार-बार आती चली जायें, ताकि इस्लाम का पूरा रूप व चित्र उसकी दृष्टि में रहे और किसी समय भी वह एकांगी न होने पाये।

फिर अगर क़ुरआन को उसके उतरने के क्रम पर संकलित किया जाता तो वह क्रम बात के लोगों के लिए केवल उसी दशा में सार्थक हो सकता था जबकि क़ुरआन के साथ उसके ुतरने का पूरा इतिहास और उसके एक-एक अंश के साथ उसके उतरने का विवरण व कारण लिखकर लगा दिया जाता और वह अनिवार्य रूप से क़ुरआन का एक परिशिष्ट बन कर रहता। यह बात उस उद्देश्य के विरूद्ध थी जिसके लिए अल्लाह ने अपनी वाणी का यह संग्रह संकलित व सुरक्षित कराया था। वहां तो यही चीज़ सामने थी कि अल्लाह की विशुद्ध वाणी, बिना किसी दुसरी वाणी की मिलावट के या सम्मिलन के, अपने संक्षिप्त रूप में संकलित हो, जिसे बच्चे, जवान, बूढ़े, औरत, मर्द, शहरी, देहाती, जन-साधारण, विद्वान सभी पढ़े, हर ज़माने में और हर जगह हर हालत में पढ़े और बुद्धि व विवेक के हर स्तरवाला व्यक्ति कम से कम यह बात ज़रूर जान ले कि उसका स्वामी उससे क्या चाहता है और क्या नहीं चाहता। खुली बात है यह उद्देश्य लुप्त हो जाता अगर ईश-वाणी के इस संकलन के साथ एक लम्बा-चौड़ा इतिहास भी लगा हुआ होता और उसका पढ़ना भी अनिवार्य कर दिया जाता।

सच तो यह है कि क़ुरआन के वर्तमान क्रम पर जो लोग आपत्ति करते हैं वे लोग इसके ध्येय व उद्देश्य को न केवल नहीं जानते, बल्कि कुछ इस भ्रम में पड़े जान पड़ते हैं कि यह पुस्तक इतिहास और सामाजिक ज्ञान के छात्रों मात्र के लिए ही उतरी है।

–0–

क़ुरआन-क्रम के सिलसिले में यह बात भी पाठकों को मालूम रहनी चाहिये कि यह क्रम बाद के लोगों का बनाया हुआ नहीं है, बल्कि स्वयं अल्लाह के आदेशानुसार नबी (सल्ल०) ही ने क़ुरआन को इस रूप में संकलित किया था कि जब कोई सूरः

उतरती तो आप उसी समय अपने कातिबों (लिखनेवालों) में से किसी को बुलाते और ठीक-ठीक लिखवा देने के बाद हिदायत कर देते कि यह सूरः फ्लां सूरः के बाद और फ्लां सूरः से पहले रखी जाये। इसी प्रकार अगर क़ुरआन का कोई ऐसा अंश उतरता जिसे स्थायी सूरः बनाना न होता तो आप हिदायत कर देते थे कि इसे फ्लां सूरः में फ्लां जगह लिख दिया जाये। फिर उसी क्रम से आप स्वयं भी नमाज़ में और दूसरे मौक़ों पर क़ुरआन मजीद का पाठ करते थे और उसी क्रम के अनुसार आपके साथी भी उसे याद करते थे। इसलिए यह एक प्रमाणित ऐतिहासिक तथ्य है कि क़ुरआन मजीद का अवतरण जिस दिन पूरा हुआ, उसी दिन उसका क्रम भी पूरा हो गया। जो इसे अवतरित कर रहा था, वही इसे संकलित भी कर रहा था। जिस व्यक्ति पर वह उतारा गया, उसी के हाथों उसे संकलित भी करा दिया गया। कोई दूसरा समर्थ ही नहीं था कि उसमें हस्तक्षेप करता।

–0–

चूँकि नमाज़ शुरू ही से मुसलमानों पर फ़र्ज़ (अनिवार्य) थी (स्पष्ट रहे कि पाँच वक्त की नमाज़ तो आपके नबी होने के कई साल बाद फ़र्ज़ हुई, पर नमाज़ स्वतः पहले दिन ही से फ़र्ज़ थी। इस्लाम की ऐसी कोई घड़ी कभी नहीं गुज़री है जिसमें ुमा फ़र्ज़ न हो।) और क़ुरआन-पाठ को नमाज़ का`क आवश्यक अंग समझा गया था, इसलिए क़ुरआन के अवतरण के साथ ही मुसलमानों में क़ुरआन याद करने का सिलसिला चल पड़ा और जैसे-जैसे क़ुरआन उतरता गया, मुसलमान उसे याद भी करते चले गये। इस प्रकार क़ुरआन की सुरक्षा का आश्रय मात्र खजूर के उन पत्तों और हड्डी और झिल्ली के उन टुकड़ों ही पर न था जिन पर नबी (सल्ल०) अपने कातिबों से उसे लिखवाया करते थे, बल्कि वह उतरते ही बीसियों, फिर सैकड़ों, फिर हज़ारों, फिर लाखों हृदय-पटल पर अंकित हो जाता था और किसी शैतान के लिए यह सम्भव न रहता था कि इसमें एक शब्द का भी हेर-फेर कर सके।

नबी (सल्ल०) के देहावसान के बाद जब अरब में धर्म-विमुखता का तुफ़ान उठा और उसका मुक़ाबला करने के लिए सहाबियों (आपके साथियों) को बड़ी घमासान की लड़ाइयाँ लड़नी पड़ी तो इन लड़ाइयों में ऐसे सहाबियों की एक बड़ी संख्या काम आ गई जिन्हें पूरा क़ुरआन याद था। इस से हज़रत उमर (रज़ि०) को विचार हुआ कि क़ुरआन की सुरक्षा के मामले में केवल एक ही साधन पर भरोसा कर लेना उचित नहीं है, बल्कि हृदय-पटल पर अंकित होने के साथ-साथ काग़ज के पृष्ठों पर भी उसे सुरक्षित करने का प्रबन्ध कर लेना चाहिये। अतएव इस काम की ज़रूरत उन्होंने हज़रत

अबूबक्र (रज़ि॰) से बयान की और उन्होंने कुछ संकोच के बाद इससे सहमत होकर हज़रत ज़ैद इब्न साबित अन्कारी को, जो नबी (सल्ल॰) के कातिब रह चुके थे, इस सेवा पर नियुक्त किया। नियम यह बनाया गया कि एक ओर तो वे तमाम लिखे हुए अंश जुटाये जायें जो नबी (सल्ल॰) ने छोड़े हैं, दूसरी ओर सहाबियों में से भी जिस-जिसके पास क़ुरआन या उसका कोई अंश लिखा हुआ मिले, वह उनसे ले लिया जाये। (विश्वसनीय कथनों से ज्ञात होता है कि हुज़ूर (सल्ल॰) के जीवन में अनेकों सहाबियों ने क़ुरआन को या उसके विभिन्न अंश को अपने पास लिख छोड़ा था। अतएव इस सिलसिले में हज़रत उसमान, अली, अब्दुल्लाह इब्न मसऊद, अब्दुल्लाह इब्न अम्र इब्न आस, सालिम मौला हुज़ैफ़ा, ज़ैद इब्न साबित, मुआज़ इब्न जबल, उबई इब्न कअब और अबू ज़ैद क़ैस इब्नुशशक्कन (रज़ि॰) नामों का विवरण मिलता है।) और फिर क़ुरआन के हाफ़ज़ों से भी मदद ली जाये और इन तीनों साधनों की सर्वसम्मत गवाही पर, बिल्कुल सही होने का इत्मीनान करने के बाद क़ुरआन का एक-एक शब्द ग्रन्थ में अंकित कर दिया जाये। इस प्रस्ताव के अनुसार क़ुरआन मजीद की एक प्रमाणित प्रति तैयार करके उम्मुल मोमिनीन हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) के यहाँ रखवा दिया गया और लोगों को आम इजाज़त दे दी गई कि जो चाहे इसकी नक़ल करे और जो चाहे इससे मिलाकर अपनी प्रति ठीक कर ले।

अरब के विभिन्न क्षेत्रों और क़बीलों की बोलियों में वैसे ही अन्तर पाये जाते थे जैसे हमारे देश में नगर-नगर की बोली और ज़िले-ज़िले की बोली में अन्तर है, हालांकि भाषा सब की वही एक उर्दू या पंजाबी या बंगाली आदी है। क़ुरआन मजीद यद्यपि उतरा उस भाषा में था जो मक्का में क़ुरैश के लोग बोलते थे, पर आरम्भ में इस बात की इजाज़त दे दी गई थी कि दूसरे क्षेत्रों और क़बीलों के लोग अपने-अपने स्वर और मुहावरे के अनुसार उसे पढ़ लिया करें, क्योंकि इस प्रकार अर्थ में कोई अन्तर नहीं पड़ता था, मात्र शब्द व वाक्य उनके लिए नरम हो जाते थे, पर धीरे-धीरे जब इस्लाम फैला और अरब के लोगों ने अपने रेगिस्तान से निकल कर संसार के एक बड़े भाग पर विजय प्राप्त कर ली और दूसरी जातियों के लोग भी इस्लाम में दाखिल होने लगे और बड़े पैमाने पर अरब व ग़ैर-अरब के मिलन से अरबी भाषा पर भी प्रभाव पड़ने लगा तो यह भय पैदा हुआ कि अगर अब भी दूसरे स्वरों और मुहावरों के अनुसार क़ुरआन पढ़ने की इजाज़त बाक़ी रही तो इससे भाँति-भाँति के उपद्रव खड़े हो जायेंगे, जैसे यह कि एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को अपरिचित स्वर में अल्लाह की वाणी का पाठ करते हुए सुनेगा और यह समजकर उससे लड़ पड़ेगा कि वह जान-बुझकर अल्लाह की वाणी में बिगाड़

पैदा कर रहा है। या यह कि शब्दों के ये मतभेद धीरे-धीरे वास्तव में क़ुरआन में घट-बढ़ का रास्ता खोल देंगे या यह कि अरब व ग़ैर-अरब के मेल से जिन लोगों की भाषा बिगड़ेगी, वे अपनी बिगड़ी हुई भाषा के अनुसार क़ुरआन में हेर-फेर करके उसके सौन्दर्य को चौपट कर देंगे। इन कारणों से हज़रत उसमान (रज़ि॰) ने सहाबियों के मश्विरे से यह तै किया कि तमाम इस्लामी देशों में केवल क़ुरआन को उस प्रमाणित प्रति को छापा जाये जो हज़रत अबूबक्र के हुक्म से लिपिबद्ध किया गया था और शेष तमाम दूसरे स्वरों और मुहावरों पर लिखे हुए ग्रथों या अंशो का प्रकाशन रोक दिया जाये।

आज जो क़ुरआन हमारे हाथों में है, यह ठीक-ठीक उसी ग्रन्थ के अनुसार है जो हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ ने तैयार कराया और जिसकी नक़ल हज़रत उसमान (रज़ि॰) ने सरकारी प्रबन्ध में तमाम इलाक़ों में भिजवाई थीं। इस समय भी संसार के अनेकों स्थलों पर क़ुरआन की वे प्रमाणित प्रतियाँ मौजूद हैं। किसी को अगर क़ुरआन के सुरक्षित होने में तनिक भी सन्देह हो तो वह अपना सन्तोष इस प्रकार कर सकता है कि पश्चिमी अफ़रीका में किसी पुस्तक विक्रेता से क़ुरआन की एक प्रति ख़रीदे और जावा में किसी हाफ़िज़ से ज़ुबानी क़ुरआन सुनकर उसका मुक़ाबला करे और फिर संसार की बड़ी-बड़ी लाइब्रेरियों में हज़रत उसमान के समय से लेकर आज तक विभिन्न शताब्दियों के लिखे हुये जो ग्रन्थ रखे हैं, उनसे इसका मुक़ाबला करे। अगर किसी अक्षर या किसी शोशे का अन्तर वह पाये तो उसका कर्तव्य है कि संसार को इस सब से बड़े ऐतिहासिक पहस्योद्घाटन से अवश्य सूचित करे। कोई शंकाकुल व्यक्ति क़ुरआन के अल्लाह की ओर से आया हुआ ग्रन्थ होने में सन्देह करना चाहे तो कर सकता है, पर यह बात कि जो क़ुरआन हमारे हाथ में है वह बिना किसी कमीवेशी के वही क़ुरआन है जो अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल॰) ने दुनिया के सामने पेश किया था, यह तो एक ऐसा ऐतिहासिक तथ्य है जिसमें किसी शंका की गुंजाइश ही नहीं है। मानव-इतिहास में कोई दूसरी चीज़ ऐसी नहीं पाई जाती जो इतनी प्रमाणित हो। अगर कोई व्यक्ति उसके सही होने में सन्देह करता है तो वह फिर इसमें भी सन्देह कर सकता है कि रोमन साम्राज्य भी कभी संसार में रह चुका है, कभी मुग़ल भी भारत पर राज्य कर चुके हैं और 'नेपोलियन' नाम का कोई व्यक्ति भी संसार में पाया गया है। ऐसे-ऐसे ऐतिहासिक तथ्यों पर सन्देह प्रकट करना ज्ञान का नहीं, अज्ञानता का प्रमाण है।

–0–

क़ुरआन एक ऐसी पुस्तक है जिसकी ओर संसार में अगणित व्यक्ति अगणित उद्देश लेकर आते हैं। इन सब की ज़रूरतों और उद्देश्यों को सामने रखकर कोई मश्विरा

देना मनुष्य के लिए सम्भव नहीं है। ऐसे लोगों की भीड़ में मुझे केवल उन लोगों से दिलचस्पी है जो इसको समझना चाहते हैं और यह मालूम करने के इच्छुक हैं कि यह पुस्तक मनुष्य की जीवन-समस्याओं में उसकी क्या रहनुमाई करती है। ऐसे लोगों को मैं यहाँ क़ुरआन के अध्ययन के तरीक़े के बारे में कुछ मश्विरे दूँगा और कुछ उन कठिनाइयों को दूर करने की कोशिश करूँगा जो आमतौर से पाठक के सामने इस मामले में आ ही जाती हैं।

कोई व्यक्ति चाहे क़ुरआन पर ईमान रखता हो या न रखता हो, बहरहाल अगर वह इस पुस्तक को वास्तव में समझना चाहता है तो सब से पहला काम उसे यह करना चाहिये कि अपने मस्तिष्क को पहले से बनाई हुई धारणाओं व दृष्टिकोणों से और पक्ष या विपक्ष के स्वार्थों से जिस हद तक सम्भव हो खाली कर ले और समझने का विशुद्ध उद्देश्य लेकर खुले मन से उसको पढ़ना शुरू करे। जो लोग कुछ प्रमुख विचारों को मन में लेकर इस पुस्तक को पढ़ते हैं, वे इसकी पंक्तियों में अपने ही विचार पढ़ते चले जाते हैं, क़ुरआन की नको हवा भी नहीं लगने पाती। अध्ययन का यह तरीक़ा किसी भी पुस्तक के पढ़ने के लिए सही नहीं है; पर मुख्य रूप से क़ुरआन तो इस तरीक़े से पढ़नेवालों के लिए अपने अर्थों के द्वार खोलता ही नहीं।

फिर जो व्यक्ति मात्र काम भर की जानकारी जुटाना चाहता हो, उसके लिए तो शायद एक बार का पढ़ लेना काफ़ी हो जाए पर जो उसकी गहराइयों में उतरना चाहे, उसके लिए दो-चार बार का पढ़ना भी काफ़ी नहीं हो सकता। उसे बार-बार पढ़ना चाहिये, हर बार एक खास ढंग से पढ़ना चाहिए और एक छात्र की तरह पेन्सिल और कापी साथ लेकर बैठना चाहिये ताकि ज़रूरी बातें नोट करता जाये। इस तरह जो लोग पढ़ने पर तैयार हों उनको कम से कम दो बार पूरे क़ुरआन केवल इस ध्येय से पढ़ना चाहिए कि उनके सामने सामूहिक रूप से आचार-विचार की वह पूरी व्यवस्था आ जाये जिसे यह ग्रन्थ सामने लाना चाहता है। इस आरम्भिक अध्ययन के समय वह क़ुरआन के पूरे दृश्य पर एक व्यापक दृष्टि डालने की कोशिश करें और यह देखते जायें कि यह ग्रन्थ क्या मौलिक धारणायें प्रस्तुत करता है और फिर इन धारणाओं पर किस प्रकार की जीवन-व्यवस्था का निर्माण करता है। इस बीच अगर किसी स्थान पर कोई प्रश्न मन में खटके तो उस पर वहीं उसी समय कोई फ़ैसला न कर बैठे बल्कि उसे नोट कर लें और सब्र के साथ आगे अध्ययन जारी रखें। अधिक सम्भावना इसी की है कि आगे कहीं न कहीं उन्हें इसका उत्तर मिल जाये तो अपने प्रश्न के साथ इसे नोट कर लें, पर अगर प्रथम अध्ययन के समय उन्हें अपने किसी प्रश्न का उत्तर न मिले, तो सब्र के साथ दूसरी

बार पढ़ें। मैं अपने अनुभव के आधार पर यह कहता हूँ कि दूसरी बार के गूढ़ अध्ययन में बहुत कम प्रश्न ऐसे रहते हैं जिसका उत्तर न मिल चुका हो।

इस प्रकार क़ुरआन पर एक व्यापक दृष्टि डाल लेने के बाद विस्तृत अध्ययन का आरम्भ करना चाहिए। इस सिलसिले में पाठक को क़ुरआनी शिक्षाओं का एक-एक पहलू मन में बिठाकर के नोट करते जाना चाहिए, जैसे वह इस बात को समझने की कोशिश करे कि मानवता का कौन-सा आदर्श है जिसे क़ुरआन प्रिय समझता है और किस आदर्श के लोग उसके नजदीक प्रकोप के भागी हैं और ठुकराए हुए हैं। इस बात को अच्छी तरह बुद्धिगम्य करने के बाद उसे चाहिए कि अपनी कापी पर 'प्रिय-व्यक्ति' और दूसरी ओर 'अप्रिय व्यक्ति' की विशेषतायें आमने-सामने नोट करता चला जाये। या जैसे वह यह मालूम करने की कोशिश करे कि क़ुरआन के नज़दीक मनुष्य की मुक्ति का आश्रय किन बातों पर है और क्या चीज़ें हैं जिन्हें वह मनुष्य के लिए घाटा, तबाही और बरबादी का कारण समझता है। इस विषय को भी सविस्तार जानने का सही तरीक़ा यह है कि मनुष्य अपनी कापी पर 'लाभ और घाटे' के कारण सरीखे दो शीर्षक एक दूसरे के मुक़ाबले में लिख ले और क़ुरआन के अध्ययन के समय हर दिन दोनों प्रकार की चीज़ें नोट करता चला जाये। इसी प्रकार विश्वास, नैतिकता, अधिकार, कर्तव्य, सामाजिकता, संस्कृति, अर्थ, राजनीति, सभ्यता, अनुशासन-व्यवस्था, सन्धि, लड़ाई और दूसरी जीवन-समस्याओं में से एक-एक के बारे में क़ुरआन के आदेशों को नोट करता चला जाये और यह समझने की कोशिश करे कि इसमें से हर-हर विभाग का सामूहिक रूप क्या बनता है और फिर इन सबको मिलाकर जोड़ देने से पूरा जीवन-चित्र किस प्रकार का बनता है।

फिर जब मनुष्य किसी विशेष जीवन-समस्या के बारे में खोज करना चाहे कि क़ुरआन का दृष्टिकोण उसके बारे में क्या है, तो उसके लिए सब से अच्छा तरीक़ा यह है कि पहले वह इस समस्या के बारे में पुराने व नए साहित्य का गहरा अध्ययन करके स्पष्ट रूप से यह मालूम कर ले कि इस समस्या की मौलिक बातें क्या हैं, मनुष्य ने अब तक उस पर क्या कुछ सोचा और समझा है, क्या समामले इसमें हल करने के हैं ौर कहां जाकर मानव-चिन्तन की गाड़ी अटक जाती है। इसके बाद इन्हीं हल करने योग्य समस्याओं को निगाह में रखकर मनुष्य को क़ुरआन का अध्ययन करना चाहिए। मेरा अनुभव है कि इस प्रकार जब मनुष्य किसी समस्या की छान-बीन के लिए क़ुरआन पढ़ने बैठता है तो उसे ऐसी-ऐसी आयतों में अपने प्रश्नों का उत्तर मिलता है जिन्हें वह इस से पहले बीसियों बार पढ़ चुका होता है और कभी उसके मन में भी यह बात नहीं आती कि

यहां यह विषय भी छिपा हुआ है।

–0–

पर क़ुरआन समझने के इन उपायों के बावजूद मनुष्य क़ुरआन की आत्मा से पूरी तरह भिज्ञ नहीं होने पाता जब तक कि व्यावहारिक रूप से वे काम न करे जिसके लिए क़ुरआन आया है। यह मात्र सिद्धान्तों और विचारों की पुस्तक नहीं है कि आप आराम कुर्सी पर बैठकर उसे पढ़ें और उसकी सारी बातें समझ जायें। यह संसार की आम धर्म-धारणा के अनुसार एक कोरी धर्म-पुस्तक भी नहीं है कि मदरसे और खानक़ाह में उसके सारे मर्म समझ लिए जायें। जैसा कि इस 'विषय प्रवेश' के आरम्भ में बताया जा चुका है, यह एक आह्वान और आन्दोलन की पुस्तक है। इसने आते ही एक मौन प्रकृति के अति सुशील व्यक्ती को एकान्त से निकाल कर अल्लाह से विमुख संसार के मुक़ाबले में ला खड़ा किया, असत्य के खिलाफ़ उससे आवाज़ उठवाई और समय के विधर्मियों व अवज्ञाकारियों से उसे लड़ा दिया। घर-घर से एक-एक पवित्र आत्मा और शुद्ध मनवालों को खींच-खींच कर लाई और सत्य का आह्वान करनेवाले के अंडे तले इस सबको इकट्ठा किया। कोने-कोने से एक-एक उपद्रवी को भड़का कर उठाया और सत्य के हामियों से उनकी लड़ाई कराई। एक अकेले व्यक्ति की पुकार से अपना काम शुरू करके अल्लाह की 'खिलाफ़त' की स्थापना तक पूरे 23 साल तक यही किताब उस महान आन्दोलन की रहनुमाई करती रही और सत्य-असत्य के इस दीर्घकालीन और प्राणघातक संघर्ष के मध्य एक-एक मंज़िल और एक-एक मरहले पर इसी ने विनाश का ढंग और निर्माण के रूप बताये। अब भला यह कैसे सम्भव है कि आप सिरे से कुफ़्र और दीन के झगड़े और इस्लाम और अज्ञानता (जाहिलियत) के संघर्ष के मैदान में क़दम ही न रखें, इस संघर्ष की किसी मंज़िल से गुज़रने का आपको संयोग ही न हुआ हो और फिर मात्र क़ुरआन के शब्द पढ़-पढ़ कर उसको सारी हकीक़तें आपके सामने खुलकर आ जायें इसे तो पूरी तरह आप उसी समय समझ सकते हैं जब इसे लेकर उठें और अल्लाह की ओर आह्वान का काम शुरू करें और जिस-जिस तरह यह पुस्तक रहनुमाई करती जाये, उस-उस तरह क़दम उठाते चले जायें। तब वे सारे तजुर्बे आपको पेश आयेंगे जो क़ुरआन उतरने के वक्त पेश आये थे। मक्का, हब्श और तायफ़ की मंज़िलें भी आप देखेंगे और बदर व उहद से लेकर हुनैन और तबूक तक के मरहले भी आपके सामने आयेंगे, अबूजहल और अबूलहब से भी आपको वासता पड़ेगा, मुनाफ़िक़ (भ्रष्टाचारी) और यहूदी भी आपको मिलेंगे और पहले ईमान लानेवालों से लेकर उन लोगों तक कि जिनका मन जीत लिया गया हो, सभी तरह के मानव-आदर्श

आप देख भी लेंगे। यह एक और ही प्रकार का 'सुलूक' है जिसे मैं 'सुलूके क़ुरआनी' कहता हूँ। इस सुलूक की शान यह है कि जिस मंज़िल से आप गुज़रते जायेंगे, क़ुरआन की कुछ आयतें और सूरतें स्वयं सामने आकर आपको बताती चली जायेंगी कि वे इसी मंज़िल में उतरी थीं और यह हिदायत लेकर आई थीं। उस समय यह तो सम्भव है कि शब्द, व्याकरण और भावार्थ सम्बन्धी कुछ बातें 'सालिक' की निगाह से छिपी रह जायें, पर यह सम्भव नहीं है कि क़ुरआन अपनी आत्मा को उसके सामने खोलकर लाने में कंजूसी कर जाये।

फिर इस सिद्धान्त के अनुसार क़ुरआन के आदेश, उसकी नैतिक शिक्षायें, उसकी आर्थिक व सांस्कृतिक हिदायतें और जीवन के विभिन्न पहलुओं के बारे में उसके बताये हुये नियम व सिद्धान्त उस समय तक मनुष्य की समझ में आ ही नहीं सकते जब तक कि वह व्यावहारिक रूप से उसे बरत कर न देखे। न वह व्यक्ति इस पुस्तक को समझ सकता है जिसने अपने व्यक्तिगत जीवन को उसकी पैरवी से आज़ाद कर रखा हो और न वह जाति इससे परिचित हो सकती है जिस की सारी ही सामुहिक संस्थायें उसके बताये हुये रवैये के खिलाफ़ चल रही हों।

–0–

क़ुरआन के इस दावे को हर छोटा-बड़ा जानता है कि वह तमाम मानव-जाति की रहनुमाई के लिये आया है, पर जब कोई व्यक्ति उसको पढ़ने बैठता है तो देखता है कि उसका रुख अधिकतर अपने उतरने के समय के अरबवासियों की ओर है। यद्यपि कभी-कभी वह मानव-जाति और जन-साधारण को भी पुकारता है, पर अधिक बातें वह ऐसी कहता है जो अरबों के स्वभाव, अरब ही के वातावरण, अरब ही के इतिहास और अरब ही की रस्म व रिवाज से सम्बन्ध रखती हैं। इन चीज़ों को देखकर वह सोचने लगता है कि जो चीज़ जन-साधारण की हिदायत के लिए उतारी गयी थी, उसमें सामाजिक, स्थानीय और राष्ट्रीय तत्त्व इतना अधिक क्यों है? इसकी वास्तविकता को न समझने के कारण कुछ लोग सि भ्रम में पड़ जाते है कि शायद यह चीज़ वास्तव में तो अपने समकालीन अरबों ही के सुधार के लिए थी, पर बाद में जबरदस्ती खींच तान कर इसे तमाम मनुष्यों के लिए और सदा के लिए 'हिदायत की किताब' क़रार दे दिया गया।

जो व्यक्ति यह आपत्ति मात्र आपत्ति के लिए नहीं करता, बल्कि सच में उसे समझना चाहता है, उसे मैं मश्विरा दूंगा कि वह पहले स्वयं क़ुरआन को पढ़कर तनिक उन स्थानों पर निशान लगाये जहाँ उसने कोई ऐसा विश्वास या विचार या धारणा प्रस्तुत

की हो या कोई ऐसा नैतिक सिद्धान्त, या व्यावहारिक नियम बयान किया हो जो मात्र अरब के लिए मुख्य हो और जिसे वक़्त, ज़माने और जगह ने वास्तव में सीमित कर रखा हो। मात्र यह बात कि वह एक मुख्य जगह या जमाने के लोगों को सम्बोधित करके उनके अनेकेश्वरवादी विश्वासों और रस्मों का खण्डन करता है और उन्हीं के आस-पास की चीज़ों की तर्क-सामग्री के रूप में लेकर तौहीद (एकेश्वरवाद) की दलीलें ले जाता है, यह निर्णय कर देने के लिए काफ़ी नहीं है कि उसका आह्वान और उसकी अपील भी सामयिक और स्थानीय है। देखना यह चाहिये कि शिर्क के खण्डन में जो कुछ कहता है क्या वह संसार के हर शिर्क पर उसी तरह सही नहीं उतरता जिस तरह अरब के मुश्रिकों के शिर्क पर सहीं उतरता था? क्या इन्हीं दलीलों को हम हर ज़माने और हर देश के मुश्रिकों के विचार-सुधार के लिए इस्तेमाल नहीं कर सकते? और क्या तौहीद साबित करने के लिए क़ुरआन की तर्क-पद्धति को थोड़े से रद्दोबदल के साथ हर वक़्त हर जगह काम में नहीं लाया जा सकता? अगर ुत्तर 'हाँ' में है तो फिर कोई कारण नहीं कि एक विश्व-व्यापी शिक्षा को केवल इस कारण सामयिक व स्थानीय समझ लिया जाये कि एक मुख्य समय में एक मुख्य जाति को सम्बोधित करके वह प्रस्तुत की गयी थी। संसार का कोई भी दर्शन, कोई भी जीवन-व्यवस्था और कोई भी विचार-धारा ऐसी नहीं है जिसकी सारी बातें आदि से अन्त तक भावनात्मक (Abstract) शैली में पेश की गयी हों और निश्चित दशा या रूप पर उसे फिट करके उनकी व्याख्या न की गयी हो, ऐसी शैली एक तो सम्भव नहीं है और सम्भव हो भी तो जो वस्तु इस ढंग से प्रस्तुत की जायेगी वह केवल कागज़ के पृष्ठों पर रह जायेगी, मनुष्यों के जीवन में उसका समन्वय होकर एक व्यावहारिक व्यवस्था में तबदील होना कठिन है।

फिर किसी सैद्धान्तिक, नैतिक व सांस्कृतिक आन्दोलन को अगर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर फैलाना हो तो इसके लिए भी अनिवार्य रूप से यह ज़रूरी नहीं है, बल्कि सच तो यह है कि लाभप्रद भी नहीं है कि शुरू ही से उसको बिल्कुल ही अन्तर्राष्ट्रीय बनाने की कोशिश की जाये। वास्तव में इसका सही व्यावहारिक रूप केवल एक ही है और वह यह कि जिन विचारों, सिद्धान्तों और नियमों पर वह आन्दोलन मानव-जीवन की व्यवस्था को स्थापित करना चाहता है, उन्हें पूरी शक्ति के साथ स्वयं उस देश के सामने लाया जाये जहाँ उसका आह्वान हो रहा हो, उन लोगों के मन में बिठाने की कोशिश की जाये जिनकी भाषा, स्वभाव और प्रवृत्तियों व रुझानों से उस आन्दोलन के चलानेवाले भली भाँति परिचित हों और फिर अपने ही देश में उन सिद्धान्तों को व्यवहार रूप में लाकर और उन पर एक सफल जीवन-व्यवस्था चलाकर संसार के सामने नमूना पेश

किया जाये, तभी दूसरी जातियां उसकी ओर ध्यान देंगी और उनके बुद्धि-जीवी लोग स्वयं आगे बढ़कर उसे समझने और अपने देश में रिवाज देने की कोशिश करेंगे। इसलिये मात्र यह बात कि किसी आचार-विचार-व्यवस्था को शुरू में एक ही जाति के सामने प्रस्तुत किया गया था, और तर्क का सारा ज़ोर उसी के समझाने और सन्तुष्ट करने पर लगा दिया गया था, इस बात की दलील नहीं है कि आचार-विचार-व्यवस्था मात्र राष्ट्रीय है। वास्तव में जो विशेषतायें एक राष्ट्रीय व्यवस्था को एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यरश्था से और एक सामयिक व्यवस्था को एक सार्वकालिक व्यवस्था से अलग करती हैं वे ये हैं कि राष्ट्रीय व्यवस्था या तो एक राष्ट्र या जाति की श्रेष्ठता और उसके हक़ों की दावेदार होती है या अपने भीतर कुछ ऐसे सिद्धान्त और नियम रखती है जो दूसरी जातियों में नहीं चल सकते। इसके विपरीत जो व्यवस्था अन्तर्राष्ट्रीय होती है वह तमाम मनुष्यों को बराबर का दर्जा और बराबर के हक़ देने को तैयार होती है और उसके सिद्धान्तों में भी विश्व-व्यापकता पाई जाती है। इसी प्रकार एक सामयिक व्यवस्था अनिवार्य रूप से अपनी नींव कुछ ऐसे सिद्धान्तों पर रखती है जो समय की कुछ पलटियों के बाद अव्यावहारिक हो जाते हैं और इसके विपरीत एक सार्वकालिक व्यवस्था के सिद्धान्त तमाम बदलती हुई परिस्थितीयों पर फिट होते चले जाते हैं। इन विशेषताओं को निगाह में रखकर कोई व्यक्ति स्वयं क़ुरआन को पढ़े और उन चीज़ों को तनिक निर्धारित करने की कोशिश करे जिनके आधार पर वास्तव में यह अनुमान किया जा सकता है कि क़ुरआन की प्रस्तुत की हुई व्यवस्था सामयिक और राष्ट्रीय है।

–0–

क़ुरआन के बारे में यह बात भी एक सामान्य पाठक के कान में पड़ी हुई होती है कि यह एक विस्तृत आदेश-पत्र और क़ानून की किताब है। पर जब वह उसे पढ़ता है तो उसमें समाज, संस्कृति, अर्थ और राजनीति आदि से सम्बन्धित विस्तृत आदेश व नियम उसे नहीं मिलते, बल्कि वह देखता है कि नमाज़ और ज़कात जैसे फ़र्ज़ के बारे में, जिन पर क़ुरआन बार-बार इतना ज़ोर देता है, उसने कोई ऐसा नियम नहीं बनाया है जिस में तमाम आवश्यक आदेशों का सविस्तार विवरण हो। यह चीज़ मनुष्य के मन में खलबली पैदा करती है कि आखिर यह किस अर्थ में 'आदेश-पत्र' (हिदायत नामा) है।

इस मामले में सारी उलझन केवल इसलिये पैदा होती है कि मनुष्य की दृष्टि से वास्तविकता का एक पहलू बिल्कुल ओझल रह जाता है अर्थात् यह कि अल्लाह ने सिर्फ़ किताब ही नहीं उतारी थी, बल्कि एक पैग़म्बर भी भेजा था। अगर असल स्कीम यह हो कि बस निर्माण का एक नक़्शा लोगों को दे दिया जाये और लोग उसके अनुसार

स्वयं बिल्डिंग बना लें, तो इस स्थिति में निस्सन्देह निर्माण के एक-एक भाग का सविस्तार विवरण हमें मिलना चाहिये, पर जब निर्माण सम्बन्धी आदेश के साथ-साथ एक इन्जीनियर भी सरकारी तौर से नियुक्त कर दिया जाये और वह इन आदेशों के अनुसार एक इमारत बनाकर खड़ी कर दे, तो फिर इन्जीनियर और उसकी बनाई हुई इमारत को छोड़कर नक़्शे ही में तमाम छोटी-बड़ी चीज़ों को खोजना, और फिर उसे न पा कर नक़्शे की अपूर्णता का शिकवा करना ग़लत है। क़ुरआन धाराबद्ध क़ानून की किताब नहीं है बल्कि सिद्धान्त व नियम की किताब है। उसका असल काम यह है कि इस्लामी व्यवस्था के सैद्धान्तिक व नैतिक आधारों को पूरी व्याख्या के साथ न केवल यह कि सामने लाये, बल्कि बौद्धिक तर्क और भावनात्मक अपील, दोनों तरीक़े से खूब दृढ़ कर दे। अब रहा इस्लामी जीवन का व्यावहारिक रूप, तो इस मामले में वह मनुष्य की रहनुमाई इस तरीक़े से नहीं करता कि जीवन के एक-एक पहलू के बारे में विस्तृत नियम व अधिनियम बनाये, बल्कि वह हर जीवन-विभाग की चौहद्दी बता देता है और स्पष्ट रूप से कुछ स्थानों पर शिलायें खड़ी कर देता है जो यह बात निश्चित कर देती है कि अल्लाह की इच्छा के अनुसार इन विभागों की स्थापना व निर्माण किन लाइनों पर होनी चाहिये। इन आदेशों के अनुसार व्यावहारिक रूप से इस्लामी जीवन की रूप-रेखा बनाना नबी (सल्ल॰) का काम था। उन्हें नियुक्त ही इसलिए किया गया था कि संसार को उस व्यक्तिगत चरित्र व आचरण और उस समाज और राज्य का आदर्श दिखा दें जो क़ुरआन के दिए हुये सिद्धान्तों की व्यावहारिक व्याख्या हो।

–0–

एक और प्रश्न जो आमतौर से लोगों के मन में खटकता है, वह यह है कि एक ओर तो क़ुरआन उन लोगों की अत्यन्त निन्दा करता है जो अल्लाह की किताब आ जाने के बाद फ़िरक़ाबन्दी और विरोधाभास में पड़ जाते हैं और अपने धर्म के टुकड़े कर डालते हैं और दूसरी ओर क़ुरआनी आदेश की व्याख्या में केवल बाद के लोगों में ही नहीं, इमामों, सहाबा के बाद के लोगों और स्वयं सहाबियों तक के बीच इतने मतभेद पाए जाते हैं कि शायद आदेशवाली कोई एक भी आयत ऐसी न मिलेगी जिसकी एक व्याख्या सर्वमान्य हो। क्या ये सभी लोग उस निन्दा के अधिकारी हैं जो क़ुरआन में आई है? अगर नहीं तो फिर वह कौन सी फ़िरक़ाबन्दी और विरोधाभास है जिस से क़ुरआन रोकता है?

यह एक अति व्यापक समस्या है, जिसकी विस्तृत वार्ता का यह मौक़ा नहीं है। यहाँ क़ुरआन के एक सामान्य छात्र की उलझन दूर करने के लिए केवल इतना इशारा

काफ़ी है कि क़ुरआन उस स्वस्थ मतभेद का विरोधी नहीं है जो धर्म में एक मत और इस्लामी गिरोह में 'एक' रहते हुये मात्र आदेशों व नियमों का विस्तृत रूप निर्धारित करने में निष्ठापूर्ण खोज के आधार पर किया जाये, बल्कि वह न्दिा उस मतभेद की करता है जो स्वार्थपूर्ण हो और सन्देहपूर्ण दृष्टि से शुरू हो और फ़िरक़ाबन्दी और आपसी झगड़ों तक बात पहुँचा दे। ये दोनों प्रकार के मतभेद न अपनी वास्तविकता में समान हैं और न अपने परिणामों में एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं कि दोनों को एक ही लकड़ी से हाँक दिया जाये। पहली प्रकार का मतभेद तो तरक़्क़ी की जान और जीवन की आत्मा है। वह हर उस समाज में पाया जायेगा जो बुद्धि व विवेक रखनेवाले लोगों पर सम्मिलित हो। उसका पाया जाना जीवन है और उससे खाली सिर्फ वही सोसाइटी हो सकती है जो बुद्धिजीवियों से नहीं बल्कि लकड़ी के कुन्दों से बनी हो। रहा दूसरे प्रकार का मतभेद तो पूरा जगत जानता है कि इसने जिस गिरोह में भी सिर उठाया, उसे टुकड़े-टुकड़े कर के छोड़ा, इसका प्रकट होना स्वास्थ्य न्हीं रोग है और इसके फल कभी किसी उम्मत (गिरोह) के हक़ में भी लाभप्रद नहीं हो सकते। इन दोनों प्रकार के मतभेदों का अन्तर स्पष्ट रूप से यों समझिये कि :–

एक प्रकार तो यह है जिसमें अल्लाह और रसूल के आज्ञापालन पर गिरोह के सब लोग सहमत हों, आदेशों का स्रोत भी सर्व सम्मत से क़ुरआन ॊर सुन्नत को माना जाये फिर दो आलिम किसी आंशिक समस्या की खोज में, या दो क़ाजी किसी मुक़दमें के फ़ैसले में एक-दूसरे से मतभेद करें पर इनमें से कोई भी न तो इस समस्या को और इसमें अपनी राय को धर्म का आधार बनाये और न इससे मतभेद करनेवाले को विधर्मी कह दें बल्कि दोनों अपनी दलीलें देकर अपनी हद तक खोज का हक़ अदा कर दें और यह बात जन-मत पर या अगर अदालती मामला हो तो देश की आखिरी अदालत पर या अगर सामाजिक मामला हो तो समाज-व्यवस्था पर चोड़ दे कि वह दोनों रायों में से जिसे चाहे स्वीकार करे या दोनों को जायज़ रखे।

दूसरी प्रकार यह है कि मतभेद सिरे से धर्म की बुनियादों ही में हो या यह कि कोई आलिम या सूफ़ी या मुफ़्ती या मुतकल्लिम (तर्कशास्त्र का ज्ञाता) या नेता किसी ऐसी समस्या के बारे में, जिसे अलह और रसूल ने धर्म को मूल समस्या नहीं बताई थी, एक राय अपनाये और खामखाही खींच-तान कर उसे धर्म की मूल समस्या बना डाले और फिर जो उस से मतभेद करे उसे विधर्मी कह डाले और अपने समर्थकों का जत्था बनाकर कहे कि असल इस्लाम के अनुयायों बस ये हैं और बाक़ी सब विधर्मी हैं, जहन्नमी हैं और हांक-पुकार कर कहे कि मुस्लिम है तो बस इस जत्थे में आजा, वरन् तू मुस्लिम ही नहीं

है।

कुरआन ने जहाँ कहीं भी मतभेद और फ़िरक़ाबन्दी का विरोध किया है, इस से उसका तात्पर्य यह दूसरे प्रकार का विरोध ही है। रहा पहले प्रकार का मतभेद, तो इसके अनेकों उदाहरण स्वयं नबी (सल्ल०) के समक्ष आ चुके थे और आपने केवल यही नहीं कि इसे जायज रखा, बल्कि इसे पसन्द भी किया इसलिए कि यह मतभेद तो इस बात का पता देता है कि समाज में विचार व चिन्तन, खोज व छान-बीन और सूझ-बूझ की क्षमतायें मौजूद हैं और उसके बुद्धिजीवी लोगों को अपने धर्म से और उसके आदेशों से दिलचस्पी है और उनकी बुद्धि व मस्तिष्क अपनी जीवन-समस्याओं का हल धर्म के बाहर नहीं, बल्कि उनके भीतर ही खोजता है और समाज सामूहिक रूप से इस स्वर्णिम नियम पर अमल कर रहा है कि सिद्धान्त में एकमत रह कर अपनी एकता भी बाक़ी रखो और फिर अपने ज्ञानियों व चिन्तकों को सही सीमाओं के भीतर खोज करने की आज़ादी दे कर विकास के अवसरों को भी बाक़ी रखो।

–0–

इस 'विषय-प्रवेश' में उन तमाम समस्याओं को समेटना मेरा उद्देश्य नहीं है जो कुरआन-पाठ करते-समय एक पाठक के मन में पैदा होती हैं, इसलिए कि इन प्रश्नों का अधिकांश ऐसा है जो किसी न किसी आयत या सूरह के सामने आने पर मन को खटकता है और इसका उत्तर 'कुरआन-प्रबोध' में अक्सर-अक्सर पर दे दिया गया है। इसलिए ऐसे प्रश्नों को छोड़कर मैंने यहाँ केवल उन व्यापक समस्याओं पर वार्ता की है जो सामूहिक-रूप से पूरे कुरआन से सम्बन्ध रखते हैं। पाठकों से मेरा निवेदन है कि मात्र इस 'विषय-प्रवेश' को देखकर उसके 'अधूरे' होने का फ़ैसला न कर दें, बल्कि पूरी पुस्तक देखने के बाद अगर उनके मन में कुछ प्रश्न उत्तर देने योग्य बाक़ी रह जायें या किसी प्रश्न उत्तर को वे नाकाफ़ी पायें तो मुझे उस से सूचित करें।

–0–0–0–

1. अल-फ़ातिहा

नाम

इसका नाम अल-फ़ातिहा इसके विषय के अनुकूल है। फ़ातिहा उस चीज़ को कहते हैं जिससे किसी विषय या पुस्तक या किसी वस्तु का उद्घाटन हो। दूसरे शब्दों में यूँ समझें कि यह नाम भूमिका, प्राक्कथन के अर्थ में है।

अवतरणकाल

यह हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के नबी होने के बिलकुल प्रारम्भिक काल की सूरा है। बल्कि विश्वसनीय कथनों से मालूम होता है कि सबसे पहली पूर्ण सूरा जो मुहम्मद (सल्ल॰) पर अवतरित हुई यही है। इससे पहले केवल कुछ विविध आयतें उतरीं थीं जो सूरा 96 (अलक़) सूरा 73 (मुज़्ज़म्मिल), सूरा 74 (मुद्दस्सिर) आदि में सम्मिलित हैं।

विषय

वास्तव में यह सूरा एक प्रार्थना है जो ख़ुदा ने हर उस मनुष्य को सिखाई है जो उसके ग्रन्थ का अध्ययन करने जा रहा हो। ग्रन्थ के आरंभ में इसको रखने का उद्देश्य यह है कि यदि तुम वास्तव में इस ग्रन्थ से लाभान्वित होना चाहते हो तो पहले जगत के प्रभु से यह प्रार्थना करो।

मनुष्य स्वभावतः प्रार्थना उसी चीज़ की करता है जिसकी अपेक्षा और इच्छा उसके मन में होती है और उसी दशा में करता है जब उसे यह एहसास हो कि उसकी अभीष्ट वस्तु उस सत्ता के अधिकार में है जिससे वह प्रार्थना कर रहा है। अतः क़ुरआन के आरंभ में यह प्रार्थना सिखाकर मानो मनुष्य को इसके लिए प्रेरित किया गया कि वह इस ग्रन्थ को एक सत्यार्थी की प्रवृत्ती के साथ पढ़े और यह जान ले कि ज्ञान का स्रोत जगत-प्रभु है। इसलिए उसी के मार्गदर्शन की प्रार्थना करके पढ़ना आरंभ करे। इस चीज़ को समझ लेने के बाद यह बात स्वयं स्पष्ट हो जाती है कि क़ुरआन और सूरा फ़ातिहा के मध्य वास्तविक सम्बन्ध पुस्तक और उसके प्राक्कथन जैसा नहीं बल्कि एक प्रार्थना के प्रति उत्तर जैसा है। सूरा फ़ातिहा एक प्रार्थना है बन्दे की ओर से, क़ुरआन उत्तर है अल्लाह की ओर से। बन्दा प्रार्थना करता है कि ऐ प्रभु मुझे सीधा मार्ग दिखा। उत्तर में पालनकर्ता प्रभु सम्पूर्ण क़ुरआन उसके समक्ष रख देता है कि यह है वह मार्गदर्शन एवं पथ-प्रदर्शन जिसके लिए तूने मुझसे प्रार्थना की है।



1. सूरा अल-फ़ातिहा

(मक्का में उतरी–आयतें 7)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) प्रशंसा[1] अल्लाह ही के लिए है जो सारे जहान का रब[2] है, (2) बड़ा ही मेहरबान और दया करनेवाला है, (3) बदला दिए जाने के दिन का मालिक है।

(4) हम तेरी ही बंदगी[3] करते हैं और तुझी से मदद मांगते हैं।

(5) हमें सीधा मार्ग दिखा, (6) उन लोगों का मार्ग जो तेरे कृपापात्र हुए, (7) जो प्रकोप के भागी नहीं हुए, जो भटके हुए नहीं हैं।[4]



1. यह सूरा फ़ातिहा अल्लाह तआला ने बन्दों को सिखाई है ताकि वे अपनी ओर से इसको एक निवेदन के रूप में अपने रब के सामने प्रस्तुत करें।
2. यहाँ 'रब' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'रब' शब्द अरबी भाषा में तीन अर्थों में बोला जाता है : (1) मालिक और स्वामी। (2) पालन-पोषण करनेवाला, खबर लेनेवाला और निरीक्षक। (3) शासक, हाकिम, नियंता और प्रबन्धक। अल्लाह इन सब अर्थों में विश्व का 'रब' है।
3. यहाँ 'इबादत' शब्द आया है। 'इबादत' का शब्द भी अरबी भाषा में तीन अर्थों में इस्तेमाल होता है : (1) पूजा और उपासना। (2) आज्ञापालन (उपासना) और हुक्म मानना। (3) बन्दगी और गुलामी।
4. बन्दे की इसी दुआ का जवाब यह पूरा क़ुरआन है। बन्दा अपने रब से मार्गदर्शन की दुआ करता है, और रब इसके जवाब में यह क़ुरआन उसे प्रदान करता है।

2. अल-बक़रा

नाम और नाम रखने का कारण

इस सूरा का नाम बक़रा इसलिए है कि इसमें एक जगह बक़रा (गाय) का उल्लेख है। क़ुरआन मजीद की प्रत्येक सूरा में इतने अधिक फैले हुए विषयों का उल्लेख हुआ है कि उनके लिए विषय की दृष्टि से समाहर्ता शीर्षक नियत नहीं किया जा सकता। अतः नबी (सल्ल॰) ने अल्लाह के मार्गदर्शन से क़ुरआन की अधिकतर सूरतों के लिए शीर्षकों के स्थान पर नाम निर्धारित किए हैं जो मात्र चिह्न का काम करते हैं। इस सूरा को बक़रा कहने का अर्थ यह नहीं है कि इसमें गाय की समस्या पर विवेचन किया गया है, बल्कि इसका अर्थ केवल यह है कि 'वह सूरा जिसमें गाय का उल्लेख किया गया है।'

अवतरणकाल

इस सूरा का अधिकतर हिस्सा मदीना की हिजरत के पश्चात् मदनी जीवन के बिलकुल आरंभिक काल में अवतरित हुआ है और थोड़ा हिस्सा ऐसा है जो बाद में उतरा है, विषय की अनुकूलता की दृष्टि से इसमें सम्मिलित कर दिया गया।

अवतरण की पृष्ठभूमि

इस सूरा को समझने के लिए पहले इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए।

(1) हिजरत से पूर्व जब तक मक्का में इस्लाम की ओर बुलाया जाता रहा, सम्बोधन अधिकतर अरब के बहुदेववादियों से था, जिनके लिए इस्लाम की आवाज़ एक नई और अपरिचित आवाज़ थी। अब हिजरत के बाद यहूदी सामने आए। ये लोग एकेश्वरवाद, रिसालत (पैग़म्बरी), वह्य (प्रकाशना), परलोक और फ़रिश्तों को मानते थे और सिद्धांततः उनका धर्म वही इस्लाम था जिसकी शिक्षा हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) दे रहे थे। लेकिन शताब्दियों की निरन्तर अवनति ने उनको वास्तविक धर्म से बहुत दूर हटा दिया। जब नबी (सल्ल॰) मदीना पहुँचे तो सर्वोच्च अल्लाह ने नबी को आदेश दिया कि उनको वास्तविक धर्म की ओर बुलाएँ, अतएव सूरा बक़रा की आरम्भिक 141 आयतें इसी बुलावे या आमंत्रण से सम्बन्ध रखती हैं।

(2) मदीना पहुँचकर इस्लामी आमंत्रण एक नई स्थिति तक पहुँच चुका था। मक्का में तो मामला केवल धर्म के सिद्धांतों के प्रचार और धर्म के स्वीकार करनेवालों के नैतिक प्रशिक्षण तक सीमित था, परन्तु जब हिजरत के बाद मदीना में एक छोटे-से

इस्लामी राज्य की नींव पड़ गई तो अल्लाह ने नागरिकता, समाज, अर्थ और राजनीति के सम्बन्ध में भी सैद्धांतिक आदेश देने आरंभ कर दिए और यह बताया कि इस्लाम पर आधारित एक नई जीवन-व्यवस्था का निर्माण किस तरह किया जए। इस सूरा की आयत 153 से लेकर आयत 286 तक अधिकतर इन्हीं आदेशों से सम्बद्ध हैं।

(3) हिजरत से पूर्व इस्लाम का आमंत्रण स्वयं कुफ़्र के घर में दिया जा रहा था और विभिन्न क़बीलों में से जो लोग इस्लाम क़बूल करते थे वे अपनी जगह दीन का प्रचार करते और प्रतिक्रिया-स्वरूप मुसीबतों और ज़ुल्म और उत्पीड़न के आघात सहते थे। किन्तु हिजरत के बाद जब ये बिखरे हुए मुसलमान मदीना में एकत्र होकर एक जत्था बन गए और उन्होंने एक छोटे-से स्वतंत्र राज्य की स्थापना कर ली तो परिस्थिति यह हो गई कि एक ओर एक छोटी-सी बस्ती थी और दूसरी ओर सम्पूर्ण अरब उसका उन्मूलन कर देने पर उतारू था। अब इस मुट्ठी भर गिरोह की सफलता ही नहीं बल्कि उसका अस्तित्व और उसका बाकी रहना भी इस बात पर निर्भर करता था कि एक तो वह पूरे जोश और जज़्बे के साथ अपने पथ का प्रचार करके अधिक से अधिक लोगों को अपनी धारणा वाला बनाने की कोशिश करे। दूसरे वह विरोधियों का मिथ्यावादी होना इस तरह सिद्ध और स्पष्ट कर दे कि किसी बुद्धिमान मनुष्य को इसमें संदेह न रहे। तीसरे वे जिन खतरों में चारों ओर से घिर गए थे उनमें वे साहस न छोड़ें बल्कि पूरे धैर्य और जमाव के साथ उन परिस्थितियों का मुक़ाबला करें। चौथे वे पूरी वीरता के साथ हर उस सशस्त्र रुकावट का सशस्त्र मुक़ाबला करने के लिए तैयार हो जाएँ जो उनके आह्वान और आमंत्रण को असफल करने के लिए किसी शक्ति की ओर से खड़ी की जाए। पाँचवे उनमें इतना साहस पैदा किया जाए कि यदि अरब के लोग इस नई व्यवस्था और प्रणाली को जिसे इस्लाम स्थापित करना चाहता है समझाने-बुझाने से स्वीकार न करें तो उन्हें अज्ञान की विकृत जीवन-प्रणाली को शक्ति से मिटा देने में झिझक न हो। अल्लाह ने इस सूरा में इन पाँच बातों के बारे में प्रारम्भिक आदेश दिए हैं।

(4) इस्लामी आहवान की इस परिस्थिति में एक नया तत्व भी प्रकट होना शुरू हो गया था और यह तत्व मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) का था। यद्यपि कपट (निफ़ाक़) के प्रारंभिक लक्षण मक्का के अंतिम काल में प्रकट होने लगे थे किन्तु वहाँ केवल इस प्रकार के मुनाफ़िक़ पाए जाते थे जो इस्लाम के सत्य होने को तो स्वीकार करते थे और ईमान भी उन्हें स्वीकार था लेकिन इसके लिए (किसी तरह की क़ुरबानी देने को तैयार न थे।) मदीना पहुँचकर इस प्रकार के मुनाफ़िक़ो के अतिरिक्त कुछ और प्रकार के मुनाफ़िक़ भी इस्लामी दल में पाए जाने लगे। (इसलिए उनके सम्बन्ध में आदेश का आना ज़रूरी

हुआ।) इस सूरा बक़रा के अवतरण के समय इन विभिन्न प्रकार के मुनाफ़िक़ों के प्रकट होने का केवल आरंभ था। इसलिए अल्लाह ने उनकी ओर केवल संक्षिप्त संकेत किए हैं। तत्पश्चात जितने-जितने इनके अवगुण और गतिविधियाँ सामने आती गई उसी मात्रा में बाद की सूरतों में हर प्रकार के मुनाफ़िक़ों के सम्बन्ध में जात्-प्रजात के अनुसार अलग-अलग सविस्तार आदेश अवतरित हुए।



2. सूरा अल-बक़रा

(मदीना में उतरी आयतें–286)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलीफ़॰ लाम॰ मीम॰[1]। (2) यह अल्लाह की किताब है, इसमें कोई संदेह नहीं। मार्गदर्शन है उन डरनेवालों के लिए (3) जो ग़ैब[2] पर ईमान लाते हैं, नमाज़ क़ायम करते हैं[3], जो रोज़ी हमने उनको दी है, उसमें से खर्च करते हैं, (4) जो किताब तुमपर उतारी गई है (अर्थात् क़ुरआन) और जो किताबे तुमसे पहले उतारी गई थी उन सब पर ईमान लाते हैं, और परलोक (आख़िरत) में विश्वास रखते हैं। (5) ऐसे लोग अपने रब की ओर से सीधे मार्ग पर हैं और वही सफलता प्राप्त करनेवाले हैं। (6) जिन लोगों ने (इन बातों को स्वीकार करने से) इनकार कर दिया, उनके लिए बराबर है, चाहे तुम उन्हें खबरदार करो या न करो, वे तो किसी भी दशा में माननेवाले नहीं हैं। (7) अल्लाह ने उनके दिलों और उनके कानों पर मुहर लगा दी है[4] और उनकी आँखों पर परदा पड़ गया है। वे सख्त सज़ा के हक़दार हैं।

---

1. ये 'हुरूफ़ मुक़त्तआत' (विभक्त अक्षर) क़ुरआन मजीद की कुछ सूरतों के आरंभ में पाए जाते हैं। टीकाकारों ने इनके विभिन्न अर्थ लिए हैं, किन्तु इनके किसी अर्थ पर सहमत नहीं हो सके हैं। और इनके अर्थ का जानना इसलिए आवश्यक नाहीं है कि इन्हें यदि आदमी न जाने तो क़ुरआन से मार्गदर्शन प्राप्त करने में कोई कमी नहीं रह जाती।
2. ग़ैब से मुराद वे तथ्य और वास्तविकताएँ हैं जो मानवीय ज्ञानेन्द्रियों से छिपी हुई हैं और कभी प्रत्यक्षतः आम लोगों के अनुभव और निरीक्षण में नहीं आतीं। जैसे खुदा की हस्ती और उसके गुण, फ़रिश्ते, वह्य (प्रकाशना, Revelation), स्वर्ग, नरक आदि।
3. नमाज़ क़ायम करने का अर्थ केवल यही नहीं है कि आदमी पाबन्दी के साथ नमाज़ अदा करे, बल्कि इसका अर्थ यह है कि सामूहिक रूप से नमाज़ की व्यवस्था नियमित तरीके से हो। यदि किसी बस्ति में एक व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से नमाज़ का पाबन्द हो, लेकिन सामूहिक रूप से (जमाअत के साथ) इस फ़र्ज़ को पूरा करने की व्यवस्था न हो, तो यह नहीं कहा जा सकता कि वहाँ नमाज़ क़ायम की जा रही है।
4. इसका अर्थ यह नहीं है कि अल्लाहने मुहर लगा दी थी इसलिए उन्होंने मानने से इनकार किया, बल्कि मतलब यह है कि जब उन्होंने उन बुनियादी बातों को ठुकरा दिया जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, और अपने लिए क़ुरआन के पेश किए हुए रास्ते के ख़िलाफ़ दूसरा रास्ता पसन्द कर लिया, तो अल्लाह ने उनके दिलों और कानों पर मुहर लगा दी।

(8) कुछ लोग ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि हम अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान लाए हैं, हालाँकि वास्तव में वे ईमानवाले नहीं हैं। (9) वे अल्लाह और ईमान लानेवाले के साथ धोखेबाज़ी कर रहे हैं, मगर वास्तव में वे ख़ुद अपने ही को धोखे में डाल रहे हैं और उन्हें इसकी समझ नहीं है। (10) उनके दिलों में एक रोग है जिसे अल्लाह ने और अधिक बढ़ा दिया[5], और जो झूठ वे बोलते हैं, उसके फलस्वरूप उनके लिए दर्दनाक सज़ा है। (11) जब कभी उनसे कहा गया कि ज़मीन में बिगाड़ पैदा न करो, तो उन्होंने यही कहा कि "हम तो सुधार करनेवाले हैं" (12)— सावधान, वास्तव में यही लोक बिगाड़ पैदा करते हैं मगर इन्हें समझ नहीं है। (13) और जब उनसे कहा गया कि जिस तरह दूसरे लोग ईमान लाए हैं उसी तरह तुम भी ईमान लाओ तो उन्होंने यही उत्तर दिया कि "क्या हम मूर्खों की तरह ईमान लाएँ?"—खबरदार, वास्तव में तो ये खुद मूर्ख हैं, मगर ये जानते नहीं हैं। (14) जब ये ईमानवालों से मिलते हैं तो कहते हैं कि हम ईमान लाए हैं, और जब एकान्त में अपने शैतानों से मिलते हैं तो कहते हैं कि वास्तव में तो हम तुम्हारे साथ हैं और इन लोगों से केवल मज़ाक कर रहे हैं (15)—अल्लाह इनसे मज़ाक कर रहा है, वह इन्हें ढील दे रहा है और ये अपनी सरकशी में अन्धों की तरह भटकते चले जाते हैं। (16) ये वे लोग हैं जिन्होंने मार्गदर्शन के बदले गुमराही ख़रीद ली है, किन्तु यह सौदा इनके लिए लाभदायक नहीं है और ये हरगिज़ सही रास्ते पर नहीं हैं। (17) इनकी मिसाल ऐसी है जैसे एक आदमी ने आग जलाई और जब उसने सारे माहौल को रौशन कर दिया तो अल्लाहने इनकी आँखों की रौशनी छीन ली और इन्हें इस हाल में छोड़ दिया कि अंधियारियों में इन्हें कुछ सूझता नहीं[6]। (18) ये बहरे हैं, गूंगे हैं, अन्धे हैं, ये अब न पलटेंगे। (19) या फिर इनकी मिसला यूँ समझो कि आकाश से तेज़ वर्षा हो रही है और उसके साथ अंधेरी घटा और कड़क और चमक भी है, ये बिजली के कड़ाके सुनकर अपनी मौत के डर से कानों में

5. रोग से मुराद मुनाफ़िक़त की बीमारी है। और अल्लाह के इस बीमारी में अभिवृद्धि करने का अर्थ यह है कि मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) को अल्लाह फ़ौरन सज़ा नहीं देता, बल्कि उसे ढील देता चला जाता है और मुनाफ़िक़ और ज़्यादा मुनाफ़िक बनता चला जाता है।
6. मतलब यह है कि जब एक अल्लाह के बन्दे ने रौशनी फैलाई और सत्य को असत्य से छाँटकर बिलकुल स्पष्ट कर दिया, तो जिन लोगों के पास देखनेवाली आँखे थी, उनपर तो सारी सच्चाइयाँ खुल गईं, मगर ये मुनाफ़िक़, जो अपनी तुच्छ इच्छाओं और वासनाओं के पीछे अन्धे हो रहे थे, इनको इस रौशनी में कुछ दिखाई न दिया।

उँगलियाँ ठूँसे लेते हैं और अल्लाह सत्य के इन इनकार करनेवालों को हर ओर से घेरे में लिए हुए है। (20) चमक से इनकी दशा यह हो रही है कि मानों शीघ्र ही बिजली इनकी आँखों रौशनी उचक ले जाएगी। जब तनिक कुछ रौशनी इन्हें महसूस होती है तो उसमें कुछ दूर चल लेते हैं, और जब इनपर अँधेरा छा जाता है तो खड़े हो जाते हैं[7]— अल्लाह चाहता तो इनकी सुनने और देखने की शक्ति बिलकुल ही छीन लेता, निस्सन्देह उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(21) लोगों, बन्दगी इख़तियार करो अपने उस रब की जो तुम्हारा और तुमसे पहले जो लोग हुए हैं उन सबका पैदा करनेवाला है, तुम्हारे बचने की आशा[8] इसी प्रकार हो सकती है। (22) वही तो है जिसने तुम्हारे लिए धरती का बिछौना बिछाया, आकाश की छत बनाई, ऊपर से पानी बरसाया और उसके द्वारा हर प्रकार की पैदावार निकालकर तुम्हारे लिए रोज़ी जुटाई। अतः जब तुम यह जानते हो तो दूसरों को अल्लाह का प्रतिद्वन्द्वी (समकक्ष) न ठरराओ[9]।

(23) और अगर तुम्हें इस बात में सन्देह है कि यह किताब जो हमे अपने बन्दे पर उतारी है, यह हमारी है या नहीं, तो इस जैसी एक ही सूरा बना लाओ, अपने मत के सारे ही लोगों को बुला लो, एक अल्लाह को छोड़कर बाक़ी जिस-जिसकी चाहो सहायता ले लो, अगर तुम सच्चे हो तो यह काम करके दिखाओ। (24) लेकिन अगर तुमने ऐसा न किया, और निश्चय ही कभी नहीं कर सकते, तो डरो उस आग से, जिसका ईंधन बनेंगे इनसान और पत्थर[10], जो जुटाई गई है इनकार करनेवालों के लिए।

7. पहली मिसाल उन मुनाफ़िक़ों की थी जो दिल से तो बिलकुल इनकार कर रहे थे और किसी स्वार्थ और उद्देश्य से मुसलमान बन गए थे। और यह दूसरी मिसाल उनकी है जो सन्देह, दुविधा और ईमान की कमज़ोरी के शिकार थे, कुछ सच्चाई को स्वीकार भी करते थे, मगर ऐसी सत्यवादिता को वे नहीं मानते थे कि उसके लिए तकलीफ़ों और मुसीबतों को भी सहन कर सकें।
8. अर्थात् दुनिया में ग़लत देखने और ग़लत काम करने और आख़िरत में अल्लाह की यातना (अज़ाब) से बचने की आशा।
9. दूसरों को अल्लाह का प्रतिद्वन्द्वी ठहराने से मुराद यह है कि विभिन्न प्रकार की बन्दगी और इबादत में से किसी प्रकार की बन्दगी और इबादत अल्लाह के सिवा दूसरों की की जाए।
10. अर्थात् वहाँ केवल तुम ही नरक का ईंधन न बनोगे, बल्कि तुम्हारे वे बुत भी वहाँ तुम्हारे साथ ही मौजूद होंगे जिन्हें तुमने अपना उपास्य बना रखा है और जिनके आगे तुम दंडवत् करते रहते हो।

(25) और ऐ पैग़म्बर, जो लोग इस किताब पर ईमान ले आएँ और (इसके अनुसार) अपने कर्म ठीक कर लें, उन्हें ख़ुशख़बरी दे दो कि उनके लिए ऐसे बाग़ हैं जिनके नीचे नहरे बहती होंगी। उन बाग़ों के फल रूप में दुनिया के फलों से मिलते-जुलते होंगे। जब कोई फल उन्हें खाने को दिया जाएगा तो वे कहेंगे कि ऐसे ही फल इससे पहले दुनिया में हमको दिए जाते थे। उनके लिए वहाँ पाकीज़ा पत्नियाँ होंगी, और वे वहाँ सदैव ही रहेंगे।

(26) हाँ, अल्लाह इससे बिलकुल नहीं शर्माता कि मच्छर या उससे भी तुच्छ किसी चीज़ की मिसाले दे[11]। जो लोग सत्य को स्वीकार करनेवाले हैं, वे इन्ही मिसालों को देखकर जान लेते हैं कि यह सत्य है जो उनके रब ही की ओर से आया है, और जो माननेवाले नहीं हैं, वे इन्हें सुनकर कहने लगते हैं कि ऐसी मिसालों से अल्लाह का क्या सम्बन्ध? इस प्रकार अल्लाह एक ही बात से बहुतों को गुमराही में डाल देता है और बहुतों को सीधा मार्ग दिखा देता है। और उससे गुमराही में वह उन्हीं को डालता है जो फ़ासिक़ (अवज्ञाकारी)[12] हैं, (27) अल्लाह की प्रतिज्ञा को मज़बूत बाँध लेने के बाद तोड़ देते हैं[13], अल्लाह ने जिसे जोड़ने का आदेश दिया है, उसे काटते हैं[14], और धरती में बिगाड़ पैदा करते हैं। वास्तव में यही लोग घाटे में हैं।

11. यहाँ एक एतिराज़ का उल्लेख किए बिना उसका उत्तर दिया गया है। कुरआन में विभिन्न स्थानों पर आशय स्पष्ट करने के लिए मकड़ी, मक्खी, मच्छर आदि की जो मिसालें दी गई हैं, उनपर विरोधियों को आपत्ति थी कि यह कैसी ईश-वाणी है जिसमें ऐसी तुच्छ चीज़ों की मिसालें दी गई हैं।
12. 'फ़ासिक़' का अर्थ है अवज्ञाकारी, आज्ञापालन की सीमा से निकल जानेवाला।
13. बादशाह अपने सेवकों और प्रजा के नाम जो हुक्म (आदेश) जारी करता है, उनको अरबी भाषा में 'अहद' (प्रतिज्ञा) की संज्ञा दी जाती है। अल्लाह की प्रतिज्ञा से मुराद उसका वह स्थायी आदेश है जिसकी दृष्टि से सम्पूर्ण मानव-जाति केवल उसी की बन्दगी, आज्ञापालन और उपासना करने को निर्दिष्ट है। 'मज़बूत बाँध लेने के बाद' से संकेत इस ओर है कि आदम के पैदा किए जाने के समय सम्पूर्ण मानव-जाति से इस आदेश के पालन करने का प्रण लिया गया था जैसा कि सूरा 7 आराफ़, आयत 172 में इसका उल्लेख मिलता है।
14. अर्थात् जिन पारस्परिक सम्पर्कों की स्थापना और सुदृढता पर मानव का सामाजिक और वैयक्तिक कल्याण निर्भर करता है, और जिन्हें ठीक रखने का अल्लाह ने हुक्म दिया है, उनपर ये लोग कुल्हाड़ी चलाते हैं।

(28) तुम अल्लाह के साथ इनकार की नीति कैसे अपनाते हो, जबकि तुम निर्जीव थे, उसने तुम्हें जीवन प्रदान किया, फिर वही तुम्हारे प्राण ले लेगा, फिर वही तुम्हें पुनः जीवन प्रदान करेगा, फिर उसी की ओर तुम्हें पलटकर जाना है। (29) वही तो है जिसने तुम्हारे लिए धरती की सारी चीज़ें पैदा की, फिर ऊपर की ओर रुख़ किया और सात आसमान[15] ठीक तौर पर बनाए। और वह हर चीज़ का ज्ञान रखनेवाला है।

(30) फिर तनिक उस समय की कल्पना करो जब तुम्हारे रब ने फ़रिश्तों से कहा था कि "मैं धरती में एक ख़लीफ़ा[16] (स्थानापन्न) बनानेवाला हूँ।" उन्होंने निवेदन किया : "क्या आप धरती में किसी ऐसे को नियुक्त करनेवाले हैं जो उसकी व्यवस्था को बिगाड़ देगा और रक्तपात करेगा? आपकी तारीफ़ और प्रशंसा के साथ तसबीह और आपकी पवित्रता का वर्णन तो हम कर ही रहे हैं।" कहा : "मैं जानता हूँ, जो कुछ तुम नहीं जानते।" (31) इसके बाद अल्लाह ने आदम को सारी चीज़ों के नाम सिखाए, फिर उन्हें फ़रिश्तों के सामने पेश किया और कहा, "यदि तुम्हारा विचार सही है (कि किसी ख़लीफ़ा की नियुक्ति से व्यवस्था बिगड़ जाएगी), तो तनिक इन चीज़ों के नाम बताओ।" (32) उन्होंने कहा, "ऐबों से पाक तो आप ही की हस्ती है, हमें तो बस उतना ही ज्ञान है, जितना आपने हमको दे दिया है। वास्तव में सब कुछ जाननेवाला और समझनेवाला आपके सिवा कोई नहीं।" (33) फिर अल्लाह ने आदम से कहा : "तुम इन्हें इनके नाम बताओ।" जब उसने उनको इन सबके नाम बता दिए, तो अल्लाह ने कहा : "मैने तुमसे कहा न था कि मैं आकाशों और धरती के वे सारे तथ्य जानता हूँ जो तुमसे छिपे हैं, जो कुछ तुम ज़ाहिर करते हो, वह भी मुझे मालूम है और जो कुछ तुम छिपाते हो, उसे भी मैं जानता हूँ।"

(34) फिर जब हमने फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि आदम के आगे झुक जाओ, तो

15. सात आसमानों की वास्तविकता क्या है, इसका निर्धारण कठिन है। इनसान हर युग में आकाश, या दूसरे शब्दों में ऊपरी लोक के सम्बन्ध में अपने निरीक्षण या कल्पनाओं के अनुसार विभिन्न धारणाएँ बनाता रहा है जो बराबर बदलती रही हैं। बस संक्षेप में इतना समझ लेना काफ़ी है कि या तो इससे मुराद यह है कि धरती के अतिरिक्त जितना जगत है, उसे अल्लाह ने सात सुदृढ़ क्षेत्रों में विभक्त कर रखा है, या यह कि धरती इस ब्रह्माण्ड के जिस भाग में स्थित है, वह सात खण्डों पर आधारित है।
16. 'ख़लीफ़ा' वह जो किसी की मिलकियत में उसके दिए हुए अधिकारों को उसके प्रतिनिधि के रूप में प्रयोग करे।

सब झुक गये मगर इबलीस ने इनकार किया। वह अपनी बड़ाई के घमण्ड में पड़ गया और अवज्ञाकारियों में शामिल हो गया।

(35) फिर हमने आदम से कहा "तुम और तुम्हारी पत्नी, दोनों जन्नत (स्वर्ग) में रहो और यहाँ जी भरकर जो चाहो खाओ, किन्तु इस पेड़ के निकट न जाना, न्हीं तो ज़ालिमों में गिने जाओगे।" (36) अन्ततः शैतान ने उन दोनों को उस पेड़ की ओर प्रेरित करके हमारे आदेश के अनुपालन से हटा दिया और उन्हें उस हालत से निकलवाकर छोड़ा जिसमें वे थे। हमने हुक्म दिया कि "अब तुम सब यहाँ से उतर जाओ, तुम एक-दुसरे के दुश्मन हो और तुम्हें एक विशेष समय तक धरती में ठहरना और वहीं गुज़र-बसर करना हैं।" (37) उस समय आदम ने अपने रब से कुछ शब्द सीखकर तौबा (क्षमायाचना) की, जिसको उसके रब ने स्वीकार कर लिया, क्योंकि वह बड़ा क्षमा करनेवाला और दया करनेवाला है।

(38) हमने कहा कि "तुम सब यहाँ से उतर जाओ। फिर मेरी ओर से जो मार्गदर्शन तुम्हारे पास पहुँचे तो जो लोग मेरे उस बताए मार्गदर्शन पर चलेंगे, उनके लिए किसी भय और दुख का मौक़ा न होगा, (39) और जो उसे स्वीकार करने से इनकार करेंगे और हमारी आयतों को झुठलाएँगे, वे आग (नरक) में जानेवाले हैं, जहाँ वे हमेशा रहेंगे।"

(40) ऐ इसराईल की सन्तान[17], तनिक याद करो मेरी उस नेमत को जो मेरी ओर से तुमपर हुई। मेरे साथ तुम्हारी जो प्रतिज्ञा थी उसे तुम पूरा करो तो मेरी जो प्रतिज्ञा तुम्हारे साथ थी उसे मैं पूरा करूँ, और मुझ ही से तुम डरो। (41) और मैंने जो किताब भेजी है, उसपर ईमान लाओ। यह उस किताब की पुष्टि में है जो तुम्हारे पास पहले से मौजूद थी, अतः सबसे पहले तुम ही उसके इनकार करनेवाले न बनो। थोड़े मूल्य पर मेरी आयतों को न बेच डालो[18] और मेरे प्रकोप से बचो। (42) असत्य का रंग चढ़ाकर सत्य को संदिग्ध न बनाओ और न जनाते-बूढते सत्य को छिपाने का प्रयास करो।

17. मदीना की पवित्र नगरी और उसके निकटवर्ती क्षेत्र में चूँकि यहूदी बड़ी संख्या में आबाद थे इसलिए यहाँ से आगे कई 'रुकूओं' (अनुच्छेदों) तक उनको सम्बोधित करके उन्हें सच्चे धर्म का आमंत्रण दिया गया है।

18. थोड़े मूल्य से मुराद वे सांसारिक लाभ हैं जिनके लिए ये लोग अल्लाह के आदेशों और उसके हुक्मों को मानने से इनकार कर रहे थे। सत्य के बदले में चाहे इनसान दुनिया भर की दौलत ले ले, बहरहाल वह तो थोड़ा ही मूल्य कहलाएगा, क्योंकि सत्य निस्संदेह उससे कहीं बहुमूल्य चीज़ है।

(43) नमाज़ क़ायम करो, ज़कात (दान) दो, और जो लोग मेरे आगे झुक रहे हैं उनके साथ तुम भी झुक जाओ। (44) तुम दूसरों को तो नेकी का रास्ता अपनाने के लिए कहते हो, मगर अपने आपको भूल जाते हो? हालाँकि तुम किताब का पाठ करते हो। क्या तुम बुद्धि से बिलकुल ही काम नहीं लेते? (45) सब्र (धैर्य) और नमाज़ से मदद लो, बेशक नमाज़ एक बड़ा ही मुश्किल काम है, किन्तु उन आज्ञाकारी बन्दों के लिए मुश्किल नहीं है (46) जो समझते हैं कि आख़िरकार उन्हें अपने रब से मिलना और उसी की ओर पलटकर जाना है।

(47) ऐ इसराईल की सन्तान, याद करो मेरी उस नेमत (अनुग्रह) को जो मेरी ओर से तुमपर हुई थी और इस बात को कि मैंने तुम्हें संसार की सारी जातियों पर श्रेष्ठता प्रदान की थी[19]। (48) और डरो उस दिन से जब कोई किसी के तनिक काम न आएगा, और न किसी की ओर से सिफ़ारिश कबूल होगी, न किसी को फ़िदया (जुर्माना) लेकर छोड़ा जाएगा, और न अपराधियों को कहीं से सहायता मिल सकेगी।

(49) याद करो वह समय, जब हमने तुमको फ़िरऔननियों[20] की ग़ुलामी से छुटकारा दिलाया—उन्होंने तुम्हें सख़्त अज़ाब में डाल रखा था, तुम्हारे लड़कों को मार डालते थे और तुम्हारी लड़कियों को जीवित रहने देते थे और इस स्थिति में तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारी बड़ी आज़माइश थी।

(50) याद करो वह समय, जब हमने समुद्र फाड़कर तुम्हारे लिए रास्ता बनाया, फिर उसमें से तुम्हें सकुशल पार करा दिया, फिर वहीं तुम्हारी आँखों के सामने फ़िरऔनियों को डुबो दिया।

(51) याद करो, जब हमने मूसा को चालीस दिन-रात के प्रस्ताव (वादे) पर बुलाया[21], तो उसके पीछे तुम बछड़े को अपना पूज्य बना बैठे। उस समय तुमने बड़ी ज़्यादती की थी, (52) मगर इसपर भी हमने तुम्हें क्षमा कर दिया कि शायद अब तुम

19. इसका यह अर्थ नहीं है कि हमेशा के लिए तुम्हें संसार की समस्त जातियों के मुकाबले में श्रेष्ठता दी थी, बल्कि मतलब यह है कि एक समय था जब संसार की जातियों (क़ौमों) में तुम ही वह एक जाति थे जिसके पास अल्लाह का दिया हुआ सच्चा ज्ञान था, और जिसे संसार की जातियों का पेशवा और पथ-प्रदर्शक बनाया गया था, ताकि वह रब की बन्दगी के मार्ग पर सब जातियों को बुलाए और चलाए।

20. 'आले फ़िरऔन' का अनुवाद हमने इस शब्द से किया है। इसमें फ़िरऔन का घराना और मिस्र का शासकवर्ग दोनों सम्मिलित हैं।

कृतज्ञता दिखलाओ।

(53) याद करो कि (ठीक उस समय जब तुम यह ज़ुल्म कर रहे थे) हमने मूसा को किताब और कसौटी[22] प्रदान की ताकि तुम उसके द्वारा सीधी राह पा सको।

(54) याद करो जब मूसा (यह नेमत लिए हुए पलटा, तो उस) ने अपने जातिवालों से कहा कि ''लोगो, तुमने बछड़े को पूज्य बनाकर अपने साथ बड़ा अन्याय किया है, अतः तुम लोग अपने पैदा करनेवाले के आगे तौबा (क्षमा की प्रार्थना) करो और अपनों को मारो[23], इसी में तुम्हारे पैदा करनेवाले की दृष्टि में तुम्हारी भलाई है।'' उस समय तुम्हारे स्रष्टा ने तुम्हारी क्षमायाचना (तौबा) स्वीकार कर ली कि वह बड़ा क्षमाशील और दयावान् है।

(55) याद करो जब तुमने मूसा से कहा था कि हम तुम्हारे कहने का हरगिज़ विश्वास न करेंगे, जब तक कि अपनी आँखों से खुले तौर पर अल्लाह को (तुमसे बातें करते) न देख लें। उस समय तुम्हारे देखते-देखते एक ज़बरदस्त कड़के ने तुमको आ लिया। (56) तुम बेजान होकर गिर चुके थे, मगर फिर हमने तुमको जिला उठाया, शायद कि इस उपकार के बाद तुम शुक्रगुज़ार बन जाओ।

(57) हमने तुमपर बादल की छाँव की, 'मन्न' और 'सलवा' का भोजन तुम्हारे लिए जुटाया और तुमसे कहा कि जो स्वच्छ चीज़ें हमने तुम्हे प्रदान की हैं, उन्हें खाओ (मगर तुम्हारे पूर्वजों ने जो कुछ किया) वह हमपर उनका ज़ुल्म न था बल्कि उन्होंने आप अपने ही ऊपर ज़ुल्म किया।

(58) फिर याद करो जब हमने कहा था कि ''यह बस्ती (जो तुम्हारे सामने है) इसमें प्रवेश करो, इसकी पैदावार, जिस प्रकार चाहो, मज़े से खाओ, मगर बस्ती के

21. अर्थात् मिस्र से छुटकारा पाने के बाद जब इसराईल की सन्तति के लोक प्रायद्वीप सीना में पहुँच गए तो हज़रत मूसा (अलै॰) को अल्लाह ने चालीस दिन-रात के लिए तूर पर्वत पर बुलवाया ताकि वहाँ इस क़ौम के लिए जो अब स्वतन्त्र हो चुकी थी, धर्म-विधान और व्यावहारिक जीवन के लिए आदेश प्रदान किए जाएँ।
22. कसौटी (फ़ुरक़ान) से मुराद है वह चीज़ जिसके द्वारा सत्य और असत्य का अन्तर स्पष्ट हो अर्थात् धर्म का वह ज्ञान और समझ जिससे मनुष्य सत्य और असत्य में अन्तर करता है।
23. अर्थात् अपने उन आदमियों को क़त्ल करो जिन्होंने बछड़े को पूज्य बनाया और उसकी पूजा की।

दरवाज़े में सजदा करते (सिर झुकाए) हुए प्रवेश करना और कहते जाना 'हित्ततुन हित्ततुन''[24], हम तुम्हारी ख़ताओं को माफ़ करेंगे और सुकर्मियों (मुहसिनीन) पर और अधिक अनुग्रह करेंगे।'' (59) मगर जो बात उनसे कही गई थी, इन ज़ालिमों ने उसे बदलकर कुछ और कर दिया। अन्त में हमने ज़ुल्म करनेवालों पर आकाश से अज़ाब उतारा। यह सज़ा थी उन नाफ़रमानियों की, जो वे कर रहे थे।

(60) याद करो, जब मूसा ने अपनी जातिवालों के लिए पानी की प्रार्थना की तो हमने कहा कि अमुक चट्टान पर अपनी लाठी (असा) मारो। अतएव उससे बारह स्रोत फूट निकले और हर क़बीले ने जान लिया कि कौन-सी जगह उसके पानी लेने की है।[25] (उस समय यह आदेश दे दिया गया था कि) अल्लाह की दी हुई रोज़ी खाओ-पियो, और धरती में बिगाड़ न फैलाते फिरो।

(61) याद करो, जब तुमने कहा था कि ''ऐ मूसा, हम एक ही प्रकार के खाने पर सन्तोष नहीं कर सकते। अपने रब से प्रार्थना करो कि हमारे लिए धरती की पैदावार, साग, तरकारी, गेहूँ, लहसुन, प्याज़, दाल आदि पैदा करे।'' तो मूसा ने कहा : ''क्या एक उत्तम चीज़ को छोड़कर तुम घटिया दर्जे की चीज़ें लेना चाहते हो? अच्छा, किसी शहरी आबादी में जा रहो। जो कुछ तुम माँगते हो, वहाँ मिल जाएगा।'' आख़िरकार इस दशा को पहुँच गए कि अपमान एवं अपयश और गिरावट एवं बदहाली उनपर थोप दी गई और वे अल्लाह के अज़ाब में घिर गए। यह नतीजा था इसका कि वे अल्लाह की आयतों का इनकार करने लगे थे और पैग़म्बरों की अकारण हत्या करने लगे थे। यह नतीजा था उनकी नाफ़रमानियों का और इस बात का कि वे धार्मिक मर्यादाओं से निकल-निकल जाते थे।

(62) विश्वास रखो कि अरबी नबी को माननेवाले हों या यहूदी, ईसाई हों या साबी, जो भी अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान लाएगा और अच्छा कर्म करेगा, उसका बदला उसके रब के पास है और उसके लिए किसी डर और रंज का मौक़ा नहीं है।[26]

(63) याद करो वह समय, जब हमने तूर को तुमपर उठाकर तुमसे पक्का वचन

24. 'हित्ततुन' के दो अर्थ हो सकते हैं : एक यह कि अल्लाह से अपनी ख़ताओं की माफ़ी माँगते हुए जाना, दूसरे यह कि लूट-मार क़त्लेआम के बदले बस्ती के निवासियों में नरमी और आम माफ़ी की घोषणा करते जाना।
25. इसराईल-वंशज के 12 क़बीले थे। अल्लाहने प्रत्येक क़बीले के लिए अलग स्रोत निकाल दिया ताकि उनके बीच पानी पर झगड़ा न हो।

लिया था और कहा था कि "जो ग्रन्थ हम तुम्हें दे रहे हैं उसे मज़बूती के साथ थामना और जो आदेश और निर्देश उसमें लिखे हैं उन्हें याद रखना। इसी माध्यम से आशा की जा सकती है कि तुम तक़्वा (धर्मपरायणता) की नीति पर चल सकोगे।" (64) मगर इसके बाद तुम अपने वचन से फिर गए। इसपर भी अल्लाह की कृपा और उसकी दयालुता ने तुम्हारा साथ न छोड़ा, वरना तुम कभी के तबाह हो चुके होते।

(65) फिर तुम्हे अपने जाति के उन लोगों का क़िस्सा तो मालूम ही है जिन्होंने सब्त[27] का नियम तोड़ा था। हमने उन्हें कह दिया कि बन्दर बन जाओ और इस दशा में रहो कि हर ओर से तुमपर धुतकार-फिटकार पड़े। (66) इस तरह हमने उनके अंजाम को उस ज़माने के लोगों और बाद की आनेवाली पीढ़ियों के लिए शिक्षा-सामग्री और (अल्लाह से) डरनेवालों के लिए नसीहत बनाकर छोड़ा।

(67) फिर वह घटना याद करो, जब मूसा ने अपनी क़ौम से कहा कि अल्लाह तुम्हें एक गाय ज़बह करने का हुक्म देता है। कहने लगे : क्या तुम हमसे मज़ाक़ करते हो? मूसा ने कहा : मैं इससे अल्लाह की पनाह माँगता हूँ कि अज्ञानियों जैसी बातें करूँ। (68) बोले : अच्छा, अपने रब से प्रार्थना करो कि वह हमें उस गाय के बारे में कुछ

26. संदर्भ को देखने से यह बात स्वयं स्पष्ट हो जाती है कि यहाँ ईमान और अच्छे कर्मों का विवरण प्रस्तुत करना अभीष्ट नहीं है कि किन-किन बातों को आदमी माने और क्या-क्या कर्म करे तो ख़ुदा के यहाँ वह पुरस्कार पाने का अधिकारी होगा। यहाँ तो यहूदियों के इस ग़लत दावे का खण्डन अभीष्ट है कि वे केवल यहूदियों को मुक्ति का पात्र समझते थे और इस भ्रम में पड़े हुए थे कि जो उनके गिरोह से सम्बन्ध रखता है वह चाहे कर्म और आस्थाओं की दृष्टि से कैसा ही हो उसकी तो मुक्ति होनी ही है, और शेष सारे लोग जो उनके गिरोह के बाहर हैं वे केवळ नरक का ईंधन बनने के लिए पैदा हुए हैं। इस भ्रम को दूर करने के लिए कहा जा रहा है कि अल्लाह के यहाँ मूल जीज़ तुम्हारी ये गिरोहबन्दियाँ नहीं है बल्कि वहाँ जो कुछ एतिबार (विश्वस्त) है, वह ईमान और अच्छे कर्म का है। जो मनुष्य भी यह चीज़ लेकर पहुँचेगा वह अपने रब से अपना इनाम पाएगा। ख़ुदा के यहाँ निर्णय आदमी के गुणों के आधार पर होगा, न कि तुम्हारे जनगणना के रजिस्ट्रों के अनुसार।

27. 'सब्त' अर्थात् शनिवार (हफ़्ते) का दिन। इसराईल के वंशजों के लिए यह नियम निर्धारित किया गया था कि वे शनिवार का दिन आराम और उपासना के लिए रखें। उस दिन किसी प्रकार का सांसारिक काम, यहाँ तक कि खाने-पकाने का काम भी न ख़ुद करें और न ही अपने सेवकों से यह काम लें।

विस्तार से बताए। मूसा ने कहा : अल्लाह कहता है कि वह गाय ऐसी होनी चाहिए जो न बूढ़ी हो न बछिया, बल्कि मध्य आयु की हो। अतः जो हुक्म दिया जाता है उसका पालन करो। (69) फिर कहने लगे कि अपने रब से यह और पूछ दो कि उसका रंग कैसा हो। मूसा ने कहा : वह कहता है कि पीले रंग की गाय होनी चाहिए जिसका रंग एसा चटकीला हो कि देखनेवालों का मन प्रसन्न हो जाए। (70) फिर बोले : अपने रब से साफ़-साफ़ पूछकर बताओ कैसी गाय चाहिए, हमें उसके निर्धारण में सन्देह हो गया है। अल्लाह ने चाहा तो हम उसका पता पा लेंगे। (71) मूसा ने जवाब दिया : "अल्लाह कहता है कि वह ऐसी गाय है जिससे सेवा-कार्य नहीं लिया जाता, न ज़मीन जोतती है न पानी खींचती है, भली-चंगी और बेदाग़ है। इसपर वे पुकार उठे कि हां, अब तुमने ठीक पता बताया है। फिर उन्होंने उसे ज़बह किया, वरना वे ऐसा करते मालूम न होते थे।[28]

(72) और तुम्हें याद है वह घटना जब तुमने एक व्यक्ति की जान ली थी, फिर उसके बारे में झगड़ने लगे और एक-दूसरे पर क़त्ल का इलज़ाम थोपने लगे थे और अल्लाह ने फ़ैसला कर लिया था कि जो कुछ तुम छिपाते हो, उसे खोलकर रख देगा। (73) उस समय हमने हुक्म दिया कि मारे गए व्यक्ति की लाश को उसके एक भाग से चोट करो। देखो, इस प्रकार अल्लाह मुर्दों को जीवन दान देता है और तुम्हें अपनी निशानियाँ दिखाता है, ताकि तुम समझो (74)—किन्तु ऐसी निशानियाँ देख लेने के बाद भी अन्ततः तुम्हारे दिल सख़्त हो गए, पत्थरों की तरह सख़्त, बल्कि सख़्ती में कुछ उनसे भी बढ़े हुए, क्योंकि पत्थरों में से तो कोई ऐसा भी होता है जिसमें से स्रोत फूट बहते हैं, कोई फटता है और उसमें से पानी निकल आता है, और कोई अल्लाह के डर से काँपकर गिर भी पड़ता है। अल्लाह तुम्हारी करतूतों से बेख़बर नहीं है।

(75) ऐ मुसलमानो, अब क्या इन लोगों से तुम यह उम्मीद रखते हो कि ये

28. चूँकि इस्राईल के वंशजों को मिस्र-निवासियों और अपनी पड़ोसी क़ौमों से गाय की महानता, पवित्रता और गौ-पूजो के रोग की छूत लग गई थी और इसी कारण उन्होंने मिस्र से निकलते ही बछड़े को पूज्य बना लिया था, इसलिए उन्हें आदेश दिया गया कि गाय ज़बह करें। उन्होंने टालने की कोशिश की और विवरण पूछने लगे। मगर जितना-जितना विस्तार में जाते गए उतने ही घिरते चले गए, यहाँ तक कि अन्त में उसी विशेष प्रकार की सुनहरी गाय पर, जिसे उस समय पूजा के लिए ख़ास किया जाता था, मानो उँगली रखकर बता दिया गया कि इसे ज़बह करो।

तुम्हारे आमंत्रण (दावत) को मान लेंगे[29]? जबकि इनमें से एक गिरोह की नीति यह रही है कि उसने अल्लाह की वाणी सुनी और फिर ख़ूब समझ-बूझकर, जानते हुए उसमें रद्दोबदल किया। (76) ये (अल्लाह के रसूल मुहम्मद सल्ल॰ पर) ईमान लानेवालों से मिलते हैं तो कहते हैं कि हम भी उन्हें मानते हैं, और जब आपस में एक-दुसरे से एकान्त में बातचीत होती है तो कहते हैं कि मूर्ख हो गए हो? इन लोगों को वे बातें बताते हो जो अल्लाह ने तुमपर खोली हैं ताकि तुम्हारे रब के पास तुम्हारे मुक़ाबले में उन्हें प्रमाण के रूप में प्रस्तुत करें? (77)—और क्या ये जानते नहीं हैं कि जो कुछ ये छुपाते हैं और जो कुछ ज़ाहिर करते हैं, अल्लाह को सब बातों की ख़बर है? (78)—इनमें एक दूसरा गिरोह उम्मियों का है जिनको (अल्लाह की) किताब का तो ज्ञान नहीं, बस अपनी निराधार आशाओं और कामनाओं को लिए बैठे हैं और केवल अटकल पर चले जा रहे हैं। (79) तो विनाश और तबाही है उन लोगों के लिए जो अपने हाथों से धर्म-विधान सम्बन्धी लेख्य लिखते हैं फिर लोगों से कहते हैं कि वह अल्लाह के पास से आया हुआ है ताकि इसके बदले में थोड़ा-सा लाभ उठा लें। उनके हाथों का यह लिखा भी उनके लिए तबाही का सामान है और उनकी यह कमाई भी उनके लिए विनाश का कारण। (80) वे कहते हैं कि नरक की आग हमें हरगिज़ छूनेवाली नहीं सिवाय इसके कि कुछ थोड़े दिनों की सज़ा मिल जाए तो मिल जाए। उनसे पूछो, क्या तुमने अल्लाह से कोई वचन ले लिया है जिसके विरूद्ध वह नहीं कर सकता? या बात यह है कि तुम अल्लाह से लगाकर ऐसी बातें कह देते हो जिनके सम्बन्ध में तुम्हें ज्ञान नहीं है कि उसने उनका ज़िम्मा लिया है? आख़िर तुम्हें नरक की आग क्यों न छुएगी? (81) जो भी बुराई कमाएगा और अपनी ग़लतकारी के चक्कर में पड़ा रहेगा, वह जहन्नमी (नरक में जानेवाला) है और नरक ही में वह हमेशा रहेगा। (82) और जो लोग ईमान लाएँगे और अच्छे कर्म करेंगे वही जन्नती (स्वर्गवाले) हैं और जन्नत में वे हमेशा रहेंगे।

29. यह सम्बोधन मदीना के उन नए मुसलमानों से है जो निकट समय ही में अरबी नबी (सल्ल॰) के अनुयायी हुए थे। इन लोगों के कान में पहले से नुबुव्वत (पैग़म्बरी), किताब, फ़रिश्तों, आख़िरत (परलोक), शरीअत (धर्म-विधान) आदि की जो बातें पड़ी हुई थीं, वे सब इन्होंने अपने पड़ोसी यहूदियों ही से सुनी थीं। इसलिए अब उन्हें यह आशा थी कि जो लोग पहले ही से नबियों और आसमानी किताबों के माननेवाले हैं और जिनकी दी हुई ख़बरों के कारण ही हमको ईमान की नेमत प्राप्त हुई है, वे अवश्य ही हमारा साथ देंगे, बल्कि इस रास्ते में आगे-आगे रहेंगे।

(83) याद करो, इसराईल की सन्तान से हमने पक्का वचन लिया था कि अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करना, माँ-बाप के साथ, नातेदारों के साथ, अनाथों और दीन-दुखियों के साथ अच्छा व्यवहार करना, लोगों से भली बात कहना, नमाज़ क़ायम करना और ज़कात देना, मगर थोड़े लोगों के सिवा तुम सब इस वचन से फिर गए और अब तक फिरे हुए हो। (84) फिर तनिक याद करो, हमने तुमसे पक्का वचन लिया था कि आपस में एक-दूसरे का ख़ून न बहाना और न एक-दूसरे को घर से बेघर करना। तुमने इसको स्वीकार किया था, तुम ख़ुद इसपर गवाह हो। (85) मगर आज वही तुम हो कि अपने भाई-बन्धुओं की हत्या करते हो, अपनी बिरादरी के कुछ लोगों को बेघर-बार कर देते हो, ज़ुल्म और ज़्यादती के साथ उनके विरूद्ध जत्थेबन्दियाँ करते हो, और जब वे लड़ाई में पकड़े हुए तुम्हारे पास आते हैं, तो उनकी रिहाई के लिए फिदये का लेन-देन करते हो, जबकि उन्हें उनके घरों से निकालना ही सिरे से तुमपर हराम था। तो क्या तुम किताब के एक हिस्से पर ईमान लाते हो, और दुसरे हिस्से का इनकार करते हो? फिर तुममें से जो लोग ऐसा करें, उनकी सज़ा इसके सिवा और क्या है कि सांसारिक जीवन में भी अपमानित और तिरस्कृत होकर रहें और आख़िरत (परलोक) में कठोरतम यातना की ओर फेर दिए जाएँ? अल्लाह उन कामों से बेख़बर नहीं है जो तुम कर रहे हो (86)—ये वे लोग हैं, जिन्होंने आख़िरत बेचकर, सांसारिक जीवन ख़रीद लिया हैं, अतः न इनकी सज़ा में कोई कमी होगी और न इन्हें कोई सहायता पहुँच सकेगी।

(87) हमने मूसा को किताब दी, उसके बाद लगातार रसूल भेजे, अन्त में मरयम के बेटे ईसा को स्पष्ट निशानियाँ देकर भेजा और पवित्र आत्मा[30] से उसकी सहायता की। फिर यह तुम्हारा क्या ढंग है कि जब भी कोई रसूल (पैग़म्बर) तुम्हारी अपनी इच्छाओं के खिलाफ़ कोई चीज़ लेकर तुम्हारे पास आया, तो तुमने उसके मुक़ाबले में सरकशी ही की, किसी को झुठलाया और किसी की हत्या कर ड़ाली! (88)—वे कहते हैं, हमारे दिल सुरक्षित हैं। नहीं, सच बात यह है कि उनके इनकार के कारण उनपर अल्लाह की फिटकार पड़ी है, इसलिए वे कम ही ईमान लाते हैं। (89)—और अब जो एक किताब अल्लाह की ओर से उनके पास आई है, उसके साथ उनका क्या

30. 'पवित्र आत्मा' से मुराद 'वह्य' (प्रकाशना) का ज्ञान भी है, और जिबरील नामक फ़रिश्ते भी जो प्रकाशना (Revelation) का ज्ञान लाते थे। और ख़ुद हज़रत ईसा मसीह (अलै॰) की अपनी पवित्र आत्मा भी, जिसको अल्लाह ने पवित्र गुणों से सुशोभित किया था।

व्यवहार है? इसके बावजूद कि वह उस किताब की पुष्टि करती है जो उनके पास पहले से मौजूद थी, इसके बावजूद कि उसके आने से पहले वे ख़ुद इनकार करनेवालों के मुक़ाबले में विजय और सहायता की प्रार्थनाएँ किया करते थे[31], परन्तु जब वह चीज़ आ गई, जिसे वे पहचान बी गए, तो उन्होंने उसे मानने से इनकार कर दिया। अल्लाह की लानत इन इनकार करनेवालों पर, (90) कैसा बुरा साधन है जिससे ये अपने जी की तसल्ली हासिक करते हैं[32] कि जो आदेश अल्लाह ने भेजा है उसे स्वीकार करने से केवल इस हठ के कारण इनकार कर रहे हैं कि अल्लाह ने अपने उदार दान (प्रकाशना और पैग़म्बरी) से अपने जिस बन्दे को ख़ुद चाहा, नवाज़ दिया।[33] अतः अब ये प्रकोप पर प्रकोप के अधिकारी हो गए हैं और ऐसे इनकार करनेवालों के लिए घोर अपमानजनक सज़ा निश्चित है।

(91) जब उनसे कहा जाता है कि जो कुछ अल्लाह ने उतारा है उसपर ईमान लाओ, तो वे कहते हैं, ''हम तो केवल उस चीज़ पर ईमान लाते हैं, जो हमारे यहाँ (अर्थात् इसराईल के वंशज में) उतरी है।'' इस परिधि से बाहर जो कुछ आया है, उसे मानने से वे इनकार करते हैं, जबकि वह सत्य है और उस शिक्षा की पुष्टि और समर्थन कर रहा है जो उनके यहाँ पहले से मौजूद थी। अच्छा, इनसे कहो : यदि तुम उस शिक्षा ही के माननेवाले हो जो तुम्हारे यहाँ आई थी, तो इससे पहले अल्लाह के उन पैग़म्बरों की (जो ख़ुद इसराईल के वंशज में पैदा हुए थे) क्यो हत्या करते रहे? (92) तुम्हारे पास मूसा कैसी-कैसी स्पष्ट निशानियों के साथ आया। फिर भी तुम ऐसे ज़ालिम थे कि उसके पीठ मोड़ते ही बछड़े को पूज्य बना बैठे। (93) फिर तनिक उस वचन को याद करो, जो तूर को तुम्हारे ऊपर उठाकर हमने तुमसे लिया था। हमने ताकीद की थी कि जो

31. हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के आने से पहले यहूदी बड़ी बेचैनी के साथ उस नबी का इनतिज़ार कर रहे थे जिसके आने की पूर्वसूचना उनके नबियों ने दी थी और प्रार्थनाएँ किया करते थे कि जल्दी से वह आए तो इनकार करनेवालों का प्रभुत्व समाप्त हो और हमारे उत्थान के युग का शुभारंभ हो।
32. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि ''कैसी बुरी चीज़ है, जिसके लिए इन्होंने अपनी जानों को बेच डाला।'' अर्थात् अपनी भलाई व कल्याण और अपनी मुक्ति को भेंट चढ़ा दिया।
33. ये लोग चाहते थे कि आनेवाला नबी इनकी अपनी क़ौम में पैदा हो। मगर जब वह एक दूसरी क़ौम में पैदा हुआ, जिसे वे अपने मुक़ाबले में नीचा समझते थे, तो वे उसके इनकार पर उतर आए। मानो उनका मतलब यह था कि अल्लाह उनसे पूछकर नबी भेजता।

आदेश हम दे रहे हैं, उसका मज़बूती के साथ पालन करो और कान लगाकर सुनो। तुम्हारे पूर्वजों ने कहा कि हमने सुन लिया, मगर मानेंगे नहीं। और उनकी असत्यप्रियता का हाल यह था कि दिलों में उनके बछड़ा ही बसा हुआ था। कहो : यदि तुम ईमानवाले हो, तो यह अनोखा ईमान है जो ऐसी बुरी बातों के लिए तुम्हें हुक्म देता है।

(94) इनसे कहो की यदि वास्तव में अल्लाह के निकट परलोक का घर सारे मनुष्यों को छोड़कर केवल तुम्हारे ही लिए ख़ास है तब तो तुम्हें चाहिए कि मौत की तमन्ना करो, यदि तुम अपने इस विचार में सच्चे हो (95)—विश्वास रखो कि ये कभी इसकी तमन्ना न करेंगे, इसलिए कि अपने हाथों जो कुछ कमाकर इन्होंने वहाँ भेजा है, उसकी यही अपेक्षा है (कि ये वहाँ जाने की तमन्ना न करें), अल्लाह इन ज़ालिमों को ख़ूब जानता है। (96) तुम इन्हें सबसे बढ़कर जीने का लोभी पाओगे यहाँ तक कि ये इस सम्बन्ध में मुशरिकों (बहुदेववादियों) से भी बढ़े हुए हैं। इनमें से एक-एक आदमी यह चाहता है कि किसी तरह हज़ार वर्ष जिए, हालाँकि लम्बी उम्र किसी हालत में भी उसे अज़ाब से तो नहीं बचा सकती। जेसे कुछ कर्म ये कर रहे हैं, अल्लाह तो उन्हें देख ही रहा है।

(97) इनसे कहो कि जो कोई जिबरील से दुश्मनी रखता हो[34], उसे मालूम होना चाहिए कि जिबरील ने अल्लाह ही के हुक्म से यह क़ुरआन तुम्हारे दिल पर उतारा है, जो पहले आई हुई किताबों की पुष्टि और समर्थन करता है और ईमान लानेवालों के लिए मार्गदर्शन और सफलता की ख़ुशख़बरी बनकर आया है। (98) (यदि जिबरील से इनकी दुश्मनी का कारण यही है, तो कह दो कि) जो अल्लाह और उसके फ़रिश्तों और उसके रसूलों और जिबरील और मीकाईल के दुष्मन हैं, अल्लाह उन इनकार करनेवालों का दुश्मन है।

(99) हमने तुम्हारी ओर ऐसी आयतें उतारी हैं जो साफ़-साफ़ सत्य को ज़ाहिर करनेवाली हैं। और उनके अनुपालन से केवल वही लोक इनकार करते हैं जो उल्लंघनकारी हैं। (100) क्या सदैव ऐसा ही नहीं होता रहा है कि जब इन्होंने कोई वचन दिया, तो इनमें से एक-न-एक गिरोह ने उसे अवश्य ही पीठ पीछे डाल दिया? बल्कि उनमें से बहुतेरे ऐसे ही हैं जो सच्चे दिल से ईमान नहीं लाते। (101) और जब उनके पास अल्लाह की ओर से कोई रसूल उस किताब की पुष्टि और समर्थन करता

34. यहूदी केवल नबी (सल्ल॰) को और आपके माननेवालों ही को बूरा न कहते थे, बल्कि ख़ुदा के पसंदीदा फ़रिश्ते जिबरील को भी गालियाँ देते थे और कहते थे कि वह हमारा दुश्मन है। वह दया का नहीं, अज़ाब का फ़रिश्ता है।

हुआ आया जो इनके यहाँ पहले से मौजूद थी, तो इन किताबवालों में से एक गिरोह ने अल्लाह की किताब को इस तरह पीठ पीछे डाल दिया मानो वे कुछ जानते ही नहीं। (102) और लगे उन चीज़ों का अनुसरण करने जो शैतान, सुलैमान के राज्य का नाम लेकर पेश किया करते थे, हालाँकि सुलैमान ने कभी 'कुफ़्र' नहीं किया, कुफ़्र में तो वे शैतान पड़े थे जो लोगों को जादूगरी की शिक्षा देते थे। वे पीछे पड़े उस चीज़ के जो बाबिल में दो फ़रिश्तों, हारूत और मारूत पर उतारी गई थी, हालाँकि, वे (फ़रिश्ते) जब भी किसी को उसकी शिक्षा देते थे, तो पहले स्पष्ट रूप से सावधान कर दिया करते थे कि "देख, हम केवल एक आज़माइश हैं, तू कुफ़्र में न पड़।[35] फिर भी ये लोग उनसे वही चीज़ सीखते थे जिससे पति और पत्नी में जुदाई डाल दें। यह खुली हुई बात थी कि अल्लाह की इजाज़त के बिना वे इसके द्वारा किसी को भी नुक़सान नहीं पहुँचा सकते थे, किन्तु फिर भी वे ऐसी चीज़ सीखते थे जो ख़ुद उनके लिए लाभकारी नहीं, बल्कि हानिकारक थी और वे ख़ूब जानते थे कि जो इस चीज़ का ख़रीदार बना उसके लिए आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं। कितना बुरा उपभोग्य था जिसका उन्होंने उपनी जानों के बदले सौदा किया, क्या ही अच्छा होता यदि वे जानते होते! (103) यदि वे ईमान और तक़वा (परहेज़गारी) को अपनाते, तो अल्लाह के यहाँ इसका जो बदला मिलता, वह उनके लिए अधिक अच्छा था। क्या ही अच्छा होता कि उन्हें इसकी ख़बर होती!

(104) ऐ ईमान लानेवालो! "रा'इना" न कहा करो, बल्कि "उनज़ुरना' कहो और ध्यान से बात को सुनो[36], ये इनकार करनेवाले तो दुखदायी अज़ाब के हक़दार हैं। (105) ये लोग जिन्होंने सत्य सन्देश को स्वीकार करने से इनकार कर दिया है, चाहे किताबवालों में से हो या मुशरिक (बहुदेववादी) हों, हरगिज़ ये नहीं चाहते कि तुम्हारे रब

35. इस आयत की व्याख्या में कई बातें कही जाती हैं, मगर जो कुछ मैंने समझा है वह यह है कि जिस ज़माने में इसराईली वंशज की पूरी क़ौम बाबिल में बन्दी और दास बनी हुई थी, अल्लाह ने दो फ़रिश्तों को इनसानी शक्ल में उनकी आज़माइश के लिए भेजा होगा। जिस तरह लूत (अलै॰) की क़ौमवालों के पास फ़रिश्ते सुन्दर लड़कों के रूप में गए थे, उसी तरह इन इसराईलियों के पास वे पीरों और सन्तों के रूप में गए होंगे। वहाँ एक ओर उन्होंने जादूगरी के बाज़ार में अपनी दुकान लगाई होगी और दूसरी ओर वे हर एक को सावधान भी कर देते रहे होंगे कि वे कल कोई इलज़ाम न दे सकें। फ़रिश्ते कहते रहे होंगे कि हम तुम्हारे लिए आज़माइश हैं, तुम अपना पारलौकिक जीवन न बिगाड़ो। मगर इसके बावजूत लोग उनके प्रस्तुत किए हुए तांत्रिक उपकृतियों और जन्त्रों और तावीज़ों पर टूटे पड़ते होंगे।

की ओर से तुमपर कोई भलाई उतरे, मगर अल्लाह जिको चाहता है, अपनी कृपा के लिए चुन लेता है और वह बड़ा उदार दानकर्ता है।

(106) हम अपनी जिस आयत को मनसूख़ (निरस्त) कर देते हैं या भुला देते हैं, उसकी जगह उससे बेहतर लाते हैं या कम से कम वैसी ही।[37] क्या तुम जानते नहीं हो कि अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है? (107) क्या तुम्हें पता नहीं कि धरती और आकाशों का शासन अल्लाह ही के लिए है और उसके सिवा कोई तुम्हारा संरक्षक और तुम्हारा मददगार नाहीं है?

(108) फिर क्या तुम अपने रसूल से उसी प्रकार के प्रश्न करना और माँग करना चाहते हो जैसा कि इससे पहले मूसा से किए जा चुके हैं?[38] हालाँकि जिस आदमी ने ईमान की रीति को कुफ़्र की रीति से बदल लिया, वह सीधे रास्ते से भटक गया। (109) किताबवालों में बहुतेरे लोग यह चाहते हैं कि किसी तरह तुम्हे ईमान से फेरकर फिर कुफ़्र की ओर पलटा ले जाएँ। हालाँकि सत्य उनपर प्रकट हो चुका है, किन्तु अपने जी की ईर्ष्या के कारण तुम्हारे लिए उनकी यह इच्छा है। इसके बदले में तुम माफ़ी और

36. यहूदी जब नबी (सल्ल॰) की मज़लिस में आते तो अपने सलाम और बातचीत में हर संभव उपाय से अपने दिल का बुख़ार निकालने की कोशिस करते थे। जब नबी (सल्ल॰) की बातचीत के बीच में यहूदियों को कभी यह कहने की ज़रूरत होती कि ठहरिए, तनिक हमें यह बात समझ लेने दीजिए, तो वे "रा'इना" कहते थे। इस शब्द का खुला अर्थ तो यह था कि ज़रा हमारी रिआयत कीजिए या हमारी बात सुन लीजिए, मगर इसमें कई पहलुओं से बुरे अर्थ भी निकलते थे। इसलिए मुसलमानों को आदेश दिया गया कि तुम इस शब्द को प्रयोग में लाने से बचो और इसके बदले में "उनजुरना' कहा करो। अर्थात् हमारी ओर ध्यान दीजिए या तनिक हमें समझ लेने दीजिए।

37. यह एक विशेष सन्देह का उत्तर है जो यहूदी मुसलमानों के दिलों में डालने की कोशिश करते थे। उनकी आपत्ति यह थी कि अगर पिछली किताबें भी ईश्वर की ओर से आई थी और यह क़ुरआन भी ईश्वर की ओर से है, तो उनके कुछ आदेशों की जगह इसमें दूसरे आदेश क्यो दिए गए हैं?

38. यहूदी बाल की खाल निकालकर तरह-तरह के प्रश्न मुसलमानों के सामने रखते थे और उन्हें उकसाते थे कि अपने बनी से यह पूछो और यह पूछो और यह पूछो। इसपर अल्लाह मुसलमानों को सावधान कर रहा है कि इस मामले में यहूदियों की नीति अपनाने से बचो।

दरगुज़र से काम लो यहाँ तक कि अल्लाह ख़ुद ही अपना फ़ैसला लागू कर दे। इत्मीनान रखो कि अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (110) नमाज़ क़ायम करो और ज़कात दो। तुम अपने पारलौकिक (आख़िरत के) जीवन के लिए जो भलाई कमाकर आगे भेजोगे, अल्लाह के यहाँ उसे मौजूद पाओगे। जो कुछ तुम करते हो, वह सब अल्लाह की नज़र में है।

(111) उनका कहना है कि कोई आदमी जन्नत में न जाएगा जब तक वह यहूदी न हो या (ईसाईयों के विचार के अनुसार) ईसाई न हो। ये उनकी तमन्नाएँ हैं। उनसे कहो, अपना सबूत पेश करो, यदि तुम अपने दावे में सच्चे हो। (112) (वास्तव में न तुम्हारी कुछ विशेषता है, न किसी और की) सत्य यह है कि जो भी अपने आपको अल्लाह के आज्ञापालन में समर्पित कर दे और व्यवहारतः नेकी की राह अपनाए, उसके लिए उसके रब के पास उसका बदला है और ऐसे लोगों के लिए किसी भय या शोक का कोई अवसर नहीं।

(113) यहूदी कहते हैं : ईसाइयों के पास कुछ नहीं। ईसाई कहते हैं : यहूदियों के पास कुछ नहीं—हालाँकि दोनों ही किताब पढ़ते है—और इसी प्रकार के दावे उनके भी है जिनके पास किताब का ज्ञान नहीं है। ये मतभेद जिनमें ये लोग पड़े हुए हैं, इनका फ़ैसला अल्लाह क़ियामत के दिन कर देगा।

(114) और उस व्यक्ति से बढ़कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह की इबादत की जगहों में उसके नाम की याद से रोके और उन्हें उजाड़ने पर उतारू हो? ऐसे लोग इस योग्य हैं कि इन इबादतघरों में क़दम न रखें और यदि वहाँ जाएँ भी तो डरते हुए जाएँ। उनके लिए संसार में रुसवाई (अपमान) है और आख़िरत में बड़ी यातना।

(115) पूरब और पश्चिम सब अल्लाह के हैं। जिस ओर भी तुम रुख़ करोगे, उसी ओर अल्लाह का रुख़ है। अल्लाह सर्वव्यापी और सब सुछ जाननेवाला है।

(116) उनका कहना है कि अल्लाह ने किसी को बेटा बनाया है। अल्लाह पाक है इन बातों से। वास्तविक तथ्य यह है कि धरती और आकाशों में पाई जानेवाली सभी चीज़ों का वह मालिक है, सब के सब उसके आज्ञाकारी हैं, (117) वह आकाशों और धरती का ईजाद करनेवाला है, और जिस बात का वह फ़ैसला करता है, उसके लिए बस वह आदेश देता है कि 'हो जा' और वह हो जाती है।

(118) जिन्हें ज्ञान नहीं वे कहते हैं कि अल्लाह ख़ुद हमसे बात क्यों नहीं करता या कोई निशानी हमारे पास क्यों नहीं आती? ऐसी ही बातें इनसे पहले लोग भी किया

करते थे। इन सब (अगले-पिछले गुमराहों) की मनोवृत्तियाँ एक जैसी हैं। विश्वास करनेवालों के लिए तो हम निशानियाँ साफ़-साफ़ स्पष्ट कर चुके हैं। (119) (इससे बढ़कर निशानी क्या होगी कि) हमने तुमको सत्य-ज्ञान के साथ ख़ुशख़बरी देनेवाला और डरानेवाला बनाकर भेजा।[39] अब जो लोग नरक से सम्बन्ध जोड़ चुके हैं, उनकी ओर से तुम उत्तरदायी नहीं हो।

(120) यहूदी और ईसाई तुमसे हरगिज़ राज़ी न होंगे जब तक तुम उनके तरीक़े पर न चलने लगो। साफ़ कह दो कि मार्ग बस वही है जो अल्लाह ने बताया है। वरना यदि उस ज्ञान के बाद, जो तुम्हारे पास आ चुका है, तुमने उनकी इच्छाओं का अनुसरण किया, तो अल्लाह की पकड़ से बचानेवाला कोई दोस्त और मददगार तुम्हारे लिए नहीं है। (121) जिन लोगों को हमने किताब दी है, वे उसे उस तरह पढ़ते हैं जैसा कि पढ़ने का हक़ है। वे इस (क़ुरआन) पर सच्चे दिल से ईमान ले आते हैं।[40] और जो इसके साथ इनकार की नीति अपनाएँ, वही वास्तव में नुक़सान उठानेवाले हैं।

(122) ऐ इसराईल की सन्तान, याद करो मेरी वह नेमत, जो मैंने तुम्हें दी थी और यह कि मैंने तुम्हें संसार की समस्त जातियों पर श्रेष्ठता प्रदान की थी। (123) और डरो उस दिन से जब कोई किसी के तनिक भी काम न आएगा, न किसी से कोई अर्थदण्ड (जुर्माना) स्वीकार किया जाएगा, न कोई सिफ़ारिश ही आदमी को फ़ायदा पहुँचा सकेगी, और न अपराधियों को कहीं से कोई सहायता पहुँच सकेगी।

(124) याद करो कि जब इबराहीम को उसके रब ने कुछ बातों में आज़माया और वह उन सब में पूरा उतर गया, तो उसने कहा : ''मैं तुझे सब लोगों का पेशवा बनानेवाला हूँ।'' इबराहीम ने निवेदन किया : ''और क्या मेरी सन्तान से भी यही वादा

39. अर्थात् दूसरी निशानियों का क्या ज़िक्र अत्यन्त स्पष्ट निशानी तो मुहम्मद (सल्ल॰) का अपना व्यक्तित्व है। नबी होने से पहले के आपके वृतान्त, और उस जाति और देश की स्थिति जिसमें आपका जन्म हुआ, और वे परिस्थितीयाँ जिनमें आप पले-बढ़े और 40 वर्ष जीवन व्यतीत किया, और फिर वह महान् कार्य जो नबी होने के बाद आपने किया, ये सब कुछ एक ऐसी खुली हुई निशानी है जिसके बाद किसी और निशानी की ज़रूरत नहीं रहती।

40. यह किताबवालों के अच्छे लोगों की ओर संकेत है कि ये लोग इस कारण से कि सत्य-निष्ठा और सच्चाई के साथ ख़ुदा की उस किताब को पढ़ते हैं जो उनके पास पहले से मौजूद थी, इसलिए वे इस क़ुरआन को सुनकर या पढ़कर इसपर ईमान ले आते हैं।

है?'' उसने उत्तर दिया : मेरा वादा ज़ालिमों के बारे में नहीं है।''[41]

(125) और यह कि हमने इस घर (काबा) को लोगों के लिए केन्द्र और शान्ति की जगह ठहराया था और लोगों को आदेश दिया था कि इबराहीम जहाँ इबादत के लिए खड़ा होता है उस जगह को स्थायी रूप से नमाज़ की जगह बना लो, और इबराहीम और इसमाईल को ताकीद की थी कि मेरे इस घर को तवाफ़ (परिक्रमा) और एतिकाफ़ करनेवालों और झुकनेवालों और सजदा करनेवालों के लिए शुद्ध (पाक) रखो।

(126) और यह कि इबराहीम ने प्रार्थना की : ''ऐ मेरे रब, इस नगर को शान्तिमय नगर बना दे, और इसके निवासियों में से जो अल्लाह और आख़िरत को मानें, उन्हें हर प्रकार के फलों की रोज़ी दे।'' जवाब में उसके रब ने कहा : ''और जो न मानेगा, अल्प सांसारिक जीवन की सामग्री तो मैं उसे भी दूँगा, किन्तु अन्त में उसे जहन्नम के अज़ाब की ओर घसीटूँगा, और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है।''

(127) और याद करो, इबराहीम और इसमाईल जब इस घर की दीवारे उठा रहे थे, तो दुआ करते जाते थे : ''ऐ हमारे रब, हमसे यह सेवा स्वीकार कर ले, तू सबकी सुनने और सब कुछ जाननेवाला है। (128) ऐ रब, हम दोनों को अपना मुसलिम (आज्ञाकारी) बना, हमारी सन्तति से एक ऐसी क़ौम उठा, जो तेरी मुसलिम (आज्ञाकारी) हो, हमें अपनी उपासना के तरीक़े बता, और हमारी कोताहियों को माफ़ कर, तू बड़ा माफ़ करनेवाला और दयावान है। (129) और ऐ हमारे रब, इन लोगों में ख़ुद इन्हीं की क़ौम से एक रसूल उठाना, जो इन्हें तेरी आयते सुनाए, इनको किताब और समझ की शिक्ष दे और इनके जीवन सँवारे। तू बड़ा प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।''

(130) अब कौन है जो इबराहीम के तरीक़े से नफ़रत करे? जिसने ख़ुद अपने-आपको मूर्खता और अज्ञान में ग्रस्त कर लिया हो उसके सिवा कौन यह हरकत कर सकता है? इबराहीम तो वह व्यक्ति है जिसको हमने संसार में अपने कार्य के लिए चुन लिया था और परलोक में उसकी गिनती अच्छों में होगी। (131) उसका हाल यह था कि जब उसके रब ने उससे कहा : ''मुसलिम (आज्ञाकारी)[42] हो जा'', तो उसने तुरन्त कहा : ''मैं जगत के स्वामी का 'मुसलिम' (आज्ञाकारी) हो गया।'' (132) इसी तरीक़े

41. अर्थात् यह वादा तुम्हारी सन्तान के केवल उन लोगों से सम्बन्ध रखता है जो अच्छे हैं। उनमें से जो ज़ालिम होंगे, उनके लिए यह वादा नहीं है। यहाँ ज़ालिम से मुराद केवल इनसानों पर ही अत्याचार करनेवाला नहीं है, बल्कि सत्य और सच्चाई पर ज़ुल्म करनेवाला भी है।

पर चलने की ताकीद उसने अपने औलाद को की थी और इसी की वसीयत याक़ूब अपनी सन्तान को कर गया था। उसने कहा था कि ''मेरे बच्चो, अल्लाह ने तुम्हारे लिए यही धर्म पसन्द किया है। अतः मरते समय तक मुसलमि (आज्ञाकारी) ही रहना।'' (133) फिर क्या तुम उस समय मौजूद थे जब याक़ूब इस संसार से विदा हो रहा था? उसने मरते समय अपने बेटों से पुछा : ''बच्चो, मेरे पीछे तुम किसकी बन्दगी करोगे?'' उन सबने उत्तर दिया : ''हम उसी एक ख़ुदा की बन्दगी करेंगे जिसे आपने और आपके पूर्वज इबराहीम, इसमाईल और इसहाक़ ने ख़ुदा माना है और हम उसी के मुसलिम (आज्ञाकारी) हैं।''

(134) वे कुछ लोग थे, जो जा चुके। जो कुछ उन्होंने कमाया, वह उनके लिए है और जो कुछ तुम कमाओगे, वह तुम्हारे लिए है। तुमसे यह न पूछा जाएगा कि वे क्या करते थे।

(135) यहूदी कहते हैं : यहूदी हो, तो सीधा मार्ग पाओगे। ईसाई कहते हैं : ईसाई हो, तो सीधा मार्ग मिलेगा। उनसे कहो, ''नहीं, बल्कि सबको छोड़कर इबराहीम का पन्थ। और इबराहीम बहुदेववादियों में से न था।'' (136) मुसलमानो, कहो कि : ''हम ईमान लाए अल्लाह और उस मार्गदर्शन पर जो हमारी ओर उतरा है और जो इबराहीम, इसमाईल, इसहाक़, याक़ूब, और याक़ूब की सन्तान की ओर उतरा था और जो मूसा और ईसा और दूसरे सभी पैग़म्बरों को उनके रब (प्रभु) की ओर से दिया गया था। हम उनके बीच कोई अन्तर नहीं करते और हम अल्लाह के मुसलिम (आज्ञाकारी) हैं।''

(137) फिर यदि वे उसी तर ईमान लाएँ, जिस तरह तुम ईमान लाए हो, तो सीधे मार्ग पर हैं, और अगर इससे मुँह फेरे, तो खुली बात है कि वे हठधर्मी में पड़ गए हैं। अतः विश्वास रखो कि उनके मुकाबले में अल्लाह तुम्हारी सहायता के लिए काफ़ी है। वह सब कुछ सुनता और जानता है।

(138) कहो, ''अल्लाह का रंग इख़तियार करो। उसके रंग से अच्छा और

42. 'मुसलिम' : वह जो अल्लाह के आदेशानुपालन में अपने को समर्पित कर दे, अल्लाह ही को अपना मालिक, स्वामी, शासक और पूज्य मान ले, जो अपने-आपको पूर्ण रूप से अल्लाह को सौंप दे और उस आदेश के अनुसार संसार में जीवन व्यतीत करे जो अल्लाह की ओर से आया हो। इस धारणा और इस नीति का नाम 'इस्लाम' है और यही सब नबियों का धर्म था जो सृष्टि के आरंभ से संसार के विभिन्न देशों और क़ौमों में आए।

किसका रंग होगा? और हम उसी की बन्दगी करनेवाले लोग हैं।''

(139) ऐ नबी, इनसे कहो : ''क्या तुम अल्लाह के बारे में हमसे झगड़ते हो? हालाँकि वही हमारा रब भी है और तुम्हारा रब भी। हमारे कर्म हमारे लिए हैं, तुम्हारे कर्म तुम्हारे लिए, और हम अल्लाह ही के लिए अपनी बन्दगी ख़ालिस कर चुके हैं। (140) या फिर तुम्हारा कहना यह है कि इबराहीम, इसमाईल, इसहाक़, याकूब और याकूब की औलाद सब के सब यहूदी थे या ईसाई थे?'' कहो : '' तुम ज़्यादा जानते हो या अल्लाह? उस व्यक्ति से बढ़कर ज़ालिम कौन होगा, जिसके ज़िम्मे अल्लाह की ओर से एक गवाही हो और वह उसे छुपाए? तुम्हारी करतुतों से अल्लाह बेख़बर तो नहीं है (141)—वे कुछ लोग थे जो जा चुके। उनकी कमाई उनके लिए थी और तुम्हारी कमाई तुम्हारे लिए। तुमसे उनके कर्मों के बारे में पूछा नहीं जाएगा।''

(142) नादान लोग ज़रूर कहेंगे : इन्हें क्या हुआ कि पहले ये जिस किबले की ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़ते थे, उससे अचानक फिर गए?[43] ऐ नबी, इनसे कहो : ''पूरब और पश्चिम सब अल्लाह के हैं। अल्लाह जिसे चाहरता है, सीधा मार्ग दिखा देता है।'' (143) और इसी तरह तो हमने तुम मुसलमानों को एक 'उत्तम समुदाय'[44] बनाया

43. नबी (सल्ल०) मक्का से हिजरत करने के बाद मदीना में सोलह या सतरह महीने तक बैतुल मक़दिस की ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़ते रहे। फिर काबा की तरफ़ मुँह करके नमाज़ पढ़ने का हुक्म आया।

44. यहाँ 'उम्मते वसत' शब्द प्रयुक्त हुआ है। इससे मुराद एक ऐसा उच्च और उत्तम गिरोह है जो न्याय और इनसाफ और उचित एवं मध्यमार्ग का अनुगामी हो, जिसे संसार की जातियों के बीच प्रधानता प्राप्त हो, जिसका सम्बन्ध सबके साथ समान सच्चाई और सत्यता का हो और अनुचित और ग़लत सम्बन्ध किसी से न हो।

45. इससे मुराद यह है कि आख़िरत में जब पूरी मानवता का इकट्ठा हिसाब लिया जाएगा, उस समय अल्लाह के उत्तरदायी प्रतिनिधि के रूप में रसूल तुमपर गवाही देगा कि सत्य धारणा और अच्छे कर्म और न्याय-प्रणाली की जो शिक्षा हमने उसे दी थी, वह उसने तुमको बिना किसी कमी-बेशी के पूरी की पूरी पहुँचा दी और व्यवहारतः उसके अनुसार काम करके दिखा दिया। इसके बाद रसूल के क़ायम मुक़ाम होने की हैसियत से तुम्हें जन-सामान्य पर गवाह बनकर उठना होगा और यह गवाही देनी होगी कि रसूल ने जो कुछ तुम्हें पहुँचाया था, वह तुमने उन्हें पहुँचाने में, और जो कुछ रसूल ने तुम्हें काम करके दिखाया था तुमने वह काम करके दिखाने में अपनी हद तक कोई कोताही नहीं की।

है ताकि तुम दुनिया के लोगों पर गवाह हो और रसूल तुमपर गवाह हो।[45]

पहले जिस ओर तुम रुख़ करते थे, उसको तो हमने सिर्फ़ यह देखने के लिए क़िबला ठहराया था कि कौन रसूल का अनुसरण करता है और कौन उलटा फिर जाता है। यह मामला था तो बड़ा भारी, मगर उन लोगों के लिए कुछ भी भारी सिद्ध न हुआ जिन्हें अल्लाह का मार्गदर्शन प्राप्त था। अल्लाह तुम्हारे इस ईमान (आस्था) को हरगिज़ अकारथ न करेगा, यक़ीन जानो कि वह लोगों के लिए अत्यन्त करुणामय और दयावान् है।

(144) ऐ नबी, यह तुम्हारे मुँह का बार-बार आसमान की ओर उठना हम देख रहे हैं। लो, हम उसी क़िबले की ओर तुम्हें फेरे देते हैं जिसे तुम पसन्द करते हो। प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) की ओर रुख़ फेर दो। अब जहाँ कहीं तुम हो, उसी की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ा करो।[46]

ये लोग जिन्हें किताब दी गई थी, ख़ुब जानते है कि (क़िबला बदलने का) यह आदेश उनके रब ही की ओर से है और सत्य पर आधारित है, मगर इसके बावजूद ये जो कुछ कर रहे हैं, अल्लाह उससे बेख़बर नहीं है। (145) तुम इन कितावालों के पास चाहे कोई निशानी ले आओ, संभव नहीं कि ये तुम्हारे क़िबले का अनुसरण करने लगे, और न तुम्हारे लिए यह संभव है कि इनके क़िबले का अनुसरण करो, और इनमें से कोई गिरोह भी दूसरे के क़िबले के अनुसरण के लिए तैयार नहीं है, और अगर तुमने उस ज्ञान के बाद, जो तुम्हारे पास आ चुका है, उनकी इच्छाओं का अनुसरण किया, तो निश्चय ही तुम्हारी गिनती अत्याचारियों में होगी। (146) जिन लोगों को हमने किताब दी

46. यह है वह मूल आदेश, जो क़िबला बदलने के बारे में दिया गया था। यह हुक्म रजब या शाबान सन् 02 हिजरी में अवतरित हुआ। नबी (सल्ल०) एक सहाबी के यहाँ दावत पर गए हुए थे। वहाँ ज़ुह्र की नमाज़ का समय आ गया और आप लोगों को नमाज़ पढ़ाने खड़े हुए। दो 'रकअतें' पढ़ा चुके थे कि तीसरी 'रकअत' में सहसा प्रकाशना के द्वारा यह आयत उतरी और उसी समय आप और आपके अनुसरण में जमाअत के सभी लोग 'बैतुल मक़दिस' से काबे की दिशा की ओर फिर गए। इसके बाद मदीना और मदीना के चारों तरफ़ सामान्य रूप से इसकी घोषणा करा दी गई। और यह जो कहा कि ''हम तुम्हारे मुँह का बार-बार आकाश की ओर उठना देख रहे हैं'' और यह कि ''हम उस दिशा की ओर तुम्हें फेरे देते हैं, जिस तुम पसन्द करते हो'', इससे साफ़ मालूम होता है कि क़िबला बदलने का आदेश आने से पहले नबी (सल्ल०) इसके इनतिज़ार में थे।

है, वे इस जगह को (जिसे क़िबला बनाया गया है) ऐसा पहचानते हैं, जैसा अपनी सन्तान को पहचानते हैं[47], मगर उनमें से एक गिरहो जानते-बुझते सत्य को छिपा रहा है। (147) यह निश्चय ही एक सच्ची चीज़ है तुम्हारे रब की ओर से, अतः इसके प्रति तुम हरगिज़ किसी शक में न पड़ो। (148) हर एक के लिए एक रुख़ है जिसकी ओर वह मुड़ता है। अतः तुम भलाइयों की ओर बढ़ने में अग्रसरता दिखाओ। जहाँ भी तुम होगे, अल्लाह तुम्हें पा लेगा। उसकी क़ुदरत से कोई चीज़ बाहर नहीं।

(149) तुम जिस जगह से भी होकर जाओ, वहीं से अपना रुख़ (नमाज़ के समय) प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) की ओर फेर दो, क्योंकि यह तुम्हारे रब का बिलकुल सत्य पर आधारित फ़ैसला है और अल्लाह तुम लोगों के कर्मों से बेख़बर नहीं है। (150) और जहाँ से भी होकर जाओ, अपना रुख़ प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) ही की ओर फेरा करो, और जहाँ भी तुम हो, उसी की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ो, ताकि लोगों को तुम्हारे खिलाफ़ झगड़ने की कोई दलील न मिले[48]—हाँ, जो उनमें से ज़ालिम हैं, वे तो कभी चुप न होंगे। तो उनसे तुम न ड़रो, बल्कि मुझसे जरो,—और[49] इसलिए कि मेरी नेमत तुमपर पूरी हो और इस आशा में कि मेरे इस आदेश के अनुपालन से तुम उसी तरह कामयाबी का मार्ग पाओगे, (151) जिस तरह (तुम्हारा इस चीज़ से कल्याण हुआ कि) हमने तुम्हारे बीच ख़ुद तुममें से एक रसूल भेजा, जो तुम्हें हमारी आयतें सुनाता है, तुम्हारे जीवन को सँवारता है, तुम्हें किताब और तत्त्वदर्शिता की शिक्षा देता है, और तुम्हें वे बातें सिखाता हैं जो तुम न जातने थे। (152) अतः तुम मुझे याद रखो, मैं तुम्हें याद रखूँगा, और मेरा शुक्र अदा करो, नाशुक्री न करो।

(153) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, सब्र और नमाज़ से मदद लो। अल्लाह सब्र

47. यह अरब का मुहावरा है। जिस चीज़ को आदमी निश्चित रूप से जानता हो उसे यूँ कहते हैं कि वह उस चीज़ को ऐसा पहचानता है, जैसा अपनी सन्तान को पहचानता है। यहूदियों और ईसाईयों के विद्वान वास्तव में यह बात अच्छी तरह जानते थे कि 'काबा' का निर्माण हज़रत इबराहीम (अलै॰) ने किया था और इसके विपरित 'बैतुल मक़दिस' इसके 13 सौ वर्ष के बाद हज़रत सुलैमान के हाथों निर्मित हुआ। यह बात किसी से भी छुपी हुई न थी।
48. अर्थात् किसी को यह कहने का अवसर न मिले कि ये अच्छे ईमानवाले हैं जो अपने ख़ुदा के स्पष्ट आदेश का उल्लंघन करते हैं।
49. इस वाक्य का सम्बन्ध इस वर्णन से है कि "उसी की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ो ताकि लोगों को तुमहारे खिलाफ़ झगड़ने की कोई दलील न मिले।"

करनेवालों के साथ है। (154) और जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे जाएँ, उन्हें मुर्दा न कहो, ऐसे लोग तो वास्तव में जिन्दा हैं, लेकिन उनकी ज़िन्दगी को तुम जान नहीं पाते। (155,156) और हम ज़रूर तुम्हें डर, भूख, जान-माल की हानियों और आमदनियों के घाटे में डालकर तुम्हारी आज़माइश करेंगे। इन हालात में जो लोग सब्र से काम लें और जब कोई मुसीबत पड़े, तो कहें कि "हम अल्लाह ही के हैं और अल्लाह ही की ओर हमें पलटकर जाना है", उन्हें ख़ुशख़बरी दे दो। (157) उनपर उनके रब की ओर से बड़ी कृपाएँ होंगी, उसकी दयालुता उनपर साया करेगी और ऐसे ही लोग सीधे मार्ग पर चलनेवाले हैं।

(158) यक़ीनन सफ़ा और मरवा अल्लाह की निशानियों में से हैं। अतः जो व्यक्ति अल्लाह के घर का हज या उमरा (दर्शन) करे[50] उसके लिए इसमें कोई हरज नहीं कि वह इन दोनों पहाड़ियों के बीच तेज़ी से फेरा लगाए और जो व्यक्ति स्वेच्छा से कोई भलाई का कार्य करेगा, अल्लाह को उसका ज्ञान है और वह उसकी क़द्र करनेवाला है।

(159) जो लोग हमारी उतारी हुई खुली शिक्षाओं और आदेशों को छिपाते हैं, हालाँकि हम उन्हें सारे इनसानों के मार्गदर्शन के लिए अपनी किताब में बयान कर चुके हैं, यक़ीन जानो कि अल्लाह की भी उनपर फिटकार है और सभी फिटकारनेवाले भी उन्हें फिटकारते हैं। (160) अलबत्ता जो इस रवैये को छोड़ दें और अपने व्यवहार सुधार लें और जो कुछ छिपाते थे, उसे बयान करने लगे, उनको मैं माफ़ कर दूँगा और मैं बड़ा माफ़ करनेवाला और दयावान हूँ।

(161) जिन लोगों ने कुफ़्र (न मानने) की नीति[51] अपनाई और कुफ़्र ही की हालतमें मरे, उनपर अल्लाह और फ़रिश्तों और सारे इनसानों की फिटकार है। (162) इसी तिरस्कार की हालत में वे हमेशा रहेंगे, न उनकी सज़ा में कमी होगी और न उन्हें फिर कोई दूसरी मुहलत दी जाएगी।

(163) तुम्हारा पूज्य-प्रभु एक ही पूज्य-प्रभु है, उस करुणामय और दयावान के सिवा कोई और पूज्य-प्रभु नहीं है। (164) (इस सत्य को पहचानने के लिए अगर कोई निशानी और लक्षण अपेक्षित है तो) जो लोग अक़्ल से काम लेते हैं उनके लिए आसमानों और ज़मीन की संरचना में, रात और दिन के निरन्तर एक-दूसरे के बाद आने में, उन नौकाओं में जो इनसान के लाभ की चीज़ें लिए हुए नदियों और समुद्रों में

50. ज़िलहिज्जा महीने की निश्चित तिथियों में काबा की जो ज़ियारत (दर्शन) की जाती है उसका नाम हज है और उन तिथियों के अलावा दूसरे किसी समय में जो दर्शन किए जाएँ, वह 'उमरा' है।

चलती-फिरती हैं, बारिश के उस पानी में जिसे अल्लाह ऊपर से बरसाता है फिर उसके द्वारा मुर्दा ज़मीन को जीवन प्रदान करता है, और (अपनी इसी व्यवस्था के कारण) धरती में हर तरह के जीवधारियों को फैलाता है, हवाओं की गर्दिश में, और उन बादलों में जो आसमान और ज़मीन के बीच आज्ञा के वशीभूत बनाकर रखे गए हैं, अनगिनत निशानियाँ हैं। (165) (किन्तु एकेश्वरवाद को प्रमाणित करनेवाले इन खुले-खुले लक्षणों के होते हुए भी) कुछ लोग ऐसे हैं जो अल्लाह के सिवा दूसरों को उसका समकक्ष और प्रतिद्वन्द्वी बनाते हैं और उनके प्रति ऐसे आसक्त हैं जैसी अल्लाह के साथ आसक्ति होनी चाहिए—हालाँकि ईमान रखनेवाले लोगों को सबसे बढ़कर अल्लाह प्रिय होता है—क्या ही अच्छा होता, जो कुछ अज़ाब को सामने देखकर उन्हें सूझनेवाला है वह आज ही इन ज़ालिमों को सुझ जाए कि सारी शक्तियाँ और सारे अधिकार अल्लाह ही के हाथ में हैं और यह कि अल्लाह सज़ा देने में भी बहुत सख़्त है। (166) जब वह सज़ा देगा उस समय हालत यह होगी कि वही पेशवा और नेता, जिनका संसार में अनुपालन किया गया था, अपने अनुयायियों से विरक्त हो जाएँगे, लेकिन सज़ा पाकर रहेंगे और उनके सारे उपक्रमों और साधनों का सिलसिला कट जाएगा। (167) और वे लोग जो

51. यहाँ 'कुफ़्र' शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'कुफ़्र' शब्द ईमान के मुक़ाबले में बोला जाता है। ईमान का अर्थ है मानना, क़बूल करना, स्वीकार करना। इसके विपरीत 'कुफ़्र' के अर्थ हैं—न मानना, रद्द कर देना, इनकार करना। क़ुरआन की दृष्टि में कुफ़्र की नीति के विभिन्न रूप हैंः एक यह कि इनसान सिरे से अल्लाह ही को न माने, या उसके सम्प्रभुत्व को स्वीकार न करे और उसको अपना और सारे जगत् का स्वामी और पूज्य मानने से इनकार कर दे, या उसे अकेला मालिक और पूज्य न माने। दूसरे यह कि अल्लाह को तो माने मगर उसके आदेश और उसके निर्देश को ज्ञान और क़ानून का एकमात्र स्रोत स्वीकार करने से इनकार कर दे। तीसरे यह कि सैद्धान्तिक रूप से इस बात को भी माने कि उसे अल्लाह के आदेश पर चलना चाहिए, मगर अल्लाह अपने आदेश और निर्देश के लिए जिन पैग़म्बरों को माध्यम बनाता है, उन्हें स्वीकार न करे। चौथे यह कि पैग़म्बरों के बीच अन्तर करे और अपनी पसन्द या अपने पक्षपात के कारण उनमें से किसी को माने और किसी को न माने। पाँचवें यह कि पैग़म्बरों ने अल्लाह की ओर से धारणा, नैतिक व्यवहार और जीवन के क़ानून के लिए जो शिक्षाएँ प्रस्तुत की है उनको, या उमें से किसी चीज़ को मानने से इनकार कर दे। छठे यह कि धारणात्मक रूप से तो इन सब चीज़ों को मान ले लेकिन व्यवहारतः ईश्वरीय आदेशों को जानते-बूझते अवहेलना करता रहे और इस अवहेलना पर आग्रह करे और सांसारिक जीवन में अपनी नीति की नींव, फ़रमाँबरदारी पर नहीं बल्कि नाफ़रमानों ही पर रखे।

संसार में उनके पीछे चलते थे, कहेंगे कि क्या अच्छा होता, हमको फिर एक अवसर दिया जाता तो जिस तरह आज ये हमसे विरक्त हो रहे हैं, हम भी इनसे विक्त होकर दिखा देते। इस तरह अल्लाह इन लोगों के वे कर्म, जो ये दुनिया में कर रहे हैं, इनके सामने इस तरह लाएगा कि ये पश्चात्तापों और ग्लानियों के साथ हाथ मलते रहेंगे मगर आग से निकलने का कोई मार्ग न पाएँगे।

(168) लोगो, धरती में जो हलाल (वैध) और अच्छी-सुथरी चीज़ें हैं उन्हें खाओ और शैतान के बताए हुए रास्तों पर न चलो। वह तुम्हारा खुला दुश्मन है, (169) तुम्हे बुराई और अश्लील बात को कहता है और यह सिखाता है कि तुम अल्लाह के नाम पर वे बातें कहो जिनके सम्बन्ध में तुम नहीं जानते हो (कि वे अल्लाह की कही हुई हैं)।

(170) उनसे जब कहा जाता है कि अल्लाह ने जो आदेश उतारे हैं उनपर चलो तो उसके उत्तर में कहते हैं कि हम तो उसी रास्ते पर चलेंगे जिसपर हमने अपने बाप-दादा को पाया है। अच्छा अगर इनके बाप-दादा ने बुद्धि से कुछ भी काम न लिया हो और सीधा मार्ग न पाया हो तो क्या फिर भी ये उन्हीं का अनुसरण किए चले जाएँगे? (171) ये लोग जिन्होंने अल्लाह के बताए हुए तरीक़े पर चलने से इनकार कर दिया है इनकी दशा बिलकुल ऐसी है जैसे चरवाहा पशुओं को पुकारता है और वे हाँक-पुकार की आवाज़ के सिवा कुछ नहीं सुनते। ये बहरे हैं, गुंगे हैं, अन्धे हैं, इसलिए कोई बात इनकी समझ में नहीं आती।

(172) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अगर तुम वास्तव में अल्लाह ही की बन्दगी करनेवाले हो तो जो स्वच्छ अच्छी चीज़े हमने तुम्हें प्रदान की हैं उन्हें बेझिझक खाओ और अल्लाह का शुक्र अदा करो। (173) अल्लाह की ओर से अगर कोई पाबन्दी तुमपर है तो वह यह है कि मुर्दार न खाओ, ख़ून से और सुअर के मांस से बचो, और कोई ऐसी चीज़ न खाओ जिसपर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो। हाँ, जो व्यक्ति मजबूरी की हालत में हो और वह इनमें से कोई चीज़ खा ले बिना इसके कि वह नियमोल्लंघन करना चाहता हो या आवश्यकता की सीमा से आगे बढ़े, तो उसपर कुछ गुनाह नहीं, अल्लाह क्षमाशील और दयावान है।[52]

(174) सत्य यह है कि जो लोग उन आदेशों को छिपाते हैं जो अल्लाह ने अपनी किताब में अवतरित किए हैं, और थोड़े से सांसारिक लाभों पर उन्हें भेंट चढ़ाते हैं, वे वास्तव में अपने पेट आग से भर रहे हैं। क़ियामत के दिन अल्लाह हरगिज़ उनसे बात न करेगा, न उन्हें पाकीज़ा ठहराएगा, और उनके लिए दर्दनाक सज़ा है। (175) ये वे

लोग हैं जिन्हों ने मार्गदर्शन के बदले पथभ्रष्टता मोल ली और मग़फ़िरत के बदले अज़ाब मोल ले लिया। कैसा अजीब है इनका हौसला कि जहन्नम का अज़ाब सहन करने के लिए तैयार हैं। (176) ये सब कुछ इसलिए हुआ कि अल्लाह ने तो ठीक-ठीक सत्य के अनुसार किताब उतारी थी मगर जिन लोगों ने किताब में विभेद पैदा किए वे अपने झगड़ों में सत्य से बहुत दूर निकल गए।

(177) नेकी यह नहीं है कि तुमने अपने चेहरे पूरब की ओर कर लिए या पच्छिम की ओर, बल्कि नेकी यह है कि आदमी अल्लाह को और अन्तिम दिन को और फ़रिश्तों को और अल्लाह की उतारी हुई किताब और उसके पैग़म्बरों को दिल से माने, और अल्लाह के प्रेम में अपना दिलपसन्द माल नातेदारों और अनाथों पर निर्धनों और मुसाफ़िरों पर, मदद के लिए हाथ फैलानेवालों पर और गुलामों की रिहाई पर ख़र्च करे, नमाज़ क़ायम करे और ज़कात दे। और नेक वे लोग हैं कि जब वचन दे तो उसे पूरा करें, और तंगी और विपत्ति के समय में और सत्य और असत्य के युद्ध में धैर्य दिखाएँ। ये हैं सच्चे लोग और यही लोग परहेज़गार हैं।

(178) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम्हारे लिए क़त्ल के मुक़द्दमों में क़िसास का आदेश लिख दिया गया है। आज़ाद आदमी ने क़त्ल किया तो उस आज़ाद आदमी से ही बदला लिया जाए, ग़ुलाम क़ातिल हो तो वह ग़ुलाम ही क़त्ल किया जाए, और औरत ने यह अपराध किया हो तो उस औरत ही से क़िसास लिया जाए। हाँ, अगर किसी क़ातिल के साथ उसका भाई कुछ नरमी करने के लिए तैयार हो, तो सामान्य नियम के अनुसार ख़ून के माली बदले का निपटारा होना चाहिए और क़ातिल के लिए आवश्यक है कि भले तरीक़े से क़ूनबहा चुका दे।[53] यह तुम्हारे रब की ओर से छूट और दयालुता है। इसपर भी जो ज़्यादती करे,[54] उसके लिए दर्दनाक सज़ा है (179)— अक़्ल और समझवालो, तुम्हारे लिए क़िसास में ज़िन्दगी है। उम्मीद है कि तुम इस क़ानून के उल्लंघन से बचोगे।

52. इस आयत में हराम (अवैध) चीज़ के प्रयोग की अनुमति तीन शर्तों के साथ दी गई हैः एक यह कि वास्तव में मजबूरी की हालत हो। मिसाल के तौर पर भूख या प्यास से जान पर बन गई हो, या बीमारी के कारण जान का ख़तरा हो और इस हालत में हराम या अवैध चीज़ के सिवा और कोई चीज़ उपलब्ध न हो। दूसरे यह कि अल्लाह के क़ानून को तोड़ने की इच्छा दिल में न पाई जाती हो। तीसरे यह कि आवश्यकता की सीमा से आगे न बढ़ा जाए, मिसाल के तौर पर हराम चीज़ के कुछ लुक़मे या कुछ बूंदें या कुछ घूँट से अगर जान बच सकती हो तो उनसे ज़्यादा उस चीज़ का इस्तेमाल न होने पाए।

(180) तुम्हारे लिए अनिवार्य किया गया है कि जब तुममें से किसी की मौत का समय आए और वह अपने पीछे माल छोड़ रहा हो, तो माँ-बाप और नातेदारों के लिए सामान्य नियम के अनुसार वसीयत करे।[55] यह हक़ है (अल्लाह का) डर रखनेवालों पर। (181) फिर जिन्होंने वसीयत सुनी और बाद में उसे बदल डाला, तो उसका गुनाह उन बदलनेवालों पर होगा। अल्लाह सब कुछ सुनता और जानता है (182) अलबत्ता जिसको यह अंदेशा हो कि वसीयत करनेवाले ने अनजाने में या जान-बूझकर हक़ मारा है, और फिर मामले से सम्बन्ध रखनेवालों के बीच वह सुधार करे, तो उसपर कुछ गुनाह नहीं है, अल्लाह माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है।

(183) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम्हारे लिए रोज़े अनिवार्य कर दिए गए, जिस तरह तुमसे पहले नबियों के अनुयायियों के लिए अनिवार्य किए गए थे। इससे उम्मीद है कि तुममें परहेज़गारी का गुण पैदा होगा। (184) कुछ निश्चित दिनों के रोज़े

53. इससे मालूम हुआ कि इस्लामी दण्ड-विधान में क़त्ल का मामला राज़ीनामा के योग्य है। क़त्ल किए गए व्यक्ति के वारिसों को यह अधिकार प्राप्त है कि क़ातिल का मृत्युदण्ड क्षमा कर दें और इस रूप में न्यायालय के लिए वैध नहीं कि हत्यारे की जान ही लेने पर आग्रह करे। अलबत्ता क्षमा की हालत में क़ातिल को ख़ूनबहा देना होगा।

54. मिसाल के तौर पर यह कि क़त्ल किए गए व्यक्ति का वारिस ख़ूनबहा प्राप्त करने के बाद फिर बदला लेने की कोशिश करे, या क़ातिल ख़ूनबहा देने में टालमटोल करे और क़त्ल किए गए व्यक्ति के वारिस ने जो उपकार उसपर किया है, उसका बदला अकृतज्ञता के रूप में दे।

55. यह आदेश उस समय दिया गया था जब कि विरासत के विभाजन के लिए अभी कोई क़ानून निश्चित नहीं हुआ था। उस समय प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य कर दिया गया कि वह अपने वारिसों या उत्तराधिकारियों के हिस्से वसीयत के द्वारा निश्चित कर जाए ताकि उसके मरने के बाद न तो कुटुम्ब में झगड़े हों और न किसी हक़दार का हक़ मारा जा सके। आगे चलकर जब विरासत के विभाजन के लिए अल्लाह ने ख़ुद एक क़ानून बना दिया (जो आगे सूरा निसा में आनेवाला है), तो नबी (सल्ल॰) ने यह नियम तय कर दिया कि वारिसों के जो हिस्से अललाह ने निर्धारित कर दिए हैं उनमें वसीयत से कमी-बेशी नहीं की जा सकती। और ग़ैर-वारिस के लिए सम्पूर्ण सम्पत्ति के एक तिहाई से अधिक की वसीयत न करनी चाहिए। और मुसलिम और ग़ैर-मुसलिम एक-दूसरे के वारिस नहीं हो सकते।

हैं। अगर तुममें से कोई बीमार हो, या सफ़र परहो तो दूसरे दिनों में इतनी ही गिनती पूरी कर ले। और जिन लोगों को रोज़े रखने की सामर्थ्य प्राप्त हो (फिर न रखें) तो वे फ़िदया दें। एक रोज़े का प्रतिदान एक मुहताज को खाना खिलाना है, और जो अपनी ख़ुशी से कुछ ज़्यादा भलाई करे, तो यह उसी के लिए अच्छा है। लेकिन अगर तुम समझो, तो तुम्हारे लिए अच्छा यही है कि रोज़ा रखो।[56]

(185) रमज़ान वह महीना है, जिसमें क़ुरआन उतारा गया जो इनसानों के लिए सर्वथा मार्गदर्शन है और ऐसी स्पष्ट शिक्षओं पर आधारित है, जो सीधा मार्ग दिखानेवाली और सत्य और असत्य का अन्तर खोलकर रख देनेवाली हैं। अतः अब से जो व्यक्ति इस महीने को पाए, उसके लिए अनिवार्य है कि इस पूरे महीने के रोज़े रखे। और जो कोई बीमार हो या सफ़र पर हो, तो वह दूसरे दिनों में रोज़ों की गिनती पूरी करे। अल्लाह तुम्हारे साथ नरमी करना चाहता है, सख़्ती करना नहीं चाहता। इसलिए यह तरीक़ा तुम्हें बताया जा रहा है ताकि तुम रोज़ों की गिनती पूरी कर सको और जिस सीधे मार्ग पर अल्लाह ने तुम्हें लगाया है, उसपर अल्लाह की बड़ाई का इज़हार करो और मानो और शुक्रगुज़ार बनो।

(186) और ऐ नबी, मेरे बन्दे अगर तुमसे मेरे सम्बन्ध में पूछें, तो उन्हें बता दो कि मैं उनसे क़रीब ही हूँ। पुकारनेवाला जब मुझे पुकारता है, मैं उसकी पुकार सुनात और जवाब देता हूँ। अतः अन्हें चाहिए कि मेरी पुकार पर कहें कि हम हाज़िर हैं और मुझपर ईमान लाएँ। (यह बात तुम उन्हें सुना दो) शायद कि वे सीधा मार्ग पा ले।

(187) तुम्हारे लिए रोज़ों के ज़माने में रातों को अपनी पत्नियों के पास जाना जाइज़ कर दिया गया है। वे तुम्हारे लिए लिबास है और तुम उनके लिए लिबास हो। अल्लाह को मालून हो गया कि तुम लोग चुपके-चुपके अपने आपसे ख़ियानत (चोरी) कर रहे थे, मगर उसने तुम्हारा क़सूर माफ़ कर दिया और तुम्हें छोड़ दिया। अब तुम अपनी पत्नियों के साथ रात काटो और जो आनन्द अल्लाह ने तुम्हारे लिए जाइज़ कर

56. इस्लाम के अधिकतर आदेशों की तरह रोज़े की अनिवार्यता भी क्रमशः लागू की गई है। नबी (सल्ल॰) ने आरंभ में मुसलमानों को हर महीने तीन दिन के रोज़े रखने का आदेश दिया था, मगर ये रोज़े अनिवार्य न थे। फिर सन् 2 हिजरी में रमज़ान के रोज़े का यह आदेश क़ुरआन में उतरा, मगर इसमें भी इतनी छूट रखी गई कि जिन लोगों को रोज़ों को सहन करने की शक्ति प्राप्त हो और फिर भी रोज़ा न रखें वे हर एक रोज़ा के बदले एक मुहताज को खाना खिला दिया करें। आगे चलकर दूसरा आदेश उतरा जो आगे आ रहा है।

दिया है, उसे हासिल करो। और रातों को खाओ-पियो यहाँ तक कि रात की कालिमा की धारी से प्रातः बेला की सफ़ेद धारी स्पष्ट दिखाई दे जाए। तब ये सब काम छोड़कर रात तक अपना रोज़ा पूरा करो। और जब तुम मसजिदों में एतिकाफ़ में हो, तो पत्नियों से संभोग न करो। ये अल्लाह की निर्धारित की हुई सीमाएँ हैं, इनके निकट न फटकना। इस तरह अल्लाह अपने आदेश लोगों के लिए स्पष्ट रूप से बयान करता है, उम्मीद है कि वे ग़लत रवैये से बचेंगे।

(188) और तुम लोग न तो आपस में एक दूसरे के माल अवैध रूप से खाओ और न अधिकारी व्यक्तियों के आगे उनको इस ग़रज़ से पेश करो कि तुम्हें दूसरों के माल का कोई हिस्सा जान-बूझकर अन्यायपूर्ण तरीक़े से खाने का अवसर मिल जाए।[57]

(189) ऐ नबी, लोग तुमसे चाँद के घटते-बढ़ते रूपों के बारे में पूछते हैं। कहो : ये लोगों के लिए तिथियों के निर्धारण के और हज के लक्षण हैं। उनसे यह भी कहो : यह कोई नेकी का काम नहीं है कि तुम अपने घरों में पीछे की ओर से प्रवेश करते हो। नेकी तो वास्तव में यह है कि आदमी अल्लाह की अप्रसन्नता से बचे। अतः तुम अपने घरों में दरवाज़े ही से आया करो। अलबत्ता अल्लाह से डरते रहो। शायद कि तुम्हें सफलता प्राप्त हो जाए।[58]

(190) और तुम अल्लाह के मार्ग में उन लोगों से लड़ो, जो तुमसे लड़ते हैं,

57. इस आयत का एक अर्थ यह है कि हाकिमों को रिश्वत देकर अनुचित लाभ उठाने की कोशिश न करो। और दूसरा अर्थ यह है कि जब तुम ख़ुद जानते हो कि माल दूसरे व्यक्ति का है, तो सिर्फ़ इसलिए कि उसके पास अपनी मिल्कियत का कोई सबूत नहीं है या इस कारण कि किसी ऐंच-पेंच से तुम उसको खा सकते हो, उसका मुक़दमा अदालत में न ले जाओ। हो सकता है कि न्यायाधीश मुक़दमा के विवरण के अनुसार वह माल तुमको दिलवा दे। मगर वह तुम्हारा जाइज़ माल न होगा।

58. अरबों में प्रचलित अंधविश्वास-युक्त रीति-रिवाज़ों में एक यह भी था कि जब हज के लिए 'इहराम' बाँध लेते तो अपने घरों में दरवाज़े से प्रवेश न करते थे, बल्कि पीछे से दीवार कूदकर या दीवार में खिड़की-सी बनाकर प्रवेश करते थे। इसी प्रकार यात्रा से लौटकर भी घरों में पीछे से दाखिल हुआ करते थे। इस आयत में न केवळ इस रीति का निषेध किया गया है, बल्कि इन सभी अंधविश्वासों का यह कहकर खण्डन किया गया कि नेकी इन रीति-रिवाजों में नहीं है बल्कि वास्तविक नेकी अल्लाह से डरना और उसके आदेशों के उल्लंघन से बचना है।

लेकिन ज़्यादती न करो कि अल्लाह ज़्यादती करनेवालों को पसन्द नहीं करता। (191) उनसे लड़ो जहाँ भी तुम्हारी उनसे मुठभेड़ हो जाए और उन्हें निकालो जहाँ से उन्होंने तुमको निकाला है, इसलिए कि क़त्ल यद्यपि बुरा है, मगर उपद्रव इससे भी अधिक बुरा है।[59] और प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) के निकट जब तक वे तुमसे न लड़े, तुम भी न लड़ो, मगर जब वे वहाँ लड़ने से न चूकें, तो तुम भी निस्संकोच उन्हें मारो कि ऐसे अधर्मियों की यही सज़ा है। (192) फिर अगर वे बाज़ आ जाएँ, तो जान लो अल्लाह क्षमा करनेवाला और दयावान है।

(193) तुम उनसे लड़ते रहो यहाँ तक कि उपद्रव बाक़ी न रहे और धर्म (दीन) अल्लाह के लिए हो जाए। फिर अगर वे बाज़ आ जाएँ, तो समझ लो कि अत्याचारियों के अलावा और किसी पर हाथ नहीं उठाया जा सकता।

(194) प्रतिष्ठित (हराम) महीने का बदला प्रतिष्ठित महीना ही है और समस्त प्रष्ठिाओं का लिहाज़ बराबरी के साथ होगा।[60] अतः जो तुमपर हाथ उठाए, तुम भी उसी तरह उसपर हाथ उठाओ। अलबत्ता अल्लाह हे डरते रहो और यह जान रखो कि अल्लाह उन्हीं लोगों के साथ है, जो उसकी सीमाओं को तोड़ने से बचते हैं।

(195) अल्लाह के मार्ग में खर्च करो और अपने हाथों अपने आपको तबाही में न डालो। अच्छे से अच्छा तरीक़ा अपनाओ कि अल्लाह अच्छे से अच्छा तरीक़ा अपनाने वालों को पसन्द करता है।

(196) अल्लाह की ख़ुशनुदी के लिए जब हज्ज' और 'उमरा' का निश्चय करो, तो उसे पूरा करो, और अगर कहीं घिर जाओ तो जो क़ुरबानी उपलब्ध हो, अल्लाह की सेवा में भेंट करो[61] और अपने सिर न मूँडो जब तक कि क़ुरबानी अपने स्थान पर न पहुँच जाए। मगर जो व्यक्ती बीमार हो या जिसके सिर में कोई तकलीफ़ हो और इस

59. यहाँ उपद्रव (फ़ितना) से मुराद है किसी गिरोह या व्यक्ति पर सिर्फ़ इसलिए ज़ुल्म और अत्याचार करना कि उसने असत्य को छोड़कर सत्य को स्वीकार कर लिया है।

60. अरबों में हज़रत इबराहीम (अलै॰) के समय से यह नियम चला आ रहा था कि ज़िकअदा, ज़िलहिज्जा और मुहर्रम के तीन महीने हज के लिए ख़ास थे और रजब का महीना 'उमरा' के लिए ख़ास किया गया था, और इन चार महीनों में युद्ध और हत्या और ग़ारतगरी वर्जित थी ताकि काबा की ज़ियारत करनेवाले निश्चिन्त और सुरक्षित होकर अल्लाह के घर तक जाएँ और अपने घरों को लौट सकें। इसी लिए इन महीनों को हराम महीने (प्रतिष्ठित मास) कहा जाता था।

कारण अपना सिर मुँडवा ले, तो उसे चाहिए कि प्रतिदान (सदक़ा) के रूप में रोज़े रखे या दान करे या क़ुरबानी करे।[62] फिर अगर तुम्हें अम्न नसीब हो जाए[63] (और तुम हज से पहले मक्का पहुँच जाओ), तो जो व्यक्ति तुममें से हज का समय आने तक उमरा से फ़ायदा उठाए, वह सामर्थ्य के अनुसार क़ुरबानी दे, और अगर क़ुरबानी उपलब्ध न हो, तो तीन रोज़े हज के समय में और सात घर पहुँचकर, इस तरह पूरे दस रोज़े रख ले। यह छूट उन लोगों के लिए है जिनके घरबार प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) के निकट न हों। अल्लाह के इन आदेशों के उल्लंघन से बचो और क़ूब जान लो कि अल्लाह सख़्त सज़ा देनेवाला है।

(197) हज के महीने सबको मालून हैं। जो व्यक्ति उन निश्चित महीनों में हज का इरादा करे, उसे सावधान रहना चाहिए कि हज के बीच में उससे कोई काम-वासना का कार्य, कोई बुरा काम, कोई लड़ाई-झगड़े की बात न होने पाए। और जो अच्छे कर्म तुम करोगे, उसे अल्लाह जानता होगा। हज के सफ़र के लिए पाथेय (ज़ादे राह) साथ ले जाओ, और सबसे अच्छा पाथेय परहेज़गारी है। अतः ऐ अक़्लवालो, मेरी नाफ़रमानी से बचो। (198) और यदि हज के साथ-साथ तुम अपने रब का अनुग्रह भी खोजते जाओ, तो इसमें कोई दोष नहीं।[64] फिर जब अरफ़ात से चलो, तो 'मशअरे-हराम' (मुज़दलफ़ा) के पास ठहरकर अल्लाह को याद करो और उसी तरह याद करो जिसकी सीख उसने तुम्हें दी है, वरना इससे पहले तो तुम लोग भटके हुए थे। (199) फिर जहाँ से और सब लोग पलटते हैं वहीं से तुम भी पलटो और अल्लाह से माफ़ी चाहो[65], निश्चय ही वह क्षमाशील और दयावान है। (200) फिर जब हज सम्बन्धी अरक़ान को पूरा कर चुको, तो जिस तरह पहले अपने पूर्वजों की चर्चा करते थे, उसी तरह अब

61. अर्थात अगर रास्ते में कोई ऐसा कारण सामने आ जाए, जिसकी वजह से आगे जाना असंभव हो और विवश होकर रुक जाना पड़े, तो ऊँट, गाय, बकरी में से जो जानवर भी उपलब्ध हो, अल्लाह के लिए क़ुरबान कर दो।

62. 'हदीस' से मालूम होता है कि नबी (सल्ल॰) ने इस स्थिति में तीन दिन के रोज़े रखने या छः मुहताजों को खाना खिलाने या कम से कम एक बकरी ज़बह करने का आदेश दिया है।

63. अर्थात् वह कारण बाक़ी न रहे, जिसकी वजह से विवश होकर तुम्हें रास्ते में रुक जाना पड़ा था।

64. रब के अनुग्रह की खोज से मुराद है हज-यात्रा के बीच अपनी रोज़ी कमाने के लिए कोई कार्य करना।

अल्लाह का ज़िक्र करो, बल्कि उससे भी बढ़कर। (मगर अल्लाह को याद करनेवालों में भी बहुत अन्तर है) उनमें से कोई तो ऐसा है, जो कहता है कि ऐ हमारे रब, हमें दुनिया ही में सब कुछ दे दे। ऐसे व्यक्ति के लिए आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं। (201) और कोई कहता है कि ऐ हमारे रब हमें दुनिया में भलाई दे और आख़िरत में भी भलाई, और आग के अज़ाब से हमें बचा। (202) ऐस लोग अपनी कमाई के अनुसार (दोनों जगह) हिस्सा पाएँगे और अल्लाह को हिसाब चुकाते कुछ देर नहीं लगती। (203) ये गिनती के कुछ दिन हैं, जो तुम्हें अल्लाह की याद में बसर करने चाहिएँ। फिर जो कोई जल्दी करके दो ही दिन में लौट पड़ा तो कोई हरज नहीं, और जो कुछ देर ज़्यादा ठहरकर पलटा तो भी कोई हरज नहीं[66]। शर्त यह है कि ये दिन उसने परहेज़गारी के साथ बसर किए हो—अल्लाह की नाफ़रमानी से बचो और ख़ूब जान रखो कि एक दिन उसके सामने तुम्हारी पेशी होनेवाली है।

(204) इनसानों में कोई तो ऐसा है, जिसकी बातें दुनिया की ज़िन्दगी में तुम्हें बहुत भली लगती हैं, और अपनी नेक-नीयती पर वह बार-बार अल्लाह को गवाह ठहराता है, मगर वास्तव में वह सत्य का बदतरीन दुश्मन होता है। (205) जब उसे सत्ता मिल जाती है[67], तो धरती में उसकी सारी दौड़-धूप इसलिए होती है कि बिगाड़ फैलाए, खेतों को नष्ट करे और इनसानी नस्ल को तबाह करे—हालाँकि अल्लाह (जिसे वह गवाह बना रहा था) बिगाड़ को हरगिज़ पसन्द नहीं करता (206)—और

65. हज़रत इबराहीम और इसमाईल (अलै॰) के ज़माने से अरब का जाना-पहचाना हज का तरीक़ा यह था कि 9 ज़िलहिज्जा को मिना से अरफ़ात जाते थे और रात को वहाँ से पलटकर मुज़दलफ़ा में ठहरते थे। लेकिन उसके बाद के समय में जब धीरे-धीरे क़ुरैश क़बीला का ब्राह्मणत्व स्थापित हो गया, तो उन्होंने कहाः हम हरम (काबा) वाले हैं, हमारे पद से यह बात नीचे की है कि साधारण अरबवालों के साथ अरफ़ात तक जाएँ। अतएव उन्होंने अपने लिए यह विशिष्टतः का ढंग अपनाया कि मुज़दलफ़ा तक जाकर ही पलट आते और आम लोगों को अरफ़ात तक जाने के लिए छोड़ देते थे। इसी गर्व और दंभ का बुत इस आयत में तोड़ा गया है।
66. अर्थात् तशरीक़ के दिनों (ईदुल अज़हा के बाद तीन दिनों) में मिना से मक्का की तरफ़ वापसी चाहे 12 ज़िलहिज्जा को हो या तेरहवी तिथि को दोनों हालतों में कोई हरज नहीं।
67. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि "जब वह पलटता है।" मतलब यह है कि ये बातें बनाकर जब वह पलटता है तो व्यवहारतः यह कुछ करता है।

उससे कहा जाता है कि अल्लाह से डर तो अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान उसको गुनाह पर जमा देता है। ऐसे व्यक्ति के लिए तो बस जहन्नम ही काफ़ी है और वह बहुत बुरा ठिकाना है। (207) दुसरी ओर इनसानों ही में कोई ऐसा भी है, जो अल्लाह की प्रसन्नता की चाह में अपनी जान खपा देता है, और ऐसे बन्दों के प्रति अल्लाह बहुत मेहरबान है। (208) ऐ ईमान लानेवालो, तुम पूरे के पूरे इस्लाम (आज्ञापालन) में आ जाओ[68] और शैतान का अनुपालन न करो कि वह तुम्हारा खुला दुश्मन है। (209) जो साफ़-साफ़ आदेश तुम्हारे पास आ चुके हैं, अगर उनको पा लेने के बाद फिर तुम बहके, तो ख़ूब जान रखो कि अल्लाह का प्रभुत्व सर्वत्र है और वह तत्त्वदर्शी और ज्ञाता है। (210) (इन सारे उपदेशों और आदेशों के बाद भी लोग सीधे न हो, तो) क्या अब वे इसका इनतिज़ार कर रहे हैं कि अल्लाह बादलों का छत्र लगाए, फ़रिश्तों का परा-का-परा साथ लिए ख़ुद सामने आ मौजूद हो और फ़ैसला ही कर डाला जाए?—आख़िरकार सारे मामले पेश तो अल्लाह ही के सामने होनेवाले हैं।

(211) इसराईल की सन्तान से पूछो : कैसी खुली-खुली निशानियाँ हमने उन्हें दिखाई हैं (और फिर ये भी उन्हीं से पूछ लो कि) अल्लाह की नेमत पाने के बाद जो क़ौम उसको दुर्भाग्य से बदलती है उसे अल्लाह कैसी सख़्त सज़ा देता है।

(212) जिन लोगों ने इनकार का रास्ता अपनाया है, उनके लिए सांसारिक जीवन बड़ा प्रिय और दिलपसन्द बना दिया गया है। ऐस लोग ईमानवालों की हँसी उड़ाते हैं, मगर क़ियामत के दिन परहेज़गार लोग ही उनके मुक़ाबले में उच्च स्थान पर होंगे। रही दुनिया की रोज़ी, तो अल्लाह को अधिकार है, जिसे चाहे बेहिसाब प्रदान करे।

(213) शुरू में सब लोग एक ही तरीक़े पर थे। (फिर यह हालत बाक़ी न रही और विभेद प्रकट हुए) तब अल्लाह ने नबी भेजे जो सीधे मार्ग पर चलने पर ख़ुशख़बरी देनेवाले और टेढ़ी चाल के परिणामों से डरानेवाले थे, और उनके साथ सत्य पर आधारित पुस्तक उतारी ताकि सत्य के विषय में लोगों के बीच जो विभेद उत्पन्न हो गए थे, उनका फ़ैसला करे—(और इन विभेदों के प्रकट होने का कारण यह न था कि शुरू में लोगों को सत्य का ज्ञान कराया ही नहीं गया था। नहीं,) विभेद उन लोगों ने किया, जिन्हें सत्य का ज्ञान दिया जा चुका था। उन्होंने स्पष्ट आदेश पा लेने के बाद केवल

68. अर्थात् किसी अपवाद और विशेषाधिकार के बिना अपने पूरे जीवन को इस्लाम के अन्तर्गत ले आओ। ऐसा न हो कि तुम अपने जीवन को विभिन्न भागों में बाँटकर कुछ भागों में इस्लाम का अनुपालन करो और कुछ हिस्सों को उसके अनुसरण से अलग कर लो।

इसलिए सत्य को छोड़कर विभिन्न रास्ते निकाले कि वे परस्पर ज़्यादती करना चाहते थे—अतः जिन लोगों ने पैग़म्बरों को माना, उन्हें अल्लाह ने अपनी अनुमति से उस सत्य का रास्ता दिखा दिया, जिसमें लोगों ने विभेद किया था। अल्लाह जिसे चाहता है, सीधा मार्ग दिखा देता है।

(214) फिर क्या तुम लोगों ने यह समझ रखा है कि यूँ ही जन्नत में दाख़िला तुम्हें मिल जाएगा, हालाँकि अभी तुमपर वह सब कुछ नहीं बीता है, जो तुमसे पहले ईमानवालों पर बीत चुका है?[69] उन लोगों पर कठिनाइयाँ आईं, मुसीबतें आईं, हिला मारे गए, यहाँ तक कि समय का रसूल और उसके साथी ईमानवाले चिल्ला उठे कि अल्लाह की सहायता कब आएगी?—(उस समय उन्हें तसल्ली दी गई कि) हाँ, अल्लाह की मदद करीब है।

(215) लोग तुमसे पूछते हैं : हम क्या ख़र्च करें? जवाब दो कि जो माल भी तुम ख़र्च करो अपने माँ-बाप पर, नातेदारों पर, यतीमों और निर्धनों और मुसाफ़िरों पर ख़र्च करोऔर जो भलाई भी तुम करोगे, अल्लाह उसे जानता होगा।

(216) तुम्हें लड़ाई का आदेश दिया गया है और वह तुम्हें नापसन्द है—हो सकता है कि एक चीज़ तुम्हें नापसन्द हो और वही तुम्हारे लिए अच्छी हो। और हो सकता है कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द हो और वही तुम्हारे लिए बुरी हो। अल्लाह जानता है, तुम नहीं जानते।

(217) लोग पूछते हैं प्रतिष्ठित महीने में लड़ना कैसा है? कहो, इसमें लड़ना बहुत बुरा है, मगर अल्लाह के रास्ते से लोगों को रोकना और अल्लाह से कुफ़्र करना और मसजिद हराम (काबा) का रास्ता ख़ुदा परस्तों पर बन्द करना और हरम के रहनेवालों को वहाँ से निकालना अल्लाह के नज़दीक इससे भी ज़्यादा बुरा है और फ़ितना (धर्म में बिचलाना) रक्तपात से भी भारी बात है।[70] वे तो तुमसे लड़े ही जाएँगे यहाँ तक कि अगर उनका बस चले, तो तुम्हारे दीन से तुमको फेर ले जाएँ। (और यह अच्छी तरह समझ लो कि) तुममें से जो कोई अपने दीन से फिरेगा और इनकार की

69. अर्थात् नबी तो दुनिया में जब भी आए हैं उन्हें और उनपर ईमान लानेवालों को अल्लाह के विद्रोही और सरकश बन्दों से कठिन मुक़ाबला करना पड़ा है और उन्होंने अपनी जानें जोखिम में डालकर असत्य प्रणालियों के मुक़ाबले में सत्य-धर्म को स्थापित करने का प्रयास किया है, तब कहीं वे जन्नत (स्वर्ग) के अधिकारी हुए। अल्लाह की जन्नत इतनी सस्ती नहीं हैं कि तुम अल्लाह और उसके धर्म के लिए कोई तकलीफ़ न उठाओ और वह तुम्हें मिल जाए।

हालत में मरेगा, उसके कर्म दुनिया और आख़िरत दोनों में अकारथ जाएँगे। ऐसे सब लोग जहन्नमी हैं और हमेशा जहन्नम ही में रहेंगे। (218) इसके विपरीत जो लोग ईमान लाए है और जिन्होंने अल्लाह की राह में अपना घरबार छोड़ा और जिहाद किया है[71], वे ईश्वरीय दयालुता के उचित अधिकारी हैं और अल्लाह उनकी भूल-चूक को माफ़ करनेवाला और अपनी रहमत से उन्हें नवाज़नेवाला है।

(219) पूछते हैं : शराब और जुए के बारे में क्या हुक्म है? कहो : इन दोनों चीज़ों में बड़ी ख़राबी है। यद्यापि इनमें लोगों के लिए कुछ लाभ भी हैं, मगर इनका गुनाह उनके फ़ायदे से बहुत ज़्यादा है।[72]

पूछते हैं : हम अल्लाह के रास्ते में क्या ख़र्च करें? कहो : जो कुछ तुम्हारी ज़रूरत से ज़्यादा हो।[73] इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिए साफ़-साफ़ आदेश बयान करता है,

70. इस बात का सम्बन्ध एक घटना से है। रजब सन् 2 हिजरी में नबी (सल्ल०) ने 8 आदमियों की एक टुकड़ी नख़ला की ओर भेजी थी (जो मक्का और तायफ़ के बीच एक स्थान है) और उसको आदेश दिया था कि क़ुरैश की गतिविधि और उनके आगे के इरादों के सम्बन्ध में जानकारी हासिल करे। लड़ाई की कोई अनुमति आपने नहीं दी थी। किन्तु इन लोगों को रास्ते में क़ुरैश का एक छोटा-सा तिजारती क़ाफ़िला मिला और उसपर इन्होंने आक्रमण करके एक व्यक्ति को मार डाला और बाक़ी लोगों को उनके माल सहित पकड़कर मदीना ले आए। यह कार्रवाई ऐसे समय में हुई जबकि रजब ख़त्म और शाबान शुरू हो रहा था और यह बात संदिग्ध थी कि क्या आक्रमण रजब (अर्थात् प्रतिष्ठित मास) में हुआ है या शाबान में। लेकिन क़ुरैश ने, और गुप्त रूप में उनसे मिले हुए मदीना के यहूदियों और मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) ने मुसलमानों के ख़िलाफ़ प्रोपगण्डा करने के लिए इस घटना को बहुत ही प्रसिद्ध किया और कड़ी आपत्तियाँ करनी शुरू कर दी कि ये लोग चले हैं बड़े अल्लाहवाले बनकर और हाल यह है कि प्रतिष्ठित मास तक में रक्तपात करने से नहीं चुकते। इन्हीं आपत्तियों का जवाब इस आयत में दिया गया है।

71. जिहाद का अर्थ है किसी मक़सद को हासिल करने के लिए अपनी आख़िरी कोशिश और जान तोड़ संघर्ष कर गुजरना। यह सिर्फ़ युद्ध का समानार्थक नहीं है। युद्ध के लिए तो 'क़िताल' शब्द इस्तेमाल होता है। 'जिहाद' में इससे कहीं व्यापक अर्थ पाया जाता है और इसमें युद्द सहित हर प्रकार का प्रयास शामिल है।

72. यह शराब और जुए के सम्बन्ध में पहला हुक्म है, जिसमें सिर्फ़ इनके नापसन्द होने की बात कहकर छोड़ दिया गया है, आगे सूरा 4 निसा, आयत 43 और सूरा 5 माइदा, आयत 90 में बाद के आदेश आ रहे हैं।

शायद कि तुम दुनिया और आख़िरत दोनों की चिन्ता करो।

(220) पूछते हैं : यतीमों (अनाथों) के साथ क्या मामला किया जाए? कहो : जिस व्यवहारनीति में उनके लिए भलाई हो, वही ग्रहण करना सबसे अच्छा है। अगर तुम अपना और उनका ख़र्च और रहना-सहना एक साथ रखो, तो इसमें कोई हरज नहीं। आख़िर वे तुम्हारे भाई-बन्धु ही तो हैं। बुराई करनेवाले और भलाई करनेवाले, दोनों का हाल अल्लाह पर ज़ाहिर है। अल्लाह चाहता तो इस मामले में तुमपर सख़्ती करता, मगर वह प्रभुत्वशाली होने के साथ तत्त्वदर्शी भी है।

(221) तुम मुशरिक (बहुदेववादी) औरतों से हरगिज़ निकाह न करना, जब तक कि वे ईमान न ले आएँ। एक मोमिन दासी मुशरिक शरीफ़ औरत से बेहतर है, यद्यपि वह तुम्हें बहुत पसंद हो। और अपनी औरतों के निकाह मुशरिक मर्दों से कभी न करना, जब तक वे ईमान न ले आएँ। एक मोमिन गुलाम, मुशरिक शरीफ़ आदमी से बेहतर है, यद्यपि वह तुम्हें बहुत पसंद हो। ये लोग तुम्हें आग की ओर बुलाते हैं और अल्लाह अपनी अनुमति से तुमको जन्नत और मग़फ़िरत की ओर बुलाता है, और वह अपने आदेश स्पष्ट रूप से लोगों के सामने बयान करता है, आशा है कि वे शिक्षा लेंगे और जो समझाया जा रहा है उसे स्वीकार करेंगे।

(222) पूछते हैं : हैज़ (मासिक धर्म) के बारे में क्या हुक्म है? कहो : वह एक गन्दगी की हालत है। उसमें स्त्रियों से अलग रहो और उनके पास न जाओ[74], जब तक कि वे पाक-साफ़ न हो जाएँ। फिर जब वे पाक हो जाएँ, तो उनके पास जाओ उस तरह जैसा कि अल्लाह ने तुम्हें आदेश दिया है। अल्लह को वे लोग पसंद हैं, जो बुराई से बाज़ रहें और पाकी अपनाएँ। (223) तुम्हारी औरतें तुम्हारी खेतियाँ हैं। तुम्हें अधिकार है, जिस तरह चाहो, अपनी खेती में जाओ, मगर अपने भविष्य की चिन्ता करो और अल्लाह की अप्रसन्नता से बचो।[75] ख़ूब जान लो कि तुम्हें एक दिन उससे मिलना है। और ऐ नबी, जो तुम्हारे आदेशों को मान लें उन्हे (सफलता और सौभाग्य की)

73. इस आयत से आजकल अजीब-अजीब अर्थ निकाले जा रहे हैं। हालाँकि आयत के शब्दों से साफ़ जाहिर है कि लोग अपने माल के मालिक थे। प्रश्न यह कर रहे थे कि हम ईश्वर की प्रसन्नता के लिए क्या ख़र्च करें? कहा गया कि पहले उससे अपनी ज़रूरतें पूरी करो। फिर जो अधिक बचे उसे अल्लाह की राह में ख़र्च करो। यह अपनी मरज़ी से किया गया ख़र्च है जो बन्दा अपने रब के मार्ग में अपनी ख़ुशी से करता है।

74. मतलब यह है कि इस हालत में उनसे संभोग न करो।

ख़ुशख़बरी सुना दो।

(224) अल्लाह के नाम को ऐस शपथ ग्रहण के लिए प्रयोग न करो, जिनका मक़सद नेकी और धर्म-परायणता और लोगों की भलाई के कामों से रुक जाना हो। अल्लाह तुम्हारी सारी बातें सुन रहा है और सब कुछ जानता है। (225) जो निरर्थक क़समें तुम बिना इरादा के खा लिया करते हो, उनपर अल्लाह नहीं पकड़ता, मगर जो क़समें तुम सच्चे दिल से खाते हो, उनके बारे में वह ज़रूर पूछेगा। अल्लाह बहुत क्षमा करनेवाला और सहनशील है।

(226) जो लोग अपनी औरतों से सम्बन्ध न रखने की क़सम खा बैठते हैं, उनके लिए चार महीने की मुहलत है।[76] अगर वे पलट आएँ तो अल्लाह क्षमा करनेवाला और दयावान है। (227) और अगर उन्हों ने तलाक़ ही की ठान ली हो तो जाने रहें कि अल्लाह सब कुछ सुनता और जानता है।[77]

(228) जिन औरतों को तलाक़ दी गईहो, वे तीन बार मासिक धर्म होने तक अपने आपको रोके रखें, और उनके लिए यह जायज़ नहीं कि अल्लाह ने उनके गर्भाशय में जो सृजन किया हो, उसे छिपाएँ। उन्हें हरगिज़ ऐसा न करना चाहिए, अगर वे अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रखती हैं। उनके पति सम्बन्धों को ठीक रखने

75. ये सारगर्भित शब्द है, जिनसे दो अर्थ निकलते हैं और दोनों का समान रूप से महत्त्व है। एक यह कि अपनी नस्ल को बाक़ी रखने की कोशिश करो ताकि तुमहारे संसार छोड़ने से पहले तुम्हारी जगह दूसरे कार्य करनेवाले पैदा हों। दूसरे यह कि जिस आनेवाली नस्ल को तुम अपनी जगह छोड़नेवाले हो, उसको धर्म (दीन), नैतिकता और मानवता के गुणों से सुसज्जित करने का प्रयास करो।

76. धर्म-विधान (शरीअत) की परिभाषा में इसको 'ईला' कहते हैं। पति-पत्नी के बीच सम्बन्ध हमेशा सुखद तो नहीं रह सकते। बिगाड़ के कारण पैदा होते ही रहते हैं। लेकिन ऐसे बिगाड़ को ईश्वरीय धर्म-विधान पसन्द नहीं करता कि दोनों एक दूसरे के साथ क़ानूनी रूप से दम्पति के सम्बन्ध में तो बँधे रहें, मगर व्यवहारतः एक दूसरे से इस तरह अलग रहें कि मानो वे पति और पत्नी नहीं हैं। ऐस बिगाड़ के लिए अल्लाह ने चार महीने की मुद्दत निश्चित कर दी कि या तो इस बीच में अपने सम्बन्ध ठीक कर लो, नहीं तो दम्पति का नाता तोड़ दो ताकि दोनों एक दूसरे से आज़ाद होकर जिसके साथ निर्वाह कर सकें, उसके साथ निकाह कर लें।

77. अर्थात् अगर तुमने पत्नी को अनुचित बात पर छोड़ा है, तो अल्लाह से निर्भय न रहो, वह तुम्हारी ज्यादती से बेख़बर नहीं है।

के लिए तैयार हों, तो वे इस इद्दत की अवधि में उन्हें फिर पत्नी के रूप में वापस ले लेने के अधिकारी हैं।[78]

औरतों के लिए भी सामान्य नियम के अनुसार वैसे ही अधिकार हैं, जैसे मर्दों के अधिकार उनपर हैं। अलबत्ता मर्दों को उनपर एक दर्जा प्राप्त है। और सबपर अल्लाह प्रभावकारी प्रभुत्व रखनेवाला और तत्त्दर्शी और ज्ञाता मौजूद है।

(229) तलाक़ दो बार है। फिर या तो सीधी तरह औरत को रोक लिया जाए या भले तरीक़े से उसको विदा कर दिया जाए।[79] और विदा करते हुए ऐसा करना तुम्हारे लिए जाइज़ नहीं है कि जो कुछ तुम उन्हें दे चुके हो, उसमें से कुछ वापस ले लो। अलबत्ता वह अपवाद है कि पति-पत्नी को अल्लाह की निर्धारित सीमाओं पर क़ायम न रह सकने की आशंका हो। ऐसी दशा में अगर तुम्हें वह भय हो कि वे दोनों अल्लाह की सीमाओं पर क़ायम न रहेंगे, तो उन दोनों के बीच यह मामला हो जाने में कोई हरज नाहीं कि पत्नी अपने पति को कुछ मुआवज़ा देकर जुदाई हासिल कर ले।[80] ये अल्लाह की निर्धारित की हुई सीमाएँ हैं, इनका उल्लंघन न करो। और जो लोग अल्लाह की सीमाओं का उल्लंघन करें, वही ज़ालिम हैं।

(230) फिर अगर (दो बार तलाक़ देने के बाद पति ने पत्नी को तीसरी बार) तलाक़ दे दी, तो वह औरत फिर उसके लिए हलाल न होगी, सिवाय इसके कि उसका

78. यह हुक्म सिर्फ़ उस हालत में है जब कि पति ने औरत को एक या दो तलाक़ें दी हों। इस हालत में 'तलाक रजई' होती है और 'इद्दत' के बीच पति रुजू कर सकता है। अर्थात् उसे अपने दाम्पत्य जीवन में वापस ले सकता है।

79. इस आयत के अनुसार एक मर्द निकाह के एक रिश्ते में अपनी पत्नी पर ज़्यादा से ज़्यादा दो ही बार 'तलाक रजई' का हक़ इस्तेमाल कर सकता है। जो व्यक्ति अपनी पत्नी को दो बार तलाक देकर उससे रुजू कर चुका हो, वह अपने जीवन में जब कभी उसको तीसरी बार तलाक़ देगा, औरत उससे हमेशा के लिए जुदा हो जाएगी।

80. धर्म-संहिता (शरीअत) की शब्दावली में इसे 'खुल अ' कहते हैं, अर्थात् एक स्त्री का अपने पति को कुछ दे-दिलाकर उससे तलाक़ हासिल करना। इस स्थिति में पुरुष के लिए जाइज़ होगा कि अपना दिया हुआ माल या उसका कोई हिस्सा, जिसपर भी परस्पर समझौता हुआ हो, औरत से वापस ले ले। लेकिन अगर मर्द ने ख़ुद ही औरत को तलाक़ दी हो तो वह उससे अपना दिया हुआ कोई माल वापस नहीं ले सकता।

निकाह किसी दूसरे व्यक्ति से हो और वह उसे तलाक़ दे दे।[81] तब अगर पहला पति और यह औरत दोनों यह समझें कि ईश्वरीय सीमाओं पर क़ायम रहेंगे, तो उनके लिए एक-दूसरे की ओर पलटने में कोई हरज नहीं। ये अल्लाह की निर्धारित की हुई सीमाएँ हैं, जिन्हें वह उन लोगों के मार्गदर्शन के लिए स्पष्ट कर रहा है, जो (उसकी सीमाओं को तोड़ने का परिणाम) जानते हैं।

(231) और जब तुम औरतों को तलाक़ दे दो और उनकी 'इद्दत' (निश्चित अवधि) पूरी होने को आ जाए, तो या भले तरीक़े से उन्हें रोक लो या भले तरीक़े से बिदा कर दो। सिर्फ़ सताने ले लिए उन्हें न रोके रखना कि यह ज़्यादती होगी और जो ऐसा करेगा, वह वास्तव में आप अपने ही ऊपर ज़ुल्म करेगा। अल्लाह की 'आयतों' का खेल न बनाओ। भूल न जाओ कि अल्लाह ने किस बड़ी नेमत से तुम्हें नवाज़ा है। वह तुम्हें नसीहत करता है कि जो किताब और तत्त्वदर्शिता (हिकमत) उसने तुमपर नाज़िल की है, उसके आदर का ध्यान रखो। अल्लाह से डरो और अच्छी तरह जान लो कि अल्लाह को हर बात की ख़बर है।

(232) जब तुम अपनी औरतों को तलाक़ दे चुको और वे अपनी अवधि ('इद्दत') पूरी कर ले, तो फिर इसमें रुकावट न खड़ी करो कि वे अपने मनपसंद पतियों से निकाह कर लें, जब कि वे सामानय रीति से आपस में निकाह करने पर राज़ी हो। तुम्हें नसीहत की जाती है कि ऐसी हरकत हरगिज़ न करना, अगर तुम अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान लानेवाले हो। तुम्हारे लिए शिष्ट और सुथरा तरीक़ा यही है कि इससे बाज़ रहो। अल्लाह जानता है, तुम नहीं जानते।

(233) जो बाप चाहते हों कि उनके बच्चे दूध पीने की पूरी अवधि तक दूध पिएँ, तो माएँ अपने बच्चों को पूरे दो वर्ष तक़ दूध पिलाएँ।[82] इस स्थिति में बच्चे के बाप को सामान्य रीति से उन्हें खाना-कपड़ा देना होगा। मगर किसी पर उसकी समाई से बढ़कर बोझ न डालना चाहिए। न तो माँ को इस कारण से तकलीफ़ में डाला जाए कि बच्चा उसका है, और न बाप ही को इस कारण से तंग किया जाए कि बच्चा उसका

81. अर्थात् किसी समय ख़ुद अपनी इच्छा से तलाक़ दे दे। इससे साज़िशी निकाह और तलाक़ का जाइज़ होना सिद्ध नहीं होता जो सिर्फ़ पहले पति के लिए औरत के हलाल करने के लिए किया गया हो।

82. यह आदेश उस स्थिति के लिए है जबकि पति-पत्नी एक-दूसरे से अलग हो चुके हों, चाहे तलाक़ के द्वारा या खुल'अ या फ़स्ख़ (निकाह तोड़ देने) और जुदाई डाल देने के द्वारा, और औरत की गोद में दूध पीता बच्चा हो।

है—दूध पिलानेवाली का यह अधिकार जैसा बच्चे के बाप पर है, वैसा ही उसके वारिस पर भी है—लेकिन अगर दोनों पक्षवाले आपस के समझौते और मशविरे से दूध छुड़ाना चाहें, तो ऐस ाकरने में कोई हरज नाहीं। और यदि तुम्हारा विचार अपने बच्चों को किसी दूसरी औरत से दूध पिलवाने का हो, तो इसमें भी कोई हरज नहीं शर्त यह है कि इसका जो कुछ मुआवज़ा तय करो, वह सामान्य रीति से चुका दो। अल्लाह से डरो और जान रखो कि जो कुछ तुम करते हो, सब अल्लाह की नज़र में है।

(234) तुममें से जो लोग मर जाएँ, उनके पीछे अगर उनकी पत्नियाँ ज़िन्दा हों, तो वे अपने आपको चार महीने, दस दिन रोके रखें।[83] फिर जब उनकी अवधि (इद्दत) पूरी हो जाए, तो उन्हें अधिकार है अपने विषय में सामान्य रीति से जो चाहें, करें। तुमपर इसकी कोई ज़िम्मेदारी नहीं। अल्लाह तुम सबके आमाल की ख़बर रखता है। (235) निश्चित अवधि-काल (इद्दत की मुद्दत) में चाहे तुम उन विधवा औरतों के साध मंगनी का विचार संकेत रूप में ज़ाहिर कर दो, चाहे मन में छिपाए रखो, दोनों हालतों में कोई हरज़ नहीं। अल्लाह जानता है कि उनका ख़याल तो तुम्हारे दिल में आएगा ही। मगर देखो, गुप्त रूप से समझौता न करना। अगर कोई बात करनी है, तो सामान्य रीति से करो। और निकाह का नाता जोड़ने का फ़ैसला उस समय तक न करो, जब तक कि अवधि (इद्दत) पूरी न हो जाए। ख़ूब समझ लो कि अल्लाह तुम्हारे दिलों का हाल तक जानता है। इसलिए उससे डरो और यह भी जान लो कि अल्लाह सहनशील है (छोटी-छोटी बातों को) माफ़ कर देता है।

(236) तुमपर कुछ गुनाह नहीं, अगर अपनी औरतों को तलाक़ दे दो इससे पहले कि हाथ लगाने की नौबत आए और महर मुक़र्रर हो। इस स्थिति में उन्हें कुछ न कुछ देना ज़रूर चाहिए। ख़ुशहाल आदमी अपनी सामर्थ्य के अनुसार और ग़रीब अपनी सामर्थ्य के अनुसार सामान्य रीति से दे। यह हक़ है नेक आदमियों पर। (237) और अगर तुमने हाथ लगाने से पहले तलाक़ दी हो, लेकिन मह्‌र मुक़र्रर किया जा चुका हो, तो इस हालत में मह्‌र का आधा देना होगा। यह और बात है कि औरत नरमी बरते (और

83. यह मौत के बाद की 'इद्दत' उन औरतों के लिए भी है जिनसे उनके पतियों ने संभोग न किया हो। अलबत्ता गर्भवती का मामला इससे अलग है। उसकी मौत के बाद की 'इद्दत' बच्चा पैदा होने तक है, चाहे बच्चा पति के देहान्त के बाद ही हो जाए या इसमें कई महीने लगें। ''अपने आपको रोके रखें'' से मुराद सिर्फ़ दूसरा निकाह करने से रुकना ही नहीं है, बल्कि इससे मुराद अपने आपको बनाव-सिंगार से रोके रखना भी है।

मह्‌र न ले) या या वह मर्द, जिसके हाथ में विवाह के नाते का अधिकार है, नरमी से काम ले (और पूरा मह्‌र दे दे), और तुम (अर्थात् मर्द) नरमी से काम लों, तो यह धर्मपरायणता (तक़वा) के अधिक अनुकूल है। आपस के मामलों में उदारता एवं दानशीलता को न भूलो। तुम्हारे कर्मों को अल्लाह देख रहा है।

(238) अपनी नमाज़ों की निगरानी करो, विशेष रूप से ऐसी नमाज़ की जो अपने में उपासना-गुणों को समाहित किए हुए हो।[84] अल्लाह के आगे इस तरह खड़े हो, जैसे आज्ञाकारी ग़ुलाम खड़े होते हैं। (239) अशांति की स्थिति हो, तो चाहे पैदल हो, चाहे सवार, जिस तरह संभव हो, नमाज़ पढ़ो। और जब शांति प्राप्त हो, तो अल्लाह को उस तरीक़े से याद करो, जो उसने तुम्हें सिखा दिया है, जिससे तुम पहले बेख़बर थे।

(240) तुममें से जिन लोगों की मौत हो और वे अपने पीछे पत्नियाँ छोड़ रहे हो, उनको चाहिए कि अपनी पत्नियों के हक़ में यह वसीयत कर जाएँ कि एक वर्ष तक उनको खाना-कपड़ा दिया जाए और वे घर से न निकाली जाएँ। फिर अगर वे ख़ुद निकल जाएँ, तो अपने मामले में सामान्य रीति से वे जो कुछ भी करें, उसकी कोई ज़िम्मेदारी तुमपर नहीं है, अल्लाह को सबपर प्रभावकारी प्रभुत्व प्राप्त है और वह तत्वदर्शी और जाननेवाला है। (241) इसी तरह जिन औरतों को तलाक़ दी गई हो, उन्हें भी उचित रूप से कुछ न कुछ देकर विदा किया जाए। यह हक़ है परहेज़गार लोगों पर।

(242) इस तरह अल्लाह अपने आदेश तुम्हें साफ़-साफ़ बताता है। उम्मीद है कि तुम समझ-बूझकर काम करोगे।

(243) तुमने उन लोगों के हाल पर भी कुछ विचार किया, जो मौत के डर से अपने घरबार छोड़कर निकले थे और हज़ारों की तादाद में थे? अल्लाह ने उनसे कहा : मर जाओ। फिर उसने उनको दुबारा जीवन प्रदान कयिा।[85] हक़ीक़त यह है कि अल्लाह इनसान पर बड़ी दया करनेवाला है, मगर अधिकतर लोग शुक्र अदा नहीं

84. यहाँ 'सलातुल वुस्ता' शब्द प्रयुक्त हुआ है। वुस्ता का अर्थ बीचवाली चीज़ का भी है और ऐसी चीज़ का भी जो उच्च और श्रेष्ठ हो। 'सलातुल वुस्ता' से मुराद बीच की नमाज़ भी हो सकती है और ऐसी नमाज़ भी जो ठीक समय पर पूरी विनम्रता के साथ और अल्लाह की ओर ध्यान लगाकर पढ़ी जाए, और जिसमें नमाज़ के सभी अपेक्षित गुण पाए जाते हों। जिन टीकाकारों ने इस शब्द को बीच की नमाज़ के अर्थ में लिया है वे साधारणतः इससे मुराद 'अस्र' की नमाज़ लेते हैं।

करते (244)—मुसलमानों, अल्लाह के मार्ग में युद्ध करो और ख़ूब जान रखो कि अल्लाह सुननेवाला और जाननेवाला है। (245) तुममें कौन है जो अल्लाह को अच्छा क़र्ज़ दे ताकि अल्लाह उसे कई गुना बढ़ा-चढ़ाकर लौटाए?[86] घटाना भी अल्लाह के अधिकार में है और बढ़ाना भी, और उसी की ओर तुम्हें पलटकर जाना है।

(246) फिर तुमने उस मामले पर भी विचार किया, जो मूसा के बाद बनी इसराईल के सरदारों को पेश आया था? उन्होंने अपने नबी से कहा : हमारे लिए एक बादशाह मुक़र्रर कर दो ताकि हम अल्लाह के मार्ग में युद्ध करें। नबी ने पूछा : कहीं ऐसा तो न होगा कि तुमको लड़ाई का हुक्म दिया जाए और फिर तुम न लड़ो। वे कहने लगे : भला यह कैसे हो सकता है कि हम अल्लाह के मार्ग में न लड़ें, जबकि हमें अपने घरों से निकाल दिया गया है और हमारे बाल-बच्चे हमसे अलग कर दिए गए हैं। मगर जब उनको युद्ध का हुक्म दिया गया, तो एक छोटी तादाद के सिवा सब पीठ फेर गए, और अल्लाह उनमें से एक-एक ज़ालिम को जानता है।

(247) उनके नबी ने उनसे कहा कि अल्लाह ने तालूत को तुम्हारे लिए बादशाह मुक़र्रर किया है। यह सुनकर वे बोले : "हम पर बादशाह बनने का वह कैसे हक़दार हो गया? उसके मुक़ाबले में बादशाही के हम ज़्यादा हक़दार हैं। यह तो कोई बड़ा मालदार आदमी भी नहीं है।" नबी ने जवाब दिया : "अल्लाह ने तुम्हारे मुक़ाबले में उसी को चुना है और उसको दिमाग़ी और जिस्मानी दोनों प्रकार की योग्यताएँ भरपूर प्रदान की हैं और अल्लाह को अधिकार है कि अपना राज्य जिसे चाहे दे, अल्लाह बड़ी समाईवाला है और वह सब कुछ जानता है।" (248) इसके साथ उनके नबी ने उनको यह भी बताया कि "अल्लाह की ओर से उसके बादशाह मुक़र्रर होने का लक्षण यह है कि उसके समय में वह सन्दूक़ तुम्हें वापस मिल जाएगा, जिसमें तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे लिए दिल के इत्मीनान का समाना है, जिसमें मूसा के लगों और हारून के लोगों की छोड़ी हुई बरकतवाली वस्तुएँ हैं, और जिसको इस समय फ़रिश्ते सँभाले हुए हैं। अगर तुम ईमानवाले हो, तो यह तुम्हारे लिए बहुत बड़ी निशानी है।"

85. यह इशारा इसराइलियों की निर्गमन घटना की ओर है। सूरा माइदा के चौथे रुकू (आयत 20-26) में अल्लाह ने इसका विवरण प्रस्तुत किया है।
86. 'अच्छा क़र्ज़' से मुराद ख़ालिस नेकी और पुण्य की भावना और निःस्वार्थ भाव से अल्लाह की राह में माल ख़र्च करना है। उसे अल्लाह अपने ज़िम्मे क़र्ज़ करार देता है और वादा करता है कि मैं न सिर्फ़ मूलधन चुका दूँगा, बल्कि उससे कई गुना ज़्यादा दूँगा।

(249) फिर जब तालूत सेना लेकर चला, तो उसने कहा : "एक दरिया पर अल्लाह की ओर से तुम्हारी परीक्षा होनेवाली है। जो उसका पानी पिएगा, वह मेरा साथी नहीं। मेरा साथी सिर्फ़ वह है जो उससे प्यास न बुझाए। हाँ, एक-आध चुल्लू कोई पी ले, तो पी ले।" मगर एक छोटे गिरोह के सिवा उन सबने दरिया से ख़ूब पानी पिया।

फिर जब तालूत और उसके साथी मुसलमान दरिया पार करके आगे बढ़े, तो उन्होंने तालूत से कह दिया कि आज हममें जालूत और उसकी सेनाओं का मुक़ाबला करने की ताक़त नहीं है।[87] लेकिन जो लोग यह समझते थे कि उन्हें एक दिन अल्लाह से मिलना है, उन्होंने कहा : "कितनी बार ऐसा हुआ है कि एक छोटी टुकड़ी अल्लाह की अनुज्ञा से एक बड़े गिरोह पर छा गई है। अल्लाह सब्र करनेवालों का साथी है।" (250) और जब वे जालूत और उसकी सेनाओं के मुक़ाबले पर निकले, तो उन्होंने दुआ की : "ऐ हमारे रब, हमें अधिक से अधिक धैर्य प्रदान कर, हमारे क़दम जमा दे और इस काफ़िर गिरोह पर हमें विजय दे।" (251) अनततः अल्लाह की अनुज्ञा से उन्होंने काफ़िरों को मार भगाया और दाऊद ने जालूत का वध कर दिया, और अल्लाह ने उसे सलतनत और हिकमत प्रदान की और जिन-जिन चीज़ों का चाहा, उसको इल्म दिया–अगर इस तरह अल्लाह इनसानों के एक गिरोह को दुसरे गिरोह के द्वारा हटाता न रहता, तो धरती की व्यवस्था बिगड़ जाती, लेकिन दुनिया के लोगों पर अल्लाह की बड़ी उदार कृपा है (कि वह इस तरह बिगाड़ दूर करने का प्रबन्ध करता रहता है।)

(252) ये अल्लाह की आयतें हैं, जो हम ठीक-ठीक तुमको सुना रहे हैं और ऐ मुहम्मद, निश्चय ही तुम उन लोगों में से हो, जो सन्देशवाहक (रसूल) बनाकर भेजे गए हैं। (253) ये रसूल (जो हमारी ओर से इनसानों को रास्ता दिखाने के लिए नियुक्त हुए) हमने इनको एक दूसरे से बढ़-चढ़कर पद प्रदान किए। इनमें कोई ऐसा था जिससे अल्लाह ने ख़ुद बातें कीं, किसी को उसने दूसरी हैसियतों से ऊँचे दर्जे दिए, और अन्त में मरयम के बेटे ईसा को रौशन निशानियाँ प्रदान की और पवित्र आत्मा से उसकी सहायता की। अगर अल्लाह चाहता तो संभव न था कि इन रसूलों के बाद जो लोग रौशन निशानियाँ देख चुके थे, वे आपस में लड़ते। मगर (अल्लाह यह न चाहता था कि वह लोगों को बलपूर्वक विभेद करने से रोके, इस कारण) उन्हों ने परस्पर विभेद किया, फिर किसी ने माना और किसी ने इनकार की नीति अपनाई। हाँ, अल्लाह चाहता, तो वे हरगिज़ न लड़ते, मगर अल्लाह जो चाहता है करता है।

87. संभवतः यह कहनेवाले वही लोग होंगे जो दरिया पर पहले ही अपनी बे-सब्री दिखा चुके थे।

(254) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जो कुछ धन-सामग्री हमने तुमको प्रदान की है, उसमें से ख़र्च करो इससे पहले कि वह दिन आए, जिसमें न ख़रीद-बिक्री होगी, न दोस्ती काम आएगी और न सिफ़ारिश चलेगी। और ज़ालिम वास्तव में वही है, जो कुफ़्र की नीति अपनाते हैं।

(255) अल्लाह, वह जीवन्त शाश्वत सत्ता, जो सम्पूर्ण जगत् को सँभाले हुए है, उसके सिवा कोई ख़ुदा नहीं है। वह न सोताहै और न उसे ऊँघ लगती है। ज़मीन और आसमानों में जो कुछ है उसी का है। कौन है जो उसके सामने उसकी अनुमति के बिना सिफ़ारिश कर सके? जो कुछ बन्दों के सामने है उसे भी वह जानता है और जो कुछ उनसे ओझल है, उसे भी वह जानता है और उसके ज्ञान में से कोई चीज़ उनके ज्ञान की पकड़ में नहीं आ सकती यह और बात है कि किसी चीज़ का ज्ञान वह ख़ुद ही उनको देना चाहे। उसका राज्य[88] आसमानों और ज़मीन पर छाया हुआ है और उनकी देख-रेख उसके लिए कोई थका देनेवाला काम नहीं है। बस वही एक महान और सर्वोपरि सत्ता है। (256) दीन के मामले में कोई ज़ोर-जबरदस्ती नहीं।[89] सही बात ग़लत विचारों से अलग छाँटकर रख दी गई है। अब जिस किसी ने बढ़े हुए फ़सादी[90] का इनकार करके अल्लाह को माना, उसने एक ऐसा मज़बूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटनेवाला नहीं, और अल्लाह (जिसका सहारा उसने लिया है) सब कुछ सुननेवाला और जाननेवाला है। (257) जो लोक ईमान लाते हैं, उनका हिमायती और मददगार अल्लाह है और वह उनको अंधकारों से प्रकाश में निकाल लाता है। और जो लोग इनकार की नीति अपनाते हैं, उनके हिमायती और मददगार बढ़े हुए फ़सादी हैं।[91] और वे उन्हें प्रकाश से अंधकारों

88. मूल में 'कुर्सी' शब्द का प्रयोग हुआ है, जिसे साधारणतया शासन एवं राज्य-सत्ता के अर्थों में लाक्षणिक रूप से बोला जाता है। उर्दू (तथा हिन्दी) भाषा में भी अकसर कुर्सी शब्द बोलने का मतलब शासनाधिकार होता है। इसी शब्द के कारण यह आयत 'आयतुल कुर्सी' के नाम से प्रसिद्ध है और इसमें अल्लाह की ऐसी पहचान करा दी गई है, जिसकी मिसला कहीं नहीं मिलती। इसी लिए 'हदीस' में इसको क़ुरआन की सर्वश्रेष्ठ आयत कहा गया है।
89. अर्थात् किसी को ईमान लाने पर मजबूर नहीं किया जा सकता।
90. यहाँ तागूत शब्द प्रयुक्त हुआ है। शाब्दिक अर्थ की दृष्टि से हर उस व्यक्ति को तागूत कहा जाएगा जो अपनी जायज़ सीमा से आगे बढ़ गया हो। क़ुरआन की परिभाषा में तागूत से मुराद वह बन्दा है, जो बन्दगी की सीमा से आगे बढ़कर ख़ुद अपनी प्रभुता और ख़ुदाई का दम भरे और अल्लाह के बन्दों से अपनी बन्दगी कराए।

की ओर खींच ले जाते हैं। ये आग में जानेवाले लोग हैं जहाँ ये हमेशा रहेंगे।

(258) क्या तुमने उस आदमी के हाल पर विचार नहीं किया, जिसने इबराहीम से झगड़ा किया था?[92] झगड़ा इस बात पर कि इबराहीम का रब कौन है, और इस कारण कि उस व्यक्ति को अल्लाह ने हुकूमत दे रखी थी। जब इबराहीम ने कहा कि "मेरा रब वह है, जिसके अधिकार में ज़िन्दगी और मौत है", तो उसने जवाब दिया : 'ज़िन्दगी और मौत मेरे अधिकार में है।" इबराहीम ने कहा : "अच्छा, अल्लाह सूरज को पूरब से निकालता है, तू तनिक उसे पश्चिम से निकाल ला।" यह सुनकर वह सत्य-विरोधी चकित रह गया, मगर अल्लाह ज़ालिमों को सीधा रास्ता नहीं दिखाया करता।

(259) या फिर उदाहरण के रूप में उस आदमी को देखो, जिसका एक ऐसी बस्ती पर से जाना हुआ, जो अपनी छतों पर औंधी गिरी पड़ी थी। उसने कहा : "यह आबादी जो तबाह हो चुकी है, इसे अल्लाह किस तरह दुबारा जीवन प्रदान करेगा?" इसपर अल्लाह ने उसके प्राण ग्रस्त कर लिए और सौ वर्ष तक वह मुर्दा पड़ा रहा। फिर अल्लाह ने उसे दुबारा जीवन दान दिया और उससे पूछा : "बताओ, कितने समय तक पड़े रहे हो?" उसने कहा : "एक दिन या कुछ घण्टे रहा हूँगा।" कहा : "तुमपर सौ वर्ष इसी हालत में बीत चुके हैं। अब ज़रा अपने खाने और पानी को देखो कि उसमें ज़रा परिवर्तन नहीं आया है। दूसरी ओर ज़रा अपने गधे को भी देखो (कि उसका पंजर तक जीर्ण हो रहा है) और यह हमने इसलिए किया है कि हम तुम्हें लोगों के लिए एक निशानी बना देना चाहते हैं। फिर देखो कि हड्डियों के इस पंजर को हम किस तरह उठाकर मांस और चर्म उसपर चढ़ाते हैं।" इस तरह जब वास्तविकता उसके सामने बिलकुल स्पष्ट हो गई, तो उसने कहा : "मै जानता हूँ कि अल्लाह हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है।"

(260) और वह घटना भी सामने रहे, जब इबराहीम ने कहा था कि "मेरे मालिक, मुझे दिखा दे, तू मुर्दों को कैसे ज़िन्दा करता है।" कहा : "क्या तू ईमान नहीं रखता?" उसने निवेदन किया, "ईमान तो रखता हूँ, मगर दिल का इतमीनान चाहता हूँ।"[93] कहा : "अच्छा, तो चार पक्षी ले और उनको अपने से हिला-मिला ले। फिर उनका एक-एक भाग एक-एक पहाड़ पर रख दे। फिर उनको पुकार, वे तेरे पास दौड़े

91. 'तागूत' यहाँ तवाग़ीत (तागूत का बहुवचन) के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। अर्थात् अल्लाह से मुँह मोड़कर इनसान एक ही तागूत के चंगुल में नहीं फँसता, बल्कि बहुत-से तागूत उसपर हावी हो जाते हैं।
92. उस आदमी से मुराद नमरूद है, जो हजरत इबराहीम (अलै०) के वतन इराक़ का बादशाह था।

चले आएँगे। ख़ूब जान ले कि अल्लाह अत्यन्त प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।''

(261) जो लोग अपने माल अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करते हैं, उनके ख़र्च की मिसाल ऐसी है, जैसे एक दाना बोया जाए और उससे सात बाले निकलें और हर बाल में सौ दाने हों। इसी तरह अल्लाह जिसके कर्म को चाहता है, बढ़ोत्तरी प्रदान करता है। वह समाईवाला भी है और सर्वज्ञ भी। (262) जो लोग अपने माल अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करते हैं और ख़र्च करके फिर एहसान नहीं जताते, न दुख देते हैं, उनका बदला उनके रब के पास है और उनके लिए किसी रंज और ख़ौफ़ का मौक़ा नहीं। (263) एक मीठा बोल और किसी अप्रिय बात पर तनिक आँख बचा जाना उस दान से अच्छा है, जिसके पीछे दुख हो। अल्लाह बेनियाज़ (निस्पृह) है और सहनशीलता उसका गुण है। (264) ऐ ईमान लानेवालो, अपने दान को एहसान जताकर और दुख देकर उस आदमी की तरह मिट्टी में न मिला दो, जो अपना माल सिर्फ़ लोगों के दिखाने को ख़र्च करता है और न अल्लाह को मानता है, न आख़िरत को। उसके ख़र्च की मिसला ऐसी है, जैसे एक चट्टान थी, जिसपर मिट्टी की तह जमी हुई थी। उसपर जब ज़ोर की बारिश हुई तो सारी मिट्टी बह गई और साफ़ चट्टान की चट्टान रह गई। ऐसे लोग अपनी दृष्टि में दान करके जो नेकी कमाते हैं, उससे कुछ भी उनके हाथ नहीं आता, और काफ़िरों को सीधा मार्ग दिखाना अल्लाह का नियम नहीं है।[94] (265) इसके विपरीत जो लोग अपने माल सिर्फ़ अल्लाह की ख़ुशी की चाहत में हृदय की पूरी स्थिरता के साथ ख़र्च करते हैं, उनके ख़र्च की मिसाल ऐसी है, जैसे कि उच्च सतह पर एक बाग़ हो। अगर ज़ोर की बारिश हो जाए तो दो गुना फल लाए और अगर ज़ोर की बारिश न भी हो तो एक हलकी फुहार ही उसके लिए काफ़ी हो जाए. तुम जो कुछ करते हो, सब अल्लाह की नज़र में है। (266) क्या तुममें से कोई यह पसंद करता है कि उसके पास एक हरा-भरा बाग़ हो, नहरों से सिंचित, खजूरों और अंगूरों और हर क़िस्म के फलों से लदा हो, और वह ठीक उस समय एक तेज़ बगूले के आघात में आकर झुलस जाए, जबकि वह ख़ुद बूढ़ा हो और उसके छोटे बच्चे अभी किसी योग्य न हो?[95] इस तरह अल्लाह अपनी बातें तुम्हारे सामने बयान करता है, शायद कि तुम सोच-विचार करो।

(267) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जो माल तुमने कमाए हैं और जो कुछ हमने धरती से तुम्हारे लिए निकाला है, उसमें से अच्छा हिस्सा अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करो। ऐसा न हो कि उसके मार्ग में देने के लिए बुरी से बुरी चीज़ छाँटने की कोशिश करने

93. यानी वह इतमीनान जो आँखों से देखकर हासिल होता है।

94. यहाँ काफ़िर शब्द कृतघ्न और उपकार न माननेवाले के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

लगो, हालाँकि वही चीज़ अगर कोई तुमहें दे, तो तुम हरगिज़ उसे लेना न चाहोगे, यह और बात है कि उसको स्वीकार करने में तुम देखी-अनदेखी कर जाओ. तुम्हें जान लेना चाहिए कि अल्लाह बेनियाज़ (निस्पृह) है और अच्छे गुणों से विभूषित है। (268) शैतान तुम्हें निर्धनता से डराता है और शर्मनाक नीति अपनाने के लिए उकसाता है, मगर अल्लाह तुम्हें अपनी बख़्शिश और उदार कृपा की उम्मीद दिलाता है। अल्लाह बड़ी समाईवाला और सर्वज्ञ है। (269) जिसको चाहता है हिकमत (तत्त्वदर्शिता) प्रदान करता है, और जिसे हिकमत (तत्तज्ञान) मिली, उसे वास्तव में बड़ी दौलत मिल गई। इन बातों से सिर्फ़ वही लोग शिक्षा ग्रहण करते है, जो बुद्धिमान हैं।

(270) तुमने जो कुछ भी ख़र्च किया हो और जो मन्नत[96] भी मानी हो, अल्लाह उसे जानता है, और ज़ालिमों का कोई मददगार नहीं। (271) अगर अपने दान खुले रूप में दो, तो यह भी अच्छा हैं लेकिन अगर छिपाकर मुहताजों को दो, तो यह तुम्हारे लिए ज़्यादा अच्छा है। तुम्हारी बहुत-सी बुराइयाँ इस नीति से मिट जाती हैं। और जो कुछ तुम करते हो अल्लाह को हर हाल में उसकी ख़बर है।

(272) ऐ नबी, लोगो को रास्ते पर ला देने की (ज़िम्मेदारी तुमपर नहीं है। रास्ते पर तो अल्लाह ही जिसे चाहता है चलाता है। और भलाई के रास्ते में जो माल तुम ख़र्च

95. अर्थात् अगर तुम यह पसन्द नहीं करते कि तुम्हारी जीवन भर की कमाई एक ऐसे नाज़ुक मौक़े पर तबाह हो जाए जब कि तुम उससे लाभ उठाने के सबसे ज़्यादा ज़रूरतमन्द हो और नए सिरे से कमाई करने का अवसर भी बाक़ी न रहा हो, तो यह बात तुम कैसे पसन्द कर रहे हो कि दुनिया में जीवन भर कार्य करने के बाद आख़िरत की ज़िन्दगी में तुम् इस तरह क़दम रखो कि वहाँ पहुँचकर अचानक तुम्हें मालूम हो कि जीवन के तुम्हारे सारे किए-धरे का यहाँ कोई मूल्य नहीं, जो कुछ तुमने दुनिया के लिए कमाया था, वह दुनिया ही में रह गया, आख़िरत के लिए कुछ कमाकर लाए ही नहीं कि यहाँ उसके फल खा सको।

96. मन्नत या नज्र यह है कि आदमी अपनी किसी मुराद के पूरे होने पर कोई ऐसा नेक काम करने की प्रतिज्ञा करे जो उसके लिए अनिवार्य न हो। अगर यह मुराद किसी हलाल और जायज़ चीज़ की हो, और अल्लाह से माँगी गई हो, और उसके पूरे होने पर जो काम करने की प्रतिज्ञा आदमी ने की है वह अल्लाह ही के लिए हो, तो ऐसी नज्र अल्लाह के आज्ञापालन के दायरे में है और इसे पूरा करने का बदला (पुण्य) ज़रूर मिलेगा। अगर यह बात न हो तो ऐसी नज्र का मानना गुनाह है और उसका पूरा करना अज़ाब और यातना का कारण बनेगा।

करते हो वह तुम्हारे अपने लिए भला है। आख़िर तुम इसी लिए तो ख़र्च करते हो कि अल्लाह की ख़ुशी प्राप्त हो। तो जो कुछ माल तुम भलाई के रास्ते में ख़र्च करोगे, उसका पूरा-पूरा बदला तुम्हें दिया जाएगा और तुम्हारा हक़ हरगिज़ मारा न जाएगा।

(273) विशेष रूप से सहायता के हक़दार वे निर्धन लोग हैं जो अल्लाह के कार्य में ऐसे घिर गए हैं कि अपने व्यक्तिगत जीविकोपार्जन के लिए धरती में कोई दौड़-धूप नहीं कर सकते। उनका स्वाभिमान (ख़ुद्दारी) देखकर अनजान आदमी समझता है कि ये सम्पन्न हैं। तुम उनके चेहरों से उनकी भीतरी हालत पहचान सकते हो। मगर वे ऐसे लोग नहीं हैं कि लोगों के पीछे पड़कर कुछ माँगें। उनकी सहायता में जो माल तुम ख़र्च करोगे वह अल्लाह से छिपा न रहेगा।

(274) जो लोग अपने माल रात-दिन खुले और छिपे ख़र्च करते हैं उनका बदला उनके रब के पास है और उनके लिए किसी ख़ौफ़ और रंज की बात नहीं। (275) मगर जो लोग ब्याज (सूद) खाते हैं, उनका हाल उस आदमी जैसा होता है जिसे शैतान ने छूकर बावला कर दिया हो।[97] और इस हालत में उनके फँस जाने का कारण यह है कि वे कहते हैं : "व्यापार भी तो आख़िर ब्याज ही जैसी चीज़ है"[98], जबकि अल्लाह ने व्यापार ो हलाल किया है और ब्याज को हराम। अतः जिस आदमी को उसके रब की ओर से यह नसीहत पहुँचे और आगे के लिए वह ब्याज खाने से बाज़ आ जाए, तो जो कुछ वह पहले खा चुका, सो खा चुका, उसका मामला अल्लाह के हवाले है।[99] और जो इस आदेश के बाद फिर इस कर्म को दुबारा करे, वह जहन्नमी है, जहाँ वह हमेशा रहेगा। (276) अल्लाह ब्याज का मठ मार देता है और ख़ैरात (दान) को बढ़ाता है। और अल्लाह किसी नाशुक्रे बुरे अमलवाले इनसान को पसंद नहीं करता। (277) हाँ, जो लोग ईमान ले आएँ और अच्छे कर्म करें और नमाज़ क़ायम करें और ज़कात

97. अरब के लोग दीवाने आदमी को 'मजनून' (अर्थात् प्रेतग्रस्त) की संज्ञा देते थे, और किसी आदमी के बारे में यह कहना होता कि वह पागल हो गया है, तो यूँ कहते कि उसे जिन्न लग गया है। इसी मुहावरे का प्रयोग करते हुए क़ुरआन ब्याज खानेवाले को उस आदमी के जैसा क़रार देता है जो विक्षिप्त हो गया हो।

98. अर्थात् उनकी धारणा की ख़राबी यह है कि वे व्यापार में मूल लागत पर जो लाभ लिया जाता है उसे और ब्याज को एक ही तरह की चीज़ समझते हैं, और उनमें कोई अन्तर नहीं करते और तर्क और दलील यूँ प्रस्तुत करते हैं कि जब व्यापार में लगे रुपये का लाभ लेना जायज़ है, तो क़र्ज़ के तौर पर दिए गए रुपये का लाभ क्यों नाजायज़ होगा।

(दान) दें, उनका बदला बेशक उनके रब के पास है और उनके लिए किसी ख़ौफ़ और रंज का मौक़ा नहीं।

(278) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह से डरो और जो कुछ तुम्हारा ब्याज लोगों पर बाक़ी रह गया है उसे छोड़ दो, अगर वास्तव में तुम ईमान लाए हो। (279) लेकिन अगर तुमने ऐसा न किया, तो सावधान हो जाओ कि अल्लाह और उसके रसूल (सन्देशवाहक) की ओर से तुम्हारे ख़िलाफ़ युद्ध की घोषणा है।[100] अब भी तौबा कर लो (और ब्याज छोड़ दो) तो अपना मूलधन लेने के तुम अधिकारी हो। न तुम अन्याय करो, न तुमाहरे साथ ज़ुल्म किया जाए। (280) तुम्हारा क़र्ज़दार तंगी में हो, तो हाथ खुलने तक उसे मुहलत दो, और अगर दान कर दो, तो यह तुम्हारे लिए अधिक अच्छा है, अगर तुम समझो।[101] (281) उस दिन के अपमान और मुसीबत से बचो, जबकि तुम अल्लाह की ओर वापस होगे, वहाँ हर आदमी को अपनी कमाई हुई नेकी या बुराई का पूरा-पूरा बदला मिल जाएगा और किसी के साथ हरगिज़ ज़ुल्म न होगा।

(282) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब किसी निर्धारित समय के लिए तुम आपस में क़र्ज़ का लेन-देन करो,[102] तो उसे लिख लिया करो। दोनों पक्षों के बीच इनसाफ़ के साथ एक आदमी दस्तावेज़ लिखे। जिसे अल्लाह ने लिखने-पढ़ने की

99. यह नहीं कहा कि जो कुछ उसने खा लिया उसे अल्लाह माफ़ कर देगा, बल्कि कहा यह जा रहा है कि उसका मामला अल्लाह के हवाले है। इस वाक्य में मालूम होता है कि "जो खा चुका सो खा चुका" कहने का मतलब यह नहीं है कि जो खा चुका उसे माफ़ कर दिया गया, बल्कि इससे मुराद सिर्फ़ क़ानूनी छूट है। अर्थात जो ब्याज पहले खाया जा चुका है उसे वापस लेने की क़ानूनी तौर पर मांग नहीं की जाएगी।

100. यह आयत मक्का की विजय के बाद उतरी थी जबकि अरब इस्लामी राज्य के अधीन हो चुका था। इससे पहले यद्यपि ब्याज एक नापसंदीदा चीज़ समझा जाता था मगर क़ानूनी तौर पर उसे बन्द नहीं किया गया था। इस आयत के उतरने के बाद इस्लामी राज्य की सीमा में ब्याज का कारोबार एक फ़ौजदारी अपराध बन गया। आयत के अन्तिम शब्दों के आधार पर इब्न अब्बास (रज़ि॰), हसन बसरी (रह॰), इब्न सीरीन (रह॰) और रबीअ बिन अनस (रह॰) का मत यह है कि जो आदमी 'दारुल इस्लाम' में ब्याज खाए उसे 'तौबा' करने के लिए मजबूर किया जाए और अगर न रुके तो उसे क़त्ल की सज़ा दी जाए। दूसरे फ़क़ीहों की राय में ऐसे आदमी को क़ैद कर देना क़ाफ़ी है। जब तक यह वचन न दे कि ब्याज न खाएगा उसे छोड़ा न जाए।

क़ाबिलियत दी हो, उसे लिखने से इनकार नहीं करना चाहिए। वह लिखे और बोलकर वह आदमी लिखाए जिसपर हक़ आता है (अर्थात् क़र्ज़ लेनेवाला), और उसे अल्लाह, अपने रब से डरना चाहिए कि जो मामला तय पाया हो उसमें कोई कमी-बेशी न करे। लेकिन अगर क़र्ज़ लेनेवाला ख़ुद नादान या कमज़ोर हो, या बोलकर लिखा न सकता हो, तो उसका सरपरस्त इनसाफ़ के साथ बोलकर लिखाए। फिर अपने मर्दों में से दो आदमियों की इसपर गवाही करा लो। और अगर दो मर्द न हो तो एक मर्द और दो औरतें हो ताकि एक भूल जाए तो दूसरी उसे याद दिला दे। ये गवाह ऐसे लोगों में से होने चाहिएँ, जिनकी गवाही तुमहारे बीच स्वीकार की जाती हो। गवाहों को जब गवाह बनने के लिए कहा जाए, तो उन्हें इनकार न करना चाहिए। मामला चाहे छोटा हो या बड़ा, अवधि के निर्धारण के साथ उसकी दस्तावेज़ लिखवा लेने में सुस्ती न करो। अल्लाह के नज़दीक यह तरीक़ा तुम्हारे लिए ज़्यादा न्यायसंगत है, इससे गवाही क़ायम होने में ज़्यादा आसानी होती है, और सन्देहों में तुम्हारे पड़ने की संभावना कम रह जाती है, हाँ जो व्यापारिक लेन-देन हाथ के हाथ तुम लोग आपस में करते हों, उसको न लिखा जाए तो कोई हरज नहीं, मगर व्यापारिक मामले तय करते समय गवाह कर लिया करो। लिखनेवाले और गवाह को सताया न जाए। ऐसा करोगे, तो गुनाह का काम करोगे। अल्लह के ग़ज़ब से बचो। वह तुम्हें सही कार्य-नीति की तालीम देता है और उसे हर चीज़ का ज्ञान है।

(283) अगर तुम किसी सफ़र में हो और दस्तावेज़ लिखने के लिए कोई लिखनेवाला न मिले, तो गिरवी (बन्धक) रखकर मामला करो।[103] अगर तुममें से कोई आदमी दूसरे पर भरोसा करके उसके साथ कोई मामला करे, तो जिसपर भरोसा किया गया है, उसे चाहिए कि अमानत अदा करे और अल्लाह, अपने रब से, डरे। और गवाही हरगिज़ न छिपाओ। जो गवाही छिपाता है, उसका दिल गुनाह में लथपथ है।

101. इसी आयत से यह हुक्म निकाला गया है कि जो आदमी क़र्ज़ चुकाने में असमर्थ हो गया हो, इस्लामी अदालत उसके क़र्ज़ देनेवालों को मजबूर करेगी कि उसे मोहलत दें, और कुछ परिस्थितियों में उसे अधिकार होगा कि वह पूरा क़र्ज़ या क़र्ज़ का एक हिस्सा माफ भी करा दे। फ़क़ीहों ने स्पष्ट किया हैं कि किसी के रहने का मकान, खाने के बरतन, पहनने के कपड़े, और वे औज़ार और उपकरण जिनसे वह अपनी रोज़ी कमाता हो, किसी हालत में भी कुर्क़ नहीं किए जा सकते।

102. इससे यह हुक्म निकलता है कि क़र्ज़ के मामले में अवधि या मुद्दत का निर्धारण होना चाहिए।

और अल्लाह तुम्हारे कामों से बेख़बर नहीं है। (284) आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है सब अल्लाह का है। तुम अपने दिल की बातें चाहे खोल दो, या छिपाओ अल्लाह हर हाल में उनका हिसाब तुमसे ले लेगा। फिर उसे अधिकार है, जिसे चाहे माफ़ कर दे और जिसे चाहे, सज़ा दे। उसे हर चीज़ पर क़ुदरत हासिल है।

(285) रसूल (ईश्वरीय सन्देशवाहक) ने उस मार्गदर्शन को माना जो उसके रब की ओर से उसपर उतरा है। और जो लोग इस रसूल के माननेवाले हैं, उन्होंने भी उस मार्गदर्शन को दिल से मान लिया है। ये सब अल्लाह और उसके फ़रिश्तों और उसकी किताबों और उसके रसूलों को मानते है और इनका कहना यह है कि ''हम अल्लाह के रसूलों को एक-दूसरे से अलग नहीं करते, हमने हुक्म सुना और आज्ञाकारी हुए। मालिक, हम तुझसे माफ़ी चाहते हैं और हमें तेरी ही ओर पलटना है।''

(286) अल्लाह किसी जान पर उसकी सहन-शक्ति से बढ़कर ज़िम्मेदारी का बोझ नहीं डालता। हर आदमी ने जो कमाई की है, उसका फल उसी के लिए है और जो बुराई समेटी है, उसका वबाल उसी पर है। (ईमान लानेवालो, तुम इस तरह दुआ किया करो) ऐ हमारे रब, हमसे भूलचूक में जो ख़ताएँ हो जाएँ, उनपर पकड़ न कर। मालिक, हमपर वह बोझ न डाल, जो तूने हमसे पहले लोगों पर डाले थे। रब, जिस बोझ को उठाने की ताक़त हममें नहीं है, वह हमपर न रख। हमारे साथ नरमी कर, हमें माफ़ कर दे, हमपर दया कर, तू हमारा स्वामी है, इनकार करनेवालों के मुक़ाबले में हमारी मदद कर।

● ● ●

103. गिरवी या बन्धक हाथ में रखने का मक़सद सिर्फ़ यह है कि क़र्ज़ देनेवाले को अपने क़र्ज़ की वापसी का इतमीनान हो जाए। मगर उसे अपने दिए हुए माल के बदले में गिरवी (रेहन) रखी चीज़ से लाभ उठाने का हक़ नहीं है क्योंकि यह ब्याज है। हाँ, अगर कोई जानवर रेहन लिया गया हो तो उसका दूध इस्तेमाल किया जा सकता है, और उससे सवारी और बोझ ढोने का काम लिया जा सकता है, क्योंकि वास्तव में यह उस चारे का बदला है जो बन्धक लेनेवाला उस जानवर को खिलाता है।

3. आले इमरान

नाम

इस सूरा में एक जगह आले इमरान का उल्लेख किया गया है। उसी को चिह्न के रूप में इसका नाम निर्धारित कर दिया गया है। (आले इमरान का अर्थ है इमरान की सन्तति।)

अवतरणकाल और विषय अंश

इसमें चार अभिभाषण सम्मिलित हैं।

पहला अभिभाषण सूरा के प्रारंभ से आयत 32 तक है और वह संभवतः बद्र के युद्ध के पश्चात् निकट के समय में ही अवतरित हुआ है। दूसरा अभिभाषण आयत 33 से प्रारंभ होता है और आयत 63 पर समाप्त होता है। यह सन् 9 हिजरी में नजरान के प्रतिनिधि-मंडल के आगमन के अवसर पर अवतरित हुआ। तीसरा अभिभाषण आयत 64 से आरम्भ होकर आयत 120 तक चलता है और उसका समय प्रथम अभिभाषण के समय से मिला हुआ ही प्रतीत होता है। चौथा अभिभाषण आयत 121 से सूरा के अंत तक चला गया है जो उहुद के युद्ध के पश्चात अवतरित हुआ है।

सम्बोधन एवं वार्ताएँ

इन विभिन्न अभिभाषणों को मिलाकर जो चीज़ उन्हें एक क्रमबद्ध विषय बनाती है वह उद्देश्य एवं अभिप्राय और केन्द्रीय विषय की समानता है। सूरा के सम्बोधन का रुख़ विशेष रूप से दो गिरोहों की तरफ़ है, एक किताबवाले (यहूदी एवं ईसाई) और दूसरे वे जो मुहम्मद (सल्ल॰) पर ईमान लाए थे। पहले गिरोह में उसी ढंग से तद्अधिक धर्म प्रचार किया गया जिसका सिलसिला सूरा 2 (बक़रा) में शुरू किया गया था। दूसरे गिरोह को जो अब उत्तम समुदाय होने की हैसियत से सत्य का ध्वजवाहक और संसार के सुधार का उत्तरदायी बनाया जा चुका है, उसी सम्बन्ध में कुछ और आदेश दिए गए हैं जो सूरा 2 (बक़रा) में शुरू हुए थे। उन्हें विगत समुदायों के धार्मिक और नैतिक पतन का शिक्षाप्रद चित्रण करके सावधान किया गया है कि उनके पद्चिह्न पर चलने से बचें। उन्हें बताया गया है कि एक सुधारक गिरोह होने की हैसियत से वे किस तरह काम करें।

अवतरण की पृष्ठभूमि

सूरा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि यह है—

(1) सूरा 2 (बक़रा) में इस सत्य धर्म पर ईमान लानेवालों को जिन आज़माइशों, मुसीबतों और कठिनाइयों से समय से पहले ही सावधान कर दिया गया था वे पूरी प्रचण्डता के साथ सामने आ चुकी थीं। बद्र के युद्ध में यद्यपि ईमानवालों को विजय प्राप्त हुई थी लेकिन यह युद्ध मानो भिड़ों के छत्ते में पत्थर मारना था। (अतएव इसके बाद हर तरफ़ तूफ़ान के लक्षण दिखाई देने लगे और मुसलमानों को स्थाई भय और निरंतर बेचैनी का सामना करना पड़ गया।)

(2) हिजरत के बाद नबी (सल्ल॰) ने मदीना के आस-पास के यहूदी क़बीलों के साथ जो समझौते किए थे उन लोगों ने उन समझौतों का तनिक भी आदर न किया। (और निरंतर उनकी अवहेलना करने लगे।) अंततः उनकी शरारतें और अनुबंध-भंग सहन-सीमा से आगे बढ़ गए तो बद्र के कुछ महीनो के बाद बनी-क़ैनुक़ाअ पर, जो इन यहूदी क़बीलों में सबसे अधिक दुष्ट लोग थे, आक्रमण कर दिया और उन्हें मदीना के आसपास से निकाल बाहर किया। किन्तु इससे दूसरे यहूदी क़बीलों की दुश्मनी की आग और अधिक भड़क उठी। उन्होंने मदीना के मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) मुसलमानों और हिजाज़ के बहुदेववादी क़बीलों के साथ साज़-बाज़ करके इस्लाम और मुसलमानों के लिए ख़तरे ही ख़तरे पैदा कर दिए।

(3) बद्र की पराजय के बाद क़ुरैश के दिलों में स्वयं ही प्रतिशोध की आग भड़क रही थी। उसपर सबसे अधिक तेल यहूदियों ने छिड़का। नतीजा यह हुआ कि एक वर्ष के बाद मक्का से तीन हज़ार के भारी सेना-दल ने मदीना पर आक्रमण कर दिया और उहुद के आंचल में वह युद्ध हुआ जो उहुद की लड़ाई के नाम से प्रसिद्ध है।

(4) उहुद की लड़ाई में मुसलमानों की जो पराजय हुई उसमें यद्यपि मुनाफ़िक़ों की तदबीरों का एक बड़ा हिस्सा था, लेकिन इसके साथ मुसलमानों की कमज़ोरियों का हिस्सा भी कम नहीं था। इसलिए इसकी ज़रूरत हुई कि युद्ध के पश्चात इस युद्ध के पूरे घटना-चक्र पर एक विस्तृत समीक्षा की जाए और इस्लामी दृष्टिकोण से जो कमज़ोरियाँ मुसलमानों में पाई गई थी एक-एक को इंगित करके उसके सुधार के सम्बन्ध में आदेश दिए जाएँ। इस सिलसिले में यह बात भी दृष्टि में रखने योग्य है कि उस युद्ध पर क़ुरआन की समीक्ष उन समीक्षाओं से कितनी भिन्न है जो दुनिया के सामान्य जनरल लड़ाइयों के बाद किया करते हैं।



3. सूरा आले इमरान

(मदीना में उतरी–आयतें 200)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ मीम॰ (2) अल्लाह वह जीवन्त नित्य सत्ता, जो जगत-व्यवस्था को सँभाले हुए है, वास्तव में उसके सिवा कोई ईश-प्रभु नहीं है।

(3,4) ऐ नबी, उसने तुमपर यह किताब उतारी, जो सत्य लेकर आई है और उन किताबों की पुष्टि कर रही है जो पहले से आई हुई थीं। इससे पहले वह इनसानों के मार्गदर्शन के लिए तौरात और इंजील उतार चुका है, और उसने वह कसौटी उतारी है (जो सत्य और असत्य का अन्तर दिखानेवाली है। अब जो लोग अल्लाह के आदेशों को स्वीकार करने से इनकार करें, उनको निश्चय ही सख़्त सज़ा मिलेगी। अल्लाह अपार शक्तिवाला है और बुराई का बदला देनेवाला है।

(5) धरती और आकाश की कोई चीज़ अल्लाह से छिपी नहीं। (6) वही तो है जो तुम्हारे माओं के पेट में तुम्हारे रूप जैसा चाहता है, बनाता है। उस ज़बरदस्त, गहरी समझवाले के सिवा कोई और ख़ुदा नहीं है। (7) ऐ नबी, वही ख़ुदा है, जिसने यह किताब तुमपर उतारी है। इस किताब में दो प्रकार की आयतें हैं : एक अटल,[1] जो किताब का मूल आधार है और दूसरी उपलक्षित।[2] जिन लोगों के दिलों में टेढ़ है, वे फ़ितने (गुमराही) की तलाश में सदैव उपलक्षित ही के पीछे पड़े रहते हैं और उनको (मनमाना) अर्थ पहनाने का प्रयास किया करते हैं, जबकि उनका वास्तविक अर्थ अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता। इसके विपरीत जो लोग ज्ञान में पक्के हैं, वे कहते हैं कि ''हमारा इनपर ईमान है, ये सब हमारे रब ही की ओर से है।''[3] और सत्य यह है कि किसी चीज़ से उचित शिक्षा केवल बुद्धिमान लोग ही प्राप्त करते हैं। (8) वे अल्लाह

1. 'अटल आयतों' से अभिप्रेत वे आयतें हैं जिनकी भाषा बिलकुल स्पष्ट है और जिनका अर्थ निर्धारित करने में किसी संदिग्धता की गुंजाइश नहीं है। ये आयतें 'पुस्तक का मूल आधार' हैं अर्थात क़ुरआन जिस उद्देश्य के लिए उतरा है, उस उद्देश्य को ये आयतें पूरा करती हैं। उन्हीं में इस्लाम की ओर संसार को बुलाया गया है, उन्हीं में शिक्षाप्रद और उपदेश की बातें कही गही हैं, उन्हीं में गुमराहियों का खण्डन और सत्य-मार्ग को स्पष्ट किया गया है, उन्हीं में धर्म के मौलिक और आधारभूत सिद्धान्तों का उल्लेख हुआ है, उन्हीं में धारणाओं, उपासनाओं, नैतिकता, अनिवार्य कर्मों और हुक्म देने और रोकने के आदेश बयान हुए हैं।

से प्रार्थना करते है कि ''पालनहार, जब तू हमें सीधे रास्ते पर लगा चुका है, तो फिर कहीं हमारे दिलों में टेढ़ न पैदा कर देना। हमें अपने दयानिधि से दयालुता प्रदान कर कि तू ही वास्तविक दाता है। (9) पालनहार, तू निश्चय ही सब लोगों को एक दिन इकट्ठा करनेवाला है, जिसके आने में कोई सन्देह नहीं। तू हरगिज़ अपने वादे से टलनेवाला नहीं है।''

(10) जिन लोगों ने इनकार की नीति अपनाई है, उन्हें अल्लाह के मुक़ाबले में न उनका धन कुछ काम देगा, न सन्तान। वे रक (जहन्नम) का ईंधन बनकर रहेंगे। (11) उनका अंजाम वैसा ही होगा, जैसा फ़िरऔन के साथियों और उनसे पहले के अवज्ञाकारियों का हो चुका है कि उन्होंने अल्लाह की आयतों को झुठलाया, नतीजा यह हुआ कि अल्लाह ने उनके गुनाहों पर उन्हें पकड़ लिया, और सत्य यह है कि अल्लाह सख़्त सज़ा देनेवाला है। (12) अतः ऐ नबी, जिन लोगों ने तुम्हारे पैग़ाम को स्वीकार

2. उपलक्षित, अर्थात् वे आयतें जिनके अर्थ में संदिग्धता की गुंजाइश है। यह ज़ाहिर है कि इनसान के लिए जीवन का कोई मार्ग प्रस्तावित नहीं किया जा सकता जब तक परोक्ष सम्बन्धी तथ्यों के सम्बन्ध में कम से कम जरूरी जानाकरी मनुष्य को न दी जाए। और यह भी ज़ाहिर है कि जो चीज़े इनसान की ज्ञानेन्द्रियों से परे की हैं, जिनको उसने न कभी देखा, न छुआ, न चखा, उनके लिए इनसानी ज़बान में न ऐसे शब्द मिल सकते हैं जो उन्हीं के लिए निर्मित किए गए हों और न ऐसी जानी-समझी वर्णनशैलीयाँ मिल सकती हैं जिनसे प्रत्येक सुननेवाले के मन में उनका सही चित्र खिँच जाए। अनिवार्यतः यह ज़रूरी है कि इस प्रकार के विषयों के बयान के लिए शब्द और वर्णनशैलियाँ वे अपनाई जाएँ जो वास्तविक तथ्य के निकटतम सादृश्य रखनेवाली अनुभूत चीज़ों के लिए इनसानी ज़बान में पाई जाती हैं। अतएव इन तथ्यों के बयान के अन्दर क़ुरआन में ऐसी ही भाषा प्रयोग में लाई गई है। और उपलक्षित से अभिप्रेत वे आयतें हैं, जिनमें यह भाषा प्रयुक्त हुई है।
3. यहाँ किसी को यह संदेह न हो कि जब लोग उपलक्षित का सही अर्थ जानते ही नहीं, तो उनको मानें कैसे। वास्तविकता यह है कि एक योग्य व्यक्ति को क़ुरआन के ईशवाणी होने का विश्वास अटल आयतों के अध्ययन से प्राप्त होता है, न कि उपलक्षित आयतों के अर्थ निरूपण से। जब अटल आयतों में सोच-विचार करने से उनको यह विश्वास हो जाता है कि यह किताब वास्तव में अल्लाह ही की किताब है, तो फिर उपलक्षित आयतों से उसके मन में कोई संशय (शक) उत्पन्न नहीं होता।

करने से इनकार कर दिया है, उनसे कह दो कि निकट है वह समय, जब तुम परास्त हो जाओगे और जहन्नम की ओर हाँके जाओगे, और जहन्नम बड़ा ही बुरा ठिकाना है। (13) तुम्हारे लिए उन दो गिरोहों में एक शिक्षाप्रद निशानी थी, जो (बद्र की लड़ाई में) एक-दूसरे के मुक़ाबिल हुए। एक गिरोह अल्लाह के मार्ग में लड़ रहा था और दूसरा गिरोह विधर्मी था। देखनेवाले आँखों से देख रहे थे कि विधर्मी गिरोह ईमानवाले गिरोह से दो गुना है।[4] किन्तु (नतीजे ने साबित कर दिया कि) अल्लाह अपनी विजय और सहायता से जिसको चाहता है, मदद देता है। नज़र रखनेवालों के लिए इसमें बड़ी शिक्षा निहित है।

(14) लोगों के लिए मनपसन्द चीज़े–स्त्रियाँ, सन्तान, सोने-चाँदी के ढेर, चुने घोड़े, चौपाए और खेती की ज़मीनें–बड़ी लुभावनी बना दी गई हैं, किन्तु ये सब दुनिया के कुछ दिनों के जीवन की सामग्री है। वास्तव में जो अच्छा ठिकाना है, वह तो अल्लाह के पास है। (15) कहो : मैं तुम्हें बताऊँ कि इनसे अधिक अच्छी चीज़ क्या है? जो लोग धर्मपरायणता (तक़वा) की नीति अपनाएँ, उनके लिए उनके रब के पास बाग़ है, जिनके नीचे नहरें बहती होंगी, जहाँ उन्हें हमेशा का जीवन प्राप्त होगा, पाकीज़ा पत्नियाँ उनकी संगिनी होंगी और अल्लाह की प्रसन्नता उन्हें प्राप्त होगी। अल्लाह अपने बन्दों के रवैये पर गहरी नज़र रखता है। (16) ये वे लोग हैं, जो कहते हैं कि "मालिक, हम ईमान लाए, हमारी ख़ताओं को माफ़ कर और हमें जहन्नमत की आग से बचा ले।" (17) ये लोग धैर्य से काम लनेवाले हैं, सत्यवान हैं, आज्ञाकारी और दानशील हैं और रात की अन्तिम घड़ियों में अल्लाह से क्षमा की प्रार्थनाएँ किया करते हैं।

(18) अल्लाह ने ख़ुद इस बात की गवाही दी है कि उसके सिवा कोई ख़ुदा नहीं है और फ़रिश्ते और सब ज्ञानवान भी सच्चाई और न्याय के साथ इसपर गवाह है कि उस बलशाली गहरी समझवाले के सिवावास्तव में कोई ख़ुदा नहीं है। (19) अल्लाह के निकट दीन (धर्म) केवल इस्लाम है। इस दीन से हटकर जो विभिन्न मार्ग उन लोगों ने ग्रहण किए जिन्हें किताब दी गई थी, उनकी इस कार्य-नीति का कोई कारण इसके सिवा न था कि उन्होंने ज्ञान आ जाने के बाद आपस में एक-दूसरे पर ज़्यादती करने के लिए ऐसा किया, और जो कोई अल्लाह के आदेश और मार्गदर्शन के अनुपालन से इनकार कर दे, अल्लाह को उससे हिसाब लेते कुछ देर नहीं लगती। (20) अब यदि ऐ नबी,

4. यद्यपि वास्तविक अन्तर तीन गुना था, किन्तु सरसरी निगाह में देखनेवाला भी यह महसूस किए बिना तो नहीं रह सकता था कि अधर्मियों की सेना मुसलमानों से दो गुनी है।

ये लोग तुमसे झगड़ा करें तो उनसे कहो : "मैंने और मेरे अनुयायियों ने तो अल्लाह के आगे अपने आपको समर्पित कर दिया है।" फिर किताबवालों और जो किताब नहीं रखते दोनों से पूछो : "क्या तुमने भी उसके आज्ञापालन और बन्दगी को स्वीकार किया?" यदि किया तो वे सीधा मार्ग पा गए, और यदि इससे मुख मोड़ा तो तुमपर केवल सन्देश पहुँचा देने की ज़िम्मेदारी थी। आगे, अल्लाह स्वयं अपने बन्दों के मामलों को देखनेवाला है।

(21) जो लोग अल्लाह के आदेश और मार्गदर्शन को माने से इनकार करते हैं और उसके पैग़म्बरों को नाहक़ क़त्ल करते हैं और ऐसे लोगों की जान लेने को उतारू हो जाते हैं जो ख़ुदा की मख़लूक में से न्याय और सच्चाई का हुक्म देने के लिए उठें, उनको दर्दनाक सज़ा की ख़ुशख़बरी सुना दो। (22) ये वे लोग हैं जिनके कर्म दुनिया और आख़िरत दोनों में अकारथ गए, और उनका सहायक कोई नहीं है।

(23) तुमने देखा नहीं कि जिन लोगों को किताब के ज्ञान में से कुछ अंश मिला है, उनकी दशा क्या है? उन्हें जब अल्लाह की किताब की ओर बुलाया जाता है ताकि वह उनके बीच फ़ैसला करे, तो उनमें से एक गिरोह उससे पहलू बचाता है और उस फ़ैसले की ओर आने से मुँह फेर जाता है। (24) उनकी यह नीति इस कारण से है कि वे कहते हैं, "जहन्नम की आग तो हमें छुएगी तक नहीं और यदि जहन्नम की सज़ा हमको मिलेगी भी तो बस कुछ दिन।" उनकी मनगढ़ंत धारणाओं ने उनको अपने दीन के विषय में बड़े भ्रम में डाल रखा हैं। (25) मगर क्या बनेगी उनपर जब हम उन्हें उस दिन इकट्ठा करेंगे जिसको आना निश्चित है? उस दिन हर व्यक्ति को उसकी कमाई का बदला पूरा-पूरा दे दिया जाएगा और किसी के साथ अन्याय न होगा।

(26) कहो, ऐ अल्लाह, राज्य के स्वामी, तू जिसे चाहे राज्य दे और जिससे चाहे छीन ले। जिसे चाहे सम्मान प्रदान करे और जिसको चाहे अपमानित कर दे। भलाई तेरे अधिकार में है। यक़ीनन तुझे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (27) रात को दिन में पिरोता हुआ ले आता है और दिन को रात में। निर्जीव में से जीवधारी को निकालता है और जीवधारी में से निर्जीव को। और जिसे चाहता है, बेहिसाब रोज़ी देता है।

(28) ईमानवाले, ईमानवालों को छोड़कर इनकार करनेवालों (विधर्मियों) को अपना साथी और यार-मददगार हरगिज़ न बनाएँ। जो ऐसा करेगा उसका अल्लाह से कोई सम्बन्ध नहीं। हाँ, यह माफ़ है कि तुम उनके ज़ुल्म से बचने के लिए ऊपरी तौर से ऐसी नीति अपना लो।[5] किन्तु अल्लाह तुम्हें अपने आपसे डराता है, और तुम्हें उसी की ओर पलटकर जाना है।[6] (29) ऐ नबी, लोगों को ख़बरदार कर दो कि तुम्हारे दिलों

में जो कुछ है, उसे चाहे तुम छिपाओ या प्रकट करो, अल्लाह हर हाल में उसे जानता है, आकाशों और धरती की कोई चीज़ उसके ज्ञान से बाहर नहीं है और उसका प्रभुत्व हर चीज़ पर छाया रहता है। (30) वह दिन आनेवाला है जब हर व्यक्ति अपने किए का फल मौजूद पाएगा चाहे उसने भलाई की हो या बुराई। उस दिन आदमी यह तमन्ना करेगा कि क्या ही अच्छा होता कि अभी यह दिन उससे बहुत दूर होता! अल्लाह तुम्हें अपने-आपसे डराता है और वह अपने बन्दों का अत्यन्त हितैषी है।

(31) ऐ नबी, लोगों से कह दो कि "यदि तुम वास्तव में अल्लाह से प्रेम करते हो तो मेरा अनुसरण करो, अल्लाह तुमसे प्रेम करेगा और तुम्हारी ख़ताओं को माफ़ कर देगा। वह बड़ा क्षमाशील और दयावान् है।" (32) उनसे कहो कि "अल्लाह और रसूल का आज्ञापालन करो।" फिर यदि वे तुम्हारी यह बात न माने, तो निश्चय ही यह संभव नहीं है कि अल्लाह ऐसे लोगों से प्रेम करे, जो उसके और उसके रसूल के आज्ञापालन से इनकार करते हों।

(33) अल्लाह ने आदम और नूह और इबराहीम की सन्तान और इमरान की सन्तान[7] को सम्पूर्ण संसारवालों के मुक़ाबले में प्रधानता देकर (अपने सन्देशवाहन के

5. अर्थात् अगर कोई ईमानवाला व्यक्ति किसी इस्लाम-विरोधी दल के चंगुल में फँस गया हो और उसे उनके ज़ुल्म और अत्याचार का भय हो, तो उसको इजाज़त है कि अपने ईमान को छिपाए रखे और अधर्मियों के साथ ऊपरी तौर पर इस तरह रहे कि मानो उन्हीं में का एक आदमी है। या अगर उसका मुसलमान होना ज़ाहिर हो गया हो तो अपनी जान की रक्षा के लिए वह अधर्मियों के साथ मित्रता की नीति का प्रदर्शन कर सकता है, यहाँ तक कि अत्याधिक भय की हालत में जिस व्यक्ति को सहन की शक्ति न हो उसको धर्मविरोधी बात तक कह जाने की छूट है।
6. अर्थात् अपनी जान की रक्ष के लिए तुम इस सीमा तक तो डर के कारण वास्तविकता को छिपा सकते हो कि इस्लाम के मिशन और इस्लामी जमाअत के हितों और किसी मुसलमान की जान और धन को हानि पहुँचाए बिना अपनी जान और माल की सुरक्षा कर लो। लेकिन सावधान, अधर्म और अधर्मियों की कोई ऐसी सेवा तुम्हारे हाथों नहीं होनी चाहिए जिससे इस्लाम के मुक़ाबले में अधर्म को उन्नति प्राप्त होने और मुसलमानों पर अधर्मियों के विजयी होने की संभावना हो।
7. इमरान हज़रत मूसा (अलै०) और हारून (अलै०) के बाप का नाम था, जिसे बाइबल में 'अमराम' लिखा गया है।

लिए) चुना था। (34) ये एक सिलसिले के लोग थे, जो एक-दूसरे की नस्ल से पैदा हुए थे। अल्लाह सब कुछ सुनता और जानता है। (35) (वह उस समय सुन रहा था) जब इमरान की स्त्री[8] कह रही थी, "मेरे पालनहार, मैं इस बच्चे को जो मेरे पेट में है तुझे भेंटस्वरूप अर्पित करती हूँ, वह तेरे ही कार्य के लिए अर्पित होगा। मेरी इस भेंट को स्वीकार कर। तू सुनने और जाननेवाला है।" (36) फिर जब वह बच्ची उसके यहाँ पैदा हुई तो उसने कहा, "मेरे मालिक, मेरे यहाँ तो लड़की पैदा हो गई है—हालाँकि जो कुछ उसने जना था, अल्लाह को उसकी ख़बर थी—और लड़का, लड़की की तरह नहीं होता। ख़ैर, मैंने उसका नाम मरयम रख दिया है और मैं उसे और उसकी भावी सन्तान को तिरस्कृत (मरदूद) शैतान के फ़ितने से तेरी शरण में देती हूँ।" (37) अन्ततः उसके रब ने उस लड़की को ख़ुशी से स्वीकार कर लिया, उसे बड़ी अच्छी लड़की बनाकर उठाया, और ज़करिया को उसका सरपरस्त बना दिया।

ज़करिया जब कभी उसके पास मेहराब (इबादतगाह) में जाता तो उसके पास कुछ न कुछ खाने-पीने की चीज़ पाता। पूछता मरयम यह तेरे पास कहाँ से आया? वह उत्तर देती अललाह के पास से आया है, अल्लाह जिसे चाहता है बेहिसाब रोज़ी देता है। (38) यह हाल देखकर ज़करिया ने अपने रब को पुकारा, "पालनहार, अपनी सामर्थ्य से मुझे नेक संतान दे। तू ही प्रार्थना सुननेवाला है।" (39) उत्तर में फ़रिश्तों ने आवाज़ दी, जब कि वह मेहराब (इबादतगाह) में खड़ा उपासना कर रहा था कि "अल्लाह तुझे यहया की ख़ुशख़बरी देता है। वह अल्लाह की ओर से एक आदेश[9] की पुष्टि करनेवाला बनकर आएगा। उसमें सरदारी और बुज़ुर्गी की शान होगी। पूर्ण संयत होगा। नबी बननाया जाएगा और अच्छों में उसकी गिनती होगी।" (40) ज़करिया ने कहा, "पालनहार, भला मेरे यहाँ लड़का कहाँ से होगा? मैं तो बहुत बूढ़ा हो चुका हूँ और मेरी

8. अगर इमरान की स्त्री से मुराद 'इमरान की पत्नी' समझा जाए तो इसका अर्थ यह होगा कि ये वे इमरान नहीं है जिनका उल्लेख ऊपर हुआ है, बल्कि ये हज़रत मरयम के बाप थे, जिनका नाम शायद इमरान होगा और अगर इमरान की स्त्री से मुराद इमरान के कुटुम्ब की स्त्री है तो इसका अर्थ यह होगा कि हज़रत मरयम की माँ इस क़बीले से थी।
9. अल्लाह के 'आदेश' से मुराद हज़रत ईसा (अलै०) है। चूँकि उनका जन्म अल्लाह के एक असाधारण आदेश से चमत्कार के रूप में हुआ था, इसलिए उनको क़ुरआन मजीद में 'कलिमतुम-मिनल्लाह' (अल्लाह की ओर से एक आदेश) कहा गया है।

पत्नी बाँझ है।'' उत्तर मिला, ''ऐसा ही होगा,[10] अल्लाह जो चाहता है करता है।'' (41) निवेदन किया, ''मालिक, फिर कोई निशानी मेरे लिए नियत कर दे।'' कहा, ''निशानी यह है कि तुम तीन दिन तक लोगों से इशारे के सिवा कोई बातचीत न करोगे (या न कर सकोगे) इस बीच अपने रब को बहुत याद करना और सुबह और शाम उसकी तसबीह (महिमागान) करते रहना।''

(42) फिर वह समय आया जब मरयम से फ़रिश्तों ने आकर कहा, ''ऐ मरयम, अल्लाह ने तुझे चुना और पवित्रता प्रदान की और सारे संसार की स्त्रियों में तुझे आगे रखकर अपनी सेवा के लिए चुन लिया। (43) ऐ मरयम, अपने रब की आज्ञाकारी बनकर रह, उसके आगे सजदा कर, और जो बन्दे उसके आगे झुकनेवाले हैं उनके साथ तू भी झुक जा।''

(44) ऐ नबी, ये छिपी ख़बरें हैं जो हम तुमको प्रकाशना के द्वारा बता रहे हैं, अन्यथा तुम उस समय वहाँ मौजूद न थे जब हैकल (उपासनागृह) के सेवक यह फ़ैसला करने के लिए कि मरयम का सरपरस्त कौन हो, अपनी-अपनी क़लम फेंक रहे थे,[11] और न तुम उस समय उपस्थित थे जब उनके बीच झगड़ा खड़ा हो गया था।

(45) और जब फ़रिश्तों ने कहा, ''ऐ मरयम, अल्लाह तुझे अपने एक आदेश की ख़ुशख़बरी देता है। उसका नाम मसीह मरयम का बेटा ईसा होगा, दुनिया और आख़िरत में प्रतिष्ठित होगा, अल्लाह के निकटवर्ती बन्दों में गिना जाएगा, (46) लोगों से पालने में भी बात करेगा और बड़ी उम्र को पहुँचकर भी, और वह एक नेक व्यक्ति होगा।'' (47) यह सुनकर मरयम बोली, ''पालनहार, मेरे यहाँ बच्चा कहाँ से होगा, मुझे तो किसी मर्द ने हाथ तक नहीं लगाया।'' उत्तर मिला, ''ऐसा ही होगा,[12] अल्लाह जो चाहता है पैदा करता है। वह जब किसी काम के करने का फ़ैसला करता है तो बस कहता है कि हो जा और वह हो जाता है।'' (48) (फ़रिश्तों ने फिर अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए कहा) ''और अल्लाह उसे किताब और गहरी समझ की शिक्षा देगा, तौरात और इंजील का ज्ञान देगा (49) और इसराईल की संतान की ओर अपना रसूल (सन्देश-वाहक) नियुक्त करेगा।''

10. अर्थात् तेरे बुढ़ापे और तेरी पत्नी के बाँझपन के बावजूद अल्लाह तुझे बेटा देगा।
11. अर्थात् परची डाल रहे थे।
12. अर्थात् इसके बावजूद कि किसी मर्द ने तुझे हाथ नहीं लगाया, तेरे यहाँ बच्चा पैदा होगा।

(और जब वह रसूल के रूप में इसराईलियों के पास आयात तो उसने कहा) ''मैं तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे पास निशानी लेकर आया हूँ। मैं तुम्हारे सामने मिट्टी से पक्षी के रूप की एक आकृति बनाता हूँ और उसमें फूँक मारता हूँ, वह अल्लाह के आदेश से पक्षी बन जाती है। मैं अल्लाह के हुक्म से जन्मान्ध और कोढ़ी को अच्छा करता हूँ और उसकी अनुज्ञा से मुर्दे को जीवित करता हूँ। मैं तुम्हें बताता हूँ कि तुम क्या खाते हो और क्या अपने घरों में इकट्ठा करके रखते हो। इसमें तुम्हारे लिए काफ़ी निशानी है अगर तुम ईमानवाले हो। (50) और मैं उस शिक्षा और पथ-प्रदर्शन की पुष्टि करनेवाला बनकर आया हूँ जो तौरात में से इस समय मेरे ज़माने में मौजूद है। और इसलिए आया हूँ कि तुम्हारे लिए कुछ उन चीज़ों को वैध (हलाल) कर दूँ जो तुम्हारे लिए अवैध (हराम) कर दी गई है।[13] देखो, मैं तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे पास निशानी लेकर आया हूँ, अतः अल्लाह से ड़रो और मेरा कहना मानो। (51) अल्लाह मेरा रब भी है और तुम्हारा रब भी, अतः तुम उसी की बन्दगी अपनाओ, यही सीधा मार्ग है।''

(52) जब ईसा ने महसूस किया कि इसराईल की संतान अधर्म और इनकार पर आमादा हैं तो उसने कहा, ''कौन अल्लाह के मार्ग में मेरा सहायक होता है?'' हवारियों[14] (साथियों) ने उत्तर दिया, ''हम अल्लाह के सहायक हैं,[15] हम अल्लाह पर ईमान लाए, गवाह रहो कि हम मुसलिम (अल्लाह के आज्ञाकारी) हैं। (53) मालिक, जो आदेश तुने उतारा है हमने उसे मान लिया और रसूल का अनुसरण स्वीकार किया, हमारा नाम गवाही देनेवालों में लिख ले।''

(54) फिर इसराईली (मसीह के विरूद्ध) गुप्त उपाय करने लगे। उत्तर में

13. अर्थात् तुम्हारे आज्ञानियों के अन्धविश्वास, तुम्हारे धर्मविधिज्ञों की क़ानून के सम्बन्ध में बाल की खाल निकालने की प्रवृत्ति, संन्यास को पसन्द करनेवाले तुम्हारे लोगों की हिंसाएँ और ग़ैर-मुसलिम जातियों के प्रभुत्व और सत्ताधिकार के कारण तुम्हारे यहाँ मूल ईश्वर रचित धर्म विधान या धर्मशास्त्र में जिन पाबन्दियों की अभिवृद्धि हो गई है, मैं उनको मंसूख़ (निरस्त) करूँगा और तुम्हारे लिए वही चीज़ें हलाल और वही हराम ठराऊँगा जिन्हें अल्लाह ने हलाल या हराम किया है।
14. 'हवारी' का लगभग वही अर्थ है जो हमारे यहाँ 'अनसार' (सहायक और साथी) का अर्थ है।
15. अर्थात् अल्लाह के काम में आपके सहायक हैं।

अल्लाह ने भी अपना गुप्त उपाय किया और ऐसे उपायों में अल्लाह सबसे बढ़कर है। (55) (वह अल्लाह का छिपा उपाय ही था) जब उसने कहा कि "ऐ ईसा, अब मैं तुझे वापस ले लूँगा[16] और तुझको अपनी ओर उठा लूँगा और जिन्होंने तेरा इनकार किया है उनसे (अर्थात् उनकी संगत से और उनके गन्दे वातावरण में उनके साथ रहने से) तुझे पाक कर दूँगा और तेरे अनुयायियों को क़ियामत तक उन लोगों के ऊपर रखूँगा जिन्होंने तेरा इनकार किया है। फिर तुम सबको अन्त में मेरे पास आना है, उस समय मैं उन बातों का निर्णय कर दूँगा, जिनमें तुम्हारे बीच मतभेद हुआ है। (56) जिन लोगों ने अधर्म और इनकार की नीति अपनाई है उन्हें दुनिया और आख़िरत दोनं में सख़्त सज़ा दूँगा और वे कोई सहायक न पाएँगे। (57) और जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म की नीति अपनाई है उन्हें उनका बदला पूरा-पूरा दे दिया जाएगा और (ख़ूब जान लें कि) ज़ालिमों से अल्लाह हरगिज़ प्रेम नहीं करता।"

(58) ऐ नबी, ये आयतें और तत्त्वज्ञान से भरे हुए वर्णन हैं जो हम तुम्हें सुना रहे हैं। (59) अल्लाह के नज़दीक ईसा की मिसाल आदम जैसी है कि अल्लाह ने उसे मिट्टी से पैदा किया और आदेश दिया कि हो जा और वह हो गया।[17] (60) यह मूल तथ्य है जो तुम्हारे रब की ओर से बताया जा रहा है, और तुम उन लोगों में सम्मिलित न हो जो इसमें संदेह करते हैं।

(61) यह ज्ञान आ जाने के बाद अब जो कोई इस विषय में तुमसे झगड़ा करे तो ऐ नबी, उससे कहो कि "आओ हम और तुम स्वयं भी आ जाएँ और अपने-अपने बाल-बच्चों को भी ले आएँ और अल्लाह से प्रार्थना करें कि जो झूठा हो उसपर अल्लाह की लानत हो।" (62) ये बिलकुल सत्य घटनाएँ हैं, और सत्य यह है कि अल्लाह के सिवा कोई रब नहीं है, और वह अल्लाह ही की सत्ता है जिसकी शक्ति सबसे बढ़कर है और जिसकी तत्त्वदर्शिता सारे विश्व में क्रियाशील हैं। (63) अतः यदि ये लोग (इस शर्त पर मुक़ाबले में आने से) मुँह मोड़ें तो (इनका फ़सादी होना स्पष्ट हो जाएगा) और

16. मूल ग्रन्थ में 'मुतवफ़्फ़ी-क' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'तवफ़्फ़ी' का मूल अर्थ है लेना और वुसूल करना। 'प्राण खींच लेना' इस शब्द का उपलक्षात्मक प्रयोग, है न कि वास्तविक शाब्दिक अर्थ।

17. अर्थात् अगर केवल बिना बाप के पैदा होना ही किसी को ईश्वर या ईश्वर का पुत्र बनाने के लिए पर्याप्त प्रमाण हो तो फिर ईसाइयों को आदम के बारे में इससे कहीं बढ़कर ऐसी धारणा ग्रहण करनी चाहिए थी, क्योंकि मसीह (अलै०) तो केवल बिना बाप ही के पैदा हुए थे, मगर आदम माँ और बाप दोनों के बिना पैदा हुए।

अल्लाह तो फ़सादियों के हाल से परिचित ही है।

(64) ऐ नबी, कहो, "ऐ किताबवालो, आओ एक ऐसी बात की ओर जो हमारे और तुम्हारे बीच समान है। यह कि हम अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करें, उसके साथ किसी को साझी न ठहराएँ, और हममें से कोई अल्लाह के सिवा किसी को अपना रब न बना ले।" इस दावत (आमंत्रण) को स्वीकार करने से अगर वे मुँह मोड़ें तो साफ़ कह दो कि गवाह रहो, हम तो मुसलिम (केवल अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन करनेवाले) हैं।

(65) ऐ किताबवालो, तुम इबराहीम के (दीन के) बारे में क्यों झगड़ा करते हो? तौरात और इंजील तो इबराहीम के बाद ही उतरी हैं। फिर क्या तुम इतनी बात भी नहीं समझते (66)—तुम लोग जिन चीज़ों का ज्ञान रखते हो उनमें तो अच्छी तरह वाद-विवाद कर चुके, अब उन मामलों में क्यो वाद-विवाद करने चले हो जिनका तुम्हारे पास कुछ भी ज्ञान नहीं। अल्लाह जानता है, तुम नहीं जानते। (67) इबराहीम न यहूदी था न ईसाई, बल्कि वह तो एक एकाग्रचित मुसलिम था[18] और वह हरगिज़ मुशरिकों (बहुदेववादियों) में से न था। (68) इबराहीम से सम्बन्ध रखने का सबसे अधिक अधिकार किसी को पहुँचता है तो उन लोगों को पहुँचता है तो उन लोगों को पहुँचता है जिन्होंने उसका अनुसरण किया और अब यह नबी (सन्देशवाहक) और इसके माननेवाले इस सम्बन्ध के अधिक अधिकारी है। अल्लाह केवल उन्हीं का समर्थक और सहायक है जो ईमानवाले हैं।

(69) (ऐ ईमान लानेवालो) किताबवालों में से एक गिरोह चाहता है कि किसी तरह तुम्हें सीधे मार्ग से हटा दे, हालाँकि वास्तव में वे अपने सिवा किसी को गुमराही में नहीं डाल रहे हैं किन्तु वे इसे जान नहीं पा रहे हैं। (70) ऐ किताबवालो, क्यों अल्लाह की आयतों का इनकार करते हो जबकि तुम स्वयं उनका निरीक्षण कर रहे हो?[19] (71) ऐ किताबवालो, क्यों सत्य पर असत्य का रंग चढ़ाकर संदिग्ध बनाते हो? क्यों जानते-बूझते सत्य को छुपाते हो?

(72) किताबवालों में से एक गिरोह कहता है कि इस नबी के माननेवालों पर जो कुछ उतरा है उसपर सुबह को ईमान लाओ और शाम को उससे इनकार कर दो, शायद इस उपाय से ये लोग अपने ईमान से फिर जाएँ। (73) यह भी ये लोग आपस में कहते

18. असल में 'हनीफ़' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिससे मुराद ऐसा व्यक्ति है जो हर ओर से अपना मुख फेरकर एक विशेष मार्ग पर चले। इसी अर्थ को हमने 'एकाग्रचित मुसलिम' से व्यक्त किया है।

हैं कि अपने धर्मवालों के सिवा किसी की बात न मानो। ऐ नबी, उनसे कह दो कि ''वास्तव में मार्गदर्शन तो अल्लाह ही का मार्गदर्शन है और यह उसी की देन है कि किसी को वही कुछ दे दिया जाए जो कभी तुमको दिया गया था, या यह कि दूसरों को तुम्हारे रब की सेवा में पेश करने के लिए तुम्हारे विरुद्ध ठोस प्रमाण मिल जाए।'' ऐ नबी, इनसे कहो कि ''श्रेष्ठता और बड़ाई अल्लाह के हाथ में है, जिसे चाहे प्रदान करे। वह व्यापक दृष्टिवाला है[20] और सब कुछ जानता है, (74) अपनी दयालुता के लिए जिसको चाहता है खास कर लेता है और उसकी उदारता एवं अनुकंपा बहुत बड़ी है।

(75) किताबवालों में कोई तो ऐसा है कि अगर तुम उसके भरोसे पर माल और दौलत का एक ढेर भी दे दो तो वह तुम्हारा माल तुम्हें अदा कर देगा, और किसी का हाल यह है कि अगर तुम एक दीनार के मामले में भी उसपर भरोसा करो तो वह अदा न करेगा, यह और बात है कि तुम उसके सिर पर सवार हो जाओ। उनकी इस नैतिक दशा का कारण यह है कि वे कहते हैं, ''उम्मियों (ग़ैर यहूदी लोगों) के मामले में हमारी कोई पकड़ नहीं होने की है।'' और यह बात वे निरा झूठ घड़कर अल्लाह से जोड़ते हैं, हालाँकि उन्हें मालूम है (कि अल्लाह ने ऐसी कोई बात नहीं कही है)। (76) आख़िर

19. दूसरा अनुवाद इस वाक्य का यह भी हो सकता है कि ''तुम स्वयं भी गवाही देते हो।'' दोनों रूपों में मूल अर्थ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता. वास्तव में नबी (सल्ल०) का पवित्र जीवन, और आदरणीय सहाबा (रजि.) के जीवन पर आपकी शिक्षा और प्रशिक्षण के आश्चर्यजनक प्रभाव, और वे उच्चतम विषय-वस्तुएँ जो क़ुरआन में प्रस्तुत की जा रही थीं, ये सारी चीज़ें अल्लाह की ऐसी स्पष्ट निशानियाँ थी कि जो व्यक्ति नबियों के वृत्तांत और आसमानी किताबों से परिचित हो उसके लिए इन निशानियों को देखकर नबी (सल्ल०) की पैग़म्बरी में सन्देह करना बहुत ही मुश्किल था।
20. यहाँ ''वासे'अ'' शब्द प्रयुक्त हुआ है जो साधारणतया क़ुरआन में तीन मौक़ों पर आया करता है। एक वह मौक़ा जहाँ इनसानों के किसी गिरोह के संकुचित विचार एवं दृष्टिकोण का उल्लेख होता है और उसे इस तथ्य के प्रति सावधान करने की आवश्यकता होती है कि अल्लाह तुम्हारी तरह तंगनज़र नहीं है। दूसरा वह अवसर जहाँ किसी की कंजूसी और तंगदिली और साहस की कमी पर भर्त्सना करते हुए यह बताना होता है कि अल्लाह का हाथ खुला हुआ है, वह तुम्हारी तरह कंजूस नहीं है। और तीसरा वह मौक़ा जहाँ लोग अपनी संकुचित कल्पना के कारण अल्लाह की ओर किसी प्रकार की सीमितता जोड़ते हैं और उन्हें यह बताना होता है कि अल्लाह असीम है।

क्यों उनसे पूछ न होगी? जो भी अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करेगा और बुराई से बचकर रहेगा वह अल्लाह का प्रिय बनेगा, क्योंकि परहेज़गार लोग अल्लाह को पसन्द हैं। (77) रहे वे लोग जो अल्लाह की प्रतिज्ञा और अपनी कसमों को थोड़े मूल्य पर बेच डालते हैं, तो उनके लिए परलोक में कोई हिस्सा नहीं, अल्लाह क़ियामत के दिन न उनसे बात करेगा, न उनकी ओर देखेगा और न उन्हें पाक (शुद्ध) करेगा, बल्कि उनके लिए तो बड़ी दर्दनाक सज़ा है।

(78) उनमें कुछ लोग ऐसे हैं जो किताब पढ़ते हुए इस प्रकार ज़बान का उलट-फेर करते हैं कि तुम समझो जो कुछ वे पढ रहे हैं वह किताब ही का अंश है, जबकि वह किताब का अंश नहीं होता। वे कहते हैं कि ये जो कुछ हम पढ रहे हैं यह अल्लाह की ओर से है, हालाँकि वह अल्लाह की ओर से नहीं होता, वे जान-बूझकर झूठ बात अल्लाह से जोड़ देते हैं।

(79) किसी इनसान का यह काम नहीं कि अल्लाह तो उसको किताब और निर्णय-शक्ति और पैग़म्बरी प्रदान करे और वह लोगों से कहे कि अल्लाह को छोड़कर तुम मेरे बन्दे बन जाओ। वह तो यही कहेगा कि सच्चे 'रब्बानी' (प्रभुसेवक) बनो जैसे कि उस किताब की शिक्षा का तक़ाज़ा है जिसे तुम पढ़ते और पढ़ाते हो। (80) वह तुमसे हरगिज़ यह न कहे गा कि फ़रिश्तों को या पैग़म्बरों को अपना रब बना लो। क्या यह संभव है कि एक नबी तुम्हें कुफ़्र (अधर्म और इनकार) का आदेश दे जबकि तुम मुसलिम (आज्ञाकारी) हो?

(81) याद करो, अल्लाह ने पैग़म्बरों से वचन लिया था कि ''आज मैंने तुम्हें किताब और गहरी समझ और बुद्धिमत्ता प्रदान की है, कल अगर कोई दूसरा रसूल तुम्हारे पास उसी शिक्षा की पुष्टि करता हुआ आए जो पहले से तुम्हारे पास मौजूद है, तो तुम्हें उसको मानना होगा और उसकी सहायता करनी होगी।''[21] यह कहकर अल्लाह ने पूछा, ''क्या तुम इसका इक़रार करते हो और इसपर मेरी ओर से प्रतिज्ञा की भारी ज़िम्मेदारी उठाते हो?'' उन्होंने कराह, ''हाँ, हम इक़रार करते है।'' अल्लाह ने कहा, ''अच्छा तो गवाह रहो और मैं भी तुम्हारे साथ गवाह हूँ, (82) इसके बाद जो अपनी प्रतिज्ञा से फिर जाए वही अवज्ञाकारी है।''

(83) अब क्या ये लोग अल्लाह के आज्ञापालन का तरीक़ा (अल्लाह का दीन) छोड़कर कोई और तरीक़ा चाहते हैं, हालाँकि आकाशों और धरती की सारी चीज़ें चाहे-अनचाहे अल्लाह की आज्ञाकारी (मुसलिम) है और उसी की ओर सबको पलटना है? (84) ऐ नबी, कहो कि ''हम अल्लाह को मानते हैं, उस शिक्षा को मानते हैं जो हमपर

उतारी गई है, उन शिक्षाओं को भी मानते हैं जो इबराहीम, इसमाईल, इसहाक, याक़ूब और याक़ूब की सन्तान पर उतरी थीं, और उन आदेशों को भी मानते हैं जो मूसा और ईसा और दूसरे पैग़म्बरों को उनके रब की ओर से दी गई। हम उनके बीच अन्तर नहीं करते और हम अल्लाह के आज्ञाकारी (मुसलिम) हैं।'' (85) इस आज्ञापालन (इस्लाम) के सिवा जो व्यक्ति कोई और तरीक़ा अपनाना चाहे उसका वह तरीक़ा हरगिज़ स्वीकार न किया जाएगा और परलोक में वह असफल रहेगा।

(86) कैसे हो सकता है कि अल्लाह उन लोगों को मार्ग पर चलाए जिन्होंने ईमान (आस्था) जैसी नेमत पा लेने के बाद फिर कुफ़्र (अधर्म और इनकार) की नीति अपनाई हालाँकि वे ख़ुद इस बात पर गवाही दे चुके है कि यह रसूल सत्य पर है और उनके पास स्पष्ट निशानियाँ भी आ चुकी हैं। अल्लाह ज़ालिमों को तो मार्ग नहीं दिखाया करता। (87) उनके अत्याचार का उचित बदला यही है कि उनपर अल्लाह और फ़रिश्तों और सारे इनसानों की फिटकार है, (88) इसी दशा में वे सदैव रहेंगे, न उनकी सज़ा में कमी होगी और न उन्हें मोहलत दी जाएगी। (89) हाँ, वे लोग बच जाएँगे जो इसके बाद तौबा करके अपनी नीति में सुधार लाएँ, अल्लाह क्षमाशील और दया करनेवाला है। (90) किन्तु जिन लोगों ने ईमान लाने के बाद कुफ़्र (इनकार) इख़तियार किया, फिर अपने कुफ़्र में बढ़ते[22] चले गए उनकी तौबा हरगिज़ स्वीकार न की जाएगी, ऐसे लोग तो पक्के गुमराह हैं। (91) विश्वास रखो, जिन लोगों ने कुफ़्र किया और कुफ़्र ही की दशा में मरे उनमें से कोई अगर अपने को सज़ा से बचाने के लिए धरती भरकर भी सोना बदले में दे तो उसे स्वीकार न किया जाएगा। ऐसे लोगों के लिए दर्दनाक सज़ा तैयार है और वे अपना कोई सहायक न पाएँगे।

21. अर्थात् हर पैग़म्बर से इस बात की प्रतिज्ञा कराई जाती रही है। यहाँ इतनी बात और समझ लेनी चाहिए कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से पहले हर नबी से यही प्रतिज्ञा कराई जाती रही है और इसी लिए हर नबी ने अपने समुदाय को बाद के आनेवाले नबी की सूचना दी है और उसका साथ देने की ताकीद की है। लेकिन न क़ुरआन में, न हदीस में, कहीं भी इस बात का पता नहीं चलता कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से कोई ऐसी प्रतिज्ञा कराई गई हो या आपने अपने समुदाय को किसी बाद के आनेवाले नबी की ख़बर देकर उसपर ईमान लाने का आदेश दिया हो। बल्कि क़ुरआन में स्पष्टतः नबी (सल्ल॰) को 'ख़ातमुन्नबीईन' (नबियों का समापक) कहा कया है (33:40), और बहुत-सी 'हदीसों' में नबी (सल्ल॰) ने कहा है कि आपके बाद कोई नबी आनेवाला नहीं है।

(92) तुम नेकी को पहुँच नहीं सकते जब तक कि अपनी वे चीज़ें (अल्लाह के मार्ग में) ख़र्च न करो जो तुम्हें प्रिय हैं, और जो कुछ तुम ख़र्च करोगे अल्लाह उससे बेख़बर न होगा।

(93) खाने की ये सारी चीज़ें (जो मुहम्मद के धर्मविधान में हलाल हैं) इसराईलियों के लिए भी हलाल (वैध) थी,[23] अलबत्ता कुछ चीज़ें ऐसी थीं जिन्हें तौरात के उतारे जाने से पहले इसराईल (हज़रत याक़ूब अल॰) ने स्वयं अपने लिए हराम (अवैध) कर लिया था। उनसे कहो, अगर तुम (अपनी आपत्ति में) सच्चे हो तो लाओ तौरात और प्रस्तु करो उसका कोई अंश (94)—इसके बाद भी जो लोग अपनी झूठी घड़ी हुई बातें अल्लाह से जोड़ते रहें वही वास्तव में अत्याचारी हैं। (95) कहो, अल्लाह ने जो कुछ कहा है सच कहा है, तुमको एकाग्रचित्त होकर इबराहीम के तरीक़े का अनुपालन करना चाहिए, और इबराहीम मुशरिकों (बहुदेववादियों) में से न था।

(96) निस्संदेह सबसे पहला उपासनागृह (इबादतगाह) जो इनसानों के लिए निर्मित हुआ वह वही है जो मक्का में स्थित है। उसको भलाई और बरकत दी गई थी और सारे संसारवालों के लिए मार्गदर्शन-केन्द्र बनाया गया था। (97) उसमें खुली निशानिया[24] हैं, इबराहीम का उपासना स्थल है, और उसका हाल यह है कि जिसने उसमें प्रवेश किया सुरक्षित हो गया। लोगों पर अल्लाह का यह हक़ है कि जिसको इस

22. अर्थात् केवल इनकार ही पर बस न किया बल्कि व्यवहारतः विरोध किया और बाधाएँ खड़ी की, लोगों को अल्लाह के मार्ग से रोकने की कोशिश में एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाया, सन्देह उत्पन्न किए, बदगुमानियाँ फैलाई, दिलों में वसवसे (भ्रम) डाले, और बुरे से बुरे षड्यंत्र रचे और छिपे प्रयास किए ताकि नबी का मिशन किसी प्रकार सफल न होने पाए।

23. क़ुरआन हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की शिक्षाओं पर जब यहूदियों के उलमा कोई सैद्धान्तिक आपत्ति न उठा सके (क्योंकि धर्म की आधारशिला जिन चीज़ों पर है उनमे विगत नबियों और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की शिक्षा में तनिक भी अन्तर न था) तो उन्होंने फ़िक़ही (कर्मकाण्ड सम्बन्धी) चीज़ों पर आपत्तियाँ करनी शुरू की। इस सिलसिले में उनकी पहली आपत्ति यह थी कि आपने खाने-पीने की कुछ ऐसी चीज़ों को हलाल (वैध) ठहराया है जो पिछले नबियों के समय से हराम (अवैध) चली आ रही हैं। इसी आपत्ति का यहाँ उत्तर दिया जा रहा है। इसी प्रकार उनकी एक आपत्ति यह भी थी कि 'बैतुल मक़दिस' को छोड़कर 'काबा' को किबला (उपासना-दिशा) क्यों बनाया गया। आगे की आयतें इसी आपत्ति के उत्तर में हैं।

घर तक पहुँचने की सामर्थ्य प्राप्त हो वह इसका हज करे, और जो कोई इस आदेश के अनुपालन से इनकार करे तो उसे मालूम हो जाना जाहिए कि अल्लाह संसार के सारे लोगों से बेपरवाह (निरपेक्ष) है।

(98) कहो, ऐ किताबवालो, तुम क्यों अल्लाह की बातें मानने से इनकार करते हो? जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह सब देख कहा है। (99) कहो, ऐ किताबवालो, यह तुम्हारी क्या नीति है कि जो अल्लाह की बात मानता है उसे भी तुम अल्लाह के मार्ग से रोकते हो और चाहते हो कि वह टेढ़ी राह चले, जबकि तुम स्वयं (उसके सीधे मार्ग पर होने के) गवाह हो। तुम्हारी करतूतों से अल्लाह बेख़बर नहीं है।

(100) ऐ ईमान लानेवालो, अगर तुमने इन किताबवालों में से एक गिरोह की बात मानी तो ये तुम्हें ईमान से फिर इनकार की ओर फेर ले जाएँगे। (101) तुम्हारे लिए अधर्म की ओर जाने का अब क्या अवसर बाक़ी है जबकि तुमको अल्लाह की आयतें सुनाई जा रही हैं और तुम्हारे बीच उसका रसूल मौजूद है? जो अल्लाह का दामन मज़बूती के साथ थामेगा वह अवश्य ही सीधा मार्ग पर लेगा।

(102) ऐ ईमान लानेवालो, अल्लाह से डरो जैसा कि उससे डरने का हक़ है। तुमको मौत न आए किन्तु इस हाल में कि तुम मुसलिम (आज्ञाकारी) हो। (103) सब मिलकर अल्लाह की रस्सी[25] को मज़बूती से पकड़ लो और विभेद में न पड़ो। अल्लाह के उस एहसान को याद रखो जो उसकी ओर से तुमपर हुआ है। तुम एक-दूसरे के दुश्मन थे, उसने तुम्हारे दिल जोड़ दिए और उसके अनुग्रह एवं कृपा से तुम भाई-भाई

24. अर्थात् इस घर में स्पष्ट ऐसे लक्षण पाए जाते हैं जिनसे सिद्ध होता है कि यह अल्लाह के यहाँ स्वीकृत्त हुआ है और इसे अल्लाह ने अपने घर के रूप में पसन्द कर लिया है। चटियल मैदान में बनाया गया और फिर अल्लाह ने इसके निकटवर्ती इलाक़े में रहनेवालों को रोज़ी पहुँचाने का अच्छे से अच्छा प्रबन्ध कर दिया। ढाई हज़ार वर्ष तक अज्ञान के कारण सारा अरब अत्यन्त अशान्त दशा में ग्रस्त रहा, मगर इस बिगाड़ और फ़साद से भरे हुए भूभाग में काबा और काबा के आस-पास का क्षेत्र ही ऐसा था जिसमें शान्ति बनी रही। बल्कि इसी काबा की यह बरकत थी कि साल में चार महीने के लिए पूरे देश को शान्ति और निश्चिन्तता प्राप्त हो जाती थी. फिर अभी अर्ध शताब्दी पहले ही सब देख चुके थे कि अबरहा ने जब 'काबा' को ढाने के लिए मक्का पर आक्रमण किया तो उसकी सेना किस प्रकार ईश्वरीय प्रकोप का भाजन बनी। इस घटना से उस समय अरब का बच्चा-बच्चा परिचित था और इसके आँखों देखे गवाह इन आयतों के उतरने के समय मौजूद थे।

बन गए। तुम आग से भरे हुए एक गढ़े के किनारे खड़े थे, अल्लाह ने तुमको उससे बचा लिया। इस प्रकार अल्लाह अपनी निशानियाँ तुमहारे सामने स्पष्ट करता है शायद कि इन लक्षणों से तुम्हें अपने कल्याण का सीधा मार्ग दिखाई दे जाए।

(104) तुममें कुछ लोग तो ऐसे अवश्य ही रहने चाहिएँ जो नेकी की ओर बुलाएँ, भलाई का आदेश दें, और बुराइयों से रोकते रहें। जो लोग ये काम करेंगे वही सफल होंगे। (105) कही तुम उन लोगों की तरह न हो जाना जो गिरोहों में बँट गए और खुले-खुले स्पष्ट मार्गदर्शन पाने के बाद फिर विभेदों में पड़ गए। जिन्होंने यह नीति अपनाई वे उस दिन सख़्त सज़ा पाएँगे (106) जबकि कुछ लोग उज्ज्वल चेहरेवाले होंगे और कुछ लोगों का मुँह काला होगा, जिनका मुँह काला होगा, (उनसे कहा जाएगा कि) ईमान की नेमत पाने के बाद भी तुमने अधर्म की नीति अपनाई? अच्छा तो अब इस अकृतज्ञता के बदले में यातना (अज़ाब) का मज़ा चखो। (107) रहे वे लोग जिनके चेहरे उज्ज्वल होंगे तो उनको अल्लाह की दयालुता की छाया में जहग मिलेगी और हमेशा वे इसी दशा में रहेंगे। (108) ये अल्लाह के कथन हैं जो हम तुम्हें ठीक-ठीक सुना रहे हैं, क्योंकि अल्लाह संसारवालों पर ज़ुल्म करने का कोई इरादा नहीं रखता। (109) धरती और आकाश की सारी चीज़ों का मालिक अल्लाह है और सारे मामले अल्लाह ही के सामने पेश होते हैं।

(110) अब संसार में वह उत्तम गिरोह तुम हो जिसे इनसानों के मार्गदर्शन और सुधार के लिए मैदान में लाया गया है। तुम नेकी का आदेश देते हो, बुराई से रोकते हो और अल्लाह पर ईमान रखते हो। ये किताबवाले[26] ईमान लाते तो इन्हीं के हक़ में अच्छा था। यद्यपि इनमें कुछ लोग ईमानवाले भी पाए जाते हैं किन्तु इनके अधिकतर व्यक्ति अवज्ञाकारी हैं। (111) ये तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते, ज़्यादा से ज़्यादा बस कुछ सता सकते हैं। अगर ये तुमसे लड़ें तो मुक़ाबले में पीठ दिखाएँगे; फिर ऐसे विवश होंगे कि कहीं से इनको मदद न मिलेगी। (112) ये जहाँ भी पाए गए इनपर अपमान की मार ही पड़ी, कहीं अल्लाह के ज़िम्मे या इनसानों के ज़िम्मे में शरण मिल गई तो यह और बात है।[27] ये अल्लाह के प्रकोप में घिर चुके हैं, इनपर मुहताजी और पराजय थोप

25. अल्लाह की रस्सी से मुराद उसका धर्म है, और इसको रस्सी की संज्ञा इसलिए दी गई है कि यही वह सूत्र है जो एक ओर ईमानवालों का सम्बन्ध अल्लाह से जोड़ता है और दूसरी ओर तमाम ईमानवालों को परस्पर मिलाकर एक जमाअत बनाता है।

26. यहाँ किताबवालों से मुराद यहूदी हैं।

दी गई है, और यह सब कुछ इस कारण से हुआ है कि ये अल्लाह की आयतों का इनकार करते रहे और इन्होंने पैग़म्बरों की अकारण हत्या की। यह इनकी अवज्ञाओं और ज़्यादतियों का अंजाम है।

(113) किन्तु सभी किताबवाले समान नहीं हैं। उनमें कुछ लोग ऐसे भीहै जो सीधे रास्ते पर क़ायम हैं, रातों को अल्लाह की आयतें पढ़ते हैं और उसके आगे सजदा करते हैं, (114) अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रखते हैं, नेकी का आदेश देते हैं, बुराइयों से रोकते हैं और भलाई के कामों में सरगर्म रहते हैं। ये नेक लोग हैं, (115) और जो नेकी भी ये करेंगे उसकी उपेक्षा (नाक़द्री) न की जाएगी, अल्लाह परहेज़गारों से भली-भाँति परिचित है। (116) रहे वे लोग जिन्होंने इनकार की नीति अपनाई तो अल्लाह के मुक़ाबले में उनको न उनका धन कुछ काम देगा न सन्तान, वे तो आग में जानेवाले लोग हैं और आग ही में हमेशा रहेंगे। (117) जो कुछ वे अपने इस सांसारिक जीवन में ख़र्च करते रहे हैं उसकी मिसाल उस हवा जैसी है जिसमें पाला हो और वह उन लोगों की खेती पर चले जिन्होंने अपने ऊपर स्वयं अत्याचार किया है और उसे तबाह करके रख दे। अल्लाह ने उनपर अत्याचार नहीं किया, वास्तव में ये स्वयं अपने ऊपर अत्याचार कर रहे हैं।

(118) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अपने दल के लोगों के सिवा दूसरों को अपना भेदी न बनाओ। वे तुम्हारी ख़राबी के किसी अवसर से लाभ उठाने से नहीं चूकते. तुम्हें जिस चीज़ से हानि पहुँचे वही उनको प्रिय है। उनके मन का द्वेष उनके मुँह से निकला पड़ता है और जो कुछ वे अपने सीनों में छिपाए हुए हैं वह इससे बढ़कर है। हमने तुम्हें साफ़-साफ़ हिदायतें दे दी हैं, अगर तुम बुद्धिमान हो (तो उनसे सम्बन्ध रखने में सावधानी बरतोगे)। (119) तुम उनसे प्रेम करते हो किन्तु वे तुमसे प्रेम नहीं करते

27. अर्थात् संसार में अगर कहीं उनको थोड़ी-बहुत अम्न और चैन प्राप्त हुआ भी है तो वह उनके अपने बलबूते पर स्थापित किया हुआ अम्न-चैन नहीं है, बल्कि दूसरों की तरफ़दारी और कृपा का परिणाम है। कहीं किसी मुसलिम हुकूमत ने उनको अल्लाह के नाम पर शरण दे दी, और कहीं किसी ग़ैर-मुसलिम हुकूमत ने अपने तौर पर उन्हें अपने संरक्षण में ले लिया। इसी तरह प्रायः उन्हें संसार में कहीं ज़ोर पकड़ने का मौक़ा भी मिल गया है, लेकिन वह भी अपने बाहुबल से नहीं, बल्कि केवल किसी पड़ोसी के बल पर। यही हैसियत उस यहूदी रियासत की है जो इसराईल के नाम से केवळ अमेरिका, ब्रिटेन और रूस की सहायता से स्थापित हुई।

हालाँकि तुम समस्त आसमानी किताबों को मानते हो। जब वे तुमसे मिलते हैं तो कहते हैं कि हमने भी (तुम्हारे रसूल और तुम्हारी किताब को) मान लिया है, किन्तु जब अलग होते हैं तो तुम्हारे विरूद्ध अनके क्रोध एवं प्रकोप का यह हाल होता है कि अपनी उँगलियाँ चबाने लगते हैं—उनसे कह दो कि अपने क्रोध में आप जल मरो, अल्लाह दिलों के छिपे हुए भेद तक जानता हैं (120)—तुम्हारा भला होता है तो उनको बुरा मालूम होता है, और तुमपर कोई मुसीबत आती है तो ये प्रसन्न होते हैं। किन्तु उनका कोई उपाय तुम्हारे विरूद्ध सफल नहीं हो सकता शर्त यह है कि तुम धैर्य से काम लो और अल्लाह से डरकर काम करते रहो। जो कुछ ये कर रहे हैं अल्लाह उसपर हावी (व्याप्त) है।

(121) (ऐ पैग़म्बर, मुसलमानों के सामने उस अवसर की चर्चा करो) जब तुम सुबह सवेरे अपने घर से निकले थे और (उहुद के मैदान में) मुसलमानों को जंग के लिए जहग-जगह नियुक्त कर रहे थे। अल्लाह सारी बातें सुनता है और वह बहुत ही ख़बर रखनेवाला है।

(122) याद करो जब तुममें से दो गिरोह कायरता दिखाने पर आमादा हो गए थे, हालाँकि अल्लाह उनकी मदद पर मौजूद था और ईमानवालों को अल्लाह ही पर भरोसा रखना चाहिए। (123) आख़िर इससे पहले बद्र की लड़ाई में अल्लाह तुम्हारी मदद कर चुका था हालाँकि उस समय तुम बहुत कमज़ोर थे। अतः तुमको चाहिए कि अल्लाह की अकृतज्ञता (नाशुक्री) से बचो, उम्मीद है कि अब तुम कृतज्ञ (शुक्रगुज़ार) बनोगे।

(124) ऐ नबी, याद करो जब तुम ईमानवालों से कह रहे थे, ''क्या तुम्हारे लिए यह बात काफ़ी नहीं कि अल्लाह तीन हज़ार फ़रिश्ते उतारकर तुम्हारी सहायता करे?'' (125)—निस्संदेह, अगर तुम धैर्य से काम लो और अल्लाह से डरते हुए काम करो तो जिस क्षण शत्रु तुम्हारे ऊपर चढ़कर आएँगे उसी क्षण तुम्हारा रब (तीन हज़ार नहीं) पाँच हज़ार निशानवाले फ़रिश्तों से तुम्हारी सहायता करेगा। (126) यह बात अल्लाह ने तुम्हें इसलिए बता दी है कि तुम प्रसन्न हो जाओ और तुम्हारे दिल सन्तुष्ट हो जाएँ। विजय और सहायता जो कुछ भी है अल्लाह की ओर से है जो बड़ी शक्तिवाला और सूझ-बूझवाला है। (127) (और यह सहायता वह तुम्हारी इसलिए करेगा) ताकि कुफ़्र (इनकार) की राह पर चलनेवालों की एक भुजा काट दे, या उनको ऐसी अपमानजनक पराजय दे कि वे असफलता के साथ परास्त हो जाएँ।

(128) (ऐ पैग़म्बर) निर्णय के अधिकारों में तुम्हारा कोई हिस्सा नहीं, अल्लाह को अधिकार है चाहे उन्हें माफ़ करे, चाहे सज़ा दे क्योंकि वे अत्याचारी है। (129)

धरती और आकाशों में जो कुछ है उसका मालिक अल्लाह है, जिको चाहे माफ़ कर दे और जिसको चाहे यातना दे, वह क्षमाशील और दयावान्[28] है।

(130) ऐ ईमान लानेवालो, यह बढ़ता और चढ़ता ब्याज खाना छोड़ दो और अल्लाह से डरो, आशा है कि सफल होगे। (131) उस आग से बचो जो अधर्मियों के लिए जुटाई गई है, (132) अल्लाह और रसूल का आदेश मानो, आशा है कि तुमपर दया की जाएगी। (133) दौड़कर चलो उस मार्ग पर जो तुम्हारे रब की बख़्शिश (क्षमादान) और उस जन्नत (स्वर्ग) की ओर जाता है जिसका विस्तार धरती और आकाशों जैसा है, और वह ईश्वर से उन डरनेवाले लोगों के लिए तैयार की गई है। (134) जो प्रत्येक दशा में अपने माल ख़र्च करते हैं चाहे बुरे हाल में हों या अच्छे हाल में, जो ग़ुस्से को पी जाते हैं और दूसरों के क़ुसूर को माफ़ कर देते हैं—ऐसे नेक लोग अल्लाह को बहुत प्रिय है (135)—और जिनका हाल यह है कि यदि कभी कोई अश्लील कार्य उनसे हो जाता है या किसी गुनाह में पड़कर वे अपने ऊपर ज़ुल्म कर बैठते हैं तो तत्काल अल्लाह उन्हें याद आ जाता है और उससे वे अपने क़ुसूरों की क्षमा चाहते हैं—क्योंकि अल्लाह के सिवा और कौन है जो गुनाह माफ़ कर कसता हो—और वे कभी जनाते-बूझते अपने किए पर आग्रह नहीं करते। (136) ऐसे लोगों का बदला उनके रब के पास यह है कि वह उनको माफ़ कर देगा और ऐसे बाग़ों में उन्हें दाखिल करेगा जिनके नीचे नहरें बहती होंगी और वहाँ वे हमेशा रहेंगे। कैसा अच्छा बदला है अच्छे कर्म करनेवालों के लिए। (137) तुमसे पहले बहुत-से युग बीत चुके हैं, धरती में चल-फिर कर देख लो कि उन लोगों का क्या अंजाम हुआ जिन्होंने (अल्लाह के आदशों को) झुठलाया। (138) यह लोगों के लिए एक स्पष्ट और खुली चेतावनी है और जो अल्लाह से डरते हों उनके लिए मार्गदर्शन और उपदेश।

(139) हताश न हो, दुखी न हो, तुम ही छाकर रहोगे अगर तुम ईमानवाले हो। (140) इस समय अगर तुम्हें चोट लगी है तो इससे पहले ऐसी ही चोट तुमहारे विरोधी वर्ग को भी लग चुकी है।[29] ये तो समय के उतार-चढ़ाव है जिन्हें हम लोगों के बीच गर्दिश देते रहते हैं। तुमपर यह समय इसलिए लाया गया कि अल्लाह देखना चाहता था कि तुममें सच्चे ईमानवाले कौन हैं, और उन लोगों को छाँट लेना चाहता था जो वास्तव में (सच्चाई के) गवाह हों[30]—क्योंकि अत्याचारी अल्लाह को प्रिय नहीं (141)—और

28. उहुद की लड़ाई में जब नबी (सल्ल०) घायल हुए तो आपके मुख से अधर्मियों के लिए बद्दुआ के शब्द निकल गए और आपने कहा कि "वह क़ौम कैसे सफल हो सकती है जो अपने नबी को ज़ख़्मी करे।" ये आयतें इसी के बारे में उतरी हैं।

वह इस परीक्षा के द्वारा ईमानवालों को अलग छाँटकर इनकार करनेवालों का दमन कर देना चाहता था। (142) क्या तुमने यह समझ रखा है कि यूँ ही जन्नत में चले जाओगे हालाँकि अभी अल्लाह ने यह तो देखा ही नहीं कि तुममें कौन वे लोग हैं जो उसके मार्ग में जाने लड़ानेवाले और उसके लिए धैर्य से काम लेनेवाले हैं। (143) तुम तो मौत की तमन्नाएँ कर रहे थे! मगर यह उस समय की बात थी जब मौत सामने न आई थी, लो अब वह तुम्हारे सामने आ गई और तुमने उसे आँखों से देख लिया।

(144) मुहम्मद इसके सिवा कुछ नहीं कि बस एक रसूल हैं, उनसे पहले और रसूल भी गुज़र चुके हैं, फिर क्या अगर उनकी मृत्यु हो जाए या उनकी हत्या कर दी जाए तो तुम लोग उलटे पाँव फिर जाओगे? याद रखो! जो उलटा फिरेगा वह अल्लाह का कुछ नुक़सान न करेगा, अलबत्ता जो अल्लाह के शुक्रगुज़ार बन्दे बनकर रहेंगे उन्हें वह इसकी मज़दूरी देगा।

(145) कोई प्राणी अल्लाह की अनुमति के बिना नहीं मर सकता। मौत का समय तो लिखा हुआ है, जो व्यक्ति दुनिया में बदला पाने के इरादे से कार्य करेगा उसको हम दुनिया ही में से देंगे और जो आख़िरत के बदले के इरादे से कार्य करेगा वह आख़िरत का बदला पाएगा और शुक्र करनेवालों को हम उनका बदला अवश्य प्रदान करेंगे। (146) इससे पहले कितने ही नबी ऐसे हुए है जिनके साथ मिलकर बहुत-से ख़ुदापरस्तों ने युद्ध किया। अल्लाह के मार्ग में जो मुसीबतें उनपर पड़ीं उनसे वे हताश नहीं हुए, उन्होंने कमज़ोरी नहीं दिखाई, वे (असत्य के आगे) नतमस्तक नहीं हुए। ऐसे ही धैर्यवानों को अल्लाह पसन्द करता है। (147) उनकी प्रार्थना बस यह थी कि "ऐ हमारे रब, हमारी ग़लतियों और कोताहियों को क्षमा कर, हमारे कार्य में तेरी सीमाओं से

29. संकेत है बद्र की लड़ाई की ओर। और कहने का मतलब यह है कि जब उस चोट को खाकर अधर्मियों ने साहस न छोड़ा तो उहुद की लड़ाई मेंयह चोट खाकर तुम क्यों हताश हो?

30. मूल शब्द है 'व यत्तख़ि-ज़ मिनकुम शुहदा-अ' इसका एक अर्थ तो यह है कि तुममें से कुछ शहीद लेना चाहता था, अर्थात् कुछ लोगों को शहादत (वीरगति) का श्रेय प्रदान करना चाहता था। और दूसरा अर्थ यह है कि ईमानवालों और मुनाफ़िकों के उस मिले-जुले गिरोह में से, जिस रूप में तुम इस समय हो, उन लोगों को अलग छाँट लेना चाहता था जो वास्तव में 'शुहदा-अ अलन्नास' (लोगों पर गवाह) हैं, अर्थात् उस प्रतिष्ठित पद के योग्य हैं जिसपर हमने मुसलिम समुदाय को आसीन होने की प्रतिष्ठा प्रदान की है।

जो ज़्यादती हो गई हो उसे क्षमा कर दे, हमारे क़दम जमा दे और अधर्मियों के मुक़ाबले मे हमारी सहायता कर।'' (148) आख़िरकार अल्लाहने उनको इस दुनिया का बदला भी दिया और इससे उत्तम आख़िरत का बदला भी प्रदान किया। अल्लाह को ऐसे ही सत्कर्मी पसन्द हैं।

(149) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अगर तुम उन लोगों के इशारों पर चलोगे जिन्होंने कुफ़्र (इनकार) का मार्ग अपनाया है तो वे तुमको उलटा फेर ले जाएँगे और तुम असफल हो जाओगे। (150) (उनकी बातें असत्य हैं) वास्तविकता यह हैं कि अल्लाह तुम्हारा समर्थक और सहायक है और वह सबसे अच्छा सहायक है। (151) जल्द ही वह समय आनेवाला है जब हम सत्य का इनकार करनेवालों के दिलों में धाक बिठा देंगे, इसलिए कि उन्होंने अल्लाह के साथ उनको ख़ुदाई में साझी ठहराया है जिनके साझी होने पर अल्लाह ने कोई सनद (प्रमाण) नहीं उतारी। उनका अन्तिम ठिकाना जहन्नम है और बहुत ही बुरी है वह ठहरने की जगह जो उन अत्याचारियों को मिलेगी।

(152) अल्लाह ने (समर्थन और सहायता का) जो वादा तुमसे किया था वह तो उसने पूरा कर दिया। आरंभ में उसकी अनुमति से तुम ही उनको क़त्ल कर रहे थे। किन्तु जब तुमने कमज़ोरी दिखाई और अपने काम में परस्पर विभेद किया, और जैसे ही वह चीज़ अल्लाह ने तुम्हें दिखाई जिसके मोह में तुम गिरफ़्तार थे (अर्थात् युद्ध-क्षेत्र में प्राप्त शत्रु का माल) तुम अपने नायक के आदेश का उल्लंघन कर बैठे—इसलिए कि तुममें कुछ लोग दुनिया के इच्छुक थे और कुछ आख़िरत की इच्छा रखते थे—तब अल्लाह ने तुम्हें अधर्मियों के मुक़ाबले में परास्त कर दिया ताकि तुम्हारी परीक्षा करे। और सत्य यह है कि अल्लाह ने फिर भी तुम्हें क्षमा ही कर दिया क्योंकि ईमानवालों पर अल्लाह की बड़ी कृपा-दृष्टि है।

(153) याद करो जब तुम भागे चले जा रहे थे, किसी की ओर पलटकर देखने तक का होश तुम्हें न था, और रसूल तुम्हारे पीछे तुमको पुकार रहा था।[31] उस समय तुम्हारी इस नीति का बदला अल्लाह ने तुम्हें यह दिया कि तुमको रंज पर रंज दिए ताकि आगे के लिए तुम्हें यह शिक्षा मिले कि जो कुछ तुम्हारे हाथ से जाए या जो मुसीबत तुमपर उतरे उसपर शोकाकुल न हो। अल्लाह तुम्हारे सब कर्मों को जानता है।

(154) इस ग़म के बाद फिर अल्लाह ने तुममें से कुछ लोगों पर ऐसी इतमीनान की-सी हालत पैदा कर दी कि वे ऊँघने लगे।[32] मगर एक दूसरा गिरोह, जिसके लिए सारा महत्त्व बस अपने हित का था, अल्लाह के बारे में तरह-तरहे के अज्ञानपूर्ण गुमान करने लगा जो बिलकुल सत्य के विपरीत थे। ये लोग अब कहते हैं कि ''इस काम के

चलाने में हमारा भी कोई हिस्सा है?'' इनसे कहो, ''(किसी का कोई हिस्सा नहीं) इस काम के सारे अधिकार अल्लाह के हाथ में हैं।'' वास्तव में ये लोग अपने दिलों में जो बात छिपाए हुए हैं उसे तुमपर ज़ाहिर नहीं करते। उनका असल मक़सद यह है कि ''अगर (नेतृत्व के) अधिकार में हमारा कुछ हिस्सा होता तो यहाँ हम मारे न जाते।'' इनसे कह दो कि ''अगर तुम अपने घरों में भी होते तो जिन लोगों की मौत लिखी हुई थी वे ख़ुद अपने मारे जाने की जगहों की ओर निकल आते।'' और यह मामला जो पेश आया, यह तो इसलिए था कि जो कुछ तुम्हारे सीनों में छिपा हुआ है अल्लाह उसे जाँच ले और जो खोट तुम्हारे दिलों में है उसे छाँट दे, अल्लाह दिलों का हाल भली-भाँति जानता है।

(155) तुममें से जो लोग मुक़ाबले के दिन पीठ फेर गए थे उनके इस फिसलने का कारण यह था कि उनकी कुछ कमज़ोरियों के कारण शैतान ने उनके क़दम डगमगा दिए थे। अल्लाह ने उन्हें क्षमा कर दिया, अल्लाह बड़ा क्षमा करनेवाला और सहनशील है।

(156) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अधर्मियों की-सी बातें न करो जिनके सगे-सम्बन्धी अगर कभी सफ़र पर जाते हैं या युद्ध में सम्मिलित होते हैं (और वहाँ किसी घटना में घिर जाते हैं) तो वे कहते हैं कि यदि वे हमारे पास होते तो न मारे जाते और न क़त्ल होते। अल्लाह इस प्रकार की बातों को उनके दिलों में पछतावा और सन्ताप का कारण बना देता है, अन्यथा वास्तव में मारने और जिलानेवाला तो अल्लाह ही है और तुम्हारे सभी कर्मों को वही देखता है। (157) अगर तुम अल्लाह के मार्ग में मारे जाओ

---

31. उहुद की लड़ाई में जब मुसलमानों पर अचानक दो तरफ़ से एक साथ हमला हुआ और उनकी पंक्तियाँ अस्त-व्यस्त हो गई तो कुछ लोग मदीना की ओर भाग निकले और कुछ उहुद पर्वत पर चढ़ गए, मगर नबी (सल्ल०) एक इंच अपनी जगह से न हटे। दुश्मनों की चारों ओर भीड़ थी, दस-बारह आदमियों की मुट्ठी भर जमाअत पास रह गई थी, मगर अल्लाह के रसूल इस नाज़ुक मौक़े पर भी पहाड़ की तरह अपनी जगह जमे हुए थे और भागनेवालों को पुकार रहे थे ''इलै-य इबादल्लाह, इलै-य इबादल्लाह'', ''अल्लाह के बन्दों मेरी तरफ़ आओ, अल्लाह के बन्दो मेरी तरफ़ आओ।''

32. यह एक विचित्र अनुभव था जो उस समय इस्लामी सेना के कुछ लगों को हुआ। हज़रत अबू तलहा (रज़ि०) जो इस लड़ाई में शरीक थे ख़ुद बयान करते हैं कि इस हालत में हमपर ऊँघ ऐसी छाई जा रही थी कि तलवारें हाथ से छूटी पड़ती थीं।

या मर जाओ तो अल्लाह की जो दयालुता और क्षमादान तुम्हारे हिस्से में आएगा वह उन सारी चीज़ों से उत्तम है जिन्हें ये लोग इकट्ठा कर रहे हैं। (158) और चाहे तुम मरो या मारे जाओ प्रत्येक दशा में तुम सबको सिमटकरक जाना अल्लाह ही की ओर है।

(159) (ऐ पैग़म्बर), यह अल्लाह की बड़ी दयालुता है कि तुम इन लोगों के लिए बहुत नर्म स्वभाव के हो। अन्यथा यदि कहीं तुम क्रूर स्वभाव और कठोर हृदय के होते तो ये सब तुम्हारे आस-पास से छँट जाते. इनके क़ुसूर माफ़ कर दो, इनके लिए मग़फ़िरत की दुआ करो, और धर्म के कार्य में इनको भी परामर्श में सम्मिलित रखो, फिर जब तुम्हारा संकल्प किसी सम्मति पर सुदृढ़ हो जाए तो अल्लाह पर भरोसा करो, अल्लाह को वे लोग प्रिय है जो उसी के भरोसे पर काम करते हैं। (160) अल्लाह तुम्हारी सहायता पर हो, तो कोई शक्ति तुमपर प्रभावी होनेवाली नहीं, और वह तुम्हें छोड़ दे, तो इसके बाद कौन है जो तुम्हारी मदद कर सकता हो? अतः जो सच्चे ईमानवाले हैं उनको अल्लाह ही पर भरोसा रखना चाहिए।

(161) किसी नबी का यह काम नहीं हो सकता कि वह ख़ियानत कर जाए—और जो कोई ख़ियानत करे तो वह अपनी ख़ियानत सहित क़ियामत के दिन हाज़िर हो जाएगा, फिर प्रत्येक जीव को उसकी कमाई का पूरा-पूरा बदला मिल जाएगा, और किसी पर कुछ ज़ुल्म न होगा (162)—भला यह कैसे हो सकता है कि जो व्यक्ति हमेशा अललाह की इच्छा पर चलनेवाला हो वह उस व्यक्ति के जैसा काम करे जो अल्लाह के प्रकोप में घिर गया हो और जिसका अन्तिम ठिकाना जहन्नम हो जो बहुत ही बुरा ठिकाना है? (163) अल्लाह के निकट दोनों प्रकार के आदमियों में बहुत दर्जों का अन्तर है और अल्लाह सबके कर्मों पर नज़र रखता है। (164) वास्तव में ईमानवालों पर तो अल्लाह ने यह बहुत बड़ा उपकार किया है कि उनके बीच ख़ुद उन्हीं में से एक ऐसा पैग़म्बर उठाया जो उसकी आयतें उन्हें सुनाता है, उनके जीवन को सँवारता है और उनको किताब और गहरी समझ की शिक्षा देता है, हालाँकि इससे पहले यही लोग खुली गुमराहियों में पड़े हुए थे।

(165) और यह तुम्हारा क्या हाल है कि जब तुमपर मुसीबत आ पड़ी तो तुम कहने लगे यह कहाँ से आई? हालाँकि (बद्र की लड़ाई में) इससे दो गुनी मुसीबत तुम्हारे हाथों (विरोधी गिरोह पर) पड़ चुकी है। ऐ नबी, इनसे कहो, यह मुसीबत तुम्हारी अपनी लाई हुई है, अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (166,167) जो हानि लड़ाई के दिन तुम्हें पहुँची वह अल्लाह की अनुमति से थी और इसलिए थी कि अल्लाह देख ले कि तुममें से ईमानवाले कौन हैं और मुनाफ़िक़ (कपटचारी) कौन। वे मुनाफ़िक़ कि

जब उनसे कहा गया, ''आओ अल्लाह के रास्ते में लड़ो या कम से कम (अपने नगर की) रक्षा ही करो'', तो कहने लगे, ''अगर हम जानते कि आज लड़ाई होगी तो हम अवश्य तुम्हारे साथ चलते।'' यह बात जब वे कह रहे थे उस समय वे ईमान की अपेक्षा अधर्म के अधिक निकट थे। वे अपने मुँह से वे बातें कहते हैं जो उनके दिलों में नहीं होती, और जो कुछ वे दिलों में छिपाते हैं अल्लाह उसे ख़ूब जानता है। (168) ये वही लोग हैं जो ख़ुद तो बैठे रहे और उनके जो भाई-बन्धु लड़ने गए और मारे गए उनके बारे में उन्होंने कह दिया कि अगर वे हमारी बात मान लेते तो न मारे जाते। उनसे कहो कि अगर तुम अपने इस कथन में सच्चे हो तो स्वयं तुम्हारी मौत जब आए उसे टालकर दिखा देना।

(169) जो लोकग अल्लाह के मार्ग में मारे गए हैं उन्हें मुर्दा न समझो, वे तो वास्तव में जीवित है, अपने रब के पास रोज़ी पा रहे हैं, (170) जो कुछ अल्लाह ने अपनी उदार-कृपा से उन्हें दिया है उसपर प्रसन्न और आनन्दित हैं, और सन्तुष्ट है कि जो ईमानवाले उनके पीछे संसार में रह गए हैं और अभी वहाँ नहीं पहुँचे हैं उनके लिए भी किसी डर और रंज का अवसर नहीं है। (171) वे अल्लाह के इनाम और उसकी उदार-कृपा पर आनन्दित और प्रसन्न है और उनको मालूम हो चुका है कि अल्लाह ईमानवालों का बदला नष्ट नहीं करता। (172) (ऐसे ईमानवालों के बदले को) जिन्होंने ज़ख़्म खाने के बाद भी अल्लाह और रसूल की पुकार को स्वीकार किया[33]—उनमें जो लोग नेक और परहेज़गार हैं उनके लिए बड़ा बदला है (173)—जिनसे लोगों ने कहा कि ''तुम्हारे विरुद्ध बड़ी सेनाएँ एकत्र हुई हैं, उनसे डरो'', तो यह सुनकर उनका ईमान

33. उहुद की लड़ाई से पलटकर जब मुशरिक (बहुदेववादी) कई मंज़िल दूर चले गए तो उन्हें होश आया और उन्होंने आपस में कहा कि यह हमने क्या किया कि मुहम्मद की ताक़त को तोड़ देने का जो बहुमूल्य अवसर मिला था उसे खोकर चले आए। अतएव एक जगह ठहरकर उन्होंने आपस में परामर्श किया कि मदीना पर तुरन्त दूसरा आक्रमण कर दिया जाए। लेकिन फिर साहस न हो सका और मक्का वापस चले गए। इधर नबी (सल्ल॰) को भी यह आशंका थी कि ये लोग कहीं फिर न पलट आएँ। इसलिए उहुद की लड़ाई के दूसरे ही दिन आपने मुसलमानों को एकत्र करके कहा कि अधर्मियों का पीछा करने के लिए चलना चाहिए। यह यद्यपि बहुत ही नाज़ुक मौक़ा था, मगर फिर भी जो सच्चे ईमानवाले थे वे प्राण निछावर करने के लिए तैयार हो गए और नबी (सल्ल॰) के साथ हमराउल असद तक गए जो मदीना में 8 मील की दूरी पर स्थित है। इस आयत का संकेत इन्हीं बलिहारी लोगों की ओर है।

और बढ़ गया और उन्होंने उत्तर दिया कि "हमारे लिए अललाह काफ़ी है और वही सबसे अच्छा कार्य-साधक है।" (174) आख़िरकार वे अल्लाह की नेमत और उदार कृपा के साथ पलट आए, उनको किसी प्रकार की तकलीफ़ भी न पहुँची और अल्लाह की इच्छा पर चलने का श्रेय भी उन्हें प्राप्त हो गया, अल्लाह बड़ा अनुग्रह करनेवाला है।[34] (175) अब तुम्हें मालूम हो गया कि वह वास्तव में शैतान था जो अपने दोस्तों से अकारण डरा रहा था। अतः आगे तुम इनसानों से न डरना, मुझसे डरना अगर तुम वास्तव में ईमानवाले हो।

(176) (ऐ पैग़म्बर), जो लोग आज कुफ़्र (इनकार और अधर्म) के मार्ग में बड़ी दौड़-धूप कर रहे हैं उनकी सरगर्मियों से तुम दुखी न हो, ये अल्लाह का कुछ भी न बिगाड़ सकेंगे। अल्लाह का इरादा यह है कि उनके लिए परलोक में कोई हिस्सा न रखे, और आख़िरकार उनको सख़्त सज़ा मिलनेवाली है। (177) जो लोग ईमान को छोड़कर कुफ़्र के ख़रीदार बने हैं वे निश्चय ही अल्लाह की कोई हानि नहीं कर रहे हैं, उनके लिए दुखद यातना तैयार है। (178) यह ढील जो हम उन्हें दिए जाते हैं इसको ये अधर्मी अपने लिए अच्छा न समझें, हम तो इन्हें इसलिए ढील दे रहे हैं कि ये अच्छी तरह गुनहों का बोझ समेट लें, फिर उनके लिए अत्यन्त अपमानजनक सज़ा है।

(179) अल्लाह ईमानवालों को इस दशा में हरगिज़ न रहने देगा जिसमें तुम लोग इस समय पाए जाते हो। वह पाक लोगों को नापाक लोगों से अलग करके रहेगा। किन्तु अल्लाह का तरीक़ा यह नहीं है कि तुम लोगों पर परोक्ष (ग़ैब) को प्रकट कर दे।[35]

34. उहुद से पलटते हु ए अबू सूफ़ियान मुसलमानों को चुनौती दे गया था कि अगले वर्ष बद्र में हमारा-तुम्हारा फिर मुक़ाबला होगा। मगर जब वादे का समय आया तो उसकी हिम्मत ने जवाब दे दिया। अतः उसने पहलू बचाने के लिए गुप्त रूप से एक आदमी को मदीना भेजा जिसने मदीना पहुँचकर मुसलमानों में ये ख़बरें मशहूर करनी शुरू की कि इस साल कुरैश ने बड़ी ज़बरदस्त तैयारी की है और ऐसी भारी सेना एकत्र कर रहे हैं जिसका मुक़ाबला सारे अरब में कोई न कर सकेगा। मुसलमान इस प्रोपगण्डे से कुछ प्रभावित हो गए थे मगर जब अल्लाह के रसूल ने भरे जनसमूह में एलान कर दिया कि अगर कोई न जाएगा तो मैं अकेला जाऊँगा तो 1500 फ़िदाकार (प्राणोत्सर्जक) आपके साथ चलने के लिए खड़े हो गए और आप उन्हीं को लेकर बद्र में तशरीफ़ ले गए। अबू सूफ़ियान मुक़ाबले पर न आया और मुसलमानों ने आठ दिन तक बद्र में ठहरकर तिजारती कारोबार से ख़ूब आर्थिक लाभ उठाया।

(परोक्ष की बातें बताने के लिए तो) अल्लाह ने अपने रसूलों में से जिसे चाहता है चुन लेता है। अतः (परोक्ष की बातों के बारे में) अल्लाह और उसके रसूलों पर ईमान रखो। यदि तुम ईमान और परहेज़गारी की नीति अपनाओगे तो तुमको बड़ा प्रतिदान मिलेगा।

(180) जिन लोगों को अल्लाह ने अपनी उदार अनुकंपा से दिया है और फिर वे कंजूसी से काम लेते हैं वे यह न समझें कि यह कंजूसी उनके लिए अच्छी है। नहीं, यह उनके लिए बहुत ही बुरी है। जो कुछ वे अपनी कंजूसी से इकट्ठा कर रहे हैं वही क़ियामत के दिन उनके गले का तौक़ बन जाएगा। धरती और आकाशों की मीरास अल्लाह ही के लिए है और तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उसे जानता है।

(181) अल्लाह ने उन लोगों की बात सुनी जो कहते है कि अल्लाह निर्धन है और हम धनी[36] हैं। उनकी ये बातें भी हम लिख लेंगे, और इससे पहले जो वे पैग़म्बरों की अकारण हत्या करते रहे हैं वह भी उनकी कर्मपत्री में अंकित है। (जब फ़ैसले का समय आएगा उस समय) हम उनसे कहेंगे कि लो, अब नरक-यातना का मज़ा चखो, (182) यह तुम्हारे अपने हाथों की कमाई है, अल्लाह अपने बन्दों के लिए ज़ालिम नहीं है।

(183) जो लोग कहते हैं, "अल्लाह ने हमको आदेश दे रखा है कि हम किसी को रसूल स्वीकार न करें जब तक वह हमारे सामने ऐसी क़ुरबानी न करे जिसे (परोक्ष से आकर) आग खा ले", उनसे कहो, "तुम्हारे पास मुझसे पहले बहुत-से रसूल आ चुके हैं जो बहुत-सी स्पष्ट निशानियाँ लाए थे और वह निशानी भी लाए थे जिसकी बात तुम करते हो, फिर यदि (ईमान लाने के लिए यह शर्त रखने में) तुम सच्चे हो तो उन रसूलों की तुमने हत्या क्यों की?" (184) अब ऐ नबी, अगर ये लोग तुम्हें झुठलाते हैं तो बहुत-से रसूल तुमसे पहले झुठलाए जा चुके हैं, जो खुली-खुली निशानियाँ और सहीफ़े और प्रकाशदायक किताबें लाए थे। (185) आख़िरकार प्रत्येक व्यक्ति को मरना है और तुम सब अपना पूरा-पूरा बदला क़ियामत के दिन पानेवाले हो। कामयाब वास्तव में वह है जो वहाँ जहन्नम की आग से बच जाए और जन्नत में पहुँचा दिए जाए। रहा यह संसार, तो यह केवल एक बाह्य धोखे की चीज़ है।

35. अर्थात् तुम्हें यह बता दे कि तुममें से कौन ईमानवाला है और कौन कपटाचारी।
36. यह यहूदियों का कथन था। क़ुरआन मजीद में जब यह आयत आई कि "कौन है जो अल्लाह को अच्छा क़र्ज़ दे" तो इसकी हँसी उड़ाते हुए यहूदियों ने कहना शुरू किया कि जी हाँ, अल्लाह दरिद्र हो गया है। अब वह बन्दों से क़र्ज़ माँग रहा है।

(186) मुसलमानों, तुम धन और प्राण दोनों की परीक्षा में अवश्य ही डाले जाओगे, और तुम क़िताबवालों और मुशरिकों (बहुदेववादियों) से बहुत-सी कष्टदायक बातें सुनोगे। अगर इन सब स्थितियों में तुम धैर्य और धर्मपरायणता की नीति पर जमे रहो तो यह बड़े साहस का काम है। (187) इन किताबवालों को वह वचन भी याद दिलाओ जो अल्लाहने उनसे लिया था कि तुम्हें किताब की शिक्षाओं को लोगों में फैलाना होगा, उन्हें गुप्त रखना नहीं होगा। किन्तु उन्होंने किताब को पीठ-पीछे डाल दिया और थोड़े मूल्य पर उसे बेच डाला। कितना बुरा कारोबार है जो ये कर रहे हैं। (188) तुम उन लोगों को यातना से सुरक्षित न समझो जो अपनी करतूतों पर ख़ुश हैं और चाहते हैं कि ऐसे कामों की सराहना उन्हें प्राप्त हो जो वास्तव में उन्होंने नहीं किए हैं। निश्चय ही उनके लिए दर्दनाक सज़ा तैयार है। (189) धरती और आकाश का मालिक अल्लाह है और उसकी कुदरत सबपर हावी है।

(190) धरती और आकाशों की रचना में और रात और दिन के बारी-बारी से आने में उन बुद्धिमानों के लिए बहुत निशानियाँ है (191) जो उठते-बैठते और लेटते, हर हाल में अल्लाह को याद करते हैं और आकाश और धरती की संरचना में सोच-विचार करते हैं। (वे बेइख़्तियार बोल उठते हैं) ''हमारे रब, ये सब कुछ तूने व्यर्थ और बेमक़सद नहीं बनाया है, तू पाक है इससे कि निरर्थक कार्य करे। अतः ऐ रब हमें नरक की यातना से बचा ले, (192) तूने जिसे नरक में डाला उसे वास्तव में बड़ी अपमान-दशा और दुर्गति में डाल दिया, और फिर ऐसे ज़ालिमों का कोई सहायक न होगा। (193) हमारे हमारे मालिक, हमने एक पुकारनेवाले को सुना जो ईमान (आस्था) की ओर बुलाता था और कहता था कि अपने रब को मानो। हमने उसका आमंत्रण स्वीकार कर लिया, अतः ऐ हमारे मालिक, जो अपराध हमसे हुए हैं उनको क्षमा कर दे, जो बुराइयाँ हममें हैं उन्हें दूर कर दे और हमारा अन्त नेक लोगों के साथ कर। (194) हमारे रब, जो वादे तूने अपने रसूलों के माध्यम से किए हैं उनको हमारे साथ पूरा कर और क़ियामत के दिन हमें रुसवाई में न डाल, बेशक तू अपने वादे के ख़िलाफ़ करनेवाला नहीं है।''

(195) जवाब में उनके रब ने कहा, ''मैं तुममें से किसी का कर्म अकारथ करनेवाला नहीं हूँ। चाहे मर्द हो या औरत, तुम सब एक-दूसरे के सहजाति हो। अतः जिन लोगों ने मेरे लिए अपने वतन छोड़े और मेरे रास्ते में अपने घरों से निकाले गए और सताए गए और मेरे लिए लड़े और मारे गए उनके सब गुनाह मैं माफ़ कर दूँगा और उन्हें ऐसे बाग़ों में प्रवेश करूँगा जिनके नीचे नहरें बहती होंगी। यह उनका बदला है

अल्लाह के यहाँ, और अच्छा बदला अल्लाह ही के पास है।''

(196) ऐ नबी, संसार के देशों में अल्लाह के नाफ़रमान लोगों की चलत-फिरत तुम्हें किसी धोखे में न डाले। (197) यह केवल थोड़े दिनों के जीवन का थोड़ा-सा आनन्द है, फिर ये सब जहन्नम में जाएँगे जो बहुत ही बुरा ठिकाना है। (198) इसके विपरीत जो लोग अपने रब से डरते हुए ज़िन्दगी गुज़ारते हैं उनके लिए ऐसे बाग़ हैं जिनके नीचे नहरें बहती हैं, उन बाग़ों में वे हमेशा रहेंगे, अल्लाह की ओर से आतिथ्य-सामग्री है उनके लिए, और जो कुछ अल्लाह के पास है नेक लोगों के लिए वही सबसे अच्छा है। (199) किताबवालों में भी कुछ लोग ऐसे है जो अल्लाह को मानते हैं, इस किताब पर ईमान लाते हैं जो तुम्हारी ओर भेजी गई है और उस किताब पर भी ईमान लाते हैं जो इससे पहले ख़ुद उनकी ओर भेजी गई थी, अल्लाह के आगे झुके हुए हैं, और अल्लाह की आयतों को थोड़े-से मूल्य पर बेच नहीं देते। उनका बदला उनके रब के पास है और अल्लाह हिसाब चुकाने में देर नहीं लगाता।

(200) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, धैर्य से काम लो, असत्यवादियों के मुक़ाबले में जमे रहो, सत्य की सेवा के लिए कमर कसे रहो और अल्लाह से डरते रहो, उम्मीद है कि कामयाबी पाओगे।



4. अन-निसा

नाम

इस सूरा का नाम निसा (औरतें) इस लिए रखा गया है कि इस सूरा में कई जगह यह शब्द प्रयुक्त हुआ है। तथा इस सूरा में विशेषकर औरतों से सम्बन्धित आदेश हैं।

अवतरणकाल और विषय अंश

यह सूरा कई एक अभिभाषणों पर आधारित है जो संभवतः सन् 3 हिजरी के अंतिम समयों से लेकर सन् 4 हिजरी के अंत के समयों या सन् 5 हिजरी के आरंभिक काल तक विभिन्न समय में सम्मिलित हुए हैं। यद्यपि यह निश्चित करना मुश्किल है कि किस जगह से किस जगह तक की आयतें एक अभिभाषण के सिलसिले में अवतरित हुई थी और उनका ठीक अवतरण काल क्या है, लेकिन कुछ आदेश और घटनाओं की ओर कुछ संकेत ऐसे हैं जिनकी अवतरण तिथियाँ हमें उल्लेखों (रिवायतों) से मामूल हो जाती हैं। इसलिए उनकी मदद से हम इन विभिन्न अभिभाषणों की एक सरसरी हदबंदी कर सकते हैं जिनसे इन आदेशों और इशारों का सम्बन्ध है।

उदाहरणार्थ हम जानेत है कि विरासत की तक़सीम (वितरण) और अनाथों के अधिकारों से सम्बन्धित आदेश उहुद की लड़ाई के बाद अवतरित हुए थे, जब मुसलमानों के सत्तर आदमी शहीद हो गए। इस आधार पर हम अनुमान कर सकते हैं कि आरंभ से लेकर आयत 28 तक उसी समय अवतरित हुई होंगी। उल्लिखित कथनों में भय की नमाज़ (युद्ध छिड़ जाने की दशा में नमाज़ पढ़ने) का उल्लेख हमें ज़ातुररिक़ा की लड़ाई में मिलता है जो सन् 4 हिजरी में हुई। इसलिए अनुमान किया जा सकता है कि इसी के लगभग समय में उक्त अभिभाषण अवतरित हुआ होगा जिसमें इस नमाज़ का तरीक़ा बयान किया गया है (आयत–101-104)। मदीना से बनू नज़ीर का बहिष्कार रबीउल अव्वल, सन् 4 हिजरी में हुआ। इसलिए अधिक संभावना इसकी है कि वह अभिभाषण इससे पहले किसी विकट के समय में ही अवतरित हुआ होगा जिसमें यहूदियों को अल्लाह की ओर से अंतिम चेतावनी दी गईहै कि ''ईमान ले आओ इससे पहले कि हम चेहरे बिगाड़कर पीछे फेर दें।''

पानी न मिलने की वजह से 'तयम्मुम' का आदेश बनी मुस्तलिक़ की लड़ाई के अवसर पर दिया गया था जो सन् 5 हिजरी में हुई। इसलिए वह अभिभाषण जिसमें तयम्मुम का उल्लेख है उसे इसी से मिले हुए समय का समझना चाहिए (आयत–43)।

पृष्ठभूमि और वार्ताएँ

इस तर समग्रतः सूरा का अवतरण काल जान लेने के पश्चात हमें उस समय के इतिहास पर एक दृष्टि डाल लेनी चाहिए ताकि सूरा की विषय-वस्तु के समझने में उससे सहायता ली जा सके।

नबी (सल्ल॰) के सामने उस समय जो काम था उसे तीन बड़े-बड़े विभागों में विभक्त किया जा सकता है। एक, उस समय नव संगठित इस्लामी समाज का विकास जिसकी नींव हिजरत के साथ ही पवित्र नगर मदीना और उसके आस-पास में पड़ चुकी थी। दूसरे, उस संघर्ष का मुक़ाबला जो अरब बहुदेववादी, यहूदी क़बीलों और सुधार के विरोधी कपटाचारियों की शक्तियों के साथ पूरे ज़ोर के साथ चल रहा था। तीसरे, इस्लाम के आमंत्रण को इन अवरोधक शक्तियों की परवाह न करते हुए विस्तार देना। सर्वोच्च अल्लाह की ओर से इस अवसर पर जितने अभिभाषण अवतरित हुए वे सब इन्हीं तीन विभागों से सम्बद्ध हैं।

इस्लामी समाज के गठन के लिए सूरा 2 (बक़रा) में जो आदेश दिए गए थे, अब इस समाज को उससे अधिक की अपेक्षा थी, इसलिए इस सूरा निसा के इन अभिभाषणों में अधिक विस्तार के साथ बताया गया कि मुसलमान अपने सामाजिक जीवन को इस्लाम के तरीक़े पर किस प्रकार दुरुस्त करें। किताबवालों की नैतिक और धार्मिक नीति पर समीक्षा करके मुसलमानों को सावधान किया गया कि अपने पूर्व के इन समुदायों के पद चिह्नों पर चलने से बचें। कपटाचारियों ने जिस प्रकार की नीति अपनाई थी उसकी आलोचना करके सच्ची ईमानदारी की अपेक्षाओं को स्पष्ट किया गया।

बनाव और सुधार की विरोधी शक्तियों से संघर्ष चल रहा था। उहुद के युद्ध के पश्चात् उसकी सूरत और ज़्यादा नाज़ुक हो गई। इन परिस्थितियों में अल्लाह ने एक तरफ़ आदेशपूर्ण अभिभाषणों के द्वारा मुसलमानों को मुक़ाबले के लिए उभारा और दूसरी ओर युद्ध की परिस्थितियों में काम करने के लिए विभिन्न आवश्यक आदेश दिए। मुसलमानों को बार-बार संग्रामों और अभियानों में जाना पड़ता था और अधिकतर ऐसे रास्तों से गुज़रना होता था जहाँ पानी प्राप्त नहीं किया जा सकता था। अनुज्ञा दी गई कि पानी न मिले तो वुज़ू और नहाने दोनों के बदले तयम्मुम कर लिया जाए। इसके अलावा ऐसी परिस्थितियों में नमाज़ को संक्षिप्त करने की भी अनुमति दे दी गई और जहाँ ख़तरा सिर पर हो वहाँ भय की दशा में नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा बताया गया। अरब के विभिन्न भूभागों में जो मुसलमान काफ़िर क़बीलों के मध्य बिखरे हुए थे उनके विषय के विस्तृत

आदेश दिए गए (यहूदियों की घोर बैरयुक्त और षड्यंत्रकारी नीति और वचन भंगों पर) बड़ी पकड़ की गई और उन्हें स्पष्ट शब्दों में अंतिम चेतावनी दी गई।

कपटाचारियों के विभिन्न गिरोह विभिन्न नीति अपनाए हुए थे। उन सबको अलग-अलग वर्गों में विभक्त करके हर वर्ग के कपटाचारियों के सम्बन्ध में यह बता दिया गया कि उनके साथ यह बर्ताव होना चाहिए।

वचनबद्ध निष्पक्ष क़बीलों के साथ जो नीति मुसलमानों की होनी चाहिए उसे भी व्यक्त किया गया— सबसे अधिक महत्वपूर्ण यह बात थी कि मुसलमानों का अपना चरित्र निष्कलंक हो क्योंकि इस संघर्ष में यह मुट्ठीभर जमाअत अगर जीत सकती थी तो अपने उच्च चरित्र के बल पर ही जीत सकती थी। इसलिए मुसलमानों को उच्चतम नैतिकताओं की शिक्षा दी गई और जो कमज़ोरी भी उनकी जमाअत में ज़ाहिर हुई उसपर सख़्ती से पकड़ की गई। (इस्लाम के सुधार आह्वान का) स्पष्टीकरण करने के अतिरिक्त यहूदियों, ईसाइयों और बहुदेववादियों, तीनों गिरोहों की ग़लत धार्मिक धारणाओं और ग़लत चरित्र और कर्मों पर इस सूरा में अलोचना करके उनको सत्यधर्म की ओर बुलाया गया।





4. सूरा अन-निसा

(मदीना में उतरी–आयतें 176)

अल्लाह के नाम से जो निहायत मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) लोगो, अपने रब से डरो जिसने तुमको एक जान से पैदा किया और उसी जान से उसका जोड़ा बनाया और उन दोनों से बहुत मर्द और औरत दुनिया में फैला दिए। उस अल्लाह से डरो जिसका वास्ता देकर तुम एक-दूसरे से अपने हक़ माँगते हो, और नाते-रिश्तों के सम्बन्धों को बिगाड़ने से बचो। यक़ीन जानो कि अल्लाह तुमपर निगरानी कर रहा है।

(2) यतीमों के माल उनको वापस दो, अच्छे माल को बुरे माल से न बदल लो, और उनके माल अपने माल के साथ मिलाकर न खा जाओ, यह बहुत बड़ा गुनाह है।

(3) और अगर तुमको अंदेशा हो कि यतीमों के साथ इनसाफ़ न कर सकोगे तो जो औरतें तुम्हें पसन्द आएँ उनमें से दो-दो, तीन-तीन, चार-चार से निकाह कर लो।[1] लेकिन अगर तुम्हें अन्देशा हो कि उनके साथ इनसाफ़ न कर सकोगे तो फिर एक ही पत्नी रखो[2] या उन औरतों को अपने दाम्पत्य-जीवन में लाओ जो तुम्हारे क़ब्ज़े में आई हैं,[3] बेइनसाफ़ी से बचने के लिए यह ज़्यादा अच्छा है।

(4) और औरतों के महर ख़ुशी से (अनिवार्य जानते हुए) अदा करो। हाँ, अगर वे ख़ुद अपनी ख़ुशी से महर का कोई हिस्सा तुम्हें माफ़ कर दें तो उसे तुम मज़े से खा सकते हो।

(5) और अपने वे माल जिन्हें अल्लाह ने तुम्हारे लिए ज़िन्दगी क़ायम रखने का साधन बनाया है, नादान लोगों को न सौंपो, अलबत्ता उन्हें खाने और पहनने के लिए दो और उन्हें नेक सुझाव दो।

1. ध्यान रहे कि यह आयत एक से ज़्यादा बीवियाँ रखने की इजाज़त देने के लिए नहीं आई थी क्योंकि इसके नाज़िल होने से पहले ही यह अमल जाइज़ था और ख़ुद अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की एक से ज़्यादा बीवियाँ उस समय मौजूद थी। असल में यह आयत इसलिए उतरी थी कि लड़ाइयों में शहीद होनेवालों के जो बच्चे यतीम रह गए थे उनकी समस्या हल करने के लिए कहा गया कि अगर उन यतीमों के हक़ तुम वैसे अदा नहीं कर सकते तो उन औरतों से निकाह कर लो जिनके साथ यतीम बच्चे हैं।

(6) और यतीमों की आज़माइश करते रहो यहाँ तक कि वे निकाह की उम्र को पहुँच जाए।[4] फिर अगर तुम उनमें योग्यता पाओ तो उनके माल उनको सौंप दो। ऐसा कभी न करना कि न्याय की सीमा का उल्लंघन करके इस भय से उनके माल जल्दी-जल्दी खा जाओ कि वे बड़े होकर अपने हक़ की मांग करेंगे। यतीम का जो सरपरस्त मालदार हो वह परहेज़गारी से काम ले और जो ग़रीब हो वह सामान्य रीति के अनुसार खाए।[5] फिर जब उनके माल उन्हें सौंपने लगो तो लोगों को इसपर गवाह बना लो, और हिसाब लेने के लिए अल्लाह काफ़ी है।

2. इस बात पर मुसलिम समुदाय के धर्मशास्त्री (फ़क़ीह) एकमत हैं कि इस आयत के ज़रिए से बहुविवाह को सीमित कर दिया गया है और एक समय में चार से ज़्यादा बीवियाँ रखने को वर्जित कर दिया गया है। इसके साथ यह आयत बहुविवाह को इनसाफ़ की शर्त के साथ जाइज़ करती है। जो आदमी इनसाफ़ की शर्त पूरी नहीं करता मगर एक से ज़्यादा बीवियाँ रखने की इजाज़त से फ़ायदा उठाता है वह अल्लाह के साथ धोखेबाज़ी करता है। इस्लामी हुकूमत की अदालतों को अधिकार प्राप्त है कि जिस बीवी या जिन बीवियों के साथ वह इनसाफ़ न कर रहा हो उनको इनसाफ़ दिलाएँ। कुछ लोग पश्चिमी देशवालों की धारणाओं से प्रभावित होकर यह साबित करने की कोशिश करते हैं कि क़ुरआन का असल मक़सद बहुविवाह की प्रथा को (जो पश्चिमी दृष्टिकोण से वास्तव में बुरी प्रथा है) मिटा देना था। लेकिन इस तरह की बातें वास्तव में ज़ेहनी ग़ुलामी का नतीजा हैं। बहुविवाह का अपने में एक बुराई होना अमान्य है, क्योंकि कुछ परिस्थितियों में यह चीज़ एक सांस्कृतिक और नैतिक ज़रूरत बन जाती है। क़ुरआन ने स्पष्ट शब्दों में इसको जाइज़ ठहराया है और सांकेतिक रूप में भी इसकी निन्दा में कोई ऐसा शब्द इस्तेमाल नहीं किया है जिससे मालूम हो कि वास्तव में वह इसे रोकना चाहता था।
3. इससे मुराद लौंडियाँ (दासियाँ) हैं, अर्थात् वे औरतें जो युद्ध में बन्दी होकर आई हों और युद्ध-बन्दियों का तबादला और अन्तरण न होने की स्थिति में हुकूमत की ओर से लोगों में बाँट दी गई हो।
4. अर्थात् जब वे प्रौढ़ावस्था के निकट पहुँच रहे हों तो देखते रहो कि उनका बौद्धिक विकास कैसा है और उनमें अपने मामलों को ख़ुद अपनी ज़िम्मेदारी में चलाने की योग्यता कहाँ तक पैदा हो रही है।
5. अर्थात् अपना पारिश्रमिक बस उतना ले कि हर निष्पक्ष भला व्यक्ति उसे उचित माने। इसके साथ यह कि जो कुछ भी पारिश्रमिक वह ले चोरी-छिपे न ले बल्कि खुल्लमखुल्ला निश्चित करके ले और उसका हिसाब रखे।

(7) मर्दों के लिए उस माल में हिस्सा है जो माँ-बाप और क़रीबी नातेदारों ने छोड़ा हो, और औरतों के लिए भी उस माल में हिस्सा है जो माँ-बाप और क़रीबी नातेदारों ने छोड़ा हो, चाहे थोड़ा हो या बहुत,[6] और यह हिस्सा (अल्लाह की ओर से) निश्चित है।

(8) और जब बाँटने के अवसर पर कुटुम्ब के लोग और यतीम और मुहताज आएँ तो उस माल में से उनको भी कुछ दो और उनके साथ भले मानुसों की-सी बात करो।

(9) लोगों को इस बात का ख़याल करके डरना चाहिए कि अगर वे ख़ुद अपने पीछे बेबस बच्चे छोड़ते तो मरते समय उन्हें अपने बच्चों के लिए कैसी कुछ आशंकाएँ घेरतीं। इसलिए चाहिए कि वे अल्लाह से डरे और ठीक बात करें। (10) जो लोग ज़ुल्म के साथ यतीमों के माल खाते हैं वास्तव में वे अपने पेट आग से भरते हैं और वे ज़रूर जहन्नम की भड़कती हुई आग में झोंके जाएँगे।

(11) तुम्हारी सन्तान के बारे में अल्लाह तुम्हें आदेश देता है कि : मर्द का हिस्सा दो औरतों के बराबर है।[7] अगर (मरनेवाले की उत्तराधिकारी) दो से अधिक लड़कियाँ हो तो उन्हें तरके (छोड़ी हुई सम्पत्ति) का दो तिहाई दिया जाए।[8] और अगर एक ही

6. इस आयत में स्पष्ट रूप से पाँच क़ानूनी आदेश दिए गए हैं : एक यह कि मीरास में सिर्फ़ मर्दों ही का हिस्सा नहीं हैं बल्कि औरतें भी उसकी हक़दार हैं। दूसरे यह कि मीरास हर हाल में तक़सीम होनी चाहिए चाहे वह कितनी ही कम हो। तीसरे इस आयत में मरनेवाले के छोड़े हुए पूरे माल को तक़सीम के लायक़ ठहराया गया है और इसमें चल और अचल सम्पत्ति, कृषि योग्य या कृषि रहित और पैत्रिक और अपैत्रिक का कोई भेद और अन्तर नहीं किया गया है। चौथे इससे मालूम होता है कि जिसकी मीरास का बँटवारा है उसके जीवन में कोई मीरास का हक़ पैदा नहीं होता बल्कि मीरास का हक़ उस समय पैदा होता है जब मरनेवाला कोई माल छोड़कर मरा हो। पाँचवे इससे यह नियम भी निकलता है कि निकटतम नातेदार की मौजूदगी में बहुत दूर का नातेदार मीरास न पाएगा। आगे इस नियम का स्पष्टीकरण आयत 11 के अन्त और आयत 33 में किया गया है।
7. चूँकि 'शरीअत' (धर्म-विधान) ने पारिवारिक जीवन में मर्द पर ज़्यादा आर्थिक ज़िम्मेदारियों का बोझ डाला है और औरत को बहुत-सी आर्थिक ज़िम्मेदारियों के बोझ से मुक्त रखा है, अतः इनसाफ़ का तक़ाज़ा यही था कि मीरास में औरत का हिस्सा मर्द के मुक़ाबले कम रखा जाता।

लड़की वारिस हो तो आधा तरका उसका है। अगर मरनेवाले के औलाद हो तो उसके माँ-बाप में से हर एक को तरके का छठा हिस्सा मिलना चाहिए।[9] और अगर वह निस्सन्तान हो और माँ-बाप ही उसके वारिस हो तो माँ को तीसरा हिस्सा दिया जाए।[10] और अगर मरनवाले के भाई-भहन भी हो तो माँ छठे हिस्से की हक़दार[11] होगी। (ये सब हिस्से उस समय निकाले जाएँगे) जबकि वसीयत जो मरनेवाले ने की हो, पूरी कर दी जाए और क़र्ज़ जो उसपर हो, चुका दिया जाए।[12] तुम नहीं जानते कि तुम्हारे माँ-बाप और तुम्हारी सन्तान में से कौन लाभ की दृष्टि से तुमसे ज़्यादा क़रीब है। ये हिस्से अल्लाह ने निश्चित कर दिए हैं, और अल्लाह यक़ीनन ही सब हक़ीक़तों से वाक़िफ़ और सब मसलहतों का जाननेवाला है।

8. यही आदेश दो लड़कियों का भी है। मतलब यह है कि अगर किसी आदमी का कोई लड़का न हो बल्कि सिर्फ़ लड़कियाँ ही लड़कियाँ हों तो चाहे लड़कियाँ दो हो या दो से ज़्यादा, हर हाल में उसके पूरे तरके का 2/3 भाग उन लड़कियों में तक़सीम होगा, और बाक़ी 1/3 दूसरे वारिसों में। लेकिन अगर मरनेवाले का सिर्फ़ एक लड़का हो तो इसपर सब सहमत है कि दूसरे वारिसों के न होने पर वह सारे माल का वारिस होगा, और अगर दूसरे वारिस मौजूद हों तो उनका हिस्सा देने के बाद, बाक़ी सब माल उसे मिलेगा।
9. अर्थात् मरनेवाले के औलाद होने की स्थिति में हर हालत में उसके माँ-बाप में से हर एक 1/6 का हक़दार होगा चाहे मरनेवाले की वारिस सिर्फ़ बेटियाँ हों, या सिर्फ़ बेटे हों, या बेटे और बेटियाँ हों, या एक बेटा या एक बेटी। रहे बाक़ी 2/3 तो उनमें दूसरे वारिस शरीक होंगे।
10. माँ-बाप के सिवा कोई वारिस न हो तो बाक़ी 2/3 बाप को मिलेगा। वरना 2/3 में बाप और दूसरे वारिस शरीक होंगे।
11. भाई-बहन होने पर माँ का हिस्सा 1/3 के बदले 1/6 कर दिया गया है। इस प्रकार माँ के हिस्से में से जो 1/6 लिया गया है वह बाप के हिस्से में डाला जाएगा क्योंकि इस स्थिति में बाप के दायित्व बढ़ जाते हैं। यह स्पष्ट रहे कि मरनेवाले के माँ-बाप अगर ज़िन्दा हो तो उसके बहन-भाइयों को हिस्सा नहीं पहुँचता।
12. वसीयत का उल्लेख यद्यपि क़र्ज़ से पहले किया गया है लेकिन मुसलिम समुदाय इसमें एकमत है कि क़र्ज का नम्बर वसीयत से पहले है। अर्थात् अगर मरनेवाले के ज़िम्मे क़र्ज़ हो तो सबसे पहले मरनेवाले के तरके में से वह चुकाया जाएगा, फिर वसीयत पूरी की जाएगी, और इसके बाद विरासत तक़सीम होगी।

(12) और तुम्हारी बीवियों ने जो कुछ छोड़ा हो उसका आधा हिस्सा तुम्हें मिलेगा अगर वे निस्सन्तान हों, वरना सन्तान होने की स्थिती में तरके का एक चौथाई हिस्सा तुम्हारा है जबकि वसीयत जो उन्होंने की हो पूरी कर दी जाए, और क़र्ज़ जो उन्होंने छोड़ा हो चुका दिया जाए। और वे तुम्हारे तरके में से चौथाई की हक़दार होंगी अगर तुम निस्सन्तान हो, वरना तुम्हारे सन्तानवाले होने की स्थिति में उनका हिस्सा आठवाँ होगा,[13] इसके बाद कि जो वसीयत तुमने की हो वह पूरी कर दी जाए और जो क़र्ज़ तुमने छोड़ा हो वह चुका दिया जाए।

और अगर वह मर्द या औरत (जिसका तरका बाँटना है) निस्सन्तान भी हो और उसके माँ-बाप भी ज़िन्दा न हों, मगर उसका एक भाई या एक बहन मौजूद हो तो भाई और बहन हर एक को छठा हिस्सा मिलेगा, और भाई-बहन एक से ज़्यादा हों तो सारे तरके के एक तिहाई में वे सब शरीक[14] होंगे, जबकि वसीयत जो की गई हो पूरी कर दी जाए, और क़र्ज़ जो मरनेवाले ने छोड़ा हो अदा कर दिया जाए, शर्त यह है कि वह नुक़सान पहुँचानेवाला न हो।[15] यह आदेश है अल्लाह की ओर से और अल्लाह जानता-देखता और सहनशील है।

(13) ये अल्लाह की निश्चित की हुई सीमाएँ हैं। जो अल्लाह और उसके रसूल का कहा मानेगा उसे अल्लाह ऐके बाग़ों में दाख़िल करेगा जिनके नीचे नहरें बहती होंगी और उन बाग़ों में वह हमेशा रहेगा और यही बड़ी सफलता है। (14) और जो अल्लाह

13. अर्थात् चाहे एक बीवी हो या कई बीवियाँ, औलाद होने की हालत में वह 1/8 की और औलाद, न होने की हालत में 1/4 की हिस्सेदार होंगी और यह 1/4 या 1/8 सब बीवियों में बराबरी के साथ बाँट दिया जाएगा।
14. इस आयत के सम्बन्ध में टीकाकार एकमत है कि इसमें भाई और बहनों से मुराद ऐसे भाई और बहन हैं जो मरनेवाले के साथ सिर्फ़ माँ की ओर से नाता रखते हों और बाप उनका दूसरा हो। रहे सगे भाई-बहन, और वे सौतेले भाई-बहन जो बाप की ओर से मरनेवाले के साथ नाता रखते हों, तो उनके बारे में आदेश इसी सूरा के अन्त में दिया गया है।
15. वसीयत में नुक़सान पहुँचाने का अर्थ यह है कि इस तरह से वसीयत की जाय जिससे हक़दार नातेदारों के हक़ मारे जाते हों। और क़र्ज़ में नुक़सान पहुँचाने का मतलब यह है कि सिर्फ़ हक़दारों को उनके हक़ से वंचित करने के लिए आदमी यूँ ही अपने ऊपर ऐसे क़र्ज़ स्वीकार करे जो उसने वास्तव में न लिए हों, या और कोई ऐसी चाल चले जिसका मक़सद यह हो कि हक़दार मीरास से वंचित हो जाएँ।

और उसके रसूल की नाफ़रमानी करेगा और उसकी निर्धारित सीमाओं का उल्लंघन कर जाएगा उसे अल्लाह आग में डालेगा जिसमें वह हमेशा रहेगा और उसके लिए अपमानजनक सज़ा है।

(15) तुम्हारी औरतों में जो बदकारी (व्यभिचार) कर बैठें उनपर अपने में से चार आदमियों की गवाही लो, और अगर चार आदमी गवाही दे दें तो उनको घरों में बन्द रखो यहाँ तक कि उन्हें मौत आ जाए या अल्लाह उनके लिए कोई रास्ता निकाल दे। (16) और तुममें से जो यह काम कर बेठें उन दोनों को तकलीफ़ दो, फिर अगर वे तौबा करें और अपने को सुधार ले तो उन्हें छोड़ दो कि अल्लाह बहुत तौबा क़बूल करनेवाला औह रहम करनेवाला है।[16]

(17) हाँ, यह जान लो कि अल्लाह पर तौबा क़बूल करने का हक़ उन्हीं लोगों के लिए है जो नादानी की वजह से कोई बुरा काम कर बैठते हैं और उसके बाद जल्दी ही तौबा कर लेते हैं। ऐसे लोगों की ओर अल्लाह अपनी मेहरबानी की निगाह से फिर ध्यान देता है और अल्लाह सारी बातों की ख़बर रखनेवाला और गहरी समझ रखनेवाला पूरा जानकार है। (18) मगर तौबा उन लगों के लिए नहीं है जो बुरे काम किए चले जाते हैं यहाँ तक कि जब उनमें से किसी की मौत का समय आ जाता है उस समय यह कहता है कि अब मैने तौबा की। और इसी तरह तौबा उनके लिए भी नहीं है जो मरते दम तक अधर्मी रहें। ऐस लोगों के लिए तो हमने दर्दनाक सज़ा तैयार कर रखी है।

(19) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम्हारे लिए यह हलाल नहीं है कि ज़बरदस्ती औरतों के वारिस बन बैठो[17] और न यह हलाल है कि उन्हें तंग करके उस महर का कुछ हिस्सा उड़ा लेने की कोशिश करो जो तुम उन्हें दे चुके हो। हाँ, अगर वे किसी खुली बदचलनी का काम कर बैठे (तो ज़रूर तुमहें तंग करने का अधिकार है[18])। उनके साथ

16. यह ज़िना (व्यभिचार) के सम्बन्ध में आरंभिक आदेश था। आगे चलकर सूरा नूर की वह आयत उतरी जिसमें मर्द और औरत दोनों के लिए एक ही आदेश दिया गया कि उन्हें सौ-सौ कोड़े लगाए जाएँ।
17. इससे मुराद यह है कि पति के मरने के बाद उसके ख़ानदान के लोग उसकी विधवा को मरनेवाले की मीरास समझकर उसके वली वारिस न बन बैठें। औरत का पति जब मर गया तो वह आज़ाद है। 'इद्दत' गुज़ारकर जहाँ चाहे जाए और जिससे चाहे निकाह कर ले।
18. माल उड़ाने के लिए नहीं बल्कि बदचलनी की सज़ा देने के लिए।

भले ढंग से रहो-सहो। अगर वे तुम्हें पसन्द न हो तो हो सकता है कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द न हो मगर अल्लाह ने उसी में बहुत कुछ भलाई रख दी हो। (20) और अगर तुम एक बीवी की जगह दूसरी बीवी ले आने की ठान ही लो तो चाहे तुमने उसे ढेर-सा माल ही क्यों न दिया हो, उसमें से कुछ वापस न लेना। क्या तुम उसे झूठा कलंक लगाकर और खुला ज़ुल्म करके वापस लोगे? (21) और आख़िर तुम उसे किस तरह लोगे जबकि तुम एक दूसरे से आनन्द ले चुके हो और वे तुमसे दृढ़ प्रतिज्ञा करा चुकी है?

(22) और जिन औरतों से तुम्हारे बाप निकाह कर चुके हो उनसे हरगिज़ निकाह न करो, मगर जो पहले हो चुका सो हो चुका।[19] वास्तव में यह एक अश्लील कर्म है, अप्रिय है और बुरा चलन[20] है।

(23) तुम्हारे लिए हराम की गई है तुम्हारी माएँ[21], बेटियाँ[22], बहनें[23], फूफियाँ, मौसियाँ, भतीजियाँ, भानजियाँ[24] और तुम्हारी वे माएँ जिन्होंने तुम्हें दूध पिलाया हो, और तुम्हारी दूध में सम्मिलित बहनें[25], और तुम्हारी बीवियों की माएँ, और तुम्हारी बीवियों की लड़कियाँ जिनका तुम्हारी गोद में पालन-पोषण हुआ है[26]—उन बीवियों की लड़कियाँ जिनसे तुम्हारा सहवास हो चुका हो। वरना अगर (सिर्फ़ विवाह हुआ हो और) सहवास न हुआ हो तो (उन्हें छोड़कर उनकी लड़कियों से निकाह कर लेने में) तुम्हारी कोई पकड़ नहीं है—और तुम्हारे उन बेटों की बीवियाँ जो तुम्हारे वीर्य से हों।[27] और यह भी तुम्हारे लिए हराम है कि एक साथ एकट्ठा दो बहनों को निकाह में रखो[28], मगर जो

19. इसका यह मतलब नहीं है कि अज्ञान काल में जिसने सौतेली माँ से निकाह कर लिया था वह इस आदेश के आने के बाद भी उसे बीवी के रूप में रख सकता है, बल्कि मतलब यह है कि पहले जो इस तरह के निकाह किए थे उनसे पैदा होनेवाली सन्तान अब यह आदेश आने केबाद हरामी नहीं ठहरेगी और न अपने बापों के माल में अपने विरासत के हक़ से वंचित होगी।
20. इस्लामी क़ानून में यह कर्म फ़ौजदारी अपराध और पुलिस के हस्तक्षेप के योग्य है।
21. माँ के अर्थ में सगी और सौतेली दोनों प्रकार की माएँ सम्मिलित हैं, इसलिए दोनों हराम हैं। इसी के साथ इस आदेश के अन्दर बाप की माँ और माँ की माँ भी आती है।
22. बेटी के आदेश में पोती और नवासी भी शामिल है।
23. सगी बहन और माँ शरीक बहन और बाप शरीक बहन तीनों इस आदेश में समान हैं।
24. इन सब रिश्तों में भी सगे और सौतेले के बीच कोई अन्तर नहीं।

पहले हो गया सो हो गया, अल्लाह बख़्शनेवाला और रहम करनेवाला है।[29] (24) और वे औरतें भी तुम्हारे लिए हराम हैं जो किसी दूसरे के निकाह में हों (मुह्सनात), अलबत्ता ऐसी औरतों की बात और है जो (युद्ध में) तुम्हारे हाथ आएँ।[30] यह अल्लाह का क़ानून है जिसका पालन तुम्हारे लिए अनिवार्य कर दिया गया है।

इसके अलावा जितनी औरतें हैं उन्हें अपने मालों के द्वारा हासिल करना तुम्हारे लिए हलाल कर दिया गया है, शर्त यह कि निकाह के घेर में लेकर उन्हें सुरक्षित करो, न कि स्वच्छन्द कामतृप्ति करने लगो। फिर जो दाम्पत्य जीवन का आनन्द तुम उनसे लो

25. इस बात में पूरा मुसलिम समुदाय (उम्मत) एकमत है कि एक लड़के या लड़की ने जिस औरत का दूध पिया हो उसके लिए वह स्त्री माँ के आदेशके तहत आती है और उसका पति बाप के आदेश के तहत आता है, और वे सभी रिश्ते जो सगी माँ और बाप के सम्बन्ध से हराम होते हैं, दूध सम्बन्धित माँ और बाप के सम्बन्ध से भी हराम हो जाते हैं। इस बच्चे के लिए दूध सम्बन्धित माँ का सिर्फ़ वही बच्चा हराम या वर्जित नहीं है जिसके साथ उसने दूध पिया हो बल्कि उसकी सारी औलाद उसके सगे भाई-बहन की तरह है और उनके बच्चे उसके लिए सगे भांजों और भतीजों की तरह हैं।
26. ऐसी लड़की का हराम या वर्जित होना इस शर्त पर निर्भर नहीं करता कि उसका सौतेले बाप के घर में पालन-पोषण हुआ हो। मुसलिम समुदाय के धर्मशास्त्री इस बात में लगभग एकमत हैं कि सौतेली बेटी आदमी के लिए हर हाल में हराम है चाहे उसका सौतेले बाप के घर में पालन-पोषण हुआ हो या न हुआ हो।
27. बेटे ही की तरह पोते और नवासे की बीवी भी दादा और नाना के लिए हराम है।
28. नबी (सल्ल॰) का आदेश है कि ख़ाला (मौसी) और भानजी और फूफी और भतीजी से भी एक साथ निकाह करना हराम है। इस सम्बन्ध में यह सिद्धांत समझ लेना चाहिए कि ऐसी दो औरतों से एक साथ निकाह करना हर हाल में हराम है जिनमें से कोई एक अगर मर्द होती तो उसका निकाह दूसरी से वर्जित या हराम होता।
29. अर्थात् इस पर पकड़ न होगी, मगर जिस आदमी ने इस्लाम अपनाने से पहले दो बहनों को एक साथ निकाह में रखा हो उसे इस्लाम क़बूल करने के बाद एक को रखना और एक को छोड देना होगा।
30. अर्थात् जो औरतें युद्ध में पकड़ी हुई आएँ और उनके ग़ैर मुसलिम पति 'दारुल हरब' (शत्रु के देश) में मौजूद हों वे हराम नहीं हैं, क्योंकि 'दारुल हरब' से 'दारुल इस्लाम' (इस्लामी राज्य क्षेत्र) में आने के बाद उनके निकाह टूट गए।

उसके बदले में उनके महर अनिवार्य समझते हुए अदा करो, अलबत्ता महर निश्चित हो जाने के बाद आपस की रज़ामन्दी से तुम्हारे बीच अगर कोई समझौता हो जाए तो इसमें कोई हरज नहीं, अल्लाह सब कुछ जाननेवाला, तत्त्वदर्शी है। (25) और जो आदमी तुममें से इतनी सामर्थ्य न रखता हो कि कुलीन मुसलमान औरतों (मुह्सनात) से निकाह कर सके उसे चाहिए कि तुम्हारी उन लौंडियों (दासियों) में से किसी के साथ विवाह कर लो जो तुम्हारे क़बज़े में हों और ईमानवाली हों। अल्लाह तुम्हारे ईमान को अच्छी तरह जानता है, तुम सब एक ही गिरोह के लोग हो, अतः उनके सरपरस्तों की इजाज़त से उनके साथ निकाह कर लो और सामान्य नियम के अनुसार उनके महर अदा कर दो, ताकि वे निकाह की परिधि में सुरक्षित (मुह्सनात) होकर रहें, स्वच्छन्द कामतृप्ति न करती फिरे और न चोरी-छिपे नाजाइज सम्बन्ध बनाएँ। फिर जब वे विवाह की परिधि में सुरक्षित हो जाएँ और उसके बाद कोई अश्लील कर्म कर बैठे तो उनपर उस सज़ा के मुक़ाबले में आधी सज़ा है जो ख़ानदानी औरतों के लिए निर्धारित है।[31] यह सुविधा तुममें से उन लोगों के लिए रखी गई है जिनको निकाह न करने से संयम के भंग हो जाने का भय हो। लेकिन अगर तुम सब्र करो तो यह तुम्हारे लिए अच्छा है, और अल्लाह बख़्शनेवाला और रहम फ़रमानेवाला है।

(26) अल्लाह चाहता है कि तुमहारे लिए उन रीतियों को स्पष्ट करे और उन्ही रीतियों पर तुम्हें चलाए जिनका पालन तुमसे पहले के अच्छे लोग करते थे। वह अपनी दयालुता के साथ तुम्हारी ओर पलटना चाहता है, और वह सब कुछ जानता और गहरी समझ रखता है। (27) हाँ, अल्लाह तो तुम्हारी ओर दयालुता के साथ पलटना चाहता है मगर जो लोग ख़ुद अपनी वासनाओं के पीछे चल रहे हैं वे चाहते हैं कि तुम सीधे रास्ते से हटकर दूर निकल जाओ। (28) अल्लाह तुमपर से पाबन्दियों को हलका करना

31. जिस शब्द का अनुवाद कुलीन या सुरक्षित किया है उसके लिए क़ुरआन के इस रुकू (प्रकरण) में 'मुह्सनात' शब्द दो विभिन्न अर्थों में इस्तेमाल हुआ है। एक 'विवाहिता स्त्रियाँ' जिनको पति का संरक्षण प्राप्त हो। दूसरे 'ख़ानदानी औरतें' जिनको 'ख़ानदान' (अथवा कुल) का संरक्षण हासिल हो, यद्यपि वे विवाहिता न हों। आयत 24 में 'मुह्सनात' शब्द दासी या लौंडी के मुक़ाबले में अविवाहित ख़ानदानी औरतों के लिए इस्तेमाल हुआ है जैसा कि आयत के विषय से स्पष्ट है। इसके विपरीत लौंडियों के लिए 'मुह्सनात' शब्द पहले अर्थ में इस्तेमाल हुआ है और स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि जब उन्हें विवाह का संरक्षण प्राप्त हो जाए (फ़-इज़ा उहसिन्न) तब उनके लिए व्यभिचार करने पर उस सज़ा की आधी सज़ा है जो 'मुह्सनात' (अविवाहित ख़ानदानी औरतों) के लिए है।

चाहता है क्योंकि इनसान कमज़ोर पैदा किया गया है।

(29) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, आपस में एक दूसरे के माल ग़लत ढंग से न खाओ, लेन-देन होना चाहिए आपस की रज़ामन्दी से।[32] और ख़ुद अपनी हत्या न करो।[33] विश्वास करो कि अल्लाह तुमपर दया रखता है। (30) जो व्यक्ति ज़ुल्म और ज़्यादती के साथ ऐसा करेगा उसको हम ज़रूर ही आग में झोंकेंगे और यह अल्लाह के लिए कोई कठिन काम नहीं है। (31) अगर तुम उन बड़े-बड़े गुनाहों से बचते रहो जिनसे तुम्हें रोका जा रहा है तो तुम्हारी छोटी-मोटी बुराइयों को हम तुम्हारे हिसाब से हटा देंगे और तुमको इज़्ज़त की जगह में दाख़िल करेंगे।

(32) और जो कुछ अल्लाह ने तुममें से किसी को दूसरे के मुक़ाबले में ज़्यादा दिया है उसकी तमन्ना न करो। जो कुछ मर्दों ने कमाया है उसके अनुसार उनका हिस्सा हैं और जो कुछ औरतों ने कमाया है उसके अनुसार उनका हिस्सा। हाँ, अल्लाह से उसके अनुग्रह की दुआ करते रहो, यक़ीनन अल्लाह हर चीज़ का ज्ञान रखता है।

(33) और हमने हर उस तरके के हक़दार मुक़र्रर कर दिए हैं जो माँ-बाप और क़रीबी रिश्तेदार छोड़ें। अब रहे वे लोग जिनके साथ तुम प्रतिज्ञाबद्ध हो तो उनका हिस्सा उन्हें दो, यक़ीनन हर चीज़ अल्लाह की निगाह में है।[34]

(34) मर्द औरतों के मामलों के ज़िम्मेदार हैं,[35] इस आधार पर कि अल्लाह ने उनमें से एक को दूसरे के मुक़ाबले में आगे रखा है, और इस आधार पर कि पुरुष अपने माल ख़र्च करते हैं। अतः जो भली औरतें हैं वे आज्ञाकारी होती हैं और मर्दों के पीछे अल्लाह की रक्षा और संरक्षण में उनके अधिकारों की रक्षा करती हैं। और जिन औरतों से तुम्हें सरकशी का भय हो उन्हें समझाओ, सोने की जगहों (ख़्वाबगाहों) में उनसे अलग रहो और मारो,[36] फिर अगर वे तुम्हारी बात मानने लगें तो अकारण उनपर हाथ

32. 'ग़लत ढंग' से मुराद वे सभी तरीक़े हैं जो हक़ के विरुद्ध हों और धर्म-विधान और नैतिकता की दृष्टि से नाजाइज़ हों। 'आपस की रज़ामन्दी' से मुराद स्वेच्छापूर्ण और जानी-बूझी रज़ामन्दी है। किसी दबाव या धोखा-धड़ी पर आधारित रज़ामन्दी का नाम रज़ामन्दी नहीं है।

33. यह वाक्य पिछले वाक्य का अनुपूरक भी हो सकता है और ख़ुद एक स्वतन्त्र वाक्य भी। अगर पिछले वाक्य का अनुपूरक समझा जाए तो इसका अर्थ यह है कि दूसरों का माल नाजाइज़ तरीक़े से खाना अपने-आपको विनाश के गड्ढे में डालना है। और अगर इसे स्वतन्त्र वाक्य समझा जाए तो इसके दो अर्थ हैं : एक यह कि दूसरे की हत्या न करो। दूसरे यह कि आत्महत्या न करो।

चलाने के लिए बहाने तलाश न करो, यक़ीन रखो कि ऊपर अल्लाह मौजूद है जो बड़ा और सर्वोच्च है। (35) और अगर तुम लोगों को कहीं पति-पत्नी के सम्बन्ध बिगड़ जाने का अंदेशा हो तो एक फ़ैसला करनेवाला मर्द के नातेदारों में से और एक औरत के नातेदारों में से मुक़र्रर करो, वे दोनों[37] सुधार करना चाहेंगे तो अल्लाह उनके बीच मेल का रास्ता निकाल देगा, अल्लाह सब कुछ जानता और ख़बर रखता है।

(36) और तुम सब अल्लाह की बन्दगी करो, उसके साथ किसी को साझी न बनाओ, माँ-बाप के साथ अच्छा व्यवहार करो, नातेदारों और यतीमों और मुहताजों के साथ अच्छा व्यवहार करो, और पड़ोसी नातेदार से, अपरिचित पड़ोसी से, पहलू के साथी[38] और मुसाफ़िर से, और उन दास-दासियों से जो तुम्हारे अधिकार में हों, एहसान का मामला रखो, यक़ीन जानो अल्लाह किसी ऐसे व्यक्ति को पसन्द नहीं करता जो डींगें मारनेवाला हो और अपनी बड़ाई पर गर्व करे। (37) और ऐसे लोग भी अल्लाह को

34. अरबवालों का नियम था कि जिन लोगों के बीच मित्रता और भाईचारे के समझौते हो जाते थे वे एक दूसरे की मीरास के हक़दार बन जाते थे। इसी तरह जिसे बेटा बना लिया जाता था वह भी मुँह बोले बाप का वारिस ठहराता था। इस आयत में जाहिलियत के इस तरीके को निरस्त करते हुए कहा गया है कि विरासत तो उसी नियम के अनुसार रिश्तेदारों में विभाजित होनी चाहिए जो हमने मुक़र्रर कर दिया है, अलबत्ता जिन लोगों से तुम्हारे समझौते या वचनबद्धता हों उनको अपनी ज़िन्दगी में तुम जो चाहो दे सकते हो।
35. यहाँ 'क़ौवाम' शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'क़ौवाम' उस व्यक्ति को कहते हैं जो किसी व्यक्ति या संस्था या व्यवस्था के मामलों को ठीक हालत में चलाने और उसकी रक्षा और निगहबानी करने और उसकी आवश्यकताओं को पूरा करने का ज़िम्मेदार हो।
36. यह अर्थ नहीं है कि तीनों काम एक साथ कर डाले जाएँ, बल्कि अर्थ यह है कि सरकशी की हालत में इन तीनों उपायों को अपनाया जा सकता है। अब रहा इनको व्यवहार में लाना, तो हर हाल में इसमें अपराध और सज़ा के बीच अनुकुलता होनी चाहिए। और जहाँ हलके उपाय से बात बन सकती हो वहाँ कडे उपाय से काम लेना चाहिए। नबी (सल्ल०) ने पत्नियों को मारने की जब कभी इजाज़त दी है तो नहीं चाहते हुए दी है और फिर भी इसे नापसन्द ही किया है।
37. दोनों से मुराद मध्यस्थ व्यक्ति भी हैं और पति-पत्नी भी। हर झगड़े में सुलह होने की संभावना है शर्त यह है कि दोनों पक्ष के लोग सुलह को पसन्द करते हों और बीचवाले भी चाहते हों कि दोनों पक्षों में किसी तरह सुलह-सफ़ाई हो जाए।

पसंद नहीं हैं जो कंजूसी करते हैं और दूसरों को भी कंजूसी पर उभारते हैं और जो कुछ अल्लाह ने अपने अनुग्रह से उन्हें दिया है उसे छिपाते हैं। ऐसे नाशुक्रे लोगों के लिए हमने रुसवा कर देनेवाला अज़ाब तैयार कर रखा है। (38) और वे लोग भी अल्लाह को पसन्द नहीं हैं जो अपने माल सिर्फ़ लोगों को दिखाने के लिए ख़र्च करते हैं और हक़ीक़त में न अल्लाह पर ईमान रखते हैं और न आख़िरत के दिन पर। सच यह है कि शैतान जिसका साथी हुआ उसे बहुत ही बुरा साथ प्राप्त हुआ। (39) आख़िर इन लोगों पर क्या आफ़त आ जाती अगर ये अललाह और आख़िरत के दिन को मानते और जो कुछ अल्लाह ने दिया है उसमें से ख़र्च करते। अगर ये ऐसा करते तो अल्लाह से इनकी नेकी का हाल छिपा न रह जाता। (40) अल्लाह किसी पर ज़र्रा बराबर भी ज़ुल्म नहीं करता। अगर कोई एक नेकी करे तो अल्लाह उसे दो गुना करता है और फिर अपनी ओर से बड़ा बदला देता है। (41) फिर सोचो कि उस समय ये क्या करेंगे जब हम हर समुदाय (उम्मत) में से एक गवाह लाएँगे और इन लोगों पर तुम्हें अर्थात् मुहम्मद (सल्ल० को) गवाह की हैसियत से खड़ा करेंगे। (42) उस समय वे सब लोग जिन्होंने रसूल की बात न मानी और उसकी नाफ़रमानी करते रहे, तमन्ना करेंगे कि क्या ही अच्छा होता कि धरती फट जाए और वे उसमें समा जाएँ। वहाँ ये अपनी कोई बात अल्लाह से न छिपा सकेंगे।

(43) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब तुम नशे की हालत में हो तो नमाज़ के क़रीब न जाओ।[39] नमाज़ उस समय पढ़नी चाहिए जब तुम जानो कि क्या कह रहे हो।[40] और इसी तर नापाकी की हालत[41] में भी नमाज़ के क़रीब न जाओ जब तक कि नहा-

38. इससे मुराद पास बैठनेवाला दोस्त भी है और ऐसा व्यक्ति भी जिसे कहीं किसी समय आदमी का साथ हो जाए। उदाहरणस्वरूप आप बाज़ार में जा रहे हों और कोई व्यक्ति आपके साथ रास्ता चल रहा हो, या किसी दुकान पर आप सौदा ख़रीद रहे हों और कोई दूसरा ख़रीददार भी आपके पास बैठा हो, या सफ़र में कोई व्यक्ति आपका सहयात्री हो। इस अस्थायी निकटता के कारण भी हर सभ्य और सज्जन व्यक्ति पर एक हक़ आता है जिसका तक़ाज़ा यह है कि वह जितना हो सके उसके साथ अच्छा व्यवहार करे और उसे तकलीफ़ देने से बचे।
39. यह शराब के सम्बन्ध में दूसरा आदेश है। पहला आदेश वह था जो सूरा बक़रा (आयत 219) में गुज़र चुका है।
40. अर्थात् नमाज़ में आदमी को इतना होश रहे कि वह यह जाने कि वह क्या चीज़ अपने मुख से कह रहा है। ऐसा नहो कि वह खड़ा तो हो नमाज़ पढ़ने और शुरू कर दे कोई ग़ज़ल।

धो न लो, यह और बात है कि रास्ते से गुज़रते[42] हो। और अगर कभी ऐसा हो कि तुम बीमार हो, या सफ़र में हो, या तुममें से कोई शौच करके आए, या तुमने औरतों को हाथ लगाया हो,[43] और फिर पानी न मिले तो पाक मिट्टी से काम लो और उससे अपने चेहरों और हाथों पर मसह कर लो (हाथ फेर लो),[44] बेशक अल्लाह नर्मी से काम लेनेवाला और बख़्शनेवाला है।

(44) तुमने उन लोगों को भी देखा जिन्हें किताब के इल्म का कुछ भाग दिया गयाहै? वे ख़ुद गुमराही के ख़रीदार बने हुए हैं और चाहते हैं कि तुम भी गुमराह हो जाओ। (45) अल्लाह तुम्हारे दुश्मनों को ख़ूब जानता है और तुम्हारी सहायता और समर्थन के लिए अल्लाह ही काफ़ी है। (46) जो लोग यहूदी बन गए हैं उनमें कुछ लोग हैं जो शब्दों को उनके स्थान से फेर देते हैं,[45] और सत्य-धर्म के खिलाफ चोट करने के लिए अपनी ज़बानों को तोड़-मरोड़कर कहते हैं, ''हमने सुना मगर स्वीकार नहीं किया''[46] और ''सुनिए, आप ऐसे नहीं कि कोई सुनाए''[47] और ''हमारी रिआयत करे।''[48] हालाँकि अगर वे कहते, ''हमने सुना और हमने माना'' और ''सुनिए'' और

41. नापाकी (जनाबत) से मुराद वह नापाकी है जो संभोग से या स्वप्न में वीर्यपात से हो जाती है।
42. धर्मशास्त्रियों और टीकाकारों में से एक गिरोह ने इस आयत का मतलब यह समझा है कि नापाकी की हालत में मसजिद में न जाना चाहिए यह और बात है कि किसी काम के लिए मसजिद में से गुज़रना हो। दूसरे गिरोह की दृष्टि में इससे मुराद सफ़र है। अर्थात् अगर आदमी सफ़र की हालत में हो और नापाक हो जाए तो 'तयम्मुम' किया जा सकता है।
43. इस मामले में मतभेद है कि 'लम्स' अर्थात् छूने से मुराद क्या है। अनेक इमामों का मत है कि इससे मुराद संभोग है और इसी मत को इमाम अबू हनीफ़ा और उनके साथियों ने ग्रहण किया है। इसके ख़िलाफ़ कुछ दूसरे धर्मशास्त्रियों की दृष्टि में इससे मुराद छूना या हात लगाना है और इसी मत को इमाम शाफ़ई (रह॰) ने अपनाया है। इमाम मालिक (रह॰) का मत है कि अगर औरत या मर्द एक दूसरे को कामवासना के साथ हाथ लगाएँ तो उनका 'वुज़ू' टूट जाएगा, लेकिन अगर बिना कामवासना के एक का शरीर दूसरे से छू जाए तो इसमें कोई हरज नहीं।
44. आदेश का विस्तृत रूप यह है कि अगर आदमी बेवुज़ू है या उसे नहाने की आवश्यकता है और पानी नहीं मिलता तो 'तयम्मुम' करके नमाज़ पढ़ सकता है। अगर बीमार है और नहाने या 'वुज़ू' करने से उसे नुक़सान का आंदेशा है तो पानी मौजूद होते हुए भी 'तयम्मुम' कीइजाज़त से फ़ायदा उठा सकता है।

''हमारी ओर ध्यान दें'' तो यह उन्हीं के लिए अच्छा था और ज़्यादा सच्चाई का तरीक़ा था। मगर उनपर तो उनकी असत्यवादिता के कारण अल्लाह की फिटकार पड़ी हुई है इसलिए वे कम ही ईमान लाते हैं।

(47) ऐ वे लोगो जिन्हें किताब दी गई थी, मान लो उस किताब को जो हमने अब उतारी है, और जो उस किताब की पुष्टि और समर्थन करती है जो तुम्हारे पास पहले से मौजूद थी। इसपर ईमान लाओ इससे पहले कि हम चेहरे बिगाड़कर पीछे फेर दे या उनको उसी तरह फिटकारा हुआ कर दे जिस तरह 'सब्तवालों' के साथ हमने किया था, और याद रखो कि अल्लाह का आदेश लागू होकर रहता है। (48) अल्लाह बस शिर्क (साझीदार बनाने) ही को माफ़ नहीं करता, इसके सिवा दूसरे जितने गुनाह हैं वह जिसके लिए चाहता है माफ़ कर देता है। अल्लाह के साथ जिसने किसी और को साझी ठहराया उसने तो बहुत ही बड़ा झूठ रचा और बड़े सख़्त गुनाह की बात की।

(49) तुमने उन लोगों को भी देखा जो अपने पवित्रात्मा होने का बहुत दम भरते हैं? हालाँकि पवित्रता तो अल्लाह ही जिसे चाहता है प्रदान करता है, और (इन्हें जो पवित्रता नहीं मिलती तो वास्तव में) इनपर ज़र्रा बराबर भी ज़ुल्म नहीं किया जाता।

45. इसके तीन अर्थ है : एक यह कि अल्लाह की किताब के शब्दों में परिवर्तन करते हैं। दूसरे यह कि अपने हेर-फेर से किताब की आयतों के अर्थ कुछ से कुछ बना देते हैं। तीसरे यह कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) और आपके अनुयायियों के पास आकर उनकी बातें सुनते हैं और वापस जाकर लोगों के सामने ग़लत ढंग से बयान करते हैं, बात कुछ कही जाती है और वे उसे अपनी दुष्टता से कुछ का कुछ बनाकर लोगों में प्रसिद्ध कर देते हैं।
46. अर्थात् जब उन्हें अल्लाह के आदेश सुनाए जाते हैं तो ज़ोर से कहते हैं 'समे अना' (हमने सुन लिया) और धीरे से कहते हैं 'असैना' (हमने स्वीकार नहीं किया) या 'अताना' (हमने स्वीकार किया) का उच्चारण इस ढंग से ज़बान को लचका देकर करते हैं कि 'असैना' (हमने स्वीकार नहीं किया) बन जाता है।
47. अर्थात् बातचीत के बीच जब वे कोई बात मुहम्मद (स.) से कहना चाहते हैं तो कहते हैं 'इस्मअ' (सुनिए) और फिर साथ ही 'ग़ै-र मुस्मइन' भी कहते हैं जिसके कई अर्थ होते हैं। इसका एक अर्थ यह है कि आप ऐसे आदरणीय है कि आपको कोई बात मरज़ी के ख़िलाफ़ नहीं सुनाई जा सकती। दूसरा अर्थ यह है तुम इस योग्य नहीं हो कि तुम्हें कोई कुछ सुनाए। एक और अर्थ यह है कि ख़ुदा ऐसा करे कि तुम बहरे हो जाओ।
48. इसकी व्याख्या सूरा 2 (अल-बक़रा) फुट नो न॰ 36 में हो चुकी है।

(50) देखो तो सही, ये अल्लाह पर भी झूठा इलज़ाम घड़ने से नहीं चूकते और इनके खुले गुनहगार होने के लिए यही एक गुनाह बहुत है।

(51) क्या तुमने उन लोगों को नहीं देखा जिन्हें किताब के इल्म में से कुछ हिस्सा दिया गया है, और उनका हाल यह है कि निराधार चीज़ों[49] औ ताग़ूत (फ़सादी)[50] को मानते हैं और अधर्मियों के बारे में कहते हैं कि ईमान लानेवालों से तो यही ज़्यादा सही रास्ते पर हैं[51] (52) ऐसे ही लोग हैं जिनपर अल्लाह ने लानत की है और जिसपर अल्लाह लानत कर दे फिर तुम उसका कोई सहायक न पाओगे। (53) क्या हुकूमत में उनका कोई हिस्सा है? अगर ऐसा होता तो ये दूसरों को एक फूटी कौड़ी तक न देते। (54) फिर क्या ये दूसरों से इसलिए ईर्ष्या करते हैं कि अल्लाह ने उन्हें अपने अनुग्रह से नवाज़ दिया? अगर यह बात है तो उन्हें मामूल हो कि हमने तो इबराहीम की सन्तान कोकिताब और गहरी समझ दी और महान् राज्य प्रदान कर दिया, (55) मगर उनमें से किसी ने माना और कोई उससे मुँह मोड़ गया और मुँह मोड़नेवालों के लिए तो बस जहन्नम की भड़कती हुई आग ही काफ़ी है।[52] (56) जिन लोगों ने हमारी आयतों को मानने से इनकार कर दिया है उन्हें ज़रूर ही हम आग में झोकेंगे और जब उनके बदन की खाल गल जाएगी तो उसकी जगह दूसरी खाल पैदा कर देंगे ताकि वे अच्छी तरही अज़ाब का मज़ा चखें, अल्लाह बड़ी सामर्थ्य रखता है और अपने फ़ैसलों को व्यवहार

49. यहाँ 'जिब्त' शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'जिब्त' के मूल अर्थ है तथ्यहीन, निराधार और व्यर्थ चीज़। इस्लाम की भाषा में जादू, ज्योतिष, शकुन-विचार, टोने-टोटके और मुहूर्त और सभी अन्धविश्वासपूर्ण और काल्पनिक बातों को 'जिब्त' की संज्ञा दी गई है।

50. व्याख्या के लिए देखे सूरा 2 (अल-बक़रा) फुट नोट नं० 89-90)

51. यहाँ अधर्मियों (क़ाफ़िरों) से मुराद अरब के मुशरिक (बहुदेववादी) हैं।

52. याद रहे कि यहाँ जवाब इसराईलियों की ईर्ष्यापूर्ण बातों का दिया जा रहा है। इस जवाब का मतलब यह है कि तुम लोग आख़िर जलते किस बात पर हो? तुम भी इबराहीम की औलाद हो और ये इसमाईल के वंशज भी इबराहीम ही की औलाद है। इबराहीम से संसार के नेतृत्व का जो वादा हमने किया था वह इबराहीम के लोगों में से सिर्फ़ उन लोगों के लिए था जो हमारी भेजी हुई किताब और हिकमत (गहरी समझ) का अनुसरण करें। यह किताब और हिकमत पहले हमने तुम्हारे पास भेजी थी किन्तु तुम्हारी अपनी नालायकी और अयोग्यता थी कि तुम इससे मुँह मोड़ गए। अब वही चीज़ हमने इसमाईल के वंशज़ को दी है और यह उनका सौभाग्य है कि उन्होंने उसे मान लिया है।

में लाने की हिकमत को ख़ूब जानता है। (57) और जिन लोगों ने हमारी आयतों को मान लिया और अच्छे कर्म किए उनको हम ऐसे बाग़ों में दाख़िल करेंगे जिनके नीचे नहरें बहती होंगी, जहाँ वे हमेशा-हमेशा रहेंगे और उनको पाकीज़ा पत्नियाँ मिलेगी और उन्हें हम घनी छाँव में रखेंगे।

(58) मुसलमानो, अल्लाह तुम्हें आदेश देता है कि अमानतों को अमानतवालों को सौंपो, और जब लगों के बीच फ़ैसला करो तो इनसाफ़ के साथ करो,[53] अल्लाह तुमको निहायत अच्छी नसीहत करता है और यक़ीनन अल्लाह सब कुछ सुनता और देखता है।

(59) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, बात मानो अल्लह की और बात मानो रसूल की और उन लोगों की जो तुममें से आदेश देने के अधिकारी हों, फिर अगर तुम्हारे बीच किसी मामले में झगड़ा खड़ा हो जाए तो उसे अल्लाह और रसूल की ओर फेर दो[54] अगर तुम वास्तव में अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखते हो। यही एक सही कार्य-प्रणाली है और परिणाम की दृष्टि से भी अच्छा है।

(60) ऐ नबी, तुमने देखा नहीं उन लोगों को जो दावा तो करते हैं कि हमने मान लिया है उस किताब को जो तुम्हारी ओर उतारी गई है और उन किताबों को जो तुमसे पहले उतारी गई थीं, मगर चाहते यह हैं कि अपने मामलों का फ़ैसला कराने के लिए बढ़े हुए फ़सादी की ओर जाएँ, जबकि उन्हें फ़सादी से इनकार करने का आदेशदिया गया था[55]—शैतान उन्हें भटका कर सीधे मार्ग से बहुत दूर ले जाना चाहता है। (61) और जब उनसे कहा जाता है कि आओ उस चीज़ की ओर जो अल्लाह ने उतारी है और

53. अर्थात् तुम उन बुराइयों से बचे रहना जिनमें इसराईली पड़ गए हैं। इसराईलियों की बुनियादी ग़लतियों में से एक यह थी कि उन्होंने अपने अवनतिकाल में अमानतें, अर्थात् दायित्व के पद और धार्मिक नेतृत्व और समुदाय की सरदारी के पद ऐसे लोगों को देने शुरू कर दिए जो अयोग्य, अनुदार, दुराचारी, विश्वासघाती और दुष्कर्मी थे। नतीजा यह हुआ कि बुरे लोगों के नेतृत्व में पूरा समुदाय बिगड़ता चला गया। मुसलमानों को समझाया जा रहा है कि तुम ऐसा न करना। इसराईलियों की दूसरी बड़ी कमज़ोरी यह थी कि वे न्याय की चेतना से वंचित हो गए थे। वे निजी और क़ौमी उद्देश्यों के लिए निस्संकोच ईमान से हट जाते थे. खुली हठधर्मी बरत जाते थे। इनसाफ़ के गले पर छुरी फेरने में उन्हें तनिक भी संकोच न होता था। अल्लाह तआला मुसलमानों को ताकीद करता है कि तुम कहीं बेइनसाफ़ न बन जाना। चाहे किसी से दोस्ती हो या दुश्मनी, हर हालत में बात जब कहो इनसाफ़ की कहो और फ़ैसला जब करो न्यायपूर्वक करो।

आओ रसूल की ओर तो इन मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) को तुम देखते हो कि वे तुम्हारी ओर आने से कतराते हैं। (62) फिर उस समय क्या होता है जब इनके अपने हाथों की लाई हुई मुसीबत इनपर आ पड़ती है? उस समय ये तुम्हारे पास क़समें खाते हुए आते हैं और कहते हैं कि अल्लाह की क़सम! हम तो सिर्फ़ भलाई चाहते थे और हमारी नीयत तो यह थी कि दोनों गिरोहों में किसी तरह की संगति बैठ जाए (63)—अल्लाह जानता है जो कुछ इनके दिलों में है, इनसे किनारा मत करो, इन्हें समझाओ और ऐसी नसीहत करो जो इनके दिलों में उतर जाए। (64) (इन्हें बताओ कि) हमने जो भी रसूल भेजा है इसी लिए भेजा है कि अल्लाह की अनुमति से उसकी आज्ञा का पालन किया जाए। अगर उन्होंने यह नीति अपनाई होती कि जब ये अपने आप पर ज़ुल्म कर बैठे थे तो

54. यह आयत इस्लाम की पूरी धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक व्यवस्था का आधार और इस्लामी राज्य के संविधान की सर्वप्रथम धारा है। इसमें निम्नलिखित चार सिद्धान्त स्थायी रूप में क़ायम कर दिए गए हैं :

    (1) इस्लामी व्यवस्था में आदेश देने का असल अधिकारी अल्लाह है। एक मुसलमान सबसे पहले अल्लाह का बन्दा और दास है, बाक़ी जो कुछ भी है उसके बाद है। (2) इस्लामी व्यवस्था का दूसरा आधार रसूल (पैग़म्बर) का आज्ञापालन है। (3) उपर्युक्त दोनों आज्ञापालनों के बाद और उनके अधीन तीसरा आज्ञापालन उन आदेश देनेवाले अधिकारियों (उलुल अम्र) का है जो ख़ुद मुसलमानों में से हों। 'उलुल अम्र' के अर्थ में वे सब लोग शामिल हैं जो मुसलमानों के सामूहिक मामलों के कार्यकारी अध्यक्ष हों, चाहे वे धर्मज्ञाता विद्वान (उलेमा) हों, या राजनैतिक मार्गदर्शक नेता हों या देश के व्यवस्थापक अधिकारी, या अदालती फ़ैसले करनेवाले जज, या सांस्कृतिक और सामाजिक मामलों में कबीलों और बस्तियों और मुहल्लों की अध्यक्षता करनेवाले बड़े बुज़ुर्ग और सरदार। (4) अल्लाह का आदेश और रसूल का तरीक़ा बुनियादी क़ानून और आख़िरी सनद (अंतिम प्रमाण) है। मुसलमानों के बीच या हुकूमत और प्रजा के बीच जिस मामले में भी झगड़ा या विवाद उत्पन्न होगा उसमें फ़ैसले के लिए क़ुरआन और सुन्नत (रसूल के तरीक़े) की तरफ़ रुजू किया जाएगा और जो फ़ैसला वहाँ से हासिल होगा उसके सामने सब स्वीकार के लिए सिर झुका देंगे।

55. यहाँ स्पष्ट रूप से 'ताग़ूत' (बढ़े हुए फ़सादी) से मुराद वह हाकिम है जो अल्लाह के क़ानून के सिवा किसी दूसरे क़ानून के मुताबिक़ फ़ैसला करता हो, और वह न्याय-व्यवस्था है जो न तो अल्लाह की सम्प्रभुता की आज्ञाकारी हो और न अल्ला की किताब को आख़िरी सनद मानती हो।

तुम्हारे पास आ जाते और अल्लाह से माफ़ी माँगते, और रसूल भी इनके लिए माफ़ी की प्रार्थना करते, तो यक़ीनन अल्लाह को माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला पाते। (65) नहीं, ऐ नबी, तुम्हारे रब की क़सम! ये कभी ईमानवाले नहीं हो सकते जब तक कि अपने आपस के मतभेदों में ये तुमको फ़ैसला करनेवाला न मान ले, फिर जो कुछ तुम फ़ैसला करो उसपर अपने दिलों में भी कोई तंगी न पाएँ, बल्कि स्वेच्छापूर्वक स्वीकार कर लें। (66) अगर हमने इन्हें आदेश दिया होता कि अपने आप को मरो या अपने घरों से निकल जाओ तो इनमें से थोड़े ही आदमी ऐसे करते। हालाँकि जो नसीहत इन्हें की जाती है अगर ये उसे व्यवहार में लाते तो यह इनके लिए ज़्यादा अच्छाई और ज़्यादा जमाव का कारण सिद्ध होता (67) और जब ये ऐसा करते तो हम इन्हें अपनी ओर से बहुत बड़ा बदला देते (68) और इन्हें सीधा रास्ता दिखा देते। (69) जो लोग अल्लाह और रसूल की आज्ञा का पालन करेंगे वह उन लोगों के साथ होंगे जिनपर अल्लाह ने इनाम फ़रमाया है अर्थात नबी, सच्चे लोग और शहीद और अच्छे लोग।[56] कैसे अच्छे हैं ये साथी जो किसी को प्राप्त हों! (70) यह वास्तविक अनुग्रह है जो अल्लाह की ओर से होता है और हक़ीक़त जानने के लिए बस अल्लाह ही का इल्म क़ाफ़ी है।

(71) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, मुक़ाबले के लिए हर समय तैयार रहो, फिर जैसा अवसर हो अलग-अलग टुगड़ियों के रूप में निकलो या इकट्ठे होकर।[57] (72) हाँ, तुममें कोई-कोई आदमी ऐसा भी है जो लड़ाई से जी चुराता है, अगर तुमपर कोई मुसीबत आए तो कहता है कि अल्लाह ने मुझपर बड़ा अनुग्रह किया कि मैं इन लोगों के साथ न गया, (73) और अगर अल्लाह की ओर से तुमपर अनुग्रह हो तो कहता है—और इस तरह कहता है मानो तुम्हारे और उसके बीच प्रेम का कोई सम्बन्ध था ही नहीं—कि क्या ही अच्छा होत कि मैं भी इनके साथ होता तो बड़ा काम बन जाता। (74) (ऐसे लोगों को मालूम हो कि) अल्लाह के मार्ग में लड़ना चाहिए उन लोगों को जो आख़िरत (परलोक) के बदले दुनियावी ज़िन्दगी को बेच दें, फिर जो अल्लाह के मार्ग में लड़ेगा और मारा जाएगा या विजयी रहेगा उसे ज़रूर हम बड़ी मज़दूरी प्रदान

56. इसका अर्थ यह है कि परलोक (आख़िरत) में वे इन लोगों के साथ होंगे। यह अर्थ नहीं कि इनमें से कोई अपने इस कर्म के द्वारा नबी भी बन जाएगा।

57. स्पष्ट रहे कि यह आदेश उस ज़माने में उतरा था जब उहुद की पराजय के कारण निकटवर्ती क्षेत्रों के क़बीलों का साहस बढ़ गया था और मुसलमान हर तरफ़ से ख़तरों में घिर गए थे।

करेंगे। (75) आख़िर क्या कारण है कि तुम अल्लाह के मार्ग में उन बेबस मर्दों, औरतों और बच्चों के लिए न लड़ो जो कमज़ोर पाकर दबा लिए गए हैं और फ़रियाद कर रहे है कि ऐ हमारे रब, हमको इस बस्ती से निकाल जिसके निवासी ज़ालिम हैं, और अपनी ओर से हमारा कोई समर्थक और सहायक पैदा कर दे।[58] (76) जिन लोगों ने ईमान का रास्ता अपनाया है, वे अल्लाह के मार्ग में लड़ते हैं और जिन्होंने अधर्म का मार्ग अपनाया है, वे बढे हुए फ़सादी की राह में लड़ते हैं, अतः शैतान के साथियों से लड़ो और यक़ीन जानो कि शैतान की चालें वास्तव में बहुत ही कमज़ोर हैं।

(77) तुमने उन लोगों को भी देखा जिनसे कहा गया था कि अपने हाथ रोके रखो और नमाज़ कायम करो और ज़कात दो? अब जो उन्हें लड़ाई का आदेश दिया गया तो उनमें एक गिरोह का हाल यह है कि लोगों से ऐसा डर रहे हैं जैसा अल्लाह से डरना चाहिए या कुछ इससे भी बढ़कर। कहते हैं, ऐ हमारे रब, यह हम पर लड़ाई का आदेश क्यों लिख दिया? क्यों न हमें अभी कुछ और मोहलत दी? इनसे कहो, सांसारिक जीवन-पूंजी थोड़ी है और आख़िरत (परलोक) एक अल्लाह से डरनेवाले इनसान के लिए ज़्यादा बेहतर है, और तुमपर ज़ुल्म एक ज़र्रा बराबर भी न किया जाएगा।[59] (78) रही मौत तो जहाँ भी तुम हो वह हर हाल में तुम्हें आकर रहेगी चाहे तुम कैसी ही मजबूत इमारतों में हो।

अगर उन्हें कोई लाभ पहुँचता है तो कहते है कि यह अल्लाह की ओर से है, और अगर कोई नुकसान पहुँचता है तो कहते है कि ऐ नबी, यह आपके कारण है। कहो, सब कुछ अल्लाह ही की ओर से है। आख़िर उन लोगों को क्या हो गया है कि कोई बात उनकी समझ में नहीं आते।

(79) ऐ इनसान, तुझे जो भी भलाई हासिल होती है अल्लाह की कृपा से होती है, और जो मुसीबत तुझपर आती है वह तेरी अपनी कमाई और करतूत के कारण है।

58. इशारा है उन सताए गए बच्चों, औरतों और मर्दों की ओर जो मक्का में और अरब के दूसरे क़बीलों में इस्लाम क़बूल कर चुके थे मगर न उन्हें हिजरत (घर-बार छोड़कर निकल जाने) की क़ुदरत हासिल थी और न अपने आपको ज़ुल्म से बचा सकते थे। इन ग़रीब-दुखियों को तरह-तरह से ज़ुल्म व सितम का निशाना बनाया जा रहा था। और ये दुआएँ माँगते थे कि कोई इन्हें इस ज़ुल्म से बचाए।

59. अर्थात् अगर तुम अल्लाह के दीन (धर्म) की सेवा करोगे और उसके मार्ग में जानतोड़ कोशिश करोगे तो यह संभव नहीं है कि अल्लाह के यहाँ तुम्हारी मज़दूरी मारी जाए।

ऐ मुहम्मद, हमने तुमको लोगों के लिए रसूल बनाकर भेजा है और इसपर अल्लाह की गवाही काफ़ी है। (80) जिसने रसूल की आज्ञा मानी उसने वास्तव में अल्लाह की आज्ञा का पालन किया। और जो मुँह मोड़ गया, तो बहरहाल हमने तुम्हें उन लोगों पर चौकीदार बनाकर तो नहीं भेजा है।

(81) वे मुँह पर कहते हैं कि हम आज्ञाकारी है। मगर जब तुम्हारे पास से निकलते है तो उनमें से एक गिरोह रातों को इकट्ठा होकर तुम्हारी बातों के ख़िलाफ मशविरे करता है। अल्लाह उनकीये सारी काना-फूसियाँ लिख रहा है। तुम उनकी परवान न करो और अल्लाह पर भरोसा रखो, वही भरोसे के लिए काफ़ी है। (82) क्या ये लोग क़ुरआन पर विचार नहीं करते? अगर यह अल्लाह के सिवा किसी और की ओर से होता तो इसमें बहुत कुछ बेमेल बयान पाया जाता।[60]

(83) ये लोग जहाँ कोई निश्चिन्तता या भय की ख़बर सुन पाते हैं उसे लेकर फैला देते हैं, हालाँकि अगर ये उसे रसूल और अपने समुदाय के ज़िम्मेदार लोगों तक पहुँचाएँ तो उससे ऐसे लोग बाख़बर हो जाएँ जो इनके बीच इस बात की योग्यता रखते हैं कि उससे सही नतीजा निकाल सकें।[61] तुम लोगों पर अल्लाह का अनुग्रह और दयालुता न होती तो (तुम्हारी कमज़ोरियाँ ऐसी थीं कि) गिने-चुने थोड़े लोगों के सिवा तुम सब शैतान के पीछे लग गए होते।

(84) अतः ऐ नबी, तुम अल्लाह की राह में लड़ो, तुम अपने-आप के सिवा किसी और के लिए ज़िम्मेदार नहीं हों। अलबत्ता ईमानवालों को लड़ने के लिए उकसाओ, असंभव नहीं कि अल्लाह अधर्मियों का ज़ोर तोड़ दे, अल्लाह का ज़ोर सबसे अधिक प्रबल और उसकी सज़ा सबसे ज़्यादा सख़्त है। (85) जो भलाई की सिफ़ारिश करेगा वह उसमें से हिस्सा पाएगा और जो बुराई की सिफ़ारिश करेगा वह उसमें से हिस्सा पाएगा, और अल्लाह हर चीज़ पर निगाह रखनेवाला है।

60. यह कलाम तो ख़ुद गवाही दे रहा है कि यह ख़ुदा के सिवा किसी दूसरे का कलाम नहीं हो सकता। किसी इनसान को यह सामर्थ्य प्राप्त नहीं कि वह वर्षों विभिन्न स्थितियों में, विभिन्न अवसरों पर, विभिन्न विषयों पर भाषण करता रहे और आरम्भ से अन्त तक उसके सारे भाषण ऐसा अनुकूल, समरस और सन्तुलित संग्रह बन जाएँ जिसका कोई भाग दूसरे भाग के विरोध में न जाए, जिसमें मत-परिवर्तन का कहीं निशान तक न मिले, जिसमें भाषणकर्ता के मन के भाव-अनुभाव अपने विभिन्न रंग न दिखाएँ, और जिसपर पुनरीक्षण तक की कभी आवश्यकता न पड़ी हो।

(86) और जब कोई आदर के साथ तुम्हें सलाम करे तो उसको उससे ज़्यादा अच्छे ढंग से जवाब दो या कम से कम उसी तरह, अल्लाह हर चीज़ का हिसा लेनेवाला है। (87) अल्लाह वह है जिसके सिवा कोई ईश (ख़ुदा) नहीं है, वह तुम सबको उस क़ियामत के दिन इकट्ठा करेगा जिसके आने में कोई सन्देह नहीं, और अल्लाह की बात से बढ़कर सच्ची बात और किसी हो सकती है।

(88) फिर यह तुम्हें क्या हो गया है कि मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) के बारे में तुम्हारे बीच दो मत पाए जाते हैं, हालाँकि जो बुराईयाँ उन्होंने कमाई हैं उनके कारण अल्लाह उन्हें उलटा फेर चुका है। क्या तुम चाहते हो कि जिसे अल्लाह ने सीधे रास्ते पर नहीं लगाया उसे तुम रास्ते से लगा दो? हालाँकि जिसको अल्लाह ने रास्ते से भटका दिया उसके लिए तुम कोई रास्ता नहीं पा सकते। (89) वे तो यह चाहते हैं कि जिस तरह वे ख़ुद अधर्मी हैं उसी तरह तुम भी अधर्मी हो जाओ ताकि तुम और वे सब समान हो जाएँ। अतः उनमें से किसी को अपना मित्र न बनाओ जब तक कि वे अल्लाह के रास्ते में घरबार छोड़कर न आ जाएँ-, और अगर वे घरबार छोड़ने (हिजरत) से बाज़ रहें तो जहाँ पाओ उन्हें पकड़ो और क़त्ल करो।[62] और उनमें से किसी को अपना दोस्त और मददगार न बनाओ। (90) हाँ, उन मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) से इस आदश का सम्बन्ध नहीं जो किसी ऐसी क़ौम से जा मिले जसिके साथ तुम्हारा समझौता है।[63] इसी

61. वह चूँकि हंगामा का समय था इसलिए हर तरफ़ अफ़वाहें उड़ रही थीं। कभी ख़तरे की निराधार अतिशयोक्तिपूर्ण सूचनाएँ मिलतीं और उनसे अचानक मदीना और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों में परेशानी फैल जाती। कभी कोई चालाक दुश्मन किसी वास्तविक ख़तरे को छिपाने के लिए निश्चिन्त कर देनेवाले समाचार भेज देता और लोग उन्हें सुनकर असावधानी में पड़ जाते। जनसाधारण इसका अन्दाज़ा नहीं कर सकते थे कि इस तरह की ग़ैर ज़िम्मेदाराना अफ़वाहें फैलाने के परिणाम कितने और कहाँ तक घातक होते हैं। उनके कान में जहाँ कोई भनक पड़ जाती उसे लेकर जगह-जगह फूँकते फिरते थे। उन्हीं लोगों की इस आयत में भर्त्सना की गई है और उन्हें कड़ाई के साथ सावधान किया गया है कि अफ़वाहें फैलाने से बाज़ रहें और हर ख़बर को जो उन तक पहुँचे ज़िम्मेदार लोगों तक पहुँचाकर चुप हो जाएँ।
62. यह आदेश उन मुनाफ़िक मुसलमानों के लिए है जो युद्धरत अधर्मी गिरोह से सम्बनन्ध रखते हों और इस्लामी हुकूमत के ख़िलाफ वैमनस्यपूर्ण कार्यवाइयों में शामिल होकर काम करें।

प्रकार उन मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) का मामला भी इससे अलग है जो तुम्हारे पास आते हैं और लड़ाई से उनका मन खिन्न हो चुका है, न तुमसे लड़ना चाहते हैं और न अपनी क़ौम से। अल्लाह चाहता तो ऐसा करता कि वे तुमपर छा जाते और वे भी तुमसे लड़ते। अतः वे तुमसे किनारा खींच लें और लड़ने से बाज़ रहें और तुम्हारी ओर सुलह और शान्ति का हाथ बढ़ाएँ तो अल्लाह ने तुम्हारे लिए उनपर हाथ बढ़ाने की कोई राह नहीं रखी है। (91) एक और तरह के मुनाफ़िक़ तुम्हें ऐसे मिलेंगे जो चाहते हैं कि तुमसे भी निर्भय होकर रहें और अपनी क़ौम से भी, मगर जब कभी उपद्रव का अवसर पाएँगे उसमें कूद पड़ेंगे। ऐसे लोग अगर तुम्हारे मुक़ाबले से बाज़ न रहें और सुलह और शान्ति तुम्हारे सामने न रखें और अपने हाथ न रोकें तो जहाँ वे मिलें उन्हें पकड़ो और मारो, उनपर हाथ उठाने के लिए हमने तुम्हें खुली सनद दे दी है।

(92) किसी ईमानवाले का यह काम नहीं है कि दूसरे ईमानवाले को क़त्ल करे, यह और बात है कि उससे चूक हो जाए। और जो आदमी किसी ईमानवाले को ग़लती से क़त्ल कर दे तो इसके गुनाह का कफ़्फ़ारा यह है कि एक ईमानवाले आदमी को गुलामी से आज़ाद करे[64] और जो क़त्ल हुआ उसके वारिसों को इसका 'ख़ूनबहा' दे,[65] यह और बात है कि वे ख़ूनबहा को छोड़ दें। लेकिन अगर वह मुसलमान क़त्ल

63. इसका अर्थ यह नहीं है कि ऐस मुनाफ़िक़ों को दोस्त और सहायक बनाया जा सकता है। बल्कि इसका अर्थ यह है कि उनको पकड़ा और मारा नहीं जा सकता क्योंकि वे ऐसे गिरोह से जा मिले हैं जिससे इस्लामी हुकूमत से अनुबन्ध या कोई समझौता है।
64. चूँकि मारा जानेवाला आदमी ईमानवाला था इसलिए उसके क़त्ल का कफ़्फ़ारा एक ईमानवाले गुलाम को आज़ाद कर देना ठहराया गया।
65. नबी (सल्ल०) ने 'ख़ूनबहा' की मात्रा सौ ऊँट, या दो सौ गाये, या दो हज़ार बकरियाँ नियत की है। अगर दूसरे किसी रूप में कोई आदमी ख़ूनबहा देना चाहे तो उसकी मात्रा इन्हीं चीज़ों के बाज़ार भाव के लिहाज से निश्चित की जाएगी। मिसाल के तौर पर नबी (सल्ल०) के ज़माने में नक़द ख़ूनबहा देनेवालों के लिए 8 सौ दीनार या 8 हज़ार दिरहम नियत थे. जब हज़रत उमर (रज़ि०) का समय आया तो उन्होंने कहा कि ऊँट का मूल्य अब चढ़ गया है, अतः अब सोने के सिक्के में एक हज़ार दीनार, या चाँदी के सिक्के में 12 हज़ार दिरहम ख़ूनबहा दिलवाया जाएगा। मगर स्पष्ट रहे कि ख़ूनबहा की यह मात्रा जो निर्धारित की गई है जान-बुझकर क़त्ल करने की स्थिती के लिए नहीं है बल्कि भूल से क़त्ल हो जाने की स्थिती में है।

होनेवाला किसी ऐसी क़ौम से था ज़िससे तुम्हारी दुश्मनी हो तो इसका कफ़्फ़ारा एक ईमानवाले ग़ुलाम को आज़ाद करना है। और अगर वह किसी ऐसी ग़ैर मुस्लिम क़ौम का आदमी था जिससे तुम्हारा समझौता हो तो उसके वारिसों को ख़ूनबहा दिया जाएगा और एक ईमानवाला ग़ुलाम आज़ाद करना होगा।[66] फिर जो ग़ुलाम न पाए वह लगातार दो मास के रोज़े रखे।[67] यह इस गुनाह से तौबा करने का तरीक़ा है[68] और अल्लाह सब कुछ जाननेवाला और गहरी समझवाला है। (93) रहा वह आदमी जो किसी ईमानवाले का जान-बूझकर क़त्ल करे तो उसकी सज़ा जहन्नम है जिसमें वह हमेशा रहेगा। उसपर अल्लाह का ग़ज़ब और उसकी लानत है और अल्लाह ने उसके लिए कठोर अज़ाब तैयार कर रखा है।

66. इस आयत के आदेशों का सारांश यह है : अगर मारा जानेवाला 'दारुल इस्लाम' (इस्लामी राज्य) का रहनेवाला है तो उसके क़ातिल को ख़ूनबहा भी देना होगा और अल्लाह से अपनी ग़लती की माफ़ी माँगने के लिए एक ग़ुलाम भी आज़ाद करना होगा। अगर वह 'दारुल हरब' अर्थात् युद्धक्षेत्र और दुश्मन के राज्य का निवासी है तो क़त्ल करनेवाले को सिर्फ़ ग़ुलाम आज़ाद करना होगा। उसका ख़ूनबहा कुछ नहीं है। अगर वह किसी ऐसे 'दारुल कुफ़्र' अर्थात् ग़ैर इस्लामी राज्य का निवासी है जिससे इस्लामी हुकूमत का अनुबन्ध या समझौता है तो क़त्ल करनेवाले को एक ग़ुलाम आज़ाद करना होगा और इसके अलावा ख़ूनबहा भी देना होगा, लेकिन ख़ूनबहा की मात्रा वही होगी जितनी अनुबन्ध करनेवाले राष्ट्र के किसी ग़ैर मुसलिम आदमी को क़त्ल कर देने की स्थिती में अनुबन्ध और समझौते के अन्तर्गत देनी चाहिए।

67. अर्थात् रोज़े लगातार रखे जाएँ, बीच में कोई नाग़ा या व्यवधान न हो। अगर कोई आदमी शरीअत में मान्य लाचारी के बिना एक रोज़ा भी बीच में छोड़ दे तो नए सिरे से रोज़ों का सिलसिला शुरू करना पड़ेगा।

68. अर्थात् यह 'जुर्माना' या दण्ड नहीं बल्कि 'तौबा' (ईश्वर की ओर लौट आना) और 'कफ़्फ़ारा' (प्रायश्चित) है। 'जुर्माने' में पश्चाताप एवं लज्जा और आत्म-शुद्धि का भाव नहीं होता, बल्कि प्रायः वह अनमने मन से विवशतापूर्वक चुकाया जाता है और क्रोध एवं घृणा और कटुता अपने पीछे छोड़ जाता है। इसके विपरीत अल्लाह चाहता है कि जिस बन्दे से भूलकर ख़ता हुई है वह इबादत और भले कर्म और हक़ की अदायगी के ज़रिये से उसका बुरा प्रभाव अपनी आत्मा पर से धो दे और शरमिन्दगी और पश्चाताप के साथ अल्लाह की ओर रुजू करे, ताकि सिर्फ़ यही नहीं कि यह गुनाह (पाप) माफ़ हो बल्कि भविष्य के लिए उसका मन ऐसी ग़लतियों को दोहराने से बचा रहे।

(94) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब तुम अल्लाह के रास्ते में लड़ने के लिए निकलो तो दोस्त और दुश्मन में अन्तर करो और जो तुम्हें सलाम करे उसे तुरन्त न कह दो कि तुम ईमान नहीं रखते। अगर तुम सांसारिक लाभ चाहते हो तो अल्लाह के पास तुम्हारे लिए बहुत-से हाथ आनेवाले माल हैं। आख़िर इसी हालत में तुम ख़ुद भी तो इससे पहले रह चुके हो, फिर अल्लाह ने तुमपर एहसान किया, अतः जाँच-परख से काम लो,[69] जो कुछ तुम करते हो अल्लाह को उसकी ख़बर है।

(95) मुसलमानों में से वे लोग जो बिना किसी कारण के घर बैठे रहते हैं और वे जो अल्लाह के मार्ग में जान और माल से जानतोड़ कोशिश करते हैं, दोनों की हैसियत समान नहीं है। अल्लाह ने बैठनेवालों की अपेक्षा जान और माल से जिहाद करनेवालों का दर्जा बड़ा रखा है। यद्यपि हर एक के लिए अल्लाह ने भलाई ही का वादा फ़रमाया

69. इस्लाम के आरम्भिक समय में 'अस-सलामु अलैकुम' (तुमपर सलामती हो) के शब्द की हैसियत मुसलमानों के लिए रीति और लक्षण की थी और एक मुसलमान दूसरे मुसलमान को देखकर यह शब्द इस अर्थ में प्रयोग करता था कि मैं तुम्हारे ही गिरोह का आदमी हूँ, मित्र और हितैषी हूँ, दुश्मन नहीं हूँ। विशेष रूप से उस समय में इस रीति का महत्त्व इस कारण से और भी अधिक था कि उस वक़्त अरब के नए मुसलमानों और अधर्मियों के बीच वस्त्र, भाषा और किसी दूसरी चीज़ में कोई स्पष्ट अन्तर न था जिसके कारण एक मुसलमान सरसरी निगाह में दूसरे मुसलमान को पहचान सकता हो। लेकिन लड़ाइयों के अवसर पर एक कठिनाई यह पेश आती थी कि मुसलमान जब किसी दुश्मन गिरोह पर आक्रमण करते और वहाँ कोई मुसलमान इस लपेट में आ जाता तो वह आक्रमण करनेवाले मुसलमानों को यह बताने के लिए कि वह भी उनका सहधर्मी भाई है ''अस-सलामु अलैकुम' या 'ला इला-ह इल्लल्लाह' (अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं) पुकारता था, मगर मुसलमानों को इसपर यह सन्देह होता था कि यह कोई अधर्मी है जो सिर्फ़ जान बचाने के लिए छल कर रहा है, इसलिए प्रायः वे उसे क़त्ल कर बैठते थे। आयत का मंशा यह है कि जो व्यक्ति अपने आपको मुसलमान के रूप में प्रस्तुत कर रहा है उसके सम्बन्ध में तुम्हें सरसरी तौर पर यह फ़ैसला कर देने का हक़ नहीं है कि वह सिर्फ़ जान बचाने के लिए झूठ बोल रहा है। हो सकता है कि वह सच्चा हो और हो सकता है कि झूठा हो। वास्तविकता तो जाँच ही से मालूम हो सकती है। जाँच-पड़ताल के बिना छोड़ देने में अगर यह संभावना है कि एक अधर्मी झूठ बोलकर जान बचा ले जाए, तो क़त्ल कर देने में इसकी संभावना भी है कि एक ईमानवाला बेगुनाह तुम्हारे हाथ से मारा जाए।

है, मगर उसके यहाँ जानतोड़ कोशिश करनेवालों की सेवाओं का बदला बैठनेवालों से बहुत ज़्यादा है, (96) उनके लिए अल्लाह की ओर से बड़े दर्जे हैं और क्षमादान और दयालुता हैं, और अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करनेवाला है।

(97) जो लोग अपने-आप पर ज़ुल्म कर रहे थे[70] उनकी आत्माओं को जब फ़रिश्तों ने खींचा तो उनसे पूछा कि यह तुम किस हाल में पड़ गए थे? उन्होंने जवाब दिया कि हम धरती में कमज़ोर और बेबस थे। फ़रिश्तों ने कहा, क्या अल्लाह की धरती विस्तृत न थी कि तुम उसमें घरबार छोड़कर कहीं चले जाते? ये वे लोग है जिनका ठिकाना जहन्नम है। और वह बड़ा ही बुरा ठिकाना है। (98) हाँ, जो मर्द, औरतें और बच्चे वास्तव में बेबस हैं और निकलने का कोई मार्ग और साधन नहीं पाते, (99) बहुत संभव है कि अल्लाह उन्हें माफ़ कर दे, अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और छोड़ देनेवाला है। (100) जो कोई अल्लाह के मार्ग में घरबार छोड़कर निकलेगा वह धरती में पनाह लेने की बहुत जगह और गुज़र-बसर के लिए बड़ी गुंजाइश पाएगा, और जो अपने घर से सब कुछ छोड़कर अल्लाह और रसूल की ओर निकले, फिर रास्ते ही में उसकी मौत हो जाए उसका बदला अल्लाह के ज़िम्मे अनिवार्य हो गया, अल्लाह बहुत क्षमाशील और दयावान[71] है।

(101) और जब तुम लोग सफ़र के लिए निकलो तो इसमें कोई हरज नहीं अगर

70. इससे मुराद वे लोग है जो इस्लाम क़बूल करने के बाद भी बिना किसी मजबूरी और लाचारी के अपने अधर्मी क़ौम ही के बीच रह रहे थे और आधा इस्लामी और आधा ग़ैर इस्लामी जीवन बसर करने पर राज़ी थे, जबकि एक 'दारुल इस्लाम' (इस्लामी राज्य) उपलब्ध हो चुका था जिसकी और हिजरत करके अपने धर्मऔर धारणा के मुताबिक़ पूरी इस्लामी ज़िन्दगी बसर करना उनके लिए संभव हो गया था और 'दारुल इस्लाम' की ओर से उनको यह आमंत्रण भी दिया जा चुका था कि अपने ईमान को बचाने के लिए वे उसकी ओर हिजरत कर आएँ।

71. यहाँ यह बात समझ लेनी चाहिए कि जिस व्यक्ति ने ईश्वरीय धर्म को मान लिया हो उसके लिए अधार्मिक प्रणाली के तहत ज़िन्दगी बसर करना सिर्फ़ दो ही स्थितियों में जाइज़ हो सकता है। एक यह कि वह इस्लाम को उस भू-भाग में प्रभुत्वशाली और अधिकार सम्पन्न कर दने और अधार्मिक प्रणाली कोइस्लामी व्यवस्था में परिवर्तित करने का संघर्ष करता रहे जिस तरह सारे नबी और उनके आरम्भिक अनुयायी करते रहे हैं। दूसरे यह कि वह वास्तव में वहाँ से निकलने की कोई राह न पाता हो और बड़ी घृणा और विरक्ति के साथ वहाँ विवशतापूर्वक रह रहा हो।

नमाज़ को संक्षिप्त कर दो[72] (विशेषतः) जबकि तुम्हें भय हो कि अधर्मी तुम्हें सताएँगे क्योंकि वे खुल्लमखुल्ला तुम्हारी दुश्मनी पर तुले हुए हैं।

(102) और ऐ नबी, जब तुम मुसलमानों के बीच हो और (लड़ाई की हालत में) उन्हें नमाज़ पढ़ाने खड़े हो तो चाहिए कि उनमें से एक गिरोह तुम्हारे साथ खड़ा हो और अपने हथियार लिए रहे, फिर जब वह सजदा कर ले तो पीछे चला जए और दूसरा गिरोह जिसने अभी नमाज़ नहीं पढ़ी है आकर तुम्हारे साथ पढ़े और वह भी चौकन्ना रहे और अपने हथियार लिए रहे,[73] क्योंकि अधर्मी इस ताक मेंहै कि तुम अपने हथियारों और अपने सामानों की ओर से तनिक असावधान हो तो वे तुमपर एक साथ टूट पड़े। अलबत्ता अगर वर्षा के कारण तकलीफ़ होती हो या बीमार हो तो हथियार रख देने में कोई हरज नहीं, मगर फिर भी चौकन्ने रहो। यक़ीन रखो कि अल्लाह ने अधर्मियों के लिए अपमानजनक यातना (अज़ाब) तैयार कर रखी है। (103) फिर जब नमाज़ से फ़ारिग़ हो जाओ तो खड़े और बैठे और लेटे हर हाल में अल्लाह को याद करते रहो। और जब ख़तरा टल जाए तो पूरी नमाज़ पढ़ो। नमाज़ वास्तव में ऐसा फ़र्ज़ है जो समय की पाबन्दी के साथ ईमानवालों के लिए अनिवार्य किया गया है।

(104) इस गिरोह का पीछा करने में कमज़ोरी न दिखाओ। अगर तुम तकलीफ़ उठा रहे हो तो तुम्हारी तरह वे भी तकलीफ़ उठा रहे हैं। और तुम अल्लाह से उस चीज़ की उम्मीद रखते हो जिसकी वे उम्मीद नहीं रखते। अल्लाह सब कुछ जानता है और वह गहरी समझवाला है।

(105) ऐ नबी, हमने यह किताब हक़ के साथ तुम्हारी ओर उतारी है ताकि जो सीधा रास्ता अल्लाह ने तुम्हें दिखाया है उसके अनुसार लोगों के बीच फ़ैसला करो। तुम विश्वासघाती लोगों की ओर से झगड़नेवाले न बनो, (106) और अल्लाह से क्षमा की प्रार्थना करो, वह बड़ा क्षमाशील और दयावान है। (107) जो लोग ख़ुद अपने साथ विश्वासघात करते हैं[74] तुम उनका पक्ष न लो। अल्लाह को ऐसा आदमी पसंद नहीं है जो विश्वासघाती और पापी हो। (108) ये लोग इनसानों से अपनी करतूतों को छिपा

72. शान्ति के समय के सफ़र में संक्षिप्त नमाज़ (क़स्र) यह है कि जिन समयों की नमाज़ में चार 'रकअतें' फ़र्ज़ है उनमें दो 'रकअतें' पढ़ी जाएँ। और लड़ाई की स्थिति में संक्षिप्त नमाज़ (कस्र) के लिए कोई सीमा निश्चित नहीं है। लड़ाई की स्थितियों में जिस तरह संभव हो, नमाज़ पढ़ी जाए।

73. भय की दशा में नमाज़ पढ़ने का यह आदेश उस स्थिति के लिए हैं जबकि दुश्मन के आक्रमण की आशंका तो हो मगर व्यावहारिक रूप से लड़ाई छिड़ी न हो।

सकते हैं मगर अल्लाह से नहीं छिपा सकते। वह तो उस समय भी इनके साथ होता है जब ये रातों को छिपकर उसकी इच्छा के विरुद्ध मशविरे करते हैं। इनके सारे कर्मों को वह अपनी परिधि में लिए हुए है। (109) हाँ! तुम लोगों ने इन अपराधियों की ओर से सांसारिक जीवन में तो झगड़ा कर लिया, पर क़ियामत के दिन इनके लिए अल्लाह से कौन झगड़ा करेगा? आख़िर वहाँ कौन इनका वकील होगा? (110) अगर कोई आदमी बुरा काम कर बैठे या ख़ुद अपने पर ज़ुल्म कर जाए और इसके बाद अल्लाह से क्षमा की प्रार्थना करे तो अल्लाह को क्षमाशील और दयावान पाएगा। (111) मगर जो बुराई कमा ले तो उसकी यह कमाई उसी के लिए वबाल होगी, अल्लाह को सब बातों की ख़बर है और वह गहरी समझवाला है और सर्वज्ञ है। (112) फिर जिसने कोई ख़ता या गुनाह करके उसका इलज़ाम किसी निरपराध पर थोप दिया उसने तो बड़े लांछन और खुले गुनाह का बोझ समेट लिया।

(113) ऐ नबी, अगर अल्लाह का अनुग्रह तुमपर न होता और उसकी दयालुता तुम्हारे साथ न होती तो उनमें से एक गिरोह ने तो तुम्हें भ्रम में डाल देने का फ़ैसला कर ही लिया था, हालाँकि वास्तव में वे ख़ुद अपने सिवा किसी को भ्रम में डाल नहीं रहे थे और तुम्हारा कोई नुकसान नहीं कर सकते थे।[75] अल्लाह ने तुमपर किताब और हिकमत (तत्त्वदर्शिता) उतारी है और तुमको वह कुछ बताया है जो तुम जानते न थे, और उसका अनुग्रह तुमपर बहुत है।

(114) लोगों की ख़ुफ़िया कानाफूसियों में बहुधा कोई भलाई नहीं होती। हाँ, अगर कोई छिपे रूप से दान या किसी भले काम के लिए उकसाए या लोगों के मामलों में सुधार के लिए किसी से कुछ कहे तो वह अलबत्ता भली बात है, और जो कोई

74. जो आदमी दूसरे के साथ विश्वासघात करता है वह वास्तव में सबसे पहले ख़ुद अपने आपके साथ विश्वासघात करता है।

75. अर्थात् अगर वे झूठे वृत्तान्त और गवाहियाँ प्रस्तुत करके तुम्हें भ्रम में डालने में सफल भी हो जाते और अपने हक़ में इनसाफ़ के ख़िलाफ़ फ़ैसला हासिल कर लेते तो हानि उन्हीं की थी, तुम्हारा कुछ भी न बिगड़ता, क्योंकि अल्लाह की दृष्टि में अपराधी वे होते न कि तुम। जो आदमी हाकिम को धोखा देकर अपने हक़ में ग़लत फ़ैसला हासिल करता है वह वास्तव में ख़ुद अपने आपको इस भ्रम में डालता है कि इन उपायों से हक़ उसके साथ हो गया, हालाँकि हक़ीक़त में अल्लाह की नज़र में हक़ जिसका है उसी का रहता है और अदालत व हाकिम की किसी ग़लतफ़हमी के कारण फ़ैसला कर देने से हक़ीक़त पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

अल्लाह की ख़ुशी चाहने के लिए ऐसा करेगा उसे हम बड़ा बदला देंगे। (115) मगर जो आदमी रसूल के विरोध पर कटिबद्ध हो और ईमानवालों के रास्ते के सिवा किसी और राह पर चले, जबकि उसपर सीधा मार्ग स्पष्ट हो चुका हो, तो उसको हम उसी ओर चलाएँगे जिधर वह ख़ुद फिर गया और उसे जहन्नम में झोंकेंगे जो सबसे बुरा ठिकाना है।

(116) अल्लाह के यहाँ बस 'शिर्क' (अनेकेश्वरवाद) ही की माफ़ी नहीं है, इसके सिवा और सब कुछ माफ़ हो सकता है जिसे वह माफ़ करना चाहे। जिसने अल्लाह के साथ किसी को साझी ठहराया वह तो गुमराही में बहुत दूर निकल गया। (117) वे अल्लाह को छोड़कर देवियों को माबूद (उपास्य) बनाते हैं। वे उस विद्रोही शैतान को माबूद बनाते हैं[76] (118) जिसपर अल्लाह की फिटकार पड़ी है। (वे उस शैतान का कहा मान रहे हैं) जिसने अल्लाह से कहा था कि "मैं तेरे बन्दों से एक निश्चित हिस्सा लेकर रहूँगा,[77] (119) मैं उन्हें बहकाऊँगा, मैं उन्हें कामनाओं में उलझाऊँगा, मैं उन्हें हुक्म दूँगा और वे मेरे हुक्म से जानवरों के कान फाड़ेंगे[78] और मैं उन्हें हुक्म दूँगा और वे मेरे हुक्म से ईश्वरीय संरचना में परिवर्तन करेंगे।"[79] उस शैतान को जिसने अल्लाह के बदले अपना दोस्त और सरपरस्त बना लिया वह खुले घाटे में पड़ गया। (120) वह इन लोगों से वादे करता है और इन्हें आशाएँ दिलाता है, मगर शैतान के सारे वादे धोखे के सिवा और कुछ नहीं हैं। (121) इन लोगों का ठिकाना जहन्नम है जिससे छुटकारे का कोई उपाय ये न पाएँगे। (122) रहे वे लोग जो ईमान ले आएँ और अच्छे काम करें, तो उन्हें हम ऐसे बाग़ों में दाखिल करें गे जिनके नीचे नहरें बहती होंगी

76. शैतान को इस अर्थ में तो कोई भी पूज्य नहीं बनाता कि उसे पूजता और उसकी आराधना करता हो और उसे ईश्वरत्व का दर्जा देता हो। अलबत्ता उसे पूज्य इस रूप में बनाया जाता है कि आदमी अपनी इच्छा (नफ़्स) की बागडोर शैतान के हाथ में दे देता है और जिधर-जिधर वह चलाता है उधर चलता है, मानो यह उसका दास है और वह इसका ईश्वर। इससे मालूम हुआ कि बिना किसी आपत्ति और संकोच के आज्ञापालन करने और अन्धी पैरवी करने का नाम भी 'इबादत' (बन्दगी) है, और जो आदमी इस प्रकार का आज्ञापालन करता है वह वास्तव में उस आदमी की बन्दगी और इबादत करता है जिसे अल्लाह को छोड़कर उसने अपना प्रभु और आज्ञा देनेवाला बनाया हो।

77. अर्थात् उनके समय में, उनकी मेहनतों और कोशिशों में, उनकी शक्तियों और योग्यताओं में, उनके माल और उनकी औलाद में अपना हिस्सा लगाऊँगा और उनको धोखा देकर ऐसा परचाऊँगा कि वे इन सारी चीज़ों का एक अच्छा-ख़ासा हिस्सा मेरी राह में ख़र्च करेंगे।

और वे वहाँ हमेशा-हमेशा रहेंगे। यह अल्लाह का सच्चा वादा है और अल्लाह से बढ़कर कौन अपनी बात में सच्चा होगा।

(123) परिणाम न तुम्हारी कामनाओं पर निर्भर करता है न किताबवालों की कामनाओं पर। जो भी बुराई करेगा उसका फल पाएगा और अल्लाह के मुक़ाबले में अपने लिए कोई समर्थक और सहायक न पा सकेगा। (124) और जो नेक काम करेगा, चाहे मर्द हो या औरत, शर्त यह है कि हो वह ईमानवाला, तो ऐसे ही लोग जन्नत में दाख़िल होंगे और उनका तनिक भी हक़ न मारा जाएगा। (125) उस आदमी से बेहतर और किसकी जीवन-प्रणाली हो सकती है जिसने अल्लाह के आगे सिर झुका दिया और अच्छी से अच्छी नीति अपनाई और एकचित्त होकर इबराहीम के तरीक़े का अनुसरण किया, उस इबराहीम के तरीक़े का जिसे अल्लाह ने अपना मित्र बना लिया था। (126) आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है अल्लाह का है और अल्लाह हर चीज़ को अपने घेरे में लिए हुए है।

(127) लोग तुमसे औरतों के विषय में फ़तवा (धर्मादेश) पुछते हैं।[80] कहो,

78. अरबरवालों को अन्धविश्वासपूर्ण रीतियों में से एक की ओर इशारा है। उनके यहाँ नियम था कि जब ऊँटनी के पाँच या दस बच्चे पैदा हो जाते तो उसके कान फाड़कर उसे अपने देवता के नाम पर छोड़ देते और उससे काम लेना हराम समझते थे। इसी तरह जिस ऊँट के वीर्य से दस बच्चे हो जाते उसे भी देवता के नाम पर पुण्य कर दिया जाता था और कान चीरना इस बात का चिह्न था कि यह पुण्य किया हुआ जानवर है।
79. ईश्वरीय संरचना में परिवर्तन करने का अर्थ चीज़ों की जन्मजात बनावट में परिवर्तन करना नहीं बल्कि वास्तव में इस जगह जिस परिवर्तन को शैतानी काम कहा गया है वह यह है कि इनसान किसी चीज़ से वह काम ले जिसके लिए अल्लाह ने उसे पैदा नहीं किया है, और किसी चीज़ से वह काम न ले जिसके लिए अल्लाह ने उसे पैदा किया है। दूसरे शब्दों में वे सभी कर्म जो इनसान अपनी और चीज़ों की प्रकृति के विरूद्ध करता है, और वे सभी तरीक़े जो वह प्रकृति के उद्देश्य से फेरने के लिए अपनाता है, इस आयत के मुताबिक़ शैतान की पथभ्रष्ट करनेवाली प्रेरणाओं के परिणाम हैं। जैसे गुदा मैथुन (क़ौमे लूत का अमल), बच्चे पैदा करने पर रोक, संन्यास, ब्रह्मचर्य, मर्दों और औरतों को बाँझ बनाना, मर्दों को हिजड़ा बनाना, औरतों को उन सेवाओं से हटाना जो प्रकृति ने उन्हें सौंपी हैं और उन्हें संस्कृति के उन क्षेत्रों में घसीट लाना जिनके लिए मर्द पैदा किया गया है।

अल्लाह तुम्हें उनके मामले में आज्ञा देता है, और साथ ही वे आदेश भी याद दिलाता है जो पहले से तुमको इस किताब में सुनाए जा रहे हैं। अर्थात् वे आदेश जो उन यतीम लड़कियों के सम्बन्ध में है जिनके हक़ तुम अदा नहीं करते और जिनके निकाह करने से तुम बाज़ रहते हो (या लालच के कारण तुम ख़ुद उनसे निकाह कर लेना चाहते हो),[81] और वे आदेश भी जो उन बच्चों के सम्बन्ध में हैं जो बेचारे कोई ज़ोर नहीं रखते। अल्लाह तुम्हें आदेश देता है कि यतीमों के साथ इन्साफ़ पर क़ायम रहो, और जो भलाई तुम करोगे वह अल्लाह के ज्ञान से छिपी न रह जाएगी।

(128) अगर किसी[82] औरत को अपने पति से दुर्व्यवहार या बेरुख़ी का ख़तरा हो तो कोई हरज नहीं कि पति और पत्नी (कुछ हक़ की कमी-बेशी पर) आपस में समझौता कर लें।[83] समझौता हर हाल में अच्छा है। मन (नफ़्स) तंगदिली की ओर जल्दी झुक जाते हैं, लेकिन अगर तुम लोग एहसान की नीति अपनाओ और ईशभय से

80. यह स्पष्ट नहीं किया कि वे क्या धर्मादेश (फ़तवा) मालूम करना चाहते थे। लेकिन आयत 128 से 130 तक में जो फ़तवा दिया गया है उससे समझ में आ जाता है कि सवाल किस तरह का था।
81. क़ुरआन के शब्द ''तर्ग़बू-न अन तनकिहू हुन्न'' का अर्थ यह भी हो सकता है कि ''तुम्हें उनसे विवाह करने की रुचि है'' और यह भी हो सकता है कि ''तुम उनसे निकाह करना पसन्द नहीं करते।''
82. यहाँ से लोगों के सवाल का जवाब शुरू होता है। सवाल यह था कि एक से ज़्यादा पत्नियाँ होने की स्थिति में न्याय का जो आदेश दिया गया है उसे व्यवहार में कैसे लाया जाए जबकि एक पत्नी आजीवन रोगी है या संभोग के योग्य नहीं रही है। क्या इस स्थिति में भी उनके लिए अनिवार्य है कि दोनों के साथ समान रूप से लगाव रखे? प्रेम में समता बनाए रहे? शारीरिक सम्बन्ध में भी समता का व्यवहार करे? और अगर वह ऐसा न करे तो क्या न्याय की शर्त का तक़ाज़ा यह है कि वह दूसरा विवाह करने के लिए पहली पत्नी को छोड़ दे? फिर इसके साथ यह कि अगर पहली पत्नी ख़ुद अलग न हो ना चाहे तो क्या पति-पत्नी में इस तरह का मालमा हो सकता है कि जो पत्नी आसक्ति से परे हो चुकी है वह ख़ुद अपने कुछ हक़ और अधिकारों को छोड़कर पति को तलाक़ से बाज़ रहने पर राज़ी कर ले? क्या ऐसा करना न्याय की शर्त के विरुद्ध तो न होगा?
83. अर्थात् तलाक़ और जुदाई से अच्छा यह है कि इस तरह आपस में समझौता करके एक औरत उसी पति के साथ रहे जिसके साथ वह जीवन का एक भाग बिता चुकी है।

काम लो तो यक़ीन रखो कि अल्लाह तुम्हारी इस व्यवहार-नीति से बेख़बर न होगा। (129) पत्नियों के बीच पूरा-पूरा न्याय करना तुम्हारे बस में नहीं है। तुम चाहो भी तो तुम्हें इसकी सामर्थ्य नहीं हो सकती। अतः (ईश्वरीय विधान का मंशा पूरा करने के लिए यह काफ़ी है कि) एक पत्नी की ओर इस तरह न झुक जाओ कि दूसरी को अधर में लटकता छोड़ दो।[84] अगर तुम अपनी व्यवहार-नीति ठीक रखो और अल्लाह से डरते रहो तो अल्लाह क्षमाशील और दया करनेवाला है। (130) लेकिन अगर पति-पत्नी एक-दूसरे से अलग ही हो जाएँ तो अल्लाह अपनी समाई से हर एक को दूसरे की मुहताजी से बेपरवाह कर देगा। अल्लाह बड़ी समाईवाला है और वह तत्त्वदर्शी है। (131) आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है सब अल्लाह ही का है। तुमसे पहले जिनको हमने किताब दी थी उन्हें भी यही आदेश दिया था और अब तुमको भी यही आदेश देते हैं कि अल्लाह से डरते हुए काम करो। लेकिन अगर तुम नहीं मानते तो न मानो, आसमान और ज़मीन कीसारी चीज़ों का मालिक अल्लाह ही है और वह निस्पृह (बेनियाज़) है, हर प्रशंसा का अधिकारी। (132) हाँ, अल्लाह ही मालिक है उन सब चीज़ों का जो आसमानों में हैं और जो ज़मीन में हैं, और काम बनाने के लिए बस वही बहुत है। (133) अगर वह चाहे तो तुम लोगों को हटाकर तुम्हारी जगह दूसरों को ले आए, और उसे इसकी पूरी सामर्थ्य प्राप्त है। (134) जो आदमी सिर्फ़ दुनिया के सवाब (भलाई) का इच्छुक हो उसे मालूम होना चाहिए कि अल्लाह के पास दुनिया का सवाब भी है और आख़िरत का सवाब (भलाई) भी, और अल्लाह सुनता और देखता है।

(135) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, इनसाफ़ के ध्वजवाहक और अल्लाह के लिए गवाह बनो यद्यपि तुम्हारा इनसाफ़ और तुम्हारी गवाही ख़ुद तुम्हारे अपने या तुम्हारे माँ-बाप और नातेदारों के विरुद्ध ही क्यों न पडती हो। मामले से सम्बन्ध रखनेवाला पक्ष

84. इस आयत से कुछ लोग यह नतीजा निकाल बैठे है कि क़ुरआन एक ओर न्याय की शर्त के साथ बहुविवाह की इजाज़त देता है और दूसरी ओर न्याय करने को असंभव ठहराकर इस अनुमति को व्यवहारतः निरस्त कर देता है। लेकिन वास्तव में ऐसा नतीजा निकालने के लिए इस आयत में कोई गुंजाइश नहीं है। अगर सिर्फ़ इतना ही कहकर छोड़ दिया होता कि "तुम औरतों के बीच न्याय नहीं कर सकते" तो यह नतीजा निकाला जा सकता था, मगर इसके बाद ही यह जो कहा गया कि "अतः एक पत्नी की ओर बिलकुल न झुक पड़ो" इस वाक्य ने कोई अवसर उस अर्थ के लिए बाक़ी नहीं छोड़ा जो मसीही यूरोप का अनुसरण करनेवाले लोग इससे निकालना चाहते हैं।

चाहे मालदार हो या ग़रीब, अल्लाह तुमसे अधिक उनका हितैषी है। अतः अपनी इच्छा के अनुपालन में न्याय से न हटो। और अगर तुमने लगी-लिपटी बात कही या सच्चाई से पहलू बचाया तो जान रखो कि जो कुछ तुम करते हो अल्लाह को उसकी ख़बर है।

(136) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, ईमान लाओ अल्लाह पर और उसके रसूल पर और उस किताब पर जो अल्लाह ने अपने रसूल पर उतारी है और हर उस किताब पर जो इससे पहले वह उतार चुका है।[85] जिसने अल्लाह और उसके फ़रिश्तों और उसकी किताबों और उसके रसूलों और आख़िरत के दिन का इनकार किया[86] वह गुमराही में भटककर बहुत दूर निकल गया। (137) रहे वे लोग जो ईमान लाए, फिर इनकार किया, फिर ईमान लाए, फिर इनकार किया, फिर अपने इनकार में बढ़ते चले गए, तो अल्लाह हरगिज़ उनको माफ़ न करेगा और न कभी उनको सीधा मार्ग दिखाएगा। (138,139) और जो मुनाफ़िक़ (पाखण्डी), ईमानवालों को छोड़कर अधर्मियों को अपना साथी बनाते हैं उन्हें यह मंगल-समाचार सुना दो कि उनके लिए दर्दनाक सज़ा तैयार है। क्या ये लोग इज़्ज़त की चाह में उनके पास जाते हैं? हालाँकि इज़्ज़त तो सारी की सारी अल्लाह ही के लिए है। (140) अल्लाह इस किताब में तुमको पहले ही आदेश दे चुका है कि जहाँ तुम सुनो कि अल्लाह की आयतों के ख़िलाफ़ अधर्म बका जा रहा है और उनकी हँसी उड़ाई जा रही है वहाँ न बैठो जब तक कि लोग किसी दूसरे बात में न लग जाएँ। अब अगर तुम ऐसा करते हो तो तुम भी उन्हीं की तरह हो। विश्वास करो कि अल्लाह मुनाफ़िक़ों (कपटाचारीयों) और अधर्मियों को जहन्नम में एक जगह जमा करनेवाला है। (141) ये मुनाफ़िक़ तुम्हारे मामले में इनतिज़ार कर रहे

85. ईमान लानेवालों से कहना कि ईमान लाओ, ज़ाहिर में विचित्र मालूम होता है। लेकिन वास्तव में यहाँ 'ईमान' शब्द दो विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। ईमान लाने का एक अर्थ यह है कि आदमी इनकार के बदले स्वीकार की नीति अपनाए, न माननेवालों से अलग होकर माननेवालों में शामिल हो जाए। और इसका दूसरा अर्थ यह है कि आदमी जिस चीज़ को माने उसे सच्चे दिल से माने, पूरी गंभीरता और निष्ठा के साथ माने। आयत में सम्बोधन उन सभी मुसलमानों से है जो पहले अर्थ के अनुसार 'माननेवालों' में गिने जाते हैं। और उनसे माँग यह की गई है कि दूसरे अर्थ के अनुसार सच्चे ईमानवाले बनें।

86. इनकार (कुफ़्र) करने के भी दो अर्थ हैं। एक यह कि आदमी साफ़-साफ़ इनकार कर दे। दूसरे यह कि ज़बान से तो माने मगर दिल से न माने, या अपने रवैये से साबित कर दे कि वह जिस चीज़ को मानने का दावा कर रहा है वास्तव में उसे नहीं मानता।

हैं (कि ऊंट किस करवट बैठता है)। अगर अल्लाह की ओर से विजय तुम्हारी हुई तो आकर कहेंगे कि क्या हम तुम्हारे साथ न थे? अगर अधर्मियों का पल्ला भारी रहा तो उनसे कहेंगे कि क्या हमें तुम्हारे विरुद्ध लड़ने की सामर्थ्य प्राप्त न थी और फिर भी हमने तुमको मुसलमानों से बचाया? बस अल्लाह ही तुम्हारे और उनके मामले का फ़ैसला क़ियामत के दिन करेगा और (इस फ़ैसले में) अल्लाह ने अधर्मियों के लिए मुसलमानों पर प्रभुत्व पाने की हरगिज़ कोई राह नहीं रखी है।

(142) ये मुनाफ़िक़ अल्लाह के साथ धोखेबाज़ी कर रहे हैं हालाँकि वास्तव में अल्लाह ही ने इन्हें धोखे में डाल रखा है। जब ये नमाज़ के लिए उठते हैं तो कसमसाते हुए सिर्फ़ लोगों को दिखाने के लिए उठते हैं और अल्लाह को याद थोड़े ही करते हैं। (143) इनकार और ईमान के बीच डाँवाँडोल हैं। न पूरे इस ओर है न पूरे उस ओर। जिसे अल्लाह ने भटका दियाहो उसके लिए तुम कोई रास्ता नहीं पा सकते।[87]

(144) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, ईमानवालों को छोड़कर अधर्मियों को अपना साथी न बनाओ। क्या तुम चाहते हो कि अल्लाह को अपने विरुद्ध स्पष्ट तर्क दे दो? (145) विश्वास करो कि मुनाफ़िक़ जहन्नम के सबसे नीचे खण्ड में जाएँगे और तुम किसी को उनका सहायक न पाओगे। (146) अलबत्ता जो उनमें से तौबा कर लें और अपनी नीति को सुधार लें और अल्लाह का दामन थाम लें और अपने दीन (धर्म) को निष्ठापूर्वक अल्लाह ही के लिए कर दें, ऐसे लोग ईमानवालों के साथ हैं और अल्लाह ईमानवालों को ज़रूर बड़ा बदला प्रदान करेगा। (147) आख़िर अल्लाह को क्या पड़ी है कि तुम्हें अकारण सज़ा दे अगर तुम शुक्रगुज़ार बन्दे बने रहो और ईमान की नीति पर चलो। अल्लाह बड़ा गुणग्राहक[88] और सबके हाल से परिचित है।

(148) अल्लाह इसको पसन्द नहीं करता कि आदमी अपशब्द के साथ ज़बान खोले, यह और बात है कि किसी पर ज़ुल्म किया गया हो,[89] और अल्लाह सब कुछ

87. अर्थात् जिसे ईश-वाणी और उसके रसूल की जीवनी से सीधा मार्ग न मिला हो, जिसको सच्चाई से विमुख और असत्य-प्रियता की ओर झुका देखकर अल्लाह ने भी उसी ओर फेर दिया हो जिस ओर वह ख़ुद फिरना चाहता था, और जिसकी पथभ्रष्टता के इच्छुक होने के कारण अल्लाह ने उसपर मार्गदर्शन के दरवाज़े बन्द कर दिए हों और सिर्फ़ पथभ्रष्टता ही के रास्ते खोल दिए हों, ऐसे व्यक्ति को सीधी राह दिखाना वास्तव में किसी इनसान के बस का काम नहीं है।

88. शुक्र जब बन्दे की ओर से हो तो उपकार माने या एहसानमन्दी के अर्थ में होता है और जब अल्लाह की ओर से हो तो गुणग्राहकता या क़द्रदानी के अर्थ में।

सुनने और जाननेवाला है। (149) (अगर तुमपर ज़ुल्म हुआ है तो यद्यपि तुम्हें हक़ है कि बुराई बयान करो) लेकिन अगर तुम खुले और छिपे में भलाई ही किए जाओ, या कम से कम बुराई को माफ़ कर दो, तो अल्लाह (का गुण भी यही है कि वह) बड़ा माफ़ करनवाला है (हालाँकि सज़ा देने की) पूरी सामर्थ्य उसे प्राप्त है।

(150) जो लोग अल्लाह और उसके रसूलों के साथ इनकार की नीति अपनाते हैं, और चाहते हैं कि अल्लाह और उसके रसूलों के बीच अन्तर करें, और कहते हैं कि हम किसी को मानेंगे और किसी को न मानेंगे, और इनकार और ईमान के बीच में एक राह निकालना चाहते हैं, (151) वे सब पक्के अधर्मी हैं और ऐसे अधर्मियों के लिए हमने वह सज़ा तैयार कर रखीहै जो उन्हें अपमानित कर देनेवाली होगी—(152) इसके विपरीत जो लोग अल्लाह और उसके सभी रसूलों को माने और उनके बीच अन्तर न करें, उनको हम ज़रूर उनका बदला देंगे, और अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और रहम करनवाला है।

(153) ऐ नबी, ये किताबवाले अगर आज तुमसे माँग कर रहे हैं कि तुम आसमान से कोई लेख उनपर अवतरित कराओ तो इससे बढ़-चढ़कर अपराधजनक माँगें ये पहले मूसा से कर कुचे हैं। उससे तो इन्होंने कहा था कि हमें अल्लाह को खुल्लमखुल्ला दिखा दो और इसी सरकशी के कारण अचानक इनपर बिजली टूट पड़ी थी। फिर इन्होंने बछड़े को अपना माबूद (उपास्य) बना लिया, हालाँकि ये खुली-खुली निशानियाँ देख चुके थे। इसपर भी हमने इन्हें माफ़ किया। हमने मूसा को स्पष्ट आदेश प्रदान किया था (154) और इन लोगों पर तूर (पर्वत) को उठाकर इनसे (उस आदेश के अनुपालन का) पक्का वादा लिया था। हमने इनको आदेश दिया कि दरवाज़े में सजदा करते हुए दाखिल हो।[90] हमने इनसे कहा कि सब्त का क़ानून न तोड़ो और इसपर इनसे पक्का वादा लिया। (155) आख़िरकार इनके प्रतिज्ञा-भंग करने के कारण, और इस कारण कि इन्होंने अल्लाह की आयतों को झुठलाया, और अनेक पैग़म्बरों को नाहक क़त्ल किया, और यहाँ तक कहा कि हमारे दिल आवरणों में सुरक्षित हैं[91] —हालाँकि वासतव में इनके अधर्म के कारण अल्लाह ने इनके दिलों पर ठप्पा लगा दिया है और इसी कारण ये बहुत कम ईमान लाते हैं (156)—फिर अपने

89. अर्थात् उत्पीड़ित व्यक्ति (मज़लूम) को हक़ पहुँचता है कि ज़ालिम के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाए।

90. इसका उल्लेख सूरा 2 (अल-बक़रा) आयत 58-59 में हो चुका है।

91. अर्थात् तुम चाहे कुछ कहो, हमारे दिलों पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता।

इनकार में ये इतने बढ़े कि मरयम पर बड़ा लांछन लगाया, (157) और ख़ुद कहा कि हमने मसीह ईसा, मरयम के बेटे, अल्लाह के रसूल का क़त्ल कर दिया है[92] —हालाँकि वास्तव में इन्होंने न उसकी हत्या की, न सूली पर चढ़या बल्कि मामला इनके लिए संदिग्ध कर दिया गया।[93] और जिन लोगों नें इसके विषय में मतभेद किया है वे भी वासतव में शक में पड़े हुए हैं, उनके पास इस मामले में कोई ज्ञान नहींहै, सिर्फ़ अटकल पर चल रहे हैं। उन्होंने मसीह को, यक़ीनन क़त्ल नहीं किया (158) बल्कि अल्लाह ने उसको अपनी ओर उठा लिया, अल्लाह ज़बरदस्त ताक़त रखनेवाला और तत्त्वदर्शी है। (159) और किताबवालों में से कोई ऐसा न होगा जो उसकी मौत से पहले उसको मान न लेगा[94] और क़ियामत के दिन वह उसपर गवाही देगा, (160,161)— सारांश यह कि इन यहूदियों की इसी अत्याचारपूर्ण नीति के कारण, और इस कारण कि ये बहुधा अल्लाह के मार्ग से रोकते हैं, और ब्याज लेते हैं जिससे इन्हें रोका गया था, और लोगों के माल नाजाइज़ तरीकों से खाते हैं, हमने बहुत-सी वे अच्छी-पाक चीज़ें इनके लिए हराम (अवैध) कर दीं, जो पहले इनके लिए हलाल (वैध) थी,[95] और जो लोग इनमें से इनकार करनवाले हैं उनके लिए हमने दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है। (162) मगर उनमें जो लोग ज्ञान में पक्के हैं और ईमानदार हैं वे सब उस शिक्षा पर

92. अर्थात् अपराधवृत्ति का दुस्साहस इतना बढ़ा हुआ था कि रसूल को रसूल जानते थे और फिर उसकी हत्या कर ड़ाली और गर्व से कहा कि हमने अल्लाह के रसूल की हत्या की है। इस अवसर पर अगर सूरा 19 (मरयम) आयत 16-40 को हमारे फुटनोट के साथ पढ़ लिया जाए तो मालूम हो जाएगा कि इसराईली हज़रत ईसा (अलै॰) को वास्तव में रसूल जानते थे और इसके बावजूद उन्होंने अपने जानते उन्हें सूली पर चढ़ा दिया।

93. यह आयत स्पष्ट करती है कि हज़रत मसीह (अलै॰) सूली पर चढाए जाने से पहले ही उठा लिए गए थे और यह कि ईसाइयों और यहूदियों, दोनों का यह विचार था कि मसीह ने सलीब (सूली) पर जान दी, सिर्फ़ भ्रम और ग़लतफ़हमी पर आधारित है। इससे पहले कि यहूदी आपको सूली पर चढ़ाते अल्लाह ने किसी समय उन्हें उठा लिया और बाद में यहूदियों ने जिस व्यक्ति को सूली पर चढ़ाया वह कोई और व्यक्ति था जिसको न जाने किस कारण से इन लोगों ने मरयम का बेटा ईसा समझ लिया।

94. इस वाक्य के दो अर्थ लिए गए हैं और शब्दों मे दोनों की समान रूप से संभावना है। एक अर्थ वह जो हमने अनुवाद में लिया है। दूसरा यह कि ''किताबवालों में से कोई ऐसा नहीं जो अपनी मौत से पहले मसीह (अलै॰) पर ईमान ले आए।''

ईमान लाते हैं जो ऐ नबी, तुम्हारी और उतारी गई है और जो तुमसे पहले उतारी गई थी। इस तरह के ईमान लानेवाले और नामज़ और ज़कात की पाबन्दी करनेवाले और अल्लाह और आख़िरत के दिन पर सच्चा ईमान रखनेवाले लोगों को हम ज़रूर ही बड़ा बदला देंगे।

(163) ऐ नबी, हमने तुम्हारी ओर उसी तरह 'वह्य' (प्रकाशना) भेजी है जिस तरह नूह और उसके बाद के पैग़म्बरों की ओर भेजी थी। हमने इबराहीम, इसमाईल, इसहाक़, याक़ूब और याक़ूब की सन्तान, ईसा, अय्यूब, यूनुस, हारून और सुलैमान की ओर प्रकाशना भेजी। हमने दाऊद को ज़बूर दी। (164) हमने उन रसूलों पर भी प्रकाशना भेजी जिनकी चर्चा हम इससे पहले तुमसे कर चुके हैं और उन रसूलों पर भी जिनकी चर्चा तुमसे नहीं की। हमने मूसा से इस तरह बातचीत की जिस तरह बातचीत की जाती है। (165) ये सारे रसूल ख़ुशख़बरी देनेवाले और डरानेवाले बनाकर भेजे गए थे ताकि उनको भेज देने के बाद लोगों के पास अल्लाह के मुक़ाबले में कोई तर्क न रहे[96] और अल्लाह हर हाल में प्रभावशाली और तत्त्वदर्शी है। (166) (लोग नहीं मानते तो न मानें) मगर अल्लाह गवाही देता है कि ऐ नबी, जो कुछ उसने तुमपर उतारा है अपने ज्ञान से उतारा है और इसपर फ़रिश्ते भी गवाह हैं, यद्यपि अल्लाह का गवाह होना बिलकुल काफ़ी है। (167) जो लोग इसको मानने से ख़ुद इनकार करते हैं और दूसरों को अल्लाह के रास्ते से रोकते हैं वे यक़ीनन गुमराही में हक़ से बहुत दूरनिकल गए हैं। (168-169) इस तरह जिन लोगों ने इनकार और विद्रोह की नीति अपनाई और अन्याय और अत्याचार पर उतर आए अल्लाह उनको हरगिज़ माफ़ न करेगा और उन्हें

95. सम्भवतः यह उसी विषय की ओर संकेत है जो आगे सूरा 6 (अनआम) आयत 146 में आनेवाला है। अर्थात् इसराईलियों के लिए वे सभी जानवर हराम (वर्जित) कर दिए गए जिनके नाख़ुन होते हैं, और उनपर गाय और बकरी की चरबी भी हराम कर दी गई। इसके अलावा सम्भव है कि संकेत उन दूसरे प्रतिबन्धनों और सख़्तियों की ओर भी हो जो यहूदी धर्मशास्त्र में पाई जाती हैं। किसी गिरोह के लिए ज़िन्दगी व दायरे को तंग कर दिया जाना वस्तुतः उसके हक़ में एक तरह की सज़ा ही है।

96. अर्थात् इन तमाम पैग़म्बरों के भेजने का एक ही उद्देश्य था, वह यह था कि अल्लाह मानव जाति पर तर्क-पूर्ति करना चाहता था ताकि अन्तिम न्याय के अवसर पर कोई गुमराह अपराधी उसके सामने यह विवशता प्रस्तुत न कर सके कि हम नहीं जानते थे और अपने इस हालत की हक़ीक़त से आगाह करने का कोई प्रबन्ध नहीं किया था।

कोई मार्ग जहन्नम के मार्ग के सिवा न दिखाएगा जिसमें वे हमेशा रहेंगे, अल्लाह के लिए यह कोई कठिन काम नहीं है।

(170) लोगो, यह रसूल तुम्हारे पास तुम्हारे रब की ओर से सत्य लेकर आ गया है, ईमान ले आओ, तुम्हारे ही लिए बेहतर है, और अगर इनकार करते हो तो जान लो कि आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है सब अल्लाह का है और अल्लाह सब कुछ जाननेवाला भी है और गहरी समझवाला भी।[97]

(171) ऐ किताबवालो, अपने दीन (धर्म) में हद से आगे न बढ़ो[98] और अल्लाह से लगाकर सत्य के सिवा कोई बात न कहो। मसीह मरयम का बेटा ईसा इसके सिवा कुछ न था कि अल्लाह का एक रसूल था और एक आदेश था जो अल्लाह ने मरयम की ओर भेजा[99] और एक आत्मा थी अल्लाह की ओर से[100] (जिसने मरयम के गर्भ में बच्चे का रूप धारण किया। अतः तुम अल्लाह और उसके रसूलों को मानो और न कहो कि ''तीन'' हैं।[101] बाज़ आ जाओ, यह तुम्हारे ही लिए बेहतर है। अल्लाह तो

97. अर्थात् तुम्हारा ख़ुदा न तो बेख़बर है कि उसके राज्य में रहते हुए तुम शरारतें करो और उसे मालूम न हो, और न वह नादान है कि उसे अपने आदेशों का उल्लंघन करनेवालों से निपटने का तरीक़ा न आता हो।

98. यहाँ किताबवालों से मुराद ईसाई हैं और अत्युक्ति (ग़ुलू) का अर्थ है किसी चीज़ के समर्थन में सीमा से आगे बढ़ जाना। यहूदियों का अपराध तो यह था कि वे मसीह के इनकार और विरोध में हद से आगे बढ़ गए और ईसाइयों का अपराध यह है कि वे मसीह के प्रति श्रद्धा और प्रेम में सीमा पार कर गए और उनको ईश्वर का पुत्र बल्कि प्रत्यक्षतः ईश्वर ठहरा लिया।

99. मूल ग्रन्थ में 'कलिमा' शब्द प्रयुक्त हुआ है, मरयम की ओर कलिमा भेजने का अर्थ यह है कि अल्लाह ने हज़रत मरयम (अलै॰) के गर्भाशय पर यह आदेश अवतरित किया कि किसी मर्द के वीर्य से सिंचित हुए बिना गर्भ धारण कर ले। ईसाइयों ने पहले शब्द कलिमा को 'कलाम' (वाणी) या वाक्शक्ति का पर्याय समझ लिया फिर इस वाणी और वाक्शक्ति का अभिप्राय अल्लाह का निजी वाक्-गुण ठहरा लिया, फिर अनुमान से यह धारणा बनाई कि अल्लाह के इस निजी गुण ने मरयम (अलै॰) के गर्भ में प्रवेश करके वह शारीरिक रूप धारण किया जो मसीह के रूप में प्रकट हुआ. इस तरह ईसाइयों में मसीह (अलै॰) के ईश्वरत्व की ग़लत धारणा ने जन्म लिया और इस असत्य कल्पना ने जड़ पकड़ ली कि ईश्वर ने ख़ुद अपने आपको या अपने शश्वत गुणों में से वाक्शक्ति और वाणी के गुण को मसीह के रूप में प्रकट किया है।

बस एकही ईश्वर है। वह पाक है इससे कि कोई उसका बेटा हो।[102] ज़मीन और

100. यहाँ ख़ुद मसीह को 'रुहुम मिनहु' (अल्लाह की ओर से एक आत्मा) कहा गया है, और सूरा बक़रा आयत 87 में इस बात को इस तरह पेश किया गया है कि ''हमने पवित्र आत्मा से मसीह की सहायता की''। दोनों वर्णनों का अर्थ यह है कि अल्लाह ने मसीह (अलै॰) को वह पवित्र आत्मा प्रदान की थी जो बुराई से अपरिचित थी, सर्वथा सत्यता और सत्यप्रियता थी, और सिर से पैर तक नैतिक श्रेष्ठता का स्वरूप थी। ईसाइयों ने इसमें भी अत्युक्ति से काम लिया 'रुहुम मिनल्लाह' (अल्लाह की ओर से एक आत्मा) को ख़ुद अल्लाह की आत्मा ठहरा लिया, और 'रुहुल क़ुदुस' (पवित्र आत्मा) का अर्थ यह लिया कि अल्लाह की अपनी पवित्र आत्मा थी जो मसीह के भीतर प्रविष्ट होकर आत्मसात हो गई थी। इस तरह अल्लाह और मसीह के साथ एक तीसरा ईश्वर 'रुहुल क़ुदुस' (पवित्र आत्मा) को बना डाला गया।

101. अर्थात् तीन ईश्वर होने की धारणा को छोड़ दो चाहे वह किसी रूप में तुम्हारे अन्दर पाई जाती हो। वास्तविकता यह है कि ईसाई एक साथ एकेश्वरवाद को भी मानते हैं और त्रीश्वरवाद को भी। मसीह (अलै॰) के जो स्पष्ट शब्द इंजीलों में मिलते हैं उनके आधार पर कोई ईसाई इससे इनकार नहीं कर सकता कि ईश्वर बस एक ही ईश्वर है और उसके सिवा कोई दूसरा ईश्वर नहीं है। उनके लिए यह स्वीकार कर लेने के अलावा कोई उपाय नहीं है कि एकेश्वरवाद मूल धर्म है। मगर इसके बावजूद मसीह के व्यक्तित्व में अत्युक्ति के कारण वे त्रीश्वरवाद को भी मानते हैं और आज तक यह फ़ैसला न कर सके कि इन दो परस्पर विरोधी धारणाओं को एक साथ कैसे निबाहें।

102. यह ईसाइयों की चौथी अत्युक्ति का खण्डन है। ईसाई पुरातन कथन अगर सत्य भी हों तो उनसे (विशेषतः पहली तीन इंजीलों से) ज़्यादा से ज़्यादा बस इतना ही साबित होता है कि मसीह (अलै॰) ने अल्लाह और बन्दों के सम्बन्ध को बाप और औलाद के सम्बन्ध की उपमा दी थी और 'बाप' शब्द ईश्वर के लिए वे केवल उपलक्ष्य और व्यंजना और शब्दालंकार के रूप में प्रयोग करते थे। यह अकेले मसीह ही की कोई विशेषता नहीं है। बहुत प्राचीन काल से इसराईली ख़ुदा के लिए बाप का शब्द बोलते चले आ रहे थे और इसकी बहुत ज़्यादा मिसाले बाइबल के पुराने धर्मनियम में मौजूद हैं। मसीह ने यह शब्द अपनी जातिवालों के मुहावरों के अनुसार ही प्रयोग किया था और वे ईश्वर को केवल अपना ही नहीं बल्कि सब इनसानों का बाप कहते थे। लेकिन ईसाइयों ने यहाँ फिर अत्युक्ति से काम लिया और मसीह को ईश्वर का इकलौता बेटा घोषित कर दिया।

आसमानों की सारी चीज़ों का वही मालिक है, और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति और उनकी ख़बर रखने के लिए बस वही काफ़ी है।

(172) मसीह ने कभी इस बात को अपने लिए बुरा नहीं समझा कि वह अल्लाह का बन्दा हो, और न निकटवर्ती फ़रिश्ते इसको अपने लिए बुरा समझते हैं। अगर कोई अल्लाह की बन्दगी को अपने लिए बुरा समझता है और घमंड करता है तो एक समय आएगा जब अल्लाह सबको घेरकर अपने सामने हाज़िर करेगा। (173) उस समय वे लोग जिन्होंने ईमान लाकर अच्छे काम किए हैं अपनी मज़दूरियाँ पूरी-पूरी पाएँगे और अल्लाह अपने अनुग्रह से उन्हें और अधिक मज़दूरी देगा, और जिन लोगों ने बन्दगी को बुरा समझा और घमंड किया है उनको अल्लाह दर्दनाक सज़ा देगा और अल्लाह के सिवा जिन-जिन की सरपरस्ती और सहायता पर वे भरोसा रखते हैं उनमें से किसी को भी वे वहाँ न पाएँगे।

(174) लोगो, तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे पास खुला प्रमाण आ गया है। और हमने तुम्हारी ओर ऐसा प्रकाश भेज दिया है जो तुम्हें साफ़-साफ़ रास्ता दिखानेवाला है। (175) अब जो लोग अल्लाह की बात मान लेंगे और उसकी पनाह ढूँढेंगे उनको अल्लाह अपनी रहमत और अपने अनुग्रह व अनुदान के दामन में ले लेगा और अपनी ओर आने का सीधा मार्ग उनको दिखा देगा।

103. यहाँ मूल ग्रन्थ में 'कलाला' शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'कलाला' के अर्थ में मतभेद है। कुछ लोगों के मतानुसार 'कलाला' वह व्यक्ति है जो निस्सन्तान भी हो और जिसके बाप और दादा भी जिन्दा न हों। और कुछ लोगों के विचार में सिर्फ़ निस्सन्तान मरनेवाले को 'कलाला' कहा जाता है। किन्तु आम धर्मविधान व उलमा ने हज़रत अबू बक्र (रजि॰) के इस मत को स्वीकार कर लिया है कि यह पहले रूप के ही अर्थ में है। और ख़ुद क़ुरआन से भी इसकी पुष्टि होती है क्योंकि यहाँ 'कलाला'की बहन को आधे तरके का वारिस ठहराया गया है, हालाँकि अगर 'कलाला' का बाप ज़िन्दा हो तो बहन को सिरे से कोई हिस्सा पहुँचता ही नहीं।

104. यहाँ उन भाई-बहनों की मीरास का उल्लेख किया जा रहा है जो मरनेवाले के साथ माँ-बाप दोनों ओर से सगे हो या सिर्फ़ बाप सगा हो। हज़रत अबू बक्र (रजि॰) ने एक बार एक भाषण में यही अर्थ बयान किया था और सहाबा में से किसी ने इसके बारे में अपना मतभेद प्रकट नहीं किया, इसलिए यह बात ऐसी है जिसपर सब एकमत हैं।

(176) ऐ नबी, लोग तुमसे उनके बारे में आदेश मालूम करना चाहते हैं जिनके प्रत्यक्ष वारिस न हों।[103] कहो अल्लाह तुम्हें आदेश देता है। अगर कोई आदमी बिना औलाद मर जाए और उसकी एक बहन हो[104] तो वह उसके छोड़े हुए माल में से आधा पाएगी, और अगर बहन बिना औलाद मरे तो भाई उसका वारिस होगा।[105] अगर मरनेवाले की वारिस दो बहने हों तो वे तरके में से दो तिहाई की हक़दार होंगी,[106] और अगर कई भाई-बहने हों तो औरतों का एकहरा और मर्दों का दोहरा हिस्सा होगा। अललाह तुम्हारे लिए आदेशों को स्पष्ट करता है ताकि तुम भटकते न फिरो और अल्लाह को हर चीज़ का ज्ञान है।

● ● ●

105. अर्थात् भाई उसके पूरे माल का वारिस होगा अगर कोई और हिस्सेदार न हो। और अगर कोई हिस्सेदार मौजूद हो, जैसे पति, तो उसका हिस्सा अदा करने के बाद बाक़ी तमाम तरकाभाई को मिलेगा।

106. यही आदेश दो से ज़्यादा बहनों का भी है।

5. अल-माइदा

नाम

इस सूरा का नाम सूरा की आयत 112 के शब्द माइदा (खाने से भरा दस्तरख़ान) से उद्धृत है।

अवतरणकाल

सूरा की विषय-वस्तुओं से ज़ाहिर होता है और उल्लेखों से भी इसकी पुष्टि होती है कि यह हुदैबिया की संधि के बाद सन् 6 हिजरी के अन्त के समयों या सन् 7 हिजरी के आरंभिक समयों में अवतरित हुई है। ज़ीक़ादा सन 6 हिजरी की घटना है कि नबी (सल्ल०) ने चौदह सौ मुसलमानों के साथ उमरा अदा करने के लिए मक्का पदार्पण किया किन्तु क़ुरैश के अधिकारियों ने शत्रुता के आवेग़ में अरब की प्राचीनतम धार्मिक रीतियों के विपरीत आपको उमरा न करने दिया और बड़े विवाद के पश्चात् यह बात क़बूल की कि अगले साल आप दर्शन के लिए आ सकते हैं। इस अवसर पर ज़रूरत पेश आई कि मुसलमानों को एक तरफ़ तो काबा के दर्शन के लिए यात्रा के शिष्ट नियम बताए जाएँ और दूसरी तरफ़ उन्हें ताकीद की जाए कि दुश्मन अधर्मियों ने उनको उमरा से रोककर जो ज़्यादती की है उसके जवाब में वे स्वयं कोई ज़्यादती न करें कि यह अवैध होगा। इसलिए कि बहुत-से अधर्मी क़बीलों के हज का रास्ता इस्लामी अधिकृत भूभागों से गुज़रता था और मुसलमानों के लिए यह संभव था कि जिस तरह उन्हें काबा के दर्शन से रोका गया है उसी तरह वे भी उन्हें रोक दें।

अवतरण की पृष्ठभूमि

सूरा 3 (आले इमरान) और सूरा 4 (निसा) के अवतरण से इस सूरा के अवतरण तक पहुँचते-पहुँचते परिस्थितियों में बहुत बड़ा परिवर्तन हो चुका था। या तो वह समय था कि उहुद के युद्ध के आघात ने मुसलमानों के लिए मदीना के निकटवर्ती वातावरण को भी ख़तरनाक बना दिया था या अब यह समय आ गया कि अरब में इस्लाम एक ऐसी शक्ति के रूप में दिखाई देने लगा जिसे पराजित न किया जा सकता हो और इस्लमी राज्य एक तरफ़ नजद तक, दूसरी तरफ़ सीरिया की सीमाओं तक, तीसरी तरफ़ लाल सागर के तट तक और चौथी तरफ़ मक्का के निकट तक फैल गया। अब इस्लाम मात्र एक धारणा और मत ही न था जिसका शासन केवल दिलों और दिमाग़ों तक सीमित हो, बल्कि वह एक राज्य भी था। जिसका शासन व्यवहारतः उसकी अपनी सीमाओं में रहनेवाले सभी लोगों को अपनी परिधि में लिए हुए था।

फिर इन कुछ वर्षों में इस्लामी सिद्धांत और दृष्टिकोण के अनुसार मुसलमानों की अपनी एक स्थायी सभ्यता बन चुकी थी जिसे जीवन के समस्त विस्तृत क्षेत्रों में दूसरों से भिन्न अपनी एक विशिष्ट गरिमा प्राप्त थी। नैतिकता, सामाजिकता, नागरिकता प्रत्येक चीज़ में अब मुसलमानों की ग़ैर-मुस्लिमों से बिलकुल अलग पहचान बन चुकी थी। इस्लामी जीवन का ऐसा परिपूर्ण रूप निखर जाने के बाद ग़ैर-मुस्लिम दुनिया उसकी ओर से बिलकुल निराश हो चुकी थी कि ऐसे लोग जिनकी अपनी एक अलग नागरिकता बन चुकी है फिर कभी उनसे आ मिलेंगे। हुदैबिया की संधि से पहले तक मुसलमानों के रास्ते में एक बड़ी रुकावट यह थी कि वे काफ़िरों के साथ एक सशक्त संघर्ष में उलझे हुए थे और उन्हें अपने संदेश के प्रचार-प्रसार का क्षेत्र विस्तृत करने का अवसर न मिलता था। इस रुकावट को हुदैबिया की बाह्य पराजय और वास्तविक विजय ने दूर कर दिया। इससे उनको न केवल यह कि अपने राज्य के क्षेत्र में निश्चितता प्राप्त हो गई बल्कि इतना अवसर भी मिल गया कि वे आसपास के भू-भागों में इस्लाम के संदेश को लेकर फैल जाएँ।

वार्ताएँ

ये परिस्थितियाँ थी जब यह सूरा अल-माइदा अवतरित हुई। यह सूरा निम्नलिखित तीन बड़े-बड़े विषयों पर आधारित है :

(1) मुसलमानों की धार्मिक नागरिकता सम्बन्धी और राजनैतिक जीवन के सम्बन्ध में तद्अधिक आदेश और निर्देश :– इस सिलसिले में हज की यात्रा के प्रतिष्ठित नियम निर्धारित किए गए। अल्लाह की निशानियों का आदर और काबा के दर्शनार्थियों को न छेड़ने का आदेश दिया गया, खाने-पीने की चीज़ों में हलाल और हराम की निश्चित मर्यादाएँ स्थापित की गई और अज्ञान काल के आविष्कृत बन्धनों को तोड़ दिया गया, किताबवालों के साथ खाने-पीने और उनकी स्त्रियों से विवाह करने की अनुमति दी गई, वुज़ू और स्नान और तयम्मुम के नियम निर्धारित कए गए, विद्रोह, फ़साद और चोरी की सज़ाएँ निश्चित की गई। शराब और जुए को बिलकुल हराम कर दिया गया, क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) नियत किया गया। गवाही के क़ानून में कुछ और धाराओं की वृद्धि की गई।

(2) मुसलमानों को उपदेश :– मुसलमान एक शासक गिरोह बन गए थे इसलिए उन्हें सम्बोधित करते हुए बार-बार नसीहत की गई कि न्याय पर क़ायम रहें, अपने पूर्व के किताबवालों की नीति से बचें, अल्लाह का आज्ञापालन और उसके आदेशों के अनुवर्तन का जो वचन उन्होंने दिया है उसपर जमे रहें।

(3) यहुदियों और ईसाइयों को उपदेश :– यहूदियों की शक्ति अब क्षीण हो गई थी। उत्तरी अरब की लगभग तमाम यहूदी बस्तियाँ मुसलमानों के अधीन हो चुकी थी। इस अवसर पर एक बार उनकी ग़लत नीति पर सावधान किया गया है और उन्हें सन्मार्ग पर आने का निमंत्रण दिया गया है। इसके साथ ही क्योंकि हुदैबिया की संधि के कारण अरब और उससे लगे हुए दूसरे देश की जातियों में इस्लाम के सन्देश के प्रचार एवं प्रसार का अवसर निकल आया था इसलिए ईसाइयों को भी सविस्तर सम्बोधित करके उनकी धारणाओं और आस्थाओं की ग़लतियाँ बताई गई हैं और उन्हें अरब के नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) पर ईमान लाने का निमंत्रण दिया गया है।

⊖ ⊖ ⊖

5. सूरा अल-माइदा

(मदीना में उतरी–आयतें 120)

अल्लाह के नाम से जो निहायत मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, प्रतिबन्धनों का पूर्ण रूप से पालन करो।[1] तुम्हारे लिए चौपायों की जाति के सब जानवर हलाल (वैध) किए गए,[2] सिवाय उनके जो आगे चलकर तुम्हें बताए जाएँगे। लेकिन इहराम की हालत में शिकार को अपने लिए हलाल (वैध) न कर लो, बेशक अल्लाह जो चाहता है हुक्म देता है।

(2) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, ख़ुदापरस्ती की निशानियों का निरादर न करो[3] —हराम महीनों में से किसी को हलाल न कर लो, क़ुरबानी के जानवरों पर हाथ न डालो, न उन जानवरों पर हाथ डालो जिनकी गरदनों में ख़ुदा के लिए नज्र कर देने की निशानी के तौर पर पट्टे पड़े हुए हों, न उन लगों को छेड़ो जो अपने रब के अनुग्रह और उसकी प्रसन्नता की तलाश में प्रतिष्ठित घर (काबा) की ओर जा रहे हों। हाँ, जब इहराम की हालत समाप्त हो जाए तो शिकार कर सकते हो—और देखो, एक गिरोह ने जो तुम्हारे लिए प्रतिष्ठित मसजिद (मसजिदे हराम) का रास्ता बन्द कर दिया है तो इसपर तुम्हारा गुस्सा तुम्हें इतना उत्तेजित न कर दे कि तुम भी उनके मुक़ाबले में अनुचित ज़्यादतियाँ करने लगो।[4] नहीं, जो काम नेकी और ईश-भक्ति के हैं उनमें सबको सहयोग दो और जो गुनाह और ज़्यादती के काम हैं उनमें किसी को सहयोग न दो। अल्लाह से डरो, उसकी सज़ा बहुत सख़्त है।

(3) तुमपर हराम किया गया मुर्दार, ख़ून, सुअर का मांस, वह जानवर जो

1. अर्थात् उन सीमाओं और प्रतिबन्धनों का पालन करो जो तुम्हारे लिए अनिवार्य किए गए हैं।
2. 'अनआम' (चौपाए) शब्द अरबी भाषा में ऊँट, गाय, भेड़, बकरी के लिए बोला जाता है। और 'बहीमा' प्रत्येक चरनेवाले चौपाए को कहते हैं। ''चौपायों की जाति के चरनेवाले चौपाए तुम्हारे लिए हलाल (वैध) किए गए'' का अर्थ यह है कि वे सब चरनेवाले जानवर हलाल है जो मवेशी (चौपाए) के वर्ग के हों अर्थात् जिनके नोकदार दाँत न हों। पाशविक आहार के बजाए शाकाहार ग्रहण करते हों, और दूसरी पाशविक विशेषताओं में मवेशियों से मिलते-जुलते हों। इसका स्पष्टीकरण नबी (सल्ल॰) ने अपने उन आदेशों से कर दिया है जिनमें आपने हिंसक जानवरों और शिकारी पक्षियों और मुर्दाख़ोर जानवरों को हराम घोषित कर दिया है।

अल्लाह के सिवा किसी और के नाम पर ज़बह किया गया हो, वह जो गला घुटकर, या चोट खाकर या ऊंचाई से गिरकर, या टक्कर खाकर मरा हो, या जिसे किसी हिंसक जानवर ने फाड़ा हो—सिवाय उसके जिसे तुमने जीवित पाकर ज़बह कर लिया—और वह जो किसी थान पर ज़बह किया गया हो।[5] और यह भी तुम्हारे लिए नाजायज़ है कि

3. हर वह चीज़ जो किसी पंथ या धारणा या विचार एवं कर्म-प्रणाली या किसी जीवन-व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करती हो वह उसका 'शिआर' (भक्ति की निशानियाँ) कहलाएगी, क्योंकि वह उसके लिए चिह्न और लक्षण का काम देती है। सरकारी झण्डे, सेना और पुलिस आदि के यूनीफ़ार्म, सिक्के, नोट और स्टैम्प हुकूमतों के शिआर (चिह्न) हैं। गिरजा और क़ुरबानगाह और सलीब ईसाइयत के चिह्न हैं। चोटी और जनेऊ और मंदिर ब्राह्मणत्व के चिह्न हैं। केश और कड़ा और कृपाण आदि सिख मत के सांकेतिक चिह्न हैं। हथौड़ा और दराँती साम्यवाद का चिह्न है। ये सब मत अपने-अपने अनुयायियों से अपने इन चिह्नों एवं संकेतों के आदर की अपेक्षा करते हैं। अगर कोई व्यक्ति किसी प्रणाली या राज्य-व्यवस्था के संकेतों एवं चिह्नों में से किसी चिह्न का निरादर करता है तो यह इस बात की निशानी है कि वह वास्तव में उस राज्य-व्यवस्था के विरूद्ध दुश्मनी रखता है, और अगर वह अपमान करनेवाला ख़ुद उसी व्यवस्था से सम्बन्ध रखता है तो उसके इस काम का अर्थ यह होता है कि वह उस व्यवस्था से फिर गया है और वह उसका विद्रोही है। ''अल्लाह के शआइर'' (अल्लाह के चिह्नों) से मुराद वे सभी लक्षण और निशानियाँहैं, जो शिर्क (बहुदेववाद), अधर्म और नास्तिकता के विपरीत विशुद्ध ईश-भक्ति के पन्थ का प्रतिनिधित्व करती हों।
4. चूँकि अधर्मियों ने उस समय मुसलमानों को 'काबा' की ज़ियारत से रोक दिया था और हज तक से मुसलमान वंचित कर दिए गए थे, इसलिए मुसलमानों में यह ख़याल पैदा हुआ कि जिन अधर्मी क़बीलों के रास्ते इस्लामी अधिक्षेत्रों के निकट से गुजरते हैं, उनको हम भी हज से रोक दें और हज के समय में उनके क़ाफ़िलों पर छापे मारने शुरू कर दें, मगर अल्लाह ने यह आयत उतारकर उन्हें इस ख़याल से बाज़ रखा।
5. मूल ग्रन्थ में 'नुसुब' शब्द प्रयुक्त हुआ है। इससे मुराद वे सब स्थान हैं जिनको ईश्वर के अतिरिक्त दूसरों को भेंट और चढ़ावे की चीज़ें चढ़ाने के लिए लोगों ने ख़ास कर रखा हो, भले ही वहाँ कोई पत्थर या लकड़ी की मूर्ति हो या न हो। हमारी भाषा में इसका पर्यायवाची शब्द आस्ताना या स्थान (थान, देवस्थान) है जो किसी महापुरुष या देवता से, या किसी विशिष्ट मुशरिक (बहुदेववादी) धारणा से सम्बद्ध हो। ऐसे किसी थान पर ज़बह किया हुआ जानवर भी हराम है।

पाँसों के द्वारा अपना भाग्य मालमू करो। ये सारे काम आदेशोल्लंघन के हैं। आज अधर्मियों को तुम्हारे धर्म की ओर से पूरी मायूसी हो चुकी है अतः तुम उनसे न डरो, बल्कि मुझसे डरो।[6] आज मैंने तुम्हारे दीन (धर्म) को तुम्हारे लिए पूर्ण कर दिया है और तुमपर अपनी नेमत पूरी कर दी है और तुम्हारे लिए इस्लाम को तुम्हारे धर्म के रूप में स्वीकार कर लिया है[7] (अतः हराम और हलाल की जो पाबन्दियाँ तुमपर लगाई गई हैं

6. 'आज' से मुराद कोई विशेष दिन और तिथि नहीं है बल्कि वह समय या काल मुराद है जिसमें यह आयतें उतारी थीं। हमारी भाषा में भी 'आज' का शब्द वर्तमान समय के लिए साधारणतया बोला जाता है। ''अधर्मियों को तुम्हारे धर्म की ओर से निराशा हो चुकी है,'' अर्थात् अब तुम्हारा धर्म स्थायी रूप से एक राज्य-व्यवस्था बन चुका है और ख़ुद अपनी शासन-शक्ति के बल पर क्रियाशील एवं स्थापित है। अधर्मी इस ओर से निराश हो चुके हैं कि वे उसे मिटा सकेंगे और तुम्हें फिर पिछले अज्ञान की ओर वापस ले जा सकेंगे। ''अतः तुम उनसे न डरो, बल्कि मुझसे डरो'' अर्थात् इस धर्म के क़ानून और इसके आदेशों का पालन करने में किसी अधर्मी शक्ति के प्रभाव एवं प्रभुत्व और हस्तक्षेप और प्रतिरोध का ख़तरा तुम्हारे लिए बाक़ी नहीं रहा है। अब तुम्हें अल्लाह से डरना चाहिए कि उसके आदेशों के पालन करने में अगर कोई कोताही तुमने की तो तुम्हारे पास विवशता की कोई ऐसी बात न होगी जिसके कारण तुम्हारे साथ कुछ भी नर्मी की जाए।
7. धर्म को पूर्ण कर देने से मुराद उसको स्थायी रूप से एक विचार एवं कर्म-प्रणाली और सभ्यता एवं संस्कृति की एक ऐसी पूर्ण प्रणाली बना देना है जिसमें जीवन सम्बन्धी सारी समस्याओं का हल सिद्धान्तः अथवा सविस्तार मौजूद हो और हिदायत और मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए किसी हाल में उससे बाहर जाने की ज़रूरत न पड़े। नेमत पूरी करने से मुराद मार्गदर्शन सम्बन्धी नेमत को पूरा कर देना है। और इस्लाम को धर्म के रूप में स्वीकार कर लेने का अर्थ यह है कि तुमने मेरी बन्दगी और आज्ञापालन करने का जो इक़रार किया था, उसको चूँकि तुम अपने प्रयास और कर्म से सच्चा और निष्ठापूर्ण इक़रार सिद्ध कर चुके हो, इसलिए मैने उसे अपनी ओर से स्वीकृत कर लिया है और तुम्हें व्यवहारतः इस स्थिति को पहुँचा दिया है कि अब वास्तव में मेरे सिवा किसी के आज्ञापालन और बन्दगी का जुआ तुम्हारी गर्दनों पर बाक़ी नहीं रहा। अब जिस तरह आस्था-विश्वास में तुम मेरे आज्ञाकारी (मुसलिम) हो, उसी तर व्यावहारिक जीवन में भी मेरे सिवा किसी और के आज्ञाकारी बनकर रहने के लिए किसी विवशता में तुम ग्रस्त नहीं रहे हो।

उनका पालन करो)। अलबत्ता जो व्यक्ति भूख से विवश होकर उनमें से कोई चीज़ खा ले, बिना इसके कि गुनाह की ओर उसका रुझान हो तो निस्संदेह अल्लाह माफ़ करनेवाला[8] और दया करनेवाला है।

(4) लोग पूछते हैं कि उनके लिए क्या हलाल (वैध) किया गया है, कहो तुम्हारे लिए सारी अच्छी, स्वच्छ चीज़ें हलाल कर दी गई है।[9] और जिन शिकारी जानवरों को तुमने सधाया हो—जिनको अल्लाह के दिए हुए ज्ञान के आधार पर तुम शिकार की शिक्षा दिया करते हो—वे जिस जानवर को तुम्हारे लिए पकड़ रखें उसको भी तुम खा सकते हो[10] अलबत्ता उसपर अल्लाह का नाम ले लो[11] और अल्लाह का क़ानून तोड़ने से डरो, अल्लाह को हिसाब लेते कुछ देर नहीं लगती।

(5) आज तुम्हारे लिए सारी अच्छी, स्वच्छ चीज़ें हलाल कर दी गई हैं।

8. व्याख्या के लिए देखिए सूरा 2, (अल बक़रा) फ़ुटनोट 52।
9. पूछनेवालों का मक़सद यह था कि उनके सामने सारी हलाल चीज़ों का ब्योरा रखा जाए ताकि उनके सिवा हर चीज़ को वे हराम (अवैध) समझें। जवाब में क़ुरआन ने हराम चीज़ों का ब्योरा पेश कर दिया और उसके बाद सामान्य रूप में यह आदेश देकर छोड़ दिया कि सारी पा चीज़ें हलाल हैं। इस तरह प्राचीन धार्मिक धारणा बिलकुल उलट गई। प्राचीन धारणा यह थी कि सब कुछ वर्जित और हराम है सिवाय उसके जिसे हलाल ठहराया जाए। क़ुरआन ने इसके विपरीत यह सिद्धान्त मुक़र्रर किया कि सब कुछ हलाल है सिवाय उसके जिसकी अवैधता स्पष्टतः बयान कर दी जाए। हलाल के लिए 'पाक' की क़ैद इसलिए लगाई कि नापाक चीज़ों को हलाल ठहराने की कोशिश न की जाए। रहा यह सवाल कि चीज़ों के 'पाक' होने का निर्धारण किस तरह होगा तो इसका जवाब यह है कि जो चीज़ें धर्म-विधान के सिद्धान्त में से किसी नियम के अन्तर्गत नापाक ठहरें, या जिन चीज़ों से एक सामान्य रुचि घृणा करे, या जिन्हें सभ्य इनसान ने सामान्यतः पवित्रता एवं स्वच्छता की अपनी स्वाभाविक चेतना के प्रतिकूल पाया हो, इनके अतिरिक्त सब कुछ पाक है।
10. शिकारी जानवरों से मुराद कुत्ते, चीते, बाज़, शिकरे और वे सभी हिंसक पशु और पक्षी हैं जिनसे इनसान शिकार का काम लेता है। सधाए हुए जानवर की विशेषता यह होती है कि वह जिसका शिकार करता है उसे सामान्य हिंसक पशु की तरह फाड़ नहीं खाता बल्कि अपने मालिक के लिए पकड़ रखता है। इसी कारण साधारण हिंसक पशुओं का फाड़ा हुआ जानवर हराम (वर्जित) है और सधाए हुए हिंसक पशुओं का शिकार हलाल।

किताबवालों का भोजन तुम्हारे लिए हलाल है और तुम्हारा भोजन उनके लिए।[12] और सुरक्षित औरतें भी तुम्हारे लिए हलाल हैं चाहे वे ईमानवाले गिरोह से हों या उन क़ौमों (गिरोहों) में से जिनको तुमसे पहले किताब दी गई थी,[13] शर्त यह है कि तुम उनका महर अदा करके निकाह में उनके रक्षक बनो, न यह कि स्वच्छन्द काम-तृप्ति करने लगो या चोरी-छिपे दोस्तियाँ करो। और अगर किसी ने ईमान की नीति पर चलने से इनकार किया तो ज़िन्दगी में उसका सारा किया-धरा अकारथ हो जाएगा और वह आख़िरत में दिवालिया होगा।

(6) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब तुम नमाज़ के लिए उठो तो चाहिए कि अपने मुँह और हाथ कुहनियों तक धो लो, सिरों पर हाथ फेर लो और पाँव टखनों तक धो लिया करो।[14] अगर नहाना अनिवार्य हो तो नहाकर पा हो जाओ। अगर बीमार हो

11. अर्थात् शिकारी जानवर को शिकार पर छोड़ते समय बिसमिल्लाह (अल्लाह के नाम से) कहो। इस आयत से यह बात मालूम हुई कि शिकारी जानवर को शिकार पर छोड़ते हुए अल्लाह का नाम लेना आवश्यक है। इसके बाद अगर शिकार ज़िन्दा मिले तो फिर अल्लाह का नाम लेकर उसे ज़बह कर लेना चाहिए और अगर ज़िन्दा न मिले तो इसके बिना ही वह हलाल (वैध) होगा। क्योंकि आरम्भ में शिकारी जानवर को उसपर छोड़ते हुए अल्लाह का नाम लिया जा चुका था। यही आदेश तीर का भी है।
12. किताबवालों के खाने में उनका ज़बह किया हुआ जानवर भी शामिल है। हमारे लिए उनका और उनके लिए हमारा खाना हलाल होने का अर्थ यह है कि हमारे और उनके बीच खाने-पीने में कोई रुकावट और कोई छूत-छात नहीं है। हम उनके साथ खा सकते हैं और वे हमारे साथ। लेकिन यह सामान्य अनुमति देने से पहले इस वाक्य को दोहराया गया है कि "तुम्हारे लिए पाक चीज़ें वैध कर दी गई हैं।" इससे मालूम हुआ कि किताबवाले अगर पाकी और पवित्रता के उन क़ानूनों का पालन न करें जो 'शरीअत' के दृष्टिकोण से ज़रूरी हैं, या अगर उनके खाने में हराम और अवैध चीज़ें शामिल हैं तो उनसे बचना चाहिए। उदाहरणार्थ अगर वे अल्लाह का नाम लिए बिना किसी जानवर को ज़बह करें, या उसपर अल्लाह के अतिरिक्त किसी और का नाम लें, तो उसे खाना हमारे लिए जाइज नहीं।
13. इससे मुराद यहूदी और ईसाई हैं। निकाह की इजाज़त सिर्फ़ उन्हीं की औरतों से दी गई है और इसके साथ शर्त यह लगा दी गई है कि वे 'मुहसनात' (सुरक्षित औरतें) हों अर्थात आवारा न हों। और बाद के वाक्य में यह चेतावनी भी दे दी गई है कि यहूदी या ईसाई पत्नी के लिए ईमान न खो बैठना।

या सफ़र की हालत में हो या तुममें से कोई शौच करके आए या तुमने औरतों को हाथ लगाया हो, और पानी न मिले तो पाक मिट्टी से काम लो, बस उसपर हाथ मारकर अपने मुँह और हाथों पर फेर लिया करो।[15] अल्लाह तुमपर ज़िन्दगी को तंग नहीं करना चाहता, मगर वह चाहता है कि तुम्हें पाक करे और अपनी नेमत तुमपर पूरी कर दे, शायद कि तुम शुक्रगुज़ार बनो।

(7) अल्लाह ने तुमको जो नेमत प्रदान की है उसका ध्यान रखो और उस दृढ प्रतिज्ञा को न भूलो जो उसने तुमसे कराई है, अर्थात् तुम्हारा यह कथन कि ''हमने सुना और आज्ञापालन स्वीकार किया।'' अल्लाह से डरो, अल्लाह दिलों के भेद तक जानता है। (8) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह के लिए औचित्य पर क़ायम रहनेवाले और इनसाफ़ की गवाही देनेवाले बनो। किसी गिरोह की दुश्मनी तुमको इतना उत्तेजित न कर दे कि इनसाफ़ से फिर जाओ। इनसाफ़ करो, यह ईशभक्ति और विनम्रता के अधिक अनुकूल है। अल्लाह से डरकर काम करते रहो, जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उसे पूरी तरह जानता है। (9) जो लोग ईमान लाएँ और अच्छा काम करें, अल्लाह ने उनसे वादा किया है कि उनकी ख़ताओं को माफ़ कर दिया जाएगा और उन्हें बड़ा बदला मिलेगा। (10) रहे वे लोग जो इनकार करें, और अल्लाह की आयतों को छुठलाएँ, तो वे नरक में जानेवाले हैं।

(11) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह के उस उपकार को याद करो जो उसने (अभी वर्तमान समय में) तुमपर किया है, जबकि एक गिरोह ने तुमपर हाथ डालने का इरादा कर लिया था मगर अल्लाह ने उनके हाथ तुमपर उठने से रोक दिए।[16] अल्लाह से डरकर काम करते रहो, ईमान रखनेवालों को अल्लाह ही पर भरोसा करना चाहिए।

(12) अल्लाह ने इसराईल की सन्तान से दृढ़ प्रतिज्ञा कराई थी और उनमें बारह सरदार[17] मुक़र्रर किए थे और उनसे कहा था कि ''मैं तुम्हारे साथ हूँ, अगर तुमने नमाज़

14. नबी (सल्ल॰) ने इस आदेश की जो व्याख्या की है उससे मालूम होता है कि मुँह धोने में कुल्ली करना और नाक साफ़ करना भी शामिल है, इसके बिना मुँह का धोना पूरा नहीं होता। और कान चूँकि सिर का एक हिस्सा है इसलिए सिर के 'मस्ह' में कानों के भीतरी और बाहरी हिस्सों का 'मस्ह' भी शामिल है। इसके अलावा 'वुज़ू' शुरू करने से पहले हात धो लेने चाहिएँ ताकि जिन हाथों से आदमी वुज़ू कर रहा हो वे ख़ुद पहले पाक हो जाएँ।
15. व्याख्या के लिए देखें सूरा 4 (निसा), फुटनोट 41, 43।

क़ायम रखी और ज़कात दी और मेरे रसूलों को माना और उनकी मदद की और अपने अल्लाह को अच्छा क़र्ज़ देते रहे तो यक़ीन रखो कि मैं तुम्हारी बुराइयाँ तुमसे दूर कर दूँगा और तुमको ऐसे बाग़ों में प्रवेश करूँगा जिनके नीचे नहरें बहती होंगी, मगर इसके बाद जिसने तुममें से इनकार की नीति अपनाई तो हक़ीक़त में उसने समतल व सरल मार्ग[18] को गुम कर दिया।'' (13) फिर यह उनका अपनी प्रतिज्ञा को भंग करना था जिसके कारण हमने उनको अपनी दयालुता से दूर फेंक दिया और उनके दिल कठोर कर दिए। अब उनका हाल यह है कि शब्दों का उलट-फेर करके बात को कहीं से कहीं ले जाते हैं, जो शिक्षा उन्हें दी गई थी उसका बड़ा भाग भूल चुके हैं, और बराबर तुम्हें उनके किसी न किसी विश्वासघात का पता चलता रहता है। उनमें से बहुत कम लोग इस बुराई से बचे हुए हैं। (अतः जब ये इस दशा को पहुँच चुके हैं तो जो दुष्टता भी ये करें इनसे उसी की आशा की जा सकती है) अतः उन्हें माफ़ करो और उनकी बुराईयों से निगाह बचाते रहो, अल्लाह को वे लोग पसन्द हैं जो अच्छे से अच्छा कार्य करते हैं।

(14) इसी तरह हमने उन लोगों से भी दृढ़ प्रतिज्ञा कराई थी जिन्होंने कहा था कि हम 'नसारा' हैं, मगर उनको भी जो सबक़ याद कराया गया था उसका एक बड़ा हिस्सा उन्होंने भुला दिया, आख़िरकार हमने उनके बीच क़ियामत तक के लिए दुश्मनी और पारस्परिक द्वेष का बीज बो दिया, और ज़रूर एक समय आएगा जब अल्लाह उन्हें बताएगा कि वे दुनिया में क्या बनाते रहे हैं।

16. संकेत है उस घटना की ओर जिसे हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) ने रिवायत किया है कि यहूदियों में से एक गिरोह ने नबी (सल्ल॰) और आपके ख़ास-ख़ास सहाबा को खाने की दावत पर बुलाया था और गुप्त रूप से यह साज़िश रची थी कि अचानक उनपर टूट पड़ेंगे और इस तरह इस्लाम की जान निकाल देंगे। लेकिन ठीक समय पर अल्लाह की कृपा से नबी (सल्ल॰) को इस साज़िश का हाल मालूम हो गया और आप दावत पर भी नहीं गए।
17. यहाँ 'नक़ीब' शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'नक़ीब' का अर्थ है निगरानी और जाँच-पड़ताल करनेवाला। इसराईलियों के बारह क़बीले थे और अल्लाह ने उनमें से हर क़बीले पर एक-एक 'नक़ीब' ख़ुद उसी क़बीले से नियुक्त करने का आदेश दिया था ताकि वह उनकी हालतों पर निगाह रखे और उन्हें अधर्म और अनैतिकता से बचाने की कोशिश करता रहे।
18. 'सवाउस्सबील' (समतल व सरल मार्ग) उस शाहराह (राजपथ) को कहते हैं जो गंतव्य स्थान तक पहुँचने के लिए विधिवत रूप से बना दी गई हो, उसे गुम कर देने का अर्थ यह है कि आदमी शाहराह से हटकर पगडंडियों में भटक जाए।

(15,16) ऐ किताबवालो, हमारा रसूल तुम्हारे पास आ गया है जो ईश्वरीय ग्रन्थ की बहुत-सी उन बातों को तुम्हारे सामने खोल रहा है जिनपर तुम परदा डाला करते थे, और बहुत-सी बातों को जाने भी देता है।[19] तुम्हारे पास अल्लाह की ओर से प्रकाश आ गया है और एक ऐसी स्पष्ट किताब जिसके द्वारा अल्लाह उन लोगों को जो उसकी प्रसन्नता के इच्छुक हैं सलामती की राहें बताता है और अपनी अनुमति से उनको अंधेरों से निकालकर उजाले की ओर लाता है और सीधे मार्ग की तरफ़ उनका पथ-प्रदर्शन करता है।

(17) यक़ीनन कुफ़्र किया उन लोगों ने जिन्होंने कहा कि मरयम का बेटा मसीह ही अल्लाह है। ऐ नबी, उनसे कहो कि अगर अल्लाह मरयम के बेटे मसीह को और उसकी माँ और पूरी धरतीवालों को विनष्ट कर देना चाहे तो किसकी शक्ति है कि उसको इस इरादे से रोक सके? अल्लाह तो ज़मीन और आसमानों का और उन सब चीज़ों का मालिक है जो ज़मीन और आसमानों के बीच पाई जाती हैं, जो कुछ चाहता है पैदा करता है[20] और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(18) यहूदी और ईसाई कहते हैं कि हम अल्लाह के बेटे और उसके चहेते हैं। उनसे पूछो, वह तुम्हारे गुनाहों पर तुम्हें सज़ा क्यों देता है? वास्तव में तुम भी वैसे ही इनसान हो जैसे और इनसान ईश्वर ने पैदा किए हैं। वह जिसे चाहता है माफ़ करता है और जिसे चाहता है सज़ा देता है। ज़मीन और आसमान और उनमें पाई जानेवाली सारी चीज़ों का वही मालिक है, और उसी की ओर सबको जाना है।

(19) ऐ किताबवालो, हमारा यह रसूल ऐसे समय में तुम्हारे पास आया है और धर्म की स्पष्ट शिक्षा तुम्हें दे रहा है जबकि रसूलों के आने का सिलसिला एक मुद्दत से बन्द था, ताकि तुम यह न कह सको कि हमारे पास कोई शुभसमाचार देनेवाला और डरानेवाला नहीं आया। तो देखो अब वह शुभसमाचार देनेवाला और डरानेवाला आ गया—और अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।[21]

19. अर्थात् तुम्हारी कुछ चोरियाँ और ख़ियानतें खोल देता है जिनका खोलना सत्य-धर्म को स्थापित करने के लिए अनिवार्य है और कुछ ख़ियानतों से आँखें बचा जाता है जिनके खोलने की कोई वास्तविक आवश्यकता नहीं है।

20. अर्थात् केवल मसीह (अलै०) के बिन बाप पैदा होने के कारण तुम लोगों ने उनको ईश्वर बना डाला हालाँकि अल्लाह जिसको जिस तरह चाहता है पैदा करता है। कोई बन्दा इस कारण ईश्वर नहीं बन जाता कि अल्लाह ने उसे असाधारण रीति से पैदा किया है।

(20) याद करो जब मूसा ने अपनी क़ौम से कहा था कि ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, अल्लाह की उस नेमत को याद करो जो उसने तुम्हें प्रदान की थी। उसने तुममें नबी पैदा किए, तुमको शासक बनाया, और तुमको वह कुछ दिया जो दुनिया में किसी को न दिया था। (21) ऐ मेरी क़ौम के भाइयो, इस पवित्र भूमि में प्रवेश करो जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए लिख दी है,[22] पीछे न हटो वरना नाकाम होकर पलटोगे।'' (22) उन्होंने जवाब दिया, ''ऐ मूसा, वहाँ तो बड़े ज़बरदस्त लोग रहते हैं, हम वहाँ हरगिज़ नहीं जाएँगे जब तक वे वहाँ से निकल न जाएँ। हाँ, अगर वे वहाँ से निकल गए तो हम प्रवेश करने के लिए तैयार हैं।'' (23) ''उन डरनेवालों में दो व्यक्ति ऐसे भी थे जिनको अल्लाह ने अपने नेमत से नवाज़ा था।[23] उन्होंने कहा कि इन प्रचण्ड लोगों के मुक़ाबले में दरवाज़े के भीतर घुस जाओ, जब तुम भीतर पहुँच जाओगे तो तुम ही ग़ालिब (प्रभावी) रहोगे, अल्लाह पर भरोसा रखो। अगर तुम ईमानवाले हो।'' (24) लेकिन उन्होंने फिर यही कहा कि ''ऐ मूसा, हम तो वहाँ कभी न जाएँगे जब तक वे वहाँ मौजूद हैं। बस तुम और तुम्हारा रब दोनों जाओ और लड़ो, हम यहाँ बैठे हैं।'' (25) इसपर मूसा ने कहा, ''ऐ मेरे रब, मेरे अधिकार में कोई नहीं मगर निजी रूप में मैं या मेरा भाई, अतः तू हमें इन अवज्ञाकारी लोगों से अलग कर दे।'' (26) अल्लाह ने जवाब दिया, ''अच्छा तो वह देश चालीस साल तक इनके लिए वर्जित है, ये ज़मीन में मारे-मारे फिरेंगे, इन अवज्ञाकारियों की हाल पर हरगिज़ तरस न खाओ।''[24]

(27) और तनिक उन्हें आदम के दो बेटों का क़िस्सा भी बिना कमी-बेशी के सुना दो। जब उन दोनों ने क़ुरबानी की तो उनमें से एक की क़ुरबानी क़बूल की गई और

21. अर्थात् अगर तुमने इस शुभसूचना देनेवाले और डरानेवाले की बात न मानी तो याद रखो कि अल्लाह सर्वशक्तिमान और बलशाली है, हर सज़ा जो वह तुम्हें देना चाहे बिना प्रतिरोध दे सकता है।

22. मुराद है फ़िलस्तीन का भू-भाग जो उस समय बड़े ही सख़्त मुशरिक (बहुदेववादी) और बुरे कर्म में लिप्त जातियों से आबाद था। इसराईल की संतति अब मिस्र से निकल आई तो इसी भू-भाग को अल्लाह ने उनके लिए नामांकित कर दिया और हुक्म दिया कि जाकर उसपर अधिकार कर लो।

23. उन दोनों महापुरुषों में से एक हज़रत यूशअ बिन नून थे जो हज़रत मूसा के बाद उनके ख़लीफ़ा (उत्तराधिकारी) हुए। दूसरे हज़रत कालिब थे जो हज़रत यूशअ के दाहिने हाथ (सहयोगी) बने। चालीस वर्ष तक भटकने के बाद जब इसराईली फ़िलस्तीन में दाख़िल हुए उस समय हज़रत मूसा (अलै०) के साथियों में से सिर्फ़ यही दो महापुरुष ज़िन्दा थे।

दूसरे की न की गई। उसने कहा, ''मैं तुझे मार डालूंगा।'' उसने जवाब दिया, ''अल्लाह परहेज़गार लोगों की ही नज़्रें क़बूल करता है। (28) अगर तू मुझे क़त्ल करने के लिए हाथ उठाएगा तो मैं तुझे क़त्ल करने के लिए हाथ न उठाऊँगा,[25] मैं, अल्लाह, सारे संसार के रब से डरता हूँ। (29) मैं चाहता हूँ कि मेरा और अपना गुनाह तू ही समेट ले और दोज़ख़ी बनकर रहे। ज़ालिमों के ज़ुल्म का यही ठीक बदला है।'' (30) आख़िरकार उसके जी ने अपने भाई का क़त्ल उसके लिए आसान कर दिया और वह उसे मारकर उन लोगों में शामिल हो गया जो घाटा उठानेवाले हैं। (31) फिर अल्लाह ने एक कौआ भेजा जो ज़मीन खोदने लगा ताकि उसे बता दे कि अपने भाई की लाश कैसे छिपाए। यह देखकर वह बोला, ''अफ़सोस मुझपर! मैं इस कौआ जैसा भी न हो सका कि अपने भाई की लाश छिपाने का उपाय निकाल लेता। इसके बाद वह अपने किए पर बहुत पछताया।[26]

(32) इसी कारण इसराईल की सन्तान के लिए हमने यह आदेश लिख दिया था कि ''जिसने किसी इनसान को क़त्ल के बदले या ज़मीन में बिगाड़ फैलाने के सिवा किसी और वजह से क़त्ल कर डाला उसने मानो सारे ही इनसानों को क़त्ल कर दिया और जिसने किसी की जान बचाई उसने मानो सारे इनसानों को जीवन-दान दिया।'' मगर उनका हाल यह है कि हमारे रसूल निरन्तर उनके पास खुले-खुले निर्देश लेकर आए फिर भी उनमें अधिकतर लोग धरती में ज़्यादतियाँ करनेवाले हैं।

24. यहाँ इस घटना के उद्धृत करने का मक़सद वास्तव में इसराईल की संतति को स्पष्टतः यह बताना है कि मूसा (अलै॰) के समय में नाफ़रमानी और विमुख़ता और साहसहीनता से काम लेकर जोसज़ा तुमने पाई थी, अब उससे बहुत ज़्यादा सख़्त सज़ा हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के मुक़ाबले में विद्रोह की नीति अपना कर पाओगे।
25. इसका अर्थ यह नहीं है कि अगर तू मुझे क़त्ल करने के लिए आएगा तो मैं हाथ बाँधकर तेरे सामने क़त्ल होने के लिए बैठ जाऊँगा, बल्कि इसका अर्थ यह है कि तू क़त्ल करने के पीछे पड़ता है तो पड़ मैं तेरे क़त्ल के पीछे नहीं पड़ूँगा।
26. यहाँ इस घटना के उल्लेख करने का उद्देश्य यहूदियों की उनकी इस साज़िश के कारण निंदा करना है जो उन्होंने नबी (सल्ल॰) और आपके प्रतापी सहाबा को क़त्ल करने के लिए की थी। दोनों घटनाओं में एकरूपता बिलकुल स्पष्ट है। ये लोग भी ईर्ष्या और जलन के कारण नबी (सल्ल॰) को क़त्ल करना चाहते थे, और आदम (अलै॰) के उस बेटे ने भी ईर्ष्या के कारण ही अपने भाई को क़त्ल किया था।

(33) जो लोग अल्लाह और उसके रसूल से लड़ते हैं और ज़मीन में इसलिए दौड़-धूप करते फिरते हैं कि बिगाड़ पैदा करें[27] उनकी सज़ा यह है कि उनका क़त्ल किया जाए, या वे सूली पर चढ़ाए जाएँ, या उनके हाथ-पाँव विपरीत दिशाओं से काट डाले जाएँ, या उन्हें देश निकाला दे दिया जाए। यह अपमान और तिरस्कार तो उनके लिए दुनिया में है और आख़िरत में उनके लिए इससे बड़ी सज़ा है। (34) मगर जो लोग पलट आएँ इससे पहले कि तुम उनपर क़ाबू पाओ—तुम्हें मालूम होना चाहिए कि अल्लाह माफ़ करनेवाला और दयावान है।[28]

(35) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह से डरो और उसका सामीप्य प्राप्त करने का साधन तलाश[29] करो और उसेक मार्ग में जान-तोड़ संघर्ष करो, शायद कि तुम्हें सफलता मिल जाए। (36) अच्छी तरह जान लो कि जिन लोगों ने अधर्म की नीति अपनाई है, अगर उनके अधिकार में सारी ज़मीन की दौलत हो और उतना ही और उसके साथ, और वे चाहें कि उसे बदले में देकर क़ियामत के दिन की यातना से बच

(27) ज़मीन से मुराद यहाँ वह देश या वह इलाक़ा है जिसमें शान्ति और प्रबन्ध की व्यवस्था करने की ज़िम्मेदारी इस्लामी हुकूमत ने ले रखी हो। और अल्लाह और रसूल से लड़ने का अर्थ उस स्वस्थ प्रणाली के विरुद्ध युद्ध करना है जो इस्लाम की हुकूमत ने देश में स्थापित कर रखी हो। इस्लामी धर्मविधि के विशेषज्ञों की दृष्टि में इससे मुराद वे लोग हैं जो हथियारबन्द होकर और जत्थाबन्दी करके डाका डालें और लूट-मार करें।
28. अर्थात् अगर वे बिगाड़ फैलाने की कोशिश से बाज़ आ गए हों, और स्वस्थ व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करने या उलटने की कोशिश छोड़ चुके हों, और उनकी बाद की कर्मनीति सिद्ध कर रही हो कि वे शान्ति प्रिय, क़ानून के अधीन और नेक चलन इनसान बन चुके हैं, और इसके बाद उनके पहले के अपराधों का पता चले, तो उन सज़ाओं में से कोई सज़ा उनको न दी जाएगी जो ऊपर बयान हुई है, हाँ आदमियों के हक़ और अधिकारों पर अगर उन्होंने किसी प्रकार से हाथ डाला था तो इसकी ज़िम्मेदारी उनपर से न हटेगी। उदाहरणार्थ अगर किसी इनसान को उन्होंने क़त्ल किया था या किसी का माल लिया था या कोई और अपराध इनसानी जान और माल के विरुद्ध किया था तो उसी अपराध के विषय में फ़ौजदारी मुक़द्दमा उनपर क़ायम किया जाएगा लेकिन विद्रोह और अल्लाह और रसूल के विरुद्ध युद्ध का कोई मुक़द्दमा न चलाया जाएगा।
29. अर्थात् हर उस साधन की तलाश और खोज में रहो जिससे तुम अल्लाह का सामीप्य प्राप्त कर सको और उसकी ख़ुशी पा सको।

जाएँ, तब भी वह उनसे स्वीकार न किया जाएगा और उन्हें दर्दनाक सज़ा मिलकर रहेगी। (37) वे चाहेंगे कि दोज़ख़ की आग से निकल भागे मगर न निकल सकेंगे और उन्हें क़ायम रहनेवाला अज़ाब दिया जाएगा।

(38) और चोर, चाहे औरत हो या मर्द, दोनों के हाथ काट दो।[30] यह उनकी कमाई का बदला है और अल्लाह की ओर से शिक्षाप्रद सज़ा। अल्लाह की सामर्थ्य सबपर प्रभावी है और वह जानता और देखता है। (39) फिर जो ज़ुल्म करने के बाद तौबा करे और अपने को सुधार ले तो अल्लाह की कृपा-दृष्टि फिर उसकी ओर लौट जाएगी,[31] अल्लाह बहुत क्षमाशील और दयावान है। (40) क्या तुम जानते नहीं हो कि अल्लाह ज़मीन और आसमानों के राज्य का अधिकारी है? जिसे चाहे सज़ा दे और जिसे चाहे माफ़ कर दे, उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

30. दोनों हाथ नहीं बल्कि एक हाथ। पहली चोरी पर सीधा हाथ काटा जाएगा। चोरी केवल इस कर्म को कहेंगे कि आदमी किसी के माल को उसकी रक्षा से निकालकर अपने अधिकार में ले ले। एक ढाल के मूल्य से कम से कम की चोरी में हाथ न काटा जाएगा। और विश्वस्त रिवायतों के अनुसार नबी (सल्ल०) के समय में ढाल का मूल्य दस दिरहम होता था और उस समय के दिरहम में 3 माशा $1\frac{1}{5}$ रत्ती चाँदी हुआ करती थी। बहुत-सी चीज़ें ऐसी हैं जिनकी चोरी में हाथ काटने की सज़ा न दी जाएगी। जैसे फल और तरकारी की चोरी, खाने की चोरी, तुच्छ चीज़ों की चोरी, पक्षी की चोरी, बैतुलमाल (इस्लामी कोषागार) की चोरी। मतलब यह है कि इस प्रकार की चोरियों में हाथ न काटा जाएगा। यह मतलब नहीं है कि ये सब चोरियाँ क्षम्य (माफ़) हैं।

31. इसका मतलब यह नहीं कि ऐसे चोर का हाथ न काटा जाए। बल्कि मतलब यह है कि हाथ कटने के बाद जो व्यक्ति तौबा कर ले और अपने मन को चोरी से मुक्त करके अल्लाह का अच्छा बन्दा बन जाए वह अल्लाह के ग़ज़ब से बच जाएगा। और अल्लाह उसके दामन से इस दाग़ को धो देगा। लेकिन अगर किसी व्यक्ति ने हाथ कटवाने के बाद भी अपने आपको बुरे इरादे से पाक न किया और वही गन्दी भावनाएँ अपने भीतर पालता रहे जिनके कारण उसने चोरी की और उसका हाथ काटा गया, तो इसका अर्थ यह है कि हाथ तो उसके शरीर से अलग हो गया मगर चोरी उसके मन में पहले की तरह मौजूद रही। इसलिए वह अल्लाह के ग़ज़ब का अधिकारी उसी तरह रहेगा जिस तरह हाथ कटने से पहले था। इसी लिए क़ुरआन मजीद चोर को आदेश देता है कि वह अल्लाह से माफ़ी माँगे और अपने-आपको सुधारे क्योंकि मन की पाकी अदालती सज़ा से नहीं, सिर्फ़ तौबा और अल्लाह की ओर पलटने से प्राप्त होती है।

(41) ऐ पैगंबर, तुम्हारे लिए रंज व तकलीफ़ का कारण न हों वे लोग जो कुफ़्र (इनकार) के मार्ग में बड़ी तेज़ चाल दिखा रहे हैं। भले ही वे उनमें से हो जो मुँह से कहते हैं हम ईमान लाए मगर दिल उनके ईमान नहीं लाए, या उनमें से हों जो यहूदी बन गए हैं, जिनका हाल यह है कि झूट के लिए कान लगाते हैं, और दूसरे लोगों के लिए, जो तुम्हारे पास कभी नहीं आए, सुनगुन लेते फिरते हैं, और अल्लाह की किताब के शब्दों को उनका ठीक स्थान निश्चित होने के बावजूद वास्तविक अर्थ से फेरते हैं और लोगों से कहते हैं कि अगर तुम्हें यह आदेश दिया जाए तो मानो नहीं तो न मानों।[32] जिसे अल्लाह ही ने आपदा में डालने का इरादा कर लिया हो उसको अल्लाह की पकड़ से बचाने के लिए तुम कुछ नहीं कर सकते,[33] ये वे लोग हैं जिनके दिलों को अल्लाह ने पाक करना न चाहा, उनके लिए दुनिया में भी अपमान है और आख़िरत में सख़्त सज़ा।

(42) ये झूठ सुननेवाले और हराम के माल खानेवाले हैं, अतः अगर ये तुम्हारे पास (अपने मुक़द्दमे लेकर) आएँ तो तुम्हें अधिकार दिया जाता है कि चाहो तो इनका फ़ैसला करो वरना इनकार कर दो। इनकार कर दो तो ये तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते, और फ़ैसला करो तो फिर ठीक-ठीक इनसाफ़ के साथ करो कि अल्लाह इनसाफ़ करनेवालों को पसन्द करता है[34]—(43) और ये तुम्हें कैसे निर्णायक बनाते हैं जबकि इनके पास तौरात मौजूद है जिसमें अल्लाह का आदेश लिखा हुआ है और फिर ये उससे मुँह मोड़ रहे हैं? वास्तविकता यह है कि ये लोग ईमान ही नहीं रखते।

(44) हमने तौरात उतारी जिसमें हिदायत और रौशनी थी। सारे नबी, जो

32. अर्थात् अनभिज्ञ जनसाधारण से कहते हैं कि जो हुक्म हम बता रहे हैं, अगर मुहम्मद (सल्ल०) भी यही हुक्म तुम्हें बताएँ तो उसे क़बूल करना वरना रद्द कर देना।

33. अल्लाह की ओर से किसी के आपदा या फ़ितना में डालने का अर्थ यह है कि जिस व्यक्ति के भीतर अल्लाह किसी तरह की बुरी चाहत पनपते और बढ़ते देखता है उसके सामने लगातार ऐसे अवसर लाता है जिनमें उसकी कड़ी परीक्षा होती है। अगर वह व्यक्ति अभी बुराई की ओर पूरी तरह नहीं झुका है तो इन परीक्षाओं से सँभल जाता है और उसके भीतर बुराई का मुक़ाबला करने के लिए नेकी की जो शक्तियाँ मौजूद होती हैं वे उभर आती हैं। लेकिन अगर वह बुराई की ओर पूरी तरह झुक चुका होता है और उसकी नेकी उसकी बुराई से भीतर ही भीतर परास्त हो चुकी होती है तो हर ऐसी परीक्षा के अवसर पर वह और अधिक बुराई के फंदे में फँसता चला जाता है। यही अल्लाह का वह फ़ितना है जिससे किसी बिगड़ते हुए इनसानको बचा लेना उसके किसी भला चाहनेवाले के बस में नहीं होता।

मुसलिम (आज्ञाकारी) थे, उसी के अनुसार इन यहूदियों के मामलों का फ़ैसला करते थे, और इसी तरह धर्माधिकारी और शास्त्रवेत्ता[35] भी (इसी को फ़ैसले का आधार बनाते थे) क्योंकि उन्हें अल्लाह की किताब की हिफ़ाज़त का ज़िम्मेदार बनाया गया था और वे उसपर गवाह थे। अतः (ऐ यहूदी गिरोह) तुम लोगों से न डरो बल्कि मुझसे डरो और मेरी आयतों को थोड़े-थोड़े से मुआवज़े लेकर बेचना छोड़ दो। जो लोग अल्लाह के उतारे हुए क़ानून के अनुसार फ़ैसला न करें वही अधर्मी हैं।

(45) तौरात में हमने यहूदियों पर यह हुक्म लिख दिया था कि जान के बदले जान, आँख के बदले आँख, नाक के बदले नाक, कान के बदले कान, दाँत के बदले दाँत, और सब ज़ख़्मों के लिए बराबर का बदला। फिर जो बदले (क़िसास) को दान कर दे तो वह उसके लिए कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) होगा। और जो लोग अल्लाह के उतारे हुए क़ानून के अनुसार फ़ैसला न करें वही ज़ालिम हैं।

(46) फिर हमने इन पैग़म्बरों के बाद मरयम के बेटे ईसा को भेजा। तौरात में से जो कुछ उसके सामने मौजूद था वह उसकी पुष्टि करनेवाला था। और हमने उसे इंजील प्रदान की जिसमें रहनुमाई और रौशनी थी और वह भी तौरात में से जो कुछ उस समय मौजूद था उसकी पुष्टि करनेवाली थी और अल्लाह से डरनेवाले लोगों के लिए सर्वथा मार्ग-दर्शन और नसीहत थी। (47) हमारा आदेश था कि इंजीलवाले उस क़ानून के अनुसार फ़ैसला करें जो अल्लाह ने उसमें उतारा है और जो लोग अल्लाह के उतारे हुए क़ानून के अनुसार फ़ैसला न करें वही पाबन्दी तोड़नेवाले (फ़ासिक़) हैं।[36]

(48) फिर ऐ नबी, हमने तुम्हारी ओर यह किताब भेजी जो हक़ (सत्य) लेकर आई है और मूल किताब में से जो कुछ उसके आगे मौजूद है उसकी पुष्टि करनवाली और उसकी संरक्षक है।[37] अतः तुम अल्लाह के उतारे हुए क़ानून के अनुसार लोगों के

34. यहूदी उस समय तक इस्लामी राज्य की विधिवत् रूप से प्रजा नहीं बने थे बल्कि इस्लामी हुकूमत के साथ उनके सम्बन्ध सन्धि और समझौते पर आधारित थे। इसी लिए उनका नबी (सल्ल॰) की अदालत में आना अनिवार्य न था। लेकिन जिन मामलों में वे ख़ुद अपने धार्मिक क़ानून के अनुसार फ़ैसला करना न चाहते थे उनका फ़ैसला कराने के लिए नबी (सल्ल॰) के पास इस उम्मीद पर आ जाते थे कि शायद आपको शरीअत (धर्मविधान) में उनके लिए कोई दूसरा आदेश हो और इस तरह वे अपने धार्मिक क़ानून के अनुपालन और पकड़ से बच जाएँ।
35. यहाँ 'रब्बानी' और 'अहबार' शब्द प्रयुक्त हुए हैं। 'रब्बानी' से मुराद उलमा, विद्वान और 'अहबार से मुराद विधान के विचारक (फ़ुक़हा) है।

मामलों का फ़ैसला करो और जो हक़ (सत्य) तुम्हारे पास आया है उससे मुँह मोड़कर की उनकी इच्छाओं का पालन न करो—हमने तुम (इनसानों) में से हर एक के लिए एक धर्म-विधान और कार्य-प्रणाली निर्धारित की। यद्यपि अगर तुम्हारा अल्लाह चाहता तो तुम सबको एक उम्मत (समुदाय) भी बना सकता था, लेकिन उसने यह इसलिए किया

36. यहाँ अल्लाह ने उन लोगों के हक़ में जो अल्लाह के उतारे हुए क़ानून के अनुसार फ़ैसला न करें तीन हुक्म साबित किए हैं : एक यह कि वे काफ़िर (अधर्मी) हैं। दूसरे यह कि वे ज़ालिम हैं। तीसरे यह कि वे 'फ़ासिक़' अर्थात् अवज्ञाकारी हैं। जो व्यक्ति ईश्वरीय आदेश के विरुद्ध इस कारण फ़ैसला करता है कि वह ईश्वरीय आदेश को ग़लत और अपने या किसी दूसरे मनुष्य के आदेश को ठीक समझता है वह पूर्ण रूप से काफ़िर और ज़ालिम और 'फ़ासिक़' है, और जो वैचारिक दृष्टि से ईश्वरीय आदेश को सत्य समझता है मगर व्यवहारतः उसके विरुद्ध फ़ैसला करता है वह यद्यपि समुदाय से बाहर तो नहीं है लेकिन अपने ईमान को कुफ़्र, अनयाय और अवज्ञा से मिला रहा है। इसी तरह जो सभी मामलों में ईश्वरीय आदश से विमुख है वह सभी मामलों में काफ़िर, ज़ालिम और फ़ासिक़ (अवज्ञाकारी) है और जो कुछ मामलों में आज्ञाकारी और कुछ में विमुख है उसके जीवन में ईमान और इस्लाम और कुफ़्र और ज़ुल्म और अवज्ञा का मिश्रण ठीक उसी अनुपात से है जिस अनुपात से उसने आज्ञापालन और अवज्ञा को मिला रखा है।
37. यहाँ एक महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर संकेत किया गया है। यद्यपि इस विषय को इस तरह भी बयान किया जा सकता था कि "पिछली किताबों" में से जो कुछ अपने असली और ठीक रूप में बाक़ी है, क़ुरआन उसकी पुष्टि करता है लेकिन अल्लाह ने "पिछली किताबों" के बदले "अल-किताब' (मूल किताब) शब्द इस्तेमाल किया। इससे इस रहस्य का उद्घाटन होता है कि क़ुरआन और वे सभी किताबें जो विभिन्न समयों और विभिन्न भाषाओं में अल्लाह की ओर से उतारी गई, सब की सब वास्तव में एक ही किताब है। एक ही उनका रचयिता है, एक ही उनका आशय और उद्देश्य है, एक ही उनकी शिक्षा है और एक ही ज्ञान है जो उनके जरिए से पूरी इनसानी बिरादरी को प्रदान किया गया। अन्तर अगर है तो वर्णनों का है जो एक ही उद्देश्य के लिए विभिन्न श्रोताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न ढंग से अपनाए गए। क़ुरआन को अल-किताब (मूल किताब) का संरक्षक कहने का अर्थ यह है कि इसने सम्पूर्ण सत्य-शिक्षाओं को जो पिछली आसमानी किताबों में दी गई थीं अपने भीतर लेकर सुरक्षित कर दिया है। अब उनकी सच्ची शिक्षाओं का कोई हिस्सा बरबाद न हने पाएगा।

कि जो कुछ उसने तुम लोगों को दिया है उसमें तुम्हारी आज़माइश करे। अतः भलाइयों में एक दूसरे से आगे बढ़ जाने की कोशिश करो। आख़िरकार तुम सबको अल्लाह की ओर पलटकर जाना है, फिर वह तुम्हें असल हक़ीक़त बता देगा जिसमें तुम मतभेद करते रहे हो—(49) अतः ऐ नबी, तुम अल्लाह के उतारे हुए क़ानून के अनुसार इन लोगों के मामलों का फ़ैसला करो और इनकी इच्छाओं का पालन न करो। सावधान रहो कि वे लोग तुम्हें फ़रेब (फ़ित्ने) में डालकर उस मार्गदर्शन से तनिक भी फेरने न पाएँ जो अल्लाह ने तुम्हारी ओर अवतरित किया है। फिर अगर ये उससे मुँह मोड़े तो जान लो कि अल्लाह ने इनके कुछ गुनाहों के बदले में इनको मुसीबत में डालने का इरादा ही कर लिया है, और यह हक़ीक़त है कि इन लोगों में से अधिकतर उल्लंघनकारी हैं। (50) (अगर ये अल्लाह के क़ानून से मुँह मोड़ते हैं) तो क्या फिर अज्ञान[38] का फ़ैसला चाहते हैं? हालाँकि जो लोग अल्लाह को मानते हैं उनके नज़दीक अल्लाह से अच्छा फ़ैसला करनेवाला और कौन हो सकता है?

(51) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, यहूदियों और ईसाइयों को अपना साथी और मित्र न बनाओ, ये आपस ही में एक दूसरे के मित्र हैं। और अगर तुममें से कोई उनको अपना मित्र बनाता है तो उसकी गिनती भी फिर उन्हीं लोगों में से है, यक़ीनन अल्लाह ज़ालिमों को सीधे रास्ते से महरूम कर देता है।

(52) तुम देखते हो कि जिनके दिलों में कपटाचार का रोग है वे उन्हीं में दौड़-धूप करते फिरते हैं। कहते हैं, ''हमें डर लगता है कि कहीं हम किसी मुसीबत के चक्कर में न फँस जाएँ।'' मगर असंभव नहीं कि अल्लाह जब तुम्हें निर्णायक विजय प्रदान करेगा या अपनी ओर से कोई और बात सामने लाएगा तो ये लोग अपने उस कपटाचार पर जिसे ये मन में छुपाए हुए हैं लज्जित होंगे। (53) औ उस समय ईमानवाले कहेंगे : ''क्या ये वही लोग हैं जो अल्लाह के नाम से कड़ी-कड़ी क़समें खाकर विश्वास दिलाते

38. अज्ञान का शब्द इस्लाम के मुक़ाबले में प्रयोग किया जाता है। इस्लाम का तरीक़ा ज्ञान है क्योंकि उसकी ओर मार्गदर्शन अल्लाह ने किया है जो सभी हक़ीक़तों से परिचित है। और इसके विपरीत हर वह तरीक़ा जो इस्लाम से भिन्न है, अज्ञान का तरीक़ा है। अरब के इस्लाम से पहले के समय को अज्ञान-काल इन्हीं अर्थों में कहा गया है कि उस ज़माने में ज्ञान के बिना मात्र भ्रम, अन्धविश्वास, अटकल या इच्छाओं के आधार पर इनसानों ने अपने लिए ज़िन्दगी के तरीक़े निर्धारित कर लिए थे, यह नीति जहाँ, जिस युग में भी अपनाई जाए उसे हर हाल में अज्ञान ही की नीति कहा जाएगा।

थे कि हम तुम्हारे साथ हैं?''—इनका सारा किया-धरा अकारथ गया और आख़िरकार ये असफल होकर रहे।

(54) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अगर तुममें से कोई अपने धर्म से फिरता है (तो फिर जाए), अल्लाह और बहुत-से लोग ऐसे पैदा कर देगा जो अल्लाह को प्रिय होंगे और अल्लाह को प्रिय होगा, जो ईमानवालों पर नरम और अधर्मियों के लिए कठोर[39] होंगे, जो अल्लाह के मार्ग में जान-तोड़ कोशिश करेंगे और किसी भर्त्सना करनेवाले की निन्दा से न डरेंगे। अल्लाह का यह अनुग्रह है, जिसे चाहता है प्रदान करता है। अल्लाह विस्तृत साधनों का मालिक है और सब कुछ जानता है।

(55) तुम्हारे मित्र तो वास्तव में सिर्फ़ अल्लाह और अल्लाह का रसूल और वे ईमानवाले हैं जो नमाज़ क़ायम करते हैं, ज़कात (दान) देते हैं और अल्लाह के आगे झुकनेवाले हैं। (56) और जो अल्लाह और उसके रसूल और ईमानवालों को अपना मित्र बना ले उसे मालून हो कि अल्लाह की जमाअत ही प्रभावी होकर रहनेवाली है।

(57) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुमसे पहले के किताबवालों मे से जिन लोगों ने तुम्हारे धर्म को हँसी और मनोरंजन का सामान बना लिया है, उन्हें और दूसरे अधर्मियों को अपना दोस्त और साथी न बनाओ। अल्लाह से डरो अगर तुम ईमानवाले हो। (58) जब तुम नमाज़ के लिए पुकारते हो तो वे उसका मज़ाक़ उड़ाते और उससे खेलते हैं।[40] इसका कारण यह है कि वे बुद्धिहीन हैं। (59) इनसे कहो, ''ऐ

39. ''ईमानवालों पर नरम' होने का अर्थ यह है कि एक व्यक्ति ईमानवालों के मुक़ाबले में अपने बल का प्रयोग कभी न करे। उसकी बौद्धिक शक्ति, उसकी समझदारी, उसकी कुशलता और योग्यता, उसकी पहुँच और प्रभाव, उसका धन, उसका शारीरिक बल, कोई चीज़ भी मुसलमानों को दबाने और सताने और नुकसान पहुँचाने के लिए न हो। मुसलमान अपने बीच उसको हमेशा एक मृदुल स्वभाव, रहमदिल, सहायक और सहनशील मनुष्य ही पाएँ। ''अधर्मियों के लिए कठोर'' होने का अर्थ यह है कि एक ईमानवाला आदमी अपने ईमान की मज़बूती, धर्म-निष्ठा, सिद्धान्त की मज़बूती, चरित्र-बल और ईमान की प्रतिभा एवं विवेक के कारण इस्लाम-विरोधीयों के मुक़ाबले में पत्थर की चट्टान की तरह हो, किसी प्रकार अपनी जगह से हटाया न जा सके। वे उसे कभी मोम की नाक और नरम चारा न पाएँ। उन्हें जब भी उससे मुक़ाबला पड़े उनपर यह सिद्ध हो जाए कि यह अल्लाह का बन्दा मर सकता है मगर किसी क़ीमत पर बिक नहीं सकता और किसी दबाव से दब नहीं सकता।

किताबवालो, तुम जिस बात पर हमसे बिगड़े हो वह इसके सिवा और क्या है कि हम अल्लाह पर और धर्म की उस शिक्षा पर ईमान लाए हैं जो हमारी ओर अवतरित हुई है और हमसे पहले भी अवतरित हुई थी, और तुममें से अकसर लोग फ़ासिक़ (उल्लंघनकारी) हैं।'' (60) फिर कहो, ''क्या मैं उन लोगों को बताऊँ जिनका परिणाम अल्लाह के यहाँ फ़ासिक़ों (उल्लंघनकारियों) से भी बुरा है? वे जिनपर अल्लाह की फिटकार पड़ी, जिनपर उसका प्रकोप हुआ, जिनमें से बन्दर और सुअर बनाए गए, जिन्होंने बढ़े हुए फ़सादी (ताग़ूत) की बन्दगी की। उनका दर्जा और भी ज़्यादा बुरा है और वे सीधे समतल मार्ग से बहुत ज़्यादा भटके हुए हैं।''

(61) जब ये तुम लोगों के पास आते हैं तो कहते हैं कि हम ईमान लाए, हालाँकि वे इनकार लिए हुए आए थे और इनकार ही लिए हुए वापस गए और अल्लाह ख़ूब जानता है जो कुछ ये दिलों में छिपाए हुए हैं। (62) तुम देखते हो कि इनमें से बहुतेरे लोग गुनाह और ज़ुल्म व ज़्यादती के कामों में दौड़-धूप करते फिरते हैं और हराम के माल खाते हैं। बहुत बुरे कर्म हैं जो ये कर रहे हैं। (63) क्यो इनके धर्मज्ञाता और बड़े लोग इन्हें गुनाह पर ज़बान खोलने और हराम खाने से नहीं रोकते? यक़ीनन बहुत ही बुरी कृति है जो वे तैयार कर रहे हैं।

(64) यहूदी कहते हैं अल्लाह के हाथ बंधे हुए हैं[41]—बाँधे गए इनके हाथ,[42] और फिटकार पड़ी इनपर उस बकवास के कारण जो ये करते हैं—अल्लाह के हाथ तो खुले हुए हैं, जिस तरह चाहता है खर्च करता है।

हक़ीक़त यह है कि जो कलाम (वाणी) तुम्हारे रब की ओर से तुमपर अवतरित हुआ है वह उनमें से बहुतेरे लोगों की सरकशी और अधर्म में उलटे बढ़ावे का कारण बन गया है, और (उसके बदले में) हमने इनके बीच क़ियामत तक के लिए दुश्मनी और नफ़रत डाल दी। जब कभी ये युद्ध की आग भड़काते हैं अल्लाह उसे ठण्डा कर देता है। ये ज़मीन में बिगाड़ फैलाने का जतन कर रहे हैं परन्तु अल्लाह बिगाड़ पैदा करनेवालों को हरगिज़ पसन्द नहीं करता।

40. अर्थात् अज़ान की आवाज़ सुनकर उसकी नक़लें उतारते हैं, उपहास के लिए उसके शब्द बदलते और बिगाड़ते हैं और उसपर फबतियाँ (आवाज़े) कसते हैं।

41. अरबी मुहावरे के अनुसार किसी के हाथ बँधे हुए होने का अर्थ यह है कि वह कंजूस है, दान और दक्षिणा से उसका हाथ रुका हुआ है।

42. अर्थात् कंजूसी में ये ख़ुद पड़े हुए हैं। संसार में अपनी कंजूसी और अपनी तंगदिली के लिए लोकोक्ति बन चुके हैं।

(65) अगर (इस सरकशी के बदले) ये किताबवाले ईमान ले आते और ईशभक्ति व विनम्रता की नीति अपनाते तो हम इनकी बुराइयाँ इनसे दूर कर देते और इनको नेमत भरी जन्नतों में पहुँचाते। (66) क्या ही अच्छा होता कि इन्होंने तौरात और इंजील और दूसरी किताबों को क़ायम किया होता जो इनके रब की ओर से इनके पास भेजी गई थीं। ऐसा करते तो इनके लिए ऊपर से रोज़ी बरसती और नीचे से उबलती। यद्यपि इनमें कुछ लोग ठीक चल रहे हैं लेकिन इनमें अधिकतर बड़े ही दुष्कर्मी हैं।

(67) ऐ पैग़म्बर, जो कुछ तुम्हारे रब की ओर से तुमपर अवतरित हुआ है वह लोगों तक पहुँचा दो। अगर तुमने ऐसा न किया तो उसकी पैग़म्बरी का हक़ अदा न किया। अल्लाह तुमको लोगों की बुराई से बचानेवाला है। यक़ीन रखो कि वह अधर्मियों को (तुम्हारे मुक़ाबले में) कामयाबी की राह हरगिज़ न दिखाएगा। (68) साफ़ कह दो कि ''ऐ किताबवालों, तुम हरगिज़ किसी आधार (असल) पर नहीं हो जब तक कि तौरात और इंजील और उन दूसरी किताबों को क़ायम न करो जो तुम्हारी ओर तुम्हारे रब की तरफ़ से उतारी गई है।'' ज़रूर ही यह आदेश जो तुमपर तुम्हारे रब की ओर से उतारा गया है इनमें से बहुतों की सरकशी और इनकार को और बढ़ा देगा। मगर इनकार करनेवालों के हाल पर बिलकुल दुखी न हो। (69) (विश्वास करो कि यहाँ ठेकेदारी किसी की भी नहीं है) मुसलमान हों या यहूदी, साबी हों या ईसाई, जो भी अल्लाह और अन्तिम दिन को मानेगा और अच्छे कर्म करेगा बेशक उसके लिए न किसी खौफ़ का मक़ाम है न रंज का।[43]

(70,71) हमने इसराईल की सन्तान से दृढ प्रतिज्ञा कराई और उनकी तरफ़ बहुत-से पैग़म्बर भेजे। मगर जब कभी उनके पास कोई रसूल उनकी इच्छाओं के ख़िलाफ़ कुछ लेकर आया तो किसी को उन्होंने झुठलाया और किसी को क़त्ल कर दिया, और अपने नज़दीक यह समझे कि कोई विपत्ति न आएगी, एसलिए अन्धे और बहरे बन गए। फिर अल्लाह ने उन्हें माफ़ किया तो उनमें से अधिकतर लोग और अधिक अन्धे और बहरे बनते चले गए। अल्लाह उनकी ये सब करतूते देखता रहा है।

(72) यक़ीनन कुफ़्र किया उन लोगों ने जिन्होंने कहा कि अल्लाह मरयम का बेटा मसीह ही है। हालाँकि मसीह ने कहा था कि ''ऐ इसराईलियों, अल्लाह की बन्दगी करो जो मेरा रब भी है और तुम्हारा रब भी।'' जिसने अल्लाह के साथ किसी को साझी ठहराया उसपर अल्लाह ने जन्नत हराम कर दी और उसका ठिकाना जहन्नम है, और ऐसे

43. व्याख्या के लिए देखिए सूरा 2 (अल बक़रा), आयत 62, फ़ुटनोट 26।

ज़ालिमों का कोई मददगार नहीं।

(73) यक़ीनन कुफ़्र किया उन लोगों ने जिन्होंने कहा कि अल्लाह तीन में का एक है, हालाँकि एक अल्लाह के सिवा कोई ईश्वर नहीं है। अगर ये लोग अपनी इन बातों से बाज़ न आए तो इनमें से जिस-जिसने कुफ़्र किया उसको दर्दनाक सज़ा दी जाएगी। (74) फिर क्या ये अल्लाह से तौबा नहीं करेंगे और उससे माफ़ी न माँगेंगे? अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला है।

(75) मरयम का बेटा मसीह इसके सिवा कुछ नहीं कि बस एक रसूल था, उससे पहले और भी बहुत-से रसूल हो चुके थे, उसकी माँ एक सत्यवती औरत थी, और वे दोनों खाना खाते थे। देखो हम किस तरह उनके सामने यथार्थ को निशानियाँ स्पष्ट करते हैं, फिर देखो ये किधर उलटे फिरे जाते हैं।[44]

(76) इनसे कहो, क्या तुम अल्लाह को छोड़कर उसकी इबादत करते हो जो न तुम्हारे नुक़सान का अधिकार रखता है न नफ़ा का? हालाँकि सबकी सुनने और सब कुछ जाननेवाला तो अल्लाह ही है। (77) कहो, "ऐ किताबवालो, अपने धर्म में नाहक़ सीमा से आगे न बढ़ो और उन लोगों की कल्पनाओं और विचारों का अनुसरण न करो जो तुमसे पहले ख़ुद गुमराह हुए और बहुतों को गुमराह किया और सीधे समतल मार्ग से भटक गए।"

(78-79) इसराईल की सन्तान में से जिन लोगों ने इनकार की नीति अपनाई उनपर दाऊद और मरयम के बेटे ईसा की ज़बान से लानत की गई क्योंकि वे सरकश व उद्दंड हो गए थे और ज़्यादतियाँ करने लगे थे, उन्होंने एक दूसरे को बुरे कर्मों के करने

44. इन थोड़े शब्दों में ईसाइयों की मसीह सम्बन्धी ईश्वरत्व की धारणा का ऐसा स्पष्ट खण्डन किया गया है कि इससे ज़्यादा स्पष्टता संभव नहीं है। मसीह के बारे में अगर कोई यह मालूम करना चाहे कि वास्तव में वह क्या था तो इन लक्षणों से बिलकुल असंदिग्ध रूप में मालूम कर सकता है कि वह सिर्फ़ एक इनसान था। ज़ाहिर है कि जो एक औरत के पेट से पैदा हुआ, जिसकी वंशावली तक मौजूद है, जो इनसानी जिस्म रखता था, जो उन सभी सीमाओं से सीमित और उन सभी रुकावटों से घिरा हुआ और वे सभी विशेषताएँ रखता था जो इनसान के लिए खास हैं, जो सोता था, खाता था, गरमी और सर्दी महसूस करता था, यहाँ तक कि जिसे ईसाइयों के अपने कथानुसार शैतान के जरिए आज़माइश में भी डाला गया, उसके सम्बन्ध में कौन बुद्धिमान व्यक्ति यह कल्पना कर सकता है कि वह ख़ुद ईश्वर है या ईश्वरत्व में ईश्वर का साझीदार और शरीक है।

से रोकना छोड़ दिया था,[45] बुरी कार्यप्रणाली थी जो उन्होंने अपनाई। (80) आज तुम उनमें बहुतेरे ऐसे लोग देखते हो जो (ईमानवालों के मुक़ाबले में) अधर्मियों का साथ देते और उनसे मित्रता का सम्बन्ध जोड़ते हैं। यक़ीनन बहुत बुरा अंजाम है जिसकी तैयारी उनके जी (नफ़्सों) ने उनके लिए की है, अल्लाह उनपर क्रुद्ध हो गया है और वे हमेशा के अज़ाब में पड़नेवाले हैं। (81) अगर वास्तव में ये लोग अल्लाह और पैग़म्बर और उस चीज़ के माननेवाले होते जो पैग़म्बर पर उतरी थी तो कभी (ईमानवालों के मुक़ाबले में) अधर्मियों को अपना साथी न बनाते। मगर उनमें से तो बहुत-से लोग अल्लाह के आज्ञापालन से निकल चुके हैं।

(82) तुम ईमानवालों की दुश्मनी में सबसे ज़्यादा सख़्त यहूदियों और मुशरिकों (बहुदेववादियों) को पाओगे, और ईमान लानेवालों के लिए दोस्ती में सबसे क़रीब उन लगों को पाओगे जिन्होंने कहा था कि हम 'नसारा' हैं। यह इस कारण कि उनमें इबादत करनेवाले आलिम और दुनिया छोड़नेवाले साधु व फ़क़ीर पाए जाते हैं और उनमें अहंकार नहीं है। (83) जब वे इस वाणी को सुनते हैं जो रसूल पर उतरी है तो तुम देखते हो कि सत्य की पहचान के प्रभाव से उनकी आँखे आँसुओं से भीग जाती हैं। वे बोल उठते हैं कि "पालनहार, हम ईमान लाए, हमारा नाम गवाही देनेवालों में लिख ले।" (84) और वे कहते हैं कि "आख़िर क्यों न हम अल्लाह पर ईमान लाएँ और जो सत्य हमारे पास आया है उसे क्यों न मान लें जबकि हम इस बात की इच्छा रखते हैं कि हमारा रब हमें अच्छे भले लोगों में शामिल करे?" (85) उनके यह कहने के कारण अल्लाह ने उनको ऐसे बाग़ प्रदान किए जिनके नीचे नहरें बहती हैं और वे उनमें हमेशा रहेंगे। यह बदला है अच्छी नीति अपनानेवालों के लिए, (86) रहे वे लोग जिन्होंने हमारी आयतों को मानने से इनकार किया और उन्हें झुठलाया, तो वे जहन्नम के अधिकारी हैं।

45. हर क़ौम का बिगाड़ आरंभ में कुछ थोड़े लोगों से शुरू होता है। अगर क़ौम की सामूहिक चेतना ज़िन्दा होती है तो जनमत उन बिगड़े हुए व्यक्तियों को दबाए रखता है और क़ौम सामूहिक रूप से बिगड़ने नहीं पाती। लेकिन अगर क़ौम उन व्यक्तियों के मामले में असावधानी से काम लेना शुरू कर देती है और भ्रष्ट लोगोंको बुरा-भला कहने के बदले उन्हें समाज में बुराई के लिए आज़ाद छोड़ देती है, तो फिर धीरे-धीरे वही ख़राबी जो पहले कुछ थोड़े व्यक्तियों ही तक सीमित थी, पूरी क़ौम में फैलकर रहती है। यही चीज़ थी जो आख़िरकार इसराईलियों के बिगाड़ का कारण सिद्ध हुई।

(87) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जो पाक चीज़ें अल्लाह ने तुम्हारे लिए हलाल (वैध) की हैं उन्हें हराम (अवैध) न कर लो[46] और सीमा का उल्लंघन न करो, अल्लाह को ज़्यादती करनेवाले सख़्त नापसंद हैं। (88) जो कुछ हलाल और अच्छी रोज़ी अल्लाह ने तुम्हें दी है उसे खाओ-पियो और उस अल्लाह की नाफ़रमानी से बचते रहो जिसपर तुम ईमान लाए हो।

(89) तुम लोग जो निरर्थक क़समें खा लेते हो उनपर अल्लाह नहीं पकड़ता, मगर जो क़समें तुम जान-बूझकर खाते हो उनपर वह ज़रूर तुम्हें पकड़ेगा। (ऐसी क़सम तोड़ने का) कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) यह है कि दस मुहताजों को औसत दर्जे का वह खाना खिलाओ जो खाना तुम अपने बाल-बच्चों को खिलाते हो, या उन्हें कपड़े पहनाओ, या एक ग़ुलाम को आज़ाद करो, और जिसे इसकी सामर्थ्य न हो वह तीन दिन के रोज़े रखे। यह तुम्हारी क़समों का कफ़्फ़ारा है जबकि तुम क़सम खाकर तोड़ दो। अपनी क़समों की रक्षा किया करो। इस तरह अल्लाह अपने आदेश तुम्हारे लिए स्पष्ट करता है शायद कि तुम कृतज्ञता दिखाओ। (90) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, ये शराब और जुआ और ये देव-स्थान और पाँसे, ये सब गन्दे शैतानी काम हैं, इनसे बचो, उम्मीद है कि तुम्हें सफलता प्राप्त होगी।[47] (91) शैतान तो यह चाहता है कि शराब और जुए के द्वारा

46. इस आयत में दो बातें कही गई हैं—एक यह कि ख़ुद हलाल और हराम में स्वतंत्र न बन जाओ। हलाल वही है जो अल्लाह ने हलाल किया है और हराम वही है जो अल्लाह ने हराम किया। अपने आप किसी हलाल को हराम घोषित करोगे तो ईश्वरीय क़ानून की जगह अपने मन के क़ानून के अनुयायी ठहरोगे। दूसरी बात यह कि ईसाई राहिबों (संन्यासियों) हिन्दू योगियों, बौद्ध धर्म के भिक्षुओं और पूरबी सूफ़ियों की तरह संन्यास और लज़्ज़तों को छोड़ देने का तरीक़ा न अपनाओ।

47. शराब के हराम होने के सिलसिले में इससे पहले दो हुक्म आ चुके थे, जो सूरा 2 (बक़रा), आयत 219 और सूरा 4 (निसा), आयत 43 में गुज़र चुके हैं। अब इस आख़िरी हुक्म आने से पहले नबी (सल्ल०) ने एक भाषण में लोगों को सावधान कर दिया कि अल्लाह को शराब बहुत ही नापसन्द है, बहुत संभव है कि उसके बिलकुल हराम होने का आदेश आ जाए, अतः जिन-जिन लोगों के पास शराब मौजूद हो वे उसे बेच दें। इसके कुछ समय के बाद यह आयत उतरी और आपने ऐलान कराया कि अब जिनके पास शराब है वे न उसे पी सकते हैं, न बेच सकते हैं, बल्कि वे उसे नष्ट कर दें। अतएव उसी समय मदीना की गलियों में शराब बहा दी गई।

तुम्हारे बीच दुश्मनी और नफ़रत व द्वेष डाल दे और तुम्हें अल्लाह की याद से और नमाज़ से रोक दे। फिर क्या तुम इन चीज़ों से बाज़ रहोगे? (92) अल्लाह और उसके रसूल की बात मानो और बाज़ आ जावो, लेकिन अगर तुम ने अवहेलना की तो जान लो कि हमारे रसूल पर बस साफ़-साफ़ आदेश पहूँचा देने की ज़िम्मेदारी थी।

(93) जो लोग ईमान ले आए और अच्छे काम करने लगे उन्होंने पहले जोकुछ खाया-पिया था उसपर कोई पकड़ न होगी शर्त यह है कि वे आगे उन चीज़ों से बचे रहे जो हराम ठहराई गई हैं और ईमान पर जमे रहें और अच्छे काम करें, फिर जिस-जिस चीज़ से रोका जाए उससे रुके और जो ईश्वरीय आदेश हो उसे मानें, फिर अल्लाह से डरते हुए अच्छी नीति अपनाएँ। अल्लाह अच्छे चरित्रवालों को पसन्द करता है।

(94) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह तुम्हें उस शिकार के द्वारा कड़ी परीक्षा में डालेगा जो बिलकुल तुम्हारे हाथों और भालों की पहुँच में होगा, यह देखने के लिए कि तुममें कौन उससे बिन देखे डरता है, फिर जिसने इस चेतावनी के बाद अल्लाह की निश्चित की हुई सीमाओं का उल्लंघन किया उसके लिए दर्दनाक सज़ा है। (95) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, 'इहराम' की हालत में शिकार न मारो,[48] अगर तुममें से कोई जान-बूझकर ऐसा कर जाए तो जो जानवर उसने मारा हो उसी जैसा एक जानवर उसे चौपायों में से भेंट करना होगा जिसका फ़ैसला तुममें से दो इनसाफ़ करनेवाले आदमी करेंगे, और यह भेंट काबा पहुँचायी जाएगी, या नहीं तो इस गुनाह के कफ़्फ़ारे में कुछ मुहताजों को खाना खिलाना होगा, या उसके बराबर रोज़े रखने होंगे, ताकि वह अपने किए का मज़ा चखे। पहले जो हो चुका उसे अल्लाह ने माफ़ कर दिया, लेकिन अब अगर किसी ने ऐसा फिर किया तो उससे अल्लाह बदला लेगा, अल्लाह प्रभुत्वशाली और बदला लेने की सामर्थ्य रखता है।

(96) तुम्हारे लिए समुद्र का शिकार और उसका खाना हलाल कर दिया गया,

48. शिकार चाहे आदमी ख़ुद करे, या किसी दूसरे को शिकार में किसी रूप में मदद दे, दोनों बाते 'इहराम' की हालत में मना हैं, इसके अलावा अगर इहराम बाँधनेवाले के लिए शिकार मारा गया हो तब भी उसका खाना इहराम बँधनेवाले व्यक्ति के लिए जाइज़ नहीं है। हाँ, अगर किसी व्यक्ति ने अपने लिए ख़ुद शिकार किया हो और फिर वह उसमें से इहराम बाँधे हुए व्यक्ति को भी भेंट के रूप में कुछ दे दे तो उसके खाने में कोई हरज नहीं। इस सामान्य आदेश से हिंसक जानवर का मामला अलग है। साँप, बिच्छू, पागल कुत्ता और ऐसे दूसरे जानवर जो इनसान को नुक़सान पहुँचानेवाले हैं, इहराम की हालत में मारे जा सकते हैं।

जहाँ तुम ठहरो वहाँ भी उसे खा सकते हो और क़ाफ़िले के लिए राह-ख़र्च भी बना सकतो हो. अलबत्ता स्थल का शिकार जब तक तुम 'इहराम' की हालत में हो, तुमपर हराम किया गया है। अतः बचो उस अल्लाह की नाफ़रमानी से जिसके सामने तुम सबको घेरकर हाज़िर किया जाएगा।

(97) अल्लाह ने आदरणीय घर, काबा को लोगों के लिए (सामूहिक जीवन की) स्थापना का साधन बनाया और आदरणीय महीनों और क़ुरबानी के जानवरों और क़लादों (वे चीज़ें जो जानवरों की गर्दन में लटकाई जाती हैं) को भी (इस कार्य में सहायक बना दिया) ताकि तुम्हें मालूम हो जाए कि अल्लाह आसमानों और ज़मीन के सब हाल को जानता है और उसे हर चीज़ का ज्ञान है। (98) सावधान हो जाओ! अल्लाह सज़ा देने में भी कठोर है और इसके साथ बहुत क्षमाशील और दयावान भी है। (99) रसूल की जिम्मेदारी तो सिर्फ़ सन्देश पहुँचा देने की है, आगे तुम्हारी खुली और छिपी हालतों का जाननेवाला अल्लाह है। (100) ऐ पैग़म्बर, इनसे कह दो कि पाक और नापाक किसी हाल में समान नहीं हैं चाहे नापाक की बहुतायत तुम्हें कितनी ही रिझानेवाली हो,[49] अतः ऐ लोगो जो बुद्धिमान हो, अल्लाह की नाफ़रमानी से बचते रहो, उम्मीद है कि तुम्हें सफलता प्राप्त होगी।

(101) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, ऐसी बातें न पूछा करो जो तुमपर खोल दी जाएँ तो तुम्हें नागवार लगे,[50] लेकिन अगर तुम उन्हें ऐसे समय पूछोगे जबकि क़ुरआन अवतरित हो रहा हो तो वे तुमपर खोल दी जाएँगी। अब तक जो कुछ तुमने किया उसे अल्लाह ने माफ़ कर दिया, वह माफ़ करनेवाला और सहनशील है। (102) तुमसे पहले एक गिरोह ने इसी प्रकार के सवाल किए थे, फिर वे लोग उन्हीं बातों के कारण

49. यह आयत मूल्यांकन और महत्त्व का एक दूसरा ही आदर्श पेश करती है जो बाह्यदर्शी इनसान के आदर्श और मानदंड से बिलकुल भिन्न है। बाह्यदर्शी व्यक्ति की न जर में सौ रुपये पाँच रुपये की अपेक्षा अनिवार्यतः अधिक कीमती हैं क्योंकि वे सौ है और ये पाँच। लेकिन यह आयत कहती है कि सौ रुपये अगर अल्लाह की नाफ़रमानी करके प्राप्त किए गए हो तो वे नापाक हैं, और पाँच रुपये अगर अल्लाह की फ़रमाँबरदारी करते हुए कमाए गए हो तो वे पाक हैं, और नापाक चाहे मात्रा में कितना ही ज़्यादा हो, किसी हाल में भी वह पाक के बराबर किसी तरह नहीं हो सकता।

50. नबी (सल्ल॰) से कुछ लोग अजीब-अजीब ढंग से बेकार सवाल किया करते थे जिनकी न धर्म के किसी मामले में ज़रूरत होती थी और न दुनिया ही के किसी मामले में, इसपर यह चेतावनी दी गई है।

अधर्म में जा पड़े।

(103) अल्लाह ने न कोई 'बहीरा' ठहराया है न 'साइबा' और न 'वसीला' और न 'हाम'।[51] मगर ये अधर्मी अल्लाह पर झूठ घड़ते हैं और उनमें से बहुतेरे बुद्धिहीन हैं (कि ऐसे अंधविश्वास में पड़े हैं)। (104) और जब उनसे कहा जाता है कि आओ उस क़ानून की ओर जो अल्लाह ने उतारा है और आओ पैग़म्बर की ओर तो वे जवाब देते हैं कि हमरे लिए तो बस वही तरीक़ा काफ़ी है जिसपर हमने अपने बाप-दादा को पाया है। क्या ये बाप-दादा ही का अनुसरण किए जले जाएँगे चाहे वे कुछ न जानते हो और ठीक मार्ग का उन्हें पता ही न हो?

(105) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अपनी चिन्ता करो, किसी दूसरे की गुमराही से तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ता यदि तुम ख़ुद सीधे मार्ग[52] पर हो, अल्लाह की ओर तुम सबको पलटकर जाना है, फिर वह तुम्हें बता देगा कि तुम क्या करते रहे हो।

(106) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब तुममें से किसी की मौत का समय आ जाए और वह वसीयत कर रहा हो तो इसके लिए गवाही की प्रक्रिया यह है कि तुम्हारे गिरोह में से दो न्यायप्रिय[53] आदमी गवाह बनाए जाएँ, या अगर तुम सफ़र की हालत में

51. यह अरबवासियों के अन्धविश्वासों का उल्लेख है। 'बहीरा' उस ऊँटनी को कहते थे जो पाँच बार बच्चा दे चुकी हो और आख़िरी बार उसके यहाँ नर बच्चा हुआ हो। अज्ञान-काल में अरब के लोग उसका कान चीरकर उसे आज़ाद छोड़ देते थे। फिर न कोई उसपर सवार होता, न उसका दूध पिया जाता, न उसका ऊन उतारा जाता। उसे अधिकार था कि वह जिस खेत और जिस चरागाह में चाहे चरे और जिस घाट से चाहे पानी पिए। 'साइबा' उस ऊँट या उस ऊँटनी को कहते थे जिसे किसी मन्नत के पूरे होने या किसी बीमारी से मुक्त होने या किसी ख़तरे से बच जाने पर कृतज्ञता प्रदर्शन के रूप में पुण्य कर दिया हो। इसके अलावा जिस ऊँटनी ने दस बार बच्चे दिए हो और हर बार मादा बच्चा ही दिया हो उसे भी आज़ाद छोड़ दिया जाता था। 'वसीला', अगर बकरी का पहला बच्चा नर होता तो वह देवी-देवताओं के नाम पर ज़बह कर दिया जाता, और अगर वह पहली बार मादा जनती तो उसे रख लिया जाता था लेकिन अगर नर और मादा एक साथ पैदा होते तो नर को ज़बह न करके यूँ ही देवताओं के नाम पर छोड़ दिया जाता था और उसका नाम 'वसीला' था। 'हम', अगर किसी ऊँट का पोता सवारी के योग्य हो जाता तो उस बुढ़े ऊँट को आज़ाद छोड़ दिया जाता था, और अगर किसी ऊँट के वीर्य से दस बच्चे पैदा हो जाते तो उसे भी आज़ादी मिल जाती।

हो और वहाँ मौत की मुसीबत आ जाए तो ग़ैर लोगों ही में से दो गवाह ले लिए जाएँ। फिर अगर कोई सन्देह उत्पन्न हो जाए तो नमाज़ के बाद दोनों गवाहों को (मसजिद में) रोक लिया जाए और वे अल्लाह की कसम खाकर कहे कि ''हम किसी व्यक्तिगत लाभ के बदले गवाही बेचनेवाले नहीं हैं, और चाहे कोई हमारा नातेदार ही क्यों न हो (हम उसकी रिआयत करनेवाले नहीं), और न अल्लाह के वास्ते ही गवाही को हम छिपानेवाले हैं, अगर हमने ऐसा किया तो गुनाहगारों में हमारी गिनती होगी।'' (107) लेकिन अगर पता चल जाए कि उन दोनों ने अपने आपको गुनाह में डाल लिया है तो फिर उनकी जगह दो और व्यक्ति जो उनकी अपेक्षा गवाही देने के ज़्यादा योग्य हों उन लोगों में से खड़े हो जिनका हक़ मरा गया हो, और वे अल्लाह की क़सम खाकर कहें कि ''हमारी गवाही उनकी गवाही से ज़्यादा ठीक है और हमने अपनी गवाही में कोई ज़्यादती नहीं की है, अगर हम ऐसा करें तो ज़ालिमों में से होंगे।'' (108) इस तरीक़े से ज़्यादा उम्मीद रहती है कि लोग ठीक-ठीक गवाही देंगे, या कम से कम इस बात से डरेंगे कि उनकी क़समों के बाद दूसरी क़समों से कहीं उनका खण्डन न हो जाए। अल्लाह से डरो और सुनो, अल्लाह नाफ़रमानी करनेवालों को अपनी रहनुमाई से वंचित कर देता है।

(109) जिस दिन अल्लाह सब रसूलों को इकट्ठा करके पूछेगा कि तुम्हें क्या जवाब[54] दिया गया, तो वे कहें गे कि हमें कुछ ज्ञान नहीं, आप ही सब छिपी हक़ीक़तों

52. अर्थात् इसके बजाय कि मनुष्य हर समय यह देखता रहे कि अमुक व्यक्ति क्या कर रहा है और अमुक व्यक्ति की धारणा में क्या ख़राबी है और अमुक व्यक्ति के कर्मों में क्या बुराई है, उसे यह देखना चाहिए कि वह ख़ुद क्या कर रहा है। लेकिन इस आयत का मंशा यह हरगिज़ नहीं है कि आदमी बस अपनी मुक्ति की चिन्ता करे, दूसरों के सुधार की चिन्ता न करे। हज़रत अबू बक्र (रज़ि॰) इस ग़लतफ़हमी को दूर करते हुए अपने एक भाषण में कहते हैं : ''लोगो, तुम इस आयत को पढ़ते हो, और इसका ग़लत अर्थ निकालते हो। मैने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते सुना है कि जब लोगों का हाल यह हो जाए कि वे बुराई को देखें और उसे बदलने की कोशिश न करें, ज़ालिम को ज़ुल्म करते हुए पाएँ और उसका हाथ न पकड़ें, तो बहुत संभव है कि अल्लाह अपनी अज़ाब में सबको लपेट ले। अल्लाह की क़सम, तुम्हारे लिए अनिवार्य है कि भलाई का हुक्म दो और बुराई से रोको, वरना अल्लाह तुमपर ऐसे लोगों को थोप देगा जो तुममें सबसे बुरे होंगे और वे तुम्हें बड़ी तकलीफ़ें पहुँचाएँगे, फिर तुमहारे नेक लोग अल्लाह से दुआएँ माँगेंगे मगर वे क़बूल न होंगी।''

53. अर्थात् धार्मिक, सत्यप्रिय और भरोसे के लायक मुसलमान।

को जानते हैं। (110,111) फिर कल्पना करो उस अवसर की जब अल्लाह कहेगा कि ''ऐ मरयम के बेटे ईसा, याद कर मेरी उस नेमत को जो मैंने तुझे और तेरी माँ को प्रदान की थी। मैंने पवित्र आत्मा से तेरी सहायता की, तू पालने में भी लोगों से बातचीत करता था और बड़ी उम्र को पहुँचकर भी, मैने तुझको किताब और गहरी समझ और तौरात और इंजील की तालीम दी, तू मेरी अनुमति से मिटटी का पुतला पक्षी के रूप का बनाता और उसमें फूँकता था और वह मेरी अनुमति से पक्षी बन जाता था, तू पैदाइशी अंधे और कोढ़ी को मेरी अनुमति से अच्छा करता था, तू मुर्दों को मेरी अनुमति से निकालता था,[55] फिर जब तू बनी इसराईल के पास खुली निशानियाँ लेकर पहुँचा और जिन लोगों को सत्य से इनकार था उन्होंने कहा कि ये निशानियाँ जादुगरी के सिवा और कुछ नहीं हैं तो मैंने ही तुझे उनसे बचाया, और जब मैंने 'हवारियों' (मसीह के साथवालों) को इशारा किया कि मुझपर और मेरे रसूल पर ईमान लाओ तब उन्होंने कहा कि ''हम ईमान लाए और गवाह रहो कि हम मुसलिम (आज्ञाकारी) हैं''—(112) (हवारियों[56] के सम्बन्ध में) यह घटना भी याद रहे कि जब हवारियों ने कहा, ''ऐ मरयम के बेटे ईसा, क्या आपका रब हमपर आसमान से खाने से भरा थाल उतरा सकता है?'' तो ईसा ने कहा, ''अल्लाह से डरो अगर तुम ईमानवाले हो।'' (113) उन्होंने कहा, ''हम बस यह चाहते हैं कि उस थाल से खाना खाएँ और हमारे दिल सन्तुष्ट हों और हमें मालूम हो जाए कि आपने जो कुछ हमसे कहा है वह सच है और हम उसपर गवाह हों।'' (114) इसपर मरयम के बेटे ईसा ने दुआ की, ''ऐ अल्लाह, हमारे रब, हमपर आसमान से एक थाल उतार जो हमारे लिए और हमारे अगलों-पिछलों के लिए ख़ुशी का अवसर ठहरे और तेरी ओर से एक निशानी हो, हमें रोज़ी दे और तू बेहतरीन रोज़ी

54. अर्थात् क़ियामत के दिन रसूलों से पूछा जाएगा कि इस्लाम की ओर जो दावत (आह्वान) तुमने दुनिया को दी थी उसका क्या जवाब दुनिय ने तुम्हें दिया?

55. अर्थात् मौत की हालत से निकालकर जीवन की स्थिति में लाता था।

56. चूँकि हवारियों की बात आ गई थी इसलिए वार्ता-क्रम को तोड़कर व्यवहित वाक्य के रूप में यहाँ हवारियों ही के सम्बन्ध में एक और घटना की ओर इशारा कर दिया गया जिससे यह बात साफ़ जाहिर होती है कि मसीह से प्रत्यक्ष रूप से जिन शिष्यों ने शिक्षा पाई थी वे मसीह को एक इनसान और केवल एक बन्दा समझते थे और उनकी कल्पना में भी अपने गुरु के ईश्वर या ईश्वर का साझीदार या ईश्वर का पुत्र होने की धारणा न थी। इसके अलावा यह भी कि मसीह ने स्वयं भी अपने आपको उनके सामने एक अधिकारहीन और बेबस बन्दे की हैसियत से पेश किया था।

देनेवाला है।'' (115) अल्लाह ने जवाब दिया, ''मैं उसको तुमपर उतारनेवाला हूँ, मगर इसके बाद जो तुममें इनकार की नीति अपनाएगा उसे मैं ऐसी सज़ा दूँगा जो मैंने किसी को न दी होगी।'' (116)—सारांश यह कि जब (ये एहसान याद दिलाकर) अल्लाह कहेगा कि ''ऐ मरयम के बेटे ईसा, क्या तुने लोगों से कहा था कि अल्लाह के सिवा मुझे और मेरी माँ को भी ईश्वर बना लो?''[57] तो वह जवाब में कहेगा कि ''पाक है अल्लाह, मेरा यह काम न था कि वह बात कहता जिसके कहने का मुझे अधिकार न था, अगर मैंने ऐसी बात कही होती तो आपको ज़रूर मालूम होता, आप जानते हैं जो कुछ मेरे दिल में है और मैं नहीं जानता जो कुछ आपके दिल में है, आप तो सारी छिपी हक़ीकतों के ज्ञाता हैं। (117) मैंने उनसे उसके सिवा कुछ नहीं कहा जिसका आपने आदेश दिया था, यह कि अल्लाह की बन्दगी करो जो मेरा रब भी है और तुम्हारा रब भी। मैं उसी समय तक उनका निगराँ था जब तक मैं उनके बीच था। जब आपने मुझे वापस बुला लिया तो आप उनपर निगराँ थे और आप तो सारी ही चीज़ों पर निगराँ हैं। (118) अब अगर आप उन्हें सज़ा दें तो वे आपके बन्दे हैं और अगर माफ़ कर दें तो आप प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी हैं।'' (119) तब अल्लाह कहेगा, ''यह वह दिन है जिसमें सच्चों को उनकी सच्चाई फ़ायदा पहुँचाती है, उनके लिए ऐसे बाग़ है जिनके नीचे नहरें बह रही हैं, यहाँ वे हमेशा रहेंगे, अल्लाह उनसे राज़ी हुआ और वे अल्लाह से, यही बड़ी सफलता है।

(120) ज़मीन और आसमानों और जो कुछ उनमें है सबकी बादशाही अल्लाह ही के लिए है और वह हर चीज़ की क़ुदरत रखता है।

● ● ●

57. ईसाईयों ने अल्लाह के साथ सिर्फ़ मसीह और पवित्र-आत्मा ही को ईश्वर बनाने पर बस नहीं किया, बल्कि मसीह की माँ हज़रत मरयम को भी स्थायी रूप से एक माबूद बना डाला। मसीह के बाद आरंभिक तीन सौ वर्ष तक ईसाई जगत् इस धारणा एवं विचार से बिलकुल अनभिज्ञ था। ईसा की तीसरी शताब्दी के अन्तिम चरण में अलेक्ज़ैंड्रिया के कुछ आध्यात्मिक विद्वानों ने पहली बार हज़रत मरयम के लिए 'उम्मुल्लाह' या 'मादरे ख़ुदा (ईश-माता)' के शब्द इस्तेमाल किए और इसके बाद धीरे-धीरे मरयम की पूजा चर्च में फैलती चली गई।

6. अल-अनआम

नाम

इस सूरा की आयत 139 से 141 तक और 146 से 147 तक की आयतों में कुछ मवेशियों के हराम होने और कुछ हलाल होने के सम्बन्ध में अरबवालों के अंधविश्वासों का खण्डन किया गया है। इसीलिए इसका नाम अल-अनआम (मवेशी) रखा गया है।

अवतरणकाल

इब्ने अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि यह पूरी सूरा एक ही वक़्त में मक्का में अवतरित हुई थी। हज़रत मआज़ बिन जबल (रज़ि॰) की चचेरी बहन असमान बिन यज़ीद (रज़ि॰) कहती है कि ''जब यह सूरा नबी (सल्ल॰) पर उतरी उस समय आप ऊँटनी पर सवार थे। मैं उसकी नकेल पकड़े हुए थी। बोझ के मारे ऊँटनी का यह हाल हो रहा था कि मालूम होता था कि उसकी हड्डियाँ अब टूट जाएँगी।'' उल्लेखों से यह भी स्पष्ट होता है कि जिस रात यह सूरा अवतरित हुई उसी रात आपने इसे लिपिबद्ध करा दिया।

अवतरण की पृष्ठभूमि

जिस समय यह अभिभाषण दिया गया है उस समय अल्लाह के रसूल द्वारा लोगों को इस्लाम की ओर बुलाते हुए 12 वर्ष व्यतीत हो चुके थे। क़ुरैश की ओर से रुकावटें और अत्याचार और उनकी हिंसा की नीति शिखर तक पहुँच चुकी थी। इस्लाम क़बूल करनेवालों की एक बड़ी संख्या उनके ज़ुल्म से विवश होकर देश छोड़ चुकी थी और हबशा में जा बसी थी।

वार्ताएँ

इन परिस्थितीयों में यह अभिभाषण दिया गया। इसकी विषय-वस्तुओं को सात बड़े-बड़े शीर्षकों में विभक्त किया जा सकता है :

(1) बहुदेववाद का खण्डन और एकेश्वरवाद की धारणा की ओर लोगों को आमंत्रित करना।

(2) आख़िरत (परलोक) की धारणा का प्रचार-प्रसार करना।

(3) अज्ञन काल के अंधविश्वासों का खण्डन।

(4) उन उच्च नैतिक सिद्धांतों की शिक्षा जिनके आधार पर इस्लाम समाज का निर्माण चाहता था।

(5) नबी (सल्ल॰) और आपके संदेश के विरुद्ध आक्षेपों का उत्तर।

(6) नबी (सल्ल॰) और आम मुसलमानों को सांत्वना।

(7) इनकार करनेवालों और विरोधियों को नसीहत, चेतावनी और डरावा।

मक्की जीवन के काल-खण्ड

यहाँ चूँकि पहली बार पाठकों के सामने एक विस्तृत मक्की सूरा आ रही है इसलिए उचित मालूम होता है कि यहाँ हम मक्की सूरतों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का एक सारगर्भित स्पष्टीकरण कर दें ताकि आगे की समस्त मक्की सूरतों को और उनकी टीका के सम्बन्ध में हमारे संकेतों को समझना आसान हो जाए।

जहाँ तक मदनी सूरतों का सम्बन्ध है, उनमें से तो लगभग प्रत्येक का अवतरणकाल ज्ञात है या थोड़े-से प्रयास से निश्चित किया जा सकता है बल्कि उनकी तो बहुत-सी आयतों के अवतरण की अपनी अलग पृष्ठभूमि तक विश्वसनीय उल्लेखों में मिल जाती है। किन्तु मक्की सूरतों के बारे में हमारे पास जानकारी के विस्तृत साधन मौजूद नहीं हैं। बहुत कम सूरतें या आयतें ऐसी हैं जिनके अवतरण के विषय में कोई सही और विश्वसनीय उल्लेख मिलता हो। इसलिए मक्की सूरतों के मामले में हमको ऐतिहासिक साक्ष्यों की जगह प्रायः उन आंतरिक साक्ष्यों पर भरोसा करना पड़ता है जो विभिन्न सूरतों के केन्द्रीय विषय, विषय-वस्तु, वर्णन-शैली में, और अपनी पृष्ठभूमि की ओर उनके स्पष्ट या अस्पष्ट संकेतों में पाए जाते हैं। विदित है कि इस प्रकार के साक्ष्यों की मदद से प्रत्येक सूरा और आयतों के बारे में यह निश्चित नहीं किया जा सकता कि यह अमुक तिथि में, या अमुक सन् में अवतरित हुई है। ज़्यादा सही बात जो कही जा सकती है वह सिर्फ़ यह है कि एक तरफ़ हम मक्की सूरतों के आंतरिक साक्ष्यों को और दूसरी ओर नबी (सल्ल॰) के मक्की जीवन के इतिहास को आमने-सामने रखें और फिर दोनों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए यह मत निर्धारित करें कि कौन-सी सूरा किस काल-खण्ड से सम्बन्ध रखती है— इस शोध पद्धति को मन में रखकर जब हम नबी (सल्ल॰) के मक्की जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो वह इस्लामी आह्वान के दृष्टिकोण से हमको चार बड़े-बड़े स्पष्ट काल-खण्डों में दिखाई देता है :–

1) पहला काल-खण्ड :– आपके नबी होने के आरम्भ से लेकर नुबूवत की घोषणा तक लगभग– 3 वर्ष, जिसमें गुप्त रूप से ख़ास-खासआदमियों को सत्य-धर्म का

आमंत्रण दिया जा रहा था और मक्का के जन सामान्य को इसकी ख़बर न थी।

2) दूसरा काल-खण्ड :– नुबूवत की अभिघोषणा से लेकर अत्याचार और उत्पीड़न (Persecution) के आरम्भ तक, लगभग दो साल जिसमें पहले विरोध शुरू हुआ फिर उसने अवरोध का रूप धारण किया फिर हँसी-ठठा. आक्षेप, अप-शब्द, छूठे प्रोपगंडे और विरोधात्मक जत्था-बंदी तक नौबत पहुँची और अन्ततः उन मुसलमानों पर अत्याचार शुरू हो गए जो अपेक्षाकृत अधिक निर्धन, कमज़ोर और निस्सहाय थे।

3) तीसरा काल-खण्ड :– उत्पीड़न के सन् 5 नबवी से लेकर अबू तालिब और हज़रत ख़दीजा के देहान्त (सन् 10 नबवी) तक लगभग छः वर्ष। इसमें विरोध प्रचंडता के शिखर तक पहुँचता चला गया, बहुत से मुसलमान मक्का के काफ़िरों के ज़ुल्म से तंग आकर हबशा की ओर प्रस्थान कर गए। नबी (सल्ल॰) और आपके कुटुम्ब और बाक़ी बचे मुसलमानों का आर्थिक एवं सामाजिक बॉयकाट किया गया और आप (सल्ल॰) अपने सहायकों और साथियों सहित अबू तालिब की घाटी में क़ैद कर दिए गए।

4) चौथा काल-खण्ड :– सन् 10 नबवी से लेकर सन् 13 नबवी तक लगभग 3 वर्ष। यह नबी (सल्ल॰) और आपके साथियों के लिए अत्यंत संकट का समय था। मक्का में आपके लिए ज़िन्दगी-दूभर कर दी गई थी। अन्ततः अल्लाह की कृपा से अंसार (मदीना के मुसलमानों) के दिल इस्लाम के लिए खुल गए और उनके आमंत्रण पर नबी (सल्ल॰) ने मदीना की ओर प्रस्थान किया।

इसमें से प्रत्येक काल-खण्ड से क़ुरआन की जो सूरतें उतरी हैं उनमें उन काल-खण्ड की विशिष्टताओं का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। उन्हीं लक्षणों पर भरोसा करके हम हर मक्की सूरा के प्राक्कथन में बताएंगे कि वह मक्का के किस काल-खण्ड में अवतरित हुई है।

6 सूरा अल-अनआम

(मक्का में उतरी–आयतें 165)

अल्लाह के नाम से बड़ा मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) तारीफ़ अल्लाह के लिए है जिसने ज़मीन और आसमान बनाए, रौशनी और अँधेरों को पैदा किया। फिर भी वे लोग जिन्होंने सत्य सन्देश को मानने से इनकार कर दिया है दूसरों को अपने रब का समकक्ष ठहरा रहे हैं। (2) वही है जिसने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया, फिर तुम्हारे लिए ज़िन्दगी की एक मुद्दत निश्चित कर दी, और एक दूसरी अवधि और भी है जो उसके यहाँ निश्चित है।[1] मगर तुम लोग सन्देह में पड़े हुए हो। (3) वही एक अल्लाह आसमानों में भी है और ज़मीन में भी, तुम्हारे खुले और छिपे सब हाल जानता है और जो बुराई या भलाई तुम कमाते हो उससे ख़ूब परिचित है।

(4) लोगों का हाल यह है कि उनके रब की निशानियों में से कोई निशानी ऐसी नहीं जो उनके सामने आई हो और उन्होंने उससे मुँह न मोड़ लिया हो। (5) अतएव अब जो सत्य उनके पास आया तो उसे भी उन्होंने झुठला दिया। अच्छा, जिस चीज़ की वे अब तक हँसी उड़ाते रहे हैं जल्द ही उसके बारे में कुछ ख़बरें उन्हें पहुँचेंगी।[2] (6) क्या इन्होंने देखा नहीं कि इनसे पहले कितनी ऐसी क़ौमों को हम तबाह कर चुके हैं जिनकी अपने-अपने युग में प्रधानता और बड़ा प्रभाव रहा है? उनको हमने धरती में वह प्रभुत्व प्रदान किया था जो तुम्हें नहीं प्रदान किया है, उनपर हमने आसमान से ख़ूब बारिशें बरसाई और उनके नीचे नहरे बहा दी, (मगर जब उन्हों ने कृतघ्नता से काम लिया तो) आख़िरकार हमने उनके गुनाहों के बदले में उन्हें तबाह कर दिया और उनकी जगह दूसरे दौर की क़ौमों को उठाया।

(7) ऐ पैग़म्बर, अगर हम तुम्हारे ऊपर कोई कागज़ में लिखी-लिखाई किताब भी उतार देते और लोग उसे अपने हाथों से छूकर भी देख लेते तब भी जिन्होंने सत्य का इनकार किया है वे यही कहते कि यह तो खुला जादू है। (8) कहते हैं कि इस नबी पर

1. अर्थात् क़ियामत की घड़ी जबकि तमाम अगले-पिछले इनसान नए सिरे से ज़िन्दा किए जाएँगे और हिसाब देने के लिए अपने रब के सामने हाज़िर होंगे।
2. संकेत है 'हिजरत' और उन सफलताओं की ओर जो हिजरत के बाद इस्लाम को लगातार हासिल होनेवाली थीं। जिस समय यह इशारा किया गया था उस समय न अधर्मी यह सोच सकते थे कि किस तरह की ख़बरें उन्हें पहुँचनेवाली हैं और न मुसलमानों ही के जेहन में इसकी कोई कल्पना थी।

कोई फ़रिश्ता क्यों नहीं उतारा गया?[3] अगर कहीं हमने फ़रिश्ता उतार दिया होता तो अब तक कभी का फ़ैसला हो चुका होता, फिर इन्हें कोई मुहलत न दी जाती। (9) और अगर हम फ़रिश्ते को उतारते तब भी उसे इनसानी शक्ल ही में उतारते और इस तरह इन्हें उसी सन्देह में डाल देते जिसमें अब ये पड़े हुए हैं।

(10) ऐ नबी, तुमसे पहले भी बहुत-से रसूलों की हँसी उड़ाई जा चुकी है, मगर उन हँसी उड़ानेवालों पर आख़िरकार वही हक़ीक़त छाकर रही जिसकी वे हँसी उड़ाते थे। (11) इनसे कहो, तनिक ज़मीन में चल-फिरकर देखो छुठलानेवालों का क्या अंजाम हुआ है।

(12) इनसे पूछो, आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है वह किसका है?—कहो सब कुछ अल्लाह ही का है, उसने दयालुता की नीति अपने लिए अनिवार्य कर ली है (इसी लिए वह अवज्ञाओं और सरकशियों पर तुम्हें जल्दी से नहीं पकड़ता), क़ियामत के दिन वह तुम सबको ज़रूर इकट्ठा करेगा, यह बिलकुल एक असंदिग्ध हक़ीक़त है, मगर जिन लोगों ने अपने आपको ख़ुद तबाही के ख़तरे में डाल लिया है वे इसेनहीं मानते।

(13) रात के अँधेरे और दिन के उजाले में जो कुछ ठहरा हुआ है, सब अल्लाह का है और वह सब कुछ सुनता और जानता है। (14) कहो, अल्लाह को छोड़कर क्या मैं किसी और को अपना सरपरस्त बना लूँ? उस अल्लाह को छोड़कर जो ज़मीन और आसमान का पैदा करनेवाला है और जो रोज़ी देता है, रोज़ी लेता नहीं है? कहो, मुझे तो यही आदेश दिया गया है कि सबसे पहले मैं उसके आगे आज्ञापालन की भावना से झुक जाऊँ (और ताकीद की गई है कि कोई ईश्वर का साझीदार बनाता है तो बनाए) तू किसी हाल में मुशरिकों (बहुदेववादीयों) में शामिल न हो। (15) कहो, अगर मैं अपने रब की नाफ़रमानी करूँ तो डरता हूँ कि एक बड़े (भयानक) दिन मुझे सज़ा भुगतनी पड़ेगी। (16) उस दिन जो सज़ा से बच गया उसपर अल्लाह ने बड़ी ही दया की और यही खुली सफलता है। (17) अगर अल्लाह तुम्हें किसी तरह का नुक़सान पहुँचाए तो उसके सिवा कोई नहीं जो तुम्हें उस नुक़सान से बचा सके, और अगर वह तुम्हें कोई भलाई पहुँचाए तो उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (18) उसे अपने सेवकों पर पूर्ण अधिकार प्राप्त है और वह जानता और ख़बर रखता है।

3. अर्थात् जब यह व्यक्ति अल्लाह की ओर से पैग़म्बर बनाकर बेजा गया है तो आसमान से एक फ़रिश्ता उतारना चाहिए था जो लोगों से कहता कि यह अल्लाह का पैग़म्बर है, इसकी बात मानो नहीं तो तुम्हें सज़ा दी जाएगी।

(19) इनसे पूछो, किसी गवाही सबसे बढ़कर है?—कहो, मेरे और तुम्हारे बीच अल्लाह गवाह है, और यह क़ुरआन मेरी ओर 'वह्य' (प्रकाशना) के द्वारा भेजा गया है ताकि तुम्हें और जिस-जिसको यह पहुँचे, सबको सावधान कर दूँ। क्या वास्तव में तुम लोग यह गवाही दे सकते हो कि अल्लाह के साथ दूसरे पूज्य भी हैं?[4] कहो, मैं तो इसकी गवाही हरगिज़ नहीं दे सकता। कहो, ईश्वर तो वही एक है और मैं उस शिर्क (बहुदेववाद) से बिलकुल बेज़ार हूँ जिसमें तुम पड़े हो। (20) जिन लोगों को हमने किताब दी है वह इस बात को इस तरह असंदिग्ध रूप से पहचानते हैं जैसे उनको अपने बेटों के पहचानने में कोई सन्देह नहीं होता। मगर जिन्होंने अपने-आपको ख़ुद घाटे में डाल दिया है वे इसे नहीं मानते। (21) और उस व्यक्ति से बढ़कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह पर झूठा आरोप लगाए, या अल्लाह की निशानियों को झुठलाए? यक़ीनन ऐसे ज़ालिम कभी सफल नहीं हो सकते।

(22) जिस दिन हम इन सबको इकट्ठा करेंगे और मुशरिकों (बहुदेववादियों) से पूछेंगे कि अब वे तुम्हारे ठहराए हुए साझीगार कहाँ हैं जिनको तुम अपना ईश्वर समझते थे, (23) तो वे इसके सिवा कोई उपद्रव न मचा सकेंगे कि (यह झूठा बयान दे कि) ऐ हमारे रब, तेरी क़सम हम हरगिज़ मुशरिक (बहुदेववादी) न थे। (24) देखो, उस समय ये किस तरह अपने ऊपर आप झूठ घड़ेंगे और वहाँ उनके सारे बनावटी माबूद (उपास्य) गुम हो जाएँगे।

(25) इनमें से कुछ लोग ऐसे हैं, जो कान लगाकर तुम्हारी बात सुनते हैं मगर, हाल यह है कि हमने उनके दिलों पर परदे डाल रखे हैं जिनके कारण वे उसको कुछ नहीं समझते और उनके कानों में बोझ डाल दिया है (कि सब कुछ सुनने पर भी कुछ नहीं सुनते)। वे चाहे कोई निशानी देख लें, उसपर ईमान नहीं लाएँगे। बात यहाँ तक पहुँच चुकी है कि जब वे तुम्हारे पास आकर तुमसे झगड़ते हैं तो उनमें से जिन लोगों ने इनकार का फ़ैसला कर लिया है वे (सारी बातें सुनने के बाद) यही कहते हैं कि यह एक पुरातन कथा के सिवा कुछ नहीं। (26) वे उस चीज़ को जो सत्य है क़बूल करने से लोगों को रोकते हैं और स्वयं भी उससे दूर भागते हैं। (वे समझते हैं कि इस कर्म से वे तुमहारा कुछ

4. किसी चीज़ की गवाही देने के लिए सिर्फ़ अटकल और अनुमान काफ़ी नहीं है बल्कि इसके लिए ज्ञान होना ज़रूरी है जिसके आधार पर आदमी यक़ीन के साथ कह सके कि ऐसा है। अतः सवाल का मतलब यह है कि क्या वास्तव में तुम्हें यह ज्ञान है कि इस वर्तमान लोक में अल्लाह के सिवा और भी कोई अधिकार प्राप्त शासक है जो बन्दगी और पूजा का अधिकार रखता हो?

बिगाड़ रहे हैं) हालाँकि वास्तव में वे ख़ुद अपनी तबाही का सामान कर रहे हैं मगर उन्हें इसका ज्ञान नहीं है। (27) क्या ही अच्छा होता कि तुम उस समय की हालत को देख सकते जब वे दोज़ख़ के किनारे खड़े किए जाएँगे। उस समय वे कहेंगे कि क्या ही अच्छा होता कि कोई राह ऐसी निकल सकती कि हम दुनिया में फिर वापस भेजे जाएँ और अपने रब की निशानियों को न झुठलाएँ और ईमान लानेवालों में शामिल हों। (28) वास्तव में यह बात वे सिर्फ़ इस कारण कहेंगे कि जिस हक़ीक़त पर उन्होंने परदा डाल रखा था वह उस समय खुले रूप में उनके सामने आ चुकी होगी, वरना अगर उन्हें पहले की ज़िन्दगी की ओर वापस भेजा जाए तो फिर वही सब कुछ करें, जिससे उन्हें रोका गया है, वे तो हैं ही झूठे (इसलिए अपनी इस इच्छा के व्यक्त करने में भी झूठ ही से काम लेंगे)। (29) आज ये लोग कहते हैं कि ज़िन्दगी जो कुछ भी है बस यही हमारी दुनिया की ज़िन्दगी है और हम मरने के बाद हरगिज़ दोबारा न उठाए जाएँगे। (30) क्या ही अच्छा हो जो वह दृश्य तुम देख सको जब ये अपने रब के सामने खड़े किए जाएँगे। उस समय इनका रब इनसे पूछेगा, "क्या यह सत्य नहीं है?" ये कहेंगे, "हाँ ऐ हमारे रब, यह सत्य ही है।" वह कहेगा, "अच्छा तो अब अपने इनकार के बदले में अज़ाब का मज़ा चखो।

(31) नुक़सान में पड़ गए वे लोग जिन्होंने अल्लाह से अपनी मुलाक़ात की ख़बर को झूठ ठहराया। जब अचानक वह घड़ी आ जाएगी तो यही लोग कहेंगे, "अफ़सोस! हमसे इस मामले में कैसी चूक हुई।" इनकी हालत यह होगी कि अपनी पीठों पर अपने गुनाहों का बोझ लादे हुए होंगे। देखो! कैसा बुरा बोझ है जो ये उठा रहे हैं। (32) दुनिया की ज़िन्दगी तो एक खेल और एक तमाशा है।[5] वास्तव में आख़िरत

5. इसका यह अर्थ नहीं कि दुनिया की ज़िन्दगी में कोई गंभीरता नहीं पाई जाती है और दुनिया सिर्फ़ खेल और तमाशे के तौर पर बनाई गई है। वास्तव में इसका अर्थ यह है कि आख़िरत की वास्तविक और स्थायी ज़िन्दगी के मुक़ाबले में यह ज़िन्दगी ऐसी है जैसे कोई व्यक्ति कुछ देर खेल और मनोरंजन में मन बहलाए और फिर असल गंभीर कारोबार की ओर वापस हो जाए। इसके अलावा इसे खेल और तमाशे की उपमा इसलिए भी दी गई है कि यहाँ वास्तविकता के छिपे होने के कारण दूर दृष्टि नहीं रखनेवाले और सिर्फ़ ऊपरी चीज़ों को देखकर रीझनेवाले इनसानों के लिए ग़लतफ़हमियों में पड़ जाने के बहुत कारण मौजूद हैं और इन ग़लतफ़हमियों में फँसकर लोग मूल वास्तविकता के विरुद्ध ऐसे-ऐसे अजीब ढंग अपनाते हैं जिनके कारण उनकी ज़िन्दगी सिर्फ़ एक खेल और तमाशा बनकर रह जाती है।

ही की जगह उन लोगों के लिए अच्छी है जो घाटे से बचना चाहते हैं। फिर क्या तुम लोग अक़्ल से काम न लोगे?

(33) ऐ नबी, हम जानते हैं कि जो बातें ये लोग बनाते हैं उनसे तुम्हें दुख पहुँचता है, लेकिन ये लोग तुम्हें नहीं झूठलाते बल्कि ये ज़ालिम वास्तव में अल्लाह की आयतों का इनकार कर रहे हैं।[6] (34) तुमसे पहले भी बहुत-से रसूल झुठलाए जा चुके हैं, मगर इस झुठलाने पर और उन तकलीफ़ों पर जो उन्हें पहुँचाई गई, उन्होंने सब्र से काम लिया, यहाँ तक कि उन्हें हमारी सहायता पहुँच गई। अल्लाह की बातों को बदलने की शक्ति किसी में नहीं है, और पिछले रसूलों के साथ जो कुछ हुआ उसकी ख़बरें तुम्हें पहुँच ही चुकी हैं। (35) फिर भी अगर इन लोगों की विमुखता तुम्हारे लिए बरदाश्त से बाहर है तो अगर तुममें कुछ ज़ोर है तो ज़मीन में कोई सुरंग ढूँढ़ो या आसमान में सीढ़ी लगाओ और उनके पास कोई निशानी लाने की कोशिश करो। अगर अल्लाह चाहता तो उन सबको सीधे मार्ग पर इकट्ठा कर सकता था, अतः नादान मत बनो।[7] (36) सत्य के आह्वान को स्वीकार वही लोग करते हैं जो सुननेवाले हैं। रहे मुर्दे[8] तो उन्हें तो अल्लाह बस क़ब्रों ही से उठाएगा और फिर वे (उसकी अदालत में पेश होने के लिए)

6. वाक़िआ यह है कि जब तक हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अल्लाह की आयतें सुनानी शुरू न की थीं, आपकी क़ौम के सब लोग आपको 'अमीन' और 'सादिक़' (विश्वस्त और सच्चा) समझते थे और आपकी सच्चाई पर पूरा भरोसा रखते थे। उन्होंने आपको झूठलाया उस समय जबकि आपने अल्लाह की ओर से सन्देश पहुँचाना शुरू किया। और इस दूसरे दौर में भी उनके अन्दर कोई व्यक्ति ऐसा न था जो व्यक्तिगत रूप से आपको झूठा ठहराने का साहस कर सकता हो। आपके किसी बड़े से बड़े विरोधी ने भी कभी आप पर यह इलज़ाम नहीं लगाया कि आप दुनिया के किसी मामले में कभी झूठ बोले हैं। उन्होंने जितना आपको झुठलाया वह सिर्फ़ नबी होने की हैसियत से झुठलाया। आपका सबसे बड़ा दुश्मन अबू जह्ल था और हज़रत अली (रज़ि॰) से रिवायत है कि एक बार उसने ख़ुद नबी (सल्ल॰) से बातचीत करते हुए कहा, "हम आपको तो झूठ नहीं कहते, मगर जो कुछ आप पेश कर रहे हैं उसे झूठ ठहराते हैं।"
7. अर्थात् इस चिंता में न पड़ो कि इन लोगों को कोई ऐसी निशानी दिखा दी जाए जिससे ये ईमान ले आएँ। अगर अल्लाह के सामने यह होता कि सारे इनसानों को सीधे मार्ग पर ला दिया जाए तो वह सबको ईमानवाला ही बनाकर पैदा कर देता। फिर रसूलों को भेजने और ईमानवालों और कुफ़्रवालों के बीच वर्षों संघर्ष कराने की ज़रूरत ही क्या थी?

वापस लाए जाएँगे।

(37) ये लोग कहते हैं कि इस नबी पर इसके रब की ओर से कोई निशानी क्यो नहीं उतारी गई? कहो, अल्लाह को निशानी उतारने की पूरी सामर्थ्य प्राप्त है, मगर इनमें ज़्यादातर लोग नासमझी में पड़े हुए हैं।[9] (38) ज़मीन में चलनेवाले किसी जानवर और हवा में पंख से उड़नेवाले किसी पक्षी को देख लो, ये सब तुम्हारी ही तरह की जातियाँ हैं, हमने उनके भाग्य के लेख में कोई कमी नहीं छोड़ी है, फिर ये सब अपने रब की ओर समेटे जाते हैं। (39) मगर जो लोग हमारी निशानियों को झुठलाते हैं वे बहरे और गूँगे हैं, अँधेरों में पड़े हुए हैं। अल्लाह जिसे चाहता है भटका देता है और जिसे चाहता है सीधे रास्ते पर लगा देता है।[10] (40) इनसे कहो, तनिक सोचकर बताओ, अगर कभी तुमपर अल्लाह की ओर से कोई बड़ी मुसीबत आ जाती है या आख़िरी घड़ी आ पहुँचती है तो क्या उस समय तुम अल्लाह के सिवा किसी और को पुकारते हो? बोलो अगर तुम सच्चे हो। (41) उस समय तुम अल्लाह ही को पुकारते हो, फिर अगर वह चाहता है तो उस मुसीबत को तुमपर से टाल देता है। ऐसे मौक़ों पर तुम अपने

8. सुननेवालों से मुराद वे लोग हैं जिनकी अन्तरात्माएँ ज़िन्दा हैं, जिन्होंने अपनी बुद्धि और विचार-शक्ति को निलंबित नहीं कर दिया हैं, और जिन्होंने अपने दिल के दरवाज़ों पर पक्षपात और जड़ता के ताले नहीं लगा दिए हैं। उनके मुक़ाबले में मुर्दा वे लोग हैं जो लकीर के फ़क़ीर बने अन्धों की तरह चले जा रहे हैं और उस लकीर से हटकर कोई बात क़बूल करने के लिए तैयार नहीं हैं चाहे वह खुला सत्य ही क्यों न हो।
9. निशानी से मुराद प्रत्यक्ष चमत्कार है। अल्लाह तआला के इस कथन का अर्थ यह है कि चमत्कार न दिखाए जाने का कारण यह नहीं है कि हमें उसके दिखाने की सामर्थ्य प्राप्त नहीं, बल्कि इसका कारण कुछ और है जिसे ये लोग केवल अपनी नादानी से नहीं समझते।
10. अल्लाह का भटकाना यह है कि एक जहालतपसंद इनसान को अल्लाह की निशानियों के अध्ययन का सौभाग्य प्रदान न किया जाए और एक पक्षपाती यथार्थ का विरोधी विद्यार्थी अगर उनका निरीक्षण करे भी तो सत्य तक पहुँचने के चिह्न और निशानियाँ उसकी आँखों से ओझल रहें और ग़लतफ़हमियों में उलझानेवाली चीज़ें उसे सत्य से दूर और बहुत दूर खींचती चली जाएँ। इसके विपरीत अल्लाह का राह दिखाना यह है कि एक सत्यान्वेषी को ज्ञान के साधनों से लाभ उठाने का सौभाग्य प्राप्त हो और अल्लाह की निशानियों में उसे सत्य तक पहुँचने के चिह्न मिलते चले जाएँ।

ठहराए हुए साझीदारों को भूल जाते हो।[11]

(42) तुमसे पहले बहुत-सी क़ौमों की ओर हमने रसूल भेजे और उन क़ौमों को मुसीबतों और दुखों में डाला ताकि वे बेबसी के साथ हमारे सामने झुक जाएँ। (43) तो जब हमारी ओर से उनपर कठिनाई आई तो क्यों न उन्होंने विनम्रता अपनाई? मगर उनके दिल तो और कठोर हो गए और शैतान ने उन्हें इतमीनान दिलाया कि जो कुछ तुम कर रहे हो ख़ूब कर रहे हो। (44) फिर जब उन्होंने उस नसीहत को, जो उन्हें की गई थी, भुला दिया तो हमने हर तरह की ख़ुशहालियों के दरवाज़े उनके लिए खोल दिए, यहाँ तक कि जब वे उन चीज़ों में जो उन्हें प्रदान की गई थीं ख़ूब मग्न हो गए तो अचानक हमने उन्हें पकड़ लिया और अब हालत यह थी कि वे हर भलाई से निराश थे। (45) इस तरह उन लोगों की जड़ काटकर रख दी गई जिन्होंने ज़ुल्म किया था, और तारीफ़ है अल्लाह, सारे जहान के रब के लिए (कि उसने उनकी जड़ काट दी)।

(46) ऐ नबी, इनसे कहो, कभी तुमने यह भी सोचा कि अगर अल्लाह तुम्हारे देखने और सुनने की शक्ति तुमसे छीन ले और तुम्हारे दिलों पर ठप्पा लगा दे[12] तो अल्लाह के सिवा और कौन-सा ख़ुदा है जो ये शक्तियाँ तुम्हें वापस दिला सकता हो? देखो, किस तरह हम बार-बार अपनी निशानियाँ उनके सामने पेश करते हैं और फिर ये किस तरह उनसे निगाह चुरा जाते हैं। (47) कहो, कभी तुमने सोचा कि यदि अल्लाह की ओर से अचानक या खुल्लम-खुल्ला तुमपर अज़ाब आ जाए तो क्या ज़ालिम लोगों के सिवा कोई और तबाह होगा? (48) हम जो रसूल भेजते हैं इसी लिए तो भेजते हैं कि वे नेक चरित्रवाले लोगों के लिए ख़ुशख़बरी देनेवाले और बुरे चरित्रवाले लोगों के लिए डरानेवाले हों। फिर जो लोग उनकी बात मान लें और अपनी नीति का सुधार कर लें उनके लिए किसी डर और रंज का कोई मौक़ा नहीं है। (49) और जो हमारी आयतों

11. अर्थात् यह निशानी तो तुम्हारे अपने आप (नफ़्स) में मौजूद है। जब तुमपर कोई बड़ी आफ़त आ जाती है, या मौत अपने भयावह रूप के साथ सामने आ खड़ी होती है उस समय एक अल्लाह के दामन के सिवा कोई दूसरी पनाहगाह तुम्हें दिखाई नहीं देती। बड़े-बड़े मुशरिक (बहुदेववादी) ऐस मौक़े पर अपने देवताओं को भूलकर अकेले ईश्वर को पुकारने लगते हैं। कट्टर से कट्टर नास्तिक तक ईश्वर के आगे दुआ के लिए हाथ फैला देता है। यह इस बात का प्रमाण है कि ईश-भक्ति और एकेश्वरवाद की गवाही हर इनसान के अंतःकरण में मौजूद है जिसपर असावधानी और अज्ञान के चाहे कितने ही परदे डाल दिए गए हों, मगर फिर भी कभी-कभी वह उभरकर सामने आ जाती है।

12. यहाँ दिलों पर ठप्पा लगाने से मुराद सोने और समझने की शक्ति छीन लेना है।

को झुठलाएँ वे अपनी नाफ़रमानियों के बदले में सज़ा भुगत कर रहेंगे।

(50) ऐ नबी, इनसे कहो, ''मैं तुमसे यह नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने हैं। न मुझे ग़ैब (परोक्ष) का ज्ञान है, और न यह कहता हूँ कि मैं फ़रिश्ता हूँ। मैं तो सिर्फ़ उस प्रकाशना (वह्य) का अनुसरण करता हूँ जो मुझपर अवतरित होती है।'' फिर इनसे पूछो, ''क्या अन्धा और आँख़ोंवाला दोनों बराबर हो सकते हैं? क्या तुम सोच-विचार नहीं करते?''

(51) और ऐ नबी, तुम इस (प्रकाशना-ज्ञान) के द्वारा उन लोगों को नसीहत करो जो इस बात का भय रखते हैं कि अपने रब के सामने कभी इस हाल में पेश किए जाएँगे कि उसके सिवा वहाँ कोई (ऐसा सत्ताधिकारी) न होगा जो उनका हिमायती और मददगार हो, या उनकी सिफ़ारिश करे, शायद कि (इस नसीहत से सावधान होकर) वे विनम्रता की नीति अपना लें। (52) और जो लोग अपने रब को रात-दिन पुकारते रहते हैं और उसकी ख़ुशी की चाह में लगे हुए हैं उन्हें अपने से दूर न फेंको। उनके हिसाब में से किसी चीज़ का भार तुमपर नहीं है और तुम्हारे हिसाब में से किसी चीज़ का भार उनपर नहीं। इसपर भी अगर तुम उन्हें दूर फेंकोगे तो ज़ालिमों में गिने जाओगे। (53) वास्तव में हमने इस तरह इन लोगों में से कुछ को कुछ के द्वारा परीक्षा में डाला है[13] ताकि वे इन्हें देखकर कहें, ''क्या ये हैं वे लोग जिनपर हमारे बीच अल्लाह की कृपा हुई है?''—हाँ! क्या अल्लाह अपने शुक्रगुज़ार बन्दों को इनसे ज़्यादा नहीं जानता है? (54) जब तुम्हारे पास वे लोग आएँ जो हमारी आयतों को मानते हैं तो उनसे कहो, ''तुमपर सलामती है। तुम्हारे रब ने दयालुता की नीति अपने ऊपर अनिवार्य कर ली है। (यह उसकी दया ही है कि) अगर तुममें से कोई नादानी के साथ कोई बुराई कर बैठा हो फिर उसके बाद तौबा और सुधार कर ले तो वह उसे माफ़ कर देता है और नरमी से काम

13. अर्थात् दीन-दुखियों और ऐस लोगों को समाज में जिनकी हैसियत नगण्य होती है, सबसे पहले ईमान का साभाग्य प्रदान करके हमने अपने धन और प्रतिष्ठा पर गर्व करनेवाले लोगों को परीक्षा में डाल दिया है।

14. जो लोग उस समय नबी (सल्ल॰) पर ईमान लाए थे उनमें ज़्यादातर लोग ऐसे भी थे जिनसे अज्ञानकाल में बड़े-बड़े गुनाह हो चुके थे। अब इस्लाम क़बूल करने के बाद यद्यपि उनकी ज़िन्दगियाँ बिलकुल बदल गई थीं लेकिन इस्लाम के विरोधी उनको पिछले दोषों और कर्मों के ताने देते थे। इसपर कहा जा रहा है कि ईमानवालों को तसल्ली दो, उन्हें बताओ कि जो व्यक्ति तौबा करके अपने को सुधार लेता है उसके पिछले गुनाहों पर पकड़ने का तरीक़ा अल्लाह के यहाँ नहीं है।

लेता है।''[14] (55) और इस तरह हम अपनी निशानियाँ खोल-खोलकर पेश करते हैं ताकि अपराधियों का मार्ग बिलकुल स्पष्ट हो जाए।

(56) ऐ नबी, इनसे कहो कि, ''तुम लोग अल्लाह के सिवा जिन दूसरों को पुकारते हो उनकी बन्दगी करने से मुझे रोका गया है।'' कहो, ''मैं तुम्हारी इच्छाओं का अनुसरण नहीं करुँगा, अगर मैंने ऐसा किया तो गुमराह हो गया, सीधा मार्ग पानेवालों में से न रहा।'' (57) कहो, ''मैं अपने रब की ओर से एक स्पष्ट प्रमाण पर क़ायम हूँ और तुमने उसे झुटला दिया है, अब मेरे अधिकार में वह चीज़ है नहीं जिसके लिए तुम जल्दी मचा रहे हो, फ़ैसले का सारा अधिकार अल्लाह को है, वही सत्य तथ्य बयान करता है और वही सबसे अच्छा फ़ैसला करनेवाला है।'' (58) कहो, ''अगर कहीं वह चीज़ मेरे अधिकार में होती जिसकी तुम जल्दी मचा रहे हो तो मेरे और तुम्हारे बीच कभी का फ़ैसला हो चुका होता। मगर अल्लाह ज़्यादा बेहतर जानता है कि ज़ालिमों के साथ क्या मामला किया जाना चाहिए। (59) उसी के पास ग़ैब (परोक्ष) की कुँजियाँ हैं जिन्हें उसके सिवा कोई नहीं जानता जल और थल में जो कुछ है सबसे वह परिचित है। पेड़ से गिरनेवाला कोई पत्ता ऐसा नहीं जिसका उसे ज्ञान न हो। ज़मीन के अँधकारमय परदों में कोई दाना ऐसा नहीं जिससे वह परिचित न हो। सूखा और गीला सब कुछ एक खुली किताब में लिखा हुआ है। (60) वही है जो रात को तुम्हारे रूहों को समेट लेता है और दिन को जो कुछ तुम करते हो उसे जानता है, फिर दूसरे दिन वह तुम्हें इसी कारोबार की दुनिया में वापस भेज देता है ताकि ज़िन्दगी की निश्चित मुद्दत पूरी हो। आख़िरकार उसी की ओर तुम्हारी वापसी है, फिर वह तुम्हें बता देगा कि तुम क्या करते रहे हो। (61) अपने बन्दों पर उसे पूरी क़ुदरत हासिल है और तुमपर निगरानी करनेवाले मुक़र्रर करके भेजता है, यहाँ तक कि जब तुममें से किसी की मौत का समय आ जाता है तो उसके भेजे हुए फ़रिश्ते उसकी जान निकाल लेते हैं और अपनी ज़िम्मेदारी निभाने में तनिक कोताही नहीं करते, (62) फिर सबके सब अल्लाह, अपने वास्तविक मालिक की ओर वापस लाए जाते हैं। सावधान हो जाओ, फैसले के सारे अधिकार उसी को प्राप्त हैं और वह हिसाब लेने में बहुत तेज़ है।''

(63) ऐ नबी, इनसे पूछो, सहरा और समुद्र के अँधेरों में कौन तुम्हें ख़तरों से बचाता है? कौन है जिससे तुम (मुसीबत में) गिड़गिड़ा-गिड़गिड़ाकर और चुपके-चुपके दुआएँ मांगते हो? किससे कहते हो कि अगर इस मुसीबत से उसने हमें बचा लिया तो हम ज़रूर कृतज्ञ होंगे? (64) —कहो, अल्लाह तुम्हें उससे और हर तकलीफ़ से छुटकारा देता है फिर तुम दूसरों को उसका साझीदार ठहराते हो?[15] (65) कहो, ''उसे

इसकी सामर्थ्य प्राप्त है कि तुमपर कोई अज़ाब ऊपर से उतार दे, या तुम्हारे पाँव के नीचे से ले आए, या तुम्हें गिरोहों में बाँट करके एक गिरोह को दूसरे गिरोह की ताक़त का मज़ा चख़वा दे।'' देखो, हम किस तरह बार-बार विभिन्न ढंग से अपनी निशानियाँ इनके सामने पेश कर रहे हैं शायद कि ये हक़ीक़त को समझ लें। (66) तुम्हारी जाति के लोग उसका इनकार कर रहे हैं हालाँकि वह हक़ीक़त है। इनसे कह दो कि मैं तुम पर कोई हवालेदार नहीं बनाया गया हूँ,[16] (67) हर ख़बर के पूरे होने का एक समय निश्चित है, जल्द ही तुमको ख़ुद अंजाम मालूम हो जाएगा।

(68) और ऐ नबी, जब तुम देखो कि लोग हमारी आयतों में नुक्ताचीनियाँ कर रहे हैं तो उनके पास से हट जाओ यहाँ तक कि वे इस बातचीत को छोड़कर दूसरी बातों में लग जाएँ। और अगर कभी शैतान तुम्हें भुलावे में डाल दे तो जिस समय तुम्हें इस ग़लती का ख़याल आ जाए उसके बाद फिर ऐसे ज़ालिम लोगों के पास न बैठो। ((69) उनके हिसाब में से किसी चीज़ की ज़िम्मेदारी परहेज़गार लोगों पर नहीं है, अलबत्ता नसीहत करना उनका कर्तव्य है, शायद वे ग़लत नीति अपनाने से बच जाएँ। (70) छोड़ो उन लोगों को जिन्होंने अपने धर्म को खेल और तमाशा बना रखा है और जिन्हें

---

15. अर्थात् यह सत्य है कि अकेला अल्लाह ही सर्वशक्तिमान है, और वही समस्त अधिकारों का मालिक और तुम्हारी भलाई और बुराई का सर्वाधिकारी है, और उसी के हाथ में तुम्हारे भाग्य की बागडोर है, इसकी गवाही तो तुम्हारे अपने दिल (नफ़्स) में मौजूद है। जब कोई कठिन समय आता है और साधनों के सारे ही सूत्र खण्डित होते दिखाई देने लगते हैं तो उस समय तुम बेइख़तियार उसी की ओर रुजू करते हो। लेकिन इस स्पष्ट निशानी के होते हुए भी तुमने ईश्वरत्व में बिना किसी प्रमाण और तर्क के दूसरों को उसका साझी बना रखा है। पलते हो उसकी रोज़ी पर और अन्नदाता बनाते हो दूसरों को। मदद तुम्हें मिलती है उसकी कृपा और दया से और हिमायती व मददगार ठहराते हो दूसरों को। गुलम हो उसके और ग़ुलामी करते हो दूसरों की। कष्टों और मुश्किलों को दूर करता है वह, बुरे समय में गिड़गिड़ाते हो उसी के सामने, और जब वह वक़्त गुज़र जाता है तो तुम्हारे कष्टनिवारक बन जाते हैं दूसरे और भेंट और चढ़ावे (नज़रें और नियाज़ें) चढ़ने लगते हैं दूसरों के नाम की।
16. अर्थात् मेरा यह काम नहीं है कि जो कुछ तुम नहीं देख रहे हो वह ज़बरदस्ती तुम्हें दिखाऊँ और जो कुछ तुम नहीं समझ रहे हो वह ज़बरदस्ती तुम्हारी समझ में उतार दूँ। और मेरा यह काम भी नहीं है कि अगर तुम न देखो और न समझो तो तुमपर अज़ाब उतार दूँ।

दुनिया की ज़िन्दगी धोखे में डाले हुए है। हाँ, मगर यह क़ुरआन सुनाकर समझाते और चेतावनी देते रहो कि कहीं कोई व्यक्ति अपने किए करतूतों के वबाल में गिरफ़्तार होकर न रह जाए, और ग्रस्त भी इस हाल में हो कि अल्लाह से बचानेवाला कोई हिमायती व मददगार और कोई सिफ़ारिशी उसके लिए न हो, और अगर वह हर संभव चीज़ बदले (फ़िदया) में देकर छूटना चाहे तो वह भी उससे क़बूल न की जाए, क्योंकि ऐसे लोग तो ख़ुद अपने कमाई के नतीजे में पकड़े जाएँगे, उनको तो अपने सत्य के इनकार के बदले में खौलता हुआ पानी पीने को और दर्दनाक अज़ाब भूगतने को मिलेगा।

(71) ऐ नबी, इनसे पूछो क्या हम अल्लाह को छोड़कर उनको पुकारें जो न हमें फ़ायदा दे सकते हैं न नुक़सान? और जबकि अल्लाह हमें सीधा मार्ग दिखा चुका है तो क्या अब हम उलटे पाँव फिर जाएँ? क्या हम अपनीहालत उस व्यक्ति की-सी बना लें जिसे शैतानों ने बयाबान (सहरा) में भटका दिया हो और वह हैरान व परेशान फिर रहा हो हालाँकि उसके साथी उसे पुकार रहे हों कि इधर आ, यह सीधी राह मौजूद है? कहो, ''वास्तव में सही मार्गदर्शन तो सिर्फ़ ईश्वर ही का मार्गदर्शन है और उसकी ओर से हमें यह आदेश मिला है कि विश्व के मालिक के आगे आज्ञाकारिता के साथ सिर झुका दो, (72) नमाज़ क़ायम करो और उसकी नाफ़रमानी से बचो, उसी की ओर तुम समेटे जाओगे।'' (73) वही है जिसने आसमान और ज़मीन को हक़ के साथ पैदा किया है।[17] और जिस दिन वह कहेगा कि हश्र (क़ियामत) हो जाए उसी दिन वह हो जाएगा। उसका कहना बिलकुल सत्य है। और जिस दिन सूर (नरसिंघा) में फूँक मारी जाएगी उस दिन बादशाही उसी की होगी, वह ग़ैब (छिपे) और शहादत (खुले)[18] हर चीज़ का ज्ञाता है और तत्त्वदर्शी और ख़बर रखनेवाला है।

(74) इबराहीम की घटना याद करो जबकि उसने अपने बाप आज़र से कहा था, ''क्या तू मूर्तियों को ख़ुदा बनाता है? मैं तो तुझे और तेरी क़ौम को खुली गुमराही में पाता हूँ।'' (75) इबराहीम को हम इसी तरह ज़मीन और आसमानों की राज्य-व्यवस्था दिखाते थे और इसलिए दिखाते थे कि वह यक़ीन करनेवालों में से हो जाए। (76) अतएव रात जब उसपर छाई तो उसने एक तारा देखा। कहा, यह मेरा रब है! मगर जब वह डूब गया तो बोला, डूब जानेवालों का तो मैं अनुरागी नहीं हूँ। (77) फिर जब चाँद चमकता दिखाई दिया तो कहा, यह है मेरा रब, मगर जब वह भी डूब गया तो कहा, अगर मेरे रब ने मुझे राह न दिखाई होती तो मैं भी गुमराह लोगों में शामिल हो गया होता। (78) फिर जब सूरज को रौशन देखा तो कहा, यह है मेरा रब, वह सबसे बड़ा है। मगर जब वह भी डूबा तो इबराहीम पुकार उठा, ''ऐ क़ौम के भाईयो, मै उन सबसे बेज़ार हूँ

जिन्हें तुम ईश्वर का साझीदार ठहराते हो।[19] (79) मैने तो एकाग्र होकर अपना रुख उस सत्ता की ओर कर लिया जिसने ज़मीन और आसमानों की रचना की है और मैं हरगिज़

17. क़ुरआन में यह बात जगह-जगह बयान की गई है कि अल्लाह ने ज़मीन और आसमानों को हक़ पर या हक़ के साथ पैदा किया है। इसका एक मतलब यह है कि ज़मीन और आसमानों की रचना सिर्फ़ खेल के रूप में नहीं हुई है, यह किसी बच्चे का खिलौना नहीं है कि सिर्फ़ दिल बहलाने के लिए यह इससे खेलता रहे और फिर यूँ ही इसे तोड़-फोड़कर फैंक दे। वास्तव में यह एक अत्यन्त गम्भीर काम है जो तत्त्वदर्शिता पर आधारित है, एक महान् उद्देश्य इसमें काम कर रहा है, और इसका एक काल-चक्र या दौर पूरा हो जाने के बाद अनिवार्य है कि स्रष्टा उस पूरे काम का हिसाब ले जो उस दौर में अंजाम पाया हो और उसी दौर के नतीजों पर दूसरे दौर की बुनियाद रखे। दूसरा अर्थ यह है कि अल्लाह ने यह सारे विश्व की व्यवस्था सत्य के ठोस आधारों पर स्थापित की है। न्याय और तत्त्वदर्शिता और सत्य के क़ानूनों पर इसकी हर चीज़ अवलंबित है। असत्य के लिए वास्तव में इस व्यवस्था में जड़ पकड़ने और फलने-फूलने की कोई गुंजाइश ही नहीं है। यह और बात है कि अल्लाह असत्यवादियों को मौक़ा दे दे कि वे अगर अपने झूठ, ज़ुल्म और असत्यता को बढ़ावा देना चाहते हैं तो अपनी कोशिश करके देखें। लेकिन आख़िरकार धरती असत्य के हर बीज़ को उगलकर फैंक देगी और आख़िरी हिसाब के पत्र में हर मिथ्यावादी देख लेगा कि जो कोशिशें उसने इस बुरे वृक्ष की खेती और इसकी सिंचाई में की वे सब अकारथ गईं। तीसरा अर्थ यह है कि अल्लाह ने इस सम्पूर्ण ब्रह्माणअड की हक़ के अन्तर्गत सृष्टि की है और अपने निजी हक़ और अधिकार के अन्तर्गत वह इसपर शासन कर रहा है। उसका आदेश यहाँ इसलिए चलता है कि उसी को अपनी सृष्टि में शासनाधिकार प्राप्त है। दूसरे किसी का हक़ नहीं है कि यहाँ उसका हुक्म चले।

18. परोक्ष (ग़ैब), वह सब कुछ जो सबसे छिपा है। प्रत्यक्ष (शहादत), वह सब कुछ जो सब के लिए स्पष्ट और ज्ञात है।

19. यहाँ हज़रत इबराहीम (अलै॰) के उस प्रारंभिक चिंतन और सोच-विचार की मनःस्थिती का उल्लेख किया गया है जो पैग़म्बरी के पद पर आसीन होने से पहले उनके लिए सत्य तक पहुँचने का सादन सिद्ध हुआ। इसमें बताया गया है कि एक बुद्धिमान और दृष्टिवान मनुष्य जिसने सर्वथा शिर्क (बहुदेववाद) के वातावरण में आँखें खोली थी, किस तरह विश्व में पाए जानेवाले लक्षणों और निशानियों का निरीक्षण करके और उनपर सही ढंग से सोच-विचार करके सच्चाई मालूम करने में सफल हो गया।

मुशरिकों (बहुदेववादियों) में से नहीं हूँ।'' (80) उसकी क़ौम उससे झगड़ने लगी तो उसने क़ौम से कहा, ''क्या तुम लोग अल्लाह के मामले में मुझसे झगड़ते हो? हालाँकि उसने मुझे सही मार्ग दिखा दिया है। और मैं तुम्हारे ठहराए हुए साझीदारों से नहीं डरता, हाँ अगर मेरा रब कुछ चाहे तो वह ज़रूर हो सकता है, मेरे रब का ज्ञान हर चीज़ पर छाया हुआ है, फिर क्या तुम होश में न आओगे?[20] (81) और आख़िर में तुम्हारे ठहराए हुए साझीदारों से कैसे डरूँ जबकि तुम अल्लाह के साथ उन चीज़ों को ईश्वरत्व में साझीदार बनाते हुए नहीं डरते जिनके लिए उसने तुमपर कोई प्रमाण अवतरित नहीं किया है? हम दोनों दलों में से कौन अधिक निश्चिन्तता का अधिकारी है? बताओ अगर तुम्हें कुछ ज्ञान है। (82) वास्तव में तो निश्चिन्तता (अम्न) उन्हीं के लिए है और सही मार्ग पर वही हैं जो ईमान लाए और जिन्होंने अपने ईमान को ज़ुल्म के साथ मिलाया नहीं।''

(83) यह था हमारा वह तर्क जो हमने इबराहीम को उसकी क़ौम के मुक़ाबले में प्रदान किया। हम जिसे चाहते हैं ऊँचे पद प्रदान करते हैं। सत्य यह है कि तुम्हारा रब बहुत ज़्यादा तत्त्वदर्शी और सर्वज्ञ है।

(84) फिर हमने इबराहीम को इसहाक़ और याक़ूब जैसी औलाद दी और हर एक को मार्ग दिखाया। (वही सीधा मार्ग जो) उससे पहले नूह को दिखाया था। और उसी की नस्ल से हमने दाऊद, सुलैमान, अय्यूब, यूसुफ़, मूसा और हारून को (सीधा मार्ग दिखाया)। इस तरह हम नेक काम करनेवाले लोगों को उनकी नेकी का बदला देते हैं। (85) (उसी की औलाद से) ज़करिया, यह्या, ईसा और इलयास को (मार्ग

20. मूल ग्रन्थ में 'तज़क्कुर' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका सही अर्थ यह है कि एक व्यक्ति जो गफ़लत और भुलावे में पड़ा हुआ हो वह चौंककर उस चीज़ को याद कर ले जिससे वह ग़ाफ़िल था। इसी लिए हमने 'अ-फ़-ला -त-त ज़क्करून' का यह अनुवाद किया है।

21. यहाँ नबियों (उनपर अल्लाह की ओर से सुख और सलामती उतरे) को तीन चीज़ें दिए जाने का उल्लेख किया गया है। एक किताब अर्थात् अल्लाह का आदेश-पत्र। दूसरे हुक्म (निर्णय-शक्ति) अर्थात आदेश-पत्र की सही समझ और उसके सिद्धान्तों को जीवन के मामलों और व्यवहारों पर लागू करने की योग्यता, और जीवन सम्बन्धी समस्याओं में निर्णायक मत स्थिर करने की ईश्वर-प्रदत्त योग्यता। तीसरे 'नुबूवत' (पैग़म्बरी), अर्थात् यह पद (मनसब) कि वह उस आदेश-पत्र के अनुसार लोगों को सत्य-मार्ग दिखाएँ।

दिखाया)। हर एक इनमें से नेक था। (86) (उसी के ख़ानदान से) इसमाईल, अल-यसअ, और यूनुस और लूत को (रास्ता दिखाया)। इनमें से हर एक को हमने सारी दुनियावालों के मुक़ाबले में आगे रखा। (87) यह भी कि उनके बाप-दादों और उनकी औलाद और उनके भाई-बन्धुओं में से बहुतों को हमने नवाज़ा, उन्हें अपनी सेवा के लिए चुन लिया और उन्हें सीधा मार्ग दिखाया। (88) यह अल्लाह का मार्गदर्शन है जिसके साथ वह अपने बन्दों में से जिसका चाहता है मार्गदर्शन करता है। लेकिन अगर कहीं वे लोग शिर्क में पड़े होते तो उनका सब किया-कराया बरबाद हो जाता। (89) ये वे लोग थे जिनको हमने किताब और हुक्म (निर्णय-शक्ति) और पैग़म्बरी प्रदान की थी।[21] अब अगर ये लोग इसको मानने से इनकार करते हैं तो (परवाह नहीं) हमने कुछ और लोगों को यह नेमत सौंप दी है जो इसका इनकार नहीं करते। (90) ऐ नबी, वही लोग अल्लाह की ओर से सीधे रास्ते पर थे, उन्हीं के रास्ते पर तुम चलो, और कह दो कि मैं इस (प्रचार और मार्गदर्शन के) काम पर तुमसे कोई बदले की माँग नहीं करता, यह तो एक सामान्य उपदेशहै सारी दुनियावालों के लिए।

(91) इन लोगों ने अल्लाह का बहुत ग़लत अनुमान लगाया जब कहा कि अल्लाह ने किसी इनसान पर कुछ अवतरित नहीं किया है। इनसे पूछो, फिर वह किताब जिसे मूसा लाया था, जो सारे इनसानों के लिए रौशनी और मार्गदर्शन था, जिसे तुम टुकडे-टुकडे करके रखते हो, कुछ दिखाते हो और बहुत कुछ छिपा जाते हो, और जिसके द्वारा तुमको वह ज्ञान दिया गया जो न तुम्हें प्राप्त था और न तुम्हारे बाप-दादा को, आख़िर उसका उतारनेवाला कौन था?[22]—बस इतना कह दो कि अल्लाह, फिर उन्हें अपने कुतर्कों से खेलने के लिए छोड़ दो। (92) (उसी किताब की तरह) यह एक किताब है जिसे हमने उतारा है। बड़ी बरकतवाली है। उस चीज़ की पुष्टि करती है जो इससे पहले आई थी। और इसलिए उतारी गई है कि इसके द्वारा तुम बस्तियों के इस केन्द्र (अर्थात् मक्का) और इसके इर्द-गिर्द रहनेवालों को सचेत करो। जो लोग आख़िरत को मानते हैं वे इस किताब पर ईमान लाते हैं और उनका हाल यह है कि

22. यह जवाब चूँकि यहूदियों को दिया जा रहा है इसलिए मूसा (अलै॰) पर तौरात के अवतरण को प्रमाण के रूप में पेश किया गया है, क्योंकि वे ख़ुद उसे मानते थे। ज़ाहिर है कि उनका यह स्वीकार करना कि मूसा (अलै॰) पर तौरात उतरी थी, उनके इस कथन का आप से आप खण्डन कर देता है कि अल्लाह ने किसी इनसान पर कुछ अवतरित नहीं किया। इसके अलावा इससे कम से कम इतनी बात तो साबित हो जाती है कि इनसान पर ईश्वर की वाणी का अवतरण हो सकता है और हो चुका है।

अपनी नमाज़ों की पाबन्दी करते हैं। (93) और उस व्यक्ति से बड़ा ज़ालिम कौन होगा जो झूठ घड़कर अल्लाह पर मढ़े, या कहे कि मुझपर प्रकाशना आई है हालाँकि उसपर कोई प्रकाशना अवतरित न की गई हो, या जो अल्लाह की उतारी हुई चीज़ के मुक़ाबले में कहे कि मैं भी ऐसी चीज़ उतारकर दिखा दूँगा? क्या ही अच्छा होता कि तुम ज़ालिमों को इस हालत में देख सकते जबकि वे मृत्यु-यातनाओं में डुबकियाँ खा रहे होते और फ़रिश्ते हाथ बढ़ा-बढ़ाकर कह रहे होते हैं कि "लाओ, निकालो अपनी जान, आज तुम्हें उन बातों के बदले में अपमानजनक अज़ाब दिया जाएगा जो तुम अल्लाह पर मढ़कर नाहक़ बका करते थे और उसकी आयतों के मुक़ाबले में सरकशी दिखाते थे।" (94) (और अल्लाह कहेगा) "लो, अब तुम वैसे ही बिलकुल अकेले हमारे सामने हाज़िर हो गए जैसे हमने तुम्हें पहली बार अकेला पैदा किया था, जो कुछ हमने तुम्हें दुनिया में दिया था वह सब तुम पीछे छोड़ आए हो, और अब हम तुम्हारे साथ तुम्हारे उन सिफ़ारिशियों को भी नहीं देखते जिनके सम्बन्ध में तुम समझते ते कि तुम्हारे काम बनाने में उनका भी कुछ हिस्सा है, तुम्हारे आपस के सब संबंध टूट गए और वे सब तुमसे गुम हो गए जिनका तुम दावा रखते थे।"

(95) दाने और गुठली को फाड़नेवाला अल्लाह है।[23] वही ज़िन्दा को मुर्दा से निकालता है और वही मुर्दा को ज़िन्दा से बाहर निकालनेवाला है।[24] ये सारे काम करनेवाला तो अल्लाह है, फिर तुम किधर बहके चले जा रहे हो? (96) रात के परदे को फाड़कर वही सुबह निकालता है। उसी ने रात को सुकून का समय बनाया है। उसी ने चाँद और सूरज के उदय और अस्त होने का हिसाब ठहराया है। ये सब उसी ज़बरदस्त सामर्थ्यवान और सर्वज्ञ के ठहराए हुए अन्दाज़े हैं। (97) और वही है जिसने तुम्हारे लिए तारों को ख़ुश्की और समुद्र के अन्धकारों में रास्ता मालूम करने का साधन बनाया। देखो, हमने निशानियाँ[25] खोलकर बयान कर दी हैं उन लोगों के लिए जो ज्ञान रखते हैं। (98) और वही है जिसने एक जान से तुम्हें पैदा किया फिर हर एक के लिए एक ठहरने की जहग है और एक उसके सौंपे जाने की जगह। ये निशानियाँ हमने स्पष्ट

23. अर्थात् ज़मीन की तहों में बीज को फाड़कर उससे पेड़ की कोंपल निकालनेवाला।
24. ज़िन्दा को मुर्दा से निकालने का अर्थ निर्जीव पदार्थ से जीवित प्राणियों को पैदा करना है, और मुर्दा को जिन्दा से निकालने का अर्थ जानदार शरीर से निर्जीव पदार्थों को निकालना।
25. अर्थात् इस हक़ीक़त की निशानियाँ कि अल्लाह सिर्फ़ एक है, कोई दूसरा न ईश्वरीय गुणों से युक्त है, न ईश्वरीय अधिकारों में साझीदार है, और न ईश्वर के हक़ों में से किसी हक़ का अधिकारी है।

कर दी हैं उन लोगों के लिए जो समझ-बूझ रखते हैं। (99) और वही है जिसने आसमान से पानी बरसाया, फिर उसके ज़रिए हर तरह की वनस्पति उगाई, फिर उससे हरे-भरे ख़ेत और पेड़ पैदा किए, फिर उनसे तले-ऊपर चढ़े हुए दाने निकाले और खजूर के गाभों से फलों के गुच्छे के गुच्छे पैदा किए जो बोझ के कारण झुके पड़ते हैं, और अंगूर, ज़ैतून और अनार के बाग़ लगाए जिनके फल एक-दूसरे से मिलते-जुलते भी है और फिर प्रत्येक की विशेषताएँ अलग-अलग भी हैं। ये पेड़ जब फलते हैं तो इनमें फल आने और फिर उनके पकने की दशा को तनिक ग़ौर की नज़र से देखो, इन चीज़ों में निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो ईमान लाते हैं। (100) इसपर भी लोगों ने जिन्नों को अल्लाह का साझीदार ठहरा दिया,[26] हालाँकि वह उनका पैदा करनेवाला है, और बेजाने-बूझे उसके लिए बेटे और बेटियाँ रच दीं, हालाँकि वह पाक और उच्च है उन बातों से जो ये लोग कहते हैं। (101) वह तो आसमानों और ज़मीन का ईजाद करनेवाला है। उसका कोई बेटा कैसे हो सकता है जबकि कोई उसका जीवन-साथी ही नहीं है। उसने हर चीज़ को पैदा किया है और उसे हर चीज़ का ज्ञान है। (102) यह है अल्लाह तुम्हारा रब, कोई ख़ुदा उसके सिवा नहीं है, हर चीज़ का स्रष्टा, अतः तुम उसी की बन्दगी करो और वह हर चीज़ का ज़िम्मेदार है। (103) निगाहें उसको नहीं पा सकतीं और वह निगाहों को पा लेता है, वह अत्यन्त सूक्ष्मदर्शी और हर चीज़ से बाख़बर है। (104) देखो तुम्हारे पास तुम्हारे रब की ओर से आँख खोल देनेवाली रौशनी आ गई है, अब जो सूझ से काम लेगा अपना ही भला करेगा और जो अन्धा बनेगा ख़ुद नुक़सान उठाएगा, मैं तुमपर कोई नियुक्त रखवाला नहीं हूँ।[27]

(105) इस तरह हम अपनी आयतों को बार-बार विभिन्न ढंग से बयान करते हैं और इसलिए करते हैं कि ये लोग कहें कि "तुम किसी से पढ़ आए हो," और जो ज्ञानवान है उनपर हम सत्य को स्पष्ट कर दें। (106) ऐ नबी, उस प्रकाशना का अनुसरण किए जाओ जो तुमपर तुम्हारे रब की ओर से अवतरित हुई है क्योंकि उस एक रब के सिवा कोई और ख़ुदा नहीं है। और इन मुशरिकों (बहुदेववादियों) के पीछे न

26. अर्थात् अपने अनुमान और अटकल से यह निश्चय कर लिया कि विश्व के प्रबन्ध में और इनसान के भाग्य के बनाने और बिगाड़ने में अल्लाह के साथ दूसरी छिपी हस्तियाँ भी शरीक हैं। कोई बारिश का देवता है तो कोई पैदावार के उगाने का, कोई दौलत की देवी है तो कोई बीमारी की। इस तरह की निरर्थक धारणाएँ दुनिया की सभी मुशरिक (बहुदेववादी) क़ौमों में आत्माओं और शैतानों और राक्षसों और देवताओं और देवियों के सम्बन्ध में पाई जाती रही हैं।

पढ़ो। (107) अगर अल्लाह चाहता तो (वह ख़ुद ऐसी व्यवस्था कर सकता था कि) ये लोग साझीदार न बनाते। तुमको हमने उनपर रखवाला नियुक्त नहीं किया है और न तुम उनपर हवालेदार हो। (108) और (ऐ मुसलमानो) ये लोग अल्लाह के सिवा जिनको पुकारते हैं उन्हें गालियाँ न दो, कहीं ऐसा न हो कि ये शिर्क (बहुदेववाद) से आगे बढ़कर अज्ञान के कारण अल्लाह को गालियाँ देने लगें। हमने तो इसी तरह हर गिरोह के लिए उसके कर्म को सुहावना बना दिया है, फिर उन्हें अपने रब ही की ओर पलटकर आना है, उस समय वह उन्हें बता देगा कि वे क्या करते रहे हैं।

(109) ये लोग कड़ी-कड़ी क़समें खा-खाकर कहते हैं कि अगर कोई निशानी (अर्थात् चमत्कार) हमारे सामने आ जाए तो हम उसको मान लेंगे। ऐ नबी, इनसे कहो कि, ''निशानियाँ तो अल्लाह के अधिकार में हैं।'' और तुम्हें कैसे समझाया जाए कि अगर निशानियाँ आ भी जाएँ तो ये ईमान लानेवाले नहीं।[28] (110) हम उसी तरह उनके दिलों और निगाहों को फेर रहे हैं जिस तरह ये पहली बार उस (किताब) पर ईमान नहीं लाए थे। हम इन्हें इनकी सरकशी ही में भटकने के लिए छोड़ देते हैं। (111) अगर हम फ़रिश्ते भी इनपर उतार देते और मुर्दे इनसे बातें करते और दुनिया भर की चीज़ों को हम इनकी आँखो के सामने इकट्ठा कर देते तब भी ये ईमान लानेवाले न थे, यह और बात है कि अल्लाह ही यही चाहता हो (कि ये ईमान लाएँ) मगर ज़्यादातर लोग नादानी की बातें करते हैं। (112) और हमने तो इसी तरह हमेशा शैतान इनसानों और शैतान जिन्नों को हर नबी का दुश्मन बनाया है जो एक-दूसरे के मन में चिकनी-चुपड़ी बातें धोखा और फ़रेब देने के लिए डाला करते रहे हैं। अगर तुम्हारा रब चाहता कि वे ऐसा न करें तो वे कभी न करते। अतः तुम उन्हें उनके हाल पर छोड़ दो कि झूटे बकवास करते रहें। (113) (ये सब कुछ हम उन्हें इसी लिए करने दे रहे हैं कि) जो

27. यह वाक्य यद्यपि अल्लाह ही की वाणी है मगर नबी की ओर से व्यक्त हो रही है, जिस तरह सूरा फ़ातिहा है तो अल्लाह की वाणी मगर बन्दों के मुख से व्यक्त होती है। ''मैं तुमपर रखवाला नहीं हूँ'' अर्थात् मेरा काम बस इतना ही है कि इस रौशनी को तुम्हारे सामने पेश कर दूँ। इसके बाद आँखें खोलकर देखना या न देखना तुम्हारा अपना काम है। मुझे यह सेवा सौंपी नहीं गई कि जिन्होंने ख़ुद आँखे बन्द कर रखी हैं उनकी आँखें जबरदस्ती खोलूँ और जो कुछ वे नहीं देखते वह उन्हें दिखाकर ही छोड़ूँ।

28. यह सम्बोधन मुसलमानों से है जो बेताब हो होकर तमन्ना करते थे कि कोई ऐसी निशानी सामने आ जाए जिससे उनके भटके हुए भाई राह पर आ जाएँ।

लोग आख़िरत को नहीं मानते उनके दिल इस (सुहावने धोखे) की ओर झुके और वे उससे राज़ी हो जाएँ और उन बुराइयों को करें जो वे करना चाहते हैं[29]—(114) फिर जब हाल यह है तो क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई और फ़ैसला करनेवाला तलाश करूँ, हालाँकि उसने पूरे विस्तार के साथ तुमहारी ओर किताब अवतरित कर दी है?[30] और जिन लोगों को हमने (तुमसे पहले) किताब दी थी वे जानते हैं कि यह किताब तुम्हारे रब ही की ओर से सत्य के साथ उतारी हैं अतः तुम सन्देह करनेवालों में शामिल न हो। (115) तुम्हारे रब की बात सच्चाई और इनसाफ़ की दृष्टि से पूर्ण है, कोई उसके आदेशों को बदलनेवाला नहीं है और वह सब कुछ सुनता और जानता है।

(116) और ऐ नबी, अगर तुम उनके बहुतेरे लोगों के कहने पर चलो जो ज़मीन पर बसते हैं तो वे तुम्हें अल्लाह के मार्ग से भटका देंगे। वे तो सिर्फ़ अटकल पर चलते और अटकल दौड़ाते हैं। (117) वास्तव में तुम्हारा रब ज़्यादा जानता है कि कौन उसके मार्ग से हटा हुआ है और कौन सीधे मार्ग पर है।

(118) फिर अगर तुम लोग अल्लाह की आयतों पर ईमान रखते हो तो जिस जानवर पर अल्लाह का नाम लिया गया हो उसका मांस खाओ। (119) आख़िर क्या कारण है कि तुम वह चीज़ न खाओ जिसपर अल्लाह का नाम लिया गया हो? हालाँकि जिन चीज़ों का इस्तेमाल विवशता की स्थिति के सिवा दूसरी सभी स्थितियों में अल्लाह ने हराम कर दिया है उनका विवरण वह तुम्हें बता चुका है। अधिकतर लोगों का हाल यह है कि ज्ञान के बिना वे सिर्फ़ अपनी इच्छाओं के आधार पर पथभ्रष्ट करनेवाली बातें करते हैं, इन सीमा से आगे बढ़नेवालों को तुम्हारा रब ख़ूब जानता है। (120) तुम खुले गुनाहों से भी बचो और छिपे गुनाहों से भी, जो लोग गुनाह कमाते हैं वे अपनी इस कमाई का बदला पाकर रहेंगे। (121) और जिस जानवर को अल्लाह का नाम लेकर

29. आयत 110 से 113 तक जो बात कही गई है वह यह है कि इनसान के बारे में अल्लाह का क़ानून यह नहीं है कि उसे ईश्वरीय इच्छा के अन्तर्गत उस तरीक़े से स्वाभाविक राह पर लगाया जाए जिस तरह पेड़ में फल आते हैं या ख़ुद इनसान के सिर पर बाल उगते हैं, बल्कि उसने इनसान को दुनिया में परीक्षा के लिए पैदा किया है और परीक्षा के उद्देश्य से यह बात ख़ुद उसपर छोड़ी गई है कि वह सत्य-मार्ग की ओर जाना चाहता है या गुमराही की ओर। अगर वह ख़ुद ही पथभ्रष्ट होना चाहे तो अल्लाह अपनी इच्छा से उसको सत्य मार्ग पर चलने को बाध्य नहीं करता।

30. इस वाक्य के सम्बोधक नबी (सल्ल॰) हैं और सम्बोधन मुसलमानों से है।

ज़बह न किया गया हो उसका मांस न खाओ, ऐसा करना सीमा का उल्लंघन है। शैतान अपने साथियों के दिलों में सन्देह और आक्षेप की बातें डाल देते हैं ताकि वे तुमसे झगड़ा करें। लेकिन अगर तुम उनके कहने पर चले तो यक़ीनन तुम मुशरिक (बहुदेववादी) हो।

(122) क्या वह व्यक्ति जो पहले मुर्दा था फिर हमने उसको ज़िन्दगी दी और उसको वह प्रकाश प्रदान किया जिसके उजाले में वह लोगों के बीच ज़िन्दगी की राह तय करता है उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जो अंधेरों में पड़ा हुआ हो और किसी तरह उनसे न निकलता हो?[31] अधर्मियों के लिए तो इसी तरह उनके कर्म सुहावने बना दिए गए हैं, (123) और इसी तरह हमने हर बस्ती में उसके बड़े-बड़े अपराधियों को लगा दिया है कि वहाँ अपने छलकपट का जाल फैलाएँ। वास्तव में व अपने छलकपट के जाल में ख़ुद फँसते हैं मगर उन्हें इसकी समझ नहीं है।

(124) जब उनके सामने कोई आयत आती है तो वे कहते हैं, ''हम न मानेंगे जब तक कि वह चीज़ ख़ुद हमको न दी जाए जो अल्लाह के रसूलों को दी गई है।'' अल्लाह ख़ूब जानता है कि अपना सन्देश पहुँचाने का काम किससे ले और किस तरह ले। करीब है वह समय जब इन अपराधियों को अपनी मक्कारियों के बदले में अल्लाह के यहाँ अपमान और सख़्त अज़ाब का सामना करना पड़ेगा।

(125) अतः (यह सत्य है कि) जिसे अल्लाह राह से लगाने का इरादा करता है उसका सीना (दिल) इस्लाम (आज्ञापालन) के लिए खोल देता है और जिसे गुमराही में डालने का इरादा करता है उसके सीने को तंग कर देता है और ऐसा भींचता है कि (इस्लाम की कल्पना करते ही) उसे ऐसा लगने लगता है कि मानो उसकी जान आसमान की ओर उड़ी जा रही है। इस तरह अल्लाह (सत्य से भागने और उससे नफ़रत करने की) गंदगी उन लोगों पर डाल देता है जो ईमान नहीं लाते[32] (126) हालाँकि यह मार्ग तुम्हारे रब का सीधा मार्ग है और इसके चिह्न उन लोगों के लिए स्पष्ट

31. अर्थात् तुम किस तरह यह आशा कर सकते हो कि जिस इनसान को इनसानियत की चेतना मिल चुकी है और जो ज्ञान के प्रकाश में टेढ़े रास्तों के बीच सत्य की सीधी राह को साफ़ देख रहा है वह उन चेतनाहीन लोगों की तरह दुनिया में ज़िन्दगी बसर करेगा जो नासमझी और अज्ञान की अँधियारियों में भटकते फिर रहे हैं।
32. इस वाक्य से यह बात स्पष्ट हो गई कि जो लोग ईमान नहीं लाते अल्लाह उन्हीं का सीना (हृदय) इस्लाम के लिए तंग कर देता है और उन्हें राह पर लाने का इरादा नहीं करता।

कर दिए गए हैं जो नसीहत क़बूल करते हैं। (127) उनके रब के पास उनके लिए सलामती का घर है और वह उनका संरक्षक है उस सही व्यवहार नीति के कारण जो उन्होंने अपनाई।

(128) जिस दिन अल्लाह उन सब लोगों को घेरकर इकट्ठा करेगा, उस दिन वह जिन्नों (अर्थात् शैतान जिन्नों) को सम्बोधित करके कहेगा कि ''ऐ जिन्नों के गिरोह, तुमने तो पूरी इनसानी बिरादरी पर ख़ूब हाथ साफ़ किया।'' इनसानों में से जो उनके साथी थे वे निवेदन करेंगे, ''ऐ रब, हममें से हर एक ने दूसरे को ख़ूब इस्तेमाल किया है, और अब हम उस समय को आ पहुँचे हैं जो तूने हमारे लिए निश्चित कर दिया था।'' अल्लाह कहेगा, ''अच्छा अब आग तुम्हारा ठिकाना है, उसमें तुम हमेशा रहोगे।'' उससे बचेंगे सिर्फ़ वही जिन्हें अल्लाह बचाना चाहेगा, बेशक तुम्हारा रब तत्त्वदर्शी और सर्वज्ञ है। (129) देखो इसतरह हम (आख़िरत में) ज़ालिमों को एक दूसरे का साथी बनाएँगे उस कमाई के कारण जो वे (दुनिया में एक-दूसरे के साथ मिलकर) करते थे। (130) (उस अवसर पर अल्लाह उनसे यह भी पूछेगा कि) ''ऐ जिन्नों और इनसानों के गिरोह, क्या तुम्हारे पास ख़ुद तुममें से वे पैग़म्बर नहीं आए थे जो तुमको मेरी आयतें सुनाते और इस दिन के परिणाम से डराते थे?'' वे कहेंगे, ''हाँ, हम अपने खिलाफ़ ख़ुद गवाही देते हैं।'' आज दुनिया की ज़िन्दगी ने इन लोगों को धोखे में डाल रखा है, मगर उस समय रे ख़ुद अपने ख़िलाफ़ गवाही देंगे कि वे अधर्मी थे। (131) (यह गवाही उनसे इसलिए ली जाएगी कि यह सिद्ध हो जाए कि) तुम्हारा रब बस्तियों को ज़ुल्म के साथ तबाह करनेवाला न था जबकि उनके निवासी सत्य से अपरिचित हों।

(132) हर व्यक्ति का दर्जा उसके कर्म के अनुसार है और तुम्हारा रब लोगों के कर्मों से बेख़बर नहीं है। (133) तुम्हारा रब निस्स्पृह (बेनियाज़) है और दयालुता उसकी नीति है। अगर वह चाहे तो तुम लोगों को ले जाए और तुम्हारी जगह दूसरे जिन लोगों को चाहे ले आए जिस तरह उसने तुम्हें कुछ और लोगों की नस्ल से उठाया है। (134) तुमसे जिस चीज़ का वादा किया जा रहा है वह यक़ीनन आनेवाली है। और तुममें अल्लाह को विवश कर देने की ताक़त नहीं। (135) ऐ नबी, कह दो कि लोगो, तुम अपनी जगह कर्म करते रहो और मैं भी अपनी जगह कर्म कर रहा हूँ, जल्द ही तुम्हें पता लग जाएगा कि परिणाम किसके हक़ में अच्छा निकलता है, हर हाल में यह सत्य है कि ज़ालिम कभी कामयाब नहीं हो सकते।

(136) इन लोगों ने अल्लाह के लिए ख़ुद उसी की पैदा की हुई खेतियों और चौपायों में से एक हिस्सा निश्चित किया है और अपने ख़याल से कहते हैं यह अल्लाह के

लिए है और वह हमारे ठहराए हुए साझीदारों के लिए। फिर जो हिस्सा उनके ठहराए हुए साझीदारों के लिए है वह तो अल्लाह को नहीं पहुँचता मगर जो अल्लाह के लिए है वह उनके साझीदारों को पहुँच जाता है।[33] कैसे बुरे फ़ैसले करते हैं ये लोग।

(137) और इसी तरह बहुत-से मुशरिकों के लिए उनके साझीदारों ने अपनी औलाद के क़त्ल को ख़ुशनुमा बना दिया है[34] ताकि उनको तबाही में डालें और उनके लिए उनके धर्म को संदिग्ध बना दें।[35] अगर अल्लाह चाहता तो ये ऐसा न करते, अतः इन्हें छोड़ दो कि ये अपने मिथ्यारोपण में लगे रहें।

---

33. वे लोग अल्लाह के नाम से जो हिस्सा निकालते थे उसमें भी तरह-तरह की चालबाज़ियाँ करके कमी करते रहते थे और हर तरह से अपने घड़े हुए साझीदारों का हिस्सा बढ़ाने की कोशिस करते थे। उदाहरणार्थ जो अनाज और फल आदि अल्लाह के नाम पर निकाले जाते उनमें से अगर कुछ गिर जाता तो वह साझीदारों के हिस्से में शामिल कर दिया जाता था, और अगर साझीदारों के हिस्से में से गिरता, या अल्लाह के हिस्से में मिल जाता तो उसे उन्हीं (साझीदारों) के हिस्से में वापस किया जाता। अगर किसी कारण से भेंट और चढ़ावे का अनाज ख़ुद इस्तेमाल करने की ज़रूरत होती तो अल्लाह का हिस्सा खा लेते थे मगर साझीदारों के हिस्से को हाथ लगाते हुए डरते थे कि कहीं कोई बला न उतर आए।
34. यहाँ 'साझीदारों' का शब्द एक दूसरे अर्थ में इस्तेमाल हुआ है जो ऊपर के अर्थ से भिन्न है। आयत 136 में जिन्हें 'शरीक' शब्द की संज्ञा दी गई थी वे उनके वे पूज्य थे जिनकी बरकत या सिफ़ारिश या मध्यस्थता को ये लोग नेमत की प्राप्ति में सहायक समझते थे और नेमतों को पाकर कृतज्ञता व्यक्त करने के सिलसिले में उन्हें अल्लाह के साथ हिस्सेदार बनाते थे। इसके विपरीत इस आयत में 'शरीक' से मुराद वे इनसान हैं जिन्होंने औलाद के क़त्ल की रीति निकाली थी और वे शैतान हैं जिन्होंने इस अत्याचारपूर्ण रीति को लोगों की निगाह में एक जाइज़ और प्रिय कार्य बना दिया था। औलाद के क़त्ल की तीन शकलें अरबों में प्रचलित थीं और क़ुरआन में तीनों की ओर इशारा किया गया है : (1) लड़कियों का क़त्ल, इस ध्येय से कि कोई उनका दामाद न बने, या क़बायली लड़ाइयों में वे दुश्मन के हाथ न पड़ें, या किसी दूसरी वजह से वे उनके लिए लज्जा का कारण सिद्ध न हों। (2) बच्चों का क़त्ल, इस ध्येय से कि उनके पालन-पोषण का बोझ न उठाया जा सकेगा और आर्थिक साधनों की कमी के कारण वे असह्य बोझ बन जाएँगे। (3) बच्चों को अपने देवी-देवताओं को ख़ुश करने के लिए भेंट चढ़ाना।

(138) कहते हैं ये जानवर और ये खेत सुरक्षित हैं, इन्हें सिर्फ़ वही लोग खा सकते हैं जिन्हें हम खिलाना चाहें जबकि यह पाबन्दी इनकी ख़ुद अपनी ही घड़ी हुई है। फिर कुछ जानवर हैं जिनपर सवारी और बोझा ढोना हराम कर दिया गया है और कुछ जानवर है जिनपर ये अल्लाह का नाम नहीं लेते, और ये सब कुछ उन्होंने अल्लाह पर झूठ मढ़ा है, जल्द ही अल्लाह उन्हें इन मिथ्यारोपणों का बदला देगा।

(139) और कहते हैं कि जो कुछ इन जानवरों के पेट में है ये हमारे मर्दों के लिए ख़ास है और हमारी औरतों के लिए हराम, लेकिन अगर वह मुर्दा हो तो दोनों उसके खाने में शरीक हो सकते हैं। ये बातें जो उन्होंने घड़ ली हैं इनका बदला अल्लाह उन्हें देकर रहेगा। यक़ीनन वह तत्त्वदर्शी है और सब बातों की उसे ख़बर है।

(140) यक़ीनन घाटे में पड़ गए वे लोग जिन्होंने अपनी औलाद को अज्ञान और मूर्खता के कारण क़त्ल कयिा और अल्लाह की दी हुई रोज़ी को अल्लाह पर झूठ घड़कर अवैध ठहरा लिया। यक़ीनन वे भटक गए और हरगिज़ वे सीधा मार्ग पानेवालों में से न थे।

(141) वह अल्लाह ही है जिसने तरह-तरह के बाग़ और अंगूर लताओं के बाग़ और नख़लिस्तान पैदा किए, खेतियाँ उगाईं जिनसे तरह-तरह के खाद्य पदार्थ प्राप्त होते हैं, ज़ैतून और अनार के पेड़ पैदा किए जिनके फल रूप-रंग में मिलते-जुलते और स्वाद में भिन्न होते हैं। खाओ इनकी पैदावार जबकि ये फलें, और अल्लाह का हक़ अदा करो जब इनकी फ़सल काटो, और सीमा से आगे न बढ़ो कि अल्लाह सीमा से आगे बढ़नेवालों को पसन्द नहीं करता। (142) फिर वही है जिसने चौपायों में से वे जानवर भी पैदा किए जिनसे सवारी और बोझ ढोने काकाम लिया जाता है और वे भी जो खाने और बिछाने के काम आते हैं।[36] खाओ उन चीज़ों में से जो अल्लाह ने तुम्हें प्रदान की हैं और शैतान की पैरवी न करो क्योंकि वह तुम्हारा खुला दुश्मन है। (143) ये आठ

---

35. अज्ञान काल के अरब अपने आपको हज़रत इबराहीम (अलै॰) और इसमाईल (अलै॰) का अनुयायी कहते और समझते थे और इस कारण उनका ख़याल यह था कि जिस धर्म का वे अनुसरण कर रहे हैं वह अल्लाह का पसंदीदा धर्म ही है। लेकिन इस धर्म में बाद की शताब्दियों में उनके धर्म-गुरू, क़बीलों के सरदार, परिवारों के बड़े-बूढ़े और विभिन्न लोग तरह-तरह की धारणाओं और कर्मों और रीतियों की अभिवृद्धि करते चले गए जिन्हें आनेवाली नस्लों ने वास्तविक धर्म का अंश समझ लिया और उनका पूरा धर्म संदिग्ध होकर रह गया।
36. अर्थात् उनकी खालों और बालों के फ़र्श बनाए जाते हैं।

नर-मादा हैं, दो भेड़ की जाति से और दो बकरी की जाति से। ऐ नबी, इनसे पूछो कि अल्लाह ने उनके नर हराम किए हैं या मादा, या वे बच्चे जो भेड़ों और बकरियों के पेट में हों? ठीक-ठीक ज्ञान के साथ मुझे बताओ; अगर तुम सच्चे हो। (144) और इसी तरह दो ऊँट की जाति से हैं और दो गाय की जाति से। पूछो, इनके नर अल्लाह ने हराम किए हैं या मादा, या वे बच्चे जो ऊँटनी और गाय के पेट में हों? क्या तुम उस समय हाज़िर थे जब अल्लाह ने इनके हराम होने का आदेश तुम्हें दिया था? फिर उस व्यक्ति से बढ़कर ज़ालिम और कौन होगा जो अल्लाह से जोड़कर झूठी बात कहे ताकि ज्ञान के बिना लोगों का ग़लत मार्गदर्शन करे। यक़ीनन अल्लाह ऐसे ज़ालिमों को सीधा मार्ग नहीं दिखाता।

(145) ऐ नबी, इनसे कहो कि जो प्रकाशना (वह्य) मेरी ओर आई है उसमें तो मैं कोई चीज़ ऐसी नहीं पाता जो किसी खानेवाले पर हराम हो, सिवाय इसके कि वह मुर्दार हो, या बहाया हुआ ख़ून हो, या सुअर का मांस हो कि वह नापाक है, या मर्यादा से हटा हुआ (फ़िस्क़) हो कि अल्लाह के सिवा किसी और के नाम पर ज़बह किया गया हो।[37] फिर जो व्यक्ति मजबूरी की हालत में (कोई चीज़ इनमें से खा ले) बिना इसके कि वह नाफ़रमानी का इरादा रखता हो और बिना इसके कि वह ज़रूरत की सीमा से आगे बढ़े तो निश्चय ही तुम्हारा रब क्षमाशील और दयावान् है। (146) और जिन लोगों ने यहूदी धर्म ग्रहण किया उनपर हमने सब नाख़ूनवाले जानवर हराम कर दिए थे, और गाय और बकरी की चरबी भी सिवाय उसके जो उनकी पीठ या उनकी आँतों से लगी हुई हो या हड्डी से लगी रह जाए। यह हमने उनकी सरकशी की सज़ा उन्हें दी थी[38] और ये जो कुछ हम कह रहे हैं बिलकुल सत्य कह रहे हैं। (147) अब अगर वे तुम्हें झुठलाएँ तो उनसे कह दो कि तुम्हारा रब बहुत व्यापक दयालुतावाला है और अपराधियों से उसके अज़ाब को फेरा नहीं जा सकता।

(148) ये मुशरिक (बहुदेववादी) लोग (तुम्हारी इन बातों के जवाब में) ज़रूर कहेंगे कि "अगर अल्लाह चाहता तो हम साझी न ठहराते और न हमारे बाप-दादा और

37. इसका अर्थ यह नहीं है कि इनके सिवा खाने की कोई चीज़ 'शरीअत' में हराम नहीं है, बल्कि अर्थ यह है कि हराम वे चीज़ें नहीं जो तुम लोगों ने हराम कर ली हैं, बल्कि हराम ये चीज़ें हैं। व्याख्या के लिए देखें सूरा 5 (अल-माइदा), फ़ुटनोट 2,9।

38. देखें सूरा 3 (आले-इमरान), आयत 93 और सूरा 4 (अन-निसा), आयत 160।

न हम किसी चीज़ को हराम ठहराते।"[39] ऐसी ही बातें बना-बनाकर इनसे पहले के लोगों ने भी सत्य को झुठलाया था यहाँ तक कि आख़िरकार हमारे अज़ाब का मज़ा उन्होंने चख लिया। उनसे कहो, "क्या तुम्हारे पास कोई ज्ञान है जिसे हमारे सामने पेश कर सको? तुम तो सिर्फ़ गुमान पर चल रहे हो और निरी कल्पनाएँ करते हो।" (149) फिर कहो, (तुम्हारे इस तर्क के मुक़ाबले में) "सत्य को पहुँचा हुआ तर्क तो अल्लाह के पास है, बेशक अगर अल्लाह चाहता तो तुम सबको सीधे रास्ते पर चला देता।"[40]

(150) उनसे कहो कि "लाओ अपने वे गवाह जो इस बात की गवाही दें कि अल्लाह ही ने इन चीज़ों को हराम किया है।" फिर अगर वेगवाही दे दें तो तुम उनके साथ गवाही न देना[41] और हरगिज़ उन लोगों की इच्छाओं के पीछे न चलना जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया है, और जो आख़िरत का इनकार करते हैं और जोदूसरों को अपने रब का समकक्ष बनाते हैं।

(151) ऐ नबी, उनसे कहो कि आओ मैं तुम्हें सुनाऊँ तुम्हारे रब ने तुमपर क्या

39. अर्थात् वे अपने अपराध और अपने ग़लत कामों के लिए वही पुरानी आपत्ती सामने लाएँगे जो हमेशा से अपराधी और ग़लत काम करनेवाले प्रस्तुत करते रहे हैं। वे कहेंगे कि हमारे हक़ में अल्लाह की इच्छा यही है कि हम 'शिर्क' करें और जिन चीज़ों को हमने हराम घोषित किया है उन्हें हराम घोषित करें। वरना अगर ईश्वर न चाहता कि हम ऐसा करें तो कैसे संभव था कि ये कर्म हम कर सकते। अतः चूँकि हम ईश्वरीय इच्छा के अनुसार ये सब कुछ कर रहे हैं इसलिए ठीक कर रहे हैं, इसका इलज़ाम अगर है तो हम पर नहीं, अल्लाह पर है। और जो कुछ हम कर रहे हैं ऐसा ही करने पर मजबूर हैं कि इसके सिवा कुछ और करना हमारी सामर्थ्य में नहीं।

40. अर्थात् तुम अपनी असमर्थता व्यक्त करने के सिलसिले में यह तर्क जो प्रस्तुत करते हो कि अल्लाह अगर चाहता तो हम 'शिर्क' न करते, इससे पूरी बात अदा नहीं होती। पूरी बात कहना चाहते हो तो यूँ कहो कि अगर अल्लाह चाहता तो हम सबको सीधी राह पर चलाता। दूसरे शब्दों में तुम ख़ुद अपने चुनाव से सत्य-मार्ग ग्रहण करने पर तैयार नहीं हो, बल्कि चाहते हो कि अल्लाह ने जिस तरह फ़रिश्तों को जन्मजात सत्यमार्ग पर चलनेवाला बनाया था, उसी तरह तुम्हें भी बना देता। तो बेशक अगर अल्लाह की इच्छा इनसान के हक़ में भी यह होती तो वह ज़रूर ऐसा कर सकता था, लेकिन यह उसकी इच्छा नहीं है। अतः जिस गुमराही को तुमने अपने लिए ख़ुद ही पसन्द किया है अल्लाह भी तुम्हें उसी में पड़ा रहने देगा।

पाबनन्दियाँ लगाई हैं[42] : यह कि उसके साथ किसी को साझीदार न बनाओ। और माँ-बाप के साथ अच्छा व्यवहार करो, और अपनी औलाद को निर्धनता के भय से क़त्ल न करो, हम तुम्हें भी रोज़ी देते हैं और उनको भी देंगे और बेशर्मी की बातों[43] के क़रीब भी न जाओ, चाहे वे खुली हों या छिपी। और किसी जीव की जिसे अल्लाह ने आदरणीय ठहराया है, हत्या न करो मगर हक़ के साथ। ये बातें हैं जिनका आदेश उसने तुम्हें दिया है, शायद कि तुम समझ-बूझ से काम लो। (152) और यह कि यतीम के माल के क़रीब न जाओ मगर ऐसे तरीक़े से जो सबसे अच्छा हो, यहाँ तक कि वे अपनी जवानी की उम्र को पहुँच जाएँ। और नाप-तौल में पूरा इनसाफ़ करो, हम हर व्यक्ति पर ज़िम्मेदारी का उतना ही बोझ रखते हैं जितने की उसमें सामर्थ्य है। और जब बात कहो इनसाफ़ की कहो चाहे मामला अपने नातेदार ही का क्यो न हो। और अल्लाह की प्रतिज्ञा को पूरा करो।[44] इन बातों का आदेश अल्लाह ने तुम्हें दिया है शायद कि तुम नसीहत क़बूल करो। (153) साथ ही उसका आदेश यह है कि यही मेरा सीधा मार्ग है अतः तुम इसी पर चलो और दूसरे मार्गों पर न चलो कि वे उसके मार्ग से हटाकर तुम्हें बिखेर देंगे। यह है वह आदेश जो तुम्हारे रब ने तुम्हें दिया है, शायद कि तुम पथ-भ्रष्टता

41. अर्थात् अगर वे गवाही की ज़िम्मेदारी को समझते हों और जानते हों कि गवाही उसी बात की देनी चाहिए जिसकाआदमी को ज्ञान हो, तो वे कभी यह गवाही देने का साहस न करेंगे। लेकिन अगर ये लोग गवाही की ज़िम्मेदारी को महसूस किए बिना इतनी ढिठाई पर उतर आएँ कि अल्लाह का नाम लेकर झूठी गवाही देने में भी न झिझकें, तो इनके इस झूठ में तुम इनके साथी न बनो।
42. अर्थात् तुम्हारे रब की निर्धारित पाबन्दियाँ वे नहीं हैं जिनमें तुम ग्रस्त हो, बल्कि अस्ल पाबन्दियाँ ये हैं।
43. मूल ग्रन्थ में 'फ़वाहिश' शब्द इस्तेमाल हुआ है जो उन सभी कर्मों के लिए आता है जिनकी बुराई बिलकुल स्पष्ट है। क़ुरआन में व्यभिचार, गुदा मैथुन, नग्नता, मिथ्यारोपण, और बाप की बीवी से निकाह करने की 'फ़हश' कर्मों में गणना की गई है। हदीस में चोरी और शराब पीने और भिक्षा मांगने को 'फ़वाहिश' में शामिल किया गया है, इसी तरह दूसरे सभी लज्जाजनक कर्म भी 'फ़वाहिश' में शामिल हैं और अल्लाह का आदेश यह है कि इस तरह के कार्य न खुले तौर से किए जाएँ और न छिपकर।
44. 'अल्लाह की प्रतिज्ञा' से मुराद वह प्रतिज्ञा है जो इनसान और ईश्वर और इनसान और इनसान के बीच स्वभावतः उस समय आप से आप घटित हो जाती है जिस समय एक व्यक्ति अल्लाह की ज़मीन पर एक मानव-समाज़ में जन्म लेता है।

से बचो।

(154) फिर हमने मूसा को किताब प्रदान की थी जो भलाई की नीति अपनानेवाले इनसान के लिए नेमत की पूर्णता और हर ज़रूरी चीज़ का विवरण और पूरे तौर पर सन्मार्ग की सूचना और दयालुता थी। (और इसराईल की सन्तान को इसलिए दी गई थी कि) शायद लोग अपने रब से मिलने पर ईमान लाएँ।[45] (155) और इसी तरह यह किताब हमने उतारी है, एक बरकतवाली किताब। अतः तुम इसका अनुसरण करो और परहेज़गारी की नीति अपनाओ, असंभव नहीं कि तुमपर दया की जाए। (156) अब तुम यह नहीं कह सकते कि किताब तो हमसे पहले के दो गिरोहों को दी गई थी, और हमको कुछ ख़बर न थी कि वे क्या पढ़ते-पढाते थे। (157) और अब तुम यह बहान भी नहीं कर सकते कि अगर हमपर किताब उतारी गई होती तो हम उनसे ज़्यादा सीधे मार्ग पर चलनेवाले सिद्ध होते। तुम्हारे पास तुम्हारे रब की ओर से एक स्पष्ट प्रमाण और मार्गदर्शन और दयालुता आ गई है, अब उससे बढ़कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह की आयतों को झुठलाए और उनसे मुँह मोड़े। जो लोग हमारी आयतों से मुँह मोड़ते हैं उन्हें इस विमुखता के बदले में हम बुरी से बुरी सज़ा देकर रहेंगे। (158) क्या अब लोग इसके इनतिज़ार में हैं कि उनके सामने फ़रिश्ते आ खड़े हों, या तुम्हारा रब ख़ुद आ जाए, या तुम्हारे रब की कुछ खुली निशानियाँ[46] सामने आ जाएँ? जिस दिन तुम्हारे रब की कुछ विशिष्ट निशानियाँ प्रकट हो जाएँगी फिर किसी ऐसी व्यक्ति को उसका ईमान कुछ फ़ायदा न पहुँचा सकेगा जो पहले ईमान न लाया हो या जिसने अपने ईमान (आस्था) में कोई भलाई न कमाई हो। ऐ नबी, इनसे कह दो कि अच्छा, तुम इनतिज़ार करो, हम भी इनतिज़ार करते हैं।

(159) जिन लोगों ने अपने धर्म को टुकड़े-टुकड़े कर दिया और गिरोह-गिरोह बन गए यक़ीनन उनसे तुम्हारा कुछ नाता नहीं, उनका मामला तो अल्लाह के हवाले है, वही उनको बताएगा कि उन्होंने क्या कुछ किया है। (160) जो अल्लाह के पास नेकी लेकर आएगा उसके लिए दस गुना बदला है, और जो बुराई लेकर आएगा उतना ही

45. मुराद यह है कि लोग अपने-आपको ग़ैर-ज़िम्मेदार समझना छोड़ दें और यह मान लें कि उन्हें अपने रब के सामने हाज़िर होकर एक दिन अपने कर्मों की जवाबदेही करनी है।
46. अर्थात् 'क़ियामत' (प्रलय) के लक्षण या अज़ाब या कोई और ऐसी निशानी जो सत्य को बिलकुल खोल देनेवाली हो और जिसके प्रकट होने के बाद परीक्षा और आज़माइश का कोई सवाल ही बाक़ी न रहे।

बदला दिया जाएगा जितना उसने अपराध किया है, और किसी के साथ ज़ुल्म न किया जाएगा।

(161) ऐ नबी, कहो मोरे रब ने निश्चय ही मुझे सीधा मार्ग दिखा दिया है, बिलकुल ठीक धर्म जिसमें कोई टेढ़ नहीं, इबराहीम का तरीक़ा जिसे एकाग्र होकर उसने अपनाया था और वह मुशरिकों (बहुदेववादियों) में से न था। (162) कहो, मेरी नमाज़, मेरे इबादत-सम्बन्धी सारे तरीक़े,[47] मेरा जीना और मेरा मरना सब कुछ अल्लाह, सारे संसार के रब, के लिए है (163) जिसका कोई साझीदार नहीं। इसी का मुझे आदेश दिया गया है और सबसे पहले आज्ञाकारी होनेवाला मैं हूँ। (164) कहो, क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई और रब तलाश करूँ हालाँकि वही हर चीज़ का रब है? हर आदमी जो कुछ कमाता है उसका ज़िम्मेदार वह ख़ुद है, कोई बोझ उठानेवाला दूसरे का बोझ नहीं उठाता,[48] फिर तुम सबको अपने रब की ओर पलटना हैं, उस समय वह तुम्हारे मतभेदों की हक़ीक़त तुमपर खोल देगा। (165) वही है जिसने तुमको ज़मीन में खलीफ़ा बनाया, और तुममें से कुछ लोगों को कुछ लगों के मुक़ाबले में ज़्यादा ऊँचे दर्जे दिये, ताकि जो कुछ तुमको दिया है उसमें तुम्हारी परीक्षा करे। बेशक तुम्हारा रब सज़ा देने में भी बहुत तेज़ है और बहुत क्षमाशील और दयावान् भी है।



47. मूल अरबी में 'नुसुक' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ क़ुरबानी भी है और यह सामान्य रूप से बनदगी, भक्ति और उपासना के दूसरे सभी तरीक़ों के लिए भी इस्तेमाल होता है।

48. अर्थात् हर व्यक्ति अपने कर्म का ख़ुद ज़िम्मेदार है, एक के कर्म की ज़िम्मेदारी दूसरे पर नहीं है।

7. अल-आराफ़

नाम

इस सूरा का नाम अल-आराफ़ इस लिए रखा गया कि इस सूरा की आयत 48 में, असहाबुल आराफ़, (आराफ़वालों) का उल्लेख हुआ है। मानो इसे सूरा आराफ़ कहने का मतलब यह है कि वह सूरा जिसमें आराफ़ का उल्लेख है।

अवतरणकाल

इसके विषय वस्तुओं पर विचार करने से स्पष्टतः महसूस होता है कि इसका अवतरण काल लगभग वही है जो सूरा 6 (अनआम) का है। अतः इसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को समझने के लिए उस प्राक्कथन पर एक दृष्टि डाल लेना काफ़ी होगा जिसे हमने सूरा 6 (अनआम में लिखा है।

वार्ताएँ

इस सूरा के अभिभाषण का केन्द्रीय विषय रिसालत की ओर आमंत्रित करना है। सारी वार्ता का अभिप्राय यह है कि संबोधित लोगों को ईश्रर के भेजे हुए पैग़म्बर का अनुसरण ग्रहण करने पर तत्पर किया जाए। लेकिन इस आमंत्रण में डराने और चेतावनी का रंग अधिक स्पष्ट रूप से पाया जाता है। क्योंकि जिन लोगों से संबोधन है अर्थात् मक्कावाले, उन्हें समझाते-समझाते एक दीर्घ समय व्यतीत हो चुका है और उनका बहरापन, हठधर्मी और विरोधात्मक आग्रह इस हद तक पहुँच चुका है कि जल्द ही पैग़म्बर को उनसे सम्बोधन बंद करके दूसरों की ओर रुख़ करने का आदेश मिलनेवाला है। इसलिए समझाने-बुझाने की शैली में रिसालत (पैग़म्बरी) को स्वीकार करने का आमंत्रण देने के साथ उनको यह भी बताया जा रहा है कि जो नीति तुमने अपने पैग़म्बर के मुक़ाबले में अपना रखी है ऐसी ही नीति तुमसे पहले की क़ौमें अपने पैग़म्बरों के मुक़ाबले में अपनाकर बहुत बुरा परिणाम देख चुकी हैं। फिर क्योंकि उनपर हुज्जत (तर्कयुक्त वार्ता) क़रीब आ चुकी है इसलिए अभिभाषण के अंतिम भाग में आमंत्रण का रुख़ उनसे हटकर किताबवालों की तरफ़ फिर गया है। और एक जगह तमाम दुनिया के लोगों को संबोधित भी किया गया है, जो इस बात का इशारा है कि अब हिजरत का समय क़रीब आ गया है और वह समय जिसमें नबी का संबोधन अपने निकट के लोगों से हुआ करता है समाप्त होने को है।

अभिभाषण के मध्य क्योंकि संबोधन का रुख़ यहूदियों की भी ओर फिर गया है

इसलिए साथ-साथ रिसालत के इस पहलू को भी स्पष्ट कर दिया गया है कि पैग़म्बर पर ईमान लाने के बाद उसके साथ कपट-नीति अपनाने और सुनने और पालन करने की प्रतिज्ञा सुदृढ़ करने के पश्चात् उसे भंग कर देने और सत्य-असत्य के अंतर से परिचित हो जाने के पश्चात् असत्यप्रियता में डूबे रहने का परिणाम क्या है।

सूरा के अंत में नबी (सल्ल॰) और आपके सहाबा (सहचर) को सत्य-प्रचार की विधि के संबंध में कुछ महत्त्वपूर्ण आदेश दिए गए हैं और विशेष रूप से उन्हें नसीहत की गई है कि विरोधियों की उत्तेजक बातों और प्रबलताओं के मुक़ाबले में धैर्य और संयम से काम ले और आवेग में बहकर कोई ऐसा क़दम न उठाएँ जो वास्तविक उद्देश्य को हानि पहुँचानेवाला हो।



7. सूरा अल-आराफ़

(मक्का में उतरी–आयतें 206)

अल्लाह के नाम से बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ मीम॰ सॉद॰। (2) यह एक किताब है जो तुम्हारी ओर उतारी गई है, अतः ऐ नबी, तुम्हारे दिल में इससे कोई झिझक न हो।[1] इसके उतारने का उद्देश्य यह है कि तुम इसके द्वारा (इनकार करनेवालों को) डराओ और ईमान लानेवालों को नसीहत हो।

(3) लोगो, जो कुछ तुम्हारे रब की ओर से तुमपर उतारा गया है उसपर चलो और अपने रब को छोड़कर दूसरे सरपरस्तों का अनुसरण न करो—मगर तुम नसीहत थोड़े ही मानते हो।

(4) कितनी ही बस्तियाँ हैं जिन्हें हमने तबाह कर दिया। उनपर हमारा अज़ाब अचानक रात के समय टूट पड़ा, या दिन-दहाड़े ऐसे समय पर आया जबकि वे आराम कर रहे थे। (5) और जब हमारा अज़ाब उनपर आ गया तो उनके मुँह से इसके सिवा और कुछ न निकला कि वास्तव में हम ज़ालिम थे।

(6) अतः यह ज़रूर होकर रहना है कि हम उन लोगों से पूछताछ करें जिनकी ओर हमने पैग़म्बर भेजे हैं और पैगम्बरों से भी पूछें (कि उन्होंने सन्देश पहुँचाने का दायित्व कहाँ तक पूरा किया और उन्हें उसका क्या जवाब मिला), (7) फिर हम ख़ुद पूर्ण ज्ञान के साथ सारा वृत्तान्त उनके सामने पेश कर देंगे, आख़िर हम कहीं ग़ायब तो नहीं थे। (8) और वज़न उस दिन बिलकुल सत्यहोगा।[2] जिनके पलड़े भारी होंगे वही सफलता प्राप्त करनेवाले होंगे (9) और जिनके पलड़े हलके होंगे वही अपने आपको घाटे में डालनेवाले होंगे क्योंकि वे हमारी आयतों के साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार करते रहे थे।

(10) हमने तुम्हें ज़मीन में अधिकारों के साथ बसाया और तुम्हारे लिए यहाँ

1. अर्थात् बिना किसी झिझक और डर के इसे लोगों तक पहुँचा दो और इसकी कुछ चिन्ता न करो कि विरोधी लोग इसका कैसा स्वागत करेंगे।
2. अर्थात् उस दिन अल्लाह की न्याय-तुला में सत्य के सिवा कोई चीज़ वज़नी न होगी और वज़न के सिवा कोई चीज़ सत्य न होगी, जिसके साथ जितना सत्य होगा उतना ही वज़नवाला होगा। और फ़ैसला जो कुछ भी होगा वज़न के अनुसार होगा, किसी दूसरी चीज़ का तनिक भी विचार न किया जाएगा।

जीवन-सामग्री जुटाई मगर तुम लोग कतज्ञता थोड़े ही दिखाते हो।

(11) हमने तुम्हारी संरचना का आरंभ किया, फिर तुम्हारा रूप बनाया, फिर फ़रिश्तों से कहा आदम को सजदा करो। इस आदेश पर सबने सजदा किया मगर इबलीस सजदा करनेवालों में शामिल न हुआ।[3]

(12) पूछा, "तुझे किस चीज़ ने सजदा करने से रोका जबकि मैंने तुझको आदेश दिया था?" बोला, "मैं उससे अच्छा हूँ, तूने मुझे आग से पैदा किया है और उसे मिट्टी से।" (13) कहा, "अच्छा, तू यहाँ से नीचे उतर। तुझे अधिकार नहीं है कि यहाँ बड़ाई का गर्व करे। निकल जा कि वास्तव में तू उन लोगों मे से है जो ख़ुद अपना अपमान चाहते हैं।"[4] (14) बोला, "मुझे उस दिन तक मुहलत दे जबकि ये सब दोबारा उठाए जाएँगे।" (15) कहा, "मुझे मुहलत है।" (16) बोला, "अच्छा तो जिस तरह तूने मुझे गुमराही में डाला है मैं भी अब तेरी सीधी राह पर इन इनसानों की घात में लगा रहूँगा, (17) आगे और पीछे, दाएँ और बाएँ, हर ओर से इनको घेरूँगा और तू इनमें से ज़्यादातर को शुक्रगुज़ार न पाएगा।" (18) कहा, "निकल जा यहाँ से अपमानित और ठुकराया हुआ। विश्वास रख कि इमनें से जो तेरा अनुसरण करेंगे, तुझ समेत उन सबसे जहन्नम को भर दूँगा। (19) और ऐ आदम, तू और तेरी पत्नी, दोनों इस जन्नत में रहो, जहाँ जिस चीज़ को तुम्हारा मन चाहे खाओ, मगर इस पेड़ के पास न फटकना वरना ज़ालिमों में से हो जाओगे।"

(20) फिर शैतान ने उनको बहकाया ताकि उनकी गुप्त इन्द्रियाँ जो एकदूसरे से छुपाई गई थी उनके सामने खोल दें। उसने उनसे कहा, "तुम्हारे रब ने तुम्हें जो इस पेड़

3. इसका यह अर्थ नहीं है कि इबलीस फ़रिश्तों में से था। वास्तविकता यह है कि जब ज़मीन का प्रबन्ध करनेवाले फ़रिश्तों को आदम (अलै०) के आगे सजदा करने का आदेश दिया गया तो इसका अर्थ यह था कि फ़रिश्तों के अतिरिक्त अन्य प्राणी भी आदम (अलै०) के आज्ञाकारी हो जाएँ जो फ़रिश्तों के प्रबन्ध के अन्तर्गत थे। इन प्राणियों में से सिर्फ़ इबलीस ने आगे बढ़कर यह घोषणा की कि वह आदम के आगे नहीं झुकेगा।
4. मूल अरबी में यहाँ 'साग़िरीन' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'साग़िर' का अर्थ है 'वह जो अपमान, ज़िल्लत और छोटी हैसियत को ख़ुद अपनाए।' अतः अल्लाह के कहने का अर्थ यह था कि बन्दा और पैदा किया हुआ (मख़लूक़) होने के बावजूद तेरा अपनी बड़ाई के घमण्ड में पड़ने का यह अर्थ है कि तू ख़ुद अपमानित होना चाहता है।

से रोका है इसका कारण इसके सिवा कुछ नहीं है कि कहीं तुम फरिश्ते न बन जाओ, या तुम्हें हमेशा की ज़िन्दगी प्राप्त न हो जाए।" (21) और उसने क़सम खाकर उनसे कहा कि मैं तुम्हारा सच्चा हितैषी हूँ। (22) इस तरह धोखा देकर वह उन दोनों को धीरे-धीरे अपने ढब पर ले आया। आख़िरकार जब उन्होंने उस पेड़ का मज़ा चखा तो उनकी गुप्त इन्द्रियाँ एक दूसरे के सामने खुल गई और वे अपने शरीरों को जन्नत के पत्तों से ढाँकने लगे। तब उनके रब ने उन्हें पुकारा, "क्या मैंने तुम्हें इस पेड़ से न रोका था और न कहा था कि शैतान तुम्हारा खुला दुश्मन है?" (23) दोनों बोल उठे, "ऐ रब, हमने अपने ऊपर ज़ुल्म किया, अब अगर तूने हमें माफ़ न किया और दया न की तो यक़ीनन हम तबाह हो जाएँगे।"[5] (24) कहा, "उतर जाओ, तुम एक दूसरे के दुश्मन हो, और तुमहारे लिए एक निश्चित अवधि तक ज़मीन में ठहरने की जहग और जीवन सामग्री है।" (25) और कहा, "वहीं तुमको जीना और वहीं मरना है और उसी में से तुमको आख़िरकार निकाला जाएगा।"

(26) ऐ आदम की संतान, हमने तुमपर वस्त्र (लिबास) उतारा है कि तुम्हारे शरीर के गुप्त अंगों को ढाँके और तुम्हारे लिए शरीर की रक्षा और सौंदर्य का साधन भी हो, और बेहतरीन वस्त्र परहेज़गारी का वस्त्र है। यह अल्लाह की निशानियों में से एक निशानी है, शायद कि लोग इससे शिक्षा ग्रहण करें। (27) ऐ आदम की संतान, ऐसा

5. इससे मालूम हुआ कि इनसान में लज्जा का मनोभाव एक प्राकृतिक मनोभाव है और इसका सर्वप्रथम सूचक वह लज्जा है जो अपने शरीर के विशिष्ट भागों को दूसरों के सामने खोलने में आदमी को स्वभावतः महसूस होती है, इसी लिए शैतान की पहली चाल जो उसने इनसान को इनसानी प्रकृति की सीधी राह से हटाने के लिए चली, यह थी कि उसके इस लज्जा के मनोभाव को आघात पहुँचाए और नग्नता के मार्ग से उसके लिए निर्लज्जता और बुराइयों का दरवाज़ा खोले और उसको वासनात्मक भावना के मामलों में भ्रष्ट कर दे। फिर इससे यह भी ज्ञात हुआ कि इनसान के भीतर उच्च स्थिति पर पहुँचने की एक स्वाभाविक प्यास मौजूद है। इसी लिए शैतान को उसके सामने हितैषी के भेस में आना पड़ा और यह कहना पड़ा कि मैं तुम्हें ज़्यादा ऊँची स्थिति की ओर ले जाना चाहता हूँ। फिर इससे यह भी मालू हुआ कि इनसान का वास्तविक गुण जो उसे शैतान की अपेक्षा उत्तम बनाता है, वह यह है कि जब उससे ग़लती हो जाए तो वह लज्जित होकर अल्लाह से माफ़ी माँगे। इसके ख़िलाफ़ शैतान को जिस चीज़ ने तिरस्कृत किया वह यह थी कि वह ग़लती करके अल्लाह के मुक़ाबले में अकड़ गया और विद्रोह पर उतर आया।

न हो कि शैतान तुम्हें फिर उसी तरह प्रलोभन-परीक्षा (फ़ितने) में डाल दे जिसतरह उसने तुम्हारे माँ-बाप को जन्नत से निकलवाया था और उनके वस्त्र उनपर से उतरवा दिए थे ताकि उनके गुप्त अंग एक दूसरे के सामने खोले। वह और उसके साथी तुम्हें ऐसी जगह से देखते हैं जहाँ से तुम उन्हें नहीं देख सकते। इन शैतानों को हमने उन लोगों का सरपरस्त बना दिया है जो ईमान नहीं लाते।

(28) ये लोग जब कोई शर्मनाक काम करते है तो कहते है हमने अपने बाप-दादा को इसी तरीक़े पर पाया है और अल्लाह ही ने हमें ऐसा करने का आदेश दिया है।[6] इनसे कहो, अल्लाह बेहयाई का आदेश कभी नहीं दिया करता। क्या तुम अल्लाह का नाम लेकर वे बातें कहते हो जिनके विषय में तुम्हें ज्ञान नहीं है कि वे अल्लाह की ओर से हैं? (29) ऐ नबी, इनसे कहो, मेरे रब ने तो सत्य और न्याय का आदेश दिया है, और उसका आदेश तो यह है कि हर इबादत में अपना रुख ठीक रखो, और उसी को पुकारो अपने धर्म को उसके लिए विशुद्ध करके। जिस तरह उसने तुम्हें अब पैदा किया है उसी तरह तुम फिर पैदा किए जाओगे। (30) एक गिरोह को तो उसने सीधा मार्ग दिखा दिया है, मगर दूसरे गिरोह पर गुमराही चिपककर रह गई है क्योंकि उन्होंने अल्लाह के बदले शैतानों को अपना सरपरस्त बना लिया है और वे समझ रहे हैं कि हम सीधे मार्ग पर हैं।

(31) ऐ आदम की संतान, हर इबादत के अवसर पर अपनी सज्जा से सुशोभित रहो[7] और खाओ-पियो और सीमा से आगे न बढ़ो, अल्लाह सीमा से बढ़नेवालों को पसन्द नहीं करता।

6. संकेत है अरबवालों के नग्न होकर काबा का तवाफ़ (परिक्रमा) करने की ओर। उनमें ज़्यादातर लोग हज के अवसर पर काबा की परिक्रमा नंगे होकर करते थे और उनकी औरतें इस मामले में उनके मर्दों से भी ज़्यादा निर्लज्ज और बेहया थीं, उनकी निगाह में यह एक धार्मिक कर्म था और नेक काम समझकर किया जाता था।
7. यहाँ सज्जा से मुराद पूरा लिबास है। अल्लाह की इबादत मेंखड़े होने के लिए सिर्फ़ इतना ही काफ़ी नहीं है कि आदमी सिर्फ़ अपनी शर्मगाह छिपा ले बल्कि इसके साथ यह भी ज़रूरी है कि सामर्थ्य के अनुसार वह अपना पूरा वस्तर पहने जिसमें शर्मगाह भी छिप सके और सज्जा भी हो। आदमी किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति से मिलने के लिए जिस तरह अच्छा लिबास पहनता है उसी तरह अल्लाह की इबादत के लिए उसे अच्छा लिबास पहनना चाहिए।

(32) ऐ नबी, इनसे कहो किसने अल्लाह की उस सज्जा को हराम कर दिया जिसे अल्लाह ने अपने बन्दों के लिए निकाला था और किसने अल्लाह की प्रदान की हुई पाक चीज़ें हराम कर दीं? कहो, ये सारी चीज़े दुनिया की ज़िन्दगी में भी ईमान लानेवालों के लिए हैं, और क़ियामत के दिन तो ख़ास तौर से उन्हीं के लिए होगी। इस तरह हम अपनी बातें साफ़-साफ़ बयान करते हैं उन लोगों के लिए जो ज्ञानवान हैं।

(33) ऐ नबी, इनसे कहो, मेरे रब ने जो चीज़े हराम ठहराई हैं वे तो ये हैं : बेशर्मी के काम—चाहे खुले हो या छिपे—और गुनाह[8] और सत्य के विरुद्ध ज़्यादती[9] और यह कि अल्लाह के साथ तुम किसी ऐसे को साझेदार ठहराओ जिसके लिए उसने कोई प्रमाण नहीं उतारा और यह कि अल्लाह के नाम पर कोई ऐसी बात कहो जिसके विषय में तुम्हें ज्ञान न हो (कि वास्तव में उसी ने कही है)।

(34) हर समुदाय (क़ौम) के लिए मुहलत की एक अवधि निश्चित है, फिर जब किसी क़ौम की अवधि पूरी हो जाती है तो एक घड़ी भरकी देर और अग्रसरता भी नहीं होती। (35) (और यह बात अल्लाह ने सृष्टि के आरंभ ही में स्पष्ट रूप से कह दी थी कि) ऐ आदम की संतान, याद रखो, अगर तुम्हारे पास ख़ुद तुम ही में से ऐसे रसूल आएँ जो तुम्हें मेरी आयतें सुना रहे हों तो जो कोई नाफ़रमानी से बचेगा और अपने रवैये (चाल-चलन) का सुधार कर लेगा उसके लिए किसी डर और रंज का अवसर नहीं है, (36) और जो लोग हमारी आयतों को झुठलाएँगे और उनके मुक़ाबले में सरकशी दिखाएँगे वही दोज़ख़वाले होंगे जहाँ वे हमेशा रहेंगे। (37) आख़िर उससे बड़ा ज़ालिम और कौन होगा जो बिलकुल झूठी बातें घड़कर अल्लाह पर मढ़े या अल्लाह की सच्ची आयतों को झुठलाए? ऐसे लोग अपने भाग्य के लिखे के अनुसार अपना हिस्सा पाते रहेंगे,[10] यहाँ तक कि वह घड़ी आ जाएगी जब हमारे भेजे हुए फ़रिश्ते उनके प्राण ग्रस्त लेने के लिए पहुँचेंगे। उस समय वे उनसे पूछेंगे कि "बताओ, अब कहाँ हैं तुम्हारे वे पूज्य जिनको तुम अल्लाह को छोड़कर पुकारते थे?" वे कहेंगे कि "सब हमसे गुम हो गए।" और वे ख़ुद अपने विरुद्ध गवाही देंगे कि हम वास्तव में सत्य का इनकार

8. मूल ग्रन्थ में 'इसमुन' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका मूल अर्थ है कोताही। और इससे मुराद है आदमी का अपने रब के आज्ञापालन में कोताही करना।
9. अर्थात् अपनी सीमा से आगे बढ़कर ऐसी सीमाओं में क़दम रखना जिनके अन्दर प्रवेश करने का आदमी को अधिकार न हो।
10. अर्थात् दुनिया में जितने दिन उनकी मुहलत के निश्चित हैं यहाँ रहेंगे और जिस तरह की बज़ाहिर अच्छी या बुरी ज़िन्दगी गुज़ारना उनके भाग्य में है गुज़ार लेंगे।

करनेवाले थे। (38) अल्लाह कहेगा, जाओ तुम भी उसी जहन्नम में चले जाओ जिसमें तुमसे पहले गुज़रे हुए जिन्न और इनसान के गिरोह जा चुके हैं। हर गिरोह जब जहन्नम में प्रवेश करेगा तो वह अपने से पहले के गिरोह को धिक्कारता हुआ प्रवेश करेगा, यहाँ तक कि जब सब वहाँ जमा हो जाएँगे तो हर पीछेवाला गिरोह पहले गिरोह के विषय में कहे गा कि ऐ रब, ये लोग थे जिन्होंने हमको पथभ्रष्ट किया, अतः इन्हें आग का दोहरा अज़ाब दे। जवाब में कहा जाएगा, हर एक के लिए दोहरा ही अज़ाब है मगर तुम जानते नहीं हो।[11] (39) और पहला गिरोह दूसरे गिरोह से कहेगा कि (अगर हम दोषी थे) तो तुम ही को हमारी अपेक्षा कौन-सी श्रेष्ठता प्राप्त थी, अब अपनी कमाई के फलस्वरूप अज़ाब का मज़ा चखो।

(40) विश्वास करो, जिन लोगों ने हमारी आयतों को झुठलाया है और उनके मुक़ाबले में सरकशी की है उनके लिए आसमान के दरवाज़े हरगिज़ न खोले जाएँगे। उनका जन्नत में जाना उतना ही असंभव है जितना सूई के नाके से ऊँट का पार होना। अपराधियों को हमारे यहाँ ऐसा ही बदला मिला करता है। (41) उनके लिए तो जहन्नम का बिछौना होगा और जहन्नम ही का ओढ़ना। यह है वह बदला जो हम ज़ालिमों को दिया करते हैं। (42) इसके विपरीत जिन लोगों ने हमारी आयतों को मान लिया है और अच्छे काम किए हैं और इस विषय में हम हर एक को उसकी सामर्थ्य ही के अनुसार ज़िम्मेदार ठहराते हैं—वे जन्नतवाले हैं जहाँ वे हमेशा रहेंगे। (43) उनके हृदयों में एक दूसरे के ख़िलाफ़ जो मलिनता होगी उसे हम निकाल देंगे। उनके नीचे नहरे बहती होंगी। और वे कहेंगे कि 'तारीफ़ अल्लाह ही के लिए है जिसने हमें यह मार्ग दिखाया, हम ख़ुद मार्ग न पा सकते थे अगर अल्लाह हमें मार्ग न दिखाता, हमारे रब के भेजे हुए रसूल वासतव में सत्य ही लेकर आए थे।'' उस समय आवाज़ आएगी कि ''यह जन्नत जिसके तुम वारिस बनाए गए हो तुम्हें उन कर्मों के बदले में मिली है जो तुम करते रहे थे।''

(44) फिर ये जन्नत के लोग दोज़खवालों से पुकारकर कहेंगे, ''हमने उन सारे वादों को ठीक पाया जो हमारे रब ने हमसे किए थे। क्या तुमने भी उन वादों को ठीक पाया जो तुम्हारे रब ने किए थे?'' वे जवाब देंगे, ''हाँ।'' तब तक पुकारनेवाला उनके बीच पुकारेगा कि ''अल्लाह की फिटकार उन ज़ालिमों पर (45) जो अल्लाह के मार्ग से लोगों को रोकते और उसे टेढ़ा करना चाहते थे और आख़िरत (परलोक) का इनकार

11. अर्थात् एक अज़ाब ख़ुद गुमराही अपनाने का और दूसरा अज़ाब दूसरों को गुमराह करने का। एक सज़ा अपने अपराधों की और दूसरी सज़ा दूसरों के लिए अपराधमुक्त व्यवसाय की मीरास छोड़ आने की।

करनेवाले थे।

(46) उन दोनों गिरोहों के बीच एक ओट हायलहोगी, जिसकी ऊँचाइयों पर कुछ और लोग होंगे। ये हर एक को उसके लक्षणों से पहचानेंगे और जन्नतवालों से पुकारकर कहेंगे कि ''सलामती हो तुमपर।'' ये लोग जन्नत में दाख़िल तो नहीं हुए मगर उसके उम्मीदवार होंगे।[12] (47) और जब उनकी निगाहें दोज़ख़वालों की ओर फिरेगी ती कहेंगे, ''ऐ रब, हमें इन ज़ालिम लोगों में सम्मिलित न करना।'' (48) फिर ये ऊँचाइयोंवाले लोग दोज़ख़ के कुछ बड़े-बड़े व्यक्तियों को उनके लक्षणों से पहचानकर पुकारेंगे कि ''देख लिया तुमने, आज न तुम्हारे जत्थे तुम्हारे किसी काम आए और न वहसामग्री जिसे तुम बड़ी चीज़ समझते थे। (49) और क्या ये जन्नतवाले वही लोग नहीं हैं जिनके विषय में तुम क़समें खा-खाकर कहते थे कि इनको तो अल्लाह अपनी दयालुता में से कुछ न देगा? आज इन ही से कहा गया कि ''दाख़िल हो जाओ जन्नत में तुम्हारे लिए न डर है और न रंज।''

(50) और दोज़ख़ के लोग जन्नतवालों को पुकारेंगे कि कुछ थोड़ा-सा पानी हमपर डाल दो या जो रोज़ी अल्लाह ने तुम्हें दी है उसी में से कुछ फेंक दो। वे जवाब देंगे कि ''अल्लाह ने ये दोनों चीज़े उन सत्य का इनकार करनेवालों के लिए हराम कर दी हैं (51) जिन्होंने अपने धर्म को खेल और मनोरंजन बना लिया था और जिन्हें दुनिया की ज़िन्दगी ने धोखे में डाले रखा था। अल्लाह कहता है कि आज हम भी उन्हें उसी तरह भुला देंगे जिस तरह वे इस दिन की भेंट को भूले रहे और हमारी आयतों का इनकार करते रहे।''

(52) हम इन लोगों के पास एक ऐसी किताब ले आए है जिसको हमने ज्ञान के आधार पर विस्तृत बनाया है और जो ईमान लानेवालों के लिए मार्गदर्शन और दयालुता है। (53) अब क्या ये लोग इसके सिवा किसी और बात के इनतिज़ार में हैं कि वह अंजाम सामने आ जाए जिसकी यह किताब सूचना दे रही है? जिस दिन वह अंजाम सामने आ गया तो वही लोग जिन्होंने पहले उसकी उपेक्षा की थी कहेंगे कि ''वास्तव में हमारे रब के रसूल

12. अर्थात् ये ऊँचाइयोंवाले वे लोग होंगे जिनकी ज़िन्दगी के न तो सकारात्मक पहलू ही इतना प्रबल होगा कि जन्नत में दाख़िल हो सकें और न नकारात्मक पहलू ही इतना ख़राब होगा कि दोज़ख़ में झोंक दिए जाएँ। इसलिए वे जन्नत और दोज़ख़ के बीच एक सीमा पर रहेंगे और अल्लाह की कृपा से यह आस लगाए हुए होंगे कि उनके हिस्से में जन्नत आ जाए।

सत्यलेकर आए थे, फिर क्या अब हमें कुछ सिफ़ारिशी मिलेंगे जो हमारे हक़ में सिफ़ारिश करें? या हमें दोबारा लौटा ही दिया जाए ताकि जो कुछ हम पहले करते थे उसकी जगह अब दूसरे तरीक़े पर काम करके दिखाएँ''—उन्होंने अपने आपको घाटे में डाल दिया और वे सारे झूठ जो उन्होंने घड़ रखे थे आज उनसे गुम हो गए।

(54) वास्तव में तुम्हारा रब अल्लाह ही है जिसने आसमानों और ज़मीन को छः दिनों में पैदा किया,[13] फिर अपने राजसिंहासन पर विराजमान हुआ।[14] जो रात को दिन पर ढाँक देता है और फिर दिन के पीछे दौड़ा चला आता है। जिसने सूरज और चाँद और तारे पैदा किए, सब उसके आदेश के अधीन हैं। सावधान रहो! उसी की सृष्टि है और उसी का आदेश[15] है। बड़ा बरकतवाला है[16] अल्लाह, सारे जहानों का मालिक और पालनहार। (55) अपने रब को पुकारो गिड़गिड़ाते हुए और चुपके-चुपके, यक़ीनन वह सीमा का उल्लंघन करनेवालों को पसन्द नहीं करता। (56) ज़मीन में बिगाड़ पैदा न करो जबकि उसका सुधार हो चुका है[17] और अल्लाह ही को पुकारो क़ौफ़ के साथ और लालच के साथ, यक़ीनन अल्लाह की दयालुता अच्छे चरित्रवाले लोगों के क़रीब है।

(57) और वह अल्लाह ही है जो हवाओं को अपनी दयालुता के आगे-आगे ख़ुशख़बरी लिए हुए भेजता है, फिर जब वे पानी से लदे हुए बादल उठा लेती हैं तो उन्हें

13. यहाँ दिन शब्द या तो इसी चौबीस घण्टे के दिन-रात का समानार्थी है जिसे दुनिया के लोग दिन कहते हैं, या फिर यह शब्द दौर अथवा युग के अर्थ में इस्तेमाल हुआ है।
14. अल्लाह के राजसिंहासन पर विराजमान होने की विस्तृत कैफ़ियत को समझना हमारे लिए संभव नहीं है। यह उपलक्षित (मुतशाबिहात) में से है जिनके अर्थ निश्चित नहीं किए जा सकते।
15. अर्थात् अल्लाह ही ने इस सारे जगत् को बनाया है और वही इसका शासक है, अपनी सृष्टि को उसने दूसरों के हवाले नहीं कर दिया है, न सृष्टि में किसी को यह अधिकार दिया है कि स्वतन्त्र होकर जो कुछ चाहे करे।
16. अल्लाह के निहायत बरकतवाला होने का अर्थ यह है कि उसकी विशेषताओं और भलाइयों की कोई सीमा नहीं है, बेहद और बेहिसाब भलाई उसकी ज़ात से फैल रही हैं।
17. अर्थात् सैकड़ों और हज़ारों वर्ष में अल्लाह के पैग़म्बरों और इनसानी समुदाय के सुधारकों की कोशिशों से इनसानी नैतिकता और संस्कृति में जो सुधार हुए हैं उनमें अपने ग़लत व्यवहारों से बिगाड़ पैदा न करो।

किसी निर्जीव भू-भाग की ओर चला देता है और वहाँ मेंह बरसाकर (उसी मरी हुई भूमि से) तरह-तरह के फल निकाल लाता है। देखो, इस तरह हम मुर्दों को मौत की हालत से निकालते हैं, शायद कि तुम इस निरीक्षण से शिक्षा ग्रहण करो। (58) जो ज़मीन अच्छी होती है वह अपने रब के हुक्म से ख़ूब फल-फूल लाती है और जो ज़मीन ख़राब होती है उससे घटिया पैदावार के सिवा कुछ नहीं निकलता। इसी तरह हम निशानियों को बार-बार पेश करते हैं उन लोगों के लिए जो आभार माननेवाले हैं।

(59) हमने नूह को उसकी क़ौम की ओर भेजा।[18] उसने कहा, ''ऐ क़ौम के भाइयो, अल्लाह की बन्दगी करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई ख़ुदा नहीं है। मैं तुम्हारे लिए एक भयंकर दिन के अज़ाब से डरता हूँ।'' (60) उसकी क़ौम के सरदारों ने जवाब दिया, ''हमको तो यह नज़र आता है कि तुम खुली गुमराही में पड़े हो।'' (61) नूह ने कहा, ''ऐ क़ौम के भाइयो, मैं किसी गुमराही में नही पड़ा हूँ बल्कि मैं सारे जहान के रब का रसूल (सन्देशवाहक) हूँ, (62) तुम्हें अपने रब के सन्देश पहुँचाता हूँ, तुम्हारा हितैषी हूँ और मुझे अल्लाह की ओर से वह कुछ मालूम है जो तुम्हें मालून नहीं है। (63) क्या तुम्हें इस बात पर आश्चर्य हुआ कि तुम्हारे पास स्वयं तुम्हारी अपनी क़ौम के एक आदमी के द्वारा तुम्हारे रब की याददिहानी आई ताकि तुम्हें सावधान करे और तुम ग़लत नीति अपनाने से बच जाओ और तुमपर दया की जाए?'' (64) मगर उन्होंने उसे झुठला दिया। आख़िरकार हमने उसे और उसके साथियों को एक नौका में सुरक्षित कर दिया और उन लोगों को डुबो दिया जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया था, यक़ीनन वे अन्धे लोग थे।

(65) और आद की ओर हमने उनके भाई हूद को भेजा।[19] उसने कहा, ''ऐ क़ौम के भाईयो, अल्लाह की बन्दगी करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई ख़ुदा नहीं है। फिर क्या तुम ग़लत नीति अपनाने से परहेज़ न करोगे?'' (66) उसकी क़ौम के सरदारों ने, जो उसकी बात मानने से इनकार कर रहे थे, जवाब में कहा, ''हम तो तुम्हें बुद्धिहीनता में ग्रस्त समझते हैं और हम समझते हैं कि तुम झूठे हो।'' (67) उसने कहा, ''ऐ क़ौम के

18. हज़रत नूह (अलै॰) की क़ौम उस इलाक़े में रहती थी जिसे आज हम इराक़ के नाम से जानते हैं।
19. आद क़ौम का असल निवास-स्थान अहक़ाफ़ का इलाक़ा था जो हिजाज़, यमन और यमामा के बीच स्थित है। यहीं से फैलकर इन लोगों ने यमन के पश्चिमी तटों और उमान और हज़रमौत से इराक़ तक अपनी ताक़त का सिक्का जारी कर दिया था।

भाइयो, मैं बुद्धिहीनता में ग्रस्त नहीं हूँ बल्कि मैं सारे जहान के रब का रसूल (सन्देशवाहक) हूँ, (68) तुमको अपने रब के सन्देश पहुँचाता हूँ, और तुम्हारा ऐसा हितैषी हूँ जिसपर भरोसा किया जा सकता है। (69) क्या तुम्हें इस बात पर आश्चर्य हुआ कि तुम्हारे पास ख़ुद तुम्हारी अपनी क़ौम के एक आदमी के द्वारा तुम्हारे रब की याददिहानी आई ताकि वह तुम्हें सावधान करें? भूल न जाओ कि तुम्हारे रब ने नूह की क़ौम के बाद तुमको उसका उत्तराधिकारी बनाया और तुम्हें ख़ूब हृष्टपुष्ट किया, अतः अल्लाह के चमत्कारों को याद रखो,[20] उम्मीद है कि सफलता प्राप्त करोगे।'' (70) उन्होंने जवाब दिया, ''क्या तू हमारे पास इसलिए आया है कि हम अकेले अल्लाह ही की बन्दगी करें और उन्हें छोड़ दें जिनकी इबादत हमारे बाप-दादा करते आए हैं? अच्छा तो ले आ वह अज़ाब जिसकी तू हमें धमकी देता है अगर तू सच्चा है।'' (71) उसने कहा, ''तुम्हारे रब की फिटकार तुमपर पड़ गई और उसका ग़ज़ब टूट पड़ा। क्या तुम मुझसे उन नामों पर झगड़ते हो जो तुमने और तुम्हारे बाप-दादा ने रख लिए हैं,[21] जिनके लिए अल्लाह ने कोई प्रमाण नहीं उतारा है? अच्छा तो तुम भी इनतिज़ार करो और मैं भी तुम्हारे साथ इनतिज़ार करता हूँ।'' (72) आख़िरकार हमने अपनी दयालुता से हूद और उसके साथियों को बचा लिया और उन लोगों की जड़ काट दी जो हमारी आयतों को झुठला चुके थे और ईमान लानेवाले न थे।

(73) और समूद की ओर हमने उनके भाई सालेह को भेजा।[22] उसने कहा, ''ऐ क़ौम के भाइयो, अल्लाह की बन्दगी करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई ख़ुदा नहीं है। तुम्हारे पास तुम्हारे रब का खुला प्रमाण आ गया है। यह अल्लाह की ऊँटनी तुम्हारे लिए

20. मूल ग्रन्थ में 'आलाअ' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ 'नेमतें' भी हैं और 'चमत्कारों की क्षमता' भी और 'सराहनीय गुण' भी।

21. अर्थात् तुम किसी को वर्षा का और किसी को हवा का और किसी को धन-सम्पत्ति का और किसी को बीमारी का रब कहते हो, हालाँकि इनमें से कोई भी वास्तव में किसी चीज़ का रब नहीं है, ये सब सिर्फ़ नाम हैं जो तुमने रख लिए हैं, जो इनके लिए झगड़ता है वह वास्तव में मात्र कुछ नामों के लिए झगड़ता है न कि किसी सत्य के लिए।

22. समूद क़ौम का निवास-क्षेत्र उत्तरी पश्चिमी अरब का वह इलाक़ा था जो आज भी अल-हिज्र के नाम से याद किया जाता है। वर्तमान समय में मदीना और तबूक के बीच एक स्थान है जिसे मदायने-सालेह कहते हैं। यही समूद की राजधानी थी और प्राचीन काल में हिज्र कहलाता था। अब तक वहाँ समूद के कुछ भवन मौजूद हैं जो उन्होंने पहाड़ खोदकर बनाए थे।

एक निशानी के रूप में है,[23] अतः इसे छोड़ दो कि अल्लाह की ज़मीन में चरती फिरे। इसको किसी बुरे इरादे से हाथ न लगाना, नहीं तो एक दर्दनाक अज़ाब तुम्हें आ लेगा। (74) याद करो वह समय जब अल्लाह ने आद क़ौम के बाद तुम्हें उसका उत्तराधिकारी बनाया और तुम्हें ज़मीन में यह दर्जा प्रदान किया कि आज तुम उसके समतल मैदानों में आलीशान महल बनाते और उसके पहाड़ों को घरों के रूप में तराशते हो। अतः उसकी सामर्थ्य के चमत्कारों से असावधान न हो जाओ और ज़मीन में बिगाड़ न पैदा करो।''

(75) उसकी क़ौम के सरदारों ने जो बड़े बने हुए थे, कमज़ोर तबक़े के उन लोगों से जो ईमान ले आए थे, कहा : ''क्या तुम वास्तव में यह जानते हो कि सालेह अपने रब का पैग़म्बर है?'' उन्होंने जवाब दिया : ''बेशक, जिस सन्देश के साथ वह भेजा गया है उसे हम मानते हैं।'' (76) उन बड़ाई के दावेदारों ने कहा : ''जिस चीज़ को तुमने माना है हम उसका इनकार करते हैं।''

(77) फिर उन्होंने उस ऊँटनी को मार डाला[24] और पूरी ढिठाई के साथ अपने रब के आदेश का उल्लंघन किया, और सालेह से कह दिया कि ''ले आ वह अज़ाब जिसकी तू हमें धमकी देता है अगर तू वास्तव में पैग़म्बरों में से है।'' (78) आख़िरकार एक दहला देनेवाली आफ़त ने उन्हें आ लिया और वे अपने घरों में औंधे पड़े के पड़े रह गए। (79) और सालेह यह कहता हुआ उनकी बस्तियों से निकल गया कि ''ऐ मेरी क़ौम, मैंने अपने रब का सन्देश तुम्हें पहुँचा दिया और मैंने तुम्हारा बहुत हित चाहा, मगर मैं क्या करूँ कि तुझे अपने हितैषी पसन्द ही नहीं हैं।''

(80) और लूत को हमने पैग़म्बर बनाकर भेजा, फिर याद करो जब उसने अपनी क़ौम से कहा,[25] ''क्या तुम ऐसे निर्लज्ज हो गए हो कि वह अश्लील काम करते हो जो तुमसे पहले दुनिया में किसी ने नहीं किया? (81) तुम औरतों को छोड़कर मर्दों से अपनी ख़्वाहिश पूरी करते हो। वास्तव में तुम नितान्त मर्यादाहीन लोग हो। (82)

23. इस कथा के जो विवरण क़ुरआन में विभिन्न प्रसंगों में आए हैं उनसे ज्ञात होता है कि समूदवालों ने ख़ुद हज़रत सालेह (अलै॰) से एक ऐसी निशानी की माँग की थी जो ईश्वर की ओर से उनके नियुक्त होने का स्पष्ट प्रमाण हो, और इसी के जवाब में हज़रत सालेह (अलै॰) ने ऊँटनी को पेश किया था।

24. यद्यपि मारा एक व्यक्ति ने था जैसा कि सूरा 54 (क़मर) और सूरा 91 (शम्स) में बयान हुआ है, लेकिन चूँकि पूरी क़ौम उस अपराधी की तरफ़दार और सहायक थी और वह वास्तव में इस अपराध में क़ौम की इच्छा का उपकरण था इसलिए इलज़ाम पूरी क़ौम पर लगाया गया है।

मगर उसकी क़ौम का जवाब इसके सिवा कुछ न था कि "निकालो इन लोगों को अपनी बस्तियों से, बड़े पाकबाज़ बनते हैं ये।" (83) आख़िरकार हमने लूत और उसके घरवालों को—सिवाय उसकी पत्नी के जो पीछे रह जानेवालों में थी—बचाकर निकाल दिया (84) और उस क़ौम पर बरसाई एक बारिश,[26] फिर देखो उन अपराधियों का क्या अंजाम हुआ।

(85) और मदयनवालों[27] की ओर हमने उनके भाई शुऐब को भेजा। उसने कहा, "ऐ क़ौम के भाइयो, अल्लाह की बन्दगी करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई ख़ुदा नहीं है। तुम्हारे पास तुम्हारे रब का स्पष्ट मार्गदर्शन आ गया है, अतः नाप और तौल पूरे करो, लोगों को उनकी चीज़ों में घाटा न दो, और ज़मीन में बिगाड़ पैदा न करो जबकि उसका सुधार हो चुका है, इसी में तुम्हारी भलाई है अगर तुम वास्तव में ईमानवाले (आस्थावान) हो।[28] (86) और (ज़िन्दगी के) हर रास्ते पर बटमार बनकर न बैठ जाओ कि लोगों को भयभीत करने और ईमान लानवालों को अल्लाह के मार्ग से रोकने लगो और सीधे मार्ग को टेढ़ा करने के पीछे पड़ जाओ। याद करो वह समय जबकि तुम थोड़े थे फिर अल्लाह ने तुम्हें बहुत कर दिया, और आँखें खोलकर देखो कि दुनिया में बिगाड़ पैदा करनेवालों का क्या अंजाम हुआ है। (87) अगर तुममें से एक गिरोह उस शिक्षा पर जिसके साथ मैं भेजा गया हूँ, ईमान लाता है और दुसरा ईमान नहीं लाता, तो सब्र के साथ देखते रहो यहाँ तक कि अल्लाह हमारे बीच फ़ैसला कर दे, और वही सबसे अच्छा फ़ैसला करनेवाला है।"

25. हज़रत लूत हज़रत इबराहीम (अलै॰) के भतीजे थे, और यह क़ौम जिसके मार्गदर्शन के लिए वे भेजे गए थे उस इलाक़े में रहती थी जहाँ अब मृत-सागर स्थित है।
26. वर्षा से मुराद यहाँ पानी की वर्षा नहीं बल्कि पत्थरों की वर्षा है जैसा कि दूसरे स्थानों पर क़ुरआन मजीद में बयान हुआ है।
27. मदयन का असल इलाक़ा हिजाज़ के उत्तर-पश्चिम और फ़िलस्तीन के दक्षिण में लाल सागर और अक़बा खाड़ी के किनारे पर स्थित था मगर प्रायद्वीप सीना के पूर्वी तट पर भी उसका कुछ सिसिला फैला हुआ था। यह बड़े पैमाने पर व्यापार करनेवाली एक क़ौम थी। प्राचीन काल में जो व्यापारिक राजपथ लाल सागर के किनारे यमन से मक्का और यंबूअ होते हुए सीरिया तक जाता था, और एक दूसरा व्यापारिक राजमार्ग जो इराक़ से मिस्र की ओर जाता था, उसे ठीक चौराहे पर उस क़ौम की बस्तियाँ स्थित थीं।
28. इस वाक्य से साफ़ ज़ाहिर होता है कि ये लोग ख़ुद ईमान के दावेदार थे।

(88) उसकी क़ौम के सरदारों ने, जो अपनी बड़ाई के घमण्ड में पड़े थे, उससे कहा कि "ऐ शुऐब, हम तुझे और उन लोगों को जो तेरे साथ ईमान लाए हैं अपनी बस्ती से निकाल देंगे वरना तुम लोगों को हमारे पन्थ में वापस आना होगा।" शुऐब ने जवाब दिया, "क्या ज़बरदस्ती हमें फेरा जाएगा, चाहे हम राज़ी न हों? (89) हम अल्लाह पर छूठ घड़नेवाले होंगे अगर तुम्हारे पन्थ में पलट आएँ जबकि अल्लाह हमें उससे छुटकारा दे चुका है। हमारे लिए तो उसकी ओर पलटना अब किसी तरह संभव नहीं, यह और बात है कि अल्लाह हमारा रब ही ऐसा चाहे। हमारे रब का ज्ञान हर चीज़ पर हावी है, उसी पर हमने भरोसा कर लिया है। ऐ रब, हमारे और हमारी क़ौमवालों के बीच ठीक-ठीक फ़ैसला कर दे और तू सबसे अच्छा फ़ैसला करनेवाला है।"

(90) उसकी क़ौम के सरदारों ने, जो उसकी बात मानने से इनकार कर चुके थे, आपस में कहा, "अगर तुम शुऐब के अनुयायी हुए तो बरबाद हो जाओगे।"[29] (91) मगर हुआ यह कि एक दहला देनेवाली आफ़त ने उनको आ पकड़ा और वे अपने घरों में औंधे पड़े के पड़े रह गए। (92) जिन लोगों ने शुऐब को छुठलाया वे ऐसे मिटे कि मानो कभी उन घरों में बसे ही न थे। शुऐब को छुठलानेवाले ही आख़िरकार बरबाद होकर रहे। (93) और शुऐब यह कहकर उनकी बस्तियों से निकल गया कि "ऐ क़ौम के भाइयो, मैंने अपने रब के सन्देश तुम्हें पहुँचा दिए और तुम्हारा हित चाहने का हक़ अदा कर दिया। अब मैं उस क़ौम पर कैसे अफ़सोस करूँ जो सत्य को स्वीकार करने से इनकार करती है।"

(94) कभी ऐसा नहीं हुआ कि हमने किसी बस्ती में नबी भेजा हो और उस बस्ती के लोगों को पहले तंगी और कठिनाई में डाला न हो, इस ख़याल से कि शायद वे विनम्रता पर उतर आएँ। (95) फिर हमने उनकी बदहाली को ख़ुशहाली से बदल दिया यहाँ तक कि वे ख़ूब फले-फूले और कहने लगे कि "हमारे पूर्वजों पर भी अच्छे और बुरे दिन आते ही रहे हैं।" आख़िरकार हमने उन्हें अचानक पकड़ लिया और उन्हें ख़बर तक न हुई।[30] (96) अगर बस्तियों के लोग ईमान लाते और 'तक़वा' की नीति

29. यह बात सिर्फ़ शुऐब की क़ौम के सरदारों ही तक सीमित नहीं है। हर ज़माने में बिगड़े हुए लोगों ने सत्य, सत्यवादिता और ईमानदारी की नीति अपनाने में ऐसे ही ख़तरों को महसूस किया है। हर ज़माने के फ़सादियों का यही विचार रहा है कि व्यापार और राजनीति और दूसरे सांसारिक मामले झूठ और बेईमानी और अनैतिकता के बिना नहीं चल सकते, ईमानदारी अपनाने का अर्थ अपनी दुनिया बरबाद कर लेना है।

अपनाते तो हम उनपर आसमान और ज़मीन से बरकतों के द्वार खोल देते, मगर उन्होंने तो झुठलाया, अतः हमने उस बुरी कमाई के हिसाब में उन्हें पकड़ लिया जो वे समेट रहे थे। (97) फिर क्या बस्तियों के लोग अब इससे निर्भय हो गए हैं कि हमारी पकड़ कभी अचानक उनपर रात के समय न आ जाएगी जबकि वे सोए पड़े हों? (98) या वे निश्चिन्त हो गए हैं कि हमारा मज़बूत हाथ कभी अचानक उनपर दिन के समय न पड़ेगा जबकि वे खेल रहे हों? (99) क्या ये लोग अल्लाह की चाल से निर्भय हैं? हालाँकि अल्लाह की चाल[31] से वही क़ौम निर्भय होती है जो तबाह होनेवाली हो।

(100) और क्या उन लोगों को जो पिछले ज़मीन में बसनेवालों के बाद ज़मीन के वारिस होते हैं, इस तथ्य ने कुछ शिक्षा न दी कि अगर हम चाहें तो उनके गुनाहों पर उन्हें पकड़ सकते हैं? (मगर वे शिक्षाप्रद सच्चाइयों की उपेक्षा करते हैं) और हम उनके दिलों पर ठप्पा लगा देते हैं, फिर वे कुछ नहीं सुनते। (101) ये क़ौमें जिनकी कहानियाँ हम तुम्हें सुना रहे हैं (तुम्हारे सामने मिसाल के तौर पर मौजूद हैं) उनके रसूल उनके पास खुली-खुली निशानियाँ लेकर आए, मगर जिस चीज़ को वे एक बार झुठला चुके थे फिर उसे वे माननेवाले न थे। देखो इस तरह हम सत्य के इनकार करनेवालों के दिलों पर

30. एक-एक नबी और एक-एक क़ौम का मामला अलग-अलग बयान करने के बाद अब उस व्यापक विधान का वर्णन किया जा रहा है जो हर ज़माने में अल्लाह ने नबियों के भेजे जाने के अवसर पर अपनाया है, और वह यह है कि जब किसी क़ौम में कोई नबी भेजा गया तो पहले उसको मुसीबतों और संकटों में डाला गया ताकि उसके कान शिक्षा ग्रहण के लिए खुल जाएँ और वह अपने ईश्र्वर के आगे विनम्रतापूर्वक झुक जाने पर तैयार हो जाए। फिर जब इस अनुकूल वातावरण में भी उसका दिल सत्य के स्वीकार करने की ओर न झुका तो उसे खुशहाली की आज़माइश में डाल दिया गया और यहाँ से उसकी बरबादी की भूमिका शुरू हो गई। पैग़म्बर की बात न सुनने के बावजूद जब उसपर नेमतों की वर्षा हुई तो उसने समझा कि ऊपर कोई ईश्वर नहीं है जो पकड़नेवाला हो और 'हम जैसा कोई नहीं' की हवा उसके दिमाग़ में भर गई। इस चीज़ ने आख़िरकार उसे ईश्वरीय अज़ाब में डाल दिया।

31. यहाँ 'मक्र' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका अरबी भाषा में अर्थ है गुप्त उपाय करना, अर्थात् किसी व्यक्ति के विरुद्ध ऐसी चाल चलना कि जब तक उसपर निर्णयकारी चोट न पड़ जाए उस समय तक उसे ख़बर न हो कि उसकी शामत आने वाली है बल्कि वाह्य स्थिति को देखते हुए वह यही समझता रहे कि सब अच्छा है।

ठप्पा लगा देते हैं। (102) हमने उनमें से ज़्यादातर में प्रतिज्ञा का कोई निर्वाह न पाया बल्कि ज़्यादातर को उल्लंघनकारी ही पाया।

(103) फिर उन क़ौमों के बाद (जिनका उल्लख ऊपर किया गया) हमने मूसा को अपनी निशानियों के साथ फ़िरऔन[32] और उसकी क़ौम के सरदारों के पास भेजा मगर उन्होंने भी हमारी निशानियों के साथ ज़ुल्म किया, तो देखो उन फ़सादियों का क्या अंजाम हुआ।

(104) मूसा ने कहा, ''ऐ फ़िरऔन, मैं सारे जहान के मालिक की ओर से भेजा हुआ आया हूँ, (105) मेरा पद यही है कि अल्लाह का नाम लेकर कोई बात सत्य के सिवा न कहूँ, मैं तुम लोगों के पास तुम्हारे रब की ओर से स्पष्ट नियुक्ति-प्रमाण लेकर आया हूँ, अतः तू इसराईल की सन्तान को मेरे साथ भेज दे।'' (106) फ़िरऔन ने कहा, ''अगर तू कोई निशानी लाया है और अपने दावे में सच्चा है तो उसे पेश कर।'' (107) मूसा ने अपनी लाठी फेंकी और अचानक वह एक जीता-जागता अजगर (साँप) था। (108) उसने अपनी जेब से हाथ निकाला और सब देखनेवालों के सामने वह चमक रहा था। (109) इसपर फ़िरऔन की क़ौम के सरदारों ने आपस में कहा की 'यक़ीनन यह आदमी बड़ा माहिर जादूगर है, (110) तुम्हें तुम्हारी ज़मीन (देश) से बेदख़ल करन चाहता है,[33] अब कहो क्या कहते हो?'' (111) फिर उन सबने फ़िरऔन को मशविरा दिया कि उसे और उसके भाई को इनतिज़ार में रखिए और सारे नगरों में हरकारे भेज दीजिए (112) कि हर माहिर जादूगर को आपके पास ले आएँ। (113) अतएव जादूगर फ़िरऔन के पास आ गए। उन्होंने कहा, ''अगर हम विजयी हुए तो हमें इसका प्रतिदान तो ज़रूर मिलेगा?'' (114) फ़िरऔन ने जवाब दिया, ''हाँ, और तुम राज दरबार में पार्श्ववर्ती (क़रीबी) होगे।'' (115) फिर उन्होंने मूसा से कहा, ''तुम फेंकते हो या हम फेंके।'' (116) मूसा ने जवाब दिया, ''तुम ही फेंको।'' उन्होंने जो अपने अंक्षर फेंके तो निगाहों पर जादू और दिलों को भयभीत कर दिया और बड़ा ही ज़बरदस्त जादू बना लाए। (117) हमने मूसा को इशारा किया कि फेंक अपनी लाठी। उसाक फेंकना था कि देखते ही देखते वह उनके इस झूठे तिलिस्म को निगलता चला

32. फ़िरऔन शब्द का अर्थ है 'सूरज देवता की संतान।' मिस्र के प्राचीन लोग सूर्य को जो उनका महादेव या 'रब्बे आला' या 'रअ' कहते थे और फ़िरऔन का सम्बन्ध उसी से जोड़ा जाता था। यह किसी एक व्यक्ति का नाम नहीं था बल्कि मिस्र के बादशाहों की उपाधि थी जैसे रूस के बादशाहों की उपाधि ज़ार और ईरान के बादशाहों का लक़ब किसरा था।

गया।

(118) इस तरह जो सत्य था वह सत्य सिद्ध हुआ और जो कुछ उन्होंने बना रखा था वह मिथ्या होकर रह गया। (119) फ़िरऔन और उसके सभी साथी मुक़ाबले के मैदान में हार गए और (विजयी होने के बदले) उलटे अपमानित हो गए। (120) और जादूगरों का हाल यह हुआ कि मानो किसी चीज़ ने भीतर से उन्हें सजदे में गिरा दिया। (121) कहने लगे, ''हमने मान लिया सारे जहान के रब को, (122) उस रब को जिसे मूसा और हारून मानते हैं।''[34]

(123) फ़िरऔन ने कहा, ''तुम उसपर ईमान ले आए इससे पहले कि मैं तुम्हें अनुमति दूँ? यक़ीनन ही यह कोई ख़ुफ़िया साज़िश थी जो तुम लोगों ने इस राजधानी में की ताकि इसके मालिकों को सत्ता से हटा दो। अच्छा तो इसका नतीजा अब तुम्हें मालूम हुआ जाता है। (124) मैं तुम्हारे हाथ-पाँव उलटी दिशाओं से कटवा दूँगा और इसके

33. मूसा (अलै०) का पैग़म्बरी का दावा करना अपने में ख़ुद ही यह अर्थ रखता था कि वे वास्तव में पूरी जीवन-प्रणाली को सामूहिक रूप से परिवर्तित करना चाहते हैं, जिनमें ज़रूरी तौर पर देश का राजनैतिक विधान भी सम्मिलित है। क्योंकि जग के पालनकर्ता रब का प्रतिनिधि कभी अधीन और प्रजा बनकर रहने के लिए नहीं आता बल्कि वह तो ऐसा व्यक्ति बनने के लिए आता है जिसका आज्ञाकारी हुआ जाए और जिसे अधिकारी स्वीकार किया जाए। और किसी अधर्मी के शासनाधिकार को स्वीकार करना उसकी पैग़म्बरी की हैसियत के पूर्णतः विरूद्ध है। यही कारण है कि हज़रत मूसा (अलै०) के मुँह से पैग़म्बरी का दावा सुनते ही फ़िरऔन और उसके राज्य मन्त्रियों आदि के सामने राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्रान्ति का ख़तरा प्रकट हो गया, और उन्होंने समझ लिया कि अगर इस व्यक्ति की बात चली तो शासनाधिकार और सत्ता हमारे हाथ से निकल जाएगी।

34. इस तरह अल्लाह ने फ़िरऔनियों की चाल को उलटा उन्हीं परपलट दिया। उन्होंने देश के सारे कुशल जादूगरों को बुलाकर सबके सामने इसलिए प्रदर्शन कराया था कि जनसाधारण को हज़रत मूसा के जादूगर होने का विश्वास दिलाएँ या कम से कम सन्देह ही में डाल दें। लेकिन इस मुक़ाबले में पराजित होने के बाद ख़ुद उनके अपने बुलाए हुए कला-कुशल व्यक्तियों ने एकमत होकर यह फ़ैसला कर दिया कि हज़रत मूसा (अलै०) जो चीज़ पेश कर रहे हैं वह हरगिज़ जादू नहीं है, बल्कि यक़ीनन सारे जहान के रब की शक्ति का चमत्कार है जिसके आगे किसी जादू का ज़ोर नहीं चल सकता।

बाद तुम सबको सूली पर चढ़ाऊँगा।''

(125) उन्होंने चवाब दिया, ''हर हाल में हमें पलटना अपने रब ही की ओर है। (126) तू जिस बात का हमसे बदला लेना चाहता है वह इसके सिवा कुछ नहीं कि हमारे रब की निशानियाँ जब हमारे सामने आ गई तो हमने उन्हें मान लिया। ऐ रब, हमपर सब्र उंडेल दे और हमें दुनिया से उठा तो इस हाल में कि हम तेरे आज्ञाकारी हों।[35]

(127) फ़िरऔन से उसकी क़ौम के सरदारों ने कहा, ''क्या तू मूसा और उसकी क़ौम को यूँ ही छोड़ देगा कि देश में बिगाड़ फैलाएँ और वे तेरी और तेरे पूज्य प्रभुओं की बन्दगी छोड़ बैठे?'' फ़िरऔन ने जवाब दिया, ''मैं उनके बेटों को क़त्ल कराऊँगा और उनकी औरतों को जीता रहने दूँगा।[36] हमारी सत्ता की पकड़ उनपर मज़बूत है।''

35. फ़िरऔन ने पाँसा पलटते देखकर आख़िरी चाल यह चली थी कि घोषित कर दे कि सारा मामला मूसा (अलै०) और जादूगरों की साज़िश है और फिर जादूगरों को शारीरिक यातना और क़त्ल की धमकी देकर उनसे अपने इस आरोप को स्वीकार करा ले। लेकिन यह चाल भी उलटी पड़ी। जादूगरों ने अपने-आपको हर सज़ा के लिए प्रस्तुत करके सिद्ध कर दिया कि उनका मूसा (अलै०) की सच्चाई को मान लेना किसी साज़िश का नहीं बल्कि सत्य की सच्ची स्वीकृति का नतीजा था। यहाँ यह बात भी देखने योग्य है कि कुछ थोड़े ही समय में ईमान ने उन जादूगरों के चरित्र में कितनी बड़ी क्रान्ति पैदा कर दी। अभी थोड़ी देर पहले इन्हीं जादूगरों की नीचता का यह हाल था कि अपने पैतृक धर्म के समर्थन और सहायता के लिए घरों से चलकर आए थे और फ़िरऔन से पूछ रहे थे कि अगर हमने अपने धर्म को मूसा के हमले से बचा लिया तो सरकार से हमें इनाम तो मिलेगा ना? या अब जो ईमान की नेमत नसीब हुई तो उन्हीं की सत्यप्रियता और साहस यहाँ तक पहुँच गया कि थोड़ी देर पहले जिस बादशाह के आगे लालच के मारे बिछे जा रहे थे अब उसकी महिमा और प्रताप को ठोकर मार रहे हैं और उन बुरी से बुरी सज़ाओं को भुगतने के लिए तैयार हैं जिनकी धमकी वह दे रहा है मगर उस सत्य को छोड़ने के लिए तैयार नहीं है जिसकी सत्यता इनपर प्रकट हो चुकी है।

36. स्पष्ट रहे कि ज़ुल्म का एक दौर वह था जो हज़रत मूसा (अलै०) के जन्म से पहले जारी हुआ था, और ज़ुल्म का दूसरा दौर यह है जो हज़रत मूसा (अलै०) की पैग़म्बरी के बाद शुरू हुआ, दोनों कालों में यह बात शामिल थी कि इसराईलियों के बेटों को क़त्ल कराया गया, और उनकी बेटियों को जीता छोड़ दिया गया; ताकि धीरे-धीरे उनकी नस्ल का अन्त हो जाए और यह क़ौम दूसरी क़ौमों में गुम होकर रह जाए।

(128) मूसा ने अपनी क़ौम से कहा, "अल्लाह से मदद माँगो और सब्र करो, ज़मीन अल्लाह की है, अपने बन्दों में से जिसको चाहता है उसका वारिस बना देता है,[37] और आख़िरी कामयाबी उन्हीं के लिए है जो उससे डरते हुए काम करें।" (129) उसकी क़ौम के लोगों ने कहा, "तेरे आने से पहले भी हम सताए जाते थे और अब तेरे आने पर भी सताए जा रहे हैं।" उसने जवाब दिया, "क़रीब है वह समय कि तुम्हारा रब तुम्हारे दुश्मन को तबाह कर दे और तुमको ज़मीन में अधिकारी (ख़लीफ़ा) बनाए, फिर देखे कि तुम कैसे कर्म करते हो।"

(130) हमने फ़िरऔन के लोगों को कई साल तक अकाल और उपज की कमी की हालत में रखा कि शायद उनको होश आए (131) मगर उनकी हालत यह थी कि जब अच्छा समय आता तो कहते कि हम इसी के अधिकारी हैं, और जब बुरा समय आता तो मूसा और उसके साथियों को अपने लिए अपशकुन ठहराते, हालाँकि वास्तव में उनका अपशकुन तो अल्लाह के पास था, मगर उनमें से ज़्यादातर ज्ञानहीन थे। (132) उन्होंने मूसा से कहा कि "तू हमपर जादू चलाने के लिए चाहे कोई निशानी ले आए, हम तो तेरी बात माननेवाले नहीं हैं।" (133) आख़िरकार हमने उनपर तूफ़ान भेजा, टिड्डी दल छोड़े, सुरसुरियाँ फैलाई, मेंढ़क निकाले और ख़ून की बारिश की। ये सब निशानियाँ अलग-अलग करके दिखाई। मगर वे सरकशी ही दिखाए चले गए और वे बड़े ही अपराधी लोग थे। (134) जब कभी उनपर विपत्ति आती तो कहते, "ऐ मूसा, तुझे अपने रब की ओर से जो पद प्राप्त है उसके आधार पर हमारे लिए दुआ कर, अगर इस बार तू हमपर से यह विपत्ति टलवा दे तो हम तेरी बात मान लेंगे और इसराईल की सन्तान को तेरे साथ भेज देंगे।" (135) मगर जब हम उनपर से अपना अज़ाब एक नियत समय तक के लिए, जिस तक हर हाल में वे पहुँचनेवाले थे, हटा लेते, तो वे एकदम अपनी प्रतिज्ञा से फिर जाते। (136) तब हमने उनसे बदला लिया और उन्हें समुद्र में डुबा दिया क्योंकि उन्होंने हमारी निशानियों को झुठलाया था और उनसे बेपरवा हो गए थे। (137) और उनकी जगह हमने उन लोगों को जो कमज़ोर बनाकर रखे गए थे, उस भू-भाग के पूरब और पश्चिम का उत्तराधिकारी बना दिया जिसे हमने बरकतों से मालामाल किया था।[38] इस तरह इसराईल की सन्तान के प्रति तेरे रब का अच्छा वादा पूरा हुआ क्योंकि उन्होंने सब्र से काम लिया था और हमने फ़िरऔन और उसकी क़ौम

37. इस ज़माने में कुछ लोग इस आयत से यह बात कि "ज़मीन अल्लाह की है" निकाल लेते हैं और बाद का यह हिस्सा कि "जिसको वह चाहता है उसका वारिस बना देता है" छोड़ देते हैं।

का वह सब कुछ बरबाद कर दिया जो वे बनाते और चढ़ाते थे।

(138) इसराईलियों को हमने समुद्र से पार करा दिया, फिर वे चले और रास्ते में एक ऐसी क़ौम के पास से होकर गए जो अपनी कुछ मूर्तियों की भक्त बनी हुई थी। कहने लगे, "ऐ मूसा हमारे लिए भी कोई ऐसा ही पूज्य बना दे जैसे कि इन लोगों के पूज्य हैं।"[39] मूसा ने कहा, "तुम लोग बड़ी नादानी की बातें करते हो। (139) ये लोग जिस तरीक़े का पालन कर रहे हैं वह तो बरबाद होनेवाला है और जो कर्म वे कर रहे हैं वह सर्वथा व्यर्थ है।" (140) फिर मूसा ने कहा, "क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई पूज्य तुम्हारे लिए तलाश करूँ? हालाँकि वह अल्लाह ही है जिसने तुम्हें दुनिया भर की क़ौमों के मुक़ाबले में श्रेष्ठता प्रदान की है। (141) और (अल्लाह कहता है) वह समय याद करो जब हमने फ़िरऔनियों से तुम्हें छुटकारा दिलाया जिनका हाल यह था कि तुम्हें दर्दनाक अज़ाब में डाले रखते थे, तुम्हारे बेटों को क़त्ल करते और तुम्हारी औरतों को ज़िन्दा रहने देते थे और इसमें तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारी बड़ी परीक्षा थी।"

(142) हमने मूसा को तीस रात-दिन के लिए (सीना पहाड़ पर) बुलाया और बाद में दस दिन और बढ़ा दिए, इस तरह उसके रब की निर्धारित अवधि पूरे चालीस दिन हो गई। मूसा ने चलते हुए अपने भाई हारून से कहा "मेरे पीछे तुम मेरी क़ौम में मेरी जगह रहना और ठीक काम करते रहना और बिगाड़ पैदा करनेवालों के तरीक़े पर न चलना।" (143) जब वह हमारे निश्चित किए हुए समय पर पहुँचा और उसके रब ने उससे बातचीत की तो उसने प्रार्थना की "ऐ रब मुझे देखने की शक्ति दे कि मैं तुझे देखूँ।" कहा, "तू मुझे नहीं देख सकता। हाँ, तनिक सामने के पहाड़ की ओर देख। अगर वह अपनी जगह स्थिर रह जाए तो अलबत्ता तू मुझे देख सकेगा।" तो उसका रब जब पहाड़ पर आलोकित हुआ तो उसे चकनाचूर कर दिया और मूसा मूर्छित होकर गिर पड़ा। जब होश में आया तो बोला, "पाक है तेरी ज़ात, मैं तेरे सामने तौबा करता हूँ और सबसे पहले ईमान लानेवाला मैं हूँ।" (144) कहा, "ऐ मूसा, मैंने सब लोगों के मुक़ाबले में तुझे प्राथमिकता देकरक तुझे चुना कि मेरी पैग़म्बरी करे और मुझसे बातचीत करे। अतः जो कुछ मैं तुझे दूँ उसे ले और कृतज्ञता दिखा।"

38. अर्थात् इसराईल की सन्तान को फ़िलस्तीन के भू-भाग का वारिस बना दिया। क़ुरआन मजीद में विभिन्न स्थानों पर फ़िलस्तीन और सीरिया ही की ज़मीन के लिए ये शब्द प्रयोग किए गए हैं कि हमने इस भू-भाग में बरकतें रखी हैं।

39. यह क़ौम यद्यपि मुसलिम (आज्ञाकारी) थी मगर मिस्र में सदियों तक एक मूर्ति पूजनेवाली क़ौम के बीच रहने का यह प्रभाव था।

(145) इसके बाद हमने मूसा को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के बारे में नसीहत और हर पहलू से सम्बन्धित स्पष्ट आदेश पट्टिकाओं (तख़्तियों) पर लिखकर दे दिया और उससे कहा : ''इन आदेशों को मज़बूत हाथों से सँभाल और अपनी क़ौम को हुक्म दे कि उनके उत्तम आशय का अनुपालन करें, जल्द ही मैं तुम्हें अवज्ञाकारियों के घर दिखाऊँगा। (146) मैं अपनी निशानियों से उन लोगों की निगाहें फेर दूँगा जो नाहक़ ज़मीन में बड़े बनते हैं, वे चाहे कोई निशानी देख लें कभी उसपर ईमान नहीं लाएँगे, अगर सीधा मार्ग उनके सामने आए तो उसे अपनाएँगे नहीं और अगर टेढ़ा मार्ग दिखाई दे तो उसपर चल पड़ेंगे, इसलिए कि उन्होंने हमारी निशानियों को झुठलाया और उनसे बेपरवाही करते रहे। (147) हमारी निशानियों को जिस किसी ने झुठलाया, और आख़िरत की पेशी का इनकार किया उसका सारा किया-धरा अकारथ गया। क्या लोग इसके सिवा कुछ और बदला पा सकते हैं कि जैसा करें वैसा भरें?''

(148) मूसा के पीछे उसकी क़ौम के लोगों ने अपने ज़ेवरों से एक बछड़े का पुतला बनाया जिसमें से बैल की-सी आवाज़ निकलती थी। क्या उन्हें दिखाई न देता था कि वह न उनसे बोलता है न किसी मामले में उनका मार्गदर्शन करता है? मगर फिर भी उन्होंने उसे पूज्य बना लिया और वे बड़े ज़ालिम थे।[40] (149) फिर जब उनके धोखा खाने का भ्रम टूट गया और उन्होंने देख लिया कि वास्तव में वे पथभ्रष्ट हो गए हैं तो कहने लगे कि ''अगर हमारे रब ने हमपर दया न की और हमें माफ़ न किया तो हम तबाह हो जाएँगे।'' (150) उधर से मूसा क्रोध और दुख से भरा हुआ अपनी क़ौम की ओर पलटा। आते ही उसने कहा, ''बहुत बुरा उत्तराधिकार निभाया तुम लोगों ने मेरे पीछे! क्या तुम इतना भी सब्र से काम न ले सके कि अपने रब के आदेश का इनतिज़ार कर लेते?'' और तख़्तियाँ फेंक दी और अपने भाई (हारून) के सिर के बाल पकड़कर उसे खींचा। हारून ने कहा, ''ऐ मेरी माँ के बेटे, इन लोगों ने मुझे दबा लिया और क़रीब था कि मुझे मार डालते। अतः तू दुश्मनों को मुझपर हँसने का मौक़ा न दे और इस ज़ालिम गिरोह के साथ मुझे सम्मिलित न कर।'' (151) तब मूसा ने कहा, ''ऐ रब, मुझे और मेरे भाई को माफ़ कर और हमें अपनी दयालुता में दाख़िल कर, तू सबसे बढ़कर दयावान् है।'' (152) (जवाब में कहा कया कि) ''जिन लोगों ने बछड़े को पूज्य बनाया

40. यह उस मिस्री प्रभाव का दूसरा प्रदर्शन था जिसे लिए हुए इसराईली मिस्र से निकले थे। मिस्र में गाय की पूजा और उसे पवित्र मानने की जो प्रथा थी उससे यह क़ौम इतनी अधिक प्रभावित हो चुकी थी कि पैग़म्बर के पीठ मोड़ते ही उसने पूजा के लिए एक कृत्रिम बछड़ा बना डाला।

वे ज़रूर अपने रब के ग़ज़ब में गिरफ़्तार होकर रहेंगे और दुनिया की ज़िन्दगी में अपमानित होंगे। झूठ घड़नेवालों को हम ऐसी ही सज़ा देते हैं। (153) और जो लोग बुरे कर्म करें फिर तौबा कर लें और ईमान ले आएँ तो यक़ीनन इस तौबा और ईमान के बाद तेरा रब माफ़ करनेवाला और दयावान् है।

(154) फिर जब मूसा का ग़ुस्सा ठण्डा हुआ तो उसने उन तख़्तियों को उठा लिया जिनके लेख में मार्गदर्शन और दयालुता थी उन लोगों के लिए जो अपने रब से डरते हैं, (155) और उसने अपनी क़ौम के सत्तर आदमियों को चुना ताकि वे (उसके साथ) हमारे नियत किए हुए समय पर हाज़िर हों।[41] जब उन लोगों को एक प्रचण्ड भूकम्प ने आ पकड़ा तो मूसाने निवेदन किया, ''ऐ मेरे सरकार, आप चाहते तो पहले ही इनको और मुझे तबाह कर सकते थे। क्या आप उस अपराध में जो हममें से कुछ नादानों ने किया था हम सबको तबाह कर देंगे? यह तो आपकी डाली हुई एक परीक्षा थी जिसके द्वारा आप जिसे चाहते हैं गुमराही में डाल देते हैं और जिसे चाहते हैं राह पर लगा देते हैं। हमारे सरपरस्त तो आप ही हैं। अतः हमें माफ़ कर दीजिए और हमपर दया कीजिए, आप सबसे बढ़कर माफ़ करनेवाले हैं। (156) और हमारे लिए इस दुनिया की भलाई भी लिख दीजिए और आख़िरत की भी, हम आपकी ओर पलट आए।'' जवाब में कहा गया, ''सज़ा तो मैं जिसे चाहता हूँ देता हूँ, मगर मेरी दयालुता हर चीज़ पर छाई हुई है और उसे मैं उन लोगों के हक़ में लिखूँगा जो नाफ़रमानी से बचेंगे, ज़कात (दान देंगे, और मेरी आयतों पर ईमान लाएँगे।''

(157) (अतः आज यह दयालुता उन लोगों का हिस्सा है) जो इस पैग़म्बर, उम्मी नबी का अनुसरण करें[42] जिसका ज़िक्र उन्हें अपने यहाँ तौरात और इंजील में लिखा हुआ मिलता है। वह उन्हें नेकी का हुक्म देता है, बुराई से रोकता है, उनके लिए पाक चीज़े हलाल और नापाक चीज़ें हराम करता है, और उनपर से वह बोझ उतारता है जो उनपर लदे हुए थे और वे बन्धन खोलता है जिनमें वे जकड़े हुए थे।[43] अतः जो लोग इसपर ईमान लाएँ और इसकी सहायता और समर्थन करें और उस प्रकाश का अनुसरण ग्रहण करें जो इसके साथ अवतरित हुआ है, वही सफल होनेवाले हैं। (158) ऐ नबी (मुहम्मद) कहो, ''ऐ इनसानो, मैं तुम सबकी ओर उस अल्लाह का पैग़म्बर हूँ जो ज़मीन और आसमानों की बादशाही का मालिक है, उसके सिवा कोई

41. यह तलबी इस ग़रज़ से हुई थी कि क़ौम के 70 प्रतिनिधि सीना पर्वत पर अल्लाह के सामने हाज़िर होकर क़ौम की ओर से गाय-पूजा के अपराध की माफ़ी माँगें और नए सिरे से प्रतिज्ञाबद्ध हो कि वे अल्लाह के आज्ञाकारी बन कर रहेंगे।

ईश्वर नहीं है, वही ज़िन्दगी प्रदान करता है और वही मौत देता है, अतः ईमान लाओ अल्लाह पर और उसके भेजे हुए उम्मी नबी पर जो अल्लाह और उसके आदेशों को मानता है, और उसके अनुयायी बनो, उम्मीद है कि तुम सीधा मार्ग पा लोगे।''

(159) मूसा की क़ौम में एक गिरोह ऐसा भी था जो हक़ के अनुसार मार्ग दिखाता और हक़ ही के अनुसार इनसाफ़ करता था। (160) और हमने उस क़ौम को बारह घरानों में बाँट करके उन्हें स्थायी गिरोहों का रूप दे दिया था। और जब मूसा से उसकी क़ौम ने पानी माँगा तो हमने उसको इशारा किया कि अमुक चट्टान पर अपनी लाठी मारो, तो उस चट्टान से यकायक बारह स्रोत फूट निकले और हर गिरोह ने अपने पानी लेने की जगह निश्चित कर ली। हमने उनपर बादल की छाया की और उनपर 'मन्न' और 'सलवा' उतारा—''खाओ वे पाक भली चीज़ें जो हमने तुमको प्रदान की हैं।'' मगर इसके बाद उन्होंने जो कुछ किया तो हमपर ज़ुल्म नहीं किया बल्कि आप अपने ऊपर ज़ुल्म करते रहे।

(161) याद करो वह समय जब उनसे कहा गया था कि ''इस बस्ती में जाकर बस जाओ और इसकी पैदावार से अपनी इच्छानुसार रोज़ी प्राप्त करो और 'हित्ततुन-हित्ततुन' कहते जाओ, और शहर के दरवाज़े में सजदा करते हुए दाख़िल हो, हम तुम्हारी

42. यहाँ नबी (सल्ल०) के लिए 'उम्मी' शब्द यहूदी पारिभाषिक शब्द के रूप में इस्तेमाल हुआ है. इसराईली अपने सिवा दूसरी सभी क़ौमों को उम्मी (Gentiles) कहते थे और उनका क़ौमी गर्व और अहंकार किसी उम्मी की पेशवाई स्वीकार करना तो अलग रहा, इसपर भी तैयार न था कि उम्मियों के लिए अपने बराबर इनसानी अधिकार ही स्वीकार कर लें। अतएव क़ुरआन में उनका यह कथन उद्धृत किया गया है कि ''उम्मियों के माल मार खाने में हमारी कोई पकड़ नहीं है'' (3:75)। अतः अल्लाह उन्हीं पारिभाषिक शब्दों का इस्तेमाल करके कहता है कि अब तो इसी उम्मी के साथ तुम्हारा भाग्य जुड़ा हुआ है। इसका अनुसरण करोगे तो मेरी दयालुता से हिस्सा पाओगे। वरना वही ग़ज़ब तुम्हारे लिए निश्चित है जिसमें शताब्दियों से घिरे चले आ रहे हो।

43. अर्थात् उनके धार्मिक विधान के पंडितों ने अपनी क़ानूनी छिद्रान्वेषणों से, उनके संसार त्यागी संन्यासियों ने अपने वैराग्य की अतिशयता से और उनके अशिक्षित जनसाधारण ने अपने अन्ध-विश्वासों और मनगढ़ंत नियमों और पाबन्दियों से उनकी ज़िन्दगी को जिन बोझों तले दबा रखा है और जिन जकड़बन्दियों में कस रखा है, यह पैग़म्बर वे सारे बोझ उतरा देता है और वे सारे बन्धन तोड़कर ज़िन्दगी को आज़ाद कर देता है।

ख़ताओं को माफ़ कर देंगे और उत्तमकारों को और भी ज़्यादा देंगे।'' (162) मगर जो लोग उनमें से ज़ालिम थे उन्होंने उस बात को जो उनसे कही गई थी बदल डाला, और परिणाम यह हुआ कि हमने उनके ज़ुल्म के बदल उनपर आसमान से अज़ाब भेज दिया।

(163) और तनिक इनसे उस बस्ती का हाल भी पूछो जो समुद्र के तट परस्थित थी।[44] उन्हें याद दिलाओ वह घटना कि वहाँ के लोग 'सब्त'(सप्ताह) के दिन ईश्वरीय आदेशों की अवहेलना करते थे और यह कि मछलियाँ 'सब्त' ही के दिन उभर-उभरकर सतह पर उनके सामने आती थीं और 'सब्त' के सिवा बाक़ी दिनों में नहीं आती थी। यह इसलिए होता था कि हम उनकी अवज्ञाओं के कारण उनको परीक्षा में डाल रहे थे। (164) और उन्हें यह भी याद दिलाओ कि जब उनमें से एक गिरोह ने दूसरे गिरोह से कहा था कि ''तुम ऐसे लोगों को क्यों नसीहत करते हो जिन्हें अल्लाह तबाह करनेवाला या सख़्त सज़ा देनेवाला है।'' तो उन्होंने जवाब दिया था कि ''हम ये सब कुछ तुम्हारे रब के सामने अपने को निरपराध सिद्ध करने के लिए करते हैं और इस उम्मीद पर करते हैं कि शायद ये लोक उसकी अवज्ञा से बचने लगें।'' (165) आख़िरकार जब वे उन आदेशों को बिलकुल ही भूल गए जो उन्हें याद कराए गए थे तो हमने उन लोगों को बचा लिया जो बुराई से रोकते थे, और हमने बाक़ी सब लोगों को जो ज़ालिम थे उनकी अवज्ञाओं पर भारी अज़ाब में पकड़ लिया। (166) फिर जब वे पूरी सरकशी के साथ वही काम किए चले गए जिससे उन्हें रोका गया था, तो हमने कहा, बन्दर हो जाओ[45] अपमानित और तिरस्कृत।

(167) और याद करो जबकि तुम्हारे रब ने घोषणा कर दी कि ''वह क़ियामत के दिन तक लगातार ऐसे लोग इसराईलियों पर नियुक्त करता रहेगा जो इनको बहुत ही भारी अज़ाब देंगे।'' यक़ीनन तुम्हारा रब सज़ा देने में जल्दी करता है और यक़ीनन ही वह माफ़ी और दया से भी काम लेनेवाला है।

(168) हमने इनको ज़मीन में टुकड़े-टुकड़े करके बहुत-सी क़ौमों में बाँट दिया। कुछ लोग इनमें नेक थे और कुछ इसके विपरीत। और हम इनको अच्छी और बुरी परिस्थितियों से परीक्षा में डालते रहे कि शायद ये पलट आएँ। (169) फिर अगली नस्लों के बाद ऐसे अयोग्य लोगों ने इनका स्थान लिया जो ईश्वरीय ग्रन्थ के उत्तराधिकारी होकर इसी अधम संसार के लाभ समेटते हैं और कह देते हैं कि उम्मीद है हमें माफ़ कर

44. शोधकर्ताओं का ज़्यादा रुझान इस ओर है कि यह स्थान ऐला या ऐलात या ऐलूत था जहाँ अब इसराईल के यहूदी राज्य ने इसी नाम की एक बन्दरगाह बनाई है और जिसके क़रीब ही जोर्डन की मशहूर बन्दरगाह अक़बा स्थित है।

दिया जाएगा, और अगर वही दुनिया की तुच्छ चीज़ें सामने आती हैं तो फिर लपककर उसे ले लेते हैं। क्या इनसे किताब की प्रतिज्ञा नहीं कराई जा चुकी है कि अल्लाह के नाम पर वही बात कहें जो सत्य हो? और ये ख़ुद पढ़ चुके हैं जो किताब में लिखा है। आख़िरत का निवास-स्थान तो अल्लाह का डर रखनेवालों के लिए ही बेहतर है,[46] क्या तुम इतनी-सी बात नहीं समझते? (170) जो लोग किताब की पाबन्दी करते हैं और जिन्होंने नमाज़ (उपासना) क़ायम कर रखी है, यक़ीनन ऐसे नेक चलन लोगों का किया-धरा हम अकारथ नहीं करेंगे। (171) इन्हें वह समय भी कुछ याद है जबकि हमने पहाड़ को हिलाकर इनपर इस तरह छा दिया था कि मानो वह छतरी है और ये समझ रहे थे कि वह इनपर आ पड़ेगा और उस समय हमने इनसे कहा था कि जो किताब हम तुम्हें दे रहे हैं उसे मज़बूती के साथ थामो और जो कुछ उसमें लिखा है उसे याद रखो, उम्मीद है कि तुम ग़लत चाल से बचे रहोगे।

(172) और ऐ नबी, लोगों को याद दिलाओ वह समय जबकि तुम्हारे रब ने

45. इस बयान से मालूम हुआ कि इस बस्ती में तीन तरह के लोग मौजूद थे। एक वे जो धड़ल्ले से ईश्वरीय आदेशों की अवहेलना कर रहे थे। दूसरे वे जो ख़ुद तो अवहेलना नहीं करते थे मगर इस अवहेलना को चुपचाप बैठे देख रहे थे और उपदेशकों से कहते थे कि इन अभागों को समझाना व्यर्थ है। तीसरे वे जिनका आस्था सम्बन्धी आत्मगौरव और स्वाभिमान ईश्वरीय मर्यादाओं के इस खुल्लम-खुल्ला निरादर को सहन न कर सकता था और वे इस विचार से नेकी का हुक्म देने और बुराई से रोकने में लगे हुए थे कि शायद वे अपराधी लोग उनके समझाने से सीधे मार्ग पर आ जाएँ और अगर वे सीधे मार्ग पर न आएँ तब भी हम अपनी हद तक तो अपना कर्तव्य निभाकर अल्लाह के सामने अपने बरी होने का प्रमाण तो प्रस्तुत कर ही दें। इस परिस्थिति में जब इस बस्ती पर अल्लाह की ओर से अज़ाब आया तो क़ुरआन मजीद कहता है कि इन तीनों गिरोहों में से सिर्फ़ तीसरा गिरोह ही उससे बचाया गया क्योंकि उसी ने अल्लाह के सामने अपना उज्र पेश करने की चिन्ता की थी और वही था जिसने अपने बरी होने का प्रमाण जुटा रखा था। बाक़ी दोनों गिरोहों की गिनती ज़ालिमों में हुई और वे अपने अपराध की हद तक अज़ाब में गिरफ़्तार हुए। अलबत्ता बन्दर सिर्फ़ वे लोग बनाए गए जो पूरी उद्दण्डता के साथ आदेश की अवहेलना करते चले गए थे।
46. इस आयत के दो अनुवाद हो सकते हैं। एक वह जो हमने उपर मूल में किया है। दूसरा यह कि ''अल्लाह का डर रखनेवाले लोगों के लिए तो आख़िरत का निवास-स्थान ही बेहतर है।''

आदम के बेटों की पीठों से उनकी नस्ल को निकाला था और उन्हें ख़ुद उनके ऊपर गवाह बनाते हुए पूछा था, ''क्या मैं तुम्हारा रब नहीं हूँ?'' उन्होंने कहा, ''ज़रूर आप ही हमारे रब हैं, हम इसपर गवाही देते हैं।''[47] यह हमने इसलिए किया कि कहीं तुम क़ियामत के दिन यह न कह दो कि ''हम तो इस बात से बेख़बर थे'', (173) या यह न कहने लगो कि 'शिर्क' (बहुदेववाद) का आरंभ तो हमारे बाप-दादा ने हमसे पहले किया था और हम उसके पश्चात् उनकी नस्ल से पैदा हुए, फिर क्या आप हमें उस अपराध में पकड़ते हैं जो ग़लतकार लोगों ने किया था?'' (174) देखो, इस तर हम निशानियाँ स्पष्ट रूप से पेश करते हैं।[48] और इसलिए करते हैं कि ये लोग पलट आएँ।

(175) और ऐ नबी, इनके सामने उस व्यक्ति का हाल बयान करो जिसको हमने अपनी आयतों का ज्ञान प्रदान किया था, मगर वह उनकी पाबन्दी से निकल भागा। आख़िरकार शैतान उसके पीछे पड़ गया यहाँ तक कि वह भटकनेवालों में शामिल होकर रहा। (176) अगर हम चाहते तो उसे उन आयतों के द्वारा उच्चता प्रदान करते, मगर वह तो ज़मीन ही की ओर छुककर रह गया और अपनी वासना ही के पीछे पड़ा रहा, अतः उसकी हालत कुत्ते जैसी हो गई कि तुम उसपर आक्रमण करो तब भी जीभ लटकाए रहे, और उसे छोड़ दो तब भी जीभ लटकाए रहे।[49] यही मिसाल है उन लोगों की जो हमारी आयतों को झुठलाते हैं।

तुम ये क़िस्से इनको सुनाते रहो, शायद कि ये कुछ सोच-विचार करें। (177) बड़ी ही बुरी मिसाल है ऐस लोगों की जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया, और वे अपने आप ही पर ज़ुल्म करते रहे हैं। (178) जिसे अल्लाह मार्ग दिखाए बस वही सीधा मार्ग पा सकता है और जिसको अल्लाह अपने मार्गदर्शन से वंचित कर दे वही नाकाम व नामुराद होकर रहता है। (179) और यह सत्य है कि बहुत-से जिन्न और

47. जैसा कि कई एक हदीसों से मालूम होता है कि यह मामला आदम की पैदाइश के अवसर पर पेश आया था। उस समय जिस तरह फ़रिश्तों को इकट्ठा करके पहले इनसान को सजदा कराया गया था और ज़मीन पर इनसान की ख़िलाफ़त (सत्ताधारी होने) का ऐलान किया गया था उसी तरह आदम की पूरी नस्ल को भी जो क़ियामत तक पैदा होनेवाली थी, अल्लाह ने एक समय में अस्तित्व और चेतना प्रदान करके अपने सामने उपस्थित किया था और उनसे अपने रब होने की गवाही ली थी।
48. अर्थात् सत्य की पहचान के वे चिह्न जो इनसान के अपने भीतर (नफ़्स में) मौजूद हैं और हक़ीक़त की ओर रहनुमाई करते हैं।

इनसान ऐसे हैं जिनको हमने जहन्नम ही के लिए पैदा किया है। उनके पास दिल है मगर वे उनसे सोचते नहीं। उनके पास आँखे हैं मगर वे उनसे देखते नहीं। उनके पास कान हैं मगर वे उनसे सुनते नहीं। वे जानवरों के समान हैं बल्कि उनसे भी ज़्यादा गए-गुज़रे, ये वे लोग हैं जो ग़फ़लत में खोए गए हैं।[50]

(180) अल्लाह अच्छो नामों का अधिकारी है, उसको अच्छे ही नामों से पुकारो और उन लोगों को छोड़ दो जो उसके नाम रखने में सच्चाई से हट जाते हैं। जो कछ वे करते हैं उसका बदला वे पाकर रहेंगे।[51] (181) हमारे पैदा किए हुए लोगों में एक गिरोह ऐसा भी है जो ठीक-ठीक हक़ के अनुसार मार्ग दिखाता और हक़ के अनुसार इनसाफ़ करता है। (182) रहे वे लोग जिन्होंने हमारी आयतों को झुठला दिया है, तो उन्हें हम क्रमशः ऐसे तरीक़े से तबाही की तरफ़ ले जाएँगे कि उनहें ख़बर तक न होगी। (183) मैं उनको ढील दे रहा हूँ, मेरी चाल का कोई तोड़ नहीं है।

(184) और क्या इन लोगों ने कभी सोचा नहीं? इनके साथी पर पागलपन का कोई प्रभाव नहीं है।[52] वह तो एक सावधान करनेवाला है जो (बुरा परिणाम सामने आने

49. तफ़सीर लिखनेवालों ने नबी (सल्ल॰) के नुबूवत-काल और उससे पहले के इतिहास के विभिन्न व्यक्तियों पर इस मिसाल को फ़िट किया है लेकि न सच यह है कि वह विशेष व्यक्ति तो परदे में है जो इस मिसाल में सामने था, अलबत्ता यह मिसाल हर उस व्यक्ति पर फ़िट होती है जिसमें ये गुण पाए जाते हों। अल्लाह उसकी हालत की उपमा कुत्ते से देता है जिसकी हर समय लटकी जीभ और टपकती हुई राल एक न बुझनेवाली लोभ की आग और कभी न तृप्त होनेवाली नीयत का पता देती है। यह उपमा देने का आधार वही है जिसके कारण हम अपनी भाषा में ऐसे व्यक्ति को जो दुनिया के लोभ में अंधा हो रहा हो, दुनिया का कुत्ता कहते हैं।
50. अर्थात् हमने तो उन्हें पैदा किया था दिल, दिमाग़, आँखे और कान देकर मगर ज़ालिमों ने उनसे कोई काम न लिया और अपनी ग़लतकारियों के कारण आख़िरकार जहन्नम के लायक़ बन कर रहे।
51. 'अच्छे नामों' से मुराद वे नाम हैं जिनसे अल्लाह की महानता एवं उच्चता और पवित्रता तथा उसके उत्कृष्ट गुणों की अभिव्यक्ति होती हो. अल्लाह के नाम रखने में सत्यता से हटना यह है कि अल्लाह को ऐसे नाम दिए जाएँ जो उसके दर्जे से गिरे हुए हों, जो उसकी प्रतिष्ठा और आदर के विपरीत हों, जिनसे अवगुण उससे सम्बद्ध होते हों, या जिनसे उनकी पवित्र एवं सर्वोच्च सत्ता के बारे में किसी ग़लत धारणा की अभिव्यक्ति होती हो।

से पहले) साफ़-साफ़ चेतावनी दे रहा है। (185) क्या इन लोगों ने आसमान और ज़मीन की व्यवस्था एवं प्रबन्ध पर कभी विचार नहीं किया और किसी चीज़ को भी जो अल्लाह ने पैदा की है आँखें खोलकर नहीं देखा? और क्या यह भी इन्होंने नहीं सोच कि शायद इनकी ज़िन्दगी की मुहलत पूरी होने का समय निकट आ लगा हो? फिर आख़िर पैग़म्बर की इस चेतावनी के बाद और कौन-सी बात ऐसी हो सकती है जिसपर ये ईमान लाएँ? (186)—जिसको अल्लाह मार्गदर्शन से वंचित कर दे उसके लिए फिर कोई मार्गदर्शक नहीं है, और अल्लाह उन्हें उनकी सरकशी ही में भटकता हुआ छोड़ देता है।

(187) ये लोग तुमसे पूछते हैं कि आख़िर वह क़ियामत की घड़ी कब उतरेगी? कहो, "उसका ज्ञान मेरे रब ही के पास है। उसे अपने समय पर वही प्रकट करेगा। आसमानों और ज़मीन में वह बड़ा कठिन समय होगा। वह तुमपर अचानक आ जाएगा।" ये लोग उसके सम्बन्ध में तुमसे इस तरह पूछते हैं मानो तुम उसकी खोज में लगे हुए हो। कहो, "उसका ज्ञान तो सिर्फ़ अल्लाह को है मगर ज़्यादातर लोग इस हक़ीक़त से बेख़बर हैं।" (188) ऐ नबी, उनसे कहो कि "मुझे अपने आपके लिए किसी लाभ और हानि का अधिकार प्राप्त नहीं, अल्लाह ही जो कुछ चाहता है वह होता है। और अगर मुझे परोक्ष (ग़ैब) का ज्ञान होता तो मैं बहुत-से लाभ अपने लिए प्राप्त कर लेता और मुझे कभी कोई हानि न पहुँचती। मैं तो सिर्फ़ एक सचेतकर्ता और ख़ुशख़बरी सुनानेवाला हूँ उन लोगों के लिए जो मेरी बात मानें।"

(189) वह अल्लाह ही है जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया और उसी की जाति से उसका जोड़ा बनाया ताकि उसके पास सुकून हासिल करे। फिर जब मर्द ने औरत को ढाँक लिया तो उसे एक हलका-सा गर्भ रह गया जिसे लिए-लिए वह चलती-

52. साथी से मुराद हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) है। आपको मक्कावालों का साथी इसलिए कहा गया है कि आप उनके लिए कोई अजानबी और अपरिचित न थे। उन्ही लोगों में बैदा हुए, उन्हीं के बीच रहे-बसे, बच्चे से जवान और जवान से बूढ़े हुए, पैग़म्बरी से पहले सारी क़ौम आपको एक अत्यन्त शुद्ध प्रकृति और बुद्धिमान व्यक्ति की हैसियत से जानती थी. पैग़म्बरी के बाद जब आपने अल्लाह का सन्देश पहुँचाना शुरू किया तो अचानक आपको विक्षिप्त और दीवाना कहने लगे। विदित है कि यह दीवानापन उन बातों के आधार पर नहीं घोषित किया गया था जो आप नबी होने से पहले करते थे बल्कि उन्हीं बातों के आधार पर किया जा रहा था जिनका आपने नबी होने के बाद प्रचार शुरू किया। इसीर कारण कहा जा रहा है कि उन लोगों ने कभी सोचा भी है, आख़िर इन बातों में से कौन-सी बात दीवानेपन और उन्माद की है?

फिरती रही। फिर जब वह बोझल हो गई तो दोनों ने मिलकर अल्लाह, अपने रब से, दुआ की कि अगर तुने हमको अच्छा-सा बच्चा दिया तो हम तेरे कृतज्ञ होंगे। (190) मगर जब अल्लाह ने उनको एक भला-चंगा बच्चा दे दिया तो वह उसकी देन में दूसरों को उसका साझीदार ठहराने लगे।[53] अल्लाह बहुत उच्च है उन शिर्क (बहुदेववाद) की बातों से जो ये लोग करते हैं। (191) कैसे नादान हैं ये लोग कि उनको अल्लाह का साझी ठहराते हैं जो किसी चीज़ को पैदा नहीं करते बल्कि ख़ुद पैदा किए जाते हैं, (192) जो न इनकी मदद कर सकते हैं और न ख़ुद अपनी ही मदद की सामर्थ्य उन्हें प्राप्त है। (193) अगर तुम उन्हें सीधी राह पर आने का निमन्त्रण दो तो वे तुम्हारे पीछे न आएँ। तुम चाहे उन्हें पुकारो या चुप रहो, दोनों स्थितियों में तुम्हारे लिए समान ही रहे।[54] (194) तुम लोग अल्लाह को छोड़कर जिन्हें पुकारते हो वे तो सिर्फ़ बन्दे हैं जैसे तुम बन्दे हो। इनसे दुआएँ माँगकर देखो, ये तुम्हारी दुआओं का जवाब दें अगर इनके बारे में तुम्हारे विचार सत्य हैं। (195) क्या ये पाँव रखते हैं कि उनसे चलें? क्या ये हाथ रखते हैं कि उनसे पकड़ें? क्या ये आँखें रखते हैं कि उनसे देखें? क्या ये कान रखते हैं कि उनसे सुनें? ऐ नबी, इनसे कहो कि ''बुला लो अपने ठहराए हुए साझीदारों को फिर तुम सब मिलकर मेरे विरूद्ध उपाय करो और मुझे हरगिज़ मुहलत न दो, (196) मेरा

53. मतलब यह है कि औलाद देनेवाला तो अल्लाह है। अगर अल्लाह औरत के पेट में बन्दर या साँप या कोई विचित्र जीव पैदा कर दे, या बच्चे को पेट में ही अंधा, बहरा, लँगड़ा, लूला बना दे, या उसकी शारीरिक एवं बौद्धिक और मानसिक शक्तियों में कोई दोष या कमी रख दे तो किसी में यह ताक़त नहीं है कि अल्लाह के इस ढाँचे को बदल डाले। इस सच्चाई से मुशरिक भी उसी तरह परिचित हैं जिस तरह एकेश्वरवादी लोग। अतएव यही कारण है कि गर्भ की अवधि में सारी आशाएँ अल्लाह ही से बँधी होती हैं कि वह भला-चंगा बच्चा पैदा करेगा। लेकिन जब उम्मीद पूरी होती है और चाँद-सा बच्चा नसीब हो जाता है तो कृतज्ञता दिखलाने के लिए भेंट और चढ़ावे (नज़्रें और नियाज़ें) किसी देवी, किसी अवतार, किसी वली और किसी हज़रत के नाम पर चढ़ाई जाती हैं और बच्चे को ऐसे नाम दिए जाते हैं कि मानो वे अल्लाह के सिवा किसी और की कृपा का परिणाम है।

54. अर्थात् इन मुशरिकों के झूठे देवताओं का हाल यह है कि सीधी राह दिखाना और अपने उपासकों का मार्गदर्शन करना तो अलग रहा, वे बेचारे तो किसी मार्गदर्शक के अनुयायी बनने के भी योग्य नहीं, यहाँ तक कि किसी पुकारनेवाले की पुकार का जवाब तक नहीं दे सकते।

सहायक और समर्थक वह अल्लाह है जिसने यह किताब उतारी है और वह नेक आदमियों की हिमायत करता है। (197) इसके विपरीत तुम जिन्हें अल्लाह को छोड़कर पुकारते हो वे न तुम्हारी मदद कर सकते हैं और न ख़ुद अपनी ही मदद करने के योग्य हैं, (198) बल्कि अगर तुम उन्हें सीधी राह पर आने के लिए कहो तो वे तुम्हारी बात सुन भी नहीं सकते। देखने में तुमको ऐसा दीख पड़ता है कि वे तुम्हारी ओर देख रहे हैं मगर वास्तव में वे कुछ भी नहीं देखते।''

(199) ऐ नबी, नरमी और माफ़ करने की नीति अपनाओ, भलाई के लिए कहते जाओ, और जाहिलों से न उलझो। (200) अगर कभी शैतान तुम्हें उकसाए तो अल्लाह की पनाह माँगो, वह सब कुछ सुननेवाला और जाननेवाला है। (201) वास्तव में जो लोग डर रखनेवाले हैं उनका हाल तो यह होता है कि कभी शैतान के प्रभाव से कोई बुरा ख़याल अगर उनहें छू भी जाता है तो फ़ौरन चौकन्ने हो जाते हैं और फिर उन्हें साफ़ दिकाई देने लगता है कि उनके लिए उचित कार्यप्रणाली क्या है। (202) रहे उनके (अर्थात् शैतानों के) भाई-बन्धु, तो वे उन्हें उनकी गुमराही में खींचे लिए चले जाते हैं और उन्हें भटकाने में कोई कमी नही करते।

(203) ऐ नबी, जब तुम इन लोगों के सामने कोई निशानी (अर्थात् चमत्कार) प्रस्तुत नहीं करते तो ये कहते हैं कि तुमने अपने लिए कोई निशानी क्यों नहीं चुन ली? इनसे कहो, ''मैं तो सिर्फ़ उस प्रकाशना (वह्य) का अनुसरण करता हूँ जो मेरे रब ने मेरी ओर भेजी है। ये प्रतिभा (बसीरत) के प्रकाश हैं तुम्हारे रब की ओर से और मार्गदर्शन और दयालुता है उन लोगों के लिए जो इसे स्वीकार करें। (204) जब क़ुरआन तुम्हारे सामने पढ़ा जाए तो उसे ध्यान से सुनो और चुप रहो, शायद कि तुमपर भी कृपा हो जाए।''

(205) ऐ नबी, अपने रब को सुबह और शाम याद किया करो मन ही मन में गिड़गिड़ाते और डरते हुए और ज़बान से भी हलकी आवाज़ के साथ। तुम उन लोगों में से न हो जाओ जो अचेत अवस्था (ग़फ़लत) में पड़े हुए हैं। (206) जिन फ़रिश्तों को तुम्हारे रब के यहाँ क़रीब होने का स्थान प्राप्त है वे कभी अपनी बड़ाई के घमण्ड में आकर उसकी बन्दगी और सेवा से मुँह नहीं मोड़ते, और उसका महिमागान (तसबीह) करते हैं, और उसके आगे झुके रहते हैं।[55]



55. इस जगह आदेश यह है कि जो व्यक्ति इस आयत को पढ़े या सुने वह सजदा करे। क़ुरआन मजीद में ऐसे 14 स्थान हैं जहाँ सजदे की आयतें आई हैं।

8. अल-अनफ़ाल

नाम

सूरा की पहली ही आयत में शब्द 'अनफ़ाल' का उल्लेख हुआ है, उसे ही इस सूरा का नाम दे दिया गया है। इस सूरा में अनफ़ाल (युद्ध में जीता हुआ माल) के बारे में कुछ आदेश भी दिए गए हैं।

अवतरणकाल

यह सूरा सन् 2 हिजरी में बद्र के युद्ध के पश्चात् अवतरित हुई है और इसमें इस्लाम और कुफ़्र के इस प्रथम युद्ध की विस्तृत समीक्षा की गई है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

इससे पहले कि इस सूरा की समीक्षा की जाए, बद्र के युद्ध और उससे संबंधित परिस्थितियों पर एक ऐतिहासिक दृष्टि डाल लेनी चाहिए।

नबी (सल्ल॰) का आह्वान (मक्की काल के अंत तक) इस हैसियत से अपनी मज़बूती और दृढ़ता सिद्ध कर चुका था कि एक तरफ़ उसके पीछे एक उच्च सच्चरित्र, विशाल हृदय और विवेकशील ध्वजवाहक मौजूद था। जिसकी कार्यप्रणाली से यह तथ्य पूर्ण रूप से स्पष्ट हो चुका था कि वह इस आह्वान को अत्यन्त सफलता की मंज़िल तक पहुँचाने के लिए अटल संकल्प किए हुए है। दूसरी तरफ़ इस आह्वान और आमंत्रण में स्वयं एक ऐसा आकर्षण था कि वह दिलों और दिमाग़ों में उतरता चला जा रहा था। लेकिन उस समय तक कुछ हैसियतों से इस आह्वान में बहुत कुछ कमी बाक़ी थी।

एक, यह कि यह बात अभी पूरी तरह सिद्ध नहीं हुई थी कि इसको ऐसे अनुयायियों की एक पर्याप्त संख्या प्राप्त हो चुकी है जो उसके लिए अपनी हर चीज़ न्यौछावर कर देने के लिए, दुनिया भर से लड़ जाने के लिए, यहाँ तक कि अपने प्रिय रिश्तों-नातों को भी काट फेंकने के लिए तत्पर है। दूसरे, इस आह्वान की आवाज़ यद्यपि सारे देश में फैल गई थी, लेकिन इसके प्रभाव बिखरी हुई दशा में थे। इसको वह सामूहिक शक्ति प्राप्त नहीं हो सकी थी जो पुरानी जमी हुई अज्ञान-प्रणाली से निर्णायक मुक़ाबले करने के लिए ज़रूरी थी। तीसरे, देश का कोई भू-भाग ऐसा नहीं था जहाँ यह आह्वान क़दम जमाकर अपने अनुष्ठान को सुदृढ़ करता और फिर आगे बढ़ने का प्रयास करता। चौथे, उस समय तक इस आह्वान को व्यावहारिक जीवन के मामलों को अपने हाथ में लेकर चलाने का अवसर नहीं मिला था। इसलिए उन नैतिक सिद्धांतों का

प्रदर्शन नहीं हो सका था जिस पर यह आह्वान जीवन की पूरी व्यवस्था को स्थापित करना और चलाना चाहता था। बाद की घटनाओं ने वे अवसर जुटाए जिनसे ये चारों कमियाँ पूरी हो गई।

मक्की काल के अंतिम तीन-चार वर्षों से यसरिब (मदीना) में इस्लाम के सूर्य की किरणें निरन्तर निकल रही थीं वहाँ के लोग कई एक कारणों से अरब के दूसरे क़बीलों की अपेक्षा ज़्यादा आसानी के साथ इस रौशनी को क़बूल करते जा रहे थे। अन्ततः नुबूवत के बारहवें वर्ष हज के अवसर पर 75 व्यक्तियों का एक प्रतिनिधि दल नबी (सल्ल॰) से रात के अँधेरे में मिला। और उसने केवल यही नहीं कि इस्लाम स्वीकार किया बल्कि आप (सल्ल॰) को और आप (सल्ल॰) के अनुयायियों को अपने शहर में जगह देने की भी आमादगी ज़ाहिर की। उद्देश्य यह था कि अरब के विभिन्न क़बीलों और भूभागों में जो मुसलमान बिखरे हुए हैं वे यसरिब में एकत्र हो कर और यसरिब के मुसलमानों के साथ मिलकर एक सुसंगठित समाज बना लें। इस तरह यसरिब ने वास्तव में अपने आपको 'मदीनतुल इस्लाम' (इस्लाम नगर) की हैसियत से पेश किया और नबी (सल्ल॰) ने उसे क़बूल करके अरब में पहला दारुल इस्लाम (इस्लामी राज्य) बना लिया।

इस प्रस्ताव का अर्थ जो कुछ था उससे मदीना के लोग अनभिज्ञ न थे। इसका स्पष्ट अर्थ यह था कि एक छोटा-सा उपनगर अपने आपको पूरे देश की तलवारों और आर्थिक एवं नागरिक बाइकाट के मुक़ाबले में प्रस्तुत कर रहा था। दूसरी ओर मक्कावालों के लिए इस मामले का जो अर्थ होता था वह भी किसी से छिपा हुआ न था। वास्तव में इस तरह मुहम्मद (सल्ल॰) के नेतृत्व और मार्गदर्शन में इस्लाम के अनुयायी एक संगठित जत्थे के रूप में एकत्र हुए जाते थे। यह पुरानी प्रणाली के लिए मृत्यु संदेश था। तदधिक मदीना जैसे स्थान पर मुसलमानों की इस ताक़त के एकत्रित होने से क़ुरैश को यह और भी ख़तरा था कि यमन से सीरिया की ओर जो व्यापारिक राजमार्ग लाल सागर के तट के किनारे-किनारे जाता था, जिसके सुरक्षित रहने पर क़ुरैश और दूसरे बड़े-बड़े बहुदेववादी क़बीलों का आर्थिक जीवन निर्भर करता था, वह मुसलमानों के निशाने पर आ जाता था और उस समय (जो परिस्थितियाँ थीं उन्हें देखते हुए) मुसलमानों के लिए वास्तव में इसके सिवा और कोई उपाय भी न था कि इस व्यापारिक राजमार्ग पर अपने अधिकार को सुदृढ़ करें। अतएव नबी (सल्ल॰) ने (मदीना पहुँचने के बाद जल्द ही इस समस्या की ओर ध्यान दिया और इस सिलसिले में) दो महत्त्वपूर्ण उपाय अपनाए—एक यह कि मदीना और लाल सागर के मध्य उस राजमार्ग से मिले

हुए जो क़बीले आबाद थे उनके साथ वार्तालाप आरंभ किया, ताकि वे मैत्री-एकता या कम-से-कम निष्पक्ष होने का अनुबंध कर लें। अतएव इसमें आपको पूर्ण सफलता मिली। दूसरा उपाय आपने यह अपनाया कि क़ुरैश के क़ाफ़िलों को धमकी देने के लिए उस राजमार्ग पर निरंतर छोटी-छोटी सैनिक टुकड़ियाँ भेजनी शुरू कर दी और कुछ टुकड़ियों के साथ आप स्वयं भी गए। (उधर मक्कावाले भी मदीना की ओर विध्वंसकारी दल भेजते रहे।) स्थितियाँ यहाँ तक पहुँच गई थीं कि शाबान सन् 2 हिजरी (फ़रवरी या मार्च सन् 623 ई०) में क़ुरैश का एक बहुत बड़ा व्यापारिक क़ाफ़िला सीरिया से मक्का की ओर पलटते हुए उस क्षेत्र में पहुँचा जो मदीना के निशाने पर था। क्योंकि माल ज़्यादा था, रक्षक कम थे और ख़तरा बढ़ा हुआ था कि कहीं मुसलमानों का कोई शक्तिशाली दल उस पर छापा न मार दे, इसलिए क़ाफ़िले के सरदार अबू सुफ़ियान ने उस ख़तरेवाले क्षेत्र में पहुँचते ही एक आदमी को मदद लाने के लिए मक्का की ओर दौड़ा दिया। (उस व्यक्ति की सूचना पर) सारे मक्का में बेचैनी दौड़ गई। क़ुरैश के सभी बड़े-बड़े सरदार युद्ध के लिए तैयार हो गए। लगभग 1000 पुरुष योद्धा जिनमें 600 कवचधारी थे और जिनमें 100 सवारों का दल भी सम्मिलित था, पूर्ण भव्यता के साथ लड़ने को चले। उनके समक्ष केवल यही काम न था कि वे अपने क़ाफ़िले को बचा लाएँ, बल्कि वे यह भी संकल्प करके निकले थे कि प्रतिदिन के इस ख़तरे को सदैव के लिए ख़त्म कर दें। अब नबी (सल्ल०) ने, जो परिस्थितियों से सदैव अवगत रहते थे, महसूस किया कि फ़ैसले की घड़ी आ पहुँची है। (इस तरह भीतर और बाहर की अनेक कठिनाइयों के होते हुए आपने निर्णायक क़दम उठाने का इरादा कर लिया और यह) इरादा करके आपने अंसार और मुहाजिरीन (मदीना के मुसलानों और मक्का से गए लोगों) को एकत्र किया, और उनके समक्ष पूरी स्थिती स्पष्ट रूप में रख दी कि एक ओर उत्तर में व्यापारिक क़ाफ़िला है और दूसरी तरफ़ दक्षिण में क़ुरैश की सेना चली आ रही है, अल्लाह हा वादा है कि इन दोनों में से कोई एक तुम्हें मिल जाएगा। बताओ तुम किसके मुक़बले पर चलना चाहते हो? जवाब में एक बड़े गिरोह की तरफ़ से यह इच्छा प्रकट की गई की क़ाफ़िले पर आक्रमण किया जाए। लेकिन नबी (सल्ल०) के समक्ष कुछ और था, इसलिए आपने अपना सवाल दुहराया। इसपर मुहाजिरीन में से मिक़दाद बिन अम्र (रज़ि०) ने (और उनके बाद नबी (सल्ल०) की ओर से पुनः दोहराए जाने पर, अन्सार में से हज़रत सअद बिन मआज़ (रज़ि०) ने आवेगपूर्ण भाषण दिए जिसमें उन्होंने कहा,) ''ऐ अल्लाह के रसूल (सल्ल०) जिधर को आपका अल्लाह आदेश दे रहा है उधर को चलिए, हम आप (सल्ल०) के साथ हैं।'' इन भाषणों के बाद फ़ैसला हो गया

कि क़ाफ़िले की जगह क़ुरैश की सेना ही के मुक़ाबले पर चलना चाहिए। किन्तु यह निर्णय कोई साधारण निर्णय न था। जो लोग इस तंग वक़्त में लड़ाई के लिए उठे थे उनकी संख्या 300 से कुछ अधिक थी, लड़ाई का सामान भी बिलकुल अपर्याप्त था। इसलिए अधिकतर लोग मन में डर रहे थे और उन्हें ऐसा लग रहा था कि जानते-बूझते मौत के मुँह में जा रहे हैं। वैयक्तिक हितवादी मुनाफ़िक (कपटाचारी) इस अभियान को उन्माद की संज्ञा दे रहे थे, मगर नबी (सल्ल०) और सच्चे मोमिन यह समझ चुके थे कि यह समय जान की बाज़ी लगाने ही का है, इसलिए अल्लाह के भरोसे पर वे निकल खड़े हुए और वे सीधे दक्षिण-पश्चिम के मार्ग पर चल पड़े, जिस तरफ़ से क़ुरैश की सेना आ रही थी। यद्यपि आरंभ में क़ाफ़िले को लूटना अभीष्ट होता तो उत्तर-पश्चिम के मार्ग पर चले होते।

17 रमज़ान को बद्र के स्थान पर दोनों पक्षों का मुक़ाबला हुआ जिसमें मुसलमानों के ईमान की सत्यता, अल्लाह की ओर से विजय का इनाम प्राप्त करने में सफल हो गई और क़ुरैश शक्ति और अपने सारे गर्व के होते हुए साज़-सामान से रहित इन मर-मिटनेवालों के हाथों पराजित हो गए। इस निर्णायक विजय के बाद एक पश्चिमी शोधक के शब्दों में ''बद्र से पूर्व इस्लाम मात्र एक धर्म और राज्य था, किन्तु बद्र के पश्चात् वह राज्य-धर्म बल्कि स्वयं राज्य बन गया।''

वार्ताएँ

यह है वह भव्यतापूर्ण युद्ध जिसकी क़ुरआन की इस सूरा में समीक्षा की गई है किन्तु इस समीक्षा की शैली उन सभी समीक्षाओं से भिन्न है जो संसार के सम्राट अपनी सेना की विजय के बाद किया करते हैं।

इसमें सबसे पहले उन ख़ामियों को रेखांकित किया गया है जो नैतिकता की हैसियत से अभी मुसलमानों में बाक़ी थी, ताकि आगे वे अपनी और अधिक पूर्णता के लिए प्रयास करें।

फिर उनको बताया गया कि इस विजय में अल्लाह की सहायता का कितना बड़ा भाग था ताकि वे अपने साहस और वीरता पर न फूलें, बल्कि अल्लाह पर भरोसा और अल्लाह और रसूल के आदेशानुपालन की शिक्षा लें।

फिर उस नैतिक उद्देश को स्पष्ट किया गया है जिसके लिए मुसलमानों को यह सत्य-असत्य का युद्ध छेड़ना पड़ता है और उन नैतिक गुणों को स्पष्टतः बयान किया गया है जिनसे उन्हें इस युद्ध में सफलता मिल सकी है।

फिर बहुदेववादियों, कपटाचारियों और यहूदियों और उन लोगों को जो युद्ध में बंदी बनकर आए थे, निहायत शिक्षाप्रद ढंग से संबोधित किया गया।

फिर उन धनों के संबंध में जो युद्ध में हाथ आए थे, मुसलमानों को आदेश दिए गए हैं।

फिर युद्ध और संधि से संबधित क़ानून के संबंध में वे नैतिक आदेश दिए गए हैं जिनका स्पष्टीकरण् इस चरण में इस्लामी आह्वान के प्रवेश करने के पश्चात् आवश्यक था।

फिर इस्लामी राज्य के विधान संबंधी क़ानून की कुछ धाराओं का उल्लेख किया गया है जिनसे दारुल इस्लाम (इस्लामी-क्षेत्र) के सुरक्षित निवासियों की संवैधानिक हैसियत उन मुसलमानों से अलग कर दी गई है जो दारुल-इस्लाम की सीमा से बाहर रहते हों।



8. सूरा अल-अनफ़ाल

(मदीना में उतरी–आयतें 75)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) तुमसे लड़ाई में हासिल माल (अनफ़ाल) के बारे में पूछते हैं।[1] कहो, ''लड़ाई में प्राप्त होनेवाले ये माल तो अल्लाह और उसके रसलू के हैं, अतः तुम लोग अल्लाह से डरो और अपने आपस के सम्बन्ध ठीक करो और अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा मानो अगर तुम ईमानवाले हो।''[2] (2) सच्चे ईमानवाले तो वे लोग हैं जिनके दिल अल्लाह का ज़िक्र सुनकर काँप जाते हैं और जब अल्लाह की आयतें उनके सामने पढ़ी जाती हैं तो उनका ईमान बढ़ जाता है, और वे अपने रब पर भरोसा रखते हैं। (3) जो नमाज़ क़ायम करते हैं और जो कुछ हमने उनको दियाहै उसमें से (हमारे मार्ग में) ख़र्च करते हैं, (4) ऐसे ही लोग वास्तविक ईमानवाले हैं। उनके लिए उनके रब के पास बड़े दर्जे हैं, ग़लतियों की माफ़ी है और उत्तम रोज़ी है। (5) (इस लड़ाई में हासिल माल के मामले में भी वैसी ही स्थिति सामने आ रही है जैसी उस समय सामने आई थी जबकि) तेरा रब तुझे हक़ के साथ तेरे घर से निकाल लाया था और ईमानवालों में से एक गिरोह को यह अप्रिय था। (6) वे उस हक़ के विषय में तुझसे झगड़ रहे थे हालाँकि वह साफ़-साफ़ स्पष्ट हो चुका था। उनका हाल यह था कि वे मानो आँखों देखते मौत की

1. यहाँ 'अनफ़ाल' शब्द इस्तेमाल हुआ है। अनफ़ाल बहुवचन है नफ़्ल का। अरबी में नफ़्ल उस चीज़ को कहते है जो देय (वाजिब) या अधिकार से ज़्यादा हो। जब यह अधीन की ओर से हो तो इससे मुराद स्वेच्छापूर्वक सेवा होती है जो एक सेवक अपने स्वामी के लिए कर्तव्य से बढ़कर अपनी इच्छा से करता है, जैसे नफ़्ल नमाज़। और जब यह उसकी ओर से हो जिसके अधीन कोई हो तो इससे मुराद वह प्रदान और इनाम होता है जो स्वामी अपने सेवक को उसके हक़ से बढ़कर दे देता है। यहाँ अनफ़ाल का शब्द उन ग़नीमत के मालों के लिए इस्तेमाल हुआ है जो बद्र की लड़ाई में मुसलमानों के हाथ आए थे और उनके अनफ़ाल घोषित करने का अर्थ यह बात मुसलमानों के दिल में बिठाना है कि यह तुम्हारी कमाई नहीं है बल्कि अल्लाह का अनुग्रह और इमान है, जो उसने तुम्हें प्रदान किया है।
2. यह बात इसलिए कही गई कि इस माल के भंटवारे के बारे में कोई आदेश आने से पहले मुसलमानों में से विभिन्न गिरोह अपने-अपने हिस्से के लिए दावे पेश करने लगे थे।

ओर हाँके जा रहे हैं।

(7-8) याद करो वह मौक़ा जबकि अल्लाह तुमसे वादा कर रहा था कि दोनों गिरोहों में से एक तुम्हें मिल जाएगा।[3] तुम चाहते थे कि कमज़ोर गिरोह तुम्हें मिले। मगर अल्लाह का इरादा यह था कि अपने वचनों से सत्य को सत्य कर दिखाए और अधर्मियों की जड़ काट दे, ताकि सत्य, सत्य होकर रहे और असत्य, असत्य होकर रह जाए, चाहे अपराधियों को यह कितना ही अप्रिय हो।

(9) और वह अवसर जबकि तुम अपने रब से फ़रियाद कर रहे थे। जवाब में उसने कहा कि मैं तुम्हारी सहायता के लिए लगातार एक हज़ार फ़रिश्ते भेज रहा हूँ। (10) यह बात अल्लाह ने तुम्हें सिर्फ़ इसलिए बता दी कि तुम्हारे लिए शुभ-सूचना हो और तुम्हारे दिल इससे सन्तुष्ट हो जाएँ, वरना मदद तो जब भी होती है अल्लाह ही की ओर से होती है। यक़ीनन अल्लाह अत्यन्त प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।

(11) और वह समय जबकि अल्लाह अपनी ओर से ऊँघ के रूप में तुम्हें निश्चिन्तता और निर्भयता के मनोभाव से ढक रहा था,[4] और आसमान से तुम्हारे ऊपर पानी बरसा रहा था ताकि तुम्हें पाक करे और तुमसे शैतान की डाली हुई गन्दगी दूर करे और तुम्हारी हिम्मत बँधाए और इसके द्वारा तुम्हारे क़दम जमा दे।

(12) और वह समय जबकि तुम्हारा रब फ़रिश्तों को इशारा कर रहा था कि ''मैं तुम्हारे साथ हूँ, तुम ईमानवालों को जमाए रखो, मैं अभी इन अधर्मियों के दिलों में रोब डाले देता हूँ, अतः तुम उनकी गरदनों पर आघात और जोड़-जोड पर चोट लगाओ।''[5] (13) यह इसलिए कि उन लोगों ने अल्लाह और उसके रसूल का मुक़ाबला किया और जो अल्लाह और उसके रसूल का मुक़ाबला करे अल्लाह उसके लिए अत्यन्त कड़ी पकड़ करनेवाला है[6]—(14) यह है तुम लोगों की सज़ा, अब इसका मज़ा चखो, और तुम्हें मालूम हो कि सत्य का इनकार करनेवालों के लिए दोज़ख़ का अज़ाब है।

(15) ऐ लोगों जो ईमान लाए हो, जब तुम्हारा एक सेना के रूप में अधर्मियों से मुक़ाबला हो तो उनके मुकाबले में पीठ न फेरो, (16) जिसने ऐसे अवसर पर पीठ

3. अर्थात् क़ुरैश का सौदागरी क़ाफ़िला जो सीरिया की ओर से आ रहा था, या क़ुरैश की सेना जो मक्का से आ रही थी।
4. यही अनुभव मुसलमानों को उहुद की लड़ाई में हुआ था जैसा कि सूरा 3 (आले इमरान), आयत 154 में बयान हो चुका है।

फेरी—यह और बात है कि युद्ध-चाल के रूप में ऐसा करे या किसी दूसरी सेना से जा मिलने के लिए—तो वह अल्लाह के ग़ज़ब में घिर जाएगा। उसका ठिकाना जहन्नम होगा और वह पलटने की बहुत बुरी जगह है।

(17) अतः तथ्य यह है कि तुमने उनको क़त्ल नहीं किया बल्कि अल्लाह ने उनको क़त्ल किया और ऐ नबी, तूने नहीं फेंका बल्कि अल्लाह ने फेंका[7] (और ईमानवालों के हाथ जो इस कार्य में इस्तेमाल किए गए) तो यह इसलिए था किअल्लाह ईमानवालों को एक उत्तम परीक्षा से सफलतापूर्वक गुज़ार दे, यक़ीनन अल्लाह सुनने और जाननेवाला है। (18) यह मामला तो तुम्हारे साथ है और अधर्मियों के साथ मामला यह है कि अल्लाह उनकी चालों को कमज़ोर करनेवाला है। (19) (उन अधर्मियों से कह दो) ''अगर तुम फ़ैसला चाहते थे तो लो, फ़ैसला तुम्हारे सामने आ गया।[8] अब बाज़ आ जाओ, तुम्हारे ही लिए अच्छा है, वरना फिर पलटकर इसी मूर्खता को दोहराओगे तो हम भी यही सज़ा दोबारा देंगे और तुम्हारा जत्था, चाहे वह कितना ही

5. यहाँ तक बद्र की लड़ाई की जिन घटनाओं को एक-एक करके याद दिलाया गया है उसका उद्देश्य वास्तव में 'अनफ़ाल' शब्द का सार्थक होना व्यक्त करना है। शुरू में कहा गया था कि ग़नीमत के इस माल को अपनी मेहनत का फल समझकर उसके मालिक और स्वामी कहाँ बने जाते हो, यह तो वास्तव में ईश्वरीय देन है और दाता ख़ुद ही अपने माल के बारे में अधिकार रखता है। अब इसके प्रमाणस्वरूप ये घटनाएँ गिनवाई गई हैं कि इस विजय में ख़ुद ही हिसाब लगाकर देखो कि तुम्हारी अपनी मेहनत, साहस और वीरता का कितना हिस्सा था और अल्लाह की कृपा का कितना हिस्सा। इसलिए इसका फ़ैसला करना कि इसका किस तरह बँटवारा हो तुम्हारा नहीं बल्कि अल्लाह का काम है।
6. इस वाक्य में सम्बोधित क़ुरैश के अधर्मी लोग हैं, जो बद्र में पराजित हुए थे।
7. बद्र की लड़ाई में जब मुसलमानों और अधर्मियों की सेनाएँ एक-दूसरे के मुक़ाबिल हुई और सामान्यतः मार-काट का अवसर आया तो नबी (सल्ल०) ने मुट्ठी भर रेत हात में लेकर 'शाहतिल वुजूह' चेहरे बिगड़ जाएँ) कहेत हुए अधर्मियों की ओर फेंकी और इसके साथ ही आपके इशारे से मुसलमानों ने एक साथ अधर्मियों पर हमला कर दिया। इसी घटना की ओर इशारा है। मतलब यह है कि हाथ तो रसूल का था मगर चोट अल्लाह की ओर से थी।
8. मक्का से रवाना होते समय मुशरिकों (बहुदेववादियों) ने 'काबा' के परदे पकड़कर दुआ माँगी थी कि ऐ अल्लाह दोनों गिरोहों में से जो अच्छा है उसे विजय प्रदान कर।

ज़्यादा हो, तुम्हारे कुछ काम न आ सकेगा। अल्लाह ईमानवालों के साथ है।''

(20) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करो और आदेश सुनने के बाद उससे मुँह न फेरो। (21) उन लोगों की तरह न हो जाओ जिन्होंने कहा कि हमने सुना हालाँकि वे नहीं सुनते। (22) यक़ीनन अल्लाह की दृष्टि में अत्यन्त बुरे क़िस्म के जानवर वे बहरे-गूंगे लोग हैं जो बुद्धि से काम नहीं लेते। (23) अगर अल्लाह को मालूम होता कि उनमें कुछ भी भलाई है तो वह अवश्य उन्हें सुनने का सौभाग्य प्रदान करता (लेकिन भलाई के बिना) अगर वह उनको सुनवाता तो वे कतराते हुए मुँह फेर जाते।

(24) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह और उसके रसूल की पुकार को आगे बढ़कर स्वीकार करो, जबकि रसूल तुम्हें उस चीज़ की ओर बुलाए जो तुम्हें ज़िन्दगी प्रदान करनेवाली है, और जान रखो कि अल्लाह आदमी और उसके दिल के बीच आड़ है और उसी की ओर तुम समेटे जाओगे। (25) और बचो उस फ़ितने से जिसकी शामत विशिष्ट रूप से सिर्फ़ उन्हीं लोगों तक सीमित न रहेगी जिन्होंने तुममें से पाप कियाहो।[9] और जान रखो कि अल्लाह कड़ी सज़ा देनेवाला है। (26) याद करो वह समय जबकि तुम थोड़े थे, धरती में तुमको कमज़ोर समझा जाता था, तुम डरते रहते थे कि कहीं लोग तुम्हें मिटा न दें। फिर अल्लाह ने तुम्हें पनाह लेने का स्थान जुटाया, अपनी मदद से तुम्हारे हाथ मज़बूत किए और तुम्हें अच्छी रोज़ी पहुँचाई, शायद कि तुम कृतज्ञ बनो। (27-28) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जानते-बूझते अल्लाह और उसके रसूल के साथ विश्वासघात न करो, अपनी अमानतों[10] में ग़द्दारी के दोषी न बनो और जान रखो कि तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद वास्तव में परीक्षा-सामग्री हैं और अल्लाह के पास बदला देने के लिए बहुत कुछ है। (29) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अगर तुम अल्लाह से डरने की नीति अपनाओगे तो अल्लाह तुम्हारे लिए कसौटी जुटा

9. इससे मुराद वे सामुदायिक फ़ितने हैं जो आम संक्रामक रोग की तरह ऐसी शामत लाते हैं जिसमें सिर्फ़ गुनाह करनेवाले ही नहीं ग्रस्त होते बल्कि वे लोग भी मारे जाते हैं जो गुनाहगार और पापी समाज में रहना गवारा करते रहे हों।

10. 'अपनी अमानतों' से मुराद वे सभी दायित्व हैं जो किसी पर विश्वास करके उसे सौंपे जाएँ, चाहे वे वादे और वफ़ादारी की ज़िम्मेदारियाँ हों, या सामुदायिक समझौतों की या पार्टी (जमाअत) के रहस्यों की या व्यक्तिगत और दल के धनों की या किसी पद की जो किसी व्यक्ति पर भरोसा करते हुए पार्टी उसे समर्पित करे।

देगा[11] और तुम्हारी बुराइयों को तुमसे दूर करेगा और तुम्हारी ग़लतियाँ माफ़ करेगा। अल्लाह बड़ा अनुग्राहक है।

(30) वह समय भी याद करने के योग्य है जबकि सत्य का इनकार करनेवाले तेरे विरुद्ध उपाय सोच रहे थे कि तुझे बन्दी बना लें या क़त्ल कर डालें या देश निकाला दे दें।[12] वे अपनी चालें चल रहे थे और अल्लाह अपनी चाल चल रहा था, और अल्लाह सबसे अच्छी चाल चलनेवाला है। (31) जब उनको हमारी आयतें सुनाई जाती थीं तो कहते थे कि ''हाँ सुन लिया हमने, हम चाहें तो ऐसी ही बातें हम भी बना सकते हैं, ये तो वही पुरानी कहानियाँ हैं जो पहले से लोग कहते चले आ रहे हैं।'' (32) और वह बात भी याद है जो उन्होंने कही थी कि ''ऐ अल्लाह अगर यह वास्तव में सत्य है तेरी ओर से तो हमपर आसमान से पत्थर बरसा दे या कोई दर्दनाक अज़ाब हमपर ले आ।'' (33) उस समय तो अल्लाह उनपर अज़ाब उतारनेवाला न था जबकि तू उनके बीच मौजूद था और न अल्लाह का यह नियम है कि लोग क्षमा-याचना कर रहे हों और वह उनको अज़ाब दे दे। (34) लेकिन अब क्यों न वह उनपर अज़ाब उतारे जबकि वे प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) का रास्ता रोक रेह हैं, हालाँकि वे उस मसजिद के उचित व्यवस्थापक नहीं हैं। उसके उचित व्यवस्थापक तो सिर्फ़ डर रखनेवाले लोग ही हो सकते हैं, मगर ज़्यादातर लोग इस बात को नहीं जानते। (35) अल्लाह के घर के पास उन लोगों की नमाज़ क्या होती है? बस सीटियाँ बजाते और तालियाँ पीटते हैं। अतः अब लो, उस अज़ाब का मज़ा चखो, अपने उस सत्य के इनकार के बदले में जो तुम करते रहे हो।

11. कसौटी उस चीज़ को कहते हैं जो खरे और खोटे के अन्तर को स्पष्ट करती है। यही अर्थ 'फ़ुरक़ान' का भी है, इसलिए हमने 'फ़ुरक़ान' का अनुवाद कसौटी किया है। ईश्वरीय कथन का आशय यह है कि अगर तुम दुनिया में अल्लाह से डरते हुए काम करोगे तो अल्लाह तुम्हारे भीतर वह परख और विवेक की शक्ति पैदा कर देगा जिससे क़दम-क़दम पर तुम्हें ख़ुद मालूम होता रहेगा कि कौन-सी नीति ठीक है और कौन-सी ग़लत, कौन-सी राह ठीक है और अल्लाह की ओर जाती है और कौन-सी राह ग़लत है और शैतान से मिलाती है।

12. यह उस अवसर का उल्लेख है जबकि क़ुरैश की यह आशंका विश्वास बन चुकी थी कि अब मुहम्मद (सल्ल॰) भी मदीना चले जाएँगे। उस समय वे आपस में कहने लगे कि अगर यह व्यक्ति मक्का से निकल गया तो फिर ख़तरा हमारे काबू से बाहर हो जाएगा। अतएव उन्होंने आपके मामले में एक अंतिम निर्णय करने के लिए एक सभा की और इस बात पर आपस में मंत्रणा की कि इस ख़तरे को कैसे रोका जाए।

(36) जिन लोगों ने सत्य को मानने से इनकार किया है वे अपने माल अल्लाह के मार्ग से रोकने के लिए ख़र्च कर रहे हैं और अभी और ख़र्च करते रहेंगे, मगर आख़िरकार यही प्रयास उनके लिए पछतावे का कारण सिद्ध होंगे, फिर वे पराजित होंगे, फिर ये अधर्मी जहन्नम की ओर घेर लाए जाएँगे (37) ताकि अल्लाह गन्दगी को पवित्रता से छाँटकर अलग करे और हर प्रकार की गन्दगी को मिलाकर इकट्ठा करे, फिर उस पुलिन्दा को जहन्नम में झोंक दे। यही लोग असली दिवालिए हैं।

(38) ऐ नबी, इन अधर्मियों से कहो कि अगर अब भी बाज़ आ जाएँ तो जो कुछ पहले हो चुका है उसे क्षमा कर दिया जाएगा, लेकिन अगर ये पुनः उसी पिछली नीति को अपनाएँगे तो विगत क़ौमों के साथ जो कुछ हो चुका है वह सबको मालूम है।

(39-40) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, इन अधर्मियों से युद्ध करो यहाँ तक कि फ़ितना बाक़ी न रहे और धर्म पूरा का पूरा अल्लाह के लिए हो जाए। फिर अगर वे फ़ितने से रुक जाएँ तो उनके कर्मों का देखनेवाला अल्लाह है, और अगर वे न मानें तो जान रखो कि अल्लाह तुम्हारा संरक्षक है और वह सबसे अच्छा संरक्षक और सहायक है।

(41) और तुम्हें मालूम हो कि जो कुछ ग़नीमत (शत्रु-धन) के रूप में माल तुमने प्राप्त किया है[13] उसका पाँचवाँ भाग अल्लाह और उसके रसूल और नातेदारों और अनाथों और मुहताजों और मुसाफ़िरों के लिए है। अगर तुम ईमान लाए हो अल्लाह पर और उस चीज़ पर जो फ़ैसले के दिन, अर्थात् दोनों सेनाओं की मुठभेड़ के दिन हमने अपने बन्दे पर उतारी थी,[14] (तो यह हिस्सा सहर्ष अदा करो)। अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(42) याद करो वह समय जबकि तुम घाटी के इस ओर थे और वे दूसरी ओर पड़ाव डाले हुए थे। और क़ाफ़िला तुमसे नीचे (तट) की ओर था। अगर कहीं पहले से तुम्हारे और उनके बीच मुक़ाबले का निश्चय हो चुका होता तो तुम ज़रूर ही इस अवसर पर पहलू बचा जाते, लेकिन जो कुछ सामने आया वह इसलिए था कि जिस बात का

13. यहाँ उस ग़नीमत के माल के बँटवारे का क़ानून बताया है जिसके सम्बन्ध में वार्ता के शुरू में कहा गया था कि यह अल्लाह का इनाम है जिसके बारे में फ़ैसला करने का अधिकार अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) ही को प्राप्त है। अब वह फ़ैसला बयान कर दिया गया है।

14. अर्थात् वह समर्थन और सहायता जिसके कारण तुम्हें विजय प्राप्त हुई और जिसके कारण ही तुम्हें यह ग़नीमत का माल हासिल हुआ।

फ़ैसला अल्लाह कर चुका था उसे प्रकाश में ले आए ताकि जिसे तबाह होना है वह प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ तबाह हो और जिसे ज़िन्दा रहना है वह प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ ज़िन्दा रहे, यक़ीनन अल्लाह सुनने और जाननेवाला है।

(43) और याद करो वह समय जबकि ऐ नबी, अल्लाह उनको तुम्हारे ख़्वाब (सपने) में थोड़ा दिखा रहा था।[15] अगर कहीं वह तुम्हें उनकी संख्या ज़्यादा दिखा देता तो ज़रूर तुम लोग साहस छोड़ बैठते और लड़ाई के मामले में झगड़ा शुरू कर देते, लेकिन अल्लाह ही ने इससे तुम्हें बचाया, यक़ीनन वह सीनों का हाल तक जानता है।

(44) और याद करो जबकि मुक़ाबले के समय अल्लाह ने तुम लोगों की निगाहों में दुश्मनों को थोड़ा दिखाया और उनकी निगाहों में तुम्हें कम करके पेश किया ताकि जो बात होनी थी उसे अल्लाह प्रकाश में ले आए, और आख़िरकार सारे मामले अल्लाह की ही ओर पलटते हैं।

(45) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब किसी गिरोह से तुम्हारा मुक़ाबला हो तो जमे रहो और अल्लाह को बहुत ज़्यादा याद करो, उम्मीद है कि तुम्हें सफलता प्राप्त होगी। (46) और अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा मानो और आपस में झगड़ो नहीं, नहीं तो तुमहारे अन्दर कमज़ोरी पैदा हो जाएगी और तुम्हारी हवा उखड़ जाएगी। सब्र[16] से काम लो, यक़ीनन अल्लाह सब्र करनेवालों के साथ है (47) और उन लोगों के-से रंग-ढंग न अपनाओ जो अपने घरों से इतराते और लोगों को अपनी शान दिखाते हुए निकलें और जिनकी नीति यह है कि अल्लाह के मार्ग से रोकते हैं, जो कुछ वे कर रहे हैं वह अल्लाह की पकड़ से बाहर नहीं है।

(48) तनिक ध्यान करो उस समय का जबकि शैतान ने उन लोगों की करतूतें उनकी दृष्टि में प्रिय बनाकर दिकाई थी और उनसे कहा था कि आज कोई तुमपर विजयी नहीं हो सकता और यह कि मैं तुम्हारे साथ हूँ। मगर जब दोनों गिरोहों का आमना-सामना हुआ तो वह उलटे पाँव फिर गया और कहने लगा कि मेरा-तुम्हारा साथ नहीं है, मैं वह कुछ देख रहा हूँ जो तुम लोग नहीं देखते। मुझे ईश्वर से डर लगता है और ईश्वर बड़ी कड़ी सज़ा देनेवाला है। (49) जबकि कपटाचारी और वे सब लोग जिनके दिलों को

15. यह उस समय की बात है जब नबी (सल्ल॰) मुसलमानों को लेकर मदीना से निकल रहे थे या रास्ते में किसी पड़ाव पर थे और यह प्रमाणित न हुआ था कि अधर्मियों की सेना वास्तव में कितनी है। उस समय नबी (सल्ल॰) ने ख़्वाब में उस सेना को देखा और जो दृश्य आपके सामने लाया गया उससे आपने अनमान लगाया कि दुश्मनों की संख्या कुछ बहुत ज़्यादा नहीं है।

रोग लगा हुआ है, कह रहे थे कि इन लोगों को तो इनके धर्म ने सनक में डाल रखा है।[17] हालाँकि अगर कोई अल्लाह पर भरोसा करे तो यक़ीनन अल्लाह अत्यन्त प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है। (50,51) क्या ही अच्छा होता कि तुम उस स्थिति को देख सकते जबकि फ़रिश्ते क़त्ल होनेवाले अधर्मियों की आत्माओं को ग्रस्त कर रहे थे। वे उनके चेहरों और उनके कूल्हों पर चोटें लगाते जाते थे और कहते जाते थे, ''लो अब जलने की सज़ा भुगतो, यह वह बदला है जिसका सामान तुम्हारे अपने हाथों ने पहले से ही जुटा रखा था, वरना अल्लाह तो अपने बन्दो पर अत्याचार करनेवाला नहीं है।'' (52) यह मामला उनके साथ उसी तरह पेश आया उसी तरह पेश आया जिस तरह फ़िरऔन के लोगों और उनसे पहले के दूसरे लोगों के साथ पेश आता रहा है कि उन्होंने अल्लाह की आयतों को मानने से इनकार किया और अल्लाह ने उनके गुनाहों पर उन्हें पकड़ लिया। अल्लाह शक्तिवान और कठोर सज़ा देनेवाला है। (53) यह अल्लाह के इस नियम के अनुसार हुआ कि वह किसी नेमत को जो उसने किसी क़ौम को प्रदान की हो उस समय

16. अर्थात् अपने मनोभावों और इच्छाओं को नियंत्रित रखो। जल्दबाज़ी, घबराहट, निराशा, लोभ और अनुचित जोश से बचो। ठण्डे दिल और जँची-तुली निर्णय-शक्ति के साथ काम करो। ख़तरे और कठिनाइयाँ सामने हों तो तुम्हारे पाँव लड़खड़ाने न पाएँ। उत्तेजनाजनक अवसर सामने आएँ तो क्रोध के आवेग में तुमसे कोई अनुचित काम न हो जाए। मुसीबतों का हमला हो और स्थिति बिगड़ती दीख पड़ रही हो तो विकलता के कारण तुम्हारी चेतना अस्त-व्यस्त न हो जाए। उद्देश्य की प्राप्ति की उत्कट अभिलाषा से विकल होकर या किसी अर्थ परिपक्व उपाय को सरसरी नज़र में प्रभावकारी देखकर तुम्हारे इरादे शीघ्र ही पराजित न हों। और अगर कभी सांसारिक लाभ और मन के आस्वादन के प्रलोभन तुम्हें अपनी ओर लुभा रहे हों तो उनके मुक़ाबले में भी तुम्हारा मन इतना कमज़ोर न हो कि आप से आप उसकी ओर खिंच जाओ। ये सभी अर्थ सिर्फ़ एक शब्द 'सब्र' (धैर्य) में निहित हैं, और अल्लाह कहता है कि जो लोग इन सभी हैसियतों से धैर्यवान हों तो मेरा समर्थन उन्हीं को प्राप्त है।
17. अर्थात् मदीना के कपटाचारी और वे सब लोग जो दुनिया-परस्ती और अल्लाह से बेख़बरी के रोग में ग्रस्त थे, यह देखकर कि मुसलमानों की मुट्ठी-भर साधनों से वंचित जमाअत क़ुरैश जैसी भारी ताक़त से टकराने के लिए जा रही है, आपस में कहते थे कि ये लोग अपने धार्मिक ज़ोश में दीवाने हो गए हैं। इस लड़ाई में इनका विनाश निश्चित है, मगर इस नबी ने कुछ ऐसा जादू इनपर फूँक रखा है कि इनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है और आँखों देखे ये मौत के मुँह में चले जा रहे हैं।

तक नहीं बदलता जब तक कि वह क़ौम ख़ुद अपनी नीति को नहीं बदल देती। अल्लाह सब कुछ सुनने और जाननेवाला है। (54) फ़िरऔनियों और उनसे पहले की क़ौमों के साथ जो कुछ हुआ वह इसी नियम के अनुसार था। उन्होंने अपने रब की आयतों (निशानियों) को झुठलाया, तब हमने उन लोगों के पापो के बदले में उन्हें तबाह किया और फ़िरऔनियों को डुबो दिया। ये सब ज़ालिम लोग थे।

(55) यक़ीनन अल्लाह की दृष्टि में ज़मीन पर चलनेवाले प्राणियों में सबसे बुरे वे लोग हैं जिन्होंने सत्य को मानने से इनकार कर दिया। फिर किसी तरह वे इसे स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। (56) (विशेषतः) उनमें से वे लोग जिनके साथ तुने सन्धि की फिर वे हर अवसर पर उसे भंग करते हैं और तनिक भी अल्लाह से नहीं डरते।[18] (57) अतः अगर ये लोग तुम्हें लड़ाई में मिल जाएँ तो इनकी ऐसी ख़बर लो कि इनके बाद दूसरे जो लोग ऐसी नीति अपनानेवाले हों वे विक्षिप्त हो जाएँ।[19] आशा है कि वचन भंग करनेवालों के इस परिणाम से वे शिक्षा ग्रहण करेंगे। (58) और अगर कभी तुम्हें किसी क़ौम से विश्वासघात की आशंका हो तो उसकी संधि को खुल्लम-खुल्ला उनके आगे फेंक दो,[20] यक़ीनन ही अल्लाह विश्वासघातियों को पसन्द नहीं करता। (59) सत्य का इनकार करनेवाले इस भ्रम में न रहें कि वे बाज़ी ले गए, यक़ीनन ही वे हमें हरा नहीं सकते।

(60) और तुम लोग, जहाँ तक तुम्हारा बस चले, ज़्यादा से ज़्यादा शक्ति और

18. यहाँ विशेष रूप से इशारा है यहूदियों की ओर जिनसे नबी (सल्ल०) की संधि और समझौता था और उनके बावजूद वे आपके और मुसलमानों के विरोध में तत्पर थे। बद्र की लड़ाई के तुरन्त बाद ही उन्होंने क़ुरैश को बदले के लिए भड़काना शुरू कर दिया था।
19. इसका अर्थ यह है कि अगर किसी क़ौम से हमारी संधि हो और फिर वह सन्धि सम्बन्धी दायित्वों को पीठ-पीछे डालकर हमारे विरुद्ध किसी लड़ाई में हिस्सा ले, तो हमें भी संधि के नैतिक दायित्वों से छुट्टी मिल जाएगी और हमें अधिकार होगा कि उससे लड़ें। और अगर किसी क़ौम से हमारी लड़ाई हो रही हो और हम देखें कि दुश्मन के साथ एक ऐसी क़ौम के व्यक्ति भी लड़ाई में शरीक हैं जिससे हमारी संधि है तो हम उनको क़त्ल करने और उनसे दुश्मन का-सा मामला करने में हरगिज़ किसी तरह से नहीं झिझकेंगे।
20. अर्थात् उसे साफ़-साफ़ सूचित कर दो कि हमारी-तुम्हारी कोई सन्धि बाक़ी नहीं है, क्यों कि तुम प्रतिज्ञा की अवहेलना कर रहे हो।

तैयार बँधे रहनेवाले घोड़े उनके मुक़ाबले के लिए जुटाए रखो[21] ताकि उसके द्वारा अल्लाह के और अपने दुश्मनों को और उन दूसरे दुश्मनों को भयभीत कर दो जिन्हें तुम नहीं जानते, मगर अल्लाह जानता है। अल्लाह के मार्ग में जो कुछ तुम ख़र्च करोगे उसका पूरा-पूरा बदला तुम्हारी ओर पलटाया जाएगा और तुम्हारे साथ हरगिज़ ज़ुल्म न होगा।

(61) और ऐ नबी, अगर दुश्मन सुलह और सलामती की ओर झुके तो तुम भी इसके लिए तैयार हो जाओ और अल्लाह पर भरोसा करो, यक़ीनन वही सब कुछ सुननेवाला और जाननेवाला है। (62,63) और अगर वे धोखे की नीयत रखते हों तो तुम्हारे लिए अल्लाह काफ़ी है। वही तो है जिसने अपनी सहायता से और ईमानवालों के द्वारा तुम्हारी हिमायत की और ईमानवालों के दिल एक-दूसरे के साथ जोड़ दिए। तुम सारी ज़मीन का सारा धन भी ख़र्च कर डालते तो इन लोगों के दिल न जोड़ सकते थे, मगर वह अल्लाह है जिसने इन लोगों के दिल जोड़े; यक़ीनन वह बड़ा प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है। (64) ऐ नबी, तुम्हारे लिए और तुम्हारे अनुयायी ईमानवालों के लिए तो बस अल्लाह काफ़ी है।

(65) ऐ नबी, ईमानवालों को जंग पर उभारो। अगर तुममें से बीस आदमी सब्र करनेवाले हों तो वे दो सौ पर विजयी होंगे और अगर सौ आदमी ऐसे हों तो सत्य का इनकार करनेवालों में से हज़ार आदमियों पर भारी रहेंगे, क्योंकि वे ऐसे लोग हैं जो समझ नहीं रखते।[22] (66) अच्छा, अब अल्लाह ने तुम्हारा बोझ हलका किया और उसे

21. मतलब यह है कि तुम्हारे पास युद्ध का सामान और स्थायी रूप से एक सेना हर समय तैयार रहनी चाहिए, ताकि ज़रूरत पड़ने पर तुरन्त युद्ध की कार्रवाई कर सको। यह न हो कि ख़तरा सिर पर आ जाने के बाद घबराहट में जल्दी-जल्दी स्वयं-सेवियों और हथियार व रसद का सामान जुटाने की कोशिश करो और इस बीच में कि यह तैयारी मुकम्मल हो, दुश्मन अपना काम कर जाए।

22. आजकल की परिभाषा में जिस चीज़ को आंतरिक शक्ति या नैतिक शक्ति कहते हैं, अल्लाह ने इसी को ज्ञान, विवेक और समझ-बूझ से अभिव्यंजित किया है। जिस व्यक्ति को अपने मक़सद का सही ज्ञान हो और ठण्डे दिल से ख़ूब सोच-समझकर इसलिए लड़ रहा हो कि जिस चीज़ के लिए वह जान की बाज़ी लगाने आया है वह उसके व्यक्तिगत जीवन से ज़्यादा मूल्यवान है और उसके बरबाद हो जाने के बाद जीना बेक़ीमत है, वह अविवेक से लड़नेवाले आदमी से कई गुनी ज़्यादा शक्ति रखता है यद्यपि शारीरिक शक्ति में दोनों के बीच कोई अन्तर न हो।

मालूम हुआ कि अभी तुममें कमज़ोरी है, अतः अगर तुममें से सौ आदमी सब्र करनेवाले हों तो वे दो सौ पर और हज़ार आदमी ऐस हों तो दो हज़ार पर अल्लाह के हुक्म से विजयी होंगे,[23] और अल्लाह उन लोगों के साथ है जो सब्र से काम लेनेवाले हैं।

(67) किसी नबी के लिए यह उचित नहीं है कि उसके पास क़ैदी हों जब तक कि वह ज़मीन में दुश्मनों को अच्छी तरह कुचल न दे। तुम लोग दुनिया के लाभ चाहते हो, हालाँकि अल्लाह के सामने आख़िरत है, और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है। (68) अगर अल्लाह का लेख पहले न लिखा जा चुका होता, तो जो कुछ तुम लोगों ने लिया है उसके बदले में तुमके बड़ी सज़ा दी जाती। (69) अतः जो कुछ तुमने माल हासिल किया है उसे खाओ कि वह हलाल (वैध) और पाक है और अल्लाह से डरते रहो।[24] यक़ीनन अल्लाह माफ़ करनेवाला और दयावान है।

23. इसका यह अर्थ नहीं है कि पहले एक और दस का अनुपात था और अब चूँकि तुममें कमज़ोरी आ गई है इसलिए एक और दो का अनुपात निर्धारित कर दिया गया है। बल्कि इसका सही अर्थ यह है कि सैद्धान्तिक और आदर्श रूप में तो ईमानवाले और अधर्मियों के बीच एक और दस ही का अनुपात है, लेकिन चूँकि अभी तुम लोगों का नैतिक प्रशिक्षण पूर्ण नहीं हुआ है और अभी तक तुम्हारी चेतना और तुम्हारी समझ-बूझ का पैमाना प्रौढता की सीमा तक नहीं पहुँचा है इसलिए इस समय घटाकर तुमसे यह अपेक्षा की जाती है कि अपने से दो गुनी शक्ति से टकराने में तो तुम्हें कोई संकोच न होना चाहिए। ध्यान रहे यह कथन सन् 02 हि॰ का है जबकि मुसलिमों में बहुत-से लोग अभी ताज़ा-ताज़ा ही इस्लाम में दाखिल हुए थे और उनका प्रशिक्षण प्रारंभिक स्थिति में था।

24. बद्र की लड़ाई से पहले सूरा-47 (मुहम्मद) में लड़ाई के विषय में जो प्रारंभिक आदेश दिए गए थे उनमें लड़ाई में हाथ आनेवाले क़ैदियों से अर्थदण्ड (फ़िदया) लेने की अनुमति तो दे दी गई थी, लेकिन इसके साथ शर्त यह लगाई गई थी कि पहले दुश्मन की ताक़त को अच्छी तरह कुचल दिया जाए फिर क़ैदी पकड़ने की चिन्ता की जाए। इस आदेश की दृष्टि से मुसलमानों ने बद्र में जो क़ैदी पकड़े और उसके बाद उनसे जो फ़िदया वुसूल किया, वह था तो अनुमति के अनुसार, मगर ग़लती यह हुई कि ''दुश्मन की ताक़त को कुचल देने'' की जो शर्त पहले रखी गईथी उसे पूरा करने से पहले ही मुसलमान दुश्मनों को क़ैद करने और दुश्मन का छोड़ा हुआ माल एकत्र करने में लग गए। इसी बात को अल्लाह ने नापसन्द किया। क्योंकि अगर ऐसा न किया जाता और मुसलमान अधर्मियों का पीछा करते तो इस अवसर पर क़ुरैश की ताक़त तोड़ दी जाती।

(70) ऐ नबी, तुम लोगों के क़बज़े में जो क़ैदी हैं उनसे कहो कि अगर अल्लाह को मालूम हुआ कि तुम्हारे दिलों में कुछ भलाई है तो वह तुम्हें उससे बढ़-चढ़कर देगा जो तुमसे लिया गया है और तुम्हारी ख़ताएँ माफ़ करेगा, अल्लाह क्षमाशील और दयावान है। (71) लेकिन अगर वे तेरे साथ विश्वासघात का इरादा रखते हैं तो इससे पहले वे अल्लाह के साथ विश्वासघात कर चुके हैं, अतएव उसी की सज़ा अल्लाह ने उन्हें दी कि वे तेरे क़ाबू में आ गए; अल्लाह सब कुछ जानता और गहरी समझवाला है।

(72) जिन लोगों ने ईमान क़बूल किया और घर-बार छोड़ा और अल्लाह के मार्ग में अपनी जाने लड़ाई और अपने माल खपाए और जिन लोगों ने घरबार छोड़नेवालों को जगह दी और उनकी मदद की, वही वास्तव में एक-दूसरे के संरक्षक मित्र हैं। रहे वे लोग जिन्होंने ईमान तो क़बूल किया मगर घर-बार छोड़कर (इस्लामी राज्य में) आ नहीं गए तो उनसे तुम्हारा संरक्षण का कोई सम्बन्ध नहीं है, जब तक कि वे घर-बार छोड़कर न आ जाएँ।[25] हाँ, अगर वे धर्म (दीन) के मामले में तुमसे सहायता माँगे तो उनकीसहायता करनी तुमपर अनिवार्य है, लेकिन किसी ऐसी क़ौम के ख़िलाफ़ नहीं जिससे तुम्हारा समझौता हो।[26] जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उसे देखता है। (73) जिन लोगों को सत्य से इनकार है वे एक दूसरे की हिमायत करते हैं। अगर तुम यह न करोगे तो ज़मीन में फ़ितना (उपद्रव) और बड़ा बिगाड़ पैदा होगा।[27]

(74,75) जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अल्लाह के मार्ग में घर-बार छोड़े और संघर्ष किया और जिन्होंने पनाह दी और सहायता की वही सच्चे ईमानवाले हैं। उनके लिए ख़ताओं की माफ़ी है और उत्तम रोज़ी है, और जो लोग बाद में ईमान लाए और घर-बार छोड़कर आ गए और तुम्हारे साथ मिलकर संघर्ष एवं प्रयास करने लगे वे भी तुम ही में शामिल हैं। मगर अल्लाह की किताब में ख़ून के रिश्तेदार एक-दूसरे के

25. यहाँ 'विलायत' शब्द आया है, जो अरबी भाषा में हिमायत, मदद, पृष्ठपोषण, मित्रता, सम्बन्ध, नाता, संरक्षण, सरपरस्ती और इससे मिलते-जुलते अर्थों के लिए बोला जाता है। इस आयत के संदर्भ में स्पष्टतः इससे मुराद वह नाता है जो एक राज्य का अपने नागरिकों से और नागरिकों का अपने राज्य से और नागरिकों के बीच आपस में होता है। अतः यह आयत वैधानिक एवं राजनैतिक 'विलायत' को इस्लामी राज्य की भौमिक सीमाओं तक सीमित कर देती है, और उन सीमाओं से बाहर के मुसलमानों को इस विशिष्ट सम्बन्ध से वंचित ठहराती है। इस विलायत से वंचित होने के क़ानूनी परिणाम अत्यन्त व्यापक हैं जिनको विस्तृत रूप से पेश करने का यहाँ मौक़ा नहीं है।

ज़्यादा हक़दार हैं,[28] यक़ीनन अल्लाह हर चीज़ को जानता है।

● ● ●

26. ऊपर के वाक्य में इस्लामी राज्य के बाहर के मुसलमानों को 'राजनीतिक विलायत' (संरक्षण) के संबंध से वंचित ठहराया गया था। अब यह आयत इस चीज़ को स्पष्ट करती है कि इस सम्बन्ध से वंचित होने के बावजूद वे, 'धार्मिक बन्धुत्व' के सम्बन्ध से वंचित नहीं हैं। अगर कहीं उनपर ज़ुल्म हो रहा हो और वे इस्लामी भ्रातृत्व (बिरादरी) के सम्बन्ध के आधार पर इस्लामी अधिक्षेत्र की हुकूमत और उसके निवासियों से सहायता माँगे तो उनका कर्तव्य है कि अपने पीड़ित भाइयों की मदद करें। लेकिन इसके बाद और भी स्पष्ट करते हुए कहा गया कि उन धर्म सम्बन्धी भाइयों की सहायता का कर्तव्य अन्धाधुन्ध न निभाया जाएगा। बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय दायित्वों और नैतिक मर्यादाओं का ध्यान रखते हुए ही निभाया जा सकेगा। अगर ज़ुल्म करनेवाली क़ौम से इस्लाम राज्य के सन्धि एवं समझौते के सम्बन्ध हों तो इस दशा में पीड़ित मुसलमानों की कोई ऐसी सहायता नहीं की जा सकेगी जो समझौतों एवं संविदाओं के नैतिक दायित्वों के विरूद्ध पड़ती हो।

27. अर्थात् अगर इस्लामी अधिक्षेत्र के मुसलमान एक-दूसरे के 'वली' (संरक्षक) न बनें, और अगर घरबार छोड़कर इस्लामी अधिक्षेत्र में न आनेवाले और अधर्म-क्षेत्र में रहने और निवास करनेवाले मुसलमानों को इस्लामी अधिक्षेत्र के मुसलमान अपने राजनीतिक विलायत से ख़ारिज न समझें, और अगर बाहर के पीड़ित मुसलमानों के मदद माँगने पर उनकी सहायता न की जाए, और अगर इसके साथ इस नियम की पाबन्दी भी न की जाए कि जिस क़ौम से इस्लामी हुकूमत का समझौता हो उसके विरुद्ध मुसलमानों की मदद न की जाएगी, और अगर मुसलमान अधर्मियों से दोस्ती का सम्बन्ध समाप्त न करें; तो ज़मीन में उपद्रव और बड़ा बिगाड़ पैदा होगा।

28. अर्थात् विरासत इस्लामी बन्धुत्व के आधार पर नहीं बल्कि नातेदारी के आधार पर बँटेगी। और इस आदेश की व्याख्या नबी (सल्ल॰) के इस आदेश से होनी है कि सिर्फ़ मुसलमान नातेदार ही एक-दूसरे के वारिस होंगे। मुसलमान किसी अधर्मी या अधर्मी किसी मुसलमान का वारिस न होगा।

9. अत-तौबा

नाम

यह सूरा दो नामों से प्रसिद्ध है। एक अत्तौबा, दूसरा -अल-बराअत। तौबा इस दृष्टि से कि इसमें एक जहग कुछ ईमानवालों के क़ुसूरों के माफ़ करने का उल्लेख है। अल-बराअत इस दृष्टि से कि इसके आरंभ में बहुदेववादियों के संबंध में उत्तरदायित्व से मुक्त होने की उद्घोषणा की गई है।

बिसमिल्लाह न लिखने का कारण

इस सूरा के आरंभ में ''बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'' नहीं लिखी जाती क्योंकि नबी (सल्ल॰) ने स्वयं नहीं लिखवाई थी।

अवतरणकाल और सूरा के विभिन्न अंश

यह सूरा तीन अभिभाषणों पर आधारित है।

पहला भाषण सूरा के आरंभ से आयत 37 तक चलता है। इसका अवतरण-काल ज़ी-क़ादा सन् 09 हिजरी या इसके लगभग है। नबी (सल्ल॰) इस वर्ष हज़रत अबू बक्र (रज़ि॰) को हाजियों का अमीर (अध्यक्ष) नियुक्त करके मक्का भेज चुके थे कि यह अभिभाषण अवतरित हुआ और नबी (सल्ल॰) ने तुरंत हज़रत अली (रज़ि॰) को उनके पीछे भेजा, ताकि हज के अवसर पर सम्पूर्ण अरब के प्रतिनिधि सम्मेलन में इसे सुनाएँ और इसके अनुसार जो कार्य-प्रणाली प्रस्तावित की गई थी उसकी घोषणा कर दें।

दूसरा अभिभाषण आयत 38 से आयत 72 तक चलता है। यह रजब सन् 09 हिजरी या इससे कुछ पहले अवतरित हुआ जबकि नबी (सल्ल॰) तबूक के अभियान की तैयारी कर रहे थे। इसमें ईमानवालों को जिहाद पर उभारा गया है और (कपटाचारियों और कमज़ोर ईमानवालों की) सख़्ती के साथ भर्त्सना की गई है।

तीसरा अभिभाषण आयत 73 से आरंभ होकर सूरा के साथ समाप्त होता है और यह तबूक के अभियान से लौटने पर अवतरित हुआ। इसमें कपटाचारियों की गतिविधियों पर चेतावनी, तबूक के अभियान में पीछे रहजानेवालों को डाँट-डपट और उन सच्चे ईमानवालों पर भर्त्सना के साथ क्षमादान की घोषणा है, जो अपने ईमान में सच्चे तो थे किन्तु अल्लाह की राह में जिहाद में हिस्सा नहीं लिया था।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

जिस घटनाक्रम से इस सूरा के विषय-वस्तुओं का संबंध है, उसका आरम्भ

हुदैबिया से होता है। हुदैबिया की संधि तक अरब के लगभग एक तिहाई भूभाग में इस्लाम एक सुसंगठित समाज का धर्म और एक पूर्ण स्वतंत्र राज्य बन गया था। हुदैबिया की संधि जब हुई तो इस धर्म को यह अवसर भी प्राप्त हो गया कि अपने प्रभावों को अपेक्षाकृत अधिक शांति और निश्चिन्तता के वातावरण में चारों ओर फैला सके। इसके पश्चात् घटनाओं की गति ने दो बड़े मार्ग ग्रहण किए जिनका अंत आगे चलकर अत्यंत महत्त्वपूर्ण परिणामों पर हुआ। उनमें से एक का संबंध अरब से था, दूसरे का रूम साम्राज्य से।

अरब पर अधिकार-प्राप्ति

अरब में हुदैबिया की संधि के पश्चात् आमंत्रण एवं संदेश प्रचार और शक्ति को सुदृढ़ करने के जो उपाय अपनाए गए उनकी वजह से दो वर्ष के भीतर ही इस्लाम का प्रभाव-क्षेत्र इतना विस्तृत हो गया कि क़ुरैश के अधिक जोशीले तत्त्वों में धैर्य की शक्ति न रही और उन्होंने हुदैबिया की संधि को भंग कर दिया। वे इस प्रतिबंध से मुक्त होकर इस्लाम से एक अंतिम निर्णायक मुक़ाबला करना चाहते थे। लेकिन नबी (सल्ल॰) ने उनके इस संधि-भंग के पश्चात् उनको संभलने का कोई मौक़ा न दिया और सहसा मक्का पर आक्रमण करके रमज़ान सन् 08 हिजरी में उसपर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली। इसके पश्चात् पुरातन अज्ञान-प्रणाली ने अंतिम हत-चेष्टा हुनैन के मैदान में की। किन्तु यह चेष्टा भी असफल हुई और हुनैन की पराजय के साथ अरब के भाग्य का निश्चित निर्णय हो गया कि उसे अब दारुल-इस्लाम बनकर रहना है। इस घटना पर पूरा एक वर्ष भी न व्यतीत होने पाया कि अरब का अधिकांश भूभाग इस्लाम के अधिकृत क्षेत्र में प्रविष्ट हो गया।

तबूक का युद्ध

रूमी राज्य के साथ सँघर्ष का आरंभ मक्का की विजय से पूर्व ही हो चुका था। नबी (सल्ल॰) ने हुदैबिया के बाद इस्लाम के संदेश को फैलाने के लिए जो प्रतिनिधि मंडल अरब के विभिन्न भागों में भेजे थे उनमें से उत्तर की ओर सीरिया की सीमा से लगे हुए (ईसाई) क़बीलों में (और एक बुसरा के ईसाई सरदार के पास भी गया था। लेकिन उस प्रतिनिधि-मंडल के अधिकतर लोगों को मार डाला गया था।) इन कारणों से नबी (सल्ल॰) ने जुमादल ऊला सन् 08 हिजरी में 3000 मुजाहिदों की एक सेना सीरिया की सीमा की ओर भेजी, ताकि आगे के लिए इस क्षेत्र में मुसलमानों के लिए कोई भय न रहे। य छोटी-सी सेना 'मूता' नामक स्थान पर शुरहबील की एक लाख सेना से जा टकराई। एक और 33 के इस मुक़ाबले में भी दुश्मन मुसलमानों को पराजित न कर

सके। यही चीज़ थी जिसने सीरिया और उसके सन्निकट रहनेवाले अर्ध-स्वतंत्र अरबी क़बीलों को बल्कि 'इराक़' के निकट रहनेवाले नज्दी क़बीलों को भी, जो किसरा के प्रभावाधीन थे, इस्लाम की ओर उन्मुख कर दिया और वे हज़ारों की संख्या में मुसलमान हो गए। दूसरे ही वर्ष क़ैसर ने मुसलमानों को 'मूता अभियान' की सज़ा देने के लिए सीरिया की सीमा पर सैन्य तैयारियां शुरू कर दीं। नबी (सल्ल०) (को इसकी सूचना मिली तो) आपने रज़ब सन् 09 हिजरी में 30 हज़ार मुजाहिदों के साथ सीरिया की ओर कूच किया। तबूक पहुँचकर मालूम हुआ कि क़ैसर ने मुक़ाबले में आने की जगह अपनी सेनाएँ सरहद से हटा ली हैं। क़ैसर के इस तरह कन्नी काट जाने से जो नैतिक विजय प्राप्त हुई उसको नबी (सल्ला०) ने इस चरण में पर्याप्त समझा और तबूक से आगे बढ़कर सीरिया के अधिक्षेत्र में प्रवेश करने के बदले आपने इस बात को प्राथमिकता दी कि इस विजय से अत्यन्तिक संभव राजनीतिक और सामरिक लाभ प्राप्त कर लें। अतएव आपने तबूक में 20 दिन ठहरकर उन बहुत-से छोटे-छोटे राज्यों को जो रूम साम्राज्य और दारुल इस्लाम के मध्य स्थित थे और अब तक रूमियों के प्रभावाधीन थे, सैन्य दबाव से इस्लामी राज्य का करदाता और अधीन बना लिया। फिर इसका सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि रूम साम्राज्य के साथ एक दीर्घकालीन संघर्ष में उलझ जाने से पहले इस्लाम को अरब पर अपनी पकड़ सुदृढ़ बना लेने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो गया।

समस्याएँ एवं वार्ताएँ

इस परिप्रेक्ष्य की दृष्टि में रखने के पश्चात् हम सरलता से उन बड़ी-बड़ी समस्याओं को गिन सकते हैं जिनका उस समय सामना करना पड़ रहा था और जिन्हें इस सूरा में लिया गया है :

(1) अब चूँकि अरब की व्यवस्था और प्रबंध पूर्ण रूप से ईमानवालों के हाथ आ गया था इसलिए वह नीति स्पष्ट रूप से सामने आ जानी चाहिए थी जो अरब को पूर्णतः दारुल-इस्लाम बनाने के लिए अपनानी आवश्यक थी। अतएव यह निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत की गई।

(अ) अरब से बहुदेववाद को बिलकुल मिटा दिया जाए ताकि इस्लाम का केंद्र सदैव के लिए विशुद्ध इस्लामी केंद्र हो जाए। इस उद्देश्य के लिए बहुदेववाद के संबंध में उत्तरदायित्व से निवृत्ति और उनके साथ किए गए अनुबंधों के समाप्त होने की घोषणा की गई।

(ब) आदेश दिया गया कि अब भविष्य में काबा के प्रबंध का श्रेय भी एकेश्वरवादियों ही को प्राप्त रहना चाहिए और अल्लाह के घर के अधिक्षेत्र में बहुदेववाद और अज्ञान की तमाम रीतियाँ भी बलपूर्वक बंद कर देनी चाहिएँ। बल्कि बहुदेववादी इस घर के निकट फटकने भी न पाएँ।

(स) अरब के नागरिक जीवन में अज्ञानकाल की रीतियों के जो चिह्न अब तक शेष थे उनको मिटा देने की ओर ध्यानाकर्षित किया गया। 'नसी' का नियम उन रीतियों में सबसे अधिक अभद्र था, इसलिए उसपर सीधे चोट की गई।

(2) अरब में इस्लाम का मिशन अपनी पूर्णता को पहुँच जाने के पश्चात् दूसरा अहम काम जो सामने था वह यह था कि अरब के बाहर सत्यधर्म का प्रभावक्षेत्र फैलाया जाए। इस क्रम में मुसलमानों को आदेश दिया गया कि अरब के बाहर जो लोग सत्यधर्म के अनुयायी नहीं हैं, उनके स्वतंत्र प्रभुत्व को तलवार के बल पर समाप्त कर दो यहाँ तक कि वे इस्लामी सत्ता के अधीन होकर रहना स्वीकार कर लें। जहाँ तक सत्यधर्म पर ईमान लाने की बात है, वे स्वतंत्र है कि ईमान लाएँ या ना लाएँ।

(3) तीसरी महत्त्वपूर्ण समस्या कपटाचारियों की थी जिनके साथ अब तक सामयिक मसलहतों की दृष्टि से छोड़ देने और क्षमा करने का मामला किया जा रहा था। अब आदेश दिया गया कि भविष्य में उनके साथ कोई नर्मी न की जाए और वही कड़ा व्यवहार इन छिपे हुए सत्य का इनकार करनेवालों के साथ होना चाहिए जो खुले हुए सत्य का इनकार करनेवालें के साथ होता है।

(4) सच्चे मोमिनों में अब तक जो थोड़ी-बहुत संकल्प की कमज़ोरी बाक़ी थी, उसका इलाज भी अवश्य था। इसलिए जिन लोगों ने तबूक के अवसर पर सुस्ती और कमज़ोरी दिखाई थी उनकी अत्यंत कड़ाई के साथ भर्त्सना की गई, और आगे के लिए पूरी सफ़ाई के साथ यह बात स्पष्ट कर दी गई कि अल्लाह के बोल को ऊँचा करने का प्रयास और कुफ़्र और इस्लाम का संघर्ष ही वह असली कसौटी है जिस पर ईमानवाले के ईमान के दावे को परखा जाएगा।



9. सूरा अत-तौबा

(मदीना में उतरी–आयतें 129)

(1) सम्बन्ध-विच्छेद का एलान है[1] अल्लाह और उसके रसूल की ओर से उन मुशरिकों (बहुदेववादियों) को जिनसे तुमने समझौते किए थे।[2] (2) अतः तुम लोग देश में चार महीने और चल फिर लो और जान रखो कि तुम अल्लाह को विवश करनेवाले नहीं हो, और यह कि अल्लाह सत्य के इनकार करनेवालों को अपमानित करनेवाला है।

(3-4) सार्वजनिक सूचना है अल्लाह और उसके रसूल की ओर से बड़े हज के

1. ये आयतें आयत 37 तक सन् 9 हि॰ में उस समय उतरी थीं जब नबी (सल्ल॰) हज़रत अबू बक्र (रज़ि॰) को हज के लिए भेज चुके थे। उनके पीछे जब ये आयतें उतरीं तो नबी (सल्ल॰) ने हज़रत अली (रज़ि॰) को भेजा ताकि हाजियों के सामान्य जनसमूह में इन्हें सुनाएँ और निम्नंकित चार बातों की घोषणा कर दें, (1) जन्नत (स्वर्ग) में कोई ऐसा व्यक्ति प्रवेश न पा सकेगा जो इस्लाम धर्म को स्वीकार करने से इनकार करे। (2) इस वर्ष के बाद कोई मुशरिक (बहुदेववादी) हज के लिए न आए। (3) काबा की परिक्रमा नंगे होकर करना वर्जित है। (4) जिन लोगों के साथ अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का समझौता बाक़ी है अर्थात् जिन्होंने समझौते को भंग नहीं किया है उनके साथ समझौते की अवधि तक इसे निभाया जाएगा। नबी (सल्ल॰) के इस आदेश के अनुसार हज़रत अली (रजि॰) ने यह एलान 10 ज़िलहिज्जा को किया।
2. सूरा-8 (अनफ़ाल) आयत 58 में गुज़र चुका है कि जब तुम्हें किसी क़ौम से विश्वासघात (प्रज्ञि भंग करने और ग़द्दारी) की आशंका हो तो खुल्लम-खुल्ला उसका समझौता एवं संविदा उसकी ओर फेंक दो और उसे सावधान कर दो कि अब हमारा-तुम्हारा कोई समझौता बाक़ी नहीं है। इसी नैतिक नियम के अनुसार समझौतों की मनसूख़ी की यह सामान्य घोषणा उन सभी क़बीलों के विरुद्ध की गई जो सन्धि और समझौते के होते हुए हमेशा इस्लाम के विरुद्ध साज़िशें करते रहे थे, और अवसर मिलते ही वचनबद्धता को ताक़ पर रखकर दुश्मनी पर उतर आते थे। इस घोषणा के बाद अरब के मुशरिकों के लिए इसके सिवा और कोई उपाय न रहा कि या तो लड़ने पर तैयार हो जाएँ और इस्लामी ताक़त से टकराकर मिट जाएँ, या देश छोड़कर निकल जाएँ, या फिर इस्लाम क़बूल करके अपने आपको और अपने इलाक़े को उस व्यवस्था को सौंप दें जो देश के अधिकांश भाग को पहले ही इस्लामी राज्य के अधीन कर चुकी थी।

दिन[3] सब लोगों के लिए कि अल्लाह मुशरिकों के प्रति ज़िम्मेदारी से बरी है और उसका रसूल भी। अब अगर तुम तौबा कर लो तो तुम्हारे ही लिए अच्छा है और जो मुँह फेरते हो तो ख़ूब समझ लो कि तुम अल्लाह को विवश करनेवाले नहीं हो। और ऐ नबी, इनकार करनेवालों को कठोर अज़ाब की ख़ुशख़बरी सुना दो, सिवाय उन शिर्क करनेवालों के जिनसे तुमने सन्धि की फिर उन्होंने अपने प्रण को पूरा करने में तुम्हारे साथ कोई कमी नहीं की और न तुम्हारे विरुद्ध किसी की मदद की, तो ऐसे लोगों के साथ तुम भी सन्धि-अवधि तक वफ़ा करो। क्योंकि अल्लाह डर रखनेवालों ही को पसन्द करता है।

(5) अतः जब हराम (वर्जित) महीने[4] बीत जाएँ तो मुशरिकों (बहुदेववादियों) को क़त्ल करो जहाँ पाओ और उन्हें पकड़ो और घेरो और हर घात में उनकी ख़बर लेने के लिए बैठो। फिर अगर वे तौबा कर लें और नमाज़ क़ायम करें और ज़कात दें तो उन्हें छोड़ दो।[5] अल्लाह क्षमाशील और दयावान् है। (6) और अगर मुशरिकों (बहुदेववादियों) में से कोई व्यक्ति शरण माँगकर तुम्हारे पास आना चाहे (ताकि अल्लाह की वाणी सुने) तो उसे शरण दे दो यहाँ तक कि वह अल्लाह की वाणी सुन ले। फिर उसे उसके सुरक्षित स्थान तक पहुँचा दो। यह इसलिए करना चाहिए कि ये लोग ज्ञान नहीं रखते।

(7) इन मुशरिकों (बहुदेववादियों) के लिए अल्लाह और उसके रसूल के नज़दीक कोई संधि आख़िर कैसे हो सकती है?—सिवाय उन लोगों के जिनसे तुमने

3. बड़ा हज (हज्जे अकबर) छोटे हज (हज्जे असग़र) के मुक़ाबले में है। अरबवाले 'उमरा' (काबा के दर्शन) को छोटा हज कहते थे। इसके मुक़ाबले में जो हज ज़िलहिज्जा की निश्चित तारीख़ों में होता है 'हज्जे अकबर' यानी बड़ा हज कहलाता है।
4. यहाँ हराम महीनों से मुराद वे चार महीने हैं जिनकी मुशरिकों (बहुदेववादियों) को मुहलत दी गई थी, चूँकि इस मुहलत की अवधि में मुसलमानों के लिए जायज़ न था कि मुशरिकों (बहुदेववादियों) पर हमला करते इसलिए इन्हें हराम महीने कहा गया है।
5. अर्थात् सिर्फ़ कुफ़्र और शिर्क (बहुदेववाद) से तौबा कर लेने पर मामला समाप्त नहीं हो जाएगा बल्कि उन्हें नमाज़ क़ायम करनी और ज़कात देनी होगी अन्यथा यह नहीं माना जाएगा कि उन्होंने अधर्म (कुफ़्र) छोड़कर इस्लाम ग्रहण कर लिया है।

प्रतिष्ठित मस्जिद के पास समझौता किया था,[6] तो जब तक वे तुम्हारे साथ सीधे रहे तुम भी उनके साथ सीधे रहो क्योंकि अल्लाह डर रखनेवालों को पसन्द करता है। (8)— मगर उनके सिवा दूसरे मुशरिकों (बहुदेववादियों) के साथ कोई समझौता कैसे हो सकता है जबकि उनका हाल यह है कि तुमपर क़ाबू पा जाएँ तो न तुम्हारे मामले में किसी नाते-रिश्ते की परवाह करें न किसी समझौते की ज़िम्मेदारी की? वे अपनी ज़बानों से तुमको राज़ी करने कीकोशिश करते हैं मगर दिल उनके इनकार करते हैं और उनमें से ज़्यादातर अवज्ञाकारी हैं। (9) उन्होंने अल्लाह की आयतों के बदले थोड़ा-सा मूल्य स्वीकार कर लिया फिर अल्लाह के मार्ग में रोक बनकर खड़े हो गए। बहुत बुरी करतूत थी जो ये करते रहे। (10) किसी ईमानवाले (मोमिन) के मामले में न ये नाते-रिश्ते की परवाह करते हैं और न किसी समझौते की ज़िम्मेदारी की। और ज़्यादती हमेशा इन्हीं की ओर से हुई है। (11) अतः अगर ये तौबा कर लें और नमाज़ क़ायम करें और ज़कात दें तो तुम्हारे धर्म सम्बन्धी (दीनी) भाई हैं[7] और जाननेवालों के लिए हम अपने आदेश स्पष्ट किए देते हैं। (12) और अगर प्रतिज्ञा करने के बाद ये फिर अपनी क़समों को तोड़ डालें और तुम्हारे धर्म पर हमले करने शुरू कर दें तो कुफ़्र (अधर्म) के ध्वजवाहकों से युद्ध करो क्योंकि उनकी क़समों का कोई भरोसा नहीं। शायद कि (फिर तलवार ही के ज़ोर से) वे बाज़ आएँगे।[8]

(13) क्या तुम न लड़ोगे ऐसे लोगों से जो अपनी प्रतिज्ञा भंग करते रहे हैं और जिन्होंने रसूल को देश से निकाल देने का निश्चय किया था और ज़्यादती का आरंभ

6. अर्थात् बनी किनाना और बनी ख़ुज़ाआ और बनी ज़मरा।
7. अर्थात् नमाज़ और ज़कात के बिना सिर्फ़ तौबा कर लेने से वे तुम्हारे धर्म-सम्बन्धी भाई नहीं बन जाएँगे। हाँ, अगर वे यह शर्त पूरी कर दें तो इसका परिणाम सिर्फ़ यही नहीं होगा कि तुम्हारे लिए उनपर हाथ उठाना और उनके जान-माल पर हाथ डालना हराम हो जाएगा, बल्कि अतिरिक्त लाभ यह भी होगा कि इस्लामी समाज में उनको समान अधिकार प्राप्त हो जाएँगे। सामाजिक, सांस्कृतिक और क़ानूनी हैसियत से वे तमाम दूसरे मुसलमानों की तरह होंगे, कोई भेद-भाव उनकी उन्नति की राह में रोक न होगा।
8. यहाँ प्रतिज्ञा करने और क़समें खाने से मुराद मुसलिम होने की प्रतिज्ञा करना और इस्लाम की वफ़ादारी की क़समें खाना है। मतलब यह है अगर ये लोग मुसलिम हो जाने के बाद फिर कुफ़्र (अधर्म) की ओर पलट जाएँ तो इनसे युद्ध किया जाए। इसी आदेश के अनुसार हज़रत अबू बक्र (रज़ि॰) ने धर्म से फिर जानेवालों के विरुद्ध युद्ध किया।

करनेवाले वही थे? क्या तुम उनसे डरते हो? अगर तुम ईमानवाले हो तो अल्लाह इसका ज़्यादा हक़दार है कि उससे डरो। (14,15) उनसे लड़ो, अल्लाह तुम्हारे हाथों से उनको सज़ा दिलवाएगा और उन्हें अपमानित करेगा और उनके मुक़ाबले में तुम्हारी मदद करेगा और बहुत-से ईमानवालों के दिल ठंडे करेगा और उनके दिलों की जलन मिटा देगा, और जिसे चाहेगा तौबा का सौभाग्य भी प्रदान करेगा।[9] अल्लाह सब कुछ जाननेवाला और सर्वज्ञ है। (16) क्या तुम लोगों ने यह समझा रखा है कि यूँ ही छोड़ दिए जाओगे हालाँकि अभी अल्लाह ने यह तो देखा ही नहीं कि तुममें से कौन वे लोग हैं जिन्होंने (उसकी राह में) जान-तोड़ संघर्ष किया और अल्लाह और रसूल और ईमानवालों के सिवा किसी को जिगरी दोस्त न बनाया, जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उसे ख़ूब जानता है।

(17) मुशरिकों (बहुदेववादियों) का यह काम नहीं है कि वे अल्लाह की मसजिदों के मुजाविर और उसके सेवक बने जबकि अपने विरुद्ध वे ख़ुद कुफ़्र (अधर्म) की गवाही दे रहे हैं। उनका तो सारा किया-धरा अकारथ गया और जहन्नम में उन्हें हमेशा रहना है। (18) अल्लाह की मसजिदों के आबाद करनेवाले (मुजाविर और सेवक) तो वही लोग हो सकते हैं जो अल्लाह और अन्तिम दिन को मानें, और नमाज़ क़ायम करें, ज़कात दें, और अल्लाह के सिवा किसी से न डरें। उन्हीं से यह उम्मीद है कि सीधी राह चलेंगे। (19) क्या तुम लोगों ने हाजियों को पानी पिलाने और प्रतिष्ठित समजिद (काबा) की मुजाविरी करने को उस व्यक्ति के काम के बराबर ठहरा लिया है जो ईमान लाया अल्लाह पर और अन्तिम दिन पर जिसने संघर्ष किया अल्लाह के मार्ग में?[10] अल्लाह की नज़र में तो ये दोनों बराबर नहीं हैं और अल्लाह ज़ालिमों को राह पर नहीं लगाया करता। (20) अल्लाह के यहाँ तो उन्हीं लोगों का पद बड़ा है जो ईमान लाए और जिन्होंने उसके मार्ग में घर-बार छोड़े और जान और माल से संघर्ष किया, वही सफल हैं।

9. मुसलमान डर रहे थे कि यह घोषणा होते ही अरब के चारों तरफ़ आग भड़क उठेगी और हमें एक विनाशकारी युद्ध का सामना करना पड़ेगा। अल्लाह ने इन आयतों से सांत्वना दी कि तुम्हारी यह आशंका ग़लत है, परिणाम इसके विपरीत होगा।
10. इस आदेश से यह फ़ैसला कर दिया गया कि 'काबा' का सेवा-कार्य और प्रबन्ध-अधिकार अब मुशरिकों (बहुदेववादियों) के पास नहीं रह सकता। क़ुरैश के मुशरिक सिर्फ़ इस आधार पर इसके अधिकारी नहीं हो सकते हैं कि वे हाजियों की सेवा करते रहे हैं।

(21) उनका रब उन्हें अपनी दयालुता और प्रसन्नता और ऐसी जन्नतों की ख़ुशख़बरी देता है जहाँ उनके लिए स्थायी आनन्द की सामग्री है। (22) उनमें वे हमेशा रहेंगे। यक़ीनन अल्लाह के पास सेवाओं का बदला देने को बहुत कुछ है।

(23) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अपने बापों और भाइयों को भी अपना साथी न बनाओ अगर वे ईमान के मुक़ाबले में कुफ़्र (अधर्म) को प्राथमिकता दें। तुममें से जो उनको साथी बनाएँगे वही ज़ालिम होंगे। (24) ऐ नबी, कह दो कि अगर तुम्हारे बाप, और तुम्हारे बेटे, और तुम्हारे भाई और तुम्हारी पत्नियाँ, और तुम्हारे नाते-रिश्तेवाले, और तुम्हारे वे माल जो तुमने कमाए हैं, और तुम्हारे वे कारोबार जिनके मंदा पड़ जाने का तुमको डर है, और तुम्हारे वे घर जो तुम्हें पसन्द हैं, तुमको अल्लाह और उसके रसूल और उसकी राह में जिहाद (संघर्ष) करने से ज़्यादा प्रिय हैं तो इनतिज़ार करो यहाँ तक कि अल्लाह अपना फ़ैसला तुम्हारे सामने ले आए, और अल्लाह अवज्ञाकारियों को मार्ग नहीं दिखाया करता।

(25) अल्लाह इससे पहले बहुत-से अवसरों पर तुम्हारी मदद कर चुका है। अभी हुनैन की लड़ाई के दिन (उसकी मदद की हालत तुम देख चुके हो।),[11] उस दिन तुम्हें ज़्यादा संख्या का गर्व था। मगर वह तुम्हारे कुछ काम न आई और ज़मीन अपनी विशालता के बावजूद तुमपर तंग हो गई और तुम पीठ फेरकर भाग निकले। (26) फिर अल्लाह ने अपनी 'सकीनत' (प्रशान्ति) अपने रसूल पर और ईमानवालों पर उतारी और वे सेनाएँ उतारी जो तुमको दिखाई न देती थी और सत्य का इनकार करनेवालों को सज़ा दी कि यही बदला है उन लोगों के लिए जो सत्य का इनकार करें। (27) फिर (तुम यह भी देख चुके हो कि) इस तरह सज़ा देने के बाद अल्लाह जिसको चाहता है तौबा का

11. हुनैन की लड़ाई शव्वाल सन् 8 हि॰ में इन आयतों के उतरने से केवल बाहर-तेरह महीने पहले मक्का और तायफ़ के बीच हुनैन की घाटी में हुई थी। इस लड़ाई में मुसलमानों की ओर से 12 हज़ार सेना थी और दूसरी ओर काफ़िर (अधर्मी) उनसे बहुत कम थे। लेकिन इसके बावजूद हवाज़िन क़बीले के तीर चलानेवालों ने मुसलमानों का मुँह फेर दिया और इस्लाामी सेना बुरी तरह तितर-बितर होकर परास्त हो गई। उस समय सिर्फ़ नबी (सल्ल॰) और मुट्ठी भर वीर सहाबा थे जिनके क़दम अपनी जगह जमे रहे और उन्हीं के जमे रहने का परिणाम था कि पुनः सेना व्यवस्थित हो सकी और आख़िरकार विजय मुसलमानों को प्राप्त हुई। वर ना मक्का की विजय से जो कुछ प्रप्त हुआ था उससे बहुत ज़्यादा हुनैन में खो देना पड़ता।

सौभाग्य भी प्रदान कर देता है,[12] अल्लाह माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है।

(28) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, मुशरिक (बहुदेववादी) नापाक हैं, अतः इस वर्ष के बाद ये प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) के पास न फटकने पाएँ।[13] और अगर तुम्हें तंगदस्ती का डर हो तो दूर नहीं कि अल्लाह चाहे तो तुम्हें अपने अनुग्रह से धनी कर दे, अल्लाह सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है।

(29) युद्ध करो किताबवालों में से उन लोगों के विरुद्ध जो अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान नहीं लाते और जो कुछ अल्लाह और उसके रसूल ने हराम ठहराया है उसे हराम नहीं करते और सत्य धर्म को अपना धर्म नहीं मानते। (उनसे लड़ो) यहाँ तक कि वे अपने हाथ से जिज़्या (रक्षा-कर) दें और छोटे बनकर रहें।[14] (30) यहूदी कहते हैं कि उज़ैर अल्लाह का बेटा है, और ईसाई कहते हैं कि मसीह अल्लाह का बेटा है। ये असत्य बातें हैं जो वे अपनी ज़बानों से निकालते हैं उन लोगों की देखा-देखी जो इनसे पहले कुफ़्र (अधर्म) में ग्रस्त हुए थे। अल्लाह की मार इनपर, ये कहाँ से धोखा खा रहे हैं। (31) इन्होंने अपने धर्मज्ञाताओं और दुनिया से विमुख संतों को अल्लाह के सिवा अपना रब बना लिया है[15] और उसी तरह मसीह इब्न मरयम को भी। हालाँकि उनको एक पूज्य के सिवा किसी की बन्दगी करने का आदेश नहीं दिया गया था, वह जिसके सिवा कोई बन्दगी का अधिकारी नहीं, पाक है वह उन शिर्क (बहुदेववाद) सम्बन्धी

12. संकेत है इस बात की ओर कि हुनैन की लड़ाई में जो काफ़िर (अधर्मी) परास्त हुए थे वे सब बाद में मुसलिम हो गए।

13. अर्थात् आगे के लिए उनका हज और उनके लिए ज़ियारत (दर्शन) ही बन्द नहीं बल्कि प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) की सीमा में उनका प्रवेश भी वर्जित है।

14. अर्थात् लड़ाई का उद्देश्य यह नहीं है कि वे ईमान ले आएँ और सत्य धर्म के अनुयायी बन जाएँ। बल्कि उसका उद्देश्य यह है कि उनका शासन समाप्त हो जाए। वे ज़मीन में शासक और फ़रमान जारी करनेवाले बनकर न रहें बल्कि ज़मीन की ज़िन्दगी के निज़ाम की बागडोर और शासन और नेतृत्व के अधिकार सत्य-धर्म के अनुयायियों के हाथों में हों और किताबवाले उनके अधीन और आज्ञाकारी बनकर रहें। इसके बाद उनमें से जिसका जी चाहे वह ख़ुद अपनी मरज़ी से मुसलमान हो जाए वरना रक्षा-कर (जिज़या) देता रहे। जिज़या बदल है उस शरण और सुरक्षा का जो अधीनों (ज़िम्मियों) को इस्लामी हुकूमत में प्रदान की जाती है। इसके अलावा वह चिह्न है इस बात का कि ये लोग अधीन बनकर रहने पर राज़ी हैं।

बातों से जो ये लोग करते हैं। (32) ये लोग चाहते हैं कि अल्लाह की रौशनी को अपनी फूँकों से बुझा दें। मगर अल्लाह अपनी रौशनी पूर्ण किए बिना माननेवाला नहीं है चाहे अधर्मियों को यह कितना ही अप्रिय हो। (33) वह अल्लाह ही है जिसने अपने रसूल को मार्गदर्शन और सत्य-धर्म के साथ भेजा है ताकि उसे दीन (धर्म) की पूरी जिंस (पूरे आकार-प्रकार) पर प्रभावी कर दे[16] चाहे मुशरिकों (बहुदेववादियों) को यह कितना ही

15. हदीस में आता है कि हज़रत अदी बिन हातिम जो पहले ईसाई थे जब नबी (सल्ल०) की सेवा में उपस्थित होकर इस्लाम ग्रहण करने का श्रेय प्राप्त किया तो उन्होंने आपसे पूछा कि इस आयत में हमपर अपने धर्मज्ञाताओं और संतों को ख़ुदा बना लेने का जो आरोप लगाया गया है उसकी वास्तविकता क्या है। जवाब में नबी (सल्ल०) ने कहा, "क्या यह सत्य नहीं है कि जो कुछ ये हराम ठहराते हैं उसे तुम हराम मान लेते हो और जो कुछ ये हलाल ठहराते हैं उसे हलाल मान लेते हो?" उन्होंने कहा कि यह तो ज़रूर हम करते हैं। कहा, "बस यही इनको रब बना लेना है।" इससे मालूम हुआ कि अल्लाह की किताब के प्रमाण के बिना जो लोग इनसानी ज़िन्दगी के लिए वैध-अवैध की सीमाएँ निर्धारित करते हैं वे वास्तव में ख़ुदाई (प्रभुता) के पद पर अपने तौर पर स्वयं ही आसीन होते हैं और जो उनके इस विधान-रचना का अधिकार स्वीकार करते हैं वे उन्हें ख़ुदा बनाते हैं।
16. यहाँ धर्म के लिए 'अद्दीन' शब्द इस्तेमाल हुआ है। इसका अनुवाद हमने 'दीन की जिन्स' के शब्दों में किया है। दीन शब्द अरबी भाषा में उस ज़िन्दगी के निज़ाम या जीवन-प्रणाली के लिए इस्तेमाल होता है जिसके स्थापित करनेवाले को सनद (प्रमाण) और आज्ञापालन योग्य स्वीकार करके उसका अनुसरण किया जाए। अतः रसूल के भेजे जाने का उद्देश्य इस आयत में यह बताया गया है कि जिस मार्गदर्शन और सत्य-धर्म को वह अल्लाह की ओर से लाया है उसे धर्म (दीन) का आकार-प्रकार रखनेवाले सभी तरीक़ों और व्यवस्थाओं पर प्रभावी कर दे। रसूल कभी इस उद्देश्य से नहीं भेजा गया कि जो ज़िन्दगी के निज़ाम वह लेकर आया है वह किसी दूसरी जीवन-व्यवस्था के अधीन और उसके वशीभूत होकर और उसकी दी हुई छूटों और गुंजाइशों में सिमटकर रहे, बल्कि वह आसमान और ज़मीन के बादशाह का प्रतिनिधि बनाकर आता है और अपने बादशाह की सत्य शासन-व्यवस्था को विजयी देखना चाहता है। अगर कोई दूसरी जीवन-व्यवस्था दुनिया में रहे भी तो उसे ईश्वरीय शासन-व्यवस्था की दी हुई गुंजाइशों में सिमटकर रहना चाहिए जैसा कि रक्षा-कर (जिज़या) अदा करने की स्थिति में अधीनस्थों की जीवन-व्यवस्था रहती है, न यह कि अधर्मी प्रभावी हों और सत्य-धर्म के माननेवाले अधीनस्थ बनकर रहें।

अप्रिय हो। (34) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, इन किताबवालों के ज़्यादातर धर्मज्ञाता (उलमा) और दुनिया से विमुख संतों का हाल यह है कि वे लोगों के माल ग़लत तरीक़ों से खाते हैं और उन्हें अल्लाह के मार्ग से रोकते हैं। दर्दनाक सज़ा की ख़ुशख़बरी दो उनको जो सोने और चाँदी जमा करके रखते हैं और उन्हें अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते। (35) एक दिन आएगा कि इसी सोने-चाँदी पर जहन्नम की आग दहकाई जाएगी और फिर इसी से उनके ललाटों और पहलुओं और पीठों को दाग़ा जाएगा।—यह है वह ख़ज़ाना जो तुमने अपने लिए जमा किया था, लो अब अपनी समेटी हुई दौलत का मज़ा चखो।

(36) वास्तविकता यह है कि महीनों की संख्या जब से अल्लाह ने आसमान और ज़मीन की रचना की है, अल्लाह के लेख्य में बारह ही है और उनमें से चार महीने आदर के (हराम) हैं।[17] यही ठीक नियम है अतः इन चार महीनो में अपने ऊपर ज़ुल्म न करो और मुशरिकों (बहुदेववादियों) से सब मिलकर लड़ो जिस तरह वे सब मिलकर तुमसे लड़ते हैं और जान लो कि अल्लाह डर रखनेवालों ही के साथ है।[18] (37) महीने का हटाना तो कुफ़्र (अधर्म) में एक और अधर्मयुक्त कर्म है जिससे ये अधर्मी लोग गुमराही में ग्रस्त किए जाते हैं। किसी वर्ष एक महीने को हलाल कर लेते हैं और किसी वर्ष उसको हराम कर देते हैं, ताकि अल्लाह के हराम किए हुए महीनों की संख्या भी पूरी कर दें और अल्लाह का हराम ठहराया हुआ हलाल भी कर लें[19]—उनके बुरे कर्म उनके लिए ख़ुशनुमा बना दिए गए हैं और अल्लाह सत्य के इनकार करनेवालों को राह पर नहीं लगाया करता।

(38) [20]ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम्हें क्या हो गया कि जब तुमसे अल्लाह की राह में निकलने के लिए कहा गया तो तुम ज़मीन से चिमटकर रह गए? क्या तुमने आख़िरत के मुक़ाबले में दुनिया की ज़िन्दगी को पसन्द कर लिया? ऐसा है तो तुम्हें मालूम हो कि दुनिया की ज़िन्दगी की यह सब सामग्री परलोक (आख़िरत) में बहुत थोड़ी निकलेगी। (39) तुम न उठोगे तो अल्लाह तुम्हें दर्दनाक सज़ा देगा, और तुम्हारी जगह किसी और गिरोह को उठाएगा, और तुम अल्लाह का कुछ भी न बिगाड़ सकोगे, उसे

17. चार हराम महीनों से मुराद है ज़िक़ादा, ज़िलहिज्जा और मुहर्रम हज के लिए और रजब का महीना उमरा के लिए।
18. अर्थात् अगर मुशरिक (बहुदेववादी) इन महीनों में भी लड़ने से बाज़ न आएँ तो जिस तरह वे एक होकर तुमसे लड़ते हैं तुम भी एक होकर उनसे लड़ो। सूरा 2 (बक़रा) आयत 194 इस आयत की व्याख्या करती है।

हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (40) तुमने अगर नबी की मदद न की तो कुछ परवाह नहीं, अल्लाह उसकी मदद उस समय कर चुका है जब अधर्मियों ने उसे निकाल दिया था, जब वह सिर्फ़ दो में का दूसरा था, जब वे दोनों गुफ़ा में थे, जब वह अपने साथी से कह रहा था कि "ग़म न कर, अल्लाह हमारे साथ है।"[21] उस समय अल्लाह ने उसपर अपनी ओर से हृदय-शान्ति उतारी और उसकी मदद ऐसी सेनाओं से की जो तुम्हें दिखाई न देती थी और अधर्मियों का बोल नीचा कर दिया। और अल्लाह का बोल तो ऊँचा ही है, अल्लाह प्रभुत्वशाली और गहरी सूझ-बूझवाला है।

(41) निकलो चाहे हलके हो या बोझल, और संघर्ष (जिहाद) करो अल्लाह के मार्ग में अपने मालों और अपनी जानों के साथ, यह तुम्हारे लिए उत्तम है अगर तुम जानो।

(42) ऐ नबी, अगर लाभ सरलता से प्राप्त होनेवाला होता और सफ़र हलका होता तो वे ज़रूर तुम्हारे पीछे चलने को तैयार हो जाते, मगर उनपर तो यह रास्ता बहुत

19. अरब में महीने को हटाने की प्रथा दो तरह की थी। एक तो यह कि लड़ने-भिड़ने और लूटपाट करने और ख़ून का बदला लेने के लिए किसी हराम महीने को हलाल (वैध) ठहरा लेते थे और उसके बदले में किसी हलाल महीने को हराम करके-महीनों की संख्या पूरी कर देते थे। दूसरे यह कि चन्द्र वर्ष को सौर वर्ष के अनुरूप करने के लिए उसमें लौंद का एक महीना बढ़ा देते थे, ताकि हज हमेशा एक ही मौसम में आता रहे और वे उन कष्टों से बच जाएँ जिनका सामना चन्द्रमा के हिसाब के अनुसार विभिन्न मौसमों में हज के गर्दिश करते रहने से करना पड़ता है। इस तरह 33 वर्ष तक हज अपने वास्तविक समय के विपरीत दूसरी तिथियों में होता रहता था और सिर्फ़ चौंतीसवें वर्ष एक बार वास्तविक ज़िलहिज्जा की 9-10 तारीख को अदा होता था। नबी (सल्ल॰) ने जिस वर्ष हिज्जतुलविदाअ (अंतिम हज) अदा किया है उस वर्ष हज अपनी वास्तविक तिथियों में आया था और उसी समय से महीने के हटाने का तरीक़ा वर्जित कर दिया गया।
20. यहाँ से आयत न॰ 72 के अन्त तक की आयतें तबूक की मुहिम की तैयारी के समय में अवतरित हुई हैं।
21. यह उस अवसर का उल्लेख है जब मक्का के अधर्मियों ने नबी (सल्ल॰) की हत्या करने की ठान ली थी और आप ठीक उसी रात को जो हत्य के लिए नियत की गई थी, मक्का से निकलकर सौर नामक गुफ़ा में तीन दिन तक छिपे रहे और फिर मदीना की ओर घर-बार छोड़कर चले गए। उस समय गुफ़ा में सिर्फ़ हज़रत अबू बक्र (रज़ि॰) आपके साथ थे।

कठिन हो गया।[22] अब वे अल्लाह की क़सम खा-खाकर कहेंगे कि अगर हम चल सकते तो यक़ीनन तुम्हारे साथ चलते। वे अपने आपको तबाही में डाल रहे हैं। अल्लाह ख़ूब जानता है कि वे झूठे हैं।

(43) ऐ नबी, अल्लाह तुम्हें माफ़ करे, तुमने क्यों उन्हें छूट दे दी? (तुम्हें चाहिए था कि ख़ुद छूट न देते) ताकि तुमपर खुल जाता कि कौन लोग सच्चे हैं और झूठों को भी तुम जान लेते। (44) जो लोग अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रखते हैं वे तो कभी तुमसे यह माँग न करेंगे कि उन्हें अपनी जान और माल के साथ संघर्ष (जिहाद) करने से माफ़ रखा जाए। अल्लाह धर्मपरायण लोगों को ख़ूब जानता है। (45) ऐसी माँगें तो सिर्फ़ वही लोग करते हैं जो अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान नहीं रखते, जिनके दिलों में शक है और वे अपने शक ही में दुविधाग्रस्त हो रहे हैं।

(46) अगर वास्तव में उनका इरादा निकलने का होता तो वे इसके लिए कुछ तैयारी करते। लेकिन अल्लाह को उनका उठना पसन्द ही न था इसलिए उसने उन्हें सुस्त कर दिया और कह दिया कि बैठ रहो बैठनेवालों के साथ। (47) अगर वे तुम्हारे साथ निकलते तो तुम्हारे अन्दर ख़राबी के सिवा किसी चीज़ की अभिवृद्धि न करते। वे तुम्हारे बीच उपद्रव मचाने के लिए दौड़-धूप करते, और तुम्हारे गिरोह का हाल यह है कि अभी उनमें बहुत-से ऐसे लोग पाए जाते हैं जो उनकी बातें कान लगाकर सुनते हैं, अल्लाह इन ज़ालिमों को ख़ूब जानता है। (48) इससे पहले भी उन लोगों ने फ़ितना उठाने की कोशिशें की हैं और तुम्हें नाकाम बनाने के लिए हर तरह के उपायों का उलट-फेर कर चुके हैं यहां तक कि उनकी इच्छा के विपरीत सत्य आ गया और अल्लाह का काम होकर रहा।

(49) उनमें से कोई है जो कहता है कि "मुझे छुट्टी दे दीजिए और मुझको फ़ितने में न डालिए"—सुन रखो! फ़ितने ही में तो ये लोग पड़े हुए हैं और जहन्नम ने इन अधर्मियों को घेर रखा है।

(50) तुम्हारा भला होता है तो इन्हें दुख होता है और तुमपर कोई मुसीबत आती है तो ये मुँह फेरकर ख़ुश-ख़ुश पलटते हैं और कहते जाते हैं कि अच्छा हुआ हमने पहले ही अपना मामला ठीक कर लिया था। (51) उनसे कहो, "हमें हरगिज़ कोई (बुराई या

22. अर्थात् यह देखकर कि मुक़बला रूम जैसी शक्ति से है और समय भीषण गर्मी काहै और देश में अकाल आया है और नए वर्ष की फ़सलें, जिनसे आस लगी हुई थी, कटने के क़रीब हैं, उनको तबूक का सफ़र बहुत ही कठिन लगने लगा।

भलाई) नहीं पहुँचती मगर वह जो अल्लाह ने हमारे लिए लिख दी है। अल्लाह ही हमारा संरक्षक-मित्र है, और ईमानवालों को उसी पर भरोसा करना चाहिए।''

(52) उनसे कहो, ''तुम हमारे मामले में जिस चीज़ की प्रतीक्षा में हो वह इसके सिवा और क्या है कि दो भलाइयों में से एक भलाई[23] है। और हम तुम्हारे मामले में जिस चीज़ के इनतिज़ार में हैं वह यह है कि अल्लाह ख़ुद तुमको सज़ा देता है या हमारे हाथों दिलवाता है? अच्छा तो अब तुम भी इनतिज़ार करो और हम भी तुम्हारे साथ इनतिज़ार करते हैं।''

(53) उनसे कहो, ''तुम अपने माल चाहे राज़ी-खुशी ख़र्च करो या अप्रियता के साथ, किसी हालत में वे क़बूल न किए जाएँगे, क्योंकि तुम अवज्ञाकारी लोग हो। (54) उनके दिए हुए माल क़बूल न होने का कोई कारण इसके सिवा नहीं है कि उन्होंने अल्लाह और उसके रसूल के साथ इनकार की नीति अपनाई है, नमाज़ के लिए आते हैं तो कसमसाते हुए आते हैं और अल्लाह के मार्ग में खर्च करते हैं तो अनिच्छापूर्वक खर्च करते हैं। (55) इनके माल और दौलत और इनकी औलाद की बहुलता को देखकर धोखा नखाओ, अल्लाह तो यह चाहता है कि इन्हीं चीज़ों के द्वारा इनको दुनिया की ज़िन्दगी में भी अज़ाब में ग्रस्त करे और ये जान भी दें तो सत्य के इनकार ही की हालत में दें।

(56) वे अल्लाह की क़सम खा-खाकर कहते हैं कि हम तुम्ही में से है, जबकि वे हरगिज़ तुममें से नहीं हैं। वास्तव में तो वे ऐसे लोग हैं जो तुमसे डरे हुए हैं। (57) अगर वे कोई पनाह की जगह पा लें या कोई गुफा या घुस बैठने की जगह, तो भागकर उसमें जा छिपें।

(58)ऐ नबी, उनमें से कुछ लोग सदक़ों[24] के वितरण में तुमपर एतिराज़ करतें हैं, अगर उस माल में से उन्हें कुछ दे दिया जाए तो प्रसन्न हो जाएँ, और न दिया जाए तो बिगड़ने लगते हैं। (59) क्या अच्छा होता कि अल्लाह और रसूल ने जो कुछ भी उन्हें दिया था उसपर वे राज़ी रहते और कहते कि ''अल्लाह हमारे लिए काफ़ी है, वह अपने उदार अनुग्रह से हमें और बहुत कुछ देगा और उसका रसूल भी हमपर कृपा करेगा, हम अल्लाह ही की ओर नज़र जमाए हुए हैं।'' (60) ये सदक़े तो वास्तव में फ़क़ीरों और मुहताजों के लिए हैं[25] और उन लोगों के लिए जो सदक़ों के काम पर नियुक्त हों, और

23. अर्थात् अल्लाह के मार्ग में शहीद होना या इस्लाम की विजय।
24. अर्थात् ज़कात (दान) के माल।

उनके लिए जिनका दिल मोहना (तालीफ़े-क़ल्ब) अभीष्ट हो।[26] और यह गरदनों को छुड़ाने[27] और क़र्ज़दारों की मदद करने में और अल्लाह के मार्ग में[28] और मुसाफ़िरों की सहायता में[29] इस्तेमाल करने के लिए हैं। यह एक अनिवार्य पालनीय आदेश है अल्लाह की ओर से और अल्लाह सब कुछ जाननेवाला और गहरी सूझ-बूझवाला है।

25. यहाँ फ़क़ीर शब्द इस्तेमाल हुआ है। फ़क़ीर से मुराद वह व्यक्ति है जो अपनी जीविका के लिए दूसरे की मदद पर निर्भर करता है। और मिस्कीन (मुहताज) वे हैं जिनकी हालत आम ज़रूरतमंदों की अपेक्षा ज़्यादा कमज़ोर हो।
26. यहाँ 'तालीफ़े क़ल्ब' के लिए ख़र्च करने का उल्लेख हुआ है। 'तालीफ़े क़ल्ब' का अर्थ है दिल मोहना। इस आदेश का मक़सद यह है कि जो लोग इस्लाम की दुश्मनी में बहुत आगे हों और माल देकर उनके दुश्मनी के जोश को ठण्डा किया जा सकता हो, या जो लोग अधर्मियों के कैम्प में ऐसे हों कि अगर माल से उन्हें तोड़ा जाए तो टूटकर मुसलिमों के सहायक बन सकते हों, या जो लोग नए-नए इस्लाम में दाख़िल हुए हैं और उनकी कमज़ोरियों को देखते हुए अंदेशा हो कि अगर माल से उनकी सहायता न की गई तो फिर कुफ़्र की ओर पलट जाएँगे, ऐसे लोगों की स्थायी रूप से वज़ीफ़े या तात्कालिक अनुदान देकर इस्लाम का हामी और मददगार या आज्ञाकारी या कम से कम अहनिकर दुश्मन बना लिया जाए।
27. गरदनें छुड़ाने से मुराद गुलामों को आज़ाद कराना है।
28. अल्लाह के मार्ग का शब्द व्यापक है। सारे वे नेकी के काम जिनमें अल्लाह की प्रसन्नता हो, इस शब्द के अर्थ में सम्मिलित हैं। धर्मज्ञाताओं के एक गिरोह ने यह अभिमत व्यक्त किया है कि इस आदेश के अनुसार दान (ज़कात) का माल हर क़िस्म के नेक कामों में लगाया जा सकता है, लेकिन बड़ी अकसरियत इस बात को मानती है कि यहाँ 'अल्लाह के मार्ग में' से मुराद अल्लाह के मार्ग में जिहाद (संघर्ष) है अर्थात् वह प्रयास और जानतोड़ कोशिश जिसका उद्देश्य कुफ़्र की व्यवस्था को मिटाना और उसके स्थान पर इस्लामी व्यवस्था को स्थापित करना हो। इस संघर्ष में जो लोग काम करें उनको सफ़र ख़र्च के लिए, सवारी के लिए, अस्त्र-शस्त्र और हथियार और अनय सामग्री जुटाने के लिए ज़कात (दान) से सहायता की जा सकती है चाहे वे अपनी जगह खाते-पीते लोग हो और अपनी ज़रूरतों के लिए उनको मदद की ज़रूरत न हो।
29. मुसाफ़िर चाहे अपने घर में धनवान् हो लेकिन सफ़र की हालत में अगर उसे सहायता की आवश्यकता हो जाए तो उसकी सहायता ज़कात के फ़ण्ड से की जाएगी।

(61) उनमें से कुछ लोग हैं जो अपनी बातों से नबी को दुख देते हैं और कहते हैं कि यह व्यक्ति तो कानों का कच्चा हैं। कहो, ''वह तुम्हारी भलाई के लिए ऐसा है, अल्लाह पर ईमान रखता है और ईमानवालों पर विश्वास करता है और सर्वथा दयालुता है उन लोगों के लिए जो तुममें से ईमानवाले हैं, और जो लोग अल्लाह के रसूल को दुख देते हैं उनके लिए दर्दनाक सज़ा है।''

(62) ये लोग तुम्हारे सामने क़समे खाते हैं ताकि तुम्हें राज़ी करें, हालाँकि अगर ये ईमानवाले हैं तो अल्लाह और रसूल इसके ज़्यादा हक़दार हैं कि ये उनको राज़ी करने की चिन्ता करें। (63) क्या इन्हें मालूम नहीं है कि जो अल्लाह और उसके रसूल का मुक़ाबला करता है, उसके लिए दोज़ख की आग है जिसमें वह हमेशा रहेगा? यह बहुत बड़ी रुसवाई है।

(64) ये मिथ्याचारी (मुनाफ़िक़) डर रहे हैं कि कहीं मुसलमानों पर कोई ऐसी सूरा अवतरित न हो जाए जो उनके दिलों के भेद खोलकर रख दे। ऐ नबी, उनसे कहो, ''और हँसी उड़ाओ, अल्लाह उस चीज़ को खोल देनेवाला है जिसके खुल जाने से तुम डरते हो।'' (65) अगर उनसे पूछो कि तुम क्या बातें कर रहे थे, तो झट कह देंगे कि हम तो हँसी-मज़ाक़ और दिललगी कर रहे थे।[30] उनसे कहो, ''क्या तुम्हारी हँसी-दिललगी अल्लाह और उसकी आयतों और उसके रसूल ही के साथ थी? (66) अब बहाने मत घड़ो। तुमने ईमान लाने के बाद कुफ़्र किया है। अगर हमने तुममें से एक गिरोह को माफ़ कर भी दिया तो दूसरे गिरोह को तो हम ज़रूर सज़ा देंगे क्योंकि वह अपराधी है।''

30. तबूक की मुहिम के समय में मिथ्याचारी (मुनाफ़िक़) बहुधा अपनी बैठकों में बैठकर नबी (सल्ल०) और मुसलमानों का मज़ाक़ उड़ाते थे और अपनी हँसी और मज़ाक़ से उन लोगों की हिम्मतें पस्त करने की कोशिश करते थे जिन्हें वे सच्चे हृदय से जिहाद (सत्य के लिए लड़ने और जान तोड़ कोशिश करने) के लिए तैयार पाते। अतएव रिवायतों में उनके बहुत-से कथनों के उल्लेख हुए हैं। उदाहरणार्थ एक महफ़िल में कुछ मुनाफ़िक़ बैठे गप लड़ा रहे थे। एक ने कहा, ''अजी क्या रूमियों को भी तुमने कुछ अरबों की तरह समझ रखा है? कल देख लेना ये सब सूरमा जो लड़ने के लिए पधारे हैं रस्सियों में बँधे हुए होंगे।'' दूसरा बोला, ''मज़ा हो जो ऊपर से सौ-सौ कोड़े लगाने का आदेश हो जाए।'' एक और मुनाफ़िक़ ने नबी (सल्ल०) को युद्ध की तैयाररियाँ तेज़ करते देखकर अपने यार-दोस्तों से कहा, ''आपको देखिए, आप रूम और सीरिया के क़िलों पर विजय पाने चले हैं।''

(67) मिथ्याचारी (मुनाफ़िक़) मर्द और मिथ्याचारिणी औरतें सब एक-दूसरे जैसे हैं। बुराई का आदेश देते हैं और भलाई से रोकते हैं और अपने हाथ भलाई से रोके रखते हैं। ये अल्लाह को भूल गए तो अल्लाह ने भी इन्हें भुला दिया। यक़ीनन ये मिथ्याचारी ही अवज्ञाकारी हैं। (68) इन मिथ्याचारी मर्दों और मिथ्याचारिणी औरतों और अधर्मियों के लिए अल्लाह ने दोज़ख़ की आग का वादा किया है जिसमें वे हमेशा रहेंगे, वही इनके लिए मुनासिब है। इनपर अल्लाह की फिटकार है और इनके लिए क़ायम रहनेवाला अज़ाब है—(69) तुम लोगों के रंग-ढंग वही हैं जो तुम्हारे पहले के लोगों के थे। वे तुमसे ज़्यादा शक्ति संपन्न और तुमसे बढ़कर माल और औलादवाले थे। फिर उन्होंने दुनिया में अपने हिस्से के मज़े लूट लिए और तुमने भी अपने हिस्से के मज़े उसी तरह लूटे जैसे उन्होंने लूटे थे, और वेसे ही वाद-विवादों में तुम भी पड़े जैसे वाद-विवादों में वे पड़े थे, सो उनका अंजाम यह हुआ कि दुनिया और आख़िरत में उनका सब किया-धरा अकारथ हो गया और वही घाटे में हैं (70)—क्या इन लोगों को अपने से पहले लोगों का इतिहास नहीं पहुँचा, नूह की क़ौम, आद, समूद, इबराहीम की क़ौम, मदयन के लोग और वे बस्तियाँ जिन्हें उलट दिया गया।[31] उनके रसूल उनके पास खुली-खुली निशानियाँ लेकर आए, फिर यह अल्लाह का काम न था कि उनपर ज़ुल्म करता मगर वे ख़ुद ही अपने ऊपर ज़ुल्म करनेवाले थे।

(71) ईमानवाले मर्द और ईमानवाली औरतें, ये सब एक-दूसरे के साथी हैं, भलाई का हुक्म देते और बुराई से रोकते हैं, नमाज़ क़ायम करते हैं, ज़कात देते हैं, और अल्लाह और उसके रसूल का आज्ञापालन करते हैं। ये वे लोग हैं जिनपर अल्लाह की दयालुता उतर कर रहेगी, यक़ीनन अल्लाह को सबपर प्रभुत्व प्राप्त है और वह तत्त्वदर्शी और सर्वज्ञ है। (72) इन ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों से अल्लाह का वादा है कि उन्हें ऐसे बाग़ देगा जिनके नीचे नहरें बहती होंगी और वे उनमें हमेशा रहेंगे। उन सदाबहार बाग़ों में उनके लिए पाकीज़ा ठहरने की जहगें होंगी, और सबसे बढ़कर यह कि अल्लाह की प्रसन्नता उन्हें प्राप्त होगी। यही बड़ी सफलता है।

(73) ऐ नबी,[32] अधर्मियों (क़ाफ़िरों) और मिथ्याचारियों (मुनाफ़िक़ों) दोनों का पूरी शक्ति से मुक़ाबला करो और उनके साथ कठोरता से निपटो। आख़िरकार इनका ठिकाना जहन्नम है और वह अत्यन्त बुरी ठहरने की जगह है। (74) ये लोग अल्लाह की क़सम खा-खाकर कहते हैं कि हमने वह बात नहीं कही, हालाँकि उन्होंने ज़रूर ही वह

31. अर्थात लूत की क़ौम की बस्तियाँ जिन्हें तलपट करके रख दिया गया था।
32. यहाँ से वे आयतें शुरू होती हैं जो तबूक की मुहिम के बाद उतरी थीं।

कुफ़्र (अधार्मिकता) की बात कही है।[33] उन्होंने इस्लाम धारण करने के बाद कुफ़्र किया और उन्होंने वह कुछ करने का इरादा किया जिसे कर न सके।[34] यह उनका सारा गुस्सा इसी बात पर है ना कि अल्लाह और उसके रसूल ने अपने उदार अनुग्रह से उनको धनी बना दिया है। अब अगर ये अपनी इस नीति से बाज़ आएँ तो इन्हीं के लिए उत्तम है, और अगर वे बाज़ न आएँ तो अल्लाह उनको बड़ी ही दर्दनाक सज़ा देगा, दुनिया में भी और आख़िरत में भी, और ज़मीन में कोई नहीं जो इनका हिमायती और मददगार हो।

(75) उनमें से कुछ ऐसे भी हैं जिन्होंने अल्लाह से वादा किया था कि अगर उसने अपना अनुग्रह हमें प्रदान किया तो हम दान देंगे और अच्छे बनकर रहेंगे। (76) मगर जब अल्लाह ने उन्हें अपनी कृपा से धनवान कर दिया तो वे कंजूसी पर उतर आए और अपनी प्रतिज्ञा से ऐसे फिरे कि उन्हें इसकी परवाह तक नहीं है। (77) परिणाम यह हुआ कि उनकी इस वादाख़िलाफ़ी के कारण जो उन्होंने अल्लाह के साथ की, और उस झूठ के कारण जो वे बोलते रहे, अल्लाह ने उनके दिलों में मिथ्याचार (निफ़ाक़) बिठा दिया जो उसके सामने उनके उपस्थित किए जाने के दिन तक उनका पीछा न छोड़ेगा। (78) क्या ये लोग जानते नहीं कि अल्लाह उनके छिपे भेद और उनकी छिपी कानाफूसियों तक को जानता है और वह सभी परोक्ष की बातों से पूरी तरह परिचित है? (79) (वह ख़ूब जानता है उन कंजूस धनवानों को) जो स्वेच्छापूर्वक देनेवाले

33. वह बात क्या थी जिसकी ओर यहाँ संकेत किया गया है, इसके बारे में कोई निश्चित जानकारी हम तक नहीं पहुँची है, अलबत्ता रिवायतों में बहुत सारी ऐसी अधार्मिकता की बातों का उल्लेख मिलता है जो उस समय में मुनाफ़िक़ों ने की थीं। उदाहरणार्थ एक मुनाफ़िक़ ने एक नव युवक मुसलिम से बातचीत करते हुए कहा कि ''अगर वास्तव में वह सब कुछ सत्य है जो यह व्यक्ति (अर्थात नबी सल्ल०) पेश करता है तो हम सब गधों से भी बुरे हैं।'' एक और रिवायत में है कि तबूक की यात्रा में एक जगह नबी (सल्ल०) की ऊँटनी गुम हो गई। उस समय मुनाफ़िक़ों के एक गिरोह ने अपनी मजलिस में बैठकर ख़ूब मज़ाक़ उड़ाया और आपस में कहा कि ''ये हज़रत आसमान की ख़बरें तो सुनाते हैं मगर इनको अपनी ऊँटनी की कुछ ख़बर नहीं कि वह इस समय कहाँ है?''
34. यह इशारा है उन साज़िशों की ओर जो मुनाफ़िक़ों ने तबूक की मुहिम के समय में कीं। एक अवसर पर उन्होंने यह योजना बनाई कि रात के समय सफ़र में नबी (सल्ल०) को किसी खड्ड में फेंक दें। उन्होंने आपस में यह भी तय कर लिया था कि अगर तबूक में मुसलमान पराजित हो तो तुरन्त मदीना में अब्दुल्लाह बिन उबैय्य के सिर पर राजमुकुट रख दिया जाए।

ईमानवालों की माली क़ुरबानियों पर बातें छाँटते हैं और उन लोगों की हँसी उड़ाते हैं जिनके पास (अल्लाह के मार्ग में देने के लिए) उसके सिवा कुछ नहीं है जो वे अपने ऊपर मशक़्क़त सहकर देते हैं। अल्लाह इन हँसी उड़ानेवालों की हँसी उड़ाता है और इनके लिए दर्दनाक सज़ा है। (80) ऐ नबी, तुम चाहे ऐसे लोगों के लिए माफ़ी की प्रार्थना करो या न करो, अगर तुम सत्तर बार भी उन्हें माफ़ कर देने की दरख़्वास्त करोगे तो अल्लाह उन्हें हरगिज़ माफ़ न करेगा, इसलिए कि उन्होंने अल्लाह और उसके रसूल के साथ इनकार की नीति अपनाई है, और अल्लाह अवज्ञाकारी (फ़ासिक़) लोगों को छुटकारे की राह नहीं दिखाता।

(81) जिन लोगों को पीछे रह जाने की इजाज़त दे दी गई थी वे अल्लाह के रसूल का साथ न देने और घर बैठे रहने पर ख़ुश हुए और उन्हें गवारा न हुआ कि अल्लाह के मार्ग में जान और माल से संघर्ष करें। उन्होंने लोगों से कहा कि ''इस सख़्त गर्मी में न निकलो।'' इनसे कहो कि जहन्नम की आग इससे ज़्यादा गर्म है, कैसा अच्छा होता कि ये इसे जान पाते। (82) अब चाहिए कि ये लोग हँसना कम करें और रोएँ ज़्यादा, इसलिए कि जो बुराई ये कमाते रहे हैं उसकी मज़दूरी ऐसी ही है (कि उन्हें उसपर रोना चाहिए)। (83) अगर अल्लाह उनके बीच तुम्हें वापस ले जाए और भविष्य में इनमें से कोई गिरोह संघर्ष (जिहाद) के लिए निकलने की तुमसे इजाज़त माँगे तो साफ़ कह देनाः ''अब तुम मेरे साथ हरगिज़ नहीं चल सकते और न मेरे साथ किसी दुश्मन से लड़ सकते हो, तुमने पहले बैठ रहने को पसन्द किया था तो अब घर बैठनेवालों ही के साथ बैठे रहो।''

(84) और आगे उनमें से जो कोई मरे उसकी जनाज़े की नमाज़ भी तुम हरगिज़ न पढ़ना और न कभी उसकी क़ब्र पर खड़े होना, क्योंकि उन्होंने अल्लाह और उसके रसूल के साथ इनकार की नीति अपनाई है और वे मरे हैं इस हाल में कि वे अवज्ञाकारी थे। (85) उनकी मालदारी और उनकी औलाद की बहुलता तुमको धोखे में न डाले। अल्लाह ने तो इरादा कर लिया है कि इस माल और औलाद के द्वारा उनको इसी दुनिया में सज़ा दे और उनकी जाने इस हाल में निकलें कि वे अधर्मी हों।

(86) जब कभी कोई सूरा इस विषय की उतरी कि अल्लाह को मानो और उसके रसूल के साथ मिलकर संघर्ष (जिहाद) करो तो तुमने देखा कि जो लोग उनमें से सामर्थ्यवान् थे वही तुमसे प्रार्थना करने लगे कि उन्हें जिहाद में सम्मिलित होने से माफ़ रखा जाए और उन्होंने कहा कि हमें छोड़ दीजिए कि हम बैठनेवालों के साथ रहें। (87) उन लोगों ने घर बैठनेवालियों में शामिल होना पसन्द किया और उनके दिलों पर ठप्पा

लगा दिया गया, इसलिए उनकी समझ में अब कुछ नहीं आता। (88) इसके विपरीत रसूल ने और उन लोगों ने जो रसूल के साथ ईमान लाए थे अपनी जान और माल से जिहाद किया और अब सारी भलाइयाँ उन्हीं के लिए हैं और वही सफलता प्राप्त करनेवाले हैं। (89) अल्लाह ने उनके लिए ऐसे बाग़ तैयार कर रखे हैं जिनके नीचे नहरें बह रही हैं, उनमें वे हमेशा रहेंगे। यह है उच्च श्रेणी की सफलता।

(90) बद्दू अरबों में से भी बहुत-से लोग आए जिन्होंने बहाने किए ताकि उन्हें भी पीछे रह जाने की अनुमति दी जाए। इस तरह बैठे रहे वे लोग जिन्होंने अल्लाह और उसके रसूल से ईमान का झूठा इक़रार किया था। इन बद्दुओं में से जिन लोगों ने कुफ़्र की नीति अपनाई है जल्द ही उन्हें दर्दनाक सज़ा पहुँचेगी।

(91) कमज़ोर बूढ़े और बीमार लोग और वे लोग जो जिहाद में सम्मिलित होने के लिए पाथेय (राह-ख़र्च) नहीं पाते, अगर पीछे रह जाएँ तो कोई हरज नहीं जब कि वे निष्ठापूर्वक अल्लाह और उसके रसूल के वफ़ादार हों।[35] ऐसे सुकर्मी लोगों पर एतिराज़ की कोई गुंजाइश नहीं है, और अल्लाह माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है। (92) इसी तरह उन लोगों पर भी कोई एतिराज़ का अवसर नहीं है जिन्होंने ख़ुद आकर तुमसे दरख़्वास्त की कि हमारे लिए सवारियाँ जुटाई जाएँ, और जब तुमने कहा कि मैं तुम्हारे लिए सवारियों का प्रबन्ध नहीं कर सकता तो वे विवशता के साथ वापस गए और हाल यह था कि उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे और उन्हें इस बात का बड़ा ग़म था कि उन्हें अपने ख़र्च पर जिहाद में सम्मिलित होने की सामर्थ्य प्राप्त न थी (93) अलबत्ता एतिराज़ उन लोगों पर है जो मालदार हैं और फिर भी तुमसे दरख़्वास्त करते हैं कि उन्हें जिहाद में सम्मिलित होने से माफ़ रखा जाए। उन्होंने घर बैठनेवालियों में सम्मिलित होना पसन्द किया और अल्लाह ने उनके दिलों पर ठप्पा लगा दिया, इसलिए अब वे कुछ नहीं जानते (कि अल्लाह के यहाँ इनकी इस नीति का क्या परिणाम निकलनेवाला है)।

(94) तुम जब पलटकर उनके पास पहुँचोगे तो ये तरह-तरह के बहाने पेश करेंगे। मगर तुम साफ़ कह देना कि "बहाने न करो, हम तुम्हारी किसी बात का विश्वास

35. इससे मालूम हुआ कि जो लोग देखने में मजबूर हों उनके लिए भी सिर्फ़ कमज़ोरी और बीमारी या महज़ निर्धनता पूरे तौर पर माफ़ी का कारण नहीं है, बल्कि उनकी ये मजबूरियाँ सिर्फ़ उस रूप में उनके लिए माफ़ी का कारण हो सकती हैं जबकि वे अल्लाह और उसके रसूल के सच्चे वफ़ादार हों, वरना अगर वफ़ादारी न पाई जाती हो तो कोई व्यक्ति सिर्फ़ इसलिए माफ़ नहीं किया जा सकता कि वह कर्तव्य-पालन के अवसर पर बीमार या ग़रीब था।

न करेंगे। अल्लाह ने हमको तुम्हारे हालात बता दिए हैं। अब अल्लाह और उसका रसूल तुम्हारे चलन को देखेगा, फिर तुम उसकी ओर पलटाए जाओगे जो खुले और छिपे सबका जाननेवाला है और वह तुम्हें बता देगा कि तुम क्या कुछ करते रहे हो।" (95) तुम्हारी वापसी पर ये तुम्हारे सामने क़समें खाएँगे ताकि तुम उन्हें छोड़ दो। तो बेशक तुम उन्हें जाने ही दो, क्योंकि ये गन्दगी है और इनका वास्तविक ठिकाना जहन्नम है जो इनकी कमाई के बदले में इन्हें प्राप्त होगा। (96) ये तुम्हारे सामने क़समें खाएंगे ताकि तुम इनसे राज़ी हो जाओ। हालाँकि अगर तुम इनसे राज़ी हो भी गए तो अल्लाह हरगिज़ ऐसे अवज्ञाकारी (फ़ासिक़) लोगों से राज़ी न होगा।

(97) ये अरब बद्दू इनकार और मिथ्याचार में ज़्यादा सख़्त हैं और इनके मामले में इस बात की संभावनाएँ ज़्यादा हैं कि उस धर्म की मर्यादाओं से बेख़बर रहें जो अललाह ने अपने रसूल पर उतारा है।[36] अल्लाह सब कुछ जानता है और तत्त्वदर्शी

36. बद्दू अरबों से मुराद वे देहाती और सहराई (बयाबान में रहनेवाले) अरब हैं जो मदीना के निकटवर्ती इलाकों में आबाद थे। ये लोग मदीना में एक मज़बूत और संगठित शक्ति को उठते देखकर पहले तो आतंकित हुए फिर इस्लाम और कुफ़्र के संघर्षों के बीच एक समय तक अवसरवादिता की नीति पर चलते रहे। फिर जब इस्लामी हुकूमत का प्रभुत्व हिजाज़ और नज्द के एक बड़े हिस्से पर छा गया और विरोधी क़बीलों की शक्ति उसके मुक़ाबले में क्षीण होने लगी तो इन लोगों ने समयानुकूल हित इसी में देखा कि इस्लाम में दाखिल हो जाएँ, लेकिन इनमें कम लोग ऐसे थे जो इस धर्म को सत्य-धर्म समझकर सच्चे दिल से ईमान लाए हों और ख़ुलूस के साथ इसकी अपेक्षाओं और तक़ाज़ों को पूरा करने के लिए तैयार हों। उनकी इसी हालत को यहाँ इस तरह बयान किया गया है कि नगर-वासियों की अपेक्षा ये देहात और सहरा के लोग ज़्यादा मुनाफ़िक़ाना नीति अपनाए हुए हैं और सत्य का इनकार करने का भाव उनके भीतर अधिक पाया जाता है। फिर इसका कारण भी बता दिया है कि नगर के लोग तो ज्ञानवान और सत्य को अंगीकार किए हुए लोगों की संगत से लाभान्वित होकर कुछ धर्म को और उसकी मर्यादाओं को जान भी लेते हैं, मगर ये बद्दू चूँकि जिन्दगी-भर बिलकुल एक आर्थिक पशु की तरह रात-दिन आजीविका के फेर ही में पड़े रहते हैं और पाशविक जीवन की ज़रूरतों से उच्च किसी चीज़ की ओर ध्यान देने का इन्हें अवसर ही नहीं मिलता, इसलिए धर्म और उसकी मर्यादाओं से इनके अपरिचित रहने की संभावनाएँ ज़्यादा हैं। आगे आयत 122 में इनके इस रोग का इलाज पेश किया गया है।

और सर्वज्ञ है। (98) इन बद्दुओं में ऐसे-ऐसे लोग पाए जाते हैं जो अल्लाह के मार्ग में कुछ ख़र्च करते हैं तो उसे अपने ऊपर ज़बरदस्ती का तावान समझते हैं और तुम्हारे हक़ में समय के चक्करों का इनतिज़ार कर रहे हैं (कि तुम किसी चक्कर में फँसो तो वे अपनी गरदन से इस शासन-व्यवस्था के आज्ञापालन का पट्टा उतार फेंकें जिसमें तुमने उन्हें कस दिया है)। हालाँकि बुराई के चक्कर ने ख़ुद उनको अपनी लपेट में ले रखा है और अल्लाह सब कुछ सुनता और जानता है। (99) और इन्हीं बद्दुओं में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रखते हैं और जो कुछ ख़र्च करते हैं उसे अल्लाह के यहाँ निकटता का और रसूल की तरफ़ से रहमत की दुआएँ लेने का साधन बनाते हैं। हाँ! वह ज़रूर उनके लिए निकटता का साधन है और अल्लाह ज़रूर उनको अपनी दयालुता में प्रवेश करेगा, यक़ीनन अल्लाह माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है।

(100) वे घर-बार छोड़नेवाले (मुहाजिर) और उनके सहायक (अनसार) जो सबसे पहले ईमान के बुलावे को स्वीकार करने में अग्रसर रहे और वे भी जो बाद में सत्यनिष्ठा के साथ उनके पीछे आए अललाह उनसे राज़ी हुआ और वे अल्लाह से राज़ी हुए, अल्लाह ने उनके लिए ऐसे बाग़ तैयार कर रखे हैं जिनके नीच नहरें बहती होंगी और वे उनमें हमेशा रहेंगे, यही उच्च श्रेणी की सफलता है।

(101) तुम्हारे आस-पास जो बद्दू रहते हैं उनमें बहुत-से मिथ्याचारी (मुनाफ़िक़) हैं और इसी तरह ख़ुद मदीना के निवासियों में भी मिथ्याचारी मौजूद हैं जो मिथ्याचार में माहिर हो गए हैं। तुम उन्हें नहीं जानते, हम उनको जानते हैं। क़रीब है वह समय जब हम उनको दोहरी सज़ा देंगे, फिर वे ज़्यादा बड़ी सज़ा के लिए वापस लाए जाएँगे।

(102) कुछ और लोग हैं जिन्होंने अपने क़सूर मान लिए हैं। उनका कर्म मिला-जुला है, कुछ भला है और कुछ बुरा। बहुत संभव है कि अल्लाह उनसे दया का व्यवहार करे क्योंकि वह माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है। (103) ऐ नबी, तुम उनके मालों में से सदक़ा लेकर उन्हें पाक करो और (नेकी की राह में) उन्हें बढ़ाओ और उनके हक़ में रहमत की दुआ करो क्योंकि तुम्हारी दुआ उनके लिए शान्ति और सुकून का कारण होगी, अल्लाह सब कुछ सुनता और जानता है। (104) क्या इन लोगों को मालून नहीं है कि वह अल्लाह ही है जो अपने बन्दों की तौबा क़बूल करता है और उनके सदक़ों (दान) को स्वीकृति प्रदान करता है, और यह कि अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है। (105) और ऐ नबी, इन लोगों से कह दो कि तुम कर्म करो,

अल्लाह और उसका रसूल और ईमानवाले सब देखेंगे कि तुम्हारी नीति अब क्या रहती है, फिर तुम उसकी ओर पलटाए जाओगे जो खुले और छिपे सबको जानता है, और वह तुम्हें बता देगा कि तुम क्या करते रहे हो।

(106) कुछ दूसरे लोग हैं जिनका मामला अभी अल्लाह के हुक्म पर ठहरा हुआ है, चाहे उन्हें सज़ा दे और चाहे नए सिरे से उनपर मेहरबान हो जाए। अल्लाह सब कुछ जानता है और तत्त्वदर्शी एवं सर्वज्ञ है।

(107) कुछ और लोग हैं जिन्होंने एक मसजिद बनाई इस उद्देश्य के लिए कि (सत्य-सन्देश को) हानि पहुँचाएँ, और (अल्लाह की बन्दगी करने के बजाय) इनकार करें, और ईमानवालों में फूट डालें, और (इस दिखावे की इबादतगाह को) उस व्यक्ति के लिए घात-स्थल बनाएँ जो इससे पहले अल्लाह और उसके रसूल के विरुद्ध लड़ चुका है। वे ज़रूर क़समें खा-खाकर कहेंगे कि हमारा इरादा तो भलाई के सिवा किसी दूसरी चीज़ का न था। मगर अल्लाह गवाह है कि वे बिलकुल झूठे हैं। (108) तुम हरगिज़ उस मकान में खड़े न होना। जो मसजिद पहले दिन से तक़वा पर क़ायम की गई थी वही इसके लिए ज़्यादा मुनासिब है कि तुम उसमे (इबादत के लिए) खड़े हो, उसमें ऐसे लोग हैं जो पाक रहना पसन्द करते हैं और अल्लाह को पाकीज़गी अपनानेवाले ही पसन्द हैं।[37] (109) फिर तुम्हारा क्या ख़याल है कि अच्छा इनसान वह है जिसने अपनी इमारत की बुनियाद अल्लाह के डर और उसकी प्रसन्नता की चाहत पर रखी हो या वह जिसने अपनी इमारत एक घाटी के खोखले अस्थिर कगार पर उठाई और वह उसे लेकर सीधी जहन्नम की आग में जा गिरी? ऐस ज़ालिम लोगों को अल्लाह कभी

37. मदीना में उस समय दो मसजिदें थी। एक मसजिद कुबा जो शहर के किनारे में थी, दूसरी मसजिद नबवी जो शहर के अन्दर थी। इन दोनों मसजिदों की मौजूदगी में एक तीसरी मसजिद बनाने की कोई ज़रूरत नहीं थी। मगर मुनाफ़िक़ों ने यह बहाना बनाया कि बारिश में और जाड़े की रातों में जनसाधारण को और विशेष रूप से बूढ़ों और मजबूरों को जो इन दोनों मसजिदों से दूर रहते हैं, पाँचों वक़्त हाज़िरी देनी मुश्किल होती है। अतः हम सिर्फ़ नमाज़ियों की आसानी के लिए यह एक नही मसजिद निर्मित करना चाहते हैं। इस तरह उन्होंने उसके निर्माण की अनुमति प्राप्त की और उसे अपनी साज़िशों का अड्डा बना लिया। वे चाहते थे कि नबी (सल्ल०) को धोखा देकर आपसे उसका उद्घाटन कराएँ मगर अल्लाह ने नबी (सल्ल०) को उनके इरादों से पहले ही ख़बरदार कर दिया और तबूक से वापस आकर आपने इस 'मसजिदे ज़िरार' (हानिकारक मसजिद) को ढा दिया।

सीधा मार्ग नहीं दिखाता। (110) यह इमारत जो इन्होंने बनाई है, हमेशा इनके दिलों में अविश्वास की जड़ बनी रहेगी (जिसके निकलने का अब कोई उपाय नहीं) सिवाय इसके कि इनके दिल ही टुकड़े-टुकड़े हो जाएँ। अल्लाह बड़ा ही जाननेवाला और तत्त्वदर्शी है।

(111) वास्तविकता यह है कि अल्लाह ने ईमानवालों से उनकी जान और उनके माल जन्नत (स्वर्ग) के बदले ख़रीद लिए हैं।[38] वे अल्लाह के मार्ग में लड़ते और मारते और मरते हैं। उनसे (जन्नत का वादा) अल्लाह के ज़िम्मे एक पक्का वादा है तौरात और इंजील और क़ुरआन में। और कौन है जो अल्लाह से बढ़कर अपने वादे को पूरा करनेवाला हो? अतः ख़ुशियाँ मनाओ अपने उस सौदे पर जो तुमने अल्लाह से चुका लिया है, यही सबसे बड़ी सफलता है। (112) अल्लाह की ओर बार-बार पलटनेवाले,[39] उसकी बन्दगी करनेवाले, उसकी तारीफ़ के गुन गानेवाले, उसके लिए ज़मीन में चक्कर लगानेवाले,[40] उसके आगे झुकने और सजदे करनेवाले, भलाई का आदेश देनेवाले, बुराई से रोकनेवाले और अल्लाह की सीमाओं की रक्षा करनेवाले, (इस शान के होते हैं वे ईमानवाले जो अल्लाह से सौदे का यह मामला तय करते हैं) और ऐ नबी इन ईमानवालों को ख़ुशख़बरी दे दो।

(113) नबी को और उन लोगों को जो ईमान लाए हैं, शोभा नहीं देता कि

38. यहाँ ईमान के उस मामले को जो अल्लाह और बन्दे के बीच होता है 'सौदा करने' से अभिव्यंजित किया गया है। इसका अर्थ यह है कि ईमान वास्तव में एक अनुबन्ध (इक़रारनामा) है जिसके अन्तर्गत बन्दा अपनी जान और अपना माल अल्लाह के हाथ बेच देता है और उसके बदले में अल्लाह की ओर से इस वादे को क़बूल कर लेता है कि मरने के बाद दूसरी ज़िन्दगी में वह उसे जन्नत प्रदान करेगा।

39. यहाँ मूल में शब्द 'अत्ताइबून' इस्तेमाल हुआ है, जिसका शाब्दिक अनुवाद 'तौबा करनेवाले' है; लेकिन बोल के जिस अंदाज़ में यह शब्द इस्तेमाल किया गया है उससे साफ़ ज़ाहिर है कि तौबा करना ईमानवालों के स्थायी गुणों में से है। इसलिए इसका सही अर्थ यह है कि वे एक ही बार तौबा नहीं करते बल्कि हमेशा तौबा करते रहते हैं। और तौबा का वास्तविक अर्थ रुजू करना या पलटना है। अतः इस शब्द के वास्तविक मर्म को स्पष्ट करने के लिए हमने इसका तशरीही तर्जुमा (भावानुवाद) इस तरह किया है : "वे अल्लाह की ओर बार-बार पलटते हैं।"

40. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि रोज़े रखनेवाले।

मुशरिकों के लिए माफ़ी की दुआ करें चाहे वे उनके नातेदार ही क्यों न हों, जबकि उनपर यह बात खुल चुकी है कि वे जहन्नम के योग्य हैं। (114) इबराहीम ने अपने बाप के लिए जो माफ़ी की दुआ की थी वह तो उस वादे की वजह से थी जो उसने अपने बाप से किया था, मगर जब उसपर यह बात खुल गई कि उसका बाप अल्लाह का दुश्मन है तो वह उससे बेज़ार हो गया, सत्य यह है कि इबराहीम बड़ा कोमल हृदयवाला और अल्लाह से डरनेवाला और सहनशील व्यक्ति था।

(115) अल्लाह का यह तरीक़ा नहीं है कि लोगों को मार्ग पर लाने के बाद फिर गुमराही में डाल दें जब तक कि उन्हें साफ़-साफ़ बता न दे कि उनहें किन चीज़ों से बचना चाहिए। वास्तव में अल्लाह को हर चीज़ का ज्ञान है। (116) और यह भी सत्य है कि अल्लाह ही के अधिकार में ज़मीन और आसमानों का राज्य है, उसी के अधिकार में ज़िन्दगी और मौत है, और तुम्हारा कोई समर्थक और मददगार ऐसा नहीं है जो तुम्हें उससे बचा सके।

(117) अल्लाह ने माफ़ कर दिया नबी को और उन घर-बार छोड़नेवालों (मुहाजिरों) और उनकी मदद करनेवालों (अनसार) को जिन्होंने बड़ी तंगी के समय में नबी का साथ दिया। अगरचे उनमें से कुछ लोगों के दिल कुटिलता की ओर झुक चले थे,[41] (मगर जब उन्होंने इस कुटिलता का अनुसरण न किया बल्कि नबी का साथ दिया तो) अल्लाह ने उन्हें माफ़ कर दिया, बेशक उसका मामला इन लोगों के साथ नर्मी और दया का है। (118) और उन तीनों को भी उसने माफ़ किया जिनके मामले को स्थगित कर दिया गया था। जब ज़मीन अपनी सारी वुसअत (फैलाव) के बावजूद उनपर तंग हो गई और उनकी अपनी जानें भी उनपर बोझ होने लगी और उन्होंने जान लिया कि अल्लाह से बचने के लिए कोई शरण लेने की जगह ख़ुद अल्लाह ही की दयालुता की छाया के सिवा नहीं है तो अल्लाह अपनी मेहरबानी से उनकी ओर पलटा ताकि वे उसकी ओर पलट आएँ, यक़ीनन ही वह बड़ा माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है।[42]

(119) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह से डरो और सच्चे लोगों का साथ दो। (120) मदीना के निवासियों और आस-पास के बद्दुओं को यह हरगिज़ मुनासिब

41. अर्थात् कुछ ख़ुलूसवाले सहाबा भी उस कठिन समय में युद्ध पर जाने से किसी न किसी हद तक जी चुराने लगे थे, मगर चूँकि उनके दिलों में ईमान था और वे सच्चे दिल से सत्य धर्म से प्रेम करते थे इसलिए आख़िरकार उन्होंने अपनी इस कमज़ोरी पर क़ाबू पा लिया।

न था कि अल्लाह के रसूल को छोड़कर घर बैठ रहते और उसकी ओर से बेपरवाह होकर अपनी-अपनी जान (नफ़्स) की चिन्ता में लग जाते। इसलिए कि ऐसा कभी न होगा कि अल्लाह के मार्ग में, भूख-प्यास और शारीरिक मशक़्क़त की कोई तक़लीफ़ वे झेलें, और सत्य का इनकार करनेवालों को जो मार्ग अप्रिय है उसपर कोई क़दम वे उठाएँ, और किसी दुश्मन से (सत्य की दुश्मनी का) कोई बदला वे लें, और उसके बदले उनके हक़ में एक अच्छा कर्म न लिखा जाए। यक़ीनन अल्लाह के यहाँ उत्तमकारों का पारिश्रमिक मारा नहीं जाता। (121) इसी तरह यह भी कभी न होगा कि वे (अल्लाह के मार्ग में) थोड़ा या बहुत कोई ख़र्च उठाएँ और (जिहाद के प्रयास में) कोई घाटी वे पार करें और उनके हक़ में उसे लिख न लिया जाए ताकि अल्लाह उनके इस अच्छे कारनामे का बदला उन्हें प्रदान करे।

(122) और यह कुछ ज़ूरूरी न था कि ईमानवाले सारे के सारे ही निकल खड़े होते, मगर ऐसा क्यों न हुआ कि उनकी आबादी के हर हिस्से में कुछ लोग निकलकर आते और दीन (धर्म) की समझ पैदा करते और वापस जाकर अपने इलाक़े के निवासियों को सावधान करते ताकि वे (मुसलिमों से भिन्न नीति से) परहेज़ करते।[43]

42. ये तीनों साहब काब बिन मालिक (रज़ि॰), हिलाल बिन उमैया (रज़ि॰) और मुरारा बिन रुबैअ (रज़ि॰) थे। तीनों सच्चे ईमानवाले थे, इससे पहले बार-बार अपने ख़ुलूस का सबूत दे चुके थे, क़ुरबानियाँ दे चुके थे, मगर इन सेवाओं के बावजूद तबूक की मुहिम के नाज़ुक मौक़े पर जबकि सभी युद्ध के योग्य ईमानवालों को युद्ध के लिए निकल आने का आदेश दिया गया था, इन महानुभावों ने जो सुस्ती दिखाई उसपर सख़्त पकड़ की गई। नबी (सल्ल॰) ने तबूक से लौटकर मुसलमानों को आदेश दे दिया कि कोई उनसे सलाम और बातचीत न करे। 40 दिन के बाद उनकी बीवियों को भी उनसे अलग रहने की ताकीद कर दी गई। वास्तव में मदीना की बस्ती में उनका वही हाल हो गया था जिसका चित्रण इस आयत में प्रस्तुत किया गया है। आख़िरकार जब उनके बहिष्कार को 50 दिन हो गए तब माफ़ी का यह आदेश उतरा।
43. मुराद यह है कि तमाम बद्दुओं का मदीना आ जाना कुछ ज़रूरी न था। हर बस्ती और इलाक़े के लोगों में से अगर कुछ लोग मदीना में आकर दीन (धर्म) का ज्ञान प्राप्त करते और वापस जाकर अपने इलाक़े के लोगों को धर्म (दीन) की शिक्षा देते तो बद्दुओं में वह जिहालत बाक़ी न रहती जिसके कारण वे मिथ्याचार (मुनाफ़िक़त) के रोग में ग्रस्त हैं और इस्लाम क़बूल कर लेने के बावजूद मुसलमान होने का हक़ अदा नहीं करते।

(123) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, युद्ध करो उन सत्य का इनकार करनेवालों से जो तुम्हारे पास हैं।[44] और चाहिए कि वे तुम्हारे अन्दर सख़्ती पाएँ,[45] और जान लो कि अल्लाह डर रखनेवालों के साथ है। (124,125) जब कोई नई सूरा उतरती है तो उनमें से कुछ लोग (मज़ाक़ के तौर पर मुसलमानों से) पूछते हैं कि ''कहो, तुममें से किसके ईमान में इससे इज़ाफ़ा हुआ?'' जो लोग ईमान लाए हैं उनके ईमान में तो वास्तव में (हर उतरनेवाली सूरा ने) इज़ाफ़ा ही किया है और वे इससे ख़ुश हैं, अलबत्ता जिन लोगों के दिलों को (निफ़ाक़ का) रोग लगा हुआ था उनकी पिछली गन्दगी पर (हर नई सूरा ने) एक और गन्दगी का इज़ाफ़ा कर दिया और वे मरते दम तक कुफ़्र ही में पड़े रहे। (126) क्या ये लोग देखते नहीं कि हर साल एक-दो बार ये आज़माइश में डाले जाते हैं?[46] मगर इसपर भी न तौबा करते हैं न कोई शिक्षा ग्रहण करते हैं। (127) जब कोई सूरा उतरती है तो ये लोग आँखों ही आँखों में एक-दूसरे से बातें करते हैं कि कहीं कोई तुमको देख तो नहीं रहा है, फिर चुपके से निकल भागते हैं। अल्लाह ने इनके दिल फेर दिए हैं क्योंकि ये नासमझ लोग हैं।

(128) देखो, तुम लोगों के पास एक रसूल आया है जो ख़ुद तुम ही में से है, तुम्हारा नुक़सान में पड़ना उसके लिए असह्य है, तुम्हारी कामयाबी की वह लालसा रखता है, ईमान लानेवालों के लिए वह बड़ा मेहरबान और रहमदिल है। (129)—अब अगर ये लोग तुमसे मुँह फेरते हैं तो ऐ नबी, इनसे कह दो कि ''मेरे लिए अल्लाह बस करता है, कोई पूज्य नहीं मगर वह, उसी पर मैंने भरोसा किया और वह मालिक है महान राजसिंहासन का।''



44. संदर्भ पर विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यहाँ इनकार करनेवालों से मुराद वे मुनाफ़िक़ लोग हैं जिनका सत्य को स्वीकार न करना पूरी तरह ज़ाहिर हो चुका था और जिनके इस्लामी समाज में मिले-जुले रहने से भारी नुक़सान पहुँच रहा था।
45. अर्थात् अब वह नर्म व्यवहार ख़त्म हो जाना चाहिए जो अब तक उनके साथ होता रहा है।
46. अर्थात् कोई साल ऐसा नहीं गुज़र रहा है जबकि एक-दो बार ऐसी स्थितियाँ पेश न आती हों जिनमें उनके ईमान का दावा आज़माइश की कसौटी पर कसा न जाता हो और उसकी खोट का भेद खुल न जाता हो।

10. यूनुस

नाम

इस सूरा नाम परम्परा के अनुसार केवल चिह्न के लिए आयत 98 से लिया गया है, जिसमें सांकेतिक रूप से हज़रत यूनुस (अलै॰) का ज़िक्र हुआ है। सूरा का विषय-शीर्षक हज़रत यूनुस (अलै.) की कथा नहीं है।

अवतरणस्थान

उल्लेखों से मामूल होता है और मूल विषय से इसका समर्थन होता है कि यह पूरी सूरा मक्का में उतरी है।

अवतरणकाल

अवतरणकाल के संबंध में हमें कोई उल्लेख नहीं मिला, किन्तु विषयवस्तु से ऐसा ही प्रकट होता है कि यह सूरा मक्का के निवासकाल के अंतिम चरण में अवतरित हुई होगी जब इस्लामी संदेश के विरोधियों की ओर से विरोध पूर्णरूप धारण कर चुका था। लेकिन इस सूरा में हिजरत की ओर कोई संकेत नहीं पाया जाता, इसलिए इसका अवतरणकाल उन सूरतों से पहले समझना चाहिए जिनमें कोई-न-कोई सूक्ष्म या असूक्ष्म संकेत हमको हिजरत के संबंध में मिलता है—अवतरणकाल के इस निर्धारण के बाद ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करने की आवश्यकता शेष नहीं रहती, क्योंकि इस काल की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को सूरा 6 (अनआम) और सूरा 7 (आराफ़) के परिचय-संबंधी लेखों में वर्णित किया जा चुका है।

विषय वस्तु

अभिबाषण का विषय आमंत्रण, उपदेश और चेतावनी है। वाणी का शुभारंभ इस तरह होता है कि लोग एक मनुष्य द्वारा नुबूवत का संदेश पेश करने पर आश्चर्यचकित हैं और उसे अकारण जादूगरी का इलज़ाम दे रहे हैं, यद्यपि वह जो बात पेश कर रहा है उसमें न तो कोई चीज़ आश्चर्यजनक है और न जादू और काहिनी से उसका कोई संबंध है। वह तो दो महत्त्वपूर्ण सच्चाइयों से तुमको अवगत करा रहा है, (एक तो एकेश्वरवाद दूसरे क़ियामत और बदला दिए जाने के दिन का आना।) ये दोनों सच्चाइयाँ जो वह तुम्हारे सामने प्रस्तुत कर रहा है, अपनी जगह स्वयं तथ्य हैं चाहे तुम मानो या न मानो। इन्हें अगर मान लोगे तो तुम्हारा अपना परिणाम अच्छा होगा, अन्यथा स्वयं ही बुरा परिणाम देखोगे।

वार्ताएँ

इस भूमिका के पश्चात् निम्नलिखित वार्ताएँ एक विशेष कर्म के साथ सामने आती हैं–

1) वे प्रमाण जो प्रभुत्व के एकत्व और पारलौकिक जीवन के विषय में ऐसे लोगों को बौद्धिक एवं आत्मिक परितोष प्रदान कर सकते हैं, जो आज्ञानयुक्त पक्षपात में ग्रस्त न हों।

2) उन भ्रमों का निवारण और उन असावधानियों पर चेतावनी, जो लोगों को एकेश्वरवाद और आख़िरत की धारणा स्वीकार करने पर रुकावट बन रही थीं (और सदैव बना करती हैं)।

3) उन संदेहों और आक्षेपों का उत्तर, जो मुहम्मद (सल्ल॰) की रिसालत (पैग़म्बरी) और आपके लाए हुए संदेश के विषय में प्रस्तुत किए जाते थे।

4) दूसरे जीवन में जो कुछ पेश आनेवाला है उसकी पूर्व-सूचना।

5) इस बात की चेतावनी कि संसार का वर्तमान जीवन वास्तव में परीक्षा का जीवन है। इस जीवन के अवसर को यदि तुमने नष्ट कर दिया और नबी (सल्ल॰) का आदेश स्वीकार करके परीक्षा की सफलता का आयोजन न किया तो फिर कोई दूसरा अवसर तुम्हें मिलना नहीं है।

6) उन खुले-खुले आज्ञानों और पथभ्रष्टताओं की ओर संकेत, जो लोगों के जीवन में केवल इसलिए पाई जा रही थी कि वे ईश्वरीय मार्गदर्शन के बिना जी रहे थे।

इस क्रम में नूह (अलै॰) की कथा संक्षेप में और मूसा (अलै॰) की कथा विस्तार के साथ प्रस्तुत की गई है, जिससे चार बातें मन में बिठानी अपेक्षित हैं :

प्रथम, यह कि मुहम्मद (सल्ल॰) के साथ जो मामला तुम कर रहे हो वह उससे मिलता-जुलता है जो नूह और मूसा (अलै॰) के साथ तुम से पहले के लोग कर चुके हैं और विश्वास करो कि इस नीति का जो परिणाम वे देख चुके हैं, वही तुम्हें भी देखना पड़ेगा। द्वितीय, यह कि मुहम्मद (सल्ल॰) और उनके साथियों को आज निर्बल बेबस देखकर यह न समझ लेना कि परिस्थिति सदैव यही रहेगी। तुम्हें यह ख़बर नहीं है कि इन लोगों के पीछे वही ईश्वर है, जो मूसा और हारून (अलै॰) के पीछे था और वह ऐसे तरीक़े से परिस्थितियों की कायापलट देता है जहाँ किसी की दृष्टि नहीं पहुँच सकती। तृतीय, यह कि संभलने की मुहलत समाप्त होने के पश्चात् ठीक अंतिम क्षण पर तौबा की तो क्षमा नहीं किए जाओगे। चतुर्थ, यह कि ईमानवाले, प्रतिकूल वातावरण की

अत्यंत कठिनाई को देखकर निराश न हों और उन्हें मालूम हो कि इन परिस्थितियों में उनको किस तरह काम करना चाहिए। तदधिक वे इस पर सतर्क हो जाएँ कि जब अल्लाह उन्हें अपनी कृपा से इस परिस्थिति से निकाल दे तो कहीं वे वह नीति न अपना लें जो बनी इसराईल ने मिस्र से मुक्त होकर ग्रहण की।



10. सूरा यूनुस

(मक्का में उतरी–आयतें 109)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ रा॰, ये उस उस किताब की आयतें है जो ज्ञान एवं तत्त्वदर्शिता से परिपूर्ण है।

(2) क्या लोगों के लिए यह एक अजीब बात हो गई कि हमने ख़ुद उन्हीं में से एक आदमी पर प्रकाशना भेजी कि (बेख़बरी में पड़े हुए) लोगों को चौका दे और जो मान लें उनको ख़ुशख़बरी दे दे कि उनके लिए उनके रब के पास सच्ची प्रतिष्ठा और सम्मानित पद है? (इसपर) इनकार करनेवालों ने कहा कि यह व्यक्ति तो खुला जादूगर है।[1]

(3) वास्तविकता यह है कि तुम्हारा रब वही ईश्वर है जिसने आसमानों और ज़मीन को छः दिनों में पैदा किया, फिर राजसिंहासन पर विराजमान होकर विश्व का इनतिज़ाम चला रहा है। कोई सिफ़ारिश करनेवाला नहीं है सिवाय इसके कि उसकी अनुमति के बाद सिफ़ारिश करे। यही अल्लाह तुम्हारा रब है, अतः तुम इसी की बन्दगी करो। फिर क्या तुम होश में न आओगे?

(4) उसी की ओर तुम सबको पलटकर जाना हैं, यह अल्लाह का पक्का वादा है। बेशक पैदाइश की शुरुआत वही करता है, फिर वही दुबारा पैदा करेगा ताकि जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए उनको इनसाफ़ के साथ अच्छा बदला दे, और जिन्होंने इनकार की नीति अपनाई वे खौलता हुआ पानी पिएँ और दर्दनाक सज़ा भुगतें सत्य के उस इनकार के बदले में जो वे करते रहे।

(5) वही है जिसने सूरज को प्रकाशमान बनाया और चाँद को चमक दी और चाँद के घटने-बढ़ने की मंज़िलें ठीक-ठीक निश्चित कर दी ताकि तुम उससे वर्षों और तारीख़ों के हिसाब मालूम करो। अल्लाह ने ये सब कुछ सत्यानुकूल ही पैदा किया है। वह अपनी निशानियों को खोल-खोलकर पेश कर रहा है उन लोगों के लिए जो ज्ञानवान हैं। (6) यक़ीनन रात और दिन के उलट-फेर में और हर उस चीज़ में जो अल्लाह ने ज़मीन और

1. नबी (सल्ल॰) को जादूगर वे इस अर्थ में कहते थे कि जो व्यक्ति भी क़ुरआन सुनकर और आपके प्रचार से प्रभावित होकर ईमान क़बूल करता था वह जान पर खेल जाने और दुनिया-भर से कट जाने और हर मुसीबत उठाने के लिए तैयार हो जाता था।

आसमानों में पैदा की है, निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो (असत्य देखने और असत्य कार्य करने से) बचना चाहते हैं।[2]

(7) वास्तविकता यह है कि जो लोग हमसे मिलने की उम्मीद नहीं रखते और दुनिया की ज़िन्दगी ही पर राज़ी और सन्तुष्ट हो गए हैं, और जो लोग हमारी निशानियों की ओर से असावधानी बरत रहे हैं, (8) उनका अन्तिम ठिकाना जहन्नम होगा उन बुराइयों के बदले में जिनका अर्जन वे (अपनी इस ग़लत धारणा और ग़लत नीति के कारण) करते रहे।

(9) और यह भी सत्य है कि जो लोग ईमान लाए (अर्थात् जिन्होंने उन सच्चाइयों को माना जो इस किताब में सामने लाई गई हैं) और अच्छे काम करते रहे; उन्हें उनका पालनकर्ता रब उनके ईमान के कारण सीधी राह चलाएगा, नेमत भरी जन्नतों में उनके नीचे नहरें बहेंगी, (10) वहाँ उनकी पुकार यह होगी कि ''पाक है तू ऐ अल्लाह'', और उनकी दुआ यह होगी कि ''सलामती हो'' और उनकी हर बात का अन्त इसपर होगा कि ''सारी तारीफ़ सारे जहान के रब अल्लाह ही के लिए है।''

(11) अगर कहीं अल्लाह लोगों के साथ बुरा मामला करने में भी उतनी ही जल्दी करता जितनी वे दुनिया की भलाई माँगने में जल्दी करते हैं तो काम करने की उनकी मुहलत कभी की ख़त्म कर दी गई होती। (मगर हमारा यह तरीक़ा नहीं है) इसलिए हम उन लोगों को जो हमसे मिलने की उम्मीद नहीं रखते उनकी सरकशी में भटकने के लिए छूट दे देते हैं। (12) इनसान का हाल यह है कि जब उसपर कोई कठिन समय आता है तो खड़े और बैठे और लेटे हमको पुकारता है, मगर जब हम उसकी मुसीबत टाल देते हैं तो ऐसा चल निकलता है कि मानों उसने कभी अपने किसी बुरे समय पर हमको पुकारा ही न था। इस तरह मर्यादा का उल्लंघन करनेवालों के लिए उनके करतूत ख़ुशनुमा बना दिए गए हैं। (13) लोगो, तुमसे पहले की क़ौमों[3] को हमने तबाह कर दिया जब उन्होंने ज़ुल्म की नीति अपनाई और उनके रसूल उनके पास खुली-खुली निशानियाँ लेकर आए और उन्होंने ईमान को स्वीकार ही न किया। इस तरह हम अपराधियों को उनके अपराधों का बदला दिया करते हैं। (14) अब उनके बाद हमने

2. अर्थात् इन निशानियों से सत्य तक सिर्फ़ वही लोग पहुँच सकते हैं जिनमें ये गुण पाए जाएँ। एक यह कि वे अज्ञानयुक्त पक्षपात से अलग होकर ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन साधनों से काम लें जो अल्लाह ने इनसान को दिए हैं। दूसरे यह कि उनके भीतर ख़ुद यह इच्छा मौजूद हो कि ग़लती से बचें और सही रास्ता अपनाएँ।

तुमको ज़मीन में उनकी जगह दी है, ताकि देखें तुम कैसे कर्म करते हो।

(15) जब उन्हें हमारी साफ़-साफ़ बातें सुनाई जाती हैं तो वे लोग जो हमसे मिलने की उम्मीद नहीं रखते, कहते है कि ''इसके बदले कोई और क़ुरआन लाओ या इसमें कुछ संशोधन करो।'' ऐ नबी, उनसे करो, ''मेरा यह काम नहीं है कि अपनी ओर से इसमें कोई परिवर्तन कर लूँ। मैं तो बस उस प्रकाशना (वह्य) का अनुयायी हूँ जो मेरे पार भेजी जाती है। अगर मैं अपने रब का आदेश न मानूँ तो मुझे एक बड़े भयंकर दिन के अज़ाब का डर है।'' (16) और कहो, ''अगर अल्लाह की इच्छा यही होती तो मैं यह क़ुरआन तुम्हें कभी न सुनाता और अल्लाह तुम्हें इसकी ख़बर तक न देता। आख़िर इससे पहले मैं एक उम्र तुम्हारे बीच गुज़ार चुका हूँ, क्या तुम बुद्धि से काम नहीं लेते?[4] (17) फिर उससे बढ़कर ज़ालिम और कौन होगा जो एक झूठी बात घड़कर अल्लाह से जोड़े या अल्लाह की वास्तविक आयतों को झुठलाए। यक़ीनन अपराधी कभी सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।''

(18) ये लोग अल्लाह के सिवा उनको पूज रहे हैं जो इनको न हानि पहुँचा सकते हैं न लाभ, और कहते यह हैं कि ये अल्लाह के यहाँ हमारे सिफ़ारिशी हैं। ऐ नबी, इनसे कहो, ''क्या तुम अल्लाह को उस बात की ख़बर देते हो जिसे न वह आसमानों में जानता

3. मूल में 'क़ुरून' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिससे साधारणतया अरबी भाषा में मुराद 'एक ज़माने के लोग' होते हैं, लेकिन क़ुरआन में जिस ढंग से विभिन्न अवसरों पर इस शब्द का प्रयोग किया गया है उससे ऐसा लगता है कि 'क़र्न' से मुराद वह क़ौम या समूह है जो अपने ज़माने में उन्नति के शिखर पर रही हो। ऐसी क़ौम के विनष्ट होने का अनिवार्यतः यही अर्थ नहीं है कि उसकी नस्ल को बिलकुल ख़त्म ही कर दिया जाए। बल्कि उसका उन्नति के स्थान से गिरा दिया जाना, उसकी सभ्यता एवं संस्कृति का नष्ट हो जाना, उसके व्यक्तित्व का मिट जाना और उसकी टुकड़ियों का टुकड़े-टुकड़े होकर दूसरी क़ौमों में गुम हो जाना, यह भी विनाश ही का एक रूप है।

4. अर्थात् मैं तुम्हारे लिए कोई अजनबी आदमी नहीं हूँ। तुम्हारे ही शहर में पैदा हुआ हूँ। तुम्हारे ही बीच बचपन से गुज़रकर इस आयु को पहुँचा। अब क्या मेरे सारे जीवन को देखते हुए तुम ईमानदारी के साथ यह कह सकते हो कि यह क़ुरआन मेरी अपनी रची हुई वाणी हो सकता है। और क्या मुझसे यह उम्मीद कर सकते हो कि मैं इतना बड़ा झूठ बोलूँगा कि ख़ुद अपने मन से कोई बात घड़ूँ और फिर लोगों से कहूँ कि यह अल्लाह की ओर से मुझपर अवतरित हुआ है।

है और न ज़मीन में?''[5] पाक है वह और उच्च है उस शिर्क से जो ये लोग करते हैं।

(19) शुरू में सारे इनसान एक ही समुदाय (उम्मत) के थे, बाद में उन्होंने विभिन्न धारणाएँ और पंथ बना लिए, और अगर तेरे रब की ओर से पहले ही एक बात निश्चित न कर ली गई होती तो जिस चीज़ में वे परस्पर विभेद कर रहे हैं उसका फ़ैसला कर दिया जाता।[6]

(20) और यह जो वे कहते हैं कि इस नबी पर इसके रब की ओर से कोई निशानी क्यों न उतारी गई, तो नसे कहो, ''ग़ैब (परोक्ष) का मालिक और अधिकारी तो अल्लाह ही है, अच्छा इनतिज़ार करो, मैं भी तुम्हारे साथ इनतिज़ार करता हूँ।''

(21) लोगों का हाल यह है कि मुसीबत के बाद जब हम उनको रहमत (दयालुता) का मज़ा चखाते हैं तो तुरन्त ही वे हमारी निशानियों के मामले में चालबाज़ियाँ शुरू कर देते हैं।[7] इनसे कहो, ''अल्लाह अपनी चाल में तुमसे ज़्यादा तेज़ है, उसके फ़रिश्ते तुम्हारी सब मक्कारियों को लिख रहे हैं।'' (22) वह अल्लाह ही है जो तुम्हें जल और थल की सैर कराता है। अतएव जब तुम नौकाओं में सवार होकर अनुकूल हवा पर प्रसन्न और ख़ुशी के साथ सफ़र कर रहे होते हो और फिर अचानक प्रतिकूल हवा का ज़ोर होता है और हर ओर से मौजों के थपेड़े लगते हैं और मुसाफ़िर समझ लेते हैं कि तूफ़ान में घिर गए, उस समय सब अपने दीन-धर्म को अल्लाह ही के लिए ख़ालिस करके उससे दुआएँ माँगते है कि ''अगर तूने हमको इस बला से निकाल दिया तो हम शुक्रगुज़ार बन्दे बनेंगे।'' (23) मगर जब वह उनको बचा लेता है तो फिर

5. किसी चीज़ का अल्लाह के ज्ञान में न होना यह अर्थ रखता है कि वह सिरे से मौजूद ही नहीं है, इसलिए कि सब कुछ जो मौजूद है अल्लाह के ज्ञान में है। अतः सिफ़ारिशियों के न होने के लिए यह एक बहुत ही सुन्दर वर्णन-शैली है कि अल्लाह तो जानता नहीं कि धरती या आकाश में कोई उसके यहाँ तुम्हारी सिफ़ारिश करनेवाला है, फिर यह तुम किन सिफ़ारिशियों की उसे सूचना दे रहे हो?
6. अर्थात् अगर अल्लाह ने पहले ही यह तय न कर लिया होता कि फ़ैसला क़ियामत के दिन होगा तो यहीं उसका फ़ैसला कर दिया जाता।
7. अर्थात् मुसीबत अल्लाह की ओर से एक निशानी होती है जो इनसान को एहसास दिलाती है कि अल्लाह के सिवा कोई उसे दूर करनेवाला नहीं है। मगर जब वह टल जाती है और अच्छा समय आ जाता है तो फिर ये कहने लगते हैं कि यह हमारे देवताओं और सिफ़ारिशियों की कृपा का परिणाम है।

वही लोग सत्य से हटकर ज़मीन में विद्रोह करने लगते हैं। लोगो, तुम्हारा यह विद्रोह तुम्हारे ही विरुद्ध पड़ रहा है। दुनिया की ज़िन्दगी के थोड़े दिनों के मज़े हैं (लूट लो), फिर हमारी ओर तुम्हें पलटकर आना है, उस समय हम तुम्हें बता देंगे कि तुम क्या कुछ करते रहे हो। (24) यह दुनिया की ज़िन्दगी (जिसके नशे में चूर होकर तुम हमारी निशानियों की अनदेखी कर रहे हो) इसकी मिसाल ऐसी है जैसे आसमान से हमने जल बरसाया तो ज़मीन की उपज, जिसे आदमी और जानवर सब खाते हैं, ख़ूब घनी हो गई, फिर ठीक उस समय जबकि ज़मीन अपनी बहार पर थी और खेतियाँ बनी-सँवरी खड़ी थी और उनके मालिक समझ रहे थे कि अब हमें उनसे लाभ उठाने की सामर्थ्य प्राप्त है, अचानक रात को या दिन को हमारा आदेश आ गया और हमने उसे ऐसा ग़ारत करके रख दिया कि मानो कल वहाँ कुछ था ही नहीं। इस तरह हम निशानियाँ खोल-खोलकर पेश करते हैं उन लोगों के लिए जो सोचने-समझनेवाले हैं। (25) (तुम इस अस्थायी ज़िन्दगी के धोखे में पड़ रहे हो) और अल्लाह तुम्हें सलामती के घर की ओर बुला रहा है।[8] (राह पर लान उसके अधिकार में है) जिसको वह चाहता है सीधा मार्ग दिखा देता है। (26) जिन लोगों ने भलाई का तरीक़ा अपनाया उनके लिए भलाई है और उसके अलावा अनुग्रह। उनके चेहरों पर कालिख और रुसवाई न छाएगी। वे जन्नत के अधिकारी हैं जहाँ वे हमेशा रहेंगे। (27) और जिन लोगों ने बुराइयाँ कमाई उनकी बुराई जैसी है वैसी ही वे बदला पाएँगे, रुसवाई उनपर छाई होगी, कोई अल्लाह से उनको बचानेवाला न होगा, उनके चेहरों पर ऐसा अंधकार छाया हुआ होगा जैसे रात के काले परदे उनपर पड़े हुए हों, वे दोज़ख़ के पात्र हैं जहाँ वे हमेशा रहेंगे। (28) जिस दिन हम उन सबको एक साथ (अपने न्यायालय में) इकट्ठा करेंगे, फिर उन लोगों से जिन्होंने साझी ठहराया है कहेंगे कि ठहर जाओ तुम भी और तुम्हारे बनाए हुए साझीदार भी, फिर हम उनके बीच से अजनबीयत (अपरिचितता) का परदा हटा देंगे[9] और उनके साझीदार कहेंगे कि ''तुम हमारी बन्दगी तो नहीं करते थे। (29) हमारे और तुम्हारे बीच अल्लाह की गवाही काफ़ी

8. अर्थात् दुनिया में ज़िन्दगी व्यतीत करने के उस तरीक़े की ओर बुला रहा है जो आख़िरत (परलोक) की ज़िन्दगी में तुमको सलामती के घर (अमर लोक) का अधिकारी बनाए। सलामती के घर से मुराद है जन्नत, वह जगह जहाँ कोई आफ़त, कोई नुक़सान, कोई दुख और कोई तकलीफ़ न हो।
9. अर्थात् मुशरिकों को उनके देवता पहचान लेंगे कि ये वे लोग हैं जो हमें पूजते थे और मुशरिक अपने देवताओं को पहचान लेंगे कि ये हैं वे जिनकी हम पूजा करते थे।

है कि (तुम अगर हमारी बन्दगी करते भी थे तो) हम तुम्हारी इस बन्दगी से बिलकुल बेख़बर थे।'' (30) उस समय हर व्यक्ति अपने किए का मज़ा चख लेगा, सब अपने वास्तविक मालिक की ओर फेर दिए जाएँगे और वे सारे झूठ जो उन्होंने घढ़ रखे थे गुम हो जाएँगे।

(31) उनसे पूछो, कौन तुमको आसमान और ज़मीन से रोज़ी देता है? ये सुनने और देखने की शक्तियाँ किसके अधिकार में हैं? कौन बेजान में से जानदार को और जानदार में से बेजान को निकालता है? कौन इस विश्व की व्यवस्था का उपाय कर रहा है? वे ज़रूर कहेंगे कि अल्लाह। कहो, फिर तुम (सत्य के विरुद्ध चलने से) परहेज़ नहीं करते? (32) तब तो यही अल्लाह तुम्हारा वास्तविक रब है। फिर सत्य के बाद पथभ्रष्टता के सिवा और क्या बाक़ी रह गया? आख़िर यह तुम किधर फिराए जा रहे हो?[10] (33) (ऐ नबी, देखो) इस तरह नाफ़रमानी करनेवालों पर तुम्हारे रब की बात सत्य घटित हो गई कि वे हरगिज़ नहीं मानेंगे।

(34) इनसे पूछो, तुम्हारे ठहराए हुए साझीदारों में कोई है जो सृष्टि का आरंभ भी करता हो और फिर उसकी पुनरावृत्ति भी करे?—कहो वह केवल अल्लाह है जो सृष्टि का आरंभ भी करता है और उसकी पुनरावृत्ति भी, फिर तुम यह किस उलटी राह पर चलाए जा रहे हो?

(35) इनसे पूछो, तुम्हारे ठहराए हुए साझीदारों में से कोई ऐसा भी है जो सत्य का मार्ग दिखाता हो? कहो, वह सिर्फ़ अल्लाह है जो सत्य का मार्ग दिखाता है। फिर भला बताओ, जो सत्य का मार्ग दिखाता है वह इसका ज़्यादा हक़ रखता है कि उसका अनुसरण किया जाए या वह जो ख़ुद मार्ग नहीं पाता यह और बात है कि उसको मार्ग दिखाया जाए? आख़िर तुम्हें हो क्या गया है, कैसे उलटे-उलटे फ़ैसले करते हो?

(36) वास्तविकता यह है कि उनमें से ज़्यादातर लोग सिर्फ़ अटकल और गुमान के पीछे चले जा रहे हैं,[11] हालाँकि अटकल सत्य की ज़रूरत को कुछ भी पूरा नहीं

10. ध्यान रहे कि सम्बोधन जन-सामान्य से है और उनसे प्रश्न यह नहीं किया जा रहा है कि ''तुम किधर फिरे जाते हो।'' बल्कि यह है कि ''तुम किधर फिराए जा रहे हो।'' इससे स्पष्टहै कि कोई ऐसा गुमराह करनेवाला व्यक्ति या गिरोह मौजूद है जो लोगों को सही दिशा से हटाकर ग़लत दिशा पर फेर रहा है। इसी लिए लोगों से कहा जा रहा है कि तुम अंधे बनकर ग़लत राह दिखानेवालों के पीछे क्यों चले जा रहे हो? अपने पास की बुद्धि से काम लेकर सोचते क्यों नहीं कि जब वास्तविकता यह है तो आख़िर तुमको किधर चलाया जा रहा है।

करता, जो कुछ ये कर रहे हैं अल्लाह उसको ख़ूब जानता है।

(37) और यह क़ुरआन वह चीज़ नहीं है जो अल्लाह की प्रकाशना (वह्य) और शिक्षा के बिना रचा जा सके। बल्कि यह तो जो कुछ पहले आ चुका था उसकी पुष्टि और विशिष्ट किताब का विस्तार है। इसमें कोई शक नहीं कि यह विश्व के शासक की ओर से है।

(38) क्या ये लोग कहते हैं कि पैग़म्बर ने इसे ख़ुद रच लिया है? कहो, ''अगर तुम अपने इस इलज़ाम में सच्चे हो तो एक सूरा इस जैसी रचकर लाओ और एक अल्लाह को छोड़कर जिस-जिस को बुला सकते हो सहायता के लिए बुला लो।'' (39) वास्तविकता यह है कि जो चीज़ इनके ज्ञान की पकड़ में नहीं आई और जिसका नतीजा भी इनके सामने नहीं आया, उसको इन्होंने (अकारण अटकलपच्चू) झुठला दिया। इसी तरह तो इनसे पहले के लोग भी छुठला चुके हैं, फिर देख लो उन ज़ालिमों का क्या अंजाम हुआ। (40) इनमें से कुछ लोग ईमान लाएँगे और कुछ नहीं लाएँगे और तेरा रब उन बिगाड़ पैदा करनेवालों को ख़ूब जानता है। (41) अगर ये तुझे झुटलाते हैं तो कह दे कि ''मेरा कर्म मेरे लिए है और तुम्हारा कर्म तुम्हारे लिए, जो कुछ मैं करता हूँ उसकी ज़िम्मेदारी से तुम बरी हो और जो कुछ तुम कर रहे हो उसकी ज़िम्मेदारी से मैं बरी हूँ।''[12]

(42) इनमें बहुत-से लोग हैं जो तेरी बातें सुनते हैं, मगर क्या तू बहरों को सुनाएगा चाहे वे कुछ न समझते हो[13] (43) इनमें बहुत-से लोग हैं जो तुझे देखते हैं, मगर क्या तू अंधों को राह बताएगा चाहे उन्हें कुछ न सूझता हो? (44) वास्तविकता

11. अर्थात् जिन्होंने धर्म बनाए, जिन्होंने दर्शनशास्त्रों की रचना की और जिन्होंने ज़िन्दगी के विधि-विधान प्रस्तावित किए, उन्होंने भी यह सब कुछ ज्ञान के आधार पर नहीं बल्कि गुमान और अटकल के आधार पर किया, और जिन्होंने उन धार्मिक और दुनिया के नेताओं का अनुसरण किया, उन्होंने भी जानकर और समझकर नहीं, बल्कि सिर्फ़ इस गुमान के आधार पर उनके पीछे चल पड़े कि ऐसे -बड़े-बड़े लोग जब यह कहते हैं और बाप-दादा इनको मानते चले आ रहे हैं और एक दुनिया उनका अनुसरण कर रही है तो ज़रूर ठीक ही कहते होंगे।
12. अर्थात् अकारण झगड़े और कुतर्क करने की कोई ज़रूरत नहीं। अगर मैं झूट घड़ रहा हूँ तो अपने कर्म का ख़ुद उत्तरदायी हूँ, तुमपर उसकी कोई ज़िम्मेदारी नहीं। और अगर तुम सच्ची बात झुठला रहे हो तो मेरा कुछ नहीं बिगाड़ते, अपना ही कुछ बिगाड़ रहे हो।

यह है कि अल्लाह लोगों पर ज़ुल्म नहीं करता, लोग ख़ुद ही अपने ऊपर ज़ुल्म करते हैं। (45) (आज ये दुनिया की ज़िन्दगी में मस्त हैं) और जिस दिन अल्लाह इनको इकट्ठा करेगा तो (यही दुनिया की ज़िन्दगी इन्हें ऐसी लगेगी) मानो ये सिर्फ़ एक घड़ी-भर आपस में जान-पहचान करने को ठहरे थे। (उस समय सिद्ध हो जाएगा कि) वास्तव में बड़े घाटे में रहे वे लोग जिन्होंने अल्लाह से मुलाक़ात को झुठलाया और हरगिज़ वे सीधे मार्ग पर न थे। (46) जिन बुरे परिणामों से हम इन्हें डरा रहे हैं उनका कोई हिस्सा हम तेरे जीते जी दिखा दें या उससे पहले ही तुझे उठा लें, हर हाल में इन्हें आना हमारी तरफ़ ही है और जो कुछ ये कर रहे हैं उसपर अल्लाह गवाह है।

(47) हर उम्मत (समुदाय) के लिए एक रसूल है।[14] फिर जब किसी समुदाय के पास उसका रसूल आ जाता है, तो उसका फ़ैसला पूरे न्याय के साथ चुका दिया जाता है और उसपर रत्ती-भर ज़ुल्म नहीं किया जाता।

(48) कहते हैं अगर तुम्हारी यह धमकी सच्ची है तो आख़िर यह कब पूरी होगी? (49) कहो, "मेरे अधिकार में तो ख़ुद अपना नफ़ा और नुक़सान भी नहीं, सब कुछ अल्लाह की इच्छा पर अवलम्बित है। हर समुदाय के लिए मुहलत की एक अवधि है, जब यह अवधि पूरी हो जाती है तो घड़ी-भर भी आगे और पीछे नहीं होता।" (50) इनसे कहो, कभी तुमने यह भी सोचा कि अगर अल्लाह का अज़ाब अचानक रात को

13. एक सुनना तो उस तरह का होता है जैसे जानवर भी आवाज़ सुन लेते हैं। दूसरा सुनना वह होता है जिसमें अर्थ की ओर ध्यान हो और यह तत्परता पाई जाती हो कि बात अगर बुद्धिसंगत होगी तो उसे मान लिया जाएगा।

14. 'उम्मत' शब्द यहाँ मात्र क़ौम के अर्थ में नहीं है, बल्कि एक रसूल के आने के बाद उसका बुलावा और सन्देश जिन-जिन लोगों तक पहुँचे वे सब उसकी 'उम्मत' हैं। और इसके लिए यह भी ज़रूरी नहीं है कि रसूल उनके बीच ज़िन्दा मौजूद हो, बल्कि रसूल के बाद भी जब तक उसकी शिक्षा मौजूद रहे और हर व्यक्ति के लिए यह मालूम करना संभव हो कि वह वास्तव में किस चीज़ की शिक्षा देता था, उस समय तक दुनिया के सब लोग उसकी उम्मत ही ठहरेंगे और उनपर वह हुक्म लागू होगा जो आगे बयान किया जा रहा है। इस दृष्टि से मुहम्मद (सल्ल०) के आ जाने के बाद सारी दुनिया के इनसान आपकी उम्मत हैं और उस समय तक रहेंगे जब तक क़ुरआन अपने विशुद्ध रूप में मौजूद है। इसी लिए आयत में यह नहीं कहा गया कि "हर क़ौम में एक रसूल है" बल्कि यह कहा गया कि "हर उम्मत के लिए एक रसूल है।"

या दिन को आ जाए (तो तुम क्या कर सकते हो?) आख़िर यह ऐसी कौन-सी चीज़ है जिसके लिए अपराधी जल्दी मचाएँ? (51) क्या जब वह तुमपर आ पड़े उसी समय तुम उसे मानोगे?—अब बचना चाहते हो? हालाँकि तुम ख़ुद ही इसके जल्दी आने की माँग कर रहे थे! (52) फिर ज़ालिमों से कहा जाएगा कि अब हमेशा के अज़ाब का मज़ा चखो, जो कुछ तुम कमाते रहे हो उसके बदले के सिवा और क्या बदला तुमको दिया जा सकता है?

(53) फिर पूछते हैं क्या वास्तव में यह सच है जो तुम कह रहे हो? कहो, "मेरे रब की क़सम, यह बिलकुल सच है, और तुम इतना बल-बूता नहीं रखते कि उसे प्रकट होने से रोक दो।" (54) अगर हर उस व्यक्ति के पास जिसने ज़ुल्म किया है, सारी धरती का धन भी हो तो उस अज़ाब से बचने के लिए वह उसे फ़िदया में देने को तैयार हो जाएगा। जब ये लोग उस अज़ाब को देख लेंगे तो दिल ही दिल में पछताएँगे। मगर उनके बीच पूरे इनसाफ़ से फ़ैसला किया जाएगा, कोई ज़ुल्म उनपर न होगा। (55) सुनो! आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है अल्लाह का है। सुन रखो! अल्लाह का वादा सच्चा है मगर अधिकतर लोग जानते नहीं हैं। (56) वही ज़िन्दगी प्रदान करता है और वही मौत देता है और उसी की ओर तुम सबको पलटना है।

(57) लोगो, तुम्हारे पास तुम्हारे रब की ओर से उपदेश आ गया है। यह वह चीज़ है जो दिलों के रोगों को चंगा करने के लिए है और जो उसे स्वीकार कर लें उनके लिए मार्गदर्शन और दयालुता है। (58) ऐ नबी, कहो कि "यह अल्लाह का अनुग्रह और उसकी दया है कि यह चीज़ उसने भेजी, इसपर तो लोगों को ख़ुशी मनानी चाहिए, यह उन सब चीज़ों से उत्तम हैं जिन्हें लोक समेट रहे हैं।" (59) ऐ नबी, इनसे कहो, "तुम लोगों ने कभी यह भी सोचा है कि जो रोज़ी[15] अल्लाह ने तुम्हारे लिए उतारी थी उसमें से तुमने स्वयं ही किसी को हराम और किसी को हलाल ठहरा लिया!"[16] इनसे

15. यहाँ 'रिज़्क़' (रोज़ी) शब्द इस्तेमाल हुआ है। हमारे यहाँ रिज़्क़ (रोज़ी) सिर्फ़ खाने-पीने की चीज़ों के लिए बोला जाता है, लेकिन अरबी भाषा में रिज़्क़ सिर्फ़ ख़ुराक तक सीमित नहीं है बल्कि दान, प्रदान और भाग्य के अर्थ में सामान्य रूप से इस्तेमाल होता है। अल्लाह ने जो कुछ भी दुनिया में इनसान को दिया है वह सब उसका रिज़्क़ है।

16. अर्थात् ख़ुद अपने लिए क़ानून और धर्म-विधान बना लेने के अधिकारी बन बैठे। हालाँकि जिसका रिज़्क़ (रोज़ी) है उसी का यह हक़ है कि उसके प्रयोग में लाने की जाइज़ और नाजाइज़ स्थितियों की सीमाएँ और सिद्धान्त निर्धारित करें।

पूछो, अल्लाह ने तुमको इसकी अनुमति दी थी? या तुम अल्लाह पर झूठ घड़ रहे हो?[17] (60) जो लोग अल्लाह पर झूठा इलज़ाम लगाते हैं उनका क्या गुमान है कि क़ियामत के दिन उनसे क्या मामला होगा? अल्लाह तो लोगों पर मेहरबानी की नज़र रखता है मगर बहुतेरे लोग ऐसे हैं जो कृतज्ञता नहीं दिखाते।

(61) ऐ नबी, तुम जिस हाल में भी होते हो और क़ुरआन में से जो कुछ भी सुनाते हो, और लोगो, तुम भी जो कुछ करते हो उस सबके बीच में हम तुमको देखते रहते हैं। कोई रत्ती-भर चीज़ आसमान और ज़मीन में ऐसी नहीं है, न छोटी न बड़ी, जो तेरे रब की नज़र से छिपी हो और एक स्पष्ट चिट्ठे (दफ़्तर) में अंकित न हो। (62,63) सुनो! जो अल्लाह के दोस्त हैं, जो ईमान लाए और जिन्होंने ख़ुदा से डरने की नीति अपनाई, उनके लिए किसी डर और रंज का अवसर नहीं है। (64) दुनिया और आख़िरत दोनों ज़िन्दगी में उनके लिए ख़ुशख़बरी ही ख़ुशख़बरी है। अल्लाह की बातें बदल नहीं सकतीं। यही बड़ी सफलता है। (65) ऐ नबी, जो बातें ये लोग तुझपर बनाते हैं उससे तू शोकाकुल न हो, प्रभुत्व सारा का सारा अल्लाह के अधिकार में है, और वह सब कुछ सुनता और जानता है।

(66) जान लो! आसमानों के बसनेवाले हों या ज़मीन के, सबका मालिक अल्लाह है। और जो लोग अल्लाह के सिवा कुछ (अपने मनघड़ंत) साझीदारों को पुकार रहे हैं वे निरे भ्रम और गुमान के पीछे चल रहे हैं और सिर्फ़ अटकलबाज़ियाँ करते हैं। (67) वह अल्लाह ही है जिसने तुम्हारे लिए रात बनाई कि उसमें चैन पाओ और दिन को प्रकाशमान बनाया। इसमें निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो (खुले कानों से पैग़म्बर के संदेश को) सुनते हैं।

(68) लोगों ने कह दिया कि अल्लाह ने किसी को बेटा बनाया है। पाक है अल्लाह! वह तो निस्पृह है, आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है वह सबका मालिक है। तुम्हारे पास इसके लिए आख़िर क्या प्रमाण है? क्या तुम अल्लाह के बारे में ऐसी बातें कहते हो जो तुम्हारे ज्ञान में नहीं? (69) ऐ नबी, कह दो कि जो लोग अल्लाह पर झूठ घड़ते हैं वे हरगिज़ सफल नहीं हो सकते। (70) थोड़े दिनों की दुनिया की ज़िन्दगी में

17. झूठे इलज़ाम के तीन रूप हैं, एक यह कि कोई व्यक्ति यह कहे कि ये अधिकार अल्लाह ने मानव को सौंप दिया है, दूसरा यह कि वह कहे कि अल्लाह का यह काम ही नहीं है कि हमारे लिए क़ानून और विधि-विधान मुक़र्रर करे, तीसार यह कि वह हलाल और हराम के इन आदेशों को अल्लाह की ओर से माने हालाँकि प्रमाण में वह अल्लाह की कोई किताब न पेश कर सके।

मज़े कर लें, फिर हमारी ओर उनको पलटना है, फिर हम उस इनकार के बदले में जो वे कर रहे हैं उनको भारी अज़ाब का मज़ा चखाएँगे।

(71) इनको नूह का वृत्तांत सुनाओ, उस समय का हाल जब उसने अपने क़ौम से कहा था कि ''ऐ क़ौम के भाइयो, अगर मेरा तुम्हारे बीच रहना और अल्लाह की आयतें सुना-सुनाकर तुम्हें ग़फ़लत से जगाना तुम्हारे लिए असह्य हो गया है, तो मेरा भरोसा अल्लाह पर है, तुम अपने ठहराए हुए साझीदारों को साथ लेकर अपना एक सर्वमान्य फ़ैसला कर लो और जो योजना तुम्हारे सामने हो ख़ूब सोच-समझ लो; ताकि उसका कोई पहलू तुम्हारी दृष्टि से छिपा न रहे, फिर मेरे विरुद्ध उसे क्रियात्मक रूप दो और मुझे हरगिज़ मुहलत न दो। (72) तुमने मेरे उपदेश से मुँह मोड़ा (तो मेरी क्या हानि की), मैं तुमसे कोई पारिश्रमिक नहीं माँग रहा था, मेरी मज़दूरी तो अल्लाह के ज़िम्मे है, और मुझे आदेश दिया गया है कि (चाहे कोई माने या न माने) मैं ख़ुद मुसलिम (ईश्वर का आज्ञाकारी) बनकर रहूँ''—(73) उन्होंने उसे झुठला दिया और परिणाम यह हुआ कि हमने उसे और उन लोगों को जो उसके साथ नाव में थे, बचा लिया और उन्हीं को ज़मीन में उत्तराधिकारी बनाया और उन सब लोगों को डुबो दिया जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया था। अतः देख लो कि जिन्हें चेतावनी दी गई थी (और फिर भी उन्होंने नहीं माना) उनका क्या परिणाम हुआ।

(74) फिर नूह के बाद हमने विभिन्न पैग़म्बरों को उनकी क़ौमों की ओर भेजा और वे उनके पास खुली-खुली निशानियाँ लेकर आए, मगर जिस चीज़ को उन्होंने पहले झुठला दिया था, उसे फिर नहीं माना। इस तरह हम सीमा से आगे बढ़ जानेवालों के दिलों पर ठप्पा लगा देते हैं।

(75) फिर उनके बाद हमने मूसा और हारून को अपनी निशानियों के साथ फ़िरऔन और उसके सरदारों की ओर भेजा, मगर उन्होंने अपनी बड़ाई का गर्व किया और वे अपराधी लोग थे। (76) तो जब तुम्हारे पास से सत्य उनके सामने आया तो उन्होंने कह दिया कि यह तो खुला जादू है। (77) मूसा ने कहा, ''तुम सत्य को यह कहते हो जब वह तुम्हारे सामने आ गया? क्या यह जादू है? हालाँकि जादूगर सफल नहीं हुआ करते।''[18] (78) उन्होंने जवाब में कहा, ''क्या तू इसलिए आया है कि हमें उस रास्ते से फेर दे जिसपर हमने अपने बाप-दादा को पाया है और ज़मीन में तुम दोनों की बड़ाई क़ायम हो जाए? तुम्हारी बात तो हम माननेवाले नहीं हैं।'' (79) और फ़िरऔन ने (अपने आदमियों से) कहा कि ''हर कुशल जानकार जादूगर को मेरे सामने हाज़िर करो।''—(80) जब जादूगर आ गए तो मूसा ने कहा, ''जो कुछ तुम्हें फेंकना है

फेंको।'' (81) फिर जब उन्होंने अपने अंछर फेंक दिए, तो मूसा ने कहा, ''जो कुछ तुमने फेंका है वह जादू है, अल्लाह अभी इसे व्यर्थ किए देता है, बिगाड़ पैदा करनेवालों के काम को अल्लाह सुधरने नही देता। (82) और अल्लाह अपने वचनों के द्वारा सत्य को सत्य कर दिखाता है, चाहे अपराधियों को वह कितान ही अप्रिय हो।''

(83) (फिर देखो कि) मूसा को उसकी क़ौम में से कुछ नव-युवकों[19] के सिवा किसी ने न माना, फ़िरऔन के डर से और अपनी क़ौम के सरदारों के डर से (जिन्हें डर था कि) फ़िरऔन उन्हें अज़ाब में डालेगा और वाक़िआ यह है कि फ़िरऔन को ज़मीन में प्रभुत्व प्राप्त था और वह उन लोगों में से था जो किसी सीमा पर रुकते नहीं हैं।[20]

(84) मूसा ने अपनी क़ौम से कहा कि ''लोगो, तुम वास्तव में अल्लाह पर ईमान

18. मतलब यह है कि देखने में जादू और चमत्कार के बीच जो एकरूपता पाई जाती है उसके आधार पर तुम लोगों ने निस्संकोच इसे जादू ठहरा दिया, मगर नादानो, तुमने यह न देखा कि जादूगर किस चरित्र और नैतिकता के लोग होते हैं और किन उद्देश्यों के लिए जादूगरी किया करते हैं। क्या किसी जादूगर का यही काम होता है कि निस्स्वार्थ और बेधड़क एक बलशाली सम्राट के दरबार में आए और उसे उसकी पथ-भ्रष्टता पर धिक्कारे और ईश-भक्ति और आत्म-शुद्धि अपनाने की दावत दे?
19. मूल ग्रन्थ में 'ज़ुर्रिय्यतुन' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ 'औलाद' है। हमने इसका अनुवाद 'नवयुवक' किया है। वास्तव में इस विशेष शब्द के इस्तेमाल से जो बात क़ुरआन मजीद बयान करना चाहता है वह यह है कि उस भयावह समय में सत्य का साथ देने और सत्य के ध्वजावाहकों को अपना मार्गदर्शक स्वीकार करने का साहस कुछ लड़कों और लड़कियों ने तो किया मगर माओं और बापों और क़ौम के बड़े-बूढ़ों से यह न हो सका। उनपर मसलेहतपरस्ती (हेतुवाद) और सांसारिक स्वार्थों की पूजा और अपने सुरक्षित रहने की चिन्ता कुछ इस तरह छाई रही कि वे ऐसे सत्य का साथ देने पर तैयार न हुए जिसका मार्ग उन्हें ख़तरों और आशंकाओं से भरा हुआ दिखाई दे रहा था, बल्कि वे उल्टे नवयुवकों ही को रोकते रहे कि मूसा के निकट न जाओ, नहीं तो तुम ख़ुद भी फ़िरऔन के प्रकोप के भागी होगे और हमपर भी संकट लाओगे।
20. अर्थात् अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए किसी बुरे से बुरे तरीक़े को भी अपनाने से नहीं झिझकते। किसी ज़ुल्म और किसी अनैतिक व्यवहार और किसी बर्बरता से नहीं चूकते। अपनी इच्छाओं के पीछे हर अति (इन्तिहा) तक जा सकते हैं। उनके लिए कोई सीमा नहीं जिसपर जाकर वे रुक जाएँ।

लाए हो, तो उसपर भरोसा करो अगर मुसलमान हो।'' (85) उन्होंने जवाब दिया,[21] ''हमने अल्लाह ही पर भरोसा किया, ऐ हमारे रब, हमें ज़ालिम लोगों के लिए फ़ितना न बना (86) और अपनी दयालुता से हमको अधर्मियों से छुटकारा दे।''

(87) और हमने मूसा और उसके भाई को संकेत दिया कि ''मिस्र में कुछ घर अपनी क़ौम के लिए प्राप्त कर लो और अपने उन घरों को क़िबला ठहरा लो और नमाज़ क़ायम करो[22] और ईमानवालों को ख़ुशख़बरी दे दो।''

(88) मूसा ने दुआ की, ''ऐ हमारे रब, तूने फ़िरऔन और उसके सरदारों को दुनिया की ज़िन्दगी में शोभा और माल दे रखे हैं। ऐ रब, क्या यह इसलिए है कि वे लोगों को तेरे मार्ग से भटकाएँ? ऐ रब, उनके माल नष्ट कर दे और उनके दिलों पर ऐसा ठप्पा लगा दे कि ईमान न लाएँ जब तक दर्दनाक अज़ाब न देख लें।''[23] (89) अल्लाह ने जवाब दिया, ''तुम दोनों की दुआ क़बूल की गई। जमे रहो और उन लोगों के मार्ग पर हरगिज़ न चलना जो ज्ञान नहीं रखते।''

(90) और हमने इसराईल की सन्तान को समुद्र पार करा दिया। फिर फ़िरऔन और उसकी सेनाएँ ज़ुल्म और ज़्यादती के उद्देश्य से उनके पीछे चलीं। यहाँ तक कि जब

21. यह जवाब उन नवयुवकों का था जो मूसा (अलै॰) का साथ देने को तैयार हुए थे। यहाँ 'क़ालू' (उन्होंने जवाब दिया) का सर्वनाम क़ौमवालों के लिए नहीं बल्कि 'ज़ुर्रिय्यतुन' (नवयुवकों) के लिए आया है जैसा कि वाक्य के संदर्भ से ख़ुद स्पष्ट है।
22. मिस्र में शासन के हिंसात्मक व्यवहार से और ख़ुद इसराईलियों के अपने ईमान की कमज़ोरी के कारण इसराईली और मिस्री मुसलमानों के यहाँ सामूहिक रूप से (जमाअत के साथ) नमाज़ पढ़ने की व्यवस्था का अन्त हो चुका था और यह उनके संगठन के विघटन और उनकी धार्मिकता की भावना पर मृत्यु छा जाने का एक बहुत बड़ा कारण था। इसलिए हज़रत मूसा (अलै॰) को आदेश दिया गया कि इस व्यवस्था को नये सिरे से स्थापित करें और मिस्र में कुछ घर इस उद्देश्य से बनाएँ या निश्चित कर लें कि वहाँ सामूहिक रूप से नमाज़ अदा की जाया करे। उन घरों को क़िबला (उपासना-दिशा) नियत करने का अर्थ यह है कि उन घरों को सम्पूर्ण समुदाय के लिए केन्द्र और रुजू होने का स्थान ठहराया जाए, और इसके बाद ही ''नमाज़ क़ायम करो'' कहने का अर्थ यह है कि अलग-अलग अपने स्थान पर नमाज़ पढ़ लेन के बदले लोग इन निश्चित स्थानों पर इकट्ठा होकर नमाज़ पढ़ा करें।

फ़िरऔन डूबने लगा तो बोल उठा, "मैंने मान लिया कि वास्तविक ख़ुदा उसके सिवा कोई नहीं है जिसपर इसराईल की सन्तान ईमान लाई, और मैं भी मुसलिमों (आज्ञाकारियों) में से हूँ।" (91) (जवाब दिया गया) "अब ईमान लाता है! हालाँकि इससे पहले तक तो नाफ़रमानी करता रहा और बिगाड़ पैदा करनेवालों में से था। (92) अब तो हम सिर्फ़ तेरी लाश ही को बचाएँगे ताकि तू बाद की नस्लों के लिए शिक्षा-सामग्री बने अगरचे बहुत-से इनसान ऐसे हैं जो हमारी निशानियों से ग़फ़लत बरतते हैं।"

(93) हमने इसराईल की संतान को बहुत अच्छा ठिकाना दिया और अत्यन्त उत्तम ज़िन्दगी के साधन उन्हें प्रदान किए। फिर उन्होंने परस्पर विभेद उसी समय किया जबकि ज्ञान उनके पास आ चुका था। यक़ीनन तेरा रब क़ियामत के दिन उनके बीच उस चीज़ का फ़ैसला कर देगा जिसमें वे मतभेद करते रहे हैं।

(94) अब अगर तुझे उस मार्गदर्शन की ओर से कुछ भी शक हो जो हमने तुझपर अवतरित किया है तो उन लोगों से पूछ ले जो पहले से किताब पढ़ रहे हैं। वास्तव में यह तेरे पास सत्य ही आया हैं तेरे रब की ओर से, अतः तू शक करनेवालों में से न हो, (95) और उन लोगों में शामिल न हो जिन्होंने अल्लाह की आयतों को झुठलाया है, नहीं तो तू नुक़सान उठानेवालों में से होगा।[24]

23. यह दुआ हज़रत मूसा (अलै॰) ने मिस्र में ठहरने के बिलकुल अन्तिम समय में की थी, और उस समय की थी जब लगातार निशानियाँ देख लेने और धर्म के तर्कयुक्त सिद्ध और स्पष्ट हो जाने के बाद भी फ़िरऔन और उसके राज्य के सरदार सत्य की दुश्मनी पर अत्यन्त हठधर्मी के साथ जमे रहे। ऐसे अवसर पर पैग़म्बर जो बद्दुआ करता है वह ठीक-ठीक वही होती है जो कुफ़्र पर आग्रह करनेवालों के विषय में ख़ुद अल्लाह का फ़ैसला होता है, अर्थात् यह कि फिर उन्हें ईमान का सौभाग्य प्रदान न किया जाए।

24. यह सम्बोधन ज़ाहिरी तौर पर तो नबी (सल्ल॰) से है मगर वास्तव में बात उन लोगों को सुनानी अभीष्ट है जो आपके सन्देश में सन्देह कर रहे थे। और किताबवालों का हवाला इसलिए दिया गया है कि अरब के जन-साधारण तो आसमानी किताब के ज्ञान से बेख़बर थे, उनके लिए यह आवाज़ एक नई आवाज़ थी। मगर किताबवालों के धर्म-गुरुओं में जो लोग दीनदार और न्यायप्रिय थे वे इस बात की पुष्टि कर सकते थे कि जिस चीज़ का बुलावा क़ुरआन दे रहा है यह वही चीज़ है जिसका बुलावा सभी पिछले नबी देते रहे हैं।

(96,97) वास्तविकता यह है कि जिन लोगों पर तेरे रब का वचन सिद्ध हो गया है[25] उनके सामने चाहे कोई निशानी आ जाए वे कभी ईमान नहीं लाते जब तक कि दर्दनाक अज़ाब सामने आता न देख लें। (98) फिर क्या ऐसा कोई उदाहरण है कि एक बस्ती अज़ाब देखकर ईमान लाई हो और उसका ईमान उसके लिए लाभप्रद सिद्ध हुआ हो? यूनुस की क़ौम के सिवा (इसका कोई उदाहरण नहीं)। वह क़ौम जब ईमान ले आई थी तो अलबत्ता हमने उसपर से दुनिया की ज़िन्दगी में अपमान का अज़ाब टाल दिया[26] और उसको एक अवधि तक ज़िन्दगी से लाभान्वित होने का अवसर दे दिया था।

(99) अगर तेरे रब की इच्छा यह होती (कि ज़मीन में सब ईमानवाले और आज्ञाकारी ही हों), तो ज़मीन के सारे वासी ईमान ले आए होते। फिर क्या तू लोगों को मजबूर करेगा कि वे ईमानवाले (मोमिन) हो जाएँ? (100) कोई प्राणी अल्लाह की अनुमति के बिना ईमान नहीं ला सकता, और अल्लाह का तरीक़ा यह है कि जो लोग बुद्धि से काम नहीं लेते वह उनपर गन्दगी डाल देता है।

(101) इनसे कहो, "ज़मीन और आसमानों में जो कुछ है उसे आँखें खोलकर देखो।" और जो लोग ईमान लाना ही नहीं चाहते उनके लिए निशायिाँ और चेतावनियाँ आख़िर क्या लाभप्रद हो सकती हैं? (102) अब ये लोग इसके सिवा और किस चीज़ के इनतिज़ार में हैं कि वही बुरे दिन देखें जो इनसे पहले गुज़रे हुए लोग देख चुके हैं? इनसे कहो, "अच्छा इनतिज़ार करो, मैं भी तुम्हारे साथ इनतिज़ार करता हूँ।" (103) फिर (जब ऐसा समय आता है तो) हम अपने रसूलों को और उन लोगों को बचा लिया करते हैं जो ईमान लाए हों। हमारा यही तरीक़ा है। हमपर यह हक़ है कि ईमानवालों को बचा लें।

(104) (ऐ नबी) कह दो कि "लोगो, अगर तुम अभी तक मेरे धर्म (दीन) के बारे में किसी शक में हो तो सुन लो कि तुम अल्लाह के सिवा जिनकी बन्दगी करते हो

25. अर्थात् यह वचन कि जो लोग सत्य के चाहनेवाले नहीं होते, और जो अपने दिलों पर दुराग्रह, पक्षपात और हठधर्मी के ताले चढ़ाए रखते हैं, और जो दुनिया के मोह में उन्मत्त और परिणाम की ओर से लापरवाह होते हैं, उन्हें ईमान का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता।

26. टीकाकारों ने इसका कारण यह बयान किया है कि हज़रत यूनुस (अलै॰) चूँकि अज़ाब की ख़बर देने के बाद अल्लाह की आज्ञा के बिना अपना निवास-स्थान छोड़कर चले गए थे, इसलिए जब अज़ाब के लक्षण देखकर आशूरियों ने तौबा की और माफ़ी माँगी तो अल्लाह ने उन्हें माफ़ कर दिया।

मैं उनकी बन्दगी नहीं करता बल्कि सिर्फ़ उसी अल्लाह की बन्दगी करता हूँ जिसके अधिकार में तुम्हारी मौत है। मुझे आदेश दिया गया है कि मैं ईमानवालों में से हूँ। (105) और मुझसे कहा गया है कि एकाग्र होकर अपने आप को ठीक-ठीक इस धर्म पर जमा दे,[27] और हरगिज़, हरगिज़ मुशरिकों में से न हो। (106) और अल्लाह को छोड़कर किसी ऐसी सत्ता को न पुकार जो तुझे न फ़ायदा पहुँचा सकती है न नुक़सान, अगर तू ऐसा करेगा तो ज़ालिमों में से होगा। (107) अगर अललाह तुझे किसी मुसीबत में डाले तो ख़ुद उसके सिवा कोई नहीं जो उस मुसीबत को टाल दे, और अगर वह तेरे हक़ में किसी भलाई का इरादा करे तो उसके उदार अनुग्रह को फेरनेवाला भी कोई नहीं है। वह अपने बन्दों में से जिसको चाहता है अनुगृहीत करता है और वह माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला है।

(108) ऐ मुहम्मद, कह दो कि "लोगो, तुम्हारे पास तुम्हारे रब की ओर से सत्य आर चुरा है। अब जो सीधा मार्ग अपनाए उसका सीधा मार्ग ग्रहण करना उसी के लिए लाभदायक है, और जो गुमराह रहे उसकी गुमराही उसी के लिए विनाशकारी है। और मैं तुम्हारे ऊपर कोई हवालेदार नहीं हूँ। (109) और ऐ नबी, तुम उस आदेश का अनुसरण किए जाओ जो तुम्हारी ओर वह्य (प्रकाशना) द्वारा अवतरित किया जा रहा है, और सब्र से काम लो यहाँ तक कि अल्लाह फ़ैसला कर दे, और वही सबसे अच्छा फ़ैसला करनेवाला है।

● ● ●

27. मूल शब्द ये हैं, "अक़िम वज-ह-क लिद्दीनि हनीफ़ा"। 'अक़िम वज-ह-क' का शाब्दिक अर्थ है "अपना चेहरा जमा दे।" इसका मतलब यह है कि तेरा रुख़ एक ही ओर स्थिर हो। डगमगाता और हिलता-डुलता न हो। कभी पीछे, कभी आगे और कभी दाएँ और कभी बाएँ न मुड़ता रहे। बिलकुल नाक की सीध में उसी मार्ग पर दृष्टि जमाकर चल जो तुझे दिखाया गया है। यह पाबन्दी ख़ुद बहुत सुदृढ़ थी, मगर इसपर बस न किया गया। इसपर एक और क़ैद 'हनीफ़ा' की बढ़ाई गई। हनीफ़ उसको कहते हैं जो सब ओर से मुड़कर एक ओर का ही रहा हो।

11. हूद

नाम

आयत 50 में पैग़म्बर हज़रत हूद का उल्लेख हुआ है; उसी को लक्षण के तौर पर इस सूरा का नाम दे दिया है।

अवतरणकाल

इस सूरा की विषयवस्तु पर विचार करने पर ऐसा लगता है कि यह उसी कालखण्ड में अवतरित हुई होगी जिसमें सूरा 10 (यूनुस) अवतरित हुई। असंभव नहीं कि यह उसके साथ संसर्गतः ही अवतरित हुई हो, क्योंकि अभिभाषण का विषय वही है, किन्तु चेतावनी का ढंग उससे ज़्यादा सख़्त है। हदीस में आता है कि हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) से कहा, "मैं देखता हूं कि आप बूढ़े होते जा रहे हैं, इसका क्या कारण है?" उत्तर में नबी (सल्ल०) ने कहा, "मुझे सूरा 11 (हूद) और उसके समान विषयवाली सूरतों ने बुढ़ा कर दिया है।" इससे अंदाज़ा होता है कि नबी (सल्ल०) के लिए वह समय कितना कठिन होगा, जबकि क़ुरैश के अधर्मी समस्त हथियारों से सत्य के आह्वान को कुचल देने की कोशिश कर रहे थे और दूसरी ओर अल्लाह की ओर से चेतावनियाँ अवतरित हो रही थीं। उन परिस्थितियों में आपको हर समय यह आशंका घुलाए देती होगी कि कहीं अल्लाह की दी हुई मुहलत समाप्त न हो जाए और वह अंतिम घड़ी न आ जाए जब अल्लाह किसी जाति को यातना में पकड़ लेने का निर्णय कर लेता है। वास्तव में इस सूरा को पढ़ते हुए ऐसा लगता है, जैसे एक जलप्लावन का बाँध टूटने को है और उस ग़ाफ़िल आबादी को, जो इस जलप्लावन की लपेट में आनेवाली है, यह अंतिम चेतावनी दी जा रही है।

विषय एवं वार्ताएँ

अभिभाषण का विषय, जैसा कि बयान किया जा चुका है, वही है जो सूरा 10 (यूनुस) का था अर्थात् आमंत्रण, हितकथन और चेतावनी। लेकिन अन्तर यह है कि सूरा 10 (यूनुस) की अपेक्षा यहाँ आमंत्रण संक्षिप्त है, हितकथन में तर्क कम और उपदेश और शिक्षा अधिक है, और चेतावनी विस्तृत और ज़ोरदार है।

आमंत्रण यह कि पैग़म्बर (सल्ल०) की बात मानो, बहुदेववाद को त्याग दो, सबकी बन्दगी छोड़कर अल्लाह के बंदे बनो और अपने सांसारिक जीवन की सारी व्यवस्था परलोक के उत्तरदायित्व के एहसास पर स्थापित करो।

हितकथन यह है कि सांसारिक जीवन के वाह्य पक्ष पर भरोसा करके जिन जातियों ने अल्लाह के रसलों के संदेश को ठुकराया है, वे इससे पहले अत्यन्त बुरा परिणाम देख चुके हैं, अब क्या ज़रूरी है कि तुम भी उसी राह पर चलो, जिसे इतिहास के सतत् अनुभव निश्चित रूप से विनाश की राह सिद्ध कर चुके हैं।

चेतावनी यह है कि यातना आने में जो विलंब हो रहा है यह वास्तव में एक मुहलत है, जो अल्लाह अपनी कृपा से तुम्हें प्रदान कर रहा है। इस मुहलत के मध्य अगर तुम न सँभले तो वह यातना आएगी जो किसी से टाले न टलेगी और ईमानवालोंके मुट्ठी भर गिरोह छोड़कर तुम्हारी सम्पूर्ण जाति के अस्तित्व को बिलकुल मिटा देगी।

इस विषय की अभिव्यक्ति के लिए प्रत्यक्ष संबोधन की अपेक्षा नूह की जाति, आद, समूद और लूत की जाति, मद्यनवाले और फ़िरऔन की जाति के वृत्तांतों से अधिक काम लिया गया है। उन वृत्तांतों में विशेषरूप से जो बात स्पष्ट की गई है वह यह है कि जब अल्लाह फ़ैसला चुकाने पर आता है तो वह बेलाग तरीक़े से चुकाता है। इसमें किसी के साथ तनिक भी रिआयत नहीं होती। उस वक़्त यह नहीं देखा जाता कि कौन किसका बेटा और किसका प्रिय है। रहमत (ईशदयालुता) केवल उसके हिस्से में आती है जो सीधे रास्ते पर आ गया हो, अन्यथा अल्लाह के प्रकोप से न किसी पैग़म्बर का बेटा बचता है और न किसी पैग़म्बर की पत्नी। यही नहीं, बल्कि जब ईमान और कुफ़्र (अधर्म) का दो टूक फ़ैसला हो रहा हो, तो धर्म की प्रकृति वह चाहती है कि स्वयं ईमानवाला भी पिता और पुत्र और पति-पत्नी के नातों को भूल जाए और अल्लाह के न्याय-खड्ग की तरह बिलकुल बेलाग होकर एक सत्य के नाते के अतिरिक्त हर दूसरे नाते को काट फेंके। ऐसे अवसर पर रक्त और वंश के नाते-रिश्तों को थोड़ा भी आदर देना इस्लाम की अंतरात्मा के विरुद्ध है। यही वह शिक्ष थी जिसका पूर्ण रुपेण प्रदर्शन तीन-चार वर्ष के पश्चात् मक्का से हिजरत करनेवाले मुसलमानों ने बद्र के युद्ध में करके दिखाया।



11. सूरा हूद

(मक्का में उतरी–आयतें 123)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ रा॰। अध्यादेश (फ़रमान)[1] है जिसकी आयतें सुदृढ और सविस्तर बयान हुई हैं, एक तत्त्वदर्शी और ख़बर रखनेवाली हस्ती की ओर से, (2) कि तुम बन्दगी न करो मगर सिर्फ़ अल्लाह की। मैं उसकी ओर से तुमको ख़बरदार करनेवाला भी हूँ और ख़ुशख़बरी देनेवाला भी। (3) और यह कि तुम अपने रब से माफ़ी चाहो और उसकी ओर पलट आओ तो वह एक विशेष अवधि तक तुमको अच्छी जीवन-सामग्री देगा[2] और हर श्रेष्ठ को उसकी श्रेष्ठता प्रदान करेगा।[3] लेकिन अगर तुम मुँह फेरते हो तो मैं तुम्हारे हक़ में एक बड़े भयंकर दिन के अज़ाब से डरता हूँ। (4) तुम सब को अल्लाह की ओर पलटना है और वह सब कुछ कर सकता है।

(5) देखो, ये लोग अपने सीनों को मोड़ते हैं ताकि उससे छिप जाएँ।[4] सावधान, जब ये कपड़ों से अपने आपको ढाँपते हैं, अल्लाह इनके छिपे को भी जानता है और

---

1. 'किताब' का अनुवाद यहाँ वर्णनशैली के अनुकूल अद्यादेश (फ़रमान) किया गया है। अरबी भाषा में यह शब्दा किताब और लेख ही के अर्थ में नहीं आता बल्कि आदेश और राजकीय आज्ञापत्र के अर्थ में भी आता है और ख़ुद क़ुरआन में भी विभिन्न अवसरों पर यह शब्द इसी अर्थ में इस्तेमाल हुआ है।
2. अर्थात् दुनिया में तुम्हारे ठहरने के लिए जो समय निर्धारित है उस समय तक वह तुमको बुरी तरह नहीं बल्कि अच्छी तरह रखेगा। उसकी नेमतें तुमपर बरसेंगी। उसकी बरकतों से प्रतिष्ठित होगे, खुशहाल और निश्चिन्त रहोगे। ज़िन्दगी में सुख और शान्ति प्राप्त होगी। अपमान-सहित नहीं बल्कि आदर और सम्मान के साथ जिओगे।
3. अर्थात् जो व्यक्ति आचरण् और कर्म की दृष्टि से जितना भी आगे बढ़ेगा अल्लाह उसको उतना ही बड़ा दर्जा प्रदान करेगा, जो व्यक्ति भी अपने आचरण और चरित्र में अपने-आपको जिस श्रेष्ठता का अधिकारी सिद्ध कर देगा वह श्रेष्ठता उसे ज़रूर दी जाएगी।
4. मक्का के अधर्मियों का हाल यह था कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को देखकर आप (सल्ल॰) की ओर से अपना मुँह मोड़ लेते थे ताकि उनसे आप (सल्ल॰) का आमना-सामना न हो जाए।

खुले को भी, वह तो उन भेदों से भी वाक़िफ़ है जो सीनों में हैं। (6) ज़मीन में चलनेवाला कोई जानदार ऐसा नहीं है जिसकी रोज़ी अल्लाह के ज़िम्मे न हो और जिसके बारे में वह न जानता हो कि कहाँ वह रहता है और कहाँ वह सौंपा जाता है, सब कुछ एक स्पष्ट रजिस्टर में दर्ज है।

(7) और वही है जिसने आसमानों और ज़मीन को छः दिनों में पैदा किया—जबकि इससे पहले उसका सिंहासन (अर्श) पानी पर था[5]—ताकि तुम्हारी परीक्षा लेकर देखे कि तुममें से कौन सबसे अच्छे कर्म करनेवाला है।[6] अब अगर ऐ नबी, तुम कहते हो कि लोगो, मरने के बाद तुम दोबारा उठाए जाओगे, तो इनकार करनेवाले तुरन्त बोल उठते है कि यह तो खुली जादूगरी है।[7] (8) और अगर हम एक विशेष अवधि तक उनकी सज़ा को टालते हैं, तो वे कहने लगते हैं कि आख़िर किस चीज़ ने उसे रोक रखा है? सुनो! जिस दिन उस सज़ा का समय आ गया, तो वह किसी के फेरे न फिर सकेगा और वही चीज़ उन्हें आ घेरेगी जिसकी वे हँसी उड़ा रहे हैं।

(9) अगर कभी हम इनसान को अपनी दयालुता से नावाज़ने के बाद फिर उससे वंचित कर देते हैं तो वह निराश होता है और अकृतज्ञता दिखाने लगता है। (10) और अगर उस मुसीबत के बाद जो उसपर आई थी हम उसे नेमत का मजा चखाते हैं तो कहता है मेरी तो सारी अनिष्टता दूर हो गई, फिर वह फूला नहीं समाता और अकड़ने लगता है। (11) इस दोष से पाक अगर कोई है तो बस वे लोग जो सब्र से काम लेनेवाले और नेक काम करनेवाले हैं, और वही हैं जिनके लिए माफ़ी भी है और बड़ा बदला भी।

(12) तो ऐ पैग़म्बर, कहीं ऐसा न हो कि तुम उन चीज़ों में से किसी चीज़ को (बयान करने से) छोड़ दो जो तुम्हारी ओर प्रकाशना द्वारा भेजी जा रही हैं और इस बात

5. हम नहीं कह सकते कि इस पानी से मुराद क्या है। यही पानी जिसे हम इस नाम से जानते हैं? या यह शब्द सिर्फ़ सांकेतिक रूप में पदार्थ की उस तरल स्थिति के लिए प्रयोग किया गया है जो वर्तमान रूप में ढाले जाने से पहले थी? राजसिंहासन (अर्श) पर होने का अर्थ भी निश्चित करना कठिन है। संभव है इसका मतलब यह हो कि उस समय ईश्वर का राज्य पानी पर था।
6. अर्थात् सृष्टि का उद्देश्य यह था कि दुनिया में इनसान को पैदा करके उसकी परीक्षा ली जाए।
7. अर्थात् मरने के बाद लोगों का दुबारा जिन्दा होना तो संभव नहीं है, मगर हमारी बुद्धि पर जादू किया जा रहा है कि हम यह अनहोनी बात मान लें।

पर दिल तंग हो कि वे कहेंगे, ''इस व्यक्ति पर कोई ख़ज़ाना क्यों न उतारा गया?'' या यह कि ''इसके साथ कोई फ़रिश्ता क्यों न आया?'' तुम तो सिर्फ़ ख़बरदार करनेवाले हो, आगे हर चीज़ का हवालेदार अल्लाह है।

(13) क्या ये कहते हैं कि पैग़म्बर ने यह किताब ख़ुद घड़ ली है? कहो, ''अच्छा, यह बात है तो इस जैसी घड़ी हुई दस सूरतें तुम बना लाओ और अल्लाह के सिवा और जो-जो (तुम्हारे पूज्य) हैं उनको मदद के लिए बुला सकते हो तो बुला लो; अगर तुम (उन्हें पूज्य समझने में) सच्चे हो। (14) अब अगर वे (तुम्हारे पूज्य) तुम्हारी मदद को नहीं पहुँचते तो जान लो कि यह अल्लाह के ज्ञान से अवतरित हुई है और यह कि अल्लाह के सिवा कोई वास्तविक पूज्य नहीं है। फिर क्या तुम (इस सत्य बात के आगे) सिर झुकाते हो?''

(15) जो लोग बस इस दुनिया की ज़िन्दगी और इसकी शोभा के चाहनेवाले होते हैं उनके किए-धरे का सारा फल हम यहीं उनको दे देते हैं और इसमें उनके साथ कोई कमी नहीं की जाती। (16) मगर आख़िरत (परलोक) में ऐसे लोगों के लिए आग के सिवा कुछ नहीं है। (वहाँ मालूम हो जाएगा कि) जो कुछ उन्होंने दुनिया में बनाया वह सब मलियामेट हो गया और अब उनका सारा किया-धरा मात्र मिथ्या है।

(17) फिर भला वह व्यक्ति जो अपने रब की ओर से एक स्पष्ट गवाही रखता था,[8] इसके बाद एक गवाह भी पालनकर्ता की ओर से (उस गवाही के समर्थन में) आ गया,[9] और पहले मूसा की किताब मार्गदर्शन और दयालुता के रूप में आई हुई भी मौजूद थी (क्या वह भी दुनियापरस्तों की तरह इससे इनकार कर सकता है?), ऐस लोग तो उसपर ईमान ही लाएँगे। और इनसान के गिरोहों में से जो कोई उसका इनकार करे

8. अर्थात् जिसको ख़ुद अपने अस्तित्व में और ज़मीन और आसमान की रचना में और ब्रह्माण्ड की व्यवस्था एवं प्रबन्ध में इस बात की खुली गवाही मिल रही थी कि इस दुनिया का बनानेवाला, स्वामी, पालनहार और शासक सिर्फ़ एक ख़ुदा है, और फिर इन्हीं गवाहियों को देखकर जिसका दिल यह गवाही भी पहले ही से दे रहा था कि इस ज़िन्दगी के बाद कोई और ज़िन्दगी ज़रूर होनी चाहिए जिसमें इनसान अपने ख़ुदा को अपने कर्मों का हिसाब दे और अपने किए का अच्छा बदला या सज़ा पाए।
9. अर्थात् क़ुरआन, जिसने आकर इस नैसर्गिक और बुद्धिसंगत गवाही का समर्थन किया और उसे बताया कि वास्तव में सत्य वही है जिसका निशान बाह्य जगत् और आत्माओं के लक्षणों में तूने पाया है।

तो उसके लिए जिस जगह का वादा है, वह दोज़ख़ है। अतः ऐ पैग़म्बर, तुम इस चीज़ की ओर से किसी शक में न पड़ना, यह सत्य है तुम्हारे रब की ओर से मगर ज्यादातर लोग नहीं मानते।

(18) और उस शख़्स से बढ़कर ज़ालिम और कौन होगा जो अल्लाह पर झूठ घड़े?[10] ऐसे लोग अपने रब के सामने लाए जाएँगे और गवाही देंगे कि ये हैं वे लोग जिन्होंने अपने रब पर झूठ घड़ा था। सुनो! अल्लाह की फिटकार है ज़ालिमों[11] पर (19)—उन ज़ालिमों पर जो अल्लाह के मार्ग से लोगों को रोकते हैं, उसके मार्ग को टेढ़ा करना चाहते हैं, और आख़िरत का इनकार करते हैं (20)—वे धरती में अल्लाह को विवश करनेवाले न थे और न अल्लाह के मुक़ाबले में कोईउनका हामी था। उन्हें अब दोहरी यातना दी जाएगी। वे न किसी की सुन ही सकते थे और न स्वयं ही उन्हें कुछ सूझता था। (21) ये वे लोग हैं जिन्होंने अपने-आपको ख़ुद घाटे में डाला और वह सब कुछ इनसे खोया गया, जो इन्होंने घड़ रखा था। (22) तय है कि वही आख़िरत में सबसे बढ़कर घाटे में रहें। (23) रहे वे लोग जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए और अपने रब ही के होकर रहे, तो यक़ीनन वे जन्नत के लोग हैं और जन्नत (स्वर्ग) में वे हमेशा रहेंगे। (24) इन दोनों गिरोहों की मिसाल ऐसी है जैसे एक आदमी तो हो अन्धा-बहरा और दुसरा हो देखने और सुननेवाला, क्या ये दोनों एक जैसे हो सकते हैं? क्या तुम (इस मिसाल से) कोई शिक्षा नहीं लेते?

(25) (और ऐसी ही स्थिति थी जब) हमने नूह को उसकी क़ौम की ओर भेजा था। (उसने कहा) "मैं तुम लोगों को स्पष्ट रूप से ख़बरदार करता हूँ (26) कि अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करो नहीं तो मुझे आशंका है कि तुमपर एक दिन दर्दनाक अज़ाब आएगा।" 27) जवाब में उसकी क़ौम के सरदार, जिन्होंने उसकी बात मानने

10. अर्थात् यह कहे कि अल्लाह के साथ ईश्वरत्व और बन्दगी के अधिकार में दूसरे भी साझीदार हैं। या यह कहे कि ईश्वर को अपने बन्दों और सेवकों के सीधा मार्ग पाने या भटकने के प्रति कोई रुचि नहीं है और उसने कोई किताब और कोई नबी हमें राह दिखाने के लिए नहीं भेजा है, बल्कि हमें स्वतंत्र छोड़ दिया है कि जो ढंग चाहें अपनी ज़िन्दगी के लिए अपना लें, या यह कहें कि अल्लाह ने हमें यूँ ही खेल के रूप में पैदा किया और यूँ ही हमारा अन्त कर देगा, कोई जबाबदेही हमें उसके सामने नहीं करनी है और कोई बदला और सज़ा नहीं मिलनी है।

11. वर्णनशैली से स्पष्ट है कि यह बात आख़िरत में उनकी पेशी के अवसर पर कही जाएगी।

से इनकार किया था, बोले, "हमारी नज़र में तो तुम इसके सिवा कुछ नहीं हो कि बस एक इनसान हो हम जैसे। और हम देख रहे हैं कि हमारी क़ौम में से बस वे लोग जो हमारे यहाँ सबसे नीच थे बिना सोचे-समझे तुमहारे पीछे चलने लगे हैं। और हम कोई चीज़ भी ऐसी नहीं पाते जिसमें तुम लोग हमसे कुछ बढ़े हुए हो, बल्कि हम तो तुम्हें झूठा समझते हैं। (28) उसने कहा, "ऐ क़ौम के भाइयो, तनिक सोचो तो सही कि अगर मैं अपने रब की ओर से एक स्पष्ट गवाही पर क़ायम था और फिर उसने मुझको अपने विशेष दयालुता भी प्रदान की मगर वह तुमको दिखाई न दी, तो आख़िर हमारे पास क्या साधन है कि तुम मानना न चाहो और हम ज़बरदस्ती उसको तुम्हारे सिर चिपका दें? (29) और ऐ क़ौम के भाइयो, मैं इस काम पर तुमसे कोई माल नहीं माँगता, मेरा पारिश्रमिक तो अल्लाह के ज़िम्मे है। और मैं उन लोगों को धक्के देने से भी रहा जिन्होंने मेरी बात मानी है, वे ख़ुद ही अपने रब के पास जानेवाले हैं। मगर मैं देखता हूँ कि तुम लोग जिहालत बरत रहे हो। (30) और ऐ क़ौम अगर मैं इन लोगों को धुतकार दूँ, तो अल्लाह की पकड़ से कौन मुझे बचाने आएगा? तुम लोगों की समझ में क्या इतनी बात भी नहीं आती? (31) और मैं तुमसे नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने हैं, न यह कहता हूँ कि मैं परोक्ष (ग़ैब) का ज्ञान रखता हूँ, न यह मेरा दावा है कि मैं फ़रिश्ता हूँ। और यह भी मैं नहीं कह सकता कि जिन लोगों को तुम्हारी आँखें उपेक्षा (नफ़रत) से देखती हैं उन्हें अल्लाह ने कोई भलाई नहीं दी। उनके जी का हाल अल्लाह ही ख़ूब जानता है। अगर मैं ऐसा कहूँ तो ज़ालिम हूँगा।"

(32) आक़िरकार उन लोगों ने कहा कि "ऐ नूह, तुमने हमसे झगड़ा किया और बहुत कर लिया। अब तो बस वह अज़ाब ले आओ जिसकी तुम हमें धमकी देते हो अगर सच्चे हो।" (33) नूह ने जवाब दिया, "वह तो अल्लाह ही लाएगा, अगर चाहेगा, और तुम इतना बल-बूता नहीं रखते कि इसे रोक दो। (34) अब अगर मैं तुम्हारा कुछ हित भी चाहूँ, तो मेरा हित चाहना तुम्हें कोई लाभ नहीं पहुँचा सकता जबकि अल्लाह ही ने तुम्हें भटका देने का इरादा कर लिया हो,[12] वही तुम्हारा रब है और उसी की तरफ़ तुम्हें पलटना है।

(35) ऐ नबी, क्या ये लोग कहते हैं कि इस व्यक्ति ने ये सब कुछ ख़ुद घड़ लिया

12. अर्थात् अगर अल्लाह ने तुम्हारी हठधर्मी, दुष्टता और भलाई के प्रति अरुचि देखकर यह फ़ैसला कर लिया है कि तुम्हें सीधे मार्ग पर चलने का सौभाग्य प्रदान न करे और जिन राहों में तुम ख़ुद भटकना चाहते हो उन्हीं में तुम्हें भटका दे तो अब तुम्हारी भलाई के लिए मेरा कोई प्रयास सफल नहीं हो सकता।

है? इनसे कहो, "अगर मैंने यह ख़ुद घड़ा है, तो मुझपर अपने अपराध की ज़िम्मेदारी है, और जो अपराध तुम कर रहे हो उसकी ज़िम्मेदारी से मैं बरी हूँ।"

(36) नूह पर प्रकाशना (वह्य) की गई कि तुम्हारी क़ौम में से जो लोग ईमान ला चुके, बस वे ला चुके, अब कोई माननेवाला नहीं है। उनकी करतूतों पर ग़म खाना छोड़ो (37) और हमारी निगरानी में हमारी प्रकाशना के मुताबिक़ एक नाव बनना शुरू कर दो। और देखो जिन लोगों ने ज़ुल्म किया है उनके लिए मुझसे कोई सिफ़ारिश न करना, ये सारे के सारे अब डूबनेवाले हैं।

(38) नूह नाव बना रहा था और उसकी क़ौम के सरदारों में से जो कोई उसके पास से गुज़रता था वह उसकी हँसी उड़ाता था। उसने कहा, "अगर तुम हमपर हँसते हो तो हम भी तुमपर हँस रहे हैं, (39) जल्द ही तुम्हें ख़ुद मालूम हो जाएगा कि किसपर वह अज़ाब आता है जो उसे अपमानित कर देगा और किसपर वह बला टूट पडती है जो टाले न टलेगी।"[13]

(40) यहाँ तक कि जब हमारा आदेश आ गया और वह तंदूर (तन्नूर) उबल पड़ा[14] तो हमने कहा, "हर प्रकार के जानवरों का एक-एक जोडा नाव में रख लो, अपने घरवालों को भी—सिवाय उन लोगों के जिनके बारे में पहले बताया जा चुका है[15]—उसमें सवार करा दो और उन लोगों को भी बिठा लो जो ईमान लाए हैं।" और थोड़े ही

13. यह एक अजीब मामला है जिसपर विचार करने से मालूम होता है कि इनसान दुनिया के बाह्य रूप से कितना धोखा खाता है। जब नूह (अलै०) दरिया से बहुत दूर सूखी ज़मीन पर अपना जहाज़ बना रहे होंगे तो वास्तव में लोगों को यह एक अत्यंत उपहासजनक कार्य लगता होगा और वे हँस-हँसकर कहते होंगे कि बड़े मियाँ का पागलपन आख़िर यहाँ तक पहुँचा कि अब आप सूखी ज़मीन पर जहाज़ चलाएँगे। उस समय किसी के स्वप्न में भी यह बात न आ सकी होगी कि थोड़े ही दिनों के बाद वास्तव में यहाँ जहाज़ चलेगा, लेकिन जिस व्यक्ति के पास सत्य का ज्ञान था और जो जानता था कि कल यहाँ जहाज़ की क्या ज़रूरत पड़नेवाली है उसे उन लोगों की जिहालत और बेख़बरी पर और फिर उनके मूर्खतापूर्ण निश्चिन्तता पर उलटी हँसी आती होगी और वह कहता होगा कि कितने नादान हैं ये लोग कि शामत (विपत्ति) इनके सिर पर तुली खड़ी है, मैं इन्हें सावधान कर चुका हूँ कि वह बस आना चाहती है और इनकी आँखों के सामने उससे बचने की तैयारी भी कर रहा हूँ, मगर ये निश्चिन्त बैठे हैं और उलटा मुझे दीवाना समझ रहे हैं।

लोग थे जो नूह के साथ ईमान लाए थे। (41) नूह ने कहा, "सवार हो जाओ इसमें, अल्लाह ही के नाम से है इसका चलना भी और इसका ठहरना भी, मेरा रब बड़ा क्षमाशील और दयावान् है।"

(42) नाव इन लोगों को लिए चली जा रही थी और एक-एक लहर पहाड़ की तरह उठ रही थी। नूह का बेटा दूर फ़ासले पर था। नूह ने पुकारकर कहा, "बेटा, हमारे साथ सवार हो जा, अधर्मियों के साथ न रह।" (43) उसने पलटकर जवाब दिया, "मैं अभी एक पहाड़ पर चढ़ जाता हूँ जो मुझे पानी से बचा लेगा।" नूह ने कहा, "आज कोई चीज़ अल्लाह के आदेश से बचनेवाली नहीं है सिवाय इसके कि अल्लाह ही किसी पर दया करे।" इतने में एक लहर दोनों के बीच आ गई और वह भी डूबनेवालों में शामिल हो गया।

(44) आदेश हुआ, "ऐ ज़मीन, अपना सारा पानी निगल जा और ऐ आसमान रुक जा।" अतएव पानी ज़मीन में बैठ गया, फ़ैसला चुका दिया गया, नाव जूदी[16] पर टिक गई, और कह दिया गया कि दूर हुई ज़ालिमों की क़ौम।

(45) नूह ने अपने रब को पुकारा। कहा, "ऐ रब, मेरा बेटा मेरे घरवालों में से है और तेरा वादा सच्चा है और तू सब हाकिमों से बड़ा और सबसे अच्छा हाकिम है।" (46) जवाब में कहा गया, "ऐ नूह, वह तेरे घरवालों में से नहीं है, वह तो एक बिगड़ा हुआ कर्म है,[17] अतः मुझसे उस बात की प्रार्थना न कर जिसकी हक़ीक़त तू नहीं जानता, मैं तुझे नसीहत करता हूँ कि अपने आपको जाहिलों की तरह न बना ले।" (47) नूह ने तुरन्त निवेदन किया, "ऐ मेरे रब, मैं तेरी पनाह माँगता हूँ इससे कि वह चीज़ तुझसे माँगूँ जिसका मुझे ज्ञान नहीं।[18] अगर तूने मुझे माफ़ न किया और दया न की तो मैं

14. इसके बारे में टीकाकारों के कथन भिन्न-भिन्न हैं। मगर हमारी दृष्टि में सही वही है जो क़ुरआन के स्पष्ट शब्दों से समझ में आता है कि तूफ़ान का आरंभ एक विशेष तंदूर से हुआ जिसके नीचे से पानी का स्रोत फूट पड़ा, फिर एक ओर आसमान से मूसलाधार वर्षा शुरू हो गई और दूसरी ओर ज़मीन में जगह-जगह से स्रोत फूटने लगे।
15. अर्थात् तुम्हारे घर के जिन व्यक्तियों के बारे में पहले बताया जा चुका है कि ये अधर्मी हैं और अल्लाह की दयालुता के अधिकारी नहीं हैं उन्हें नाव में न बिठाओ।
16. जूदी पहाड़ कुर्दिस्तान के इलाक़े में इब्न उमर द्वीप के उत्तर-पूर्व की ओर स्थित है और आज भी 'जूदी' के नाम ही से प्रसिद्ध है।

बरबाद हो जाऊँगा।''

(48) आदेश हुआ, ''ऐ नूह, उतर जा, हमारी ओर से सलामती और बरकतें हैं तुझपर और उन गिरोहों पर जो तेरे साथ हैं, और कुछ गिरोह ऐसे भी हैं जिनको हम कुछ समय तक ज़िन्दगी का सामान प्रदान करेंगे, फिर उन्हें हमारी ओर से दर्दनाक अज़ाब पहुँचेगा।''

(49) ऐ नबी, ये परोक्ष (ग़ैब) की ख़बरें हैं जिनकी प्रकाशना (वह्‌य) हम तुम्हारी ओर कर रहे हैं। इससे पहले न तुम इनको जानते थे और न तुम्हारी क़ौम। अतः सब्र से काम लो, अन्तिम परिणाम परहेज़गारों के ही हक़ में हैं।[19]

(50) और आद की ओर हमने उनके भाई हूद को भेजा। उसने कहा, ''ऐ क़ौम के भाइयो, अल्लाह की बन्दगी करो, तुम्हारा कोई ख़ुदा उसके सिवा नहीं है। तुमने सिर्फ़ झूठ घड़ रखे हैं, (51) ऐ क़ौम के भाइयो, इस काम पर मैं तुमसे कोई बदला नहीं चाहता, मेरा पारिश्रमिक तो उसके ज़िम्मे है जिसने मुझे पैदा किाय है, क्या तुम बुद्धि से तनिक काम नहीं लेते? (52) और ऐ मेरी क़ौम के लोगो, अपने रब से माफ़ी चाहो, फिर उसकी ओर पलटो, वह तुमपर आसमान केदहाने खोल देगा और तुम्हारी वर्तमान शक्ति में और ज़्यादा शक्ति की अभिवृद्धि करेगा। अपराधी बनकर (बन्दगी से) मुँह न फेरो।

(53) उन्होंने जवाब दिया, ''ऐ हूद, तू हमारे पास कोई खुली गवाही लेकर नहीं आया है और तेरे कहने से हम अपने इष्ट-पूज्यों को नहीं छोड़ सकते, और तुझपर हम

17. यह ऐसा ही है जैसे एक व्यक्ति के शरीर का कोई अंग सड़ गया हो और डॉक्टर ने उसको काट फेंकने का फ़ैसला किया हो। अब वह रोगी डॉक्टर से कहता है कि यह तो मेरे शरीर का एक अंग है इसे क्यों काटते हो? और डॉक्टर इसके जवाब में कहता है कि यह तुम्हारे शरीर का हिस्सा नहीं रहा है क्योंकि यह सड़ चुका है। अतः एक नेक बाप से उसके नालायक़ बेटे के बारे में यह कहना कि यह बिगड़ा हुआ काम है, इसका अर्थ यह है कि तुमने इसका पालन-पोषण करने में जो मेहनत की, वह अकारथ हो गई और यह काम बिगड़ गया।
18. अर्थात् ऐसी प्रार्थना करूं जिसके ठीक होने का मुझे ज्ञान नहीं है।
19. अर्थात् जिस तरह नूह (अलै॰) और उनके साथियों ही का आख़िरकार बोलबाला हुआ, उसी तरह तुम्हारा और तुम्हारे साथियों का भी होगा। अतः इस समय जो संकट और कठिनाइयाँ तुमपर पड़ रही हैं उनसे हताश न हो, बल्कि साहस और सब्र के साथ अपना काम किए चले जाओ।

ईमान लानेवाले नहीं हैं। (54) हम तो यह समझते हैं कि तेरे उपर हमारे पूज्यों में से किसी की मार पड़ गई है।''[20]

हूद ने कहा, ''मैं अल्लाह की गवाही पेश करता हूँ। और तुम गवाह रहो कि यह जो अल्लाह के सिवा दूसरों को तुमने ईश्वरत्व में साझीदार बना रखा है इससे मैं बेज़ार हूँ। (55) तुम सबके सब मिलकर मेरे विरुद्ध अपनी करनी में कमी न करो और मुझे तनिक भी मुहलत न दो, (56) मेरा भरोसा अल्लाह पर है जो मेरा रब भी है और तुम्हारा रब भी। कोई जानदार ऐसा नहीं जिसकी चोटी उसके हाथ में न हो। बेशक मेरा रब सीधे मार्ग पर है। (57) अगर तुम मुँह फेरते हो तो फेर लो। जो सन्देश देकर मैं तुम्हारे पास भेजा गया था वह मैं तुमको पहुँचा चुका हूँ। अब मेरा रब तुम्हारी जगह दूसरी क़ौम को उठाएगा और तुम उसका कुछ न बिगाड़ सकोगे। निस्संदेह मेरा रब हर चीज़ पर निगराँ हैं।''

(58) फिर जब हमारा आदेश आ गया तो हमने अपनी दयालुता से हूद को और उन लोगों को जो उसके साथ ईमान लाए थे मुक्त किया और एक भारी अज़ाब से उन्हें बचा लिया।

(59) ये हैं आद, अपने रब की आयतों से इन्होंने इनकार किया, उसके रसूलों की बात न मानी, और हर बड़े अत्याचारी सत्य के दुश्मन के पीछ चलते रहे। (60) आख़िरकार इस दुनिया में भी इनपर फिटकार पड़ी और क़ियामत के दिन भी। सुनो! आद ने अपने रब के साथ इनकार की नीति अपनाई। सुनो! दूर फेंक दिए गए आद, हूद की क़ौम के लोग।

(61) और समूद की ओर हमने उनके भाई सालेह को भेजा। उसने कहा, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, अल्लाह की बन्दगी करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई ख़ुदा नहीं है। वही है जिसने तुमको ज़मीन से पैदा किया है और यहाँ तुमको बसाया है। अतः तुम उससे माफ़ी चाहो और उसकी ओर पलट आओ, यक़ीनन मेरा रब क़रीब है और वह दुआओं का जवाब देनेवाला है।''[21]

(62) उन्होंने कहा, ''ऐ सालेह, इससे पहले तू हमारे बीच ऐसा व्यक्ति था जिससे

20. अर्थात् तूने किसी देवी या देवता या किसी हज़रत के आसताने पर कुछ धृष्टा दिखाई होगी, उसका फल है जो तू भोग रहा है कि बहकी-बहकी बातें करने लगा है और वही बस्तियाँ जिनमें कल तू इज़्ज़त के साथ रहता था, आज वहाँ गालियों और पत्थरों से तेरी आवभगत हो रही है।

बड़ी उम्मीदें लगी थीं। क्या तू हमें उन देवताओं की पूजा से रोकना चाहता है जिनकी पूजा हमारे बाप-दादा करते थे? तू जिस पथ (तरीक़े) की ओर हमें बुला रहा है उसके बारे में हमको भारी सन्देह है जिसने हमें दुविधा में डाल रखा है।''

(63) सालेह ने कहा, ''ऐ क़ौम के भाइयो, तुमने कुछ इस बात पर भी विचार किया कि अगर मैं अपने रब की ओर से एक खुली गवाही रखता था, और फिर उसने अपनी दयालुता से भी मुझे नवाज़ दिया, तो इसके बाद अल्लाह की पकड़ से मुझे कौन बचाएगा अगर मैं उसकी अवज्ञा करूँ? तुम मेरे किस काम आ सकते हो सिवाय इसके कि मुझे और ज़्यादा घाटे में डाल दो। (64) और ऐ मेरी क़ौम के लोगो, देखो यह अल्लाह की ऊँटनी तुम्हारे लिए एक निशानी है। इसे अल्लाह की ज़मीन में चरने के लिए आज़ाद छोड़ दो। इसे तनिक भी न छेड़ना, नहीं तो कुछ ज़्यादा देर न गुज़रेगी कि तुमपर अल्लाह का अज़ाब (यातना) आ जाएगा।''

21. इस छोटे से वाक्य में हज़रत सालेह ने बहुदेववाद के सारे कारोबार की जड़ काट दी है। मुशरिक समझते हैं और चालाक लोगों ने उनको ऐसा समझाने की कोशिश भी की है कि सारे जहान के ख़ुदा की मुक़द्दस ड्योढ़ी साधारण इन्सानों की पहुँच से बहुत ही दूर है। उसके दरबार तक भला साधारण आदमी की पहुँच कैसे हो सकती है। वहाँ तक दुआओं का पहुँचना और फिर उनका जवाब मिलना तो किसी तरह संभव ही नहीं हो सकता जब तक कि पाक रूहों का वसीला न ढूँढ़ा जाए और उन धर्माधिकारियों की सेवाएँ न प्राप्त की जाएँ जो ऊपर तक चढ़ावे, नज़्रें, और प्रार्थना-पत्र पहुँचाने के ढब जानते हैं। यही वह भ्रम है जिसने बन्दे और ईश्वर के बीच बहुत-से छोटे-बड़े पूज्यों, इष्ट-देवों और सिफ़ारिशियों की एक भीड़ खड़ी कर दी। हज़रत सालेह (अलै॰) अज्ञान के इस पूरे माया-जाल को सिर्फ़ दो शब्दों से तोड़ फेंकते हैं। एक यह कि अल्लाह क़रीब है। दूसरे यह कि वह दुआओं का जवाब देनेवाला है। अर्थात् तुम्हारा यह विचार भी असत्य है कि वह तुमसे दूर है और यह भी असत्य है कि तुम सीधे उसको पुकारकर अपनी दुआओं का जवाब हासिल नहीं कर सकते। तुममें से एक-एक व्यक्ति अपने पास ही उसको पा सकता है, उससे गुप्त वार्ता कर सकता है, अपने प्रार्थना-पत्र सीधे उसकी सेवा में पेश कर सकता है और फिर यह सीधे अपने हर बन्दे की दुआओं का जवाब भी ख़ुद देता है। अतः जब जगत् के रब का दरबार सामान्य रूप से हर समय हर व्यक्ति के लिए खुला है और हर व्यक्ति के क़रीब ही मौजूद है तो यह तुम किस मूर्खता में पड़े हो कि इसके लिए माध्यम और वसीले और सिफ़ारिशी ढूँढ़ते फिरते हो?

(65) मगर उन्होंने ऊँटनी को मार डाला। इसपर सालेह ने उनको सावधान कर दिया कि ''बस अब तीन दिन अपने घरों में और रह-बस लो। यह ऐसी अवधि है जो झूठी न सिद्ध होगी।''

(66) आख़िरकार जब हमारे फ़ैसले का समय आ गया तो हमने अपने दयालुता से सालेह को और उन लोगों को जो उसके साथ ईमान लाए थे बचा लिया और उस दिन की रुसवाई से उनको सुरक्षित रखा। निस्संदेह तेरा रब ही वास्तव में शक्तिमान और प्रभुत्वशाली है। (67) रहे वे लोग जिन्होंने ज़ुल्म किया था, तो एक ज़ोरदार धमाके ने उनको धर लिया और वे अपनी बस्तियों में इस तरह अचेत और निष्क्रिय पड़े के पड़े रह गए (68) कि मानो वे वहाँ अभी बसे ही न थे।

सुनो! समूद ने अपने रब के पास इनकार की नीति अपनाई। सुनो! दूर फेंक दिए गए समूद!

(69) और देखो, इबराहीम के पास हमारे फ़रिश्ते शुभ-सूचना लिए हुए पहुँचे। कहा, तुमपर सलाम हो। इबराहीन ने जवाब दिया, तुमपर भी सलाम हो। फिर कुछ देर न गुज़री कि इबराहीम एक भुना हुआ बछड़ा (उनके सत्कार के लिए) ले आया।[22] (70) मगर जब देखा कि उनके हाथ खाने पर नहीं बढ़ते[23] तो वह उनकी ओर से शक में पड़ गया और दिल में उनसे डर महसूस करने लगा। उन्होंने कहा, ''डरो नहीं, हम तो लूत की क़ौम की ओर भेजे गए हैं।'' (71) इबराहीम की पत्नी भी खड़ी हुई थी। वह यह सुनकर हँस दी। फिर हमने उसको इसहाक़ और इसहाक़ के बाद याक़ूब की ख़ुशख़बरी दी। (72) वह बोली, ''हाय मेरा अभाग्य![24] क्या अब मेरे यहाँ बच्चा होगा जबकि मैं बुढ़िया फूँस हो गई और मेरे पति भी बूढ़े हो चुके? यह तो बड़ी अजीब बात है।'' (73) फ़रिश्तों ने कहा, ''अल्लाह के आदेश पर आश्चर्य करती हो? इबराहीम के घरवालो, तुम लोगों पर तो अल्लाह की दयालुता और उसकी बरकतें हैं, और यक़ीनन

22. इससे मालूम हुआ कि फ़रिश्ते हज़रत इबराहीम (अलै॰) के यहाँ इनसान के रूप में पहुँचे थे और शुरू में उन्होंने अपना परिचय नहीं कराया था, इसलिए हज़रत इबराहीम (अलै॰) ने ख़याल किया कि ये कोई अजनबी मेहमान है और उनके आते ही तुरन्त उनके सत्कार का इनतिज़ाम किया।

23. इससे हज़रत इबराहीम (अलै॰) को मालूम हुआ कि ये फ़रिश्ते हैं।

24. इसका अर्थ यह नहीं है कि हज़रत सारा वास्तव में इसपर ख़ुश होने के बजाय उलटे इसकी दुर्भाग्य (कमनसीबी) समझती थीं। बल्कि वास्तव में ये उस तरह के शब्द हैं जो औरतें साधारणतया आश्चर्य के अवसरों पर बोला करती हैं।

अल्लाह अत्यन्त प्रशंसनीय और बड़ा गौरववाला है।''

(74) फिर जब इबराहीम की घबराहट दूर हो गई और (सन्तान की शुभ-सूचना से) उसका दिल ख़ुश हो गया, तो उसने लूत की क़ौम के विषय में हमसे झगड़ा शुरू किया।[25] (75) वास्तव में इबराहीम बड़ा सहनशील और कोमल-हृदय आदमी था और हर हाल में हमारी तरफ़ रुजू करता था। (76) (आख़िरकार हमारे फ़रिश्तों ने उससे कहा) ''ऐ इबराहीम, इससे बाज़ आ जाओ, तुम्हारे रब का आदेश हो चुका है और अब उन लोगों पर वह अज़ाब आकर रहेगा जो किसी के फेरे नहीं फिर सकता।''

(77) और जब हमारे फ़रिश्ते लूत के पास पहुँचे तो उनके आने से वह बहुत घबराया और दिल तंग हुआ और कहने लगा कि आज बड़ी मुसीबत का दिन है।[26] (78) (इन मेहमानों का आना था कि) उसकी क़ौम के लोग बेक़ाबू होकर उसके घर की ओर दौड़ पड़े। पहले से वे ऐसे ही बुरे कर्मों के आदी थे। लूत ने उनसे कहा, ''भाइयो, ये मेरी बेटियाँ मौजूद हैं, ये तुम्हारे लिए सबसे ज़्यादा पवित्र है।[27] और अल्लाह का डर

25. 'झगड़े' का शब्द इस अवसर पर उस गहरे प्रेम और गर्वपूर्ण सम्बन्ध को व्यक्त करता है जो हज़रत इबराहीम (अलै॰) अपने अल्लाह से रखते थे। इस शब्द से यह चित्र आँखों के सामने आ जाता है कि बन्दे और रब के बीच बड़ी देर तक वाद-विवाद चलता रहता है। बन्दा आग्रह कर रहा है कि किसी तरह लूत (अलै॰) की क़ौम पर से अज़ाब टाल दिया जाए। अल्लाह जवाब में कह रहा है कि यह क़ौम अब भलाई से बिलकुल ख़ाली हो चुकी है और इसके अपराध उस सीमा से बढ़ चुके हैं कि इसके साथ कोई रिआयत की जा सके। मगर बनदा है कि फिर यही कहे जाता है कि ''पालनहार अगर कुछ थोड़ी-सी भलाई भी उसमें बाक़ी हो तो उसे और तनिक मुहलत दे दे शायद कि यह भलाई फल ले आए।''

26. ये फ़रिश्ते सुन्दर लड़कों के रूप में हज़रत लूत (अलै॰) के यहाँ पहुँचे थे। और वे इस बात से बेख़बर थे कि ये फ़रिश्ते हैं। यही कारण था कि इन मेहमानों के आने से आपको बड़ी परेशानी और दुख हुआ। अपनी क़ौम को जानते थे कि कैसी दुराचारी और कितनी निर्लज्ज हो चुकी है।

27. इसका अर्थ यह नहीं है कि हज़रत लूत (अलै॰) ने उनके सामने अपनी बेटियों को व्यभिचार के लिए पेश कर दिया था। ''ये तुम्हारे लिए सबसे ज़्यादा पवित्र हैं'' का वाक्य ऐसा ग़लत अर्थ लेने की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ता। हज़रत लूत (अलै॰) का आशय स्पष्टतः यह था कि अपनी काम-वासना को उस स्वाभाविक और जाइज़ तरीक़े से पूरा करो जो अल्लाह ने निश्चित किया है और उसके लिए औरतों की कमी नहीं है।

रखो और मेरे मेहमानों के मामले में मुझे अपमानित न करो। क्या तुममे कोई भला आदमी नहीं है?'' (79) उन्होंने जवाब दिया, ''मुझे तो मालूम ही है कि तेरी बेटियों में हमारा कोई हिस्सा नहीं है। और तू यह भी जानता है कि हम चाहते क्या है।'' (80) लूत ने कहा, ''क्या ही अच्छा होता कि मेरे पास इतनी शक्ति होती कि तुम्हें सीधा कर देता, या कोई मज़बूत सहारा ही होता कि उसकी पनाह लेता।'' (81) तब फ़रिश्तों ने उसस कहा, ''ऐ लूत, हम तेरे रब के भेजे हुए फ़रिश्ते हैं, ये लोग तेरा कुछ न बिगाड़ सकेंगे। बस तू कुछ रात रहे अपने लोगों और परिवार को लेकर निकल जा। और देखो तुममें से कोई व्यक्ति पीछे पलटकर न देखे। मगर तेरी पत्नी (साथ नहीं जाएगी) क्योंकि उसपर भी वही कुछ बीतनेवाला है जो इन लोगों पर बीतना है। इनकी तबाही के लिए सुबह का वक़्त नियत है।—सुबह होते अब देर ही कितनी है!''

(82) फिर जब हमारे फ़ैसले का समय आ पहुँचा तो हमने उस बस्ती को तलपट कर दिया और उसपर पकी हुई मिट्टी के पत्थर ताबड़-तोड़ बरसाए (83) जिनमें से हर पत्थर तेरे रब के यहाँ चिह्नित[28] था। और ज़ालिमों से यह सज़ा कुछ दूर नहीं है।

(84) और मदयनवालों की ओर हमने उनके भाई शुऐब को भेजा। उसने कहा, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, अल्लाह की बन्दगी करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई रब नहीं है। और नाप-तोल में कमी न किया करो। आज मैं तुमको अच्छी हालत में देख रहा हूँ, मगर मुझे डर है कि कल तुमपर ऐसा दिन आएगा जिसका अज़ाब सबको घेर लेगा। (85) और ऐ क़ौम के भाइयो, ठीक-ठीक इनसाफ़ के साथ पूरा नापो और तोलो और लोगों को उनकी चीज़ों में घाटा न दिया करो और ज़मीन में बिगाड़ न फैलाते फिरो। (86) अल्लाह की दी हुई बचत तुम्हारे लिए ज़्यादा अच्छी है अगर तुम मोमिन हो। और जैसा भी हो, मैं तुम्हारे ऊपर कोई नियुक्त रखवाला नहीं हूँ।''

(87) उन्होंने जवाब दिया, ''ऐ शुऐब, क्या तेरी नमाज़ तुझे यह सिखाती है कि हम उन सभी पूज्यों को छोड़ दें जिनकी पूजा हमारे बाप-दादा करते थे? या यह कि हमको अपने माल में अपनी इच्छा के अनुसार कुछ उपभोग का अधिकार न हो? बस तू ही तो एक उदार और सच्चा आदमी रह गया है!

(88) शुऐब ने कहा, ''भाइयो, तुम स्वयं ही सोचो कि अगर मैं अपने पालनहार की ओर से एक खुली गुमराही (स्पष्ट प्रमाण) पर था और उसने मुझे अपने यहाँ से

28. अर्थात् हर एक पत्थर अल्लाह की ओर से नामांकित था कि उसे विनाश का क्या काम करना है और किस पत्थर को किस अपराधी पर पड़ना है।

अच्छी रोज़ी भी प्रदान की[29] (तो इसके बाद में तुम्हारी गुमराहियों और हरामख़ोरियों में तुम्हारा साथ कैसे दे सकता हूँ?) और मैं हरगिज़ यह नहीं चाहता कि जिन बातों से मैं तुमको रोकता हूँ उनको ख़ुद मैं करूँ। मैं तो सुधार करना चाहता हूँ जहाँ तक भी मेरा बस चले। और यह जो कुछ मैं करना चाहता हूँ वह पूरी तरह अल्लाह के योगदान पर निर्भर करता है, उसी पर मैंने भरोसा किया और हर मामले में उसी की तरफ़ रुजू करता हूँ। (89) और ऐ क़ौम के भाइयो, मेरे विरुद्ध तुम्हारी हठधर्मी कहीं यह नौबत न पहुँचा दे कि आख़िरकार तुमपर भी वही अज़ाब आकर रहे जो नूह या हूद या सालेह की क़ौम पर आया था। और लूत की क़ौम तो तुमसे कुछ ज़्यादा दूर भी नहीं है। (90) देखो! अपने रब से माफ़ी माँगो और उसकी ओर पलट आओ, बेशक मेरा रब दयावान् है और अपने पैदा किए हुए प्राणी (मख़लूक़) से प्रेम करता है।''

(91) उन्होंने जवाब दिया, ''ऐ शुऐब, तेरी बहुत-सी बातें तो हमारी समझ ही में नहीं आतीं, और हम देखते हैं कि तू हमारे बीच एक शक्तिहीन आदमी है, तेरी बिरादरी न होती तो हम कभी का पथराव करके तुझे मार डालते, तेरा बलबूता तो इतना नहीं है कि हमपर भारी हो।''

(92) शूऐब ने कहा, ''भाइयो, क्या मेरी बिरादरी तुमपर अल्लाह से ज़्यादा भारी है कि तुमने (बिरादरी का तो डर रखा और) अल्लाह को बिलकुल पीठ पीछे डाल दिया? जान रखो कि जो कुछ तुम कर रहे हो वह अल्लाह की पकड़ से बाहर नहीं है। (93) ऐ मेरी क़ौम के लोगो, तुम अपने तरीक़े पर काम किए जाओ और मैं अपने तरीक़े पर करता रहूँगा, जल्दी ही तुम्हें मालूम हो जाएगा कि किसपर अपमानजनक अज़ाब आता है और कौन झूठा है। तुम भी इनतिज़ार करो और मैं भी तुम्हारे साथ बाट देख रहा हूँ।''

(94) आख़िरकार जब हमारे फ़ैसले का समय आ गया तो हमने अपनी दयालुता से शुऐब और उसके साथी ईमानवालों को बचा लिया और जिन लोगों ने ज़ुल्म किया था उनको एक सख़्त धमाके ने ऐसा पकड़ा कि वे अपनी बस्तियों में अचेत और निष्क्रिय पड़े के पड़े रह गए, (95) मानो वे कभी वहाँ रहे-बसे ही न थे।

29. अर्थात् अगर मेरे रब ने मुझे सत्य को पहचाननेवाली सूझ-बूझ भी दी हो और हलाल रोज़ी भी प्रदान की हो तो मेरे लिए यह किस तरह जाइज़ हो सकता है कि जब अल्लाह ने मुझपर यह उदार अनुग्रह किया है तो मैं तुम्हारी गुमराहियों और हरामख़ोरियों को सत्य और ठीक कहकर उसकी नाशुक्री करूँ।

सुनो! मदयनवाले भी दूर फेंक दिए गए जिस तरह समूद फेंके गए थे।

(96,97) और मूसा को हमने अपनी निशानियों और नियुक्त के स्पष्ट प्रमाणों के साथ फ़िरऔन और उसके राज्य के सरदारों की ओर भेजा, मगर उन्होंने फ़िरऔन के आदेश का पालन किया, हालाँकि फ़िरऔन का आदेश सत्यता पर आधारित न था। (98) क़ियामत के दिन वह अपनी क़ौम के आगे-आगे होगा और अपने नेतृत्व में उन्हें नरक की ओर ले जाएगा। कैसा बुरा घाट है यह जिसपर कोई पहुँचे! (99) और उन लोगों पर दुनिया में भी लानत (धिक्कार) पड़ी और क़ियामत के दिन भी पड़ेगी। कैसा बुरा बदला है यह जो किसी को मिले!

(100) यह कुछ बस्तियों का वृत्तांत है जो हम तुम्हें सुना रहे हैं। उनमें से कुछ अब भी खड़ी हैं और कुछ की फ़सल कट चुकी है। (101) हमने उनपर ज़ुल्म नहीं किया, उन्होंने ख़ुद ही अपने ऊपर ज़ुल्म किया और जब अल्लाह का आदेश आ गया तो उनके वे पूज्य, जिन्हें वे अल्लाह को छोड़कर पुकारा करते थे, उनके कुछ काम न आ सके और उन्होंने बरबादी के सिवा उन्हें कुछ लाभ न पहुँचाया।

(102) और तेरा रब जब किसी ज़ालिम बस्ती को पकड़ता है तो फिर उसकी पकड़ ऐसी ही हुआ करती है, वास्तव में उसकी पकड़ बड़ी ही कड़ी और दर्दनाक होती है। (103) वास्तविकता यह है कि इसमें एक निशानी है हर उस व्यक्ति के लिए जो आख़िरत के अज़ाब से डरे। वह एक दिन होगा जिसमें सब लोग जमा होंगे और फिर जो कुछ भी उस दिन होगा सबकी आँखों के सामने होगा। (104) हम उसके लाने में कुछ बहुत ज़्यादा विलम्ब नहीं कर रहे हैं, बस एक गिनी-चुनी मुद्दत उसके लिए निश्चित है। (105) जब वह आएगा तो किसी को बात करने की मजाल न होगी, यह और बात है कि अल्लाह की अनुज्ञा से कुछ निवेदन करे। फिर कुछ लोग उस दिन अभागे होंगे और कुछ सौभाग्यशाली। (106,107) जो अभागे होंगे वे दोज़ख़ में जाएँगे (जहाँ गर्मी और प्यास की तेज़ी से) वे हाँफेंगे और फुंकार मारेंगे और इसी हालत में वे हमेशा रहेंगे जब तक ज़मीन और आसमान क़ायम है,[30] यह और बात है कि तेरा रब कुछ और चाहे। बेशक तेरे रब को पूरा अधिकार प्राप्त है जो चाहे करे। (108) रहे वे लोग जो सौभाग्यशाली निकलेंगे, तो वे जन्नत (स्वर्ग) में जाएँगे और वहाँ हमेशा रहेंगे जब तक ज़मीन और आसमान क़ायम हैं, यह और बात है कि तेरा रब कुछ और चाहे। ऐसा उपकार उनको मिलेगा जिसका सिलसिला कभी टूटेगा नहीं।

30. मुहावरे के रूप में ये शब्द निरन्तरता के अर्थ में इस्तेमाल होते हैं।

(109) अतः ऐ नबी, तू उन पूज्यों की ओर से किसी शक में न रह जिनकी ये लोग पूजा कर रहे हैं। ये तो (बस लकीर के फ़क़ीर बने हुए) उसी तरह पूजा-पाठ किए जा रहे हैं जिस तरह पहले इनके बाप-दादा करते थे, और हम इनका हिस्सा इन्हें भरपूर देंगे बिना इसके कि उसमें कुछ कटौती हो।

(110) हम इससे पहले मूसा को भी किताब दे चुके हैं और उसके विषय में भी विभेद किया गया था (जिस तरह आज इस किताब के विषय में किया जा रहा है जो तुम्हें दी गई है)। अगर तेरे रब की ओर से एक बात पहले ही निश्चित न कर दी गई होती तो उन विभेद करनेवालों के बीच कभी का फ़ैसला चुका दिया गया होता। यह वास्तविकता है कि ये लोग उसकी ओर से शक और दुविधा में पड़े हुए हैं। (111) और यह भी वास्तविकता है कि तेरा रब उन्हें उनके कर्मों का पूरा-पूरा बदला देकर रहेगा, यक़ीनन वह उनकी सब हरकतों की ख़बर रखता है। (112) अतः ऐ नबी, तुम और तुम्हारे वे साथी जो (इनकार और विद्रोह से ईमान और आज्ञापालन की ओर) पलट आए हैं, ठीक-ठीक सीधे मार्ग पर जमे रहो जैसा कि तुम्हें आदेश दिया गया है। और बन्दगी की सीमा का उल्लंघन न करो। जो कुछ तुम कर रहे हो उसपर तुम्हारा रब निगाह रखता है। (113) इन ज़ालिमों की ओर तनिक भी न झुकना, नहीं तो जहन्नम की लपेट में आ जाओगे और तुम्हें ऐसा कोई मित्र और संरक्षक न मिलेगा जो अल्लाह से तुम्हें बचा सके और कहीं से तुमको मदद न पहुँचेगी। (114) और देखो, नमाज़ क़ायम करो दिन के दोनों सिरों पर और कुछ रात बीतने पर।[31] वास्तव में नेकियाँ बुराइयों को दूर कर देती हैं, यह एक याददिहानी है उन लोगों के लिए जो अल्लाह को याद रखनेवाले हैं। (115) और सब्र कर, अल्लाह नेकी करनेवालों का बदला कभी अकारथ नहीं करता।

(116) फिर क्यों न उन क़ौमों में जो तुमसे पहले गुज़र चुकी हैं ऐसे भलाईवाले मौजूद रहे जो लोगों को ज़मीन में बिगाड़ पैदा करने से रोकते? ऐसे लोग निकले भी तो बहुत कम, जिनको हमने उन क़ौमों में से बचा लिया, वरना ज़ालिम लोग तो उन्हीं मज़ों के पीछे पड़े रहे जिनके सामान उन्हें बहुतायत के साथ दिए गएथे और वे अपराधी बनकर रहे। (117) तेरा रब ऐसा नहीं है कि बस्तियों को अकारण तबाह कर दे हालाँकि उनके निवासी सुधारक हों। (118) बेशक तेरा रब अगर चाहता तो सारे

31. दिन के सिरों से मुराद सुबह और सूर्य अस्त होने का समय अर्थात मग़रिब है और 'कुछ रात बीतने पर' से मुराद 'इशा' की नमाज़ का समय है। (नमाज़ के निश्चित समयों की विस्तृत जानकारी के लिए देखें सूरा 17 (बनी इसराईल) आयत 78, सूरा 20 (ता॰हा॰) आयत 130, और सूरा 30 (रुम) आयत 17-18)

इनसानों को एक गिरोह बना सकता था, मगर अब तो वे विभिन्न तरीक़ों पर ही चलते रहेंगे। (119) और पथभ्रष्टताओं से सिर्फ़ वे लोग बचेंगे जिनपर तेरे रब की दयालुता है। इसी (चुनाव और अधिकार की स्वतंत्रता और परीक्षा) के लिए तो उसने उन्हें पैदा किया था। और तेरे रब की वह बात पूरी हो गई जो उसने कही थी कि मैं जहन्नम को जिन्नों और इनसानों सबसे भर दूँगा।

(120) और ऐ नबी, ये पैग़म्बरों की कथाएँ जो हम तुम्हें सुनाते हैं, ये वे चीज़ें हैं जिनके द्वारा हम तुम्हारे दिल को सुदृढ़ करते हैं। इनके अन्दर तुमको वास्तविकता का ज्ञान मिला और ईमान लानेवालों को उपदेश और जागृति प्राप्त हुई। (121) रहे वे लोग जो ईमान नहीं लाते, तो उनसे कह दो कि तुम अपने तरीक़े पर काम करते रहो और हम अपने तरीक़े पर किए जाते हैं, (122) परिणाम का तुम भी इनतिज़ार करो और हम भी इनतिज़ार में हैं। (123) आसमानों और ज़मीन में जो कुछ छिपा हुआ है सब अलालह के अधिकार में है और सारा मामला उसी की तरफ़ रुजू किया जाता है। अतः ऐ नबी, तू उसकी बन्दगी कर और उसी पर भरोसा रख, जो कुछ तुम लोग कर रहे हो तेरा रब उससे बेख़बर नहीं है।



12. यूसुफ़

नाम

इस सूरा में पैग़म्बर यूसुफ़ (अलै॰) का वृत्तान्त बयान हुआ है, इसी सम्पर्क से इसका नाम यूसुफ़ रखा गया है।

अवतरणकाल और अवतरण का कारण

इस सूरा की विषयवस्तु से परिलक्षित होता है कि यह भी मक्का-निवासकाल के अंतिम काल-खण्ड में अवतरित हुई होगी, जबकि क़ुरैश के लोग इस समस्या पर विचार कर रहे थे कि नबी (सल्ल॰) को क़त्ल कर दें या निर्वासित कर दें या बंदी बना लें। उस समय मक्का के काफ़िरों ने (संभवतः यहूदियों के इशारे पर) नबी (सल्ल॰) की परीक्षा लेने के लिए आपसे प्रश्न किया कि बनी इसराईल (इसराईल की संतान) के मिस्र जाने का क्या कारण हुआ? अल्लाह ने केवल यही नहीं कि तुरंत उसी समय हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) का यह पूरा क़िस्सा आपकी ज़बान पर जारी कर दिया, बल्कि तदधिक इस क़िस्से और क़ुरैश के उस मामले के मध्य एकरूपता भी दिखा दी जो वे हज़रत यूसुफ (अलै॰) के भाइयों की तरह नबी (सल्ल॰) के साथ कर रहे थे।

अवतरण के उद्देश्य

इस तरह यह क़िस्सा दो महत्त्वपूर्ण उद्देश्य के लिए अवतरित किया गया था। एक यह कि मुहम्मद (सल्ल॰) की नुबूवत (पैग़म्बरी) का प्रमाण और वह भी विरोधियों का अपना मुँहमाँगा प्रमाण जुटाया जाए। दूसरे यह कि क़ुरैश के सरदारों को बताया जाए कि आज तुम अपने भाई के साथ वही कुछ कर रहे हो जो यूसुफ़ (अलै॰) के भाइयों ने उनके साथ किया था। किन्तु जिस तरह वे ईश-इच्छा से लड़ने में सफल न हुए और अंततः उसी भाई के क़दमों में आ रहे जिसको उन्होंने कभी अत्यांतिक निर्दयता के साथ कुएँ में फेंका था। इसी तरह तुम्हारा शक्ति-संघर्ष भी ईश्वरीय युक्ति के मुक़ाबले में सफल न हो सकेगा और एक दिन तुम्हें भी अपने इसी भाई से दया की भीख माँगनी पड़ेगी जिसे आज तुम मिटा देने पर तुले हुए हो।

यह सच है कि यूसुफ़ (अलै॰) के वृत्तांत को मुहम्मद (सल्ल॰) और क़ुरैश के मामले पर घटित करके क़ुरआन मजीद ने मानो एक स्पष्ट भविष्यवाणी कर दी थी जिसे आगामी दस वर्ष की घटनओं ने अक्षरशः सत्य सिद्ध करके दिखा दिया।

वार्ताएँ एवं समस्याएँ

ये दो पहलू तो इस सूरा में उद्देश्य की हैसियत रखते हैं। (इनके अतिरिक्त) क़ुरआन मजीद इस समग्र वृत्तान्त में यह बात भी स्पष्ट रूप से दिखाता है कि हज़रत इबराहीम (अलै॰), हज़रत इसहाक (अलै॰), हज़रत याक़ूब (अलै॰) और हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) का आमंत्रण भी वही था जो आज मुहम्मद (सल्ल॰) दे रहे हैं।

फिर वह एक तरफ़ हज़रत याक़ूब (अलै॰) और हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) के चरित्र और दूसरी तरफ़ हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) के भाइयों, व्यापारियों के क़ाफ़िले, मिस्र के अज़ीज़ (प्रमुख अधिकारी), उसकी पत्नी, मिस्र की कुलीन महिलाएँ और मिस्र के अधिकारियों के चरित्र को एक-दूसरे के मुक़ाबले में रख देता है (ताकि लोग देख ले कि) अल्लाह की बंदगी और आख़िरत (परलोक) के हिसाब में विश्वास (पैदा होनेवाले चरित्र कैसे होते हैं।) और सांसारिकता और ईश्वर और परलोक से बेपरवाही से साँचों में ढलकर तैयार (होनेवाले चरित्रों का क्या हाल हुआ करता है)। फिर इस क़िस्से से क़ुरआन हकीम एक और गहरे तथ्य को भी मानव के मन में बिठाता है और वह यह है कि अल्लाह जिसे उठाना चाहता है, सारी दुनिया मिलकर भी उसे नहीं गिरा सकती, बल्कि दुनिया जिस युक्ति को उसके गिराने की अत्यंत प्रभावकारी और अचूक युक्ति समझकर अपनाती है, अल्लाह उसी युक्ति में से उसके उठने की शक्लें पैदा कर देता है।

ऐतिहासिक और भौगोलिक परिस्थितियाँ

इस क़िस्से को समझने के लिए ज़रूरी है कि संक्षेप में इससे सम्बद्ध कुछ ऐतिहासिक और भौगोलिक जानकारियाँ भी पाठकों के समक्ष रहें। बाइबल के कथनानुसार हज़रत याक़ूब (अलै॰) के बारह पुत्र चार पत्नियों से थे। हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) और उनके छोटे भाई बिन यमीन एक पत्नी से और शेष दस दूसरी पत्नियों से। फ़िलस्तीन में हज़रत याक़ूब (अलै॰) का निवास स्थान हेब्रोन की घाटी में था। इसके अतिरिक्त उनकी कुछ भूमि शेकेम (वर्तमान नाबलुस) में भी थी। बाइबल के विद्वानों की ख़ोज यदि ठीक मानी जाए तो यूसुफ़ (अलै॰) का जन्म लगभग सन् 1906 ई॰पू॰ में हुआ। स्वप्न देखने और कुएँ में फेंके जाने (की घटना उनकी 17 वर्ष की अवस्था के आरंभ में घटित हुई)। जिस कुएँ में वे फेंके गए वह बाइबल और तलमूद के उल्लेखों के अनुसार शेकेम के उत्तर में दूतन (वर्तमान दुसान) के निकट अवस्थित था, और जिस क़ाफ़िले ने उसे निकाला वह जल-आद (पूर्व उर्दुन) से आ रहा था और मिस्र की ओर जा रहा था।—मिस्र पर उस समय पन्द्रहवें वंश का शासन था जो मिस्र के इतिहास में

चरवाहे बादशाहों (Hoyksos Kings) के नाम से याद किया जाता है। ये लोग अरब वंश के थे और फ़िलस्तीन और सीरिया से मिस्र जाकर 2000 वर्ष ई॰पूर्व के निकटवर्ती समय में वहाँ के राज्य पर उन्होंने अधिकार जमा लिया। यही कारण हुआ है कि उनके राज्य में हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) को उन्नति प्राप्त करने का अवसर मिला और फिर बनी इसराईल वहाँ हाथों-हाथ लिए गए क्योंकि वे उन विदेशी शासकों के सहजात थे। पन्द्रहवी शताब्दी ई॰पू॰ के अंतिम समयों तक इन लोगों का मिस्र पर अधिकार रहा और उनके समय में देश की सारी सत्ता व्यावहारिक रूप में बनी इसराईल के हाथ में रही। इसी युग की ओर सूरा 5 (माइदा) आयत 20 में संकेत किया गया है कि ''जब उसने तुममें नबी पैदा किए और तुमको शासक बनाया।'' इसके पश्चात् हिकसूस सत्ता का तख़्ता उलटकर एक अत्यन्त पक्षपाती क़िब्ती वंश सत्ताधारी हो गया और उसने बनी इसराईल पर उन अत्याचारों का क्रम जारी किया जिनका उल्लेख हज़रत मूसा (अलै॰) के क़िस्से में आता है।—उन चरवाहे बादशाहों ने मिस्री देवताओं को स्वीकार नहीं किया था। यही कारण है कि क़ुरआन मजीद हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) के समकालीन बादशाहों को 'फ़िरऔन' के नाम से याद नहीं करता। क्योंकि फ़िरऔन मिस्र का धार्मिक पारिभाषिक शब्द था और ये लोग मिस्री धर्म को नहीं मानते थे।—हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) 30 वर्ष की अवस्था में देश के शासक हुए और 80 वर्ष तक बिना किसी की साझेदारी के सम्पूर्ण मिस्र-राज्य पर शासन करते रहे। अपने शासन के 9वें या 10वें वर्ष में उन्होंने हज़रत याक़ूब (अलै॰) को अपने पूरे वंशज के साथ फ़िलस्तीन से मिस्र बुला लिया और उस क्षेत्र में आबाद किया जो दिमयात और क़ाहिरा के मध्य अवस्थित है बाइबल में इस क्षेत्र का नाम जुशन या गोशन बताया गया है। हज़रत मूसा (अलै॰) के समय तक ये लोग इसी क्षेत्र में आबाद रहे। बाइबल का बयान है कि हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) का देहांत 110 वर्ष की आयु में हुआ।



12. सूरा यूसुफ़

(मक्का में उतरी–आयतें 111)

अल्लाह के नाम से बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ आम॰ रा॰। ये उस किताब की आयतें हैं जो अपना अभिप्राय स्पष्ट रूप से बयान करती हैं। (2) हमने इसे उतारा है क़ुरआन[1] बनाकर अरबी भाषा में ताकि तुम (अरबवाले) इसको अच्छी तरह समझ सको। (3) ऐ नबी, हम इस क़ुरआन को तुम्हारी ओर प्रकाशना करके उत्तम शैली में घटनाएँ और तथ्य तुमसे बयान करते हैं वरना इससे पहले तो (इन चीज़ों से) तुम बिलकुल ही बेख़बर थे।

(4) यह उस समय की बात है जब यूसुफ़ ने अपने बाप से कहा, ''अब्बा जान, मैंने ख़्वाब देखा है कि ग्यारह सितारे हैं और सूरज और चाँद हैं और वे मुझे सज्दा कर रहे हैं।'' (5) जवाब में उसके बाप ने कहा, ''बेटा अपना यह ख़्वाब अपने भाइयों को न सुनाना नहीं तो वे तुझे तकलीफ़ पहुँचाने पर उतारू हो जाएँगे,[2] वास्तविकता यह है कि शैतान आदमी का खुला दुश्मन है। (6) और ऐसा ही होगा (जैसा तूने ख़्वाब में देखा है कि) तेरा पालनहार तुझे (अपने काम के लिए) चुनेगा और तुझे बातों की तह तक पहुँचना सिखाएगा[3] और तेरे ऊपर और याक़ूब के लोगों पर अपनी नेमत उसी तरह पूरी करेगा जिस तरह इससे पहले वह तेरे बुज़ुर्गों, इबराहीम और इसहाक़ पर कर चुका है। यक़ीनन तेरा रब सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है।''

(7) वास्तविकता यह है कि यूसुफ़ और उसके भाईयों की कथा में इन पूछनेवालों

1. क़ुरआन का शाब्दिक अर्थ है पढ़ना और किताब को यह नाम देने का अर्थ यह है कि यह साधारण और असाधारण सभी लोगों के पढ़ने के लिए है और बहुत ज़्यादा पढ़ी जानेवाली चीज़ है।
2. हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) के दस भाई दूसरी माँओं से थे और एक उनसे छोटा और उनका सगा भाई था। हज़रत याक़ूब (अलै॰) को मालून था कि सौतेले भाई यूसुफ़ (अलै॰) से ईर्ष्या करते हैं और नैतिक दृष्टि से भी ऐसे भले नहीं है कि अपना मतलब निकालने के लिए कोई अनुचित कार्रवाई करने में उन्हें कोई संकोच हो, इसलिए उन्होंने अपने नेक बेटे को सावधान किया कि उनसे होशियार रहना। ख़्वाब का साफ़ मतलब यह था कि सूरज से मुराद हज़रत याक़ूब (अलै॰) चाँद से मुराद उनकी पत्नी (हज़रत युसूफ़ अलै॰ की सौतेली माँ) और ग्यारह सितारों से मुराद ग्यारह भाई हैं।

के लिए बड़ी निशानियाँ हैं। (8) यह क़िस्सा इस तरह शुरू होता है कि उसके भाइयों ने आपस में कहा, ''यह यूसुफ़ और इसका भाई,[4] दोनों हमारे बाप को हम सबसे ज़्यादा प्रिय हैं, हालाँकि हम एक पूरा जत्था हैं, सच्ची बात यह है कि हमारे अब्बा जान बिलकुल ही बहक गए हैं। (9) चलो यूसुफ़ को मार डालो या उसे कहीं फेंक दो ताकि तुम्हारे बाप का ध्यान केवल तुम्हारी ही ओर हो जाए। यह काम कर लेने के बाद फिर नेक बन रहना।'' (10) इसपर उनमें से एक बोला, ''यूसुफ़ का क़त्ल न करो, अगर कुछ करना है तो उसे किसी अन्धे कुएँ में डाल दो, कोई आता-जाता क़ाफ़िला उसे निकाल ले जाएगा।'' (11) इस प्रस्ताव पर उन्होंने जाकर अपने बाप से कहा, ''अब्बा जान, क्या बात है कि आप यूसुफ़ के बारे में हमपर भरोसा नहीं करते हालाँकि हम उसके सच्चे हितैषी हैं? (12) कल उसे हमारे साथ भेज दीजिए, कुछ चर-चुग लेगा[5] और खेल-कूद से भी दिल बहलाएगा। हम उसकी रक्षा को मौजूद हैं।'' (13) बाप ने कहा, ''तुम्हारा उसे ले जाना मेरे लिए दुख की बात होती है और मुझे डर है कि कहीं उसे बेड़िया न फाड़ खाए जबकि तुम उससे ग़ाफ़िल हो।'' (14) उन्होंने जवाब दिया, ''अगर हमारे होते उसे भेड़िया ने खा लिया, जबकि हम एक जत्था हैं, तब तो हम बड़े ही निकम्मे होंगे।'' (15) इस तरह ज़िद करके जब वे उसे ले गए और उन्होंने तय कर लिया कि उसे एक अन्धे कुएँ में छोड़ दें, तो हमने यूसुफ़ की ओर प्रकाशना की कि ''एक समय आएगा जब तू इन लोगों को इनकी यह हरकत जताएगा, ये अपने कर्म के परिणाम से बेख़बर हैं।'' (16) शाम को वे रोते-पीटते अपने बाप के पास आए (17) और कहा, ''अब्बा जान, हम दौड़ का मुक़ाबला करने में लग गए थे और यूसुफ़ को हमने अपने सामान के पास छोड़ दिया था कि इतने में भेड़िया आकर उसे खा गया। आप हमारी बात का विश्वास न करेंगे चाहे हम सच्चे ही हों।'' (18) और वे यूसुफ़ की कमीज़ पर झूठ-मूठ

3. मूल ग्रन्थ में 'तावीलुल अहादीस' के शब्द इस्तेमाल हुए हैं जिनका अर्थ सिर्फ़ ख़्वाब का ज्ञान नहीं है जैसा कि समझा गया है, बल्कि इसका अर्थ यह है कि अल्लाह तुझे मामले की समझ और सत्य तक पहुँच की शिक्षा देगा और वह सूझ-बूझ तुझको प्रदान करेगा जिससे तू हर मामले की गहराई में उतरने और उसकी तह तक पहुँचने के क़ाबिल हो जाएगा।
4. इससे मुराद हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) के सगे भाई बिन यमीन हैं जो उनसे कई साल छोटे थे।
5. हमारे मुहावरे में बच्चा अगर जंगल में चल-फिरकर कुछ फल तोड़ता और खाता फिरे, तो उसके लिए प्यार के अंदाज़ में ये शब्द इस्तेमाल किए जाते हैं।

का ख़ून लगाकर ले आए थे। यह सुनकर उनके बाप ने कहा, ''बल्कि तुम्हारे जी ने तुम्हारे लिए एक बड़े काम को आसान बना दिया। अच्छा, सब्र करूँगा और ख़ूब अच्छी तरह सब्र करूँगा, जो बात तुम बना रहे हो उसपर अल्लाह ही से मदद माँगी जा सकती है।''

(19) उधर एक क़ाफ़िला आया और उसने अपने पानी भरनेवाले (सक़्क़े) को पानी लाने के लिए भेजा। पानी भरनेवाले ने जो कुएँ में डोल डाला तो (यूसुफ़ को देखकर) पुकार उठा, ''मुबारक हो, यहाँ तो एक लड़का है।'' उन लोगों ने उसको सौदागरी का माल समझकर छिपा लिया, हालाँकि जो कुछ वे कर रहे थे अल्लाह को उसका पूरा ज्ञान था। (20) आख़िरकार उन्होंने थोड़े-से मूल्य पर कुछ दिरहमों के बदलमे उसे बेच डाला और उसकी क़ीमत के मामले में वे कुछ ज़्यादा की उम्मीद न रखते थे।

(21) मिस्र के जिस व्यक्ति ने उसे ख़रीदा उसने अपने बीवी (पत्नी) से कहा, ''इसको अच्छी तरह रखना, असंभव नहीं कि यह हमारे लिए लाभदायक सिद्ध हो या हम इसे बेटा बना लें।'' इस तरह हमने यूसुफ़ के लिए उस भू-भाग में क़दम जमाने की राह निकाली और उसे मामले की समझ की शिक्षा देने का प्रबन्ध किया। अल्लाह अपना काम करके रहता है, मगर ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं। (22) और जब वह अपनी पूरी जवानी को पहुँचा तो हमने उसे निर्णय-शक्ति और ज्ञान प्रदान किया, इस तरह हम नेक लोगों को बदला देते हैं।

(23) जिस औरत के घर में वह था वह उसपर डोरे डालने लगी और एक दिन दरवाज़े को बन्द करके बोली, ''आजा।'' यूसुफ़ ने कहा, ''अल्लाह की पनाह, मेरे रब[6] ने तो मुझे अच्छा दर्जा प्रदान किया (और मैं यह काम करूँ!), ऐसे ज़ालिम कभी सफल नहीं हुआ करते।'' (24) वह उसकी ओर बढ़ी और यूसुफ़ भी उसकी ओर बढ़ता अगर

6. साधारणतया टीकाकारों और अनुवादकों ने यह समझा है कि यहाँ 'मेरे रब' का शब्द यूसुफ़ (अलै॰) ने उस व्यक्ति के लिए इस्तेमाल किया है जिसकी सेवा में वे उस समय थे और उनके इस जवाब का अर्थ यह था कि मेरे स्वामी ने तो मुझे ऐसी अच्छी तरह रखा है, फिर मैं यह नमक हरामी कैसे कर सकता हूँ कि उसकी बीवी के साथ व्यभिचार करूँ। लेकिन यह बात एक नबी की शान से बहुत गिरी हुई है कि वह एक गुनाह से बाज़ रहने में अल्लाह के बजाय किसी बन्दे का लिहाज़ करे। और क़ुरआन में इसकी कोई मिसाल भी नहीं पाई जाती है कि किसी नबी ने कभी अल्लाह के सिवा किसी और को अपना 'रब' (स्वामी) कहा हो।

अपने रब का प्रमाण (बुरहान) न देख लेता।[7] ऐसा हुआ, ताकि हम उससे बुराई और बेहयाई को दूर कर दें, वास्तव में वह हमारे चुने हुए बन्दों में से था। (25) आख़िरकार यूसुफ़ और वह आगे-पीछे दरवाज़े की ओर भागे और उसने पीछे से यूसुफ़ की क़मीज़ (खींचकर) फाड़ दी। दरवाज़े पर दोनों ने उसके शौहर (पति) को मौजूद पाया। उसे देखते ही औरत कहने लगी, ''क्या सज़ा है उस व्यक्ति की जो तेरी घरवाली पर नीयत ख़राब करे? इसके सिवा और क्या सज़ा हो सकती है कि वह क़ैद किया जाए या उसे सख़्त यातना दी जाए?'' (26) यूसुफ़ ने कहा, ''यही मुझे फाँसने की कोशिश कर रही थी।'' उस औरत के अपने घराने में से एक व्यक्ति ने (अनुमान की) गवाही पेश की कि ''अगर यूसुफ़ की क़मीज़ आगे से फटी हो तो औरत सच्ची है और यह झूठा, (27) और अगर उसकी क़मीज़ पीछे से फटी हो तो औरत झूठी है और यह सच्चा।''[8] (28) जब पति ने देखा कि यूसुफ़ की क़मीज़ पीछे से फटी है तो उसने कहा, ''ये तुम औरतों की चालकियाँ हैं, वास्तव में बड़े ग़जब की होती हैं तुम्हारी चालें। (29) यूसुफ़, इस मामले को जाने दे। और ऐ औरत, तू अपने क़सूर की माफ़ी माँग, तू ही वास्तव में ख़ताकार थी।''

---

7. यहाँ 'बुरहान' शब्द आया है। 'बुरहान' का अर्थ है प्रमाण और तर्क। रब की 'बुरहान' से मुराद अल्लाह की सुझाई हुई वह दलील है जिसके आधार पर हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) की अन्तरात्मा ने उनके मन को यह बात स्वीकार कराई कि इस औरत का विलास-आमंत्रण स्वीकार करना तेरे लिए उचित नहीं है, और वह दलील (प्रमाण) पिछले वाक्य में आ चुकी है कि ''मेरे रब ने तो मुझे यह दर्जा प्रदान किया और मैं ऐसा बुरा कर्म करूँ। ऐसे ज़ालिमों को कभी सफलता प्राप्त नहीं हुआ करती।''
8. मतलब यह है कि यूसुफ़ की क़मीज़ सामने से फटी हो तो यह इस बात की खुली निशानी है कि पहल यूसुफ़ (अलै॰) की ओर से थी और औरत अपने-आपको बचाने के लिए संघर्ष कर रही थी। लेकिन अगर यूसुफ़ की क़मीज़ पीछे से फटी है तो इससे साफ़ साबित होता है कि औरत उसके पीछे पड़ी हुई थी और यूसुफ उससे बचकर निकल जाना चाहता था। इसके अलावा अनुमान की एक और गवाही भी इस गवाही में छिपी हुई थी। वह यह कि उस गवाह ने ध्यान सिर्फ़ हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) की क़मीज़ की ओर दिलाया। इससे साफ़ खुल गया कि औरत के ज़िस्म या उसके लिबास पर ज़ुल्म और ज़्यादती का कोई चिह्न सिरे से पाया ही न जाता था। हालाँकि अगर यह मामला बलात्कार के इरादे का होता तो औरत पर उसके स्पष्ट चिह्न पाए जाते।

(30) शहर की औरतें आपस में चर्चा करने लगी कि ''प्रमुख अधिकारी[9] (अज़ीज़) की पत्नी अपने नवयुवक ग़ुलाम के के पीछे पड़ी हुई है, मुहब्बत ने उसको बेक़ाबू कर रखा है, हमारी दृष्टि में तो वह खुली ग़लती कर रही है।'' (31) उसने जो उनकी यह मक्कारी की बातें सुनीं तो उनको बुलावा भेज दिया और उनके लिए तकियादार मजलिस सजाई और सत्कार में हर एक के आगे एक-एक छुरी रख दी, (फिर ठीक उस समय जबकि वे फल काट-काटकर खा रही थी) उसने यूसुफ़ को इशारा किया कि उनके सामने निकल आ। जब उन औरतों की निगाह उसपर पड़ी तो वे दंग रह गई और अपने हाथ काट बैठीं और सहसा पुकार उठीं, ''अल्लाह की पनाह, यह व्यक्ति इनसान नहीं है, यह तो कोई बुज़ुर्ग फ़रिश्ता है।'' (32) प्रमुख अधिकारी की बीवी ने कहा, ''देख लिया, यह है वह व्यक्ति जिसके मामले में तुम मुझपर बातें बनाती थीं। बेशक मैंने इसे रिझाने की कोशिश की थी मगर यह बच निकला, अगर यह मेरा कहना न मानेगा तो क़ैद किया जाएगा और बहुत रुसवा और अपमानित होगा।'' (33) यूसुफ़ ने कहा, ''ऐ मेरे रब! क़ैद मुझे पसन्द है इसकी अपेक्षा कि मैं वह काम करूँ जो ये लोग मुझसे चाहते हैं। और अगर तूने इनकी चालों को मुझसे न टाला तो मैं इनके जाल में फँस जाऊँगा और जाहिलों में शामिल होकर रहूँगा'' (34)—उसके रब ने उसकी दुआ स्वीकार की और उन औरतों की चालें उससे दूर कर दीं, बेशक वही है जो सबकी सुनता और सब कुछ जानता है।

(35) फिर उन लोगों को यह सूझी कि एक मुद्दत के लिए उसे क़ैद कर दें हालाँकि वे (उसकी पाकदामनी और ख़ुद अपनी औरतों के बुरे आचार-व्यवहार की) खुली निशानियाँ देख चुके थे।[10]

(36) जेल में दो ग़ुलाम और भी उसके साथ दाख़िल हुए। एक दिन उनमें से एक ने कहा, ''मैंने ख़्वाब देखा है कि मैं शराब निचोड़ रहा हूँ।'' दूसरे ने कहा, ''मैंने देखा कि मेरे सिर पर रोटियाँ रखी हैं और पक्षी उनको खा रहे हैं।'' दोनों ने कहा, ''हमें इसकी

---

9. यहाँ 'अज़ीज़' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'अज़ीज़' उस व्यक्ति का नाम न था बल्कि मिस्र के किसी बड़े प्रभुत्वशाली व्यक्ति के लिए पारिभाषिक रूप में इस उपाधि का इस्तेमाल होता था।
10. इससे मालूम हुआ कि किसी व्यक्ति को न्याय की शर्तों के अनुसार न्यायालय में अपराधी सिद्ध किए बिना, बस यूँ ही पकड़कर जेल भेज देना, बेईमान शासकों की पुरानी रीति है। इस मामले में भी आज के शैतान चार हज़ार वर्ष पहले के दुष्टों से कुछ बहुत ज़्यादा भिन्न नहीं हैं।

ताबीर (स्वप्नफल) बता दीजिए, हम देखते हैं कि आप एक नेक आदमी हैं।'' (37) यूसुफ़ ने कहा, ''यहाँ जो खाना तुम्हें मिला करता है, उसके आने से पहले मैं तुम्हें इन ख़्वाबों की ताबीर बता दूँगा। यह उन ज्ञान की चीज़ों में से है जो मेरे रब ने मुझे प्रदान की हैं। वास्तविकता यह है कि मैंने उन लोगों का तरीक़ा छोड़कर जो अल्लाह पर ईमान नहीं लाते और आख़िरत का इनकार करते हैं, (38) अपने पूर्वजों, इबराहीम, इसहाक़ और याक़ूब का तरीक़ा अपनाया है। हमारा यह काम नहीं है कि अल्लाह के साथ किसी को साझी ठहराएँ। वास्तव में यह अल्लाह का उदार अनुग्रह है हम पर और सारे इनसानों पर (कि उसने अपने सिवा किसी का बन्दा हमें नहीं बनाया) मगर ज़्यादातर लोग कृतज्ञता नहीं दिखाते। (39) ऐ कारागार के साथियो, तुम ख़ुद ही सोचो कि बहुत-से विभिन्न रब अच्छे हैं या वह एक अल्लाह जिसे सबपर प्रभुत्व प्राप्त है? (40) उसे छोड़कर तुम जिनकी बन्दगी कर रहे हो वे इसके सिवा कुछ नहीं हैं कि बस कुछ नाम हैं जो तुमने और तुम्हारे बाप-दादा ने रख लिए हैं, अल्लाह ने उनके लिए कोई सनद नहीं उतारी। शासन की सत्ता अल्लाह के सिवा किसी के लिए नहीं है। उसका आदेश है कि ख़ुद उसके सिवा तुम किसी की बन्दगी न करो। यही ठेठ सीधी जीवन-प्रणाली है, मगर ज़्यादातर लोक जानते नहीं हैं। (41) ऐ कारागार के साथियो, तुम्हारे ख़्वाब की ताबीर यह है कि तुममें से एक तो अपने रब (मिस्र के सम्राट[11]) को शराब पिलाएगा, रहा दूसरा तो उसे सूली पर चढ़ाया जाएगा और पक्षी उसका सिर नोच-नोचकर खाएंगे। फ़ैसला हो गया उस बात का जो तुम पूछ रहे थे।''

(42) फिर उनमें से जिसके सम्बन्ध में ख़याल था कि वह रिहा हो जाएगा, उससे यूसुफ़ ने कहा कि ''अपने रब (मिस्र के सम्राट) से मेरी चर्चा करना।'' मगर शैतान ने उसे ग़फ़लत में ऐसा डाला कि वह अपने रब (मिस्र के बादशाह) से उसकी चर्चा करनी भूल गया और यूसुफ़ कई वर्ष जेल में पड़ा रहा।

11. आयत 23 के साथ इस आयत को मिलाकर पढ़ा जाए तो मालूम हो जाता है कि हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) ने जब मेरा 'रब' (स्वामी) कहा तो उससे मुराद अल्लाह की ज़ात थी और जब मिस्र के बादशाह के ग़ुलाम से कहा कि तू अपने रब (स्वामी) को शराब पिलाएगा तो इससे मुराद मिस्र का बादशाह था, क्योंकि वह मिस्र के बादशाह ही को अपना रब समझता था।
12. बीच में कई वर्ष की क़ैद की मुद्दत का हाल छोड़कर अब बयान की कड़ी उस जगह से जोड़ी जाती है जहाँ से हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) की दुनिया में मिलनेवाली उन्नति का दौर शुरू हुआ।

(43) एक दिन[12] बादशाह ने कहा, ''मैंने ख़्वाब में देखा है कि सात मोटी गायें हैं जिनको सात दुबली गायें खा रही हैं, और अनाज की सात बालेहरी हैं और दूसरी सात सूखी। ऐ दरबारियो, मुझे इस ख़्वाब की ताबीर बताओ अगर तुम ख़्वाबों का अर्थ समझते हो।'' (44) लोगों ने कहा, ''ये तो उलझन भरे ख़्वाब की बातें हैं और हम इस तरह के ख़्वाबों का अर्थ नहीं जानते।''

(45) उन दो क़ैदियों में से जो व्यक्ति बच गया था और उसे एक लम्बे समय के बाद अब बात याद आई, उसने कहा, ''मैं आप सब लोगों को इसकी तफ़सील बताता हूँ, मुझे तनिक (जेल में यूसुफ़ के पास) भेज दीजिए।''

(46) उसने जाकर कहा, ''यूसुफ़, ऐ सच्चाई के पुतले,[13] मुझे इस ख़्वाब का अर्थ बता कि सात मोटी गायें हैं जिनको सात दुबली गायें खा रही हैं और सात बालें हरी हैं और सात सूखी, शायद कि मैं उन लोगों के पास वापस जाऊँ, और शायद कि वे जान लें।''[14] (47) यूसुफ़ ने कहा, ''सात साल तक लगातार तुम खेती-बाड़ी करते रहोगे। इस बीच जो फ़सलें तुम काटो उनमें से बस थोड़ा-सा हिस्सा, जो तुम्हारी ख़ुराक के काम आए, निकालो और बाक़ी को उसकी बालों ही में रहने दो। (48) फिर सात साल बहुत कठिन आएँगे। उस अवधि में वह सब ग़ल्ला (अनाज) खा लिया जाएगा जो तुम उस समय के लिए इकट्ठा करोगे। अगर कुछ बचेगा तो बस वही जो तुमने सुरक्षित कर रखा हो। (49) इसके बाद फिर एक वर्ष ऐसा आएगा जिसमें रहमत की बारिश से लोगों की फ़रियाद सुन ली जाएगी और वे रस निचोड़ेंगे।''

(50) बादशाह ने कहा, उसे मेरे पास ले आओ। मगर जब बादशाह का भेजा हुआ दूत यूसुफ़ के पास पहुँचा तो उसने कहा, ''अपने रब के पास वापस जा और उससे पूछ कि उन औरतों का क्या मामला है जिन्होंने अपने हाथ काट लिए थे? मेरा रब तो उनकी मक्कीरी से परिचित ही है।'' (51) इसपर बादसाह ने उन औरतों से पूछा,

13. मूल ग्रन्थ में 'सिद्दीक़' शब्द इस्तेमाल हुआ है जो अरबी में सच्चाई और सत्यप्रियता की पराकाष्ठा के लिए इस्तेमाल होता है। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि कारागार में ठहरने की अवधि में उस व्यक्ति ने यूसुफ़ (अलै॰) के पवित्र जीवन से कैसा गहरा प्रभाव ग्रहण किया था और यह प्रभाव एक लम्बी मुद्दत बीत जाने के बाद भी कितना मज़बूत था।
14. अर्थात् आपके गुण और प्रतिष्ठिता को जान लें और उनको एहसास हो कि किस दर्जे के आदमी को उन्होंने कहाँ बन्द कर रखा है और इस तरह मुझे अपना वह वादा पूरा करने का मौक़ा मिल जाए जो मैंने आपसे क़ैद के समय में किया था।

"तुम्हारा क्या अनुभव है उस समय का जब तुमने यूसुफ़ को रिझाने की कोशिश की थी?" सबने एक ज़बान होकर कहा, "अल्लाह की पनाह, हमने तो उसमें बुराई की झलक तक न पाई।" प्रमुख अधिकारी की बीवी बोल उठी, "अब सत्य खुल चुका है, वह मैं ही थी जिसने उसको पुसलाने की कोशिश की थी, बेशक वह बिलकुल सच्चा है।"

(52) (यूसुफ़ ने कहा) "इससे मेरा उद्देश्य यह था कि (प्रमुख अधिकारी) यह जान ले कि मैंने छिपकर उसके साथ विश्वासघात नहीं किया था, और यह कि जो विश्वासघात करते हैं उनकी चालों को अल्लाह सफलता की राह पर नहीं लगाता। (53) मैं कुछ अपने जी (नफ़्स) को बरी नहीं ठहरा रहा हूँ, जी तो बुराई पर उकसाता ही है यह और बात है कि किसी पर मेरे रब की दयालुता हो, बेशक मेरा रब बड़ा माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला है।"

(54) बादशाह ने कहा, "उन्हें मेरे पास लाओ ताकि मैं उनको अपने लिए ख़ास कर लूँ।"

जब यूसुफ़ ने उससे बातचीत की तो उसने कहा, "अब आप हमारे यहाँ प्रतिष्ठित और ऊँचा दर्जा रखते हैं और आपकी अमानत पर पूरा भरोसा है।" (55) यूसुफ़ ने कहा, "देश के ख़ज़ाने मुझे सौंप दीजिए, मैं रक्षा करनेवाला भी हूँ और ज्ञान भी प्राप्त हैं।"

(56) इस तरह हमने उस भू-भाग में यूसुफ़ के लिए सत्ताधिकार की राह प्रशस्त की। उसे अधिकार प्राप्त था कि उसमें जहाँ चाहे अपनी जगह बनाए।[15] हम अपनी

15. अर्थात् अब मिस्र का सारा भूखण्ड उसका था। उसकी हर जगह को वह अपनी जगह कह सकता था। वहाँ कोई कोना भी ऐसा न रहा था जो उससे रोका जा सकता हो। यह मानो उस पूर्ण प्रभुत्व और व्यापक सत्ताधिकार का उल्लेख है जो हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) को उस देश पर प्राप्त था। प्राचीन टीकाकार भी इस आयत की यही व्याख्या करते हैं, जैसा कि इब्न ज़ैद इसका अर्थ बताते हैं कि "हमने यूसुफ़ (अलै॰) को उन सब चीज़ों का मालिक बना दिया जो मिस्र में थीं, दुनिया के उस भाग में वह जहाँ जो कुछ चाहता, कर सकता था। वह ज़मीन उसे सौंप दी गई थी, यहाँ तक कि अगर वह चाहता कि फ़िरऔन को अपने अधीन कर ले और ख़ुद उससे उच्च हो जाए तो यह भी कर सकता था।" मुजाहिद का ख़याल है कि मिस्र के बादशाह ने यूसुफ़ (अलै॰) के हाथ पर इस्लाम क़बूल कर लिया था।

दयालुता जिसे चाहते हैं प्रदान करते हैं, नेक लोगों का बदला हमारे यहाँ मारा नहीं जाता, (57) और आख़िरत का बदला उन लोगों के लिए ज़्यादा बेहतर है जो ईमान ले आए और ख़ुदा से डरते हुए काम करते रहे।

(58) यूसुफ़ के भाई मिस्र आए और उसके यहाँ हाज़िर हुए,[16] उसने उन्हें पहचान लिया मगर वे उससे अपरिचित थे। (59) फिर जब उसने उनका सामान तैयार करवा दिया तो चलते समय उनसे कहा, "अपने सौतेले भाई को मेरे पास लाना। देखते नहीं हो कि मैं किस तरह पैमाना भरकर देता हूँ और कैसा अच्छा अतिथि-सत्कार करनेवाला हूँ. (60) अगर तुम उसे न लाओगे तो मेरे पास तुम्हारे लिए कोई ग़ल्ला नहीं है बल्कि तुम मेरे क़रीब भी न फटकना।"[17] (61) उन्होंने कहा, "हम कोशिश करेंगे कि अब्बा जान उसे भेजने पर राज़ी हो जाएँ, और हम ऐसा ज़रूर करेंगे।" (62) यूसुफ़ ने अपने ग़ुलामों को संकेत किया कि "इन लोगों ने ग़ल्ले के बदले जो माल दिया है वह चुपके से इनके सामान ही में रख दो।" यह यूसुफ़ ने इस उम्मीद पर किया कि घर पहुँचकर वे अपना वापस पाया हुआ माल पहचान जाएँगे (या इस दानशीलता आभारी होंगे) और आश्चर्य नहीं कि फिर पलटें।

(63) जब वे अपने बाप के पास गए तो कहा, "अब्बा जान, आइन्दा हमको ग़ल्ला देने से इनकार कर दिया गया है, अतः आप हमारे भाई को हमारे साथ भेज दीजिए ताकि हम ग़ल्ला लेकर आएँ। और उसकी रक्षा के हम ज़िम्मेदार हैं।" (64) बाप ने जवाब दिया, "क्या मैं उसके मामले में तुमपर वैसा ही भरोसा करूँ जैसा इससे

16. यहाँ फिर सात-आठ वर्ष की घटनाओं को बीच में छोड़कर बयान की कड़ी को उस जगह से जोड़ दिया गया है जहाँ से इसराईलियों के मिस्र स्थानान्तरित होने का आरंभ हुआ।

17. यह बात हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) ने इसलिए कही होगी कि अकाल के कारण मिस्र में ग़ल्ले पर नियंत्रण था। ग़ल्ला लेने के लिए ये दस भाई आए थे मगर अपने बाप और अपने ग्यारहवें भाई का हिस्सा भी माँगते होंगे। इसपर यूसुफ़ (अलै॰) ने कहा होगा कि तुम्हारे बाप के ख़ुद न आने के लिए तो यह उज्र बुद्धिसंगत हो सकता है कि वे बहुत बूढ़े हैं और उन्हें आँखों से सुझाई भी नहीं देता, मगर भाई के न आने का क्या उचित कारण हो सकता है? अच्छा, इस समय तो हम तुम्हारी बात का विश्वास करके तुमको पूरा अनाज दिए देते हैं, मगर आगे अगर तुम उसको साथ न लाए तो तुमपर से विश्वास जाता रहेगा और तुम्हें यहाँ से कोई ग़ल्ला न मिलेगा।

पहले उसके भाई के मामले में कर चुका हूँ? अल्लाह ही सबसे अच्छा रक्षक है और वह सबसे बढ़कर दयावान् है।'' (65) फिर जब उन्होंने अपना सामान खोला तो देखा कि उनका माल भी उन्हें वापस कर दिया गया है। यह देखकर वे पुकार उठे, ''अब्बा जान, और हमें क्या चाहिए, देखिए यह हमारा माल भी हमें वापस दे दिया गया है। बस अब हम जाएँगे और अपने घरवालों के लिए रसद लेकर आएँगे, अपने भाई की रक्षा भी करेंगे और एक ऊँट का बोझ और ज़्यादा भी लाएँगे, इतने ग़ल्ले का इज़ाफ़ा आसानी के साथ हो जाएगा।'' (66) उनके बाप ने कहा, ''मैं इसको हरगिज़ तुम्हारे साथ न भेजूँगा जब तक कि तुम अल्लाह के नाम से मुझे पक्का वचन न दो कि उसे मेरे पास ज़रूर वापस लेकर आओगे यह और बात है कि तुम घेर ही लिए जाओ।'' जब उन्होंने उसको अपने-अपने वचन दे दिए तो उसने कहा, ''देखो, हम यह जो कुछ कह रहे हैं उसका अल्लाह निरीक्षक है।'' (67) फिर उसने कहा, ''मेरे बच्चो, मिस्र की राजधानी में एक दरावाज़े से दाख़िल न होना[18] बल्कि विभिन्न दरवाज़ों से जाना। मगर मैं अल्लाह की इच्छा के विरुद्ध तुमको नहीं बचा सकता, आदेश उसके सिवा किसी का भी नहीं चलता, उसी पर मैंने भरोसा गिया, और जिसको भी भरोसा करना हो उसी पर करे।'' (68) और हुआ भी यही कि जब वे अपने बाप के आदेश के अनुसार सहर में (विभिन्न दरवाज़ों से) दाख़िल हुए तो उसका यह सावधानी का उपाय अल्लाह की इच्छा के मुक़ाबले में कुछ भी काम न आ सका। हाँ, बस याक़ूब के दिल में जो एक खटक थी उसे दूर करने के लिए उसने अपनी-सी कोशिश कर ली। बेशक वह हमारी दी हुई शिक्षा से ज्ञानवान था मगर ज़्यादातर लोग मामले की वास्तविकता को जानते नहीं हैं।

(69) ये लोग यूसुफ़ के पास पहुँचे तो उसने अपने भाई को अपने पास अलग बुला लिया और उसे बता दिया कि ''मैं तेरा वही भाई हूँ (जो खोया गया था), अब तू उन बातों का रंज न कर जो ये लोग करते रहे हैं।''[19]

(70) जब यूसुफ़ उन भाइयों का सामान लदवाने लगा तो उसने अपने भाई के सामान में अपना प्याला रख दिया। फिर एक पुकारनेवाले ने पुकारकर कहा, ''ऐ क़ाफ़िलेवालो, तुम लोग चोर हो।'' (71) उन्होंने पलटकर पूछा, ''तुम्हारी क्या चीज़ खो गई?'' (72) सरकारी कर्मचारी ने कहा, ''बादशाह का पैमाना हमको नहीं

18. संभवतः हज़रत याक़ूब (अलै०) को अंदेशा हुआ होगा कि इस अकाल के समय में अगर ये लोग एक जत्था बने हुए मिस्र में दाख़िल होंगे तो शायद इन्हें सन्देह की निगाह से देखा जाए और यह समझा जाए कि यहाँ लूट-मार करने के उद्देश्य से आए हैं।

मिलता।'' (और उसके जमादार ने कहा) ''जो व्यक्ति लाकर देगा उसके लिए एक उँट का बोझ इनाम है, इसका मैं ज़िम्मा लेता हूँ।'' (73) उन भाइयों ने कहा, ''अल्लाह की क़सम, तुम लोग ख़ूब जानते हो कि हम इस देश में बिगाड़ पैदा करने नहीं आए हैं और हम चोरियाँ करनेवाले लोग नहीं हैं।'' (74) उन्होंने कहा, ''अच्छा अगर तुम्हारी बात झूठी निकली तो चोर की क्या सज़ा है?'' (75) उन्होंने कहा, ''उसकी सज़ा? जिसके सामान में से चीज़ निकले वह ख़ुद ही अपनी सज़ा में रख लिया जाए, हमारे यहाँ तो ऐसे ज़ालिमों को सज़ा देने की यही रीति है।'' (76) तब यूसुफ़ ने अपने भाई से पहले इनकी ख़ुरजियों की तलाशी लेनी शुरू की, फिर अपने भाई की ख़ुरजी से खोई हुई चीज़ निकल गई—इस तरह हमने यूसुफ़ की सहायता अपने उपाय से की। उसका यह काम न था कि बादशाह के दीन (अर्थात् मिस्र के शाही क़ानून) में अपने भाई को पकड़ता यह और बात है कि अल्लाह ही ऐसा चाहे।[20] हम जिसके दर्जे चाहते हैं ऊँचे कर देते हैं, और एक ज्ञानवान ऐसा है जो हर ज्ञानवाले से उच्च है।

(77) उन भाइयों ने कहा, ''यह चोरी करे तो कुछ आश्चर्य की बात भी नहीं, इससे पहले इसका भाई (यूसुफ़) भी चोरी कर चुका है।'' यूसुफ़ उनकी यह बात सुनकर पी गया, सत्यका उद्घाटन उनपर न किया, बस (होंटों ही में) इतना कहकर रह गया कि

19. संभवतः इस मुलाक़ात में बिन यमीन ने सुनाया होगा कि उनके पीछे सौतेले बाइयों ने उसके साथ क्या-क्या दुर्व्यवहार किए और यूसुफ़ (अलै०) ने भाई को तसल्ली दी होगी कि अब मेरे पास ही तुम रहोगे, उन ज़ालिमों के पंजे में तुमको दोबारा नहीं जाने दूँगा। असंभव नहीं कि इसी अवसर पर दोंनो भाइयों में यह भी तय हो गया हो कि बिन यमीन को मिस्र से रोक रखने के लिए क्या उपाय किया जाएगा जिससे वह परदा भी पड़ा रहे जो हज़रत यूसुफ़ (अलै०) किसी वजह से अभीडाले रखना चाहते थे।

20. साधारणतया इस आयत का अनुवाद यह किया जाता है कि ''यूसुफ़ बादशाह के क़ानून के अन्तर्गत अपने भाई को न पकड़ सकता था' लेकिन अगर इसका अर्थ यह लिया जाए को बात बिलकुल निरर्थक हो जाती है। बादशाह के क़ानून में चोर को न पकड़ सकने का आख़िर क्या कारण हो सकता है? क्या दुनिया में कभी कोई राज्य ऐसा भी रहा है जिसका क़ानून चोर को गिरफ़्तार करने की अनुमति न देता हो? अतः सही बात यह है कि अल्लाह के नबी हज़रत यूसुफ़ (अलै०) का यह काम न था कि बादशाह के क़ानून के अनुसार काम करे। इसी लिए हज़रत यूसुफ़ (अलै०) ने भाइयों से उनके यहाँ का क़ानून पूछा और इबराहीम (अलै०) के धर्मविधान के अनुसार अपने भाई को पकड़ा।

''बड़े ही बुरे हो तुम लोग (मेरे मुँह पर ही) जो इलज़ाम तुम लगा रहे हो उसकी वास्तविकता अल्लाह ख़ूब जानता है।''

(78) उन्होंने कहा, ''ऐ प्रमुख सत्ताधारी सरदार (अज़ीज़)[21] और इसका बाप बहुत बूढ़ा आदमी है, इसकी जगह आप हममें से किसी को रख लीजिए, हम आपको बड़ा ही पुण्यात्मा व्यक्ति पाते हैं। (79) यूसुफ़ ने कहा, ''अल्लाह की पनाह, दूसरे किसी व्यक्ति को हम कैसे रख सकते हैं? जिसके पास हमने अपना माल पाया है[22] उसको छोड़कर दूसरे को रखेंगे तो हम ज़ालिम होंगे।''

(80) जब वे यूसुफ़ से निराश हो गए तो एक कोने में जाकर आपस में मशविरा करने लगे। उनमें जो सबसे बड़ा था वह बोला, ''तुम जानते नहीं हो कि तुम्हारे अब्बा

21. यहाँ यह शब्द 'अज़ीज़' हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) के लिए जो इस्तेमाल हुआ है सिर्फ़ इस कारण टीकाकारों ने अनुमान लगाया कि हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) उसी पद पर नियुक्त हुए थे जिसपर इससे पहले ज़ुलेख़ा का पति नियुक्त था। लेकिन हम टिप्पणी नं॰ 9 में स्पष्ट कर चुके हैं कि यह मिस्र में किसी विशेष पद का नाम न था, बल्कि सिर्फ़ 'अधिकारी' के अर्थ में इस्तेमाल किया जाता था।

22. सावधानी देखिए कि 'चोर' नहीं कहते, बल्कि कहते यह हैं कि ''जिसके पास हमने अपना माल पाया है।'' इसी को शरीअत की परिभाषा में 'तौरिया' कहते हैं, अर्थात् 'वास्तविकता पर परदा डालना' या 'वास्तविक बात को छिपाना'। जब किसी सताए हुए व्यक्ति को ज़ालिम से बचाने या किसी बड़े अत्याचार को दूर करने का कोई उपाय इसके सिवा न हो कि कुछ वास्तविकता के विरुद्ध बात कही जाए या कोई वास्तविकता के विरुद्ध हीला-बहाना किया जाए तो ऐसी हालत में एक परहेज़गार आदमी स्पष्ट झूठ बोलने से बचते हुए ऐसी बात कहने या ऐसा उपाय करने की कोशिश करेगा, जिससे वास्तविकता को छिपाकर बुराई को दूर किया जा सके। अब देखिए कि इस सारे मामले में हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) ने किस तरह जाइज़ 'तौरिया' की शर्तें पूरी की हैं। भाई की रज़ामन्दी से उसके सामान में प्याला रख दिया। मगर सेवकों से यह नहीं कहा कि उसपर चोरी का दोष लगाओ। फिर जब सरकारी कर्मचारी चोरी के आरोप में उन लोगों को पकड़कर लाए तो ख़ामोशी के साथ उठकर तलाशी ले ली। फिर अब जो उन भाइयों ने कहा कि बिन यमीन की जगह हममें से किसी को रख लीजिए तो इसके जवाब मेंभी उन्हीं की बात उनपर उलट दी कि तुम्हारा अपना फ़तवा (धर्मादेश) यह था कि जिसके सामान में से माल निकला है उसी को रख लिया जाए अतः अब तुम्हारे सामने बिन यमीन के सामान में से हमारा माल निकला है और उसी को हम रख लेते हैं, दूसरे को उसकी जगह कैसे रख सकते हैं?

तुमसे अल्लाह के नाम पर पक्का वचन ले चुके हैं? और इससे पहले यूसुफ़ के मामले में जो तुम कर चुके हो वह भी तुको मालूम है। अब मैं तो यहाँ से हरगिज़ न जाऊँगा जब तक कि मेरे अब्बा जान की मुझे अनुज्ञा न मिले, या फिर अल्लाह ही मेरे हक़ में कोई फ़ैसला कर दे कि वह सबसे अच्छा फ़ैसला करनवाला है। (81) तुम जाकर अपने अब्बा जान से कहो कि अब्बा जान् आपके बेटे ने चोरी की है। हमने उसे चोरी करते हुए देखा। जो कुछ हमें मालूम हुआ है बस वही हम बयान कर रहे हैं, और ग़ैब (परोक्ष) तो हमारी दृष्टि में था नहीं। (82) आप उस बस्ती के लोगों से पूछ लीजिए जहाँ हम थे। उस क़ाफ़िले से पूछ लीजिए जिसके साथ हम आए हैं। हम अपने बयान में बिलकुल सच्चे हैं।''

(83) बाप ने यह वृतांत सुनकर कहा, ''वास्तव में तुम्हारे जी (नफ़्स) ने तुम्हारे लिए एक और बड़ी बात को आसान बना दिया।[23] अच्छा इसपर भी सब्र करूँगा और ख़ूबी के साथ करूँगा। कुछ मुश्किल नहीं कि अल्लाह उन सबको मुझसे ला मिलाए, वह सब कुछ जानता है और उसके सारे काम तत्त्वदर्शिता पर आधारित हैं।'' (84) फिर वह उनकी ओर से मुँह फेरकर बैठ गया और कहने लगा कि ''हाय यूसुफ़!''—वह दिल ही दिल में ग़म से घुटा जा रहा था और उसकी आँखे सफ़ेद पड़ गई थी (85)—बेटों ने कहा, ''अल्लाह की क़सम! आप तो बस यूसुफ़ ही को याद किये जाते हैं। नौबत यह आ गई है कि उसके ग़म में अपने आपको घुला देंगे या अपनी जान दे देंगे।'' (86) उसने कहा, ''मैं अपनी परेशानी और अपने ग़म की शिकायत अल्लाह के सिवा किसी से नहीं करता और अल्लाह से जैसा मैं परिचित हूँ, तुम नहीं हो। (87) मेरे बच्चो, जाकर यूसुफ़ और उसके भाई की कुछ टोह लगाओ, अल्लाह की रहमत से मायूस न हो, उसकी रहमत से तो बस अधर्मी ही मायूस हुआ करते हैं।''

(88) जब ये लोग जब ये लोग मिस्र जाकर यूसुफ़ की पेशी में दाख़िल हुए तो उन्होंने कहा, ''ऐ सत्ताधिकारी सरदार, हम और हमारे घरवाले बड़ी मुसीबत में पड़े हुए हैं, और हम कुछ मामूली-सी पूँजी लेकर आए हैं, आप हमें भरपूर ग़ल्ला प्रदान करें

23. अर्थात् तुम्हारी दृष्टि में यह मान लेना बहुत आसान हैं कि मेरा बेटा जिसकी सच्चरित्रता से मैं ख़ूब वाक़िफ़ हूँ, एक प्याले की चोरी का अपराध कर सकता है। पहले तुम्हारे लिए अपने एक भाई को जान-बूझकर गुम कर देना और उसकी क़मीज़ पर झूठा ख़ून लगाकर ले आना बहुत आसान काम हो गया था। अब एक दूसरे भाई को वास्तव में चोर मान लेना और मुझे आकर उसकी ख़बर देना भी वैसा ही आसान हो गया।

और हमको दान दें, अल्लाह दान देनेवालों को बदला देता है। (89) (यह सुनकर यूसुफ़ से न रहा गया) उसने कहा, ''तुम्हें कुछ यह भी मालूम है कि तुमने यूसुफ़ और उसके भाई के साथ क्या किया था जबकि तुम नादान थे?'' (90) वे चौंककर बोले, ''अरे! क्यातुम यूसुफ़ हो?'' उसने कहा, ''हाँ, मैं यूसुफ़ हूँ और यह मेरा भाई है। अल्लाह ने हमारे साथ उपकार किया। सत्य यह है कि अगर कोई डरकर रहे और सब्र से काम ले तो अल्लाह के यहाँ ऐसे नेक लोगों का बदला मारा नहीं जाता।'' (91) उन्होंने कहा, ''अल्लाह की क़सम कि तुमको अल्लाह ने हमारे मुक़ाबले में श्रेष्ठता प्रदान की और वास्तव में हम ख़ताकार (अपराधी) थे।'' (92) उसने जवाब दिया, ''आज तुम्हारी कोई पकड़ नहीं, अल्लाह तुम्हें माफ़ करे, वह सबसे बढ़कर दयावान है। (93) जाओ मेरी यह क़मीज़ ले जाओ और मेरे अब्बा जान के मुँह पर डाल दो, उनकी आँखों की रौशनी पलट आएगी, और अपने सब घरवालों को मेरे पास ले आओ।''

(94) जब यह क़ाफ़िला (मिस्र से) रवाना हुआ तो उनके बाप ने (कनआन में) कहा, ''मैं यूसुफ़ की महक महसूस कर रहा हूँ, तुम लोग कहीं यह न कहने लगो कि मैं बुढ़ापे में सठिया गया हूँ।'' (95) घर के लोग बोले, ''अल्लाह की क़सम, आप अभी तक अपनी उसी पुरानी भ्रान्ति में पड़े हुए हैं।''

(96) फिर जब ख़ुशख़बरी लानेवाला आया तो उसने यूसुफ़ की क़मीज़ याक़ूब के मुँह पर डाल दी और अचानक उसकी आँखों की रौशनी पलट आई। तब उसने कहा, ''मैं तुमसे कहता न था? मैं अल्लाह की ओर से वह कुछ जानता हूँ जो तुम नहीं जानते।'' (97) सब बोल उठे, ''अब्बा जान, आप हमारे गुनाहों की बख़शिश के लिए

24. इस शब्द 'सजदा' से बहुत-से लोगों को भ्रम हुआ है। यहाँ तक कि एक गिरोह ने तो इसी को प्रमाण मानकर बादशाहों और पीरों के लिए अभिवादन के सजदे और आदर के सजदे का जाइज़ होना सिद्ध कर लिया। दूसरे लोगों को इस कठिनाई से बचने के लिए इस संबंध में यह स्पष्टीकरण करना पड़ा कि अगली शरीअतों में सिर्फ़ बन्दगी और उपासना का सजदा अल्लाह के सिवा दूसरों के लिए हराम था, बाक़ी रहा वह सजदा जो उपासना के भाव से ख़ाली हो तो वह अल्लाह के सिवा दूसरों को भी किया जा सकता है, अलबत्ता हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शरीअत में हर प्रकार का सजदा अल्लाह के सिवा दूसरों के लिए हराम कर दिया गया लेकिन ये सारे भ्रम वास्तव में इस कारण पैदा हुए है कि 'सजदा' शब्द को वर्तमान इस्लामी परिभाषा का पर्यायवाची समझ लिया गया, अर्थात् हाथ, घुटने और माथा ज़मीन पर टिकाना। हालाँकि सजदे का मूल अर्थ सिर्फ़ झुकना है और यहाँ यह शब्द इसी अर्थ में इस्तेमाल हुआ है।

दुआ करें, वास्तव में हम ख़ताकार थे।'' (98) उसने कहा, ''मैं अपने रब से तुम्हारे लिए माफ़ी की दरख़्वास्त करूँगा, वह बड़ा माफ़ करनेवाला और दयावान है।''

(99) फिर जब ये लोग यूसुफ़ के पास पहुँचे तो उसने अपने माँ-बाप को अपने साथ बिठा लिया और (अपने सब कुटुम्बवालों से) कहा, ''चलो, अब शहर में चलो, अल्लाह ने चाहा तो अम्न-चैन से रहोगे।

(100) (शहर में दाख़िल होने के बाद) उसने अपने माँ-बाप को उठाकर अपने पास सिंहासन पर बिठाया और सब उसके आगे यकायक सजदे में झुक गए।[24] यूसुफ़ ने कहा, ''अब्बा जान, यह अर्थ है मेरे उस ख़्वाब का जो मैंने पहले देखा था, मेरे रब ने उसे सत्य बना दिया। उसका एहसान है कि उसने मुझे जेल से निकाला, और आप लोगों को उजाड़ स्थान (सहरा) से लाकर मुझसे मिलाया, हालाँकि शैतान मेरे और मेरे भाइयों के बीच फ़साद डाल चुका था। सच यह है कि मेरा रब सूक्ष्म उपायों से अपनी इच्छा पूरी करता है, बेशक वह सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है। (101) ऐ मेरे रब, तूने मुझे राज्य प्रदान किया और मुझे बातों की तह तक पहुँचना सिखाया। ज़मीन और आसमान, के बनानेवाले, तू ही दुनिया और आख़िरत में मेरा संरक्षक है, मेरा अंत इस्लाम पर कर और अंतिम परिणाम के तौर पर मुझे अच्छों के साथ मिला।''

(102) ऐ नबी, यह क़िस्सा ग़ैब (परोक्ष) के समाचारों में से है जिसकी प्रकाशना हम तुमपर कर रहे हैं, वरना तुम उस समय मौजूद न थे जब यूसुफ़ के भाइयों ने आपस में एकमत होकर साज़िश की थी। (103) मगर तुम चाहे कितना ही चाहो, इनमें से ज़्यादातर लोग माननेवाले नहीं हैं। (104) हालाँकि तुम इस सेवा-कार्य पर इनसे कोई बदला भी नहीं माँगते हो। यह तो एक उपदेश है जो दुनियावालों के लिए आम है।

(105) ज़मीन और आसमानों में कितनी ही निशानियाँ हैं जिनपर से ये लोग गुज़रते रहते हैं और तनिक ध्यान नहीं देते। (106) इनमें से ज़्यादातर अल्लाह को मानते मगर इस तरह कि उसके बीच दूसरों को साझी ठहराते हैं। (107) क्या ये निश्चिन्त हैं कि अल्लाह के अज़ाब की कोई बला उन्हें दबोच न लेगी या बेख़बरी में क़ियामत की घड़ी अचानक इनपर न आ जाएगी? (108) तुम इनसे साफ़ कह दो कि ''मेरा रास्ता तो यह है कि मैं अल्लाह की ओर बुलाता हूँ, मैं ख़ुद भी पूरे प्रकाश में अपना रास्ता देख रहा हूँ और मेरे साथी भी, और अल्लाह पाक है और साझी ठहरानेवालों से मेरा कोई नाता नहीं।''

(109) ऐ नबी, तुमसे पहले हमने जो पैग़म्बर भेजे थे वे सब भी इनसान ही थे और इन्हीं बस्तियों के रहनेवालों में से थे, और उन्हीं की ओर हम प्रकाशना भेजते रहे हैं।

फिर क्या ये लोग ज़मीन में चले-फिरे नहीं हैं कि उन क़ौमों का परिणाम इन्हें दिखाई न दिया जोइनसे पहले गुज़र चुकी हैं? यक़ीनन आख़िरत का घर उन लोगों के लिए और ज़्यादा अच्छा है जिन्होंने (पैग़म्बरों की बात मानकर) परहेज़गारी की नीति अपनाई। क्या अब भी तुम लोग न समझोगे? (पहले पैग़म्बरों के साथ भी यही होता रहा है कि वे मुद्दतों समझाते रहे और लोगों ने माना नहीं) (110) यहाँ तक कि जब पैग़म्बर लोगों से मायूस हो गए और लोगों ने भी समझ लिया कि उनसे झूठ बोला गया था, तो अचानक हमारी मदद पैग़म्बरों को पहुँच गई। फिर जब ऐसा अवसर आ जाता है तो हमारा नियम यह है कि जिसे हम चाहते हैं बचा लेते हैं और अपराधियों पर से हमारा अज़ाब टाला ही नहीं जा सकता।

(111) पहले के लोगों के इन क़िस्सों में बुद्धि और चेतनावालों के लिए शिक्षाप्रद सामग्री है। यह जो कुछ क़ुरआन में बयान किया जा रहा है ये बनावटी बातें नहीं हैं बल्कि जो किताबें इससे पहले आई हुई हैं उन्हीं की पुष्टि है और हर चीज़ का विस्तृत वर्णन[25] और ईमान लानेवालों के लिए मार्गदर्शन और दयालुता।



25. अर्थात् हर उस चीज़ का विस्तृत वर्णन जो इनसान के मार्गदर्शन व रहनुमाई के लिए ज़रूरी है। कुछ लोग ''हर चीज़ के विस्तृत वर्णन'' से मुराद ज़बरदस्ती दुनिया-भर की चीज़ों की तफ़सील (विस्तृत वर्णन) ले लेते हैं और फिर उन्हें इस कठिनाई का सामना करना पड़ता है कि क़ुरआन में वनों और चिकित्सा और गणित और दूसरी शिक्षा और कला के सम्बन्ध में कोई विस्तृत वर्णन नहीं मिलता और कुछ दूसरे लोग ज़बरदस्ती हर विज्ञान और कला का वर्णन क़ुरआन से निकालने लगते हैं।

13. अर-रअ़द

नाम

आयत 13 के वाक्य में ''बादलों की गरज (रअ़द) उसकी प्रशंसा के साथ उसकी पाकी बयान करती है और फ़रिश्ते उसके भय से काँपते हुए उसकी तस्बीह करते हैं,'' के शब्द अर-रअ़द (गरज) को इस सूरा का नाम निर्धारित किया गया है। इस नाम का यह अर्थ नहीं है कि इस सूरा में बादल की गरज की समस्या पर विचार व्यक्त किया गया है, बल्कि यह केवल लक्षण के रूप में यह व्यक्त करता है कि यह वह सूरा है जिसमें अर-रअ़द शब्द आया है या जिसमें रअ़द का उल्लेख हुआ है।

अवतरणकाल

आयत 27 से लेकर 31 और आयत 38 से लेकर 43 तक की विषय वार्ताएँ इसकी साक्षी हैं कि यह सूरा भी उसी कालखण्ड की है जिसमें सूरा 10 (यूनुस), 11 (हूद) और 7 (आराफ़) अवतरित हुई हैं अर्थात् मक्का के निवास का अन्तिम समय। वर्णन-शैली से प्रत्यक्षतः स्पष्ट हो रहा है कि नबी (सल्ल॰) को इस्लाम की ओर आमंत्रित करते हुए एक दीर्घकाल व्यतीत हो चुका है। विरोधी आपको पराजित करने और आपके मिशन को असफल करने के लिए तरह-तरह की चालें चलते रहे हैं, ईमान वाले बार-बार कामना कर रहे हैं कि काश कोई चमत्कार दिखाकर ही इन लोगों को सीधे रास्ते पा लाया जाए, और अल्लाह मुसलमानों को समझा रहा है कि ईमान की राह दिखाने का यह तरीक़ा हमारे यहाँ प्रचलित नहीं है और यदि सत्य के शत्रुओं को अधिक अवकाश दिया जा रहा है तो यह ऐसी बात नहीं है कि जिससे तुम घबरा उठो। फिर आयत 31 से यह भी मालूम होता है कि बार-बार काफ़िरों (अधर्मियों) की हठधर्मी का ऐसा प्रदर्शन (हो चुका) है, जिसके पश्चात् यह कहना बिलकुल ठीक मालून होता है कि यदि क़ब्रों से मुर्दे भी उठकर आ जाएँ तब भी ये लोग न मानेंगे, बल्कि इस घटना की भी कोई न कोई व्याख्या कर डालेंगे। इन सब बातों से यही अनुमान होता है कि यह सूरा मक्का के अन्तिम कालखण्ड में अवतरित हुई होगी।

केन्द्रीय विषय

सूरा का अभिप्राय पहली ही आयत में प्रस्तुत कर दिया गया है, अर्थात् यह कि जो कुछ मुहम्मद (सल्ल॰) पेश कर रहे हैं, वही सत्य है, किन्तु यह लोगों की ग़लती है कि वे उसे नहीं मानते। समस्त अभिभाषण इसी केन्द्रीय विषय के चतुर्दिक घूमता है। इस संबंध में बार-बार विभिन्न तरीक़ों से एकेश्वरवाद, परलोकवाद और रिसालत (पैग़म्बरी)

की सत्यता को सिद्ध किया गया है। इनपर ईमान लाने के नैतिक और आध्यात्मिक लाभ समझाए गए हैं, इनको न मानने की हानियाँ बताई गई हैं। और यह बात मन में बिठाई गई है कि कुफ़्र (सत्य का इनकार) सर्वथा एक मूर्खता और अज्ञान है। फिर चूँकि इस सम्पूर्ण वक्तव्य का उद्देश्य केवल मस्तिष्क को संतुष्ट करना ही नहीं हैं, दिलों को ईमान की ओर खींचना भी है, इसलिए मात्र तार्किक प्रमाणीकरण से काम नहीं लिया गया है, बल्कि एक-एक प्रमाण और एक-एक लक्ष्य को प्रस्तुत करने के पश्चात् ठहरकर तरह-तरह से डराया और सत्य की ओर उकसाया गया है और करुणायुक्त उपदेश दिया गया है, ताकि नादान लोग अपनी पथभ्रष्टतायुक्त हटधर्मी से बाज़ आ जाएँ।

अभिभाषण के मध्य में जगह-जगह विरोधियों के आक्षेपों का उल्लेख किए बिना उनके उत्तर दिए गए हैं और उन संदेहों का निवारण किया गया है जो मुहम्मद (सल्ल॰) के आमंत्रण के संबंध में लोगों के दिलों में पाए जाते थे या विरोधियों की ओर से डाले जाते थे। इसके साथ ईमानवालों को भी, जो कई वर्षों के दीर्घ और कठिन संघर्ष के कारण थके जा रहे थे और विकलतापूर्वक परोक्ष सहायता की प्रतीक्षा कर रहे थे, सान्त्वना दी गई है।



13. सूरा अर-रअद

(मक्का में उतरी–आयतें 43)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ मीम॰ रा॰। यह ईश्वरीय किताब की आयतें हैं, और जो कुछ तुम्हारे रब की ओर से तुमपर उतारा गया है वह बिलकुल सत्य है, मगर (तुम्हारी क़ौम के) ज़्यादातर लोग मान नहीं रहे हैं।

(2) वह अल्लाह ही है जिसने आसमानों को ऐसे सहारों के बिना क़ायम किया जो तुमको नज़र आते हों,[1] फिर वह अपने राजसिंहासन पर विराजमान हुआ, और उसने सूरज और चाँद को एक नियम का पाबन्द बनाया, इस सारी व्यवस्था की हर चीज़ एक निश्चित समय तक के लिए चल रही है और अल्लाह ही इस सारे काम का नियंत्रण कर रहा है। वह निशानियाँ खोल-खोलकर बयान करता है[2] शायद कि तुम अपने रब से मिलन का विश्वास करो।

(3) और वही है जिसने यह ज़मीन फैला रखी है, इसमें पहाड़ों के खूँटे गाड़ रखे हैं और नदियाँ बहा दी हैं। उसी ने हर तरह के फलों के जोड़े पैदा किए हैं और वही दिन को रात से छिपाता है। इन सारी चीज़ों में बड़ी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो सोच-विचार से काम लेते हैं।

(4) और देखो, ज़मीन में अलग-अलग भू-भाग पाए जाते हैं जो एक-दूसरे से मिले हुए अवस्थित हैं। अंगूर के बाग़ हैं, खेतियाँ हैं, खजूर के पेड़ हैं जिनमें से कुछ इकहरे हैं और कुछ दोहरे। सबको एक ही पानी सिंचित करता है, मगर स्वाद में हम

1. दूसरे शब्दों में आसमानों को महसूस न होनेवाले और अदृश्य सहारों पर स्थापित किया। देखने में कोई चीज़ विस्तृत मंडल में ऐसी नहीं है जो इन अगणित नभ-पिण्डों को थामे हुए हो, मगर एक ग़ैर महसूस ताकत है जो हर एक को उसके स्थान और परिक्रमा-पंथ पर रोके हुए है और इन विशालकाय पिण्डों को ज़मीन पर या एक दूसरे पर गिरने नहीं देती।
2. अर्थात् इस बात की निशानियाँ कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) जिन वास्तविकताओं की सूचना दे रहे हैं वे वास्तव में सच्ची वास्तविकताएँ हैं। विश्व में हर ओर उनपर गवाही देनेवाले लक्षण मौजूद हैं। अगर लोग आँखें खोलकर देखें तो उन्हें दिखाई दे जाए कि क़ुरआन में जिन-जिन बातों को मानने का निमंत्रण दिया गया ज़मीन और आसमान में फैली हुई अगणित निशानियाँ उनकी पुष्टि कर रही हैं।

किसी को बहुत अच्छा बना देते हैं और किसी को उससे कम। इन सब चीज़ों में बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो बुद्धि से काम लेते हैं।

(5) अब अगर तुम्हें आश्चर्य करना है तो आश्चर्य के योग्य लोगों का यह कथन है कि "जब हम मरकर मिट्टी हो जाएँगे तो क्या हम नए सिरे से पैदा किए जाएँगे?" ये वे लोग हैं जिन्होंने अपने रब के साथ इनकार की नीति अपना है।[3] ये वे लोग हैं जिनकी गरदनों में तौक़ पड़े हुए हैं।[4] ये जहन्नमी हैं और जहन्नम में हमेशा रहेंगे।

(6) ये लोग भलाई से पहले बुराई के लिए जल्दी मचा रहे हैं।[5] हालाँकि इनसे पहले (जो लोग इस नीति पर चले हैं, उनपर ख़ुदा के अज़ाब की) शिक्षाप्रद मिसालें गुज़र चुकी हैं। सच यह है कि तेरा रब लोगों की ज़्यादतियों के बावजूद इनके साथ माफ़ी से काम लेता है, और यह भी सत्य है कि तेरा रब सख़्त देनेवाला है।

(7) ये लोग जिन्होंने तुम्हारी बात मानने से इनकार कर दिया है, कहते हैं कि "इस व्यक्ति पर इसके रब की ओर से कोई निशानी क्यों न उतरी?"—तुम तो सिर्फ़ सावधान करनेवाले हो, और हर क़ौम के लिए एक मार्गदर्शन है।

(8) अल्लाह एक-एक गर्भवती के पेट को जानता है, जो कुछ उसमें बनता है उसे भी वह जानता है और जो कुछ उसमें कमी या बेशी होती है उसकी भी उसे ख़बर रहती है। हर चीज़ के लिए उसके यहाँ एक मात्रा निश्चित है। (9) वह छिपे और खुले हर चीज़ को जानता है। वह महान है और हर हाल में सर्वोच्च रहनेवाला है। (10) तुममें से

3. अर्थात् इनका आख़िरत से इनकार वास्तव में अल्लाह से और उसकी शक्ति और तत्त्वदर्शिता से इनकार है। ये सिर्फ़ इतना ही नहीं कहते कि हमारा मिट्टी में मिल जाने के बाद दोबारा पैदा होना असंभव है बल्कि इनके इसी कथन में यह विचार भी निहित है कि वह ईश्वर बेबस, निरुपाय, नादान और मूर्ख है जिसने इनको पैदा किया है, अल्लाह में ऐसी ग़लत धारणा से बचाए।
4. गरदन में तौक़ पड़ा होना क़ैदी होने की निशानी है। इन लोगों की गरदनों में तौक़ पड़े होने का मतलब यह है कि ये लोग अपने अज्ञान के, अपनी हठधर्मी के, अपनी इच्छाओं और वासनाओं के और अपने बाप-दादा के अन्धानुकरण के बन्दी बने हुए हैं। ये स्वतन्त्र रूप से सोच-विचार नहीं कर सकते. इन्हें इनके पक्षपात ने ऐसा जकड़ रखा है कि ये आख़िरत को नहीं मान सकते यद्यपि उसका मानना सर्वथा बुद्धिसंगत और उचित है, और आख़िरत के इनकार पर जमे हुए हैं यद्यपि वह सर्वथा अनुचित है।
5. अर्थात् अज़ाब की माँग कर रहे हैं।

कोई व्यक्ति चाहे ज़ोर से बात करे या धीरे से, और कोई रात के अँधेरे में छिपा हुआ हो या दिन के उजाले में चल रहा हो, उसके लिए सब समान हैं। (11) हर व्यक्ति के आगे और पीछे उसके नियुक्त किए हुए निरीक्षक लगे हुए हैं जो अल्लाह के आदेश से उसकी देख-भाल कर रहे हैं। सच यह है कि अल्लाह किसी क़ौम की हालत को नहीं बदलता जब तक कि वह ख़ुद अपने गुणों को नहीं बदल देती। और जब अल्लाह किसी क़ौम की शामत लाने का फ़ैसला कर ले तो फिर वह किसी के टाले नहीं टल सकती, न अल्लाह के मुकाबले में ऐसी क़ौम का कोई समर्थक और सहायक हो सकता है।

(12) वही है जो तुम्हारे सामने बिजलियाँ चमकाता है जिन्हें देखकर तुम्हें आशंकाएँ भी होती हैं और आशाएँ भी बंधती हैं। वही है जो पानी से लदे हुए बादल उठाता है। (13) बादलों का गर्जन उसकी स्तुति के साथ उसकी पावनता बयान करता है[6] और फ़रिश्ते उसके डर से काँपते हुए उसकी पवित्रता का वर्णन करते हैं। वह कड़कती हुई बिजलियों को भेजता है और (बहुधा) उन्हें जिसपर चाहता है ठीक उस हालत में गिरा देता है जबकि लोग अल्लाह के बारे में झगड़ रहे होते हैं। वास्तव में उसकी चाल बड़ी ज़बरदस्त है।

(14) उसी को पुकारना सत्य है।[7] रही वे दूसरी हस्तियाँ जिन्हें उसको छोड़कर ये लोग पुकारते हैं, वे उनकी दुआओं का कोई जवाब नहीं दे सकतीं। उन्हें पुकारना तो ऐसा है जैसे कोई व्यक्ति पानी की ओर हाथ फैलाकर उससे निवेदन करे कि तू मेरे मुँह तक पहुँच जा, हालाँकि पानी उस तक पहुँचनेवाला नहीं। बस इसी तरह अधर्मियों की दुआएँ भी कुछ नहीं हैं मगर एक तीर बिना निशाने का! (15) वह तो अल्लाह ही है

6. अर्थात् बादलों का गर्जन यह व्यक्त करता है कि जिस अल्लाह ने ये हवाएँ चलाई, ये भापें उठाई, ये स्थूल बादल एकत्र किए, इस बिजली को वर्षा का कारण बनाया और इस तरह ज़मीन के प्राणी आदि के लिए पानी के जुटाने का प्रबन्ध किया, वह अपनी तत्त्वदर्शिता और सामर्थ्य में पूर्ण है, अपने गुणों में बेऐब है और अपने प्रभुत्व में अकेला है, कोई उसका साझीदार नहीं है। जानवरों की तरह सुननेवाले तो इन बादलों में सिर्फ़ गरज की आवाज़ ही सुनते हैं, मगर जो होश के कान रखते हैं वे बादलों की ज़बान से ईश्वर के एक होने की घोषणा सुनते हैं।
7. पुकारने से मुराद अपनी ज़रूरतों में मदद के लिए पुकारना है। मतलब यह है कि आवश्यकता-पूर्ति और कठिनाइयों को दूर करने के सारे अधिकार उसी के हाथ में हैं। इसलिए सिर्फ़ उसी से दुआएँ माँगना उचित है।

जिसको ज़मीन और आसमान की हर चीज़ स्वेच्छापूर्वक और विवशतापूर्वक सजदा कर रही है[8] और सब चीज़ों की परछाइयाँ भी सुबह और शाम उसके आगे झुकती हैं।[9]

(16) इनसे पूछो, आसमान और ज़मीन का रब कौन है?—कहो, अल्लाह। फिर इनसे कहो कि जब वास्तविकता यह है तो क्या तुमने उसे छोड़कर ऐसे पूज्यों को अपना कार्यसाधक ठहरा लिया जिन्हें ख़ुद अपने लिए भी किसी लाभ और हानि का अधिकार प्राप्त नहीं? कहो, क्या अन्धा और आँखोंवाला बराबर हुआ करता है? क्या प्रकाश और अँधेरे समान होते हैं? और अगर ऐसा नहीं तो क्या इनके ठहराए हुए साझीदारों ने भी अल्लाह की तरह कुछ पैदा किया है कि उसके कारण इनपर सृष्टि का मामला संदिग्ध हो गया?—कहो हर चीज़ का स्रष्टा सिर्फ़ अल्लाह है और वह यकता है, सब पर प्रभावी!

(17) अल्लाह ने आसमान से पानी बरसाया और हर नदी-नाला अपनी समाई के अनुसार उसे लेकर चल निकला। फिर जब बाढ़ आई तो ऊपर झाग भी आ गए। और ऐसे ही झाग उन धातुओं पर भी उठते हैं जिन्हें ज़ेवर और बरतन आदि बनाने के लिए लोग पिघलाया करते हैं। इसी मिसाल से अल्लाह सत्य और असत्य के मामले को स्पष्ट करता है। जो झाग है वह उड़ जाया करता है और जो चीज़ इनसानों के लिए लाभदायक है वह ज़मीन में ठहर जाती है। इसी तरह अल्लाह मिसालों से अपनी बात समझाता है।

(18) जिन लोगों ने अपने रब का आमंत्रण स्वीकार कर लिया उनके लिए भलाई है, और जिन्होंने उसे स्वीकार न किया वे अगर धरती के सारे धन के भी मालिक हों और उतना ही और ले आएँ तो वे अल्लाह की पकड़ से बचने के लिए उस सबको अर्थदण्ड (फ़िदया) के रूप में दे डालने पर तैयार हो जाएँगे। ये वे लोग हैं जिनसे बुरी तरह हिसाब लिया जाएगा और इनका ठिकाना जहन्नम है, बहुत ही बुरा ठिकाना।

(19) भला यह किस तरह संभव है कि वह व्यक्ति जो तुम्हारे रब के इस ग्रन्थ को जो उसने तुमपर उतारा है सत्य जानता है और वह व्यक्ति जो इस वास्तविकता की ओर से अन्धा है, दोनों समान हो जाएँ? नसीहत तो बुद्धिमान लोग ही क़बूल किया करते हैं।

8. सजदे से मुराद आज्ञापालन में झुकना, आदेशानुपालन और नतमस्तक होना है।
9. परछाइयों के सजदा करने से मुराद यह है कि चीज़ों की छायाओं का सुबह और शाम के समय पश्चिम और पूरब की ओर गिरना इस बात का लक्षण है कि ये सब चीज़ें किसी के आदेश को माननेवाली और किसी के क़ानून से कार्य में लगी हैं।

(20) और उनकी व्यवहार-नीति यह होती है कि अल्लाह के साथ अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करते हैं, उसे मज़बूत बाँधने के बाद तोड़ नहीं डालते। (21) और उनकी नीति यह होती है कि अल्लाह ने जिन-जिन नातों को जोड़े रखने का आदेश दिया है उन्हें जोड़े रखते हैं, अपने रब से डरते हैं और इस बात का डर रखते हैं कि कहीं उनसे बुरी तरह हिसाब न लिया जाए। (22) उनका हाल यह होता है कि अपने रब की प्रसन्नता के लिए सब्र से काम लेते हैं, नमाज़ क़ायम करते हैं, हमारी दी हुई रोज़ी में से खुले और छिपे ख़र्च करते हैं, और बुराई को भलाई से दूर करते हैं। आख़िरत का घर उन्हीं लोगों के लिए है। (23-24) अर्थात् ऐसे बाग़ जोउनके स्थायी निवास-स्थान होंगे। वे ख़ुद भी उनमें प्रवेश करेंगे और उनके बाप-दादा और उनकी पत्नियों और उनकी औलाद में से जो-जो नेक हैं वे भी उनके साथ वहाँ जाएँगे। फ़रिश्ते हर ओर से उनके स्वागत के लिए आएँगे और उनसे कहेंगे, "तुमपर सलामती है, तुमने दुनिया में जिस तरह सब्र से काम लिया उसके कारण आज तुम इसके अधिकारी हुए हो।"—अतः क्या ही अच्छा है यह आख़िरत का घर! (25) रहे वे लोग जो अल्लाह की प्रतिज्ञा को सुदृढ करने के बाद तोड़ डालते हैं, जो उन नातों को काटते हैं जिन्हें अल्लाह ने जोड़ने का आदेश दिया है, और जो ज़मीन में बिगाड़ फैलाते हैं, वे फिटकार के योग्य हैं और उनके लिए आख़िरत में बहुत बुरा ठिकाना है।

(26) अल्लाह जिसकी चाहता है रोज़ी कुशादा कर देता है, और जिसे चाहता है नपी-तुली रोज़ी देता है। ये लोग दुनिया की ज़िन्दगी में मग्न हैं, जबकि दुनिया की ज़िन्दगी आख़िरत के मुक़ाबले में बहुत थोड़ी सुख-सामग्री के सिवा कुछ भी नहीं।

(27) वे लोग जिन्होंने (हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ की पैग़म्बरी को मानने से) इनकार कर दिया है, कहते हैं, "इस व्यक्ति पर इसके रब की ओर से कोई निशानी क्यों न उतरी"—कहो, अल्लाह जिसे चाहता है गुमराह कर देता है और वह अपनी ओर आने का रास्ता उसी को दिखाता है जो उसकी ओर रुजू करे। (28) ऐसे ही लोग हैं वे जिन्होंने (इस नबी के बुलावे को) मान लिया है और उनके दिलों को अल्लाह की याद से इतमीनान हासिल होता है। सावधान रहो! अल्लाह की याद ही वह चीज़ है जिससे दिलों को इतमीनान हासिल हुआ करता है। (29) फिर जिन लोगों ने सत्य के आमंत्रण को माना और अच्छे कार्य किए वे ख़ुशनसीब हैं और उनके लिए अच्छा अंजाम है।

(30) ऐ नबी, इसी शान से हमने तुमको रसूल बनाकर भेजा है[10] एक ऐसी क़ौम

10. अर्थात् किसी ऐसी निशानी के बिना जिसकी ये लोग माँग करते हैं।

में जिससे पहले बहुत-सी क़ौमें गुज़र चुकी हैं, ताकि तुम इन लोगों को वह सन्देश सुनाओ जो हमने तुमपर उतारा है इस हाल में कि ये अपने अत्यन्त करुणामय ईश्वर के साथ इनकार की नीति अपनाए हुए हैं। इनसे कहो कि वही मेरा रब है, उसके सिवा कोई पूज्य नहीं है, उसी पर मैंने भरोसा किया और उसी की ओर मुझे पलटकर जाना है।

(31) और क्या हो जाता अगर कोई ऐसा क़ुरआन उतार दिया जाता जिसके ज़ोर से पहाड़ चलने लगते, या ज़मीन फट जाती, या मुरदे क़ब्र से निकलकर बोलने लगते? (इस तरह की निशानियाँ दिखा देना कुछ मुश्किल नहीं है) बल्कि सारा अधिकार ही अल्लाह के हाथ में है।[11] फिर क्या ईमानवाले (अभी तक इनकार करनेवालों की माँग के जवाब में किसी निशानी के प्रकट होने की आस लगाए बैठे हैं और वे यह जानकर) निराश नहीं हो गए कि अगर अल्लाह चाहता तो सारे इनसानों को सीधे मार्ग पर लगा देता?[12] जिन लोगों ने अल्लाह के साथ इनकार की नीति अपना रखी है उनपर उनकी करतूतों के कारण कोई न कोई आफ़त आती ही रहती है, या उनके घर के क़रीब कहीं उतरती है। यह सिलसिला चलता रहेगा यहाँ तक कि अल्लाह का वादा आ पूरा हो। यक़ीनन अल्लाह अपने वादे के विरुद्ध नहीं जाता। (32) तुमसे पहले भी बहुत-से रसूलों की हँसी उड़ाई जा चुकी है, मगर मैंने हमेशा न माननेवालों को ढील दी और आख़िरकार उनको पकड़ लिया, फिर देख लो कि मेरी सज़ा कैसी कठोर थी।

(33) फिर क्या वह जो एक-एक जीव की कमाई पर निगाह रखता है (उसके मुक़ाबले में इन दुस्साहसों से काम लिया जा रहा है कि) लोगों ने उसके कुछ साझीदार ठहरा रखे हैं? ऐ नबी, इनसे कहो (अगर वास्तव में वे अल्लाह के अपने बनाए हुए साझीदार हैं तो) तनिक उनके नाम लो कि वे कौन हैं?—क्या तुम अल्लाह को एक नई बात की ख़बर दे रहे हो जिसे वह अपनी ज़मीन में नहीं जानता? या तुम लोग बस यूँ ही

11. अर्थात निसानियों के न दिखाने का वास्तविक कारण यह नहीं है कि अल्लाह उनके दिखाने की सामर्थ्य नहीं रखता। बल्कि वास्तविक कारण यह है कि इन उपायों से काम लेना अल्लाह की मसलहत के ख़िलाफ़ है। इसलिए कि वास्तविक उद्देश्य तो सीधी राह से लगना है, न कि एक नबी की नुबूवत (पैग़म्बरी) को मनवा लेना, और सीधी राह पाना इसके बिना संभव नहीं कि लोगों के विचार और अन्तःदृष्टि का सुधार हो।

12. अर्थात् अगर समझ-बूझ के बिना सिर्फ़ एक अनुभवहीन ईमान अभीष्ट होता तो उसके लिए निशानियाँ दिखाने के तकल्लुफ़ की क्या ज़रूरत थी। यह काम तो इस तरह भी हो सकता था कि अल्लाह सारे इनसानों को ईमानवाला ही पैदा कर देता।

जो मुँह में आता है कह डालते हो? सच यह है कि जिन लोगों ने सत्य का आमंत्रण मानने से इनकार किया है उनके लिए उनकी मक्कारियाँ[13] ख़ुशनुमा बना दी गई हैं और वे सीधे मार्ग से रोक दिए गए हैं, फिर जिसको अल्लाह गुमराही में फेंक दे उसे कोई राह दिखानेवाला नहीं है। (34) ऐसे लोगों के लिए दुनिया की ज़िन्दगी में भी अज़ाब है, और आख़िरत का अज़ाब इससे भी ज़्यादा कठोर है। कोई ऐसा नहीं जो उन्हें अल्लाह से बचानेवाला हो। (35) परहेज़गार लोगों के लिए जिस जन्नत का वादा किया गया है उसकी शान यह है कि उसके नीचे नहरें बह रही हैं, उसके फल चिरस्थायी हैं और उसकी छाया शाश्वत। यह अंजाम है डर रखनेवाले लोगों का। और सत्य को न माननेवालों का अंजाम यह है कि उनके लिए दोज़ख़ की आग है।

(36) ऐ नबी, जिन लोगों को हमने पहले किताब दी थी वे इस किताब से, जो हमने तुमपर अवतरित की है, प्रसन्न है और विभिन्न गिरोहों में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो उसकी कुछ बातों को नहीं मानते। तुम स्पष्ट रूप से कह दो कि "मुझे तो सिर्फ़ अल्लाह की बन्दगी का आदेश दिया गया है और इससे रोका गया है कि किसी को उसका साझीदार ठहराऊँ, अतः मैं उसी की ओर बुलाता हूँ और उसी की ओर मेरा रुजू (पलटना) है।" (37) इसी आदेश के साथ हमने यह अरबी में फ़रमान तुमपर उतारा है। अब अगर तुमने उस ज्ञान के होते हुए जो तुम्हारे पास आ चुका है लोगों की इच्छाओं के पीछे चले तो अल्लाह के मुक़ाबले में न कोई तुम्हारा सहायक है और न कोई उसकी पकड़ से तुमको बचा सकता है।

(38) तुमसे पहले भी हम बहुत-से रसूल भेज चुके हैं और उनको हमने बीवी और बच्चोंवाला ही बनाया था[14] और किसी रसूल की भी यह ताक़त न थी कि अल्लाह

13. इस साझीदार बनाने को मक्कारी कहने का कारण यह है कि वास्तव में जिन तारों और उपग्रहों या फ़रिश्तों या आत्माओं या महापुरुषों को ईश्वरीय गुणों और अधिकारों से युक्त ठहराया गया है और जिनको अल्लाह के ख़ास हक़ में साझीदार बना लिया गया है, उनमें से किसी ने भी कभी न इन गुणों और अधिकारों का दावा किया, न इन हक़ों की माँग की, और न लोगों को यह शिक्ष दी कि तुम हमारे आगे पूजा की रीतियाँ अर्पित करो हम तुम्हारे काम बनाया करेंगे। यह तो चालाक लोगों का काम है कि उन्होंने जनसाधारण पर अपनी प्रभुता का सिक्का जमाने के लिए और उनकी कमाइयों में हिस्सा बटाने के लिए कुछ बनावटी प्रभु घढ़ लिए, लोगों को उनका श्रद्धालु बनाया और अपने आपको किसी न किसी रूप में उनका प्रतिनिधि ठहराकर अपना उल्लू सीधा करना शुरू कर दिया।

की अनुज्ञा के बिना कोई निशानी ख़ुद ला दिखाता। हर युग के लिए एक किताब है। (39) अल्लाह जो कुछ चाहता है मिटा देता है और जिस चीज़ को चाहता है क़ायम रखता है, मूल किताब उसी के पास है।[15]

(40) और ऐ नबी, जिस बुरे परिणाम की धमकी हम इन लोगों को दे रहे हैं उसका कोई हिस्सा चाहे हम तुम्हारे जीते जी दिखा दें या उसके प्रकट होने से पहले हम तुम्हें उठा लें, हर हाल में तुम्हारा काम सिर्फ़ सन्देश पहुँचा देना है, और हिसाब लेना हमारा काम है। (41) क्या ये लोग देखते नहीं हैं कि हम इस भू-भाग पर चले आ रहे हैं और इसकी परिधि को हर ओर से सिकोड़ते चले आते हैं?[16] अल्लाह शासन कर रहा है, कोई उसके फ़ैसलों का पुनरावलोकन करनेवाला नहीं है और उसे हिसाब लेते हुए देर नहीं लगती। (42) इनसे पहले जो लोग हुए हैं वे भी बड़ी-बड़ी चालें चल चुके हैं, मगर वास्तविक निर्णयकारी चाल तो पूरी की पूरी अल्लाह ही के हाथ में है। वह जानता है कि कौन क्या कुछ कमाई कर रहा है, और जल्दी ही ये सत्य को न माननेवाले देख लेंगे कि परिणाम किसका अच्छा होता है।

(43) ये इनकार करनेवाले कहते हैं कि तुम अल्लाह के भेजे हुए नहीं हो। कहो, "मेरे और तुम्हारे बीच अल्लाह की गवाही काफ़ी है और फिर उस व्यक्ति की गवाही जिसे आसमानी किताब का ज्ञान प्राप्त हो।"

● ● ●

14. यह एक एतिराज़ का जवाब है जो नबी (सल्ल०) पर किया जाता था। वे कहते थे कि यह अच्छा नबी है जो बीवी और बच्चे रखता है। भला पैग़म्बरों को भी विषय-वासनाओं से कोई सम्बन्ध हो सकता है। हालाँकि क़ुरैश के लोग स्वयं हज़रत इबराहीम (अलै०) और इसमाईल (अलै०) की सन्तान होने पर गर्व करते थे।

15. यहाँ 'उम्मुलकिताब' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'उम्मुलकिताब' का अर्थ है 'मूल किताब' अर्थात् वह उद्गम और स्रोत जिससे सारी आसमानी किताबें निकली हैं।

16. अर्थात् क्या तुम्हारे विरोधियों को दिखाई नहीं दे रहा है कि इस्लाम का प्रभाव अरब भू-खण्ड के कोने-कोने में फैलता जा रहा है और चारों ओर से इन लोगों पर क्षेत्र तंग होता चला जाता है? यह इनकी शामत के लक्षण नहीं है तो क्या है? अल्लाह का यह कहना कि "हम इस भू-भाग पर चले आ रहे हैं" एक अत्यन्त सुन्दर वर्णनशैली है। चूँकि सत्य का आह्वान अल्लाह की ओर से होता है और अल्लाह उसके प्रस्तुत करनेवालों के साथ होता है, इसलिए किसी भू-भाग में इस सन्देश (दावत) के फैलने को अल्लाह यूँ अभिव्यंजित करता है कि हम ख़ुद भू-भाग में बढ़े चले आ रहे हैं।

14. इबराहीम

नाम

आयत 35 के वाक्य "याद करो वह समय जब इबराहीम ने दुआ की थी कि पालनहार! इस शहर (मक्का) को शांत-नगर बना," से उद्धृत है। इस नाम का अर्थ यह नहीं है कि इस सूरा में हज़रत इबराहीम (अलै०) की जीवनी बयान हुई है, बल्कि यह भी अधिकतर सूरतों के नाम की तरह लक्षण के रूप में है। अर्थात् वह सूरा जिसमें इबराहीम (अलै०) का उल्लेख हुआ है।

अवतरणकाल

सामान्य वर्णन-शैली मक्का के अन्तिम कालखण्ड की सूरतों जैसी है। यह सूरा 13 (रअ़द) से निकट समय ही की अवतरित मालूम होती है। विशेषतः आयत 13 के शब्द "इनकार करनेवालों ने अपने रसूलों से कहा कि या तो तुम्हें हमारे पंथ में वापस आना होगा अन्यथा तुम्हें हम अपने देश से निकाल देंगे," का स्पष्ट संकेत इस ओर है कि उस समय मक्का में मुसलमानों पर अत्याचार अपने चरम को पहुँच चुका था और मक्कावाले पिछली काफ़िर क़ौमों की तरह अपने यहाँ के ईमानवालों को भू-भाग से निकाल देने पर तुल गए थे। इसी कारण उनको वह धमकी सुनाई गई जो उनकी-सी नीति अपनानेवाली पिछली क़ौमों को दी गई थी कि "हम ज़ालिमों को विनष्ट करके रहेंगे।" और ईमानवालों को वही तसल्ली दी गई जो उनके पहले के लोगों को दी जाती रही है कि "हम इन ज़ालिमों को समाप्त करने के पश्चात् तुम्हीं को इस भू-भाग में आबाद करेंगे।" इसी तरह आयत 42 से लेकर 52 तक के तेवर भी यही बताते हैं कि यह सूरा मक्का के अन्तिम कालखण्ड से संबंध रखती है।

केंद्रीय विषय और उद्देश्य

जो लोग नबी (सल्ल०) की रिसालत (पैग़म्बरी) को मानने से इनकार कर रहे थे और आपके आमंत्रण को असफल करने के लिए बुरी से बुरी चालें चल रहे थे, उनके लिए हित-शिक्षा और चेतावनी है लेकिन हित-शिक्षा की अपेक्षा इस सूरा में चेतावनी और भर्त्सना, डांट और फटकार का अंदाज़ अधिक तीव्र है। इसका कारण यह है कि समझाने-बुझाने का हक़ इससे पहले की सूरतों मे भली-भाँति अदा किया जा चुका था और इसपर क़ुरैश के क़ाफ़िरों की हटधर्मी, शत्रुता, विरोध, दुष्टता और अत्याचार दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही चला जा रहा था।



14. सूरा इबराहीम

(मक्का में उतरी–आयतें 52)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ रा॰। ऐ मुहम्मद, यह एक किताब है जिसको हमने तुम्हारी ओर अवतरित किया है ताकि तुम लोगों को अँधेरों से निकालकर प्रकाश में लाओ, उनके रब की मेहरबानी से, उस ईश्वर के मार्ग पर जो प्रभुत्वशाली और अपने-आप में प्रशंसनीय[1] है (2) और ज़मीन और आसमानों में पाई जानेवाली सभी चीज़ों का मालिक है।

और सख़्त तबाह करनेवाली सज़ा है सत्य को अस्वीकार करनेवालों के लिए (3) जो दुनिया की ज़िन्दगी को आख़िरत की अपेक्षा प्राथमिकता देते हैं, जो अल्लाह के मार्ग से लोगों को रोक रहे हैं और चाहते हैं कि यह मार्ग (उनकी इच्छाओं के अनुसार) टेढ़ा हो जाए। ये लोग गुमराही में बहुत दूर निकल गए हैं।

(4) हमने अपना सन्देश पहुँचाने के लिए जब कभी कोई रसूल भेजा है, उसने अपनी क़ौम ही की भाषा में सन्देश पहुँचाया है ताकि वह उन्हें अच्छी तरह खोलकर बात समझाए। फिर अल्लाह जिसे चाहता है भटका देता है और जिसे चाहता है सीधा मार्ग प्रदान करता है, वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वज्ञानी है।

(5) हम इससे पहले मूसा को भी अपनी निसानियों के साथ भेज चुके हैं। उसे भी हमने आदेश दिया था कि अपनी क़ौम को अँधेरों से निकालकर प्रकाश में ला और उन्हें ईश्वरीय इतिहास[2] की शिक्षाप्रद घटनाएँ सुनाकर उपदेश कर। इन घटनाओं में बड़ी निशानियाँ हैं हर उस व्यक्ति के लिए जो सब्र करने और कृतज्ञता दिखानेवाला हो।[3]

1. यहाँ 'हमीद' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'हमीद' का शब्द यद्यपि 'महमूद' (प्रशंसित) का ही समानार्थी है, मगर दोनों शब्दों में एक सूक्ष्म अन्तर है। महमूद किसी को उसी समय कहेंगे जबकि उसकी प्रशंसा की गई हो या की जाती हो। मगर 'हमीद' आपसे आप प्रशंसा का अधिकारी है, चाहे कोई उसकी प्रशंसा करे या न करे।
2. यहाँ 'अय्यामिल्लाह' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'अय्याम' का शब्द अरबी भाषा में पारिभाषिक रूप में यादगार ऐतिहासिक घटनाओं के लिए बोला जाता है। 'अय्यामुल्लाह' से मुराद मानव-इतिहास के वे महत्त्वपूर्ण अध्याय हैं जिनमें अल्लाह ने विगत समय की क़ौमों और बड़े-बड़े व्यक्तियों को उनके कर्म के अनुसार बदला या सज़ा दी है।

(6) याद करो जब मूसा ने अपनी क़ौम के लोगों से कहा, ''अल्लाह के उस उपकार को याद रखो जो उसने तुमपर किया है। उसने तुमको फ़िरऔनवालों से छुड़ाया जो तुम्हें कठोर तकलीफ़ें देते थे, तुम्हारे लड़कों को क़त्ल कर डालते थे और तुम्हारी लड़कियों को ज़िन्दा बचा रखते थे, इसमें तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारी बड़ी परीक्षा थी। (7) और याद रखो, तुम्हारे रब ने सावधान कर दिया था कि अगर कृतज्ञ बनोगे तो मैं तुम्हें और अधिक प्रदान करूँगा और अगर अकृतज्ञता दिखाओगे तो मेरी सज़ा बहुत कठोर है।'' (8) और मूसा ने कहा कि ''अगर तुम कुफ़्र (अवज्ञा) करो और ज़मीन के सारे रहनेवाले भी कुफ़्र करनेवाले हो जाएँ तो अल्लाह निस्पृह और ख़ुद अपने-आप में प्रशंसनीय है।''

(9) क्या तुम्हें[4] उन क़ौमों के हालात नहीं पहुँचे जो तुमसे पहले हुई हैं? नूह की क़ौम, आद, समूद और उनके बाद में आनेवाली बहुत-सी क़ौमें जिनकी गिनती अल्लाह को ही मालूम है? उनके रसूल जब उनके पास साफ़-साफ़ बातें और खुली-खुली निशानियाँ लिए हुए आए तो उन्होंने अपने मुँह में हाथ दबा लिए[5] और कहा कि ''जिस सन्देश के साथ तुम भेजे गए हो हम उसको नहीं मानते और जिस चीज़ का तुम हमें आमंत्रण देते हो उसकी ओर से हम बहुत संशय एवं दुविधाजनक सन्देह में पड़े हुए हैं? (10) उनके रसूलों ने कहा, ''क्या अल्लाह के बारे में शक है जो आसमानों और ज़मीन का स्रष्टा है? वह तुम्हें बुला रहा है ताकि तुम्हारे गुनाह माफ़ करे और तुमको नियत समय तक मुहलत दे।'' उन्होंने जवाब दिया, ''तुम कुछ नहीं हो, मगर वैसे ही इनसान, जैसे हम हैं। तुम हमें उन हस्तियों की बन्दगी (पूजा) से रोकना चाहते हो जिनकी बन्दगी बाप-दादा से होती चली आ रही है। अच्छा, तो लाओ कोई स्पष्ट प्रमाण।'' (11) उनके रसूलों ने उनसे कहा, ''वास्तव में हम कुछ नहीं हैं, मगर तुम ही जैसे इनसान। लेकिन अल्लाह अपने बन्दों में से जिसको चाहता है अपना कृपापात्र बनाता है, और यह हमारे

3. अर्थात् ये निनशानियाँ तो अपनी जगह मौजूद हैं लेकिन इनसे लाभान्वित होना सिर्फ़ उन्हीं लोगों का काम है जो अल्लाह की परीक्षाओं से सब्र और दृरढता के साथ गुज़रनेवाले, और अल्लाह की कृपाओं और उपकारों को ठीक-ठीक महसूस करके उनके प्रति उचित कृतज्ञता दिखानेवाले हों।
4. हज़रत मूसा (अलै॰) का भाषण ऊपर समाप्त हो गया। अब सीधे मक्का के अधर्मियों से सम्बोधन शुरू होता है।
5. यह ऐसी ही वर्णनशैली है जैसे हम अपनी भाषा में कहते हैं कानों पर हाथ रखे, या दाँतो में उँगली दबाई।

अधिकार में नहीं है कि तुम्हें कोई प्रमाण लाकर दें। प्रमाण तो अल्लाह ही की अनुज्ञा से आ सकता है और अल्लाह ही पर ईमानवालों को भरोसा करना चाहिए। (12) और हम क्यो न अल्लाह पर भरोसा करें जबकि हमारी जिन्दगी की राहों में उसने हमारा पथ-प्रदर्शन किया है? जो तकलीफ़ें तुम लोग हमें दे रहे हो उनपर हम सब्र से काम लेंगे और भरोसा करनेवालों का भरोसा अल्लाह ही पर होना चाहिए।''

(13,14) आख़िरकार इनकार करनेवालों ने अपने रसूलों से कह दिया कि ''या तो तुम्हें हमारे पन्थ में लौट आना होगा[6] वरना हम तुम्हें अपने देश से निकाल देंगे।'' तब उनके रब ने उनकी ओर प्रकाशना (वह्य) की कि ''हम इन ज़ालिमों को तबाह कर देंगे और उनके बाद तुम्हें ज़मीन में बसाएँगे। यह इनाम है उसका जो मेरे सामने जवाबदेही का डर रखता हो और मेरी चेतावनी से डरता हो।'' (15) उन्होंने फ़ैसला चाहा था (तो यूँ उनका फ़ैसला हुआ) और हर सरकश, सत्य के बैरी ने मुँह की खाई, (16,17) फिर इसके बाद आगे उसके लिए जहन्नम है। वहाँ उसे कचलहू का-सा पानी पीने को दिया जाएगा जिसे वह ज़बरदस्ती गले से उतारने की कोशिश करेगा और मुश्किल ही से उतार सकेगा। मौत हर तरफ़ से उसपर छाई रहेगी, मगर वह मरने न पाएगा और आगे एक कठोर अज़ाब उसकी जान का लागू रहेगा।

(18) जिन लोगों ने अपने रब के साथ इनकार की नीति अपनाई है उनके कर्मों की मिसाल उस राख की-सी है जिसे एक तूफ़ानी दिन की आँधी ने उड़ा दिया हो। वे अपने किए का कुछ भी फल न पा सकेंगे। यही परले दर्जे की गुमराही है। (19) क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह ने आसमान और ज़मीन की सृष्टि को सत्य पर ठहराया है? वह चाहे तो तुम लोगों को ले जाए और एक नही सृष्टि तुम्हारी जगह ले आए। (20) ऐसा करना उसके लिए कुछ भी कठिन हीं है।

6. इसका अर्थ यह नहीं है कि पैग़म्बर (अलै०) पैग़म्बरी के पद पर नियुक्त होने से पहले अपनी गुमराह क़ौमों के संघठन में शामिल हुआ करते थे, बल्कि इसका अर्थ यह है कि पैग़म्बरी से पहले चूँकि वे एक प्रकार का मौन जीवन व्यतीत करते थे, किसी धर्म का प्रचार और समय के किसी प्रचलित धर्म का खंडन नहीं करते थे, इसलिए उनकी क़ौम यह समझती थी कि वे हमारे ही पन्थ में हैं, और पैग़म्बरी का काम शुरू कर देने के बाद उनपर यह इलज़ाम लगाया जाता था कि वे बाप-दादा के पंथ से निकल गए हैं। हालाँकि वे पैग़म्बरी से पहले भी कभी मुशरिकों (बहुदेववादियों) के पन्थ में शामिल नहीं हुए थे कि उससे निकलने का इलज़ाम उनपर लग सकता।

(21) और ये लोग जब इकट्ठे अल्लाह के सामने खुलकर आ जाएँगे तो उस समय उनमें से जो दुनिया में कमज़ोर थे वे उन लोगों से जो बड़े बने हुए थे, कहेंगे, ''दुनिया में हम तुम्हारे पीछे चलते थे, अब क्या तुम अल्लाह के अज़ाब से हमको बचाने के लिए भी कुछ कर सकते हो?'' वे जवाब देंगे, ''अगर अल्लाह ने हमें छुटकारे की कोई राह दिखाई होती तो हम ज़रूर तुम्हें दिखा देते। अब तो समान है चाहे हम हाय-हाय करें या सब्र, किसी हाल में भी हमारे बचने का कोई उपाय नहीं।''

(22) और जब फ़ैसला चुका दिया जाएगा तो शैतान कहेगा, ''सच यह है कि अल्लाह ने जो वादे तुमसे किए थे वे सब सच्चे थे और मैंने जितने वादे किए उनमें से कोई भी पूरा न किया। मेरा तुमपर कोई ज़ोर तो था नहीं, मैंने इसके सिवा कुछ नहीं किया कि अपने मार्ग की ओर तुम्हें बुलाया और तुमने मेरे आमंत्रण को स्वीकार कर लिया। अब मुझे मलामत न करो, अपने आप ही को मलामत करो। यहाँ न मैं तुम्हारी फ़रियाद सुन सकता हूँ और न तुम मेरी। इससे पहले जो तुमने मुझे ईश्वरत्व में साझीदार बना रखा था[7] मैं उसके उत्तरदायित्व से मुक्त हूँ, ऐसे ज़ालिमों के लिए तो दर्दनाक सज़ा निश्चित है।''

(23) इसके विपरीत जो लोग दुनिया में ईमान लाए हैं और जिन्होंने अच्छे कर्म किए हैं वे ऐसे बाग़ों में दाख़िल किए जाएँगे जिनके नीचे नहरें बहती होंगी। वहाँ वे अपने रब की अनुमति से हमेशा रहेंगे, और वहाँ उनकास्वागत सलामती की मुबारकबाद से होगा। (24,25) क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह ने अच्छी बात की मिसाल किस चीज़ से दी है? उसकी मिसाल ऐसी है जैसे एक अच्छी जाति का पेड़ जिसकी जड़ ज़मीन में गहरी जमी हुई है और शाखाएँ आसमान तक पहुँची हुई हैं, हर समय वह अपने रब की अनुज्ञा से अपने फल दे रहा है। ये मिसालें अल्लाह इसलिए देता है कि लोग इनसे शिक्षा लें। (26) और बुरी बात की मिसाल एक बुरी जाति के पेड़ की-सी है जो ज़मीन के ऊपरी तल से उखाड़ फेंका जाता है, उसके लिए कोई स्थायित्व नहीं है। (27) ईमान लानेवालों को अल्लाह एक पक्की बात के आधार पर दुनिया और आख़िरत दोनों में दृढ़ता प्रदान करता है, और ज़ालिमों को अल्लाह भटका देता है। अल्लाह को अधिकार

7. यह बात स्पष्ट है कि शैतान को धारणा की हैसियत से तो कोई भी न ईश्वरत्व में साझीदार ठहराता है और न उसकी पूजा करता है, सब उसपर लानत ही भेजते हैं। अलबत्ता उसकी आज्ञापालन और दासता और उसकी रीति-नीति का अन्धतापूर्वक या जान-बूझकर अनुसरण ज़रूर किया जा रहा है और इसी बात के लिए यहाँ 'शिर्क' (साझीदार बनाने) का शब्द प्रयोग किया गया है।

है जो चाहे करे।

(28) तुमने देखा उन लोगों को जिन्होंने अल्लाह की नेमत पाई और उसे अकृतज्ञता से बदल डाला और (अपने साथ) अपनी क़ौम को भी तबाही के घर में झोंक दिया (29)—अर्थात् जहन्नम जिसमें वे झुलसे जाएँगे और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है। (30)—और अल्लाह के कुछ समकक्ष प्रतिद्वन्दी ठहरा लिए ताकि वे उन्हें अल्लाह के मार्ग से भटका दें? इनसे कहो, अच्छा मज़े कर लो, आख़िरकार तुम्हें, पलटकर जाना जहन्नम ही में हैं।

(31) ऐ नबी, मेरे जो बन्दे ईमान लाए हैं उनसे कह दो कि नमाज़ क़ायम करें और जो कुछ हमने उनको दिया है उसमें से खुले और छिपे (भलाई के रास्ते में) ख़र्च करें इससे पहले कि वह दिन आए जिसमें न ख़रीद-बिक्री होगी और न दोस्ती हो सकेगी।

(32) अल्लाह वही तो है जिसने ज़मीन और आसमानों को पैदा किया और आसमान से पानी बरसाया, फिर उसके द्वारा तुम्हारी आजीविका के लिए तरह-तरह के फल पैदा किए। जिसने नौका को तुम्हारे लिए वशीभूत किया कि समुद्र में उसके आदेश से चले और दरियाओं को तुम्हारे लिए वशवर्ती किया। (33) जिसने सूरज और चाँद को तुम्हारे लिए काम में लगा दिया कि लगातार चले जा रहे हैं और रात और दिन को तुम्हारे लिए वशवर्ती किया[8] (34) जिसने वह सब कुछ तुम्हें दिया जो तुमने माँगा।[9] अगर तुम अल्लाह की नेमतों को गिनना चाहो तो नहीं गिन सकते। वास्तविकता यह है कि इनसान बड़ा ही बेइनसाफ़ और अकृतज्ञ है।

(35) याद करो वह समय जब इबराहीम ने दुआ की थी कि "ऐ पालनहार, इस

8. "तुम्हारे लिए वशवर्ती किया" को साधारणतया लोग ग़लती से "तुम्हारे अधीन कर दिया" के अर्थ में ले लेते हैं, और फिर इस तरह की आयतों से अनोखे अर्थ पैदा करने लगते हैं। यहाँ तक कि कुछ लोग तो यहाँ तक समझ बैठे कि इन आयतों के अनुसार आसमानों और ज़मीन को अपने अधीन करना इनसान का अन्तिम लक्ष्य है। हालाँकि इनसान के लिए इन चीज़ों को वशवर्ती करने का अर्थ इसके सिवा कुछ नहीं कि अल्लाह ने इनको ऐस नियमों का पाबन्द बना रखा है जिनके कारण ये मानव के लिए लाभदायक हो गई हैं।

9. अर्थात् तुम्हारी हर प्राकृतिक माँग पूरी की, तुम्हारे जीवन के लिए जो कुछ चाहिए था जुटाया, तुम्हारे अस्तित्व के बाक़ी रहने और उसके विकास के लिए जिन-जिन साधनों की ज़रूरत थी सब उपलब्ध कर दिए।

नगर (अर्थात् मक्का) को शान्ति एवं निश्चिन्तता का नगर बना और मुझे और मेरी सन्तान को मूर्ति-पूजा से बचा, ((36) पालनहार, इन मूर्तियों ने बहुतों को गुमराही में डाला है (संभव है कि मेरी सन्तान को भी ये पथभ्रष्ट कर दें, अतः उनमें से) जो मेरे तरीक़े पर चले वह मेरा है और जो मेरे विरुद्ध तरीक़ा अपनाए तो यक़ीनन तू माफ़ करनेवाला और दयावान् है। (37) पालनहार, मैंने एक निर्जल और ऊसर घाटी में अपनी सन्तान के एक भाग को तेरे प्रतिष्ठित घर के पास ला बसाया है। पालनहार, यह मैंने इसलिए किया है कि ये लोग यहाँ नमाज़ क़ायम करें, अतः तू लोगों के दिलों को इनका इच्छुक बना और इन्हें खाने को फल दे, शायद कि ये कृतज्ञ बनें। (38) पालनहार, तू जानता है जो कुछ हम छिपाते हैं और जो कुछ व्यक्त करते हैं।"—और वास्तव में अल्लाह से कुछ भी छिपा हुआ नहीं है, न ज़मीन में, न आकाशों में (39)—"शुक्र है उस अल्लाह का जिसने मुझे इस बुढ़ापे में इसमाईल और इसहाक़ जैसे बेटे प्रदान किए, सच यह है कि मेरा रब ज़रूर दुआ सुनता है। (40) ऐ मेरे रब, मुझे नमाज़ क़ायम करनेवाला बना और मेरी सन्तान से भी (ऐसे लोग उठा जो ये काम करें)। पालनहार, मेरी प्रार्थना स्वीकार कर। (41) पालनहार, मुझे और मेरे माँ-बाप[10] को और सब ईमानवालों को उस दिन माफ़ कर देना जबकि हिसाब क़ायम होगा।"

(42) अब ये ज़ालिम लोग जो कुछ कर रहे हैं, अल्लाह को तुम उससे ग़ाफ़िल न समझो। अल्लाह तो उन्हें टाल रहा है। उस दिन के लिए जब हाल यह होगा कि आँखें फटी की फटी रह गई हैं, (43) सिर उठाए भागे चले जा रहे हैं, निगाहें ऊपर जमी हैं और दिल उड़े जाते हैं। (44) ऐ नबी, उस दिन से तुम उन्हें डरा दो जबकि अज़ाब उन्हें आ लेगा। उस समय ये ज़ालिम कहेंगे, "ऐ हमारे रब, हमें थोड़ी-सी मुहलत और दे दे, हम तेरे पैग़ाम को स्वीकर करेंगे और रसूलों का अनुसरण करेंगे।" (मगर उन्हें साफ़

10. हज़रत इबराहीम (अलै॰) ने इस क्षमा की प्रार्थना में अपने बाप को उस वादे के कारण सम्मिलित कर लिया था जो उन्होंने स्वदेश से निकलते समय किया था "मैं तुम्हारे लिए अपने रब से माफ़ी की दुआ करूँगा" (क़ुरआन,19:47)। मगर बाद में जब उन्हें एहसास हुआ कि वह तो अल्लाह का दुश्मन था तो उन्होंने उससे साफ़ तौर पर अपनी विरक्ति व्यक्त कर दी। (क़ुरआन,9:114)।

11. इस आयत से और क़ुरआन के दूसरे संकेतों से मालूम होता है कि क़ियामत में ज़मीन और आसमान बिलकुल ध्वस्त नहीं हो जाएँगे बल्कि सिर्फ़ वर्तमान भौतिक व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर डाला जाएगा। उसके बाद पहली बार नरसिंघा (सूर) में फूँक मारे जाने और अन्तिम बार नरसिंघा फूँकने के बीच एक विशेष अवधि

जवाब दिया जाएगा कि) "क्या तुम वही लोग नहीं हो जो इससे पहले क़समें खा-खाकर कहते थे कि हमारा पतन तो कभी होने का नहीं है? (45) हालाँकि तुम उन क़ौमों की बस्तियों मे रह-बस चुके थे जिन्होंने अपने ऊपर आप ज़ुल्म किया था और देख चुके थे कि हमने उनके साथ क्या व्यवहार किया और उनकी मिसालें दे-देकर हम तुम्हें समझा भी चुके थे। (46) उन्होंने अपनी सारी ही चालें चल देखीं, मगर उनकी हर चाल का तोड़ अल्लाह के पास था यद्यपि उनकी चालें ऐसी ग़ज़ब की थी कि पहाड़ उनसे टल जाएँ।"

(47) अतः ऐ नबी, तुम हरगिज़ यह न समझो कि अल्लाह कभी अपने रसूलों से किए हुए वादों के विरुद्ध करेगा। अल्लाह अपार शक्तिवाला और बदला लेनेवाला है। (48) डराओ इन्हें उस दिन से जबकि ज़मीन और आसमान बदलकर कुछ से कुछ कर दिए जाएँगे[11] और सबके सब खुलकर अल्लाह के सामने उपस्थित हो जाएँगे जो अकेला और प्रभुत्वशाली है। (49) उस दिन तुम अपराधियों को देखोगे कि ज़ंजीरों में हाथ-पाँव जकड़े हुए होंगे, (50) तारकोल के वस्त्र पहने होंगे और आग की लपटें उनके चेहरों पर छाई जा रही होंगी। (51) यह इसलिए होगा कि अल्लाह प्रत्येक जीव को उसके किए का बदला दे। अल्लाह को हिसाब लेते कुछ देर नहीं लगती।

(52) यह एक सन्देश है सब इनसानों के लिए और यह भेजा गया है इसलिए कि उसको इसके द्वारा सावधान कर दिया जाए और वे जान लें कि वास्तव में अल्लाह बस एक ही है, और जो बुद्धिमान हैं वे होश में आ जाएँ।

● ● ●

में, जिसे अल्लाह ही जानता है, ज़मीन और आसमानों का वर्तमान रूप बदल दिया जाएगा और एक दूसरी व्यवस्था एवं प्रणाली दूसरे प्राकृतिक नियमों के साथ बना दी जाएँगी। वही परलोक (आख़िरत) का संसार होगा। फिर अन्तिम बार नरसिंघा फूँकने के साथ ही सारे वे लोग जो आदम की पैदाइश से लेकर प्रलय (क़ियामत) तक पैदा हुए थे, फिर नए सिरे से ज़िन्दा किए जाएँगे और अल्लाह के सामने पेश होंगे। इसी का नाम क़ुरआन की भाषा में 'हश्र' है जिसका शाब्दिक अर्थ है समेटना और इकट्ठा करना।

15. अल-हिज्र

नाम

आयत 80 के वाक्यांश "हिज्र के लोग भी रसूलों को झुठला चुके हैं," से उद्धृत है।

अवतरणकाल

विषय-वस्तु और वर्णन-शैली से स्पष्टतः परिलक्षित होता है कि इस सूरा का अवतरणकाल सूरा 14 (इबराहीम) से संसर्गयुक्त है। इसकी पृष्ठभूमि में दो चीज़े बिलकुल स्पष्ट दिखाई देती हैं। एक यह कि सत्य की ओर बुलाते हुए नबी (सल्ल॰) को एक दीर्घ समय बीत चुका है और संबोधित लोगों की सतत् हठधर्मी, उपहास, विरोध और अत्याचार अपने चरम को पहुँच चुका है। इसके पश्चात् अब समझाने-बुझाने का अवसर कम और चेतावनी देने और डराने का अवसर ज़्यादा है। दूसरे यह कि अपनी क़ौम के कुफ़्र और इनकार और विरोध के पहाड़ तोड़ते रहने के कारण नबी (सल्ल॰) थके जा रहे हैं और दिल टूट जाने की स्थिति से बार-बार आपको सामना करना पड़ रहा है, जिसे देखकर अल्लाह आपको सांत्वना दे रहा है और आपकी हिम्मत बँधा रहा है।

विषय और केन्द्रीय विषय-वस्तु

यही दो विषय-वार्ताएँ इस सूरा में उल्लिखित हुई हैं। अर्थात् चेतावनी उन लोगों को जो नबी (सल्ल॰) के आमंत्रण का इनकार कर रहे थे और आपका मज़ाक़ उड़ाते और आपके कार्य में तरह-तरह की रुकावटें खड़ी करते थे और सांत्वना और साहस बढ़ाना नबी (सल्ल॰) का। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि यह सूरा समझाने-बुझाने और उपदेश से रिक्त है। क़ुरआन में कहीं भी अल्लाह ने मात्र चेतावनी या विशुद्ध डाँट-फटकार से काम नहीं लिया है। सख़्त से सख़्त धमकियों और भर्त्सनाओं के मध्य भी वह समझाने और उपदेश देने में कमी नहीं करता। अतएव इस सूरा में भी एक ओर एकेश्वरवाद के प्रमाणों की तरफ़ संक्षिप्त संकेत किए गए हैं और दूसरी तरफ़ आदम (अलै॰) और इबलीस का वृत्तान्त सुनाकर उपदेश दिया गया है।



15. सूरा अल-हिज्र

(मक्का में उतरी–आयतें 99)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ रा॰। ये आयतें हैं ईश्वरीय ग्रन्थ और स्पष्ट क़ुरआन की।[1]

(2) दूर नहीं कि एक समय वह आ जाए जब वही लोग जिन्होंने आज (इस्लाम का निमंत्रण स्वीकार करने से) इनकार कर दिया है, पछता-पछताकर कहेंगे कि क्या अच्छा होता कि हम आज्ञाकारी हो गए होते। (3) छोड़ो इन्हें, खाएँ-पिएँ, मज़े करें, और भुलावे में डाले रखे, इनको झूठी उम्मीद। जल्द ही इन्हें मालूम हो जाएगा। (4) हमने इससे पहले जिस बस्ती को भी तबाह किया है उसके लिए कर्म की एक विशेष मुहलत लिखी जा चुकी थी। (5) कोई क़ौम न अपने निश्चित समय से पहले तबाह हो सकती है, न उसके बाद छूट सकती है।

(6) ये लोग कहते हैं, "ऐ वह व्यक्ति, जिसपर यह ज़िक्र[2] उतरा है,[3] तू निश्चय ही दीवाना है। (7) अगर तू सच्चा है तो हमारे सामने फ़रिश्तों को ले क्यों नहीं आता?" (8)—हम फ़रिश्तों को यूँ ही नहीं उतार दिया करते। वे जब उतरते हैं तो हक़ के साथ उतरते हैं, फिर लोगों को मुहलत नहीं दी जाती।[4] (9) रहा यह ज़िक्र, तो इसको हमने उतारा है और हम ख़ुद इसके रक्षक हैं।

(10) ऐ नबी, हम तुमसे पहले बहुत-सी गुज़री हुई क़ौमों में रसूल बेज चुके हैं।

1. क़ुरआन के लिए यहाँ 'मुबीन' शब्द विशेषण के रूप में इस्तेमाल हुआ है। इसका अर्थ यह है कि ये आयतें उस क़ुरआन की हैं जो अपना अभिप्राय स्पष्ट रूप में व्यक्त करता है।
2. यहाँ 'ज़िक्र' शब्द इस्तेमाल हुआ है। यह शब्द क़ुरआन में परिभाषा के रूप में ईश्वरीय वाणी के लिए इस्तेमाल हुआ है जो सर्वथा उपदेश बनकर आती है। पहले जितनी किताबें नबियों पर उतरी थीं वे सब भी 'ज़िक्र' थीं और यह क़ुरआन भी ज़िक्र है। 'ज़िक्र' का मूल अर्थ है : 'याद दिलाना' 'होशियार करना' और 'नसीहत करना'।
3. यह वाक्य वे लोग व्यंग्य के रूप में कहते थे। उनको तो यह स्वीकार ही नहीं था कि यह अनुस्मारक (ज़िक्र) नबी (सल्ल॰) पर उतरा हैं, न इसे स्वीकार करने के बाद वे आपको दीवाना कह सकते थे। वास्तव में उनके कहने का अर्थ यह था कि "ऐ वह व्यक्ति, जिसका दावा यह है कि मुझपर यह अनुस्मरक उतरा है।"

(11) कभी ऐसा नहीं हुआ कि उनके पास कोई रसूल आया हो और उन्होंने उसकी हँसी न उड़ाई हो। (12) अपराधियों के दिलों में तो हम इस ज़िक्र को इसी तरह (सलाख़ की भाँति) गुज़ारते हैं।[5] (13) वे इसपर ईमान नहीं लाया करते। प्राचीन काल से इस आचार के लोगों की यही रीति चली आ रही है। (14,15) अगर हम उनपर आसमान का कोई दरवाज़ा खोल देते और वे दिन-दहाड़े उसमें चढ़ने बी लगते तब भी वे यही कहते कि हमारी आँखों को धोखा हो रहा है, बल्कि हमपर जादू कर दिया गया है।

(16,17) यह हमारी कार्य-कुशलता है कि आसमान में हमने बहुत-से मज़बूत क़िले[6] बनाए, उनको देखनेवालों के लिए (तारों से) सुसज्जित किया, और हर फिटकारे हुए शैतान से उनको सुरक्षित कर दिया। (18) कोई शैतान उनमें राह नहीं पा सकता, यह और बात है कि कुछ सुन-गुन ले ले।[7] और जब वह सुन-गुन लेने की कोशिस करता है तो एक प्रदीप्त अग्निशिखा उसका पीछा करती है।[8]

(19,20) हमने ज़मीन को फैलाया, उसमें पहाड़ जमाए, उसमें हर तरह की

4. अर्थात् फ़रिश्ते सिर्फ़ तमाशा दिखाने के लिए नहीं उतारे जाते कि जब किसी क़ौम ने कहा कि बुलाओ फ़रिश्तों को और वे तुरन्त आ उपस्थित हों। फ़रिश्तों को भेजने का समय तो वह अन्तिम समय होता है जब किसी क़ौम का फ़ैसला चुका देने का निश्चय कर लिया जाता है। "हक़ के साथ उतरते हैं" का अर्थ "हक़ लेकर उतरना" है। अर्थात् वे अल्लाह का न्यायानुकूल निर्णय लेकर आते हैं और उसे लागू करके छोड़ते हैं।
5. मूल में 'नसलुलुहू' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'सलक' का अर्थ अरबी भाषा में किसी चीज़ को दूसरी चीज़ में चलाना, गुज़ारना और पिरोना होता है, जैसे तागे को सुई के नाके में गुज़ारना। अतः आयत का अर्थ यह है कि ईमानवालों के अन्दर तो यह अनुस्मारक हृदय की ठंडक और आत्मा का आहार बनकर उतरता है, मगर अपराधियों के दिलों में यह फ़लीता बनकर लगता है और उनके अन्दर उसे सनकर ऐसी आग भड़क उठत है मानो एक गर्म सलाख़ थी जो छाती के पार हो गई।
6. मूल ग्रन्थ में 'बुरूज' शब्द इस्तेमाल हुआ है. बुर्ज अरबी भाषा में क़िले, महल और मज़बूत इमारत को कहते हैं। आगे जो कुछ कहा गया है उसपर विचार करने से ख़याल होता है कि शायद इससे मुराद ऊपरी लोक के वे क्षेत्र हैं जिनमें से हर क्षेत्र को अत्यन्त सुदृढ़ सीमाओं ने दूसरे क्षेत्र से अलग कर रखा है। इस अर्थ के अनुसार हम बुरूज को सुरक्षित क्षेत्रों के अर्थ में लेना ज़्यादा सही समझते हैं।

वनस्पति ठीक-ठीक नपी-तुली मात्रा के साथ उगाई, और उसमें आजीविका के साधन जुटाए, तुम्हारे लिए भी और सृष्टि के उन बहुत-से प्राणियों के लिए भी जिनके आहारदाता तुम नहीं हो। (21) कोई चीज़ ऐसी नहीं जिसके ख़जाने हमारे पास न हों, और जिस चीज़ को भी हम उतारते हैं एक निश्चित मात्र में उतारते हैं। (22) फलदायक हवाओं को हम ही भेजते हैं, फिर आसमान से पानी बरसाते हैं, और उस पानी से तुम्हें सिंचित करते हैं। इस दौलत के ख़ज़ाने के अधिकारी तुम नहीं हो। (23) ज़िन्दगी और मौत हम देते हैं, और हम ही सबके उत्तराधिकारी होनेवाले हैं।[9] (24) पहले जो लोग तुममें से हो गुज़रे हैं उनको भी हमने देख रखा है, और बाद के आनेवाले भी हमारी निगाह में हैं। (25) यक़ीनन तुम्हारा रब इन सबको इकट्ठा करेगा, वह तत्त्वदर्शी भी है और सर्वज्ञ भी।

(26) हमने इनसान को सड़ी हुई मिट्टी के सूखे गारे से बनाया।[10] (27) और उससे पहले जिन्नों को हम आग की लपट से पैदा कर चुके थे।[11] (28) फिरयाद करो

7. अर्थात् वे शैतान जो अपने मित्रों को ग़ैब (परोक्ष) की ख़बरें लाकर देने की कोशिस करते हैं उनके पास वास्तव में परोक्ष के ज्ञान के साधन बिलकुल नहीं हैं। ब्रह्माण्ड उनके लिए खुला नहीं पड़ा है कि जहाँ चाहें जाएँ और अल्लाह के रहस्य मालूम करें। वे सुन-गुन लेने की कोशिश ज़रूर करते हैं, लेकिन वास्तव में उनके पल्ले कुछ नहीं पड़ता।
8. यहाँ 'शिहाबुम-मुबीन' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ है प्रकाशमान ज्वाला। दूसरे स्थान पर क़ुरआन मजीद में इसके लिए 'शिहाबे साक़िब' का शब्द इस्तेमाल हुआ है, अर्थात् 'अन्धकार को भेदनेवाली अग्निशिखा'। इससे मुराद ज़रूरी नहीं कि वह टूटनेवाला तारा ही हो जिसे हमारी भाषा में पारिभाषिक रूप में 'शिहाबे साक़िब' (उल्का, तारा टूटना) कहा जाता है। संभव है कि ये दूसरी किसी क़िस्म की किरणें हों, उदाहरणार्थ ब्रह्माण्ड किरणें (Cosmic rays) या उनसे भी ज़्यादा तेज़ कोई और तरह की चीज़ जिसका अभी हमें ज्ञान न हुआ हो। फिर यह भी संभव है कि इससे मुराद यही टूटते तारे हों जिन्हें कभी-कभी हमारी आँखें ज़मीन की ओर गिरते हुए देखती हैं और यही ऊपरी लोक की ओर शैतानों की उड़ान में बाधक सिद्ध होते हों।
9. अर्थात् तुम्हारे बाद हम ही बाक़ी रहनेवाले हैं। तुम्हें जो कुछ भी मिला हुआ है सिर्फ़ अस्थायी उपभोग के लिए मिला हुआ है। आख़िरकार हमारी दी हुई हर चीज़ को यूँ ही छोड़कर तुम खाली हाथ चले जाओगे और ये सब चीज़ें ज्यों की त्यों हमारे ख़जाने में रह जाएँगी।

उस अवसर को जब तुम्हारे रब ने फ़रिश्तों से कहा कि "मैं सड़ी हुई मिट्टी के सूखे गारे से एक इनसान पैदा कर रहा हूँ। (29) जब मैं उसे पूरा बना चुकूँ और उसमें अपनी रूह (आत्मा) से कुछ फूँक दूँ तो तुम सब उसके आगे सजदे में गिर जाना।" (30) अतएव सब फ़रिश्तों ने सजदा किया, (31) सिवाय इबलीस के कि उसने सजदा करनेवालों का साथ देने से इनकार कर दिया। (32) रब ने पूछा, "ऐ इबलीस, तुझे क्या हुआ कि तूने सजदा करनेवालों का साथ न दिया?" (33) उसने कहा, "मेरा यह काम नहीं है कि मैं उस इनसान को सजदा करूँ जिसे तूने सड़ी हुई मिट्टी के सूखे गारे से पैदा किया है।" (34) रब ने कहा, "अच्छा तो निकल जा यहाँ से क्योंकि तू फिटकारा हुआ (मरदूद) है, (35) और अब बदले के दिन तक तुझपर फिटकार है।" (36) उसने कहा, "मेरे रब, यह बात है तो फिर मुझे उस दिन तक के लिए मुहलत दे, जबकि सारे इनसान दुबारा उठाए जाएँगे।" (37,38) कहा, "अच्छा, तुझे मुहलत है उस दिन तक जिसका समय हमें मालूम है।' (39,40) वह बोला, "मेरे रब, जैसा तूने मुझे बहकाया, उसी तरह अब मैं ज़मीन में उनके लिए मनमोहकता पैदा करके उन सबको बहका दूँगा, सिवाय तेरे उन बन्दों के जिन्हें तूने उनमें से ख़ालिस कर लिया हो।" (41) कहा, "यह मार्ग है जो सीधा मुझ तक पहुँचता है।[12] (42,43) बेशक जो मेरे वास्तविक बन्दे हैं उनपर तेरा बस न चलेगा। तेरा बस तो सिर्फ़ उन बहके हुए लोगों ही पर चलेगा जो तेरा अनुसरण

10. यहाँ क़ुरआन इस बात को स्पष्ट करता है कि इनसान पाशविक जानवरों की स्थियों से उन्नति करता हुआ इनसानियत के दायरे में नहीं आया है, जैसा कि नवीन युग के डारविनवाद से प्रभावित क़ुरआन के टीकाकार सिद्ध करने की कोशिश कर रहे हैं, बल्कि उसकी सृष्टि का आरंभ सीधे पार्थिव पदार्थों से हुआ है जिनकी स्थिति को अल्लाह ने 'सड़ी हुई मिट्टी के सूखे गारे' के शब्दों में स्पष्ट किया है। ये शब्द स्पष्टतः बताते हैं कि ख़मीर उठी हुई मिट्टी का एक पुतला बनाया गया था जो बनने के बाद सूखा और फिर उसके अन्दर रूह (आत्मा) फूँकी गई।
11. यहाँ 'समूम' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'समूम' गर्म हवा को कहते हैं और आग को 'समूम' से सम्बद्ध करने की स्थिती में इसका अर्थ आग के बजाय उच्च ताप के हो जाता है। इससे उन स्थलों की व्याख्या हो जाती है जहाँ क़ुरआन मजीद में यह कहा गया है कि जिन्न आग से पैदा किए गए हैं।
12. यहाँ 'हाज़ा सिरातुन अलैया मुस्तक़ीम' के शब्द आए हैं। इसके दो अर्थ हो सकते हैं। एक अर्थ वह जो हमने अनुवाद में बयान किया है और दूसरा अर्थ यह है कि यह बात ठीक है मैं भी इसका पाबन्द रहूँगा।

करें,[13] और उन सबके लिए जहन्नम की धमकी है।''

(44) यह जहन्नम, (जिससे इबलीस के अनुयायियों को डराया गया है) उसके सात दरवाज़े हैं, हर दरवाज़े के लिए उनमें से एक हिस्सा निश्चित कर दिया गया है।[14] (45,46) इसके विपरीत डर रखनेवाले लोग बाग़ों और झरनों में होंगे और उनसे कहा जाएगा कि दाख़िल हो जाओ इनमें सलामती के साथ निर्भयतापूर्वक। (47) उनके दिलों में जो थोड़ी-बहुत खोट-कपट होगी उसे हम निकाल देंगे, वे आपस में भाई-भाई बनकर आमने-सामने तख़्तों पर बैठेंगे। (48) उन्हें न वहाँ किसी कष्ट से पाला पड़ेगा और न वे वहाँ से निकाले जाएँगे।

(49) ऐ नबी, मेरे बन्दों को सूचित कर दो कि मैं बहुत माफ़ करनेवाला और दयावान हूँ। (50) मगर इसके साथ मेरा अज़ाब भी बहुत ही दर्दनाक अज़ाब है।

(51) और इन्हें तनिक इबराहीम के मेहमानों का क़िस्सा सुनाओ। (52) जब वे आए उसके यहाँ और कहा, ''सलाम हो तुमपर'' तो उसने कहा, ''हमें तुमसे डर लगता है।'' (53) उन्होंने जवाब दिया, ''डरो नहीं, हम तुम्हें एक ज्ञानी लड़के की ख़ुशख़बरी देते हैं।''[15] (54) इबराहीम ने कहा, ''क्या तुम इस बुढ़ापे में मुझे सन्तान की ख़ुशख़बरी

13. इस वाक्य का दूसरा अर्थ यह हो सकता है कि मेरे बन्दों (अर्थात् सामान्य लोगों) पर तुझे कोई प्रभुत्व प्राप्त न होगा कि तू उन्हें ज़बरदस्ती अवज्ञाकारी बना दे, हाँ जो ख़ुद ही बहके हुए हों और ख़ुद ही तेरे पीछे चलना चाहें उन्हें तेरी राह पर जाने के लिए छोड़ दिया जाएगा, उन्हें हम ज़बरदस्ती इससे रोकने की कोशिश न करेंगे।

14. जहन्नम के ये दरवाज़े संभवतः उन गुमराहियों और गुनाहों के लिहाज़ से होंगे जिनको अपनाकर आदमी अपने लिए दोज़ख़ की राह खोलता है। उदाहरणार्थ : कोई नास्तिकता के रास्ते से दोज़ख़ की ओर जाता है, कोई अनेकेश्वरवाद के रास्ते से, कोई कपटाचार के रास्ते से, कोई इच्छाओं की दासताओं और अवज्ञा एवं दुस्साहस के रास्ते से, कोई अन्याय एवं अत्याचार और लोगों को सताने के रास्ते से, कोई मार्ग-भ्रष्टता के प्रचार और अधर्म की स्थापना के रास्ते से और कोई अश्लीलता और बुराई के प्रचार के मार्ग से। जिस व्यक्ति का जो अवगुण ज़्यादा उभरा हुआ होगा उसी के अनुसार जहन्नम की ओर जाने के लिए उसका मार्ग निश्चित होगा।

15. अर्थात् हज़रत इसहाक़ (अलै०) के जन्म की ख़ुशख़बरी जैसा कि सूरा 11 (हूद) में स्पष्टतः बयान हुआ है।

देते हो? तनिक सोचो तो सही कि यह कैसी ख़ुशख़बरी तुम मुझे दे रहे हो?'' (55) उन्होंने जवाब दिया, ''हम तुम्हें सच्ची ख़ुशख़बरी दे रहे हैं, तुम निराश न हो।'' (56) इबराहीम ने कहा, ''अपने रब की दयालुता से निराश तो पथभ्रष्ट लोग ही हुआ करते हैं।'' (57) फिर इबराहीम ने पूछा, ''ऐ अल्लाह के भेजे हुए, वह मुहिम क्या है जिसपर आप लोग पधारे हैं?'' (58) वे बोले, ''हम एक अपराधी क़ौम की ओर भेजे गए हैं। (59,60) सिर्फ़ लूत के घरवाले इससे अलग हैं, उन सबको हम बचा लेंगे, सिवाय उसकी बीवी के जिसके लिए (अल्लाह कहता हैं कि) हमने नियत कर दिया है कि वह पीछे रह जानेवालों में सम्मिलित रहेगी।''

(61,62) फिर जब ये दूत लूत के यहाँ पहुँचे तो उसने कहा, ''आप लोग अजनबी मालूम होते हैं।'' (63) उन्होंने जवाब दिया, ''नहीं, बल्कि हम वही चीज़ लेकर आए हैं जिसके आने में ये लोग सन्देह कर रहे थे। (64) हम तुमसे सच कहते हैं कि हम हक़ के साथ तुम्हारे पास आए हैं। (65) अतः अब तुम कुछ रात रहे अपने घरवालों को लेकर निकल जाओ और ख़ुद उनके पीछे-पीछे चलो। तुममें से कोई पलटकर न देखे। (66) बस सीधे चले जाओ जिधर जाने का तुम्हें हुक्म दिया जा रहा है।'' और उसे हमने अपना यह फ़ैसला पहुँचा दिया कि प्रातःकाल होते-होते उन लोगों की जड़ काट दी जाएगी।

(67) इतने में नगर के लोग ख़ुशी के मारे विकल होकर लूत के घर चढ़े आए। (68) लूत ने कहा, ''भाइयो, ये मेरे मेहमान हैं, मेरी फ़ज़ीहत न करो, (69) अल्लाह से डरो, मुझे अपमानित न करो।'' (70) वे बोले, ''क्या हम बार-बार तुम्हें मना नहीं कर चुके हैं कि दुनिया-भर के ठीकेदार न बनो?'' (71) लूत ने (विवश होकर) कहा, ''अगर तुम्हें कुछ करना ही है तो ये मेरी बेटियाँ मौजूद हैं।''[16]

(72) तेरी जान की क़सम ऐ नबी, उस समय उनपर एक नशा-सा चढ़ा हुआ था जिसमें वे आपे से बाहर हुए जाते थे। (73) आख़िरकार पौ फटते ही उनको एक प्रचण्ड धमाके ने आ लिया (74) और हमने उस बस्ती को तलपट करके रख दिया और उनपर पकी हुई मिट्टी के पत्थरों की वर्षा कर दी।

(75) इस घटना में बड़ी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो बुद्धिमान हैं। (76,77) और वह भू-भाग (जहाँ यह घटना घटित हुई थी) सार्वजनिक मार्ग पर स्थित है,[17] इसमें शिक्षा-सामग्री है उन लोगों के लिए जो ईमानवाले हैं।

16. व्याख्या के लिए देखें सूरा 11 (हूद), टिप्पणी 26,27।

(78,79) और ऐकावाले[18] ज़ालिम थे, तो देख लो कि हमने भी उनसे बदला लिया, और इन दोनों क़ौमों के उजड़े हुए क्षेत्र खुले रास्ते पर स्थित है।[19]

(80) हिज्र के लोग भी रसूलों को झुठला चुके है। (81) हमने अपनी आयतें उनके पास भेजीं, अपनी निशानियाँ उनको दिखाई मगर वे सबकी उपेक्षा ही करते रहे। ((82) वे पहाड़ को काट-छाँटकर मकान बनाते थे और अपनी जगह बिलकुल निर्भय और निश्चिन्त थे। (83,84) आख़िरकार एक ज़बरदस्त धमाके ने उनको सुबह होते आ लिया और उनकी कमाई उनके कुछ काम न आई।

(85) हमने ज़मीन और आसमानों को और उनमें सब मौजूद चीज़ों को सत्य के सिवा किसी अन्य आधार पर पैदा नहीं किया है, और फ़ैसले की घड़ी यक़ीनन आनेवाली है, अतः एए नबी, तुम (इन लोगों की अशिष्टताओं पर) शिष्टतानुकूल क्षमा से काम लो। (86) यक़ीनन तुम्हारा रब सबका स्रष्टा है और सब कुछ जानता है। (87) हमने तुमको सात ऐसी आयतें दे रखी हैं जो बार-बार दोहराई जाने के योग्य है,[20] और तुम्हें महान क़ुरआन प्रदान किया है। (88) तुम उस सांसारिक सामग्री की ओर आँख उठाकर न देखो जो हमने इनमें से विभिन्न तरह के लोगों को दे रखी है, और न इनकी हालत पर अपना दिल कुढ़ाओ। इन्हें छोड़कर ईमान लानेवालों की ओर झुको और (89) (न माननेवालों से) कह दो कि ''मैं तो साफ़-साफ़ चेतावनी देनेवाला हूँ।'' (90,91) यह उसी तरह की चेतावनी है जैसे हमने उन विच्छेद करनेवालों की ओर भेजी थी (जिन्होंने अपने क़ुरआन को टुकड़े-टुकड़े कर डाला है।[21] (92,93) तो

17. अर्थात् हिजाज से सीरिया, और इराक़ से मिस्र जाते हुए वह तबाह हुआ इलाक़ा रास्ते में पड़ता है और साधारणतया क़ाफ़िलों के लोग तबाही के उन लक्षणों को देखते हैं जो इस पूरे क्षेत्र में आज तक स्पष्टतः पाए जाते हैं।
18. अर्थात् हज़रत शुऐब की क़ौम के लोग, ऐका 'तबूक' का प्राचीन नाम था।
19. मदयन और ऐकावालों का क्षेत्र भी हिजाज़ से फ़िलस्तीन और सीरिया जाते हुए रास्ते में पड़ता है।
20. अर्थात् सूरा 1 (फ़ातिहा) की आयतें, पहले की विद्वानों का यही मत है, बल्कि इमाम बुख़ारी ने दो ''मरफ़ू'अ'' रिवायतें भी इस बात के प्रमाण मेंप्रस्तुत की हैं कि स्वयं नबी (सल्ल०) ने 'सबउम मिनल मसानी' (सात दोहराई जानेवाली) से मुराद सूरा फ़ातिहा बताई है।
21. अर्थात् उस किताब को जो क़ुरआन की तरह उन्हें दी गई थी टुकड़े-टुकड़े कर डाला, उसके किसी भाग का पालन किया और किसी भाग को पीठ पीछे डाल दिया।

क़सम है तेरे रब की, हम ज़रूर उन सबसे पूछेंगे कि तुम क्या करते रहे हो।

(94) अतः ऐ नबी, जिस चीज़ का तुम्हें आदेश दिया जा रहा है उसे हाँक-पुकारकर कह दो और मुशरिकों (बहुदेववादियों) की तनिक भी चिन्ता न करो। (95,96) तुम्हीर ओर से हम उन हँसी उड़ानेवालों की ख़बर लेने के लिए काफ़ी हैं जो अल्लाह के साथ किसी और को भी रब ठहराते हैं। जल्द ही उन्हें मालूम हो जाएगा।

(97) हमें मालूम है कि जो बातें ये लोग तुमपर बनाते हैं उनसे तुम्हारे दिल को बड़ी कुढ़न होती हैं। (98) (इसका इलाज यह है कि) अपने रब की हम्द (स्तुति) के साथ उसकी तसबीह करो, उसकी सेवा में सजदा करो, (99) और उस अन्तिम घड़ी तक अपने रब की बन्दगी करते रहो जिसका आना यक़ीनी है।



16. अन-नह्ल

नाम

आयत 68 के वाक्यांश ''और देखो तुम्हारे रब ने मधु-मक्खी (नहल) पर यह बात वह्य कर दी'' से उद्धृत है। यह भी मात्र लक्षण है, न कि विषय-वस्तु का शीर्षक।

अवतरणकाल

विभिन्न आंतरिक साक्ष्यों से इसके अवतरणकाल पर प्रकाश पड़ता है। उदाहरणार्थ, आयत 41 के वाक्यांश ''जो लोग ज़ुल्म सहने के बाद अल्लाह के लिए अपना घरबार छोड़ (हिज़रत कर) गए हैं'' से स्पष्टतः मामूल होता है कि उस समय हबशा की हिजरत पेश आ चुकी थी। आयत 106 से मालूम होता है कि उस समय ज़ुल्म और अत्याचार घोर रूप से हो रहा था और यह सवाल पैदा हो गया था कि यदि कोई व्यक्ति असहनीय पीड़ा से विवश होकर 'कुफ्र (अधर्म) के शब्द कह बैठे तो उसका क्या हुक्म है। आयत 112-114 का स्पष्ट संकेत इस तरफ़ है कि मक्का में जो भारी अकाल पड़ा था वह इस सूरा के अवतरण के समय समाप्त हो चुका था। इस सूरा में एक आयत 115 ऐसी है जिसका हवाला सूरा 6 (अनआम) की आयत 119 में दिया गया है और दूसरी आयत 118 ऐसी है जिसमें सूरा 6 (अनआम) की आयत 146 का हवाला दिया गया है। यह इस बात का प्रमाण है कि इन दोनों सूरतों का अवतरणकाल परस्पर निकटवर्ती है।

इन साक्ष्यों से पता चलता है कि इस सूरा का अवतरणकाल भी मक्का का अन्तिम कालखण्ड ही है।

शीर्षक और केन्द्रीय विषय-वस्तु

बहुदेववाद का खण्डन, एकेश्वरवाद का प्रमाणीकरण, पैग़म्बर के आमंत्रण को स्वीकार न करने के बुरे परिणाम पर चेतावनी और हित-उपदेश, और सत्य के विरोध पर ताड़ना।

वार्ताएँ

सूरा का आरंभ बिना किसी भूमिका के सहसा एक चेतावनीयुक्त वाक्य से होता है। मक्का के काफ़िर (पैग़म्बर से) बार-बार कहते थे कि ''जब हम तुम्हें झुठला चुके हैं और खुल्लम-खुल्ला तुम्हारा विरोध कर रहे हैं तो आख़िर वह ईश्वरीय यातना क्यों नहीं आ जाती, जिसकी तुम हमें धमकियाँ देते हो।'' इसपर कहा कि मूर्खो! ईश्वरीय यातना

तो तुम्हारे सिर पर खड़ी है, अब उसके टूट पड़ने के लिए जल्दी न मचाओ बल्कि जो तनिक अवसर शेष है उससे लाभ उठाकर बात समझने की कोशिश करो। इसके पश्चात् तुरन्त ही समझाने हेतु अभिभाषण आरंभ हो जाता है और निम्नांकित विषय बार-बार एक के बाद दूसरे सामने आने शुरू होते हैं :

1. दिल को छूनेवाले प्रमाण और बाह्य जगत् और अन्तरात्मा के परिलक्षित खुले-खुले साक्ष्यों से समझाया जाता है कि बहुदेववाद लक्ष्यहीन और एकेश्वरवाद ही सत्य है।

2. इनकार करनेवालों के आक्षेपों, संदेहों, तर्कों और हीले-बहानों का एक-एक करके उत्तर दिया जाता है।

3. असत्य पर आग्रह और सत्य के मुक़ाबले में अहंकार के दुष्परिणामों से डराया जाता है।

4. उन नैतिक और व्यावहारिक परिवतनों को संक्षिप्त किन्तु हृदयग्राही ढंग से बयान किया जाता है, जो मुहम्मद (सल्ल०) का लाया हुआ धर्म मानव जीवन में लाना चाहता है।

5. नबी (सल्ल०) और आपके साथियों की ढारस बँधाई जाती है और साथ-साथ यह भी बताया जाता है कि इनकार करनेवालों के विरोधी और अत्याचारों के मुक़ाबले में उनकी नीति क्या होनी चाहिए।



16. सूरा अन-नह्‌ल

(मक्का में उतरी–आयतें 128)

अल्लाह के नाम से बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) आ गया अल्लाह का फ़ैसला,[1] अब उसके लिए जल्दी न मचाओ। पाक है वह और उच्चतर है उस शिर्क से जो ये लोग कर रहे हैं। (2) वह इस रूह[2] को अपने जिस बन्दे पर चाहता हैं अपने आदेश से फ़रिश्तों के द्वारा उतार देता हैं (इस आदेश के साथ कि लोगों को) "सावधान कर दो, मेरे सिवा कोई तुम्हारा पूज्य प्रभु नहीं है, अतः तुम मुझी से डरो।" (3) उसने आसमान और ज़मीन को सत्यानुकूल पैदा किया है, वह बहुत उच्च और श्रेष्ठ है उस शिर्क से जो ये लोग करते हैं।

(4) उसने इनसान को एक ज़रा-सी बूँद से पैदा किया और देखते-देखते स्पष्टतः वह एक झगड़ालू प्राणी बन गया।[3] (5) उसने जानवर पैदा किए जिनमें तुम्हारे लिए वस्त्र भी हैं और ख़ुराक भी, और तरह-तरह के दूसरे फ़ायदे भी। (6) उनमें तुम्हारे लिए सौन्दर्य है जबकि सुबह तुम उन्हें चरने के लिए भेजते हो और जबकि शाम उन्हें वापस लाते हो। (7) वे तुम्हारे लिए बोझ ढोकर ऐसे-ऐसे स्थानों तक ले जाते हैं जहाँ तुम जान-

1. अर्थात् उसके प्रकट और लागू होने का समय निकट आ गया है। संभवतः इस फ़ैसले से मुराद नबी (सल्ल॰) की मक्का से हिजरत (वतन त्यागना) है जिसका आदेश थोड़े समय के बाद ही दे दिया गया। क़ुरआन के अध्ययन से मालूम होता है कि नबी जिन लोगों के बीच भेजा जाता है, वे जब इनकार की आख़िरी हद तक पहुँच जाते हैं तो नबी को 'हिजरत' (वतन त्यागने) का आदेश दे दिया जाता है और यही आदेस उनके भाग्य का फ़ैसला कर देता है। इसके बाद या तो उनपर सर्वनाश कर देनेवाला अज़ाब आ जाता है, या फिर नबी और उसके अनुयायियों के हाथों उनकी जड़ काटकर रख दी जाती है।
2. रुह से मुराद है पैग़म्बरी की रुह और प्रकाशना जिससे भरकर नबी काम और कलाम करता है।
3. इसके दो अर्थ हो सकते हैं और संभवतः दोनों ही मुराद हैं। एक यह कि अल्लह ने वीर्य की तुच्छ-सी बूँद से वह इनसान पैदा किया जो बहस और तर्क-वितर्क की योग्यता रखता है और अपने अभिप्राय के लिए प्रमाण प्रस्तुत कर सकता है। दूसरे यह कि जिस इनसान को अल्लाह ने वीर्य जैसी तुच्छ चीज़ से पैदा किया है, उसके अहंकार की उद्दण्डता तो देखो कि वह ख़ुद अल्लाह ही के मुक़ाबले में झगड़ने पर उतर आया है।

तोड़ परिश्रम के बिना नहीं पहुँच सकते। वास्तव में तुम्हारा रब बड़ा ही करुणामय और दयावान है। (8) उसने घोड़े और ख़च्चर और गधे पैदा किए ताकि तुम उनपर सवार हो और वे तुम्हारी ज़िन्दगी की शोभा बनें। वह और बहुत-सी चीज़ें (तुम्हारे फ़ायदे के लिए) पैदा करता है जिनका तुम्हें ज्ञान तक नहीं है।[4] (9) और अल्लाह ही के ज़िम्मे है सीधा रास्ता बताना जबकि रास्ते टेढ़े भी पाए जाते हैं। अगर वह चाहता तो तुम सबको मार्ग दिखा देता।

(10) वही है जिसने आसमान से तुम्हारे लिए पानी बरसाया जिससे तुम्हें ख़ुद पीने को मिलता है और तुम्हारे जानवरों के लिए भी चारा पैदा होता है। (11) वह उस पानी के द्वारा खेतियाँ उगाता है और ज़ैतून और खजूर और अंगूर और तरह-तरह के दूसरे फल पैदा करता है। इसमें एक बड़ी निशानी है उन लोगों के लिए जो सोच-विचार करते हैं।

(12) उसने तुम्हारी भलाई के लिए रात और दिन को और सूरज और चाँद को वशीभूत कर रखा है और सब तारे भी उसी के आदेश से वशीभूत हैं। इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो बुद्धि से काम लेते हैं। (13) और ये जो बहुत-सी रंग-बिरंग की चीज़ें उसने तुम्हारे लिए ज़मीन में पैदा कर रख़ी हैं, इनमें भी ज़रूर निशानी है उन लोगों के लिए जो शिक्षा लेनेवाले हैं।

(14) वही है जिसने तुम्हारे लिए समुद्र को वशीभूत कर रखा है ताकि तुम उससे तरोताज़ा गोश्त (मांस) लेकर खाओ और उससे साज-सज्जा की वे चीज़े निकालो जिन्हें तुम पहना करते हो। तुम देखते हो कि नौका समुद्र का सीना चीरती हुई चलती है। ये सब कुछ इसलिए है कि तुम अपने रब का अनुग्रह (फ़ज़्ल) तलाश करो[5] और उसके कृतज्ञ बनो।

(15) उसने ज़मीन में पहाड़ों की मेखें (खूँटे) गाड़ दी ताकि ज़मीन तुमको लेकर ढुलक न जाए। उसने नदियाँ प्रवाहित की और प्राकृतिक मार्ग बनाए ताकि तुम मार्ग पाओ। (16) उसने ज़मीन में मार्ग बतानेवाले चिह्न रख दिए, और तारों से भी लोग मार्ग पाते हैं।

4. अर्थात् बहुत-सी ऐसी चीज़ें हैं जो इनसान की भलाई के लिए काम कर रही हैं और इनसान को ख़बर तक नहीं है कि कहाँ-कहाँ कितने सेवक उसकी सेवा में लगे हुए हैं और क्या सेवा कर रहे हैं।
5. अर्थात् हलाल तरीक़ों से अपनी रोज़ी हासिल करने की कोशिस करो।

(17) फिर क्या वह जो पैदा करता है और वे जो कुछ भी पैदा नहीं करते, दोनों समान हैं? क्या तुम होश में नहीं आते? (18) अगर तुम अल्लाह की नेमतों (कृपादान) को गिनना चाहो तो गिन नहीं सकते, वास्तविकता यह है कि वह बड़ा ही क्षमाशील और दयावान है, (19) हालाँकि वह तुम्हारे खुले को भी जानता है और छिपे को भी।

(20) और वे दूसरी हस्तियाँ जिन्हें अल्लाह को छोड़कर लोग पुकारते हैं, वे किसी चीज़ की भी स्रष्टा नहीं है बल्कि ख़ुद पैदा की हुई हैं। (21) निर्जीव हैं न कि जीवित। और उनको कुछ मालूम नहीं हैं कि उन्हें कब (दोबारा जीवित करके) उठाया जाएगा।[6]

(22) तुम्हारा ख़ुदा बस एक ही ख़ुदा है। मगर जो लोग आख़िरत (परलोक) को नहीं मानते उनके दिलों में इनकार बसकर रह गया है और वे घमण्ड में पड़ गए हैं। (23) अल्लाह यक़ीनन इनकी सब करतूत जानता है छिपी हुई भी और खुली हुई भी। वह उन लोगों को हरगिज़ पसन्द नहीं करता जो मन के अहंकार में पड़े हुए हों।

(24) और जब कोई उनसे पूछता है कि तुम्हारे रब ने यह क्या चीज़ उतारी है,[7] तो कहते हैं, ''अजी वह तो अगले समयों की पुरातन कहानियाँ हैं।'' (25) ये बातें वे इसलिए करते हैं कि क़ियामत के दिन अपने बोझ भी पूरे उठाएँ, और साथ-साथ उन लोगों के कुछ बोझ भी समेटें जिन्हें ये अज्ञान के कारण पथभ्रष्ट कर रहे हैं। देखो, कैसी कठिन जिम्मेदारी है जो ये अपने सिर ले रहे हैं! (26) इनसे पहले भी बहुत-से लोग (सत्य को नीचा दिखाने के लिए) ऐसी ही मक्कारियाँ कर चुके हैं, तो देख लो कि अल्लाह ने उनकी मक्कारी की इमारत जड़ से उखाड़ फेंकी और उसकी छत ऊपर से उनके सिर पर आ रही और ऐसी दिशा से उनपर अज़ाब आया जिधर से उसके आने का उनको गुमान तक न था। (27) फिर क़ियामत के दिन अल्लाह उन्हें अपमानित करेगा और उनसे कहेगा, ''बताओ अब कहाँ हैं मेरे वे साझीदार जिनके लिए तुम (सत्यवादियों से) झगड़े किया करते थे?—जिन लोगों को दुनिया में ज्ञान मिला था वे कहेंगे, ''आज

6. ये शब्द स्पष्ट रूप से बता रहे हैं कि यहाँ विशेष रूप से जिन बनावटी पूज्यों का खण्डन किया जा रहा है वे मरे हुए इनसान हैं, क्योंकि फ़रिश्ते तो ज़िन्दा हैं, मुर्दा नहीं हैं और लकड़ी-पत्थर की मूर्तियों के बारे में दोबारा ज़िन्दा करके उठाए जाने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

7. अरब में जब नबी (सल्ल०) की चर्चा होने लगी तो बाहर के लोग मक्कावालों से आपके और क़ुरआन के बारे में सवाल और पूछ-ताछ करते थे।

अपमान और दुर्भाग्य है इनकार करनेवालों के लिए।'' (28)—हाँ, उन्हीं इनकार करनवालों के लिए जो अपने आपपर ज़ुल्म करते हुए जब फ़रिश्तों के हाथों पकड़े जाते हैं तो (उद्‌दण्डता त्यागकर) तुरन्त डगें डाल देते हैं और कहते हैं, ''हम तो कोई बुरा काम नहीं कर रहे थे।'' फ़रिश्ते जवाब देते हैं, ''कर कैसे नहीं रहे थे! अल्लाह तुम्हारी करतूतों से ख़ूब परिचित है। (29) अब जाओ, जहन्नम के दरवाज़ों में घुस जाओ। वहीं तुमको हमेशा रहना है।'' वास्तव में बड़ा ही बुरा ठिकाना है अहंकारियों के लिए।

(30) दूसरी ओर जब अल्लाह का डर रखनेवाले लोगों से पूछा जाता है कि यह क्या चीज़ है जो तुम्हारे रब की ओर से अवतरित हुई है, तो वे जवाब देते हैं कि ''बेहतरीन चीज़ उतरी है।'' इस तरह के उत्तमकार लोगों के लिए इस दुनिया में भी भलाई है और आख़िरत का घर तो ज़रूर ही उनके हक़ में ज़्यादा अच्छा है। बड़ा अच्छा घर है डर रखनेवाले लोगों का, (31) हमेशा रहने की जन्नतें, जिनमें वे प्रवेश करेंगे, नीचे नहरें बह रही होंगी, और सब कुछ वहाँ बिलकुल उनकी इच्छा के अनुकूल होगा। यह बदला देता है अल्लाह डर रखनेवालों को। (32) उन डर रखनेवालों को जिनके प्राण पवित्रता की हालत में जब फ़रिश्ते निकालते हैं तो कहते हैं, ''सलाम हो तुमपर, जाओ जन्नत में अपने कर्मों के बदले।''

(33) ऐ नबी, अब जो ये लोग इनतिज़ार कर रहे हैं तो इसके सिवा अब और क्या बाक़ी रह गया है कि फ़रिश्ते ही आ पहुँचे, या तेरे रब का फ़ैसला लागू हो जाए? इसी तरह की ढिठाई इनसे पहले बहुत-से लोग कर चुके हैं। फिर जो कुछ उनके साथ हुआ वह उनपर अल्लाह का ज़ुल्म न था बल्कि उनका अपना ज़ुल्म था जो उन्होंने ख़ुद अपने ऊपर किया। (34) उनकी करतूतों की ख़राबियाँ आख़िरकार उनके सिर आ लगी और वही चीज़ उनपर छाकर रही जिसकी वे हँसी उड़ाया करते थे।

(35) ये मुशरिक (बहुदेववादी) कहते हैं, ''अगर अल्लाह चाहता तो न हम और न हमारे बाप-दादा उसके सिवा किसी और की बन्दगी करते और न उसके आदेश के बिना किसी चीज़ को हराम (अवैध) ठहराते।'' ऐसे ही बहाने इनसे पहले के लोग भी बनाते रहे हैं। तो क्या रसूलों पर साफ़-साफ़ बात पहुँचा देने के सिवा और भी कोई ज़िम्मेदारी है? (36) हमने हर उम्मत में एक रसूल भेज दिया, और उसके द्वारा सबको सूचित कर दिया कि ''अल्लाह की बन्दगी करो और बड़े हुए अवज्ञाकारी (ताग़ूत) की बन्दगी से बचो।'' इसके बाद उनमें से किसी को अल्लाह ने मार्ग दिखाया और किसी पर गुमराही छा गई। फिर तनिक ज़मीन में चल-फिरकर देख लो कि झुठलानेवालों का क्या अंजाम हो चुका है (37)—ऐ नबी, तुम चाहे उनके मार्ग पर आने के लिए कितने

ही लालयित हो, मगर अल्लाह जिसको भटका देता है फिर उसे मार्ग नहीं दिखाया करता और इस तरह के लोगों की मदद कोई नहीं कर सकता।

(38) ये लोग अल्लाह के नाम से कड़ी-कड़ी क़समें खाकर कहते हैं कि "अल्लाह किसी मरनेवाले को फिर से ज़िन्दा करके न उठाएगा"—उठाएगा क्यों नहीं यह तो एक वादा है जिसे पूरा करना उसने अपने ऊपर अनिवार्य कर लिया है, मगर ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं। (39) और ऐसा होना इसलिए ज़रूरी है कि अल्लाह इनके सामने उस तथ्य को खोल दे जिसके बारे में ये मतभेद कर रहे हैं, और सत्य का इनकार करनेवालों को मालूम हो जाए कि वे झूठे थे। (40) (रही उसकी संभावना, तो) हमें किसी चीज़ को अस्तित्व प्रदान करने के लिए इससे ज़्यादा कुछ करना नहीं होता कि उसे आदेश दे "हो जा" और बस वह हो जाती है।

(41) जो लोग ज़ुल्म सहने के बाद अल्लाह के लिए अपना घर-बार छोड़ (हिजरत कर) गए हैं उनको हम इस दुनिया ही में अच्छा ठिकाना देंगे और आख़िरत का प्रतिदान तो बहुत बड़ा है।[8] क्या ही अच्छा होता कि जान लेते (42) वे पीड़ित जिन्होंने सब्र से काम लिया है और जो अपने रब के भरोसे पर काम कर रहे हैं (कि कैसा अच्छा परिणाम उनके इनतिज़ार में है)।

(43) ऐ नबी, हमने तुमसे पहले भी जब कभी रसूल भेजे हैं आदमी ही भेजे हैं जिनकी ओर हम अपने सन्देशों की वह्य (प्रकाशना) किया करते थे, ज़िक्रवालों से पूछ[9] लो अगर तुम लोग ख़ुद नहीं जानते। (44) पिछले रसूलों को भी हमने स्पष्ट निशानियाँ और किताबें देकर भेजा था, और अब यह ज़िक्र तुमपर अवतरित किया है ताकि तुम लोगों के सामने उस शिक्षा की व्याख्या और स्पष्टीकरण करते जाओ जो उनके लिए उतारी गई है,[10] और ताकि लोग (ख़ुद भी) सोच-विचार करें।

8. यह संकेत है उन घर-बार छोड़नेवालों (मुहाजिरीन) की ओर जो अधर्मियों के असह्य अत्याचारों से तंग आकर हबश की तरफ़ घर-बार छोड़कर चले गए थे।
9. अर्थात् उन लोगों से पूछ लो जिन्हें आसमानी किताबों का ज्ञान है कि नबी इनसान ही होते थे या कुछ और।
10. अर्थात् अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) पर किताब इसलिए उतारी गई थी कि आप (सल्ल॰) अपने कथन और कर्म के माध्यम से उसकी शिक्षाओं और उसके आदेशों की व्याख्या और स्पष्टीकरण करते रहें। इससे ख़ुद ही यह बात सिद्ध होती है कि नबी (सल्ल॰) का तरीक़ा और जीवन-पद्धति क़ुरआन की प्रामाणिक सरकारी व्याख्या है।

(45) फिर क्या वे लोग जो (पैग़म्बर के संदेश के विरोध में) बुरी से बुरी चालें चल रहे हैं इस बात से बिलकुल ही निश्चिन्त हो गएहैं कि अल्लाह उनको ज़मीन में धँसा दे, या ऐसी दिशा से उनपर अज़ाब ले आए जिधर से उसके आने का उनको गुमान तक न हो, (46,47) या अचानक चलते-फिरते उनको पकड़ ले, या ऐसी हालत में उन्हें पकड़े जबकि उन्हें ख़ुद आनेवाली मुसीबत का खटका लगा हुआ हो और वे उससे बचने की चिन्ता में चौकन्ने हों? वह जो कुछ भी करना चाहे ये लोग उसे बेबस करने की शक्ति नहीं रखते। वास्तव में तुम्हारा रब बड़ा ही नम्र स्वभाव का और दयावान है।

(48) और क्या ये लोग अल्लाह की पैदा की हुई किसी चीज़ को भी नहीं देखते कि उसकी छाया किस तरह अल्लाह के सामने सजदा करते हुए दाएँ और बाएँ गिरती है?[11] सब के सब इस तरह विवशता दिखा रहे हैं। (49) ज़मीन और आसमानों में जितने भी जीवधारी हैं और जितने फ़रिश्ते, सब अल्लाह के आगे सजदे में हैं। वे हरगिज़ सरकशी नहीं करते, (50) अपने रब से जो उनके ऊपर है, डरते हैं और जो कुछ आदेश दिया जाता है उसी के अनुसार कार्य करते हैं।

(51) अल्लाह का आदेश है कि "दो ख़ुदा न बना लो,[12] ख़ुदा तो बस एक ही है, अतः तुम मुझी से डरो।" (52) उसी का है वह सब कुछ जो आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है, और विशुद्ध रूप से उसी का धर्म (सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में) चल रहा है।[13] फिर क्या अल्लाह को छोड़कर तुम किसी और का डर रखोगे?

(53) तुमको जो सुख-सामग्री एवं नेमत प्राप्त है अल्लाह ही की ओर से है। फिर जब कोई कठिन समय तुम पर आता है तो तुम लोग ख़ुद अपनी फ़रियादें लेकर उसी की तरफ़ दौड़ते हो। (54) मगर जब अल्लाह उस समय को टाल देता है तो अचानक तुममें

11. अर्थात् सभी देहधारी वस्तुओं की छाया इस बात का लक्षण है कि पहाड़ हों या वृक्ष, जानवर हों या इनसान सब के सब एक व्यापक नियम और क़ानून के बंधन में जकड़े हुए हैं, सबके ललाट पर बन्दगी का दाग़ लगा हुआ है, ईश्वरत्व में किसी का कोई किंचित हिस्सा भी नहीं है। छाया पड़नी एक चीज़ के भौतिक होने का खुला लक्षण है, और भौतिक होना दास और पैदा किया हुआ होने का खुला प्रमाण है।
12. दो ख़ुदाओं के निषेध में दो से ज़्यादा ख़ुदाओं का निषेध आप से आप सम्मिलित है।
13. दूसरे शब्दों में उसी की आज्ञा के पालन पर इस पूरे अस्तित्व जगत् के कार्यकलाप की व्यवस्था निर्भर करती है।

से एक गिरोह अपने रब के साथ दूसरों को (इस दयालुता के प्रति कृतज्ञता दिखाने में) साझीदार बनाने लगता है, (55) ताकि अल्लाह के उपकार के प्रति अकृतज्ञ हो। अच्छा, मज़े कर लो, जल्द ही तुम्हें मालूम हो जाएगा।

(56) ये लोग जिनकी वास्तविकता से परिचित नहीं हैं उनके हिस्से हमारी दी हुई रोज़ी में से निश्चित करते हैं—क़सम है अल्लाह की, ज़रूर तुमसे पूछा जाएगा कि यह झूठ तुमने कैसे घड़ लिए थे?

(57) ये अल्लाह के लिए बेटियाँ ठहराते हैं।[14] पाक है अल्लाह! और इनके लिए वह जो ये ख़ुद चाहें?[15] (58) जब इनमें से किसी को बेटी के पैदा होने की शुभ-सूचना दी जाती है तो उसके चेहरे पर कलौंस छा जाती है और वह बस ख़ून का-सा घूँट पीकर रह जाता है। (59) लोगों से छिपता फिरता है कि इस बुरी ख़बर के बाद क्या किसी को मुँह दिखाए। सोचता है कि अपमानपूर्वक बेटी को लिए रहे या मिट्टी में दबा दे?—देखो कैसे बुरे हुक्म हैं जो ये अल्लाह के बारे में लगाते हैं।[16] (60) बुरे गुणों से विभूषित किए जाने के योग्य तो वे लोग हैं जो आख़िरत का यक़ीन नहीं रखते। रहा अल्लाह तो उसके लिए सबसे उच्चतर गुण हैं, वही तो सबसे प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शिता में पूर्ण है।

(61) अगर कहीं अल्लाह लोगों को उनकी ज़्यादती पर तुरन्त ही पकड़ लिया करता तो ज़मीन पर किसी जीवधारी को न छोड़ता लेकिन वह सबको एक निश्चित समय तक मुहलत देता है, फिर जब वह समय आ जाता है तो उससे कोई एक घड़ी-भर भी आगे-पीछे नहीं हो सकता। (62) आज ये लोग वे चीज़ें अल्लाह के लिए ठहरा रहे हैं जो ख़ुद अपने लिए इन्हें नापसंद हैं, और झूठ कहती हैं इनकी ज़बाने कि इनके लिए भला ही भला हैं। इनके लिए तो एक ही चीज़ है, और वह है दोज़ख़ की आग। ज़रूर ये सबसे पहले उसमें पहुँचाए जाएँगे।

(63) अल्लाह की क़सम, ऐ नबी, तुमसे पहले भी बहुत-से समुदायों (क़ौमों) में

14. अरब के मुशरिकों (बहुदेववादियों) के इष्ट पूज्यों में देवता कम थे, देवियाँ ज़्यादा थी, और उन देवियों के सम्बन्ध में उनका विश्वास यह था कि ये अल्लाह की बेटियाँ हैं। इसी तरह फ़रिश्तों को भी वे अल्लाह की बेटियाँ ठहराते थे।
15. अर्थात् बेटे।
16. अर्थात् अपने लिए जिस बेटी को ये लोग इतनी शर्म की चीज़ समझते हैं, उसी को अल्लाह के लिए बेझिझक ठहरा देते हैं।

हम रसूल भेज चुके हैं (और पहले भी यही होता रहा है कि) शैतान ने उनकी बुरी करतूतें उन्हें मोहक बनाकर दिखाई (और रसूलों की बात उन्होंने कदापि न मानी)। वही शैतान आज इन लोगों का भी अभिवाहक बना हुआ है और ये दर्दनाक सज़ा के पात्र बन रहे हैं। (64) हमने यह किताब तुमपर इसलिए उतारी है कि तुम उन मतभेदों की वास्तविकता इनपर खोल दो जिनमें ये पड़े हुए हैं। यह किताब मार्गदर्शन और दयालुता बनकर अवतरित हुई है उन लोगों के लिए जो इसे मान लें।

(65) (तुम हर बरसात में देखते हो कि) अल्लाह ने आसमान से पानी बरसाया और अचानक मुर्दा पड़ी हुई ज़मीन में उसके कारण जान डाल दी।[17] यक़ीनन इसमें एक निशानी है सुननेवालों के लिए।

(66) और तुम्हारे लिए चौपायों में भी एक शिक्षा मौजूद है। उनके पेट से गोबर और ख़ून के बीच से हम एक चीज़ तुम्हे पिलाते हैं, अर्थात शुद्ध दूध, जो पीनेवालों के लिए अत्यन्त स्वादिष्ट है।

(67) (इसी तरह) खजूरों के पेड़ों और अंगूर की बेलों से भी हम एक चीज़ तुम्हें पिलाते हैं जिसे तुम मादक (नशीली) भी बना लेते और पाक रोज़ी भी।[18] यक़ीनन इसमें एक निशानी है बुद्धि से काम लेनेवालों के लिए।

(68) और देखो, तुम्हारे रब ने मधुमक्खी पर इस बात की प्रकाशना (वह्य) कर दी[19] कि पहाड़ों में, और पेड़ों में और टट्टियों पर चढ़ाई हुई बेलों में, अपने छत्ते बना,

17. अर्थात् यह दृश्य हर वर्ष तुम्हारी आँखों के सामने गुज़रता है कि ज़मीन बिलकुल चटियल मैदान पड़ी हुई है, ज़िन्दगी के कोई लक्षण मौजूद नहीं, न घास-फूस है, न बेल-बूटे, न फूल-पत्ती, और न किसी तरह के कीड़े-मकौड़े। इतने में वर्षा ऋतु आ गई और एक-दो छींटे पड़ते ही उसी ज़मीन से ज़िन्दगी के स्रोत उबलने शुरू हो गए। ज़मीन की तहों में दबी हुई अनगिनत जड़ें अचानक जीवित हो उठीं और हर एक के भीतर से वहीं वनस्पति फिर निकल आई जो पिछली बरसात में पैदा होने के बाद मर चुकी थी। अनगिनत कीड़े-मकोड़े जिनका नामोनिशान तक गर्मी के समय में बाक़ी न रहा था, अचानक फिर उसी शान से प्रकट हो गए जैसे पिछली बरसात में देखे गए थे। ये सब कुछ अपनी जिन्दगी में बार-बार तुम देखते रहते हो, और फिर भी तुम्हें नबी के मुँह से यह सुनकर आश्चर्य होता है कि अल्लाह सारे इनसानों को मरने के बाद दोबारा ज़िन्दा करेगा।
18. इसमें एक हलका संकेत शराब की अवैधता की ओर भी है कि वह पाक और शुद्ध रोज़ी नहीं है।

(69) और हर तरह के फलों का रस चूस, और अपने रब की समतल की हुई राहों पर चलती रह। उस मक्खी के भीतर से रंग-बिरंग का एक शरबत निकलता है जिसमें शिफ़ा (आरोग्य) है लोगों के लिए। यक़ीनन इसमें भी एक निशानी है उन लगों के लिए जो सोच-विचार करते हैं।

(70) और देखो, अल्लाह ने तुमको पैदा किया, फिर वह तुमको मौत देता है, और तुममें से कोई निकृष्टतम आयु को पहुँचा दिया जाता है ताकि सब कुछ जानने के बाद फिर कुछ न जाने। सच यह है कि अल्लाह ही ज्ञान में भी पूर्ण है और सामर्थ्य में भी।

(71) और देखो, अल्लाह ने तुममें से कुछ को कुछ के मुक़ाबले में रोज़ी में आगे रखा है। फिर जिन लोगों को इस प्रकार आगे रखा है वे ऐसे नहीं हैं कि अपनी रोज़ी अपने ग़ुलामों की ओर फेर दिया करते हो ताकि दोनों इस रोज़ी में बराबर के हिस्सेदार बन जाएँ। तो क्या अल्लाह ही का उपकार स्वीकार करने से इन लोगों को इनकार है?[20]

(72) और वह अल्लाह ही है जिसने तुम्हारे लिए तुम्हारी सहजाति पत्नियाँ बनाई और उसी ने उन पत्नियों से तुम्हें बेटे, पोते प्रदान किए और अच्छी-अच्छी चीज़े तुम्हें खाने को दी। फिर क्या ये लोग (ये सब कुछ देखते और जानते हुए भी) असत्य को

19. यहाँ 'वह्य' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'वह्य' का शाब्दिक अर्थ है गुप्त और सूक्ष्म संकेत, जो संकेत करनेवाले और संकेत पानेवाले के सिवा और किसी को महसूस न हो सके। इसी समानता के कारण यह शब्द 'इलक़ा' (दिल में बात डालने) और 'इलहाम' (गुप्त शिक्षा और उपदेश) के अर्थ में इस्तेमाल होता है।

20. वर्तमान युग में कुछ लोगों ने इस आयत से यह मतलब निकाल लिया है कि जिन लोगों को अल्लाह ने रोज़ी में आगे रखा हो उन्हें अपनी रोज़ी अपने नौकरों और ग़ुलामों की ओर ज़रूर लौटा देना चाहिए, अगर न लौटाएँगे तो अल्लाह के उपकार के इनकार करनेवाले ठहरेंगे। हालाँकि ऊपर से पूरी वार्ता शिर्क (बहुदेववाद) के खण्डन और एकेश्वववाद की पुष्टि में होती चली आ रही है और आगे भी निरन्तर यही विषय चल रहा है। वार्ता के अगले-पिछले भाग को दृष्टि में रखकर देखा जाए तो साफ़ मालूम होता है कि यहाँ तर्क यह पेश किया गया है कि तुम ख़ुद अपने माल में अपने ग़ुलामों और नौकरों को जब बराबर का दर्जा नहीं देते तो आख़िर किस प्रकार यह बात तुम सही समझते हो कि जो उपकार अल्लाह ने तुमपर किए हैं उनके शुक्रिये में अल्लाह के साथ उसके अधिकार हीन ग़ुलामों को भी साझीदार बना लो और अपनी जगह यह समझ बैठो कि अधिकार और हक़ में अल्लाह के ये ग़ुलाम भी उसके साथ बराबर के हिस्सेदार हैं।

मानते हैं[21] और अल्लाह के उपकार को स्वीकार करने से इनकार करते हैं (73) और अल्लाह को छोड़कर उनको पूजते हैं जिनके हाथ में न आसमानों से उन्हें कुछ भी रोज़ी देनी है और न ज़मीन से और न यह काम वे कर ही सकते हैं? (74) अतः अल्लाह के लिए मिसालें न घड़ो[22] अल्लाह जानता है, तुम नहीं जानते।

(75) अल्लाह एक मिसाल देता है। एक तो है ग़ुलाम जिसपर दूसरे का अदिकार है और ख़ुद उसे कोई अधिकार प्राप्त नहीं। दूसरा व्यक्ति ऐसा है जिसे हमने अपनी ओर से अच्छी रोज़ी दी है और वह उसमें से खुले और छिपे ख़ूब ख़र्च करता है। बताओ, क्या ये दोनों बराबर हैं?—प्रशंसा है अल्लाह के लिए,[23] मगर ज़्यादातर लोग (इस सीधी बात को) नहीं जानते।

(76) अल्लाह एक और मिसाल देता है। दो आदमी हैं। एक गूँगा-बहरा है, कोई काम नहीं कर सकता, अपने मालिक पर बोझ बना हुआ है, जिधर भी वह उसे भेजे कोई भला काम उससे बन न आए। दूसरा व्यक्ति ऐसा है कि न्याय का आदेश देता है और ख़ुद सीधे मार्ग पर है। बताओ क्या ये दोनों समान हैं?

(77) और ज़मीन और आसमान के छिपे तथ्यों का ज्ञान तो अल्लाह ही को है। और क़ियामत के लागू होने का मामला कुछ देर न लेगा मगर बस उतनी कि जिसमें आदमी की पलक झपक जाए, बल्कि उससे भी कुछ कम। वास्तविकता यह है अल्लाह सब कुछ कर सकता है।

21. अर्थात् इनकी निराधार झूठी धारणा है कि उनके भाग्य का बनाना और बिगाड़ना, उनकी कामनाएँ पूरी करना और दुआएँ सुनना, उन्हें औलाद देना, उनको रोज़गार दिलवाना, उनके मुक़दमे जितवाना और उन्हें बीमारियों से बचाना कुछ देवियों और देवताओं और जिन्नों और अगले-पिछले बुज़ुर्गों के अधिकार में है।

22. अर्थात् अल्लाह को दुनिया के बादशाहों और राजाओं-महाराजाओं की तरह न समझो कि जिस तरह कोई उनके सभासदों और दरबार के निकटवर्ती कार्यकर्ताओं को माध्यम बनाए बिना उन तक अपनी प्रार्थना और निवेदन नहीं पहुँचा सकता उसी तरह अल्लाह के बारे में भी तुम यह समझने लगो कि वह अपने राजमहल में फ़रिश्तों और महात्माओं और दूसरे निकटवर्तियों के बीच घिरा बैठा है और किसी का कोई काम इन मध्यवर्तियों के बिना उसके यहाँ से नहीं बन सकता।

23. चूँकि इस सवाल के जवाब में मुशरिक (बहुदेववादी) यह नहीं कह सके कि दोनों बराबर हैं, इसलिए कहा, प्रशंसा है अल्लाह के लिए, कि इतनी बात तो तुम्हारी समझ में आई।

(78) अल्लाह ने तुमको तुम्हारी माओं के पेटों से निकाला इस हालत में कि तुम कुछ न जानते थे। उसने तुम्हें कान दिए, आँखें दीं और सोचनेवाले दिल दिए, इसलिए कि तुम कृतज्ञ बनो।

79) क्या इन लोगों ने कभी पक्षियों को नहीं देखा कि आसमानी फ़िज़ा में किस प्रकार वशीभूत हैं? अल्ला के सिवा किसने उनको थाम रखा है? इसमें बहुत निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो ईमान लाते हैं।

(80) अल्लाह ने तुम्हारे लिए तुम्हारे घरों को ठहरने की जगह बनाया। उसने जानवरों की खालों से तुम्हारे लिए ऐसे घर पैदा किए जिन्हें तुम यात्रा और ठहरने, दोनों हालतों में हलकापाते हो।[24] उसने जानवरों के ऊन और बालों से तुम्हारे लिए पहनने और बरतने की बहुत-सी चीज़े पैदा कर दी जो ज़िन्दगी की निश्चित अवधि तक तुम्हारे काम आती हैं। (81) उसने अपनी पैदा की हुई बहुत-सी चीज़ों से तुम्हारे लिए छायों का प्रबन्ध किया, पहाड़ों में तुम्हारे लिए पनाहगाहें बनाई, और तुम्हें ऐसे वस्त्र दिए जो तुम्हें गर्मी से बचाते हैं और कुछ दूसरे वस्त्र जो आपस के युद्ध में तुम्हारी रक्षा करते हैं। इस तरह वह तुमपर अपनी नेमतों (कृपादानों) को पूरा करता है शायद कि तुम आज्ञाकारी बनो। (82) अब अगर ये लोग मुँह मोड़ते हैं तो ऐ नबी, तुमपर स्पष्ट रूप से सत्य-सन्देश पहुँचा देने के सिवा और कोई ज़िम्मेदारी नहीं है। (83) ये अल्लाह के कृपादान को पहचानते हैं, फिर उसका इनकार करते हैं। और इनमें ज़्यादातर लोग ऐसे हैं जो सत्य को मानने के लिए तैयार नहीं हैं।

(84) (इन्हें कुछ होश भी है कि उस दिन क्या बनेगी) जबकि हम हर उम्मत में से एक गवाह खड़ा करेंगे, फिर अधर्मियों को न तर्क प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाएगा,[25] न उनसे तौबा और माफ़ी ही की माँग की जाएगी। (85) ज़ालिम लोग जब एक बार अज़ाब देख लेंगे तो उसके बाद न उनके अज़ाब में कोई कमी की जाएगी और न उन्हें एक क्षण-भर मुहलत दी जाएगी। (86) और जब वे लोग जिन्होंने दुनिया में साझी ठहराया था, अपने ठहराए हुए साझीदारों को देखेंगे तो कहेंगे, ''ऐ पालनहार, यही हैं हमारे वे साझीदार जिन्हें हम तुझे छोड़कर पुकारा करते थे।'' इसपर उनके वे इष्ट-पूज्य

24. अर्थात् चमड़े के ख़ेमे जिनका रिवाज अरब में बहुत है।

25. यह अर्थ नहीं है कि उन्हें सफ़ाई पेश करने की इजाज़त नहीं दी जाएगी, बल्कि अर्थ यह है कि उनके अपराध ऐसी खुली हुई गवाहियों से जिनका इनकार सम्भव नहीं और न जिनका कोई और अभिप्राय हो सकता है सिद्ध कर दिए जाएँगे कि उनके लिए सफ़ाई पेश करने की कोई गुंजाइश न रहेगी।

उन्हें साफ़ जवाब देंगे कि ''तुम झूठे हो।''[26] (87) उस समय ये सब अललाह के आगे झुक जाएँगे और उनके वे सारे झूठ जो ये दुनिया में घड़ा करते थे रफ़ूचक्कर हो जाएँगे। (88) जिन लोगों ने ख़ुद इनकार का मार्ग अपनाया और दूसरों को अल्लाह के मार्ग से रोका उन्हें हम अज़ाब पर अज़ाब देंगे उस बिगाड़ के बदले में जो वे दुनिया में पैदा करते रहे।

(89) (ऐ नबी, इन्हें उस दिन से सावधान कर दो) जबकि हम हर उम्मत में ख़ुद उसी के अन्दर से एक गवाह उठा खड़ा करेंगे जो उसके मुक़ाबले में गवाही देगा, और इन लोगों के मुक़ाबले में गवाही देने के लिए हम तुम्हें लाएँगे। और (यह इसी गवाही की तैयारी है कि) हमने यह किताब तुमपर अवतरित कर दी है जो हर चीज़ को साफ़-साफ़ स्पष्ट करनेवाली है और मार्गदर्शन एवं दयालुता और शुभ-सूचना है उन लोगों के लिए जो आज्ञाकारी हो गए हैं।

(90) अल्लाह न्याय और भलाई और नातेदारों के हक़ अदा करने का आदेश देता है और बुराई और अश्लीलता और ज़ुल्म व ज़्यादती से रोकता है। वह तुम्हें नसीहत करता है ताकि तुम शिक्षा लो। (91) अल्लाह की प्रतिज्ञा पूरी करो जबकि तुमने उससे कोई प्रतिज्ञा की हो, और अपनी क़समें पक्की करने के बाद तोड़ न डालो जबकि तुम अल्लाह को अपने ऊपर गवाह बना चुके हो। अल्लाह तुम्हारे सब कर्मों को जानता है। (92) तुम्हारी हालत उस औरत जैसी न हो जाए जिसने अपनी ही मेहनत से सूत काता और फिर ख़ुद ही उसे टुकड़े-टुकड़े कर डाला। तुम अपनी क़समों को आपस के मामलों में छल-कपट का साधन बनाते हो ताकि एक क़ौम दूसरी क़ौम से बढ़कर लाभ प्राप्त करे। हालाँकि बात यह है कि अल्लाह इस प्रतिज्ञा के द्वारा तुमको परीक्षा में डालता हैं, और ज़रूर वह क़ियामत के दिन तुम्हारे सभी विभेदों की वास्तविकता तुमपर स्पष्ट कर देगा। (93) अगर अल्लाह की इच्छा यह होती (कि तुममें कोई मतभेद न हों) तो वह तुम सबको एक ही उम्मत बना देता, मगर वह जिसे चाहता है गुमराही में डालता है और जिसे चाहता है सीधा मार्ग दिखा देता है, और ज़रूर तुमसे तुम्हारे कर्मों के बारे में पूछा जाएगा।

(94) (और ऐ मुसलमानों) तुम अपनी क़समों को आपस में एक-दूसरे को धोखा देने का साधन न बना लेना, कहीं ऐसा न हो कि कोई क़दम जमने के बाद उखड़

26. अर्थात् हमने कभी तुमसे यह नहीं कहा था कि तुम अल्लाह को छोड़कर हमें पुकारा करो, न हम तुम्हारी इस हरकत पर राज़ी थे, बल्कि हमें तो ख़बर तक न थी कि तुम हमें पुकार रहे हो।

जाए और तुम इस अपराध के बदले में कि तुमने लोगों को अल्लाह के मार्ग से रोका, बुरा नतीजा देखो और सज़ा भुगतो।[27] (95) अल्लाह की प्रतिज्ञा को थोड़े से लाभ के बदले में बेच न डालो, जो कुछ अल्लाह के पास है वह तुम्हारे लिए ज़्यादा अच्छा है अगर तुम जानो। (96) जो कुछ तुम्हारे पास है वह ख़र्च हो जानेवाला है और जो कुछ अल्लाह के पास है वही बाक़ी रहनेवाला है, और हम ज़रूर सब्र से काम लेनेवालों को उनके बदले उनके उत्तम कर्मों के अनुसार देंगे। (97) जो व्यक्ति भी अच्छा कर्म करेगा, चाहे वह मर्द हो या औरत, शर्त यह है कि हो वह मोमिन (ईमानवाला) उसे हम दुनिया में पवित्र जीवन-यापन कराएँगे और (परलोक में) ऐसे लोगों को उनके बदले उनके उत्तम कर्मों के अनुसार प्रदान करेंगे।

(98) फिर जब तुम क़ुरआन पढ़ने लगो तो फिटकारे हुए शैतान से अल्लाह की पनाह माँग लिया करो।[28] (99) उसे उन लोगों पर ज़ोर और अधिकार प्राप्त नहीं होता जो ईमान लाते और अपने रब पर भरोसा करते हैं। (100) उसका ज़ोर तो उन्हीं लोगों पर चलता है जो उसको अपना अभिभावक बनाते और उसके बहकाने से शिर्क करते हैं।

(101) जब हम एक आयत की जगह दूसरी आयत उतारते हैं—और अल्लाह अच्छा जानता है कि वह क्या उतारे—तो ये लोग कहते हैं कि तुम यह क़ुरआन ख़ुद घड़ते हो। वास्तव में बात यह है कि इनमें से ज़्यादातर लोग हक़ीक़त से अपरिचित हैं। (102) उनसे कहो कि उसे तो पवित्र आत्मा (रूहुल क़ुद्स) ने ठीक-ठीक मेरे रब की

27. अर्थात् ऐसा न हो कि कोई व्यक्ति इस्लाम की सत्यता को स्वीकार करने के बाद सिर्फ़ तुम्हारे दुराचार को देखकर इस धर्म से फिर जाए और इस कारण वह ईमानवालों के गिरोह में शामिल होने से रुक जाए कि इस गिरोह के जिन लोगों से उसका मामला पड़ा हो उनको आचार और व्यवहार में उसने अधर्मियों से कुछ भी भिन्न न पाया हो।

28. इसका अर्थ सिर्फ़ इतना ही नहीं है कि मुख से ''अऊज़ु बिल्लाहि मिनश-शैतानिर रजीम'' (मैं फिटकारे हुए शैतान से अल्लाह की पनाह माँगता हूँ) कहा जाए बल्कि इसके साथ वास्तव में दिल की गहराई के साथ अल्लाह से यह दुआ भी करनी चाहिए कि क़ुरआन पढ़ते समय वह शैतान के पथभ्रष्ट करनेवाले वसवसों से उसको सुरक्षित रखे क्योंकि जिसे यहाँ से सीधा मार्ग न मिला उसे फिर कहीं से मार्ग न मिल सकेगा, और जो इस किताब से पथभ्रष्टता ग्रहण कर बैठा उसे फिर दुनिया की कोई चीज़ गुमराहियों के चक्कर से न निकाल सकेगी।

ओर से क्रमशः उतारा है[29] ताकि ईमान लानेवालों के ईमान को सुदृढ़ता प्रदान करे और आज्ञाकारी लोगों को ज़िन्दगी के मामलों में सीधी राह बताए और उन्हें सफलता और सौभाग्य की ख़ुशख़बरी दे।

(103) हमें मालूम है ये लोग तुम्हारे सम्बन्ध में कहते हैं कि इस व्यक्ति को एक आदमी सिखाता-पढ़ाता है, हालाँकि इनका इशारा जिस आदमी की ओर है उसकी भाषा विदेशी (अजमी) है और यह स्पष्ट अरबी भाषा है। (104) वास्तविकता यह है कि जो लोग अल्लाह की आयतों को नहीं मानते अल्लाह कभी उनको सही बात तक पहुँचने का सुअवसर नहीं देता और ऐसे लोगों के लिए दर्दनाक अज़ाब है। (105) (झूठी बातें नबी नहीं घड़ता बल्कि) झूठ वे लोग घड़ रहे हैं जो अल्लाह की आयतों को नहीं मानते,[30] वही वास्तव में झूठे हैं।

(106) जो व्यक्ति ईमान लाने के बाद इनकार करे (वह अगर) मजबूर किया गया हो और दिल उसका ईमान पर सन्तुष्ट हो (तब तो ठीक है) मगर जिसने दिल की रज़ामन्दी से कुफ़्र (अधर्म) को स्वीकार कर लिया उसपर अल्लाह का ग़ज़ब है और ऐसे सब लोगों के लिए बड़ा अज़ाब है।[31] (107) यह इसलिए कि उन्होंने आख़िरत के

29. यहाँ 'रूहुल क़ुद्स' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'पवित्र आत्मा' या 'पवित्रता की आत्मा' और पारिभाषिक रूप से यह उपाधि हज़रत जिबरील (अलै॰) को दी गई है। यहाँ 'वह्य' (प्रकाशना) लानेवाले फ़रिश्ते का नाम लेने के बदले उसकी उपाधि इस्तेमाल करने का उद्देश्य श्रोताओं को इस सच्चाई के प्रति सावधान करना है कि इस वाणी को एक ऐसी आत्मा लेकर आ रही है जो मानवीय दुर्बलताओं और दोषों से मुक्त है और बिलकुल अमानतदारी के साथ अल्लाह की वाणी पहुँचाती है।

30. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि ''झूठ तो वे लोग घड़ा करते हैं जो अल्लाह की आयतों पर ईमान नहीं लाते।''

31. यह आयत उन मुसलमानों के बारे में है जिनपर उस समय भारी अत्याचार किए जा रहे थे और असहनीय दुख दे-देकर इनकार और कुफ़्र (अधर्म) पर उन्हें बाध्य किया जा रहा था। उनको बताया गया है कि अगर तुम किसी समय ज़ुल्म से मजबूर होकर सिर्फ़ जान बचाने के लिए इनकार और धर्मविरुद्ध शब्द मुख से कह दो, और दिल तुम्हारा धर्मविरुद्ध धारणा से सुरक्षित हो, तो माफ़ कर दिया जाएगा लेकिन अगर दिल से तुमने कुफ़्र को स्वीकार कर लिया तो दुनिया में भले ही जान बचा लो, अल्लाह के अज़ाब से न बच सकोगे।

मुक़ाबले में दुनिया की ज़िन्दगी को पसन्द कर लिया, और अल्लाह का नियम है कि वह उन लोगों को मुक्ति का मार्ग नहीं दिखाता जो उसकी नेमत का इनकार करें। (108) ये वे लोग हैं जिनके दिलों और कानों और आँखों पर अल्लाह ने ठपपा लगा दिया है, ये ग़फ़लत में डूब चुके हैं। (109) ज़रूर है कि आख़िरत (परलोक) में यही घाटे में रहे।[32] (110) इसके विपरीत जिन लोगों का हाल यह है कि जब (ईमान लाने के कारण) वे सताए गए तो उन्होंने घर-बार छोड़ दिए, हिजरत की, अल्लाह के मार्ग में कठिनाइयाँ झेलीं और सब्र से काम लिया, उनके लिए यक़ीनन तेरा रब बड़ा ही माफ़ करनेवाला और दयावान है। (111) (इन सबका फ़ैसला उस दिन होगा) जबकि हर व्यक्ति अपने ही बचाव की चिन्ता में लगा हुआ होगा और हर एक को उसके किए का बदला पूरा-पूरा दिया जाएगा और किसी पर कण-भर ज़ुल्म न होने पाएगा।

(112) अल्लाह एक बस्ती की मिसाल देता है। वह निश्चिंतता और इतमीनान की ज़िन्दगी बिता रही थी और हर ओर से उसको बहुतायत के साथ रोज़ी पहुँच रही थी कि उसने अल्लाह की नेमतों के सम्बन्ध में अकृतज्ञता दिखानी शुरू कर दी। तब अल्लाह ने उसके निवासियों को उनकी करतूतों का यह मज़ा चखाया कि भूख और डर-ख़ौफ़ की मुसीबतें उनपर छा गई। (113) उनके पास उनकी अपनी क़ौम में से एक रसूल आया। मगर उन्होंने उसको झुठला दिया। आख़िरकार अज़ाब ने उनको आ लिया जबकि वे ज़ालिम हो चुके थे।[33]

(114) अतः ऐ लोगो, अल्लाह ने जो कुछ हलाल (वैध) और पाक रोज़ी तुम्हें दी है उसे खाओ और अल्लाह के एहसान का शुक्र अदा करो अगर तुम वास्तव में उसी की बन्दगी (सेवा) करनेवाले हो। (115) अल्लाह ने जो कुछ तुम्हारे लिए हराम (अवैध) किया है वह है मुरदार और ख़ून और सुअर का गोश्त और वह जानवर जिसपर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो। हाँ, भूख से मजबूर और विकल

32. यह बात उन लगों के बारे में है जिन्होंने ईमान की राह कठिन पाकर उससे तौबा कर ली थी और फिर अपनी अधर्मी और मुशरिक (बहुदेववादी) क़ौम के साथ जा मिले थे।

33. हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि॰) का कहना है कि यहाँ ख़ुद मक्का को नाम लिए बिना मिसाल के तौर पर प्रस्तुत किया गया है। इस व्याख्या के अनुसार डर और भूख में जिस मुसीबत के छा जाने का यहाँ उल्लेख किया गया है उससे मुराद वह अकाल है जो नबी (सल्ल॰) के नबी होने के बाद एक समय तक मक्कावालों पर छाया रहा।

होकर अगर कोई इन चीज़ों को खा ले, बिना इसके कि वह ईश्वरीय नियम के उल्लंघन का इच्छुक हो या आवश्यकता की सीमा से आगे बढ़े, तो यक़ीनन अल्लाह माफ़ करनेवाला और दयावान है। (116) और यह जो तुम्हारी ज़बानें झूठे आदेश आरोपित किया करती हैं कि यह चीज़ हलाल है और वह हराम,[34] तो इस तरह के आदेश आरोपित करके अल्लाह पर झूठ न बाँधो। जो लोग अल्लाह पर झूठ आरोपित करते हैं, वे हरगिज़ सफलता को प्राप्त नहीं हुआ करते। (117) दुनिया का सुख थोड़े दिनों का है। आख़िरकार उनके लिए दर्दनाक सज़ा है।

(118) वे चीज़ें हमने विशेष रूप से यहूदियों के लिए अवैध (हराम) ठहराई थी जिनका उल्लेख इससे पहले हम तुमसे कर चुके हैं और यह उनपर हमारा ज़ुल्म न था बल्कि उनका अपना ही ज़ुल्म था जो वे अपने ऊपर कर रहे थे। (119) अलबत्ता जिन लोगों ने अज्ञान के कारण बुरा कर्म किया और फिर तौबा करके अपने कर्म को सुधार लिया तो यक़ीनन तौबा और सुधार के बाद तेरा रब उनके लिए माफ़ करनेवाला और दयावान् है। (120) वास्तविकता यह है कि इबराहीम अपनी ज़ात से एक पूरा समुदाय (उम्मत) था, अल्लाह का आज्ञाकारी और एकाग्र। वह कभी मुशरिक (बहुदेववादी) न था। (121) अल्लाह के कृपादानों का आभार प्रकट करनेवाला था। अल्लाह ने उसे चुन लिया और सीधा मार्ग दिखा दिया। (122) दुनिया में उसको भलाई दी और आख़िरत में वह यक़ीनन अच्छे लोगों में से होगा। (123) फिर हमने तुम्हारी ओर यह प्रकाशना की कि एकाग्र होकर इबराहीम के पथ पर चलो और वह मुशरिकों

34. यह आयत साफ़ स्पष्ट करती है कि अल्लाह के सिवा हलाल (वैध) और हराम (अवैध) ठहराने का अधिकार किसी को भी नहीं है। दूसरा जो व्यक्ति भी वैध और अवैध का निर्णय करने का दुस्साहस करेगा वह अपनी सीमा से आगे बढ़ेगा, यह और बात है कि यह अल्लाह के क़ानून को प्रमाण मानकर उसके आदेशों से निष्कर्षण द्वारा यह कहे कि अमुक चीज़ या अमुक कर्म वैध है या अमुक अवैध। स्वतंत्र होकर वैध और अवैध घोषित करने को अल्लाह पर झूठ और असत्यापरोण इसलिए कहा गया कि जो व्यक्ति इस तरह के आदेश आरोपित करता है उसका यह कर्म दो हाल से ख़ाली नहीं हो सकता। या वह इस बात का दावा करता है कि जिसे वह ईश्वरीय ग्रन्थ के प्रमाण से बेपरवाह होकर वैध और अवैध कर रहा है उसे अल्लाह ने वैध या अवैध ठहराया है, या उसका यह दावा है कि अल्लाह ने वैध और अवैध के निर्धारण से अपने को अलग करके इनसान को ख़ुद अपनी इच्छा का क़ानून बना लेने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया है। इनमें से जो दावा भी वह करे, वह अनिवार्यतः झूठ और अल्लाह पर असत्य बात का आरोपण है।

(बहुदेववादियों) में से न था। (124) रहा 'सब्त' तो उसे हमने उन लोगों पर डाला था जिन्होंने उससे सम्बन्धित आदेशों में विभेद किया और यक़ीनन तेरा रब क़ियामत के दिन उन सब बातों का फ़ैसला कर देगा जिनमें वे विभेद करते रहे हैं।

(125) ऐ नबी, अपने रब के मार्ग की ओर बुलाओ तत्त्वदर्शिता और सदुपदेश के साथ, और उन लोगों से विवाद करो ऐसे ढंग से जो उत्तम हो। तुम्हारा रब ही ज़्यादा बेहतर जानता है कि कौन उसके मार्ग से भटका हुआ है और कौन सीधे मार्ग पर है। (126) और अगर तुम लोग बदला लो तो बस उतना ही ले लो जितनी तुमपर ज़्यादती की गई हो। लेकिन अगर तुम सब्र से काम लो तो यक़ीनन यह सब्र करनेवालों ही के लिए अच्छा है। (127) ऐ नबी, सब्र से काम किए जाओ—और तुम्हारा यह सब्र अल्लाह ही की तौफ़ीक़ से है—उन लोगों की हरकतों पर रंज व ग़म न करो और न उनकी चालबाज़ियों पर दिल तंग हो। (128) अल्लाह उन लोगों के साथ है जो डर रखते हैं और उत्तमकार हैं।



17. बनी इसराईल

नाम

आयत 4 के वाक्यांश से उद्धृत है। यह नाम भी अधिकतर क़ुरआन की सुरतों की तरह केवल लाक्षणिक रूप में रखा गया है। इस सूरा का एक अन्य नाम 'इसरा' भी है।

अवतरणकाल

पहली ही आयत इस बात का पता देती है कि यह सूरा मेराज के अवसर पर (अर्थात् मक्कीकाल के अन्तिम समय पर अवतरित हुई थी।) मेराज की घटना हदीस और सीरत (नबी सल्ल॰ की जीवनी) के अधिकतर उल्लेखों के अनुसार हिजरत से एक वर्ष पहले घटित हुई थी।

पृष्ठभूमि

उस समय नबी (सल्ल॰) को एकेश्वरवाद की आवाज़ बुलन्द करते हुए बाहर वर्ष व्यतीत हो चुके थे। विरोधियों की समस्त रुकावटों के बावजूद आपकी आवाज़ अरब के कोने-कोने में पहुँच गई थी। अब वह समय निकट आ लगा था जब आपको मक्का से मदीना की ओर स्थानान्तरण करने और बिखरे हुए मुसलमानों को समेटकर इस्लाम के सिद्धांत पर एक राज्य के स्थापित करने का अवसर मिलनेवाला था। इन परिस्थितीयों में मेराज पेश आई और वापसी पर यह संदेश नबी (सल्ल॰) ने दुनिया को सुनाया।

विषय और वार्तावस्तु

इस सूरा में चेतावनी, समझाना-बुझाना और शिक्षा तीनों एक संतुलित रूप में एकत्र कर दी गई हैं।

चेतावनी मक्का के काफ़िरों को दी गई है कि इसराईल की संतान और दूसरी क़ौमों के परिणाम से शिक्षा ग्रहण करो और इस आमंत्रण को स्वीकार कर लो, अन्यथा मिटा दिए जाओगे। इसी के साथ गौण रूप से बनी इसराईल को भी, जो हिजरत के पश्चात् जल्द ही ईश-प्रकाशना के संबोदित होनेवाले थे, यह चेतावनी दी गई कि पहले जो दण्ड तुम्हें मिल चुके हैं उनसे शिक्षा ग्रहण करो और अब जो अवसर तुम्हें मुहम्मद (सल्ल॰) के पैग़म्बर होने से मिल रहा है, उससे फ़ायदा उठाओ, यह अन्तिम अवसर भी यदि तुमने खो दिया तो दुखदायी परिणाम का तुम्हें सामना करना पड़ेगा।

समझाने-बुझाने के अन्दाज़ में दिल में बैठ जानेवाले तरीक़े से समझाया गया है कि

मानवीय सौभाग्य और दुर्भाग्य और सफलता और विफलता ये सब वास्तव में किन चीज़ों पर निर्भर करते हैं। एकेश्वरवाद, परलोकवाद, नुबूवत (पैग़म्बरी) और क़ुरआन के सत्य होने के प्रमाण दिए गए हैं। उन संदेहों को दूर किया गया है जो इन मौलिक सच्चाइयों के विषय में मक्का के काफ़िरों की ओर से पेश किए जाते थे।

शिक्षा के पहलू में नैतिकता और नागरिकता के वे बड़े-बड़े सिद्धांत बयान किए गए हैं जिनपर जीवन की व्यवस्था को स्थापित करना नबी (सल्ल॰) के समक्ष था। यह मानो इस्लाम का घोषणा-पत्र था जो इस्लामी राज्य की स्थापना से एक साल पूर्व अरब निवासियों के समक्ष प्रस्तुत किया गया था।

इन सब बातों के साथ नबी (सल्ल॰) को आदेश दिया गया है कि कठिनाइयों के इस तूफ़ान में मज़बूती के साथ अपने अधिष्ठान (स्टैंड) पर दृढ़ रहें और कुफ़्र (अधर्म और इनकार) के साथ समझौते का ख़याल तक न करें। साथ ही मुसलमानों को नसीहत की गई है कि पूरे धैर्य के साथ परिस्थितियों का मुक़ाबला करते रहें और प्रचार और प्रसार के काम में अपनी भावनाओं को नियंत्रित रखे। इस संबंध में आत्म-सुधार और आत्मिक विकास के लिए उनको नमाज़ की विधि सिखाई गई है। उल्लेखों से मालूम होता कि यह पहला अवसर है जब पांच वक़्त की नमाज़ समय की पाबंदी के साथ मुसलमानों के लिए अनिवार्य की गई।



17. सूरा बनी इसराईल

(मक्का में उतरी–आयतें 111)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) पाक है वह जो ले गया एक रात अपने बन्दे को प्रतिष्ठित मसजिद (मसजिदे हराम) से दूर की उस मसजिद तक जिसके माहौल को उसने बरकत दी है ताकि उसे अपनी कुछ निशानियाँ दिखाए,[1] वास्तव में वही है सब कुछ सुनने और देखनेवाला।

(2) हमने इससे पहले मूसा को किताब दी थी और उसे बनी इसराईल के लिए मार्गदर्शन का साधन बनाया था इस ताकीद के साथ कि मेरे सिवा किसी को अपना

1. यह घटना वही है जो पारिभाषिक रूप से 'मेराज' के नाम से सुप्रसिद्ध है। ज़्यादातर और विश्वसनीय उल्लेखों के अनुसार यह घटना हिजरत से एक वर्ष पहले घटित हुई। हदीस और सीरत की किताबों में इस घटना का विवरण बहुत-से 'सहाबियों' के द्वारा उल्लिखित है जिनकी संख्या 25 तक पहुँचती है। क़ुरआन मजीद सिर्फ़ प्रतिष्ठित मसजिद (काबा) से मसजिदे अक़सा (अर्थात् बैतुल मक़दिस) तक नबी (सल्ल॰) के जाने को स्पष्ट करता है और हदीसों में बैतुल मक़दिस से ऊपरी लोक की अत्यन्त उच्चता पर पहुँचतक अल्लाह की सेवा में आपके उपस्थित होने का सविस्तर उल्लेख किया गया है। इस यात्रा की कैफ़ियत क्या थी? यह स्वप्न में घटित हुआ था या जागृत अवस्था में? और क्या ऐसा है कि नबी (सल्ल॰) ख़ुद गए थे या अपने स्थान पर बैठे-बैठे सिर्फ़ रूहानी तौर पर ही आपको यह साक्षात्कार करा दिया गया? इन सवालों का जवाब क़ुरआन मजीद के शब्द ख़ुद दे रहे हैं। "पाक है वह जो ले गया" से बयान का आरंभ करना ख़ुद बता रहा है कि यह कोई बहुत असाधारण घटना थी जो अल्लाह की असाधारण शक्ति एवं सामर्थ्य से घटित हुई। विदित है कि स्वप्न में किसी व्यक्ति का इस तरह की चीज़ें देख लेना, या आत्मप्रकाश (कश्फ़) के द्वारा देखना यह महत्त्व नहीं रखता कि उसे बयान करने के लिए इस भूमिका की ज़रूरत हो कि तमाम दुर्बलताओं और दोषों से मुक्त है वह सत्ता जिसने अपने बन्दे को यह स्वप्न दिखाया या आत्मप्रकाश (कश्फ़) में यह कुछ दिखाया। फिर ये शब्द भी कि "एक रात अपने बन्दे को ले गया" शारीरिक यात्रा के स्पष्ट सूचक हैं। स्वप्न-यात्रा या आत्मप्रकाश से सम्बन्धित यात्रा के लिए ये शब्द किसी तरह उपयुक्त नहीं हो सकते। अतः हमारे लिए यह माने बिना चारा नहीं कि यह सिर्फ़ एक आत्मिक अनुभव न था बल्कि एक शारीरिक यात्रा और आँख का प्रत्यक्ष निरीक्षण था जो अल्लाह ने नबी (सल्ल॰) को कराया।

कार्यसाधक न बनाना।[2] (3) तुम उन लोगों की सन्तान हो जिन्हें हमने नूह के साथ नौका पर सवार किया था, और नूह एक शुक्रगुज़ार बन्दा था। (4) फिर हमने अपनी किताब[3] में बनी इसराईल को इस बात से भी सावधान कर दिया था कि तुम दो बार ज़मीन में बड़ा उपद्रव मचाओगे और बड़ी सरकशी दिखाओगे। (5) आख़िरकार जब उनमें से पहली सरकशी का अवसर आया, तो ऐ बनी इसराईल, हमने तुम्हारे मुक़ाबले पर अपने ऐसे बन्दे उठाए जो बड़े ही शक्तिशाली थे और वे तुम्हारे देश में घुसकर हर ओर फैल गए।[4] यह एक वादा था जिसे पूरा होकर ही रहना था। (6) उसके बाद हमने तुम्हें उनपर प्रभुत्व का अवसर दे दिया और तुम्हें माल और औलाद से मदद दी और तुम्हारी संख्या पहले से बढ़ा दी। (7) देखो! तुमने भलाई की तो वह तुम्हारे अपने ही लिए भलाई थी, और बुराई की तो वह तुम्हारे अपने ही लिए बुराई सिद्ध हुई। फिर जब दूसरे वादे का समय आया तो हमने दूसरे दुश्मनों को तुमपर आच्छादित (मुसल्लत) किया ताकि वे तुम्हारे चेहरे बिगाड़ दें और मसजिद (बैतुल मक़दिस) में उसी तरह घुस जाएँ जिस तरह पहले दुश्मन घुसे थे और जिस चीज़ पर उनका हाथ पड़े उसे तबाह करके रख दें[5]—(8) हो सकता है कि अब तुम्हारा रब तुमपर दया करे, लेकिन अगर तुमने फिर अपनी पूर्ववत नीति दोहराई तो हम भी फिर अपनी सज़ा की पुनरावृत्ति करेंगे, और नेमत की नाशुक्री करनेवालों के लिए हमने जहन्नम को कारागार बना रखा है।

(9) वास्तविकता यह है कि यह क़ुरआन वह मार्ग दिखाता है जो बिलकुल सीधा है। जो लोग इसे मानकर भले काम करने लगें उन्हें यह शुभ-सूचना देता है कि उनके लिए बड़ा बदला है (10) और जो लोग आख़िरत को न मानें उन्हें यह सूचना देता है

2. अर्थात् विश्वास और भरोसे का अवलंब, जिसपर भरोसा किया जाए, जिसे अपने मामलों को सौंप दिया जाए, जिसकी ओर मार्गदर्शन और सहायता के लिए रुजू किया जाए।
3. किताब से मुराद यहाँ तौरात नहीं है बल्कि आसमानी किताबों का संग्रह है जिसके लिए क़ुरआन में पारिभाषिक रूप से 'अल-किताब' शब्द कई स्थान पर इस्तेमाल हुआ है।
4. इससे मुराद वह भयंकर तबाही है जो आशूरियों और बाबिलवालों के हाथों इसराईलियों पर उतरी।
5. इससे मुराद रूमी लोग हैं जिन्होंने बैतुल मक़दिस को बिलकुल तबाह कर दिया, इसराईलियों को मार-मारकर फ़िलस्तीन से निकाल दिया और उसके बाद आज दो हज़ार वर्ष से वे दुनिया-भर में तितर-बितर हैं।

कि उनके लिए हमने दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है।

(11) इनसान बुराई उस तरह माँगता है जिस तरह भलाई माँगनी चाहिए। इनसान बड़ा ही उतावला है।[6]

(12) देखो, हमने रात और दिन को दो निशानियाँ बनाया है। रात की निशानी को हमने प्रकाशहीन बनाया और दिन की निशानी को प्रकाशयुक्त कर दिया ताकि तुम अपने रब का अनुग्रह (रोज़ी) खोज सको और महीने और वर्ष का हिसाब मालूम कर सको। इसी तरह हमने हर चीज़ को अलग-अलग स्पष्ट करके रखा है।

(13) हर इनसान का शकुन हमने उसके अपने गले में लटका रखा है,[7] और क़ियामत के दिन हम एक लेख्य उसके लिए निकालेंगे जिसे वह खुली किताब की तरह पाएगा। (14)—पढ़ अपना कर्मपत्र, आज अपना हिसाब लगाने के लिए तू ख़ुद ही काफ़ी है।

(15) जो कोई सीधा मार्ग अपनाए उसका सीधे मार्ग को अपनाना उसके अपने ही लिए लाभकारी है, और जो पथभ्रष्ट हो उसकी पथभ्रष्टता का वबाल उसी पर है। कोई बोझ उठानेवाला दूसरे का बोझ न उठाएगा।[8] और हम अज़ाब देनेवाले नहीं हैं जब तक

6. यह जवाब है मक्का के अधर्मियों की उन मूर्खतापूर्ण बातों का जो वे बार-बार नबी (सल्ल॰) से कहते थे कि बस ले आओ वह अज़ाब जिससे तुम हमें डराया करते हो। ऊपर के बयान के बाद तुरन्त यह कथन कहने का उद्देश्य इस बात की चेतावनी देनी है कि मूर्खो! भलाई माँगने के बदले अज़ाब माँगते हो? तुम्हें कुछ अनुमान भी है कि अल्लाह का अज़ाब जब किसी क़ौम पर आता है तो उसकी क्या गति बनती है? इसके साथ इस वाक्य में एक सूक्ष्म चेतावनी मुसलमानों के लिए भी थी जो अधर्मियों के ज़ुल्म व सितम और उनकी हठधर्मियों से तंग आकर कभी-कभी उनके लिए अज़ाब की दुआ करने लगते थे, हालाँकि अभी उन्हीं अधर्मियों में बहुत-से वे लोग मौजूद थे जो आगे चलकर ईमान लानेवाले और दुनिया भर में इस्लाम का झण्डा ऊँचा करनेवाले थे। इसपर अल्लाह कहता है कि इनसान बड़ा ही जल्दबाज़ सिद्ध हुआ है, हर वह चीज़ माँग बैठता है जिसकी तत्काल ज़रूरत जान पड़ती है, हालाँकि आगे चलकर उसे ख़ुद अनुभव से मालूम हो जाता है कि अगर उस समय उसकी दुआ सुन ली जाती तो वह उसके लिए भलाई न होती।
7. अर्थात् हर इनसान के सौभाग्य और दुर्भाग्य और उसके परिणाम की भलाई और बुराई के कारण साधन ख़ुद उसके अपने अस्तित्व ही में मौजूद हैं।

कि (लोगों को सत्य और असत्य का अन्तर समझाने के लिए) एकसन्देशवाहक न भेज दें।

(16) जब हम किसी बस्ती को विनष्ट करने का इरादा करते हैं तो उसके सम्पन्न लोगों को आदेश देते हैं और वे उसमें नाफ़रमानियाँ करने लगते हैं, तब अज़ाब का फ़ैसला उस बस्ती पर चस्पाँ हो जाता है और हम उसे तबाह करके रख देते हैं।[9] (17) देख लो, कितनी ही नस्लें हैं जो नूह के बाद हमारे आदेश से तबाह हुई। तेरा रब अपने बन्दों के गुनाहों से पूरी तरह परिचित है और सब कुछ देख रहा है।

(18) जो कोई (इस (दुनिया में) जल्दी प्राप्त होनेवाले लाभों का इच्छुक हो, उसे यहीं हम दे देते हैं जो कुछ भी जिसे देना चाहें, फिर उसके भाग्य में नरक लिख देते हैं जिसे वह तापेगा तिरस्कृत और दयालुता से वंचित होकर। (19) और जो आख़िरत का इच्छुक हो और उसके लिए प्रयास करे जैसा कि उसके लिए प्रयास करना चाहिए, और हो वह ईमानवाला, तो ऐसे हर व्यक्ति के प्रयास की क़द्र की जाएगी।[10] (20) इनको भी और उनको भी, दोनों पक्षवालों को हम (दुनिया में) जीने का सामान दिए जा रहे हैं, यह तेरे रब का प्रदान है, और तेरे रब के प्रदान को रोकनेवाला कोई नहीं है, (21) मगर देख लो, दुनिया ही में हमने एक गिरोह को दूसरे के मुक़ाबले में कैसा आगे रखा है,[11] और आख़िरत में उसके दर्जे और भी अधिक होंगे और उसकी प्रतिष्ठा और भी ज़्यादा बढ़-चढ़कर होगी।

8. अर्थात् हर इनसान का स्थायी रूप से एक नैतिक दायित्व है और व्यक्तिगत रूप से वह अल्लाह के सामने उत्तरदायी है। इस व्यक्तिगत दायित्व में कोई दूसरा व्यक्ति उसके साथ शरीक नहीं है।
9. जिस वास्तविकता के विषय में इस आयत में सावधान किया गया है वह यह है कि एक समाज को आख़िरकार जो चीज़ तबाह करती है वह उसके खाते-पीते, सम्पन्न लोगों और उच्च वर्ग के लोगों का बिगाड़ है। जब किसी क़ौम की शामत आने को होती है तो उसके धनवान और सत्ताधारी लोग अवज्ञा और दुस्साहस पर उतर आते हैं, अत्याचार और दुष्कर्म और शरारतें करने लगते हैं, और अन्त में यही उपद्रव पूरी क़ौम को ले डूबता है। अतः जो समाज आप अपना दुश्मन न हो उसे चिन्ता होनी चाहिए कि उसके यहाँ सत्ता की बागडोर और आर्थिक धन की कुंजियाँ अनुदार और दुराचारी लोगों के हाथों में न जाने पाएँ।
10. अर्थात् उसके कामों की क़द्र की जाएगी और जितनी और जैसी कोशिश भी उसने आख़िरत की कामयाबी के लिए की होगी उसका फल वह ज़रूर पाएगा।

(22) तू अल्लाह के साथ कोई दूसरा पूज्य न बना नहीं तो तिरस्कृत और असहाय बैठा रहा जाएगा।

(23) तेरे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि : तुम लोग किसी की बन्दगी न करो, मगर सिर्फ़ उसकी। माँ-बाप के साथ अच्छा व्यवहार करो, अगर तुम्हारे पास उनमें से कोई एक या दोनों बूढ़े होकर रहें तो उन्हें उफ़् (धिक) तक न कहो, न उन्हें झिड़ककर जवाब दो, बल्कि उनसे आदर के साथ बात करो, (24) और नम्रता और दयालुता के साथ उनके सामने झुककर रहो, और दुआ किया करो कि "पालनहार, इनपर दया कर जिस तरह इन्होंने दयालुता और करुणा के साथ मुझे बचपन में पाला था।" (25) तुम्हारा रब ख़ूब जानता है कि तुम्हारे दिलों में क्या है। अगर तुम नेक बनकर रहो तो वह ऐसे सब लोगों के लिए माफ़ करनेवाला है (26) जो अपनी ग़लती पर सावधान होकर बन्दगी की नीति की ओर पलट आएँ। नातेदार को उसका हक़ दो और मुहताज और मुसाफ़िर को उसका हक़। फ़ुज़ूलख़र्ची न करो। (27) फ़ुज़ूलख़र्च लोग शैतान के भाई हैं, और शैतान अपने रब का नाशुक्रा है। (28) अगर उनसे (अर्थात् मुहताज नातेदारों, ग़रीबों और मुसाफ़िरों से) तुम्हें कतराना हो, इस कारण कि अभी तुम अल्लाह की उस दयालुता को जिसके तुम उम्मीदवार हो, तलाश कर रहे हो, तो उन्हें नर्म जवाब दे दो। (29) न तो अपना हाथ गरदन से बाँध रखो और न उसे बिलकुल ही खुला छोड़ दो कि निन्दित और बेबस बनकर रह जाओ।[12] (30) तेरा रब जिसके लिए

11. अर्थात् दुनिया ही में यह स्पष्ट अन्तर दीख पड़ता है कि आख़िरत के इच्छुक दुनिया के पुजारियों की अपेक्षा श्रेष्ठ हैं। यह श्रेष्ठता इस पहलू से नहीं है कि उनके भोजन और वस्त्र और मकान और सवारियाँ और सभ्यता एवं संस्कृति के ठाठ उनसे कुछ बढ़कर हैं। बल्कि इस पहलू से है कि ये जो कुछ भी पाते हैं सत्यता, दियानतदारी और अमानतदारी के साथ पाते हैं, और वे जो कुछ पा रहे हैं ज़ुल्म से, बेईमानियों से, और तरह-तरह की हरामख़ोरियों से पा रहे हैं। फिर इनको जो कुछ मिलता है वह सन्तुलित रूप से ख़र्च होता है, उसमें से हक़दारों के हक़ अदा होते हैं, उसमें से माँगनेवालों और निर्धन लोगों का हिस्सा भी निकलता है और उसमें से अल्लाह की प्रसन्नता के लिए दूसरे भले कामों पर भी माल ख़र्च किया जाता है। इसके विपरीत दुनिया के पुजारियों को जो कुछ मिलता है व ज़्यादातर भोग-विलास और अवैध कार्यों और तरह-तरह के बिगाड़ पैदा करनेवाले और उपद्रवजनक कामों में पानी की तरह बहाया जाता है। इसी तरह हर हैसियत से आख़िरत के इच्छुक की ज़िन्दगी दुनिया के पुजारी की ज़िन्दगी से श्रेष्ठ होती है।

चाहता है रोज़ी कुशादा करता है और जिसके लिए चाहता है तंग कर देता है। वह अपने बन्दों के हाल की ख़बर रखता है और उन्हें देख रहा है। (31) अपनी सन्तान को निर्धनता के डर से क़त्ल न करो। हम उन्हें भी रोज़ी देंगे और तुम्हें भी। वास्तव में उनका क़त्ल एक बड़ी ख़ता है। (32) व्यभिचार के क़रीब न फटको। वह बहुत बुरा कर्म है और बड़ा ही बुरा रास्ता। (33) किसी जान को न मारो जिसे अल्लाह ने हराम किया है सिवाय इसके कि हक़ और इनसाफ़ को यही अपेक्षित हो। और जिसका क़त्ल ज़ुल्म के साथ किया गया हो उसके वली को हमने क़िसास की माँग का हक़ दिया है,[13] अतः चाहिए कि वह क़त्ल में सीमा से आगे न बढ़े[14] उसकी सहायता की जाएगी![15] (34) अनाथ के माल के पास न फटको सिवाय उत्तम रीति के, यहाँ तक कि वह अपनी जवानी को पहुँच जाए। प्रतिज्ञा का अनुपालन करो, बेशक प्रतिज्ञा के विषय में तुम्हें जवाब देना होगा। (35) पैमाने से दो तो पूरा भरकर दो, और तौलो तो ठीक तराज़ू से तौलो। यह अच्छा तरीक़ा है और परिणाम की दृष्टि से भी यही अच्छा है। (36) किसी ऐसी चीज़ के पीछे न लगो जिसका तुम्हें ज्ञान न हो।[16] यक़ीनन आँख, कान और दिल सब ही के विषय में पूछा जाएगा। (37) ज़मीन में अकड़कर न चलो, तुम न ज़मीन

12. हाथ बाँधनाबोला जाता है कंजूसी के लिए, और उसे खुला छोड़ देने से मुराद है अपव्यय और फ़ुज़ूलख़र्ची।
13. मूल शब्द हैं "उसके वली को हमने सुलतान प्रदान किया है।" सुलतान से मुराद यहाँ 'तर्क और प्रमाण' है जिसके आधार पर वह हत्या-दण्ड (क़िसास) की माँग कर सकता है।
14. क़त्ल करने में सीमा से आगे बढ़ने के कई रूप हो सकते हैं और वे सब वर्जित हैं, उदाहरणार्थ प्रतिशोध के आवेश में अपराधी के अतिरिक्त दूसरों को क़त्ल करना, या अपराधी को अज़ाब दे-देकर मारना, या मार देने के बाद उसकी लाश पर गुस्सा निकालना या ख़ून के बदले अर्थदण्ड लेने के बाद फिर उसे क़त्ल करना आदि।
15. चूँकि उस समय तक इस्लामी राज्य की स्थापना न हुई थी इसलिए इस बात को नहीं खोला गया कि उसकी सहायता कौन करेगा। हिजरतके बाद जब इस्लामी राज्य स्थापित हो गया तो यह निश्चित कर दिया गया कि उसकी सहायता करनी उसके क़बीले या उसके मित्रों का काम नहीं बल्कि इस्लामी हुकूमत और उसकी न्यायपालिका का काम है। कोई व्यक्ति या गिरोह ख़ुद ही क़त्ल का बदला लेने का अधिकारी नहीं है बल्कि यह पद इस्लामी हुकूमत काहै कि न्याय प्राप्त करने के लिए उससे सहायता माँगी जाए।

फाड़ सकते हो, न पहाड़ों की ऊँचाई को पहुँच सकते हो।

(38) इनमें से हर एक का बुरा पहलू तेरे रब की दृष्टि में अप्रिय है।[17] (39) ये वे तत्त्वदर्शिता की बातें हैं जिनकी तेरे रब ने तुझपर वह्य की है।

और देख! अल्लाह के साथ कोई दूसरा पूज्य न बना बैठ, नहीं तो तू जहन्नम में डाल दिया जाएगा निन्दित और हर भलाई से वंचित होकर[18] (40)—कैसी आश्चर्य की बात है कि तुम्हारे रब ने तुम्हें तो बेटे देने की कृपा की और ख़ुद अपने लिए फ़रिश्तों को बेटियाँ बना लिया? बड़ी झूठी बात है जो तुम लोग ज़बानों से निकालते हो।

(41) हमने इस क़ुरआन में तरह-तरह से लोगों को समझाया कि होश में आएँ, मगर वे सत्य से और ज़्यादा दूर ही भागे जा रहे हैं। (42) ऐ नबी, इनसे कहो कि अगर अल्लाह के साथ दूसरे पूज्य भी होते, जैसा कि ये लोग कहते हैं, तो वे सिंहासन के स्वामी के स्थान को पहुँचने की ज़रूर कोशिश करते। (43) पाक है वह और बहुत उच्च है उन बातों से जो ये लोग कह रहे हैं। (44) उसकी पाकी तो सातों आसमान और ज़मीन और वे सारी चीज़ें बयान कर रही हैं जो आसमान और ज़मीन में हैं।[19] कोई चीज़ ऐसी नहीं जो उसकी प्रशंसा के साथ उसकी तसबीह (पाकी बयान) न कर रही हो, मगर तुम उनकी तसबीह समझते नहीं हो। वास्तविकता यह है कि वह बड़ा ही सहनशील और माफ़ करनेवाला है।

(45) जब तुम क़ुरआन पढ़ते हो तो हम तुम्हारे और आख़िरत पर ईमान न लानेवालों के बीच एक परदा डाल देते हैं। (46) और उनके दिलों पर ऐसा ख़ोल चढ़ा देते हैं कि वे कुछ नहीं समझते, और उनके कानों में बोझ पैदा कर देते हैं।[20] और जब

16. इस कथन का उद्देश्य यह है कि लोग अपने व्यक्तिगत और सामाजिक ज़िन्दगी में भ्रम और अटकल के बदले 'ज्ञान' का अनुसरण करें।
17. अर्थात् उन आदेशों में से जिस आदेश का भी उल्लंघन किया जाए वह अनुचित है।
18. इस आदेश का संबोधन हर इनसान से है। अर्थ यह है कि ऐ इनसान! तू यह काम न कर।
19. अर्थात् सारा ब्रह्माण्ड और उसकी प्रत्येक वस्तु अपने पूरे अस्तित्व से इस सत्य की गवाही दे रही है कि जिसने उसको पैदा किया है और जो उसका पालनकर्ता और निगहबान है उसकी हस्ती प्रत्येक दोष और कमी और दुर्बता से मुक्त है और वह इससे बिलकुल पाक है कि ईश्वरत्व में कोई उसका साझी और समकक्ष हो।

तुम क़ुरआन में अपने एक ही रब की चर्चा करते हो तो वे नफ़रत से मुँह मोड़ लेते हैं।[21] (47) हमें मालूम है कि जब वे कान लगाकर तुम्हारी बात सुनते हैं तो वास्तव में क्या सुनते हैं, और जब बैठकर आपस में कानाफूसियाँ करते हैं तो क्या कहते हैं। ये ज़ालिम आपस में कहते हैं कि यह तो जादू का मारा आदमी है जिसके पीछे तुम लोग जा रहे हो[22] (48)—देखो, कैसी बातें हैं जो ये लोग तुमपर छाँटते हैं, ये भटक गए हैं, इन्हें रास्ता नहीं मिलता।

(49) वे कहते हैं, ''जब हम सिर्फ़ हड्डियाँ और मिट्टी होकर रह जाएँगे तो क्या हम

20. अर्थात् आख़िरत पर ईमान न लाने का यह स्वाभाविक परिणाम है कि आदमी के दिल पर ताले लग जाएँ और उसके कान उस आमंत्रण के लिए बन्द हो जाएँ जो क़ुरआन पेश करता है। क़ुरआन का तो आमंत्रण ही इस आधार पर है कि दुनिया की ज़िन्दगी के बाह्य पक्ष से धोखा न खाओ। सत्य और असत्य के निर्णय इस दुनिया में नहीं बल्कि आख़िरत में होंगे। नेकी वह है जिसका अच्छा परिणाम आख़िरत में सामने आएगा भले ही दुनिया में उसके कारण इनसान को कितनी ही तकलीफ़ें पहुँचे और बुराई वह है जिसका परिणाम आख़िरत में अनिवार्यतः बुरा निकलेगा, चाहे दुनिया में वह कितनी ही स्वादिष्ट और लाभकारी हो। अब जो व्यक्ति परलोक ही को नहीं मानता वह क़ुरआन के इस आमंत्रण और संदेश पर कैसे ध्यान दे सकता है।
21. अर्थात् उन्हें यह बात बहुत अप्रिय लगती है कि तुम बस एक अल्लाह ही को मालिक और अधिकारी ठहराते हो और उसी की प्रशंसा के गुण गाते हो। वे कहते हैं कि यह अजीब आदमी है जिसकी दृष्टि में परोक्ष (ग़ैब) का ज्ञान है तो अल्लाह को, सामर्थ्य है तो अल्लाह की, क्रियाशीलताएँ और अधिकार हैं तो बस एक अल्लाह ही के। आख़िर ये हमारे आस्तानोंवाले भी कोई चीज़ हैं कि नहीं जिनके यहाँ से हमें औलाद मिलती है, बीमारों के रोग दूर होते हैं, कारोबार चमकते हैं, और मुँह माँगी मुरादें पूरी होती हैं।
22. मक्का में इनकार करनेवालों का हाल यह था कि छिप-छिपकर क़ुरआन सुनते और फिरआपस में मशविरा करते थे कि इसका तोड़ क्या होना चाहिए। कभी-कभी उन्हें अपने ही आदमियों में से किसी पर यह शक हो जाता था कि शायद यह व्यक्ति क़ुरआन सुनकर कुछ प्रभावित हो गया है। इसलिए वे सब मिलकर उसको समझाते थे कि अजी, यह किसके चक्कर में आ रहे हो। यह व्यक्ति तो जादू का मारा है, अर्थात् किसी दुश्मन ने इसपर जादू कर दिया है इसलिए बहकी-बहकी बातें करने लगा है।

नए सिरे से पैदा करके उठाए जाएँगे?'' (50)—उनसे कहो, ''तुम पत्थर या लोहा भी हो जाओ, (51) या इससे भी ज़्यादा कठोर कोई चीज़ जो तुम्हारे जी में ज़िन्दगी पाने से बहुत दूर हो (फिर भी तुम उठकर रहोगे)''। वे अवश्य पूछेंगे, ''कौन है वह जो हमें फिर जीवन की ओर पलटाकर लाएगा?'' जवाब में कहो, ''वही जिसने पहली बार तुमको पैदा किया।'' वे सिर हिला-हिलाकर पूछेंगे,[23] ''अच्छा, तो यह होगा कब?'' तुम कहो, ''आश्चर्य क्या कि वह समय निकट ही आ लगा हो। (52) जिस दिन वह तुम्हें पुकारेगा तो तुम उसकी प्रशंसा करते हुए उसकी पुकार के जवाब में निकल आओगे और तुम्हारा गुमान उस समय यह होगा कि हम बस थोड़ी देर ही इस हालत में पड़े रहे हैं।''[24]

(53) और ऐ नबी, मेरे बन्दों (अर्थात् ईमानवाले बन्दों) से कह दो कि मुँह से वह बात निकाला करें जो उत्तम हो।[25] वास्तव में यह शैतान है जो इनसानों के बीच बिगाड़ पैदा कराने की कोशिश करता है। वास्तव में यह शैतान इनसान का खुला दुश्मन है। (54) तुम्हारा रब तुम्हारे हाल से ख़ूब परिचित है। वह चाहे तो तुमपर दया करे और चाहे तो तुम्हें अज़ाब दे दे।[26] और ऐ नबी, हमने तुमको लोगों पर हवालेदार बनाकर नहीं भेजा है।

(55) तेरा रब, ज़मीन और आसमानों में रहनेवालों को ज़्यादा जानता है। हमने कुछ पैग़म्बरों को कुछ से बढ़कर पद दिए, और हमने ही दाऊद को ज़बूर दी थी।

(56) इनसे कहो, पुकार देखो उन पूज्यों को जिनको तुम अल्लाह के सिवा (अपना कार्यसाधक) समझते हो, वे किसी तकलीफ़ को तुमसे न हटा सकते हैं न बदल

23. यहाँ 'युनग़िज़ून' शब्द का इस्तेमाल हुआ है। 'इनग़ाज़' का अर्थ है सिर को ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर की ओर हिलाना जिस तरह आश्चर्य व्यक्त करने के लिए या हँसी उड़ाने के लिए आदमी करता है।
24. अर्थात् दुनिया में मरने के समय से लेकर क़ियामत के दिन उठने के समय तक की अवधि तुमको कुछ घंटों से ज़्यादा महसूस न होगी। तुम उस समय यह समझोगे कि हम तनिक देर सोए पड़े थे कि अचानक क़ियामत में लोगों के उठाए जाने के इस शोर-गुल ने हमें जगा उठाया।
25. अर्थात् विरोधी चाहे कैसी ही अप्रिय बातें करें मुसलमानों को हर हाल में न तो कोई बात सत्य के विरूद्ध मुँह से निकालनी चाहिए और न गुस्से में आपे से बाहर होकर बेहूदगी का जवाब बेहूदगी से देना चाहिए। उन्हें ठण्डे दिल से वही बात कहनी चाहिए जो जँची-तुली हो, सत्य और उनके सन्देश की प्रतिष्ठा के अनुकूल हो।

सकते हैं।[27] (57) जिनको ये लोग पुकारते हैं वे तो ख़ुद अपने रब के पास पहुँच प्राप्त करने का वसीला ढूँढ रहे हैं कि कौन उससे अधिक निकट हो जाए और वे उसकी दयालुता के उम्मीदवार और उसके अज़ाब से डरे हुए हैं।[28] वास्तविकता यह है कि तेरे रब का अज़ाब है ही डरने के योग्य।

(58) और कोई बस्ती ऐसी नहीं है जिसे हम क़ियामत से पहले विनष्ट न करें या कठोर अज़ाब न दें, यह ईश्वरीय लेख्य में अंकित है।

(59) और हमको निशानियाँ भेजने से नहीं रोका मगर इस बात ने कि इनसे पहले के लोग उनको झुठला चुके हैं।[29] (अतः देख लो) समूद को हमने खुल्लम-खुल्ला ऊँटनी लाकर दी और उन्होंने उसपर ज़ुल्म किया। हम निशानियाँ इसी लिए तो भेजते

26. अर्थात् ईमानवालों की ज़बान पर कभी ऐसे दावे न आने चाहिएँ कि हम जन्नती हैं और अमुक व्यक्ति या गिरोह दोज़ख़ी है। इस चीज़ का फ़ैसला अल्लाह के अधिकार में है। वही सब इनसानों की बाहरी और भीतरी हालत और उनके वर्तमान और भविष्य को जानता है। उसी को यह फ़ैसला करना है कि किसपर दया करे और किसे अज़ाब दे। एक मुसलमान को सैद्धान्तिक रूप से तो यह कहने का अवश्य अधिकार प्राप्त है कि अल्लाह की किताब की दृष्टि से किस तरह के इनसान दयालुता के अधिकारी हैं और किस तरह के इनसान अज़ाब के अधिकारी। मगर किसी को यह कहने का अधिकार नहीं है कि अमुक व्यक्ति को अज़ाब दिया जाएगा और अमुक व्यक्ति को माफ़ किया कर दिया जाएगा।

27. इससे साफ़ मालूम होता है कि अल्लाह के सिवा दूसरे को सजदा करना ही शिर्क (बहुदेववाद) के अन्तर्गत नहीं आता, बल्कि अल्लाह के सिवा किसी दूसरे से प्रार्थना करना, या उसको सहायता के लिए पुकारना भी 'शिर्क' (बहुदेववाद) है।

28. ये शब्द साफ़ बता रहे हैं कि मुशरिकों (बहुदेववादियों) के जिन पूज्यों और सहायकों का यहाँ उल्लेख किया जा रहा है उनसे अभिप्रेत पत्थर की मूर्तियाँ नहीं हैं, बल्कि या तो फ़रिश्ते हैं या बीते हुए समय के महापुरुष और बड़े लोग।

29. यह इनकार करनेवालों की इस माँग का जवाब है कि मुहम्मद (सल्ल०) उनको कोई चमत्कार दिखाएँ। मतलब यह है कि ऐसा चमत्कार देख लेने के बाद जब लोग उसे झुठलाते हैं, तो फिर अवश्य ही उनपर अज़ाब का अवतरित होना अनिवार्य हो जाता है और फिर ऐसी क़ौम को तबाह किए बिना नहीं छोड़ा जाता। अब यह सर्वथा अल्लाह की दयालुता है कि वह ऐसा कोई चमत्कार (मोजज़ा) नहीं भेज रहा है, मगर तुम ऐसे मूर्ख लोग हो कि चमत्कार की माँग करके समूद जैसे परिणाम को पहुँचना चाहते हो।

हैं कि लोग उन्हे देखकर डरें। (60) याद करो ऐ नबी, हमने तुमसे कह दिया था कि तेरे रब ने इन लोगों को घेर रखा है। और यह जो कुछ अभी हमने तुम्हें दिखाया है,[30] उसको और उस पेड़ को जिसपर क़ुरआन में लानत की गई है,[31] हमने इन लोगों के लिए बस एक आज़माइश बनाकर रख दिया।[32] हम इन्हें चेतावनी पर चेतावनी दिए जा रहे हैं, मगर हर चेतावनी इनकी सरकशी में अभिवृद्धि किए जाती है।

(61) और याद करो जबकि हमने फ़रिश्तों से कहा कि आदम को सजदा करो, तो सबने सजदा किया मगर इबलीस ने न किया। उसने कहा, ''क्या मैं उसको सजदा करूँ जिसे तूने मिट्टी से बनाया है?'' (62) फिर वह बोला, ''देखो तो सही, क्या यह इस योग्य था कि तूने इसे मेरे मुक़ाबले में श्रेष्ठता दी? अगर तू मुझे क़ियामत के दिन तक मुहलत दे तो मैं इसकी पूरी नस्ल का उन्मूलन कर डालूँ बस थोड़े ही लोग मुझसे बच सकेंगे।'' (63) अलल्लाह ने कहा, ''अच्छा तो जा, उनमें से जो भी तेरा अनुसरण करें, तुझ सहित उन सब के लिए जहन्नम ही भरपूर बदला है। (64) तू जिस-जिसको अपने आमंत्रण से फिसला सकता है फिसला ले, उनपर अपने सवार और पैदल चढ़ा ला, धन और सन्तान में उनके साथ साझा लगा, और उनको वादे के जाल में फाँस—और शैतान के वादे एक धोखे के सिवा और कुछ भी नहीं (65)—यक़ीनन मेरे बन्दों पर तुझे कोई प्रभुत्व प्राप्त न होगा, और भरोसे के लिए तेरा रब काफ़ी है।''

30. इशारा है 'मेराज' की ओर। यहाँ 'रुअ्या' शब्द 'स्वप्न' के अर्थ में नहीं है बल्कि आँखों से देखने के अर्थ में है।

31. अर्थात् ज़क़्क़ूम (थूहड़) जिसके विषय में क़ुरआन में सूचना दी गई है कि वह दोज़ख़ की तह में पैदा होगा और दोज़ख़ में रहनेवालों को उसे खाना पड़ेगा। उसपर लानत करने से मुराद उसका अल्लाह की दयालुता (रहमत) से दूर होना है।

32. अर्थात् हमने उनकी भलाई के लिए तुमको 'मेराज' में दर्शनीय चीज़ें दिखाई, ताकि तुम जैसे सच्चे और विश्वासपात्र इनसान के द्वारा इन लोगों को मूल सत्य का ज्ञान प्राप्त हो और ये सावधान होकर सीधे मार्ग पर आ जाएँ, मगर इन लोगों ने उलटा इसपर तुम्हारी हँसी उड़ाई। हमने तुम्हारे द्वारा इनको सावधान किया कि यहाँ की हरामख़ोरियाँ आख़िरकार तुम्हें थूहड़ के निवाले (कौर) खिलाकर रहेंगी, मगर इन्होंने उसपर एक ठट्ठा लगाया और कहने लगे, तनिक इस व्यक्ति को देखो, एक ओर कहता है कि दोज़ख़ में प्रचण्ड आग भड़क रही होगी, और दूसरी ओर ख़बर देता है कि वहाँ पेड़ उगेंगे।

(66) तुम्हारा (वास्तविक) रब तो वह है जो समुद्र में तुम्हारी नौका चलाता है ताकि तुम उसका अनुग्रह (रोज़ी) तलाश करो। वास्तव में वह तुम्हारे हाल पर बड़ा ही मेहरबान है। (67) जब समुद्र में तुमपर मुसीबत आती है तो उस एक के सिवा दूसरे जिन-जिनको तुम पुकारा करते हो वे सब गुम हो जाते हैं, मगर जब वह तुमको बचाकर सूखी ज़मीन पर पहुँचा देता है तो तुम उससे मुँह मोड़ जाते हो। इनसान वास्तव में बड़ा कृतघ्न है। (68) अच्छा, तो क्या तुम इस बात से बिलकुल निश्चिन्त हो कि अल्लाह कभी सूखी ज़मीन पर ही तुमको ज़मीन में धँसा दे, या तुमपर पथराव करनेवाली आँधी भेज दे और तुम उससे बचानेवाला कोई मददगार न पाओ? (69) और क्या तुमको इसकी शंका नहीं कि अल्लाह फिर किसी समय समुद्र में तुमको ले जाए और तुम्हारी कृतघ्नता के बदले तुमपर प्रचण्ड तूफ़ानी हवा भेजकर तुम्हें डुबो दे और तुमको ऐसा कोई न मिले जो उससे तुम्हारे इस परिणाम के बारे में पूछ-गछ कर सके? (70)—यह तो हमारी कृपा है कि हमने आदम की सन्तान को श्रेष्ठता दी और उन्हें ख़ुश्की और तरी (समुद्र) में सरारियाँ प्रदान की और उनको पाक चीज़ों से रोज़ी दी और अपने बहुत-से पैदा किए हुओं पर स्पष्ट श्रेष्ठता प्रदान की। (71) फिर ध्यान में लाओ वह दिन जबकि हम इनसान के हर गिरोह को उसके नेता (पेशवा) के साथ बुलाएँगे। उस समय जिन लोगों को उनका कर्मपत्र सीधे हाथ में दिया गया वह अपना कारनाम पढ़ेंगे और उनपर कण-भर ज़ुल्म न होगा। (72) और जो इस दुनिया में अंधा बनकर रहा वह आख़िरत में भी अन्धा ही रहेगा बल्कि रास्ता पाने में अन्धे से भी ज़्यादा नाकाम।

(73) ऐ नबी, इन लोगों ने इस कोशिश में कोई कमी उठा नहीं रखी कि तुम्हें फ़ितने में डालकर उस वह्य से फेर दें जो हमने तुम्हारी ओर भेजी हैं ताकि तुम हमारे नाम पर अपनी ओर से कोई बात घड़ो। अगर तुम ऐसा करते तो वे ज़रूर तुम्हें अपना दोस्त बना लेते। (74) और दूर न था कि अगर हम तुम्हें मज़बूत न रखते तो तुम उनकी ओर कुछ न कुछ झुक जाते। (75) लेकिन अगर तुम ऐसा करते तो हम तुम्हें दुनिया में भी दोहरे अज़ाब का मज़ा चखाते और आख़िरत में भी दोहरे अज़ाब का, फिर हमारे मुक़ाबले में तुम कोई मददगार न पाते।

(76) और ये लोग इस बात पर भी तुले रहे हैं कि तुम्हारे क़दम इस भूभाग से उखाड़ दें और तुम्हें यहाँ से निकाल बाहर करें। लेकिन अगर ये ऐसा करेंगे तो तुम्हारे बाद ये ख़ुद यहाँ कुछ ज़्यादा देर न ठहर सकेंगे।

(77) यह हमारी निश्चित कार्यप्रणाली है जिसे उन सब रसूलों के मामले में हमने बरता है जिन्हें तुमसे पहले हमने भेजा था, और हमारी कार्यप्रणाली में तुम कोई परिवर्तन

न पाओगे।

(78) नमाज़ क़ायम करो सूरज ढलने से लेकर रात के अँधेरे तक[33] और फ़ज्र के क़ुरआन को भी आवश्यक ठहराओ क्योंकि फ़ज्र का क़ुरआन साक्षात् होता है।[34] (79) और रात को 'तहज्जुद' पढ़ो,[35] यह तुम्हारे लिए उसके अतिरिक्त (नफ़्ल) है, दूर नहीं कि तुम्हारा रब तुम्हें प्रशंसा योग्य स्थान पर पदासीन कर दे।[36]

(80) और दुआ करो कि पालनहार मुझको जहाँ भी तू ले जा सच्चाई के साथ ले जा और जहाँ से भी निकाल सच्चाई के साथ निकाल और अपनी ओर से एक सत्ता एवं अधिकार को मेरा सहायक बना दे।[37]

(81) और घोषणा कर दो कि ''सत्य आ गया और असत्य मिट गया, असत्या तो मिटने ही वाला है।''

(82) हम इस क़ुरआन के अवतरण-क्रम में वह कुछ अवतरित कर रहे हैं जो माननेवालों के लिए तो आरोग्य और दयालुता है, मगर ज़ालिमों के लिए घाटे के सिवा और किसी चीज़ में अभिवृद्धि नहीं करता। (83) इनसान का हाल यह है कि जब हमारा उसपर कृपादान होता है तो वह ऐंठता और पीठ मोड़ लेता है, और जब तनिक मुसीबत का सामना होता है तो निराश होने लगता है। (84) ऐ नबी, उन लोगों से कह दो कि ''हर एक अपने तरीक़े पर चल रहा है, अब यह तुम्हारा रब ही बेहतर जानता है कि सीधे मार्ग पर कौन है।''

---

33. इसमें 'ज़ुहर' से लेकर 'इशा' तक की चारों नमाज़ें आ जाती हैं।
34. फ़ज्र के क़ुरआन से मुराद सुबह (फ़ज्र) की नमाज़ में क़ुरआन पढ़ना है और फ़ज्र के क़ुरआन के साक्षात् होने का अर्थ यह है कि अल्लाह के फ़रिश्ते विशेष रूप से उसके गवाह बनते हैं क्योंकि उसे एक विशेष महत्त्व प्राप्त है।
35. 'तहज्जुद' का अर्थ है 'नींद तोड़कर उठना'। अतः रात के समय तहज्जुद करने का अर्थ यह है कि रात का एक भाग सोने के बाद फिर उठकर नमाज़ पढ़ी जाए।
36. अर्थात् दुनिया और आख़िरत में तुमको ऐसे पद पर पहुँचा दे जाँ तुम सब में प्रशंसापात्र होकर रहो। हर ओर से तुमपर प्रशंसा एवं सराहना की वर्षा हो, और तुम्हारा अस्तित्व एक प्रशंसा के योग्य अस्तित्व बनकर रहे।
37. अर्थात् या तो मुझे ख़ुद सत्ता एवं अधिकार प्रदान कर, या किसी हकूमत को मेरा सहायक बना दे ताकि उसकी शक्ति से मैं दुनिया के इस बिगाड़ को ठीक कर सकूँ, अश्लीलता और अवज्ञा की इस बाढ़ को रोक सकूँ, और तेरे इनसाफ़ के क़ानून को लागू कर सकूँ।

(85) ये लोग तुमसे रूह के विषय में पूछते हैं। कहो, "यह रूह मेरे रब के आदेश से आती है, मगर तुम लोगों ने ज्ञान का थोड़ा ही भाग पाया है।"[38] (86) और ऐ नबी, हम चाहें तो वह सब कुछ तुमसे छीन ले जो हमने वह्य के द्वारा तुमको प्रदान किया है, फिर तुम हमारे मुक़ाबले में कोई हिमायती न पाओगे जो उसे वापस दिला सके। (87) यह तो जो कुछ तुम्हें मिला है तुम्हारे रब की दयालुता से मिला है, वास्तविकता यह है कि उसका अनुग्रह तुमपर बहुत बड़ा है। (88) कह दो कि अगर इनसान और जिन्न सब के सब मिलकर इस क़ुरआन जैसी कोई चीज़ लाने की कोशिश करें तो न ला सकेंगे, चाहे वे सब एक दूसरे के सहायक ही क्यों न हों।

(89) हमने इस क़ुरआन में लोगों को तरह-तरह से समझाया मगर ज़्यादातर लोग इनकार ही पर जमे रहे। (90) और उन्होंने कहा, "हम तेरी बात न मानेंगे जब तक कि तू हमारे लिए ज़मीन को फाड़कर एक स्रोत प्रवाहित न कर दे। (91) या तेरे लिए खजूरों और अंगूरों का एक बाग़ पैदा हो और तू उसमें नहरें प्रवाहित कर दे। (92) या तू आसमान को टुकड़े-टुकड़े करके हमारे ऊपर गिरा दे जैसा कि तेरा दावा है। या अल्लाह और फ़रिश्तों को साक्षात् हमारे सामने ले आए। (93) या तेरे लिए सोने का एक घर बन जाए। या तू आसमान पर चढ़ जाए, और तेरे चढ़ने का भी हम विश्वास न करेंगे जब तक कि तू हमारे ऊपर एक लेख्य न उतार लाए जिसे हम पढ़ें—ऐ नबी, उनसे कहो, "पाक है मेरा पालनहार! क्या मैं एक सन्देश लानेवाले इनसान के सिवा और भी कुछ हूँ?"

(94) लोगों के सामने जब कभी मार्गदर्शन आया तो उसे मानने से उनको किसी

38. आम तौर पर यह समझा जाता है कि यहाँ रूह से मुराद प्राण (जान) है। अर्थात् लोगों ने नबी (सल्ल॰) से ज़िन्दगी की रूह के विषय में पूछा था कि उसकी वास्तविकता क्या है और इसका जवाब यह दिया गया कि वह अल्लाह के आदेश से आती है। लेकिन संदर्भ को दृष्टि में रखकर देखा जाए तो साफ़ महसूस होता है कि यहाँ रूह से मुराद नुबूवत की रूह या प्रकाशना (वह्य, Revelation) है और यही बात सूरा 16 (नहल) आयत 2, सूरा 40 (मोमिन) आयत 15 और सूरा 42 (शूरा) आयत 52 में बयान हुई है। प्राचीन विद्वानों में से इब्न अब्बास (रज़ि॰) क़तादह और हसन बसरी (रह॰) ने भी यही अर्थ लिया है और क़ुरआन की टीका 'रूहुल मआनी' के लेखक ने हसन और क़तादह के ये शब्द उद्धृत किए हैं कि "रूह से मुराद जिबरील (अलै॰) हैं और सवाल वास्तव में यह था कि वे कैसे उतरते हैं और किस तरह नबी (सल्ल॰) के दिल पर वह्य की जाती है।"

चीज़ ने नहीं रोका सिवाय उनके इसी कथन ने कि "क्या अल्लाह ने इनसान को पैग़म्बर बनाकर भेज दिया?" (95) उनसे कहो, अगर ज़मीन में फ़रिश्ते इतमीनान से चल-फिर रहे होते तो हम ज़रूर आसमान से किसी फ़रिश्ते ही को उनके लिए पैग़म्बर बनाकर भेजते।

(96) ऐ नबी, उनसे कह दो कि मेरे और तुम्हारे बीच बस एक अल्लाह की गवाही काफ़ी है। वह अपने बन्दों के हाल से आगाह है और सब कुछ देख रहा है।

(97) जिसको अल्लाह मार्ग दिखाए वही मार्ग पानेवाला है, और जिसे वह गुमराही में डाल दे तो उसके सिवा ऐसे लोगों के लिए तू कोई हामी और मददगार नहीं पा सकता। उन लोगों को हम क़ियामत के दिन औंधे मुँह खींच लाएँगे, अन्धे, गूँगे और बहरे। उनका ठिकाना जहन्नम है। जब कभी उसकी आग धीमी होने लगेगी हम उसे और भड़का देंगे। (98) यह बदला है उनके इस कर्म का कि उन्होंने हमारी आयतों का इनकार किया और कहा, "क्या जब हम सिर्फ़ हड्डियाँ और मिट्टी होकर रह जाएँगे तो नए सिरे से हमको पैदा करके उठा खड़ा किया जाएगा? (99) क्या उनको यह न सूझा कि जिस अल्लाह ने धरती और आकाशों को पैदा किया है वह इन जैसों को पैदा करने की ज़रूर सामर्थ्य रखता है? उसने (मौत के बाद) इनके उठाए जाने के लिए एक समय निश्चित कर रखा है जिसका आना निश्चित है, मगर ज़ालिमों को आग्रह है कि वे उसका इनकार ही करेंगे।

(100) ऐ नबी, उनसे कहो, अगर कहीं मेरे रब की दयालुता के ख़ज़ाने तुम्हारे अधिकार में होते तो तुम ख़र्च हो जाने की आशंका से ज़रूर उनको रोक रखते। वास्तव में इनसान बड़ा तंग दिल है।[39]

(101) हमने मूसा को नौ निशानियाँ प्रदान की थी जो स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही

39. मक्का के मुशरिक (बहुदेववादी) जिन मनोवृत्तियों के कारण नबी (सल्ल॰) की नुबूवत (पैग़म्बरी) का इनकार करते थे उनमें से एक महत्त्वपूर्ण कारण यह था कि इस तरह उन्हें आपकी श्रेष्ठता माननी पड़ती थी, और अपने किसी समकालीन और अपने स्तर के किसी व्यक्ति की श्रेष्ठता को स्वीकार करने के लिए इनसान मुश्किल से ही तैयार हुआ करता है। इसी पर कहा जा रहा है कि जिन लोगों की कृपणता और कंजूसी का हाल यह है कि किसी के वास्तविक दर्जे को स्वीकार करते हुए भी उनका दिल दुखता है, उन्हें अगर कहीं अल्लाह ने अपनी दयालुता के ख़ज़ानों की कुंजियाँ सौंप दी होतीं तो वे किसी को फूटी कौड़ी भी न देते।

थीं।[40] अब यह तुम ख़ुद बनी इसराईल से पूछ लो कि जब मूसा उनके यहाँ आए तो फ़िरऔन ने यही कहा था ना कि ऐ मूसा मैं समझता हूँ कि तू ज़रूर जादू का मारा हुआ एक आदमी है।'' (102) मूसा ने इसके जवाब में कहा, ''तू ख़ूब जानता है कि ये सूझ-बूझ बढ़ानेवाली निशानियाँ ज़मीन और आसमानों के रब के सिवा किसी ने नहीं उतारी हैं,[41] और मैं समझता हूँ कि ऐ फ़िरऔन, तू ज़रूर ही शामत का मारा हुआ एक व्यक्ति है।'' (103) आख़िरकार फ़िरऔन ने इरादा किया कि मूसा और बनी इसराईल को ज़मीन से उखाड़ फेंके, मगर हमने उसको और उसके साथियों को इकट्ठा डुबो दिया। (104) और उसके बाद बनी इसराईल से कहा कि अब तुम ज़मीन में बसो, फिर जब आख़िरत के वादे का समय आ पूरा होगा तो हम तुम सबको एक साथ ला हाज़िर करेंगे।

(105) इस क़ुरआन को हमने सत्य के साथ उतारा है और सत्य ही के साथ यह उतरा है, और ऐ नबी, तुम्हें हमने इसके सिवा और किसी काम के लिए नहीं भेजा कि (जो मान ले उसे) ख़ुशख़बरी दे दो और (जो न माने उसे) सावधान कर दो। (106) और इस क़ुरआन को हमने थोड़ा-थोड़ा करके उतारा है ताकि तुम ठहर-ठहरकर इसे लोगों को सुनाओ, और इसे हमने (अवसर-अवसर से) क्रमशः उतारा है। (107) ऐ नबी, इन लोगों से कह दो कि तुम इसे मानो या न मानो, जिन लोगों को इससे पहले ज्ञान दिया गया है उन्हें जब यह सुनाया जाता है तो वे मुँह के बल सजदे में गिर जाते हैं (108) और पुकार उठते हैं, ''पाक है हमारा रब, उसका वादा तो पूरा होना ही था।'' (109) और वे मुँह के बल रोते हुए गिर जाते हैं और इसे सुनकर उनकी विनम्रता और बढ़ जाती है।

(110) ऐ नबी, इनसे कहो, ''अल्लाह कहकर पुकारो या रहमान कहकर, जिस नाम से भी पुकारो उसके लिए सब अच्छे ही नाम हैं।''[42] और अपनी नमाज़ न बहुत ज़्यादा ऊँची आवाज़ से पढ़ो और न बहुत दबी आवाज़ से, इन दोनों के बीच औसत दर्जे

40. इन 9 निशानियों का विवरण सूरा 7 (आराफ़) में आ चुका है।

41. यह बात हज़रत मूसा (अलै॰) ने इसलिए कही कि एक पूरे देश में अकाल पड़ जाना, या लाखों वर्ग मील ज़मीन पर फैले हुए इलाक़े में मेंढकों का एक बला की तरह निकला, या सारे देश में अनाज के गोदामों में घुन लग जाना, और इसी तरह की दूसरी सभी मुसीबतें किसी जादूगर के जादू, या किसी इनसानी ताक़त के चमत्कार से प्रकट नहीं हो सकतीं। जादूगर सिर्फ़ एक सीमित स्थान में एक मजमे की दृष्टि पर जादू करके उन्हें कुछ चमत्कार दिखा सकता है और वे भी सत्य नहीं होते बल्कि निगाह का धोखा होते हैं।

का लहजा अपनाओ।[43] (111) और कहो प्रशंसा है उस अल्लाह के लिए जिसने न किसी को बेटा बनाया, न कोई शासन ही में उसका साझीदार है, और न वह बेबस है कि कोई उसका हिमायती हो।'' और उसकी बड़ाई बयान करो, उच्च कोटि की बड़ाई।



42. यह जवाब है मक्का के मुशरिकों (बहुदेववादियों) की इस आपत्ति का कि स्रष्टा के लिए 'अल्लाह' का नाम तो हमने सुना था, मगर यह 'रहमान' (करुणामय) का नाम तुमने कहाँ से निकाला? उनके यहाँ चूँकि अल्लाह के लिए यह नाम प्रचलित न था इसलिए वे इसपर नाक-भौं चढ़ाते थे।

43. इब्ने अब्बास (रज़ि॰) का बयान है कि मक्का में जब नब (सल्ल॰) या दूसरे सहाबा नमाज़ पढ़ते समय ऊँची आवाज़ से क़ुरआन पढ़ते थे तो अधर्मी लोग शोर मचाने लगते और बहुधा ऐसा होता कि गालियों की बौछार शुरू कर देते थे। इसपर आदेश हुआ कि न तो इतने ज़ोर से पढ़ो कि अधर्मी लोग सुनकर भीड़ लगाएँ, और न इतना धीरे से पढ़ो कि तुम्हारे अपने साथी भी न सुन सकें। यह आदेश सिर्फ़ उन स्थितियों के लिए ही था। मदीना में जब परिस्थितियाँ बदल गई तो यह आदेश बाक़ी न रहा। अलबत्ता जब कभी मुसलमानों को मक्का जैसी परिस्थितियों का सामना करना पड़े तो उन्हें इसी आदेश का पालन करना चाहिए।

18. अल-कह्फ़

नाम

इस सूरा का नाम सूरा की 9 वीं आयत "जब उन कुछ नवयुवकों ने गुफा (कह्फ़) में शरण ली" से उद्धृत है। इस नाम का अर्थ यह है कि वह सूरा जिसमें कह्फ़ (गुफा) का शब्द आया है।

अवतरणकाल

यहाँ से उन सूरतों का शुभारम्भ होता है जो मक्की जीवन के तीसरे कालखण्ड में अवतरित हुई हैं। यह कालखण्ड लगभग सन् 5 नबवी के आरंभ से शुरू होकर क़रीब-क़रीब सन् 10 नबवी तक चलता है। इस काल में क़ुरैश ने नबी (सल्ल॰) और आपके आन्दोलन और दल को दबाने के लिए उपहास, हँसी, आक्षेपों, आरोपों, डरावा, प्रलोभन और विरोधात्मक प्रोपगंडे से आगे बढ़कर अत्याचार, मार-पीट और आर्थिक दबाव के हथियार पूरी कठोरता के साथ इस्तेमाल किए।

सूरा कह्फ़ की विषय-वस्तु पर विचार करने से अनुमान होता है कि यह तीसरे कालखण्ड के आरंभ में अवतरित हुई होगी, जबकि अत्याचार और विरोध ने उग्र रूप धारण कर लिया था, किन्तु अभी हबशा (अबीसीनिया) की हिजरत पेश नहीं आई थी। उस समय जो मुसलमान सताए जा रहे थे उनको गुफावालों का क़िस्सा सुनाया गया ताकि उनकी हिम्मत बँधे और उन्हें मालून हो कि ईमानवाले अपना ईमान बचाने के लिए इससे पहले क्या कुछ कर चुके हैं।

शीर्षक और वार्तावस्तु

यह सूरा मक्का के बहुदेववादियों के तीन प्रश्नों के उत्तर में अवतरित हुई है, जो उन्होंने नबी (सल्ल॰) की परीक्षा लेने के लिए किताबवालों के परामर्श से आपके सामने रखे थे :

गुफावाले कौन थे? ख़िज़्र की कथा की वास्तविकता क्या है? और ज़ुलक़रनैन का क्या क़िस्सा है? ये तीनों क़िस्से ईसाईयों और यहूदियों के इतिहास से सम्बन्ध रखते थे। हिजाज़ में इनकी कोई चर्चा न थी। किन्तु अल्लाह ने केवल यही नहीं कि अपने नबी (सल्ल॰) के मुख से उनके प्रश्नों का पूरा उत्तर दिया, बल्कि उनके अपने पूछे हुए तीनों क़िस्सों को पूर्णरूप से उस परिस्थिति पर घटित करके दिखा भी दिया, जो उस समय मक्का में कुफ़्र और इस्लाम के मध्य पैदा हो गई थी :

1. गुफ़ारालों के सम्बन्ध में बताया गया कि वे उसी एकेश्वरवाद को मानते थे जिसकी ओर यह क़ुरआन बुला रहा है और उनकी स्थिति मक्का के मुट्ठी-भर पीड़ित मुसलमानों की स्थिति से और उनकी क़ौम की नीति क़ुरैश के काफ़िरों की नीति से कुछ भिन्न न थी। फिर इसी क़िस्से से ईमानवालों को यह शिक्षा दी गई कि यदि काफ़िर आत्यान्तिक रूप से प्रभावी हों और ईमानवाले को ज़ालिम समाज में साँस लेने तक की मुहलत न दी जा रही हो, तब भी उसको असत्य के आगे सिर न झुकाना चाहिए (चाहे इसके लिए उसे घरबार और बाल-बच्चे सब कुछ छोड़ देना पड़े)।

2. गुफावालों के क़िस्से से रास्ता निकालकर उस अत्याचार और मानहीन की नीति पर बात शुरू कर दी गई जो मक्का के सरदार मुसलमानों के साथ व्यवहार में ला रहे थे। इस सिलसिले में एक तरफ़ नबी (सल्ल॰) को आदेश दिया गया कि न इन ज़ालिमों से कोई समझौता करो और न अपने ग़रीब साथियों के मुक़ाबिले में इन बड़े-बड़े लोगों को कोई महत्त्व दो। दूसरी ओर इन धनवान सरदारों को नसीहत की गई कि अपने जीवन के क्षणिक भोग-विलास पर न फूलों, बल्कि उन भलाइयों के इच्छुक बनो जो शाश्वत और स्थायी हैं।

3. वार्ता के इसी सिलसिले में ख़िज़्र और मूसा (अलै॰) का क़िस्सा कुछ ऐस ढंग से सुनाया गया कि उसमें काफ़िरों के प्रश्नों का उत्तर भी था और ईमानवालों के लिए तसल्ली का सामान भी। इस क़िस्से में वास्तव में जो शिक्षा दी गई है वह यह कि ईश-इच्छा का कार्य-कलाप जिन निहित उद्देश्यों पर चल रहा है वे चूँकि तुम्हारी निगाहों से छुपे हुए हैं, इसलिए तुम बात-बात पर आश्चर्य-चकित होते हो कि यह क्यों हुआ? हालाँकि यदि पर्दा उठा दिया जाए तो तुम्हें स्वयं मालूम हो जाए कि यहाँ जो कुछ हो रहा है, ठीक हो रहा है।

4. इसके बाद ज़ुलक़रनैन का क़िस्सा बयान होता है और उसमें प्रश्नकर्ताओं को यह शिक्षा दी जाती है कि तुम तो अपनी इतनी छोटी-छोटी सरदारियों पर फूल रहे हो, जबकि ज़ुलक़रनैन इतना बड़ा शासक और बलवान विजयकर्ता और इतने भव्य संसाधनों का मालिक होकर भी अपनी वास्तविकता को न भूला था और अपने स्रष्टा के आगे सदैव नतमस्तक रहता था।

वार्ता के अन्त में फिर उन्हीं बातों को दोहरा दिया गया है जो वार्ता के आरंभ में बयान हुई हैं अर्थात् यह कि एकेश्वरवाद और परलोक सर्वथा सत्य है और तुम्हारी अपनी भलाई इसी में है कि इन्हें मानो।



18. सूरा अल-कह्फ़

(मक्का में उतरी–आयतें 110)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने अपने बन्दे पर यह किताब उतारी और इसमें कोई टेढ़ न रखी। (2) ठीक-ठीक सीधी बात कहनेवाली किताब, ताकि वह लोगों को अल्लाह के कठोर अज़ाब से सावधान कर दे, और ईमान लाकर अच्छे कर्म करनेवालों को ख़ुशख़बरी दे दे कि उनके लिए अच्छा बदला है (3) जिसमें वे हमेशा रहेंगे, (4) और उन लोगों को डरा दे जो कहते है कि अल्लाह ने किसी को बेटा बनाया है। (5) इस बात का न उन्हें कोई ज्ञान है और न उनके बाप-दादा को था। बड़ी बात है जो उनके मुँह से निकलती है, वे केवल झूठ बकते हैं।

(6) अच्छा, तो ऐ नबी, शायद तुम इनके पीछे ग़म के मारे अपनी जान खो देनेवाले हो अगर ये उस शिक्षा पर ईमान न लाए। (7) वाक़िआ यह है कि यह जो कुछ सरो-सामान भी ज़मीन पर है इसको हमने ज़मीन की शोभा बनाया है ताकि इन लोगों को आज़माएँ कि इनमें कौन अच्छा कर्म करनेवाला है। (8) आख़िरकार इस सबको हम एक चटियल मैदान बना देनेवाले हैं।

(9) क्या तुम समझते हो कि गुफा और शिलालेखवाले[1] हमारी कोई बड़ी अनोखी निशानियों में से थे? (10) जब उन कुछ नवयुवकों ने कुफा में पनाह ली और उन्होंने कहा कि ''ऐ पालनहार, हमको अपनी विशेष दयालुता का पात्र बना और हमारा मामला ठीक कर दे,'' (11) तो हमने उन्हें उसी गुफा में थपककर वर्षों के लिए गहरी नींद सुला दिया, (12) फिर हमने उन्हें उठाया ताकि देखें उनके दो गिरोहों में से कौन अपनी ठहरने की अवधि की ठीक गणना करता है।

(13) हम उनकी वास्तविक कहानी तुम्हें सुनाते हैं। वे कुछ नवयुवक थे जो अपने रब पर ईमान लाए थे और हमने उन्हें मार्गदर्शन की दृष्टि से उन्नति प्रदान की थी।[2] (14) हमने उनके दिल उस समय मज़बूत कर दिए जब वे उठे और उन्होंने यह घोषणा

1. अर्थात् वे नव-युवक जिन्होंने अपना ईमान बचाने के लिए गुफा में पनाह ली थी और जिनकी गुफा पर बाद में स्मृति-लेख लगाया गया था।
2. उल्लेखों से मालूम होता है कि ये नव-युवक आरंभिक युग के मसीह (अलै॰) के अनुयायियों में से थे और रूम राज्य की प्रजा थे जो उस समय मुशरिक (बहुदेववादी) थी और एकेश्वरवादियों की बड़ी दुश्मन हो रही थी।

कर दी कि ''हमारा रब तो बस वही है जो आसमानों और ज़मीन का रब है, हम उसे छोड़कर किसी दूसरे पूज्य को न पुकारेंगे। अगर हम ऐसा करें तो बिलकुल अनुचित बात करेंगे।'' (15) (फिर उन्होंने आपस में एक-दूसरे से कहा) ''ये हमारी क़ौम तो जगत् के स्वामी को छोड़कर दूसरे ईश बना बैठी है। ये लोग उनके पूज्य होने पर कोई स्पष्ट प्रमाण क्यों नहीं लाते? आख़िर उस व्यक्ति से बड़ा ज़ालिम कौन हो सकता है जो अल्लाह पर झूठ बाँधे? (16) अब जबकि तुम उनसे और अल्लाह के अतिरिक्त उनके इष्ट पूज्यों से सम्बन्ध काट चुके हो तो चलो अब अमुक गुफा में चलकर पनाह लो। तुम्हारा रब तुमपर अपनी दयालुता का दामन फैलाएगा और तुम्हारे काम के लिए साधन जुटा देगा।''

(17) तुम उन्हें गुफा में देखते[3] तो तुम्हें यूँ दिखाई देता कि सूरज जब निकलता है तो उनकी गुफा को छोड़कर दाहिनी ओर चढ़ जाता है और जब डूबतदा है तो उनसे बचकर बाई ओर उतर जाता है और वे हैं कि गुफा के भीतर एक विस्तृत स्थान में पड़े हैं। यह अललाह की निशानियों में से एक है, जिसको अल्लाह मार्ग दिखाए वही मार्ग पानेवाला है और जिसे अल्लाह भटका दे उसके लिए तुम कोई मार्गदर्शक अभिभावक नहीं पा सकते। (18) तुम उन्हें देखकर यह समझते कि वे जाग रहे हैं, हालाँकि वे सो रहे थे। हम उन्हें दाएँ-बाएँ करवट दिलवाते रहते थे और उनका कुत्ता गुफा के दहाने पर हाथ फैलाए बैठा था। अगर तुम कहीं झाँककर उन्हें देखते तो उलटे पाँव भाग खड़े होते और तुम उनको देखकर भयभीत हो जाते।

(19) और इसी अनोखे चमत्कार से हमने उन्हें उठा बिठाया[4] ताकि तनिक आपस में पूछ-गछ करें। उनमें से एक ने पूछा, ''कहो, कितनी देर इस हाल में रहे?'' दूसरों ने कहा, ''शायद दिनभर या उससे कुछ कम रहे होंगे।'' फिर वे बोले, ''अल्लाह ही बेहतर जानता है कि हमारा कितना समय इस हालत में बीता। चलो, अब अपने में से किसी को चाँदी का यह सिक्का देकर शहर भेजें और वह देखे कि सबसे अच्छा भोजन कहाँ मिलता है। वहाँ से वह कुछ खाने के लिए लाए। और चाहिए कि ज़रा होशियारी

3. बीच में यह बात छोड़ दी गई कि इस पारस्परिक प्रस्ताव के अनुसार ये लोग शहर से निकलकर पहाड़ों के मध्य एक गुफा में जा छिपे ताकि पत्थरों से मार डाले जाने या धर्म से फेर दिए जाने से बच जाएँ।
4. अर्थात् जैसे अजीब ढंग से वे सुलाए गए थे और दुनिया को उनके हाल से बेख़बर रखा गया था, वैसे ही कुदरत का अजीब चमत्कार उनका एक लम्बी अवधि के बाद जागना भी था।

से काम करे, ऐसा न हो कि वह किसी को हमारे यहाँ पर होने की सूचना दे बैठे. (20) अगर कहीं उन लोगों का हाथ हमपर पड़ गया तो बस पथराव करके मार ही डालेंगे, या फिर ज़बरदस्ती हमें अपने पन्थ में वापस ले जाएँगे और ऐसा हुआ तो हम कभी सफल न हो सकेंगे'' (21)—इस तरह हमने शहरवालों को उनके हाल की ख़बर कर दी[5] ताकि लोग जान लें कि अल्लाह का वादा सच्चा है और यह कि क़ियामत की घड़ी बेशक आकर रहेगी। (मगर ज़रा सोचो कि जब सोचने की असल बात यह थी) उस समय वे आपस में इस बात पर झगड़ रहे थे कि इन (गुफ़ावालों) के साथ क्या किया जाए। कुछ लोगों ने कहा, ''इनपर एक दीवार चुन दो, इनका रब ही इनके मामले को बेहतर जानता है।''[6] मगर जो लोग उनके मामलों पर प्रभावी थे उन्होंने कहा, ''हम तो इनपर एक उपासनागृह बनाएँगे।''[7]

(22) कुछ लोग कहेंगे कि वे तीन थे और चौथा उनका कुत्ता था। और कुछ दूसरे

5. अर्थात् जब वह व्यक्ति भोजन ख़रीदने के लिए शहर गया तो दुनिया बदल चुकी थी। मूर्तिपूजक रूम को ईसाई हुए एक अवधि बीत चुकी थी। भाषा, सभ्यता, संस्कृति, वेश-भूषा, हर चीज़ में स्पष्ट अन्तर आ गया था। दो सौ वर्ष पहले का यह आदमी अपनी सजधज, वस्त्र, भाषा हर चीज़ से तुरन्त एक तमाशा बन गया। और जब उसने पुराने समय का सिक्का भोजन ख़रीदने के लिए पेश किया तो दुकानदार की आँखें फटी की फटी रह गई। जाँच-पड़ताल की गई तो मालूम हुआ कि यह व्यक्ति तो मसीह के उन अनुयायियों में से है जो दो सौ वर्ष पहले अपना ईमान बचाने के लिए भाग निकले थे। यह ख़बर तुरंत शहर की ईसाई आबादी में फैल गई और अधिकारियों के साथ लोगों की एक भीड़ गुफा पर पहुँच गई। अब जो गुफ़ावालों को मालूम हुआ कि वे दो सौ वर्ष के बाद सोकर उठे हैं तो वे अपनी ईसाई भाइयों को सलाम करके लेट गए और उनकी जान निकल गई।
6. वर्णन-शैली से व्यक्त होता है कि यह ईसाइयों के सुचरित्र व्यक्तियों का कथन था। उनकी राय यह थी कि गुफ़ावाले, जिस तरह गुफा में लेटे हुए हैं उसी तरह उन्हें लेटा रहने दो और गुफा के दहाने को बन्द कर दो, उनका रब ही बेहतर जानता है कि ये कौन लोग हैं, किस श्रेणी के इनसान हैं और किस बदले के अधिकारी हैं।
7. यह इस कारण हुआ कि उस समय ईसाई जन-साधारण में भी शिर्क (बहुदेववाद) के विचार फैल चुके थे। पुरानी मूर्तियों की जगह ये नए पूज्य उन्हें पूजने के लिए मिल गए।

कह देंगे कि पाँच थे और छठा उनका कुत्ता था। ये सब बेतुकी हाँकते हैं। कुछ और लोग कहते हैं कि सात थे और आठवाँ उनका कुत्ता था।[8] कहो, मेरा रब ही बेहतर जानता है कि वे कितने थे। कम ही लोग उनकी ठीक तादाद जानते हैं। अतः सरासरी बात से बढ़कर उनकी तादाद के मामले में लोगों से वाद-विवाद न करो, और न उनके सम्बन्ध में किसी से कुछ पूछो।[9] (23)—और[10] देखो, किसी चीज़ के बारे में कभी यह न कहा करो कि मैं कल यह काम कर दूँगा। (24) (तुम कुछ नहीं कर सकते) सिवाय इसके कि अल्लाह चाहे। अगर भूले से ऐसी बात मुँह से निकल जाए तो तुरन्त अपने रब को याद करो और कहो, ''उम्मीद है कि मेरा रब इस मामले में सच्चाई से निकटतम बात की ओर मेरा मार्गदर्शन करेगा।'' (25)—और वे अपनी गुफा में तीन सौ वर्ष रहे, और (कुछ लोग अवधि की गणना में) नौ वर्ष और बढ़ गए हैं। (26) तुम कहो, अल्लाह उनके ठहरने की अवधि ज़्यादा जानता है,[11] आसमानों और ज़मीन की सब छिपी बातें उसी को मालूम हैं, क्या ख़ूब है, वह देखनेवाला और सुननेवाला! (जमीन और आसमान के सृष्टि प्राणी आदि की) कोई ख़बर लेनेवाला उसके सिवा नहीं, और वह अपनी सत्ता में किसी को साझीदार नहीं बनाता।

8. इससे मालूम होता है कि इस घटना के पौने तीन सौ वर्ष के बाद क़ुरआन के अवतरित होने के समय में इसके विवरण के सम्बन्ध में विभिन्न कथाएँ ईसाइयों में फैली हुई थीं और साधारणतया प्रामाणिक ज्ञान लोगों के पास मौजूद न था। फिर भी चूँकि तीसरे कथन का खण्डन अल्लाह ने नहीं किया इसलिए यह अनुमान किया जा सकता है कि ठीक तादाद सात ही थी।
9. अर्थात् असल चीज़ उनकी तादाद नहीं, बल्कि असल चीज़ वे शिक्षाएँ हैं जो इस घटना से मिलती हैं।
10. यह एक सन्निविष्ट वाक्य है जो पिछली आयत के विषय की अनुकूलता से वार्ता के बीच में कहा गया है। पिछली आयत में कहा गया था कि गुफ़ावालों की तादाद का सच्चा ज्ञान अल्लाह को है और उसकी जाँच-पड़ताल में पड़ना एक अनावश्यक काम है। इस सिलसिले में आगे की बात कहने से पहले सन्निविष्ट वाक्य के रूप में एक और आदेश भी नबी (सल्ल॰) और ईमानवालों को दिया गया और वह यह कि तुम कभी दावे से यह न कह देना कि मैं कल अमुक काम कर दूँगा। तुमको क्या ख़बर कि तुम वह काम कर सकोगे या नहीं।
11. अर्थात् गुफ़ावालों की तादाद की तरह उनके ठहरने की अवधि के बारे में भी लोगों के बीच मतभेद है मगर तुम्हें उसकी खोज में पड़ने की ज़रूरत नहीं। अल्लाह ही जानता है कि वे कितने समय तक इस हालत में रहे।

(27) ऐ नबी, तुम्हारे रब की किताब में से जो कुछ तुमपर प्रकाशना की गई है उसे (ज्यों का त्यों) कुना दो, कोई उसके फ़रमानों को बदल देने का अधिकारी नहीं है, (और अगर तुम किसी के लिए उसमें परिवर्तन करोगे तो) उससे बचकर भागने के लिए कोई पनाह का ठिकाना न पाओगे. (28) और अपने दिल को उन लोगों के साथ रहने पर सन्तुष्ट करो जो अपने रब की प्रसन्नता के इच्छुक बनकर सुबह और शाम उसे पुकारते हैं, और उनसे हरगिज़ निगाह न फेरो। क्या तुम दुनिया की शोभा को पसन्द करते हो? किसी ऐसे व्यक्ति का आज्ञापालन न करो,[12] जिसके दिल को हमने अपनी याद से ग़ाफ़िल कर दिया है और जो अपनी इच्छा पर चलने और मनमानी करने में लग गया है और जिसका कार्यकलाप असन्तुलित है। (29) स्पष्ट कह दो कि यह सत्य है तुम्हारे रब की ओर से, अब जिसका जी चाहे मान ले और जिसका जी चाहे इनकार कर दे। हमने (इनकार करनेवाले) ज़ालिमों के लिए एक आग तैयार कर रखी है जिसकी लपटें उनहें घेरे में ले चुकी हैं। वहाँ अगर वे पानी माँगेंगे तो ऐसे पानी से उनका सत्कार किया जाएगा जोतेल की तलछट जैसा होगा और उनका मुँह भून डालेगा, बहुत ही बुरा पेय और बहुत बुरा विश्राम स्थल! (30) रहे वे लोग जो मान ले और अच्छे काम करें, तो यक़ीनन हम सत्कर्मी लोगों का बदला अकारथ नहीं किया करते। (31) उनके लिए सदाबहार जन्नतें हैं जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, वहाँ वे सोने के कंगनों से आभूषित किए जाएँगे,[13] बारीक और गाढ़े रेशमी हरित कपड़े पहनेंगे, और ऊँची मसनदों पर तकिए लगाकर बैठेंगे। बहुत ही अच्छा बदला और उच्च श्रेणी का ठहरने का स्थान!

(32) ऐ नबी, इनके सामने एक मिसाल पेश करो। दो व्यक्ति थे। उनमें से एक को हमने अंगूर के दो बाग़ दिए और उनके चारों ओर खजूर के पेड़ों की बाड़ लगाई और उनके बीच खेती की ज़मीन रखी। (33) दोनों बाग़ ख़ूब फले-फूले और फलित होने में उन्होंने तनिक-सी कमी भी न छोड़ी। उन बाग़ों के अन्दर हमने एक नहर प्रवाहित कर

12. अर्थात् उसकी बात न मानो, उसके आगे न झुको, उसकी इच्छा पूरी न करो और उसके कहने पर न चलो। यहाँ 'इताअत' शब्द इस्तेमाल हुआ है और अपने व्यापक अर्थ में इस्तेमाल हुआ है।

13. प्राचीन काल में बादशाह सोने के कंगन पहनते थे। जन्नतवालों के वस्त्र के अंतर्गत इस चीज़ के उल्लेख से यह बताना उद्देश्य है कि वहाँ उनको शाही लिबास पहनाए जाएँगे। सत्य का इनकार करनेवाला और अवज्ञाकारी एक बादशाह वहाँ अपमानित होगा और एक ईमानवाला और सत्कर्मी मजदूर वहाँ बादशाहों जैसी शान व शौकत से रहेगा।

दी (34) और उसे ख़ूब लाभ प्राप्त हुआ। यह कुछ पाकर एक दिन वह अपने पड़ोसी से बात करते हुए बोला, ''मैं तुझसे ज़्यादा धनवान् हूँ और तुझसे अधिक व्यक्तियों की शक्ति मुझे प्राप्त है।'' (35) फिर उसने अपने बाग़ में प्रवेश किया और ख़ुद अपने हक़ में ज़ालिम बनकर कहने लगा, ''मैं नहीं समझता कि यह धन कभी नष्ट हो जाएगा, (36) और मुझे आशा नहीं कि क़ियामत की घड़ी कभी आएगी। फिर भी अगर कभी मुझे अपने रब के पास पलटाया भी गया तो ज़रूर इससे भी ज़्यादा शानदार जगह पाऊँगा।'' (37) उसके पड़ोसी ने बातचीत करते हुए उससे कहा, ''क्या तू कुफ़्र (इनकार) करता है उस सत्ता से जिसने तुझे मिट्टी से और फिर वीर्य से पैदा किया और तुझे एक पूरा आदमी बनाकर खड़ा किया? (38) रहा मैं, तो मेरा रब तो वही अल्लाह है और मैं उसके साथ किसी को साझीदार नहीं बनाता। (39) और जब तू अपने बाग़ में प्रवेश कर रहा था तो उस समय तेरी ज़बान से यह क्यों न निकला कि ''जो अल्लाह चाहे, बिना अल्लाह के कोई शक्ति नहीं?[14] अगर तू मुझे धन और सन्तान में अपने से कम पा रहा है (40) तो बहुत संभव है कि मेरा रब मुझे तेरे बाग़ से अच्छा प्रदान करे और तेरे बाग़ पर आसमान से कोई आफ़त भेज दे जिससे वह साफ़ मैदान बनकर रह जाए, (41) या उसका पानी ज़मीन में उतर जाए और फिर तू उसे किसी तरह न निकाल सके।'' (42) आख़िरकार हुआ यह कि उसका सारा फल नष्ट हो गया और वह अपने अंगूरों के बाग़ को टट्टियों पर उलटा पड़ा देखकर अपनी लगाई हुई लागत पर हाथ मलता रह गया और कहने लगा कि ''क्या ही अच्छा होता! मैंने अपने रब के साथ किसी को साझी न ठहराया होता'' (43)—न हुआ अल्लाह को छोड़कर उसके पास कोई जत्था कि उसकी मदद करता, और न कर सका वह आप ही उस आफ़त का मुक़ाबला (44)—उस समय मालूम हुआ कि काम बनाने का सारा अधिकार परम सत्य अल्लाह ही के लिए है, इनाम वही अच्छा है जो वह प्रदान करे और परिणाम वही अच्छा है जो वह दिखाए।

(45) और ऐ नबी, इन्हें दुनिया की ज़िन्दगी की वास्तविकता इस मिसाल से समझाओ कि आज हमने आसमान से पानी बरसा दिया तो ज़मीन की पौध ख़ूब घनी हो गई, और कल वही वनस्पति भुस बनकर रह गई जिसे हवाएँ उड़ाए लिए फिरती हैं। अल्लाह को हर चीज़ पर प्रभुत्व प्राप्त है। (46) यह धन और यह सन्तान सिर्फ़ दुनिया

14. अर्थात् ''जो कुछ अल्लाह चाहे वही होगा। मेरा और किसी का कुछ ज़ोर नहीं है। हमारा अगर कुछ बस चल सकता है तो अल्लाह ही की तौफ़ीक़ और समर्थन से चल सकता है।''

की ज़िन्दगी की एक क्षणिक शोभा है। असल में बाक़ी रह जानेवाली नेकियाँ ही तेरे रब के यहाँ परिणाम की दृष्टि से उत्तम हैं और उन्हीं से अच्छी उम्मीदें जोड़ी जा सकती हैं। (47) चिन्ता उस दिन की होनी चाहिए जबकि हम पहाड़ों को चलाएँगे, और तुम ज़मीन को बिलकुल नंगी पाओगे, और हम सारे इनसानों को इस तरह घेरकर इकट्ठा करेंगे कि (अगलों-पिछलों में से) एक भी न छूटेगा, (48) और सब के सब तुम्हारे रब के सामने पंक्तियों में पेश किए जाएँगे—लो देख लो, आ गए ना तुम हमारे पास उसी प्रकार जैसा हमने तुमको पहली बार पैदा किया था। तुमने तो यह समझा था कि हमने तुम्हारे लिए कोई वादे का समय निश्चित ही नहीं किया है—(49) और कर्मपत्र सामने रख दिया जाएगा। उस समय तुम देखोगे कि अपराधी लोग अपनी ज़िन्दगी की किताब में अंकित बातों से डर रहे होंगे और कह रहे होंगे कि "हाय हमारा दुर्भाग्य! यह कैसी किताब है कि हमारी कोई छोटी-बड़ी हरकत ऐसी नहीं रही जो इसमें अंकित न हो गई हो।" जो-जो कुछ उन्होंने किया था वह सब अपने सामने मौजूद पाएँगे, और तेरा रब किसी पर तनिक ज़ुल्म न करेगा।

(50) याद करो, जब हमने फ़रिश्तों से कहा कि आदम को सजदा करो तो उन्होंने सजदा किया मगर इबलीस ने न किया। वह जिन्नों में से था इसलिए अपने रब के आदेश का उल्लंघन किया।[15] अब क्या तुम मुझे छोड़कर उसको और उसकी सन्तति को अपना संरक्षक बनाते हो हालाँकि वे तुम्हारे शत्रु हैं? बड़ा ही बुरा विकल्प है जिसे ज़ालिम लोग अपना रहे हैं। (51) मैंने आसमान और ज़मीन पैदा करते समय उनको नहीं बुलाया था और न ख़ुद उनको बनाने में उन्हें शरीक किया था। मेरा काम यह नहीं है कि गुमराह करनेवालों को अपना सहायक बनाया करूँ।[16]

(52) फिर क्या करेंगे ये लोग उस दिन जब कि इनका रब इनसे कहेगा कि

15. अर्थात् इबलीस फ़रिश्तों में से न था बल्कि जिन्नों में से था, इसी लिए आदेश का उल्लंघन उसके लिए संभव हुआ। फ़रिश्तों में से होता तो अवज्ञा (नाफ़रमानी) कर ही न सकता। इसके विपरीत जिन्न इनसानों की तरह एक अधिकार प्राप्त स्वतन्त्र प्राणी है जिसे जन्मजात आज्ञाकारी नहीं बनाया गया है बल्कि इनकार और ईमान, और आज्ञापालन और अवज्ञा दोनों की सामर्थ्य प्रदान की गई है।

16. मतलब यह है कि ये शैतान आख़िर तुमहारे आज्ञापालन और बन्दगी के हक़दार कैसे बन गए? बन्दगी का हक़दार तो सिर्फ़ स्रष्टा ही हो सकता है। और इन शैतानों का हाल यह है कि आसमान और ज़मीन के बनाने में सम्मिलित होना तो अलग रहा, ये तो ख़ुद पैदा किए गए हैं।

पुकारो अब उन हस्तियों को जिन्हें तुम मेरा साझीदार समझ बैठे थे। ये उनको पुकारेंगे, मगर वे इनकी सहायता को न आएँगे और हम इनके बीच एक ही विनाश का सामूहिक गढ़ा तैयार कर देंगे। (53) सारे अपराधी उस दिन आग देखेंगे और समझ लेंगे कि अब उन्हें उसमें गिरना है और वे उससे बचने के लिए कोई पनाह का ठिकाना न पाएँगे।

(54) हमने इस क़ुरआन में लोगों को तरह-तरह से समझाया मगर इनसान बड़ा ही झगड़ालू सिद्ध हुआ है। (55) उनके सामने जब मार्गदर्शन आया तो उसे मानने और अपने रब के सामने माफ़ी चाहने से आख़िर उनको किस चीज़ ने रोक दिया? इसके सिवा और कुछ नहीं कि वे इनतिज़ार में हैं कि उनके साथ भी वही कुछ हो जो पिछली क़ौमों के साथ हो चुका है, या यह कि वे अज़ाब को सामने आते देख लें!

(56) रसूलों को हम इस काम के सिवा किसी और उद्देश्य के लिए नहीं भेजते कि वे शुभ-सूचना और चेतावनी देने का काम कर दें। मगर अधर्मियों का हाल यह है कि वे असत्य के हथियार लेकर सत्य को नीचा दिखाने की कोशिस करते हैं और उन्होंने मेरी आयतों को और उन चेतावनियों को जो उन्हें की गई, मज़ाक़ बना लिया है। (57) और उस व्यक्ति से बढ़कर ज़ालिम और कौन है जिसे उसके रब की आयतें सुनाकर नसीहत की जाए और वह उनसे मुँह फेरे और उस बुरे परिणाम को भूल जाए जिसका सामान उसने अपने लिए ख़ुद अपने हाथों किया है? (जिन लोगों ने यह नीति अपनाई है) उनके दिलों पर हमने ग़िलाफ़ चढ़ा दिए हैं जो उन्हें क़ुरआन की बात नहीं समझने देते और उनके कानों में हमने बोझ पैदा कर दिया है। तुम उन्हें मार्ग की ओर कितना ही बुलाओ, वे इस हालत में कभी मार्ग न पाएँगे।

(58) तेरा रब बड़ा माफ़ करनेवाला और दयावान् है। वह इनकी करतूतों पर इन्हें पकड़ना चाहता तो जल्दी ही अज़ाब भेज देता। मगर इनके लिए वादे का एक समय निश्चित है और उससे बचकर भाग निकलने का ये कोई मार्ग न पाएँगे।

17. किसी प्रामाणिक माध्यम से यह मालूम नहीं हो सका है कि हज़रत मूसा (अलै॰) की यह यात्रा किस समय की घटना है और वे दो दरिया कौन-से थे जिनके संगम पर यह घटना घटित हुई। लेकिन वृत्तान्त पर विचार करने से ऐसा लगता है कि यह हज़रत मूसा (अलै॰) के मिस्र में ठहरने के समय की घटना है जबकि फ़िरऔन से उनका संघर्ष चल रहा था और दो दरियाओं से मुराद नीले पानीवाली नील और सफ़ेद (श्वेत) पानीवाली नील हैं जिनके संगम, पर वर्तमान शहर ख़रतूम आबाद है। इस अनुमान के कारणों पर विस्तृत विवेचन हमने तफ़हीमुल क़ुरआन, भाग 3, सूर 18 (कह्फ़) की टीका में किया है।

(59) ये अज़ाब की लपेट में आनेवाली बस्तियाँ तुम्हारे सामने मौजूद हैं। उन्होंने जब ज़ुल्म किया तो हमने उन्हे तबाह कर दिया, और उनमें से हर एक के विनाश के लिए हमने समय निश्चित कर रखा था।

(60) (तनिक इनको वह घटना सुनाओ जो मूसा के साथ घटी थी) जबकि मूसा ने अपने सेवक से कहा था कि, ''मैं अपनी यात्रा समाप्त न करूँगा जब तक कि दोनों दरियाओं के संगम पर न पहुँच जाऊँ, नहीं तो मैं एक लम्बे समय तक चलता ही रहूँगा।''[17] (61) तो जब वे उनके संगम पर पहुँचे तो अपनी मछली से ग़ाफ़िल हो गए और वह निकलकर इस तरह दरिया में चली गई जैसे कि कोई सुरंग लगी हो। (62) आगे जाकर मूसा ने अपने सेवक से कहा, ''लाओ हमारा नाश्ता, आज की यात्रा में तो हम बुरी तरह थक गए हैं।'' (63) सेवक ने कहा, ''आपने देखा! यह क्या हुआ? जब हम उस चट्टान के पास ठहरे हुए थे उस समय मुझे मछली का ध्यान न रहा और शैतान ने मुझको ऐसा ग़ाफ़िल कर दिया कि मैं उसके बारे में (आपसे) बताना भूल गया। मछली तो अजीब ढंग से निकलकर दरिया में चली गई।'' (64) मूसा ने कहा, ''इसी की तो हमें तलाश थी।''[18] अतएव वे दोनों अपने पदचिह्नों पर फिर वापस हुए (65) और वहाँ उन्होंने हमारे बन्दों में से एक बन्दे को पाया जिसे हमने अपनी दयालुता प्रदान की थी और अपनी ओर से एक विशेष ज्ञान प्रदान किया था।[19]

(66) मूसा ने उससे कहा, ''क्या मैं आपके साथ रह सकता हूँ ताकि आप मुझे भी उस ज्ञान की शिक्षा दें जो आपको सिखाया गया है?'' (67) उसने जवाब दिया, ''आप मेरे साथ सब्र नहीं कर सकते, (68) और जिस चीज़ की आपको ख़बर न हो आख़िर आप उसपर सब्र कर भी कैसे सकते हैं?'' (69) मूसा ने कहा, ''अगर अल्लाह ने चाहा, तो आप मुझे सब्र करनेवाला पाएँगे और मैं किसी मामले में आपकी नाफ़रमानी न करूँगा।'' (70) उसने कहा, ''अच्छा, अगर आप मेरे साथ चलते हैं तो मुझसे कोई बात न पूछें जब तक मैं ख़ुद उसको आपसे बयान न करूँ।''

(71) अब वे दोनो चले, यहाँ तक कि वे एक नौका में सवार हो गए तो उस व्यक्ति ने नौका में सिगाफ़ (दरार) डाल दिया। मूसा ने कहा, ''आपने इसमे शिगाफ़ डाल दिया ताकि सब नौकावालों को डुबो दें? यह तो आपने एक सख़्त हरकत कर डाली।'' (72) उसने कहा, ''मैंने तुमसे कहा न था कि तुम मेरे साथ सब्र नही कर

18. अर्थात् गन्तव्य स्थान का यही लक्षण तो हमको बताया गया था।

19. इस बन्दे का नाम सभी विश्वस्त हदीसों में ख़िज्र बताया गया है।

सकते?'' (73) मूसा ने कहा, ''भूल-चूक पर मुझे न पकड़िए। मेरे मामले में आप ज़रा सख़्ती से काम न लें।''

(74) अब वे दोनों चले, यहाँ तक कि उनको एक लड़का मिला और उस व्यक्ति ने उसको मार डाला. मूसा ने कहा, ''आपने एक निर्दोष की जान ले ली हालाँकि उसने किसी की हत्या न की थी? यह काम तो आपने बहुत ही बुरा किया।'' (75) उसने कहा, ''मैंने तुमसे कहा न था कि तुम मेरे साथ सब्र नहीं कर सकते?'' (76) मूसा ने कहा, ''इसके बाद अगर मैं आपसे कुछ पूछूँ तो आप मुझे साथ न रखें। लीजिए, अब तो मेरी ओर से आपको उज्र मिल गया।''

(77) फिर वे आगे चले यहाँ तक कि एक बस्ती में पहुँचे और वहाँ के लोगों से खाना माँगा, मगर उन्होंने उन दोनों की मेहमाननवाज़ी से इनकार कर दिया। वहाँ उन्होंने एक दीवार देखी जो गिरने ही वाली थी। उस व्यक्ति ने उस दीवार को फिर सीधी खड़ी कर दिया। मूसा ने कहा, ''अगर आप चाहते तो इस काम की मजदूरी ले सकते थे।'' (78) उसने कहा, ''बस मेरा तुम्हारा साथ ख़त्म हुआ। अब मैं तुम्हें उन बातों की वास्तविकता बताता हूँ जिनपर तुम सब्र से काम न ले सके। (79) उस नौका का मामला यह है कि वह कुछ निर्धन आदमियों की थी जो दरिया में मेहनत-मजदूरी करते थे। मैंने चाहा कि उसे ऐबदार कर दूँ, क्योंकि आगे एक ऐसे बादशाह का इलाका था जो हर नौका को ज़बरदस्ती छीन लेता था। (80) रहा वह लड़का, तो उसके माँ-बाप ईमानवाले थे, हमें खटका हुआ कि यह लड़का अपनी सरकशी और कुफ़्र (इनकार) से उनको तंग करेगा। (81) इसलिए हमने चाहा कि उनका रब उसके बदले उनको ऐसी सन्तान दे जो आचरण में भी उससे अच्छी हो और जिससे नाते-रिश्ते का हक़ अदा करने की भी ज़्यादा उम्मीद हो। (82) और इस दीवार का मामला यह है कि यह दो अनाथ लड़को की है जो इस शहर में रहते हैं। इस दीवार के नीचे इन बच्चों के लिए एक ख़ज़ाना गड़ा है और इनका बाप एक नेक आदमी था इसलिए तुम्हारे रब ने चाहा कि ये दोनों बच्चे बालिग़ (पौढ़) हो और अपना ख़ज़ाना निकाल लें। यह तुम्हारे रब की दयालुता के आधार पर किया गया है, मैंने कुछ अपने अधिकार से नहीं कर दिया है। यह है वास्तविकता उन बातों की जिनपर तुम सब्र से काम न ले सके।''[20]

(83) और ऐ नबी, ये लोग तुमसे ज़ुल-क़रनैन के बारे में पूछते हैं। इनसे कहो, मैं उसका कुछ हाल तुमको सुनाता हूँ।

(84) हमने उसको ज़मीन में प्रभुत्व प्रदान कर रखा था और उसे हर तरह के साधन दिए थे। (85) उसने (पहले पश्चिम की ओर एक मुहिम की) तैयारी की। (86)

यहाँ तक कि जब वह सूर्यास्त की सीमा तक पहुँचा।[21] तो उसने सूरज को एक काले पानी में डूबते[22] देखा और वहाँ उसे एक क़ौम मिली। हमने कहा, ''ऐ ज़ुल-क़रनैन, तुझे यह सामर्थ्य भी प्राप्त है कि उनको तकलीफ़ पहुँचाए और यह भी कि उनके साथ अच्छी नीति अपनाए।'' (87) उसने कहा, ''जो उनमें से ज़ुल्म करेगा, उसे हम सज़ा देंगे, फिर वह अपने रब की ओर पलटाया जाएगा और वह उसे और ज़्यादा भारी अज़ाब देगा। (88) और जो उनमें से ईमान लाएगा, और अच्छा कर्म करेगा, उसके लिए अच्छा बदला है और हम उसको नर्म आदेश देंगे।''

(89) फिर उसने (एक दूसरी मुहिम की) तैयारी की (90) यहाँ तक कि सूर्योदय की सीमा तक जा पहुँचा।[23] वहाँ उसने देखा कि सूरज एक ऐसी क़ौम पर उदय हो रहा

20. इस क़िस्से में यह बात तो स्पष्ट है कि हज़रत ख़िज़्र ने जो तीन काम किए थे वे अल्लाह ही के आदेश से थे, मगर यह बात भी स्पष्ट है कि इनमें से पहले दो काम ऐसे थे जिनकी अनुमति अल्लाह की भेजी हुई किसी शरीअत में किसी इनसान को कभी नहीं दी गई। यहाँ तक कि इलहाम (दैवी प्रेरणा) के आधार पर भी किसी इनसान के लिए यह वैध नहीं कि किसी की अपनी नौका को इसलिए ख़राब कर दे कि आगे जाकर कोई अपहरणकर्ता उसे छीन लेगा और किसी लड़के को इसलिए क़त्ल कर दे कि बड़ा होकर वह सरकश या सत्य विरोधी होनेवाला है। इसलिए यह मानने के सिवा कोई चारा नहीं है कि हज़रत ख़िज़्र ने यह काम शरीअत के आदेश के आधार पर नहीं बल्कि ईश्वरीय इच्छा के आदेशों के आधार पर किए थे और ऐसे आदेश के लिए अल्लाह इनसानों के सिवा एक दूसरी क़िस्म की मख़लूक़ से काम लेता है। जिस तरह का यह क़िस्सा है उसी से यह ज़ाहिर है कि अल्लाह ने हज़रत मूसा (अलै॰) को अपने उस बन्दे के पास इसलिए भेजा था कि परदा उठाकर वह एक नज़र उन्हें यह दिखाए कि इस ईश्वरीय इच्छा के कारख़ाने में किन निहित उद्देश्यों के अनुसार काम होता है जिन्हें समझना इनसान के बस में नहीं है। सिर्फ़ इसलिए कि अल्लाह ने हज़रत ख़िज़्र के लिए 'बन्दे' (सेवक) का शब्द इस्तेमाल किया है, उनको इनसान ठहराने के लिए काफ़ी नहीं है। क़ुरआन में सूरा 21 (अंबिया) आयत 26, और सूरा 43 (ज़ुख़रुफ़) आयत 19 और कितने ही दूसरे स्थानों पर फ़रिश्तों के लिए भी यह शब्द इस्तेमाल हुआ है।
21. अर्थात् पश्चिम की अन्तिम सीमा तक।
22. अर्थात् वहाँ सूर्यास्त के समय ऐसा लगता था कि सूरज समुद्र के कुछ कालिमा लिए हुए गदले पानी में डूब रहा है।

है जिनके लिए धूप से बचने की कोई व्यवस्था हमने नहीं की है। (91) यह हाल था उनका, और ज़ुल-क़रनैन के पास जो कुछ था उसे हम जानते थे।

(92) फिर उसने (एक और मुहिम का) आयोजन किया (93) यहाँ तक कि जब दो पहाड़ों के बीच पहुँचा तो उसे उनके पास एक क़ौम मिली जो मुश्किल ही से कोई बात समझती थी। (94) उन लोगों ने कहा कि ''ऐ ज़ुल-क़रनैन, याजूज और माजूज[24] इस भूभाग में फ़साद फैलाते हैं, तो क्या हम तुझे कोई टैक्स इस काम के लिए दे कि तू हमारे और उनके बीच एक बन्द बना दे?'' (95) उसने कहा, ''जो कुछ मेरे रब ने मुझे दे रखा है वह बहुत है। तुम बस मेहनत से मेरी मदद करो, मैं तुम्हारे और उनके बीच बन्द बनाए देता हूँ। (96) मुझे लोहे की चादरें ला दो।'' आख़िर जब दोनों पहाड़ों के बीच के ख़ाली स्थान को उसने पाट दिया तो लोगों से कहा कि अब आग दहकाओ। यहाँ तक कि जब (यह लोहे की दीवार) बिलकुल आग की तरह लाल कर दी तो उसने कहा, ''लाओ, अब मैं इसपर पिघला हुआ ताँबा उँडेलूँगा।'' (97) (यह बन्द एसा था कि) याजूज और माजूज इसपर चढकर भी नहीं आ सकते थे और इसमें नक़ब (सेंध) लगाना उनके लिए और भी कठिन था। (98) ज़ुल-क़रनैन ने कहा, ''यह मेरे रब की दयालुता है। मगर जब मेरे रब के वादे का समय आएगा तो वह इसको ढाकर बराबर कर देगा, और मेरे रब का वादा सच्चा है।''

(99) और उस दिन[25] हम लोगों को छोड़ देंगे कि (समुद्र की लहरों की तरह) एक दूसरे से गुत्थमगुत्था हों और नरसिंघा (सूर) फूँका जाएगा और हम सब इनसानों को

23. अर्थात् पूर्व दिशा की अन्तिम सीमा तक।
24. याजूज-माजूज से मुराद एशिया के उत्तरी और पूर्वी क्षेत्र की वे क़ौमें हैं जो प्राचीन काल से सभ्य देशों पर विनाशकारी आक्रमण करती रही हैं और जिनकी बाढ़ समय-समय पर उठकर एशिया और यूरोप, दोनों ओर रुख़ करती रही हैं। हिज़क़ीएल की पुस्तक (अध्याय–38,39) में उनका इलाक़ा रूस और तोबल (वर्तमान तोबालस्क) और मेसेक (वर्तमान मास्को) बताया गया है। इसराईली इतिहासकार यूसिफ़ोस की दृष्टि में उनसे मुराद सीथियन जाति है जिसका इलाक़ा काला सागर के उत्तर और पूर्व में स्थित था। जिरोम के कथनानुसार माजूज काकेशिया के उत्तर में कैसपियन सागर के नज़दीक आबाद थे।
25. मुराद है क़ियामत का दिन। ज़ुल-क़रनैन ने जो इशारा क़ियामत के सच्चे वादे की ओर किया था उसकी अनुकूलता से ये आयतें उसके कथन के साथ बढ़ाते हुए बयान की गई हैं।

एक साथ इकट्ठा करेंगे। (100) और वह दिन होगा जब हम जहन्नम को इनकार करनेवालों के सामने लाएँगे, (101) उन इनकार करनेवालों के सामने जो मेरी नसीहत की ओर से अन्धे बने हुए थे और कुछ सुनने के लिए तैयार ही न थे।

(102) तो क्या ये लोग, जिन्होंने इनकार किया है, यह समझते है कि मुझे छोड़कर मेरे बन्दों को अपना कार्यसाधक बना लें? हमने ऐसे अधर्मियों की मेहमानी के लिए जहन्नम तैयार कर रखी है।

(103) ऐ नबी, उनसे कहो, क्या हम तुम्हें बताएँ कि अपने कर्मों में सबसे ज़्यादा असफल और अप्राप्त लोग कौन हैं? (104)—वे कि दुनिया की ज़िन्दगी में जिनकी सारी कोशिश सीधे मार्ग से भटकी रही और वे समझते रहे कि वे सब कुछ ठीक कर रहे हैं। (105) ये वे लोग हैं जिन्होंने अपने रब की आयतों को मानने से इनकार किया और उसके सामने पेशी का यक़ीन न किया। इसलिए उनके सारे कर्म अकारथ हो गए, क़ियामत के दिन हम उन्हें कोई वज़न न देंगे। (106) उनका बदला जहन्नम है उस इनकार के बदले में जो उन्होंने किया और उस मज़ाक़ के बदले में जो मेरी आयतों और मेरे रसूलों के साथ करते रहे। (107) अलबत्ता वे लोग जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, उनके आतिथ्य (मेहमाननवाज़ी) के लिए फ़िरदौस के बाग़ होंगे, (108) जिनमें वे हमेशा रहेंगे और कभी उस जगह से निकलकर कहीं जाने को उनका जी न चाहेगा।

(109) ऐ नबी, कहो कि अगर समुद्र मेरे रब की बातें लिखने के लिए रोशनाई बन जाए तो वह ख़त्म हो जाए मगर मेरे रब की बातें ख़त्म न हों, बल्कि अगर उतनी ही रोशनाई हम और ले आएँ तो वह भी काफ़ी न हो सके।[26]

(110) ऐ नबी, कहो कि मैं तो एक मनुष्य हूँ तुम ही जैसा, मेरी ओर प्रकाशना (वह्य) की जाती है कि तुम्हारा ख़ुदा बस एक ही ख़ुदा है, अतः जो कोई अपने रब से मिलने की उम्मीद रखता हो उसे चाहिए कि नेक कर्म करे और बन्दगी में अपने रब के साथ किसी और को सम्मिलित न करे।

● ● ●

26. अल्लाह की 'बातों' से मुराद उसके कार्य और कुशलताएँ और उसकी सामर्थ्य और तत्त्वदर्शिता के चमत्कार हैं।

19. मरयम

नाम

इस सूरा का नाम आयत 16 "और ऐ नबी इस किताब में मरियम का हाल बयान करो," से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसका अवतरणकाल हबशा की हिजरत से पहले का है। विश्वसनीय उल्लेखों से मालूम होता है कि इस्लाम के मुहाजिर (हिजरत करनेवाले) जब नज्जाशी के दरबार में बुलाए गए थे, उस वक़्त हज़रत जाफ़र (रज़ि.) ने इसी सूरा का भरे दरबार में पाठ किया था।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

(यह सूरा उस कालखण्ड में अवतरित हुई थी) जब क़ुरैश के सरदार हँसी-ठट्ठा, उपहास, प्रलोभन, डरावा और झूठे आरोपों के प्रसार से इस्लामी आन्दोलन को दबाने में असफल होकर ज़ुल्म और अत्याचार, मार-पीट और आर्थिक दबाव के हथियार इस्तेमाल करने लगे थे। हर क़बीले के लोगों ने अपने-अपने क़बीले के नव-मुसलमानों को तंग किया और तरह-तरह से सताकर उन्हें इस्लाम त्याग देने पर विवश करने की कोशिश की। इस सम्बन्ध में विशेष रूप से ग़रीब लोग और वे ग़ुलाम और ग़ुलामी से मुक्त ऐसे लोग जो क़ुरैशवालों के अदीन की हैसियत से रहते थे, बुरी तरह पीसे गए। ये परिस्थितियाँ जब असहनीय हो गयी तो रजब सन् 45 आमुलफ़ील (सन् 5 नबवी) में नबी (सल्ल०) (के आदेश के अन्तर्गत अधिकतर मुसलमान मक्का से हबशा हिजरत कर गए।) पहले ग्यारह मर्दों और औरतों ने हबशा की राह ली। क़ुरैश के लोगों ने समुद्र तट तक उनका पीछा किया, किन्तु सौभाग्य से शुऐबह के बन्दरगाह पर समय पर हबशा के लिए नौका मिल गई और वे गिरफ़्तार होने से बच गए। फिर कुछ ही महीनों के भीतर कुछ और लोगों ने हिजरत की, यहाँ तक कि 53 मर्द, 11 औरतें और 7 ग़ैर-क़ुरैशी मुसलमान हबशा में इकट्ठे हो गए और मक्का में नबी (सल्ल०) के साथ केवल 40 आदमी रह गए।

इस हिजरत से मक्का के घर-घर में कोहराम मच गया, क्योंकि क़ुरैश के बड़े और छोटे ख़ानदानों में से कोई ऐसा न था जिनके प्रियजन इन हिजरत करनेवालों में सम्मिलित न हों। इसलिए कोई घर न था जो इस घटना से प्रभावित न हुआ हो। कुछ

लोग इसके कारण इस्लाम की शत्रुता में पहले से अधिक क्रूर हो गए और कुछ लोगों के दिलों पर इसका प्रभाव ऐसा पड़ा कि वे अन्ततः मुसलमान होकर रहे। अतएव हज़रत उमर (रज़ि॰) की इस्लाम दुश्मनी पर पहली चोट इसी घटना से लगी थी।

इस हिजरत के पश्चात् क़ुरैश के सरदार सिर जोड़कर बैठे और उन्होंने तय किया कि अब्दुल्लाह बिन अबी रबिआ (अबू जहल के माँ की ओर से भाई) और अम्र बिन आस को बहुत-से मूल्यवान उपहार के साथ हबशा भेजा जाए और ये लोग किसी न किसी तरह नज्जाशी को इस बात पर राज़ी करें कि वह इन हिजरत करनेवालों को मक्का वापस भेज दें। अतएव क़ुरैश के ये दोनों दूत मुसलमानों का पीछा करते हुए हबशा पहुँचे। पहले इन्होंने नज्जाशी के दरबारियों में बहुत सारे उपहार बाँटकर (सबको अपने मिशन के समर्थन पर) राज़ी कर लिया। फिर नज्जाशी से मिले और उसको मूल्यवान उपहार देने के पश्चात् (इन हिजरत करनेवालों की वापसी के लिए निवेदन किया, जिसका दरबारवालों ने भरपूर समर्थन किया।) किन्तु नज्जाशी ने क्रुद्ध होकर कहा कि ''इस तरह तो मैं इन्हें हवाले नहीं करूँगा। जिन लोगों ने दूसरे देश को छोड़कर मेरे देश पर भरोसा किया और यहाँ शरण लेने के लिए आए उनसे मैं बेवफ़ाई नहीं कर सकता। पहले मैं उन्हें बुलाकर जाँच-पड़ताल करूँगा कि ये लोग उनके बारे में जो कुछ कहते हैं, उसकी वास्तविकता क्या है।'' अतएव नज्जाशी ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के सहाबियों को अपने दरबार में बुला भेजा। नज्जाशी का संदेश पाकर सब हिजरत करनेवाले इकट्ठा हुए और उन्होंने पारस्परिक परामर्श से एक मत होकर यह फ़ैसला किया कि नबी (सल्ल॰) ने जो शिक्षा हमें दी है, हम तो वही बिना किसी कमी-बेशी के पेश करेंगे, चाहे नज्जाशी हमें रखे या निकाल दे। वे दरबार में पहुँचे तो नज्जाशी के प्रश्न करने पर हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब ने तुरन्त एक भाषण (करते हुए अज्ञान काल के अरब की परिस्थितियाँ, नबी (सल्ल॰) की पैग़म्बरी, इस्लाम की शिक्षा और मुसलमानों पर क़ुरैश के अत्याचारों को स्पष्ट रूप से बयान कर दिया) नज्जाशी ने यह भाषण सुनकर कहा, तनिक मुझे वह वाणी तो सुनाओ जिसे तुम कहते हो कि ईश्वर की ओर से तुम्हारे नबी पर अवतरित हुई है। हज़रत जाफ़र (रज़ि॰) ने जवाब में सूरा मरियम का वह आरंभिक भाग सुनाया जो हज़रत यह्या और ईसा (अलै॰) से सम्बद्ध है। नज्जाशी उसको सुनता रहा और रोता रहा। यहाँ तक कि उसकी दाढ़ी भीग गई। जब हज़रत जाफ़र (रज़ि॰) ने पाठ समाप्त किया तो उसने कहा, ''निश्चय ही यह वाणी और जो कुछ ईसा लाए थे दोनों एक ही स्रोत से निकले हैं। अल्लाह की क़सम, मैं तुम्हें इन लोगों के हवाले न करूँगा।''

दूसरे दिन अम्र बिन आस ने नज्जाशी से कहा कि ''तनिक उन लोगों से बुलाकर यह तो पूछिए कि मरियम के पुत्र ईसा के विषय में उनकी धारणा क्या है? ये लोग उनके विषय में एक बड़ी (भयानक) बात कहते हैं।'' नज्जाशी ने फिर मुहाजिरों को बुला भेजा और जब अम्र बिन आस का पेश किया हुआ प्रश्न उनके सामने दोहराया तो जाफ़र बिन अबी तालिब ने उठकर निस्संकोच कहा कि ''वे अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल हैं और उसकी ओर से एक आत्मा और एक शब्द हैं, जिसे अल्लाह ने कुँवारी मरयम पर डाला।'' नज्जाशी ने सुनकर एक तिनका ज़मीन से उठाया और कहा, ''ख़ुदा की क़सम, जो कुछ तुमने कहा है, ईसा उससे इस तिनके के बराबर भी ज़्यादा नहीं थे।'' इसके बाद नज्जाशी ने क़ुरैश के भेजे हुए सभी उपहार यह कहकर वापस कर दिए कि विश्वत मैं नहीं लेता। और मुहाजिरों से कहा कि तुम निश्चिन्ततापूर्वक रहो।

विषय और वार्ता

इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को दृष्टि में रखकर जब हम इस सूरा को देखते हैं तो इसमें सबसे पहले स्पष्ट रूप से यह बात हमारे सामने आती है कि यद्यपि मुसलमान एक सताए हुए शरणार्थी-गिरोह की हैसियत से अपना वतन छोड़कर दूसरे देश में जा रहे थे, किन्तु इस स्थिति में भी अल्लाह ने उनको धर्म के विषय में तनिक भी चाटुकारिता से काम लेने की शिक्षा न दी, बल्कि चलते समय पाथेय के रूप में यह सूरा उनके साथ कर दी, ताकि ईसाइयों के देश में ईसा (अलै॰) की बिल्कुल सही हैसियत पेश करें और उनके ईश-पुत्र होने का साफ़-साफ़ इनकार कर दें।

आयत 1 से लेकर 40 तक हज़रत यह्या (अलै॰) और हज़रत ईसा (अलै॰) का क़िस्सा सुनाने के पश्चात् फिर इससे आगे की आयतों में समय की परिस्थितियों की एकरूपता को देखते हुए हज़रत इबराहीम (अलै॰) का क़िस्सा सुनाया गया है, क्योंकि ऐसी ही परिस्थितियों में वे भी अपने बाप, ख़ानदान और देश-निवासियों के अत्याचार से तंग आकर स्वदेश से निकल खड़े हुए थे। इससे एक तरफ़ मक्का के काफ़िरों को यह शिक्षा दी गई है कि आज हिजरत करनेवाले मुसलमान इबराहीम (अलै॰) की पोज़िशन में हैं और तुम लोग उन ज़ालिमों की पोज़िशन में हो, जिन्होंने उनको घर से निकाला था दूसरी तरफ़ मुहाजिरों को यह शुभ-सूचना दी गई कि जिस तरह इबराहीम (अलै॰) स्वदेश से निकलकर तबाह न हुए बल्कि और अधिक उच्च हो गए, ऐसा ही अच्छा परिणाम तुम्हारी प्रतीक्षा में है।

इसके पश्चात् आयत 51 से लेकर 66 तक दूसरे नबियों का उल्लेख किया गया है जिससे यह बताना अभीष्ट है कि समस्त नबी (उनपर ईश्वर की दया हो) वही धर्म

लेकर आए थे जो मुहम्मद (सल्ल॰) लाए हैं। किन्तु नबियों के गुज़र जाने के बाद उनके समुदाय बिगड़ते रहे हैं और आज विभिन्न समुदायों में जो बुराइयाँ पाई जा रही हैं, ये उसी बिगाड़ का परिणाम हैं।

आयत 67 से लेकर अन्त तक मक्का के काफ़िरों की गुमराहियों की तीव्र आलोचना की गई है और अभिभाषण को समाप्त करते हुए ईमानवालों को मंगल सूचना दी गई है कि सत्य के शत्रुओं के समस्त प्रयासों के बावजूद अन्ततः तुम ही लोकप्रिय होकर रहोगे।



19. सूरा मरयम

(मक्का में उतरी–आयतें 98)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) काफ़॰ हा॰ या॰ ऐन॰ साद॰। (2,3) वर्णन है उस दयालुता का जो तेरे रब ने अपने बन्दे ज़करीया पर दर्शाई थी, जबकि उसने अपने रब को चुपके-चुपके पुकारा।

(4) उसने निवेदन किया, ''ऐ पालनहार, मेरी हड्डियाँ तक घुल गई हैं और सिर बुढ़ापे से भड़क उठा है। ऐ पालनहार, मैं कभी तुझसे दुआ माँगकर असफल नहीं रहा। (5) मुझे अपने पीछे अपने भाई-बन्धुओं की बुराइयों का डर है और मेरी बीवी बाँझ है। (6) तू मुझे अपने विशेष अनुग्रह से एक उत्तराधिकारी प्रदान कर दे जो मेरा उत्तराधिकारी भी हो और याक़ूब के कुल का भी उत्तराधिकारी हो, और ऐ पालनहार, उसको एक प्रिय इनसान बना।'' (7) (जवाब दिया गया) ''ऐ ज़करीया, हम तुझे एक लड़के की ख़ुशख़बरी देते हैं जिसका नाम यह्या होगा। हमने इस नाम का कोई आदमी इससे पहले पैदा नहीं किया।'' (8) निवेदन किया, ''पालनहार, भला मेरे यहाँ कैसे बेटा होगा जबकि मेरी बीवी बाँझ है और मैं बुढ़ा होकर सुख चुका हूँ?'' (9) जवाब मिला, ''ऐसा ही होगा।[1] तेरा रब कहता है कि यह तो मेरे लिए एक तनिक-सी बात है, आख़िर इससे पहले मैं तुझे पैदा कर चुका हूँ जबकि तू कोई चीज़ न था।'' (10) ज़करीया ने कहा, ''पालनहार, मेरे लिए कोई निशानी निश्चित कर दे।'' कहा, ''तेरे लिए निशानी यह है कि तू लगातार तीन दिन लोगों से बात न कर सके।'' (11) अतः वह मेहराब से निकलकर अपनी क़ौम के लोगों के सामने आया और उसने इशारे से उनको आदेश दिया कि सुबह और शाम तसबीह करो।

(12) ''ऐ यह्या, ईश्वरीय ग्रन्थ को मज़बूत थाम ले।''[2]

हमने उसे बचपन ही में निर्णय-शक्ति[3] प्रदान की (13) और अपनी ओर से उसको विनम्रता और पवित्रता प्रदान की, और वह बड़ा परहेज़गार (14) और अपने माँ-बाप का हक़ पहचाननेवाला था। वह जाबिर (सरकश) न था और न अवज्ञाकारी।

---

1. अर्थात् तेरे बूढ़े होने और तेरी बीवी के बाँझ होने के बावजूद तेरे यहाँ लड़का पैदा होगा।
2. बीच में यह विवरण छोड़ दिया गया है कि इस ईश्वरीय आदेश के अनुसार हज़रत यह्या पैदा हुए और जवानी की उम्र को पहुँचे।

(15) सलाम उसपर, जिस दिन कि वह पैदा हुआ और जिस दिन वह मरे और जिस दिन वह ज़िन्दा करके उठाया जाए।

(16,17) और ऐ नबी, इस किताब में मरयम का हाल बयान करो, जबकि वह अपने लोगों से अलग होकर पूर्व की ओर एकान्तवासी हो गई थी[4] और परदा डालकर उनसे छिप बैठी थी।[5] इस हालत में हमने उसके पास अपनी एक आत्मा को (अर्थात् फ़रिश्ते को) भेजा और वह उसके सामने एक पूरे इनसान के रूप में प्रकट हो गया। (18) मरयम यकायक बोल उठी कि "अगर तू कोई ईश्वर से डरनेवाला आदमी है तो मैं तुझसे करुणामय ईश्वर की पनाह माँगती हूँ।" (19) उसने कहा "मैं तो तेरे रब का भेजा हुआ हूँ और इसलिए भेजा गया हूँ कि तुझे एक पवित्र लड़का दूँ।" (20) मरयम ने कहा, "मेरे यहाँ कैसे लड़का होगा जबकि मुझे किसी मर्द ने छुआ तक नहीं है और मैं कोई बदकार औरत नहीं हूँ।" (21) फ़रिश्ते ने कहा, "ऐसा ही होगा,[6] तेरा रब कहता है कि ऐसा करना मेरे लिए बहुत आसान है, और हम यह इसलिए करेंगे कि उस लड़के को लोगों के लिए एक निशानी बनाएँ[7] और अपनी ओर से एक दयालुता। और यह काम होकर रहना है।"

(22) मरयम को उस बच्चे का गर्भ रह गया और वह उस गर्भ को लिए हुए एक दूर के स्थान पर चली गई। (23) फिर प्रसव-पीड़ा ने उसे एक खजूर के पेड़ के नीचे पहुँचा दिया। वह कहने लगी, "क्या ही अच्छा होता कि मैं इससे पहले ही मर जाती और मेरा नामो-निशान न रहता।"[8] (24,25) फ़रिश्ते ने पाँयती से उसको पुकारकर कहा, "ग़म न कर। तेरे रब ने तेरे नीचे एक स्रोत बहा दिया है और तू तनिक इस पेड़ के तने को हिला, तेरे ऊपर रस भरी ताज़ा खजूरें टपक पड़ेंगी। (26) अतः तू खा और पी

3. यहाँ 'हुक्म' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'हुक्म' का अर्थ है : निर्णय-शक्ति, 'इजतिहाद' की शक्ति अर्थात् धर्म के मौलिक नियमों और शिक्षाओं के अन्तर्गत आवश्यकतानुसार विस्तृत विधि-विधान आदि के सूत्रपात की क्षमता), धर्म की गहरी समझ, मामलों में ठीक मत निर्धारित करने की योग्यता और अल्लाह की ओर से मामलों में फ़ैसला देने का अधिकार।
4. अर्थात् बैतुल मक़दिस के पूर्वी भाग में।
5. अर्थात् 'एतिकाफ़' में बैठ गई थी।
6. अर्थात् बिना इसके कि कोई मर्द तुझे हाथ लगाए तेरे यहाँ बच्चा पैदा होगा।
7. अर्थात् हम उस बच्चे को एक ज़िन्दा चमत्कार बना देना चाहते हैं।

और अपनी आँखें ठण्डी कर। फिर अगर कोई आदमी तुझे दिखाई दे तो उससे कह दे कि "मैंने करुणामय (ईश्वर) के लिए रोज़े की मन्नत मानी है, इसलिए आज मैं किसी से न बोलूँगी।"

(27) फिर वह उस बच्चे को लिए हुए अपनी क़ौम में आई। लोग कहने लगे, "ऐ मरयम, यह तो तूने बड़ा पाप कर डाला। (28) ऐ हारून की बहन,[9] न तेरा बाप कोई बुरा आदमी था और न तेरी माँ ही कोई बदकार औरत थी।" (29) मरयम ने बच्चे की ओर इशारा कर दिया। लोगों ने कहा, "हम इससे क्या बात करें जो पालने में पड़ा हुआ एक बच्चा है?" (30,31) बच्चा बोल उठा, "मैं अल्लाह का बन्दा हूँ।[10] उसने मुझे किताब दी, और नबी बनाया, और बरकतवाला किया जहाँ भी मैं रहूँ, और नमाज़ और ज़कात की पाबन्दी का हुक्म दिया जब तक मैं ज़िन्दा रहूँ, (32) और अपनी मां का हक़ अदा करनेवाला बनाया,[11] और मुझको ज़ालिम और अत्याचारी नहीं बनाया। (33) सलाम है मुझपर जबकि मैं पैदा हुआ और जबकि मैं मरूँ और जबकि ज़िन्दा

8. यह कथन जिस स्थिति और अवसर का है उसपर विचार किया जाए तो मालूम होता है कि हज़रत मरयम ने यह बात प्रसव-पीड़ा के कारण नहीं कही थी बल्कि इसलिए कही थी कि बाप के बिना जो बच्चा पैदा हुआ है उसे लेकर कहाँ जाए। इसी कारण वे गर्भ के समय में अकेली एक दूरवर्ती स्थान पर चली गई थी हालाँकि उसकी माँ और ख़ानदान के लोग वतन में मौजूद थे।
9. अर्थात् हारून के ख़ानदान की बेटी। यह अरबी भाषा का मुहावरा है कि किसी क़बीले के व्यक्ति को उस क़बीले का भाई कहा जाता है। क़ौम के लोगों की इस बात का अर्थ यह था कि हमारे सबसे ऊँचे धार्मिक परिवर की लड़की, तूने यह क्या कर डाला?
10. यह थी वह निशानी जिसका उल्लेख इससे पहले आयत 21 में हो चुका है। नवजात बच्चे ने पालने में पड़े हुए बोलना शुरू कर दिया जिससे सब पर स्पष्ट हो गया कि वह किसी पाप का फल नहीं है बल्कि एक चमत्कार है जो अल्लाह ने दिखाया है। क़ुरआन कीसूरा 3 (आले इमरान) आयत 46 और सूरा 5 (माइदा) आयत 110 में भी कहा गया है कि हज़रत ईसा ने पालने में बात की थी।
11. माँ-बाप का हक़ अदा करनेवाला नहीं बल्कि सिर्फ़ माँ का हक़ अदा करनेवाला कहा है। यह भी इस बात का प्रमाण है कि हज़रत ईसा का बाप कोई न था और इसी का एक स्पष्ट प्रमाण यह है कि क़ुरआन में हर जगह उनको ईसा इब्न मरयम (मरयम का बेटा) कहा गया है।

करके उठाया जाऊँ।''[12]

(34) यह है मरयम का बेटा ईसा और यह है उसके बारे में वह सच्ची बात जिसमें लोग शक कर रहे हैं। (35) अल्लाह का यह काम नहीं कि वह किसी को अपना बेटा बनाए। वह पवित्र ज़ात है। वह जब किसी बात का निर्णय करता है तो कहता है कि हो जा, और बस वह हो जाती है।[13]

(36) (और ईसा ने कहा था कि) ''अल्लाह मेरा रब भी है और तुम्हारा रब भी, अतः तुम उसी की बन्दगी करो, यही सीधा मार्ग है।'' (37) मगर फिर विभिन्न गिरोह परस्पर विभेद करने लगे. अतः जिन लोगों ने इनकार किया उनके लिए वह समय बड़ी तबाही का होगा जबकि वे एक बड़ा दिन देखेंगे। (38) जब वे हमारे सामने हाज़िर होगे उस दिन तो उनके कान भी ख़ूब सुन रहे होंगे और उनकी आँखें भी ख़ूब देखती होंगी, मगर आज ये ज़ालिम खुली गुमराही में पड़े हुए हैं। (39) ऐ नबी, इस हालत में जबकि ये लोग बेसुध हैं और इमान नहीं ला रहे हैं, उन्हें उस दिन से डरा दो जबकि फ़ैसला कर दिया जाएगा और पछतावे के सिवा कोई उपाय न होगा। (40) आख़िरकार हम ही ज़मीन और उसकी सारी चीज़ों के वारिस होंगे और सब हमारी ओर ही पलटाए जाएँगे।

(41) और इस किताब में इबराहीम का क़िस्सा बयान करो, बेशक वह एक सच्चा इनसान और एक नबी था। (42) (इन्हें तनिक उस अवसर की याद दिलाओ) जबकि उसने अपने बाप से कहा कि ''अब्बाजान, आप क्यों उन चीज़ों की उपासना करते हैं जो न सुनती हैं, न देखती हैं और न आपका कोई काम बना सकती हैं? (43) अब्बाजान, मेरे पास एक ऐसा ज्ञान आया है जो आपके पास नहीं आया, आप मेरे पीछे चलें, मैं आपको सीधा मार्ग बताऊँगा। (44) अब्बाजान, आप शैतान की बन्दगी न करें, शैतान तो करुणामय (ईश्वर) का अवज्ञाकारी है। (45) अब्बाजान, मुझे डर है कि

12. यह निशानी दिखाकर अल्लाह ने उसी समय इसराईलियों पर हुज्जत पूरी कर दी थी। यही कारण है कि जब जवान होकर हज़रत ईसा (अलै॰) ने पैग़म्बरी का काम शुरू किया और इस क़ौम ने न सिर्फ़ उनका इनकार किया बल्कि उनकी जान के पीछे पड़ गई और उनकी आदरणीय माँ पर व्यभिचार के आरोप लगाने से भी न चूकी तो अल्लाह ने उसको ऐसी सज़ा दी जो किसी क़ौम को नहीं दी गई।
13. यह ईसाइयों पर हुज्जत पूरी की गई है। सिर्फ़ चमत्कार से किसी का पैदा होना इस बात का प्रमाण नहीं है कि (अल्लाह पनाह में रखे) उसे अल्लाह का बेटा घोषित किया जाए।

कहीं आप करुणामय (ईश्वर) के अज़ाब में ग्रस्त न हो जाएँ और शैतान के साथी बनकर रहें।'' (46) बाप ने कहा, ''इबराहीम, क्या तू मेरे उपास्यों से फिर गया है? अगर तू बाज़ न आया तो मैं तुझे संगसार (पत्थर मारकर काम तमाम) कर दूँगा। (47) बस तू हमेशा के लिए मुझसे अलग हो जा।'' इबराहीम ने कहा, ''सलाम है आपको। मैं अपने रब से दुआ करूँगा कि आपको माफ़ कर दे, मेरा रब मुझपर बड़ा मेहरबान है। (48) मैं आप लोगों को भी छोड़ता हूँ और उन हस्तियों को भी जिन्हें आप लोग अल्लाह को छोड़कर पुकारा करते हैं। मैं तो अपने रब ही को पुकारूँगा, उम्मीद है कि मैं अपने रब को पुकारकर नामुराद न रहूँगा।'' (49,50) तो जब वह उन लोगों से और अल्लाह के अतिरिक्त उनके अन्य उपास्यों से जुदा हो गया तो हमने उसको इसहाक़ और याक़ूब जैसी औलाद दी और हर एक को नबी बनाया और उनपर अपनी दयालुता दर्शाई और उनको सच्ची ख्याति प्रदान की।

(51) और चर्चा करो इस किताब में मूसा की। वह एक चुना हुआ व्यक्ति था और रसूल-नबी था।[14] (52) हमने उसको तूर की दाहिनी ओर से पुकारा। और रहस्य की बातचीत से उसको सामीप्य प्रदान किया, (53) और अपनी दयालुता से उसके भाई हारून को नबी बनाकर उसे (सहायक के रूप में) दिया। (54) और इस किताब में इसमाईल की चर्चा करो। वह वादे का सच्चा था और रसूल-नबी था। (55) वह अपने घरवालों को नमाज़ और ज़कात का हुक्म देता था और अपने रब की दृष्टि में एक पसंदीदा इनसान था।

(56) और इस किताब में इदरीस की चर्चा करो। वह एक सत्यवादी मनुष्य और एक नबी था। (57) और उसे हमने उच्च स्थान पर उठाया था।

(58) ये वे पैग़म्बर हैं जो अल्लाह के कृपापात्र हुए आदम की सन्तान में से, और उन लोगों की नस्ल से जिन्हें हमने नूह के साथ नव में सवार किया था, और इबराहीम की नस्ल से और इसराईल की नस्ल से। और ये उन लोगों में से थे जिनको हमने मार्ग दिखाया और चून लिया। उनका हाल यह था कि जब रहमान (करुणामय ईश्वर) की आयतें उनको सुनाई जाती तो रोते हुए सजदे में गिर जाते थे।

(59) फिर उनके बाद वे बुरे लोग उनके उत्तराधिकारी हुए जिन्होंने नमाज़ को गँवाया और मन की इच्छाओं के पीछे चले, अतः क़रीब है कि गुमराही के परिणाम का उन्हें सामना करना पड़े। (60) अलबत्ता जो तौबा कर लें और ईमान ले आएँ और अच्छा काम करें वे जन्नत में प्रवेश करेंगे और उनका तनिक भी हक़ मारा न जाएगा। (61) उनके लिए हमेशा रहनेवाली जन्नतें हैं जिनका करुणामय (ईश्वर) ने अपने बन्दों

से परोक्षतः वादा कर रखा है और निश्चित ही यह वादा पूरा होकर रहना है। (62) वहाँ वे कोई व्यर्थ बात न सुनेंगे, जो कुछ भी सुनेंगे ठीक ही सुनेंगे। और उनकी रोज़ी उन्हें निरन्तर सुबह और शाम मिलती रहेगी। (63) यह है वह जन्नत (स्वर्ग) जिसका वारिस हम अपने बन्दों में से उसको बनाएँगे जो संयमी (परहेज़गार) रहा है।

(64) ऐ नबी, हम तुम्हारे रब की आज्ञा के बिना नहीं उतरा करते।[15] जो कुछ हमारे आगे है और जो कुछ पीछे है और जो कुछ उसके बीच है हर चीज़ का मालिक वही है और तुम्हारा रब भूलनेवाला नहीं है। (65) वह रब है आसमानों का और

14. 'रसूल' का अर्थ है 'भेजा हुआ'। 'नबी' के अर्थ में भाषा-शास्त्रियों के बीच मतभेद है। कुछ के मतानुसार नबी का अर्थ है 'ख़बर देनेवाला' और कुछ की दृष्टि में नबी का अर्थ है 'उच्च पदस्थ' और 'सर्वोच्च स्थान पर प्रतिष्ठित'। अतः किसी व्यक्ति को 'रसूल-नबी' कहने का अर्थ या तो 'उच्च पदस्थ पैग़म्बर' है, या 'अल्लाह की ओर से ख़बरें देनेवाला पैग़म्बर'। क़ुरआन मजीद में ये दोनों शब्द आमतौर पर समान अर्थ में इस्तेमाल हुए हैं। लेकिन कुछ स्थानों पर रसूल और नबी के शब्द इस तरह भी इस्तेमाल हुए हैं जिससे व्यक्त होता है कि इन दोनों में दर्जे या कार्य-भार की दृष्टि से कोई पारिभाषिक अन्तर है। मिसाल के तौर पर सूरा 22 (हज्ज), आयत 53 में कहा गया है, "हमने तुमसे पहले नहीं भेजा कोई रसूल और न नबी मगर'। ये शब्द साफ़ स्पष्ट करते हैं कि रसूल और नबी दो अलग परिभाषाएँ हैं जिनके बीच कोई आन्तरिक अन्तर ज़रूर है। इसी कारण टीकाकारों में यह वाद-विवाद चल पड़ा है कि यह अन्तर किस तरह का है। लेकिन सच्ची बात यह है कि अकाट्य प्रमाणों के साथ कोई भी रसूल और नबी की अलग-अलग हैसियतों को निश्चित नहीं कर सका है। ज़्यादा से ज़्यादा जो बात विश्वासपूर्वक कही जा सकती है वह यह है कि रसूल का शब्द नबी की अपेक्षा विशिष्ट है, अर्थात् हर रसूल नबी भी होता है, मगर हर नबी रसूल नहीं होता। दूसरे शब्दों में नबियों में से रसूल का शब्द उन प्रतापवान हस्तियों के लिए बोला गया है जिनको सामान्य नबियों की अपेक्षा ज़्यादा महत्त्वपूर्ण पद सौंपा गया था। इसी की पुष्टि उस हदीस से भी होती है जिसमें अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से रसूलों की संख्या पूछी गई तो आपने 313 या 315 बताई और नबियों की संख्या पूछी गई तो आपने एक लाख 24 हजार बताई।
15. यहाँ बात करनेवाले फ़रिश्ते हैं यद्यपि वाणी अल्लाह की है, अर्थात् फ़रिश्ते अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से कह रहे हैं कि हम अपने अधिकार से नहीं आते बल्कि अल्लाह जब भेजता है तब आते हैं।

ज़मीन का और उन सारी चीज़ों का जो आसमानों और ज़मीन के बीच में हैं, अतः तुम उसकी बन्दगी करो और उसी की बन्दगी पर जमे रहो। क्या है कोई हस्ती तुम्हारे ज्ञान में उसकी समकक्ष?

(66) इनसान कहता है, क्या वास्तव में जब मैं मर चुकूँगा तो फिर ज़िन्दा करके निकाल लाया जाऊँगा? (67) क्या इनसान को याद नहीं आता कि हम पहले उसको पैदा कर चुके हैं जबकि वह कुछ भी न था? (68) तेरे रब की क़सम, हम ज़रूर इन सबको और इनके साथ शैतानों को भी घेर लाएँगे, फिर जहन्नम के चारों ओर लाकर इन्हें घुटनों के बल गिरा देंगे, (69) फिर हर गिरोह में से हर उस व्यक्ति को छाँट लेंगे जो रहमान (करुणामय ईश्वर) के मुक़ाबले में ज़्यादा सरकश बना हुआ था, (70) फिर यह हम जानते हैं कि उनमें से कौन सबसे बढ़कर जहन्नम में झोंके जाने के योग्य है। (71) तुममें से कोई ऐसा नहीं है जिसे जहन्नम पर पहुँचना न हो, यह तो एक निश्चित बात है जिसे पूरा करना तेरे रब के ज़िम्मे है। (72) फिर हम उन लोगों को बचा लेंगे जो (संसार में) डर रखनेवाले थे और ज़ालिमों को उसी में गिरा हुआ छोड़ देंगे।

(73) इन लोगों को जब हमारी खुली-खुली आयतें सुनाई जाती हैं तो इनकार करनेवाले ईमान लानेवालों से कहते हैं, "बताओ हम दोनों गिरोहों में से कौन अच्छी हालत में है, और किसकी मजलिसें ज़्यादा शानदार हैं?"[16] (74) हालाँकि इनसे पहले हम कितनी ही ऐसी क़ौमों को तबाह कर चुके हैं जो इनसे ज़्यादा सरो-सामान रखती थीं और ज़ाहिरी शान-शौकत में इनसे बढ़ी हुई थीं। (75) इनसे कहो, जो व्यक्ति गुमराही में ग्रस्त होता है उसे रहमान (करुणामय) ढील दिया करता है यहाँ तक कि जब ऐसे लोग वह चीज़ देख लेते हैं जिसका उनसे वादा किया गया है—चाहे वह ईश्वरीय अज़ाब हो या क़ियामत की घड़ी—तब उन्हें मालूम हो जाता है कि किसका हाल ख़राब है और किसका जत्था कमज़ोर! (76) इसके विपरीत जो लोग सीधा मार्ग अपनाते हैं अल्लाह उनको सीधा मार्ग चलने के सिलसिले में उन्नति प्रदान

16. मक्का के अधर्मियों का तर्क यह था कि देख लो, दुनिया में किसपर अल्लाह के अनुग्रह और उसकी नेमतों की वर्षा हो रही है? किसके घर ज़्यादा शानदार हैं? किसका जीवन-स्तर ज़्यादा ऊँचा है? किसकी महफ़िलें ज़्यादा ठाठ से जमती हैं? अगर ये सब कुछ हमें प्राप्त है और तुम मुसलमान इससे वंचित हो तो ख़ुद सोच लो कि आख़िर यह कैसे संभव था कि हम असत्य पर होते और यूँ मज़े उड़ाते और तुम सत्य पर होते और इस तरह दुखी और परेशान रहते।

करता है और बाक़ी रह जानेवाली नेकियाँ ही तेरे रब के निकट कर्म-फल और परिणाम की दृष्टि से उत्तम हैं।

(77) फिर तूने देखा उस व्यक्ति को जो हमारी आयतों को मानने से इनकार करता है और कहता है कि मुझे तो धन और सन्तान दी ही जाती रहेगी? (78) क्या उसे ग़ैब (परोक्ष) का पता चल गया है या उसने करुणामय (रहमान) से कोई प्रतिज्ञा करा ली है? (79)—हरगिज़ नहीं, जो कुछ यह बकता है उसे हम लिख लेंगे और इसके लिए सज़ा में और ज़्यादा इज़ाफ़ा करेंगे। (80) जिस सरो-सामान और सेना की यह बात कर रहा है वह सब हमारे पास रह जाएगी और यह अकेला हमारे सामने हाज़िर होगा।

(81) इन लोगों ने अल्लाह को छोड़कर अपने कुछ ख़ुदा बना रखे हैं कि वे इनके पुष्ठपोषक होंगे। (82) कोई पृष्ठपोषक न होगा। वे सब इनकी उपासना का इनकार करेंगे और उलटे इनके विरोधी बन जाएँगे।

(83) क्या तुम देखते नहीं कि हमने सत्य का इनकार करनेवालों पर शैतानों को छोड़ रखा है जो उन्हें ख़ूब-ख़ूब (सत्य के विरोध पर) उकसा रहे हैं? (84) अच्छा, तो अब इनपर अज़ाब उतारने के लिए विकल न हो। हम इनके दिन गिन रहे हैं। (85) वह दिन आनेवाला है जब डर रखनेवाले लोगों को हम मेहमानों की तरह करुणामय (रहमान) की सेवा में पेश करेंगे, (86) और अपराधियों को प्यासे जानवरों की तरह जहन्नम की ओर हाँक ले जाएँगे। (87) उस समय लोग कोई सिफ़ारिश न ला सकेंगे सिवाय उसके जिसने करुणामय (रहमान) के यहाँ से परवाना हासिल कर लिया हो।

(88) वे कहते हैं कि करुणामय (रहमान) ने किसी को बेटा बनाया है (89)—बड़ी ही अनर्गल बात है जो तुम लोग घड़ लाए हो। (90,91) क़रीब है कि आसमान फट पड़ें, ज़मीन फट जाएँ और पहाड़ गिर जाएँ, इस बात पर कि लोगों ने करुणामय (रहमान) के लिए सन्तान होने का दावा किया! (92) करुणामय (रहमान) की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है कि वह किसी को अपना बेटा बनाए। (93) ज़मीन और आसमानों में जो भी हैं सब उसकी सेवा में बन्दों की हैसियत से पेश होनेवाले हैं। (94) सबको वह अपने घेरे में लिए हुए है और उसने उनको गिन रखा है। (95) सब क़ियामत के दिन अकेले-अकेले उसके सामने हाज़िर होंगे।

(96) यक़ीनन जो लोग ईमान ले आए हैं और अच्छे काम कर रहे हैं जल्द ही करुणामय (रहमान) उनके लिए दिलों में मुहब्बत पैदा कर देगा।[17] (97) अतः ऐ

नबी, इस वाणी को हमने सरल करके तुम्हारी भाषा में इसी लिए उतारा है कि तुम परहेज़गारों को ख़ुशख़बरी दे दो और हठधर्म लोगों को डरा दो। (98) इनसे पहले हम कितनी ही क़ौमों को तबाह कर चुके हैं, फिर आज कहीं तुम उनका निशान पाते हो या उनकी भनक भी कहीं सुनाई देती है?

● ● ●

17. अर्थात् आज मक्का की गलियों में वे अपमानित और रुसवा किए जा रहे हैं, मगर यह हालत देर तक रहनेवाली नहीं है। क़रीब है वह समय जबकि अपने अच्छे कर्मों और नैतिक गुणों के कारण वे लोकप्रिय होकर रहेंगे। दिल उनकी ओर खिचेंगे, दुनिया उनके आगे पलके बिछाएगी। दुष्कर्म एवं अवज्ञा, अभिमान और अहंकार, झूठ और मिथ्या-प्रदर्शन के बल पर जो सरदारी और नेतृत्व चलता हो वह गरदनों को चाहे झुका ले, दिलों को नहीं जीत सकता। इसके विपरीत जो लोग सच्चाई, दियानत, सहृदयता और सुशीलता के साथ सीधे मार्ग की ओर बुलाएँ, उनसे आरम्भ में चाहे दुनया कितनी ही मुँह मोड़े, आख़िरकार वे दिलों को मोह लेते हैं और विश्वासघाती लोगों का झूठ ज़्यादा देर तक उनका मार्ग रोके नहीं रह सकता।

20. ता॰ हा॰

नाम

पहली आयत में शब्द ता॰ हा॰ आया है इसी को लक्षण के रूप में इस सूरा का नाम दे दिया गया है।

अवतरणकाल

इस सूरा का अवतरणकाल सूरा मरयम के अवतरणकाल के निकट ही का है। सम्भव है यह हबशा की हिजरत के समय या उसके पश्चात् अवतरित हुई हो। जो भी हो यह विश्वस्त है कि हज़रत उमर (रज़ि॰) के इस्लाम स्वीकार करने से पहले यह सूरा अवतरित हो चुकी थी, (क्योंकि अपनी बहन फ़ातिमा बिन्ते ख़त्ताब (रज़ि॰) के घर पर यही सूरा पढ़कर वे मुसलमान हुए थे।) और यह हबशा की हिजरत से थोड़े समय के बाद ही की घटना है।

विषय और वार्ता

सूरा का आरम्भ इस तरह होता है कि ''ऐ मुहम्मद! यह कुरआन तुम पर इसलिए नहीं उतारा गया है कि अकारण पैठे-बिठाए तुमको एक संकट में डाल दिया जाए। तुमसे यह अपेक्षित नहीं है कि हठधर्म लोगों के दिलों में ईमान पैदा करके दिखाओ। यह तो बस एक नसीहत और याददिहानी है ताकि जिसके दिल में ईश्वर का भय हो वह सुनकर सीधा हो जाए।'' इस भूमिका के पश्चात् सहसा हज़रत मूसा (अलै॰) का क़िस्सा छेड़ दिया गया है। जिस वातावरण में यह क़िस्सा सुनाया गया है, उसकी परिस्थितियों से मिल-जुलकर, यह मक्कावालों से कुछ और बातें करता दिखाई देता है, जो उसके शब्दों से नहीं बल्कि उसकी पंक्तियों के मध्य से व्यक्त हो रही हैं। उन बातों को स्पष्ट करने से पहले यह बात अच्छी तरह समझ लीजिए कि अरब में बड़ी संख्या में यहूदियों की मौजूदगी और अरबवालों पर यहूदियों के ज्ञान और विवेक को उच्चता के कारण, तथा रोम और हबशा के ईसाई-राज्यों के प्रभाव से भी अरबों में साधारणतः हज़रत मूसा (अलै॰) को अल्लाह का पैग़म्बर स्वीकार किया जाता था। इस तथ्य को दृष्टि में रखने के बाद अब देखिए कि वे बातें क्या हैं जो इस क़िस्से की पंक्तियों के मध्य से मक्कावालों पर ज़ाहिर की गई हैं :

(1) अल्लाह किसी को पैग़म्बरी (किसी सामान्य अभिघोषणा के साथ) प्रदान नहीं किया करता। पैग़म्बरी तो जिसको भी दी गई है कुछ इसी तरह रहस्यात्मक ढंग से दी गई है, जैसे हज़रत मूसा (अलै॰) को दी गई थी, अब तुम्हें क्यो इस बात पर आश्चर्य है कि मुहम्मद (सल्ल॰) सहसा नबी बनकर तुम्हारे सामने आ गए।

(2) जो बात आज मुहम्मद (सल्ल॰) पेश कर रहे हैं (अर्थात् एकेश्वरवाद और परलोकवाद) ठीक वही बात नुबूवत के पद पर नियुक्त करते समय अल्लाह ने मूसा (अलै॰) को सिखाई थी।

(3) फिर जिस तरह आज मुहम्मद (सल्ल॰) को बिना किसी साज़-सामान और सेना के अकेला क़ुरैश के मुक़ाबले में सत्य के आह्वान का ध्वजवाहक बनाकर खड़ा कर दिया गया है, ठीक इसी तरह मूसा (अलै॰) भी अचानक इतने बड़े काम पर नियुक्त कर दिए गए थे कि जाकर फ़िरऔन जैसे दमनकारी सम्राट को सरकशी से बाज़ आने का उपदेश दें। कोई सेना उनके साथ भी नहीं भेजी गई थी।

(4) जो आक्षेप और संदेह और आरोप और चाल और अत्याचार के हथकण्डे मक्कावाले आज मुहम्मद (सल्ल॰) के मुक़ाबले में इस्तेमाल कर रहे हैं, उनसे बढ़-चढ़कर वही सब हथियार फ़िरऔन ने मूसा (अलै॰) के मुक़ाबले में इस्तेमाल किए थे। फिर देख लो कि किस तरह वह अपने सभी उपायों में असफल हुआ और अन्ततः कौन प्रभावी रहा। इस सम्बन्ध में स्वयं मुसलमानों को भी एक निश्शब्द सान्त्वना दी गई है कि अपनी बे-साज़ो-समानी (के बावजूद तुम ही प्रभावी रहोगे) इसी के साथ मुसलमानों के समक्ष मिस्र के जादूगरों का आदर्श भी प्रस्तुत किया गया है कि जब सत्य उनपर प्रकट हो गया तो वे बेधड़क उस पर ईमान ले आए और फ़िरऔन के प्रतिशोध का भय उन्हें बाल बराबर भी ईमान की राह से न हटा सका। अन्त में बनी इसराईल (इसराईल की सन्तान) के इतिहास से एक साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए यह भी बताया गया है कि देवताओं और उपास्यों के गढ़े जाने का आरम्भ किस हास्यास्पद ढंग से हुआ करता है और यह कि ख़ुदा के पैग़म्बर इस घिनौनी चीज़ का नाम और चिह्न तक अवशेष रहने के कभीपक्ष में नहीं रहे हैं। अतः आज इस बहुदेववाद और मूर्तिपूजा का जो विरोध मुहम्मद (सल्ल॰) कर रहे हैं, वह पैग़म्बरी के इतिहास में कोई पहली घटना नहीं है।

इस तरह मूसा (अलै॰) के क़िस्से के रूप में उन सभी मामलों पर प्रकाश डाला गया है जो उससमय उनके और नबी (सल्ल॰) के पारस्परिक संघर्ष से सम्बन्ध रखते थे। इसके बाद एक संक्षिप्त उपदेश दिया गया है कि प्रत्येक दशा में यह क़ुरआन एक नसीहत और अनुस्मरण है। उस पर कान धरोगे तो अपना ही भला करोगे। न मानोगे तो स्वयं बुरा परिणाम देखोगे।

फिर आदम (अलै॰) का क़िस्सा बयान करके यह बात समझाई गई है कि जिस

राह पर तुम लोग चल रहे हो, यह वास्तव में शैतान का अनुसरण है। ग़लती और उसपर हठ अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारना है, जिसका नुक़सान आदमी को ख़ुद ही भुगतना पड़ेगा, किसी दूसरे का कुछ न बिगड़ेगा।

अन्त में नबी (सल्ल॰) और मुसलमानों को समझाया गया है कि ईश्वर किसी क़ौम को उसके कुफ़्र और इनकार पर तुरन्त नहीं पकड़ लेता, बल्कि संभलने के लिए पर्याप्त अवसर देता है। अतः घबराओ नहीं। धैर्य के साथ इन लोगों के अत्याचार को सहन करते चले जाओ और नसीहत का हक़ अदा करते रहो।

इस सिलसिले में नमाज़ की ताकीद की गई है, ताकि ईमानवालों में धैर्य, सहनशीलता, सन्तोष, ईश्वरीय फ़ैसले पर राज़ी रहने और आत्मनिरीक्षण के वे गुण पैदा हों जो सत्य के प्रचार की सेवा के लिए अभीष्ट हैं।



20. सूरा ता॰ हा॰

(मक्का में उतरी–आयतें 135)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ता॰ हा॰, (2) हमने यह क़ुरआन तुमपर इसलिए अवतरित नहीं किया है कि तुम मुसीबत में पड़ जाओ। (3) यह तो एक याददिहानी है हर उस व्यक्ति के लिए जो डरे।[1] (4) उतारा गया है उस सत्ता की ओर से जिसने पैदा किया है ज़मीन को और बुलन्द आसमानों को। (5) वह करुणामय स्वामी (जगत् के) राज्य सिंहासन पर विराजमान है। (6) मालिक है उन सब चीज़ों का जो आसमानों और ज़मीन में हैं और जो ज़मीन और आसमान के बीच हैं और जो मिट्टी के नीचे हैं। (7) तुम चाहे अपनी बात पुकारकर कहो, वह तो चुपके से कही हुई बात बल्कि उससे बढ़कर छिपी बात भी जानता है। (8) वह अल्लाह है, उसके सिवा कोई पूज्य नहीं, उसके लिए सर्वोत्तम नाम हैं।

(9) और तुम्हें कुछ मूसा की ख़बर भी पहुँची है? (10) जबकि उसने एक आग देखी[2] और अपने घरवालों से कहा कि "तनिक ठहरो, मैंने एक आग देखी है। शायद कि तुम्हारे लिए एक-आध अंगारा ले आऊँ, या उस आग पर मुझे (मार्ग से संबंधित) कोई रहनुमाई मिल जाए।"[3]

(11,12) वहाँ पहुँचा तो पुकारा गया, "ऐ मूसा! मैं ही तेरा रब हूँ, जूतियाँ उतार दे। तू पवित्र घाटी तुवा में है। (13) और मैंने तुझको चुन लिया है, सुन जो कुछ प्रकाशना (वह्य) की जाती है। (14) मैं ही अल्लाह हूँ, मेरे सिवा कोई पूज्य नहीं है, अतः तू मेरी बन्दगी कर और मेरी याद के लिए नमाज़ क़ायम कर। (15) क़ियामत की

1. अर्थात् ऐ नबी, इस क़ुरआन को उतारकर हम कोई अनहोना काम तुमसे नहीं लेना चाहते. तुम्हें यह सेवा नहीं सौंपी गई है कि जो लोग नहीं मानना चाहते उनको मनवाकर छोड़ो और जिनके दिल ईमान के लिए बन्द हो चुके हैं उनके भीतर ईमान उतारकर ही रहो। यह तो बस एक अनुस्मारक और याददिहानी है और इसलिए भेजी गई है कि जिसके दिल में ईश्वर का डर हो वह इसे सुनकर होश में आ जाए।
2. यह उस समय का क़िस्सा है जब हज़रत मूसा (अलै॰) कुछ वर्ष मदयन में प्रवास की ज़िन्दगी बिताने के बाद अपनी बीवी को (जिनसे मदयन ही में शादी हुई थी) लेकर मिस्र की ओर वापस जा रहे थे।

घड़ी ज़रूर आनेवाली है। मैं उसका समय छिपाए रखना चाहता हूँ, ताकि हर जीव अपने प्रयास के अनुसार बदला पाए। (16) अतः कोई ऐसा व्यक्ति जो उसपर ईमान नहीं लाता और अपने मन की इच्छाओं का ग़ुलाम बन गया है तुझको उस घड़ी की चिन्ता से न रोक दे, नहीं तो तू तबाही में पड़ जाएगा (17)—और ऐ मूसा, यह तेरे हाथ में क्या है?'' (18) मूसा ने जवाब दिया, ''यह मेरी लाठी है, इसपर टेक लगाकर चलता हूँ, इससे अपनी बकरियों के लिए पत्ते झाड़ता हूँ, और भी बहुत-से काम हैं जो इससे लेता हूँ।'' (19) कहा, ''फेंख दे इसको मूसा।'' (20) उसने फेंक दिया और यकायक वह एक साँप थी, जो दौड़ रहा था। (21) कहा, 'पकड़ ले इसको और डर नहीं, हम इसे फिर वैसा ही कर देंगे जैसा यह थी। (22,23) और ज़रा अपना हाथ अपनी बग़ल में दबा, चमकता हुआ नकलेगा बिना किसी तकलीफ़ के।[4] यह दूसरी निशानी है इसलिए कि हम तुझे अपनी बड़ी निशानियाँ दिखानेवाले हैं। (24) अब तू फ़िरऔन के पास जा, वह सरकश हो गया है।'' (25) मूसा ने निवेदन किया, ''पालनहार, मेरा सीना खोल दे, (26) और मेरे काम को मेरे लिए आसान कर दे (27,28) और मेरी ज़बान की गिरह सुलझा दे ताकि लोग मेरी बात समझ सकें, (29) और मेरे लिए मेरे अपने कुटुम्ब से एक वज़ीर नियुक्त कर दे। (30,31) हारून, जो मेरा भाई है उसके द्वारा मेरा हाथ मज़बूत कर (32) और उसको मेरे काम में शरीक कर दे, (33,34) ताकि हम अच्छी तरह तेरी पवित्रता का वर्णन करें और अच्छी तरह तेरी चर्चा करें। (35) तू हमेशा हमारी निगहबानी करता रहा है।'' (36) कहा, ''दिया गया जो तूने माँगा ऐ मूसा, (37) हमने फिर एक बार तुझपर उपकार किया। (38) याद कर वह समय जबकि हमने तेरी माँ को इशारा किया, (39) ऐसा इशारा जो प्रकाशना (वह्य) के द्वारा ही किया जाता है कि इस बच्चे को सन्दूक़ में रख दे और सन्दूक़ को दरिया में छोड़ दे। दरिया उसे तट पर फेंक देगा और उसे मेरा दुश्मन और इस बच्चे का दुश्मन उठा लेगा।''

3. ऐसा लगता है कि यह रात का समय और जाड़े का ज़माना था। हज़रत मूसा (अलै॰) प्रायद्वीप सीना के दक्षिणी इलाक़े से ग़ुजर रहे थे। दूर से एक आग देखकर उन्होंने समझा कि या तो वहाँ से थोड़ी-सी आग मिल जाएगी ताकि बाल-बच्चों को रात-भर गर्म रखने की व्यवस्था हो जाए, या कम से कम वहाँ से यह पता चल जाएगा कि आगे रास्ता किधर है। सोचा था दुनिया का रास्ता मिलने का, और वहाँ मिल गया परलोक का रास्ता।
4. अर्थात् रौशन ऐसा होगा जैसे सूरज, मगर तुम्हें उससे कोई तकलीफ़ न होगी।

''मैंने अपनी ओर से तुझपर प्रेम डालदिया और ऐसा प्रबन्ध किया कि तू मेरी देख-रेख में पाला जाए। (40) याद कर जबकि तेरी बहन चल रही थी, फिर जाकर कहती हैः मैं तुम्हें उसका पता दूँ जो इस बच्चे का पालन-पोषण अच्छी तरह करे?[5] इस तरह हमने तुझे फिर तेरी माँ के पास पहुँचा दिया ताकि उसकी आँख ठण्डी रहे और वह ग़मगीन न हो। और (यह भी याद कर कि) तूने एक व्यक्ति को क़त्ल कर दिया था, हमने तुझे उस फन्दे से निकाला और तुझे विभिन्न आज़माइशों से गुज़ारा और तू मदयन के लोगों में कई वर्ष ठहरा रहा। फिर अब ठीक अपने समय पर तू आ गया है ऐ मूसा। (41) मैंने तुझको अपने काम का बना लिया है। (42) जा, तू और तेरा भाई मेरी निशानियों के साथ। और देखो, तुम मेरी याद में कोताही न करना। (43) जाओ तुम दोनों फ़िरऔन के पास कि वह सरकश हो गया है। (44) उससे नर्मी के साथ बात करना, शायद कि वह नसीहत क़बूल करे या डर जाए।''

(45) दोनों ने निवेदन किया,[6] ''पालनहार, हमें अन्देशा है कि वह हमपर ज़्यादती करेगा या पिल पड़ेगा।'' (46) कहा, ''डरो मत, मैं तुम्हारे साथहूँ, सब कुछ सुन रहा हूँ और देख रहा हूँ। (47) जाओ उसके पास और कहो कि हम तेरे रब के भेजे हुए हैं, बनी इसराईल को हमारे साथ जाने के लिए छोड़ दे और उनको तकलीफ़ न दे। हम तेरे पास तेरे रब की निशानी लेकर आए हैं और सलामती है उसके लिए जो सीधे मार्ग का अनुसरण करे। (48) हमको प्रकाशना (वह्य) से बताया गया है कि अज़ाब है उसके लिए जो झुठलाए और मुँह मोड़े।''

(49) फ़िरऔन ने कहा,[7] ''अच्छा, तो फिर तुम दोनों का रब कौन है ऐ मूसा?'' (50) मूसा ने जवाब दिया, ''हमारा रब वह है जिसने हर चीज़ को उसकी आकृति प्रदान की, फिर उसको रास्ता बताया।''[8] (51) फ़िरऔन बोला, ''और पहले जो नस्लें गुज़र चुकी हैं उनकी फिर क्या हालत थी?''[9] (52) मूसा ने कहा, ''उसका ज्ञान मेरे रब के पास एक लेख्य में सुरक्षित है। मेरा रब न चूकता है न भूलता है।''[10] (53)—वही[11]

5. अर्थात् दरिया के किनारे टोकरी के साथ चल रही थी। फिर जब फ़िरऔन के घरवालों ने बच्चे को उठा लिया और वहाँ उसके लिए अन्ना की तलाश हुई तो हज़रत मूसा (अलै॰) की बहन ने जाकर उनसे यह बात कही।
6. यह उस समय की बात है जब हज़रत मूसा (अलै॰) मिस्र पहुँच गए और हज़रत हारून व्यावहारिक रूप से काम में उनके साथी हो गए उस समय फ़िरऔन के पास जाने से पहले दोनों ने अल्लाह की सेवा में यह निवेदन किया होगा।
7. अब उस समय का क़िस्सा शुरू होता है जब दोनों भाई फ़िरऔन के यहाँ पहुँचे।

जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन का बिछौना बिछाया, और उसमें तुम्हारे चलने को रास्ते बनाए, और ऊपर से पानी बरसाया, फिर उसके द्वारा विभिन्न प्रकार की उपज निकाली। (54) खाओ और अपने जानवरों को भी चराओ। यक़ीनन इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं बुद्धि रखनेवालों के लिए। (55) इसी ज़मीन से हमने तुमको पैदा किया है, इसी में हम तुम्हें वापस ले जाएँगे और इसी से तुमको दुबारा निकालेंगे।

(56) हमने फ़िरऔन को अपनी सभी निशानियाँ दिखाई मगर वह झुठलाए चला गया और न माना। (57) कहने लगा, ''ऐ मूसा क्या तू हमारे पासइसलिए आया है कि अपने जादू के बल से हमको हमारे देश से निकाल बाहरकरे? (58) अच्छा, हम भी तेरे मुक़ाबले में वैसा ही जादू लाते हैं। तय कर ले कब और कहाँ मुक़ाबला करना है। न हम इस प्रस्ताव से फिरेंगे न तू फिरना, खुले मैदान में सामने आ जा।'' (59) मूसा ने कहा, ''उत्सव का दिन तय हुआ, और दिनचढ़े लोग इकट्ठे हों।''[12] (60) फ़िरऔन ने पलटकर अपने सारे हथकण्डे जुटाए और मुक़ाबले में आ गया। (61) मूसा ने (ठीक अवसर पर मुक़ाबिल गिरोह को सम्बोधित करके) कहा, ''शामत के मारो, न

8. अर्थात् दुनिया कीहर चीज़ जैसी कुछ भी बनी हुई है, उसी के बनाने से बनी है। फिर उसने ऐसा नहीं किया कि हर चीज़ को उसकी विशिष्ट बनावट देकर वैसे ही छोड़ दिया हो। बल्कि इसके बाद वही इन सब चीज़ों का पथ-प्रदर्शन भी करता है। दुनिया की कोई चीज़ ऐसी नहीं है जिसे अपनी बनावट से काम लेन और अपने बनाए जाने के उद्देश्य को पूरा करने का ढंग उसने न सिखाया कान को सुनना और आँख को देखना, मछली को तैरना और पंछी को उड़ना उसी ने सिखाया है। वह हर चीज़ का सिर्फ़ स्रष्टा ही नहीं, मार्गदर्शक और शिक्षक भी है।
9. अर्थात् अगर बात ही है कि रब सिर्फ़ वही एक अल्लाह है तो यह हम सबके बाप-दादा जो सैकड़ों वर्ष से पीढ़ियों की पीढ़ियों दूसरे बहुत-से देवों की उपासना और बन्दगी करते चले आ रहे हैं, उनकी तुम्हारी दृष्टि में क्या स्थिति है? क्या वे सब अज़ाब के योग्य थे? क्या उन सबकी मति मारी गई थी?
10. फ़िरऔन के सवाल का मक़सद, श्रोताओं के, और उनके माध्यम से पूरी क़ौम के दिलों में पक्षपात की आग भड़काना था। हज़रत मूसा (अलै॰) के इस जवाब ने उसके सभी विषैले दाँत तोड़ दिए कि वे लोग जैसे कुछ भी थे, अपना काम करके ईश्वर के यहाँ जा चुके हैं। उनकी एक-एक हरकत और उसके प्रेरकों को ईश्वर जानता है। उनसे जो कुछ भी मामला ईश्वर को करना है उसको वही जानता है।
11. वर्णन-शैली से साफ़ महसूस होता है कि हज़रत मूसा (अलै॰) का जवाब 'न भूलता है' पर समाप्त हो गया, और यहाँ से आयत 55 तक की पूरी इबारत (लेख) व्याख्या और नसीहत के रूप में अल्लाह की ओर से है।

झूठी तोहमतें बाँधों अलल्लाह पर,[13] नहीं तो वह एक कठोर अज़ाब से तुम्हारा सत्यानाश कर देगा। झूठ जिसने भी घड़ा असफल हुआ।''

(62) यह सुनकर उनके बीच मतभेद हो गया और वे चुपके-चुपके आपस में मशविरा करने लगे।''[14] (63) आख़िरकार कुछ लोगों ने कहा कि ''ये दोनों तो सिर्फ़ जादूगर हैं। इनका उद्देश्य यह है कि अपने जादू के बल से तुमको तुम्हारी ज़मीन से बेदख़ल कर दें और तुम्हारी आदर्श जीवन-प्रणाली का अन्त कर दें। (64) तो अपने सारे उपाय आज जुटा लो और एकजुट होकर मैदान में आओ। बस यह समझ लो कि आज जो प्रभावी रहा वही जीत गया।''

(65) जादूगर बोले, ''मूसा, तुम फेंकते हो या पहले हम फेंकें?'' (66) मूसा ने कहा, ''नहीं, तुम ही फेंको।'' अचानक उनकी रस्सियाँ और उनकी लाठियाँ उनके जादू के ज़ोर से मूसा को दौड़ती हुई महसूस होने लगीं, (67) और मूसा अपने दिल में डर

12. फ़िरऔन का आशय यह था कि एक बार जादूगरों से लाठियों और रस्सियों के साँप बनवाकर दिखा दूँ तो मूसा (अलै॰) के चमत्कार का जो प्रभाव लोगों के दिलों पर हुआ है वह दूर हो जाएगा। यह हज़रत मूसा (अलै॰) की मुँह माँगी मुराद थी। उन्होंने कहा कि अलग कोई दिन और जगह नियत करने की क्या ज़रूरत है, उत्सव का दिन क़रीब है, जिसमें देश-भर के सभी लोग राजधानी में खिंचकर आ जाते हैं। वहीं मेले के मैदान में मुक़ाबला हो जाए ताकि सारी क़ौम के लोग देख लें। और समय भी दिन के पूरे प्रकाश का होना चाहिए ताकि सन्देह के लिए कोई गुंजाइश न रहे।
13. अर्थात् इस चमत्कार को जादू और इसके दिखानेवाले पैग़म्बर को झूठा जादूगर न ठहराओ।
14. इससे मालूम होता है कि वे लोग अपने दिलों में अपनी कमज़ोरी को ख़ुद महसूस कर रहे थे। उनको मालूम था कि हज़रत मूसा (अलै॰) ने फ़िरऔन के दरबार में जो कुछ दिखाया था वह जादू नहीं था। वे पहले ही से इस मुक़ाबले में डरते और हिचकिचाते हुए आए थे, और जब ठीक समय पर हज़रत मूसा (अलै॰) ने उनको ललकारकर सावधान किया तो उनका संकल्प अचानक डाँवाडोल हो गया। उनका मतभेद इस विषय में हुआ होगा कि क्या इस बड़े त्योहार के अवसर पर, जबकि पूरे देश से आए हुए आदमी इकट्ठे हैं, खुले मैदान और दिन के पूरे प्रकाश में यह मुक़ाबला करना ठीक है या नहीं। अगर यहाँ हम हार गए और सबके सामने जादू और चमत्कार का अनतर स्ष्ट हो गया तो फिर बात सँभाले न सँभल सकेगी।

गया।[15] (68) हमने कहा, ''मत डर, तू ही प्रभावी रहेगा। (69) फेंक जो कुछ तेरे हाथ में है, अभी इनकी सारी बनावटी चीज़ों को निगले जाता है। ये जो कुछ बनाकर लाए हैं यह तो जादूगर का फ़रेब है, और जादूगर कभी सफल नहीं हो सकता, चाहे किसी शान से वह आए।'' (70) अनतमें यही हुआ कि सारे जादूगर सजदे में गिरा दिए गए[16] और पुकार उठे, ''मान लिया हमने हारून और मूसा के रब को।'' (71) फ़िरऔन ने कहा, ''तुमने उसे मान लिया इससे पहले कि मैं तुम्हें इसकी इजाज़त देता? मालूम हो गया कि यह तुम्हारा गुरू है जिसने तुम्हें जादूगरी सिखाई थी। अच्छा, अब मैं तुम्हारे हाथ-पाँव विपरीत दिशाओं से कटवाता हूँ और खजूर के तनों पर तुमको सूली देता हूँ। फिर तुम्हें पता चल जाएगा कि हम दोनों में से किसका अज़ाब ज़्यादा कठोर और ज़्यादा स्थायी है। (अर्थात् मैं तुम्हें ज़्यादा सख़्त सज़ा दे सकता हूँ या मूसा)।'' (72) जादूगरों ने जवाब दिया, ''क़सम है उस सत्ता की जिसने हमें पैदा किया है, यह हरगिज़ नहीं हो सकता कि हम प्रत्यक्ष निशानियाँ सामने आ जाने के बाद भी (सत्य की अपेक्षा) तुझे प्राथमिकता दें। तू जो कुछ करना चाहे कर ले। तू ज़्यादा से ज़्यादा बस इसी दुनिया की ज़िन्दगी का फ़ैसला कर सकता है। (73) हम तो अपने रब पर ईमान ले आए, ताकि वह हमारी

15. अर्थात् जैसे ही हज़रत मूसा (अलै॰) के मुँह से 'फैंको' शब्द निकला, जादूगरों ने तुरन्त अपनी लाठियाँ और रस्सियाँ उनकी ओर फेंक दी और अचानक उनको यह दिखाई दिया कि सैकड़ों साँप दौड़ते हुए उनकी ओर चले आ रहे हैं। इस दृश्य से फ़ौरी तौर पर अगर हज़रत मूसा (अलै॰) ने एक दहशत अपने अनदर महसूस की तो यह कोई अजीब बात नहीं है। इनसान तो इनसान ही होता है, चाहे पैग़म्बर ही क्यों न हो, इनसानियत के गुण-स्वभाव उससे अलग नहीं हो सकते। इस जगह यह बात उल्लेखनीय है कि क़ुरआन यहाँ इस बात की पुष्टि कर रहा है कि सामान्य इनसानों की तरह पैग़म्बर भी जादू से प्रभावित हो सकता है। अगरचे जादू उसकी पैग़म्बरी के काम में बाधा नहीं डाल सकता मगर उसकी इनसानी क्षमताओं पर प्रभाव ज़रूर डाल सकता है। इससे उन लोगों के विचार की ग़लती खुल जाती है जो हदीसों में नबी (सल्ल॰) पर जादू का प्रभाव होने के उल्लेख पढ़कर न सिर्फ़ उन हदीसों को झुठलाते हैं बल्कि इससे आगे बढ़कर सभी हदीसों को अविश्वसनीय ठहराने लगते हैं।
16. अर्थात् जब उन्होंने मूसा की लाठी का कारनामा देखा तो उन्हें तुरंत विश्वास हो गया कि यह यक़ीनन चमत्कार है, उनकी कला (फ़न) की चीज़ हरगिज़ नहीं है, इसलिए वे इस तरह अचानक और बेधड़क सजदे में गिरे जैसे किसी ने उठा-उठाकर उनको गिरा दिया हो।

ख़ताओं को माफ़ कर दे और इस जादूगरी से, जिसपर तूने हमें मजबूर किया था, माफ़ कर दे। अल्लाह ही अच्छा है और वही बाक़ी रहनेवाला है।'' (74)—वास्तविकता[17] यह है कि जो अपराधी बनकर अपने रब के सामने हाज़िर होगा उसके लिए जहन्नम हैं जिसमें न वह जिएगा न मरेगा। (75) और जो उसके सामने ईमानवाले (मोमिन) के रूप में हाज़िर होगा, जिसने अच्छे काम किए होंगे, ऐसे सब लोगों के लिए ऊँचे दर्जे हैं, (76) सदाबहार बाग़ हैं जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, उनमें वे हमेशा रहेंगे। यह बदला है उस व्यक्ति का जो पवित्रता अपनाए।

(77) हमने[18] मूसा पर प्रकाशना (वह्य) की कि अब रातों-रात मेरे बन्दों को लेकर चल पड़, और उनके लिए समुद्र में से सूखी सड़क बना ले, तुजे किसी के पीछा करने का तनिक भय न हो और न (समुद्र के बीचसे गुज़रते हुए) डर लगे।

(78) पीछे से फ़िरऔन अपनी सेना लेकर पहुँचा, और फिरसमुद्र उनपर छा गया जैसा कि छा जाने का हक़ था। (79) फ़िरऔन ने अपनी क़ौमवालों को पथभ्रष्ट ही किया था, कोई ठीक मार्ग नहीं दिखाया था।

(80) ऐ इसराईल की सन्तान,[19] हमने तुमको तुम्हारे दुश्मन से छुटकारा दिया, और तूर की दाहिनी और तुम्हारी हाज़िरी के लिए समय नियत किया और तुमपर मन्न और सलवा उतारा (81)—खाओ हमारी दी हुई पाक रोज़ी और उसे खाकर सरकशी न करो, नहीं तो तुमपर मेरा ग़ज़ब (प्रकोप) टूट पड़ेगा। और जिसपर मेरा ग़ज़ब टूटा वह फिर गिरकर ही रहा। (82) अलबत्ता जो तौबा कर ले और ईमान लाए औरअच्छे कर्म करे, फिर सीधा चलता रहे उसके लिए मैं बहुत माफ़ करनेवाला हूँ।

(83) और क्या चीज़ तुम्हें अपने क़ौमवालों से पहले ले आई मूसा?[20] (84)

17. ये जादूगरों के कथन के साथ अल्लाह ने अपने शब्द जोड़े हैं। वर्णनशैली ख़ुद बता रही है कि यह अंश जादूगरों के कथन का हिस्सा नहीं है।
18. बीच में उन हालात का विवरण छोड़ दिया गया है जो इसके बाद मिस्र में ठहरने की दीर्घ अवधि में पेश आए। अब उस समय का उल्लेख शुरू होता है जब हज़रत मूसा (अलै॰) को आदेश हुआ कि बनी इसराईल (इसराईल की संतान) को लेकर मिस्र से निकल खड़े हों।
19. समुद्र को पार करने से लेकर सीना पर्वत के दामन में पहुँचने तक का क़िस्सा बीच में छोड़ दिया गया है। इसका विवरण सूरा 7 (आराफ़) आयत 130`स 147 में गुज़र चुका है।

उसने निवेदन किया, ''वे बस मेरे पीछे आ ही रहे हैं। मैं जल्दी करके तेरी सेवा में आ गया हूँ, ऐ मेरे रब, ताकि तू मुझसे ख़ुश हो जाए।'' (85) कहा, ''अच्छा तो सुनो, हमने तुम्हारे पीछे तुम्हारी क़ौम को आज़माइश में डाल दिया और सामिरी ने उन्हें पथभ्रष्ट कर डाला।''[21]

(86) मूसा बहुत ही ग़ुस्से और दुख की दशा में अपनी क़ौम की ओर पलटा। जाकर उसने कहा, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, क्या तुम्हारे रब ने तुमसे अच्छे वादे नहीं किए थे?[22] क्या तुम्हें दिन लग गए हैं? या तुम अपने रब का ग़ज़ब (प्रकोप) ही अपने ऊपर लाना चाहते थे कि तुमने मुझसे वादाख़िलाफ़ी की?'' (87) उन्होंने उत्तर दिया, ''हमने आपसे वादाख़िलाफ़ी कुछ अपने अधिकार से नहीं की, मामला यह हुआ कि लोगों के ज़ेवरों के बोझ से हम लद गए थे, और हमने बस उनको फेंक दिया था।''[23] (88)—फिर[24] इसी तरह सामिरी ने भी कुछ डाला और उनके लिए एक बछड़े की मूर्ति बनाकर निकाललाया जिसमें से बैल की-सी आवाज़ निकलती थी। लोग पुकार उठे, ''यही है तुम्हारा पूज्य और मूसा का इष्ट पूज्य, मूसा इसे भूल गया।'' (89) क्या वे देखते न थे

20. अब उस अवसर का उल्लेख शुरू होता है जब हज़रत मूसा (अलै॰) तूर के दामन में बनी इसराईल को छोड़कर शरीअत के आदेश लेने के लिए तूर पर्वत पर पधारे थे। अल्लाह के इस कथन से मालूम होता है कि हज़रत मूसा (अलै॰) अपनी क़ौम वालों को मार्ग ही में छोड़कर अपने रब की मुलाक़ात के शौक़ में आगे चले गए थे।
21. अर्थात् सोने का बछड़ा बनाकर उन्हें उसकी पूजा में लगा दिया।
22. अर्थात् आज तक तुम्हारे रब ने तुम्हारे साथ जितनी भलाइयों का वादा भी किया है वे सब तुम्हें हासिल होती रही हैं। तुम्हें मिस्र से सकुशल निकाला, ग़ुलामी से मुक्त किया, तुम्हारे दुश्मन को तहस-नहस कर दिया, तुम्हारे लिए इन मरुस्थलों और पहाड़ी इलाक़ों में छाया और खाने का प्रबन्ध किया। क्या ये सारे अच्छे वादे पूरे नहीं हुए? उसने अब तुम्हें शरीअत (धर्म-विधान) और हिदायतनामा (आदेश-पत्र), प्रदान करने का जो वादा किया था, क्या तुम्हारी दृष्टि में वह किसी कल्याण और भलाई का वादा न था?
23. यह उन लोगों की विवशता थी जो सामिरी के फ़ितने में पड़ गए थे। उनका कहना यह था कि हमने जेवर-गहने फेंक दिए थे। न हमारा कोई इरादा बछड़ा बनाने का था, न हमें मालूम था कि क्या बननेवाला है। इसके बाद जो मामला पेश आया वह था ही कुछ ऐसा कि उसे देखकर हम सहज ही शिर्क (बहुदेववाद) में ग्रस्त हो गए।

कि न वह उनकी बात का जवाब देता है और न उनके लाभ और उनकी हानि का कुछ अधिकार रखता है? (90) हारून (मूसा के आने से) पहले ही उनसे कह चुका था कि ''लोगो, तुम इसके कारण आज़माइश में पड़ गए हो, तुम्हारा रब तो रहमान है, अतः तुम मेरा अनुसरण करो और मेरी बात मानो।'' (91) मगर उन्होंने उससे कह दिया कि ''हम तो इसी की उपासना करते रहेंगे जब तक कि मूसा हमारे पास वापस न आ जाए।''

(92,93) मूसा (क़ौम के लोगों को डाँटने के बाद हारून की ओर पलटा और) बोला, ''हारून, तुमने जब देखा था कि ये गुमराह हो रहे हैं तो किस चीज़ ने तुम्हारा हाथ पकड़ा था कि मेरे तरीक़े पर अमल न करो? क्या तुमने मेरे आदेश की अवहेलना की?''[25] (94) हारून ने जवाब दिया, ''ऐ मेरी माँ के बेटे, मेरी दाढ़ी न पकड़, न मेरे सिर के बालखींच, मुझे इस बात का डर था कि तू आकर कहेगा कि तुमने बनी इसराईल में फूट डाल दी और मेरी बात का लिहाज़ न किया।''[26]

(95) मूसा ने कहा, ''और सामिरी, तेरा क्या मामला है?'' (96) उसने जवाब दिया, ''मैंने वह चीज़ देखी जोइन लोगों को दिखाई न दी, अतः मैंने रसूल के पदचिह्नों से एक मुट्ठी उठा ली और उसको डाल दिया। मेरे मन ने मुझे कुछ ऐसा ही सुझाया।''[27] (97) मूसा ने कहा, ''अच्छा तो जा, अब ज़िन्दगी भर तुझे यही पुकारते रहना है कि मुझे न छूना।[28] और तेरे लिए जवाब-तलबी का एक समय निश्चित है जो तुझसे हरगिज़ न टलेगा। और देख अपने इस पूज्य को जिसपर तू रीझा हुआ था, अब हम इसे जला डालेंगे और चूण-विचूर्ण करके दरिया में बहा देंगे। (98) लोगो, तुम्हारा पूज्य तो बस एक अल्लाह ही है , जिसके सिवा कोई और पूज्य नहीं है, हर चीज़ पर उसका ज्ञान हावी है।''

(99) ऐ नबी, इस तरह हम पिछले बीते हुए हालात के समाचार तुमको सुनाते

24. यहाँ से आयत 91 के अन्त तक के शब्दों पर विचार करने से साफ़ महसूस होता है कि क़ौम का जवाब 'फेंक दिया था' पर ख़त्म हो गया है और इसके आगे की बात अल्लाह ख़ुद बता रहा है।
25. आदेश से मुराद वह आदेश है जो पहाड़ पर जाते समय, और अपनी जगह हज़रत हारून (अलै॰) को इसराईलियों की सरदारी सौंपते समय हज़रत मूसा (अलै॰) ने दिया था। सूरा 7 (आराफ़), आयत 142 में यह बात गुज़र चुकी है कि हज़रत मूसा (अलै॰) ने जाते हुए अपने भाई हारून (अलै॰) से कहा कि तुम मेरी क़ौमवालों में मेरा प्रतिनिधित्व करो और देखो, सुधार करना, बिगाड़ पैदा करनेवालों के तरीक़े पर न चलना।

हैं, और हमने विशेष रूप से अपने यहाँ से तुमको एक 'ज़िक्र' (उपदेश का पाठ) प्रदान किया है। (100) जो कोई उससे मुँह मोड़ेगा वह क़ियामत के दिन पाप का कठिन बोझ उठाएगा, (101) और ऐसे सब लोग हमेशा के लिए उसके वबाल में गिरफ़्तार रहेंगे, और क़ियामत के दिन उनके लिए (इस अपराध के दायित्व का बोझ) बड़ा दुखद बोझ होगा। (102) उस दिन जबकि सूर (नरसिंघा) फूँका जाएगा और हम अपराधियों को इस हाल में घेर लाएँगे कि उनकी आँखें (डर के मारे) पथराई हुई होंगी, (103) आपस में चुपके-चुपके कहेंगे कि "दुनिया में मुश्किल ही से तुमने कोई दस दिन गुज़ारे होंगे।"

26. हज़रत हारून (अलै॰) के इस जवाब का यह अर्थ हरगिज़ नहीं है कि क़ौम का इकट्ठा रहना उनके सीधे मार्ग पर रहने से ज़्यादा महत्त्व रखता है, और एकता चाहे वह शिर्क (बहुदेववाद) ही पर क्यों न हो, बिखराव से अच्छा है। इस आयत का यह अर्थ अगर कोई व्यक्ति लेगा तो क़ुरआन से पथ-प्रदर्शन के बदले गुमराही ग्रहण करेगा। हज़रत हारून (अलै॰) की पूरी बात समझने के लिए इस आयत को सूरा 7 (आराफ़) की आयत 150 के साथ मिलाकर पढ़ना चाहिए जहाँ हज़रत हारून (अलै॰) कहते हैं कि "मेरी माँ के बेटे, इन लोगों ने मुझे दबा लिया और क़रीब था कि मुझे मार डालते। अतः तू दुश्मनों को मुझपर हँसने का मौक़ा न दे और इस ज़ालिम गिरोह में मुझे सम्मिलित न कर।" अब इससे वास्तविक स्थिति का यह चित्र सामने आता है कि हज़रत हारून (अलै॰) ने लोगों को इस गुमराही से रोकने की पूरी कोशिश की, मगर उनहोंने उनके विरुद्ध उपद्रव ख़ड़ा कर दिया और उन्हें मार डालने पर तुल गए। विवश होकर वे इस अंदेशे से चुप हो गए कि कहीं हज़रत मूसा (अलै॰) के आने से पहले यहाँ गृहयुद्ध न छिड़ जाए और वे बाद में आकर शिकायत करें कि तुम स्थिति से निपट नहीं सकते थे तो तुमने स्थिति को इस सीमा तक क्यों बिगड़ जाने दिया? मेरे आने का इनतिज़ार क्यों न किया?
27. रसूल से मुराद संभवतः यहाँ ख़ुद हज़रत मूसा (अलै॰) हैं। सामिरी एक मक्कार व्यक्ति था, उसने हज़रत मूसा (अलै॰) को भी अपनी मक्कारी के जाल में फासना चाहा और उनसे कहा कि हज़रत यह आप ही के चरणों की धूल की बरकत है कि मैंने जब उसे पिघले हुए सोने में डाला तो इस शान का बछड़ा उससे प्रकट हुआ।
28. अर्थात् सिर्फ़ यही नहीं कि ज़िन्दगी-भर के लिए समाज से उसके सम्बन्ध तोड़ दिए गए और उसे अछूत बनाकर रख दिया गया, बल्कि यह ज़िम्मेदारी भी उसी पर डाली गई कि हर व्यक्ति को वह ख़ुद अपना अछूतपन बताए और दूर ही से लोगों को सूचित करता रहे कि मैं अछूत हूँ, मुझे हाथ न लगाना।

(104)—हमें ख़ूब मालून है कि वे क्या बातें कर रहे होंगे। (हम यह भी जानते हैं कि) उस समय उनमें से जो ज़्यादा से ज़्यादा सावधानी से अनुमान करनेवाला होगा वह कहेगा कि नहीं, तुम्हारी दुनिया बस एक दिन की ज़िन्दगी थी। (105)—ये लोग तुमसे पूछते हैं कि आख़िर उस दिन ये पहाड़ कहाँ चले जाएँगे? कहो कि मेरा रब इनको धूल बनाकर उड़ा देगा (106) और ज़मीन को ऐसा समतल चटियल मैदान बना देगा (107) कि उसमें तुम कोई बल और सलवट न देखोगे। (108)—उस दिन सब लोग पुकारनेवाले की पुकार पर सीधे चले आएँगे, कोई तनिक अकड़ न दिखा सकेगा। और आवाज़ें रहमान (करुणामय ईश्वर) के आगे दब जाएँगी, एक सरसराहट के सिवा तुम कुछ न सुनोगे। (109) उस दिन सिफ़ारिश कारगर न होगी, सिवाय इसके कि किसी को रहमान (करुणामय ईश्वर) इसकी इजाज़त दे और उसकी बात सुनना पसन्द करे। (110)—वह लोगों का अगला-पिछला सब हाल जानता है और दूसरों को उसका पूरा ज्ञान नहीं है। (111)—लोगों के सिर उस जीवन्त और क़ायम रहनेवाले के आगे झुक जाएँगे। असफल होगा जो उस समय किसी ज़ुल्म का पाप-भार उठाए हुए हो। (112) और किसी ज़ुल्म और हक़ मारे जाने का ख़तरा न होगा उस व्यक्ति को जो अच्छे कर्म करे और इसके साथ वह ईमानवाला भी हो।

(113) और ऐ नबी, इसी तरह हमने इसे अरबी क़ुरआन बनाकर उतारा है[29] और इसमें तरह-तरह से चेतावनियाँ दी हैं शायद कि ये लोग ग़लत नीति अपनाने से बचे या इनमें कुछ होश के लक्षण इसके कारण पैदा हों।

(114) अतः उच्च है अल्लाह, वास्तविक सम्राट।[30] और देखो, क़ुरआन पढ़ने में जल्दी न किया करो जब तक कि तुम्हारी ओर उसकी प्रकाशना (वह्य) पूर्णता को प्राप्त न हो, और दुआ करो कि ऐ पालनहार! मुझे और अधिक ज्ञान प्रदान कर।[31]

(115) हमने इससे पहले आदम को एक आदेश दिया था, मगर वह भूल गया

29. अर्थात् ऐसे ही विषयों और शिक्षाओं और उपदेशों से परिपूर्ण। इसका इशारा उन सभी विषयों की ओर है जो क़ुरआन में बयान हुए हैं।
30. इस तरह के वाक्य क़ुरआन में साधारणतया एक भाषण को समाप्त करते हुए कहे जाते हैं, और उद्देश्य यह होता है कि वार्ता की समाप्ति अल्लाह की स्तुति और गुणगान पर हो। वर्णनशैली और इबारत के अगले-पिछले भाग पर विचार करने से साफ़ महसूस होता है कि यहाँ एक भाषण समाप्त हो गया और 'व लक़द अहिदना इला आ-द-म' (हमने इससे पहले आदम को एक आदेश दिया था) से दूसरा भाषण शुरू होता है।

और हमने उसमें दृढ़-संकल्प न पाया[32] (116) याद करो वह समय जबकि हमने फ़रिश्तों से कहा था कि आदम को सजदा करो। वे सब तो सजदा कर गए, मगर एक इबलीस था कि इनकार कर बैठा। (117) इसपर हमने आदम से कहा कि "देखो, यह तुम्हारा और तुम्हारी बीवी का दुश्मन है, ऐसा न हो कि यह तुम्हें जन्नत से निकलवा दे और तुम मुसीबत में पड़ जाओ। (118,119) यहाँ तो तुम्हें ये सुख-सुविधाएँ प्राप्त हैं कि न भूखे-नंगे रहते हो, न प्यास और धूप तुम्हें सताती है।" (120) लेकिन शैतान ने सको फुसलाया, कहने लगा, "आदम, बताऊँ तुम्हें वह पेड़ जिससे हमेशा की ज़िन्दगी और अपतनशील राज्य प्राप्त होता है?" (121) आख़िरकार दोनों (पति-पत्नी) उस पेड़ का फल खा गए। नतीजा यह हुआ कि तुरन्त ही उनके गुप्तांग एक-दूसरे के आगे खुल गए और लगे दोनों अपने आपको जन्नत के पत्तों से ढाँकने।[33] आदम ने अपने रब की नाफ़रमानी की और सीधे रास्ते से भटक गया। (122) फिर उसके रब ने उसे चुन लिया और उसकी तौबा क़बूल कर ली और उसे मार्ग दिखाया[34] (123) और कहा, "तुम दोनों (फ़रीक़, अर्थात् इनसान और शैतान) यहाँ से उतर जाओ। तुम एक-दूसरे के दुश्मन रहोगे। अब अगर मेरी ओर से तुम्हें कोई मार्गदर्शन पहुँचे तो जो कोई मेरे उस मार्गदर्शन का अनुपालन करेगा, वह न भटकेगा, न दुर्भाग्यग्रस्त होगा। (124) और जो मेरे "ज़िक्र" (उपदेश-पाठ) से मुँह मोड़ेगा उसके लिए दुनिया में संकीर्ण ज़िन्दगी होगी[35] और क़ियामत के दिन हम उसे अन्धा उठाएँगे।" (125)—

31. इन शब्दों से साफ़ महसूस हो रहा है कि नबी (सल्ल॰) प्रकाशना (वह्य) का सन्देश प्राप्त करने के बीच में उसे याद करने और ज़बान से दोहराने की चेष्टा कर रहे होंगे जिसके कारण सन्देश के सुनने पर ध्यान पूर्ण रूप से केन्द्रित न हो रहा होगा। इस स्थिति को देखकर आपको आदेश दिया गया कि आप प्रकाशना अवतरित होने के समय उसे याद करकने की कोशिस न किया करें।

32. मालूम हुआ कि बाद में आदम (अलै॰) से इस आदेश की जो अवहेलना हुई वह जानते-बूझते सरकशी के कारण नहीं बल्कि ग़फ़लत और भूल में पड़ जाने और संकल्प और इरादे की कमज़ोरी में ग्रस्त हो जाने के कारण से थी।

33. दूसरे शब्दों में नाफ़रमानी के बाद तुरन्त ही वे सुविधाएँ और सुख उनसे छीन लिए गए जो सरकारी प्रबन्ध के द्वारा उनके लिए जुटाए जाते थे, और सर्वप्रथम यह सरकारी वस्त्र छिन जाने के रूप में सामने आया। खाना, पानी और घर से वंचित होने की नौबत तो बाद को ही आनी थी।

34. अर्थात् शैतान की तरह तिरस्कृत न कर दिया बल्कि जब उसने लज्जित होकर तौबा कर ली तो अल्लाह ने उसके साथ यह दया का व्यवहार किया।

वह कहेगा, "पालनहार, दुनिया में तो मैं आँखोवाला था, यहाँ मुझे अन्धा क्यों उठाया?" (126) अल्लाह कहेगा, "हाँ, इसी तरह तो हमारी आयतों को, जबकि वे तेरे पास आई थीं, तूने भुला दिया था। उसी तरह आज तू भुलाया जा रहा है।" (127)—इस तरह हम सीमा से आगे निकलनेवाले और अपने रब की आयतों को न माननेवाले को (दुनिया में) बदला देते हैं, और आख़िरत का अज़ाब तो ज़्यादा कठोर और ज़्यादा स्थायी है।

(128) फिर क्या इन लोगों को (इतिहास की इस शिक्षा से) कोई मार्ग न मिला कि इनसे पहले कितनी ही क़ौमों को हम तबाह कर चुके हैं जिनकी (बर्बाद) बस्तियों में आज ये चलते-फिरते हैं? वास्तव में इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो ठीक समझ रखनेवाले हैं।

(129) अगर तेरे रब की ओर से एक बात पहले निश्चित न कर दी गई होती और मुहलत की एक अवधि नियत न की जा चुकी होती तो ज़रूर इनका भी फ़ैसला चुका दिया जाता। (130) अतः ऐ नबी, जो बातें ये लोग बनाते हैं उनपर सब्र करो, और अपने रब के गुणगान एवं प्रशंसा के साथ उसकी बड़ाई बयान करो सूरज निकलने से पहले और सूरज डूबने से पहले, और रात की घड़ियों में भी तसबीह करो और दिन के किनारों पर भी,[36] शायद कि तुम राज़ी हो जाओ।[37] (131) और निगाह उठाकर भी न

35. दुनिया में संकीर्ण ज़िन्दगी होने का अर्थ यह नहीं है कि वह निर्धन हो जाएगा बल्कि इसका अर्थ यह है कि यहाँ उसे चैन नसीब न होगा। करोड़पति भी होगा तो बेचैन रहेगा। सात भूखण्डों का राजा भी होगा तो विकलता और असन्तोष से छुटकारा न पाएगा। उसकी दुनिया की सफलताएँ हज़ारों क़िस्म के अवैध उपायों का परिणाम होंगी जिनके कारण अपनी अन्तरात्ममा से लेकर चारों तरफ़ के सम्पूर्ण सामाजिक वातावरण तक हर चीज़ के साथ उसका निरन्तर संघर्ष चलता रहेगा जो उसे कभी निश्चिन्तता एवं परितोष और सच्चे आनन्द से लाभान्वित न होने देगा।

36. "रब के गुणगान एवं प्रशंसा के साथ उनकी तसबीह" (गुणगान) करने से मुराद नमाज़ है। उसके नियत समयों की ओर यहाँ भी स्पष्ट इशारा कर दिया गया हैं। सूरज निकलने से पहले फ़ज्र की नमाज़, सूरज डूबने से पहले अस्र की नमाज़ और रात के समय में इशा और तहज्जुद की नमाज़। रहे दिन के किनारे, तो वे तीन ही हो सकते हैं। एक किनारा सुबह है, दूसरा किनारा सूरज का ढलना, और तीसरा किनारा शाम। अतः दिन के किनारों से मुराद फ़ज्र, ज़ुहर और मग़रिब की नमाज़ ही हो सकती है।

देखो दुनिया की ज़िन्दगी की उस शान-शौकत को जो हमने इनमें से विभिन्न तरह के लोगों को दे रखी है। वह तो हमने उन्हें आज़माइश में डालने के लिए दी है, और तेरे रब की दी हुई हलाल रोज़ी[38] ही ज़्यादा अच्छी और ज़्यादा स्थायी है। (132) अपने घरवालों को नमाज़ के लिए कहो और ख़ुद भी उसके पाबन्द रहो। हम तुमसे कोई रोज़ी नहीं चाहते, रोज़ी तो हम ही तुम्हें दे रहे हैं। और परिणाम की भलाई धर्मपरायणता (तक़वा) ही के लिए है।

(133) वे कहते है कि य व्यक्ति अपने रब की ओर से कोई निशानी (चमत्कार) क्यों नहीं लाता? और क्या उनके पास अगली पुस्तकों (सहीफ़ों) की समक्त शिक्षाओं का स्पष्ट बयान नहीं आ गया?[39] (134) अगर हम उसके आने से पहले इनको किसी अज़ाब से तबाह कर देते तो फिर यही लोग कहते कि ऐ हमारे रब, तूने हमारे पास कोई रसूल क्यों न बेजा कि अपमानित और तिरस्कृत होने से पहले ही हम तेरी आयतों का अनुपालन कर लेते? (135) ऐ नबी, उनसे कहो, हर एक अंजाम के इनतिज़ार में है, अतः अब इनतिज़ार करो, जल्द ही तुम्हें मालूम हो जाएगा कि कौन सीधे मार्ग पर चलनेवाले हैं और कौन मार्ग पाए हुए हैं।



37. इसके दो अर्थ हो सकते हैं। एक यह कि तुम अपनी वर्तमान हालत पर राज़ी हो जाओ जिसमें अपने मिशन के लिए तुम्हें तरह-तरह की अप्रिय बातें सहन करनी पड़ रही हैं। दूसरा अर्थ यह है कि तुम तनिक यह काम करके तो देखो, इसका परिणाम वह कुछ सामने आएगा जिससे तुम्हारा दिल ख़ुश हो जाएगा।
38. रोज़ी का अनुवाद हमने 'हलाल रोज़ी' किया है, क्योंकि अल्लाह ने कहीं भी हराम रोज़ी को 'रिज़के रब' (रब की दी हुई रोज़ी) की संज्ञा नहीं दी है।
39. अर्थात् क्या यह कोई कम चमत्कार है कि इन्हीं में से एक 'उम्मी' (अनपढ़) व्यक्ति ने यह किताब प्रस्तुत की है जिसमें शुरू से अब तक की समस्त आसमानी किताबों की बातों और शिक्षाओं का सार निकालकर रख दिया गया है। इनसान के मार्गदर्शन और निर्देशन के लिए उन किताबों में जो कुछ था, वह सब सिर्फ़ यही नहीं कि इसमें जुटा दिया गया, बल्कि उसको ऐसा खोलकर स्पष्ट भी कर दिया गया कि मरूस्थल निवासी बद्दू तक इसको समझकर उससे लाभ उठा सकते हैं।

21. अल-अंबिया

नाम

क्योंकि इस सूरा में निरन्तर बहुत-से नबियों (अंबिया) का उल्लेख हुआ है, इसलिए इसका नाम अल-अंबिया रख दिया गया। यह विषय-वस्तु की दृष्टि से सूरा का शीर्षक नहीं है, बल्कि केवल पहचानने के लिए एक लक्षणमात्र है।

अवतरणकाल

विषय-वस्तु और शैली दोनों से ही यही मालूम होता है कि इसका अवतरणकाल मक्का का मध्यकाल अर्थात् हमारे काल-विभाजन की दृष्टि से नबी (सल्ल॰) के मक्की जीवन का तीसरा कालखण्ड है।

विषय और वार्ता

इस सूरा में उस संघर्ष पर वार्तालाप किया गया है जो नबी (सल्ल॰) और क़ुरैश के सरदारों के बीच चल रहा था। वे लोग नबी (सल्ल॰) की रिसालत की उद्घोषणा और एकेश्वरवाद और परलोकवाद से सम्बद्ध आपके आमंत्रण पर जो सन्देह और आक्षेप करते थे, उनका उत्तर दिया गया है। उनकी ओर से आपके विरोध में जो चालें चली जा रही थीं, उनपर ताड़ना की गई है और उन गतिविधियों के बुरे परिणामों से सावधान किया गया है और अन्त में उनको यह एहसास दिलाया गया है कि जिस व्यक्ति को तुम अपने लिए कष्टकारी और आपदा समझ रहे हो वह वास्तव में तुम्हारे लिए सर्वथा दयालुता बनकर आया है।

अभिभाषण के मध्य में विशेष रूप से जिन बातों पर वार्तालाप किया गया है वे ये हैं :

(1) मक्का के काफ़िरों के इस भ्रम को कि मनुष्य कभी रसूल नहीं हो सकता और इस आधार पर उनका नबी (सल्ल॰) को रसूल (पैग़म्बर) मानने से इनकार करना—इसका विस्तारपूर्वक खण्डन किया गया है।

(2) उनका आपपर और क़ुरआन पर विभिन्न और विरोधाभासी आक्षेप करना और किसी एक बात पर न जमना—इसपर संक्षिप्त किन्तु अत्यन्त ज़ोरदार अर्थजनक रीति से पकड़ की गई है।

(3) उनकी यह घोषणा कि जीवन मात्र एक खेल है जिसे कुछ थोड़े दिन खेलकर यूँ ही समाप्त हो जाना है (इसका कोई हिसाब-किताब नहीं)—इसका बड़े ही प्रभावकारी ढंग

से तोड़ किया गया है।

(4) बहुदेववाद पर उनका हठ और एकेश्वरवाद के विरुद्ध उनका अज्ञानपूर्ण पक्षपात—इसके सुधार के लिए संक्षिप्त किन्तु वज़नदार और दिल में घर करनेवाले प्रमाण दिए हैं।

(5) उनके इस भ्रम को कि नबी को बार-बार झुठलाने पर भी जब उनपर कोई यातना नहीं आती तो अवश्य ही नबी झूठा है और ईश्वरीय यातना की धमकियाँ मात्र धमकियाँ हैं—इसको तार्किक और उपदेशात्मक दोनों तरीक़ों से दूर करने की कोशिश की गई है।

इसके पश्चात् नबियों (अलै०) के जीवन चरित्र की महत्वपूर्ण घटनाओं से कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं, जिनसे यह समझाना अभीष्ट है कि वे सभी पैग़म्बर जो मानव-इतिहास में ख़ुदा की ओर से आए थे, मनुष्य थे, ईश्वरत्व और प्रभुता का उनमें लेशमात्र भी न था। इसके साथ उन्हीं ऐतिहासिक उदाहरणों से दो बातें स्पष्ट की गई हैं। एक यह कि नबियों पर तरह-तरह की मुसीबतें आई हैं और उनके विरोधियों ने भी उन्हें तबाह करने की कोशिश की है, किन्तु अल्लाह की ओर से असाधारण रीतियों से उनकी सहायता की गई हैं। दूसरे यह कि सभी नबियों का धर्म एक था और वह वही धर्म था, जिसे मुहम्मद (सल्ल०) प्रस्तुत कर रहे हैं। मानव-जाति का वास्तविक धर्म यही है, और शेष जितने धर्म दुनिया में बने हैं वे केवल पथभ्रष्ट मनुष्यों की डाली हुई फूट और दुराव हैं। अन्त में यह बताया गया है कि मानव की मुक्ति इसी धर्म के अनुसरण पर निर्भर करती है (और इसका अवतरण सर्वथा ईश-दयालुता है)।

⊖ ⊖ ⊖

21. सूरा अल-अंबिया

(मक्का में उतरी–आयतें 112)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़रीब आ गया है लोगों के हिसाब का समय, और वे हैं कि असावधानी में पड़े मुँह मोड़े हुए हैं। (2) उनके पास जो ताज़ा नसीहत भी उनके रब की ओर से आती है उसको तकल्लुफ़ से सुनते हैं और खेल में पड़े रहते हैं, (3) दिल उनके (दूसरी ही चिन्ताओं में) लीन हैं।

और ज़ालिम आपस में कानाफूसियाँ करते हैं कि "यह व्यक्ति आख़िर तुम जैसा एक इनसान ही तो है, फिर क्या तुम आँखों देखते जादू के फन्दे में फँस जाओगे?"

(4) रसूल ने कहा, मेरा रब हर उस बात को जानता है जो आसमान और ज़मीन में की जाए, वह सुनता और जानता है।[1]

(5) वे कहते हैं, "बल्कि ये बिखरे स्वप्न हैं, बल्कि यह इसकी मनघड़त हैं, बल्कि यह व्यक्ति कवि है, नहीं तो यह लाए कोई निशानी जिस तरह पुराने ज़माने के रसूल निशानियों के साथ भेजे गए थे।" (6) हालाँकि इनसे पहले कोई बस्ती भी, जिसे हमने तबाह किया, ईमान न लाई। अब क्या ये ईमान लाएँगे?

(7) और ऐ नबी, तुमसे पहले भी हमने इनसानों ही को रसूल बनाकर भेजा था जिनपर हम प्रकाशना (वह्य) किया करते थे। तुम लोग अगर ज्ञान नहीं रखते तो किताबवालों से पूछ लो। (8) उन रसूलों को हमने कोई ऐसा शरीर नहीं दिया था कि वे खाते न हों, और न वे सदा जीनेवाले थे। (9) फिर देख लो कि आख़िरकार हमने उनके साथ अपने वादे पूरे किए, और उन्हें और जिस-जिसको हमने चाहा बचा लिया, और मर्यादाहीन लोगों को तबाह कर दिया।

(10) लोगो, हमने तुम्हारी ओर एक ऐसी किताब भेजी है जिसमें तुम्हारा ही ज़िक्र है, क्या तुम समझते नहीं हो।[2]

---

1. अर्थात् रसूल ने कभी इस झूठे प्रोपगण्डे और कानाफूसियों के इस अभिमान का जवाब इसके सिवा न दिया कि तुम लोग जो कुछ बातें बनाते हो सब अल्लाह सुनता और जानता है, चाहे ज़ोर से कहो, चाहे चुपके-चुपके कानों में फूँको। वह कभी अन्यायी दुश्मनों के मुक़ाबले में डटकर मुँहतोड़ जवाब देने पर न उतर आया।

(11) कितनी ही ज़ालिम बस्तियाँ हैं जिनको हमने पीसकर रख दिया और उनके बाद दूसरी किसी क़ौम को उठाया। (12) जब उनको हमारा अज़ाब महसूस हुआ तो लगे वहाँ से भागने। (13) (कहा गया) "भागो नहीं, जाओ अपने उन्हीं घरों में और भोग-विलास के सामानों में जिनमें तुम चैन कर रहे थे, शायद कि तुमसे पूछा जाए?"[3] (14) कहने लगे, "हाय हमारा दुर्भाग्य, बेशक हम दोषी थे।" (15) और वे यही पुकारते रहे, यहाँ तक कि हमने उनको खलियान कर दिया, ज़िन्दगी की एक चिनगारी तक उनमें न रही।

(16) हमने इस आसमान और ज़मीन को और जो कुछ इनमें है कुछ खेल के रूप में नहीं बनाया है। (17) अगर हम कोई खिलौन बनाना चाहते और बस यही कुछ हमें करना होता तो अपने ही पास से कर लेते।[4] (18) मगर हम तो असत्य पर सत्य की चोट लगाते हैं और उसका सिर तोड़ देती है और वह देखते-देखते मिट जाता है और तुम्हारे लिए तबाही है उन बातों के कारण जो तुम बनाते हो।

2. अर्थात् इसमें कोई स्वप्न और कल्पना की बातें तो नहीं हैं। तुम्हारी अपनी ही चर्चा है। तुम्हारी मनःस्थिति और तुम्हारी ही ज़िन्दगी के मामलों की विवेचना है। तुम्हारी ही प्रकृति एवं संरचना और प्रारम्भ एवं परिणाम पर बातचीत है। तुम्हारे ही वातावरण से वे निशानियाँ चुन-चुनकर प्रस्तुत की गई हैं जो सत्य की ओर इशारा कर रही हैं, और तुम्हारे ही नैतिक गुणों में से श्रेष्ठताओं और बुराइयों का अन्तर स्पष्ट करके दिखाया जा रहा है जिसके सत्य होने पर तुम्हारी अपनी अन्तरात्माएँ गवाही देती हैं। इन सब बातों में क्या चीज़ ऐसी अस्पष्ट और जटिल है कि उसको समझने में तुम्हारी बुद्धि असमर्थ हो?
3. इसके कई अर्थ हो सकते हैं, उदाहरणार्थ : तनिक अच्छी तरह इस अज़ाब का निरीक्षण करो ताकि कल कोई इसका हाल पूछे तो ठीक बता सको। अपने वही ठाठ जमाकर फिर मजलिसें गर्म करो, शायद अब भी तुम्हारे सेवक और अनुचार हाथ बाँधकर पूछे किसरकार क्या आज्ञा है? अपनी वही कौंसिलें और कमेटियाँ जमाए बैठे रहो, शायद अब भी तुम्हारे बुद्धिमत्तापूर्ण परामर्शों और चिन्तन-युक्त विचारों से लाभ उठाने के लिए दुनिया हाज़िर हो।
4. अर्थात् हमें खेलना ही होता तो खिलौने बनाकर हम ख़ुद ही खेल लेते। इस रूप में यह ज़ुल्म तो हरगिज़ न किया जाता कि अकारण एक संवेदनशील, चेतनायुक्त, उत्तरदायी प्राणी को पैदा कर डाला जाता, उसके बीच सत्य और असत्य का यह संघर्ष और खींचातानियाँ कराई जातीं, और सिर्फ़ अपने मनोरंजन के लिए हम नेक बन्दों को अकारण कष्टों में डालते।

(19) ज़मीन और आसमानों में जो कुछ भी है अल्लाह का है। और जो (फ़रिश्ते) उसके पास हैं वे न अपने को बड़ा समझतकर उसकी बन्दगी से मुँह फेरते हैं और न दुखी होते[5] हैं। (20) रात और दिन उसकी तसबीह करते रहते हैं, दम नहीं लेते।

(21) क्या इन लोगों के बनाए हुए लौकिक पूज्य ऐसे हैं कि (बेजान को जान डालकर) उठा खड़ा करते हों?

(22) अगर आसमान और ज़मीन में एक अल्लाह के सिवा दूसरे पूज्य भी होते तो (ज़मीन और आसमान) दोनों की व्यवस्था बिगड़ जाती। अतः पाक है अल्लाह, सिंहासन का अधिकारी उन बातों से जो ये लोग बना रहे हैं। (23) वह अपने कामों के लिए (किसी के आगे) उत्तरदायी नहीं है और सब उत्तरदायी हैं।

(24) क्या उसे छोड़कर, इन्होंने दूसरे पूज्य बना लिए हैं? ऐ नबी, इनसे कहो कि "लाओ अपना प्रमाण, यह किताब भी मौजूद है जिसमें मेरे युग के लोगों के लिए नसीहत है और वे किताबें भी मौजूद हैं जिनमें मुझसे पहले लोगों के लिए नसीहत थी।" मगर उनमें से ज़्यादातर लोग वास्तविकता से अपरिचित हैं, इसलिए मुँह मोड़े हुए हैं। (25) हमने तुमसे पहले जो भी रसूल भेजा है उसको यही प्रकाशना (वह्य) की है कि मेरे सिवा कोई पूज्य नहीं है, अतः तुम लोग मेरी ही बन्दगी करो।

(26) ये कहते हैं, "रहमान (करुणामय ईश्वर) संतान रखता है।" पाक है अल्लाह, वे (अर्थात् फ़रिश्ते) तो बन्दे हैं जिन्हें प्रतिष्ठित किया गया है। (27) उसके सामने बढ़कर नहीं बोलते और बस उसके आदेश को व्यवहार में लाते हैं। (28) जो कुछ उनके सामने है उसे भी वह जानता है और जो कुछ उनसे ओझल है उससे भी वह परिचित है। वे किसी की सिफ़ारिश नहीं करते सिवाय उसके जिसके हक़ में सिफ़ारिश सुनने पर अल्लाह राज़ी हो, और वे उसके भय से डरते रहते हैं। (29) और जो उनमें से कोई कह दे कि अल्लाह के सिवा मैं भी एक इष्ट-पूज्य हूँ, तो उसे हम जहन्नम की सज़ा देंगे, हमारे यहाँ ज़ालिमों का यही बदला है।

(30) क्या वे लोग जिन्होंने (नबी की बात मानने से) इनकार कर दिया है विचार नहीं करते कि ये सब आसमान और ज़मीन परस्पर मिले हुए थे, फिर हमने इन्हें अलग

5. अर्थात् अल्लाह की बन्दगी करना उसको अप्रिय भी नहीं है कि बेमन की बन्दगी करते-करते वे तंग आ जाते हों, और ईश्वरीय आदेशों के पालन करने में उनको थकावट भी नहीं आती।

किया, और पानी से हर ज़िन्दा चीज़ पैदा की? क्या वे (हमारे इस रचनाकार्य की कुशलता को) नहीं मानते? (31) और हमने ज़मीन में पहाड़ जमा दिए ताकि वह इन्हें लेकर ढुलक न जाए, और उसमें चौड़े-विस्तृत रास्ते बना दिए, शायद कि लोग अपना मार्ग मालूम कर लें। (32) और हमने आसमान को एक सुरक्षित छत बना दिया। मगर ये हैं कि ब्रह्माण्ड की निशानियों की ओर ध्यान ही नहीं देते। (33) और वह अल्लाह ही है जिसने रात और दिन बनाए और सूरज और चाँद की रचना की। सब एक-एक कक्ष में तैर रहे हैं।[6]

(34) और ऐ नबी, अमरता तो हमने तुमसे पहले भी किसी इनसान के लिए नहीं रखी है, अगर तुम मर गए तो क्या ये लोग हमेशा जीते रहेंगे? (35) हर जानदार को मौत का मज़ा चखना है, और हम अच्छी और बुरी परिस्थितियों में डालकर तुम सबकी आज़माइश कर रहे हैं। आख़िरकार तुम्हें हमारी ही ओर पलटना है।

(36) ये सत्य को अस्वीकार करनेवाले जब तुम्हें देखते हैं तो तुम्हारी हँसी बना लेते हैं। कहते हैं, ''क्या यह है वह व्यक्ति जो तुम्हारे पूज्यों की चर्चा किया करता है?'' और इनका अपना हाल यह है कि रहमान (करुणामय ईश्वर) के ज़िक्र से इनकार करते हैं।

(37) इनसान उतावला पैदा हुआ है। अभी मैं तुमको अपनी निशानियाँ दिखाए देता हूँ, मुझसे जल्दी न मचाओ। (38)—ये लोग कहते हैं, ''आख़िर यह धमकी पूरी कब होगी अगर तुम सच्चे हो?'' (39) क्या ही अच्छा होता अगर इन अधर्मियों को उस समय का कुछ ज्ञान होता जबकि न ये अपने मुँह आग से बचा सकेंगे और न अपनी पीठें, और न इनको कहीं से मदद पहुँचेगी। (40) वह आफ़त अचानक आएगी और इन्हें इस तरह एकदम से दबोच लेगी कि ये न उसे टाल सकेंगे और न इनको क्षण-भर मुहलत ही मिल सकेगी। (41) हँसी तुमसे पहले भी रसूलों की उड़ाई जा चुकी है, मगर

6. यहाँ 'फ़लक' शब्द इस्तेमाल हुआ है जो फ़ारसी के 'चर्ख़' और 'गरदूँ' का ठीक समानार्थी है, अरबी भाषा में आसमान के जाने-माने प्रचलित नामों में से है। ''सब एक-एक फ़लक (कक्ष) में तैर रहे हैं'' से दो बातें साफ़ समझ में आती हैं। एक यह कि ये सब तारे एक ही 'कक्ष' में नहीं हैं, बल्कि हर एक का कक्ष अलग है। दूसरा यह कि फ़लक कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिसमें ये तारे खूटियों की तरह जड़े हुए हों और वह ख़ुद इन्हें लिए हुए घूम रहा हो, बल्कि वह कोई तरल चीज़ है या वायुमण्डल और शून्य स्थान जैसी चीज़ है जिसमें इन तारों की गति तैरने की क्रिया से सादृश्य रखती है।

उनकी हँसी उड़ानेवाले उसी चीज़ के फेरमें आकर रहे जिसकी वे हँसी उड़ाते थे।

(42) ऐ नबी, इनसे कहो, ''कौन है जो रात को या दिन को तुम्हें रहमान (करुणामय ईश्वर) से बचा सकता हो?'' मगर ये अपने रब की नसीहत से मुँह मोड़ रहे हैं। (43) क्या ये कुछ ऐसे ईश रखते हैं जो हमारे मुक़ाबले में इनका पक्ष लें? वे तो न ख़ुद अपनी मदद कर सकते हैं और न हमारा ही समर्थन उनको प्राप्त है। (44) असल बात यह है कि इन लोगों को और इनके बाप-दादा को हम ज़िन्दगी का सामान दिए चले गए यहाँ तक कि इनको दिन लग गए। मगर क्या इनहें दिखाई नहीं देता कि हम ज़मीन को विभिन्न दिशाओं से घटाते चले आ रहे हैं?''[7] फिर क्या ये प्रभावी हो जाएँगे? (45) इनसे कह दो कि ''मैं तो प्रकाशना (वह्य) के आधार पर तुम्हें सावधान कर रहा हूँ''— मगर बहरे पुकार को नहीं सुना करते जबकि उन्हें सावधान किया जाए। (46) और अगर तेरे रब का अज़ाब थोड़ा-सा इन्हें छू जाए तो अभी चीख़ उठें कि हाय हमारा दुर्भाग्य, बेशक हम दोषी थे।

(47) क़ियामत के दिन हम ठीक-ठीक तौलनेवाले तराज़ू रख देंगे, फिर किसी व्यक्ति पर कण-भर ज़ुल्म न होगा। जिसका राई के दाने के बराबर भी कुछ किया-धरा होगा वह हम सामने ला देंगे। और हिसाब लगाने के लिए हम काफ़ी हैं।

(48,49) पहले हम मूसा और हारून को फ़ुरक़ान (कसौटी) और रौशनी और याददिहानी प्रदान कर चुके हैं उन डर रखनेवाले लोगों की भलाई के लिए जो बिना देखे अपने रब से डरें और जिनको (हिसाब की) उस घड़ी का खटका लगा हुआ हो। (50) और अब यह बरकतवाली, याददिहानी हमने (तुम्हारे लिए) उतारी है। फिर क्या तुम इसको क़बूल करने से इनकारी हो?

(51) उससे भी पहले हमने इबराहीम को उसकी समझ प्रदान की थी और हम

7. अर्थात् ज़मीन में हमारी प्रभावकारी शक्ति की क्रियाशीलता के ये लक्षण प्रत्यक्षतः दिखाई दे रहे हैं कि अचानक कभी अकाल के रूप में, कभी आम बीरमारी के रूप में, कभी बाढ़ के रूप में, कभी भूकम्प के रूप में, कभी सर्दी या गर्मी के रूप में कोई विपत्ति ऐसी आ जाती है जो इनसान के सब किए-धरे पर पानी फेर देती है, हज़ारों-लाखों आदमी मर जाते हैं, बस्तियाँ तबाह हो जाती हैं, लहलहाती खेतियाँ ग़ारत हो जाती हैं, पैदावार घट जाती है, व्यापारों में मंदी आने लगती है। तात्पर्य यह कि इनसान के जीवन साधनों में कभी किसी दिशा से कमी आ जाती है और कभी किसी दिशा से। और इनसान अपनी सारी शक्ति लगाकर भी इन हानियों को नहीं रोक सकता।

उसको ख़ूब जानते थे। (52) याद करो वह अवसर जबकि उसने अपने बाप और अपनी क़ौम से कहा था कि "ये मूर्तियाँ कैसी हैं जिनके तुम लोग आसक्त हो रहे हो?" (53) उन्होंने जवाब दिया, "हमने अपने बाप-दादा को उनकी उपासना करते पाया है।" (54) उसने कहा, "तुम भी गुमराह हो और तुम्हारे बाप-दादा भी खुली गुमराही में पड़े हुए थे।" (55) उन्होंने कहा, "क्या तू हमारे सामने अपने वास्तविक विचार प्रस्तु कर रहा है या मज़ाक़ करता है?" (56) उसने जवाब दिया, "नहीं, बल्कि वास्तव में तुम्हारा रब वही है जो ज़मीन और आसमानों का रब और उनका पैदा करनेवाला है। इसपर मैं तुम्हारे सामने गवाही देता हूँ। (57) और अल्लाह की क़सम मैं तुम्हारी अनुपस्थिति में ज़रूर तुम्हारी मूर्तियों की ख़बर लूँगा।" (58) अतएव उसने उनको टुकडे-टुकडे कर दिया और सिर्फ़ उनके बड़े को छोड़ दिया ताकि शायद वे उसकी तरफ़ रुजू करें। (59) (उन्होंने आकर मूर्तियों की यह हालत देखी तो) कहने लगे, "हमारे देवताओं की यह दशा किसने कर दी? बड़ा ही कोई ज़ालिम था वह।" (60) (कुछ लोग) बोले, "हमने एक नवयुवक को इनकी चर्चा करते सुना था जिसका नाम इबराहीम है।" (61) उन्होंने कहा, "तो पकड़ लाओ उसे सबके सामने ताकि लोग देख लें (उसकी कैसी ख़बर ली जाती है)।" (62) (इबराहीम के आने पर) उन्होंने पूछा, "क्यों इबराहीम, तूने हमारे देवताओं के साथ यह हरकत की है?" (63) उसने जवाब दिया, "बल्कि ये सब कुछ इनके इस सरदार ने किया है, इन्हीं से पूछ लो, अगर ये बोलते हों"[8] (64) यह सुनकर वे अपनी अन्तरात्मा की ओर पलटे और (अपने मन में) कहने लगे, "वास्तव में तुम ख़ुद ही ज़ालिम हो।" (65) मगर फिर उनकी मति पलट गई और बोले, "तू जानता है कि ये बोलते नहीं हैं।" (66) इबराहीम ने कहा, "फिर क्या तुम अल्लाह को छोड़कर उन चीज़ों को पूज रहे हो जिन्हें न तुम्हें लाभ पहुँचाने की सामर्थ्य प्राप्त है, न हानि। (67) धिक्कार है तुमपर और तुम्हारे उन देवताओं पर जिनकी तुम अल्लाह को छोड़कर पूजा कर रहे हो। क्या तुम कुछ भी बुद्धि नहीं रखते?"

8. शब्दों से ख़ुद व्यक्त हो रहा है कि हज़रत इबराहीम (अलै॰) ने यह बात इसलिए कही थी कि वे लोग जवाब में ख़ुद इसे स्वीकार करें कि उनके ये आराध्य बिलकुल बेबस हैं और उनसे किसी कार्य की आशा तक नहीं की जा सकती। ऐसे अवसर पर एक व्यक्ति तर्क के लिए जो यथार्थ के विपरीत बात कहता है उसे झूठ की संज्ञा नहीं दी जा सकती, क्योंकि न तो वह ख़ुद झूठ के इरादे से ऐसी बात कहता है और न उसके सुननेवाले ही उसे झूठ समझते हैं। कहनेवाला उसे तर्क सिद्ध करने के लिए कहता है और सुननेवाला भी उसे इसी अर्थ में लेता है।

(68) उन्होंने कहा, "जला डालो इसको और समर्थन करो अपने उपास्यों का अगर तुम्हें कुछ करना है।" (69) हमने कहा, "ऐ आग, ठण्डी हो जा और सलामती बन जा इबराहीम पर।"[9] (70) वे चाहते थे कि इबराहीम के साथ बुराई करें। मगर हमने उनको बुरी तरह नाकाम कर दिया। (71) और हम उसे और लूत को बचाकर उस भू-भाग की ओर निकाल ले गए जिसमें हमने दुनियावालों के लिए बरकतें रखीं हैं। (72) और हमने उसे इसहाक़ प्रदान किया और याक़ूब इसपर बढ़ोत्तरी[10] और हर एक को नेक बनाया। (73) और हमने उनको इमाम (नायक) बना दिया जो हमारे आदेश से मार्गदर्शन करते थे। और हमने उन्हें प्रकाशना के द्वारे नेक कामों का और नमाज़ क़ायम करने और ज़कात देने का आदेश दिया, और वे हमारे उपासक थे।

(74) और लूत को हमने तत्त्वदर्शिता और ज्ञान प्रदान किया और उसे उस बस्ती से बचाकर निकाल दिया जो गन्दे कर्म करती थी—वास्तव में वह बड़ी ही बुरी, अवज्ञाकारी क़ौम थी (75)—और लूत को हमने अपनी दयालुता में दाख़िल किया, वह अच्छे लोगों में से था।

(76) और यही नेमत हमने नूह को दी। याद करो जबकि इन सबसे पहले उसने हमें पुकारा था। हमने उसकी दुआ क़बूल की और उसे और उसके घरवालों को बड़ी पीड़ा से मुक्त किया। (77) और उस क़ौम के मुक़ाबले में उसकी मदद की जिसने हमारी आयतों को झुठला दिया था। वे बड़े बुरे लोग थे, अतः हमने उन सबको डुबो दिया।

(78) और इसी नेमत से हमने दाऊद और सुलैमान को प्रतिष्ठित किया। याद करो वह अवसर जब कि वे दोनों एक खेत के मुक़द्दमे में फ़ैसला कर रहे थे जिसमें रात के समय दूसरे लोगों की बकरियाँ फैल गई थीं, और हम उनकी अदालत ख़ुद देख रहे थे। (79) उस समय हमने ठीक फ़ैसला सुलैमान को समझा दिया, हालाँकि तत्त्वदर्शिता और ज्ञान हमने दोनों ही को प्रदान किया था।

9. ये शब्द साफ़ बता रहे हैं, और प्रसंग भी इस अर्थ की पुष्टि कर रहा है कि उन्होंने वास्तव में अपने इस निर्णय को कार्यरूप में परिणत किया, और जब आग का अलाव तैयार करके उन्होंने हज़रत इबराहीम (अलै॰) को उसमें फेंका तब अल्लाह ने आग को आदेश दिया कि वह इबराहीम (अलै॰) के लिए ठण्डी हो जाए और अहानिकारक बनकर रह जाए। अतः स्पष्टः यह भी उन चमत्कारों में से एक है जो क़ुरआन में बयान हुए हैं।

10. अर्थात् बेटे के बाद पोता भी ऐसा हुआ जिसे पैग़म्बरी के पद से विभूषित किया गया।

दाऊद के साथ हमने पहाड़ों और पक्षियों को वशीभूत कर दिया था जो तसबीह (गुणगान) करते थे, इस कार्य के करनेवाले हम ही थे, (80) और हमने उसको तुम्हारे फ़ायदे के लिए कवच बनाने की कला सिखा दी थी, ताकि तुमको एक दूसरे की मार से बचाए, फिर क्या तुम कृतज्ञ हो? (81) और सुलैमान के लिए हमने तेज़ हवा को वशीभूत कर दिया था जो उसके आदेश से उस भू-भाग की ओर चलती थी जिसमें हमने बरकतें रखी हैं, हम हर चीज़ का ज्ञान रखनेवाले थे। (82) और शैतानों में से हमने ऐस बहुतों को उसका अधीन बना दिया था जो उसके लिए डुबकियाँ लगाते और इसके सिवा दूसरे काम करते थे। उन सबकी निगरानी करनेवाले हम ही थे।

(83) और यही (समझ और तत्तरदर्शिता एवं ज्ञान की नेमत) हमने अय्यूब को दी थी। याद करो, जबकि उसने अपने रब को पुकारा कि "मुझे रोग लग गया है और तू सबसे बढ़कर दयावान् है।" (84) हमने उसकी दुआ को क़बूल किया और जो कष्ट उसे था उसे दूर किया, और सिर्फ़ उसके परिवार के लोग ही उसको नहीं दिए बल्कि उनके साथ उतने ही और भी दिए, अपनी विशेष दयालुता के रूप में, और इसलिए कि यह एक शिक्षा हो उपासकों के लिए।

(85) और यही नेमत इसमाईल और इदरीस और ज़ुलकिफ़्ल को दी कि ये सब सब्र करनेवाले लोग थे। (86) और उनको हमने अपनी दयालुता में दाख़िल किया कि वे नेक लोगों में से थे।

(87) और मछलीवाले[11] को भी हमने कृपापात्र बनाया। याद करो जबकि वह बिगड़कर चला गया था[12] और समझा था कि हम इसपर पकड़ न करेंगे। अन्त में उसने

11. इससे मुराद हज़रत यूनुस (अलै०) हैं। कहीं उनका नाम लिया गया है और कहीं 'ज़ुन्नून' और 'साहिबुल हूत' अर्थात 'मछलीवाले' की उपाधि से याद किया गया है। 'मछलीवाला' उन्हें इसलिए नहीं कहा गया कि वे मछलियाँ पकड़ते या बेचते थे बल्कि इस कारण कि अल्लाह के आदेश से एक मछली ने उनको निगल लिया था, जैसा कि क़ुरआन की सूरा 37 (साफ़्फ़ात), आयत 142 में बयान हुआ है।
12. अर्थात् वे अपनी क़ौम से नाराज़ होकर चले गए इससे पहले कि अल्लाह की ओर से देश छोड़ने (हिजरत) का आदेश आता और उनके लिए अपनी ड्यूटी की जगह से हटना जाइज़ होता।
13. अर्थात् मछली के पेट में से जो ख़ुद अन्धकारमय था और ऊपर से समुद्र की अंधियारियाँ और भी।

अँधेरों में से पुकारा,[13] "नहीं है कोई ईश मगर तू, पाक है तेरी हस्ती, बेशक मैं दोषी हूँ।" (88) तब हमने उसकी दुआ क़बूल की और ग़म से उसे छुटकारा दिया, और इसी तरह हम ईमानवालों को बचा लिया करते हैं।

(89) और ज़करीया को, जबकि उसने अपने रब को पुकारा कि "ऐ पालनहार, मुझे अकेला न छोड़, और सबसे अच्छा वारिस तो तू ही है।" (90) अतः हमने उसकी दुआ क़बूल की और उसे यह्या प्रदान किया और उसकी बीवी को उसके लिए ठीक कर दिया। ये लोग भलें कामों में दौड़-धूप करते थे और हमें चाहत और डर के साथ पुकारते थे, और हमारे आगे झुके हुए थे।

(91) और वह औरत जिसने अपने सतीत्व की रक्षा की थी,[14] हमने उसके भीतर अपनी रूह से फूँका और उसे और उसके बेटे को दुनिया-भर के लिए निशानी बना दिया।

(92) यह तुम्हारा समुदाय (उम्मत) वास्तव में एक ही समुदाय (उम्मत) है और मैं तुम्हारा रब हूँ, अतः तुम मेरी बन्दगी करो। (93) मगर (यह लोगों की कारस्तानी है कि) उन्होंने आपस में अपने दीन (धर्म) को टुकड़े-टुकड़े कर डाला—सबको हमारी ओर पलटना है। (94) फिर जो अच्छे कर्म करेगा, इस हाल में कि व ईमानवाला हो, तो उसके काम की उपेक्षा (नाक़द्री) न होगी, और उसे हम लिख रहे हैं। (95) और संभव नहीं है कि जिस बस्ती को हमने तबाह कर दिया हो वह फिर पलट सके। (96) यहाँ तक कि जब याजूज और माजूज खोल दिए जाएँगे और हर ऊँचाई से वे निकल पड़ेंगे (97) और सच्चे वादे के पूरा होने का समय[15] क़रीब आने लगेगा तो सहसा उन लोगों की आँखे फटी की फटी रह जाएँगी जिन्होंने इनकार किया था। कहेंगे, "हाय हमारा दुर्भाग्य, हम इस चीज़ की तरफ़ से ग़फ़लत में पड़े हुए थे, बल्कि हम दोषी थे।" (98) बेशक तुम और तुमहारे ये आराध्य जिन्हें तुम अल्लाह को छोड़कर पूजते हो, जहन्नम का ईंधन हैं, वहीं तुमको जाना है।[16] (99) अगर ये वास्तव में ईश्वर होते तो वहाँ न जाते। अब सबको हमेशा उसी में रहना है। (100) वहाँ वे फुंकार मारेंगे और हालत यह होगी कि उसमें कान पड़ी आवाज़ न सुनाई देगी। (101) रहे वे लोग जिनके लिए हमारी ओर से भलाई का पहले ही फ़ैसला हो चुका होगा, तो वे यक़ीनन उससे दूर रखे जाएँगे, (102) उसकी सरसराहट तक न सुनेंगे और वे हमेशा-हमेशा अपनी मन भाती

14. इससे मुराद हज़रत मरयम (अलै०) हैं।
15. अर्थात् क़ियामत बरपा होने का समय।

चीज़ों के बीच रहेंगे, (103) वह बेहद घबराहट का समय उनको तनिक परेशान न करेगा और फ़रिश्ते बढ़कर उनको हाथों-हाथ लेंगे कि "यह तुम्हारा वही दिन है जिसका तुमसे वादा किया जाता था।"

(104) वह दिन जबकि आसमान को हम यूँ लपेटकर रख देंगे जैसे पंजी में पन्ने लपेट दिए जाते हैं। जिस तरह पहले हमने सृष्टि का आरंभ किया था उसी तरह हम फिर उसकी पुनरावृत्ति करेंगे। यह एक वादा है हमारे ज़िम्मे और यह काम हमें हर हाल में करना है। (105) और ज़बूर में हम नसीहत के बाद यह लिख चुके हैं कि ज़मीन के उत्तराधिकारी हमारे नेक बन्दे होंगे।[17] (106) इसमें एक बड़ा संदेश है उपासना करनेवाले लोगों के लिए।

(107) ऐ नबी, हमने तो तुमको दुनियावालों के लिए दयालुता बनाकर भेजा है। (108) उनसे कहो, "मेरे पास जो प्रकाशना (वह्य) आती है वह यह है कि तुम्हारा पूज्य सिर्फ़ एक पूज्य है, फिर क्या तुम आज्ञाकारी होते हो?" (109) अगर वे मुँह फेरे तो कह दो कि मैं ने खुल्लम खुल्ला तुमको सावधान कर दिया है। अब यह मैं नहीं जानता कि यह चीज़ जिसका तुमसे वादा किया जा रहा है क़रीब है या दूर। (110) अल्लाह वे बातें भी जानता है जो ऊँची आवाज़ में कही जाती हैं और वह भी जो तुम छिपाकर कहते हो। (111) मैं तो यह समझता हूँ कि शायद यह (देर) तुम्हारे लिए एक आज़माइश है और तुम्हें एक विशेष समय तक के लिए मज़े करने का मौक़ा दिया जा रहा है।"

(112) (आख़िरकार) रसूल ने कहा कि "ऐ मेरे रब, हक़ के साथ फ़ैसला कर दे, और लोगो, तुम जो बातें बनाते हो उनके मुक़ाबले में हमारा करुणामय रब ही हमारे लिए मदद का सहारा है।"



16. रिवायतों में उल्लिखित है कि इस आयत पर मुशरिकों के सरदारों में से एक ने एतिराज़ किया कि इस तरह तो सिर्फ़ हमारे ही पूज्य नहीं, मसीह, उज़ैर और फ़रिश्ते भी नरक में जाएँगे, क्योंकि दुनिया में उनकी भी पूजा की जाती है। इसपर नबी (सल्ल०) ने कहा : "हाँ, हर वह व्यक्ति जिसने पसन्द किया कि अल्लाह से हटकर उसकी बन्दगी की जाए वह उन लोगों के साथ होगा जिन्होंने उसकी बन्दगी की होगी।"
17. इस आयत को समझने के लिए क़ुरआन की सूरा 39 (ज़ुम) आयतें 73-74 देखें।

22. अल-हज

नाम

सूरा की आयत 27 "और लोगों को हज के लिए सामान्य रूप से घोषित कर दो," से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इस सूरा में मक्की और मदनी सूरतों की विशेषताएँ मिली-जुली पाई जाती हैं। इसी कारण टीकाकारों में इस सम्बन्ध में मतभेद हुआ है कि यह मक्की है या मदनी। लेकिन हमारी दृष्टि में इसकी विषय-वस्तु और वर्णन-शैली का यह रंग इस कारण है कि इसका एक भाग मक्कीकाल के अंत में और दूसरा भाग मदनीकाल के आरंभ में अवतरित हुआ है। इसलिए दोनों कालों की विशेषताएँ इसमें एकत्र हो गई हैं।

प्रारम्भिक भाग का विषय और वर्णन-शैली से साफ़ पता चलता है कि यह मक्का में अवतरित हुआ है और अधिक संभावना इसकी है कि मक्की जीवन के अन्तिम चरण में हिजरत के कुछ पहले अवतरित हुआ है। यह भाग आयत 24 पर समाप्त होता है।

इसके पश्चात् "जिन लोगों ने कुफ़्र (इनकार) किया और जो (आज) अल्लाह के मार्ग से रोक रहे हैं" से सहसा विषय का रंग बदल जाता है और साफ़ महसूस होता है कि यहाँ से अन्त तक का भाग मदीना तय्यबा में अवतरित हुआ है। असम्भव नहीं कि यह हिजरत के पश्चात् पहले ही वर्ष ज़िलहिज्जा में अवतरित हुआ हो, क्योंकि आयत 25 से 41 तक का विषय इसी बात का पता देता है, और आयत 39-40 के अवतरण से सम्बद्ध उल्लेख से भी इसका समर्थन होता है। उस समय मुहाजिर (मक्का त्यागनेवाले मुसलमान) अभी ताज़ा-ताज़ा ही अपने घर-बार छोड़कर मदीना में आए थे। हज के समय में उनको अपना नगर और हज का सम्मेलन याद आ रहा होगा और यह बात बुरी तरह खल रही होगी कि क़ुरैश के बहुदेववादियों ने उनपर मस्जिदे-हराम (काबा) का रास्ता तक बन्द कर दिया है। उस समय वे इस बात की प्रतीक्षा में होंगे कि जिन ज़ालिमों ने उनको घर से निकाला, मस्जिदे-हराम के दर्शन से वंचित किया और अल्लाह का मार्ग ग्रहण करने पर उनके जीवन तक को दुष्कर कर दिया, उनके विरुद्ध युद्ध करने की अनुमति मिल जाए। यह ठीक मनोवांछित अवसर था इन आयतों के अवतरण का। इसमें पहले तो हज का उल्लेख करते हुए यह बताया गया है कि यह मस्जिदे-हराम इसलिए बनाई गई थी और यह हज का तरीक़ा

इसलिए शुरू किया गया था कि संसार में एक ख़ुदा की बन्दगी की जाए, किन्तु आज वहां बहुदेववादी प्रथा प्रचलित है और एक ख़ुदा की बन्दगी करनेवालों के लिए उसके मार्ग बन्द कर दिये गए हैं। इसके बाद मुसलमानों को अनुज्ञा दे दी गई है कि वे उन ज़ालिमों के विरुद्ध युद्ध करें और उन्हें बहिष्कृत करके देश में वह ठीक व्यवस्था स्थापित करें, जिसमें बुराइयाँ दबे और नेकियाँ विकसित हों। इब्ने-अब्बास, मुजाहिद, उरवह-बिन-ज़ुबैर, ज़ैद-बिन-असलम, मुक़ातिल-बिन-हैयान, क़तादह और दूसरे प्रकाण्ड टीकाकारों का बयान है कि यह पहली आयत है जिसमें मुसलमानों को युद्ध की अनुज्ञा दी गई। और हदीस और सीरत (नबी सल्ल॰ की जीवनी) के उल्लेखों से सिद्ध है कि इस अनुज्ञा के पश्चात तुरन्त ही क़ुरैश के विरुद्ध व्यवहारतः गतिविधियाँ आरम्भ कर दी गई और पहला अभियान सफ़र सन् 2 हिजरी में लालसागर के तट की ओर अभिमुख हुआ, जो वद्दान के ग़ज़वा या ग़ज़व-ए-अबवा (वद्दान या अबवा के युद्ध) के नाम से प्रसिद्ध है।

विषय-वस्तु और वार्ता

इस सूरा में तीन गिरोहों को सम्बोधित किया गया है। मक्का के बहुदेववादी, दुविधा और संकोच में पड़े हुए मुसलमान और सच्चे ईमानवाले। बहुदेववादियों से संबोधन का आरम्भ मक्का में किया गया और मदीना में उनका क्रम पूरा किया गया। इस संबोधन में उनको बल-पूर्वक सावधान किया गया है कि तुमने दुराग्रह और हठधर्मी के साथ अपने आधारहीन अज्ञानयुक्त विचारों पर आग्रह किया, अल्लाह को छोड़कर उन आराध्यों पर भरोसा किया जिनके पास कोई शक्ति नहीं है और अल्लाह के रसूल को झुठला दिया। अब तुम्हारा परिणाम वही कुछ होकर रहेगा जो तुमसे पहले इस नीति के ग्रहण करनेवालों का हो चुका है। नबी को झुठलाकर और अपनी जाति के स्वस्थतम तत्त्व पर अत्याचार करके तुमने अपना ही कुछ बिगाड़ा है। इसके परिणामस्वरूप ईश्वर का जो प्रकोप तुमपर उतरेगा, उससे तुम्हारे कृत्रिम आराध्य तुम्हें न बचा सकेंगे। इस चेतावनी और डरावे के साथ समझाने-बुझाने का पहलू बिलकुल ख़ाली नहीं छोड़ दिया गया है। पूरी सूरा में जगह-जगह याददियानी और नसीहत भी है और बहुदेववाद के विरूद्ध और एकेश्वरवाद और परलोकवाद के पक्ष में प्रभाव-पूर्ण प्रणाम भी प्रस्तुत किए गए हैं। संकोचग्रस्त मुसलमान जो अल्लाह की बन्दगी स्वीकार तो कर चुके थे, किन्तु इस राह में किसी ख़तरे को सहन करने के लिए तैयार न थे, उनको संबोदित करते हुए कड़ी ताड़ना की गई है। उनसे कहा गया है कि आख़िर कैसा ईमान है कि आराम, ख़ुशी, विलास प्राप्त हो तो ईश्वर तुम्हारा ईश्वर

और तुम उसके दास। किन्तु जहाँ ईश्वर के मार्ग में कष्ट आया और कठिनाइयाँ झेलनी पड़ीं, फिर न ईश्वर तुम्हारा ईश्वर रहा और न तुम उसके दास रहे। जबकि तुम अपनी इस नीति से किसी ऐसी आपदा और हानि और कष्ट को नहीं टाल सकते जो ईश्वर ने तुम्हारे भाग्य में लिख दी हो। ईमानवालों से संबोधन दो तरीक़े पर किया गया है। एक संबोधन ऐसा है जिसमें वे स्वयं भी संबोधित हैं और अरब का सामान्य मत भी। और दूसरे संबोधन में केवल ईमानवाले ही संबोधित हैं।

पहले संबोधन में मक्का के बहुदेववादियों को इस नीति पर पकड़ की गई है कि उन्होंने मुसलमानों के लिए मस्जिदे-हराम का रास्ता बन्द कर दिया है, जबकि मस्जिदे-हराम उनकी व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है और वे किसी को हज से रोकने का अधिकार नहीं रखते। यह आक्षेप न केवल यह कि अपनी जगह सत्यानुकूल था, बल्कि राजनीति की हैसियत से यह क़ुरैश के विरूद्ध एक बहुत बड़ा हथियार भी था। इससे अरब के दूसरे सभी क़बीलों के मन में यह प्रश्न उत्पन्न कर दिया गया कि क्या क़ुरैश हरम (काबा) के प्रबंधक हैं या मालिक? अगर आज अपनी व्यक्तिगत शत्रुता के कारण वे एक गिरोह को हज से रोक देते हैं और इसे सहन कर लिया जाता है तो क्या वह असंभव है कि कल जिससे भी उनके संबंध बिगड़ जाएँगे, उसको वे हरम की सीमा में प्रवेश करने से रोक देंगे और उसका उमरा और हज बन्द कर देंगे। इस सिलसिले में मस्जिदे-हराम का इतिहास प्रस्तुत करते हुए एक ओर यह बताया गया है कि इबराहीम (अलै॰) ने जब अल्लाह के आदेश से इसका निर्माण किया था तो सब लोगों के लिए हज की सामान्य उद्घोषणा की थी और वहाँ प्रथम दिन से स्थानीय निवासियों और बाहर से आनेवाले के अधिकार समान निर्धारित किए गए थे। दूसरी ओर यह बताया गया है कि यह घर बहुदेववाद के लिए नहीं, बल्कि एक अल्लाह की बन्दगी के लिए निर्मित हुआ था। अब यह क्या घोर अन्याय है कि वहाँ एक ईश्वर की बन्दगी तो हो वर्जित और बुतों की पूजा के लिए हो पूर्ण स्वतंत्रता।

दूसरे संबोधन में मुसलमानों को क़ुरैश के अत्याचार का उत्तर शक्ति द्वारा देने की अनुज्ञा प्रदान की गई है और साथ-साथ उनको यह भी बताया गया है कि जब तुम्हें सत्ता प्राप्त हो तो तुम्हारी नीति क्या होनी चाहिए और अपने शासन में तुमको किस उद्देश्य के लिए काम करना चाहिए। यह विषय सूरा के मध्य में भी है और अन्त में भी। अन्त में ईमानवालों के गिरोह के लिए 'मुस्लिम'(आज्ञाकारी) के नाम की विधिवत रूप से घोषणा करते हुए यह कहा गया है कि इबराहीम (अलै॰) के वास्तविक उत्तराधिकारी तुम लोग हो, तुम्हारा निर्वाचन इस सेवा के लिए किया गया

है कि संसार में लोगों के समक्ष सत्य की गवाही देने के पद पर खड़े हो। अब तुम्हें नमाज़ क़ायम करके, ज़कात देकर और नेकियाँ करके अपने जीवन को उत्तम आदर्श जीवन बनाना चाहिए और अल्लाह पर भरोसा करते हुए अल्लाह का बोल बाला करने के लिए जिहाद (जानतोड़ प्रयास) करना चाहिए।

इस अवसर पर सूरा 2 (बक़रा) और सूरा 8 (अनफ़ाल) के परिचयात्मक लेखों पर दृष्टि डाल ली जाए, तो समझने में ज़्यादा आसानी होगी।

⊖ ⊖ ⊖

22. सूरा अल-हज

(मदीना में उतरी–आयतें 78)

अल्लाह के नाम से बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) लोगो, अपने रब के ग़ज़ब (प्रकोप) से बचो, वास्तविकता यह है कि क़ियामत का भूकम्प बड़ी (भयंकर) चीज़ है। (2) जिस दिन तुम उसे देखोगे, हाल यह होगा कि हर दूध पिलानेवाली अपने दूध पीते बच्चे को भूल जाएगी, हर गर्भवती का गर्भ गिर जाएगा, और लोग तुम्हें मदहोश दिखेंगे, हालाँकि वे नशे में न होंगे, बल्कि अल्लाह का अज़ाब ही कुछ ऐसा कठोर होगा।

(3) कुछ लोग ऐसे हैं जो ज्ञान के बिना अल्लाह के बारे में विवाद करते हैं और हर सरकश शैतान का अनुसरण करने लगते हैं, (4) हालाँकि उसके तो भाग्य ही में यह लिखा है कि जो उसको मित्र बनाएगा उसे वह गुमराह करके छोड़ेगा और जहन्नम के अज़ाब का मार्ग दिखाएगा। (5) लोगो, अगर तुम्हें मौत के बाद की ज़िन्दगी के बारे में कुछ शक है तो तुम्हें मालूम हो कि हमने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया है, फिर वीर्य से, फिर ख़ून के लोथडे से, फिर मांस की बोटी से जो शक्लवाली भी होती है और बेशक्ल भी। (यह हम इसलिए बता रहे हैं) ताकि तुमपर सच्चाई स्पष्ट करें। हम जिस (वीर्य) को चाहते हैं एक नियत समय तक गर्भाशयों में ठहराए रखते हैं, फिर तुमको एक बच्चे के रूप में निकाल लाते हैं (फिर तुम्हारा पालन-पोषण करते हैं) ताकि तुम अपनी जवानी (युवावस्था) को पहुँचो। और तुममें से कोई पहले ही वापस बुला लिया जाता है और कोई निकृष्टतम आयु की ओर फेर दिया जाता है ताकि सब कुछ जानने के बाद फिर कुछ न जाने। और तुम देखते हो कि ज़मीन सूखी पड़ी है, फिर जहाँ हमने उसपर पानी बरसाया कि यकायक वह फबक उठी और फूल गई और उसने हर तरह की सुदृश्य वनस्पतियाँ उगलनी शुरू कर दी। (6) यह सब कुछ इसलिए है कि अल्लाह ही सत्य है, और वह मुरदों को ज़िन्दा करता है, और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है, (7) और यह (इस बात का प्रमाण है) कि क़ियामत की घड़ी आकर रहेगी, इसमें किसी शक की गुंजाइश नहीं, और अल्लाह ज़रूर उन लोगों को उठाएगा जो क़ब्रों में जा चुके हैं।

(8,9) कुछ और लोग ऐसे हैं जो किसी ज्ञान और मार्गदर्शन और प्रकाश प्रदान करनेवाली किताब के बिना गरदन अकड़ाए हुए, अल्लाह के बारे में झगड़ते है ताकि लोगों को अल्लाह के मार्ग से भटका दें। ऐसे व्यक्ति के लिए दुनिया में रुसवाई है और क़ियामत के दिन उसको हम आग के अज़ाब का मज़ा चखाएँगे (10)—यह है तेरा वह

भविष्य जो तेरे अपने हाथों ने तेरे लिए तैयार किया है वरना अल्लाह अपने बन्दों पर ज़ुल्म करनेवाला नहीं है।

(11) और लोगों में कोई ऐसा है जो किनारे पर रहकर अल्लाह की बन्दगी करता हैं,[1] अगर फ़ायदा हुआ तो सन्तुष्ट हो गया और जो कोई मुसीबत आ गई तो उलटा फिर गया। उसकी दुनिया भी गई और आख़िरत भी। यह है खुला घाटा। (12)—फिर वह अल्लाह को छोड़कर उनको पुकारता है जो न उसको नुक़सान पहुँचा सकते हैं न फ़ायदा। यह है पथभ्रष्टता की चरम सीमा। (13) वह उनको पुकारता है जिनका नुक़सान उनके फ़ायदे से ज़्यादा करीब है, अत्यन्त बुरा है उसका संरक्षक और अत्यन्त बुरा है उसका साथी। (14) (इसके विपरीत) अल्लाह उन लोगों को जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, यक़ीनन ऐसे बाग़ों में दाख़िल करेगा जिनके नीचे नहरें बह रही होगी। अल्लाह करता है जो कुछ चाहता है। (15) जो व्यक्ति यह गुमान रखता हो कि अल्लाह दुनिया और आख़िरत में उसकी कोई मदद न करेगा, उसे चाहिए कि एक रस्सी के द्वारा आसमान तक पहुँचकर छेद करे फिर देख ले कि क्या उसका उपाय किसी ऐसी चीज़ को रद्द कर सकता है जो उसको अप्रिय है।

(16) ऐसी ही खुली-खुली बातों के साथ हमने इस क़ुरआन को उतारा है, और मार्ग अल्लाह जिसे चाहता है दिखाता है।

(17) जो लोग ईमान लाए, और जो यहूदी हुए, और साबिई, और ईसाई, और मजूस, और जिन लोगों ने (अल्लाह का) साझी ठहराया, इन सबके बीच अल्लाह क़ियामत के दिन फ़ैसला कर देगा, हर चीज़ अल्लाह की नज़र में है। (18) क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह के आगे सजदे में हैं वे सब जो आसमानों में हैं और जो धरती में हैं, सूरज और चाँद और तारे और पहाड़ और पेड़ और जानवर और बहुत-से इनसान और बहुत-से वे लोग भी जो अज़ाब के अधिकारी हो चुके हैं? और जिसे अल्लाह तुच्छ और रुसवा कर दे उसे फिर कोई इज़्ज़त देनेवाला नहीं है, अल्लाह करता है जो कुछ चाहता है।

(19,20) ये दो फ़रीक़ (विवादी) हैं जिनके बीच अपने रब के विषय में झगड़ा है।[2] इनमें से वे लोग जिन्होंने कुफ़्र (इनकार) किया उनके लिए आग के वस्त्र काटे जा

1. अर्थात् कुफ़्र (इनकार) और इस्लाम की सीमा पर खड़ा होकर बन्दगी करता है जैसे एक अस्थिर आदमी किसी सेना के किनारे पर खड़ा हो, अगर विजय होती देखे तो साथ आ मिले और पराजय होती देखे तो चुपके से सटक जाए।

चुके हैं, उनके सिरों पर खौलता हुआ पानी डाला जाएगा जिससे उनकी खालें ही नहीं पेट के भीतर के भाग तक गल जाएँगे, (21) और उनकी ख़बर लेने के लिए लोहे के गुर्ज़ (गदाएँ) होंगे। (22) जब कभी वे घबराकर जहन्नम से निकलने की कोशिश करेंगे फिर उसी में ढकेल दिए जाएँगे कि चखो अब जलने की सज़ा का मज़ा। (23) (दूसरी ओर) जो लोग ईमानवाले हुए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए उनको अल्लाह ऐसे बाग़ों में दाख़िल करेगा जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी। वहाँ वे सोने के कंगनों और मोतियों से आभूषित किए जाएँगे और उनके वस्त्र रेशम के होंगे। (24) उनको निर्मल (पाक) बात स्वीकार करने का निर्देश प्रदान किया गया और उन्हें प्रशासनीय गुणों से विभूषित ईश्वर का मार्ग दिखाया गया।

(25) जिन लोगों ने कुफ़्र (इनकार) किया और जो (आज) अल्लाह के मार्ग से रोक रहे हैं और उस प्रतिष्ठित मसजिद (मसजिदे हराम) के दर्शन में बाधक हैं जिसे हमने सब लोगों के लिए बनाया है,[3] जिसमें स्थानिय निवासियों और बाहर से आनेवालों के अधिकार बराबर हैं (उनकी नीति यक़ीनन सज़ा के योग्य है)। उस (प्रतिष्ठित मसजिद) में जो भी सच्चाई से हटकर ज़ुल्म की नीति अपनाएगा उसे हम दुखद यातना का मज़ा चखाएँगे।

(26) याद करो वह समय जबकि हमने इबराहीम के लिए इस घर (काबा) की जगह मुक़र्रर की थी (इस आदेश के साथ) कि मेरे साथ किसी चीज़ को साझी न ठहराओ, और मेरे घर को परिक्रमा (तवाफ़) करनेवालों और खड़े होने (क़याम) और झुकने (रुकू) और सजदे करनेवालों के लिए पाक रखो, (27) और लोगों को हज के लिए सामान्य रूप में घोषणा कर दो कि वे तुम्हारे पास हर दूरवर्ती स्थान से पैदल और ऊँटों पर सवार आएँ, (28) ताकि वे लाभ देखें जो यहाँ उनके लिए रखे गए हैं, और कुछ निश्चित दिनों में उन जानवरों पर अल्लाह का नाम लें जो उसने उन्हें प्रदान किए हैं,

2. यहाँ ईश्वर के बारे में झगड़ा करनेवाले समस्त गिरोहों को उनकी अधिकता के बावजूद दो प्रतिवादियों में विभक्त कर दिया गया है। एक दल वह जो नबियों की बात मानकर अल्लाह की ठीक रूप में बनन्दगी करता है। दूसरा वह जो उनकी बात नहीं मानता और अधर्म की राह अपनाता है, चाहे उसके यहाँ आपस में कितने ही अन्तर और विभेद हों और उसके अधर्म और इनकार ने कितने ही विभिन्न रूप धारण कर लिए हों।

3. अर्थात् मुहम्मद (सल्ल०) और आपके अनुयायियों को हज और उमरा नहीं करने देते।

ख़ुद भी खाएँ और तंगदस्त मुहताज को भी दें, (29) फिर अपना मैल-कुचैल दूर करें और अपनी मन्नतें पूरी करें, और इस प्राचीन घर की परिक्रमा करें।

(30) यह था (काबा के निर्माण का उद्देश्य) और जो कोई अल्लाह की निर्धारित पाबन्दियों का आदर करे तो यह उसके रब की दृष्टि में ख़ुद उसी के लिए अच्छा है।

और तुम्हारे लिए चौपाए हलाल (वैध) किए गए,[4] सिवाय उन चीज़ों के जो तुम्हें बताई जा चुकी हैं। अतः मूर्तियों की गन्दगी से बचो, झूठी बातों से परहेज़ करो, (31) एकाग्रचित होकर अल्लाह के बन्दे बनो, उसके साथ किसी को साझी न ठहराओ। और जो कोई अल्लाह के साथ साझी ठहराए तो मानो वह आसमान से गिर गया, अब या तो उसे पक्षी उचक ले जाएँगे या हवा उसको ऐसे स्थान पर ले जाकर फेंक देगी जहाँ उसके चीथड़े उड़ जाएँगे।[5]

4. इस अवसर पर चौपायों की वैधता का उल्लेख करने का मक़सद दो भ्रान्तियों को दूर करना है। प्रथम यह कि क़ुरैश और अरब के मुशरिक 'बहीरा', 'सायबा', 'वसीला' और 'हाम' की गणना भी अल्लाह के निर्धारित वर्जनों में करते थे। इसलिए कहा गया कि ये उसके निर्धारित किए हुए वर्जन नहीं हैं बल्कि उसने सभी चौपाए हलाल किए हैं। दूसरे यह है कि इहराम की हालत में जिस तरह शिकार का निषेध है उसी तरह कहीं यह न समझ लिया जाए कि इस हालत में चौपायों को ज़बह करना और उनको खाना भी हराम है। इसलिए बताया गया है कि ये अल्लाह के निर्धारित वर्जनों में से नहीं हैं।

5. इस मिसाल में आसमान से मुराद इनसान की सहज एवं स्वाभाविक हालत है जिसमें वह एक ईश्वर के सिवा किसी का बन्दा नहीं होता और एकेश्वरवाद के सिवा उसकी प्रकृति किसी अन्य धर्म को नहीं जानती। अगर इनसान नबियों के मार्गदर्शन को स्वीकार कर ले तो वह उसी सहज एवं स्वाभाविक हालत परज्ञान और सूझबूझ के साथ क़ायम हो जातै है, और आगे उसकी उड़ान और ज़्यादा ऊँचाइयों ही की ओर होती है न कि पस्तियों की ओर। लेकिन बहुदेववाद (और सिर्फ़ बहुदेववाद ही नहीं बल्कि नास्तिकता और अधर्म भी) अंगीकार करते ही वह अपने सहज प्रकृति के आसमान से अचानक गिर पड़ता है और फिर उसके लिए दो विकल्पों में कोई एक विकल्प अवश्य भुगतना पड़ता है। एक यह कि शैतान और गुमराह करनेवाले इनसान उसकी ओर झपटते हैं और हर एक उसे उचक ले जाने की कोशिश करता है। दूसरे यह कि उसकी अपने मन की इच्छाएँ और उसकी अपनी भावनाएँ और कल्पनाएँ उसे उड़ाए-उड़ाए लिए फिरती हैं और आख़िरकार उसको किसी गहरे खड्ड में जाकर फेंक देती हैं।

(32) यह है असल मामला (इसे समझ लो), और जो अल्लाह के निश्चित किए हुए निशानों का आदर करे तो यह दिलों की धर्मपरायणता (तक़वा) में से है।[6]

(33) तुम्हें एक निश्चित समय तक उन (क़ुरबानी के जानवरों) से लाभ उठाने का हक़ है,[7] फिर उन (के क़ुरबान करने) का स्थान उसी प्राचीन घर के पास है।

(34) हर समुदाय के लिए हमने क़ुरबानी का एक तरीक़ा निर्धारित कर दिया है ताकि (उस समुदाय के) लोग उन जानवरों पर अललाह का नाम लें जो उसने उनको प्रदान किए हैं।[8] (इन विभिन्न तरीक़ों के पीछे उद्देश्य एक ही है) अतः तुम्हारा पूज्य-प्रभु एक ही पूज्य-प्रभु है और उसी के तुम आज्ञाकारी बनो। और ऐ नबी, ख़ुशख़बरी दे दो विनम्रता की नीति अपनानेवालों को, (35) जिनका हाल यह है कि अल्लाह की चर्चा सुनते हैं तो उनके दिल काँप उठते हैं, जो मुसीबत भी उनपर आती है उसपर सब्र से काम लेते हैं, नमाज़ क़ायम करते हैं, और जो कुछ रोज़ी हमने उनको दी है उसमें से ख़र्च करते हैं।

(36) और (क़ुरबानी के) ऊँटों को हमन तुम्हारे लिए अल्लाह की निशानियों (शआइर) में शामिल किया हैं, तुमहारे लिए उनमें भलाई है, अतः उन्हें खड़ा करके उनपर अल्लाह का नाम लो,[9] और जब (क़ुरबानी के बाद) उनकी पीठें ज़मीन पर टिक

6. अर्थात् यह आदर दिल के तक़वा या धर्मपरायणता के कारण है और इस बात की पहचान है कि आदमी के दिल में कुछ न कुछ अल्लाह का डर है इसी कारण तो वह अल्लाह के नाम से जुड़ी चीज़ों का आदर कर रहा है।

7. पहली आयत में अल्लाह के (भक्ति सम्बन्धी) निशानों के आदर का सामान्य आदेश देने के बाद यह वाक्य एक भ्रान्ति को दूर करने के लिए कहा गया है। अल्लाह के निशान में क़ुरबानी के जानवर भी सम्मिलित हैं। अरब के लोग यह समझते थे कि उन जानवरों को अल्लाह के घर (काबा) की ओर ले जाते हुए उनपर सवार न होना चाहिए, न उनपर सामान लादना चाहिए और न उनका दूध पीना चाहिए। इस भ्रान्ति को दूर करने के लिए कहा गया कि उनसे जो काम लेने की ज़रूरत हो वह लिया जा सकता है।

8. इस आयत से दो बातें मालूम हुईं। एक यह कि क़ुरबानी सभी ईश्वरीय धर्म-विधानों की उपासना-प्रणाली का एक अनिवार्य अंग रही है। दूसरी यह कि मुख्य चीज़ अल्लाह के नाम पर क़ुरबानी है जो सब 'शरीअतों' (धर्म-विधानों) में समान है। बाक़ी रहा उसका समय और अवसर और अन्य विवरण तो इनसे सम्बन्धित विभिन्न युगों की शरीअतों के आदेश भिन्न रहे हैं।

जाएँ[10] तो उनमें से ख़ुद भी खाओ और उनको भी खिलाओ जो सन्तोष किए बैठे हैं और उनको भी जो अपनी ज़रूरत पेश करें। इन जानवरों को हमने इस तरह तुम्हारे लिए वशीभूत किया है ताकि तुम कृतज्ञता दिखाओ। (37) न उनके मांस अल्लाह को पहुँचते हैं न ख़ून, मगर उसे तुम्हारी धर्मनिष्ठा पहुँचती है। उसने उनको तुम्हारे लिए इस तरह वशीभूत किया है ताकि उसके प्रदान किए हुए पथ-प्रदर्शन पर तुम उसकी बड़ाई व्यक्त करो।[11] और ऐ नबी, ख़ुशख़बरी दे दो अच्छे से अच्छा कर्म करनेवालों को।

(38) यक़ीनन अल्लाह प्रतिरक्षा करता है उन लोगों की ओर से जो ईमान लाए हैं। निश्चय ही अल्लाह किसी विश्वासघाती कृतघ्न को पसन्द नहीं करता। (39) अनुमति दी गई उन लोगों को जिनके विरुद्ध युद्ध किया जा रहा है, क्योंकि वे उत्पीड़ित हैं,[12] और अल्लाह को यक़ीनन उनकी सहायता की सामर्थ्य प्राप्त है। (40) ये वे लोग हैं जो अपने घरों से नाहक़ निकाल दिए गए सिर्फ़ इस क़ुसूर पर कि वे कहते थे, "हमारा

9. उनपर अल्लाह का नाम लेने का अर्थ है उनको ज़बह करते हुए अल्लाह का नाम लेना। ऊँट को पहले खड़ा करके उसके कंठ में भाला मारा जाता है। इसको नहर करना कहते हैं।
10. पीठ के ज़मीन पर टिकने का अर्थ सिर्फ़ इतना ही नहीं है कि वे ज़मीन पर गिर जाएँ, बल्कि यह भी है कि वे गिरकर ठहर जाएँ, अर्थात् तड़पना बन्द कर दें और जान पूरी तरह निकल जाए।
11. अर्थात् दिल से उसकी बड़ाई और उच्चता मानो और व्यवहार से उसकी घोषणा एवं प्रदर्शन करो। यह आदेश फिर क़ुरबानी के उद्देश्य और कारण की ओर इशारा है। क़ुरबानी सिर्फ़ इसलिए वाजिबनहीं की गई है कि यह जानवरों के वशीभूत किए जाने की कृपा पर अल्लाह के प्रति कृतज्ञता-प्रदर्शन है, बल्कि इसलिए भी वाजिब की गई है कि जिसके ये जानवर हैं, और जिसने इन्हें हमारे लिए वशीभूत किया है, उसके स्वामित्व सम्बन्धी अधिकारों को हम दिल से भी और व्यवहार से भी स्वीकार करें, ताकि हमसे कभी यह भूल न हो कि यह सब कुछ हमारा माल है।
12. यह ईश्वरीय मार्ग में युद्ध करने के सम्बन्ध में पहली आयत है जो उतरी है। इस आयत में सिर्फ़ अनुमति दी गई थी। आगे चलकर सूरा 2 (बक़रा) की आयतें 190 से लेकर 193 तक और 216 और 224 उतरीं, जिनमें युद्ध का आदेश दिया गया। इन आदेशों में सिर्फ़ कुछ ही महीनों का अन्तर है। अनुमति हमारी खोज के अनुसार ज़िलहिज्जा सन् 1 हिजरी में उतरी, और आदेश बद्र की लड़ाई से कुछ पहले रजब या शाबान सन् 2 हिजरी में उतरा।

रब अल्लाह है।" अगर अल्लाह लोगों को एक दूसरे के द्वारा हटाता न रहे तो खानक़ाहें और गिरजा और उपासना-गृह और मसजिदें जिनमें अल्लाह का अधिकता से नाम लिया जाता है, सब ढा दी जाएँ। अल्लाह ज़रूर उन लोगों की सहायता करेगा जो उसकी सहायता करेंगे।[13] अल्लाह बड़ा बलवान् और प्रभुत्वशाली है। (41) ये वे लोग है जिन्हें अगर हम ज़मीन में सत्ता प्रदान करें तो वे नमाज़ क़ायम करेंगे, ज़कात देंगे, नेकी का आदेश देंगे और बुराई से रोकेंगे। और सब मामलों का परिणाम अल्लाह के हाथ में हैं।

(42,43,44) ऐ नबी, अगर वे (इनकार करनेवाले) तुम्हें झुठलाते हैं तो उनसे पहले नूह की क़ौम और आद और समूद और इबराहीम की क़ौम और लूत की क़ौम और मदयनवाले भी झुठला चुके हैं और मूसा भी झुठलाए जा चुके हैं। इन सब सत्य के इनकार करनेवालों को मैंने पहले मुहलत दी फिर पकड़ लिया। अब देख लो कि मेरी सज़ा कैसी थी। (45) कितनी ही अपराधी बस्तियाँ हैं जिनको हमने तबाह किया है और आज वे अपनी छतों पर उलटी पड़ी हैं, कितने ही कुएँ बेकार और कितने ही महल खँडहर बने हुए हैं। (46) क्या ये लोग ज़मीन में चले-फिरे नहीं हैं कि इनके दिल समझनेवाले या इनके कान सुननेवाले होते? वास्तविकता यह है कि आँखें अन्धी नहीं होती मगर वे दिल अन्धे हो जाते हैं जो सीनों में हैं।

(47) ये लोग अज़ाब के लिए ज़ल्दी मचा रहे हैं। अल्लाह हरगिज़ अपने वादे के ख़िलाफ़ नहीं करेगा, मगर तेरे रब के यहाँ का एक दिन तुम्हारी गणना के हज़ार वर्ष के बराबर हुआ करता है।[14] (48) कितनी ही बस्तियाँ हैं जो ज़ालिम थीं, मैंने उनको पहले मुहलत दी, फिर पकड़ लिया, और सबको वापस तो मेरे ही पास आना है।

(49) ऐ नबी, कह दो कि "लोगो, मैं तो तुम्हारे लिए सिर्फ़ वह व्यक्ति हूँ जो (बुरा समय आने से पहले) साफ़-साफ़ सावधान करनेवाला हो।" (50) फिर जो ईमान लाएँगे और अच्छे कर्म करेंगे उनके लिए माफ़ी है और सम्मानपूर्ण आजीविका। (51) और जो हमारी आयतों को नीचा दिखाने की कोशिश करेंगे वे दोज़ख़ के यार हैं।

13. इस विषय का उल्लेख क़ुरआन मजीद में विभिन्न स्थानों पर हुआ है कि जो लोगों को एकेश्वरवाद की ओर बुलाने और सत्य धर्म को स्थापित करने और बुराई की जगह भलाई की उन्नति एवं विकास के लिए अनथक कोशिश और संघर्ष करते हैं वे अल्लाह के सहायक हैं, क्योंकि यह अल्लाह का काम है जिसे पूरा करने में वे उसका साथ देते हैं।

(52) और ऐ नबी, तुमसे पहले हमने न कोई रसूल ऐसा भेजा है न नबी (जिसके साथ यह मामला न पेश आया हो कि) जब उसने कामना की, शैतान ने उसकी कामना में रुकावट खड़ी की। इस तरह जो कुछ भी शैतान रुकावट डालता है, अल्लाह उनको मिटा देता है और अपनी आयतों को पुख़्ता कर देता है, अल्लाह सर्वज्ञ है और तत्त्वदर्शी। (53) (वह इसलिए ऐसा होने देता है) ताकि शैतान की डाली हुई ख़राबी को आज़माइश बना दे उन लोगों के लिए जिनके दिलों को (मुनाफ़िक़त का) रोग लगा हुआ है और जिनके दिल खोटे हैं—वास्तविकता यह है कि ये ज़ालिम लोग दुश्मनी में बहुत दूर निकल गए हैं (54)—और ज्ञान जिन्हें मिला है वे लोग जान लें कि यह सत्य है तेरे रब की ओर से और वे इसपर ईमान ले आएँ और उनके दिल इसके आगे झुक जाएँ, यक़ीनन अल्लाह ईमान लानेवालों को हमेशा सीधा मार्ग दिखा देता है।[15]

(55) इनकार करनेवाले तो इसकी ओर से शक ही में पड़े रहेंगे यहाँ तक कि या तो उनपर क़ियामत की घड़ी अचानक आ जाए, या एक अशुभ दिन का अज़ाब अवतरित हो जाए। (56) उस दिन बादशाही अल्लाह की होगी, और वह उनके बीच निर्णय कर देगा। जो ईमान रखनेवाले और अच्छे कर्म करनेवाले होंगे वे नेमत भरी जन्नतों में जाएँगे, (57) और जिन्होंने इनकार किया होगा और हमारी आयतों को झुठलाया होगा उनके लिए अपमानजनक अज़ाब होगा। (58) और जिन लोगों ने अल्लाह के मार्ग में घर-बार छोड़ा, फिर मारे गए या मर गए, अल्लाह उन्हें अच्छी रोज़ी देगा। और यक़ीनन अल्लाह ही उत्तम दाता है। (59) वह उन्हें ऐसी जगह पहुँचाएगा जिससे वे ख़ुश हो जाएँगे। बेशक अल्लाह सर्वज्ञ और सहनशील है। (60) यह तो है उनका परिणाम, और जो कोई बदला ले, वैसा ही जैसा उसके साथ किया गया और फिर उसपर ज़्यादती भी की गई हो, तो अल्लाह उसकी मदद ज़रूर करेगा। अल्लाह माफ़ करनेवाला और दरगुज़र करनेवाला (छोड़ देनेवाला) है।

14. अर्थात् मानव इतिहास में अल्लाह के फ़ैसले तुम्हारी घड़ियों और जंतरियों के अनुसार नहीं होते कि आज एक सही या ग़लत नीति अपनाई और कल उसके अच्छे या बुरे परिणाम सामने आ गए। किसी क़ौम से अगर यह कहा जाए कि अमुक कार्यप्रणाली अपनाने का परिणाम तुम्हारे विनाश के रूप में सामने आएगा तो वह बड़ी ही मूर्ख होगी अगर जवाब में यह तर्क प्रस्तुत करे कि श्रीमान इस कार्यप्रणाली को अपनाए हमें दस, बीस या पचास वर्ष हो चुके हैं, अभी तक तो हमारा कुछ बिगड़ा नहीं। ऐतिहासिक परिणामों के लिए दिन और महीने और साल तो अलग शताब्दियाँ भी कोई बड़ी चीज़ नहीं हैं।

(61) यह इसलिए कि रात से दिन और दिन से रात निकालनेवाला अल्लाह ही है और वह सुनता और देखता है। (62) यह इसलिए कि अल्लाह ही सत्य है और वे सब असत्य है जिन्हें अल्लाह को छोड़कर ये लोग पुकारते हैं और अल्लाह ही उच्च और महान है। (63) क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह आसमान से पानी बरसाता है और उसके द्वारा ज़मीन में हरियाली हो जाती है? वास्तविकता यह है कि वह सूक्ष्मदर्शी और ख़बर रखनेवाला है।[16] (64) उसी का है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है, बेशक वही निरपेक्ष और प्रशंसा के योग्य है। (65) क्या तुम देखते नहीं हो कि उसने वह सब कुछ तुम्हारे लिए वशीभूत कर रखा है जो ज़मीन में है, और उसी ने नौका

15. मतलब यह है कि शैतान के इन उपद्रवों को अल्लाह ने लोगों की परीक्षा और खरे को खोटे से अलग करने का एक साधन बना दिया है। बिगड़ी हुई मनोवृत्ति के लोग इन्ही चीज़ों से ग़लत नतीजे निकालते हैं और ये उनके लिए गुमराही का साधन बन जाती हैं। साफ़ ज़ेहनवाले लोगों को यही बातें नबी और ईश्वरीय ग्रन्थ के सत्य होने का विश्वास दिलाती हैं और वे महसूस कर लेते हैं कि ये सब शैतान की शरारतें हैं और यह चीज़ उन्हें सन्तुष्ट कर देती है कि यह आमंत्रण यक़ीनन भलाई और सत्यता का आमंत्रण हैं, वरना शैतान इसपर इतना न तिलमिलाता। नबी (सल्ल०) का आमंत्रण उस समय जिस चरण में था, उसको देखकर बाह्य स्थिति को देखनेवाली सारी निगाहें यह धोखा खा रही थीं कि आप अपने उद्देश्य में असफल हो गए हैं। देखनेवाले जो कुछ देख रहे थे वह तो यही था कि एक व्यक्ति जिसकी कामना और अभिलाषा यह थी कि उसकी क़ौम उसपर ईमान लाए, उसे आख़िरकार घरबार छोड़ना पड़ा और मक्के के अधर्मी सफल रहे। इस परिस्थिति में जब लोग आपके इस बयान को देखते थे कि मैं अल्लाह का नबी हूँ और उसका समर्थन मेरे साथ है और क़ुरआन की इन घोषणाओं को देखते थे कि नबी को झुठलानेवाली क़ौम पर अज़ाब आ जाता है तो उन्हें आपकी और क़ुरआन की सत्यता संदिग्ध दिखाई देने लगती थी, और आपके विरोधी इसपर बढ़-चढ़कर बातें बनाते थे कि कहाँ गया अल्लाह का वह समर्थन, और क्या हुई वे अज़ाब की धमकियाँ? अब क्यों नहीं आ जाता वह अज़ाब जिसके हमको डरावे दिए जाते थे? इन्हीं बातों का जवाब इन आयतों में दिया गया है।

16. अर्थात् अधर्म और ज़ुल्म की नीति अपनानेवालों पर अज़ाब उतारना, ईमानवालों और अच्छे बन्दों को इनाम देना, सच्चाई को अपनानेवाले उत्पीड़ित लोगों की फ़रियाद सुननी और ताक़त से ज़ुल्म का मुक़ाबला करनेवाले सत्यवादियों की मदद करनी, यह सब कुछ इसलिए है कि अल्लाह के गुण ये और ये हैं।

को नियम का पाबन्द बनाया है कि वह उसके आदेश से समुद्र में चलती है, और वही आसमान को इस तरह थामे हुए है कि उसकी अनुमति के बिना वह ज़मीन पर नहीं गिर सकता? वस्तुस्थिति यह है कि अल्लाह लोगों के हक़ में बड़ा करुणामय और दयावान है। (66) वही है जिसने तुम्हें ज़िन्दगी प्रदान की है, वही तुमको मौत देता है और वही फिर तुमको ज़िन्दा करेगा। सच यह है कि इनसान बड़ा ही सत्य से मुँह फेरनेवाला है।[17]

(67) हर उम्मत के लिए हमने बन्दगी की एक रीति निर्धारित की है जिसका वह पालन करती है, अतः ऐ नबी, वे इस मामले में तुमसे झगड़ा न करें।[18] तुम अपने रब की ओर बुलाओ। यक़ीनन तुम सीधे मार्ग पर हो (68) और अगर वे तुमसे झगड़े तो कह दो कि "जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह को ख़ूब मालूम है, (69) अल्लाह क़ियामत के दिन तुम्हारे बीच उन सब बातों का फ़ैसला कर देगा जिनमें तुम विभेद करते रहे हो।" (70) क्या तुम जानते नहीं कि आसमान और ज़मीन की हर चीज़ अल्लाह के ज्ञान में है? सब कुछ एक किताब में अंकित है। अल्लाह के लिए यह कुछ भी कठिन नहीं है।

(71) ये लोग अल्लाह को छोड़कर उनकी बन्दगी कर रहे हैं जिनके लिए न तो उसने कोई प्रमाण उतारा है और न ये ख़ुद उनके बारे में कोई ज्ञान रखते हैं। इन ज़ालिमों के लिए कोई मददगार नहीं है। (72) और जब इनको हमारी साफ़-साफ़ आयतें सुनाई जाती हैं तो तुम देखते हो कि सत्य को अस्वीकार करनेवाले लोगों के चेहरे बिगड़ने लगते हैं, और ऐसा लगता है कि अभी वे उन लोगों पर टूट पड़ेंगे जो इन्हें हमारी आयतें सुनाते हैं। इनसे कहो, "मैं बताऊँ तुम्हें कि इससे बुरी चीज़ क्या है? आग, अल्लाह ने उसी का वादा उन लोगों के हक़ में कर रखा है जो सत्य के स्वीकार से इनकार करें, और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है।"

(73) लोगो, एक मिसाल दी जाती है, ध्यान से सुनो। जिन पूज्यों को तुम अल्लाह को छोड़कर पुकारते हो वे सब मिलकर एक मक्खी भी पैदा करना चाहें तो नहीं

17. अर्थात् यह सब कुछ देते हुए भी उस सत्य का इनकार किए जाता है जिसे नबियों ने पेश किया है।

18. अर्थात् जिस तरह पहले के नबी अपने-अपने युग के समुदायों के लिए बन्दगी और उपासना की प्रणाली लाए थे, उसी तरह इस युग के समुदाय के लिए तुम बन्दगी की एक प्रणाली लाए हो। अब किसी को तुमसे झगड़ा करने का हक़ हासिल नहीं है, क्योंकि वर्तमान युग के लिए सच्ची बन्दगी की प्रणाली यही है।

कर सकते। बल्कि अगर मक्खी उनसे कोई चीज़ छीन ले जाए तो वे उसे छुड़ा भी नहीं सकते। मदद चाहनेवाले भी कमज़ोर और जिनसे मदद चाही चाती है वे भी कमज़ोर। (74) इन लोगों ने अल्लाह की क़द्र ही नहीं पहचानी जैसा कि उसके पहचाने का हक़ है। वस्तुस्थिति यह है कि बलवान और इज़्ज़तवाला तो अल्लाह ही है।

(75) वास्तविकता यह है कि अल्लाह (अपने आदेशों को भेजने के लिए) फ़रिश्तों में से भी सन्देशवाहक चुनता है और इनसानों में से भी। वह सुनता और देखता है, (76) जो कुछ लोगों के सामने है उसे भी वह जानता है और जो कुछ उनसे ओझल है उससे भी वह परिचित है, और सभी मामले उसी की तरफ़ रुजू होते हैं।

(77) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, (अल्लाह के आगे) झुको और सजदा करो, और अपने रब की बन्दगी करो, और अच्छा कर्म करो, इसी से उम्मीद की जा सकती है कि तुमको सफलता प्राप्त हो। (78) अल्लाह के मार्ग में जान-तोड़ कोशिश करो जैसा कि कोशिश करने का हक़ है। उसने तुम्हें अपने काम के लिए चुन लिया है और धर्म में तुमपर कोई तंगी नहीं रखी। क़ायम हो जाओ अपने बाप इबराहीम के पन्थ पर। अल्लाह ने पहले भी तुम्हारा नाम 'मुसलिम' रखा था और इस (क़ुरआन) में भी (तुम्हारा यही नाम है) ताकि रसूल तुम पर गवाह हो और तुम लोगो पर गवाह। अतः नमाज़ क़ायम करो, ज़कात दो, और अल्लाह से जुड़ जाओ। वह है तुम्हारा संरक्षक, बहुत ही अच्छा है वह संरक्षक और बहुत ही अच्छा है वह सहायक।



23. अल-मोमिनून

नाम

पहली आयत ''निश्चय ही सफलता पाई है ईमानवालों (मोमिनून) ने'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

वर्णन-शैली और विषय-वस्तु दोनों से ही मालूम होता है कि सूरा के अवतरण का प्रारंभकाल मक्का का मध्यकाल है। आयत 75, 76 से स्पष्टतः यह साक्ष्य मिलता है कि यह मक्का के उस अकाल के कठिन समय में अवतरित हुई है जो विश्वस्त उल्लेखों के अनुसार इसी मध्यकाल में पड़ा था।

विषय और वार्ताएँ

रसूल के आमंत्रण का अनुसरण इससूरा का केन्द्रीय विषय है और समग्र अभिभाषण इसी केन्द्र के चतुर्दिक घूमता है। वाणी का आरम्भ इस प्रकार होता है कि जिन लोगों ने इस पैग़म्बर की बात मान ली है उनमें ये और ये गुण पैदा हो रहे हैं, और निश्चय ही ऐसे ही लोग लोक और परलोक की सफलता के अधिकारी हैं। इसके पश्चात् मानव के जन्म, आकाश और धरती की रचना, वनस्पति और जीवधारियों की सृष्टि और दूसरे जगत् के लक्षणों (से एकेश्वरवाद और परलोकवाद के सत्य होने के प्रमाण दिए गए हैं।) फिर नबियों (अलै०) और उनके समुदायों के वृत्तान्त (प्रस्तुत करके) कुछ बातें सुननेवालों को समझाई गई हैं :

प्रथम यह कि आज तुम लोग मुहम्मद (सल्ल०) के आमंत्रण पर जो संदेह और आक्षेप कर रहे हो वे कुछ नवीन नहीं हैं। पहले भी जो नबी दुनिया में आए थे उन सबपर उनके समकालीन अज्ञानियों ने यही आक्षेप किए थे। अब देख लो कि इतिहास की शिक्षा क्या बता रही है। आक्षेप करनेवाले सत्य पर थे या नबीगण? द्वितीय यह कि एकेश्वरवाद और परलोकवाद के सम्बन्ध में जो शिक्षा मुहम्मद (सल्ल०) दे रहे हैं यही शिक्षा हर युग के नबियों ने दी है। तृतीय यह कि जिन क़ौमों ने नबियों की बात अस्वीकार कर दी, वे अन्ततः विनष्ट होकर रहीं। चतुर्थ यह कि अल्लाह की ओर से हर युग में एक ही धर्म आता रहा है और समस्त नबी एक ही समुदाय के लोग थे। उस एक धर्म के सिवा जो विभिन्न धर्म तुम लोग दुनिया में देख रहे हों, ये सब लोगों के मनगढ़न्त हैं। इन वृत्तान्तों के पश्चात् लोगों को यह बताया गया है कि मूल चीज़ जिसपर अल्लाह के यहाँ

प्रिय या प्रकोप का पात्र होना निर्भर करता है, वह आदमी का ईमान और उसका ईशभय और सत्यवादिता है। ये बातें इसलिए कही गई हैं कि नबी (सल्ल०) के आमंत्रण के मुक़ाबले में उस समय जो रुकावटें खड़ी की जा रही थी उसके ध्वजावाहक सब के सब मक्का के श्रेष्ठ और बड़े-बड़े सरदार थे। वे अपनी जगह स्वयं भी इस घमंड में थे और उनके प्रभावाधीन लोग भी इस भ्रम में पड़े हुए थे कि सुख-सामग्री की वर्षा जिन लोगों पर हो रही है उनपर अवश्य ईश्वर और देवताओं की कृपा है। रहे ये टूटे-मारे लोग जो मुहम्मद (सल्ल०) के साथ हैं, इनकी तो दशा स्वयं ही यह बता रही है कि ईश्वर इन के साथ नहीं है और देवताओं की मार इन पर पड़ी हुई है। इसके पश्चात् मक्कावालों को विभिन्न पहलुओं से नबी (सल्ल०) की पैग़म्बरी पर निश्चिन्त करने की कोशिश की गई है। फिर उनको बताया गया है कि यह अकाल जो तुम पर उतरा है यह एक चेतावनी है। अच्छा होगा कि इसको देखकर सँभलो और सीधे मार्ग पर आ जाओ। फिर नए सिरे से उन प्राकृतिक चिह्नों एवं लक्षणों की ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया गया है, जो जगत् में और स्वयं उनके अपने अस्तित्व में विद्यमान हैं। (और ख़ुदा के एकत्व और मृत्यु के पश्चात् जीवन के स्पष्ट साक्ष्य दे रहे हैं।) फिर नबी (सल्ल०) को आदेश दिया गया है कि चाहे ये लोग तुम्हारे मुक़ाबले में कैसी ही बुरी नीति क्यो न अपनाएँ, तुम भले तरीक़ों ही से अपना बचाव करना। शैतान कभी तुमको जोश में लाकर बुराई का प्रत्युत्तर बुराई से देने पर उद्यत न करने पाए।

वार्ता के अन्त में सत्य के विरोधियों को परलोक की पूछताछ से डराया गया है और उन्हें सावधान किया गया है कि जो कुछ तुम सत्य-संदेश और उसके अनुयायियों के साथ कर रहे हो, उसका सख़्त हिसाब तुमसे लिया जाएगा।



23. सूरा अल-मोमिनून

(मक्का में उतरी–आयतें 118)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) यक़ीनन सफलता पाई है ईमान लानेवालों ने (2) जो : अपनी नमाज़ में विनम्रता अपनाते हैं, (3) व्यर्थ बातों से दूर रहते हैं, (4) (ज़कात) की नीति पर चलते हैं (5) अपने गुप्त अंगों की हिफ़ाज़त करते हैं[1] (6) सिवाय अपनी बीवियों के और उन औरतों के जो यथा-विधि उनकी मिलकियत में हों[2] कि उनपर सुरक्षित न रखने में वे निन्दनीय नहीं हैं, (7) लेकिन जो उसके अलावा कुच और चाहें वही ज़्यादती करनेवाले हैं, (8) अपनी अमानतों और अपनी प्रतिज्ञा का ध्यान रखते हैं, (9) और अपनी नमाज़ों की हिफ़ाजत करते हैं। (10) यही लोग वे वारिस हैं (11) जो विरासत में फ़िरदौस (आनन्द-लोक) पाएँगे और उसमें हमेशा रहेंगे।

(12) हमने इनसान को मिट्टी के सत से बनाया (13) फिर उसे एक सुरक्षित जगह टपकी हुई बूँद में परिवर्तित किया, (14) फिर उस बूँद को लोथड़े का रूप दिया, फिर लोथड़े को बोटी बना दिया, फिर बोटी की हड्डियाँ बनाईं, फिर हड्डियों पर मांस चढ़ाया, फिर उसे एक दूसरी ही सृष्टि बना खड़ा किया।[3] अतः बड़ा ही बरकतवाला है अल्लाह, सब कारीगरों से अच्छा कारीगर। (15) फिर इसके बाद तुमको ज़रूर मरना हैं, (16) फिर क़ियामत के दिन यक़ीनन तुम उठाए जाओगे।

(17) और तुम्हारे ऊपर हमने सात रास्ते बनाए,[4] सृष्टि-कार्य से हम कुछ अनभिज्ञ न थे।[5] (18) और आसमान से हमने ठीक हिसाब के अनुसार एक निश्चित

1. इसके दो अर्थ हैं : एक यह कि अपने शरीर के लज्जा योग्य भाघों को छिपाकर रखते हैं, अर्थात् नग्नता से बचते हैं और अपने गुप्त अंग दूसरों के सामने नहीं खोलते। दूसरे यह कि वे अपनी पाकदामनी को सुरक्षित रखते हैं, अर्थात् काम-भावना के मामलों में आज़ादी से काम नहीं लेते और काम-शक्ति के प्रयोग में बेलगाम नहीं होते.
2. अर्थात् लौंड़ियाँ (बाँदियाँ) जो युद्ध में गिरफ़्तार होकर आएँ और युद्ध में बनाए गए बन्दियों का अपने क़ैदियों के बदले में वापस न किए जाने की स्थिति में इस्लामी हुकूमत की ओर से किसी व्यक्ति की मिलकियत में दे दी जाएँ।
3. अर्थात् यद्यपि यही सब कुछ जानवरों के सृजन में भी होता है मगर अल्लाह ने इस सृजन-क्रिया से इनसान को एक और प्रकार का प्राणी बना खड़ाकिया जो पशुओं से नितान्त भिन्न है।

मात्रा में पनी उतारा और उसको ज़मीन में ठहरा दिया, हम उसे जिस तरह चाहें ग़ायब कर सकते हैं। (19) फिर उस पानी के द्वारा हमने तुम्हारे लिए खजूर और अंगूर के बाग़ पैदा कर दिए, तुम्हारे लिए इन बागों में बहुत-से स्वादिष्ट फल हैं और उनसे तुम रोज़ी प्राप्त करते हो। (20) और वह पेड़ भी हमने पैदा किया जो तूरे सीना से निकलता है,[6] तेल भी लिए हुए उगता है और खानेवालों के लिए सालन भी।

(21) और सच यह है कि तुम्हारे लिए चौपायों में भी एक शिक्षा है। उनके पेटों में जो कुछ है उसी में से एक चीज़ (यानी दूध) हम तुम्हें पिलाते हैं, और तुम्हारे लिए उनमें बहुत-से दूसरे फ़ायदे भी हैं। उनको तुम खाते हो (22) और उनपर नावों पर सवार भी किए जाते हो।

(23) हमने नूह को उसकी क़ौम की ओर भेजा। उसने कहा, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, अल्लाह की बन्दगी करो, उसके सिवा तुम्हारे लिए कोई पूज्य नहीं है, क्या तुम

4. सम्भवतः इससे मुराद सात ग्रहों के भ्रमण के रास्ते हैं, और क्योंकि उस समय का इनसान सात ग्रहों ही से परिचित था इसलिए सात ही रास्तों का उल्लेख किया गया। इसका अर्थ यह नहीं है कि इनके अलावा और दूसरे रास्ते नहीं हैं।
5. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है : ''और सृजितों की ओर से हम ग़ाफ़िल न थे, या नहीं हैं।'' पहले अनुवाद की दृष्टि से आयत का अर्थ यह है कि यह सब कुछ जो हमने बनाया है, यह बस यूँ ही किसी अनाड़ी के हाथों अललटप्प नहीं बन गया है, बल्कि इसे एक सोची-समझी योजना पर पूरे ज्ञान के साथ बनाया गया है, महत्त्वपूर्ण क़ानून इसमें काम कर रहे हैं, साधारण से लेकर उच्चतम तक सम्पूर्ण जगत-व्यवस्था में एक पूर्ण एकरूपता एवं समरसता पाई जाती है, और इस महान कार्यस्थल में हर ओर एक उद्देश्यमयता दिखाई देती है जो बनानेवाले की तत्त्वदर्शिता का प्रमाण है। दूसरे अनुवाद के अनुसार अर्थ यह होगा कि इस जगत् में जितनी भी चीज़ों की रचना हमने की है उसकी किसी आवश्यकता से हम कभी ग़ाफ़िल और किसी हालत से कभी बेख़बर नहीं रहे हैं। किसी चीज़ को हमने अपनी योजना के विरुद्ध बनने और चलने नहीं दिया है। किसी चीज़ की प्राकृतिक आवश्यकताएँ पूरी करने में हमने कोताही नहीं की है। और एक-एक कण और पत्ते की हालत से हम परिचित हैं।
6. इससे मुराद ज़ैतून है, जो रूम सागर के आस-पास के इलाक़े की पैदावार में सबसे ज़्यादा महत्त्व की चीज़ है। तूरे सीना से इसे सम्बद्ध करने का कारण सम्भवतः यह है कि वही इलाक़ा जिसका सबसे सुप्रसिद्ध और प्रमुख स्थान तूरे सीना है, इस पेड़ का असली वतन है।

डरते नहीं हो?'' (24) उसकी क़ौम के जिन सरदारों ने माने से इनकार किया वे कहने लगे कि ''यह व्यक्ति कुछ नहीं है मगर एक इनसान तुम ही जैसा। इसका उद्देश्य यह है कि तुमपर श्रेष्ठता प्राप्त करे। अल्लाह को अगर भेजना होता तो फ़रिश्ते भेजता। यह बात तो हमने कभी अपने बाप-दादा के समयों में सुनी ही नहीं (कि इनसान रसूल बनकर आए)। (25) कुछ नहीं, बस इस आदमी को कुछ उन्माद हो गया है। कुछ समय तक और देख लो (शायद स्वास्थ लाभ हो जाए)।'' (26) नूह ने कहा, ''पालनहार, इन लोगों ने मुझे जो झुठलाया है इसपर अब तू ही मेरी मदद कर। (27) हमने उसपर (वह्य) की कि ''हमारी निगरानी में और हमारी प्रकाशना (वह्य) के अनुसार नाव तैयार कर। फिर जब हमारा आदेश आ जाए और वह तंदूर उबल पड़े तो हर क़िस्म के जानवरों में से एक-एक जोड़ा लेकर उसमें सवार हो जा, और अपने घरवालों को भी साथ ले सिवाय उनके जिनके ख़िलाफ़ पहले फ़ैसला हो चुका है, और ज़ालिमों के बारे में मुझसे कुछ न कहना, ये अब डूबनेवाले हैं। (28) फिर जब तू अपने साथियों समेत नाव पर सवार हो जाए तो कह, शुक्र है उस अल्लाह का जिसने हमें ज़ालिम लोगों से छुटकारा दिया। (29) और कह, पालनहार, मुझको बहकतवादील जगह उतरा और तू सबसे अच्छी जगह देनेवाला है।''

(30) इस क़िस्से में बड़ी निशानियाँ हैं, और आज़माइश तो हम करके ही रहते हैं। (31) उनके बाद हमने एक दूसरे दौर की क़ौम को उठाया। (32) फिर उनमें ख़ुद उन्हीं की क़ौम का एक रसूल भेजा (जिसने उन्हें दावत दी) कि अल्लाह की बन्दगी करो, तुम्हारे लिए उसके सिवा कोई और पूज्य नहीं है, क्या तुम डरते नहीं हो? (33) उसकी क़ौम के जिन सरदारों ने मानने से इनकार किया और आख़िरत की पेशी को झुठलाया, जिनको हमने दुनिया की ज़िन्दगी में सम्पन्न कर रखा था, वे कहने लगे, ''यह व्यक्ति कुछ नहीं है मगर एक इनसान तुम ही जैसा। जो कुछ तुम खाते हो वही वह खाता है और जो कुछ तु पीते हो वही वह पीता है। (34) अब अगर तुमने अपने ही जैसे एक इनसान का कहना मान लिया तो तुम घाटे ही में रहे। (35) यह तुम्हें सूचना देता है कि जब तुम मरकर मिट्टी हो जाओगे और हड्डियों का पंजर बनकर रह जाओगे उस समय तुम (क़ब्रों से) निकाले जाओगे? (36) दूर, बिलकुल दूर (असंभव) है यह वादा जो तुमसे किया जा रहा है। (37) ज़िन्दगी कुछ नहीं है मगर बस यही दुनिया की ज़िन्दगी। यहीं हमको मरना और जीना है और हम हरगिज़ उठाए जानेवाले नहीं हैं। (38) यह व्यक्ति अल्लाह के नाम पर सिर्फ़ झूठ घड़ रहा है और हम कभी इसकी माननेवाले नहीं हैं।'' (39) रसूल ने कहा, ''पालनहार, इन लोगों ने जो मुझे झुठलाया है उसपर अब तू ही मेरी मदद कर।'' (40) जवाब में कहा गया, ''क़रीब है वह समय जब ये अपने किए पर

पछताएँगे।'' (41) आख़िरकार ठीक-ठीक सत्य के अनुसार एक बड़े कोलाहल ने उनको आ लिया और हमने उनको कचरा बनाकर फेंक दिया—दूर हो ज़ालिम क़ौम!

(42) फिर हमने उनके बाद दूसरी क़ौमें उठाई। (43) किसी क़ौम का न अपने समय से पहले अन्त हुआ और न उसके बाद ठहर सकी। (44) फिर हमने लगातार अपने रसूल भेजे। जिस क़ौम के पास भी उसका रसूल आया, उसने उसे झुठलाया, और हम एक के बाद एक क़ौम को तबाह करते चले गए, यहाँ तक कि उनको बस कहानी ही बनाकर छोड़ा—फिटकार उन लोगों पर जो ईमान नहीं लाते!

(45,46) फिर हमने मूसा और उसके भाई हारून को अपनी निशानियों और खुली सनद के साथ फ़िरऔन और उसके राज्य के सरदारों की ओर भेजा, मगर उन्होंने गर्व किया और बड़ी शेख़ी बघारी। (47) कहने लगे, ''क्या हम अपने ही जैसे दो आदमियों पर ईमान ले आएँ? और आदमी भी वे जिनकी क़ौम हमारी बन्दी है।'' (48) अतः उन्होंने दोनों को झुठला दिया और तबाह होनेवालों में जा मिले। (49) और मूसा को हमने किताब प्रदान की ताकि लोग उससे पथ-प्रदर्शन प्राप्त करें।

(50) और मरयम के बेटे और उसकी माँ को हमने एक निशानी बनाया और उनको एक उच्च धरातल पर रखा जो इतमीनान की जगह थी और स्रोत उसमें प्रवाहित थे। (51) ऐ पैग़म्बरो, खाओ पाक चीज़ें और कर्म करो अच्छे, तुम जो कुछ भी करते हो, मैं उसको ख़ूब जानता हूँ। (52) और यह तुम्हारा समुदाय (उम्मत) एक ही समुदाय (उम्मत) है और मैं तुम्हारा रब हूँ, अतः मुझी से तुम डरो।

(53) मगर बाद में लोगों ने अपने दीन (धर्म) को आपस में टुकड़े-टुकड़े कर लिया। हर गिरोह के पास जो कुछ है उसी में वह मग्न है—(54) अच्छा, तो छोड़ो उन्हें, डूबे रहें अपनी ग़फ़लत में एक विशेष समय तक।

(55) क्या ये समझते हैं कि हम जो इन्हें धन और सन्तान से मदद दिए जा रहे हैं (56) तो मानो इन्हें भलाइयाँ देने में यत्नशील हैं? नहीं, वास्तविक तथ्य का इन्हें विवेक नहीं है। (57) वास्तव में तो जो लोग अपने रब के ख़ौफ़ से डरनेवाले होते हैं, (58) जो अपने रब की आयतों पर ईमान लाते हैं, (59) जो अपने रब के साथ किसी को साझी नहीं करते, (60) और जिनका हाल यह है कि देते हैं जो कुछ भी देते हैं और दिल उनके इस ख़याल से काँपते रहते हैं कि हमें अपने रब की ओर पलटना है, (61) वही भलाइयों की ओर दौड़नेवाले और अग्रसर होकर उन्हें पा लेनेवाले हैं। (62) हम किसी व्यक्ति को उसकी सामर्थ्य से ज़्यादा तकलीफ़ नहीं देते, और हमारे पास एक किताब है, जो (हर एक का हाल) ठीक-ठीक बता देनेवाली है,[7] और लोगों पर ज़ुल्म किसी हाल

में भी नहीं किया जाएगा। (63) मगर ये लोग इस मामले से बेख़बर हैं। और इनके कर्म भी उस तरीक़े से (जिसका ऊपर उल्लेख किया गया है) भिन्न हैं। (64) (वे अपनी ये करतूत किए चले जाएँगे) यहाँ तक कि जब हम उनके विलासियों (अय्याशों) को अज़ाब में पकड़ लेंगे तो फिर वे चिल्लाना आरम्भ कर देंगे (65)—अब बन्द करो अपनी फ़रियाद और विलाप, हमारी ओर से अब कोई मदद तुम्हें मिलने को नहीं है (66) मेरी आयतें सुनाई जाती थी तो तुम (रसूल की आवाज़ सुनते ही) उलटे पाँव भाग निकलते थे, (67) अपने घमण्ड में उसको ध्यान ही में न लाते थे, अपनी चौपालों में उसपर बातें छाँटते और बकवास किया करते थे।

(68) तो क्या इन लोगों ने कभी इस वाणी पर विचार नहीं किया? या वह कोई ऐसी बात लाया है जो कभी इनके पूर्वजों के पास न आई थी? (69) या ये अपने रसूल से कभी के परिचित न थे कि (अपरिचित आदमी होने के कारण) उससे बिदकते हैं? (70) या ये इस बात को स्वीकार किए हुए हैं कि वह मजनून (उन्मादग्रस्त) है? नहीं, बल्कि वह सत्य लाया है और सत्य ही इनके बहुसंख्यक को अप्रिय है (71)—और सत्य अगर कहीं इनकी इच्छाओं के पीछे चलता तो ज़मीन और आसमान और इनकी सारी आबादी की व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाती—नहीं, बल्कि हम उनका अपना ही ज़िक्र उनके पास लाए हैं और वे अपने ज़िक्र से मुँह मोड़ रहे हैं।

(72) क्या तू उनसे कुछ माँग रहा है? तेरे लिए तो तेरे रब का दिया ही उत्तम है और वह सबसे अच्छा रोज़ी देनेवाला हैं। (73) तू तो उनको सीधे मार्ग की ओर बुला रहा है। (74) मगर जो लोग आख़िरत को नहीं मानते वे सीधे मार्ग से हटकर चलना चाहते हैं। (75) अगर हम इनपर दया करें और वह तकलीफ़ जिसमें आजकल ये ग्रस्त हैं,[8] दूर कर दें तो ये अपनी सरकशी में बिलकुल ही बहक जाएँगे। (76) इनका हाल तो यह है कि हमने इन्हें तकलीफ़ में ग्रस्त किया, फिर भी ये अपने रब के आगे न झुके और न विनम्रता अपनाते हैं। (77) अलबत्ता जब नौबत यहाँ तक पहुँच जाएगी कि हम इनपर कठोर अज़ाब का द्वार खोल दें तो सहसा तुम देखोगे कि इस हालत में ये हर भलाई से निराश हैं।

(78) वह अल्लाह ही तो है जिसने तुम्हें सुने और देखने की शक्तियाँ दीं और

7. अर्थात् हर व्यक्ति के क्रिया-कलाप का लेखपत्र जिसमें उसका सब कुछ किया-धरा अंकित है।
8. इससे मुराद है वह अकाल जो नबी (सल्ल॰) के नबी होने के बाद कुछ वर्ष तक व्याप्त रहा।

सोचने को दिल दिए। मगर तुम लोग कम ही कृतज्ञता दिखाते हो। (79) वही है जिसने तुम्हें ज़मीन में फैलाया, और उसी की ओर तुम समेटे जाओगे। (80) वही ज़िन्दगी प्रदान करता है और वही मौत देता है। रात और दिन का उलट-फेर उसी के अधिकार में है। क्या तुम्हारी समझ में यह बात नहीं आती? (81) मगर ये लोग वही कुछ कहते हैं जो इनके अगले कह चुके हैं। (82) ये कहते हैं, ''क्या जब हम मरकर मिट्टी हो जाएँगे और हड्डियों का पंजर बनकर रह जाएँगे तो हमको फिर ज़िन्दा करके उठाया जाएगा? (83) हमने भी ये वादे बहुत सुने हैं और हमसे पहले हमारे बाप-दादा भी सुनते रहे हैं। ये तो बस पुरानी कहानियाँ हैं।''

(84) इनसे कहो, बताओ, अगर तुम जानते हो कि यह ज़मीन और इसकी सारी आबादी किसकी है? (85) ये ज़रूर कहेंगे अल्लाह की। कहो फिर तुम होश में क्यों नहीं आते? (86) इनसे पूछो, सातों आसमानों और महान सिंहासन का मालिक कौन है? (87) ये ज़रूर कहेंगे अल्ला। कहो, फिर तुम डरते क्यों नहीं? (88) इनसे कहो, बताओ अगर तुम जानते हो कि हर चीज़ पर प्रभुत्व किसका है? और कौन है वह जो पनाह देता है और उसके मुक़ाबले में कोई पनाह नहीं दे सकता? (89) ये अवश्य कहेंगे कि यह बात तो अल्लाह ही के लिए है। कहो, फिर कहाँ से तुमको धोखा लगता है? (90) जो सत्य है वह हम इनके सामने ले आए हैं, और कोई शक नहीं कि ये लोग झूठे हैं।[9] (91) अल्लाह ने किसी को अपनी औलाद नहीं बनाया है,[10] और कोई दूसरा ख़ुदा उसके साथ नहीं है। अगर ऐसा होता तो हर ख़ुदा अपनी सृष्टि को लेकर अलग हो जाता और फिर वे ए-दूसरे पर चढ़ दौड़ते। पाक है अल्लाह उन बातों से जो ये लोग बनाते हैं। (92) खुले और छिपे को जाननेवाला, वह उच्चतर है उस शिर्क से जो ये ठहरा रहे हैं।

(93) ऐ नबी, दुआ करो कि ''पालनहार, जिस अज़ाब की इनको धमकी दी जा रही है वह अगर मेरी मौजूदगी में तू लाए, (94) तो ऐ मेरे रब, मुझे इन ज़ालिम लोगों में शामिल न करना।[11] (95) और वास्तविकता यह है कि हम तुम्हारी आँखों के सामने ही वह चीज़ ले आने की पूरी सामर्थ्य रखते हैं जिसकी धमकी हम इन्हें दे रहे हैं।

(96) ऐ नबी, बुराई को उस ढंग से दूर करो जो उत्तम हो। जो कुछ बातें वे तुमपर बनाते हैं उन्हें हम ख़ूब जानते हैं। (97) और दुआ करो कि ''पालनहार, मैं शैतानों की उकसाहटों से तेरी पनाह माँगता हूँ, (98) बल्कि ऐ मेरे रब, मैं तो इससे भी तेरी पनाह माँगता हूँ कि वे मेरे पास आएँ।''

(99) (ये लोग अपनी करनी से बाज़ न आएँगे) यहाँ तक कि जब इनमें से किसी को मौत आ जाएगी तो कहना शुरू करेगा कि ''ऐ मेरे रब, मुझे उसी दुनिया में वापस

भेज दीजिए जिसे मैं छोड़ आया हूँ, (100) उम्मीद है कि अब मैं अच्छा कर्म करूँगा''—हरगिज़ नहीं, यह तो बस एक बात है जो वह बक रहा है। अब इन सब (मरनेवालों) के पीछे एक आड़[12] है दूसरी ज़िन्दगी के दिन तक। (101) फिर ज्यों ही कि नरसिंघा (सूर) फूँक दिया गया, उनके बीच फिर कोई नाता न रहेगा और न वे एक-दूसरे को पूछेंगे। (102) उस समय जिनके पलड़े भारी होंगे वही सफल होंगे। (103) और जिनके पलड़े हलके होंगे वही लोग होंगे जिन्होंने अपने आपको घाटे में डाल दिया। वे जहन्नम में हमेशा रहेंगे। (104) आग उनके चेहरों की खाल चाट जाएगी और उनके जबड़े बाहर निकल आएँगे—(105) ''क्या तुम वही लोग नहीं हो कि मेरी

9. अर्थात् अपने इस कथन में झूठे कि अल्लाह के सिवा किसी और को भी ईश्वरत्व के गुणों, अधिकारों और हुक़ूक़, या इनमें से कोई भाग प्राप्त है। और अपने इस कथन में झूठे कि मौत के बाद ज़िन्दगी संभव नहीं है। उनका झूठ उनकी अपनी स्वीकृतियों से स्पष्ट है। एक ओर यह मानना कि ज़मीन और आसमान का मालिक और ब्रह्माण्ड की हर चीज़ का अधिकारी अल्लाह है, और दूसरी ओर यह कहना कि ईश्वरत्व अकेले उसी का नहीं है बल्कि दूसरों का भी (जो अनिवार्यतः उसके बन्दे और उसके पैदा किए हुए ही होंगे) उसमें कोई हिस्सा है, ये दोनों बातें स्पष्टतः एक-दूसरे के विरुद्ध हैं। इसी तरह एक ओर यह कहना कि हमको और इस भव्यशाली जगत् को ईश्वर ने पैदा किया है, और दूसरी ओर यह कहना कि ईश्वर अपने ही पैदा किए हुए को दुबारा पैदा नहीं कर सकता, स्पष्ट रूप से बुद्धि के विपरीत है। अतः उनकी अपनी मानी हुई सच्चाइयों से यह सिद्ध है कि शिर्क (बहुदेववाद) और आख़िरत का इनकार दोनों ही झूठी धारणाएँ हैं जो उन्होंने अपना रखी हैं।
10. यहाँ किसी को यह भ्रम न हो कि यह कथन सिर्फ़ ईसाइयत के खण्डन में हैं। नहीं, अरब के बहुदेववादी भी अपने पूज्यों को अल्लाह की सन्तान घोषित करते थे, और दुनिया के ज़्यादातर मुशरिकों (बहुदेववादियों) की इस गुमराही में उन ही जैसी हालत रही है।
11. इसका अर्थ यह नहीं है कि अल्लाह की पनाह, उस अज़ाब में नबी (सल्ल॰) के ग्रस्त होने की वास्तव में कोई आशंका थी, या यह कि अगर आप यह दुआ न माँगते तो उसमें ग्रस्त हो जाते। बल्कि इस तरह की वर्णन-शैली यह ध्यान में प्रत्यक्ष करने के लिए अपनाई गई है कि अल्लाह का अज़ाब है ही डरने के योग्य चीज़, वह ऐसी भयावह चीज़ है कि पापियों ही को नहीं सुकर्मी लोगों को भी अपने सारे अच्छे कर्मों के होते हुए भी उससे पनाह माँगनी चाहिए।

आयतें तुम्हें सुनाई जाती थीं तो तुम उन्हें झुठलाते थे?'' (106) वे कहेंगे, ''ऐ हमारे रब, हमारा दुर्भाग्य हमपर छा गया था। हम वास्तव में पथभ्रष्ट लोग थे। (107) ऐ पालनहार, अब हमें यहाँ से निकाल दे। फिर हम ऐसा अपराध करें तो ज़ालिम होंगे।'' (108) अल्लाह जवाब देगा, ''दूर हो मेरे सामने से, पड़े रहो उसी में और मुझसे बात न करो। (109) तुम वही लोग तो हो कि मेरे कुछ बन्दे जब कहते थे कि ऐ हमारे पालनहार, हम ईमान लाए, हमें माफ़ कर दे, हमपर दया कर, तू सब दयावानों से अच्छा दयावा है, (110) तो तुमने उनका मज़ाक बना लिया। यहाँ तक कि उनकी ज़िद ने तुम्हें यह भी भुला दिया कि मैं भी कोई हूँ, और तुम उनपर हँसते रहे। (111) आज उनके उस सब्र का मैंने यह फल दिया है कि वही सफल हैं।'' (112) फिर अल्लाह उनसे पूछेगा, ''बताओ, ज़मीन में तुम कितने वर्ष रहे?'' (13) वे कहेंगे, ''एक दिन या दिन का भी कुछ हिस्सा हम वहाँ ठहरे हैं, गणना करनेवालों से पूछ लीजिए।'' (114) कहा जाएगा, ''थोड़ी ही देर ठहरे हो ना, क्या अच्छा होता कि तुमने यह उस समय जाना होता। (115) क्या तुमने यह समझ रखा था कि हमने तुम्हें व्यर्थ ही पैदा किया है और तुम्हें हमारी ओर कभी पलटना ही नहीं है?''

(116) तो सर्वोच्च है अल्लाह, वास्तविक बादशाह, कोई पूज्य उसके सिवा नहीं, स्वामी है, महिमाशाली सिंहासन का। (117) और जो कोई अल्लाह के साथ किसी और पूज्य को पुकारे, जिसके लिए उसके पास कोई प्रमाण नहीं,[13] तो उसका हिसाब उसके रब के पास है। ऐसे इनकार करनेवाले (काफ़िर) कभी सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।

(118) ऐ नबी, कहो, मेरे रब माफ़ कर और दया कर, तू सब दयावानों से अच्छा दयावान है।

● ● ●

12. मूल में 'बरज़ख़' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'बरज़ख़' फ़ारसी शब्द 'परदा' का दिया हुआ अरबी रूप है। आयत का अर्थ यह है कि अब उनके और दुनिया के बीच एक रोक है जो उन्हें वापस जाने नहीं देगी और क़ियामत तक वे दुनिया और आख़िरत के बीच के इस सीमांतर में ठहरे रहेंगे।
13. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि ''जो कोई अल्लाह के साथ किसी और पूज्य को पुकारे उसके लिए अपने इस कर्म के समर्थन में कोई प्रमाण नहीं है।''

24. अन-नूर

नाम

आयत 34 ''अल्लाह आकाशों और धरती का प्रकाश (नूर) है'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसपर सब सहमत हैं कि यह सूरा बनी मुस्तलिक़ के अभियान के पश्चात् अवतरित हुई है। किन्तु इसमें मतभेद हैं कि यह अभियान सन् 05 हिजरी में अहज़ाब के अभियान से पहले घटित हुआ था या सन् 06 हिजरी में अहज़ाब के अभियान के पश्चात्। वास्तविक घटना क्या है, इसकी जाँच-पड़ताल शरीअत के निहित हित (को समझने के लिए भी आवश्यक है, जो परदे के आदेशों में पाई जाती है, क्योंकि यह) आदेश क़ुरआन मजीद की दो ही सूरतों में आए हैं, एक यह सूरा और, दूसरी सूरा 33 (अहज़ाब) जिसका अवतरण सभी के मतानुसार अहज़ाब के अभियान के अवसर पर हुआ है। इस उद्देश्य (से जब हम सम्बद्ध उल्लखों की छान-बीन करते हैं, तो सही बात यही मालूम होती है कि यह सूरा) सन् 06 हिजरी के उत्तरार्द्ध में सूरा 33 (अहज़ाब) के कई महीने बाद अवतरित हुई है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

जिस पृष्ठभूमि में इस सूरा का अवतरण हुआ है वह संक्षेप में यह है :

बद्र के युद्ध की विजय से अरब में इस्लामी आन्दोलन का जो उत्थान आरम्भ हुआ था वह ख़न्दक़ के अभियान (अहज़ाब के अभियान) तक पहुँचते-पहुँचते यहाँ तक पहुँच चुका था कि बहुदेववादी, यहूदी, मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) और प्रतीक्षा करनेवाले, सभी यह महसूस करने लगे थे कि इस नवोदित शक्ति को केवल हथियारों और सेनाओं के बल पर परास्त नहीं किया जा सकता। (इसलिए उन्होंने अब एक नया उपाय अपनाया और अपने इस्लाम-दुश्मन) प्रयासों का रुख़ सामारिक कार्यवाइयों से हटाकर ओछे हमलों और आन्तरिक रूप से उपद्रव मचाने की ओर फेर दिया। इस नए उपाय का पहला प्रदर्शन ज़ीक़ादा सन् 05 हिजरी में हुआ, जबकि नबी (सल्ल॰) ने ले-पालक की अज्ञानकाल की रीति को समाप्त करने के लिए स्वयं अपने मुँहबोले बेटे (ज़ैद बिन हारिसा) की तलाक़ दी हुई पत्नी (ज़ैनब बिन्ते हजश) से विवाह किया। इस अवसर पर मदीना के मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) प्रोपगंडे का एक बड़ा तूफ़ान लेकर उठ खड़े हुए और बाहर से यहूदियों और बहुदेववादियों ने भी उनके स्वर में स्वर मिलाकर मिथ्यारोपणों का

कार्य आरम्भ कर दिया। इन निर्लज्ज मिथ्यारोपण करणेवालों ने नबी (सल्ल॰) पर निकृष्ट नैतिक मिथ्यारोपण किए। तदन्तर दूसरा हमला बनी मुस्तलिक़ के अभियान के अवसर पर किया गया (जब एक मुहाजिर और एक अनसारी के साधारण झगड़े को मनाफ़िक़ों के सरदार अब्दुल्लाह-इब्ने-उबई ने एक महा-उपद्रव बना देना चाहा (इस घटना का विस्तार आगे सूरा 63 (अल-मुनाफ़िक़ून) की टीका के परिचयात्मक लेख में आ रहा है। यह हमला) पहले से भी ज़्यादा सख़्त था। यह शोशा अभी ताज़ा ही था कि इसी सफ़र में उसने एक और भयानक उपद्रव मचाया। यह हज़रत आइशा (रज़ि॰) पर आरोप का उपद्रव था। इस घटना को स्वयं उन्हीं के मुख से सुनिए। वे कहते है कि ''बनी मुस्तलिक़ के अभियान के अवसर (पर मैं नबी (सल्ल॰) के साथ थी।) वापसी पर जब हम मदीना के निकट थे, एक पड़ाव पर रात के समय रसूल (सल्ल॰) ने पड़ाव किया, और अभी कुछ रात शेष थी कि कूच की तैयारियाँ शुरू हो गई। मैं उठकर ज़रूरत से गई, और जब पलटने लगी तो ठहरने के स्थान के निकट पहुँचकर मुझे महसूस हुआ कि मेरे गले का हार टूटकर कहीं गिर पड़ा है। मैं उसे खोजने में लग गई, इतने में क़ाफ़िला चल दिया। रीति यह थी कि मैं कूच के वक़्त अपने हौदे में बेठ जाती थी और चार आदमी उसे उठाकर ऊँट पर रख देते थे। हम स्त्रियाँ उस समय ख़ुराक की कमी के कारण बहुत हक्ली-फुल्की थीं। मेरा हौदा उठाते वक़्त लोगों को यह महसूस ही न हुआ कि मैं उसमें नहीं हूँ। वे बेख़बरी में ख़ाली हौदा ऊँट पर रखकर प्रस्थान कर गए। मैं जब हार ढूँढकर पलटी तो वहाँ कोई न था। अन्ततः अपनी चादर ओढ़कर वहीं लेट गई और मन में सोच लिया कि आगे चलकर जब ये लोग मुझे न पाएँगे तो स्वयं ही ढूँढते हुए आ जाएँगे। इसी हालत में मुझको नींद आ गई। प्रातः काल सफ़वान-बिन-मुअत्तल सुलमी उस स्थान से गुज़रे जहाँ मैं सो रही थी और मुझे देखते ही पहचान गए, क्योंकि परदे का आदेश आने से पहले वे कई बार मुझे देख चुके थे। (ये साहब बदरी सहाबियों में से थे। इनको प्रातः देर से उठने की आदत थी, इसलिए ये भी सेना-स्थल में कहीं पड़े सोते रह गए थे और जब उठकर मदीना जा रहे थे।) मुझे देखकर उन्होंने ऊँट रोक लिया और सहसा उनके मुँह से निकला, ''इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन (निस्संदेह हम अल्लाह के हैं और उसी की ओर हमें पलटना हैं)। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की पत्नी यही रह गई।'' इस आवाज़ से मेरी आँख खुल गई और मैंने उठकर तुरन्त अपने मुँह पर चादर डाल ली। उन्होंने मुझसे कोई बात न की, अपना ऊँट लाकर मेरे पास बिठा दिया और अलग हटकर खड़े हो गए। मैं ऊँट पर सवार हो गई और वे नकेल पकड़कर चल पड़े। दोपहर के निकट हम सेना में पहुँच गए, जबकि वह एक स्थान पर जाकर ठहरी ही थी और सेना के लोगों को अभी यह पता न चला था कि मैं पीछे छूट गई

हूँ। इस पर लांछन लगानेवालों ने लांछन लगा दिए और उनमें सबसे आगे अब्दुल्लाह-इब्ने-उबई था। किन्तु मैं इससे बेख़बर थी कि मुझपर क्या बातें बन रही हैं। मदीना पहुँचकर मैं बीमार हो गई और एक महीना पलंग पर पड़ी रही। नगर में इस लांछन की ख़बरें उड़ रही थीं। अल्लाह के नबी (सल्ल॰) तक यह बात पहुँच चुकी थी, किन्तु मुझे कुछ पता न था। अलबत्ता जो चीज़ मुझे खटकती थी वह यह कि अल्लाह के नबी (सल्ल॰) उस प्रकार मेरी ओर ध्यान नहीं दे रहे थे, जिस प्रकार बीमारी के समय में दिया करते थे। आख़िर आपकी अनुमति से मैं अपनी माँ के घर चली गई, ताकि वे मेरी सेवा-शुश्रूषा भली-प्रकार कर सकें।

एक दिन रात के समय ज़रूरत से मैं मदीना के बाहर गई। उस समय हमारे घरों में शौचालय न थे और हम लोग जंगल ही जाया करते थे। मेरे साथ मिस्तह-बिन-असासह की माँ भी थीं। (उनसे मालूम हुआ कि) लांछनकारी लोग मेरे बारे में क्या बातें उड़ा रहे हैं। यह दास्तान सुनकर मेरा ख़ून सूख गया। वह ज़रूरत भी भूल गई जिसके लिए आई थी। सीधे घर गई और रात रो-रोकर काटी। आगे चलकर हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती हैं कि एक दिन अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने अभिभाषण में कहा, "मुसलमानो, कौन है जो उस व्यक्ति के हमलों से मेरी इज़्ज़त बचाए, जिसने मेरे घरवालों पर आरोपण करके मुझे अत्यन्त दुख पहुँचाया है। अल्लाह की क़सम, मैंने न तो अपनी पत्नी ही में कोई बुराई देखी है और न उस व्यक्ति में जिसके साथ लांछन लगाया जाता है। वह तो कभी मेरी अनुपस्थिति में मेरे घर आया भी नहीं।" इस पर उसैद-बिन-हुज़ैर, खज़रज के रईस (और कुछ उल्लेखों में सअद-बिन-मुआज़) ने उठकर कहा, "ऐ अल्लाह के रसूल, अगर वह हमारे क़बीले का आदमी है तो हम उसकी गर्दन मार दें और अगर हमारे भाई ख़ज़रजियों में से है, तो आप आदेश दें, हम आज्ञापालन के लिए उपस्थित हैं।" यह सुनते ही सअद-बिन-उबादा, ख़ज़रज के रईस उठ खड़े हुए और कहने लगे, "झूठ कहते हो, तुम कदापि उसे मार नहीं सकते।" उसैद-बिन-हुज़ैर ने जवाब में कहा, "तुम मुनाफ़िक़ हो इसलिए मुनाफ़िक़ों का पक्ष लेते हो।" इसपर मस्जिदे-नबवी में एक कोलाहल मच गया जबकि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) मिम्बर पर विराजमान थे। बहुत संभव था कि औस और ख़ज़रज मस्जिद में ही लड़ पड़ते, किन्तु अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उनको ठंडा किया और फिर मिम्बर से उतर आए। (इस विस्तृत वर्णन से भली-भाँति स्पष्ट हो जाता है) कि अब्दुल्लाह-बिन-उबई ने यह शोशा छोड़कर एक साथ कई शिकार करने की कोशिश की। एक तरफ़ उसने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) और हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि॰) की इज़्ज़त पर हमला किया।

दूसरी ओर उसने इस्लामी आंदोलन की उच्चतम प्रतिष्ठा को गिराने की कोशिश की। तीसरी तरफ़ उसने यह एक ऐसी चिंगारी फेंकी थी कि अगर इस्लाम अपने अनुयायियों की काया न पलट चुका होता तो मुहाजिर और अनसार और स्वयं अनसार के भी दोनों क़बीले (औस और ख़ज़रज) आपस में लड़ मरते।

विषय और वार्ता

ये थीं वे परिस्थितियाँ जिनमें पहले हमले के अवसर पर सूरा 33 (अहज़ाब) की आयतें 28 से लेकर 73 तक अवतरित हुई। और दूसरे हमले के अवसर पर यह सूरा नूर उतरी। इस पृष्ठभूमि को दृष्टि में रखकर इन दोनों सूरतों का क्रमशः अध्ययन किया जाए तो वह तत्त्वदर्शिता अच्छी तरह समझ में आ जाती है जो उनके आदेशों में निहित है। मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) मुसलमानों को उस क्षेत्र में पराजित करना चाहते थे जो उनकी उच्चता का वास्तविक क्षेत्र था। अल्लाह ने इसके बदले कि मुसलमानों को जवाबी हमले पर उकसाता, पूर्ण रूपेण ध्यान उनको यह शिक्षा देने पर दिया कि तुम्हारे मुक़ाबले के नैतिक क्षेत्र में जहाँ-जहाँ रंध्र हैं उनको भरो और मुक़ाबले के इस क्षेत्र को और अधिक सुदृढ़ करो। (हज़रत ज़ैनब के विवाह के अवसर पर) जब मुनाफ़िक़ों और काफ़िरों ने तूफ़ान उठाया था (उस समय सामाजिक सुधार के सम्बन्ध में वे आदेश दिए गए थे, जो सूरा 33 (अहज़ाब) में उल्लिखित हैं।) फिर लाँछन की घटना से जब मदीना के समाज में एक हलचल मची तो यह सूरा नूर नैतिक, सामाजिक और क़ानून के ऐसे आदेश और मार्गदर्शनों के साथ अवतरित की गई जिसका उद्देश्य यह था कि पहले तो मुस्लिम समाज को बुराइयों के उत्पन्न होने और उसके फैलाव से सुरक्षित रखा जाए और अगर वे पैदा ही हो जाएँ तो उनका पूरा-पूरा निवारण किया जाए। इन आदेशों और निर्देशों को उसी क्रम के साथ ध्यानपूर्वक पढ़िए जिसके साथ वे इस सूरा में अवतरित हुए हैं, तो अंदाज़ा होगा कि क़ुरआन ठीक मनोवांछित अवसर पर मानव जीवन के सुधार और निर्माण के लिए किस तरह क़ानूनी (वैधानिक), नैतिक और सामाजिक उपाय एक साथ प्रस्तावित करता है। इन आदेशों और निर्देश के साथ-साथ मुनाफ़िक़ों और ईमानवालों के वे खुले-खुले लक्षण भी बयान कर दिए गए हैं जिससे हर मुसलमान यह जान सके कि समाज में निश्छल ईमानवाले कौन लोग हैं और मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) कौन? दूसरी तरफ़ मुसलमानों के सामूहिक अनुशासन को और कस दिया गया। इस समग्र वार्ता में स्पष्ट चीज़ देखने को यह है कि पूरी सूरा नूर उस कटुता से ख़ाली है जो लज्जाजनक और अश्लील हमलों के प्रत्युत्तर में उत्पन्न हुआ करती है। इतनी अधिक उत्तेजक परिस्थितियों में कैसे ठंडे तरीक़े से क़ानून की रचना की जा रही

है, सुधारात्मक आदेश दिए जा रहे हैं, तत्त्वदर्शितायुक्त आदेश दिए जा रहे हैं और शिक्षा और उपदेश का हक़ अदा किया जा रहा है। इससे केवल यही शिक्षा नहीं मिलती कि हमें उपद्रवों के मुक़ाबले में तीव्र से तीव्र उत्तजना के अवसरों पर भी किस प्रकार ठंडे विचार, विशाल-हृदयता और विवेक से काम लेना चाहिए, बल्कि इससे इस बात का भी प्रमाण मिलता है कि यह वाणी मुहम्मद (सल्ल॰) की अपनी रचना नहीं है, किसी ऐसी सत्ता ही की अवतरित की हुई है जो बहुत उच्च स्थान से मानव की परिस्थितियों और मामलों का निरीक्षण कर रही है। और अपने आपमें इन परिस्थितियों और मामलों से अप्रभावित रहकर विशुद्ध निर्देश और मार्गदर्शन के पद का हक़ अदा कर रही है। अगर यह नबी (सल्ल॰) की अपनी वाणी होती तो आपकी अत्यान्तिक उच्च दृष्टि के बावजूद इसमें उस स्वाभाविक कटुता का कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पाया जाता, जो स्वयं अपनी इज़्ज़त और प्रतिष्ठा पर ओछे हमलों को सुनकर एक सज्जन व्यक्ति की भावनाओं में अवश्य ही पैदा हो जाया करती है।



24. सूरा अन-नूर

(मदीना में उतरी–आयतें 64)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) यह एक सूरा है जिसको हमने उतारा है, और इसे हमने अनिवार्य किया है[1] और इसमें हमने साफ़-साफ़ आदेश अवतरित किए हैं शायद कि तुम शिक्षा ग्रहण करो।

(2) व्यभिचारिणी औरत और व्यभिचारी मर्द दोनों में से हर एक को सौ कोड़े मारो।[2] और उनपर तरस खाने की भावना अल्लाह के धर्म के विषय में तुमको न सताए अगर तुम अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रखते हो। और उनको सज़ा देते समय ईमानवालों का एक गिरोह उपस्थित रहे।[3]

(3) व्यभिचारी विवाह न करे मगर व्यभिचारिणी के साथ या बहुदेववादी औरत के साथ। और व्यभिचारिणी के साथ विवाह न करे मगर व्यभिचारी या बहुदेववादी। और यह हराम कर दिया गया है ईमानवालों पर।[4] (4) और जो लोग पाकदामन औरतों पर तोहमत (मित्यारोप) लगाएँ,[5] फिर चार गवाह लेकर न आएँ, उनको अस्सी कोड़े मारो और उनकी गवाही कभी स्वीकार न करो, और वे ख़ुद ही गुनहगार हैं, (5) सिवाय उन लोगों के जो इस हरकत के बाद तौबा कर लें और सुधार कर लें अल्लाह अवश्य (उनके

---

1. अर्थात् जो बातें इस सूरा में कही गई हैं वे 'सिफ़ारिशें' नहीं हैं कि आपका मन चाहे तो मानें वरना जो कुछ चाहें करते रहें, बल्कि ये निश्चित आदेश हैं जिनका पालन करना अनिवार्य है। अगर ईमानवाले हो तो इनका पालन करना तुम्हारा कर्तव्य है।
2. व्यभिचार के सम्बन्ध में आरम्भिक आदेश सूरा 4 (निसा) आयत 15 में आ चुका है। अब उसकी यह निश्चित रूप से सज़ा नियत कर दी गई। यह सज़ा उस रूप में है जबकि व्यभिचारी मर्द अविवाहित या व्यभिचारिणी औरत अविवाहित हो। पवित्र क़ुरआन में भी इसकी ओर संकेत मौजूद है, जैसा कि सूरा 4 (निसा) आयत 25 से मालूम होता है। और बहुत-सी हदीसों, नबी (सल्ल॰) और ख़ुलफ़ाए राशिदीन की व्यावहारिक रीति और मुसलिम समुदाय के 'इजमा' (मतैक्य) से भी यह सिद्ध है कि विवाहित होने की स्थिति में व्यभिचार की सज़ा 'रज्म' (पथराव करके मार डालना) है।
3. अर्थात् सज़ा सबके सामने दी जाए ताकि अपराधी की दुर्गति हो, दूसरे लोगों को शिक्षा मिले और यह पाप मुसलिम समाज में फैलने न पाए।

लिए) क्षमाशील और दयावान है।[6]

(6)और जो लोग अपनी बीवियों पर दोषारोपण करें[7] और उनके पास ख़ुद उनके अपने सिवा दूसरे कोई गवाह न हों तो उनमें से एक व्यक्ति की गवाही (यह है कि वह) चार बार अल्लाह की क़सम खाकर गवाही दे कि वह (अपने आरोप में) सच्चा है (7) और पाँचवीं बार कहे कि उसपर अल्लाह की फिटकार हो अगर वह (अपने आरोप में) झूठा हो। (8) और औरत से सज़ा इस तरह टल सकती है कि वह चार बार अल्लाह की क़सम खाकर गवाही दे कि यह व्यक्ति (अपने आरोप में) झूठा है और (9) पाँचवीं बार कहे कि उस बन्दी पर अल्लाह का ग़ज़ब टूटे अगर वह (अपने आरोप में) सच्चा हो।[8] (10) तुम लगों पर अल्लाह की उदार कृपा और उसकी दया न होती और यह बात न

4. अर्थात् तौबा न करनेवाले व्यभिचारी के लिए अगर उचित है तो व्यभिचारिणी ही उचित है, या फिर मुशरिक (बहुदेववादी) औरत। किसी ईमानवाली औरत के लिए वह उचित नहीं है, और हराम है ईमानवालों के लिए कि वे जानते-बुझते अपनी लड़कियाँ ऐसे दुराचारियों को दें। इसी तरह व्यभिचारिणी (जो तौबा न करे) स्त्रियों के लिए यदि उचित हैं तो उन्हीं जैसे व्यभिचारी या मुशरिक (बहुदेववादी) किसी ईमानवाले नेक व्यक्ति के लिए वे योग्य नहीं हैं, और हराम है ईमानवालों के लिए कि जिन औरतों की बदचलनी का हाल उन्हें मालूम हो उनसे वे जानते-बुझते विवाह करें। यह आदेश सिर्फ़ उन्हीं मर्दों और औरतों पर चरितार्थ होता है जो अपनी बुरी नीति पर जमे हों। जो लोग तौबा करके अपना सुधार कर लें उनपर यह लागू नहीं होता, क्योंकि तौबा और सुधार के बाद 'व्यभिचारी' होने का अवगुण उसके साथ लगा नहीं रहता।
5. अर्थात् व्यभिचार का आरोप, और यही आदेश पाकदामन परुषों पर भी व्यभिचार का आरोप लगाने का है। 'शरीअत' की परिभाषा में इस कलंकारोपण को 'क़ज़्फ़' कहा जाता है।
6. इस बात पर शास्त्रवेत्ताओं (फ़क़ीहों) का मतैक्य है कि तौबा से क़ज़्फ़ की सज़ा ख़त्म नहीं होती, इसपर भी इत्तिफ़ाक़ है कि तौबा करनेवाला 'फ़ासिक़' (अवज्ञाकारी) नहीं रहेगा और अल्लाह उसे माफ़ कर देगा। अलबत्ता इसमें मतभेद है कि क्या तौबा कर लेने के बाद उसकी गवाही स्वीकार की जाएगी या नहीं। इनफ़िया इस बात को मानते हैं कि उसकी गवाही स्वीकार न की जाएगी। इमाम शाफ़ई (रह॰), इमाम मालिक (रह॰) और इमाम अहमद (रह॰) उसकी गवाही को स्वीकार करने के योग्य समझते हैं।
7. अर्थात् व्यभिचार का आरोप लगाएँ।

होती कि अल्लाह बड़ा तौबा क़बूल करनेवाला और तत्त्वदर्शी है तो (बीवियों पर आरोप का मामला तुम्हें बड़ी जटिलता में डाल देता)।

(11) जो लोग यह कलंक घड़ लाए हैं वे तुम्हारे ही अन्दर का एक टोला है।[9] इस घटना को अपने लिए बुराई न समझो बल्कि यह भी तुम्हारे लिए भलाईही है।[10] जिसने उसमें जितना हिस्सा लिया उसने उतना ही गुनाह समेटा, और जिस व्यक्ति ने उसकी ज़िम्मेदारी का बड़ा हिस्सा अपने सिर लिया[11] उसके लिए तो बड़ा अज़ाब है। (12) जिस समय तुम लोगों ने उसे सुना था उसी समय क्यों न ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों ने अपने आपसे अच्छा गुमान किया[12] और क्यों न कह दिया कि यह स्पष्ट मिथ्यारोपण है? (13) वे लोग (अपने आरोप के प्रमाण में) चार गवाह क्यों न लाए? अब जबकि वे गवाह नहीं लाए हैं, अल्लाह की दृष्टि में वही झूठे हैं।[13] (14)

8. शरीअत की परिभाषा में इसको 'लिआन' कहते हैं। यह लिआन घर बैठे नहीं हो सकता बल्कि अदालत में होना चाहिए। लिआन की माँग मर्द की ओर से भी हो सकती है और औरत की ओर से भी। इलज़ाम लगाने के बाद लिआन से अगर मर्द पहलू बचाए, या औरत क़सम खाने से बचे तो इसकी सज़ा हनफ़िया के मतानुसार क़ैद है जब तक अपराधी लिआन न करे। और दोनों तरफ़ से लिआन हो जाने के बाद औरत और मर्द एक-दूसरे के लिए हराम हो जाते हैं।
9. यहाँ से आयत 26 तक उस मामले पर वार्तालाप किया गया है जो इतिहास में 'इफ़्क' की घटना के नाम से प्रसिद्ध है, जिसमें मुनाफ़िकों ने हज़रत आइशा (रज़ि॰) पर, अल्लाह की पनाह, व्यभिचार का मिथ्यारोपण किया था और इसकी इतनी चर्चा की थी कि कुछ मुसलमान भी इसमें पड़ गए थे।
10. अर्थ यह है कि घबराओ नहीं, मुनाफ़िकों (कपटचारियों) ने अपनी समझ से तो यह बड़े ज़ोर का वार तुमपर किया है मगर अल्लाह ने चाहा तो यह उन्हीं पर उलटा पड़ेगा और तुम्हारे लिए हितकर सिद्ध होगा।
11. अर्थात् अब्दुल्लाह बिन उबई जो इस आरोप का वास्तविक रचयिता और उपद्रव का वास्तविक प्रवर्तक था।
12. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि अपने लोगों, या अपने समुदाय और अपने समाज के लोगों से अच्छा गुमान क्यों न किया। आयत के शब्द दोनों अर्थों को व्याप्त हैं। लेकिन जो अनुवाद हमने किया है वह ज़्यादा अर्थपूर्ण है। इसका मतलब यह है कि तुममें से हर एक ने क्यों न सोचा कि अगर उसके सामने वह परिस्थिति होती जो हज़रत आइशा (रज़ि॰) को पेश आई थी तो क्या वह व्यभिचार कर सकता था?

अगर तुम लोगों पर दुनिया और आख़िरत में अल्लाह की उदार कृपा और दयालुता न होती तो जिन बातों में तुम पड़ गए थे उनके बदले में बड़ा अज़ाब तुम्हें आ लेता। (15) (तनिक सोचो तो, उस समय तुम कैसी भारी ग़लती कर रहे थे) जबकि तुम्हारी एक ज़बान से दूसरी ज़बान इस झूठ को लेती चली जा रही थी और तुम अपने मुँह से वह कुछ कहे जा रहे थे जिसके सम्बन्ध में तुम्हें कोई ज्ञान न था। तुम उसे एक साधारण बात समझ रहे थे, हालांकि अल्लाह की दृष्टि में यह बड़ी बात थी।

(16) क्यों न इसे सुनते ही तुमने कह दिया कि "हमें ऐसी बात कहनी शोभा नहीं देती, पाक है अल्लाह, यह तो एक बड़ा मिथ्यारोप है।" (17) अल्लाह तुम्हें नसीहत करता है कि आगे कभी ऐसी हरकत न करना अगर तुम ईमानवाले हो। (18) अल्लाह तुम्हें स्पष्टतः आदेश देता है और वह सर्वज्ञ एवं तत्वदर्शी है।

13. यहाँ किसी को यह भ्रम न हो कि यहाँ इलज़ाम के ग़लत होने का प्रमाण और आधार केवल गवाहों के न होने को ठहराया जा रहा है, और मुसलमानों से कहा जा रहा है कि तुम भी सिर्फ़ इस कारण से इसको स्पष्ट रूप से झूठा आरोप घोषित करो कि इलज़ाम लगानेवाले चार गवाह नहीं लाए हैं। यह भ्रम इस घटना को निगाह में न रखने के कारण पैदा होता है जो वास्तव में वहाँ घटित हुई थी। इलज़ाम लगानेवालों ने इलज़ाम इसलिए नहीं लगाया था कि उन्होंने या उनमें से किसी व्यक्ति ने अल्लाह की पनाह अपनी आँखों से वह बात देखी थी जो वे मुख से निकाल रहे थे, बल्कि सिर्फ़ इस आधार पर इतना बड़ा इलज़ाम रच डाला था कि संयोग से हज़रत आइशा (रज़ि॰) क़ाफ़िले से पीछे रह गई थीं और हज़रत सफ़वान बाद में उनको अपने ऊँट पर सवार करके क़ाफ़िले में ले आए थे। कोई बुद्धिमान आदमी भी इस अवसर पर यह कल्पना नहीं कर सकता था कि हज़रत आइशा (रज़ि॰) का इस तरह पीछे रह जाना अल्लाह की पनाह किसी साज़-बाज़ का नतीजा था। साज़-बाज़ करनेवाले इस ढंग से तो साज़-बाज़ नहीं किया करते कि सेनानायक की पत्नी चुपके से क़ाफ़िले के पीछे एक व्यक्ति के साथ रह जाए और फिर वहीं व्यक्ति उसको अपने ऊँट पर बिठाकर दिन-दहाड़े, ठीक दोपहर के समय लिए हुए खुले तौर पर सेना के पड़ाव पर पहुँचे। यह हालत ख़ुद ही इन दोनों की निर्दोषता सिद्ध कर रही थी। इस हालत में अगर इलज़ाम लगाया जा सकता था तो सिर्फ़ इस आधार पर ही लगाया जा सकता था कि कहनेवालों ने अपनी आँखों से कोई मामला देखा हो। वरना क़रीने (परिस्थियाँ) जिनपर ज़ालिमों ने इलज़ाम की आधारशिला रखी थी, किसी सन्देह की गुंजाइश नहीं रखते थे।

(19) जो लोग चाहते हैं कि ईमान लानेवालों के गिरोह में अश्लीलता फैले वे दुनिया और आख़िरत में दुखद सज़ा के भागी हैं, अल्लाह जानता है और तुम नहीं जानते। (20) अगर अल्लाह का अनुग्रह और उसकी दयालुता तुमपर न होती और यह बात न होती कि अल्लाह बड़ा करुणामय और दयावान् है, (तो यह चीज़ जो अभी तुम्हारे बीच फैलाई गई थी बहुत ही बुरे परिणाम दिखा देती)।

(21) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, शैतान के पदचिह्नों पर न चलो। उसका अनुसरण कोई करेगा तो वह तो उसे अश्लीलता और बुराई ही का आदेश देगा। अगर अल्लाह का अनुग्रह और उसकी दयालुता तुमपर न होती तो तुममें से कोई व्यक्ति पाक न हो सकता। मगर अल्लाह ही जिसे चाहता है पाक कर देता है, और अल्लाह सुननेवाला और जाननेवाला है।

(22) तुममें से जो लोग वैभववान और सामर्थ्यवान हैं वे इस बात की क़सम न खा बैठें कि अपने नातेदार, मुहताज और अल्लाह की राह में घरबार छोड़नेवाले लोगों की मदद न करेंगे। उन्हें माफ़ कर देना चाहिए और दरगुज़र करना चाहिए। क्या तुम नहीं चाहते कि अल्लाह तुम्हें माफ़ करे? और अल्लाह का गुण यह है कि वह क्षमाशील और दयावान है।[14]

(23) जो लोग पाकदामन, बेख़बर, ईमानवाली औरतों पर झूठा कलंक लगाते हैं उनपर दुनिया और आख़िरत में फिटकार पड़ी और उनके लिए बड़ा अज़ाब है। (24) वे उस दिन को भूल न जाएँ जबकि उनकी अपनी ज़बानें और उनके अपने हाथ-पाँव उनकी करतूतों की गवाही देंगे। (25) उस दिन अल्लाह वह बदला उन्हें भरपूर दे देगा जिसके वे योग्य हैं और उन्हें मालूम हो जाएगा कि अल्लाह ही सत्य है सच को सच कर दिखानेवाला।

(26) नापाक औरतें नापाक मर्दों के लिए हैं और नापाक मर्द नापाक औरतों के लिए। पाक औरतें पाक मर्दों के लिए हैं और पाक मर्द पाक औरतों के लिए। उनका दामन पाक है उन बातों से जो बनानेवाले बनाते हैं, उनके लिए क्षमा है और सम्मानित

14. यह आयत इस मामले में उतरी है कि इलज़ाम लगानेवालों में जो कुछ भोले-भाले मुसलमान शामिल हो गए थे, उनमें से एक हज़रत अबू बक्र (रज़ि॰) के निकट के नातेदार भी थे जिनपर हज़रत अबू बक्र (रज़ि॰) हमेशा उपकार करते रहते थे। इस दुखद घटना के बाद हज़रत अबू बक्र (रज़ि॰) ने क़सम खा ली कि अब उनके साथ कोई एहसान का मामला न करेंगे। अल्लाह ने इस बात को पसन्द न किया कि सिद्दीक़ अकबर जैसा व्यक्ति माफ़ी और दरगुज़र से काम न ले।

आजीविका।

(27) ऐ लोगो[15] जो ईमान लाए हो, अपने घरों के सिवा दूसरे घरों में प्रवेश न किया करो जब तक कि घरवालों की स्वीकृति न ले लो और घरवालों पर सलाम न भेज लो, यह रीति तुम्हारे लिए अच्छी है। आशा है कि तुम इसका धान रखोगे। (28) फिर यदि वहाँ किसी को न पाओ तो प्रवेश न करो जब तक कि तुमको इजाज़त न मिले,[16] और अगर तुमसे कहा जाए कि वापस चले जाओ तो वापस हो जाओ, यह तुम्हारे लिए ज़्यादा पाकीज़ा तरीक़ा है,[17] और जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उसे ख़ूब जानता है। (29) अलबत्ता तुम्हारे लिए उसमें कोई हरज नहीं है कि ऐसे घरों में प्रवेश करो जो किसी के रहने की जगह न हो और जिनमें तुम्हारे लाभ (या काम) की कोई चीज़ हो।[18] तुम जो कुछ ज़ाहिर करते हो और जो कुछ छिपाते हो, सबकी अल्लाह को ख़बर है।

(30) ऐ नबी, ईमानवाले पुरुषों से कहो कि अपनी निगाहें बचाकर रखें,[19] और अपने गुप्तांगों की रक्षा करें, यह उनके लिए ज़्यादा पाकीज़ा तरीक़ा है, जो कुछ वे करते हैं अल्लाह को उसकी ख़बर रहती है।

(31) और ऐ नबी, ईमानवाली औरतों से कह दो कि अपनी निगाहें बचाकर रखें, और अपने गुप्तांगों की रक्षा करें,[20] और अपना बनाव-शृंगार न दिखाएँ सिवाय

15. सूरा के शुरू में जो आदेश दिए गए थे वे इसलिए थे कि समाज में बुराई उभर आए तो उसका निवारण कैसे किया जाए। अब वे आदेश दिए जा रहे हैं जिनका उद्देश्य यह है कि समाज में सिरे से बुराइयों के जन्म ही को रोक दिया जाए और सांस्कृतिक रीति-रिवाजों का सुधार करके उन कारणों का निवारण कर दिया जाए जिनसे इस तरह की ख़राबियाँ पैदा होती हैं।
16. अर्थात् किसी के ख़ाली घर में प्रवेश करना जाइज़ नहीं, यह और बात है कि घर के मालिक ने आदमी को ख़ुद इस बात की इजाज़त दी हो। उदाहरणार्थ, उसने आपसे कह दिया हो कि अगर मैं मौजूद न हूँ तो आप मेरे कमरे में बैठ जाइएगा, या वह किसी और स्थान पर हो और आपकी सूचना मिलने पर वह कहला भेजे कि आप पधारिए मैं अभी आता हूँ।
17. अर्थात् इसपर बुरा न मानना चाहिए। एक आदमी को हक़ है कि वह किसी से न मिलना चाहे तो इनकार कर दे, या किसी व्यस्तता के कारण मुलाक़ात न कर पा रहा हो तो अपनी असमर्थता प्रकट कर दे।
18. इससे मुराद हैं : होटल, सराय, मेहमानख़ाने, दुकानें, मुसाफ़िरख़ाने आदि जहाँ लोगों के लिए प्रवेश की आम इजाज़त हो।

उसके जो ख़ुद ही ज़ाहिर हो जाए, और अपने सीनों (वक्षस्थलों) पर अपनी ओढ़नियों के आँचल डाले रहें। वे अपना बनाव-शृंगार न ज़ाहिर करें मगर इन लोगों के सामने : पति, बाप, पतियों के बाप,[21] अपने बेटे, पतियों के बेटे,[22] भाई,[23] भाइयों के बेटे, बहनों के बेटे,[24] अपने मेलजोल की औरतें,[25] अपने लौंडी-ग़ुलाम, वे अधीन मर्द जो

19. मूल ग्रन्थ में 'ग़ज़्ज़े बसर' का आदेश दिया गया है जिसका अनुवाद साधारणतया 'निगाह नीची करना या रखना' किया जाता है। लेकिन वास्तव में इस आदेश का अर्थ हर समय नीचे ही देखते रहना नहीं है, बल्कि पूरी तरह निगाह भरकर न देखना, और निगाहों को देखने के लिए बिलकुल आज़ाद न छोड़ देना है। यह अर्थ 'निगाह बचाने' से ठीक व्यक्त होता है, अर्थात् जिस चीज़ को देखना उचित न हो उससे निगाह हटा ली जाए, चाहे इसके लिए आदमी निगाह नीची करे या किसी और तरफ़ उसे बचा ले जाए और यह बात वार्ता के आगे और पीछे के अंशों से भी मालूम होता है कि यह पाबन्दी जिस चीज़ पर लगाई गई है वह है मर्दों का औरतों को देखना, या दूसरे लोगों के गुप्तांगों पर निगाह डालना, या अश्लील दृश्यों पर निगाह जमाना।
20. यह बात ध्यान में रहे कि अल्लाह की शरीअत औरतों से सिर्फ़ उतनी ही अपेक्षा नहीं करती जो मर्दों से उसने की है, अर्थात् निगाह बचाना और गुप्तांगों की रक्षा करनी, बल्कि वह उनसे कुछ और भी अपेक्षा करती है जो उसने मर्दों से नहीं किए हैं। इससे स्पष्ट है कि इस मामले में औरत और मर्द समान नहीं हैं।
21. बाप के अर्थ में दादा, परदादा, और नाना, परनाना भी शामिल हैं। अतः एक औरत अपनी ददिहाल और ननिहाल और अपने पति की ददिहाल और ननिहाल के उन सब बुज़ुर्गों के सामने उसी तरह आ सकती है जिस तरह अपने बाप और ससुर के सामने आ सकती है।
22. बेटों में पोते, परपोते और नाती-परनाती सब सम्मिलित हैं। और इस मामले में सगे, सौतेले का कोई अन्तर नहीं है। अपने सौतेले बच्चों की औलाद के सामने भी औरत उसी तरह आज़ादी के साथ अपनी सज्जा ज़ाहिर कर सकती है जैसे ख़ुद अपनी सन्तान और सन्तान की सन्तान के सामने कर सकती है।
23. 'भाइयों' में सगे और सौतेले और माँ-जाये भाई सब शामिल हैं।
24. भाई-बहनों से मुराद तीनों तरह के भाई-बहन हैं और उनेक बेटे, पोते और नाती सब उनकी औलाद के अन्तर्गत आते हैं।
25. इससे स्वतः यह विदित होता है कि आवारा और कुचरित्र औरतों के सामने शिष्ट मुसलिम औरत को अपने बनाव-शृंगार का प्रदर्शन न करना चाहिए।

किसी और तरह का प्रयोजन (ग़र्ज़) न रखते हों,[26] और वे बच्चे जो औरतों की छिपी बातों से अभी परिचित न हुए हों। वे अपने पाँव ज़मीन पर मारती हुई न चला करें कि अपना जो शृंगार उन्होंने छिपा रखा हो वह लोगों को मालूम हो जाए।

ऐ ईमानवालो, तुम सब मिलकर अल्लाह से तौबा करो, आशा है कि सफलता प्राप्त करोगे।

(32) तुममें से जो लोग बेजोड़ के (अविवाहित) हों, और तुम्हारे लौंडी-ग़ुलामों में से जो नेक हों, उनके निकाह कर दो। अगर वे ग़रीब हों तो अल्लाह अपने अनुग्रह से उनको धनी कर देगा, अल्लाह बड़ी समाईवाला और सर्वज्ञ है। (33) और जो निकाह का अवसर न पाएँ उन्हें चाहिए कि पाकदामनी अपनाएँ, यहाँ तक कि अल्लाह अपने अनुग्रह से उन्हें धनी कर दे।

और जिन लोगों पर तुम्हें स्वामित्व का अधिकार प्राप्त हो उनमें से जो लिखा-पढ़ी की याचना करें उनसे लिखा-पढ़ी कर लो[27] अगर तुम्हें मालूम हो कि उनमें भलाई है,[28] और उनको उस माल में से दो जो अल्लाह ने तुम्हें दिया है।[29]

और अपनी लौंडियों को अपने दुनिया के लाभों के लिए वेश्यावृत्ति पर विवश न करो[30] जबकि वे ख़ुद पाकदामन रहना चाहती हों,[31] और जो कोई उनको विवश करे तो इस बल प्रयोग के बाद अल्लाह उनके लिए क्षमाशील और दयावान् है।

26. अर्थात् अदीन होने के कारण उनके सम्बन्ध में यह शक करने की गुंजाइश न हो कि वे उस घर की औरतों के मामले में कोई अनुचित इच्छा करने का साहस कर सकेंगे।
27. लिखा-पढ़ी का अर्थ यह है कि कोई गुलाम या लौंडी अपनी आज़ादी के लिए अपने स्वामी को बदले में कुछ अदा करने का प्रस्ताव रखे और जब स्वामी उसे स्वीकार कर ले तो दोनों के बीच शर्तों की लिखा-पढ़ी हो जाए।
28. भलाई से मुराद दो चीज़ें हैं : एक यह कि गुलाम में लिखित माल अदा करने की योग्यता हो। दूसरे यह कि उसमें इतनी दियानतदारी और सत्यवादिता मौजूद हो कि उसके वचन पर भरोसा करके समझौता किया जा सके।
29. सामान्य आदेश है। मालिक भी कुछ न कुछ धनराशि माफ़ कर दें। मुसलमान भी उनकी सहायता करें। बैतुलमाल (राजकोष) से भी उनकी सहायता की जाए।
30. अज्ञानकाल में अरबवाले अपनी लौंडियों से वेश्यावृत्ति का पेशा कराते थे और उनकी कमाई खाते थे, इस्लाम ने इस पेशे को वर्जित कर दिया।

(34) हमने स्पष्टतः पथ-प्रदर्शन करनेवाली आयतें तुम्हारे पास भेज दी हैं, और उन क़ौमों के शिक्षाप्रद उदाहरण भी हम तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत कर चुके हैं जो तुमसे पहले हो गुज़री हैं और वे उपदेश हमने दे दिए हैं जो डरनेवालों के लिए होते हैं।

(35) अल्लाह आसमानों और ज़मीन का प्रकाश (नूर) है।[32] (ब्रह्माण्ड में) उसके प्रकाश की मिसला ऐसी है जैसे एक ताक़ (आला) में चिराग़ रखा हुआ हो, चिराग़ एक फ़ानूस में हो, फ़ानूस का हाल यह हो कि जैसे मोती की तरह चमकता हुआ तारा, और वह चिराग़ ज़ैतून के एक ऐसे बरकतवाले पेड़ के तेल से रौशन किया जाता हो जो न पूर्वी हो न पश्चिमी, जिसका तेल आप ही आप भड़का पड़ता हो चाहे आग उसको न लगे, (इस तरह) प्रकाश पर प्रकाश (बढ़ने के सभी साधन एकत्र हो गए हो)।[33] अल्लाह अपने प्रकाश की ओर जिसका चाहता है पथ-प्रदर्शन करता है, वह लोगों को मिसालों से बात समझाता है, वह हर चीज़ से ख़ूब परिचित है। (36,37) (उसके प्रकाश की ओर पथ-प्रदर्शन पानेवाले) उन घरों में पाए जाते हैं जिन्हें ऊँचा करने का, और जिनमें अपने नाम की याद की अल्लाह ने इजाज़त दी है। उनमें ऐसे लोग

31. अर्थय यह है कि अगर लौंडी ख़ुद अपनी इच्छा से व्यभिचार करती है तो वह अपने अपराध की ख़ुद ज़िम्मेदार है। क़ानून उसके अपराध पर उसी को पकड़ेगा, लेकिन अगर उसका मालिक वेश्यावृत्ति पर उसे बाध्य करे तो ज़िम्मेदारी मालिक की है और वही पकड़ा जाएगा।
32. अर्थात् ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी प्रकटन है उसी के प्रकाश (नूर) के कारण हैं।
33. इस मिसाल में 'चिराग़' से अल्लाह की सत्ता की और 'ताक' से विश्व की उपमा दी गई है, और फ़ानूस से मुराद वह परदा है जिसमें ईश्वर ने अपने आपको लोगों की निगाहों से छिपा रखा है। मानो यह परदा वास्तव में अप्रकटता का नहीं, प्रकटन की अतिशयता का परदा है, लोगों की निगाह उसे देखने में इसलिए असमर्थ है कि प्रकाश इतना तीव्र, व्यापक और घेरे हुए है जिसे सीमित नेत्र-ज्योतियाँ पकड़ नहीं सकतीं। रही यह बात की "चिराग़ ज़ैतून के एक ऐसे पेड़ के तेल से रौशन किया जाता हो जो न पूर्वी हो न पश्चिमी", तो यह केवल चिराग़ की प्रकाश-पूर्णता और उसके आधिक्य की कल्पना कराने के लिए है। क्योंकि प्राचीन समय में ज़्यादा से ज़्यादा प्रकाश ज़ैतून के तेल के चिराग़ों से प्राप्त किया जाता था, और उनमें सबसे ज़्यादा प्रकाशवाला चिराग़ वह होता था जो ऊँची और खुली जगह के पेड़ से निकाले हुए तेल का हो। और यह जो कहा कि "उसका तेल आप से आप भड़का पड़ता हो चाहे आग उसको न लगे", इससे भी चिराग़ के प्रकाश के ज़्यादा से ज़्यादा तेज़ होने की कल्पना कराना उद्देश्य है।

सुबह और शाम उसकी तसबीह करते हैं जिन्हें व्यापार और क्रय-विक्रय अल्लाह की याद से और नमाज़ क़ायम करने और ज़कात (दान) देने से ग़ाफ़िल नहीं करता। वे उस दिन से डरते रहते हैं जिसमें दिल उलटने और आँखें पथरा जाने की नौबत आ जाएगी, (38) (और वे यह सब कुछ इसलिए करते हैं) ताकि अल्लाह उनके अच्छे से अच्छे कर्मों का बदला उनको दे और उन्हें और ज़्यादा अपने अनुग्रह से प्रदान करे, अल्लाह जिसे चाहता है बेहिसाब देता है। (39) (इसके विपरीत) जिन्होंने इनकार किया उनके कर्मों की मिसाल ऐसी है जैसे चटियल मैदान मेंमरीचिका, कि प्यासा उसको पानी समझे हुए था, मगर जब वहाँ पहुँचा तो कुछ न पाया, बल्कि वहाँ उसने अल्लाह को मौजूद पाया, जिसने उसका पूरा-पूरा हिसाब चुका दिया, और अल्लाह को हिसाब लेते देत नहीं लगती। (40) या फिर उसकी मिसाल ऐसी है जैसे एक गहरे समुद्र में अंधकार, कि ऊपर एक मौज छाई हुई है, उसपर एक और मौज, और उसके ऊपर बादल, अन्धकार पर अन्धकार छाया हुआ है, आदमी अपना हाथ निकाले तो उसे भी न देखने पाए। जिसे अल्लाह प्रकाश (नूर) न प्रदान करे उसके लिए फिर कोई प्रकाश नहीं।

(41) क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह की तसबीह कर रहे हैं वे सब जो आसमानों और ज़मीन में हैं और वे पक्षी जो पंख पैलाए उड़ रहे हैं? हर एक अपनी नमाज़ और तसबीह का तरीक़ा जानता है, और ये सब जो कुछ करते हैं अल्लाह उसे जानता होता है। (42) आसमानों और ज़मीन का राज्य अल्लाह ही के लिए है और उसी की ओर सबको पलटना है।

(43) क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह बादल को धीरे-धीरे चलाता है, फिर उसके टुकड़ों को परस्पर जोड़ता है, फिर उसे समेटकर एक घना बादल बना देता है, फिर तुम देखते हो कि उसके ख़ोल में से वर्षा की बूँदें टपकती चली आती हैं। और वह आसमान से, उन पहाड़ों की बदौलत जो उसमें ऊँचे उठे हुए हैं,[34] ओले बरसाता है, फिर जिसे चाहता है उनको हानि पहुँचाता है और जिसे चाहता है उनसे बचा लेता है। उसकी जिबली की चमक निगाहों को चौधियाई हुई किए देती है। (44) रात और दिन का उलट-फेर वही कर रहा है। इसमें एक शिक्षा है आँखोवालों के लिए।

34. इससे मुराद ठंड से जमे हुए बादल भीहो सकते हैं जिन्हें लक्षण के रूप में आसमान के पहाड़ कहा गया हो, और ज़मीन के पहाड़ भीहो सकते हैं जोआसमान में ऊँचाई तक उठे हुए हैं, जिनकी चोटियों पर जमी हुई बर्फ़ के प्रभाव से बहुधा ऐसा होता है कि हवा इतनी ठण्डी हो जाती है कि बादल जमने लगते हैं और ओलों के रूप में वर्षा होने लगती है।

(45) और अल्लाह ने हर जीवधारी को एक तरह के पानी से पैदा किया। कोई पेट के बल चल रहा है तो कोई दो टाँगों पर और कोई चार टाँगों पर। जो कुछ वह चाहता है पैदा करता है, उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(46) हमने स्पष्ट रूप से सत्य को बतानेवाली आयतें उतार दी हैं, आगे सीधे मार्ग की ओर पथ-प्रदर्शन अल्लाह ही जिसे चाहता है प्रदान करता है।

(47) ये लोग कहते है कि हम ईमान लाए अल्लाह और रसूल पर और हमने आज्ञापालन स्वीकार किया, मगर इसके बाद इनमें से के गिरोह (आज्ञापालन से) मुँह मोड़ जाता है। ऐसे लोग हरगिज़ ईमानवाले नहीं हैं। (48) जब उनको बुलाया जाता है अल्लाह और रसूल की ओर, ताकि रसूल उनके आपस के मुक़द्दमे का फ़ैसला करे तो उनमें से एक फ़रीक़ कतरा जाता है। (49) अलबत्ता अगर हक़ उनके पक्ष में हो तो रसूल के पास बड़े आज्ञाकारी बनकर आ जाते हैं। (50) क्या इनके दिलों को (कपट का) रोग लगा हुआ हैं? या ये शक में पड़े हुए हैं? या इनको यह शक है कि अल्लाह और उसका रसूल इनपर ज़ुल्म करेगा? वास्तविकता यह है कि ज़ालिम तो ये लोग ख़ुद हैं। (51) ईमान लानेवालों का काम तो यह है कि जब वे अल्लाह और रसूल की ओर बुलाएँ जाएँ ताकि रसूल उनके मुक़द्दमे का फ़ैसला करे तो वे कहें कि हमने सुना और आज्ञा का पालन किया। (52) ऐसे ही लोग सफलता प्राप्त करनेवाले हैं, और सफल वही हैं जो अल्लाह और रसूल की आज्ञा का पालन करें और अल्लाह से डरें और उसकी अवज्ञा से बचें।

(53) ये (मुनाफ़िक़) अल्लाह के नाम से कड़ी-कड़ी क़समें खाकर कहते हैं कि ''आप हुक्म दें तो हम घरों से निकल खड़े हों।'' उनसे कहो, ''क़समें न खाओ, तुम्हारे आज्ञापलन का हाल मालूम है, तुम्हारी करतूतों से अल्लाह बेख़बर नहीं है।'' (54) कहो, ''अल्लाह के आज्ञाकारी बनो और रसूल के आदेशाधीन बनकर रहो लेकिन अगर तुम मुँह फेरते हो तो ख़ूब समझ लो कि रसूल पर जिस कर्तव्य का भार रखा गया है उसका ज़िम्मेदार वह है और तुमपर जिस कर्तव्य का बोझ डाला गया है उसके ज़िम्मेदार तुम। उसकी आज्ञा का पालन करोगे तो ख़ुद ही मार्ग पाओगे वरना रसूल की ज़िम्मेदारी इससे ज़्यादा कुछ नहीं है कि स्पष्ट रूप से आदेश पहुँचा दे।''

(55) अल्लाह ने वादा किया है तुममें से उन लोगों के साथ जो ईमान लाएँ और अच्छे कर्म करें कि वह उनको उसी तरह ज़मीन में ख़लीफ़ा बनाएगा जिस तरह उनसे पहले गुज़रे हुए लोगों को बना चुका है, उनके लिए उनके उस धर्म को मज़बूत बुनियादों पर स्थापित कर देगा जिसे अल्लाहने उनके हक़ में पसन्द किया है, और उनकी

(वर्तमान) भय की दशा को निश्चिन्तता से बदल देगा, बस वे मेरी बन्दगी करें और मेरे साथ किसी को साझी न करें।[35] और जो इसके बाद कुफ़्र करें[36] तो ऐसे ही लोग अवज्ञाकारी हैं। (56) नमाज़ क़ायम करो, ज़कात दो, और रसूल की आज्ञा का पालन करो, उम्मीद है कि तुमपर दया की जाएगी। (57) जो लोग इनकार कर रहे हैं उनके बारे में इस भ्रम में न रहो कि वे ज़मीन में अल्लाह को विवश कर देंगे। उनका ठिकाना जहन्नम है और वह बड़ा ही बुरा ठिकाना है।

(58) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, ज़रूरी है कि तुम्हारे लौंडी-ग़ुलाम और तुम्हारे वे बच्चे जो अभी बुद्धिमता को नहीं पहुँचे हैं, तीन समयों में इजाज़त लेकर तुमहारे पास आया करें : सुबह की नमाज़ से पहले, और दोपहर को जबकि तुम कपड़े उतारकर रख देते हो, और इशा (रात्रि) की नमाज़ के बाद। ये तीन समय तुम्हारे लिए परदे के समय हैं। इनके बाद बिना इजाज़त के आएँ तो न तुमपर कोई गुनाह है न उनपर, तुम्हें एक-दूसरे के पास बार-बार आना ही होता है। इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिए अपने कथनों का स्पष्टीकरण करता है, और वह सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है। (59) और जब तुमहारे बच्चे बुद्धिमत्ता की आयु को पहुँच जाएँ तो चाहिए कि उसी तरह इजाज़त लेकर आया करें जिस तरह उनके बड़े इजाज़त लेते रहे हैं, इस तरह अल्लाह अपनी आयतें तुम्हारे सामने खोलता है और वह सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है।

(60) और जो औरतें जवानी को पार कर चुकी हों, विवाह की चाहत न रखती हो, वे अगर अपनी चादर उतारकर रख दें तो उनपर कोई गुनाह नहीं, शर्त वह है कि बनाव-शृंगार का प्रदर्शन करनेवाली न हों। इसपर भी वे हयादारी ही बरतें तो उनके लिए अच्छा है, और अल्लाह सब कुछ सुनता और जानता है।

(61) कोई हरज की बात नहीं अगर कोई अन्धा, या लंगड़ा, या बीमार (किसी के घर से खा ले) और न तुम्हारे लिए इसमें कोई हरज है कि अपने घरों से खाओ या अपने बाप-दादा के घरों से, या अपनी माँ, नानी के घरों से, या अपने भाइयों के घरों से, या अपने बहनों के घरों से, या अपने चचाओं के घरों से, या अपनी फूफियों के घरों

35. कुछ लोग इसका यह अर्थ समझ बैठे हैं कि जिसको भी दुनिया में हुकूमत हासिल है उसे ख़िलाफ़त हासिल है। हालाँकि आयात में यह कहा गया है कि जो ईमानवाले होंगे अल्लाह उनको ख़िलाफ़त प्रदान करेगा।

36. इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि ख़िलाफ़त पाकर कृतघ्न हो जाए, और यह भी हो सकता है कि मुनाफ़िक़त (कपटाचार) की नीति पर उतर आए कि देखने में तो ईमानवाला हो और वास्तव में ईमान से वंचित।

से, या अपने मामाओं के घरों से, या अपनी ख़ालाओं के घरों से, या उनके घरों से जिनकी कुंजियाँ तुम्हें सौंपी गई हों, या अपने दोस्तों के घरों से। इसमें भी कोई हरज नहीं कि तुम लोग मिलकर खाओ या अलग-अलग। अलबत्ता जब घरों में प्रवेश किया करो तो अपने लोगों को सलाम किया करो, अच्छी दुआ अल्लाह की ओर से नियत ही हुई, बड़ी बरकतवाली और पाक। इस तरह अल्लाह तुम्हारे सामने आयतें बयान करता है, आशा है कि तुम समझ-बूझ से काम लोगे।

(62) ईमानवाले तो वास्तव में वहीं हैं जो अल्लाह और उसके रसूल को दिल से मानें और जब किसी सामूहिक काम के अवसर पर रसूल के साथ हों तो उससे इजाज़त लिए बिना न जाएँ। ऐ नबी, जो लोग तुमसे इजाज़त माँगते हैं वही अल्लाह और रसूल के माननेवाले हैं, अतः जब वे अपने किसी काम से इजाज़त माँगे तो जिसे तुम चाहो इजाज़त दे दिया करो और ऐसे लोगों के लिए अल्लाह से माफ़ी की दुआ किया करो, अल्लाह यक़ीनन क्षमाशील और दयावान् है।

(63) मुसलमानो, अपने बीच रसूल के बुलाने को आपस में एक-दूसरे जैसा बुलाना न समझ बैठो। अल्लाह उन लोगों को ख़ूब जानता है जो तुममें ऐसे हैं कि एक-दूसरे की आड़ लेते हुए चुपके से सटक जाते हैं। रसूल के आदेश का उल्लंघन करनेवालों को डरना चाहिए कि वे किसी आज़माइश में न पड़ जाएँ या उनपर दुखद यातना न आ जाए। (64) सावधान रहो, आसमान और ज़मीन में जो कुछ है अल्लाह का है। तुम जिस नीति पर भी हो अल्लाह उसको जानता है। जिस दिन लोग उसकी ओर पलटाए जाएँगे वह उन्हें बता देगा कि वे क्या कुछ करके आए हैं। वह हर चीज़ का ज्ञान रखता है।



25. अल-फ़ुरक़ान

नाम

सूरा की पहली ही आयत "बहुत ही बरकतवाला है वह जिसने यह फ़ुरक़ान (कसौटी) अवतरित किया," से उद्धृत है। यह भी क़ुरआन की अधिकतर सूरतों के नामों की तरह चिह्न के रूप में हैं, न कि विषय-वस्तु के शीर्षक के रूप में। फिर भी सूरा के विषय और इस नाम के साथ एक निकटवर्ती अनुकूलता पाई जाती है, जैसा कि आगे चलकर मालूम होगा।

अवतरणकाल

वर्णन-शैली और वार्ताओं पर विचार करने से साफ़ पता चलता है कि इसका अवतरणकाल भी वही है जो सूरा 23 (मोमिनून) आदि का है, अर्थात् मक्का निवास का मध्यकाल।

विषय और वार्ताएँ

इसमें उन सन्देहों और आक्षेपों की समीक्षा की गईहै, जो क़ुरआन और मुहम्मद (सल्ल॰) की पैग़म्बरी और आपकी प्रस्तुत की गई शिक्षा पर मक्का के क़ाफ़िरों की ओर से प्रस्तुत किए जाते थे। उनमें से एक-एक का जँचा-तुला उत्तर दिया गया है और साथ-साथ सत्य आमंत्रण की ओर से मुँह मोड़ने के बुरे परिणाम भी साफ़-साफ़ बताए गए हैं। अन्त में सूरा 23 (मोमिनून) की तरह ईमानवालों के नैतिक गुणों की एक रूपरेखा खींचकर जनसामान्य के सामने रख दी गई है कि इस कसौटी पर कसकर देख लो, कौन खोटा है और कौन खरा है। एक ओर इस आचार और चरित्र के लोग हैं जो मुहम्मद (सल्ल॰) की शिक्षा से अब तक तैयार हुए हैं और भविष्य में तैयार करने की कोशिश हो रही है। दूसरी ओर नैतिकता का वह दृष्टान्त है जो अरब के जनसामान्य में पाया जाता है और जिसे बाक़ी रखने के लिए अज्ञान के ध्वजवाहक एड़ी-चोटी का ज़ोर लगा रहे हैं। अब स्वयं फ़ैसला करो कि इन दोनों नमूनों में से किसे पसन्द करते हो? यह एक शब्दमुक्त प्रश्न था जो अरब के हर निवासी के सामने रख दिया गया, और कुछ थोड़े वर्षों के भीतर एक छोटी-सी अल्पसंख्या को छोड़कर संपूर्ण जाति ने इसका जो उत्तर दिया वह समय के पत्र पर अंकित हो चुका है।



25. सूरा अल-फ़ुरक़ान

(मक्का में उतरी–आयतें 77)

अल्लाह के नाम से बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) बहुत ही बरकतवाला है वह जिसने यह फ़ुरक़ान (कसौटी) अपने बन्दे पर अवतरित किया ताकि सारे जहानवालों के लिए सावधान कर देनेवाला हो (2)—वह जो ज़मीन और आसमानों के राज का स्वामी है, जिसने किसी को बेटा नहीं बनाया है, जिसके साथ राज में कोई साझी नहीं है, जिसने हर चीज़ को पैदा किया फिर उसका एक अन्दाज़ा ठहराया। (3) लोगों ने उसे छोड़कर ऐसे पूज्य बना लिए जो किसी चीज़ को पैदा नहीं करते बल्कि ख़ुद पैदा किए जाते हैं, जो ख़ुद अपने लिए भी किसी लाभ या हानि का अधिकार नहीं रखते, जो न मार सकते हैं, न जिन्दा रख सकते हैं, न मरे हुए को फिर उठा सकते हैं।

(4) जिन लोगों ने नबी की बात मानने से इनकार कर दिया है वे कहते है कि "यह फ़ुरक़ान (कसौटी) एक मनघड़त चीज़ है जिसे इस व्यक्ति ने आप ही घड़ लिया है और कुछ दूसरे लोगों ने इस काम में इसकी मदद की है।" बड़ा ज़ुल्म और सख़्त झूठ है जिसपर ये लोग उतर आए हैं। (5) कहते हैं, "ये पुराने लोगों की लिखी हुई चीज़ें हैं जिन्हें यह व्यक्ति नक़ल कराता है और वे इसे सुबह व शाम सुनाई जाती हैं।" (6) ऐ नबी, उनसे कह दो कि "इसे अवतरित किया है उसने जो ज़मीन और आसमानों का भेद जानाता है।" वास्तव में वह बड़ा क्षमाशील और दयावान् है।

(7) कहते हैं, "यह कैसा रसूल है जो खाना खाता है और बाज़ारों मे चलता-फिरता है? क्यों न इसके पास कोई फ़रिश्ता भेजा गया जो इसके साथ रहता और (न माननेवालों को) धमकाता? (8) या और कुछ नहीं तो इसके लिए कोई ख़ज़ाना ही उतार दिया जाता, या इसके पास कोई बाग़ ही होता जिससे यह (निश्चिन्त होकर) रोज़ी प्राप्त करता।" और ये ज़ालिम कहते हैं, "तुम लोग तो एक जादू के मारे हुए आदमी के पीछे लग गए हो। (9) देखो, कैसे-कैसे तर्क ये लोग तुम्हारे आगे प्रस्तुत कर रहे हैं, ऐसे बहके हैं कि कोई ठिकाने की बात इनको नहीं सुझती। (10) बड़ी बरकतवाला है वह जो अगर चाहे तो उनकी प्रस्तावित चीज़ों से भी ज़्यादा बढ़-चढ़कर तुमको दे सकता है, (एक नहीं) बहुत-से बाग़ निके नीचे नहरें बहती हों, और बड़े-बड़े महल।

(11) वास्तविक बात यह है कि ये लोग "उस घड़ी" को झुठला चुके हैं[1]—और

1. अर्थात् क़ियामत को।

जो उस घड़ी को झुठलाए उसके लिए हमने भड़कती हुई आग जुटा रखी है। (12) वह जब दूर से इनको देखेगी तो ये उसके प्रकोप और जोश की आवाज़े सुन लेंगे। (13) और जब ये हाथ-पाँव बँधे उसमें एक तंग जगह ठूँसे जाएँगे तो अपनी मौत को पुकारने लगेंगे, (14) (उस समय उनसे कहा जाएगा) आज एक मौत को नहीं बहुत-सी मौतों को पुकारो।

(15) इनसे पूछो यह परिणाम अच्छा है या वह शाश्वत जन्नत (स्वर्ग) जिसका वादा अल्लाह से डरनेवाले परहेज़गारों से किया गया है जो उनके कर्म का बदला और उनके सफ़र की अन्तिम मंज़िल होगी, (16) जिसमें उनकी हर इच्छा पुरी होगी, जिसमें वे हमेशा-हमेशा रहेंगे, जिसका प्रदान करना तुम्हारे रब के ज़िम्मे एक ऐसा वादा है जिसका पूरा करना अनिवार्य है।

(17) और वही दिन होगा जबकि (तुम्हारा रब) इन लोगों को भी घेर लाएगा और इनके उन पूज्यों को भी बुला लेगा जिन्हें आज ये अल्लाह को छोड़कर पूज रहे हैं, फिर वह उनसे पूछेगा, ''क्या तुमने मेरे इन बन्दों को पथभ्रष्ट किया था? या ये ख़ुद सन्मार्ग से भटक गए थे?'' (18) वे निवेदन करेंगे, ''पाक है आपकी सत्ता, हमारी तो यह मजाल न थी कि आपके सिवा किसी को अपना संरक्षक (वली) बनाएँ। मगर आपने इनको और इनके बाप-दादा को भरपूर जीनव-सामग्री दी यहाँ तक कि ये शिक्षा भूल गए और दुर्भाग्यग्रस्त होकर रहे।'' (19) यूँ झुठला देंगे वे (तुम्हारे पूज्य) तुम्हारी उन बातों को जो आज तुम कह रहे हो,[2] फिर तुम न अपनी विपत्ति को टाल सकोगे न कहीं से मदद पा सकोगे और जो भी तुममें से ज़ुल्म करे उसे हम कठोर अज़ाब का मज़ा चखाएँगे।

(20) ऐ नबी, तुमसे पहले जो रसूल भी हमने भेजे थे वे सब भी खाना खानेवाले और बाज़ारों में चलने-फिरनेवाले लोग ही थे। वास्तव में हमने तुम लोगों को एक दूसरे के लिए आज़माइश का साधन बना दिया है।[3] क्या तुम सब्र करते हो?[4] तुम्हारा रब सब कुछ देखता है।

2. विषय वस्तु से स्वतः व्यक्त हो रहा है कि इन आयतों मे पूज्यों से मुराद मूर्तियाँ, या चाँद, सूरज आदि नहीं हैं, बल्कि फ़रिश्ते और अच्छे मनुष्य हैं जिनको दुनिया में पूज्य बना लिया गया था।
3. अर्थात रसूल और ईमानवालों के लिए इनकार करनेवाले आज़माइश हैं और इनकार करनेवालों के लिए रसूल और ईमानवाले।

(21) जो लोग हमारे सामने पेश होने की आशंका नहीं रखते वे कहते हैं, ''क्यों न फ़रिश्ते हमारे पास भेजे जाएँ? या फिर हम अपने रब को देखें।'' बड़ा घमण्ड ले बैठे ये अपने जी में और सीमा से आगे निकल गए ये अपनी सरकशी में। (22) जिस दिन ये फ़रिश्तों को देखेंगे वह अपराधियों के लिए किसी ख़ुशख़बरी का दिन न होगा। चीख़ उठेंगे कि अल्लाह की पनाह, (23) और जो कुछ भी उनका किया-धरा है उसे लेकर हम धूल की तरह उड़ा देंगे। (24) बस वही लोग जो जन्नत (स्वर्ग) के अधिकारी है उस दिन अच्छी जगह ठहरेंगे और दोपहर गुज़ारने के लिए अच्छा स्थल पाएँगे। (25) आसमान को चीरता हुआ एक बादल उस दिन प्रकट होगा और फ़रिश्तों के परे के परे उतार दिए जाएँगे। (26) उस दिन वास्तविक राज सिर्फ़ रहमान (दयावान ईश्वर) का ही होगा। और वह इनकार करनेवालों के लिए बड़ा कठिन दिन होगा! (27) ज़ालिम व्यक्ति अपने हाथ चबाएगा और कहेगा, क्या यही अच्छा होता कि मैंने रसूल का साथ दिया होता। (28) हाय मेरा दुर्भाग्य, काश मैंने अमुक व्यक्ति को मित्र न बनाया होता! (29) उसके बहकावे में आकर मैंने वह नसीहत न मानी जो मेरे पास आई थी, शैतान इनसान के हक़ में बड़ा ही बेवफ़ा निकला।'' (30) और रसूल कहेगा कि ''ऐ मेरे रब, मेरी क़ौम के लोगों ने इस क़ुरआन को मज़ाक़ का विषय बना लिया था।''

(31) ऐ नबी, हमने तो इसी तरह अपराधियों को हर नबी का शत्रु बनाया है और तुम्हारे लिए तुम्हारा रब ही पथप्रदर्शन और मदद को काफ़ी है।

(32) इनकार करनेवाले कहते हैं, ''इस व्यक्ति पर सारा क़ुरआन एक समय में क्यों न उतार दिया गया?''—हाँ ऐसा इसलिए किया गया है कि इसको अच्छी तरह हम तुम्हारे मन में बिठाते रहें और (इसी उद्देश्य से) हमने इसको एक विशेष क्रम के साथ अलग-अलग भागों का रूप दिया है (33) और (इसमें यह प्रयोजन भी है) कि जब कभी वह तुम्हारे सामने कोई निराली बात (या विचित्र प्रश्न) लेकर आए, उसका ठीक उत्तर समय पर हमने तुम्हें दे दिया और उत्तम ढंग से बात खोल दी (34)—जो लोग औंधे मुँह जहन्नम की ओर ढकेले जानेवाले हैं उनका ठिकाना बहुत बुरा है और उनकी राह बहुत ही ग़लत।

4. अर्थात् इस मसलहत को समझ लेने के बाद क्या अब तुमको सन्तोष हो गया कि आज़माइश की यह हालत भलाई के उस उद्देश्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है जिसके लिए तुम काम कर रहे हो? क्या अब तुम वे चोटें खाने पर राज़ी हो जो इस परीक्षा की अवधि में लगनी अवश्यभावी हैं?

(35) हमने मूसा को किताब दी[5] और उसके साथ उसके भाई हारून को सहायक के रूप में लगाया (36) और उनसे कहा कि जाओ उस क़ौम की ओर जिसने हमारी आयतों को झुठला दिया है। आख़िरकार उन लोगों को हमने तबाह करके रख दिया। (37) यही हाल नूह की क़ौमवालों का हुआ जब उन्होंने रसूलों को झुठलाया। हमने उनको डुबो दिया और दुनिया भर के लोगों के लिए एक शिक्षाप्रद निशान बना दिया और उन ज़ालिमों के लिए एक दर्दनाक अज़ाब हमने जुटा रखा है। (38) इसी तरह आद और समूद और अर-रसवाले[6] और बीच की शताब्दियों के बहुत-से लोग तबाह किए गए। (39) उनमें से हर एक को हमने (पहले तबाह होनेवालों की) मिसालें दे-देकर समझाया और आख़िरकार हर एक को तबाह कर दिया। (40) और उस बस्ती पर तो इनका गुज़र हो चुका है जिसपर अत्यन्त बुरी वर्षा बरसाई गई थी।[7] क्या इन्होंने उसका हाल देखा न होगा? मगर ये मौत के बाद दूसरी ज़िन्दगी की आशा ही नहीं रखते।

(41) ये लोग जब तुम्हें देखते हैं तो तुम्हारा मज़ाक़ बना लेते हैं। (कहते हैं) "क्या यह व्यक्ति है जिसे अल्लाह ने रसूल बनाकर भेजा है? (42) इसने तो हमें पथभ्रष्ट करके अपने पूज्यों से विमुख ही कर दिया होता अगर हम उनकी श्रद्धा पर जम न गए होते।" अच्छा, वह समय दूर नहीं है जब अज़ाब देखकर इन्हें ख़ुद मालूम हो जाएगा कि कौन गुमराही में दूर निकल गया था।

5. यहाँ किताब से मुराद संभवतः वह किताब नहीं है जो मिस्र से निकलने के बाद हज़रत मूसा (अलै०) को दी गई थी, बल्कि इससे मुराद वे आदेश हैं जो पैग़म्बरी के पद पर नियुक्त होने के समय से लेकर मिस्र से निकलने तक हज़रत मूसा (अलै०) को दिए जाते रहे हैं। उनमें वे भाषण भी सम्मिलित हैं जो अल्लाह के हुक्म से हज़रत मूसा (अलै०) ने फ़िरऔन के दरबार में दिए, और वे आदेश भी सम्मिलित हैं जो फ़िरऔन के विरुद्ध प्रयास के बीच आपको दिए जाते रहे हैं। क़ुरआन मजीद में जगह-जगह इन चीज़ों का उल्लेख है, मगर अधिक संभावना यह है कि ये चीज़ें तौरात में शामिल नहीं की गईं। तौरात का आरंभ उन दस आदेशों से होता है जो निर्गमन के बाद तूर सीना पर पाषाण-निर्मित लेखों के रूप में आपको दिए गए थे।
6. रस्स अरबी भाषा में पुराने या अन्धे कुएँ को कहते हैं। अर-रसवाले वे लोग थे जिन्होंने अपने नबी को कुएँ में फेंककर या लटकाकर मार दिया था।
7. अर्थात् लूत (अलै०) की जातिवालों की बस्ती। अत्यन्त बुरी वर्षा से मुराद पत्थरों की वर्षा है।

(43) कभी तुमने उस व्यक्ति की हालत पर विचार किया है जिसने अपने मन की इच्छा को अपना पूज्य बना लिया हो? क्या तुम ऐसे व्यक्ति को सीधे मार्ग पर लाने का ज़िम्मा ले सकते हो? (44) क्या तुम समझते हो कि उनमें से ज़्यादातर लोग सुनते और समझते हैं? ये तो जानवरों की तरह हैं, बल्कि उनसे भी गए गुज़रे।

(45) तुमने देखा नहीं कि तुम्हारा रब किस तरह छाया फैला देता है? अगर वह चाहता तो उसे स्थायी छाया बना देता। हमने सूरज को उसपर दलील बनाया,[8] (46) फिर (जैसे-जैसे सूरज उठता जाता है) हम उस छाया को धीरे-धीरे अपनी ओर समेटते चलते जाते हैं।[9]

(47) और वह अल्लाह ही है जिसने रात को तुम्हारा लिए लिबास, और नींद को मौत की शान्ति, और दिन को जी उठने का समय बनाया।

(48) और वही है जो अपनी दयालुता के आगे-आगे हवाओं को ख़ुशख़बरी बनाकर बेजता है। फिर आसमान से स्वच्छ पानी उतारता है (49) ताकि एक निर्जीव भूभाग को उसके द्वारा ज़िन्दगी प्रदान करे और अपनी सृष्टि में से बहुत-से जानवरों और इनसानों को सिंचित करे। (50) इस चमत्कार को हम बार-बार उनके सामने लाते हैं ताकि वे कुछ शिक्षा लें, मगर ज़्यादातर लोग इनकार और नाशुक्री के सिवा अन्य नीति ग्रहण करने से इनकार कर देते हैं।

(51) अगर हम चाहते तो एक-एक बस्ती में एक-एक सचेत करनेवाला उठा खड़ा करते।[10] (52) अतः ऐ नबी, इनकार करनेवालों की बात हरगिज़ न मानो और इस क़ुरआन को लेकर उनके साथ भारी संघर्ष (जिहाद) करो।

8. मल्लाहों की परिभाषा में दलील उस व्यक्ति को कहते हैं जो नावों को रास्ता दिखाता हो। छाया को सूरज पर दलील बनाने का अर्थ यह है कि छाया का फैलना और सिकुड़ना सूरज के चढ़ने और ढलने और उदय और अस्त होने के अधीन है।
9. अपनी ओर समेटने से मुराद विलुप्त और समाप्त करना है क्योंकि हर चीज़ जो समाप्त होती है वह अल्लाह ही की ओर पलटती है। हर चीज़ उसी की ओर से आती है और उसी की ओर जाती है।
10. अर्थात् ऐसा करना हमारी सामर्थ्य से बाहर न था, चाहते तो जगह-जगह नबी पैदा कर सकते थे मगर हमने ऐसा नहीं किया और दुनिया-भर के लिए एक ही नबी भेज दिया, जिस तरह एक सूरज सारे जहान के लिए काफ़ी हो रहा है, उसी तरह मार्गदर्शन का यह अकेला सूरज ही सारे जहानवालों के लिए काफ़ी है।

(53) और वही है जिसने दो समुद्रों को मिला रखा है। एक स्वादिष्ट और मीठा, दूसरा कड़ुआ और खारा। और दोनों के बीच एक परदा पड़ा है। एक रुकावट है जो उन्हें गड्डमड्ड होने से रोके हुए है।[11]

(54) और वही है जिसने पानी से एक आदमी पैदा किया, फिर उससे वंश और ससुराल के दो अलग-अलग सिलसिले चलाए। तेरा रब बड़ा ही सामर्थ्यवान् है।

(55) उस अल्लाह को छोड़कर लोग उनको पूज रहे हैं जो न उनको लाभ पहुँचा सकते हैं न हानि, और ऊपर से यह भी कि इनकार करनेवाला अपने रब के मुक़ाबले में हर विद्रोही का सहायक बना हुआ है।

(56) ऐ नबी, तुमको हमने बस एक ख़ुशख़बरी देनेवाला और सचेत करनेवाला बनाकर भेजा है।[12] (57) इनसे कह दो कि "मैं इस काम पर तुमसे कोई बदला नहीं माँगता, मेरा बदला बस यही है कि जिसका जी चाहे वह अपने रब का मार्ग अपना ले।"

(58) ऐ नबी, उस अल्लाह पर भरोसा रखो जो ज़िन्दा है और कभी मरनेवाला नहीं। उसकी प्रशंसा के साथ उसकी तसबीह करो। अपने बन्दों के गुनाहों से बस उसी का बाख़बर होना काफ़ी है। (59) वह जिसने छः दिनों में ज़मीन और आसमानों को और उन सारी चीज़ों को बनाकर रख दिया जो आसमानों और ज़मीन के बीच हैं, फिर आप ही 'सिंहासन' पर विराजमान हुआ। रहमान (करुणामय ईश्वर), उसकी महिमा बस किसी जाननेवाले से पूछो।

(60) उन लोगों से जब कहा जाता है कि उस रहमान (दयावान ईश्वर) को सजदा

11. यह स्थिति हर उस स्थान पर देखने को मिलती है जहाँ कोई बड़ी नदी समुद्र में आकर गिरती है। इसके अलावा ख़ुद समुद्र में भी विभिन्न स्थानों पर मीठे पानी के स्रोत पाए जाते हैं जिनका पानी समुद्र के अत्यन्त खारे पानी के मध्यमें अपनी मिठास पर क़ायम रहता है। उदाहरणार्थ बहरैन के निकट और फ़ारिस की खाड़ी में समुद्र की तली से इस तरह के बहुत-से स्रोत निकले हुए हैं जिनसे लोग मीठा पानी हासिल करते हैं।
12. अर्थात् तुम्हारा काम न किसी ईमान लानेवाले को बदला देना है, न किसी इनकार करनेवाले को सज़ा देना। तुम किसी को ईमान की ओर खींच लाने और इनकार से ज़बरदस्ती रोक देने पर नियुक्त नहीं किए गए हो। तुम्हारी ज़िम्मेदारी इससे ज़्यादा कुछ नहीं कि जो सीधा मार्ग ग्रहण करे उसे अच्छे परिणाम की ख़ुशख़बरी दे दो, और जो अपनी पथभ्रष्टता पर जमा रहे उसको अल्लाह की पकड़ से डरा दो।

करो तो कहते हैं, "रहमान क्या होता है? क्या बस जिसे तू कह दे उसी को हम सजदा करते फिरें?" यह आमन्त्रण उनकी नफ़रत में उलटा और अभिवृद्धि कर देता है।

(61) बड़ी बरकतवाला है वह जिसने आसमान में बुर्ज बनाए और उसमें एक चिराग़ और एक चमकता चाँद प्रकाशमान किया। (62) वही है जिसने रात और दिन को एक दूसरे का स्थानापन्न पनाया, हर उस व्यक्ति के लिए जो शिक्षा लेनी चाहे, या कृतज्ञ होना चाहे।

(63) रहमान के (वास्तविक) बन्दे वे हैं जो ज़मीन पर नर्म चाल चलते हैं[13] और जाहिल उनके मुँह आएँ तो कह देते हैं कि तुमको सलाम। (64) जो अपने रब के आगे सजदे में और खड़े रातें गुज़ारते हैं। (65) जो दुआएँ करते हैं कि "ऐ हमारे रब, जहन्नम के अज़ाब से हमको बचा ले, उसका अज़ाब तो जान का लागू है, (66) वह तो बड़ी ही बुरी ठहरने की जगह और स्थान है।" (67) जो ख़र्च करते हैं तो न फ़ज़ूलख़र्ची करते हैं और न कंजूसी से काम लेते हैं, बल्कि उनका ख़र्च दोनों सीमाओं के बीच सन्तुलन पर स्थिर रहता है। (68) जो अल्लाह के सिवा किसी और पूज्य को नहीं पुकारते, अल्लाह के वर्जित किए हुए किसी जीव का नाहक़ क़त्ल नहीं करते, और न व्यभिचार करते हैं—ये काम जो कोई करेगा वह अपने गुनाह का बदला पाएगा, (69) क़ियामत के दिन उसको बढ़ाकर अज़ाब दिया जाएगा और उसी में वह हमेशा अपमान सहित पड़ा रहेगा। (70) यह और बात है कि कोई (इन गुनाहों के बाद) तौबा कर चुका हो और ईमान लाकर अच्छा कर्म करने लगा हो। ऐसे लोगों की बुराइयों को अल्लाह भलाइयों से बदल देगा और वह बड़ा क्षमाशील, दयावान् है। (71) जो व्यक्ति तौबा करके अच्छा कर्म करता है वह तो अल्लाह की ओर पलट आता है जैसा कि पलटने का हक़ है (72)—(और रहमान के बन्दे वे हैं) जो झूठ के गवाह नहीं बनते और किसी बेहूदा चीज़ पर उनका गुज़र हो जाए तो सज्जन आदमियों की तरह गुज़र जाते हैं। (73) जिन्हें अगर उनके रब की आयतें सुनाकर नसीहत की जाती है तो वे उसपर अन्धे और बहरे बनकर नहीं रह जाते। (74) जो दुआएँ माँगा करते हैं कि "ऐ हमारे रब, हमें अपनी बीवियों और अपनी औलाद से आँखों की ठण्डक दे और हमको डर रखनेवालों का इमाम (नायक) बना[14] (75)—ये हैं वे लोग जो अपने सब्र का फल उच्च भवन के रूप

13. अर्थात् घमण्ड के साथ अकड़ते और ऐंठते हुए नहीं चलते, अत्याचारियों और उपद्रवकारियों की तरह अपनी चाल से अपना ज़ोर प्रदर्शित करने का प्रयास नहीं करते, बल्कि उनकी चाल एक सज्जन, सुशील और अच्छे स्वभाववाले व्यक्ति जैसी होती है।

में पाएँगे। आदर सूचक शब्दों और सलाम से उनका स्वागत होगा। (76) वे हमेशा-हमेशा वहाँ रहेंगे। क्या ही अच्छी है वह ठहरने की जगह और स्थान।

(77) ऐ नबी, लोगों से कहो, ''मेरे रब को तुम्हारी क्या ज़रूरत पड़ी है अगर तुम उसको न पुकारो[15] अब जबकि तुमने झुठला दिया है, जल्द ही वह सज़ा पाओगे कि जान छुड़ानी असंभव होगी।''

● ● ●

14. अर्थात हम परहेज़गारी और आज्ञा मानने में सबसे बढ़ जाएँ, भलाई और नेकी में सबसे आगे निकल जाएँ, सिर्फ़ नेक ही न हों बल्कि नेकों के पेशवा हों और हमारे कारण दुनिया-भर में नेकी फैले। इस चीज़ का उल्लेख वास्तव में यह बताने के लिए किया गया है कि ये वे लोग हैं जो माल, धन और वैभव एवं भव्यता में नहीं बल्कि नेकी और परहेज़गारी में एक-दूसरे से बढ़ जाने का प्रयास करते हैं।
15. अर्थात् अगर तुम अल्लाह से दुआएँ न माँगो, और उसी बन्दगी न करो, और अपनी आवश्यकताओं में उसको सहायता के लिए न पुकारो, तो फिर तुम्हारा कोई वज़न अल्लाह की निगाह में नहीं है जिसके कारण वह तिनके के बराबर भी तुम्हारी परवाह करे। मात्र पैदा किए जाने की हैसियत से तुममें और पत्थरों में कोई अन्तर नहीं। तुमसे अल्लाह की कोई ज़रूरत अटकी हुई नहीं है कि तुम बन्दगी न करोगे तो उसका कोई काम रुका रह जाएगा। उसकी कृपादृष्टि को जो चीज़ तुम्हारी ओर आकृष्ट करती है वह तुम्हारा उसकी ओर हाथ फैलाना और उससे दुआएँ माँगना ही है। यह काम न करोगे तो कूड़ा-करकट की तरह फेंक दिए जाओगे।

26. अश-शुअरा

नाम

आयत 224 ''रहे कवि (शुअरा), तो उनके पीछे बहके हुए लोग चला करते हैं,'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

विषय-वस्तु और वर्णन-शैली से महसूस होता है और उल्लेखों से भी इसकी पुष्टि होती है कि इस सूरा का अवतरणकाल मक्का का मध्यकाल है।

विषय और वार्ताएँ

अभिभाषण की पृष्ठभूमि यह है कि मक्का के काफ़िर नबी (सल्ल॰) के प्रचार और उपदेश का मुक़ाबला निरन्तर विरोध और इनकार से कर रहे थे और इसके लिए तरह-तरह के बहाने गढ़ चले जाते थे। नबी (सल्ल॰) उन लोगों को उचित प्रमाणों के साथ उनकी धारणाओं की असत्यता और एकेश्वरवाद और परलोकवाद की सत्यता को समझाने की कोशिश करते-करते थके जाते थे, किन्तु वे हठधर्मी के नित नए रूप अपनाते हुए न थकते थे। यही चीज़ नबी (सल्ल॰) के लिए आत्म-विदारक बनी हुई थी और इस दुख में आपकी जान घुली जाती थी। इन परिस्थितियों में यह सूरा अवतरित हुई। वार्ता का आरम्भ इस प्रकार होता है कि तुम इनके पीछे अपनी जान क्यो घुलाते हो? इनके ईमान न लाने का कारण यह नहीं है कि इन्होंने कोई निशानी नहीं देखी है, बल्कि इसका कारण यह है कि ये हठधर्म हैं, समझाने से नहीं मानना चाहते. इस भूमिका के पश्चात् आयत 191 तक जो विषय निरन्तर वर्णित हुआ है वह यह है कि सत्य के जिज्ञासु लोगों के लिए तो अल्लाह की धरती पर हरेक ओर निशानियाँ ही निशानियाँ फैली हुई हैं, जिन्हें देखकर वे सत्य को पहचान सकते हैं। लेकिन हठधर्म लोग कभी किसी चीज़ को देखकर भी ईमान नहीं लाए हैं। यहाँ तक कि ईश्वरीय यातना ने आकर उन्हें ग्रस्त लिया है। इसी सम्पर्क से इतिहास की सात जातियों के वृतान्त प्रस्तुत किए हैं, जिन्होंने उसी हठधर्मी से काम लिया था जिससे मक्का के काफ़िर काम ले रहे थे। और इस ऐतिहासिक वर्णन के अन्तर्गत कुछ बातें मन में बिठाई गई हैं :

प्रथम यह कि निशानियाँ दो प्रकार की हैं। एक प्रकार की निशानियाँ वे हैं जो ईश्वर की धरती पर हर तरफ़ फैली हुई हैं, जिन्हें देखकर हर बुद्धिमान व्यक्ति जाँच-पड़ताल कर सकता है कि नबी जिस चीज़ की तरफ़ बुला रहा है वह सत्य है या नहीं। दूसरे प्रकार

की निशानियाँ वे हैं जो (तबाह कर दी जानेवाली क़ौमों) ने देखीं। अब यह फ़ैसला करना स्वयं काफ़िरों का अपना काम है कि वे किस प्रकार की निशानी देखना चाहते हैं। द्वितीय यह कि हर युग में काफ़िरों की मनोवृत्ति एक-सी रही है। उनके तर्क एक ही प्रकार के थे। उनके आक्षेप एक-से थे और अन्ततः उनका परिणाम भी एक-सा ही रहा। इसके विपरीत हर युग में नबियों की शिक्षा एक थी। अपने विरोधियों के मुक़ाबले में उनके प्रमाण और तर्क का ढंग एक था और उन सबके साथ अल्लाह की दया का मामला भी एक था। ये दोनों दृष्टान्त इतिहास में मौजूद हैं। काफ़िर (अधर्मी) स्वयं देख सकते हैं कि उनका अपना चित्र किस नमूने से मिलात है। तीसरी बात जो बार-बार दोहराई गई है कि अल्लाह प्रभावशाली, सामर्थ्यवान और शक्तिमान भी है और दयावान् भी। अब यह बात लोगों को स्वयं ही निश्चित करनी चाहिए कि वे अपने आपको उसकी दया का पात्र बनाते हैं या प्रकोप का। आयत 192 से सूरा के अन्त तक में इस वार्ता को समेटते हुए कहा गया है कि तुम लोग निशानियाँ ही देखना चाहते हो, तो आख़िर वे भयावह निशानियाँ देखने पर क्यों आग्रह करते हो जो विनष्ट होनेवाली जातियों ने देखी हैं। इस क़ुरआन को देखो जो तुम्हारी अपनी भाषा में है। मुहम्मद (सल्ल॰) को देखो। उनके साथियों को देखो। क्या यह वाणी किसी शैतान या जिन्न की वाणी हो सकती है? क्या इस वाणी का प्रस्तुत करनेवाला तुम्हें काहिन दिखाई देता है? क्या मुहम्मद (सल्ल॰) और उनके साथी वैसे ही दिखाई देते हैं जैसे कवि और उनके सहधर्मी हुआ करते हैं? (यदि नहीं, जैसा कि स्वयं तुम्हारे दिल गवाही दे रहे होंगे) तो फिर यह भी जान लो कि तुम ज़ुल्म कर रहे हो और ज़ालिमों का-सा परिणाम देखकर रहोगे।

⊖ ⊖ ⊖

26. सूरा अश-शुअरा

(मक्का में उतरी–आयतें 227)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ता॰ सीम॰ मीम॰। (2) ये स्पष्ट किताब की आयतें हैं।[1]

(3) ऐ नबी, शायद तुम इस ग़म में अपनी जान खो दोगे कि ये लोग ईमान नहीं लाते। (4) हम चाहें तो आसमान से ऐसी निशानी उतार सकते हैं कि इनकी गरदनें उसके आगे झुक जाएँ।[2] (5) इन लोगों के पास रहमान (करुणामय ईश्वर) की ओर से जो नई नसीहत भी आती है ये उससे मुँह मोड़ लेते हैं। (6) अब जबकि ये झुठला चुके हैं, जल्द ही इनको उस चीज़ की वास्तविकता का (विभिन्न ढंग से) ज्ञान हो जाएगा जिसका ये मज़ाक़ उड़ाते रहे हैं।

(7) और क्या इन्होंने कभी ज़मीन पर निगाह नहीं डाली कि हमने कितनी बड़ी मात्रा में हर तरह की अच्छी वनस्पति उसमें पैदा की है? (8) यक़ीनन इसमें एक निशानी है,[3] मगर इनमें से ज़्यादातर माननेवाले नहीं। (9) और वास्तविकता यह है कि

---

1. अर्थात् उस किताब की आयतें जो अपना अभिप्राय साफ़-साफ़ खोलकर बयान करती है। जिसे पढ़कर या सुनकर हर व्यक्ति समझ सकता है कि वह किस चीज़ की ओर बुलाती है, किस चीज़ से रोकती है, किसे सत्य कहती है और किसे असत्य ठहराती है। मानना या न मानना अलग बात है, मगर कोई व्यक्ति यह बहाना कभी नहीं बना सकता कि उस किताब की शिक्षा उसकी समझ में नहीं आई और वह उससे यह मालूम ही न कर सका कि वह उसको क्या चीज़ छोड़ने और क्या अपनाने का निमंत्रण दे रही है।
2. अर्थात् कोई ऐसी निशानी उतर देना जो सभी इनकार करनेवालों को ईमान और आज्ञापालन की नीति अपनाने के लिए मजबूर कर दे, अल्लाह के लिए कुछ भी कठिन नहीं है। अगर वह ऐसा नहीं करता तो इसका कारण यह नहीं है कि यह काम उसकी सामर्थ्य से बाहर है, बल्कि इसका कारण यह है कि इस तरह का ज़बरदस्ती का ईमान वह चाहता नहीं है।
3. अर्थात् सत्य की खोज के लिए किसी को निशानी की ज़रूरत हो तो कहीं दूर जाने की ज़रूरत नहीं। आँखें खोलकर तनिक इस ज़मीन ही की उर्वरता और अंकुरता को देख ले, उसे मालूम हो जाएगा कि ब्रह्माण्ड-व्यवस्था की जो वास्तविकता (एकेश्वरवाद) नबियों (अलै॰ ने प्रस्तुत किया है वह सत्य है, या वे धारणाएँ जो बहुदेववादी या ईश्वर का इनकार करनेवाले बयान करते हैं।

तेरा रब प्रभुत्वशाली भी है और दयावान् भी।[4]

(10) इन्हें उस समय का हाल सुनाओ जबकि तुम्हारे रब ने मूसा को पुकारा, ''ज़ालिम क़ौमों के पास जा (11)—फ़िरऔन की क़ौमवालों के पास—क्या वे नहीं डरते?'' (12) उसने निवेदन किया, ''ऐ मेरे रब, मुझे डर है कि वे मुझे झुठला देंगे। (13) मेरा सीना घुटता है और मेरी ज़बान नहीं चलती। आप हारून की ओर रिसालत (पैग़म्बरी) भेजें। (14) और मुझपर उनके यहाँ एक अपराध का आरोप भी है, इसलिए मैं डरता हूँ कि वे मुझे मार डालेंगे।'' (15) कहा, ''हरगिज़ नहीं, तुम दोनों जाओ हमारी निशानियाँ लेकर, हम तुम्हारे साथ सब कुछ सुनते रहेंगे। (16) फ़िरऔन के पास जाओ और उससे कहो, हमको सारे जहान के रब ने इसलिए भेजा है (17) कि तू इसराईल की सन्तान को हमारे साथ जाने दे।''

(18) फ़िरऔन ने कहा, ''क्या हमने तुझको अपने यहाँ बच्चा-सा नहीं पाला था? तूने अपनी उम्र के कई साल हमारे यहाँ बिताए (19) और इसके बाद कर गया जो कुछ कर गया, तू बड़ा कृतघ्न आदमी है।'' (20) मूसा ने जवाब दिया, ''उस समय वह काम मैंने अनजाने में कर दिया था। (21) फिर मैं तुम्हारे डर से भाग गया। इसके बाद मेरे रब ने मुझे निर्णय-शक्ति प्रदान की और मुझे रसूलों में शामिल कर लिया। (22) रहा तेरा उपकार जो तूने मुझपर जताया है तो उसकी वास्तविकता यह है कि तूने इसराईल की सन्तान को दास बना लिया था।''[5] (23) फ़िरऔन ने कहा, ''और यह सारे जहान का रब क्या होता है?'' (24) मूसा ने जवाब दिया, ''आसमानों और ज़मीन का रब, और उन सब चीज़ों का रब जो आसमान और ज़मीन के बीच हैं, अगर तुम विश्वास करनेवाले हो।'' (25) फ़िरऔन ने अपने आस-पास के लोगों से कहा, ''सुनते हो?''

4. अर्थात् उसकी सामर्थ्य तो ऐसी ज़बरदस्त है कि किसी को सज़ा देना चाहे तो पल-भर में मिटाकर रख दे। मगर इसपर भी यह पूर्णतया उसकी दया है कि सज़ा देने में जल्दी नहीं करता। वर्षों और शताब्दियों ढील देता है, सोचने और समझने और सँभलने की मुहलत दिए जाता है, और उम्र-भर की अवज्ञाओं को एक तौबा (क्षमायाचना) पर माफ़ कर देने के लिए तैयार रहता है।

5. अर्थात् तेरे घर में परवरिश के लिए मैं क्यों आता अगर तूने इसराईलियों पर ज़ुल्म न ढाया होता? तेरे ज़ुल्म ही के कारण तो मेरी माँ ने मुझे टोकरी में डालकर दरिया में बहाया था, नहीं तो क्या मेरे पालन-पोषण के लिए मेरा अपना घर मौजूद न था? इसलिए इस पालन-पोषण पर एहसान जताना तुझे शोभा नहीं देता।

(26) मूसा ने कहा, ''तुम्हारा रब भी और तुम्हारे उन बाप-दादाओं का रब भी जो गुज़र चुके हैं।'' (27) फ़िरऔन ने (उपस्थित लोगों से) कहा, ''तुम्हारे ये रसूल साहब जो तुम्हारी ओर भेजे गए हैं, बिलकुल ही पागल मालूम होते हैं।'' (28) मूसा ने कहा, ''पूरब और पश्चिम और जो कुछ इनके बीच है सबका रब, अगर आप लोग कुछ बुद्धि रखते हैं।'' (29) फ़िरऔन ने कहा, ''अगर तूने मेरे सिवा किसी और को पूज्य माना तो तुझे भी उन लोगों मे शामिल कर दूँगा जो जेलों में पड़े सड़ रहे हैं।'' (30) मूसा ने कहा, ''यद्यपि मैं ले आऊँ तेरे सामने एक स्पष्ट चीज़ भी?'' (31) फ़िरऔन ने कहा, ''अच्छा तो ले आ अगर तू सच्चा है।''

(32) (उसकी ज़बान से यह बात निकलते ही) मूसा ने अपनी लाठी (असा) फेंकी और अचानक वह एक प्रत्यक्ष अजगर था। (33) फिर उसने अपना हाथ (बग़ल से) खींचा और वह सब देखनेवालों के सामने चमक रहा था।[6]

(34) फ़िरऔन अपने आस-पास के सरदारों से बोला, ''यह व्यक्ति यक़ीनन एक कुशल जादूगर है। (35) चाहता है कि अपने जादू के ज़ोर से तुमको तुम्हारे देश से निकाल दे।[7] अब बताओ तुम क्या आदेश देते हो?'' (36) उन्होंने कहा, ''उसे और उसके भाई को रोक लीजिए और शहरों में हरकारे भेज दीजिए (37) कि हर कुशल जादूगर को आपके पास ले आएँ।'' (38) अतएव एक दिन निश्चित समय पर जादूगर इकट्ठे कर लिए गए (39) और लोगों से कहा गया, ''तुम जनसभा में चलोगे? (40) शायद कि हम जादूगरों के धर्म ही पर रह जाएँ अगर वे विजयी हुए।''[8]

(41) जब जादूगर मैदान में आए तो उन्होंने फ़िरऔन से कहा, ''हमें इनाम तो मिलेगा अगर हम विजयी हुए?'' (42) उसने कहा, ''हाँ, और तुम तो उस समय समीपवर्ती लोगों में सम्मिलित हो जाओगे।'' (43) मूसा ने कहा, ''फेंको जो तुम्हें फेंकना है।'' (44) उन्होंने तुरन्त अपनी रस्सियाँ और लाठियाँ फेंक दीं और बोले,

6. जैसे ही हज़रत मूसा ने बग़ल से हाथ निकाला अचानक सारा वातावरण जगमगा उठा और ऐसा महसूस हुआ जैसे सूरज निकल आया है।

7. दोनों चमत्कारों की महानता का अनुमान इससे किया जा सकता है कि एक क्षण पहले वह अपनी प्रजा के एक व्यक्ति को भरे दरबार में पैग़म्बरी की बातें और इसराईलियों की रिहाई की माँग करते देखकर पागल ठहरा रहा था और उसे धमकी दे रहा था कि अगर तूने मेरे सिवा किसी को पूज्य माना तो जेल में सड़ा-सड़ाकर मार दूँगा, या अब इन निशानियों को देखते ही उसपर ऐसा डर छा गया कि उसे अपनी बादशाही और अपना देश छिनने की आशंका हो गई।

''फ़िरऔन के प्रताप से हम ही विजयी होंगे।'' (45) फिर मूसा ने अपनी लाठी फेंकी तो सहसावह उनके झूठे चमत्कारों को हड़प करती चली जा रही थी। (46) इसपर सारे जादूगर बेक़ाबू होकर सजदे में गिर पड़े (47) और बोल उठे कि ''मान गए हम सारे जहान के रब को (48)—मूसा और हारून के रब को।'' (49) फ़िरऔन ने कहा, ''तुम मूसा की बात मान गए इससे पहले कि मैं तुम्हें इजाज़त देता! अवश्य यह तुम्हारा बड़ा (गुरु) है जिसने तुम्हें जादू सिखाया है। अच्छा, अभी तुम्हें मालूम हुआ जाता है, मैं तुम्हारे हाथ-पाँव विपरीत दिशाओं से कटवाऊँगा और तुम सबको सूली पर चढ़ा दूँगा।'' (50) उन्होंने जवाब दिया, ''कुछ परवान नहीं, हम अपने रब के पास पहुँच जाएँगे। (51) और हमें आशा है कि हमारा रब हमारे गुनाह माफ़ कर देगा, क्योंकि सबसे पहले हम ईमान लाए हैं।''

(52) हमने[9] मूसा को प्रकाशना (वह्य) भेजी कि ''रातों-रात मेरे बन्दों को लेकर निकल जाओ, तुम्हारा पीछा किया जाएगा।'' (53) इसपर फ़िरऔन ने (सेनाएँ एकत्र करने के लिए) शहरों में हरकारे भेज दिए (54) (और कहला भेजा) कि ''ये कुछ मुट्ठी-भर लोग हैं, (55) और इन्होंने हमको बहुत नाराज़ किया है, (56) और हम एक ऐसा गिरोह हैं जिसकी नीति हर समय चौकन्ना रहना है।'' (57,58) इस तरह हम उन्हें उनके बाग़ों और स्रोतों और ख़ज़ानों और उनके उत्तम निवास-स्थानों से निकाल लाए।

8. अर्थात् सिर्फ घोषणा और विज्ञापन ही पर बस न किया गया बल्कि आदमी इस मक़सद से छोड़े गए कि लोगों को उकसा-उकसाकर यह मुक़ाबला देखने के लिए लाएँ। इससे मालूम होता है कि भरे दरबार में जो चमत्कार हज़रत मूसा (अलै०) ने दिखाए थे उनकी ख़बर आम लोगों में फैल चुकी थी और फ़िरऔन को यह आशंका हो गई थी कि इससे देश-निवसी प्रभावित होते चले जा रहे हैं। दरबार में उपस्थित जिन लोगों ने हज़रत मूसा (अलै०) का चमत्कार देखा था और बाहर जिन लोगों तक उसकी विश्वसनीय ख़बरे पहुँची थीं उनकी आस्थाएँ अपने पैतृक धर्म पर से विचलित हुई जा रही थीं, और अब उनका धर्म बस इस पर निर्भर कर रहा था कि किसी तरह जादूगर भी वे काम कर दिखाएँ जो मूसा (अलै०) ने किया है। फ़िरऔन और उसके राज्यमंत्री इसे ख़ुद एक निर्णायक मुक़ाबला समझ रहे थे। उनके अपने भेजे हुए आदमी जनता के मन में यह बात बिठाते फिर रहे थे कि अगर जादूगर सफल हो गए तो हम मूसा के धर्म में जाने से बच जाएँगे, नहीं तो हमारे पैतृक धर्म और विश्वास की ख़ैर नहीं है।
9. अब एक लम्बे समय की घटनाओं को छोड़कर उस समय की चर्चा की जा रही है जब हज़रत मूसा (अलै०) को मिस्र से हिजरत करने का आदेश दिया गया।

(59) यह तो हुआ उनके साथ, और (दूसरी ओर) इसराईल की सन्तान को हमने इन सब चीज़ों का वारिस बना दिया।

(60) सुबह होते ही ये लोग उनका पीछा करने को चल पड़े। (61) जब दोनों गिरोहों का आमना-सामना हुआ तो मूसा के साथी चिल्ला उठे कि ''हम तो पकड़े गए।'' (62) मूसा ने कहा, ''हरगिज़ नहीं। मेरे साथ मेरा रब है। वह ज़रूर मेरा मार्गदर्शन करेगा।'' (63) हमने मूसा को प्रकाशना (वह्य) द्वारा आदेश दिया कि, ''मार अपनी लाठी समुद्र पर।'' अचानक समुद्र फट गया और उसका हर टुकड़ा एक ऊँचे पहाड़ की तरह हो गया। (64) उसी जगह पर हम दूसरे गिरोह को भी क़रीब ले आए। (65) मूसा और उन सब लोगों को जो उसके साथ थे, हमने बचा लिया, (66) और दूसरों को डुबो दिया।

(67) इस घटना में एक निशानी हैं, मगर इन लोगों में से ज़्यादातर माननेवाले नहीं हैं। (68) और वास्तविकता यह है कि तेरा रब प्रभुत्वशाली भी है और दयावान् भी।

(69) और इन्हें इबराहीम का क़िस्सा सुनाओ, (70) जबकि उसने अपने बाप और अपनी क़ौमवालों से पूछा था कि ''ये क्या चीज़ें हैं जिनको तुम पूजते हो?'' (71) उन्होंने जवाब दिया, ''कुछ मूर्तियाँ हैं जिनकी हम पूजा करते हैं और उन्हीं की सेवा में हम लगे रहते हैं।'' (72) उसने पूछा, ''क्या ये तुम्हारी सुनती हैं जब तुम इन्हें पुकारते हो? (73) या ये तुम्हें कुछ लाभ या हानि पहुँचाती हैं?'' (उन्होंने जवाब दिया, ''नहीं, बल्कि हमने अपने बाप-दादा को ऐसा ही करते पाया है।'' (75,76) इसपर इबराहीम ने कहा, ''कभी तुमने (आँखें खोलकर) उन चीज़ों को देखा भी जिनकी बन्दगी तुम और तुम्हारे पिछले बाप-दादा करते रहे? (77) मेरे तो ये सब दुश्मन हैं, सिवाय सारे जहान के एक रब के, (78) जिसने मुझे पैदा किया, वही मेरा मार्गदर्शन करता है। (79) जो मुझे खिलाता और पिलाता है (80 और जब बीमार हो जाता हूँ तो वही मुझे अच्छा करता है। (81) जो मुझे मौत देगा और फिर दोबारा मुझको जीवन प्रदान करेगा। (82) और जिससे मैं आशा रखता हूँ कि बदला दिए जाने के दिन वह मेरी ख़ता को माफ़ कर देगा। (83) (इसके बाद इबराहीम ने दुआ की) ''ऐ मेरे रब, मुझे निर्णय-शक्ति एवं तत्त्वदर्शिता प्रदान कर। और मुझे अच्छे लोगों के साथ मिला। (84) और बाद के आनेवालों में मुझको सच्ची ख्याति प्रदान कर। (85) और मुझे नेमत भरी जन्नत के

10. यहाँ से आयत 102 तक की वार्ता हज़रत इबराहीम (अलै०) के कथन का अंश नहीं है, बल्कि अल्लाह की ओर से उसमें बढ़ाई गई है।

वारिसों में शामिल कर। (86) और मेरे बाप को माफ़ कर दे कि बेशक वह पथभ्रष्ट लोगों में से है, (87) और मुझे उस दिन रुसवा न कर जबकि सब लोग ज़िन्दा करके उठाए जाएँगे। (88) जबकि न धन कोई लाभ पहुँचाएगा और न सन्तान, (89) सिवाय इसके कि कोई व्यक्ति भला-चंगा दिल लिए हुए अल्लाह के पास हाज़िर हो।''

(90) (उस दिन[10]) जन्नत परहेज़गारों के क़रीब ले आई जाएगी। (91) और दोज़ख़ बहके हुए लोगों के सामने खोल दी जाएगी (92) और उनसे पूछा जाएगा कि "अब कहाँ हैं वे जिनकी तुम अल्लाह को छोड़कर बन्दगी करते थे? (93) क्या वे तुम्हारी कुछ सहायता कर रहे हैं या ख़ुद अपना बचाव कर सकते हैं?'' (94,95) फिर वे पूज्य और ये बहके हुए लोग और इबलीस की सेनाएँ सब के सब उसमें ऊपर-तले ढकेल दिए जाएँगे। (96,97) वहाँ ये सब आपस में झगड़ेंगे, और ये बहके हुए लोग (अपने पूज्यों से) कहेंगे कि "ख़ुदा की क़सम, हम तो स्पष्ट पथभ्रष्टता में डूबे हुए थे (98) जबकि तुमको सारे जहान के रब की बराबरी का दर्जा दे रहे थे। (99) और वे अपराधी लोग ही थे जिन्होंने हमको इस गुमराही में डाला। (100) अब न हमारा कोई सिफ़ारिशी है (101) और न कोई घनिष्ठ मित्र। (102) काश हमें एक बार फिर पलटने का अवसर मिल जाए तो हम ईमानवाले हों।''

(103) यक़ीनन इसमें एक बड़ी निशानी है,[11] मगर इनमें से ज़्यादातर लोग ईमान लानेवाले नहीं। (104) और वास्तविकता यह है कि तेरा रब प्रभुत्वशाली भी है और दयावान् भी।

(105) नूह के लोगों ने रसूलों को झुठलाया। (106) याद करो जबकि उनके भाई नूह ने उनसे कहा था, "क्या तुम डरते नहीं हो? (107) मैं तुम्हारे लिए एक अमानतदार रसूल हूँ, (108) अतः तुम अल्लाह से डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो। (109) मैं इस काम पर तुमसे किसी पारिश्रमिक की माँग नहीं करता। मेरा पारिश्रमिक तो सारे जहान के रब के ज़िम्मे है। (110) अतः तुम अल्लाह से डरो और (बेखटके) मेरी आज्ञा का पालन करो।'' (111) उन्होंने जवाब दिया, "क्या हम तुझे मान लें जबकि तेरी पैरवी अत्यन्त नीच लोगों ने अपनाई है?'' (112) नूह ने कहा, "मैं क्या जानूँ कि उनके कर्म कैसे हैं, (113) उनका हिसाब तो मेरे रब के ज़िम्मे है, काश तुम कुछ चेतना से काम लो। (114) मेरा यह काम नहीं है कि जो ईमान लाएँ उनको मैं धुतकार दूँ। (115) मैं तो बस एक स्पष्ट रूप से सावधान कर देनेवाला

11. अर्थात् हज़रत इबराहीम (अलै०) के क़िस्से में।

आदमी हूँ।'' (116) उन्होंने कहा, "ऐ नूह, अगर तू बाज़ न आया तो फिटकारे हुए लोगों में सम्मिलित होकर रहेगा।'' (117) नूह ने दुआ की, "ऐ मेरे रब, मेरी क़ौम ने मुझे झुठला दिया। (118) अब मेरे और उनके बीच दो-टूक फ़ैसला कर दे और मुझे और जो ईमानवाले मेरे साथ हैं उनको बचा ले।'' (119) आख़िरकार हमने उसको और उसके साथियों को एक भरी हुई नाव में बचा लिया,[12] (120) और इसके बाद बाक़ी लोगों को डुबो दिया।

(121) यक़ीनन इसमें एक निशानी है, मगर इनमें से ज़्यादातर लोग माननेवाले नहीं। (122) और वास्तविकता यह है कि तेरा रब प्रभुत्वशाली भी है और दयावान् भी है।

(123) आद ने रसूलों को झुठलाया। (124) याद करो जबकि उनके भाई हूद ने उनसे कहा था, "क्या तुम डरते नहीं? (125) मैं तुम्हारे लिए एक अमानतदार रसूल हूँ (126) अतः तुम अल्लाह से डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो। (127) मैं इस काम पर तुमसे किसी बदले की माँग नहीं करता। मेरा बदला तो सारे जहान के रब के ज़िम्मे है। (128) यह तुम्हारा क्या हाल है कि हर ऊँचे स्थान पर व्यर्थ एक यादगार भवन निर्मित कर डालते हो, (129) और बड़े-बड़े महलों का निर्माण करते हो मानो तुम्हें हमेशा रहना है। (130) और जब किसी पर हाथ डालते हो अत्यन्त निर्दय अत्याचारी बनकर डालते हो। (131) अतः तुम लोग अल्लाह से डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो। (132) डरो उससे जिसने वह कुछ तुम्हें दिया है जो तुम जानते हो। (133) तुम्हें जानवर दिए, सन्तानें दीं, (134) बाग़ दिए और स्रोत दिए। (135) मुझे तुम्हारे बारे में एक बड़े दिन के अज़ाब का डर है। '' (136) उन्होंने जवाब दिया, "तू नसीहत कर या न कर, हमारे लिए सब समान है। (137) ये बातें तो यूँ ही होती चली आई हैं। (138) और हम अज़ाब में पड़नेवाले नहीं हैं।'' (139) आख़िरकार उन्होंने उसे झुठला दिया और हमने उनको तबाह कर दिया।

यक़ीनन इसमें एक निशानी है, मगर इनमें से ज़्यादातर लोग माननेवाले नहीं हैं। (140) और वास्तविकता यह है कि तेरा रब प्रभुत्वशाली भी है और दयावान् भी।

(141) समूद ने रसूलों को झुठलाया। (142) याद करो जबकि उनके भाई

12. 'भरी हुई नाव' से मुराद यह है कि वह नाव ईमान लानेवाले इनसानों और सारे जानवरों से भर गई थी जिनका एक-एक जोड़ा साथ रख लेने का आदेश दिया गया था। सूरा 11 (हूद) आयत 40 में इसका उल्लेख हो चुका है।

सालेह ने उनसे कहा, "क्या तुम डरते नहीं? (143) मैं तुम्हारे लिए एक अमानतदार रसूल हूँ। (144) अतः तुम अल्लाह से डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो। (145) मैं इस काम पर तुमसे किसी बदले की माँग नहीं करता, मेरा बदला तो सारे जहान के रब के ज़िम्मे है। (146) क्या तुम उन सब चीज़ों के बीच, जो यहाँ हैं, बस यूँ ही निश्चिन्ततापूर्वक रहने दिए जाओगे? (147) इन बाग़ों और स्रोतो में? (148) इन खेतों और उद्यानों में जिनके गुच्छे रस भरे हैं। (149) तुम पहाड़ खोद-खोदकर गर्व के साथ उनमें भवनों का निर्माण करते हो। (150) अल्लाह से डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो। (151) उन मर्यादाहीन लोगों की आज्ञा का पालन न करो (152) जो ज़मीन में बिगाड़ पैदा करते हैं और कोई सुधार नहीं करते।" (153) उन्होंने जवाब दिया, "तू बस जादू का मारा हुआ एक आदमी है। (154) तू हम सैजे एक इनसान के सिवा और क्या है? ला कोई निशानी अगर तू सच्चा है?" (155) सालेह ने कहा, "यह ऊँटनी है। एक दिन इसके पीने का है और एक दिन तुम सबके पानी लेने का। (156) इसको हरगिज़ न छेड़ना नहीं तो एक बड़े दिन का अज़ाब तुमको आ लेगा।" (157) मगर उन्होंने उसकी कूँचे काट दीं और आख़िरकार पछताते रह गए। (158) अज़ाब ने उन्हें आ लिया।

यक़ीनन इसमें एक निशानी है, मगर इनमें से ज़्यादातर माननेवाले नहीं। (159) और वास्तविकता यह है कि तेरा रब प्रभुत्वशाली भी है और दयावान भी।

(160) लूत की क़ौम ने रसूलों को झुठलाया। (161) याद करो जबकि उनके भाई लूत ने उनसे कहा था, "क्या तुम डरते नहीं? (162) मैं तुम्हारे लिए के अमानतदार रसूल हूँ। (163) अतः तुम अल्लाह से डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो। (164) मैं इस काम पर तुमसे किसी बदले की माँग नहीं करता, मेरा बदला तो सारे जहान के रब के ज़िम्मे है। (165) क्या तुम दुनियावालों में से मर्दों के पास जाते हो, (166) और तुम्हारी बीवियों में तुम्हारे रब ने तुम्हारे लिए जोकुछ पैदा किया है उसे छोड़ देते हो? बल्कि तुम लोग तो सीमा से आगे बढ़ गए हो।" (167) उन्होंने कहा, "ऐ लूत, अगर तू इन बातों से बाज़ न आया तो जो लोग हमारी बस्तियों से निकाले गए हैं उनमें तू भी शामिल होकर रहेगा।" (168) उसने कहा, "तुम्हारी करतूतों पर जोलोग कुढ़ रहे हैं मैं उनमें सम्मिलित हूँ। (169) ऐ पालनहार, मुझे और मेरे घरवालों को इनके दुराचरणों से बचा।" (170) आख़िरकार हमने उसे और उसके सब घरवालों को

13. इससे मुराद हज़रत लूत (अलै०) की बीवी है।

बचा लिया, (171) सिवाय एक बुढ़िया के जो पीछे रह जानेवालों में थी।[13] (172) फिर बाक़ी लोगों को हमने तबाह कर दिया (173) और उनपर बरसाई एक बरसात, बड़ी ही बुरी वर्षा थी जो उन डराए जानेवालों पर उतरी।

(174) यक़ीनन इसमें एक निशानी है, मगर इनमें से ज़्यादातर माननेवाले नहीं। (175) और वास्तविकता यह है कि तेरा रब प्रभुत्वशाली भी है और दयावान् भी।

(176) 'अल-ऐका' वालों[14] ने रसूलों को झूठलाया। (177) याद करो जबकि शुऐब ने उनसे कहा था, "क्या तुम डरते नहीं? (178) मैं तुम्हारे लिए एक अमानतदार रसूल हूँ। (179) अतः तुम अल्लाह से डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो। (180) मैं इस काम पर तुमसे किसी बदले की माँग नहीं करता। मेरा बदला तो सारे जहान के रब के ज़िम्मे है। (181) पैमाने ठीक भरो और किसी को घाटा न दो। (182) ठीक तराज़ू से तौलो (183) और लोगों को उनकी चीज़ें कम न दो। ज़मीन में बिगाड़ न फैलाते फिरो (184) और उस सत्ता का डर रखो जिसने तुम्हें और पिछली नस्लों को पैदा किया है।" (185) उन्होंने कहा, "तू बस जादू का मारा एक आदमी है, (186) और तू कुछ नहीं है मगर एक इनसान हम ही जैसा, और हम तो तुझे बिलकुल झूठा समझते हैं। (187) अगर तू सच्चा है तो हमपर आसमान का कोई टुकड़ा गिरा दे।" (188) शुऐब ने कहा, "मेरा रब जानता है जो कुछ तुम कर रहे हो।" (189) उन्होंने उसे झुठला दिया, आख़िरकार छतरीवाले दिन का अज़ाब उनपर आ गया,[15] और वह बड़े ही भयानक दिन का अज़ाब था।

(190) यक़ीनन इसमें एक निशानी है, मगर इनमें से ज़्यादातर माननेवाले नहीं। (191) और वास्तविकता यह है कि तेरा रब प्रभुत्वशाली भीहै और दयावान् भी।

(192) यह सारे जहान के रब की उतारी हुई चीज़ है।[16] (193,194) इसे

14. 'अल-ऐका' वालों का संक्षिप्त उल्लेख सूरा 15 (अल-हिज्र), आयत 78-84 में किया जा चुका है।

15. इन शब्दों से जो बात समझ में आती है वह यह है कि उन लोगों ने चूँकि आसमानी अज़ाब माँगा था, इसलिए अल्लाह ने उनपर एक बादल भेज दिया और वह छतरी की तरह उनपर उस समय तक छाया रहा जब तक अज़ाब की बरसात ने उनको बिलकुल तबाह न कर दिया। यह बात भी निगाह में रहे कि हज़रत शुऐब (अलै०) मदयन की ओर भी भेजे गए थे और अल-ऐका की ओर भी। दोनों क़ौमों पर अज़ाब दो विभिन्न रूपों में आया।

लेकर तेरे दिल पर अमानतदार आत्मा[17] उतरी है ताकि तू उन लोगों में सम्मिलित हो जो (ईश्वर की ओर से लोगों को) सावधान करनेवाले हैं, (195) स्पष्टतः अरबी भाषा में। (196) और अगले लोगों की किताबों में भी यह मौजूद है।[18] (197) क्या इन (मक्कावालों) के लिए यह कोई निशानी नहीं है कि इसे इसराईलियों के विद्वान जानते हैं?[19] (198) (लेकिन इनकी हठधर्मी का हाल तो यह है कि) अगर हम इसे ग़ैर अरबी भाषी पर भी उतार देते (199) और यह (अच्छी वाणी) वह इनको पढ़कर[20] सुनाता तब भी ये न मानते। (200) इसी तरह हमने इस (ज़िक्र) को अपराधियों के दिलों में गुज़ारा है। (201) वे इसपर ईमान नहीं लाते जब तक कि दर्दनाक अज़ाब न देख लें। (202) फिर जब वह बेख़बरी में उनपर आ पड़ता है (203) उस समय वे कहते हैं कि "क्या अब हमें कुछ मुहलत मिल सकती है?"

(204) तो क्या ये लोग हमारे अज़ाब के लिए जल्दी मचा रहे हैं? (205) तुमने कुछ विचार किया, अगर हम इन्हें वर्षों तक सुख भोगने की मुहलत भी दे दें, (206) और फिर वही चीज़ इनपर आ जाए जिससे इन्हें डराया जा रहा है (207) तो वह जीवन-सामग्री जो इनको प्राप्त है इनके किस काम आएगी?

(208) (देखो) हमने कभी किसी बस्ती को इसके बिना तबाह नहीं किया कि उसके लिए सचेत करनेवाले (209) नसीह का हक़ अदा करने को मौजूद थे। और हम ज़ालिम न थे।

(210) इस (स्पष्ट किताब) को शैतान लेकर नहीं उतरे हैं, (211) न यह काम उनको सजता है, और न वे ऐसा कर ही सकते हैं। (212) वे तो इसके सुनने तक से

16. अर्थात् यह क़ुरआन जिसकी आयतें सुनाई जा रही हैं।
17. मुराद हैं हज़रत जिबरील (अलै॰)।
18. अर्थात् यही याददिहानी और यही अवतरण और यही ईश्वरीय शिक्षा पिछली आसमानी किताबों में भी पाई जाती है।
19. अर्थात् इसराईली विद्वान इस बात से परिचित हैं कि जो शिक्षा क़ुरआन मजीद में दी गई है वह ठीक वही शिक्षा है जो पिछली आसमानी किताबों में दी गई थी। वे यह नहीं कह सकते कि पिछली किताबों की शिक्षा इससे भिन्न थी।
20. अर्थात् यह सत्यवादियों के हृदयों की तरह आत्म-परितोष और मन का आरोग्य बनकर उनके अन्दर नहीं उतरता बल्कि एक गर्म लोहे की सलाख बनकर इस तरह गुज़रता है कि वे क्रुद्ध हो जाते हैं और इसकी वार्ताओं पर विचार करने के बजाय इसके खण्डन के लिए तरकीबें ढूँढने लगते हैं।

दूर रखे गए हैं।[21]

(213) अतः ऐ नबी, अल्लाह के साथ किसी दूसरे इष्ट-पूज्य को न पुकारना, वरना तुम भी सज़ा पानेवालों में सम्मिलित हो जाओगे। (214) अपने निकटतम नातेदारों को डराओ, (215) और ईमान लानेवालों में से जो लोग तुम्हारे अनुयायी हों उनके साथ विनम्रता का व्यवहार करो, (216) लेकिन अगर वे तुम्हारी अवज्ञा करें तो उनसे कह दो कि जो कुछ तुम करते हो उसकी ज़िम्मेदारी से मैं बरी हूँ। (217) और उस प्रभुत्वशाली और दयावान् पर भरोसा करो (218) जो तुम्हें उस समय देख रहा होता है जब तुम उठते हो,[22] (219) और सजदा करनेवाले लोगों में तुम्हारी गतिविधि पर निगाह रखता है। (220) वह सब कुछ सुनने और जाननेवाला है।

(221) लोगो, क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि शैतान किसपर उतरा करते हैं? (222) वे हर जालसाज़, दुष्कर्मी पर उतरा करते हैं। (223) सुनी-सुनाई बातें कानों में फूँकते हैं और उनमें से ज़्यादातर झूठे होते हैं।[23]

(224) रहे कवि,[24] तो उनके पीछे बहके हुए लोग चला करते हैं। (225) क्या तुम देखते नहीं हो कि वे प्रत्येक घाटी में भटक हैं (226) और ऐसी बातें कहते हैं जोकरते नहीं हैं—(227) सिवाय उन लोगों के जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए और अल्लाह को ज़्यादा याद किया और जब उनपर ज़ुल्म किया गया तो सिर्फ़ बदला ले लिया[25]—और ज़ुल्म करनेवालों को जल्द ही मालूम हो जाएगा कि उन्हें किस परिणाम का सामना है।[26]

● ● ●

21. अर्थात् जिस समय यह क़ुरआन अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) पर उतर रहा होता है उस समय शैतान इसे सुन भी नहीं सकते, यह तो बहुत दूर की बात है कि उन्हें यह मालूम हो सके कि आप पर क्या चीज़ उतर रही है।
22. उठने से मुराद रातों को नमाज़ के लिए उठना भी हो सकता है और पैग़म्बरी के कर्तव्य-निर्वाह के लिए उठना भी।
23. यह मक्का के अधर्मियों के इस आरोप का जवाब है कि वे अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को काहिन (जिन्नों द्वारा मालूम करके परोक्षीय बातें बतानेवाला) कहते थे।
24. यह भी उनके इस आरोप का जवाब है कि वे नबी (सल्ल॰) को कवि कहते थे।

25. यहाँ कवियों की उस सामान्य निन्दा से जो ऊपर बयान हुई, उन कवियों को अपवाद माना गया है जो चार विशेषताओं से युक्त हों। प्रथम यह कि वे ईमानवाले हों, दूसरे यह कि अपनी व्यावहारिक ज़िन्दगी में नेक हों, तीसरे यह कि अल्लाह को बहुत ज़्यादा याद करनेवाले हों, और चौथे यह कि वे निजी स्वार्थों के लिए तो किसी की बुराई न करें, अलबत्ता जब ज़ालिमों के मुक़ाबले में सत्य के समर्थन के लिए आवश्यकता हो तो फिर ज़बान से वही काम लें जो धर्म के लिए गड़नेवाला (एक मुजाहिद) तीर और तलवार से लेता है।

26. ज़ुल्म करनेवालों से मुराद यहाँ वे लोग हैं जो सत्य को नीचा दिखाने के लिए बिलकुल हठधर्मी की राह से नबी (सल्ल॰) पर शायरी (काव्य) और कहानत और जादूगरी और उन्माद का मिथ्यारोपण करते फिरते थे, ताकि न जाननेवाले लोग आपके सन्देश के बारे में बदगुमान हों और आपकी शिक्षा की ओर ध्यान न दें।

27. अन-नम्ल

नाम

सूरा की आयत 18 में नम्ल (चींटी) की घाटी का उल्लेख है। सूरा का नाम इसी से उद्धृत है।

अवतरणकाल

विषय-वस्तु और वर्णन-शैली मक्का के मध्यकाल की सूरतों से पूर्णतः मिलती-जुलती है और उल्लेखों से भी इसकी पुष्टि होती है। इब्ने अब्बास (रज़ि॰) और जाबिर-बिन-ज़ैद का बयान है कि "पहले सूरा 26 (शुअरा) अवतरित हुई, फिर सूरा 27 (अन-नम्ल), फिर 28 (अल-क़सस)।"

विषय और वार्ताएँ

यह सूरा दो अभिभाषणों पर आधारित है। पहला अभिभाषण सूरा के आरंभ से आयत 58 तक चला गया है और दूसरा अभिभाषण आयत 59 से सूरा के अन्त तक। पहले अभिभाषण में बताया गया है कि क़ुरआन के मार्गदर्शन से केवल वही लोग लाभ उठा सकते हैं जो उन सच्चाइयों को स्वीकार करें जिन्हें यह किताब इस विश्व की मौलिक सच्चाइयों के रूप में प्रस्तुत करती है, और फिर मान लेने के पश्चात् अपने व्यावहारिक जीवन में भी आज्ञापालन और अनुपालन की नीति अपनाएँ किन्तु इस राह पर आने और चलने में जो चीज़ सबसे बढ़कर रुकावट सिद्ध होती है वह आख़िरत (परलोक) का इनकार है। इस भूमिका के पश्चात् तीन प्रकारे के चरित्रों के दृष्टान्त प्रस्तुत किए गए हैं। एक नमूना फ़िरऔन और समूद जाति के सरदारों और लूत (अलै॰) की क़ौम के सरकशों का है, जिनका चरित्र परलोक-चिन्तन से बेपरवाही और परिणामतः मन की दासता से निर्मित हुआ था। ये लोग किसी निशानी को देखकर भी ईमान लाने को तैयार न हुए। ये उलटे उन लोगों के शत्रु हो गए जिन्होंने उनको भलाई और सुधार की ओर बुलाया। दूसरा नमूना हज़रत सुलैमान (अलै॰) का है जिनको अल्लाह ने धन, राज्य, वैभव और प्रताप से बड़े पैमाने पर सम्पन्न किया था, किन्तु इस सबसके बावजूद क्योंकि वे अपने आपको अल्लाह के समक्ष उत्तरदायी समझते थे इसलिए उनका सिर सदैव वास्तविक उपकारकर्ता (ईश्वर) के आगे झुका रहता था।

तीसरा नमूना सबा की रानी का है जो अरब-इतिहास की अत्यन्त प्रसिद्ध धनवान जाति की शासिका थी। उसके पास वे सभी संसाधन संचित थे जो किसी व्यक्ति को

अहंकारी बना सकते हैं। फिर उसका सम्बन्ध एक बहुदेववादी जाति से था। पूर्वजों के अनुसरण के कारण भी और अपनी जाति में अपनी सरदारी क़ायम रखने के लिए भी, उसके लिए बहुदेववादी धर्म को त्याग कर एकेश्वरवादी धर्म ग्रहण करना बहुत दुष्कर था। लेकिन जब उसपर सत्य प्रकट हो गया तो कोई चीज़ उसे सत्य को स्वीकार करने से न रोक सकी, क्योंकि उसकी गुमराही केवल एक बहुदेववादी वातावरण में आँखें खोलने के कारण थी। अपनी दासता और इच्छाओं की गुलामी के रोग में वह ग्रस्त न थी। दूसेर अभिभाषण में सबसे पहले विश्व के कुछ अत्यन्त स्पष्ट तथ्यों की ओर संकेत करके मक्का के काफ़िरों से निरन्तर प्रश्न किया गया है कि बताओ ये तथ्य बहुदेववाद के साक्षी है या एकेश्वरवाद (के?)। इसके पश्चात् काफ़िरों के वास्तविक रोग पर उँगली रख दी गई है कि जिस चीज़ ने उनको अन्धा-बहरा बना रखा है, वह वास्तव में परलोक का इनकार है। इस वाद-संवाद से अभीष्ट सोनेवालों को झकझोर कर जगाना है। इसी लिए आयत 67 से सूरा के अन्त तक निरन्तर वे बातें कही गई हैं जो लोगों में आख़िरत के एहसास को जगा दें। वार्ता को समाप्त करते हुए क़ुरआन का मूल आमंत्रण अर्थात् अकेले ख़ुदा की बन्दगी का आमंत्रण अत्यन्त संक्षिप्त, किन्तु अत्यन्त प्रभावकारी ढंग से प्रस्तुत करके लोगों को सावधान किया गया है कि उसे स्वीकार करना तुम्हारे अपने लिए लाभदायक और उसे रद्द करना तुम्हारे अपने लिए ही हानिकारक है।

⊖ ⊖ ⊖

27. सूरा अन-नम्ल

(मक्का में उतरी–आयतें 93)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ता॰ सीन॰। ये आयतें हैं क़ुरआन और स्पष्ट किताब की,[1] (2,3) मार्गदर्शन और शुभ सूचना उन ईमानवालों के लिए जो नमाज़ क़ायम करते और ज़कात (दान) देते हैं, और फिर वे ऐसे लोग हैं जो आख़िरत पर पूरा विश्वास रखते हैं। (4) वास्तविकता यह है कि जो लोग आख़िरत को नहीं मानते उनके लिए हमने उनकी करतूतों को शोभायमान बना दिया है, इसलिए वे भटकते फिरते हैं। (5) ये वे लोग हैं जिनके लिएबुरी सज़ा है और आख़िरत में भी यही सबसे ज़्यादा घाटे में रहनेवाले हैं। (6) और (ऐ नबी) निस्संदेह तुम यह क़ुरआन एक तत्त्वदर्शी और सर्वज्ञ सत्ता की ओर से पा रहे हो।

(7) (उन्हें उस समय का हाल सुनाओ) जब मूसा ने अपने घरवालों से कहा कि "मुझे एक आग-सी दिखाई दी है, मैं अभी या तो वहाँ से कोई सूचना लेकर आता हूँ या कोई अंगारा चुन लाता हूँ ताकि तुम लोग गर्म हो सको।" (8) वहाँ जो पहुँचा तो आवाज़ आई कि "मुबारक है वह जो इस आग में है और जो इसके वातावरण में है। पाक है अल्लाह, सारे जहानवालों का पालनहार। (9) ऐ मूसा, यह मैं हूँ अल्लाह, प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी। (10) और फेंक दो तनिक अपनी लाठी।" ज्यों ही कि मूसा ने देखा लाठी साँप की तरह बल खा रही है तो पीठ फेरकर भागा और पीछे मुड़कर भी न देखा। "ऐ मूसा, डरो नहीं। मेरे पास रसूल डरा नहीं करते, (11) सिवाय इसके कि किसी ने क़ुसूर किया हो। फिर अगर बुराई के बाद उसने भलाई से (अपने कर्म को) बदल लिया तो मैंमाफ़ करनेवाला दयावान् हूँ। (12) और तनिक अपना हाथ अपने गरेबान में तो डालो, चमकता हुआ निकलेगा बिना किसी तकलीफ़ के। ये (दो निशानियाँ) नौ निशानियों में से हैं फ़िरऔन और उसकी क़ौम की ओर (ले जाने के लिए), वे बड़े दुराचारी लोग हैं।"

(13) मगर जब हमारी खुली-खुली निशानियाँ उन लोगों के सामने आई तो उन्होंने कहा कि यह तो खुला जादू है। (14) उन्होंने सर्वथा ज़ुल्म और घमण्ड की राह से इन निशानियों का इनकार किया हालाँकि दिलों को उनके विश्वास हो चुका था। अब

1. अर्थात् उस किताब कि आयतें जो अपनी शिक्षाओं और आदेश और मार्गदर्शन को बिलकुल स्पष्ट रूप से बयान करती हैं।

देख लो कि उन बिगाड़ पैदा करनवालों का परिणाम कैसा हुआ।

(15) (दूसरी ओर) हमने दाऊद और सुलैमान को ज्ञान प्रदान किया और उन्होंने कहा कि "शुक्र है उस ईश्वर का जिसने हमको अपने बहुत-से ईमानवाले बन्दों की अपेक्षा श्रेष्ठता प्रदान की।" (16) और दाऊद का उत्तराधिकारी सुलैमान हुआ। और उसने कहा, "लोगो, हमें पक्षियों की बोलियाँ सिखाई गईहैं और हमें हर तरह की चीज़ें दी गई हैं,[2] बेशक यह (अल्लाह का) स्पष्ट अनुग्रह है।" (17) सुलैमान के लिए जिन्न और इनसानों और पक्षियों की सेनाएँ एकत्र की गई थीं और वे पूरे नियंत्रण में रखी जाती थीं। (18) (एक बार वह उनके साथ प्रस्थान कर रहा था) यहाँ तक कि जब ये सब चींटियों की घाटी में पहुँचे तो एक चींटी ने कहा, "ऐ चीटियो, अपने बिलों में घूस जाओ,कहीं ऐसा न हो कि सुलैमान और उसकी सेनाएँ तुम्हें कुचल डालें और उन्हें ख़बर भी न हो।" (19) सुलैमान उसकी बात पर मुस्कराते हुए हँस पड़ा और बोला—"ऐ मेरे रब, मुझे क़ाबू में रख[3] कि मैं तेरे उस उपकार पर कृतज्ञता दिखाता रहूँ जो तूने मुझपर और मेरे माँ-बाप पर किया है और ऐसा अच्छाकर्म करूँ जो तुझे पसन्द आए, और अपनी दयालुता से मुझको अपने अच्छे बन्दों में दाख़िल कर।"

(20) (एक और अवसर पर) सुलैमान ने पक्षियों की जाँच-पड़ताल की और कहा, "क्या बात है कि मैं अमुक हुदहुद को नहीं देख रहा हूँ? क्या वह कहीं ग़ायब हो गया है? (21) मैं उसे कठोर सज़ा दूँगा या उसे ज़बह कर दूँगा, वरना उसे मेरे सामने उचित कारण प्रस्तुत करना होगा।" (22) कुछ ज़्यादा देर न गुज़री थी कि उसने आकर कहा, "मैंने वे जानकारियाँ प्राप्त की हैं जो आपकी ज्ञान-परिधि में नहीं हैं। मैं सबा[4] के बारे में विस्वसनीय सूचना लेकर आया हूँ। (23) मैंने वहाँ एक औरत देखी जो उस क़ौम की शासिका है। उसको हर तरह की सामग्री प्रदान की गई है और उसका सिंहासन बड़ा विराट है। (24,25) मैंने देखा कि वह और उसकी क़ौम अल्लाह को छोड़कर

2. अर्थात् अल्लाह का दिया सब कुछ हमारे पास मौजूद है।
3. अर्थात् जो महान शक्तियाँ और योग्यताएँ तूने मुझे दी हैं वे ऐसी हैं कि अगर मैं तनिक-सी असावधानी में भी पड़ जाऊँ तो बन्दगी की सीमा से निकलकर अपनी बड़ाई के भ्रम में न जाने कहाँ से कहाँ निकल जाऊँ। इसलिए ऐ पालनहार, तू मुझे क़ाबू में रख ताकि मैं नेमत के प्रति अकृतज्ञ बनने के बदले नेमत के प्रति कृतज्ञता पर जमा रहूँ।
4. सबा दक्षिणी अरब की प्रसिद्ध व्यापारी क़ौम थी जिसकी राजधानी मआरिब (सनआ से 55 मील दूर) थी।

सूरज के आगे सजदा करती है।"—शैतान[5] ने उनके कर्म उनके लिए शोभायमान बना दिए और उन्हें प्रशस्त पथ से रोक दिया, इस कारण वे यह सीधा मार्ग नहीं पाते कि उस अल्लाह को सजदा करें जो आसमानों और ज़मीन की छिपी चीज़ें निकालता है और वह सब कुछ जानता है जिसे तुम लोग छिपाते और जाहिर करते हो। (26) अल्लाह, कि जिसके सिवा कोई बन्दगी के योग्य नहीं, जो महान सिंहासन का मालिक है।

(27) सुलैमान ने कहा, "अभी हम देख लेते हैं कि तूने सत्य कहा है या तू झूठ बोलनेवालों में से है। (28) मेरा यह पत्र ले जा और इसे उन लोगों की ओर डाल दे, फिर अलग हटकर देख कि वे क्या प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं।"

(29) रानी[6] बोली, "ऐ दरबारियो, मेरी ओर एक बड़ा महत्त्वपूर्ण पत्र फेंका गया है। (30) वह सुलैमान की ओर से है और अल्लाह, रहमान और अत्यन्त दयावान् के नाम से आरंभ किया गयाहै। (31) मज़मून यह है कि "मेरे मुक़ाबले में सरकशी न करो और मुसलिम होकर[7] मेरे पास उपस्थित हो जाओ।" (32) (पत्र सुनाकर) रानी ने कहा, "ऐ क़ौम के सरदारो, मेरे इस मामले में मुझे मशविरा दो, मैं किसी मामले का फ़ैसला तुम्हारे बिना नहीं करती हूँ।" (33) उन्होंने जवाब दिया, "हम शक्तिशाली और लड़नेवाले लोग हैं। आगे फ़ैसला आपके हाथ में है। आप ख़ुद देख लें कि आपको क्या आदेश देना है।" (34) रानी ने कहा कि "बादशाह जब किसी देश में घुस आते हैं तो उसे ख़राब और उसके सम्मानित व्यक्तियों को अपमानित कर देते हैं। यही कुछ वे किया करते हैं। (35) मैं उन लोगों की ओर एक उपहार भेजती हूँ, फिर देखती हूँ कि मेरे दूत क्या जवाब लेकर पलटते हैं?"

(36) जब वह (रानी का दूत) सुलैमान के यहाँ पहुँचा तो उसने कहा, "क्या तुम लोग माल से मेरी सहायता करना चाहते हो? जो कुछ अल्लाह ने मुझे दे रखा है वह उससे बहुत ज़्यादा है जो तुम्हें दिया है। तुम्हारा उपहार तुम्हीं को मुबारक रहे। (37) (ऐ दूत) वापस जा अपने भेजनेवालों की ओर। हम उनपर ऐसी सेनाएँ लेकर आएँगे जिनका मुक़ाबला वे न कर सकेंगे और हम उन्हें ऐसी ज़िल्लत के साथ वहां से निकालेंगे

5. वर्णन-शैली से स्पष्ट हो रहा है कि यहाँ से आयत 26 के अन्त तक हुदहुद के कथन में अल्लाह ने अपनी ओर से ये शब्द बढ़ा दिए हैं।
6. बीच का क़िस्सा छोड़कर अब उस समय का उल्लेख होता है जब हुदहुद ने पत्र रानी के आगे फेंक दिया।
7. अर्थात् इस्लाम ग्रहण करके, या आज्ञाकारी बनकर।

कि वे अपमानित होकर रह जाएँगे।''

(38) सुलैमान ने कहा, ''ऐ दरबारियों, तुममें से कौन उसका सिंहासन मेरे पास लाता है इससे पहले कि वे लोग आज्ञाकारी होकर मेरे पास हाज़िर हों?'' (39) जिन्नों में से एक बलिष्ठ डील-डौलवाले ने कहा, ''मैं उसे हाज़िर कर दूँगा इससे पहले कि आप अपने स्थान से उठें। मुझे इसकी शक्ति प्राप्त है और मैं अमानतदार हूँ।'' (40) जिस व्यक्ति के पास किताब का एक ज्ञान था वह बोला, ''मैं आपकी पलक झपकने से पहले उसे लाए देता हूँ।'' ज्यों ही कि सुलैमान ने वह सिंहासन अपने पास रखा हुआ देखा, वह पुकार उठा, ''यह मेरे रब का उदार अनुग्रह है ताकि वह मेरी परीक्षा करे कि मैं कृतज्ञता दिखाता हूँ या कृतघ्न बन जाता हूँ. और जो कृतज्ञता दिखाता है उसका आभारी होना उसके अपने ही लिए लाभकारी है, वरना कोई कृतघ्न हो तो मेरा रब निस्स्पृह और ख़ुद अपने में आप प्रतिष्ठित है।

(41) सुलैमान[8] ने कहा, ''अनजान ढंग से उसका सिंहासन उसके सामने रख दो, देखें वह सत्य बात तक पहुँचती है या उन लोगों में से है जो सीधा मार्ग नहीं पाते।'' (42) रानी जब उपस्थित हुई तो उससे कहा गया, ''क्या तेरा सिंहासन ऐसा ही है?'' वह कहने लगी, ''यह तो मानो वही है। हम तो पहले ही जान गए थे और हम आज्ञकारारी हो गए थे (या हम मुसलिम हो चुके थे[9])।'' (43) उसको (ईमान लाने से) जिस चीज़ ने रोक रखा था वह उन उपास्यों की बन्दगी थी जिन्हें वह अल्लाह के सिवा पूजती थी, क्योंकि वह एक अधर्मी क़ौम से थी।

(44) उससे कहा गया कि महल में दाखिल हो। उसने जो देखा तो समझी कि पानी का हौज़ है और उतरने के लिए उसने अपने पाईचे उठा लिए। सुलैमान ने कहा, ''यह शीशे का चिकना फ़र्श है।'' इसपर वह पुकार उठी, ''ऐ मेरे रब, (आज तक) मैं अपने-आप पर बड़ा ज़ुल्म करती रही, और अब मैं सुलैमान के साथ सारे जहान के रब की आज्ञाकारी बन गई।''

(45) और समूद की ओर हमने उनके भाई सालेह को (यह सन्देश देकर) भेजा

8. अब उस समय का उल्लेख होता है जब सबा की रानी हज़रत सुलैमान (अलै॰) से भेंट करने के लिए उपस्थित हुई।
9. अर्थात् यह चमत्कार देखने से पहले ही सुलैमान (अलै॰) के जो गुण और हालात हमें मालूम हो चुके थे उनके आधार पर हमें विश्वास हो गया था कि वे अल्लाह के नबी हैं, सिर्फ़ एक राज्य के शासक नहीं हैं।

कि अल्लाह की बन्दगी करो, तो अचानक वे झगड़नेवाले दो वैरी दल बन गए। (46) सालेह ने कहा, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, भलाई को छोड़कर बुराई के लिए क्यों जल्दी मचाते हो? क्यों नहीं अल्लाह से माफ़ी की दुआ करते? शायद कि तुमपर दया की जाए।'' (47) उन्होंने कहा, ''हमने तो तुमको और तुम्हारे साथियों को अपशकुन का प्रतीक पाया है।'' सालेह ने जवाब दिया, ''तुम्हारे शकुन-अपशकुन की डोर तो अल्लाह के पास है। वास्तविक बात यह है कि तुम लोगों की परीक्षा हो रही है।''

(48) उस शहर में नौ जत्थेदार थे जो देश में बिगाड़ पैदा करते और कोई सुधार का कार्य न करते थे। (49) उन्होंने आपस में कहा, ''ईश्वर की क़सम खाकर प्रतिज्ञा कर लो कि हम सालेह और उसके घरवालों पर रात को हमला करेंगे और फिर उसके वली (अभिभावक) से कह देंगे[10] कि हम उसके परिवार के विनाश के अवसर पर मौजूद न थे, हम बिलकुल सच कहते हैं।'' (50) यह चाल तो वे चले और फिर एक चाल हमने चली जिसकी उन्हें ख़बर न थी। (51) अब देख लो कि उनकी चाल का परिणाम क्या हुआ। हमने तबाह करके रख दिया उनको और उनकी पूरी क़ौम को। (52) वे उनके घर ख़ाली पड़े हैं उस ज़ुल्म के बदले में जो वे करते थे, इसमें एक शिक्षा-सामग्री है उन लोगों के लिए जो ज्ञानवान हैं। (53) और बचा लिया हमने उन लोगों को जो ईमान लाए थे और अवज्ञा से बचते थे।

(54) और लूत को हमने भेजा। याद करो वह समय जब उसने अपनी क़ौम से कहा, ''क्या तुम आँखों देखते अश्लील कर्म करते हो?[11] (55) क्या तुम्हारा यही चलन है कि औरतों को छोड़कर मर्दों के पास काम-वासना की पूर्ति के लिए जाते हो? वास्तविकता यह है कि तुम लोग घोर अज्ञानता का कर्म करते हो।'' (56) मगर उसकी क़ौम का जवाब इसके सिवा कुछ न था कि उन्होंने कहा, ''निकाल दो लूत के घरवालों

10. अर्थात् हज़रत सालेह (अलै॰) के क़बीले के सरदार से, जिसको प्राचीन क़बायली रीति एवं प्रथा के अनुसार उनके ख़ून के दावे का हक़ पहुँचता था। यह वही स्थिति थी जो नबी (सल्ल॰) के समय में आपके चचा अबू तालिब को प्राप्त थी। क़ुरैश के अधर्मी भी इसी आशंका से हाथ रोकते थे कि अगर वे नबी (सल्ल॰) की हत्या कर देंगे तो बनी हाशिम के सरदार अबू तालिब अपने क़बीले की ओर से ख़ून का दावा लेकर उठेंगे।
11. अर्थात् एक-दूसरे के सामने कुकर्म करते हो। इसका स्पष्टीकरण आगे सूरा 29 (अनकबूत), आयत 29 में भी किया गया है कि वे अपनी मजलिसों में यह बुरा काम करते थे।

को अपनी बस्ती से, ये बड़े पवित्राचारी बनते हैं।'' (57) आख़िरकार हमने बचा लिया उसको और उसके घरवालों को, सिवाय उसकी बीवी के जिसका पीछे रह जाना हमने नियत कर दिया था, (58) और बरसाई उन लोगों पर एक बरसात, बहुत ही बुरी बरसात थी वह उन लोगों के हक़ में जिन्हें सावधान किया जा चुका था।

(59) (ऐ नबी) कहो, प्रशंसा है अल्लाह के लिए और सलाम उसके उन बन्दों पर जिन्हें उसने चुन लिया।

(इनसे पूछो,) अल्लाह अच्छा है या वे उपास्य जिन्हें ये लोग उसका सहभागी बना रहे हैं? (60) भला वह कौन है जिसने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया और तुम्हारे लिए आसमान से पानी बरसाया फिर उसके द्वारा वे शोभायमान बाग़ उगाए जिनके पेड़ों का उगाना तुम्हारे अधिकार में न था? क्या अल्लाह के साथ कोई दूसरा पूज्य-प्रभु भी (इन कार्यों में साझीदार) है? (नहीं,) बल्कि यही लोग सन्मार्ग से हटकर चले जा रहे हैं।

(61) और वह कौन है जिसने ज़मीन को ठहरने का स्थान बनाया और उसके अन्दर नदियाँ प्रवाहित कीं और उसमें (पहाड़ों की) मेखे गाड़ दीं और पानी के दो भण्डारों के बीच परदे डाल दिए? क्या अल्लाह के साथ कोई और पूज्य-प्रभु भी (इन कामों में सहभागी) है? नहीं, बल्कि इनमें से ज़्यादातर लोग नादान हैं।

(62) कौन है जो विकल की दुआ सुनता है जबकि वह उसे पुकारे और कौन उसकी तकलीफ़ दूर करता है? और (कौन है जो) तुम्हें ज़मीन का अधिकारी बनाता है? क्या अल्लाह के साथ कोई दूसरा पूज्य प्रभु भी (यह काम करनेवाला) है? तुम लोग कम ही सोचते हो।

(63) और वह कौन है जो सूखी ज़मीन और समुद्र के अँधेरों में तुम्हें मार्ग दिखाता है और कौन अपनी दयालुता के आगे हवाओं को शुभ-सूचना लेकर भेजता है? क्या अल्लाह के साथ कोई दूसरा पूज्य प्रभु भी (यह कार्य करता) है? बहुत उच्च है अल्लाह उस शिर्क (बहुदेववादी कर्म) से जो ये लोग करते हैं।

(64) और वह कौन है जो प्रथम बार पैदा करता और फिर उसकी पुनरावृत्ति करता है? और कौन तुमको आसमान और ज़मीन से रोज़ी देता है? क्या अल्लाह के साथ कोई और ख़ुदा भी (इन कामों में हिस्सेदार) है? कहो कि लाओ अपना प्रमाण अगर तुम सच्चे हो।

(65) इनसे कहो, अल्लाह के सिवा आसमानों और ज़मीन में कोई ग़ैब (परोक्ष)

का ज्ञान नहीं रखता। और वे (तुम्हारे पूज्य तो यह भी) नहीं जानते कि कब वे उठाए जाएँगे।

(66) बल्कि आख़िरत का तो ज्ञान ही इन लोगों से गुम हो गया है, बल्कि ये उसकी ओर से शक में हैं, बल्कि ये उससे अन्धे हैं। (67) ये इनकार करनेवाले कहते हैं, ''क्या जब हम और हमारे बाप-दादा मिट्टी हो चुके होंगे तो हमें वास्तव में क़ब्रों से निकाला जाएगा? (68) ये ख़बरे हमको भी बहुत दी गई हैं और पहले हमारे बाप-दादा को भी दी जाती रही हैं, मगर ये निरी कहानियाँ ही कहानियाँ हैं जो अगले समय से सुनते चले आ रहे हैं।'' (69) कहो तनिक ज़मीन में चल-फिरकर देखो कि अपराधियों का क्या परिणाम हो चुका है। (70) ऐ नबी, इनकी दशा पर दुखी न हो और न इनकी चालों पर दिल तंग हो (71)—वे कहते हैं कि ''यह धमकी कब पूरी होगी अगर तुम सच्चे हो?'' (72) कहो, क्या आश्चर्य कि जिस अज़ाब के लिए तुम जल्दी मचा रहे हो उसका एक भाग तुम्हारे करीब ही आ लगा हो। (73) वास्तविकता यह है कि तेरा रब तो लोगों पर बड़ा उदार अनुग्रह करनेवाला है, मगर ज़्यादातर लोग कृतज्ञता नहीं दिखाते। (74) निस्संदेह तेरा रब ख़ूब जानता है जो कुछ उनके सीने अपने भीतर छिपाए हुए हैं और जो कुछ वे व्यक्त करते हैं। (75) आसमान और ज़मीन की कोई छिपी चीज़ ऐसी नहीं है जो एक स्पष्ट किताब में लिखी हुई मौजूद न हो।[12]

(76,77) यह सत्य है कि यह क़ुरआन इसराईलियों को प्रायः उन बातों की वास्तविकता बताता है जिनमें वे विभेद रखते हैं और यह मार्गदर्शन और दयालुता है ईमान लानेवालों के लिए। (78) यक़ीनन (इसी तरह) तेरा रब इन लोगों के बीच भी अपने आदेश से फैसला कर देगा[13] और वह प्रभुत्वशाली और सब कुछ जाननेवाला है। (79) अतः ऐ नबी, अल्लाह पर भरोसा रखो, यक़ीनन तुम स्पष्ट सत्य पर हो। (80) तुम मुर्दों को नहीं सुना सकते,[14] न उन बहरों तक अपनी पुकार पहुँचा सकते हो जो पीठ फेरकर भागे जा रहे हों, (81) और न अन्धों को मार्ग बताकर भटकने से बचा सकते हो। तुम तो अपनी बात उन्हीं लोगों को सुना सकते हो जो हमारी आयतों पर ईमान लाते हैं और फिर आज्ञाकारी बन जाते हैं।

---

12. स्पष्ट किताब से मुराद भाग्य-लेख्य है।
13. अर्थात् क़ुरैश के अधर्मियों और ईमानवालों के बीच।
14. अर्थात् ऐसे लोगों को जिनकी अन्तरात्माएँ मर चुकी हैं और जिनमें दुराग्रह और हठधर्मी और परस्परावाद ने सत्य और असत्य का अन्तर समझने की कोई क्षमता शेष नहीं छोड़ी है।

(82) और जब हमारी बात पूरी होने का समय उनपर आ पहुँचेगा तो हम उनके लिए एक जानवर ज़मीन से निकालेंगे जो उनसे बात करेगा कि लोग हमारी आयतों पर विश्वास नहीं करते थे।[15] (83) और तनिक कल्पना करो उस दिन की जब हम प्रत्येक समुदाय में से एक फ़ौज की फ़ौज उन लोगों को घेर लाएँगे जो हमारी आयतों को झुठलाया करते थे, फिर उनको (उनकी क़िस्मों के अनुसार श्रेणियों में) क्रमबद्ध किया जाएगा। (84) यहाँ तक कि जब सब आ जाएँगे, तो (उनका रब उनसे) पूछेगा कि ''तुमने मेरी आयतों को झुठला दिया हालाँकि ज्ञान की दृष्टि से तुम उनपर हावी न हुए थे? अगर यह नहीं तो और तुम क्या कर रहे थे?'' (85) और उनके ज़ुल्म के कारण अज़ाब का वादा उनपर पूरा हो जाएगा, तब वे कुछ भी न बोल सकेंगे। (86) क्या उनको सुझाई न देता था कि हमने रात उनके लिए शान्ति प्राप्त करने को बनाई थी और दिन को प्रकाशमान किया था? इसमें बहुत-सी निशानियाँ थीं उन लोगों के लिए जो ईमान लाते थे।

(87) और क्या गुज़रेगी उस दिन जबकि सूर (नरसिंघा) फूँका जाएगा और हौल

15. हज़रत इब्न उमर (रज़ि॰) का कथन है कि यह उस समय होगा जब ज़मीन में कोई नेकी का आदेश देनेवाला और बुराई से रोकनेवाला बाक़ी न रहेगा। एक हदीस हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) से रिवायत है जिसमें वे कहते हैं कि यही बात उन्होंने ख़ुद नबी (सल्ल॰) से सुनी थी। इससे मालूम हुआ कि जब इनसान भलाई के लिए कहना और बुराई से रोकना छोड़ देंगे तो क़ियामत क़ायम होने से पहले अल्लाह एक जानवर के द्वारा अन्तिम बार तर्कसंगत बात सामने लाएगा कि किसी के लिए आपत्ति उठाने का अवसर न रहे। यह बात स्पष्ट नहीं है कि यह एक ही जानवर होगा या एक विशेष प्रकार की पशु जाति होगी जिसके अलग-अलग बहुत-से जानवर ज़मीन में फैल जाएँगे—'दाब्बतुम मिनल अर्ज़' (एक जानवर ज़मीन से) के शब्दों में दोनों अर्थों की संभावना है। इस जानवर के निकलने का समय कौन-सा होगा? इसके सम्बन्ध में नबी (सल्ल॰) का कथन है कि ''सूरज पश्चिम से उदय होगा और एक रोज़ दिन-दहाड़े यह जानवर निकल आएगा।'' रहा किसी जानवर का इनसानों से इनसान की भाषा में बात करना, तो यह अल्लाह की सामर्थ्य का एक चमत्कार है। वह जिस चीज़ को चाहे बोलने की शक्ति प्रदान कर सकता है। क़ियामत से पहले तो वह एक जानवर ही को बोलने की शक्ति प्रदान करेगा मगर जब यह क़ियामत आ जाएगी तो अल्लाह के न्यायालय में इनसान की आँख और कान और उसके शरीर की खाल तक बोल उठेगी, जैसा कि क़ुरआन (41:20-21) में स्पष्टतः बयान हुआ है।

खा जाएँगे वे सब जो आसमानों और ज़मीन में हैं—सिवाय उन लोगों के जिन्हें अल्लाह उस हौल से बचाना चाहेगा—और सब कान दबाए उसके पास हाज़िर हो जाएँगे। (88) आज तू पहाड़ों को देखता है और समझता है कि ख़ूब जमे हुए हैं, मगर उस समय ये बादलों की तरह उड़ रहे होंगे, यह अल्लाह की सामर्थ्य का चमत्कार होगा जिसने हर चीज़ को तत्त्वदर्शिता के साथ सुदृढ़ किया है। वह ख़ूब जानता है कि तुम लोग क्या करते हो। (89) जो व्यक्ति भलाई लेकर आएगा उसे उससे अधिक अच्छा बदला मिलेगा और ऐसे लोग उस दिन के हौल से सुरक्षित होंगे, (90) और जो बुराई लिए हुए आएगा, ऐसे सब लोग औंधे मुँह आग में फेंके जाएँगे। क्या तुम लोग इसके सिवा कोई और बदला पा सकते हो कि जैसा करो वैसा भरो?

(91,92) (ऐ नबी, इनसे कहो) ''मुझे तो यही आदेश दिया गया है कि इस शहर (मक्का) के रब की बन्दगी करूँ जिसने इसे 'हरम' (आदरणीय) बनाया है और जो हर चीज़ का मालिक है। मुझे आदेश दिया गया है कि मैं मुसलिम बनकर रहूँ और यह क़ुरआन पढ़कर सुनाऊँ।'' अब जो सन्मार्ग ग्रहण करेगा वह अपनी ही भलाई के लिए सन्मार्ग ग्रहण करेगा और जो पथभ्रष्ट हो उससे कह दो कि ''मैं तो बस सावधान कर देनेवाला हूँ।'' (93) उनसे कहो, प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है, जल्द ही वह तुम्हें अपनी निशानियाँ दिखा देगा और तुम उन्हें पहचान लोगे, और तेरा रब बेख़बर नहीं है उन कर्मों से जो तुम लोग करते हो।



28. अल-क़सस

नाम

आयत 25 के इस वाक्यांश से उद्धृत है : "और अपना सारा वृत्तान्त (अल-क़सस) उसे सुनाया।" अर्थात् वह सूरा जिसमें 'अल-क़सस' का शब्द आया है।

अवतरणकाल

सूरा 27 (नम्ल) के परिचयात्मक लेख में हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) और हज़रत जाबिर-बिन-ज़ैद (रज़ि०) का यह कथन हम उद्धृत कर चुके हैं कि सूरा 26 (अशुअरा), सूरा 27 (नम्ल) और सूरा क़सस क्रमशः अवतरित हुई हैं। भाषा, वर्णन-शैली और विषय-वस्तुओं से भी यही महसूस होता है कि इन तीनों सूरतों का अवतरणकाल लगभग एक ही है। और इस दृष्टि से भी इन तीनों में निकटवर्ती सम्बन्ध है कि हज़रत मूसा (अलै०) के वृत्तान्त के विभिन्न अंश जो इनमें वर्णित हुए हैं वे परस्पर मिलकर एक पूरा क़िस्सा बन जाते हैं।

विषय और वार्ताएँ

इसका विषय उन सन्देहों और आक्षेपों का निवारण करना है जो नबी (सल्ल०) की पैग़म्बरी पर किए जा रहे थे, और उन आपत्तियों और विवशताओं को रद्द करना है जो आपपर ईमान न लाने के लिए प्रस्तुत की जाती थीं। इस उद्देश्य के लिए सबसे पहले हज़रत मूसा (अलै०) का क़िस्सा बयान किया गया है, जो अवतरण काल की परिस्थितियों से मिलकर स्वतः कुछ तथ्य सुननेवालों के मन में बिठा देता है : प्रथम यह कि अल्लाह जो कुछ करना चाहता है उसके लिए वह ग़ैरमहसूस ढंग से संसाधन जुटा देता है। जिस बच्चे के हाथों अन्ततः फ़िरऔन का तख़्ता उलटना था, उसे अल्लाह ने स्वयं फ़िरऔन ही के घर में उसके अपने हाथों पालन-पोषण करा दिया। दूसरे यह कि पैग़म्बरी किसी व्यक्ति को किसी बड़े समारोह और धरती और आकाश से किसी भारी उद्घोषणा के साथ नहीं दी जाती। तुमको आश्चर्य है कि मुहम्मद (सल्ल०) को चुपके से यह पैग़म्बरी कहाँ से मिल गई और बैठे बिठाए ये नबी कैसे बन गए। किन्तु जिन मूसा (अलै०) का तुम हवाला देते हो कि "क्यों न दिया गया इसको वही कुछ जो मूसा को दिया गया था" (आयत 48) उन्हें भी इसी तरह राह चलते पैग़म्बरी मिल गई थी। तीसरे यह कि जिस बन्दे से ईश्वर कोई काम लेना चाहता है, देखने में कोई ताक़त उसके पास नहीं होती, किन्तु बड़ी-बड़ी सेनाओं और साज़-सज्जावाले अन्ततः उसके मुक़ाबले में धरे के धरे रह जाते हैं। जो तुलनात्मक अन्तर तुम अपने और मुहम्मद (सल्ल०) के मध्य पा रहे

हो उससे बहुत अधिक अन्तर मूसा (अलै०) और फ़िरऔन की शक्ति के मध्य था। किन्तु देख लो कि आख़िर कौन जीता और कौन हारा। चौथे यह कि तुम लोग बार-बार मूसा (अलै०) का हवाला देते हो कि "मुहम्मद को वह कुछ क्यों न दिया गया, जो मूसा को दिया गया।" अर्थात् (चमत्कारी) लाठी और चमकता हाथ और दूसरे खुले-खुले चमत्कार। किन्तु तुम्हें कुछ मालूम भी है कि जिन लोगों को वे चमत्कार दिखाए गए थे वे उन्हें देखकर भी ईमान न लाए, क्योंकि वे सत्य के विरुद्ध हठधर्मी और शत्रुता में पड़े हुए थे। इसी रोग में आज तुम ग्रस्त हो। क्या तुम उसी तरह के चमत्कार देखकर ईमान ले आओगे? फिर तुम्हें कुछ यह भी ख़बर है कि जिन लोगों ने उन चमत्कारों को देखकर सत्य का इनकार किया था उनका परिणाम क्या हुआ? अन्ततः अल्लाह ने उन्हें तबाह करके छोड़ा। अब क्या तुम भी हठधर्मी के साथ चमत्कार माँगकर अपने दुर्भाग्य को बुलाना चाहते हो? ये वे बातें हैं जो किसी स्पष्टीकरण के बिना आप से आप हर उस व्यक्ति के मन में उतर जाती थी जो मक्का के अधर्मपूर्ण वातावरण में इस क़िस्से को सुनता था, क्योंकि उस समय मुहम्मद (सल्ल०) और मक्का के काफ़िरों के मध्य वैसा ही एक संघर्ष चल रहा था, जैसा इससे पहले फ़िरऔन और हज़रत मूसा (अलै०) के मध्य चल चुका था। इसके पश्चात् आयत 43 से मूल विषय पर प्रत्यक्ष रूप से वार्ता का आरम्भ होता है। पहले इस बात को मुहम्मद (सल्ल०) की पैग़म्बरी का प्रमाण ठहराया गया है कि आप बेपढ़े-लिखे होने के बावजूद दो हजार वर्ष पूर्व घटित एक ऐतिहासिक घटना को इस विस्तार के साथ हू ब हू सुना रहे हैं। फिर आपके नबी बनाए जाने को उन लोगों के पक्ष में अल्लाह की एक दयालुता ठहराया जाता है कि वे बेसुध पड़े हुए थे और अल्लाह ने उनके मार्गदर्शन के लिए यह व्यवस्था की। फिर उनके इस आक्षेप का उत्तर दिया जाता है, "यह नबी वह चमत्कार क्यों न लाया, जो इससे पहले मूसा (अलै०) लाए थे।" उनसे कहा जाता है कि मूसा (अलै०) ही को तुमने कब माना है कि अब इस नबी से चमत्कार की माँग करते हो? अन्त में मक्का के काफ़िरों की उस मूल आपत्ति को लिया जाता है जो नबी (सल्ल०) की बात न मानने के लिए वे प्रस्तुत करते थे। उनका कहना यह था कि यदि हम अरबवालों के बहुदेववादी धर्म को छोड़कर इस नए एकेश्वरवादी धर्म को स्वीकार कर ले तो सहसा इस देश से हमारी धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक चौधराहट समाप्त हो जाएगी। यह चूँकि क़ुरैश के सरदारों का सत्य से वैर रखने का वास्तविक प्रेरक था, इसलिए अल्लाह ने इसपर सूरा के अनत तक विस्तृत वार्तालाप किया है।



28. सूरा अल-क़सस

(मक्का में उतरी–आयतें 88)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ता॰ सीम॰ मीम॰। (2) ये स्पष्ट किताब की आयतें हैं। (3) हम मूसा और फ़िरऔन का कुछ हाल ठीक-ठीक तुम्हें सुनाते हैं, ऐसे लोगों के लाभ के लिए जो ईमान लाएँ।

(4) वास्तविकता यह है कि फ़िरऔन ने ज़मीन में सिर उठाया और उसके निवासियों को गिरोहों में बाँट दिया। उनमें से एक गिरोह को वह अपमानित करता था, उसके लड़कों को क़त्ल करता और उसकी लड़कियों को जीता रहने देता था। वास्तव में वह बिगाड़ पैदा करनेवाले लोगों में से था। (5) और हम यह इरादा रखते थे कि दया करें उन लोगों पर जो ज़मीन में अपमानित करके रखे गए थे और उन्हें पेशवा बना दें और उन्हीं को वारिस बनाएँ (6) और ज़मीन में उनको प्रभुत्व प्रदान करें और उनसे फ़िरऔन और हामान और उनकी सेनाओं को वही कुछ दिखलाएँ जिसका उन्हें डर था।

(7) हमने मूसा की माँ को इशारा किया[1] कि "इसको दूध पिला, फिर जब तुझे उसकी जान का ख़तरा हो तो उसे दरिया में डाल दे और कुछ डर और चिन्ता न कर, हम उसे तेरे ही पास ले आएँगे और उसे पैग़म्बरों में शामिल करेंगे।" (8) आख़िरकार फ़िरऔन के घरवालों ने उसे (दरिया से) निकाल लिया ताकि वह उनका दुश्मन और उनके लिए दुख का कारण बने, निस्संदेह फ़िरऔन और हामान और उनकी सेनाएँ (अपने उपायों में) बड़ी कार्य-भ्रष्ट थीं। (9) फ़िरऔन की बीवी ने (उससे) कहा, "यह मेरे और तेरे लिए आँखों की ठण्डक है, इसे क़त्ल न करो, आश्चर्य नहीं कि यह हमारे लिए लाभदायक सिद्ध हो या हम इसे बेटा ही बना लें।" और वे (परिणाम से) बेख़बर थे।

(10) उधर मूसा की माँ का दिल उड़ा जा रहा था। वह उसका भेद ख़ोल देती अगर हम उसकी ढारस न बँधा देते ताकि वह (हमारे वादे पर) ईमान लानेवालों में से हो। (11) उसने बच्चे की बहन से कहा, इसके पीछे-पीछे जा। अतएव वह अलग से उसको इस तरह देखती रही कि (दुश्मनों को) इसका पता न चला (12) और हमने बच्चे पर पहले ही दूध पिलानेवालियों की छातियाँ हराम कर रखी थीं। (यह हालत

1. बीच में यह नहीं बताया कि इन्हीं परिस्थितियों में एक इसराईली घर में वह बच्चा पैदा हो गया जिसको दुनिया ने मूसा (अलैहिस्सलाम) के नाम से जाना।

देखकर) उस लड़की ने उनसे कहा, "मैं तुम्हें ऐसे घर का पता बताऊँ जिसके लोग इसके पालन-पोषण का ज़िम्मा लें और ख़ैरख़्वाही के साथ इसे रखें?" (13) इस तरह हम मूसा को उसकी माँ के पास पलटा लाए ताकि उसकी आँखें ठण्डी हों और वह शोकाकुल न हो और जान ले कि अल्लाह का वादा सच्चा था, मगर ज़्यादातर लोग इस बात को नहीं जानते।

(14) जब मूसा अपनी पूरी जवानी को पहुँच गया और उसका विकास पूरा हो गया तो हमने उसे निर्णय-शक्ति और ज्ञान प्रदान किया, हम नेक लोगों को ऐसा ही बदला देते हैं। (15) (एक दिन) वह शहर में ऐसे समय दाख़िल हुआ जबकि शहरवाले ग़फ़लत में थे। वहाँ उसने देखा कि दो आदमी लड़ रहे हैं। एक उसकी अपनी क़ौम का था और दूसरा उसकी दुश्मन क़ौम से सम्बन्ध रखता था। उसकी क़ौम के आदमी ने दुश्मन क़ौम के व्यक्ति के विरुद्ध उसे सहायता के लिए पुकारा। मूसा ने उसको एक घूँसा मारा और उसका काम तमाम कर दिया। (यह हरकत हो जाते ही) मूसा ने कहा, "यह शैतान की कार्यवाई है, वह बड़ा दुश्मन और खुला पथभ्रष्ट करनेवाला है।" (16) फिर वह कहने लगा, "ऐ मेरे रब, मैंने अपने आपपर ज़ुल्म कर डाला, मुझे माफ़ कर दे।" अतएव अल्लाह ने उसे माफ़ कर दिया,[2] वह माफ़ करनेवाला, अत्यन्त दयावान् है। (17) मूसा ने प्रतिज्ञा की कि "ऐ मेरे रब, यह उपकार जो तूने मुझपर किया है[3] इसके बाद अब मैं कभी अपराधियों का सहायक न बनूँगा।"

(18) दूसरे दिन वह सुबह सवेरे डरता और हर ओर से ख़तरा भाँपता हुआ शहर में जा रहा था कि अचानक क्या देखता है कि वही व्यक्ति जिसने कल उसे मदद के लिए पुकारा था आज फिर उसे पुकार रहा है। मूसा ने कहा, "तू तो बड़ा ही बहका हुआ आदमी है।" (19) फिर जब मूसा ने इरादा किया कि दुश्मन क़ौम के आदमी पर हमला करे तो वह पुकार उठा,[4] "ऐ मूसा, क्या आज तू मुझे उसी तरह क़त्ल करने लगा है जिस तरह कल एक व्यक्ति को क़त्ल कर चुका है? तू इस देश में बहुत ही निर्दयी अत्याचारी बनकर रहना चाहता है, सुधार करना नहीं चाहता।" (20) इसके बाद एक आदमी

2. यहाँ अरबी में जो शब्द इस्तेमाल हुआ है उसका अर्थ माफ़ करना भी है, और छिपाना भी। हज़रत मूसा (अलै॰) की दुआ का अर्थ यह था कि मेरे इस पाप को (जिसे तू जानता है कि मैंने जान-बूझकर नहीं किया है) माफ़ भी कर दे और इसका परदा भी ढाँक दे ताकि दुश्मनों को इसका पता न चले।

3. अर्थात् मेरा यह कर्म छिपा रह गया, और दुश्मन क़ौम के किसी व्यक्ति ने मुझको नहीं देखा, और मुझे बच निकलने का अवसर मिल गया।

शहर के परले सिरे से दौड़ता हुआ आया और बोला,[5] "मूसा, सरदारों में तेरे क़त्ल के लिए मशविरे हो रहे हैं, यहाँ से निकल जा, मैं तेरा हितैषी हूँ।" (21) यह ख़बर सुनते ही मूसा डरता और सहमता निकल खड़ा हुआ और उसने दुआ की कि "ऐ मेरे रब, मुझे ज़ालिमों से बचा।"

(22) (मिस्र से निकलकर) जब मूसा ने मदयन का रुख किया तो उसने कहा, "उम्मीद है मेरा रब मुझे ठीक रास्ते पर डाल देगा।"[6] (23) और जब वह मदयन के कुएँ पर पहुँचा तो उसने देखा कि बहुत-से लोग अपने जानवरों को पानी पिला रहे हैं और उनसे अलग एक ओर दो औरतें अपने जानवरों को रोक रही हैं। मूसा ने उन औरतों से पूछा, "तुम्हें क्या परेशानी है?" उन्होंने कहा, "हम अपने जानवरों को पानी नहीं पिला सकतीं जब तक ये चरवाहे अपने जानवर न निकाल ले जाएँ, और हमारे बाप एक बहुत बूढ़े आदमी हैं।" (24) यह सुनकर मूसा ने उनके जानवरों को पानी पिला दिया, फिर एक छाया के स्थान पर जा बैठा और बोला, "पालनहार, जो भलाई भी तू मुझपर उतार दे मैं उसका मुहताज हूँ।" (25) (कुछ देर न हुई थी कि) उन दोनों औरतों में से एक शर्म व लज्जा के साथ चलती हुई उसके पास आई और कहने लगी, "मेरे बाप आपको बुला रहे हैं ताकि आपने हमारे लिए जानवरों को जो पानी पिलाया है उसका बदला आपको दें।" मूसा जब उसके पास पहुँचा और अपना सारा क़िस्सा उसे सुनाया तो उसने कहा, "कुछ भय न करो, अब तुम ज़ालिम लोगों से बच निकले हो।"

(26) उन दोनों औरतों में से एक ने अपने बाप से कहा, "अब्बा जान, इस व्यक्ति को नौकर रख लीजिए, सबसे अच्छा आदमी जिसे आप मुलाज़िम रखें वही हो सकता है जो बलवान और अमानतदार हो।" (27) उसके बाप ने (मूसा से) कहा, "मैं चाहता हूँ कि अपनी इन दो बेटियों में से एक की शादी तुम्हारे साथ कर दूँ शर्त यह है कि तुम आठ साल तक मेरे यहाँ नौकरी करो, और अगर दस साल पूरे कर दो तो यह तुम्हारी इच्छा है। मैं तुमपर सख़्ती नहीं करना चाहता। तुम अगर अल्लाह ने चाहा तो

4. यह पुकारनेवाला वही इसराईली था जिसकी सहायता के लिए हज़रत मूसा (अलै०) आगे बढ़े थे। उसको डाँटने के बाद जब आप मिस्री को मारने के लिए चले तो इसराईली ने समझा कि ये मुझे मारने आ रहे हैं, इसलिए उसने चीख़ना शुरू कर दिया और अपनी मूर्खता से कल के क़त्ल का भेद खोल दिया।
5. अर्थात् इस दूसरे झगड़ों में जब क़त्ल का रहस्य प्रकट हो गया और उस मिस्री ने जाकर ख़बर कर दी तब यह घटना घटित हुई।
6. अर्थात् ऐस मार्ग पर जिससे मैं सकुशल मदयन पहुँच जाऊँ।

मुझे नेक आदमी पाओगे।" (28) मूसा ने जवाब दिया, "यह बात मेरे और आपके बीच तय पा चुकी। इन दोनों अवधि में से जो भी मैं पूरी कर दूँ उसके बाद फिर कोई ज़्यादती मुझपर न हो, और जो कुछ समझौता हम कर रहे हैं अल्लाह उसपर निगहबान है।"

(29) जब मूसा ने अवधि पूरी कर दी और वह अपने बाल-बच्चों को लेकर चला तो तूर की ओर उसको एक आग दिखाई दी। उसने अपने घरवालों से कहा, "ठहरो, मैंने एक आग देखी है, शायद मैं वहाँ से कोई ख़बर ले आऊँ या उस आग से कोई अंगारा ही उठा लाऊँ जिससे तुम ताप सको।" (30) वहाँ पहुँचा तो घाटी के दाहिने किनारे पर[7] शुभ क्षेत्र में एक पेड़ से पुकारा गया कि "ऐ मूसा, मैं ही अल्लाह हूँ, सारे जहानवालों का मालिक।" (31) और (आदेश दिया गया कि) फेंक दे अपनी लाठी। ज्यों ही कि मूसा ने देखा कि वह लाठी साँप की तरह बल खा रही है तो वह पीठ फेरकर भागा और उसने मुड़कर भी न देखा। (कहा गया) "मूसा, पलट आ और भय न खा, तू बिलकुल सुरक्षित है। (32) अपना हाथ गरेबान में डाल, चमकता हुआ निकलेगा बिना किसी तकलीफ़ के। और भय से बचने के लिए अपनी भुजा भींच ले।[8] ये दो खुली निशानियाँ हैं तेरे रब की ओर से फ़िरऔन और उसके दरबारियों के सामने प्रस्तुत करने के लिए, वे बड़े अवज्ञाकारी लोग हैं।" (33) मूसा ने निवेदन किया, "मेरे स्वामी, मैं तो उनके एक आदमी को क़त्ल कर चुका हूँ, डरता हूँ कि वे मुझे मार डालेंगे, (34) और मेरा भाई हारून मुझसे ज़्यादा ज़बान का धनी है, उसे मेरे साथ सहायक के रूप में भेज ताकि वह मेरा समर्थन करे, मुझे आशंका है कि वे लोग मुझे झुठलाएँगे।" (35) कहा, "हम तेरे भाई के द्वारा तेरा हाथ मज़बूत करेंगे और तुम दोनों को ऐसा प्रताप प्रदान करेंगे कि वे तुम्हारा कुछ न बिगाड़ सकेंगे। हमारी निशानियों के बल से तुम और तुम्हारे अनुयायी ही ऊपर रहेंगे।"

(36) फिर जब मूसा उन लोगों के पास हमारी खुली-खुली निशानियाँ लेकर पहुँचा तो उन्होंने कहा कि "यह कुछ नहीं है मगर बनावटी जादू। और ये बातें तो हमने अपने बाप-दादा के समय में कभी सुनी ही नहीं।" (37) मूसा ने जवाब दिया, "मेरा रब ऊस व्यक्ति के हाल से अच्छी तरह परिचित है जो उसकी ओर से मार्गदर्शन लेकर आया

7. अर्थात् उस किनारे पर जो हज़रत मूसा (अलै०) के दाहिने हाथ की ओर था।
8. अर्थात् जब कभी कोई ख़तरनाक अवसर ऐसा आए जिससे तुम्हारे दिल में डर पैदा हो तो अपनी भुजा भींच लिया करो, इससे तुम्हारा दिल मज़बूत हो जाएगा और आतंक और भय की कोई दशा तुम्हारे अन्दर बाक़ी न रहेगी।

है और वही अच्छी तरह जानता है कि अन्तिम परिणाम किसका अच्छा होना है, सत्य यह है कि ज़ालिम कभी सफल नहीं होते।''

(38) और फ़िरऔन ने कहा, ''ऐ दरबारवालों, मैं तो अपने सिवा तुम्हारे किसी रब को नहीं जानता। हामान, तनिक ईटें पकवाकर मेरे लिए एक ऊँचा भवन तो बनवा, शायद कि उसपर चढ़कर मैं मूसा के रब को देख सकूँ, मैं तो इसे झूठा समझता हूँ।''

(39) उसने और उसकी सेनाओं ने ज़मीन में बिना किसी हक़ के अपनी बड़ाई का घमण्ड किया और समझे कि उन्हें कभी हमारी ओर पलटना नहीं है। (40) आख़िरकार हमने उसे और उसकी सेनाओं को पकड़ा और समुद्र में फेंक दिया। अब देख लो कि उन ज़ालिमों का कैसा परिणाम हुआ। (41) हमने उन्हें जहन्नम की ओर निमंत्रण देनेवाला पेशवा बना दिया और क़ियामत के दिन वे कहीं से कोई सहायता न पा सकेंगे। (42) हमने इस दुनिया में उनके पीछे लानत लगा दी और क़ियामत के दिन वे बड़ी बदहाली में ग्रस्त होंगे।

(43) पिछली नस्लों को विनष्ट करने के बाद हमने मूसा को किताब प्रदान की, लोगों के लिए अन्तर्दृष्टियों की सामग्री बनाकर, मार्गदर्शन और दयालुता बनाकर, ताकि शायद लोग शिक्षा ग्रहण करें। (44) (ऐ नबी) तुम उस समय पश्चिमी भाग में मौजूद न थे[9] जब हमने मूसा को यह शरीअत का आदेश प्रदान किया, और न तुम साक्षियों में सम्मिलित थे, (45) बल्कि उसके बाद (तुम्हारे समय तक) हम बहुत-सी नस्लें उठा चुके हैं और उनपर बहुत समय बीत चुका है। तुम मदयनवालों के बीच भी मौजूद न थे कि उनको हमारी आयतें सुना रहे होते, किन्तु (उस समय की ये ख़बरें) भेजनेवाले हम हैं। (46) और तुम तूर के दामन में भी उस समय मौजूद न थे जब हमने (मूसा को पहली बार) पुकारा था, मगर यह तुम्हारे रब की दयालुता है (कि तुमको ये जानकारियाँ दी जा रही हैं) ताकि तुम उन लोगों को सचेत करो जिनके पास तुमसे पहले कोई सचेत करनेवाला नहीं आया, शायद कि वे होश में आएँ। (47) (और यह हमने इसलिए किया कि) कहीं ऐसा न हो कि उनकी अपनी करतूतों के कारण कोई मूसीबत जब उनपर आए तो वे कहें, ''ऐ पालनहार, तूने क्यों न हमारी ओर कोई रसूल भेजा कि हम तेरी आयतों का अनुसरण करते और ईमानवालों में से होते।''

(48) मगर जब हमारे यहाँ से सत्य उनके पास आ गया तो वे कहने लगे, ''क्यों

9. पश्चिमी भाग से मुराद तूर सीना (सीनीन) है जो हिजाज़ से पश्चिम की ओर स्थित है।

न दिया गया इसको वही कुछ जो मूसा को दिया गया था?'' क्या ये लोग उसका इनकार नहीं कर चुके हैं जो इससे पहले मूसा को दिया गया था?[10] इन्होंने कहा, ''दोनों जादू[11] हैं जो एक-दूसरे की सहायता करते हैं।'' और कहा, ''हम किसी को नहीं मानते।'' (49) (ऐ नबी) इनसे कहो, ''अच्छा तो लाओ अल्लाह की ओर से कोई किताब जो इन दोनों से ज़्यादा मार्ग दिखानेवाली हो अगर तुम सच्चे हो, मैं उसी का अनुसरण करूँगा।'' (50) अब अगर वे तुम्हारी यह माँग पूरी नहीं करते तो समझ लो कि वास्तव में ये अपनी इच्छाओं पर चलते हैं, और उस व्यक्ति से बढ़कर कौन पथभ्रष्ट होगा जो ईश्वरीय मार्गदर्शन के बिना बस अपनी इच्छाओं के पीछे चले? अल्लाह ऐसे ज़ालिमों को हरगिज़ मार्ग नहीं दिखाता। (51) और (उपदेश की) बात निरन्तर हम उन्हें पहुँचा चुके हैं ताकि वे ग़फ़लत से जाग जाएँ।

(52) जिन लोगों को इससे पहले हमने किताब दी थी वे इस (क़ुरआन) पर ईमान लाते हैं।[12] (53) और जब यह उनको सुनाया जाता है तो वे कहते है कि ''हम इसपर ईमान लाए, यह वास्तव में सत्य है हमारे रब की ओर से, हम तो पहले ही से मुसलिम हैं।'' (54) ये वे लोग हैं जिन्हें उनका बदला दो बार दिया जाएगा[13] उस धैर्य और जमाव के कारण जो उन्होंने दिखाया। वे बुराई को भलाई से दूर करते हैं और जो कुछ रोज़ी हमने उन्हें दी है उसमें से ख़र्च करते हैं। (55) और जब उन्होंने व्यर्थ एवं

10. अर्थात् मक्का के अधर्मियों ने मूसा ही को कब माना था कि अब ये कहते हैं कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को वे चमत्कार क्यों न दिए गए जो हज़रत मूसा (अलै०) को दिए गए थे।
11. अर्थात् क़ुरआन और तौरात दोनों।
12. इससे मुराद यह नहीं है कि सभी किताबवाले (यहूदी और ईसाई) इसपर ईमान लाते हैं। बल्कि यह इशारा वास्तव में उस घटना की ओर है जो इस सूरा के अवतरण के समय में घटित हुई थी, और इससे मक़सद मक्कावालों को शर्म दिलाना है कि तुम अपने घर आई हुई प्रिय वस्तु को ठुकरा रहे हो हालाँकि दूर-दूर के लोग उसकी ख़बर सुनकरक आ रहे हैं और उसके मूल्य को पहचानकर उससे लाभ उठा रहे हैं। वह घटना जिसकी ओर यह इशारा है, यह थी कि हबश से 20 के लगभग ईसाई अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास आए और क़ुरआन आपसे सुनकर ईमान ले आए।
13. अर्थात् एक बदला पिछली किताबों पर ईमान लाने का और दूसरा बदला क़ुरआन पर ईमान लाने का।

अशिष्ट बात सुनी तो यह कहकर उससे किनारा ख़ींच लिया कि "हमारे कर्म हमारे लिए और तुम्हारे कर्म तुम्हारे लिए, तुमको सलाम है, हम अज्ञानियों का-सा तरीक़ा अपनाना नहीं चाहते।"[14] (56) ऐ नबी, तुम जिसे चाहो उसे राह पर नहीं ला सकते, मगर अल्लाह जिसे चाहता है राह दिखाता है और वह उन लोगों को ख़ूब जानता है जो सन्मार्ग ग्रहण करनेवाले हैं।

(57) वे कहते हैं, "अगर हम तुम्हारे साथ इस मार्गदर्शन का अनुसरण कर लें तो अपनी ज़मीन से उचक लिए जाएँगे।"[15]

क्या यह सत्य नहीं है कि हमने एक शान्तिपूर्ण 'हरम' को इनके लिए निवास-स्थान बना दिया जिसकी ओर हर तरह के फल खिंचे चले आते हैं, हमारी ओर से रोज़ी के रूप में? मगर इनमें से ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं।[16]

(58) और कितनी ही ऐसी बस्तियाँ हम तबाह कर चुके हैं जिनके लोग अपने जीवन-व्यापार पर इतरा गए थे। सो देख लो, वे उनके निवास-स्थान पड़े हुए हैं जिनमें उनके बाद कम ही कोई बसा है, आख़िरकार हम ही वारिस होकर रहे।[17]

(59) और तेरा रब बस्तियों को विनिष्ट करनेवाला न था जब तक कि उनके केन्द्र में एक रसूल न भेज देता जो उनको हमारी आयतें सुनाता। और हम बस्तियों को विनिष्ट

14. जब ये लोग ईमान ले आए तो अबू जहल ने इनको गालियाँ दीं। इसी बात का उल्लेख यहाँ हो रहा है।
15. यह वह बात है जो क़ुरैश के अधर्मी इस्लाम स्वीकार न करने के लिए उज्र के रूप में पेश करते थे। उनका मतलब यह था कि आज तो हम सम्पूर्ण अरब के बहुदेववादियों के धर्मगुरु बने हुए हैं लेकिन अगर हम मुहम्मद (सल्ल॰) की बात मान लें तो सारा अरब हमारा दुश्मन हो जाएगा।
16. यह अल्लाह की ओर से उनके उज्र का पहला जवाब है। इसका अर्थयह है कि यह 'हरम' (प्रतिष्ठित स्थान) जिसकी अमन-शांति और जिसकी केन्द्रीयता के कारण आज तुम इसयोग्य हुए हो कि दुनिया-भर का व्यापार का माल इस ऊसर घाटी में खिंचा चला आ रहा है, क्या इसको यह अमन और यह केन्द्रीयता का स्थान तुम्हारे किसी उपाय ने दिया है?
17. यह उनके उज्र का दूसरा जवाब है। इसका अर्थ यह है कि जिस माल और दौलत और सम्पन्नता पर तुम इतराए हुए हो, और जिसके खो जाने की आशंका से असत्य पर जमना और सत्य से मुँह मोड़ना चाहते हो, यही चीज़ कभी आद और समूद और दूसरी क़ौमों को भी प्राप्त थी। फिर क्या यह चीज़ उनको तबाही से बच सकी?

करनेवाले न थे जब तक कि उनके रहनेवाले ज़ालिम न हो जाते।[18]

(60) तुम लोगों को जो कुछ भी दिया गया है व हसिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी का सामान और उसकी शोभा है, और जो कुछ अल्लाह के पास है वह उससे उत्तम और ज़्यादा स्थायी है। क्या तुम लोग बुद्धि से काम नहीं लेते? (61) भला वह व्यक्ति जिससे हमने अच्छा वादा किया हो और वह उसे पानेवाला हो कभी उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जिसे हमने सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी का सरो-सामान दे दिया हो और फिर वह क़ियामत के दिन सज़ा के लिए पेश किया जानेवाला हो?

(62) और (भूल न जाएँ ये लोग) उस दिन को जबकि वह इनको पुकारेगा और पूछेगा, "कहाँ हैं मेरे वे साझीदार जिनका तुम गुमान रखते थे?" (63) यह बात जिनपर चस्पाँ होगी वे कहेंगे, "ऐ हमारे रब, बेशक यही लोग हैं, जिनको हमने पथभ्रष्ट किया था। इन्हें हमने उसी तरह पथभ्रष्ट किया जैसे हम ख़ुद पथभ्रष्ट हुए।[19] हम आपके सामने अपने बरी होने का इज़हार करते हैं। ये हमारी तो बनदगी नहीं करते थे।"[20] (64) फिर इनसे कहा जाएगा कि पुकारो अब अपने ठहराए हुए साझीदारों को। ये उन्हें पुकारेंगे मगर वे इनको कोई जवाब न देंगे। और ये लोग अज़ाब देख लेंगे। काश! ये सन्मार्ग ग्रहण करनेवाले होते।

(65) और (भूलें न ये लोग) वह दिन जब कि वह इनको पुकारेगा और पूछेगा कि "जो रसूल भेजे गए थे उन्हें तुमने क्या जवाब दिया था?" (66) उस समय कोई

18. यह उनके उज्र का तीसरा जवाब है। पहले जो क़ौमें तबाह हुई उनके लोग ज़ालिम हो चुके थे, मगर अल्लाह ने उनको तबाह करने से पहले अपने रसूल भेजकर उन्हें सावधान किया, और जब उनके सचेत करने पर भी ये अपनी टेढ़ी चाल से बाज़ न आए तो उन्हें विनष्ट कर दिया। यह मामला है जिसका सामना अब तुम्हें करना होगा।
19. इससे मुराद जिन्न और इनसान में के वे शैतान हैं जिनको दुनिया में अल्लाह का साझीदार बनाया गया था, जिनको बात के मुक़ाबले में अल्लाह और उसके रसूलों की बात को रद्द किया गया था, और जिनके भरोसे पर सीधे मार्ग को छोड़कर ज़िन्दगी के ग़लत रास्ते अपनाए गए थे। ऐस लगों को चाहे किसी ने 'इलाह' (पूज्य) और रब (प्रभु) कहा हो या न कहा हो, हर हाल में जब उनकी पैरवी और आज्ञापालन उस तरह किया गया जैसा अल्लाह का होना चाहिए तो अवश्य ही उन्हें ईश्वरत्व में सम्मिलित किया गया।
20. अर्थात् ये हमारे नहीं बल्कि अपने ही मन के दास बने हुए थे।

जवाब इनको न सूझेगा और न ये आपस में एक-दूसरे से पूझ ही सकेंगे। (67) अलबत्ता जिसने आज तौबा कर ली और ईमान ले आया और अच्छे कर्म किए वही यह उम्मीद कर सकता है कि वहाँ सफल होनेवालों में से होगा।

(68) तेरा रब पैदा करता है जो कुछ चाहता है और (वह ख़ुद ही अपने काम के लिए जिसे चाहता है) चुन लेता है, यह चुनाव इन लोगों के करने का काम नहीं है। अल्लाह पाक है और बहुत उच्च है उससे जो साझी ये लोग ठहराते हैं। (69) तेरा रब जानता है जो कुछ ये दिलों में छुपाए हुए हैं और जो कुछ ये प्रकट करते हैं। (70) वही एक अल्लाह है जिसके सिवा कोई बन्दगी का हक़दार नहीं। उसी के लिए प्रशंसा है दुनिया में भी और आख़िरत में भी, शासन उसका है और उसी की ओर तुम सब पलटाए जानेवाले हो। (71) ऐ नबी, इनसे कहो, कभी तुम लोगों ने विचार किया कि अगर अल्लाह क़ियामत तक तुमपर हमेशा के लिए रात तारी कर दे तो अल्लाह के सिवा वह कौन-सा पूज्य है जो तुम्हें प्रकाश ला दे? क्या तुम सुनते नहीं हो? (72) इनसे पूछो, कभी तुमने सोचा कि अगर अल्लाह क़ियामत तक तुमपर हमेशा के लिए दिन तारी कर दे तो अल्लाह के सिवा वह कौन-सा पूज्य है जो तुम्हें रात ला दे ताकि तुम उसमें शान्ति प्राप्त कर सको? क्या तुमको सूझता नहीं? (73) यह उसी की दयालुता है कि उसने तुम्हारे लिए रात और दिन बनाए ताकि तुम (रात में) शान्ति प्राप्त करो और (दिन को) अपने रब का अनुग्रह (रोज़ी) तलाश करो, शायद कि तुम कृतज्ञ बनो।

(74) (याद रखें ये लोग) वह दिन जब कि वह इन्हें पुकारेगा फिर पूछेगा, ''कहाँ हैं मेरे वे साझीदार जिनका तुम गुमान रखते थे?'' (75) और हम हर उम्मत में से एक गवाह निकाल लाएँगे फिर कहेंगे कि ''लाओ अब अपना प्रमाण।'' उस समय इन्हें मालूम हो जाएगा कि सत्य अल्लाह की ओर है, और गुम हो जाएँगे इनके वे सारे झूठ जो इन्होंने घड़ रखे थे।

(76) यह एक तथ्य है कि क़ारून मूसा की क़ौम का एक व्यक्ति था, फिर वह अपनी क़ौम के विरूद्ध सरकश हो गया। और हमने उसको इतने ख़ज़ाने दे रखे थे कि उनकी कुंजियाँ बलवान आदमियों का एक दल मुश्किल से उठा सकता था। एक बार जब उसकी क़ौम के लोगोंने उससे कहा, ''फूल न जा, अल्लाह फूलनेवालों को पसन्द नहीं करता। (77) जो माल अल्लाह ने तुझे दिया है उससे आख़िरत का घर बनाने की चिन्ता कर और दुनिया में से भी अपना हिस्सा न भूल। उपकार कर जिस तरह अल्लाह ने तेरे साथ उपकार किया है, और ज़मीन में बिगाड़ पैदा करने की कोशिश न कर, अल्लाह बिगाड़ पैदा करनेवालों को पसन्द नहीं करता।'' (78) तो उसने कहा, ''यह

सब कुछ तो मुझे उस ज्ञान के कारण दिया गया है जो मुझको प्राप्त है।''—क्या उसको यह ज्ञान न था कि अल्लाह उससे पहले बहुत-से ऐसे लोगों को विनष्ट कर चुका है जो उससे ज़्यादा शक्ति और जत्था रखते थे? अपराधियों से तो उनके गुनाह नहीं पूछे जाते।[21]

(79) एक दिन वह अपनी क़ौम के सामने अपने पूरे ठाठ में निकला। जो लोग दुनिया की ज़िन्दगी के इच्छुक थे वे उसे देखकर कहने लगे, ''क्या अच्छी बात होती कि हमें भी वही कुछ मिलता जो क़ारून को दिया गया है, यह तो बड़ा भाग्यवान है।'' (80) मगर जो लोग ज्ञान रखनेवाले थे वे कहने लगे, ''अफ़सोस तुम्हारे हाल पर, अल्लाह का प्रतिदान उत्तम है उस व्यक्ति के लिए जो ईमान लाए और अच्छा कर्म करे, और यह दौलत नहीं मिलती मगर सब्र करनेवालों को।''

(81) आख़िरकार हमने उसे और उसके घर को ज़मीन में धँसा दिया। फिर कोई उसके समर्थकों का गिरोह न था जो अल्लाह के मुक़ाबले में उसकी सहायता को आता और न वह ख़ुद अपनी सहायता आप कर सका। (82) अब वही लोग जो कल उसके स्थान की कामना कर रहे थे कहने लगे, ''अफ़सोस, हम भूल गए थे कि अल्लाह अपने बन्दों में से जिसकी रोज़ी चाहता है कुशादा करता है और जिसे चाहता है नपी-तुली देता है। अगर अल्लह ने हमपर उपकार न किया होता तो हमें भी ज़मीन में धँसा देता। अफ़सोस, हमको याद न रहा कि इनकार करनेवाले सफल नहीं हुआ करते।''

(83) वह परलोक[22] का घर तो हम उन लोगों के लिए ख़ास कर देंगे जो ज़मीन में अपनी बड़ाई नहीं चाहते और न बिगाड़ पैदा करना चाहते हैं। और परिणाम की भलाई डर रखनेवालों ही के लिए है। (84) जो कोई भलाई लेकर आएगा उसके लिए उससे उत्तम भलाई है और जो बुराई लेकर आए तो बुराइयाँ करनेवालों को वैसा ही बदला मिलेगा जैसे कर्म वे करते थे।

(85) ऐ नबी, विश्वास रखो कि जिसने यह क़ुरआन तुमपर अनिवार्य किया है[23] वह तुम्हें एक उत्तम परिणाम को पहुँचानेवाला है। इन लोगों से कह दो कि ''मेरा रब ख़ूब

21. अर्थात् अपराधी तो यही दावा किया करते हैं कि हम बड़े अच्छे लोग हैं। वे कब माना करते हैं कि उनके अन्दर कोई बुराई है। मगर उनकी सज़ा उनकी अपनी स्वीकृति पर निर्भर नहीं करती। उन्हें जब पकड़ा जाता है तो उनसे पूछकर नहीं पकड़ा जाता कि बताओ तुम्हारे गुनाह क्या हैं?
22. इससे मुराद है जन्नत जो वास्तविक भलाई व कामयाबी का स्थान है।

जानता है कि मार्गदर्शन लेकर कौन आया है और स्पष्ट पथभ्रष्टता में कौन ग्रस्त है।'' (86) तुम इस बात के हरगिज़ उम्मीदवार न थे कि तुमपर किताब उतारी जाएगी, यह तो सिर्फ़ तुम्हारे रब की दया से (तुमपर अवतरित हुई है), अतः तुम इनकार करनेवालों के सहायक न बनो। (87) और ऐसा कभी न होने पाए कि अल्लाह की आयतें जब तुमपर अवतरित हो तो इनकार करनेवाले तुम्हें उनसे बाज़ रखें। अपने रब की ओर निमंत्रण दो और हरगिज़ बहुदेववादियों में सम्मिलित न हो (88) और अल्लाह के साथ किसी दूसरे पूज्य को न पुकारो। उसके सिवा कोई पूज्य नहीं है। हर चीज़ विनष्ट होनेवाली है सिवाय उसके स्वरूप के। शासन उसी का है और उसी की ओर तुम सब पलटाए जानेवाले हो।

● ● ●

23. अर्थात् इस क़ुरआन को लोगों तक पहुँचाने और इसकी शिक्षा देने और इसके दिखाए हुए मार्ग के अनुसार दुनिया का सुधार करने की ज़िम्मेदारी तुमपर डाली है।

29. अल-अन्‌कबूत

नाम

आयत 41 के वाक्यांश ''जिन लोगों ने अल्लाह को छोड़कर दूसरे संरक्षक बना लिए हैं उनकी मिसाल मकड़ी (अन्‌कबूत) जैसी है'' से उद्धृत है। मतलब यह है कि यह वह सूरा है जिसमें अन्‌कबूत शब्द आया है।

अवतरणकाल

आयत 56 से लेकर 60 तक से स्पष्टतः ऐसा लगता है कि यह सूरा हबशा की हिजरत से कुछ पहले अवतरित हुई थी। शेष वार्ताओं के आन्तरिक साक्ष्य से भी इसी की पुष्टि होती है, क्योंकि पृष्ठभूमि में उसी कालखण्ड की परिस्थितियाँ झलकती दिखाई देती हैं।

विषय और वार्ता

सूरा को पढ़ते हुए महसूस होता है कि इसके अवतरण के समय मक्का में मुसलमानों पर बड़ी मुसीबतों और कष्टों का समय था। (उस समय) अल्लाह ने यह सूरा एक तरफ़ सच्चे ईमानवाले लोगों में संकल्प एवं साहस और जमाव पैदा करने के लिए, और दूसरी तरफ़ कमज़ोर ईमानवाले लोगों को शर्म दिलाने के लिए अवतरित की। इसके साथ मक्का के काफ़िरों को भी इसमें (सत्य के वैर के परिणाम के विषय में) बड़ी ताड़ना की गई है। इस सम्बन्ध में उन प्रश्नों का उत्तर भी दिया गया है जो कुछ मुस्लिम नव युवकों के सामने उभरकर आ रहे थे। उदाहरणार्थ, उनके माता-पिता उनपर ज़ोर डालते थे कि हमारे धर्म पर अडिग रहो। जिस क़ुरआन पर तुम ईमान लाए हो उसमें भी तो यही लिखा है कि माँ-बाप का हक़ सबसे ज़्यादा है। तो हम जो कुछ कहते हैं उसे मानो अन्यथा तुम स्वयं अपने ही धर्म के विपरीत काम करोगे। इसका उत्तर आयत 7 में दिया गया है। इसी प्रकार कुछ नव मुस्लिमों से उनके क़बीले के लोग कहते थे कि अज़ाब-सवाब (पाप-पुण्य) हमारी गर्दन पर, तुम हमारा कहना मानो और इस व्यक्ति से अलग हो जाओ। (अल्लाह के यहाँ इसके उत्तरदायी हम हैं।) इसका उत्तर आयत 12,13 में दिया गया है। जो क़िस्से इस सूरा में बयान किए गए हैं, उनमें भी अधिकतर यही पहलू उभरा हुआ है कि पिछले नबियों को देखो, कैसी-कैसी कठिनाइयाँ उनपर आई और कितने-कितने दीर्घकाल तर वे सताए गए, फिर अन्ततोगत्वा अल्लाह की ओर से उनकी सहायता हुई। इसलिए घबराओ नहीं। अल्लाह की मदद ज़रूर आएगी, किन्तु परीक्षा की एक अवधि गुज़रनी ज़रूरी है। फिर मुसलमानों को आदेश दिया गया है कि

यदि अत्याचार तुम्हारे लिए असहनीय हो जाएँ तो ईमान छोड़ने के बदले घर-बार छोड़कर निकल जाओ। ईश्वर की धरती विशाल है। जहाँ अल्लाह की बन्दगी कर सको वहाँ चले जाओ। इन सब बातों के साथ काफ़िरों को समझाने-बुझाने का पहलू भी छूटने नहीं पाया है। बल्कि एकेश्वरवाद और परलोकवाद दोनों वास्तविकताओं को प्रमाणों के साथ उनके मन में बिठाने की कोशिश की गई है।



29 सूरा अल-अन्कबूत

(मक्का में उतरी–आयतें 69)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ मीन॰। (2) क्या लोगों ने यह समझ रखा है कि वे बस इतना कहने पर छोड़ दिए जाएँगे कि ''हम ईमान लाए'' और उनको आज़माया न जाएगा? (3) हालाँकि हम उन सब लोगों की आज़माइश कर चुके हैं जो इनसे पहले गुज़रे हैं। अल्लाह को तो ज़रूर यह देखना है कि सच्चे कौन हैं और झूठे कौन।

(4) और क्या वे लोग जो बुरी हरकतें कर रहे हैं[1] यह समझे बैठे हैं कि वे हमसे बाज़ी ले जाएँगे? बड़ा ग़लत हुक्म है जो वे लगा रहे हैं।

(5) जो कोई अल्लाह से मिलने की आशा रखता हो (उसे मालूम होना चाहिए कि) अल्लाह का नियत किया हुआ समय आने ही वाला है, और अल्लाह सब कुछ सुनता और जानता है। (6) जो व्यक्ति भी जान-तोड़ कोशिश करेगा अपने ही भले के लिए करेगा।[2] अल्लाह यक़ीनन दुनिया-जहानवालों से बेनियाज़ (निस्पृह) है।[3] (7) और जो लोग ईमान लाएँगे और अच्छे कर्म करेंगे उनकी बुराइयाँ हम उनसे दूर कर देंगे और उन्हें उनके उत्तम कर्मों का बदला देंगे।

(8) हमने इनसान को ताकीद की कि अपने माँ-बाप के साथ अच्छा व्यवहार करे। लेकिन अगर वे तुझपर ज़ोर डालें कि तू मेरे साथ किसी ऐसे (उपास्य) को भागीदार ठहराए जिसे तू (मेरे भागीदार के रूप में) नहीं जानता तो उनका कहना न मान।[4] मेरी ही ओर तुम सबको पलटकर आना है, फिर मैं तुमको बता दूँगा कि तुम क्या करते रहे हो। (9) और जो लोग ईमान लाए होंगे और जिन्होंने अच्छे कर्म किए होंगे उनको हम ज़रूर अच्छों में सम्मिलित करेंगे।

---

1. वर्णन-शैली से स्पष्ट है कि इन लोगों से मुराद वे ज़ालिम हैं जो ईमान लानेवालों पर ज़ुल्म कर रहे थे और इस्लाम को नीचा दिखाने के लिए बुरे से बुरे हथकणअडे अपना रहे थे।
2. जान-तोड़ कोशिश से मुराद है अधर्मियों के मुक़ाबले में सत्य-धर्म की ध्वजा को ऊँचा करने और ऊँचा रखने के लिए जान लड़ाना।
3. अर्थात् अल्लाह जान लड़ाने की यह माँग तुमसे इसलिए नहीं कर रहा है कि उसकी अपनी कोई ज़रूरत (अल्लाह पनाह में रखे) इससे अटकी हुई है, बल्कि यह तुम्हारी अपनी नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति का साधन है।

(10) लोगों में से कोई ऐसा है जो कहता है कि हम ईमान लाए अल्लाह पर। (मगर जब वह अल्लाह के मामले में सताया गया तो उसने लोगों की डाली हुई आज़माइश को अल्लाह के अज़ाब की तरह समझ लिया। अब अगर तेरे रब की ओर से विजय और मदद आ गई तो यही व्यक्ति कहेगा कि "हम तो तुम्हारे साथ थे।" क्या दुनियावालों के दिलों के हाल से अल्लाह अच्छी तरह परिचित नहीं है? (11) और अल्लाह को तो ज़रूर यह देखना ही है कि ईमान लानेवाले कौन हैं और मुनाफ़िक़ कौन।

(12) ये इनकार करनेवाले लोग ईमान लानेवालों से कहते हैं कि तुम हमारे मार्ग पर चलो और तुम्हारी ख़ताओं को हम अपने ऊपर ले लेंगे। हालाँकि उनकी ख़ताओं में से कुछ भी वे अपने ऊपर लेनेवाले नहीं हैं, वे बिलकुल झूठ कहते हैं। (13) हाँ, ज़रूर वे अपने बोझ भी उठाएँगे और अपने बोझों के साथ दूसरे बहुत-से बोझ[5] भी। और क़ियामत के दिन यक़ीनन उनसे उन मिथ्यारोपणों के बारे में पूछा जाएगा जो वे लगाते रहे हैं।

(14) हमने नूह को उसकी क़ौम की तरफ़ बेजा और वह पचास कम एक हज़ार वर्ष उनके बीच रहा। आख़िरकार उन लोगों को तूफ़ान ने आ घेरा इस हाल में कि वे ज़ालिम थे। (15) फिर नूह को और नाववालों को हमने बचा लिया और उसे दुनियावालों के लिए शिक्षा का एक चिह्न बनाकर रख दिया।[6]

(16) और इबराहीम को भेजा जबकि उसने अपनी क़ौमवालों से कहा : "अल्लाह की बन्दगी करो और उससे डरो। यह तुम्हारे लिए अच्छा है अगर तुम जानो। (17) तुम अल्लाह को छोड़कर जिन्हें पूज रहे हो वे तो सिर्फ़ मूर्ति हैं और तुम एक झूठ घड़ रहे हो। वास्तव में अल्लाह के सिवा जिनकी तुम पूजा करते हो वे तुम्हें कोई रोज़ी भी देने का अधिकार नहीं रखते। अल्लाह से रोज़ी माँगो और उसी की बन्दगी करो और उसके आगे कृतज्ञता दिखाओ, उसी की ओर तुम पलटाए जानेवाले हो। (18) और

4. जो नौजवान मक्का में ईमान लाए थे उनके माँ-बाप उनपर दबाव डाल रहे थे कि वे ईमान से बाज़ आ जाएँ। इसपर कहा गया कि माँ-बाप के जो हक़ हैं वे अपनी जगह पर, मगर उनको यह हक़ नहीं है कि अल्लाह के मार्ग से औलाद को रोकें।
5. अर्थात् एक बोझ ख़ुद गुमराह होने का और दूसरे बोझ दूसरों को गुमराह करने या गुमराही पर बाध्य करने के।
6. अर्थात् उस नाव को या नूह (अलै०) की क़ौम पर अज़ाब की इस घटना को शिक्षा का चिह्न बना दिया।

अगर तुम झुठलाते हो तो तुमसे पहले बहुत-सी क़ौमें झुठला चुकी हैं, और रसूल पर साफ़-साफ़ सन्देश पहुँचा देने के सिवा कोई ज़िम्मेदारी नहीं है।"

(19) क्या इन लोगों ने कभी देखा ही नहीं है कि किस तरह अल्लाह पैदाइश का आरंभ करता है फिर उसकी पुनरावृत्ति करता है? यक़ीनन यह (पुनरावृत्ति तो) अल्लाह के लिए बहुत आसान है। (20) इनसे कहो कि ज़मीन में चलो-फिरो और देखो कि उसने किस तरह पैदाइश का आरंभ किया है, फिर अल्लाह दुसरी बार भी ज़िन्दगी प्रदान करेगा। यक़ीनन अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (21) जिसे चाहे सज़ा दे और जिसपर चाहे दया करे, उसी की ओर तुम फेरे जानेवाले हो। (22) तुम न ज़मीन में विवश करनेवाले हो न आसमान में, और अल्लाह से बचानेवाला कोई संरक्षक और सहायक तुम्हारे लिए नहीं है। (23) जिन लोगों ने अल्लाह की आयतों का और उससे मिलने का इनकार किया है वे मेरी दयालुता से निराश हो चुके हैं[7] और उनके लिए दर्दनाक सज़ा है।

(24) फिर इबराहीम की क़ौम का जवाब इसके सिवा कुछ न था कि उन्होंने कहा, "मार डालो इसे या जला डालो इसको।" आख़िरकार अल्लाह ने उसे आग से बचा लिया, यक़ीनन इसमें निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो ईमान लानेवाले हैं। (25) और उसने कहा, "तुमने दुनिया की ज़िन्दगी में तो अल्लाह को छोड़कर मूर्तियों को अपने बीच प्रेम का साधन बना लिया है[8] मगर क़ियामत के दिन तुम एक दूसरे का

7. अर्थात् उनका कोई हिस्सा मेरी दयालुता में नहीं है। उनके लिए कोई गुंजाइश इस बात की नहीं है कि वे मेरी दयालुता में से हिस्सा पाने की उम्मीद रख सकें। और जब उन्होंने आख़िरत ही का इनकार कर दिया और यह स्वीकार ही न किया कि उन्हें कभी अल्लाह के आगे पेश होना है तो इसका अर्थ यह है कि उन्होंने अल्लाह के इनाम और माफ़ी के साथ उम्मीद का कोई नाता सिरे से रखा ही नहीं है।
8. अर्थात् तुमने ईश-भक्ति के बदले मूर्तिपूजा के आधार पर अपने सामाजिक जीवन का निर्माण कर लिया है जो दुनिया की ज़िन्दगी की सीमा तक तुम्हारा जातीय संगठन कर सकता है। इसलिए कि यहाँ किसी आस्था पर भी लोग इकट्ठा हो सकते हैं चाहे सत्य हो या असत्य। और एकता और संघटन, चाहे वह कैसी ही ग़लत आस्था एवं धारणा पर हो, पारस्परिक मित्रताओं, नातेदारियों, बन्धुत्वों, और दूसरे सभी धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक और आर्थिक एवं राजनैतिक सम्बन्धों के स्थापन का साधन बन सकता है।

इनकार और एक दूसरे पर लानत करोगे और आग तुम्हारा ठिकाना होगी और कोई तुम्हारा सहायक न होगा।'' (26) उस समय लूत ने उसको माना। और इबराहीम ने कहा : मैं अपने रब की ओर 'हिजरत' करता हूँ, वह प्रभुत्वशाली है और तत्त्वदर्शी है। (27) और हमने उसे इसहाक़ और याक़ूब (जैसी औलाद) प्रदान की और उसकी नस्ल में पैग़म्बरी और किताब रख दी और उसे दुनिया में उसका बदला प्रदान किया और आख़िरत में वह यक़ीनन अच्छों में से होगा।

(28) और हमने लूत को भेजा जबकि उसने अपनी क़ौम से कहा, ''तुम तो वे अश्लील कर्म करते हो जो तुमसे पहले दुनियावालों में से किसी ने नहीं किया है। (29) क्या तुम्हारा हाल यह है कि मर्दों के पास जाते हो, और बटमारी करते हो और अपनी मजलिसों में बुरे कर्म करते हो?'' फिर कोई जवाब उसकी क़ौमवालों के पास इसके सिवा न था कि उन्होंने कहा, ''ले आ अल्लाह का अज़ाब अगर तू सच्चा है।'' (30) लूत ने कहा, ''ऐ मेरे रब, इन बिगाड़ पैदा करनेवालों के मुक़ाबले मे मेरी सहायता कर।''

(31) और जब हमारे दूत इबराहीम के पास ख़ुशख़बरी लेकर पहुँचे तो उन्होंने उससे कहा, ''हम इस बस्ती के लोगों को तबाह करनेवाले[9] हैं, इसके लोग सख़्त ज़ालिम हो चुके हैं।'' (32) इबराहीम ने कहा, ''वहाँ तो लूत मौजूद है।'' उन्होंने कहा, ''हम ख़ूब जानते हैं कि वहाँ कौन-कौन है। हम उसे और उसकी पत्नी के सिवा उसके बाक़ी सब घरवालों को बचा लेंगे।'' उसकी पत्नी पीछे रह जानेवालों में से थी।

(33) फिर जब हमारे दूत लूत के पास पहुँचे तो उनके आगमन पर वह बहुत परेशान और दिल तंग हुआ। उन्होंने कहा, ''न डरो और न ग़म करो। हम तुम्हें और तुम्हारे घरवालों को बचा लेंगे, सिवाय तुम्हारी पत्नी के जो पीछे रह जानेवालों में से है। (34) हम इस बस्ती के लोगों पर आसमान से अज़ाब उतारनेवाले हैं उस अवज्ञा के

9. 'इस बस्ती' का इशारा लूत की क़ौमवालों के इलाक़े की ओर था। हज़रत इबराहीम (अलै०) उस समय फ़िलस्तीन के शहर हबरून (वर्तमान अल-ख़लील) में रहते थे। इस शहर के दक्षिण-पूर्व में कुछ ही मील की दूरी पर मृत सागर का वह भाग स्थित है जहाँ पहले लूत की क़ौम बसती थी और अब जिसपर सागर का पानी फैला हुआ है। यह इलाक़ा ढलान में स्थित है और हबरून की ऊँची पहाड़ियों पर से साफ़ दिखाई देता है। इसी लिए फ़रिश्तों ने उसकी ओर इशारा करके हज़रत इबराहीम (अलै०) से कहा कि ''हम इस बस्ती को तबाह करनेवाले हैं।''

कारण जो ये करते रहे हैं।'' (35) और हमने उस बस्ती की एक खुली निशानी छोड़ दी है[10] उन लोगों के लिए जो बुद्धि से काम लेते हैं।

(36) और मदयन की ओर हमने उनके भाई शुऐब को भेजा। उसने कहा, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, अल्लाह की बन्दगी करो और अन्तिम दिन की उम्मीद रखो और ज़मीन में बिगाड़ पैदा करनेवाले बनकर ज़्यादतियाँ न करते फिरो।'' (37) मगर उन्होंने उसे झुठला दिया। आख़िरकार एक प्रचण्ड भूकम्प ने उन्हें आ लिया और वे अपने घरों में पड़े के पड़े रह गए।

(38) और आद और समूद को हमने तबाह किया, तुम वे स्थान देख चुके हो जहाँ वे रहते थे। उनके कर्मों को शैतान ने उनके लिए ख़ुशनुमा बना दिया और उन्हें सन्मार्ग से फेर दिया हालाँकि वे सूझ-बूझ रखते थे। (39) और क़ारून और फ़िरऔन और हामान को हमने तबाह किया। मूसा उनके पास प्रत्यक्ष प्रमाण लेकर आया, मगर उन्होंने ज़मीन में अपनी बड़ाई का घमंड किया, हालाँकि वे बाज़ी ले जानेवाले न थे। (40) आख़िरकार हर एक को हमने उसके गुनाह में पकड़ा। फिर उनमें से किसी पर हमने पथराव करनेवाली हवा भेजी, और किसी को एक ज़बरदस्त धमाके ने आ लिया, और किसी को हमने ज़मीन में धँसा दिया, और किसी को डुबो दिया। अल्लाह उनपर ज़ुल्म करनेवाला न था, मगर वे ख़ुद ही अपने ऊपर ज़ुल्म कर रहे थे।

(41) जिन लोगों ने अल्लाह को छोड़कर दूसरे संरक्षक बना लिए हैं उनकी मिसाल मकड़ी जैसी है जो अपना एक घर बनाती है और सब घरों से ज़्यादा कमजोर घर मकड़ी का घर ही होता है। काश! ये लोग ज्ञान रखते। (42) ये लोग अल्लाह को छोड़कर जिस चीज़ को भी पुकारते हैं अल्लाह उसे ख़ूब जानता है और वही प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्श है। (43) ये मिसालें हम लोगों को समझाने के लिए देते हैं, मगर इनको वही लोग समझते हैं जो ज्ञान रखनेवाले हैं। (44) अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन को हक़ के साथ पैदा किया है, वास्तव में इसमें एक निशानी है ईमानवालों के लिए।

(45) (ऐ नबी) तिलावत करो उस किताब की जो तुम्हारी ओर वह्य के द्वारा

10. इस खुली निशानी से मुराद है मृत सागर जिसे लूत सागर भी कहा जाता है। क़ुरआन मजीद में कई स्थानों पर मक्का के अधर्मियों को सम्बोधित करके कहा गया है कि इस ज़ालिम क़ौम पर इसकी करतूतों के कारण जो अज़ाब आया था उसकी एक निशानी आज भी आम रास्ते पर मौजूद है जिसे तुम शाम (सीरिया) की ओर अपनी व्यापारिक यात्राओं में जाते हुए दिन-रात देखते हो।

भेजी गई है और नमाज़ क़ायम करो, यक़ीनन नमाज़ अश्लील और बुरे कामों से रोकती है और अल्लाह का ज़िक्र इससे भी ज़्यादा बड़ी चीज़ है।[11] अल्लाह जानता है जो कुछ तुम करते हो।

(46) और किताबवालों से वाद-विवाद न करो मगर उत्तम ढँग से—सिवाय उन लोगों के जो उनमें से ज़ालिम हों[12]—और उनसे कहो कि ''हम ईमान लाए हैं उस चीज़ पर भी, जो हमारी ओर भेजी गई है और उस चीज़ पर भी जो तुम्हारी ओर भेजी गई थी, हमारा पूज्य और तुम्हारा पूज्य एक ही है और हम उसी के मुसलिम (आज्ञाकारी) हैं।'' (47) (ऐ नबी) हमने इसी तरह तुम्हारी ओर किताब अवतरित की है,[13] इसलिए वे लोग जिनको हमने पहले किताब दी थी वे इसपर ईमान लाते हैं,[14] और इन लोगों में से भी बहुत-से इसपर ईमान ला रहे हैं,[15] और हमारी आयतों का इनकार सिर्फ़ अधर्मी ही करते हैं।

11. मतलब यह है कि अश्लील कर्मों से रोकना तो एक छोटी चीज़ है, अल्लाह के ज़िक्र, अर्थात् नमाज़ की बरकतें इससे बहुत बढ़कर हैं।
12. अर्थात् जो लोग ज़ुल्म की नीति अपनाएँ उनके साथ उनके ज़ुल्म को देखते हुए कि वह किस तरह का है विभिन्न नीति भी अपनाई जा सकती है। मतलब यह है कि हर समय, हर हाल में और हर तरह के लोगों के मुक़ाबले में नर्म और मधुर ही न बने रहना चाहिए कि दुनिया सत्य के आवाहक की सज्जनता को कमज़ोरी और दीनता समझ बैठे। इस्लाम अपने अनुयायियों को सभ्यता, सज्जनता और औचित्य तो ज़रूर सिखाता है मगर विवशता और दीनता नहीं सिखाता कि वे हर ज़ालिम के लिए नर्म चारा बनकर रहें।
13. इसके दो अर्थ हो सकते हैं। एक यह कि जिस तरह पहले नबियों पर हमने किताबें अवतरित की थीं उसी तरह अब यह किताब तुमपर अवतिरत की है। दूसरा यह कि हमने इसी शिक्षा के साथ यह किताब अवतरित की है कि हमारी पिछली किताबों का इनकार करके नहीं बल्कि उन सबको स्वीकार करते हुए इसे माना जाए।
14. प्रसंग एवं सन्दर्भ ख़ुद बता रहा है कि इससे मुराद सभी किताबवाले नहीं हैं बल्कि वे किताबवाले हैं जिनको ईश्वरीय ग्रन्थों का सच्चा ज्ञान और बोध प्राप्त हुआ था, जो वास्तविक अर्थों में किताबवाले थे।
15. 'इन लोगों' का इशारा अरबवालों की ओर है। मतलब यह है कि सत्यप्रिय लोग हर जगह इसपर ईमान ला रहे हैं चाहे वे किताबवालों में से हो या ग़ैर किताबवालों में से।

(48) (ऐ नबी) तुम इससे पहले कोई किताब नहीं पढ़ते थे और न अपने हाथ से लिखते थे, अगर ऐसा होता तो असत्यवादी लोग शक में पड़ सकते थे। (49) वास्तव में ये स्पष्ट निशानियाँ हैं उन लोगों के दिलों में जिन्हें ज्ञान प्रदान किया गया है,[16] और हमारी आयतों का इनकार नहीं करते मगर वे जो ज़ालिम हैं। (50) ये लोग कहते हैं कि ''क्यों न उतारी गई इस व्यक्ति पर निशानियाँ इसके रब की ओर से?'' कहो, ''निशानियाँ तो अल्लाह के पास हैं और मैं सिर्फ़ सावधान करनेवाला हूँ खोल-खोलकर।'' (51) और क्या इन लोगों के लिए यह (निशानी) काफ़ी नहीं है कि हमने तुमपर किताब अवतरित की जो इन्हें पढ़कर सुनाई जाती है? वास्तव में इसमें दयालुता है और उपदेश उन लोगों के लिए जो ईमान लाते हैं। (52) (ऐ नबी) कहो कि ''मेरे और तुम्हारे बीच अल्लाह गवाही के लिए काफ़ी है। वह आसमानों और ज़मीन में सब कुछ जानता है। जो लोग असत्य को मानते हैं और अल्लाह के साथ इनकार की नीति अपनाते हैं वही घाटे में रहनेवाले हैं।''

(53) ये लोग तुमसे अज़ाब जल्दी लाने की माँग करते हैं। अगर एक समय नियत न कर दिया गया होता तो इनपर अज़ाब आ चुका होता। और यक़ीनन (अपने समय पर) वह आकर रहेगा अचानक, इस हाल में कि इन्हें ख़बर भी न होगी। (54) ये तुमसे अज़ाब जल्दी लाने की माँग करते हैं, हालाँकि जहन्नम इन अधर्मियों को घेरे में ले चुकी है (55) (और इन्हें पता चलेगा) उस दिन जब कि अज़ाब इन्हें ऊपर से भी ढाँक लेगा और पाँव के नीचे से भी और कहेगा कि अब चखो मज़ा उन करतूतों का जो तुम करते थे।

(56) ऐ मेरे बन्दो जो ईमान लाए हो, मेरी ज़मीन विशाल है, अतः तुम मेरी ही बन्दगी बजा लाओ।[17] (57) हर जानदार को मौत का मज़ा चखना है, फिर तुम सब हमारी ओर ही पलटाकर लाए जाओगे। (58) जो लोग ईमान लाए हैं और जिन्होंने अच्छे कर्म किए हैं उनको हम जन्नत (स्वर्ग) के उच्च भवनों में रखेंगे जिनके नीचे नहरें

16. अर्थात् एक उम्मी (निरक्षर) का क़ुरआन जैसी किताब पेश करना और अचानक उन असाधारण कुशलताओं का प्रदर्शन करना जिनके लिए किसी पूर्व तैयारी के लक्षण कभी किसी के देखने में नहीं आए, यही सूझ-बूझ रखनेवालों की दृष्टि में उसकी पैग़म्बरी को सिद्ध करनेवाली बहुत ही स्पष्ट निशानियाँ हैं।
17. यह इशारा है 'हिजरत' की ओर। अर्थ यह है कि अगर मक्का में ख़ुदा की बन्दगी करनी कठिन हो रही है तो देश छोड़कर निकल जाओ, अल्लाह की ज़मीन तंग नहीं है। जहाँ भी तुम अल्लाह के बन्दे बनकर रह सकते हो वहाँ चले जाओ।

बहती होंगी, वहाँ वे हमेशा रहेंगे, क्या ही अच्छा बदला है कर्म करनेवालों के लिए (59)—उन लोगों के लिए जिन्होंने सब्र किया है और जो अपने रब पर भरोसा करते हैं। (60) कितने ही जानवर हैं जो अपनी रोज़ी उठाए नहीं फिरते, अल्लाह उनको रोज़ी देता है और तुम्हें रोज़ी देनेवाला भी वही है। वह सब कुछ सुनता और जानता है।

(61) अगर तुम[18] इन लोगों से पूछो कि ज़मीन और आसमानों को किसने पैदा किया है और चाँद और सूरज को किसने वशीभूत कर रखा है तो ज़रूर कहेंगे कि अल्लाह ने, फिर ये किधर से धोखा खा रहे हैं? (62) अल्लाह ही है जो अपने बन्दों में से जिसकी चाहता है रोज़ी कुशादा करता है और जिसकी चाहता है तंग करता है, यक़ीनन अल्लाह हर चीज़ का जाननेवाला है। (63) और अगर तुम इनसे पूछो कि किसने आसमान से पानी बरसाया और उसके द्वारा मुर्दा पड़ी हुई ज़मीन को जिला उठाया तो वे ज़रूर कहेंगे अल्लाह ने। कहो, प्रशंसा अल्लाह के लिए है,[19] मगर इनमें से ज़्यादातर लोग समझते नहीं हैं।

(64) और यह दुनिया की ज़िन्दगी कुछ नहीं है मगर एक खेल और दिल का बहलावा। वास्तविक ज़िन्दगी का घर तो आख़िरत का घर है, काश! ये लोग जानते। (65) जब ये लोग नाव में सवार होते हैं तो अपने दीन (धर्म) को अल्लाह के लिए ख़ालिस करके उससे दुआ माँगते हैं, फिर जब वह इन्हें बचाकर ख़ुशकी (थल) पर ले आता है तो सहसा ये शिर्क करने लगते हैं (66) ताकि अल्लाह की दी हुई मुक्ति पर उसके प्रति कृतघ्नता दिखाए और (दुनिया की ज़िन्दगी के) मज़े लूटें। अच्छा, जल्दी ही इन्हें मालूम हो जाएगा। (67) क्या ये देखते नहीं हैं कि हमने एक शान्तिपूर्ण 'हरम' (प्रतिष्ठित स्थान) बना दिया है हालाँकि इनके आसपास ही लोग उचक लिए जाते हैं?[20]

18. यहाँ से फिर वार्ता की दिशा मक्का के अधर्मियों की ओर मुड़ती है।

19. इस स्थान पर 'अलहम्दु लिल्लाह' (प्रशंसा अल्लाह के लिए है) का शब्द दो अर्थ दे रहा है। एक यह कि जब ये सारे कार्य अल्लाह के हैं तो प्रशंसा का अधिकारी भी सिर्फ़ वही है, दूसरों को प्रशंसा का हक़ कहाँ से पहुँच गया? दूसरे यह कि अल्लाह का शुक्र है, इस बात को तुम ख़ुद भी स्वीकार करते हो।

20. अर्थात् क्या इनके शहर मक्का को, जिसके दामन में इन्हें पूर्ण शान्ति प्राप्त हैं, किसी लात या हुबल ने प्रतिष्ठित स्थान बनाया है? क्या किसी देवता या देवी की यह सामर्थ्य थी कि ढाई हजार वर्ष से अरब के अत्यन्त अशान्तिपूर्ण वातावरण में इस स्थान को सभी उपद्रवों और फ़सादों से सुरक्षित रखती? उसकी प्रतिष्ठा को बनाए रखनेवाले हम न थे तो और कौन था?

क्या फिर भी ये लोग असत्य को मानते हैं और अल्लाह की अनुकम्पा के प्रति कृतघ्नता दिखाते हैं? (68) उस व्यक्ति से बड़ा ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह पर झूठ बाँधे या सत्य को झुठलाए जबकि वह उसके सामने आ चुका हो? क्या ऐसे अधर्मियों का ठिकाना जहन्नम ही नहीं है? (69) जो लोग हमारे लिए कोशिश करेंगे उन्हें हम अपने मार्ग दिखाएँगे,[21] और यक़ीनन अल्लाह अच्छे कार्य करनेवालों ही के साथ है।

● ● ●

21. मतलब यह है कि जो लोग अल्लाह के मार्ग में निष्ठापूर्वक दुनिया-भर से संघर्ष का ख़तरा मोल ले लेते हैं उन्हें अल्लाह तआला उनके हाल पर नहीं छोड़ देता बल्कि वह उनका सहायक होता और मार्ग दिखाता है और अपनी ओर आने की राहें उनके लिए खोल देता है। वह पग-पग पर उन्हें बताता है कि हमारी प्रसन्नता तुम किस तरह हासिल कर सकते हो। हर-हर मोड़ पर उन्हें प्रकाश दिखाता है कि सन्मार्ग किधर है और ग़लत रास्ते कौन-से हैं। जितनी नेकनीयती और भलाई की चाह उनमें होती है उतनी ही अल्लाह की सहायता और सुयोग और मार्गदर्शन भी उनके साथ रहता है।

30. अर-रूम

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''रूमी पराजित हो गए हैं'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

आरम्भ ही में कहा गया है, ''रूमी क़रीब के भू-भाग में पराजित हो गए हैं।'' उस समय अरब से मिले हुए सभी अधिकृत भू-भाग पर ईरानियों का प्रभुत्व सन् 615 ई॰ में अपनी पूर्णता को पहुँचा था। इसलिए विशुद्ध रूप से यह कहा जा सकता है कि यह सूरा उसी वर्ष अवतरित हुई थी और यह वही वर्ष था जिसमें हबशा की हिजरत की गई थी।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

जो भविष्यवाणी इस सूरा की आरम्भिक आयतों में की गई है, वह क़ुरआन मजीद के ईश्वरीय वाणी होने और मुहम्मद (सल्ल॰) के सच्चे रसूल होने का अत्यन्त स्पष्ट साक्ष्यों में से एक है इसे समझने के लिए आवश्यक है कि उन ऐतिहासिक घटनाओं पर एक विस्तृत दृष्टि डाली जाए जो इन आयतों से संबंध रखती हैं। नबी (सल्ल॰) की नुबूवत (पैग़म्बरी) से आठ वर्ष पूर्व की घटना है कि क़ैसरे-रूम मॉरीस (Maurice) के विरुद्ध विद्रोह हुआ और एक व्यक्ति फ़ोकास (Phocas) ने राजसिंहासन पर अधिकार जमा लिया, (और क़ैसर को उसके बाल-बच्चों सहित क़त्ल कर दिया।) इस घटना से ईरान के सम्राट ख़ुसरू परवेज़ को रूम पर आक्रमण करने के लिए बहुत ही अच्छा नैतिक बहाना मिल गया क्योंकि क़ैसर मॉरीस उसका उपकारकर्ता था। अतएव सन् 603 ई॰ में उसने रूम राज्य के विरुद्ध युद्ध आरम्भ कर दिया और कुछ ही वर्षों में वह फ़ोकास की सेनाओं को निरन्तर पराजित करता हुआ (बहुत भीतर घुस गया।) रूम के राजदरबारियों ने यह देखकर कि फ़ोकास देश को नहीं बचा सकता, अफ़्रीक़ा के गवर्नर से सहायता की माँग की। उसने अपने बेटे हिरक़्ल (Heraclius) को एख शक्तिशाली बेड़े के साथ क़ुस्तुनतीनिया भेज दिया। उसके पहुँचते ही फ़ोकास पदच्युत् कर दिया गया, उसके स्थान पर हिरक़्ल क़ैसर बनाया गया। यह सन् 610 ई॰ की घटना है। और यह वही वर्ष है जिसमें नबी (सल्ल॰) अल्लाह की ओर से नुबूवत के पद पर आसीन हुए। ख़ुसरू परवेज़ ने फ़ोकास की पदच्युति और वध के बाद भी लड़ाई जारी रखी और अब इस युद्ध को उसने मजूसियत और मसीहियत (पारसी धर्म तथा

ईसाई धर्म) के युद्ध का रंग दे दिया (वह विजेता के रूप ने आगे बढ़ता रहा। यहाँ तक कि) सन् 614 ई॰ में बैतुल मक़्दिस पर अधिकार जमाकर ईरानियों में ईसाई दुनिया पर क़ियामत ढा दी। इस विजय के बाद एक वर्ष के भीतर ही ईरानी सेनाएँ उर्दुन, फ़िलीस्तीन और प्रायद्वीप सीना के पूरे क्षेत्र पर अधिकार जमाकर मिस्र की सीमाओं तक पहुँच गई। यह वह समय था जब मक्का मुअज़्ज़मा में एक और उससे कई दर्जा अधिक ऐतिहासिक महत्व रखनेवाला युद्ध (कुफ़्र और इस्लाम का युद्ध) छिड़ गया था। और नौबत यहाँ तक पहुँच गई थी कि सन् 615 ई॰ में मुसलमानों की एक बड़ी संख्या को अपना घर-बार छोड़कर हबशा के ईसाई राज्य में (जिससे रूम की शपथ-मित्रता थी) शरण लेनी पड़ी। उस समय ईसाई रूम पर (अग्नि-पूजक) ईरान के प्रभुत्व की चर्चा हर ज़बान पर थी। मक्के के बहुदेववादी ख़ुशियाँ मना रहे थे और इसे मुसलमानों (के विरुद्ध उसकी सफलता की एक मिसाल और शगुन ठहरा रहे थे।) इन परिस्थितियों में क़ुरआन मजीद की यह सूरा अवतरित हुई और इसमें वह भविष्यवाणी की गई (जो इसकी आरम्भिक आयतों में उल्लिखित है।) इसमें एक के बदले दो भविष्यवाणियाँ थी। एक यह कि रूमियों को विजय प्राप्त होगी, दूसरी यह कि मुसलमानों की भी उसी समय विजय होगी। देखने में दूर-दूर तक कहीं इसके लक्षण पाए नहीं जाते थे कि इनमें से कोई एक भविष्यवाणी भी कुछ थोड़े वर्षों में पूरी हो जाएगी। अतएव क़ुरआन की ये आयतें जब अवतरित हुई तो मक्का के काफ़िरों ने इसकी ख़ूब हँसी उड़ाई। (किन्तु सात-आठ वर्ष के पश्चात् ही परिस्थितियाँ बिलकुल बदल गई।) सन् 622 ई॰ में इधर नबी (सल्ल॰) हिजरत करके मदीना तैबा पदार्पण कर गए और उधर क़ैसर हिरक़्ल (ईरान पर जवाबी हमला करने के लिए) चुपके से क़ुस्तुनतीनिया से कालासागर के मार्ग से तराबज़ून की ओर चल पड़ा। सन् 623 ई॰ में आर्मीनिया से (अपना हमला) शुरू करके दूसरे वर्ष सन् 624 ई॰ में उसने आज़रबाइजान में घुसकर ज़रतुश्त के जन्म स्थान अर्मीया (Clorumia) को तबाह कर दिया और ईरानियों के सबसे बड़े अग्निकुण्ड की ईंट-से-ईंट बजा दी। ईश्वरीय शक्ति का चमत्कार देखिए कि यही वह वर्ष था जिसमें मुसलमानों को बद्र के स्थान पर पहली बार बहुदेववादियों के मुक़ाबले में निर्णायक विजय प्राप्त हुई। इस प्रकार वे दोनों भविष्यवाणियाँ जो सूरा रूम में की गई थीं, दस वर्ष की अवधि समाप्त होने से पहले एक साथ पूरी हो गई।

विषय और वार्ता

इस सूरा में वार्ता का आरम्भ इस बात से किया गया है कि आज रूमी पराजित हो गए हैं, किन्तु थोड़े वर्ष न बीतने पाएँगे कि पांसा पलट जाएगा और जो पराजित है वह

विजयी हो जाएगा। इस भूमिका से इस भाव की अभिव्यक्ति हुई कि मानव अपनी बाह्य दृष्टि के कारण वही कुछ देखता है जो बाह्य रूप से उसकी आँखों के सामने होता है, किन्तु इस बाह्य के आवरण के पीछे जो कुछ है उसकी उसे ख़बर नहीं होती। जब दुनिया के ज़रा-ज़रा-से मामलों में (मनुष्य अपनी बाह्य दृष्टि के कारण) ग़लत अनुमान लगा बैठता है तो फिर समग्र जीवन के मामले में सांसारिक जीवन के बाह्य पर भरोसा कर बैठना कितनी बड़ी भूल है। इस प्रकार रूम और ईरान के मामले से अभिभाषण का रूख़ परलोक के विषय की ओर फिर जाता है और निरन्तर 27 आयत तक विभिन्न ढंग से यह समझाने की कोशिश की जाती है कि परलोक संभव भी है, बुद्धिसंगत भी है और आवश्यक भी है। इस सिलसिले में परलोक को प्रमाणित करते हुए जगत् के जिन लक्षणों को साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है वे ठीक वही लक्षण हैं जो एकेश्वरवाद को प्रमाणित करते हैं। इसलिए आयत 41 के आरंभ से अभिभाषण का रुख़ एकेश्वरवाद की पुष्टि और बहुदेववाद के खण्डन की ओर फिर जाता है और बताया गया है कि बहुदेववाद जगत् की प्रकृति और मानव की प्रकृति के विरुद्ध है। इसलिए जहाँ भी मनुष्य ने इस गुमराही को अपनाया है वहीं बिगाड़ और उपद्रव खड़ा हुआ है। इस अवसर पर फिर उस महाबिगाड़ की ओर, जो उस समय संसार के दो सबसे बड़े राज्यों के मध्य युद्ध के कारण पैदा हो गया था, संकेत किया गया है और यह बताया गया है कि यह बिगाड़ भी बहुदेववाद के परिणामों में से है। वार्ता के समापन पर मिसाल के रूप में लोगों को समझाया गया है कि जिस प्रकार निर्जीव पड़ी हुई भूमि अल्लाह की भेजी हुई वर्षा से सहसा जी उठती है, उसी प्रकार अल्लाह की भेजी हुई प्रकाशना और नुबूवत भी निर्जीव पड़ी हुई मानवता के हित में एक दयालुता-वृष्टि है। इस अवसर से लाभ उठाओगे तो यही अरब की सूनी भूमि ईश्वरीय दया से लहलहा उठेगी। लाभ न उठाओगे तो अपने ही को हानि पहुँचाओगे।



30. सूरा अर-रूम

(मक्का में उतरी–आयतें 60)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ मीम॰। (2,3) रूमी क़रीब के भूभाग में पराजित हो गए हैं, और अपनी इस पराजय के बाद कुछ ही वर्षों में वे विजयी हो जाएँगे।[1] (4) अल्लाह ही का अधिकार है पहले भी और बाद में भी। और वह दिन वह होगा जबकि अल्लाह की प्रदान की हुई विजय पर मुसलमान ख़ुशियाँ मनाएँगे।[2] (5) अल्लाह मदद देता है जिसे चाहता है, और वह प्रभुत्वशाली और दयावान् है। (6) यह वादा अल्लाह ने किया है, अल्लाह कभी अपने वादे की अवहेलना नहीं करता, मगर ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं।

(7) लोग दुनिया की ज़िन्दगी का बस वाह्य पहलू ही जानते हैं और आख़िरत से वे ख़ुद ही बेख़बर हैं। (8) क्या उन्होंने कभी अपने-आप में सोच-विचार नहीं किया? अल्लाह ने ज़मीन और आसमानों को और उन सभी चीज़ों को जो उनके बीच हैं सत्यानुकूल और एक नियत समय ही के लिए पैदा किया है। मगर बहुत-से लोग अपने रब के मिलन का इनकार करते हैं।[3] (9) और क्या ये लोग कभी ज़मीन में चले-फिरे नहीं हैं कि इन्हें उन लोगों का परिणाम दिखाई देता जो इनसे पहले गुज़र चुके हैं? वे

1. यह इशारा उस लड़ाई की ओर है जो उस समय रूम और ईरान राज्य के बीच हो रही थी। उस समय रूमी बुरी तरह पराजित हो गए थे और कोई सोच नहीं सकता था कि अब ये फिर उठ सकेंगे। मगर अल्लाह तआला ने इस आयत में यह भविष्यवाणी कर दी कि कुछ वर्षों में रूमी फिर विजयी हो जाएँगे।
2. यह एक दूसरी भविष्यवाणी थी। इसका अर्थ लोगों की समझ में उस समय आया जब बद्र की लड़ाई में इधर मुसलमानों की विजय हुई और रूम और ईरान की लड़ाई में उधर रूमी विजयी हुए।
3. अर्थात् अगर इनसान ब्रह्माण्ड-व्यवस्था को विचारपूर्ण दृष्टि से देखे तो उसे दो तथ्य स्पष्टतः दिखाई देंगे—एक यह कि यह किसी खिलवाड़ करनेवाले का खिलौना नहीं है बल्कि एक तत्त्वदर्शिता पर आधारित और उद्देश्यपूर्ण व्यवस्था है। दूसरे यह कि यह अनादिकालिक और शाश्वत व्यवस्था नहीं है बल्कि एक समय अवश्य ही इसे समाप्त होना है। ये दोनों बातें परलोक (आख़िरत) को सिद्ध करती हैं मगर लोग ये सब कुछ देखते हुए भी इसका इनकार करते हैं।

इनसे ज़्यादा शक्ति रखते थे, उन्होंने ज़मीन को ख़ूब उधेड़ा था और उसे इतना आबाद किया था जितना इन्होंने नहीं किया है। उनके पास उनके रसूल प्रत्यक्ष निशानियाँ लेकर आए। फिर अल्लाह उनपर ज़ुल्म करनेवाला न था, मगर वे ख़ुद ही अपने ऊपर ज़ुल्म कर रहे थे। (10) आख़िरकार जिन लोगों ने बुराइयाँ की थीं उनका परिणाम बहुत बुरा हुआ, इसलिए कि उन्होंने अल्लाह की आयतों को झुठलाया था और वे उनकी हँसी उड़ाते थे।

(11) अल्लाह ही सृष्टि का आरंभ करता है, फिर वही उसकी पुनरावृत्ती करेगा, फिर उसी की ओर तुम पलटाए जाओगे। (12) और जब वह घड़ी घटित होगी उस दिन अपराधी हक्का-बक्का रह जाएँगे।[4] (13) उनके ठहराए हुए भागीदारों में से कोई उनका सिफ़ारिशी न होगा और वे अपने भागीदारों का इनकार करनेवाले हो जाएँगे।[5] (14) जिस दिन वह घड़ी घटित होगी, उस दिन (सब इनसान) अलग गिरोहों में बँट जाएँगे। (15,16) जो लोग ईमान लाए हैं और जिन्होंने अच्छे कर्म किए हैं वे एक बाग़ में आनन्द और उल्लास के साथ रखे जाएँगे, और जिन्होंने इनकार किया है और हमारी आयतों और आख़िरत के मिलने को झुठलाया है वे अज़ाब में उपस्थित रखे जाएँगे।

(17) अतः 'तसबीह' (गुणगान) करो अल्लाह की जबकि तुम शाम करते हो और जब सुबह करते हो। (18) आसमानों और ज़मीन में उसी के लिए प्रशंसा है। और (तसबीह करो उसकी) तीसरे पहर और जबकि तुमपर 'ज़ुहर' का समय आता है।[6] (19) वह ज़िन्दा को मुर्दे में से निकालता है और मुर्दे को ज़िन्दा में से निकाल लाता है और ज़मीन को उसकी मौत के बाद ज़िन्दगी प्रदान करता है। इसी तरह तुम लोग भी (मौत की दशा से) निकाल लिए जाओगे।

(20) उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुमको मिट्टी से पैदा किया। फिर यकायक तुम इनसान हो कि (ज़मीन में) फैलते चले जा रहे हो।

4. मूल में 'युबलिसु' शब्द का इस्तेमाल हुआ है। 'इबलास' का अर्थ है निराशा और दुख के कारण किसी व्यक्ति का मूक और चकित एवं स्तब्ध होकर रह जाना।
5. अर्थात् उस समय ये बहुदेववादी ख़ुद इस बात को स्वीकार करेंगे कि हम उनको अल्लाह का साझीदार ठहराने में ग़लती पर थे।
6. इस आयत में नमाज़ के चार नियत समयों की ओर स्पष्ट संकेत है, फ़ज्र, मग़रिब, अस्र, ज़ुहर। इसके साथ सूरा 11 (हूद) आयत 114, सूरा 17 (बनी इसराईल) आयत 78 और सूरा 20 (ता॰ हा॰) आयत 130 को पढ़ा जाए तो नमाज़ के पाँचों नियत समयों का आदेश निकल आता है।

(21) और उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही सहजाति से बीवियाँ बनाई ताकि तुम उनके पास शान्ति प्राप्त करो और तुम्हारे बीच प्रेम और दयालुता पैदा कर दी। यक़ीनन इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो सोच-विचार करते हैं।

(22) और उसकी निशानियों में से आसमानों और ज़मीन की सृष्टि, और तुम्हारी भाषाओं और तुम्हारे रंगों की भिन्नता है। यक़ीनन इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं बुद्धिमान लोगों के लिए।

(23) और उसकी निशानियों में से तुम्हारा रात और दिन को सोना और तुम्हारा उसके अनुग्रह (आजीविका) को तलाश करना है। यक़ीनन इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो (ध्यानपूर्वक) सुनते हैं।

(24) और उसकी निशानियों में से यह हैं कि वह तुम्हें बिजली की चमक दिखाता है भय के साथ भी और लोभ के साथ भी। और आसमान से पानी बरसाता है, फिर उसके द्वारा ज़मीन को उसकी मौत के बाद ज़िन्दगी प्रदान करता है। यक़ीनन इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो बुद्धि से काम लेते हैं।

(25) और उसकी निशानियों में से यह है कि आसमान और ज़मीन उसके आदेश से क़ायम हैं। फिर ज्यों ही कि उसने तुम्हें ज़मीन से पुकारा, बस एक ही पुकार में अचानक तुम निकल आओगे। (26) आसमानों और ज़मीन में जो भी हैं उसके बन्दे हैं। सब के सब उसी की आज्ञा के अधीन हैं। (27) वही है जो सृष्टि का आरम्भ करता है, फिर वही उसकी पुनरावृत्ति करेगा और यह उसके लिए ज़्यादा आसान है। आसमानों और ज़मीन में उसका गुण सर्वोच्च है और वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।

(28) वह तुम्हें ख़ुद तुम्हारे अपने ही व्यक्तित्व से एक मिसाल देता है। क्या तुम्हारे उन दासों में से जो तुम्हारे स्वामित्व के अधीन हैं कुछ दास ऐसे भी हैं जो हमारे दिए हुए माल और दौलत में तुम्हारे साथ बराबर के साझीदार हों और तुम उनसे उस तरह डरते हो जिस तरह आपस में अपने समकक्ष व्यक्तियों से डरते हो[7]—इस तरह हम आयतें खोलकर प्रस्तुत करते हैं उन लोगों के लिए जो बुद्धि से काम लेते हैं। (29) मगर

7. यह वही विषय है जिसका उल्लेख क़ुरआन की सूरा 16 (नहल) आयत 62 में किया जा चुका है। दोनों जगह तर्कयुक्ति यह है कि जब तुम अपने माल में अपने दासों को साझीदार नहीं बनाते तो तुम्हारी समझ में कैसे यह बात आती है कि ईश्वर अपने ईश्वरत्व में अपने बन्दों को साझीदार बनाएगा?

ये ज़ालिम बिना समझे-बूझे अपनी कल्पनाओं के पीछे चल पड़े हैं। अब कौन उस व्यक्ति को मार्ग दिखा सकता है जिसे अल्लाह ने भटका दिया हो, ऐसे लोगों का तो कोई सहायक नहीं हो सकता।

(30) अतः (ऐ नबी, और नबी के अनुयायियों) एकाग्र होकर अपना रुख़ इस धर्म (दीन) की दिशा में जमा दो, क़ायम हो जाओ उस प्रकृति पर जिसपर अल्लाह तआला ने इनसानों को पैदा किया है, अल्लाह की बनाई हुईसंरचना बदली नहीं जा सकती,[8] यही बिलकुल सीधा और ठीक धर्म है, मगर ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं। (31,32) (क़ायम हो जाओ इस बात पर) अल्लाह की ओर रुजू करते हुए, और डरो उससे, और नमाज़ क़ायम करो, और न हो जाओ उन बहुदेववादियों में से जिन्होंने अपना-अपना धर्म अलग बना लिया है और गिरोहों में बँट गए हैं, हर एक गिरोह के पास जो कुछ है उसी में वे मग्न हैं।

(33,34) लोगों का हाल यह है कि जब उन्हें कोई तकलीफ़ पहुँचती है तो अपने रब की ओर रुजू करके उसे पुकारते हैं, फिर जब वह कुछ अपनी दयालुता का रसास्वादन उन्हें करा देता है तो अचानक उनमें से कुछ लोग शिर्क करने लगते हैं ताकि हमारे किए हुए उपकार के प्रति कृतघ्नता का प्रदर्शन करें। अच्छा, मज़े कर लो, जल्द ही तुम्हें मालूम हो जाएगा। (35) क्या हमने कोई सनद और प्रमाण उनपर उतारा है जो गवाही देता हो उस बहुदेववाद (शिर्क) की सत्यता पर जो ये अपना रहे हैं?

(36) जब हम लोगों को दयालुता का रसास्वादन कराते हैं तो वे उसपर फूल जाते हैं। और जब उनकी अपनी की हुई करतूतों से उनपर कोई मुसीबत आती है तो अचानक वे निराश होने लगते हैं। (37) क्या ये लोग देखते नहीं है कि अल्लाह ही रोज़ी कुशादा (विस्तीर्ण) करता है जिसकी चाहता है, और तंग करता है (जिसकी चाहता है)?

8. अर्थात् अल्लाह ने इनसान को अपना बन्दा बनाया है और अपनी ही बन्दगी के लिए पैदा किया है। यह रचना किसी के बदलने से नहीं बदल सकती। न आदमी बन्दा से ग़ैर बन्दा बन सकता है, न किसी को जो ईश्वर नहीं, ईश्वर बना लेने से वह वास्तव में उसका ईश्वर बन सकता है। इनसान भले ही अपने कितने ही पूज्य बना बैठे, लेकिन यह तथ्य अपनी जगह अटल है कि वह एक ईश्वर के सिवा किसी का बन्दा नहीं है। दूसरा अनुवाद इस आयत का यह भी हो सकता है कि "अल्लाह की निर्मित रचना में परिवर्तन न किया जाए।" अर्थात् अल्लाह ने जिस प्रकृति पर इनसान को पैदा किया है उसको बिगाड़ना और विकृत करना ठीक नहीं है।

यक़ीनन इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो ईमान लाते हैं। (38) अतः (ऐ ईमान लानेवाले) नातेदार को उसका हक़ दे और मुहताज और मुसाफ़िर को (उसका हक़[9])। यह तरीक़ा बहुत अच्छा है उन लोगों के लिए जो अल्लाह की प्रसन्नता के इच्छुक हों, और वही सफलता प्राप्त करनेवाले हैं। (39) जो ब्याज तुम देते हो ताकि लोगों के मालों में शामिल होकर वह बढ़ जाए, अल्लाह की दृष्टि में वह नहीं बढ़ता,[10] और जो ज़कात (दान) तुम अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के इरादे से देते हो, उसी के देनेवाले वास्तव में अपने माल बढ़ाते हैं।

(40) अल्लाह ही है जिसने तुमको पैदा किया, फिर तुम्हें आजीविका दी, फिर वह तुम्हें मौत देता है, फिर वह तुम्हें ज़िन्दा करेगा। क्या तुम्हारे ठहराए हुए भागीदारों में कोई ऐसा है जो इनमें से कोई कार्य भी करता हो? पाक है वह और बहुत उच्च और महान है उस शिर्क से जो ये लोग करते हैं। (41) थल और जल में बिगाड़ पैदा हो गया है लोगों के अपने हाथों की कमाई से[11] ताकि मज़ा चखाए उनको उनके कुछ कर्मों का, शायद कि वे बाज़ आएँ। (42) (ऐ नबी) उनसे कहो कि ज़मीन में चल-फिरकर देखो पहले गुज़रे हुए लोगों का क्या परिणाम हो चुका है, उनमें से ज़्यादातर बहुदेववादी ही थे। (43) अतः (ऐ नबी) अपना रुख़ मज़बूती के साथ जमा दो इस सीधे और ठीक धर्म की दिशा में इसके पहले कि वह दिन आए जिसके टल जाने का कोई उपाय अल्लाह की ओर से नहीं है। उस दिन लोग फटकर एक-दूसरे से अलग हो जाएँगे। (44,45) जिसने इनकार किया है उसके इनकार का वबाल उसी पर है, और जिन लोगों ने अच्छा कर्म किया है वे अपने ही लिए (सफलता का रास्ता) साफ़ कर रहे हैं ताकि अल्लाह ईमान लानेवालों और अच्छा कर्म करनेवालों को अपने अनुग्रह से बदला दे। यक़ीनन वह इनकार करनेवालों को पसन्द नहीं करता।

(46) उसकी निशानियों में से यह है कि वह हवाएँ भेजता है ख़ुशख़बरी देने के

9. यह नहीं कहा कि नातेदार, मुहताज और मुसाफ़िर को भीख़ दे। कहा यह गया है कि यह उसका हक़ और अधिकार है जो तुझे देना चाहिए, और हक़ ही समझकर तू उसे दे।

10. क़ुरआन मजीद में यह पहली आयत है जो ब्याज की निन्दा में उतरी। बाद के आदेशों के लिए देखिए क़ुरआन की सूरा 3 (आले इमरान) आयत 130, सूरा 2 (अल-बक़रा) आयतें 275 से 281 तक।

11. संकेत उस युद्ध की ओर है जो उस समय दुनिया की दो महा-शक्तियों ईरान और रूम के बीच छिड़ा हुआ था।

लिए और तुम्हें अपनी दयालुता से लाभान्वित करने के लिए और इस उद्देश्य के लिए कि नौकाएँ उसके आदेश से चलें और तुम उसका अनुग्रह (आजीविका) तलाश करो और उसके आभारी बनो। (47) और हमने तुमसे पहले रसूलों को उनकी क़ौम की ओर भेजा और वे उनके पास स्पष्ट निशानियाँ लेकर आए। फिर जिन्होंने अपराध किया उनसे हमने बदला लिया और हमपर यह हक़ था कि हम ईमानवालों की सहायता करें।

(48,49) अल्लाह ही है जो हवाओं को भेजता है और वे बादल उठाती हैं, फिर वह उन बादलों को आसमान में फैलाता है जिस तर चाहता है और उन्हें टुकड़ियों में बाँटता है, फिर तू देखता है कि वर्षा की बूँदें बादल में से टपकी चली आती हैं। यह वर्षा जब वह अपने बन्दों में से जिनपर चाहता है बरसाता है तो अचानक वे ख़ुश और प्रसन्न हो जाते हैं, हालाँकि इसके उतरने से पहले वे निराश हो रहे थे। (50) देखो अल्लाह की दयालुता के प्रभाव कि मुर्दा पड़ी हुई ज़मीन को किस तरह जिला उठाता है, यक़ीनन वह मुर्दों को ज़िन्दगी प्रदान करनेवाला है और वह हर चीज़ की सामर्थ्य रखता है। (51) और अगर हम एक ऐसी हवा भेज दें जिसके प्रभाव से वे अपनी खेती को पीली पड़ी हुई पाएँ तो वे कृतघ्नता दिखलाते रह जाते हैं।[12] (52,53) (ऐ नबी) तुम मुर्दों को नहीं सुना सकते,[13] न उन बहरों को अपनी पुकार सुना सकते हो जो पीठ फेरे चले जा रहे हों, और न तुम अन्धों को उनकी पथभ्रष्टता से निकालकर सन्मार्ग दिखा सकते हो। तुम तो सिर्फ़ उन्हीं को सुना सकते हो जो हमारी आयतों पर ईमान लाते और आज्ञाकारी हो जाते हैं।

(54) अल्लाह ही तो है जिसने निर्बलता की हालत से तुम्हारे सृजन का आरंभ किया, फिर उस निर्बलता के बाद तुम्हें शक्ति प्रदान की, फिर उस शक्ति के बाद तुम्हें निर्बल और बूढ़ा कर दिया। वह जो कुछ चाहता है पैदा करता है। और वह सब कुछ जाननेवाला, हर चीज़ की सामर्थ्य रखनेवाला है। (55) और जब वह घड़ी[14] आ मौजूद होगी तो अपराधी क़समें खा-खाकर कहेंगे कि हम एक घड़ी-भर से ज़्यादा नहीं ठहरे हैं, इसी तरह वे दुनिया की ज़िन्दगी में धोखा खाया करते थे। (56) मगर जो ज्ञान और

12. अर्थात् फिर वे अल्लाह को कोसने लगते हैं और उसपर दोषारोपण करने लगते हैं कि उसने कैसी मुसीबतें हमपर डाल रखी हैं। हालाँकि जब अल्लाह ने उनपर नेमत की वर्षा की थी उस समय उन्होंने शुक्र के बदले कृतघ्नता दिखलाई थी।
13. अर्थात् उन लोगों को जिनकी अन्तरात्मा मर चुकी है।
14. अर्थात् क़ियामत जिसके आने की सूचना दी जा रही है।

ईमान से सम्पन्न किए गए थे वे कहेंगे कि अल्लाह के लेख्य में तो तुम जी उठने (हश्र) के दिन तक पड़े रहे हो, सो यह वही जी उठने (हश्र) का दिन है, लेकिन तुम जानते न थे। (57) अतः वह दिन होगा जिसमें ज़ालिमों को उनका उज़्र (बहाना) कोई लाभ न पहुँचाएगा और न उनसे माफ़ी माँगने के लिए कहा जाएगा।[15]

(58) हमने इस क़ुरआन में लोगों को तरह-तरह से समझाया है। तुम चाहे कोई निशानी ले आओ, जिन लोगों ने मानने से इनकार कर दिया है वे यही कहेंगे कि तुम असत्य पर हो। (59) इस तरह ठप्पा लगा देता है अल्लाह उन लोगों के दिलों पर जो ज्ञान से वंचित हैं। (60) अतः (ऐ नबी) सब्र करो, यक़ीनन अल्लाह का वादा सच्चा है, और हरगिज़ हलका न पाएँ तुमको वे लोग जो विश्वास नहीं करते।[16]

● ● ●

15. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है—"न उनसे यह चाहा जाएगा कि अपने रब को राज़ी करो।"
16. अर्थात् दुश्मन तुमको ऐसा कमज़ोर न पाएँ कि उनके शोर-हंगामे से तुम दब जाओ, या उनके आरोप और मिथ्यारोपणों के अभियान से तुम आतंकित हो जाओ, या उनकी फबतियों और तानों और परिहास से तुम साहस छोड़ बैठो, या उनकी धमकियों और शक्ति के प्रदर्शनों या ज़ुल्म और अत्याचार से तुम डर जाओ, या उनके दिए हुए लालचों से तुम फिसल जाओ।

31. लुक़मान

नाम

इस सूरा की आयत 12 से 19 तक में वे उपदेश उद्धृत किए गए हैं, जो हक़ीम लुक़मान ने अपने बेटे को किए थे। इसी सम्पर्क से इसका नाम लुक़मान रखा गया है।

अवतरणकाल

इसकी विषय-वस्तुओं पर विचार करने से साफ़ महसूस होता है कि यह उस समय अवतरित हुई है जब इस्लामी आह्वान को दबाने और रोकने लिए दमन और अत्याचार का आरम्भ हो चुका था लेकिन अभी विरोध के तूफ़ान ने पूर्णतः प्रचण्ड रूप धारण नहीं किया था। इसका पता आयत 14 और 15 से चलता है, जिसमें नए-नए मुसलमान होनेवाले नव युवकों को बताया गया है कि माता-पिता के अधिकार तो निस्संदेह अल्लाह के बाद सबसे बढ़कर हैं, किन्तु यदि वे तुम्हें बहुदेववादी धर्म की ओर पलटने पर विवश करें तो उनकी यह बात कदापि न मानना।

विषय और वार्ता

इस सूरा में लोगों को बहुदेववाद की निरर्थकता तथा उसकी अबौद्धिकता और एकेश्वरवाद की सत्यता एवं बौद्धिकता समझाई गई है और उन्हें आमंत्रित किया गया है कि बाप-दादा का अन्धा अनुसरण त्याग दें, खुले दिल से उस शिक्षा पर विचार करें जो मुहम्मद (सल्ल॰) जगत् के रब की ओर से प्रस्तुत कर रहे हैं और खुली आँखों से देखें कि हर ओर जगत् में और स्वयं उनके अपने भीतर कैसे-कैसे स्पष्ट लक्षण उसकी सच्चाई पर गवाही दे रहे हैं। इस सिलसिले में यह भी बताया गया है कि यह कोई नई आवाज़ नहीं है जो संसार मेंया स्वयं अरब क्षेत्र में पहली बार उठी हो। पहले भी जो लोग ज्ञान एवं बुद्धि तथा विवेक और समझ रखते थे वे यही बातें कहते थे, जो आज मुहम्मद (सल्ल॰) कह रहे हैं। तुम्हारे अपने ही देश में लुक़मान नामी हक़ीम गुज़र चुका है, जिसकी हिकमत और ज्ञान को (तुम स्वयं भी स्वीकार करते हो) अब देख लो कि वह किस धारणा और किन नैतिक सूत्रों की शिक्षा देता था।



31. सूरा लुक़मान

(मक्का में उतरी–आयतें 34)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ मीम॰। (2) ये हिकमत (तत्त्वज्ञान) वाली किताब की आयतें हैं,[1] (3) मार्गदर्शन और दयालुता उत्तमकार लोगों के लिए, (4) जो नमाज़ क़ायम करते हैं, ज़कात देते हैं और आख़िरत (परलोक) पर विश्वास रखते हैं। (5) यही लोग अपने रब की ओर से सन्मार्ग पर हैं और यही सफलता प्राप्त करनेवाले हैं।

(6) और इनसानों ही में से कोई ऐसा भी है जो दिल बहलानेवाली बातें ख़रीदकर लाता है[2] ताकि लोगों को अल्लाह के मार्ग से ज्ञान के बिना भटका दे और इस मार्ग के बुलावे को हँसी में उड़ा दे। ऐसे लोगों के लिए बड़ा ही अपमानजनक अज़ाब है। (7) उसे जब हमारी आयतें सुनाई जाती हैं तो वह बड़े घमण्ड के साथ इस प्रकार रुख़ फेर लेता है मानो उसने उन्हें सुना ही नहीं, मानो उसके कान बहरे हैं। अच्छा, ख़ुशख़बरी दे दो उसे एक दुखद अज़ाब की। (8) अलबत्ता जो लोग ईमान ले आएँ और अच्छे कर्म करें, उनके लिए नेमत भरी जन्नतें हैं (9) जिनमें वे हमेशा रहेंगे। यह अल्लाह का पक्का वादा है और वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।

(10) उसने आसमानों को पैदा किया बिना स्तंभों के जो तुम्हें नज़र आएँ। उसने ज़मीन में पहाड़ जमा दिए ताकि वह तुम्हें लेकर ढुलक न जाए। उसने हर प्रकार के जानवर ज़मीन में फैला दिए और आसमान से पानी बरसाया और ज़मीन में विभिन्न प्रकार की अच्छी चीज़ें उगा दीं। (11) यह तो है अल्लाह की संरचना, अब ज़रा मुझे दिखाओ, इन दूसरों ने क्या पैदा किया है?—असल बात यह है कि ये ज़ालिम लोग

---

1. अर्थात् ऐसी किताब की आयतें जो हिकमत (तत्त्वज्ञान) से परिपूर्ण है, जिसकी हर बात हिकमत पर आधारित है।
2. मूल शब्द है 'लहवल हदीस', अर्थात् ऐसी बात जो आदमी को अपने में व्यस्त करके हर दूसरी चीज़ से ग़ाफ़िल कर दे। उल्लेखों में बयान हुआ है कि जब नबी (सल्ल॰) के धर्मप्रचार के प्रभाव क़ुरैश की सारी कोशिशों के बावजूद फैलने से न रुके तो उन्होंने ईरान से रुस्तम और असफ़न्दयार की कहानियाँ मँगवाकर कथा-कहानी सुनाने का सिलसिला शुरू किया और गाने-बजानेवाली लौंडियों का प्रबन्ध किया ताकि लोग इन चीज़ों में व्यस्त होकर नबी (सल्ल॰) की बात न सुनें।

स्पष्ट पथभ्रष्टता में पड़े हुए हैं।

(12) हमने लुक़मान को हिकमत (तत्त्वदर्शिता) प्रदान की थी कि अल्लाह के प्रति कृतज्ञता दिखाए। जो कोई कृतज्ञता दिखाए उसकी कृतज्ञता उसके अपने ही लिए लाभदायक है। और जो इनकार और कृतघ्नता की नीति अपनाए तो वास्तव में अल्लाह निस्पृह और आपसे आप प्रशंसित है।

(13) याद करो जब लुक़मान अपने बेटे को नसीहत कर रहा था तो उसने कहा, "बेटा, अल्लाह के साथ किसी को शरीक न करना, सत्य यह है कि शिर्क (बहुदेववाद) बहुत बड़ा ज़ुल्म है" (14)—और यह वास्तविकता है कि हमने इनसान को अपने माँ-बाप का हक़ पहचानने की स्वयं ताकीद की है। उसकी माँ ने कमज़ोरी पर कमज़ोरी झेलकर उसे अपने पेट में रखा और दो वर्ष उसका दूध छूटने में लगे। (इसी लिए हमने उसको नसीहत की कि) मेरे प्रति कृतज्ञता दिखाओ और अपने माँ-बाप के प्रति कृतज्ञ हो, मेरी ही ओर तुझे पलटना है। (15) लेकिन अगर वे तुझपर दबाव डालें कि मेरे साथ तू किसी ऐसे को शरीक करे जिसे तू नहीं जानता[3] तो तू उनकी बात हरगिज़ न मान। दुनिया में उनके साथ अच्छा व्यवहार करता रह मगर चल उस व्यक्ति के मार्ग पर जिसने मेरी ओर रुजू किया है। फिर तुम सबको पलटना मेरी ही ओर है, उस समय में तुम्हें बता दूँगा कि तुम कैसे कर्म करते रहे हो।

(16) (और लुक़मान ने कहा था कि) "बेटा, कोई चीज़ राई के दाने के बराबर भी हो और किसी चट्टान में या आसमानों या ज़मीन में कहीं छुपी हुई हो अल्लाह उसे निकाल लाएगा। वह सूक्ष्मदर्शी और ख़बर रखनेवाला है। (17) बेटा, नमाज़ क़ायम कर, नेकी का आदेश दे, बुराई से रोक, और जो मुसीबत भी पड़े उसपर सब्र कर। ये वे बातें हैं जिनकी बड़ी ताकीद की गई है।[4] (18) और लोगों से मुख फेरकर बात न कर, न ज़मीन में अकड़कर चल, अल्लाह किसी अहंकारी और ढींग मारनेवाले को पसन्द नहीं करता। (19) अपनी चाल में सन्तुलन बनाए रख, और अपनी आवाज़ तनिक धीमी रख, सब आवाज़ों से ज़्यादा बुरी आवाज़ गधों की आवाज़ होती है।"

(20) क्या तुम लोग नहीं देखते कि अल्लाह ने ज़मीन और आसमानों की सारी चीज़ें तुम्हारे लिए वशीभूत कर रखी हैं[5] और अपनी खुली और छिपी नेमतें तुमपर पूर्ण कर दी हैं? इसपर हाल यह है कि इनसानों में से कुछ लोग हैं जो अल्लाह के बारे में

3. अर्थात् जो तेरी जानकारी में मेरा साझी नहीं है।
4. दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि यह बड़े साहस के कामों में से है।

झगड़ते हैं बिना इसके कि उनके पास कोई ज्ञान हो, या मार्गदर्शन, या कोई प्रकाश दिखानेवाली किताब। (21) और जब उनसे कहा जाता है कि पालन करो उस चीज़ का जो अल्लाह ने उतारी है तो कहते हैं कि हम तो उस चीज़ का पालन करेंगे जिसपर हमने अपने बाप-दादा को पाया है। क्या ये उन्हीं का पालन करेंगे चाहे शैतान उनको भड़कती हुई आग ही की ओर क्यों न बुलाता रहा हो?

(22) जो व्यक्ति अपने आपको अल्लाह के हवाले कर दे और व्यवहार में वह नेक हो, उसने वास्तव में एक भरोसे के योग्य सहारा थाम लिया, और सारे मामलों का अन्तिम निर्णय अल्लाह ही के हाथ है। (23) अब जो इनकार करता है उसका इनकार तुम्हें शोकाकुल न करे, उन्हें पलटकर आना तो हमारी ही ओर है, फिर हम उन्हें बता देंगे कि वे क्या कुछ करके आए हैं। यक़ीनन अल्लाह सीनों के छिपे हुए रहस्य तक जानता है। (24) हम थोड़ी अवधि तक उन्हें दुनिया में मज़े करने का अवसर दे रहे हैं, फिर उनको बेबस करके एक कठोर अज़ाब की ओर खींच ले जाएँगे।

(25) अगर तुम इनसे पूछो कि ज़मीन और आसमानों को किसने पैदा किया है, तो ये ज़रूर कहेंगे कि अल्लाह ने। कहो, प्रशंसा अल्लाह के लिए है। मगर इनमें से ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं। (26) आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है अल्लाह का है। बेशक अल्लाह निस्पृह और अपने-आप प्रशासित है। (27) ज़मीन में जितने पेड़ हैं यदि वे सबके सब क़लम बन जाएँ और समुद्र (दवात बन जाए) जिसे सात और समुद्र रोशनाई जुटाएँ तब भी अल्लाह की बातें (लिखने से) ख़त्म न होंगी।[6] बेशक अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है। (28) तुम सारे इनसानों को पैदा करना और फिर दोबारा जिला उठाना तो (उसके लिए) बस ऐसा है जैसे एक प्राणी को (पैदा करना और

5. किसी चीज़ को किसी के लिए दो तरह से वशीभूत किया जा सकता है। एक यह कि वह चीज़ उसके अधीन कर दी जाए और उसे अधिकार दे दिया जाए कि जिस तरह से चाहे काम में लाए और जिस तरह चाहे उसका इस्तेमाल करे। दूसरे यह कि उस चीज़ को ऐसे नियम का पाबन्द कर दिया जाए जिसके कारण वह उस व्यक्ति के लिए लाभकारी हो जाए और उसके हित की सेवा करती रहे। ज़मीन और आसमान की सभी चीज़ों को अल्लाह ने इनसान के लिए एक ही अर्थ में वशीभूत नहीं कर दिया है, बल्कि कुछ चीज़ें पहले अर्थ में वशीभूत की हैं और कुछ दूसरे अर्थ में। उदाहरणार्थ–हवा, पानी, मिट्टी, आग, वनस्पति, खनिज पदार्थ, चौपाए आदि अगणित चीज़ें पहले अर्थ में हमारे लिए वशीभूत हैं, और चाँद, सूरज आदि दूसरे अर्थ में।

जिला उठाना)। वास्तविकता यह है कि अल्लाह सब कुछ सुनने और देखनेवाला है।

(29) क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह रात को दिन में पिरोता हुआ ले आता है और दिन को रात में? उसने सूरज और चाँद को वशीभूत कर रखा है, सब एक नियत समय तक चले जा रहे हैं,[7] और (क्या तुम नहीं जानते कि) जो कुछ भी तुम करते हो अल्लाह उसकी ख़बर रखता है? (30) यह सब कुछ इस कारण है कि अल्लाह ही सत्य है, और उसे छोड़कर जिन दूसरी चीज़ों को ये लोग पुकारते हैं वे सब असत्य हैं, और (इस कारण से कि) अल्लाह ही उच्च और महान है।

(31) क्या तुम देखते नहीं हो कि नौका समुद्र में अल्लाह के अनुग्रह से चलती है ताकि वह तुम्हें अपनी कुछ निशानियाँ दिखाए? वास्तव में इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं हर उस व्यक्ति के लिए जो सब्र और शुक्र करनेवाला हो। (32) और जब (समुद्र में) इन लोगों पर एक मौज छत्रों की तरह छा जाती है तो ये अललाह को पुकारते हैं अपने धर्म को बिलकुल उसी के लिए विशुद्ध करके। फिर जब वह बचाकर इन्हें स्थल तक पहुँचा देता है तो इनमें से कोई बीच का मार्ग अपनाता है,[8] और हमारी निशानियों का इनकार नहीं करता मगर हर वह व्यक्ति जो विश्वासघाती और कृतघ्न है।

(33) लोगो, बचो अपने रब के प्रकोप से और डरो उस दिन से जब कोई बाप अपने बेटे की ओर से बदला न देगा और न कोई बेटा ही अपने बाप की ओर से कुछ

6. यही विषय थोड़े भिन्न शब्दों में सूरा 18 (कहफ़) आयत 109 में उल्लिखित हो चुका है। इससे यह विश्वास दिलाना अभीष्ट है कि जिस अल्लाह ने इतने बड़े ब्रह्माण्ड को अस्तित्व प्रदान किया है कि उसकी शक्ति के चमत्कारों की कोई सीमा नहीं है। उसके प्रभुत्व एवं ईश्वरत्व में आख़िर कोई ऐसा साझीदार कैसे हो सकता है जो पैदा किया गया हो।
7. अर्थात् हर चीज़ की जो आयु की अवधि नियत कर दी गई है उसी समय तक वह चल रही है। कोई चीज़ भी न पहले से हमेशा है और न बाद में हमेशा रहेगी।
8. इसके दो अर्थ हो सकते हैं। बीच की राह अपनाने को यदि सन्मार्ग पर चलने के अर्थ में लिया जाए तो इसका मतलब यह होगा कि इनमें से कोई वह समय बीत जाने के बाद भी एकेश्वरवाद पर क़ायम रहता है, और अगर इसे मध्ये और सन्तुलन के अर्थ में लिया जाए तो मतलब यह होगा कि कुछ लोग अपने बहुदेववाद और नास्तिकता की धारणा में उस कट्टरता पर क़ायम नहीं रहते या कुछ लोगों के भीतर सत्यनिष्ठा का वह भाव ठण्डा पड़ जाता है जो उस समय पैदा हुआ था।

बदला देनेवाला होगा। निश्चय ही अल्लाह का वादा सच्चा है।[9] अतः यह दुनिया की ज़िन्दगी तुम्हें धोखे में न डाले। और न धोखेबाज़ तुमको अल्लाह के मामले में धोखा देने पाए।

(34) उस घड़ी का ज्ञान अल्लाह ही के पास है, वही वर्षा करता है, वही जानता है कि माओं के पेटों में क्या पल रहा है, कोई प्राणी नहीं जानता कि कल वह क्या कमाई करनेवाला है, और न किसी व्यक्ति को यह ख़बर है कि किस भूभाग में उसको मौत आनी है, अल्लाह ही सब कुछ जाननेवाला और ख़बर रखनेवाला है।

● ● ●

9. अर्थात् क़ियामत का वादा।

32. अस-सजदा

नाम

आयत 15 में सजदा का जो प्रसंग आया है, उसी को सूरा का शीर्षक ठहरा दिया गया है।

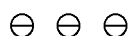
अवतरणकाल

वर्णन-शैली से ऐसा लागता है कि इसका अवतरणकाल मक्का का मध्यकाल है, और उसका भी आरम्भिक काल, (जब मक्का के काफ़िरों के अत्याचार अभी उग्ररूप धारण नहीं कर सके थे)।

विषय और वार्ताएँ

सूरा का विषय एकेश्वरवाद, परलोकवाद और पैग़म्बर के सम्बन्ध में लोगों के सन्देहों को दूर करना और इन तीनों सच्चाइयों पर ईमान लाने का निमंत्रण देना है। (सत्य के आमंत्रण की इन तीनों मौलिक बातों पर मक्का के काफ़िरों के आक्षेपों का उत्तर देते हुए सबसे पहले उनसे) यह कहा गया है कि निस्सन्देह यह ईश्वरीय वाणी है और इसलिए अवतरित की गई है कि नुबूवत की बरकत से वंचित, बेसुध पड़ी हुई एक जाति को चौंकाया जाए। इसे तुम झूठ कैसे कह सकते हो जबकि इसका अल्लाह की ओर से अवतरित होना बिलकुल स्पष्ट है। फिर उनसे कहा गया है कि यह क़ुरआन जिन तथ्यों को तुम्हारे सामने प्रस्तुत करता है, बुद्धि से काम लेकर स्वयं सोचो कि इनमें क्या चीज़ अचम्भे की है। आकाश और धरती की व्यवस्था को देखो, स्वयं अपने पैदा होने और अपनी संरचना पर विचार करो, क्या यह सब कुछ क़ुरआन की शिक्षाओं की सत्यता पर साक्ष्य नहीं हैं। फिर परलोक का एक चित्रण प्रस्तुत किया गया है और ईमान के सुखद पल और कुफ़्र (इनकार) के दुष्परिणामों को बयान करके इस बात की प्रेरणा दी गई है कि लोग दुष्परिणाम सामने आने से पहले कुफ़्र को त्याग दें और क़ुरआन की इस शिक्षा को स्वीकार कर लें। फिर उनको बताया गया है कि यह अल्लाह की बड़ी दया है कि वह मानव के दोषों पर अचानक अन्तिम और निर्णायक यातना में उसे नहीं पकड़ लेता, बल्कि उससे पहले हल्की-हल्की चोटें लगाता रहता है, ताकि वह सतर्क हो और उसकी आँखें खुल जाएँ। फिर कहा कि दुनिया में किताब के अवतरण की यह कोई पहली और अद्भुत घटना तो नहीं है। इससे पहले आख़िर मूसा (अलै॰) पर भी तो किताब आई थी, जिसे तुम सब लोग जानते हो। विश्वास रखो कि यह किताब अल्लाह की ओर से आई है और भली-भाँति समझ लो कि अब फिर वही कुछ होगा जो मूसा के

युग में हो चुका है। नायकता और पेशवाई अब उन्हीं के हिस्से में आएगी जो इस ईश्वरीय ग्रंथ को मान लेंगे। इसे रद्द कर देनेवालों के लिए असफलता निश्चित हो चुकी है। फिर मक्का के काफ़िरों से कहा गया है कि अपनी व्यापारिक यात्राओं में तुम जिन पिछली विनष्ट जातियों की बस्तियों पर से गुज़रे हो, उसका परिणाम देख लो। क्या यही परिणाम तुम अपने लिए पसनद करते हो? ज़ाहिर से धोखा न खाओ। आज (ईमानवालों को इन परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है, उन्हें देखकर) तुम यह समझ बैठे हो कि यह चलनेवाली बात नहीं है। किन्तु यह केवळ तुम्हारी निगाह का धोखा है। क्या यह तुम्हारा रात-दिन का निरीक्षण नहीं है कि आज एक भू-भाग बिलकुल सूखा हुआ बिना किसी हरियाली के पड़ा हुआ है, किन्तु कल एक ही वर्षा में वह इस प्रकार फबक उठता है कि उसके चप्पे-चप्पे से विकास की शक्तियाँ उभरनी शुरू हो जाती हैं। वार्ता की समाप्ति पर नबी (सल्ल॰) को सम्बोधित करके कहा गया है कि ये लोग (तुम्हारे मुख से फ़ैसले के दिन की बात) सुनकर उसका उपहास करते हैं। इनसे कहो कि जब हमारे और तुम्हारे फ़ैसले का वक़्त आ जाएगा, उस वक़्त इस बात को मानना तुम्हारे लिए कुछ भी लाभदायक न होगा। मानना है तो अभी मान लो।



32. सूरा अस-सजदा

(मक्का में उतरी–आयतें 30)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अलिफ़॰ लाम॰ मीम॰। (2) इस किताब का अवतरण निस्संदेह सारे जहान के रब की ओर से है। (3) क्या ये लोग कहते हैं कि इस व्यक्ति ने इसे ख़ुद घड़ लिया है? नहीं, बल्कि यह सत्य है तेरे रब की ओर से ताकि तू सावधान करे एक ऐसी क़ौम को जिसके पास तुझसे पहले कोई समाधान करनेवाला नहीं आया, शायद कि वे मार्ग पा जाएँ।

(4) वह अल्लाह ही है जिसने आसमानों और ज़मीन कोऔर उन सारी चीज़ों को जो उनके बीच हैं छः दिनों में पैदा किया और उसके बात सिंहासन पर विराजमान हुआ, उसके सिवा न तुम्हारा कोई समर्थक और सहायक है और न कोई उसके आगे सिफ़ारिश करनेवाला, फिर क्या तुम होश में न आओगे? (5) वह आसमान से ज़मीन तक दुनिया के मामलों का संचालन करता है और इस संचालन का ब्योरा ऊपर उसके पास जाता है एक ऐसे दिन में जिसकी माप तुम्हारी गणना से एक हज़ार वर्ष[1] है। (6) वही है हर छुपे और खुले का जाननेवाला, प्रभुत्वशाली और दयावान्। (7) जो चीज़ भी उसने बनाई ख़ूब ही बनाई। उसने इनसान के सृजन का आरंभ गारे से किया, (8) फिर उसकी नस्ल एक सत से चलाई जो तुच्छ पानी की तरह का है, (9) फिर उसको नख-शिख से ठीक किया और उसके भीतर अपनी रूह फूँक दी, और तुमको कान दिए, आँखें दी और दिल दिए। तुम लोग कम ही कृतज्ञता दिखाते हो।

(10) और ये लोग कहते हैं : ''जब हम मिट्टी में रल-मिल चुके होंगे तो क्या हम फिर नए सिरे से पैदा किए जाएँगे?'' असल बात यह है कि ये अपने रब के मिलन का इनकार करते हैं। (11) इनसे कहो, ''मौत का वह फ़रिश्ता जो तुमपर नियुक्त किया गया है तुमको पूरा का पूरा अपने क़बज़े में ले लेगा और फिर तुम अपने रब की ओर पलटा लाए जाओगे।''

(12) काश! तुम देखो वह समय जब ये अपराधी सिर झुकाए अपने रब के

1. अर्थात् तुम्हारी दृष्टि में जो एक हज़ार वर्ष का इतिहास है वह अल्लाह के यहाँ मानो एक दिन का कार्य है जिसकी स्कीम आज नियति एवं निर्णय के कार्यकर्ताओं को सौंपी जाती है और कल वे उसका ब्योरा उसके सामने प्रस्तुत करते हैं ताकि दूसरे दिन (अर्थात तुम्हारे हिसाब से एक हज़ार वर्ष) का काम उन्हें सौंपा जाए।

सामने खड़े होंगे। (उस समय ये कह रहे होंगे) ''ऐ हमारे रब, हमने ख़ूब देख लिया और सुन लिया, अब हमें वापस भेज दे ताकि हम अच्छा कर्म करें, हमें अब विश्वास आ गया है।'' (13) (जवाब में कहा जाएगा) ''अगर हम चाहते तो पहले ही हर व्यक्ति को उसका सन्मार्ग दिखा देते। मगर मेरी वह बात पूरी हो गई जो मैंने कही थी कि मैं जहन्नम को जिन्नों और इनसानों, सबसे बर दूँगा। (14) अतः अब चखो मज़ा अपनी इस करतूत का कि तुमने इस दिन के मिलन को भुला दिया, हमने भी अब तुम्हें भुला दिया है। चखो हमेशा के अज़ाब का मज़ा अपनी करतूतों के बदले में।''

(15) हमारी आयतों पर तो वे लोग ईमान लाते हैं जिन्हें ये आयतें सुनाकर जब नसीहत की जाती है तो सजदे में गिर पड़ते हैं और अपने रब की प्रशंसा के साथ उसकी तसबीह करते हैं और घमण्ड नहीं करते। (16) उनकी पीठें बिस्तरों से अलग रहती हैं, अपने रब को डर और लालच के साथ पुकारते हैं, और जो कुछ रोज़ी हमने उन्हें दी है उसमें से ख़र्च करते हैं। (17) फिर जैसा कुछ आँखों की ठंडक का सामान उनके कर्मों के बदले में उनके लिए छिपा रखा गया है उसकी किसी प्राणी को ख़बर नहीं है। (18) भला कहीं यह हो सकता है कि जो व्यक्ति ईमानवाला हो वह उस व्यक्ति की तरह हो जाए जो अवज्ञाकारी हो? ये दोनों बराबर नहीं हो सकते। (19) जो लोग ईमान लाए हैं और जिन्होंने अच्छे कर्म किए हैं उनके लिए तो जन्नतें (बाग़) रहने के ठिकाने हैं, अतिथि-सत्कार के रूप में उनके कर्मों के बदले में। (20) और जिन्होंने उल्लंघन किया है उनका ठिकाना दोज़ख़ है। जब कभी वे उससे निकलना चाहेंगे उसी में ढकेल दिए जाएँगे और उनसे कहा जाएगा कि चखो अब उसी आग के अज़ाब का मज़ा जिसको तुम झुठलाया करते थे।

(21) उस बड़े अज़ाब से पहले हम इसी दुनिया में (किसी न किसी छोटे) अज़ाब का मज़ा इन्हें चखाते रहेंगे, शायद कि ये (अपनी विद्रोह-नीति से) बाज़ आ जाएँ। (22) और उससे बड़ा ज़ालिम कौन होगा जिसे उसके रब की आयतों के द्वारा नसीहत की जाए और फिर वह उनसे मुँह फेर ले। ऐसे अपराधियों से तो हम बदला लेकर रहेंगे।

(23) इससे पहले हम मूसा को किताब दे चुके हैं, अतः उसी चीज़ के मिलने पर तुम्हें कोई शक न होना चाहिए। उस किताब को हमने इसराईल की सन्तान के लिए मार्गदर्शन बनाया था, (24) और जब उन्होंने सब्र किया और हमारी आयतों पर विश्वास करते रहे तो उनके अन्दर हमने ऐसे पेशवा पैदा किए जो हमारे आदेश से मार्ग दिखाते थे। (25) यक़ीनन तेरा रब ही क़ियामत के दिन उन बातों का फ़ैसला करेगा जिनमें (इसराईली) परस्पर विभेद करते रहे हैं।

(26) और क्या इन लोगों को (इन ऐतिहासिक घटनाओं में) कोई मार्गदर्शन नहीं मिला कि इनसे पहले कितनी क़ौमों को हम तबाह कर चुके हैं जिनके रहने की जगहों में आज ये चलते-फिरते हैं? इसमें बड़ी निशानियाँ हैं, क्या ये सुनते नहीं हैं? (27) और क्या इन लोगों ने यह दृश्य कभी नहीं देखा कि हम एक सूखी और चटयल ज़मीन की ओर पानी बहा लाते हैं और फिर उसी ज़मीन से वह फ़सल उगाते हैं जिससे इनके जानवरों को भी चारा मिलता है और ये स्वयं भी खाते हैं? तो क्या इन्हें कुछ नहीं सूझता? (28) ये लोग कहते है कि "यह फ़ैसला कब होगा अगर तुम सच्चे हो?" (29) इनसे कहो, "फ़ैसले के दिन ईमान लाना उन लोगों के लिए कुछ भी लाभकारी न होगा जिन्होंने इनकार किया है और फिर उनको कोई मुहलत न मिलेगी।" (30) अच्छा, इन्हें इनके हाल पर छोड़ दो और इनतिज़ार करो, ये भी इनतिज़ार में हैं।

● ● ●

33. अल-अहज़ाब

नाम

आयत 20 के वाक्यांश, "ये समझ रहे हैं कि आक्रमणकारी गिरोह (अल-अहज़ाब) अभी गए नहीं हैं" से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इस सूरा के विषय का सम्बन्ध तीन महत्वपर्ण घटनाओं से है। एक, अहज़ाब का अभियान जिसका सम्बन्ध शव्वाल सन् 5 हिजरी से है। दूसरे, बनी क़ुरैज़ा का अभियान जो ज़ी-क़ादा सन् 5 हिजरी से सम्बन्ध रखता है। तीसरे हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) से नबी (सल्ल॰) का विवाह, जो इसी वर्ष ज़ी-क़ादा में हुआ। इन ऐतिहासिक घटनाओं से सूरा का अवतरणकाल ठीक-ठीक निश्चित हो जाता है। (और यही घटनाएँ इस सूरा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमिक भी हैं।)

सामाजिक सुधार

उहुद के युद्ध और अहज़ाब के अभियान के मध्य दो वर्ष का समय यद्यपि ऐसी अशान्ति और उपद्रवों का था, जिनके कारण नबी (सल्ल॰) और आपके साथियों को एक दिन के लिए भी शान्ति और निश्चिन्तता प्राप्त न हुई। किन्तु इस पूरी अवधि में नवीन मुस्लिम समाज के निर्माण और हर पहलू में जीवन के सुधार का काम बराबर चलता रहा। यही समय था जिसमें मुसलमानों के विवाह और तलाक़ के क़ानून लगभग पूर्ण हो गए, विरासत का क़ानून बना, शराब और जुए को अवैध किया गया; (परदे के आदेश अवतरित होने आरम्भ हुए) और अर्थव्यवस्था व सामाजिकता और समाज के दूसरे बहुत-से पहलुओं में नए नियम लागू किए गए।

विषय और वार्ताएँ

यह पूरी सूरा एक अभिभाषण नहीं है जो एक ही समय में अवतरित हुआ हो, बल्कि विभिन्न आदेशों और अभिभाषणों पर आधारित है। इसके निम्नलिखित अंश स्पष्टतः श्रेणीबद्ध दिखाई देते हैं।

1) आयत नम्बर 1 से 8 तक का भाग अहज़ाब अभियान से कुछ पहले का अवतरित मालूम होता है। इसके अवतरण के समय हज़रत ज़ैद (रज़ि॰), हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) को तलाक़ दे चुके थे। नबी (सल्ल॰) इस ज़रूरत को महसूस कर रहे थे कि मुँह बोले बेटे के विषय में अज्ञानकाल की धारणाओं (को मिटाने के लिए हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) से स्वयं

विवाह कर लें) लेकिन इसके साथ ही इस कारण बहुत संकोच में थे कि यदि (मैंने ऐसा) किया तो इस्लाम के विरुद्ध हँगामा उठाने के लिए मुनाफ़िकों और यहूद और बहुदेववादियों को एक भारी शोशा हाथ आ जाएगा।

2) आयत 9 से लेकर 27 तक में अहज़ाब और बनी क़ुरैज़ा के अभियान की समीक्षा की गई है। यह इस बात का स्पष्ट लक्षण है कि ये आयतें इन अभियानों के पश्चात् अवतरित हुई हैं।

3) आयत 28 के आरम्भ से आयत 35 तक का अभिभाषण दो विषयों पर आधारित है। पहले भाग में नबी (सल्ल॰) की पत्नियों को जो उस तंगी और निर्धनता के समय में अधीर हो रही थीं, अल्लाह ने नोटिस दिया है कि संसार और उसकी सजावट और अल्लाह और रसूल और परलोक में से किसी एक को चुन लो। दूसरे भाग में सामाजिक सुधार (के पहले क़दम के रूप में) आपकी धर्म-पत्नियों को आदेश दिया गया है कि अज्ञानकाल की सज-धज से बचें, प्रतिष्ठापूर्वक अपने घरों में बैठें और अन्य पुरुषों के साथ बात चीत करने में बहुत सतर्कता से काम लें। ये परदे के आदेशों का आरम्भ था।

4) आयत 36 से 48 तक का विषय हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) के साथ नबी (सल्ल॰) के विवाह से सम्बन्ध रखता है। इसमें उन सभी आक्षेपों का उत्तर दिया गया है, जो विरोधियों की ओर से किए जा रहे थे।

5) आयत 49 में तलाक़ के क़ानून की एक धारा वर्णित हुई है। यह एक अकेली आयत है जो सम्भवतः इन्हीं घटनाओं के सिलसिले में किसी अवसर पर अवतरित हुई थी।

6) आयत 50 से 52 तक में नबी (सल्ल॰) के लिए विवाह का विशिष्ट विधान प्रस्तुत किया गया है।

7) आयत 53 से 55 तक में सामाजिक सुधार का दूसरा क़दम उठाया गया है। यह निम्नलिखित आदेशों पर आधारित है : नबी (सल्ल॰) के घरों में पराए पुरुषों के आने-जाने पर प्रतिबंध, मिलने-जुलने और भोज-निमंत्रण का नियम, नबी (सल्ल॰) की पत्नियों के विषय में यह आदेश कि वे मुसलमानों के लिए माँ की तरह हराम हैं।

8) आयत 56 और 57 में उन निराधार कानाफूसियों पर सख़्त चेतावनी दी गई है जो नबी (सल्ल॰) के विवाह और पारिवारिक जीवन के सम्बन्ध में की जा रही थीं।

9) आयत 59 में सामाजिक सुदार का तीसरा क़दम उठाया गया है। इसमें समस्त मुस्लिम स्त्रियों को यह आदेश दिया गया है कि जब घरों से बाहर निकलें तो चादरों से

अपने आपको ढाँक कर और घूँघट काढ़कर निकलें—इसके पश्चात् सूरा के अन्त तक अफ़वाह उड़ाने के उस अभियान (Whispering Campaign) पर बड़ी भर्त्सना की गई है, जो मुनाफ़िकों और मूर्खों और नीच प्रकृति के लोगों ने उस समय छेड़ रखा था।



33. सूरा अल-अहज़ाब

(मक्का में उतरी–आयतें 73)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ नबी, अल्लाह से डरो और इनकार करनेवालों और मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) का कहना न मानो, वास्तव में सब कुछ जाननेवाला और तत्त्वदर्शी तो अल्लाह ही है। (2) अनुसरण करो उस बात का जिसका इशारा तुम्हारे रब की ओर से तुम्हें किया जा रहा है, अल्लाह हर उस बात की ख़बर रखता है जो तुम लोग करते हो। (3) अल्लाह पर भरोसा करो, अल्लाह ही वकील होने के लिए काफ़ी है।

(4) अल्लाह ने किसी व्यक्ति के धड़ में दो दिल नहीं रखे, न उसने तुम लोगों की उन पत्नियों को जिनसे तुम 'ज़िहार'[1] करते हो तुम्हारी माँ बना दिया है, और न उसने तुम्हारे मुँहबोले बेटों को तुम्हारा वास्तविक बेटा बनाया है। ये तो वे बातें हैं जो तुम लोग अपने मुँह से निकाल देते हो, मगर अल्लाह वह बात कहता है जो तथ्य पर आधारित है और वही सही तरीक़े की तरफ़ राह दिखाता है। (5) मुँहबोले बेटों को उनके बापों के सम्बन्ध से पुकारो, यह अल्लाह की दृष्टि में ज़्यादा न्यायसंगत बात है। और अगर तुम्हें मालून न हो कि उनके बाप कौन हैं तो वे धर्म के नाते से तुम्हारे भाई और साथी हैं। अनजाने में जो बात तुम कहो उसके लिए तुम्हारी कोई पकड़ नहीं है, लेकिन उस बात पर ज़रूर पकड़ है जिसका तुम दिल से इरादा करो। अल्लाह माफ़ करनेवाला और दयावान् है।

(6) निस्सन्देह नबी को तो ईमानवालों के लिए उनके अपने ख़ुद की अपेक्षा प्राथमिकता प्राप्त है, और नबी की पत्नियाँ उनकी माएँ हैं, मगर अल्लाह की किताब के अनुसार सामान्य ईमानवालों और 'हिजरत' करनेवालों की अपेक्षा नातेदार एक-दूसरे के ज़्यादा हक़दार हैं, अलबत्ता अपने साथियों के साथ तुम कोई भलाई (करना चाहो तो) कर सकते हो। यह आदेश अल्लाह की किताब में लिखा हुआ है।

(7) और (ऐ नबी) याद रखो उस प्रतिज्ञा को जो हमने सब पैग़म्बरों से ली है, तुमसे भी और नूह और इबराहीम और मूसा और मरयम के बेटे ईसा से भी। सबसे हम दृढ वचन[2] ले चुके हैं। (8) ताकि सच्चे लोगों से (उनका रब) उनकी सच्चाई के बारे में सवाल करे, और इनकार करनेवालों के लिए तो उसने दर्दनाक अज़ाब जुटा ही रखा है।

1. 'ज़िहार' से मुराद है पत्नी को माँ की उपमा देना।

(9) ऐ लोगो[3] जो ईमान लाए हो, याद करो अल्लाह के उपकार को जो (अभी-अभी) उसने तुमपर किया है। (10,11) जब सेनाएँ तुमपर चढ़ आई तो हमने उनपर एक प्रचण्ड आँधी भेज दी और ऐसी सेनाएँ भेजी जो तुमको दिखाई न देती थीं।[4] अल्लाह वह सब कुछ देख रहा था जो तुम लोग उस समय कर रहे थे। जब दुश्मन ऊपर से और नीचे से तुमपर चढ़ आए, जब डर के कारण आँखें पथरा गई, कलेजे मुँह को आ गए, और तुम लोग अल्लाह के बारे में तरह-तरह के गुमान करने लगे, उस समय ईमान लानेवाले ख़ूब आज़माए गए और बुरी तरह हिलाकर रख दिए गए।

(12) याद करो वह समय जब 'मुनाफ़िक़' (कपटाचारी) और वे सब लोग जिनके दिलों में रोग था स्पष्ट रूप से कह रहे थे कि अल्लाह और उसके रसूल ने जो वादे हमसे किए थे वे धोखे के सिवा कुछ न थे। (13) जब उनमें से एक गिरोह ने कहा कि ''ऐ यसरिब के लोगो, तुम्हारे लिए अब ठहरने का कोई मौक़ा नहीं है, पलट चलो।'' जब उनके कुछ लोग यह कहकर नबी से रुख़सत माँग रहे थे ''हमारे घर ख़तरे में हैं।'' हालाँकि वे ख़तरे में न थे, वास्तव में वे (युद्ध के मोर्चे से) भागना चाहते थे। (14) अगर शहर के किनारों से दुश्मन घुस आए होते और उस समय इन्हें उपद्रव के लिए निमंत्रण दिया जाता तो ये उसमें जा पड़ते और मुश्किल ही से इन्हें उपद्रव में सम्मिलित होने में कोई संकोच होता। (15) इन लोगों ने इससे पहले अल्लाह को वचन दिया कि ये पीठ न फेरेंगे, और अल्लाह को दिए गए वचन की पूछगछ तो होनी ही थी।

2. इस आयत में अल्लाह तआला नबी (सल्ल॰) को यह बात याद दिलाता है कि सारे नबियों की तरह आपसे भी अल्लाह एक दृढ प्रतिज्ञा ले चुका है जिसकी आपको दृढतापूर्वक पाबन्दी करनी चाहिए। ऊपर से जो वार्ता का सिलसिला चला आ रहा है उसपर विचार करने से साफ़ मालूम हो जाता है कि इससे मुराद यह प्रतिज्ञा है कि पैग़म्बर अल्लाह तआला के प्रत्येक आदेश का स्वयं पालन करेगा और दूसरों से कराएगा, अल्लाह की बातों को बिना किसी कमी के पहुँचाएगा और उन्हें व्यावहारिक रूप से लागू करने के प्रयास में कोई कोताही न दिखाएगा। क़ुरआन मजीद में इस प्रतिज्ञा का उल्लेख विभिन्न स्थानों पर किया गया है। उदाहरणार्थ, सूरा 2 (अल-बक़रा) आयत 83, सूरा 3 (आले इमरान) आयत 187, सूरा 5 (अल-माइदा) आयत 7, सूरा 7 (अल-आराफ़) आयतें 169-171, सूरा 42 (अश-शूरा) आयत 13।
3. यहाँ से आयत 27 तक अहज़ाब और बनी क़ुरैज़ा के युद्ध का उल्लेख किया गया है।
4. अर्थात् फ़रिश्तों की सेनाएँ।

(16) ऐ नबी, इनसे कहो, अगर तुम मौत या क़त्ल से भागो तो यह भागना तुम्हारे लिए कुछ भी लाभदायक न होगा। इसके बाद ज़िन्दगी के मज़े लूटने का थोड़ा ही अवसर तुम्हें मिल सकेगा। (17) इनसे कहो, कौन है जो तुम्हें अल्लाह से बचा सकता हो अगर वह तुम्हें नुक़सान पहुँचाना चाहे? और कौन उसकी दयालुता को रोक सकता है अगर वह तुमपर दया करनी चाहे? अल्लाह के मुक़ाबले में तो ये लोग कोई समर्थक और सहायक नहीं पा सकते हैं।

(18) अल्लाह तुममें से उन लोगों को ख़ूब जानता है जो (युद्ध के कार्य में) रुकावटें डालनेवाले हैं, जो अपने भाइयों से कहते हैं कि "आओ हमारी ओर।" जो लड़ाई में हिस्सा लेते भी हैं तो बस नाम गिनाने को, (19) जो तुम्हारा साथ देने में बड़े ही कंजूस हैं। ख़तरे का समय आ जाए तो इस तरह दीदे फिरा-फिराकर तुम्हारी ओर देखते हैं जैसे किसी मरनेवाले पर बेहोशी छा रही हो, मगर जब ख़तरा गुज़र जाता है तो यही लोग लाभों के लोभी बनकर क़ैंची की तरह चलती हुई ज़बानें लिए तुम्हारे स्वागत को आ जाते हैं। ये लोग हरगिज़ ईमान नहीं लाए, इसी लिए अल्लाह ने इनके सारे कर्म नष्ट कर दिए। और ऐसा करना अल्लाह के लिए बहुत आसान है। (20) ये समझ रहे हैं कि आक्रमणकारी गिरोह अभी गए नहीं हैं। और अगर वे फिर आक्रमण कर दें तो इनका जी चाहता है कि उस अवसर पर कहीं उजाड़ मैदान (सहरा) में बद्दुओं के बीच जा बैठें और वहीं से तुम्हारे समाचार पूछते रहें। इसपर भी अगर ये तुम्हारे बीच रहे भी तो लड़ाई में कम ही हिस्सा लेंगे।

(21) वास्तव में तुम लोगों के लिए अल्लाह के रसूल में एक उत्तम आदर्श था,[5] प्रत्येक उस व्यक्ति के लिए जो अल्लाह और अन्तिम दिन की आशा रखता हो और अल्लाह को ज़्यादा याद करे। (22) और सच्चे ईमानवालों (का हाल उस समय यह था कि) जब उन्होंने आक्रमणकारी सेनाओं को देखा तो पुकार उठे कि "यह वही चीज़ है जिसका अल्लाह और उसके रसूल ने हमसे वादा किया था, अल्लाह और उसके रसूल की बात बिलकुल सच्ची थी।" इस घटना ने उनके ईमान और उनके समर्पण को और ज़्यादा बढ़ा दिया। (23) ईमान लानवालों में से ऐसे लोग मौजूद हैं जिन्होंने अल्लाह से की हुई प्रतिज्ञा को सच्चा कर दिखाया है। उनमें से कोई अपनी नज्र (मन्नत) पूरी कर चुका और कोई समय आने के इनतिज़ार में है। उन्होंने अपनी व्यवाहर-नीति में कोई परिवर्तन नहीं किया। (24) (यह सब कुछ इसलिए हुआ) ताकि अलह सच्चों को

5. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि 'उत्तम आदर्श है।'

उनकी सच्चाई का बदला दे और 'मुनाफ़िक़ों' (कपटाचारियों) को चाहे तो सज़ा दे और चाहे तो उनकी तौबा क़बूल कर ले, बेशक अल्लाह बड़ा ही क्षमाशील और दयावान् है।

(25) अल्लाह ने इनकार करनेवालों का मुँह फेर दिया, वे कोई लाभ प्राप्त किए बिना अपने दिल की जलन लिए यूँ ही पलट गए, और ईमानवालों की ओर से अल्लाह ही लड़ने के लिए काफ़ी हो गया, अल्लाह बड़ी शक्तिवाला और प्रभुत्वशाली है। (26) फिर किताबवालों में से जिन लोगों ने इन आक्रमणकारियों का साथ दिया था,[6] अल्लाह उनकी गढ़ियों से उन्हें उतार लाया और उनके दिलों में उसने ऐसा रोब डाल दिया कि आज उनमें से एक गिरोह को तुम क़त्ल कर रहे हो और दूसरे गिरोह को बन्दी बना रहे हो। (27) उसने तुमको उनकी ज़मीन और उनके घरों और उनके मालों का उत्तराधिकारी बना दिया और वह भू-भाग तुम्हें दिया जिसे तुमने कभी पद-दलित न किया था। अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(28) ऐ नबी, अपनी पत्नियों से कहो, अगर तुम दुनिया और उसकी शोभा चाहती हो तो आओ, मैं तुम्हें कुछ दे-दिलाकर भले तरीक़े से विदा कर दूँ।[7] (29) और अगर तुम अल्लाह और उसके रसूल और परलोक (आख़िरत) के घर के इच्छुक हो तो जान लो कि तुममें से जो उत्तमकार हैं अल्लाह ने उनके लिए बड़ा बदला तैयार कर रखा है।

(30) नबी की पत्नियों, तुममें से जो कोई प्रत्यक्ष अश्लील कर्म करेगी उसे दोहरा अज़ाब दिया जाएगा,[8] अल्लाह के लिए यह बहुत आसान काम है। (31) और तुममें जो अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करेगी और अच्छा कर्म करेगी उसको हम दोहरा बदला देंगे और हमने उसके लिए प्रचुर एवं प्रतिष्ठित आजीविका तैयार कर रखी है।

(32) नबी की पत्नियों, तुम साधारण औरतों की तरह नहीं हो। अगर तुम

6. अर्थात् बनी क़ुरैज़ा के यहूदी।
7. यह आयत उस समय उतरी जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के यहाँ फ़ाक़ों पर फ़ाक़े हो रहे थे और आपकी पत्नियाँ बहुत परेशान थीं।
8. इसका अर्थ यह नहीं कि नबी (सल्ल॰) की पाक पत्नियों से (अल्लाह की पनाह) किसी अश्लील कर्म का संदेश या ख़तरा था। बल्कि उनको यह एहसास दिलाना अभीष्ट था कि तुम सारी उम्मत की माएँ हो, इसलिए अपने प्रतिष्ठित स्थान से गिरा हुआ कोई काम न करना।

अल्लाह से डरनेवाली हो तो दबी ज़बान से बात न किया करो कि दिल की ख़राबी में ग्रस्त कोई व्यक्ति लालच में पड़ जाए, बल्कि साफ़-सीधी बात करो। (33) अपने घरों में टिककर रहो और विगत अज्ञान-काल की-सी सज-धज न दिखाती फिरो। नमाज़ क़ायम करो, ज़कात दो और अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करो। अल्लाह तो यह चाहता है कि तुम नबी के घरवालों से गन्दगी को दूर करे और तुम्हें पूर्ण रूप से पाक कर दे। (34) याद रखो अल्लाह की आयतों और तत्त्वदर्शिता की उन बातों को जो तुम्हारे घरों में सुनाई जाती हैं। निस्संदेह अल्लाह सूक्ष्मदर्शी[9] और ख़बर रखनेवाला है।

(35) निश्चय ही जो मर्द और जो औरतें मुसलिम हैं, मोमिन हैं, आज्ञाकारी हैं, सत्यवादी हैं, धैर्यवान हैं, अल्लाह के आगे झुकनेवाले हैं, सदक़ा (दान) देनेवाले हैं, रोज़े (व्रत) रखनेवाले हैं, अपनी शर्मगाहों (गुप्तांगों) की रक्षा करनेवाले हैं, और अल्लाह को ज़्यादा याद करनेवाले हैं, अल्लाह ने उनके लिए क्षमादान और बड़ा बदला तैयार रखा है।

(36) किसी ईमानवाले मर्द औरकिसी ईमानवाली औरत को यह हक़ नहीं है कि जब अल्लाह और उसका रसूल किसी मामले का फ़ैसला कर दे तो फिर उसे अपने उस मामले में ख़ुद फ़ैसला करने का अधिकार बाक़ी रहे। और जो कोई अल्लाह और उसके रसूल की नाफ़रमानी करे तो वह स्पष्ट पथभ्रष्टता में पड़ गया।

(37) ऐ नबी, याद करो वह अवसर जब तुम उस व्यक्ति से कह रहे थे जिसपर अल्लाह ने और तुमने उपकार किया था कि "अपनी पत्नी को न छोड़ और अल्लाह से डर।"[10] उस समय तुम अपने दिल में यह बात छिपाए हुए थे जिसे अल्लाह खोलना चाहता था, तुम लोगों से डर रहे थे, हालाँकि अल्लाह इसका ज़्यादा हक़ रखता है कि तुम उससे डरो।[11] फिर जब ज़ैद उससे अपनी ज़रूरत पुरी कर चुका[12] तो हमने उस (तलाक़ पाई हुई औरत) का तुमसे निकाह कर दिया ताकि ईमानवालों पर अपने

9. अर्थात् छिपी से छिपी बात तक को जाननेवाला।
10. उस व्यक्ति से मुराद है हज़रत ज़ैद बिन हारिसा (रजि॰) जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के आज़ाद किए हुए गुलाम और आपके मुँहबोले बेटे थे। और उनकी पत्नी से मुराद है हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) जो नबी (सल्ल॰) की फ़ूफ़ीज़ाद बहन थी और आपने उनका विवाह हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) से कर दिया था। मगर दोनों का निबाह नहीं हो रहा था और हज़रत ज़ैद (रज़ि॰) उनको तलाक़ देने पर आमादा हो रहे थे।

मुँहबोले बेटों की पत्नियों के मामले में कोई तंगी न रहे जबकि वे उनसे अपनी ज़रूरत पूरी कर चुके हों। और अल्लाह का आदेश तो कार्यान्वित होना ही चाहिए था। (38) नबी पर किसी ऐसे काम में कोई रुकावट नहीं है जो अल्लाह ने उसके लिए नियत कर दिया हो। यही अल्लाह का दस्तूर (सुन्नत) उन सब नबियों के मामले में रहा है जो पहले गुज़र चुके हैं और अल्लाह का आदेश एक अकाट्य निश्चित फ़ैसला होता है। (39) (यह अल्लाह का दस्तूर है उन लोगों के लिए) जो अल्लाह के सन्देश पहुँचाते हैं और उसी से डरते हैं और एक अल्लाह के सिवा किसी से नहीं डरते और हिसाब लेने के लिए बस अल्लाह ही काफ़ी है।

(40) (लोगो) मुहम्मद तुम्हारे मर्दों में से किसी के बाप नहीं हैं, मगर वे अल्लाह के रसूल और नबियों के समापक (आख़री नबी) हैं, और अल्लाह हर चीज़ का ज्ञान रखनेवाला है।[13]

(41) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह को ज़्यादा याद करो (42) और सुबह और शाम उसकी तसबीह करते रहो। (43) वही है जो तुमपर दयालुता दर्शाता है और उसके फ़रिश्ते तुम्हारे लिए दयालुता की दुआ करते हैं ताकि वह तुम्हें अँधेरों से रौशनी में निकाल लाए, वह ईमानवालों के लिए बड़ा दयावान् है। (44) जिस दिन वे उससे मिलेंगे, उसका स्वागत सलाम से होगा और उनके लिए अल्लाह ने बड़ा प्रतिष्ठित बदला तैयार कर रखा है।

(45) ऐ नबी, हमने तुम्हें भेजा है गवाह बनाकर, ख़ुशख़बरी देनेवाला, और डरानेवाला बनाकर, (46) अल्लाह की अनुमति से उसकी ओर निमंत्रण देनेवाला बनाकर और प्रकाशमान प्रदीप बनाकर। (47) ख़ुशख़बरी दे दो उन लोगों को जो (तुमपर) ईमान लाए हैं कि उनके लिए अल्लाह की ओर से बड़ा अनुग्रह है। (48)

11. अर्थात् अल्लाह की मरज़ी यह थी कि जब हज़रत ज़ैद (रजि॰) हज़रत ज़ैनब (रज़ि॰) को तलाक़ दे दें तो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ख़ुद उनसे विवाह करके अरब की उस प्राचीन रीति को तोड़ दें जिसके अनुसार मुँह बोले बेटे को वास्तविक बेटा समझा जाता था। लेकिन नबी (सल्ल॰) इसआशंका से कि इसपर अरबवाले कड़ी आलोचनाएँ करने लगेंगे इस आज़माइश में पड़ने से बचना चाहते थे, इसी लिए आपने कोशिश की कि ज़ैद (रज़ि॰) अपनी पत्नी को तलाक़ न दें।
12. अर्थात् तलाक़ देने की इच्छा जो उन्हें थी उसे उन्होंने पूरा कर दिया और अपनी तलाक़ पाई हुई पत्नी से उनका कोई नाता बाक़ी न रहा।

और हरगिज़ न दबो इनकार करनेवालों और कपटाचारियों से, कोई परवाह न करो उनके दुख पहुँचाने की[14] और भरोसा कर लो अल्लाह पर, अल्लाह ही इसके लिए काफ़ी है कि आदमी अपने मामले उसे सौंप दे।

(49) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब तुम मोमिन औरतों से निकाह करो और फिर उन्हें हाथ लगाने से पहले तलाक़ दे दो तो तुम्हारी ओर से उनपर कोई इद्दत अनिवार्य नहीं जिसके पूरे होने की तुम माँग कर सको। अतः उन्हें कुछ माल दो और भले तरीक़े से विदा कर दो।

(50) ऐ नबी, हमने तुम्हारे लिए हलाल कर दी तुम्हारी वे पत्नियाँ जिनके 'मह्र' तुमने अदा किए हैं,[15] और वे औरतें जो अल्लाह की प्रदान की हुई दासियों में से तुम्हारी मिलकियत में आएँ, और तुम्हारी वे चचाज़ाद और फूफीज़ाद और मामूज़ाद और ख़ालाज़ाद बहनें जिन्होंने तुम्हारे साथ 'हिजरत' की है, और वह ईमानवाली औरत

13. इस एक वाक्य में उन सभी आक्षेपों की जड़ काट दी गई है जो विरोधी नबी (सल्ल॰) के इस निकाह पर कर रहे थे। उनका प्रथम आक्षेप यह था कि आपने अपनी बहू से निकाह किया है। इसके जवाब में कहा गया है कि "मुहम्मद तुम्हारे मर्दों में से किसी के बाप नहीं हैं।" अर्थात् वह बेटा था कब कि उसकी छोड़ी हुई पत्नी से निकाह करना हराम होता? दूसरा आक्षेप यह था कि अगर मुँहबोला बेटा वास्तविक बेटा नहीं है तब भी उसकी छोड़ी हुई औरत से निकाह कर लेना कुछ ज़रूरी तो न था। इसके जवाब में कहा गया "मगर वे अल्लाह के रसूल हैं", अर्थात् रसूल होने की हैसियत से उनके लिए यह अनिवार्य था कि जिस हलाल चीज़ को तुम्हारी प्रथाओं ने अकारण हराम कर रखा है उसके बारे में सभी पक्षपातों को समाप्त कर दें और उसकी वैधता के विषय में किसी सन्देह की गुंजाइश बाक़ी न रहने दें। फिर अतिरिक्त ताकीद के लिए कहा, "और वे नबियों के समापक हैं", अर्थात् उनके बाद कोई रसूल तो अलग रहा कोई नबी तक आनेवाला नहीं है कि अगर क़ानून और समाज का कोई सुधार उनके समय में व्यवहार में आने से रह जाए तो बाद का आनेवाला नबी यह कमी पूरी कर दे, अतः यह और भी ज़रूरी हो गया था कि अज्ञानता की इस प्रथा का अन्त वे ख़ुद ही करके जाएँ। इसके बाद और ज़्यादा ज़ोर देते हुए कहा गया कि "अल्लाह हर चीज़ का ज्ञान रखनेवाला है।" अर्थात् अल्लाह को मालूम है कि इस समय मुहम्मद (सल्ल॰) के हाथों इस अज्ञानता की प्रथा को समाप्त करा देना क्यों ज़रूरी था और ऐसा न करने में क्या ख़राबी थी।

14. अर्थात् उन आलोचनाओं की जो ये लोग इस निकाह पर कर रहे हैं।

जिसने अपने आपको नबी के लिए हिबा किया हो अगर नबी उसे निकाह में लेना चाहे।[16] यह छूट सिर्फ़ तुम्हारे लिए है, दूसरे ईमानवालों के लिए नहीं है। हमको मालूम है कि सामान्य ईमानवालों के लिए उनकी पत्नियों और दासियों के बारे में हमने क्या सीमाएँ निर्धारित की हैं। (तुम्हें उन सीमाओं से हमने इसलिए मुक्त किया है) ताकि तुम्हारे ऊपर कोई तंगी न रहे, और अल्लाह अत्यन्त क्षमाशील और दयावान् है। (51) तुमको अधिकार दिया जाता है कि अपनी पत्नियों में से जिसे चाहो अपने से अलग रखो, जिसे चाहो अपने साथ रखो और जिसे चाहो अलग रखने के बाद अपने पास बुला लो। इस मामले में तुमपर कोई दोष नहीं है। इस तर ज़्यादा उम्मीद है कि उनकी आँखें ठण्डी रहेंगी और वे शोकाकुल न होंगी, और जो कुछ भी तुम उनको दोगे उसपर वे सब राज़ी रहेंगी। अल्लाह जानता है जो कुछ तुम लोगों के दिलों में है, और अल्लाह सर्वज्ञ और सहनशील है। (52) इसके बाद तुम्हारे लिए दूसरी औरतें हलाल नहीं है, और न इसकी इजाज़त है कि इनकी जगह और पतिन्याँ ले आओ चाहे उनकी सुन्दरता तुम्हें कितनी ही पसन्द हो,[17] अलबत्ता दासियों की तुम्हें अनुमति है।[18] अल्लाह हर चीज़ पर निगाह रखता है।

(53) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, नबी के घरों में बिना अनुमति के न चले आया

15. यह वास्तव में जवाब है उन लोगों के आक्षेप का जो कहते थे कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) दूसरे लोगों के लिए तो एक समय में चार से ज़्यादा पत्नियाँ रखना वर्जित ठहरा देते हैं, मगर ख़ुद उन्होंने ये पाँचवी पत्नी कैसे कर ली? विदित रहे कि उस समय नबी (सल्ल॰) के घर में चार पत्नियाँ, हज़रत आइशा (रज़ि॰), हज़रत सौदा (रज़ि॰), हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) और हज़रत उम्मे सलमा (रज़ि॰) पहले से मौजूद थीं।

16. अर्थात् इन पाँच पत्नियों के अलावा और भी उन विभिन्न प्रकार की महिलाओं से विवाह करने की नबी (सल्ल॰) को अनुमति प्रदान की गई जिनका इस आयत में उल्लेख है।

17. इस कथन के दो अर्थ हैं। एक यह कि जो औरतें ऊपर आयत नं॰ 50 में नबी (सल्ल॰) के लिए हलाल निर्धारित की गई है उनके सिवा दूसरी कोई औरत अब आपके लिए हलाल नहीं है। दूसरा यह कि जब आपकी पाक पत्नियाँ इस बात के लिए राज़ी हो गई हैं कि तंगी और कठिनाई में आपका साथ दें और परलोक (आख़िरत) के लिए दुनिया को तज दें, और इसपर भी प्रसन्न हैं कि आप (सल्ल॰) जो व्यवहार भी उनके साथ चाहे करें, तो अब आपके लिए यह हलाल नहीं है कि उनमें से किसी को तलाक़ देकर उसकी जगह कोई और पत्नी ले आएँ।

करो। न खाने का समय ताकते रहो। हाँ, अगर तुम्हें खाने पर बुलाया जाए तो ज़रूर आओ। मगर जब ख़ाना खा लो तो तितर-बितर हो जाओ, बातें करने में न लगे रहो। तुम्हारी ये हरकतें नबी को तकलीफ़ देती हैं, मगर वे लज्जावश कुछ नहीं कहते। और अल्लाह हक़ बात कहने में लज्जा नहीं करता। नबी की पत्नियों से अगर तुम्हें कुछ मांगना हो तो परदे के पीछे से माँगा करो, यह तुम्हारे और उनके दिलों की पवित्रता के लिए ज़्यादा उचित तरीक़ा है। तुम्हारे लिए यह हरगिज़ जाइज़ नहीं कि अल्लाह के रसूल को तकलीफ़ दो, और न यह जाइज़ है कि उनके बाद उनकी पत्नियों से निकाह करो, यह अल्लाह की दृष्टि में बहुत बड़ा गुनाह है। (54) तुम चाहे कोई बात व्यक्त करो या छिपाओ, अल्लाह को हर बात का ज्ञान है।

(55) नबी की पत्नियों के लिए इसमें कोई दोष नहीं है कि उनके बाप, उनके बेटे, उनके भाई, उनके भतीजे, उनके भानजे, उनके मेलजोल की स्त्रियाँ और उनके अधिकृत (दास) घरों में आएँ। (ऐ औरतो) तुम्हें अल्लाह की नाफ़रमानी से बचना चाहिए। अल्लाह हर चीज़ पर निगाह रखता है।

(56) अल्लाह और उसके फ़रिश्ते नबी पर 'दुरुद' भेजते हैं। ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम भी उनपर दुरुद और सलाम भेजो।[19]

(57) जो लोग अल्लाह और उसके रसूल को तकलीफ़ देते हैं उनपर दुनिया और आख़िरत में अल्लाह ने लानत की है और उनके लिए अपमानजनक अज़ाब तैयार

18. यह आयत इस बात को स्पष्ट कर रही है कि उन पत्नियों के अलावा जिनसे विवाह किया है अधिकृत स्त्रियों (दासियों) से भी संभोग की अनुमति है और उनके लिए संख्या का कोई प्रतिबन्ध नहीं है। इसी विषय का स्पष्टीकरण सूरा 4 (निसा) आयत 3, सूरा 23 (मोमिनून) आयत 6 और सूरा 70 (मआरिज) आयत 30 में भी किया गया है।
19. अल्लाह की ओर से अपने नबी पर 'सलात' (दुरूद) का मतलब यह है कि वह आपपर अत्यन्त दयावान् है, आपकी प्रशंसा करता है, आपके काम में बरकत देता है, आपका नाम ऊँचा करता है और आपपर अपनी दयालुताओं की वर्षा करता है। फ़रिश्तों की ओर से आप (सल्ल०) पर 'सलात' का अर्थ यह है कि वे आपसे अत्यधिक प्रेम रखते हैं और आपके लिए अल्लाह से दुआ करते हैं कि वह आपको ज़्यादा से ज़्यादा उच्च पद प्रदान करे। ईमानवालों की ओर से आपपर 'सलात' का अर्थ यह है कि वे भी आपके हक़ में अल्लाह से दुआ करें कि वह आपपर अपनी रहमतें उतारे।

कर दिया है। (58) और जो लोग ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों को बिना अपराध के दुख पहुँचाते हैं, उन्होंने एक बड़े लाँछन और प्रत्यक्ष पाप का वबाल अपने सिर ले लिया है।

(59) ऐ नबी, अपनी पत्नियों और बेटियों और ईमानवालों की औरतों से कह दो कि अपने ऊपर अपनी चादरों के पल्लू लटका लिया करें।[20] यह ज़्यादा उचित तरिक़ा है ताकि वे पहचान ली जाएँ और न सताई जाएँ।[21] अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दयावान् है।

(60) अगर मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) और वे लोग जिनके दिलों में ख़राबी है, और वे जो मदीना में उत्तेजनाजनक अफ़वाहें फैलानेवाले हैं, अपनी करतूतों से बाज़ न आए तो हम उनके विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए तुम्हें उठा खड़ा करेंगे, फिर वे इस शहर में मुश्किल ही से तुम्हारे साथ रह सकेंगे। (61) उनपर हर ओर से लानत की बौछार होगी, जहाँ कहीं पाए जाएँगे, पकड़े जाएँगे और बुरी तरह मारे जाएँगे। (62) यह अल्लाह की रीति है जो ऐसे लोगों के मामले में पहले से चली आर रही है, और तुम अल्लाह की रीति में कोई परिवर्तन न पाओगे।

(63) लोग तुमसे पूछते हैं कि क़ियामत की घड़ी कब आएगी। कहो, उसका ज्ञान तो अल्लाह ही को है। तुम्हें क्या ख़बर, शायद कि वह क़रीब ही आ लगी हो। (64,65) बहरहाल यह बात निश्चित है कि अल्लाह ने इनकार करनेवालों पर लानत की है और उनके लिए भड़कती हुई आग तैयार कर दी है जिसमें वे सदा रहेंगे, कोई समर्थक और सहायक न पा सकेंगे। (66) जिस दिन उनके चेहरे आग पर उलट-पुलट किए जाएँगे उस समय वे कहेंगे कि "काश! हमने अल्लाह और रसूल की आज्ञा का पालन किया होता। (67) और कहेंगे, "ऐ हमारे रब, हमने अपने सरदारों और अपने बड़ों की आज्ञा का पालन किया और उन्होंने हमें सन्मार्ग से भटका दिया। (68) ऐ रब, उनको दोहरा अज़ाब दे और उनपर बड़ी लानत कर।"

20. अर्थात् चादर ओढ़कर ऊपर से घूँघट डाल लिया करें। दूसरे शब्दों में मुँह खोले न फिरें।
21. 'पहचान ली जाएँ' से मुराद यह है कि उनको इस सादा और लज्जानुकूल वस्त्र में देखकर हर देखनेवाला जान ले कि वे शरीफ़ और पवित्र औरतें हैं, आवारा और खिलाड़ी नहीं हैं कि कोई दुष्चरित्र इनसान उनसे अपनी मनोकामना पूरी करने की उम्मीद कर सके। 'न सताई जाएँ' से मुराद यह है कि उनको न छेड़ा जाए, उनके लिए कोई बाधा न उत्पन्न की जाए।

(69) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, उन लोगों की तरह न बन जाओ जिन्होंने मूसा को दुख पहुँचाए थे, फिर अल्लाह ने उनकी बनाई हुई बातों से उसे मुक्त किया और वह अल्लाह की दृष्टि में प्रतिष्ठावान था। (70) ऐ ईमान लानेवालो, अल्लाह से डरो और ठीक बात किया करो। (71) अल्लाह तुम्हारे कर्मों को सुधार देगा और तुम्हारे गुनाहों को माफ़ कर देगा। जो व्यक्ति अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करे उसने बड़ी सफलता प्राप्त की।

(72) हमने इस अमानत[22] को आसमानों और ज़मीन और पहाड़ों के सामने प्रस्तुत किया तो वे उसे उठाने के लिए तैयार न हुए और उससे डर गए, मगर इनसान ने उसे उठा लिया, बेशक वह बड़ा ज़ालिम और जाहिल है।[23] (73) (इस अमानत के बोझ को उठाने का अनिवार्य परिणाम है) ताकि अल्लाह मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) मर्दों और औरतों और अनेकेश्वरवादी मर्दों और औरतों को सज़ा दे और ईमानवाले मर्दों और औरतों की तौबा क़बूल करे, अल्लाह माफ़ करनेवाला और दयावान् है।



22. अमानत से मुराद है उन ज़िम्मेदारियों का भार जो अल्लाह तआला ने अपनी ज़मीन में अधिकार और बुद्धि देकर इनसान पर डाला है।
23. अर्थात् इस अमानत के बोझ का धारक होकर भी अपने दायित्व को महसूस नहीं करता और ख़ियानत करके अपने ऊपर ख़ुद ज़ुल्म करता है।

34. सबा

नाम

आयत 15 के वाक्यांश, ''सबा के लिए उनके अपने निवास-स्थान ही में एक निशानी मौजूद थी'' से उद्धृत है। अभिप्राय यह है कि वह सूरा जिसमें सबा का उल्लेख आया है।

अवतरणकाल

इसके अवतरण का ठीक समय किसी विश्वस्त उल्लेख से मालूम नहीं होता। अलबत्ता वर्णन-शैली से महसूस होता है कि या तो वह मक्का का मध्यकाल है या प्रथम काल। और यदि मध्यकाल है तो संभवतः उसका प्रारम्भिक चरण है, जब कि अत्याचार ने उग्र रूप धारण करना आरम्भ नहीं किया था।

विषय और वार्ता

इस सूरा में काफ़िरों के उन आक्षेपों का उत्तर दिया गया है जो वे नबी (सल्ल०) के एकेश्वरवाद और परलोकवाद की ओर बुलाने पर और स्वयं आपकी पैग़म्बरी पर अधिकतर व्यंग्य एवं उपहास और अश्लील आरोपों के रूप में प्रस्तुत करते थे। उन आक्षेपों का उत्तर कहीं तो उनको उद्धृत करके दिया गया है, और कहीं अभिभाषण से स्वयं यह स्पष्ट हो जाता है कि यह किस आक्षेप का उत्तर है। उत्तर अधिकतर समझाने-बुझाने, याद दिलाने और प्रमाणीकरण के रूप में है, लेकिन कहीं-कहीं काफ़िरों को उनकी हठधर्मी के दुष्परिणामों से डराया भी गया है। इसी सिलसिले में हज़रत दाऊद (अलै०), सुलैमान (अलै०) और सबा जाति के वृत्तान्त इस उद्देश्य से वर्णित किए गए हैं कि तुम्हारे समक्ष इतिहास के ये दोनों उदाहरण मौजूद हैं। इन दोनों उदाहरणों को सामने रखकर स्वयं अभिमत निर्धारित कर लो कि एकेश्वरवाद और परलोकवाद में विश्वास और सुख-सामग्री पर कृतज्ञता के भाव से जो जीवन निर्मित होता है, वह अधिक अच्छा है या वह जीवन जो इनकार और बहुदेववाद और परलोक के इनकार और सांसारिकता के आधार पर निर्मित होता है।



34. सूरा सबा

(मक्का में उतरी–आयतें 54)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) प्रशंसा उस अल्लाह के लिए है जो आसमानों और ज़मीन की हर चीज़ का मालिक है और आख़िरत में भी उसी के लिए प्रशंसा है। वह तत्त्वदर्शी और ख़बर रखनेवाला है। (2) जो कुछ ज़मीन में जाता है और जो कुछ उससे निकलता है और जो कुछ आसमान से उतरता है और जो कुछ उसमें चढ़ता है, हर चीज़ को वह जानता है, वह दयावान् और माफ़ करनेवाला है।

(3) इनकार करनेवाले कहते हैं क्या बात है कि 'क़ियामत' हमपर नहीं आ रही है! कहो, ''क़सम है मेरे परोक्ष के ज्ञाता पालनहार की, वह तुमपर आकर रहेगी। उससे कण बराबर कोई चीज़ न आसमानों में छिपी हुई है न ज़मीन में। न कण से बड़ी और न उससे छोटी। सब कुछ एक स्पष्ट चिट्ठे में अंकित है।'' (4) और यह 'क़ियामत' इसलिए आएगी कि बदला दे अल्लाह उन लोगों को जो ईमान लाए हैं और अच्छे कर्म करते रहे हैं। उनके लिए माफ़ी है और प्रतिष्ठित परिपूर्ण आजीविका। (5) और जिन लोगों ने हमारी आयतों को नीचा दिखाने के लिए ज़ोर लगाया है, उनके लिए बहुत ही बुरे क़िस्म का दर्दनाक अज़ाब है। (6) ऐ नबी, ज्ञानवान ख़ूब जानते हैं कि जो कुछ तुम्हारे रब की ओर से तुमपर उतारा गया है वह सर्वथा सत्य है और प्रभुत्वशाली और प्रशंस्य ईश्वर का मार्ग दिखाता है।

(7) इनकार करनेवाले लोगों से कहते हैं, ''हम बताएँ तुम्हें ऐसा व्यक्ति जो ख़बर देता है कि जब तुम्हारे शरीर का कण-कण तितर-बितर हो चुका होगा उस समय तुम नए सिरे से पैदा कर दिए जाओगे? (8) न मालूम यह व्यक्ति अल्लाह के नाम से झूठ घड़ता है या इसे उन्माद (जुनून) हो गया है।''

नहीं, बल्कि जो लोग आख़िरत को नहीं मानते वे अज़ाब में ग्रस्त होनेवाले हैं और वही बुरी तरह बहके हुए हैं। (9) क्या इन्होंने कभी उस आसमान और ज़मीन को नहीं देखा जो इन्हें आगे और पीछे से घेरे हुए है? हम चाहें तो इन्हें ज़मीन में धँसा दें, या आसमान के कुछ टुकड़े इनपर गिरा दें। वास्तव में इसमें एक निशानी है हर उस बन्दे के लिए जो अल्लाह की ओर रुजू करनेवाला हो।

(10,11) हमने दाऊद को अपने यहाँ से बड़ा उदार दान प्रदान किया था। (हमने आदेश दिया कि) ऐ पहाड़ो, उसके साथ समरूपता स्थापित करो, (और यही

आदेश हमने) पक्षियों को दिया। हमने लोहे को उसके लिए नर्म कर दिया इस आदेश के साथ कि कवचें बना और उनके कुण्डलों को ठीक अन्दाज़े पर रख। (ऐ दाऊद के लोगो,) अच्छा कर्म करो, जो कुछ तुम करते हो उसको मैं देख रहा हूँ।

(12) और सुलैमान के लिए हमने हवा को वशवर्ती कर दिया, सुबह के समय उसका चलना एक महीने के मार्ग तक और शाम के समय उसका चलना एक महीने के मार्ग तक। हमने उसके लिए पिघले हुए ताँबे का स्रोत बहा दिया और ऐसे जिन्न उसके अधीन कर दिये जो अपने रब के आदेश से उसके आगे काम करते थे। उनमें से जो हमारे आदेश की अवहेलना करता उसको हम भड़कती हुई आग का मज़ा चखाते। (13) वे उसके लिए बनाते थे जो कुछ वह चाहता, ऊँचे भवन, चित्र,[1] बड़े-बड़े हौज़ जैसे लगन और अपनी जगह से न हटनेवाली भारी देगें—ऐ दाऊद के लोगो, कर्म करो कृतज्ञता के रूप में,[2] मेरे बन्दों में कम ही कृतज्ञ हैं।

(14) फिर जब सुलैमान पर हमने मौत का फ़ैसला लागू किया तो जिन्नों को उसकी मौत का पता देनेवाली कोई चीज़ उस घुन के सिवा न थी जो उसकी लाठी को खा रहा था। इस तरह जब सुलैमान गिर पड़ा तो जिन्नों पर यह बात खुल गई कि अगर वे ग़ैब (परोक्ष) के जाननेवाले होते तो इस अपमान के अज़ाब में ग्रस्त न रहते।

(15) सबा के लिए उनके अपने निवास-स्थान ही में एक निशानी मौजूद थी, दो बाग़ दाएँ और बाएँ।[3] खाओ अपने पालनहार की रोज़ी और कृतज्ञता दिखाओ उसके प्रति, देश है उत्तम एवं पवित्र, और पालनहार है माफ़ करनेवाला! (16) मगर वे मुँह मोड़ गए। आख़िरकार हमने उनपर बाँध तोड़ सैलाब (बाढ़) भेज दिया और उनके पिछले दो बाग़ों के स्थान पर दो और बाग़ उन्हें दिए जिनमें कडुवे-कसैले फल और झाऊ के पेड़ थे और कुछ थोड़ी-सी बेरियाँ। (17) यह था उनके इनकार का बदला जो हमने उनको दिया, और कृतघ्न इनसान के सिवा ऐसा बदला हम और किसी को नहीं देते।

1. चित्र के लिए ज़रूरी नहीं है कि वह इनसान या जानवर ही का हो। हज़रत सुलैमान मूसा (अलै॰) की शरीअत (धर्मशास्त्र) के अनुयायी थे और हज़रत मूसा (अलै॰) की शरीअत में जीवधारी का चित्र बनाना उसी तरह हराम था जिस तरह अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल॰) की शरीअत में है।
2. अर्थात् कृतज्ञ बन्दों की तरह काम करो।
3. इसका अर्थ यह नहीं है कि पूरे देश में बस दो ही बाग़ थे, बल्कि इससे मुराद यह है कि सबा का संपूर्ण भूखण्ड पुष्पवाटिका और हरित बना हुआ था। आदमी जहाँ भी खड़ा होता उसे अपने दाईं ओर भी बाग़ दिखाई देता और बाईं ओर भी।

(18) और हमने उनके और उन बस्तियों के बीच, जिनको हमने बरकत दी थी, स्पष्ट बस्तियाँ बसा दी थीं और उनमें सफ़र के फ़ासले एक अन्दाज़े पर रख दिए थे।[4] चलो-फिरो इन मार्गों में रात-दिन पूरी निश्चिन्तता के साथ। (19) मगर उन्होंने कहा, ''ऐ हमारे रब, हमारे सफ़र के फ़ासले लम्बे कर दे।''[5] उन्होंने अपने ऊपर आप ज़ुल्म किया। आख़िरकार हमने उन्हें कहानी मात्र (फ़साना) बनाकर रख दिया और उन्हें बिलकुल तितर-बितर कर डाला। यक़ीनन इसमें निशानियाँ हैं हर उस व्यक्ति के लिए जो बड़ा धैर्यवान और कृतज्ञ हो। (20) उनके विषय में इबलीस ने अपना गुमान सही पाया और उन्होंने उसी की पैरवी की, सिवाय एक थोड़े-से गिरोह के जो ईमानवाला था। (21) इबलीस को उनपर कोई प्रभुत्व प्राप्त न था मगर जो कुछ हुआ वह इसलिए हुआ कि हम यह देखना चाहते थे कि कौन आख़िरत का माननेवाला है और कौन उसकी ओर से शक में पड़ा हुआ है। तेरा रब हर चीज़ पर निगरानी करनेवाला है।

(22) (ऐ नबी, इन बहुदेववादियों से) कहो कि ''पुकार देखो अपने उन उपास्यों को जिन्हें तुम अल्लाह के सिवा अपना उपास्य समझे बैठे हो। वे न आसमानों में किसी कण बराबर चीज़ के मालिक हैं न ज़मीन में। वे आसमान और ज़मीन के मालिक होने में साझीदार भी नहीं हैं। उनमें से कोई अल्लाह का मददगार भी नहीं है। (23) और अल्लाह के यहाँ कोई सिफ़ारिश भी किसी के लिए लाभदायक नहीं हो सकती सिवाय उस व्यक्ति के जिसके लिए अल्लाह ने सिफ़ारिश की अनुमति दी हो। यहाँ तक कि जब लोगों के दिलों से घरबाहट दूर होगी तो वे (सिफ़ारिश करनेवालों से) पूछेंगे कि तुम्हारे रब ने क्या जवाब दिया? वे कहेंगे कि ''ठीक जवाब मिला है और वह महान और

4. 'बरकतवाली बस्तियों' से मुराद सीरिया और फ़िलस्तीन का इलाका है। 'स्पष्ट बस्तियों' से मुराद ऐसी बस्तियाँ हैं जो सामान्य राजमार्ग पर स्थित हों, गोशों में छिपी हुई न हों। और सफ़र के फ़ासलों को एक अन्दाज़े पर रखने से मुराद यह है कि यमन से सीरिया तक का पूरा सफ़र निरन्तर आबाद भू-भाग में तय होता था जिसकी हर मंज़िल से दूसरी मंज़िल तक का फ़ासला मालूम और नियत था।
5. ज़रूरी नहीं है कि उन्होंने मुँह ही से यह दुआ की हो। प्रायः आदमी कर्म ऐसा करता है जिससे मालूम होता है कि मानो वह अपने ईश्वर से यह कह रहा है कि यह नेमत जो तूने मुझे दी है मैं इसके योग्य नहीं हूँ। आयत के शब्दों से यह बात स्पष्ट व्यक्त होती है कि वह क़ौम अपनी जनसंख्या की अधिकता को अपने लिए मुसीबत समझ रही थी और यह चाहती थी कि आबादी इतनी घट जाए कि सफ़र की मंज़िलें दूर-दूर हो जाएँ।

उच्चतर है।''

(24) (ऐ नबी), इनसे पूछो, ''कौन तुमको आसमानों और ज़मीन से रोज़ी देता है?'' कहो, ''अल्लाह। अब अनिवार्यतः हममें और तुममें से कोई एक ही सन्मार्ग पर है या खुली पथभ्रष्टता में पड़ा हुआ है।'' (25) इनसे कहो, ''जो अपराध हमने किया हो उसकी कोई पूछ तुमसे न होगी और जो कुछ तुम कर रहे हो उसका कोई जवाब तलब हमसे न किया जाएगा।'' (26), कहो, ''हमारा रब हमको इकट्ठा करेगा, फिर हमारे बीच ठीक-ठीक फ़ैसला कर देगा। वह ऐसा प्रभुत्वशाली हाक़िम है जो सब कुछ जानता है।'' (27) इनसे कहो, ''तनिक मुझे दिखाओ तो सही वे कौन हस्तियाँ हैं जिन्हें तुमने उसके साथ साझी लगा रखा है।'' हरगिज़ नहीं, प्रभुत्वशाली और सर्वज्ञ तो बस वह अल्लाह ही है।

(28) और (ऐ नबी), हमने तुमको सारे ही इनसानों के लिए शुभ-सूचना देनेवाला और सावधान करनेवाला बनाकर भेजा है, मगर ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं।

(29) ये लोग तुमसे कहते हैं कि ''वह (क़ियामत का) वादा कब पूरा होगा अगर तुम सच्चे हो?'' (30) कहो, ''तुम्हारे लिए एक ऐसे दिन का समय नियत है जिसके आने में न एक घड़ी-भर की देर तुम कर सकते हो और न एक घड़ी-भर पहले उसे ला सकते हो।''

(31) ये इनकार करनेवाले कहते हैं कि ''हम हरगिज़ इस क़ुरआन को न मानेंगे और न इससे पहले आई हुई किसी किताब को स्वीकार करेंगे।'' काश! तुम देखते इनका हाल उस समय जब ये ज़ालिम अपने रब के सामने खड़े होंगे! उस समय ये एक-दूसरे पर आरोप लगाएँगे। जो लोग दुनिया में दबाकर रखे गए थे वे बड़े बननेवालों से कहेंगे कि ''अगर तुम न होते तो हम ईमानवाले होते।'' (32) वे बड़े बननेवाले इन दबे हुए लोगों को जवाब देंगे, ''क्या हमने तुम्हें उस मार्गदर्शन से रोका था जो तुम्हारे पास आया था? नहीं, बल्कि तुम ख़ुद अपराधी थे।'' (33) वे दबे हुए लोग उन बड़े बननेवालों से कहेंगे, ''नहीं, बल्कि रात-दिन की मक्कारी थी जब तुम हमसे कहते थे कि हम अल्लाह के साथ इनकार की नीति अपनाएँ और दूसरों को उसका समकक्ष ठहराएँ।'' आख़िरकार जब ये लोग अज़ाब देखेंगे तो अपने दिलों में पछताएँगे और हम इन इनकार करनेवालों के गलों में तौक़ डाल देंगे। क्या लोगों को इसके सिवा और कोई बदला दिया जा सकता है कि जैसे कर्म उनके थे वैसा ही फल वे पाएँ?

(34) कभी ऐसा नहीं हुआ कि हमने किसी बस्ती में एक सावधान करनेवाला भेजा हो और उस बस्ती के खाते-पीते लोगों ने यह न कहा हो कि ''जो सन्देश तुम लेकर

आए हो उसको हम नहीं मानते।'' (35) उन्होंने हमेशा यही कहा कि ''हम तुमसे ज़्यादा माल और औलाद रखते हैं और हम हरगिज़ सज़ा पानेवाले नहीं हैं।'' (36) ऐ नबी, उनसे कहो, ''मेरा रब जिसे चाहता है, कुशादा रोज़ी देता है और जिसे चाहता है नपी-तुली प्रदान करता है, मगर ज़्यादातर लोग इसकी वास्तविकता नहीं जानते।'' (37) यह तुम्हारी दौलत और तुम्हारी औलाद नहीं है जो तुम्हें हमसे क़रीब करती हो, हाँ मगर जो ईमान लाए और अच्छा काम करे। यही लोग हैं जिनके लिए उनके कर्म का दोहरा बदला है, और वे ऊँचे भवनों में इतमीनान के साथ रहेंगे। (38) रहे वे लोग जो हमारी आयतों को नीचा दिखाने के लिए दौड़-धूप करते हैं, तो वे अज़ाब में ग्रस्त होंगे।

(39) ऐ नबी, उनसे कहो, ''मेरा रब अपने बन्दों में से जिसे चाहता है खुली रोज़ी देता है और जिसे चाहता है नपी-तुली देता है। जो कुछ तुम ख़र्च कर देते हो उसकी जगह वही तुमको और देता है, और वह सब रोज़ी देनेवालों से अच्छा रोज़ी देनेवाला है।''

(40) और जिस दिन वह सारे इनसानों को इकट्ठा करेगा फिर फ़रिश्तों से पूछेगा, ''क्या ये लोग तुम्हारी ही बन्दगी किया करते थे?'' (41) तो वे जवाब देंगे कि ''पाक है आपकी सत्ता, हमारा सम्बन्ध तो आपसे है न कि इन लोगों से। वास्तव में ये हमारी नहीं बल्कि जिन्नों की बन्दगी करते थे, इनमें से ज़्यादातर उन्हीं पर ईमान लाए हुए थे।''[6] (42) (उस समय हम कहेंगे कि) आज तुममें से कोई न किसी को फ़ायदा पहुँचा सकता है न नुक़सान। और ज़ालिमों से हम कह देंगे कि अब चखो उस जहन्नम के अज़ाब का मज़ा जिसे तुम झुठलाया करते थे।

(43) इन लोगों को जब हमारी साफ़-साफ़ आयतें सुनाई जाती हैं तो ये कहते हैं कि ''यह व्यक्ति तो बस यह चाहता है कि तुमको उन माबूदों (उपास्यों) से विमुख कर दे जिनकी बन्दगी (उपासना) तुम्हारे बाप-दादा करते आए हैं।'' और कहते हैं कि ''यह (क़ुरआन) महज़ एक झूठ है, घड़ा हुआ।'' इन इनकार करनेवालों के सामने जब सत्य आया तो इन्होंने कह दिया कि ''यह तो स्पष्ट जादू है।'' (44) हालाँकि न हमने इन

6. चूँकि अरब के बहुदेववादी फ़रिश्तों को उपास्य ठहराते थे इसलिए अल्लाह ने बताया है कि क़ियामत के दिन जब फ़रिश्तों से पूछा जाएगा तो वे जवाब देंगे कि वास्तव में ये हमारी नहीं बल्कि हमारा नाम लेकर शैतानों की बन्दगी कर रहे थे, क्योंकि शैतानों ही ने इनको यह रास्ता दिखाया था कि अल्लाह को छोड़कर दूसरों को अपनी ज़रूरत पूरी करनेवाला समझो और उनके आगे भेंट और विनयभाव प्रस्तुत किया करो।

लोगों को पहले कोई किताब दी थी कि ये उसे पढ़ते हों और न तुमसे पहले इनकी ओर कोई चेतावनी देनेवाला भेजा था। (45) इनसे पहले गुज़रे हुए लोग झुठला चुके हैं। जो कुछ हमने उन्हें दिया था उसके दसवें भाग को भी ये नहीं पहुँचे हैं। मगर जब उन्होंने मेरे रसूलों को झुठलाया तो देख लो कि मेरी सज़ा कैसी कठोर थी।

(46) ऐ नबी इनसे कहो कि ''मैं तुम्हें बस एक बात की नसीहत करता हूँ। अल्लाह के लिए तुम अकेले-अकेले और दो-दो मिलकर अपना दिमाग़ लड़ाओ और सोचो, तुम्हारे साथवाले[7] में आख़िर कौन-सी बात है जो जुनून की हो? वह तो एक कठोर अज़ाब के आने से पहले तुमको सावधान करनेवाला है।'' (47) इनसे कहो, ''अगर मैंने तुमसे कोई बदला माँगा है तो वह तुम्हीं को मुबारक रहे। मेरा बदला तो अल्लाह के ज़िम्मे है और वह हर चीज़ पर गवाह है।'' (48) इनसे कहो, ''मेरा रब (मुझपर) सत्य का प्रकाशना करता है और वह सभी छिपे तथ्यों का जाननेवाला है।'' (49) कहो, ''सत्य आ गया और अब असत्य के किए कुछ नहीं हो सकता।'' (50) कहो, ''यदि मैं पथभ्रष्ट हो गया हूँ तो मेरी पथभ्रष्टता का वबाल मुझपर है, और अगर मैं सन्मार्ग पर हूँ तो उस प्रकाशना (वह्य) के कारण हूँ जो मेरा रब मेरे ऊपर अवतरित करता है, वह सब कुछ सुनता है और क़रीब ही है।''

(51) काश! तुम देखो इन्हें उस समय जब ये लोग घबराए हुए फिर रहे होंगे और कहीं बचकर न जा सकेंगे, बल्कि क़रीब ही से पकड़ लिए जाएँगे। (52) उस समय ये कहेंगे कि हम उसपर ईमान ले आए। हालाँकि अब दूर निकली हुई चीज़ कहाँ हाथ आ सकती है। (53) इससे पहले ये इनकार कर चुके थे और बिना ठीक-ठीक खोज के दूर-दूर की कौड़ियाँ लाया करते थे। (54) उस समय जिस चीज़ की ये कामना कर रहे होंगे उससे वंचित कर दिए जाएँगे जिस तरह इनके पहले के सहधर्मी वंचित हो चुके होंगे। ये बड़े पथभ्रष्ट करनेवाले शक में पड़े हुए थे।

● ● ●

7. मुराद है अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) आपके लिए उनके 'साथवाले' का शब्द इसलिए इस्तेमाल किया गया है कि आप उनके लिए अजनबी न थे बल्कि उन्हीं के शहर के वासी और उन्हीं के क़बीले के थे।

35. फ़ातिर

नाम

पहली ही आयत का शब्द 'फ़ातिर' (बनानेवाला) इस सूरा का शीर्षक ठहराया गया है, जिसका अर्थ केवळ यह है कि यह वह सूरा है जिसमें 'फ़ातिर' शब्द आया है।

अवतरणकाल

वर्णन-शैली के आन्तरिक साक्ष्यों से प्रतीत होता है कि इस सूरा के अवतरण का समय सम्भवतः मक्का मुअज़्ज़मा का मध्यकाल है और उसका भी वह भाग जिसमें विरोध पर्याप्त रूप से उग्र हो चुका था।

विषय और वार्ता

वाणी का उद्देश्य यह है कि नबी (सल्ल॰) के एकेश्वरवादी आमंत्रण के मुक़ाबले में जो नीति मक्कावाले और उनके सरदारों ने अपना रखी थी उसपर नसीहत के रूप में उनको चेतावनी दी जाए और धिक्कारा भी जाए और शिक्षणात्मक ढंग से हितोपदेश भी किया जाए। वार्ता का सारांश यह है कि नादानो! यह नबी जिस राह की तरफ़ तुम्हें बुला रहा है, उसमें तुम्हारा अपना भला है। उसपर तुम्हारा क्रोध और उसको असफल करने के तुम्हारे अपने उपाय वास्तव में उसके विरुद्ध नहीं, बल्कि तुम्हारे अपने विरुद्ध पड़ रहे हैं। वह जो कुछ तुमसे कह रहा है उसपर विचार तो करो, उसमें ग़लत बात क्या है। वह बहुदेववाद का खण्डन करता है। वह एकेश्वरवाद की ओर बुलाता है। वह तुमसे कहता है कि इस सांसारिक जीवन के पश्चात् एक और जीवन है, जिसमें हर एक को अपने किए का परिणाम देखना होगा। तुम स्वयं सोचो कि इन बातों पर तुम्हारे सन्देह और आश्चर्य कितने आधारहीन हैं। अब यदि इन सर्वथा बुद्धिसंगत और सत्य पर आधारित बातों को तुम नहीं मानते हो तो इसमें नबी की क्या हानि है। दुर्भाग्य तो तुम्हारा अपना ही सामने आएगा। वर्ताक्रम में बार-बार नबी (सल्ल॰) को तसल्ली दी गई है कि आप जब हितैषिता का हक़ पूर्ण रूप से अदा कर रहे हैं तो गुमराही पर हठ करनेवालों के सन्मार्ग स्वीकार न करने का कोई दायित्व आप पर नहीं आता। इसके साथ आपको यह भी समझाया गया है कि जो लोग मानना नहीं चाहते तो उनकी नीति पर न आप शोकाकुल हों और न आप उन्हें सन्मार्ग पर लाने की चिन्ता में अपनी जान घुलाएँ। इसके स्थान पर आप अपना ध्यान उन लोगों पर दें जो बात सुनने के लिए तैयार हैं। ईमान लानेवालों को भी इसी सिलसिले में बड़ी शुभ-सूचनाएँ दी गई है, ताकि उनके दिल सुदृढ़ हों और वे अल्लाह के वादों पर भरोसा करके सत्यमार्ग पर अडिग रहें।



35. सूरा -फ़ातिर

(मक्का में उतरी–आयतें 45)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) तारीफ़ अल्लाह ही के लिए है जो आसमानों और ज़मीन का बनानेवाला और फ़रिश्तों को सन्देशवाहक नियुक्त करनेवाला है, (ऐसे फ़रिश्ते) जिनके दो-दो और तीन-तीन और चार-चार भुजाएँ हैं। वह अपनी सृष्टि-संरचना में जैसी चाहता है अभिवृद्धि करता है। यक़ीनन अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (2) अल्लाह जिस रहमत का दरवाज़ा भी लोगों के लिए खोल दे उसे कोई रोकनेवाला नहीं और जिसे वह बन्द कर दे उसे अल्लाह के बाद फिर कोई दूसरा खोलनेवाला नहीं। वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।

(3) लोगो, तुमपर अल्लाह के जो उपकार हैं उन्हें याद रखो। क्या अल्लाह के सिवा कोई और स्रष्टा भी है जो तुम्हें आसमान और ज़मीन से रोज़ी देता हो?—कोई उपास्य उसके सिवा नहीं, आख़िर तुम कहाँ से धोखा खा रहे हो? (4) अब अगर (ऐ नबी) तुम्हें झुठलाते हैं (तो यह कोई नई बात नहीं), तुमसे पहले भी बहुत-से रसूल झुठलाए जा चुके हैं, और सारे मामले आख़िरकार अल्लाह ही की तरफ़ रुजू होनेवाले हैं।

(5) लोगो, अल्लाह का वादा यक़ीनन सत्य है, अतः दुनिया की ज़िन्दगी तुम्हें धोखे में न डाले और न वह बड़ा धोखेबाज़ तुम्हें अल्लाह के बारे में धोखा देने पाए। (6) वास्तव में शैतान तुम्हारा दुश्मन है इसलिए तुम भी उसे अपना दुश्मन ही समझो। वह तो अपने अनुयायियों को अपनी राह पर इसलिए बुला रहा है कि वे दोज़ख़वालों में शामिल हो जाएँ। (7) जो लोग इनकार करेंगे उनके लिए कठोर यातना है और जो ईमान लाएँगे और अच्छे कर्म करेंगे उनके लिए माफ़ी और बड़ा बदला है।

(8) (भला कुछ ठिकाना है उस व्यक्ति की गुमराही का) जिसके लिए उसका बुरा कर्म ख़ुशनुमा बना दिया गया हो और वह उसे अच्छा समझ रहा हो? वास्तविकता यह है कि अल्लाह जिसे चाहता है गुमराही में डाल देता है और जिसे चाहता है सन्मार्ग दिखा देता है। अतः (ऐ नबी) चाहे-अनचाहे तुम्हारी जान इन लोगों के लिए ग़म और अफ़सोस में न घुले। जो कुछ ये कर रहे हैं अल्लाह उसको ख़ूब जानता है। (9) वह अल्लाह ही तो है जो हवाओं को भेजता है, फिर वह बादल उठाती हैं, फिर हम उसे एक उजाड़ इलाक़े की तरफ़ ले जाते हैं और उसके द्वारा उसी ज़मीन को जिला उठाते हैं जो

मरी पड़ी थी। मरे हुए इनसानों का जी उठना भी इसी तरह होगा।

(10) जो कोई इज़्ज़त चाहता हो उसे मालूम होना चाहिए कि इज़्ज़त सारी की सारी अल्लाह की है। उसके यहाँ जो चीज़ ऊपर चढ़ती है वह सिर्फ़ पाकीज़ा बात है, और अच्छा कर्म उसको ऊपर चढ़ाता है। रहे वे लोग जो बेहूदा चालबाज़ियाँ करते हैं, उनके लिए कठोर यातना है और उनकी चालबाज़ी ख़ुद ही विनष्ट होनेवाली है।

(11) अल्लाह ने तुमको मिट्टी से पैदा किया, फिर वीर्य से, फिर तुम्हारे जोड़े बना दिए (अर्थात् मर्द और औरत)। कोई औरत गर्भवती नहीं होती और न बच्चा जनती है मगर यह सब कुछ अल्लाह के ज्ञान में होता है। कोई आयु को प्राप्त होनेवाला आयु को प्राप्त नहीं होता और न किसी की आयु में कुछ कमी होती है मगर यह सब कुछ एक किताब में लिखा होता है। अल्लाह के लिए यह बहुत आसान काम है। (12) और पानी के दोनों ज़ख़ीरे समान नहीं हैं। एक मीठा और प्यास बुझानेवाला है, पीने में रुचिकर, और दूसरा अत्यंत खारा कि गला छील दे। मगर दोनों से तुम तरोताज़ा गोश्त प्राप्त करते हो, पहनने के लिए सौन्दर्य का सामान निकालते हो, और उसी पानी मेंतुम देखते हो कि नौकाएँ उसका सीना चीरती चली जा रही हैं ताकि तुम अल्लाह का अनुग्रह (रोज़ी) तलाश करो और उसके कृतज्ञ बनो। (13) वह दिन के भीतर रात और रात के भीतर दिन को पिरोता हुआ ले आता है। चाँद और सूरज को उसने वशीभूत कर रखा है। यह सब कुछ एक नित समय तक चला जा रहा है। वही अल्लाह (जिसके ये सारे काम हैं) तुम्हारा रब है। राज उसी का है। उसे छोड़कर जिन दूसरों को तुम पुकारते हो वे एक तिनके के मालिक भी नहीं हैं। (14) उन्हें पुकारो तो वे तुम्हारी दुआएँ सुन नहीं सकते और सुन ले तो उनका तुम्हें कोई जवाब नहीं दे सकते। और क़ियामत के दिन वे तुम्हारे शिर्क का इनकार कर देंगे। वस्तु-स्थिति की ऐसी सही ख़बर तुम्हें एक ख़बर रखनेवाले के सिवा कोई नहीं दे सकता।

(15) लोगो, तुम ही अल्लाह के मुहताज हो और अल्लाह तो सम्पन्न और प्रशंस्य है। (16) वह चाहे तो तुम्हें हटाकर कोई नई सृष्टि तुम्हारी जगह ले आए, (17) ऐसा करना अल्लाह के लिए कुछ भी कठिन नहीं। (18) कोई बोझ उठानेवाला किसी दुसरे का बोझ न उठाएगा। और अगर कोई लदा हुआ प्राणी अपना बोझ उठाने के लिए पुकारेगा तो उसके बोझ का एक छोटा हिस्सा भी बटाने के लिए कोई न आएगा चाहे वह बहुत ही क़रीब का नातेदारही क्यों न हो। (ऐ नबी) तुम सिर्फ़ उन्हीं लोगों को सावधान कर सकते हो जो बिना देखे अपने रब से डरते हैं और नमाज़ क़ायम करते हैं। जो व्यक्ति भी पवित्रता ग्रहण करता है अपनी ही भलाई के लिए करता है। और पलटना सबको

अल्लाह ही की ओर है। (19) अन्धा और आँखोंवाला बराबर नहीं है। (20) न अँधियारियाँ और प्रकाश समान हैं। (21) न ठण्डी छाँव और धूप की तपन एक जैसी है। (22) और न ज़िन्दे और मुर्दे बराबर हैं। अल्लाह जिसे चाहता है सुनवाता है, मगर (ऐ नबी) तुम उन लोगों को नहीं सुना सकते जो क़ब्रों में पड़े हुए हैं।[1] (23) तुम तो बस एक सावधान करनेवाले हो। (24) हमने तुमको सत्य के साथ भेजा है ख़ुशख़बरी देनेवाला और डरानेवाला बनाकर। और कोई समुदाय (उम्मत) ऐसा नहीं हुआ है जिसमें कोई चेतावनी देनेवाला न आया हो। (25) अब अगर ये लोग तुम्हें झुठलाते हैं तो इनसे पहले गुज़रे हुए लोग भी झुठला चुके हैं। उनके पास उनके रसूल खुले प्रमाण और पुस्तकें और स्पष्ट आदेश देनेवाली किताब लेकर आए थे। (26) फिर जिन लोगों ने न माना उनको मैंने पकड़ लिया और देख लो कि मेरी सज़ा कैसी कठोर थी।

(27) क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह आसमान से पानी बरसाता है और फिर उसके द्वारा हम तरह-तरह के फल निकाल लाते हैं जिनके रंग अलग-अलग होते हैं। पहाड़ों में भी सफ़ेद, लाल और गहरी काली धारियाँ पाई जाती हैं जिनके रंग अलग-अलग होते हैं। (28) और इसी तरह इनसानों और जानवरों और चौपायों के रंग भी अलग-अलग हैं। वास्तविकता यह है कि अल्लह के बन्दों में से सिर्फ़ ज्ञानवान लोग ही उससे डरते हैं।[2] बेशक अल्लाह प्रभुत्वशाली और माफ़ करनेवाला है।

(29) जो लोग अल्लाह की किताब को पढ़ते हैं और नमाज़ क़ायम करते हैं, और जो कुछ हमने उन्हें रोज़ी दी है उसमें से खुले और छिपे ख़र्च करते हैं, यक़ीनन वे एक ऐसे व्यापार के उम्मीदवार हैं जिसमें हरगिज़ घाटा न होगा। (30) (इस व्यापार में उन्होंने अपना सब कुछ इसलिए खपाया है) ताकि अल्लाह उनके पारिश्रमिक पूरे के पूरे उनको दे और अतिरिक्त अपने उदार अनुग्रह से उनको प्रदान करे। बेशक अल्लाह माफ़ करनेवाला और गुणग्राहक है। (31) (ऐ नबी) जो किताब हमने तुम्हारी ओर प्रकाशना

1. अर्थात् अल्लाह की इच्छा की तो बात ही दूसरी है, वह चाहे तो पत्थरों को सुनने की शक्ति दे दे, लेकिन रसूल के बस का यह काम नहीं है कि जिन लोगों के सीने में अन्तरात्मा दफ़न हो चुकी हो उनके दिलों में वह अपनी बात उतार सके और जो बात सुनना ही न चाहते हों उनके बहरे कानों को सत्य की आवाज़ सुना सके। वह तो उन्हीं लोगों को सुना सकता है जो बुद्धिसंगत बात पर कान धरने के लिए तैयार हों।
2. इससे मालूम हुआ कि ज्ञानी मात्र पोथी पढ़नेवालों को नहीं कहते बल्कि ज्ञानवान वह है जो ईश्वर से डरनेवाला हो।

(वह्य) के द्वारा भेजी है वही सत्य है, पुष्टि करती हुई आई है उन किताबों की जो इससे पहले आई थीं। बेशक अल्लाह अपने बन्दो के हाल की ख़बर रखता है और हर चीज़ पर निगाह रखनेवाला है। (32) फिर हमने इस किताब का उत्तराधिकारी बना दिया उन लोगों को जिन्हें हमने (इस उत्तराधिकार के लिए) अपने बन्दों में से चुन लिया। अब कोई तो उनमें से अपने-आप पर ज़ुल्म करनेवाला है, और कोई बीच की रास है, और कोई अल्लाह की अनुमति से नेकियों में अग्रसर रहनेवाला है, यही बहुत बड़ा अनुग्रह है। (33) हमेशा रहनेवाली जन्नतें हैं जिनमें ये लोग प्रवेश करेंगे. वहां उन्हें सोने के कंगनों और मोतियों से आभूषित किया जाएगा, वहाँ उनका लिबास रेशम होगा, (34) और वे कहेंगे कि "शुक्र है उस अल्लाह का जिसने हमसे ग़म दूर कर दिया, यक़ीनन हमारा रब माफ़ करनेवाला और गुणग्राहक है, (35) जिसने हमें अपने अनुग्रह से शाश्वत आवास की जगह ठहरा दिया, अब यहाँ न हमें कोई मशक़्क़त पेश आती है और न थकान छूती है।"

(36) और जिन लोगों ने इनकार किया है उनके लिए जहन्नम की आग है। न उनका क़िस्सा ख़त्म कर दिया जाएगा कि मर जाएँ और न उनके लिए जहन्नम के अज़ाब में कोई कमी की जाएगी। इस तरह हम बदला देते हैं हर उस व्यक्ति को जो इनकार करनेवाला हो। (37) वे वहां चिल्ला-चिल्लाकर कहेंगे कि "ऐ हमारे रब, हमें यहाँ से निकाल ले ताकि हम अच्छे कर्म करें उन कर्मों से भिन्न जो पहले करते रहे थे।" (उन्हें जवाब दिया जाएगा) "क्या हमने तुमको इतनी उम्र न दी थी जिसमें कोई शिक्षा ग्रहण करना चाहता तो शिक्षा ग्रहण कर सकता था? और तुम्हारे पास चेतावनी देनेवाला भी आ चुका था। अब मज़ा चखो। ज़ालिमों का यहाँ कोई सहायक नहीं है।"

(38) बेशक अल्लाह आसमानों और ज़मीन की हर छिपी चीज़ से परिचित है, वह तो सीनों के छिपे हुए रहस्य तक जानता है। (39) वही तो है जिसने तुमको ज़मीन में 'ख़लीफ़ा' बनाया है। अब जो कोई इनकार करता है उसके इनकार का वबाल उसी पर है, और इनकार करनेवालों को उनका इनकार इसके सिवा कोई उन्नति नहीं देता कि उनके रब का ग़ज़ब उनपर ज़्यादा से ज़्यादा भड़कता चला जाता है। इनकार करनेवालों के लिए घाटे में अभिवृद्धि के सिवा कोई उन्नति नहीं।

(40) (ऐ नबी) इनसे कहो, "कभी तुमने देखा भी है अपने उन साझीदारों को जिन्हें तुम अल्लाह को छोड़कर पुकारा करते हो? मुझे बताओ, उन्होंने ज़मीन में क्या पैदा किया है? या आसमानों में उनकी क्या साझेदारी है?" (अगर ये नहीं बता सकते तो इनसे पूछो) क्या हमने इन्हें कोई लेख्य लिखकर दिया है जिसके आधार पर ये (अपने

इस बहुदेववाद के लिए) कोई साफ़ सनद रखते हों? नहीं, बल्कि ये ज़ालिम एक दूसरे को सिर्फ़ फ़रेब के झाँसे दिए जा रहे हैं। (41) वास्तविकता यह है कि अल्लाह ही है जो आसमानों और ज़मीन को टल जाने से रोके हुए है, और अगर वे टल जाएँ तो अल्लाह के बाद कोई दूसरा उन्हें थामनेवाला नहीं है। बेशक अल्लाह बड़ा सहनशील और माफ़ करनेवाला है।

(42) ये लोग कड़ी-कड़ी क़समें खाकर कहा करते थे कि अगर कोई चेतावनी देनेवाला उनके यहाँ आ गया होता तो ये दुनिया की हर दूसरी क़ौम से बढ़कर सन्मार्ग पर होते। मगर जब चेतावनी देनेवाला इनके यहाँ आ गया तो उसके आगमन ने इनके अन्दर सत्य से फ़रार के सिवा किसी चीज़ में अभिवृद्धि न की। (43) ये ज़मीन में और ज़्यादा सरकशी करने लगे और बुरी-बुरी चालें चलने लगे, हालाँकि बुरी चालें अपने चलनेवालों ही को ले बैठती हैं। अब क्या ये लोग इसका इनतिज़ार कर रहे हैं कि पिछले लोगों के साथ अल्लाह की जो रीति रही है वही इनके साथ भी अपनाई जाए? यही बात है तो तुम अल्लाह की रीति में हरगिज़ कोई परिवर्तन न पाओगे और तुम कभी न देखोगे कि अल्लाह की रीति (सुन्नत) को उसके नियत मार्ग से कोई शक्ति पेर सकती है। (44) क्या ये लोग ज़मीन में कभी चले-फिरे नहीं हैं कि इन्हें उन लोगों का परिणाम दिखाई देता जो इनसे पहले गुज़र चुके हैं और इनसे बहुत ज़्यादा शक्तिशाली थे? अल्लाह को कोई चीज़ विवश करनेवाली नहीं है, न आसमानों में और न ज़मीन में। वह सब कुछ जानता है और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (45) अगर कहीं वह लोगों को उनके किए करतूतों पर पकड़ता तो ज़मीन में किसी जीवधारी को जीता न छोड़ता। मगर वह उन्हें एक नियत समय के लिए मुहलत दे रहा है। फिर जब उनका समय पूरा होगा तो अल्लाह अपने बन्दों को देख लेगा।



36. या॰ सीन॰

नाम

आरम्भ के दोनों अक्षरों को इस सूरा का नाम ठहराया गया है।

अवतरणकाल

वर्णन-शैली पर विचार करने से महसूस होता है कि इस सूरा का अवतरणकाल या तो मक्का के मध्यकाल का अन्तिम चरण है या फिर यह मक्का-निवास काल के अन्तिम चरण की सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

वार्ता का उद्देश्य क़ुरैशके काफ़िरों को मुहम्मद (सल्ल॰) की पैग़म्बरी पर ईमान न लाने और अत्याचार एवं उपहास से उसका मुक़ाबला करने के परिणाम से डराना है। इसमें डरावे का पहलू बढ़ा हुआ और स्पष्ट है। किन्तु बार-बार डराने के साथ तर्क द्वारा समझाया भी गया है। तर्क तीन बातों पर प्रस्तुत किया गया है :

एकेश्वरवाद पर जगत् में पाए जानेवाले लक्षणों और सामान्य बुद्धि से, परलोक पर जगत् में पाए जानेवाले लक्षणों, सामान्य बुद्धि और स्वयं मानव के अपने अस्तित्व से और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की पैग़म्बरी की सत्यता पर इस बात से कि आप रिसालत के प्रचार में सारा कष्ट केवळ निःस्वार्थ उठा रहे थे, और इस चीज़ से कि जिन बातों की ओर आप लोगों को बुला रहे थे, वे सर्वथा बुद्धिसंगत थीं। इस तर्क के बल पर ताड़ना और भर्त्सना और चेतावनी की वार्ताएँ अत्यन्त ज़ोरदार ढंग से बार-बार प्रस्तुत हुई, ताकि दिलों के ताले टूटें और जिनमें सत्य स्वीकार करने की थोड़ी-सी क्षमता भी हो, वे प्रभावित हुए बिना न रह सकें। इमाम अहमद, अबू दाऊद, नसई, इब्ने माजा और तबरानी आदि ने माक़िल बिन यसार (रज़ि॰) के द्वारा उल्लिखित किया है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा है कि यह सूरा क़ुरआन का हृदय है। यह उसी प्रकार की उपमा है, जिस प्रकार सूरा फ़ातिहा को उम्मुल क़ुरआन कहा गया है। फ़ातिहा को उम्मुल क़ुरआन निर्धारित करने का कारण यह है कि उसमें क़ुरआन मजीद की समग्र शिक्षा का सारांश आ गया है। सूरा या॰ सीन॰ को क़ुरआन का धड़कता हुआ हृदय इसलिए कहा गया है कि यह क़ुरआन के आह्वान को अत्यन्त ज़ोरदार तरीक़े से प्रस्तुत करती है, जिससे जड़ता टूटती है और आत्मा में स्पन्दन उत्पन्न होता है। इन्हीं हज़रत माक़िल बिन यसार (रज़ि॰) से इमाम अहमद, अबू दाऊद और इब्ने माजा ने भी यह उल्लेख उद्धृत किया

है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा, ''अपने मरनेवालों पर सूरा या॰ सीन॰ पढ़ा करो।'' इसमें मस्लहत यह है कि मरते समय मुसलमान के मन में न केवल यह कि सम्पूर्ण इस्लामी धारणाएँ ताज़ा हो जाएँ, बल्कि विशेष रूप से उसके सामने परलोक का पूरा चित्र भी आ जाए और वह जान ले कि सांसारिक जीवन के पड़ाव से प्रस्थान करके अब आगे किन मंज़िलों का उसे सामना करना है। इस मस्लहत की पूर्ति के लिए उचित यह मालुम होता है कि ग़ैर-अरबी भाषी व्यक्ति को सूरा या॰ सीन॰ सुनाने के साथ उसका अनुवाद भी सुना दिया जाए, ताकि याददिहानी का हक़ पूरी तरह अदा हो जाए।



36. सूरा या॰ सीन॰

(मक्का में उतरी–आयतें 83)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) या॰ सीन॰। (2) क़सम है हिकमतवाले क़ुरआन की (3) कि तुम यक़ीनन रसूलों में से हो, (4) सीधे मार्ग पर हो (5) (और यह क़ुरआन) प्रभुत्वशाली और दयामय हस्ती का उतारा हुआ है (6) ताकि तुम सावधान करो एक ऐसी क़ौम को जिसके बाप-दादा सावधान न किए गए थे और इस कारण से वे ग़फ़लत में पड़े हुए हैं।

(7) उनमें से ज़्यादातर लोग अज़ाब के फ़ैसले के भागी हो चुके हैं, इसी लिए वे ईमान नहीं लाते।[1] (8) हमने उनकी गर्दनों में तौक़ डाल दिए हैं जिनसे वे ठोड़ियों तक जकड़े गए हैं, इसलिए वे सिर उठाए खड़े हैं।[2] (9) हमने एक दीवार उनके आगे खड़ी कर दी है और एक दीवार उनके पीछे। हमने उन्हें ढाँक दिया है, उन्हें अब कुछ नहीं सूझता।[3] (10) इनके लिए बराबर है, तुम इन्हें सावधान करो या न करो, ये न मानेंगे। (11) तुम तो उसी व्यक्ति को सावधान कर सकते हो जो नसीहत का अनुसरण करे और बिना देखे करुणामय ईश्वर से डरे। उसे माफ़ी और उदारतापूर्ण एवं प्रतिष्ठित प्रतिदान की ख़ुशख़बरी दे दो।

(12) हम यक़ीनन एक दिन मुर्दों को ज़िन्दा करनेवाले हैं। जो कुछ कर्म उन्होंने

---

1. यह उन लोगों का उल्लेख है जो नबी (सल्ल॰) के निमंत्रण के मुक़ाबले में ज़िद और हठधर्मी से काम ले रहे थे और जिन्होंने निश्चय कर लिया था कि आपकी बात किसी हाल में मानना नहीं है। उनके सम्बन्ध में कहा गया है कि ''ये लोग अज़ाब के फ़ैसले के भागी हो चुके हैं इसलिए ये ईमान नहीं लाते।''
2. 'तौक़' से मुराद उनकी अपनी हठधर्मी है जो उनके लिए सत्य को स्वकार करने में रोक बन रही थी। 'ठोड़ियों तक जकड़ने जाने' और 'सिर उठाए खड़े होने', से मुराद वह गर्दन की अकड़ है जो अहंकार और दंभ का परिणाम होती है।
3. एक दीवार आगे और एक पीछे खड़ी कर देने से मुराद यह है कि इसी हठधर्मी और अहंकार का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ है कि ये लोग न पिछले इतिहास से कोई शिक्षा लेते हैं, और न भविष्य के परिणाम पर कभी विचार करते हैं। इनके पक्षपातों ने इनको हर तरफ़ से इसतरह ढाँक लिया है और इनकी भ्रान्तियों ने इनकी आँखो पर ऐसे परदे डाल दिए हैं कि इन्हें वे प्रत्यक्ष तथ्य दिखाई नहीं देते जो हर शुद्ध प्रकृति और पक्षपात रहित इनसान को दिखाई दे रहे हैं।

किए हैं वे सब हम लिखते जा रहे हैं, और जो कुछ चिह्न उन्होंने पीछे छोड़े हैं वे भी हम अंकित कर रहे हैं। हर चीज़ को हमने एक खुली किताब में दर्ज कर रखा है।

(13) इन्हें मिसाल के रूप में उस बस्तीवालों का क़िस्सा सुनाओ जबकि उसमें रसूल आए थे। (14) हमने उनकी ओर दो रसूल भेजे और उन्होंने दोनों को झुठला दिया। फिर हमने तीसरा मदद के लिए भेजा और उन सबने कहा, ''हम तुम्हारी ओर रसूल की हैसियत से भेजे गए हैं।'' (15) बस्तीवालों ने कहा, ''तुम कुछ नहीं हो मगर हम जैसे कुछ इनसान, और करुणामय ईश्वर ने हरगिज़ कोई चीज़ अवतरित नहीं की हैं, तुम सिर्फ़ झूठ बोलते हो।''

(16) रसूलों ने कहा, ''हमारा रब जानता है कि हम ज़रूर तुम्हारी ओर रसूल बनाकर भेजे गए हैं, (17) और हमपर स्पष्टतः सन्देश पहुँचा देने के सिवा कोई ज़िम्मेदारी नहीं है।'' (18) बस्तीवाले कहने लगे, ''हम तो तुम्हें अपने लिए अपशकुन समझते हैं। अगर तुम बाज़ न आए तो हम तुमको पथराव करके मार डालेंगे और हमसे तुम बड़ी दर्दनाक सज़ा पाओगे।'' (19) रसूलों ने जवाब दिया, ''तुम्हारा अपशकुन तो तुम्हारे अपने साथ लगा हुआ है। क्या ये बातें तुम इसलिए करते हो कि तुम्हें नसीहत की गई? असल बात यह है कि तुम हद से गुज़रे हुए लोग हो।''

(20) इतने में शहर के दूरवर्ती सिरे से एक व्यक्ति दौड़ता हुआ आया और बोला, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, रसूलों का अनुसरण स्वीकार कर लो। (21) अनुसरण करो उन लोगों का जो तुमसे कोई बदला नहीं चाहते और ठीक मार्ग पर हैं। (22) आख़िर क्यों न मैं उस हस्ती की बन्दगी करूँ जिसने मुझे पैदा किया है और जिसकी तरफ़ तुम सबको पलटकर जाना है? (23) क्या मैं उसे छोड़कर दूसरे उपास्य बना लूँ? हालाँकि अगर करुणामय ईश्वर मुझे कोई नुक़सान पहुँचाना चाहे तो न उनकी सिफ़ारिश मेरे किसी काम आ सकती है और न वे मुझे छुड़ा ही सकते हैं। (24) अगर मैं ऐसा करूँ तो मैं खुली गुमराही में पड़ जाऊँगा। (25) मैं तो तुम्हारे रब पर ईमान ले आया, तुम भी मेरी बात मान लो।''

(26,27) (आख़िरकार उन लोगों ने उसको क़त्ल कर दिया और) उस व्यक्ति से कह दिया गया कि ''प्रवेश कर जन्नत में।'' उसने कहा, ''काश! मेरी क़ौम जानती कि मेरे रब ने किस चीज़ की बदौलत मुझे माफ़ कर दिया और मुझे प्रतिष्ठित लोगों में सम्मिलित किया।''

(28) उसके बाद उसकी क़ौम पर हमने आसमान से कोई सेना नहीं उतारी। हमें सेना भेजने की कोई ज़रूरत न थी। (29) बस एक धमाका हुआ और अचानक वे सब

बुझकर रह गए। (30) अफ़सोस बन्दों के हाल पर, जो रसूल भी उनके पास आया उसकी वे हँसी ही उड़ाते रहे। (31) क्या उन्होंने देखा नहीं कि उनसे पहले कितनी ही क़ौमों को हम तबाह कर चुके हैं और उसके बाद वे फिर कभी उनकी तरफ़ पलटकर न आए? (32) उन सबको एक दिन हमारे सामने उपस्थित किया जाना है।

(33) इन लोगों के लिए बेजान ज़मीन एक निशानी है। हमने उसको ज़िन्दगी दी और उससे अनाज निकला जिसे ये खाते हैं। (34) हमने उसमें खजूरों और अँगूरों के बाग़ पैदा किए और उसके अन्दर से स्रोत फोड़ निकाले, (35) ताकि ये उसके फल खाएँ। ये सब कुछ इनके अपने हाथों का पैदा किया हुआ नहीं है। फिर क्या ये कृतज्ञता नहीं दिखाते? (36) पवित्र है वह सत्ता जिसने सब प्रकार के जोड़े पैदा किए चाहे वे ज़मीन की वनस्पतियों में से हों या ख़ुद उनकी अपनी जाति (अर्थात् मानव जाति) में से या उन चीज़ों में से जिनको ये जानते तक नहीं हैं।

(37) इनके लिए एक और निशानी रात है, हम उसके ऊपर से दिन हटा देते हैं तो इनपर अँधेरा छा जाता है। (38) और सूरज, वह अपने ठिकाने की ओर चला जा रहा है। वह प्रभुत्वशाली सर्वज्ञ सत्ता का बाँधा हुआ हिसाब है। (39) और चाँद, उसके लिए हमने मंज़िलें नियत कर दी हैं यहाँ तक कि उनसे गुज़रता हुआ वह फिर खजूर की सूखी शाखा के सदृश रह जाता है। (40) न सूरज के बस में यह है कि वह चाँद को जा पकड़े और न रात दिन से आगे बढ़ सकती है। सब एक-एक कक्षा में तैर रहे हैं।

(41) इनके लिए यह भी एक निशानी है कि हमने इनकी नस्ल को भरी हुई नौका[4] में सवार कर दिया (42) और फिर इनके लिए वैसी ही नौकाएँ और पैदा की जिनपर ये सवार होते हैं। (43) हम चाहें तो इन्हें डुबो दें, कोई इनकी फ़रियाद सुननेवाला न हो और किसी तरह ये न बचाए जा सकें। (44) बस हमारी दयालुता ही है जो इन्हें पार लगाती और एक ख़ास समय तक ज़िन्दगी से लाभान्वित होने का अवसर देती है।

(45) इन लोगों से जब कहा जाता है कि बचो उस अन्जाम से जो तुम्हारे आगे आ रहा है और तुम्हारे पीछे गुज़र चुका है, शायद कि तुमपर दया की जाए (तो ये सुनी-अनसुनी कर जाते हैं)। (46) इनके सामने इनके रब की 'आयतों' में से जो 'आयत' भी आती है ये उसकी ओर ध्यान नहीं देते। (47) और जब इनसे कहा जाता है कि अल्लाह ने जो रोज़ी तुम्हें दी है उसमें से कुछ अल्लाह के मार्ग में भी ख़र्च करो तो ये लोग जिन्होंने

4. नौका से मुराद नूह (अलै॰) की नौका है।

इनकार किया है ईमान लानेवालों को जवाब देते है, "क्या हम उनको खिलाएँ जिन्हें अगर अल्लाह चाहता तो ख़ुद खिला देता? तुम तो बिलकुल ही बहक गए हो।"

(48) ये लोग कहते हैं कि "क़ियामत की धमकी आख़िर कब पूरी होगी? बताओ अगर तुम सच्चे हो।" (49) वास्तव में ये जिस चीज़ की राह तक रहे हैं वह बस एक धमाका है जो सहसा इन्हें इस हालत में धर लेगा जब ये (अपनी दुनिया के मामलों में) झगड़ रहे होंगे, (50) और उस समय ये वसीयत तक न कर सकेंगे, न अपने घरों को पलट सकेंगे। (51) फिर एक सूर फूँका जाएगा। और यकायक ये अपने रब की सेवा में पेश होने के लिए अपनी-अपनी क़ब्रों से निकल पड़ेंगे। (52) घबराकर कहेंगे : "अरे, यह किसने हमें हमारी सोने की जगह से उठा खड़ा किया?"—"यह वही चीज़ है जिसका करुणामय ईश्वर ने वादा किया था और रसूलों की बात सच्ची थी।"[5] (53) एक ही ज़ोर की आवाज़ होगी और सब के सब हमारे सामने हाज़िर कर दिए जाएँगे।

(54) आज किसी पर कण-भर भी ज़ुल्म न किया जाएगा और तुम्हें वैसा ही बदला दिया जाएगा जैसा तुम कर्म करते रहे थे (55)—आज जन्नती लोग मज़े करने में व्यस्त हैं। (56) वे और उनकी पत्नियाँ घने सायों में हैं मसनदों पर तकिए लगाए हुए, (57) हर तरह की स्वादिष्ट चीज़े खाने-पीने को उनके लिए वहाँ मौजूद हैं, जो कुछ वे माँगें उनके लिए हाज़िर है, (58) दयावान् रब की ओर से उनको सलाम कहा गया है (59)—और ऐ अपराधियो, आज तुम छँटकर अलग हो जाओ। (60) आदम के बच्चो, क्या मैंने तुमको ताकीद न की थी कि शैतान की बन्दगी न करो, वह तुम्हारा खुला दुश्मन है, (61) और मेरी ही बन्दगी करो, यह सीधा मार्ग है? (62) मगर इसके बावजूद उसने तुममें से एक बड़े गिरोह को पथभ्रष्ट कर दिया। क्या तुम बुद्धि नहीं रखते थे? (63) यह वही जहन्नम है जिससे तुम्हें डराया जाता रहा था। (64) जो इनकार तुम दुनिया में करते रहे हो उसके बदले में अब इसका ईंधन बनो।

(65) आज हम इनके मुँह बन्द किए देते हैं, इनके हाथ हमसे बोलेंगे और इनेक पाँव गवाही देंगे कि ये दुनिया में क्या कमाई करते रहे हैं।

(66) हम चाहे तो इनकी आँखें मूँद दें, फिर ये रास्ते की ओर लपककर देखें,

5. हो सकता है कि यह जवाब उनको ईमानवाले दें। हो सकता है कि वे लोग कुछ देर के बाद ख़ुद समझ लें यह तो वही दिन आ गया जिसकी सूचना रसूल हमें देते थे। और यह भी हो सकता है कि फ़रिश्ते उनको यह जवाब दें, या 'क़ियामत' का सारा वातावरण उन्हें यह बात बताए।

कहाँ से इन्हें रास्ता सुझाई देगा? (67) हम चाहें तो इन्हें इनकी जगह ही पर इस तरह विकृत करके रख दें कि ये न आगे चल सकें न पीछे पलट सकें। (68) जिस व्यक्ति को हम लम्बी उम्र देते हैं उसकी संरचना को हम उलट ही देते हैं, क्या (ये दशाएँ देखकर) इन्हें अक़्ल नहीं आती?

(69) हमने इस (नबी) को काव्य नहीं सिखाया है और न काव्य इसे शोभा ही देता है। यह तो एक नसीहत है और साफ़ पढ़ी जानेवाली किताब, (70) ताकि वह हर उस व्यक्ति को सावधान कर दे जो ज़िन्दा हो और इनकार करनेवालों पर हुज्जत (तर्क-प्रस्तुति) क़ायम हो जाए।

(71) क्या ये लोग देखते नहीं हैं कि हमने अपने हाथों की बनाई हुई चीज़ों में से इनके लिए चौपाए पैदा किए हैं और अब ये उनके मालिक हैं। (72) हमने उन्हें इस तरह इनके बस में कर दिया है कि उनमें से किसी पर ये सवार होते हैं, किसी का ये गोश्त खाते हैं, (73) और उनके अन्दर इनके लिए तरह-तरह के लाभ और पीने की चीज़ें हैं। फिर क्या ये कृतज्ञ नहीं होते? (74) यह सब कुछ होते हुए इन्होंने अल्लाह के सिवा दूसरे ईश्वर बना लिए हैं और यह उम्मीद रखते हैं कि इनकी सहायता की जाएगी। (75) वे इनकी कोई सहायता नहीं कर सकते बल्कि ये लोग उलटे उनके लिए उपस्थित रहनेवाली सेना बने हुए हैं। (76) अच्छा, जो बातें ये बना रहे हैं वे तुम्हें दुखी न करें, इनकी छिपी और खुली सब बातों को हम जानते हैं।

(77) क्या इनसान देखता नहीं है कि हमने उसे वीर्य से पैदा किया और फिर वह प्रत्यक्ष झगड़ालू बनकर खड़ा हो गया? (78) अब वह हमपर मिसालें चस्पाँ करता है और अपनी पैदाइश को भूल जाता है। कहता है, "कौन इन हड्डियों को ज़िन्दा करेगा जबकि ये जीर्ण हो चुकी हों?" (79) उससे कहो, इन्हें वही ज़िन्दा करेगा जिसने पहले इन्हें पैदा किया था, और वह पैदा करने का हर काम जानता है, (80) वही जिसने तुम्हारे लिए हरे-भरे पेड़ से आग पैदा कर दी और तुम उससे अपने चूल्हे रौशन करते हो। (81) क्या वह जिसने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया इसकी सामर्थ्य नहीं रखता है कि इन जैसों को पैदा कर सके? क्यों नहीं, जबकि वह कुशल महास्रष्टा है। (82) वह तो जब किसी चीज़ का इरादा करता है तो उसका काम बस यह है कि उसे हुक्म दे कि हो जा और वह हो जाती है। (83) पाक है वह जिसके हाथ में हर चीज़ का पूर्ण अधिकार है, और उसी की ओर तुम पलटाए जानेवाले हो।

• • •

37. अस-साफ़्फ़ात

नाम

पहली ही आयत के शब्द "अस-साफ़्फ़ात (पैर जमाकर पंक्तिबद्ध होनेवालों की सौगन्ध)" से उद्धृत है।

अवतरणकाल

वार्ताओं और वर्णन-शैली से प्रतीत होता है कि यह सूरा सम्भवतः मक्की काल के मध्य में, बल्कि शायद इस मध्यकाल के भी अन्तिम समय में अवतरित हुई है। (जब विरोध पूर्णतः उग्र रूप धारण कर चुका था।)

विषय और वार्ता

उस समय नबी (सल्ल॰) के एकेश्वरवाद और परलोकवाद के आह्वान का उत्तर जिस उपहास और हँसी-मज़ाक़ के साथ दिया जा रहा था और आपके रिसालत के दावे को स्वीकार करने से जिस ज़ोर के साथ इनकार किया जा रहा था, उसपर मक्का के काफ़िरों को अत्यन्त ज़ोरदार तरीक़े से चेतावनी दी गई है। और अन्त में उसे स्पष्ट रूप से सावधान कर दिया गया है कि शीघ्र ही यही पैग़म्बर जिसका तुम मज़ाक़ उड़ा रहे हो, तुम्हारे देखते-देखते तुमपर विजय प्राप्त कर लेगा और तुम अल्लाह की सेना को स्वयं अपने घर के परांगण में उतरी हुई पाओगे (आयत 171 से 179 तक)। यह नोटिस उस समय दिया गया था जब नबी (सल्ल॰) की सफलता के लक्षण दूर-दूर तक कहीं दिखाई नहीं देते थे। बल्कि देखनेवाले तो यह समझ रहे थे कि यह आन्दोलन मक्का की घाटियों ही में दफ़न होकर रह जाएगा। लेकिन 15-16 वर्ष से अधिक समय नहीं बीता था कि मक्का की विजय के अवसर पर ठीक वहीं कुछ सामने आ गया, जिससे काफ़िरों को सावधान किया गया था। चेतावनी के साथ-साथ अल्लाह ने इस सूरा में समझाने-बुझाने और प्रेरित करने का हक़ भी पूर्ण सन्तुलन के साथ अदा किया है। एकेश्वरवाद और परलोकवाद की धारणा के सत्य होने पर संक्षिप्त, दिल में घर करनेवाले प्रमाण प्रस्तुत किए गए हैं। बहुदेववादियों की (धारणाओं पर आलोचना करके बताया गया है कि वे कैसी-कैसी निरर्थक बातों पर ईमान लाए बैठे हैं, इन गुमराहियों के बुरे परिणामों से अवगत कराया गया है और यह भी बताया है कि ईमान और अच्छे कर्म के परिणाम कितने प्रतिष्ठापूर्ण हैं। फिर (इसी सिलसिले में पिछले इतिहास के उदाहरण दिये हैं।) इस उद्देश्य से जो ऐतिहासिक किस्से इस सूरा में बयान किया गए हैं, उनमें सबसे अधिक शिक्षाप्रद हज़रत इबराहीम (अलै॰) के पवित्र जीवन की यह महत्त्वपूर्ण घटना है

कि वे अल्लाह का एक संकेत पाते ही अपने इकलौते बेटे को क़ुरबान करने पर तैयार हो गए थे। इसमें केवल क़ुरैश के उन काफ़िरों ही के लिए शिक्षा न थी जो हज़रत इबराहीम (अलै॰) के साथ अपने वंशगत सम्बन्ध पर गर्व करते फिरते थे, बल्कि उन मुसलमानों के लिए भी शिक्षा थी जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाए थे। इस घटना का वर्णन करके उन्हें बता दिया गया कि इस्लाम की वास्तविकता और उसकी वास्तविक आत्मा क्या है। सूरा की अन्तिम आयतें केवल काफ़िरों के लिए चेतावनी ही न थीं, बल्कि उन ईमानवालों के लिए भी विजयी और प्रभावी होने की शुभ-सूचना थी जो नबी (सल्ल॰) के समर्थन और आपकी सहायता में अत्यन्त हतोत्साहित करनेवाली परिस्थितियों का मुक़ाबला कर रहे थे।



37. सूरा अस-साफ़्फ़ात

(मक्का में उतरी–आयतें 182)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) पंक्तियों में जमकर खड़े होनेवालों की क़सम, (2) फिर उनकी क़सम जो डाँटने-फटकारनेवाले हैं, (3) फिर उनकी क़सम जो उपदेशप्रद वाणी सुननेवाले हैं,[1] (4) तुम्हारा वस्तविक उपास्य बस एह ही है (5)—वह जो ज़मीन और आसमानों का और तमाम उन चीज़ों का मालिक है जो ज़मीन और आसमान में हैं, और सारी पूर्वदिशाओं का मालिक।[2]

(6) हमने दुनिया के आसमान[3] को तारों की शोभा से सुसज्जित किया है (7) और हर सरकश शैतान से उसको सुरक्षित कर दिया है। (8) ये शैतान सबसे उच्च दरबारवालों[4] की बातें नहीं सुन सकते, हर तरफ़ से मारे और हाँके जाते हैं (9) और उनके लिए निरन्तर अज़ाब है। (10) इसपर भी अगर कोई उनमें से कुछ ले उडे तो एक तेज़ ज्वाला उसका पीछा करती है।

(11) अब इनसे पूछो, इनकी पैदाइश ज़्यादा कठिन है या उन चीज़ों की जो हमने पैदा कर रखी हैं? इनको तो हमने लेसदार गारे से पैदा किया है। (12) तुम (अल्लाह की सामर्थ्य के चमत्कारों पर) आश्चर्यचकित हो और ये उसकी हँसी उड़ा रहे

---

1. ज़्यादातर टीकाकार इस बात पर सहमत हैं कि इन तीनों गिरोहों से मुराद फ़रिश्तों के गिरोह हैं जो अल्लाह के आदेशों का पालन करने के लिए हर समय तैयार रहते हैं, उसकी अवज्ञा करनेवालों को डाँटते और फटकारते हैं और विभिन्न तरीक़ों से अल्लाह की याद दिलाते और उपदेशप्रद वाणी सुनाते हैं।
2. सूरज हमेशा एक ही उदय-स्थल से नहीं निकलता बल्कि प्रत्येक दिन एक नए कोण से उदय होता है। और सारी ज़मीन पर वह एक ही समय में उदय नहीं हो जाता बल्कि ज़मीन के विभिन्न भागों पर विभिन्न समयों में उसका उदय हुआ करता है। इन कारणों से पूर्व दिशा के स्थान पर पूर्व दिशाओं का शब्द प्रयुक्त किया गया है, और इसके बाद पश्चिमों का उल्लेख नहीं किया गया, क्योंकि पूर्व दिशाओं का शब्द ख़ुद पश्चिमों को सिद्ध करता है।
3. दुनिया के आसमान से मुराद क़रीब का आसमान है, जिसका प्रत्यक्ष दर्शन किसी दूरबीन की सहायता के बिना हम नंगी आँख से करते हैं।
4. इससे अभिप्रेत है ऊपरी लोक के प्राणी, अर्थात फ़रिश्ते।

हैं। (13) समझाया जाता है तो समझते नहीं। (14) कोई निशानी देखते हैं तो उसे ठट्ठों में उड़ाते हैं। (15) और कहते हैं, "यह तो खुला जादू है, (16) भला कहीं ऐसा हो सकता है कि जब हम मर चुके हों और मिट्टी बन जाएँ और हड्डियों के पंजर रह जाएँ उस समय हम फिर ज़िन्दा करके उठा खड़े किए जाएँ? (17) और क्या हमारे अगले समयों के बाप-दादा भी उठाए जाएँगे?" (18) इनसे कहो, हाँ! और तुम (अल्लाह के मुक़ाबले में) बेबस हो।

(19) बस एकही झिड़की होगी और अचानक ये अपनी आँखों से (वह सब कुछ जिसकी ख़बर दी जा रही है) देख रहे होंगे। (20) उस समय ये कहेंगे, "हाय हमारा दुर्भाग्य, यह तो बदला पाने का दिन है" (21)—यह वही फ़ैसले का दिन है जिसे तुम झुठलाया करते थे।[5] (22,23) (हुक्म होगा) "घेर लाओ सब ज़ालिमों और उनके साथियों और उन उपास्यों[6] को जिनकी वे अल्लाह को छोड़कर बन्दगी किया करते थे, फिर उन सबको जहन्नम का मार्ग दिखाओ। (24) और तनिक इन्हें ठहराओ, इनसे कुछ पूछना है। (25) क्या हो गया तुम्हें, अब क्यों एक-दूसरे की सहायता नहीं करते? (26) अरे, आज तो ये अपने आपको (और एक दूसरे को) समर्पित किए दे रहे हैं!" (27) इसके बाद ये एक-दूसरे की ओर मुड़ेंगे और परस्पर विवाद शुरू कर देंगे। (28) (अनुयायी अपने पेशवाओं से) कहेंगे, "तुम हमारे पास सीधे रुख़[7] से आते थे।" (29) वे जवाब देंगे, "नहीं, बल्कि तुम ख़ुद ईमान लानेवाले न थे, (30) हमारा तुमपर कोई ज़ोर न था, तुम ख़ुद ही सरकश लोग थे, (31) आख़िरकार हम अपने रब के इस आदेश के योग्य हो गए कि हम अज़ाब का मज़ा चखनेवाले हैं। (32) सो हमने तुमको

5. हो सकता है कि यह बात उनसे ईमानवाले कहें, हो सकता है कि यह फ़रिश्तों का कथन हो, हो सकता है कि क़ियामत के अवसर पर इकट्ठे होने के मैदान का सारा वातारण उस समय अपनी स्थिति की ज़बान से यह कह रहा हो, और यह भी हो सकता है कि यह ख़ुद उन लोगों की अपनी ही दूसरी प्रतिक्रिया हो। अर्थात् अपने दिलों में वे अपने आप ही को सम्बोधित करके कहें कि दुनिया में ज़िन्दगी-भर तुम यह समझते रहे कि कोई फ़ैसले का दिन नहीं आना है। अब आ गई तुम्हारी शामत, जिस दिन को झूठलाते थे वही सामने आ गया।
6. इस जगह उपास्यों से मुराद फ़रिश्ते और महापुरुष और नबी नहीं हैं बल्कि दो तरह के उपास्य हैं। एक वे इनसान और शैतान जिनकी अपनी इच्छा और कोशिश यह थी कि लोग अल्लाह को छोड़कर उनकी बन्दगी करें। दूसरे मूर्तियाँ आदि जिनकी पूजा दुनिया में की जाती रही है।

बहकाया, हम ख़ुद बहके हुए थे।"

(33) इस तरह वे सब उस दिन अज़ाब में हिस्सेदार होंगे। (34) हम अपराधियों के साथ यही कुछ किया करते हैं। (35) ये वे लोग थे कि जब इनसे कहा जाता, "अल्लाह के सिवा कोई वास्तविक पूज्य नहीं है" तो ये घमण्ड में आ जाते थे (36) और कहते थे, "क्या हम एक उन्मादी कवि के लिए अपने उपास्यों को छोड़ दें?" (37) हालाँकि वह सत्य लेकर आया था और उसने रसूलों की पुष्टि की थी। (38) (अब उनसे कहा जाएगा कि) तुम निश्चय ही दर्दनाक सज़ा का मज़ा चखनेवाले हो। (39) और तुम्हें जो बदला भी दिया जा रहा है उन्हीं कर्मों का दिया जा रहा है जो तुम करते रहे हो।

(40) मगर अल्लाह के चुने हुए बन्दे (इस बुरे परिणाम से) सुरक्षित होंगे। (41) उनके लिए जानी-बूझी रोज़ी है, (42,43) हर तरह की स्वादिष्ट चीज़ें और नेमत भरी जन्नतें जिनमें वे सम्मानपूर्वक रखे जाएँगे। (44) तख़्तों पर आमने-सामने बैठेंगे। (45) शराब के स्रोतों से प्याले भर-भरकर उनके बीच फिराए जाएँगे। (46) चमकती हुई शराब, जो पीनेवालों के लिए सर्वथा स्वाद होगी। (47) न उनके शरीर की उससे कोई हानि होगी और न उनकी बुद्धि उससे ख़राब होगी। (48) और उनके पास निगाहें बचानेवाली, सुन्दर आँखोंवाली औरतें होंगी, (49) ऐसी नाज़ुक जैसे अण्डे के छिलके के नीचे छिपी हुई झिल्ली।

(50) फिर वे एक दूसरे की ओर रुख़ करके हाल पूछेंगे। (51) उनमें से एक कहेगा, "दुनिया में मेरा एक साथी था (52) जो मुझसे कहा करता था, क्या तुम भी पुष्टि करनेवालों में से हो? (53) क्या वास्तव में जब हम मर चुके होंगे और मिट्टी हो जाएँगे और हड्डियों का पंजर बनकर रह जाएँगे तो हमें बदला और दण्ड दिया जाएगा? (54) अब क्या आप लोग देखना चाहते हैं कि वे साहब अब कहाँ हैं?" (55) यह कहकर ज्यों ही वह झुकेगा तो जहन्नम की गहराई में उसको देख लेगा (56) और उसे सम्बोधित करके कहेगा, "अल्लाह की क़सम, तू तो मुझे तबाह ही कर देनेवाला था। (57) मेरे

7. मूल शब्द यहाँ 'यमीन' इस्तेमाल हुआ है। मुहावरे की दृष्टि से अगर इसको शक्ति और बल के अर्थ में लिया जाए तो अर्थ यह होगा कि तुम अपने ज़ोर से हमको गुमराही की ओर खींच ले गए। अगर इसको शुभ और भलाई के अर्थ में लिया जाए तो मतलब यह होगा कि तुमने हितैषी बनकर हमें धोखा दिया और अगर इसको क़सम के अर्थ में लिया जाए तो इसका अर्थ यह होगा कि तुमने क़समें खा-खाकर हमें सन्तुष्ट किया था कि सत्य वही है जो तुम पेश कर रहे हो।

रब का अनुग्रह साथ न होता तो आज मैं भी उन लोगों में से होता जो पकड़े हुए आए हैं। (58) अच्छा[8] तो क्या अब हम मरनेवाले नहीं है? (59) मौत जो हमें आनी थी वह बस पहले आ चुकी? अब हमें कोई अज़ाब नहीं होना?''

(60) यक़ीनन यही महान सफलता है। (61) ऐसी ही सफलता के लिए कर्म करनेवालों को कर्म करना चाहिए। (62) बोलो, यह आतिथ्य अच्छा है या ज़क़्क़ूम (थूहड़) का पेड़? (63) हमने उस पेड़ को ज़ालिमों के लिए परीक्षा बना दिया है।[9] (64) वह एक पेड़ है जो जहन्नम की तह से निकलता है। (65) उसके गाभे ऐसे हैं जैसे शैतानों के सिर। (66) जहन्नम के लोग उसे खाएँगे और उसी से पेट भरेंगे, (67) फिर उसपर पीने के लिए उनको खौलता हुआ पानी मिलेगा। (68) और इसके बात उनकी वापसी उसी जहन्नम की भड़कती आग की ओर होगी। (69) ये वे लोग हैं जिन्होंने अपने बाप-दादा को पथभ्रष्ट पाया (70) और उन्हीं के पदचिह्न पर दौड़ चले (71) हालाँकि उनसेपहले बहुत-से लोग पथभ्रष्ट हो चुके थे (72) और उनमें हमने चेतावनी देनेवाले रसूल भेजे थे। (73) अब देख लो कि उन सचेत किए जानेवालों का क्या परिणाम हुआ। (74) इस बुरे परिणाम से बस अल्लाह के वही बन्दे बचे हैं जिन्हें उसने अपने लिए ख़ास कर लिया है।

(75) हमको (इससे पहले) नूह ने पुकारा था, तो देखो कि हम कैसे अच्छे जवाब देनेवाले थे। (76) हमने उसको और उसके घरवालों को बड़ी घुटन और बेचैनी से बचा लिया, (77) और उसकी नस्ल ही को बाक़ी रखा, (78) और बाद की नस्लों में उसकी प्रशंसा और सराहना छोड़ दी। (79) सलाम है नूह पर समस्त (सारी) दुनियावालों में। (80) हम नेकी करनेवालों को ऐसा ही बदला दिया करते हैं। (81) वास्तव में वह हमारे ईमानवाले बन्दों में से था। (82) फिर दूसरे गिरोह को हमने डुबो दिया।

8. वर्णन-शैली साफ़ बता रही है कि अपने उस जहन्नमी मित्र से बात करते-करते अचानक यह जन्नती व्यक्ति अपने-आप से बात करने लगता है और ये वाक्य उसके मुँह से इस तरह उच्चारित होते हैं जैसे कोई व्यक्ति अपने-आप से हर उम्मीद और हर अनुमान से उच्चतर हालत में पाकर अत्यन्त विस्मय एवं आश्चर्य और आनन्द के साथ आप ही आप बोल रहा हो।
9. अर्थात् इनकार करनेवाले यह बात सुनकर क़ुरआन पर चोट करने और नबी (सल्ल॰) की हँसी उड़ाने का एक नया अवसर पा लेते हैं। वे इस पर ठट्ठा मारकर कहते हैं, लो अब नई सुनो, जहन्नम की दहकती हुई आग में वृक्ष उगेगा।

(83) और नूह ही के तरीक़े पर चलनेवाला इबराहीम था, (84) जब वह अपने रब की सेवा में भला-चंगा दिल लेकर आया। (85) जब उसने अपने बाप और अपनी क़ौम से कहा, ''ये क्या चीज़ें हैं जिसकी तुम पूजा कर रहे हो? (86) क्या अल्लाह को छोड़कर झूठ घड़े हुए उपास्य चाहते हो? (87) आख़िर अल्लाह सारे जहान के रब के बारे में तुम्हारा क्या गुमान है?''

(88) फिर उसने तारों पर एक निगाह डाली[10] (89) और कहा : मेरी तबीयत ख़राब है।[11] (90) अतएव वे लोग उसे छोड़कर चले गए। (91) उनके पीछे वह चुपके से उनके उपास्यों के मन्दिर में घुस गया और बोला, ''आप लोग खाते क्यों नहीं हैं? (92) क्या हो गया, आप लोग बोलते भी नहीं?'' (93) इसके बाद वह उनपर पिल पड़ा और सीधे हाथ से ख़ूब चोटें मारीं। (94) (वापस आकर) वे लोग भागे-भागे उसके पास आए। (95) उसने कहा, ''क्या तुम अपनी ही तराशी हुई चीज़ों को पूजते हो? (96) हालाँकि अल्लाह ही ने तुमको भी पैदा किया है और उन चीज़ों को भी जिन्हें तुम बनाते हो।'' (97) उन्होंने आपस में कहा कि ''इसके लिए एक अलाव तैयार करो और इसे दहकती हुई आग के ढेर में फेंक दो।'' (98) उन्होंने उसके विरुद्ध एक कार्रवाई करनी चाही थी, मगर हमने उन्हीं को नीचा दिखा दिया।

(99) इबराहीम ने कहा, ''मैं अपने रब की ओर जाता हूँ,[12] वही मेरा पथप्रदर्शन करेगा। (100) ऐ पालनहार, मुझे एक बेटा प्रदान कर जो नेकों में से हो।'' (101) (इस दुआ के उत्तर में) हमने उसको एक सहनशील लड़के की ख़ुशख़बरी दी।[13] (102) वह लड़का जब उसके साथ दौड़-धूप करने की उम्र को पहुँच गया तो (एक दिन) इबराहीम ने उससे कहा, ''बेटा, मैं स्वप्न में देखता हूँ कि मैं तुझे ज़बह कर रहा हूँ, अब तू बता, तेरा क्या विचार है?'' उसने कहा, ''अब्बाजान, जो कुछ आपको आदेश दिया जा रहा है उसे कर डालिए, आप अल्लाह ने चाहा तो मुझे सब्र करनेवालों में से पाएँगे।'' (103) आख़िरकार जब उन दोनों ने अपने-आपको अर्पित कर दिया और

10. अरबी भाषा में ये शब्द मुहावरे के रूप में इस अर्थ में बोला करते हैं कि उसने विचार किया या वह व्यक्ति सोचने लगा।
11. हमें किसी माध्यम से यह मालूम नहीं है कि उस समय हज़रत इबराहीम (अलै॰) को किसी तरह की कोई तकलीफ़ न थी। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि हज़रत इबराहीम (अलै॰) ने सत्य के विपरीत यह बहाना बनाया था।
12. अर्थात् अपने रब के लिए घर और स्वदेश (वतन) छोड़ रहा हूँ।
13. इससे मुराद हज़रत इसमाईल (अलै॰) हैं।

इबराहीम ने बेटे को माथे के बल गिरा दिया (104) और हमने आवाज़ दी कि ''ऐ इबराहीम, (105) तूने स्वप्न सच कर दिखाया।[14] हम नेकी करनेवालों को ऐसा ही बदला देते हैं। (106) यक़ीनन यह एक खुली परीक्षा थी।'' (107) और हमने एक बड़ी क़ुरबानी[15] फ़िदये में देकर उस बच्चे को छुड़ा लिया। (108) और उसकी प्रशंसा और सराहना हमेशा के लिए बाद की नस्लों में छोड़ दी। (109) सलाम है इबराहीम पर। (110) हम नेकी करनेवालों को ऐसा ही बदला देते हैं। (111) यक़ीनन वह हमारे ईमानवाले बन्दों में से था। (112) और हमने उसे इसहाक़ की ख़ुशख़बरी दी,[16] एक नबी नेकों में से। (113) और उसे और इसहाक़ को बरकत दी। अब उन दोनों की सन्तति में से कोई उत्तम कार्य करनेवाला है और कोई अपने आप पर खुला ज़ुल्म करनेवाला है।

(114) और हमने मूसा और हारून पर उपकार किया, (115) उनको और उनकी क़ौम को बड़ी घुटन और बेचैनी से मुक्त किया (116) उन्हें सहायता प्रदान की जिसके कारण वही विजयी रहे, (117) उनको अत्यन्त स्पष्ट किताब प्रदान की, (118) उन्हें सीधा मार्ग दिखाया, (119) और बाद की नस्लों में उनकी शुभ चर्चा बाक़ी रखी। (120) सलाम है मूसा और हारून पर। (121) हम नेकी करनेवालों को ऐसा ही बदला देते हैं, (122) वास्तव में वे हमारे ईमानवाले बन्दों में से थे।

14. चूँकि स्वप्न में यह दिखाया गया था कि ज़बह कर रहे हैं, यह नहीं दिखाया गया था कि जबह कर दिया है, इसलिए जब हज़रत इबराहीम (अलै०) ने ज़बह करने की पूरी तैयारी कर ली तो कहा कि तूने अपना स्वप्न सच कर दिखाया।

15. 'बड़ी क़ुरबानी' से मुराद एक मेंढा है जो उस समय अल्लाह के फ़रिश्ते ने हज़रत इबराहीम (अलै०) के सामने पेश किया ताकि बेटे के बदले उसको ज़बह कर दें। उसे बड़ी क़ुरबानी के शब्द से इसलिए व्यंजित किया गया कि वह इबराहीम (अलै०) जैसे वफ़ादार बन्दे के लिए इबराहीम (अलै०) के सुपुत्र जैसे धैर्यवान और प्राण निछावर करनेवाले लड़के का फ़िदया था। इसके अतिरिक्त उसे 'बड़ी क़ुरबानी' घोषित करने का एक कारण यह भी है कि क़ियामत तक के लिए अल्लाह ने यह प्रथा प्रचलित कर दी कि उसी तिथि को सब ईमानवआले दुनिया भर में जानवर क़ुरबान करें और वफ़ादारी और प्राणोत्सर्ग की इस महान घटना की याद ताज़ा करते रहें।

16. अर्थात् क़ुरबानी की इस घटना के बाद हज़रत इसहाक़ (अलै०) के पैदा होने की ख़ुशख़बरी दी।

(123) और इलयास भी यक़ीनन रसूलों में से था। (124) याद करो जब उसने अपनी क़ौम से कहा था कि ''तुम लोग डरते नहीं हो? (125) क्या तुम बअल को पुकारते हो और सबसे अच्छे स्रष्टा को छोड़ देते हो, (126) उस अल्लाह को जो तुम्हारा और तुम्हारे अगले-पिछले बाप-दादों का रब है?'' (127) मगर उन्होंने उसे झुठला दिया, सो अब यक़ीनन वे सज़ा के लिए पेश किए जानेवाले हैं, (128) सिवाय अल्लाह के उन बन्दों के जिनको ख़ास कर दिया गया था। (129) और इलयास की शुभ चर्चा हमने बाद की नस्लों में बाक़ी रखी। (130) सलाम है इलयास पर। (131) हम नेकी करनेवालों को ऐसा ही बदला देते हैं। (132) वास्तव में वह हमारे ईमानवाले बन्दों में से था।

(133) और लूत भी उन्हीं लोगों में से था जो रसूल बनाकर भेजे गए हैं। (134) याद करो जब हमने उसको और उसके सब घरवालों को छुटकारा दिया, (135) सिवाय एक बुढ़िया के जो पीछे रह जानेवालों में से थी। (136) फिर बाक़ी सबको तहस-नहस कर दिया। (137,138) आज तुम रात-दिन उनके उजड़े क्षेत्र से गुज़रते हो। क्या तुमको समझ नहीं आती?

(139) और यक़ीनन यूनुस भी रसूलों में से था। (140) याद करो जब वह एक भरी नौका की ओर भाग निकला, (141) फिर चिट्ठी (पर्ची) डालने में शरीक हुआ और उसमें मात खाई। (142) आख़िरकार मछली ने उसे निगल लिया और वह

17. इन वाक्यों पर विचार करने से जो वस्तुस्थिति समझ में आती हैं वह यह है कि (1) हज़रत यूनुस (अलै०) जिस नौका में सवार हुए थे वह अपनी गुंजाइश से ज़्यादा भरी हुई थी। (2) चिट्ठी (पर्ची) नौका में डाली गई, और संभवतः उस समय डाली गई जब समुद्री यात्रा के बीच यह महसूस किया कि बोझ की अधिकता के कारण सारे यात्रियों की जान ख़तरे में पड़ गई है। अतः चिट्ठी (पर्ची) इस उद्देश से डाली गई कि जिसका नाम चिट्ठी (पर्ची) डालने से निकले उसे पानी में फेंक दिया जाए। (3) चिट्ठी (पर्ची) डालने पर हज़रत यूनुस (अलै०) ही का नाम निकला अतएव वे समुद्र में फेंग दिए गए और एक मछली ने उन्हें निगल लिया। (4) इस मुसीबत में हज़रत यूनुस (अलै०) इसलिए ग्रस्त हुए कि उन्होंने अपने रब (अर्थात् अल्लाह) की अनुमति के बिना अपने उस स्थान से पलायन किया था जहाँ वे नियुक्त किए गए थे। इसी अर्थ का प्रमाणीकरण 'अ-ब-क़' शब्द से होता है। क्योंकि अरबी भाषा में वह भाग जानेवाले गुलाम के लिए बोला जाता है।

मलामत किया हुआ था।[17] (143) अब अगर वह तसबीह (गुणगान) करनेवालों में से न होता (144) तो क़ियामत के दिन तक उसी मछली के पेट में रहता।[18] (145) आख़िरकार हमने उसे बहुत ही अस्वस्थ दशा में एक चटियल ज़मीन पर फेंक दिया। (146) और उसपर एक लताओंवाला पेड़ उगा दिया। (147) इसके बाद हमने उसे एक लाख, या उससे ज़्यादा लोगों की ओर[19] भेजा, (148) वे ईमान लाए और हमने एक विशेष समय तक उन्हें बाक़ी रखा।

(149) फिर तनिक इन लोगों से पूछो, क्या (इनके दिल को यह बात लगती है कि) तुम्हारे रब के लिए तो हों बेटियाँ और इनके लिए हों बेटे? (150) क्या वास्तव में हमने फ़रिश्तों को औरतें ही बनाया है और ये आँखों देखी बात कह रहे हैं? (151) ख़ूब सुन रखो, वास्तव में ये लोग अपनी मनघड़त से यह बात कहते हैं (152) कि अल्लाह सन्तान रखता है, और वास्तव में ये झूठे हैं। (153) क्या अल्लाह ने बेटों की जगह बेटियाँ अपने लिए पसन्द कर लीं? (154) तुम्हें क्या हो गया है, कैसे हुक्म लगा रहे हो? (155) क्या तुम्हें होश नहीं आता? (156) या फिर तुम्हारे पास अपनी इन बातों के लिए कोई साफ़ सनद है, (157) तो लाओ अपनी वह किताब अगर तुम सच्चे हो।

(158) इन्होंने अल्लाह और फ़रिश्तों[20] के बीच वंश का नाता बना रखा है, हालाँकि फ़रिश्ते ख़ूब जानते हैं कि ये लोग अपराधी के रूप में पेश होनेवाले हैं। (159,160) (और वे कहते हैं कि) ''अल्लाह उन गुणों से मुक्त है जो उसके ख़ालिस बन्दों के सिवा दूसरे लोग उससे सम्बद्ध करते हैं। (161,162) अतः तुम और तुम्हारे ये उपास्य अल्लाह से किसी को फेर नहीं सकते (163) मगर सिर्फ़ उसको जो दोज़ख़ की भड़कती हुई आग में झुलसनेवाला हो। (164) और हमारा हाल तो यह है कि हममें से हर एक का एक स्थान निश्चित है, (165) और हम पंक्तिबद्ध सेवक हैं, (166) और

18. अर्थात् क़ियामत तक मछली का पेट ही हज़रत यूनुस (अलै॰) की क़ब्र बना रहता।

19. ''एक लाख या उससे ज़्यादा'' कहने का अर्थ यह नहीं है कि अल्लाह को उनकी संख्या में सन्देह था, बल्कि इसका मतलब यह है कि अगर कोई उनकी बस्ती को देखता तो यही अन्दाज़ा करता कि उस नगर की आबादी एक लाख से ज़्यादा ही होगी, कम न होगी।

20. यद्यपि शब्द 'जिन्न' इस्तेमाल हुआ है लेकिन आगे के बयान से स्पष्ट है कि इससे मुराद फ़रिश्ते हैं। जिन्न का शाब्दिक अर्थ है गुप्त (अदृश्य) प्राणी।

तसबीह (गुणगान) करनेवाले हैं।''

(167,168) ये लोग पहले तो कहा करते थे कि काश! हमारे पास वह ''ज़िक्र'' (अनुस्मारक) होता जो पिछली क़ौमों को मिला था (169) तो हम अल्लाह के चुने हुए बन्दे होते। (170) मगर (जब वह आ गया तो) इन्होंने उसका इनकार कर दिया। अब जल्द ही इन्हें (इस नीति का परिणाम) मालूम हो जाएगा। (171) अपने भेजे हुए बन्दों से हम पहले ही वादा कर चुके हैं (172) कि यक़ीनन उनकी सहायता की जाएगी (173) और हमारी सेना ही प्रभाव होकर रहेगी। (174) अतः ऐ नबी, तनिक कुछ मुद्दत तक इन्हें इनके हाल पर छोड़ दो (175) और देखते रहो, जल्द ही ये ख़ुद भी देख लेंगे। (176) क्या ये हमारे अज़ाब के लिए जल्दी मचा रहे हैं? (177) जब वह इनके आँगन में उतरेगा तो वह दिन उन लोगों के लिए बहुत बुरा होगा जिन्हें सावधान किया जा चुका है। (178) अतः तनिक इन्हें कुछ मुद्दत के लिए छोड़ दो (179) और देखते रहो, जल्द ही ये ख़ुद देख लेंगे।

(180) पवित्र है तेरा रब, गौरव का स्वामी, उन सभी बातों से जो ये लोग बना रहे हैं। (181) और सलाम है रसूलों पर, (182) और सारी प्रशंसा अल्लाह सारे जहान के रब ही के लिए है।



38. सॉद॰

नाम

आरम्भ ही के अक्षर सॉद॰ को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

जैसा कि आगे चलकर बताया जाएगा कि कुछ उल्लेखों के अनुसार यह सूरा उस समय अवतरित हुई थी जब नबी (सल्ल॰) ने मक्का मुअज़्ज़मा में खुले तौर पर आह्वान का आरम्भ किया था। कुछ दूसरे उल्लेख इसके अवतरण को हज़रत उमर (रज़ि॰) के ईमान लाने के पश्चात् की घटना बताते हैं। एक और उल्लेखों के सिलसिले से ज्ञात होता है कि इसका अवतरणकाल नुबूवत का दसवाँ या ग्यारहवाँ वर्ष है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

इमाम अहमत, नसई और तिरमिज़ी आदि ने जो उल्लेख उद्धृत किएहैं उनका सारांश यह है कि जब अबू तालिब बीमार हुए और क़ुरैश केसरदारों ने महसूस किया कि अब यह इनका अन्तिम समय है, तो उन्होंने आपस में परामर्श किया कि चलकर महाशय से बात करनी चाहिए। वे हमारा और भतीजे का झगड़ा चुका जाएँ तो अच्छा है। इसपर सब सहमत हो गए और क़ुरैश के लगभग 25 सरदार, जिनमें अबू जहल, अबू सुफ़ियान, उमैया बिन ख़ल्फ़, आस बिन वाइल, अस्वद बिन मुत्तलिब, उक़्बा बिन अबी मुऐत, उतबा और शैबा सम्मिलित थे, अबू तालिब के पास पहुँचे। इन लोगों ने पहले तो अपनी सामान्य नीति के अनुसार नबी (सल्ल॰) के विरुद्ध अपनी शिकायतें बयान कीं, फिर कहा कि हम आपके सामने एक न्याय की बात रखने आए हैं। आपका भतीजा हमें हमारे धर्म पर छोड़ दे और हम उसे उसके धर्म पर छोड़ देते हैं। किन्तु वह हमारे उपास्यों का विरोध और उनकी निन्दा न करे। इस शर्त पर आप हमसे उसका समझौता करा दें। अबू तालिब ने नबी (सल्ल॰) को बुलाया और आप (को वह बात बताई जो क़ुरैश के सरदारों ने उनसे कही थी।) नबी (सल्ल॰) ने जवाब में कहा : चचा जान, मैं तो इनके सामने एक ऐसी बातपेश करता हूँ जिसे अगर ये मान लें तो अरब इनके अधीन हो जाएँ और ग़ैर-अरब इन्हें कर (Tax) देने लग जाएँ। उन्होंने पूछा : ''वह बात क्या है?''

आपने कहा : ''ला इला-ह इल्लल्लाह'' (अल्लाह के अतिरिक्त कोई पूज्य नहीं।) इसपर वे सब एक साथ उठ खड़े हुए और वे बातें कहते हुए निकल गए जो इस

सूरा के आरम्भिक भाग में अल्लाह ने उद्धृत की है। इब्न साद के उल्लेख के अनुसार, यह अबू तालिब के मरण-रोग की नहीं, बल्कि उस समय की घटना है जब नबी (सल्ल॰) ने सामान्य रूप से लोगों को सत्य की ओर बुलाना शुरू कर दिया था और मक्का में निरन्तर ये ख़बरे फैलनी शुरू हो गई थी कि आज अमुक व्यक्ति मुसलमान हो गया और कल अमुक। ज़मख़सरी, राज़ी, नेसाबूरी और कुछ दूसरे टीकाकार कहते है कि ये प्रतिनिधि-मंडल अबू तालिब के पास उस समय गया था जब हज़रत उमर (रज़ि॰) के ईमान लाने पर क़ुरैश के सरदार बौखला गए थे। (मानो ये हबशा की हिजरत के पश्चात् की घटना है।)

विषय और वार्ताएँ

ऊपर जिस मजलिस का उल्लेख किया गया है उसकी समीक्षा करते हुए इस सूरा का आरम्भ हुआ। काफ़िरों और नबी (सल्ल॰) की बातचीत को आधार बनाकर अल्लाह ने बतायाहै कि उन लोगों के इनकार का वास्तविक कारण इस्लामी आह्वान की कोई त्रुटि नहीं है, बल्कि उनका अपना अहंकार और ईर्ष्या और अंधानुसरण परदुराग्रह है। इसके बात अल्लाह ने सूरा के आरम्भिक भाग में भी और अन्तिम वाक्यों में भी काफ़िरों को साफ़-साफ़ चेतावनी दी है कि जिस व्यक्ति का तुम आज मज़ाक़ उड़ा रहे हो, निकट समय में वही विजयी होकर रहेगा और वह समय दूर नहीं जब उसके आगे तुम सब नतमस्तक दिखाई दोगे। फिर निरन्तर नौ पैग़म्बरों का उल्लेख करके, जिनमें हज़रत दाऊद (अलै॰) और सुलैमान (अलै॰) का वृत्तान्त अत्यन् विस्तृत है। अल्लाह ने यह बात सुननेवालों के ह्रदयांकित कराई है कि उसका न्याय-विधान बिलकुल निष्पक्ष है। अनुचित बात चाहे कोई भी करे वह उसपर पकड़ता है और उसके यहाँ वही लोग पसन्द किए जाते हैं जो ग़लती पर हठ न करें, बल्कि उससे सचेत होते ही तौबा कर लें। इसके पश्चात् आज्ञाकारी बन्दों और सरकश बन्दों के उस परिणाम का चित्रणकिया गया है जो वे परलोक में देखनेवाले हैं। अन्त में आदम (अलै॰) और इबलीस के क़िस्से का उल्लेख किया गया है और इससे अभीष्ट क़ुरैश के काफ़िरों को यह बताना है कि मुहम्मद (सल्ल॰) के आगे झुकने से जो अहंकार तुम्हें रोक रहा है उसी अहंकार ने आदम के आगे झुकने से इबलीस को रोका था। अतः जो परिणाम इबलीस का होना है वही अन्ततः तुम्हारी भी होना है।



38. सूरा सॉद॰

(मक्का में उतरी–आयतें 88)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1,2) साद, क़सम है नसीहत भरे क़ुरआन की, बल्कि यही लोग, जिन्होंने मानने से इनकार किया है, बड़े अभिमान और दुराग्रह में ग्रस्त हैं।[1] (3) इनसे पहले हम ऐसी कितनी ही क़ौमों को तबाह कर चुके हैं (और जब उनकी शामत आई है) तो वे चीख़ उठे हैं, मगर वह समय बचने का नहीं होता।

(4) इन लोगों को इस बात पर बड़ा ताज्जुब हुआ कि एक डरानेवाला ख़ुद इन्हीं में से आ गया। इनकार करनेवाले कहने लगे कि ''यह जादूगर है, बड़ा झूठा है, (5) क्या इसने सारे ख़ुदाओं कीजगह बस एक ही ख़ुदा बना डाला? यह तो बड़ी अजीब बात है।'' (6) और क़ौमों के सरदार ये कहते हुए निकल गएकि ''चलो और डटे रहो अपने उपास्यों की पूजा पर। यह बात तो किसी और ही उद्देश्य से कही जा रही है।[2] (7) यह बात हमने क़रीब समय के पन्थ में किसी से नहीं सुनी। यह कुछ नहीं है मगर एक मनगढ़त बात। (8) क्या हमारे बीच बस यही एक व्यक्ति रह गया था जिसपर अल्लाह का ज़िक्र (अनुस्मारक) अवतरित कर दिया गया?''

वास्तविकता यह है कि ये मेरे ''ज़िक्र'' (अनुस्मारक) पर शक कर रहे हैं,[3] और ये सारी बातें इसलिए कर रहे हैं कि इन्होंने मेरे अज़ाब का मज़ा चखा नहीं है। (9) क्या तेरे दाता और प्रभुत्वशाली पालनहार की दयालुता के ख़ज़ाने इनके क़ब्ज़े में हैं? (10) क्या ये आसमान और ज़मीन और उनके बीच की चीज़ों के मालिक हैं? अच्छा तोये कारण-कार्य पर आधारित लोक की ऊँचाइयों पर चढ़कर देखें!

1. अर्थात् इन इनकार करनेवालों के इनकार का कारण यह नहीं है कि जो धर्म इनके सामने प्रस्तुत किया जा रहा है उसमें कोई दोष है। बल्कि इसका कारण सिर्फ़ इनका झूठा अहंकार, इनका अज्ञानपूर्ण गर्व और इनकी हठधर्मी है।
2. उनका मतलब यह था कि इस दाल में कुछ काला दिखाई देता है, वास्तव में यह निमंत्रण इस उद्देश्य से दिया जा रहा है कि हम सब मुहम्मद (सल्ल॰) के आदेशाधीन हो जाएँ और ये हमपर अपना हुक्म चलाएँ।
3. दूसरे शब्दों में अल्लाह कहता है कि ऐ मुहम्मद (सल्ल॰) ये लोग वास्तव में तुम्हें नहीं झुठला रहे हैं बल्कि मुझे झुठला रहे हैं। इन्हें शक तुम्हारी सच्चाई पर नहीं है, मेरी शिक्षाओं पर है।

(11) यह तो जत्थों में से एक छोटा-सा जत्था है जो इसी जगह मात खानेवाला है।[4] (12,13) इनसे पहले नूह की क़ौम, और आद और मेख़ोंवाला फ़िरऔन, और समूद, और लूत की क़ौम, और ऐकावाले झुठला चुके हैं। जत्थे वे थे। (14) उनमें से हर एक ने रसूलों को झुठलाया और मेरी यातना का फ़ैसला उसपर चस्पाँ होकर रहा। (15) ये लोग भी बस एक धमाके के इनतिज़ार में हैं जिसके बाद कोई दूसरा धमाका न होगा। (16) और ये कहते हैं कि ऐ हमारे रब, हिसाब के दिन से पहले ही हमारा हिस्सा हमें जल्दी से दे दे।

(17) ऐ नबी, सब्र करो उन बातों पर जो ये लोग बनाते हैं, और इनके सामने हमारे बन्दे दाऊद का क़िस्सा बयान करो जो बड़ी शक्तियों का मालिक था। हर मामले में अल्लाह की तरफ़ रुजू करनेवाला था। (18) हमने पहाड़ों को उसके साथ वशीभूत कर रखा था कि सुबह और शाम वे उसके साथ तसबीह (महिमागान) करते थे। (19) पक्षी सिमट आते, सब के सब उसकी तसबीह (महिमागान) की ओर ध्यान-मग्न हो जाते थे। (20) हमने उसका राज्यसुदृढ़ कर दिया था, उसे तत्त्वज्ञान प्रदान किया था और निर्णायक बात कहने की क्षमता दी थी। (21) फिर तुम्हें कुछ ख़बर पहुँची है उन मुक़द्दमेवालों की जो दीवार चढ़कर उसकी अटारी में घुस आए थे? (22) जब वे दाऊद के पास पहुँचे तो वह उन्हें देखकर घबरा गया। उन्होंने कहा, ''डरिए नहीं, हम मुक़द्दमे के दो फ़रीक़ (पक्ष) हैं जिनमें से एक ने दूसरे पर ज़्यादती की है। आप हमारे बीच ठीक-ठीक हक़ के साथ फ़ैसला कर दीजिए, बेइनसाफ़ी न कीजिए और हमें सन्मार्ग बताइए। (23) यह मेरा भाई है, इसके पास निन्यानवे दुंबियाँ हैं और मेरे पास सिर्फ़ एक ही दुंबी है। इसने मुझसे कहा कि यह एक दुंबी भी मुझे सौंप दे और इसने बातचीत में मुझे दबा लिया।''[5] (24) दाऊद ने जवाब दिया : ''इस व्यक्ति ने अपनी दुंबियों के साथ तेरी दुंबी मिला लेने की माँग करके यक़ीनन तुझपर ज़ुल्म किया, और सच यह है कि मिल-जुलकर साथ रहनेवाले लोग प्रायः एक दूसरे पर ज़्यादतियाँ करते रहते हैं, बस वही लोग

4. 'इसी जगह' का संकेत प्रतिष्ठित मक्का की ओर है। अर्थात् जहाँ ये लोग ये बातें बना रहे हैं, इसी जगह एक दिन ये परास्त होनेवाले हैं और यहीं वह समय आनेवाला है जब ये मुँह लटकाए उसी व्यक्ति के सामने खड़े होंगे जिसे आज ये हीन समझकर नबी मानने से इनकार कर रहे हैं।
5. अभियोक्ता ने यह नहीं कहा कि मेरी दुंबी छीन ली बल्कि यह कहा कि मेरी दुंबी भी मुझसे माँगी और यह चाहा कि मैं वह इसको सौंप दूँ, चूँकि यह उच्च व्यक्तित्व का आदमी है इसलिए मुझपर इसका दबाव पड़ रहा है।

इससे बचे हुए हैं जो ईमान रखते और अच्छे कर्म करते हैं, और ऐसे लोग कम ही हैं।'' (यह बात कहते-कहते) दाऊद समझ गया कि यह तो हमने वास्तव में उसकी आज़माइश की है, अतएव उसने अपने रब से माफ़ी माँगी और सजदे में गिर गया और रुजू कर दिया। (25) तब हमने उसका वह क़ुसूर माफ़ किया[6] और यक़ीनन हमारे यहाँ उसके लिए सामीप्य का स्थान और अच्छा परिणाम है। (26) (हमने उससे कहा) ''ऐ दाऊद, हमने तुझे ज़मीन में ख़लीफ़ा बनाया है, अतः तू लोगों के बीच हक़ के साथ शासन कर और मन की इच्छा का अनुपालन न कर कि, वह तुझे अल्लाह के मार्ग से भटका देगी। जो लोग अल्लाह के मार्ग से भटकते हैं यक़ीनन उनके लिए कठोर सज़ा है कि वे हिसाब के दिन को भूल गए।''

(27) हमने इस आसमान और ज़मीन को, और इस दुनिया को जो उनके बीच हैं, व्यर्थ पैदा नहीं कर दिया है। यह तो उन लोगों का अनुमान है जिन्होंने इनकार किया है, और ऐसे इनकार करनेवालों के लिए बरबादी है जहन्नम की आग से। (28) क्या हम उन लोगों को जो ईमान लाते और अच्छे कर्म करते हैं और उनको जो धरती में बिगाड़ पैदा करनेवाले हैं समान कर दें? क्या डर रखनेवालों को हम दुराचारियों जैसा कर दें? (29)—यह एक बड़ी बरकतवाली किताब है जो (ऐ नबी) हमने तुम्हारी ओर अवतरित की है ताकि ये लोगइसकी आयतों पर विचार करें और बुद्धि और समझ रखनेवाले इससे शिक्षा लें।

(30) और दाऊद को हमने सुलैमान (जैसा बेटा) प्रदान किया, बहुत ही अच्छा बन्दा, अत्यधिक अपने रब की ओर रुजू करनवाला। (31,32,33) उल्लेखनीय है वह अवसर जब शाम के समय उसके सामने बहुत ही सधे हुए घोड़े पेश किए गए तो उसने कहा, ''मैंने इस माल के प्रति प्रेम अपने रब की याद के कारण से अपनाया है।'' यहाँ तक कि जब वे घोड़े निगाह से ओझल हो गए, तो (उसने आदेश दिया कि) उन्हें

6. इससे मालूम हुआ कि हज़रत दाऊद (अलै॰) से क़ुसूर तो ज़रूर हुआ था, और वह कोई ऐसा क़ुसूर था जो दुंबियोंवाले मुक़द्दमें से किसी तरह का मिलता-जुलता था, इसी लिए उसका फ़ैसला सुनाते हुए अचानक उनको ख़याल आया कि यह मेरी आज़माइश हो रही है, लेकिन वह क़ुसूर ऐसा गंभीर न था कि उसे माफ़ न किया जाता, या अगर माफ़ किया जाता तो भी वे अपने ऊँचे पद से गिरा दिए जाते। अल्लाह यहाँ ख़ुद स्पष्ट कर रहा है कि जब उन्होंने सजदे में गिरकर तौबा की तो न सिर्फ़ यह कि उन्हें माफ़ कर दिया गया, बल्कि दुनिया और आख़िरत में उनको जो उच्च स्थान प्राप्त था उसमें भी कोई अन्तर न आया।

मेरे पास वापस लाओ, फिर लगा उनकी पिंडलियों और गरदनों पर हाथ फेरने। (34) और (देखो कि) सुलैमान को भी हमने आज़माइश में डाला और उसकी कुर्सी पर एक धड़ लाकर डाल दिया। फिर उसने रुजू किया (35) और कहा कि ''ऐ मेरे रब, मुझे माफ़ कर दे और मुझे वह बादशाही प्रदान कर जो मेरे बाद किसी के लिए शोभनीय न हो, बेशक तू ही वास्तविक दाता है।''[7] (36) तब हमने उसके लिए हवा को वशीभूत कर दिया जो उसके आदेश से नर्मी के साथ चलती थी जिधर वह चाहता था, (37) और शैतानों को वशीभूत कर दिया, हर तरह के निर्माता और गोताख़ोर (38) और दूसरे जो ज़ंजीरों में जकड़े हुए थे। (39) (हमने उससे कहा) ''यह हमारी बख़्शिश है, तुझे अधिकार है जिसे चाहे दे और जिससे चाहे रोक ले, कोई हिसाब नहीं।'' (40) यक़ीनन उसके लिए हमारे यहाँ सामीप्य-स्थान और अच्छा परिणाम है।

(41) और हमारे बन्दे अय्यूब को याद करो, जब उसने अपने रब को पुकारा कि शैतान ने मुझे तकलीफ़ और अज़ाब में डालदिया है।[8] (42) (हमने उसे आदेश दिया) अपना पाँव ज़मीन पर मार, यह है ठण्डा पानी नहाने के लिए और पीने के लिए। (43) हमने उसे उसके परिजन वापस दिए और उसके साथ उतने ही और, अपनी ओर से दयालुता के रूप में और बुद्धि और समझ रखनेवालों के लिए नसीहत के रूप में।

7. वार्ता-क्रम की दृष्टि से साफ़ मालूम होता है कि इस जगह यह बताना अभीष्ट है कि अल्लाह ने हज़रत दाऊद (अलै॰) और हज़रत सुलैमान (अलै॰) जैसे प्रतिष्ठित नबियों और प्रिय बन्दों को भी पूछताछ किए बिना नहीं छोड़ा है। जिस फ़ितने का यहाँ उल्लेख किया गया है उसका कोई यक़ीनी विवरण हमें मालून नहीं है जिसपर क़ुरआन के सभी टीकाकार सहमत हों। मगर हज़रत सुलैमान (अलै॰) की दुआ के ये शब्द कि ''ऐ मेरे रब, मुझे माफ़ कर दे और मुझको वह बादशाही प्रदान कर जो मेरे बाद किसी के लिए शोभनीय न हो,'' अगर इसराईलियों के इतिहास के प्रकाश में पढ़े जाएँ तो देखने में ऐसा लगता है कि उनके मन में सम्भवतः यह इच्छा थी कि उनके बाद उनका बेटा उत्तराधिकारी हो और राज्य और शासन आगे उन्हीं के वंश में बाक़ी रहे। इसी चीज़ को अल्लाह ने उनके हक़ में 'फ़ितना' (आज़माइश) ठहरा दिया और इसके प्रति वे उस समय सावधान हुए जब उनका उत्तराधिकारी रहुबआम एक ऐसा अयोग्य नव-युवक बनकर उठा जिसके लक्षण साफ़ बता रहे थे कि वह दाऊद (अलै॰) और सुलैमान (अलै॰) का शासन चार दिन भी न सँभाल सकेगा। उनकी कुर्सी पर एक धड़ लाकर डाले जाने का मतलब सम्भवतः यही है कि जिस बेटे को वे अपनी कुर्सी पर बिठाना चाहते थे वह एक अनपड़ कुंदा था।

(44) (और हमने उससे कहा) तिनकों का एक मुट्ठा ले और उससे मार दे, अपनी क़सम न तोड़।[9] हमने उसे सब्र करनेवाला पाया, बहुत ही अच्छा बन्दा, अपने रब की ओर बहुत रुजू करनेवाला।

(45) और हमारे बन्दों, इबराहीम और इसहाक़ और याक़ूब का ज़िक्र करो। बड़ी कार्य-शक्ति रखनेवाले और दूर-दृष्टिवाले लोग थे। (46) हमने उनको एक विशिष्ट गुण के कारणचन लियाथा, और वह आख़िरत के घर की याद थी। (47) यक़ीनन हमारे यहाँ उनकी गणना चुने हुए नेक व्यक्तियों में है। (48) और इसमाईल और अल-यसअ और ज़ुलकिफ़्ल का ज़िक्र करो, ये सब नेक लोगों में से थे।

(49) यह एक ज़िक्र था। (अब सुनो कि) डर रखनेवालों के लिए यक़ीनन अच्छे से अच्छा ठिकाना है, (50) हमेशा रहनेवाली जन्नतें जिनके द्वार उनके लिए ख़ुले होंगे। (51) उनमें वे तकिए लगाए बैठे होंगे, ख़ूब-ख़ूब मेवे और पेय मँगवा रहे होंगे, (52) और उनके पास शरमीली समान उम्रवाली पत्नियाँ होंगी। (53) ये वे चीज़ें हैं जिन्हें

8. इसका मतलब यह नहीं है कि शैतान ने मुझे बीमारी में ग्रस्त कर दिया है और मेरे ऊपर मुसीबतें उतारी दी हैं, बल्कि इसका सही अर्थ यह है कि बीमारी की सख़्ती, धन-दौलत की हानि और स्वजनों और नातेदारों के मुँह मोड़ लेने से मैं जिस तकलीफ़ और अज़ाब में ग्रस्त हूँ उससे बढ़कर तकलीफ़ और अज़ाब मेरे लिए यह है कि शैतान अपने वसवसों से मुझे तंग कर रहा है, वह इन परिस्थितियों में मुझे अपने रब से निराश करने की कोशिश करता है, मुझे अपने रब का नाशुक्रा बनाना चाहता है और इस बात पर लगा हुआ है कि मैं सब्र का दामन हाथ से छोड़ बैठूँ।

9. इन शब्दों पर विचार करने से यह बात साफ़ मालूम होती है कि हज़रत अय्यूब (अलै॰) ने बीमारी की हालत में ग़ुस्सा होकर किसी को मारने की क़सम खा ली थी, (कुछ उल्लेख ये हैं कि पत्नी को मारने की क़सम खाई थी) और इस क़सम ही में उन्होंने यह भी कहा था कि तुझे इतने कोड़े मारूँगा। जब अल्लाह ने उनको पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान किया और बीमारी की हालत का वह गुस्सा दूर हो गया जिसमें यह क़सम खाई गई थी, तो उनको यह परेशानी हुई की क़सम पूरी करता हूँ तो अकारण एक बेगुनाह को मारना पड़ेगा, और क़सम तोड़ता हूँ तो यह भी एक गुनाह करना है। इस मुश्किल से अल्लाह ने उन्हें इस तरह निकाला कि उन्हें हुक्म दिया, एक झाड़ू लो जिसमें उतने ही तिनके हों जितने कोड़े तुमने मारने की क़सम खाई थी, और उस झाड़ू से उस व्यक्ति को बस एक बार मार दो ताकि तुम्हारी क़सम भी पूरी हो जाए और उसे अनुचित तकलीफ़ भी न पहुँचे।

हिसाब के दिन देने का तुमसे वादा किया जा रहा है। (54) यह हमारा दिया हुआ है जो कभी समाप्त होनेवाला नहीं।

(55,56) यह तो है डर रखनेवालों का परिणाम। और सरकशों के लिए अत्यन्त बुरा ठिकाना है जहन्नम, जिसमें वे झुलसे जाएँगे, बहुत ही बुरा आवास। (57,58) यह है उनके लिए, अतः वे मज़ा चखें खौलते हुए पानी और पीप-रक्त और इसी तरह की दूसरी कड़ुवाहटों का। (59,60) (वे जहन्नम की ओर अपने अनुयायियों को आते देखकर आपस में कहेंगे) ''यह एक फ़ौज तुम्हारे पास घुसी चली आ रही है, कोई स्वागत इनके लिए नहीं है, ये आग में झुलसनेवाले हैं'' वे उनको जवाब देंगे, ''नहीं बल्कि तुम ही झुलसे जा रहे हो, कोई स्वागत तुम्हारे लिए नहीं। तुम ही तो यह परिणाम हमारे आगे लाए हो, कैसी बुरी है यह ठहरने की जगह।'' (61) फिर वे कहेंगे, ''ऐ हमारे रब, जिसने हमें इस परिणाम को पहुँचाने की व्यवस्था की उसको दोज़ख़ का दोहरा अज़ाब दे।'' (62) और वे आपस में कहेंगे, ''क्या बात है, हम उन लोगों को कहीं नहीं देखते जिन्हें हम दुनिया में बुरा समझते थे? (63) हमने यूँ ही उनका मज़ाक़ बना लिया था, या वे कहीं निगाहों से ओझल हैं?'' (64) बेशक यह बात सच्ची है, दोज़ख़वालों में यही कुछ झगड़े होनेवाले हैं।

(65) (ऐ नबी) उनसे कहो, ''मैं तो बस सावधान कर देनेवाला हूँ। कोई वास्तविक पूज्य नहीं मगर अल्लाह जो यकता है, सबपर बलशाली, (66) आसमानों और ज़मीन का मालिक और उन सारी चीज़ों का मालिक जो उनके बीच हैं, बलशाली और माफ़ करनेवाला।'' (67,68) इनसे कहो, ''यह एक बड़ी ख़बर है जिसको सुनकर तुम मुँह फेरते हो।''

(69) (इनसे कहो) ''मुझे उस समय की कोई सूचना न थी जब सबसे ऊँचे दरबारवालों (मलए आला) में झगड़ा हो रहा था। (70) मुझको तो प्रकाशना द्वारा ये बातें सिर्फ़ इसलिए बताई जाती हैं कि मैं खुला-खुला सावधान करनेवाला हूँ।'' (71) जब तेरे रब ने फ़रिश्तों से कहा, ''मैं मिट्टी से एक इनसान बनानेवाला हूँ, (72) फिर जब मैं उसे पूरी तरह बना दूँ और उसमें अपनी रूह फूँक दूँ तो तुम उसके आगे सजदे में गिर जाओ।'' (73) इस आदेश के अनुसार फ़रिश्ते सब के सब सजदे में गिर गए, (74) मगर इबलीस ने अपनी बड़ाई का घमण्ड किया और वह इनकार करनेवालों में से हो गया। (75) रब ने कहा, ''ऐ इबलीस, तुझे क्या चीज़ उसको सजदा करने में रोक बनी जिसे मैंने अपने दोनों हाथों से बनाया है? तू बडा बन रहा है या तू है ही कुछ उच्च श्रेणी की हस्तियों में से?'' (76) उसने जवाब दिया, ''मैं इससे अच्छा हूँ, आपने

मुझको आग से पैदा किया है और इसको मिट्टी से।'' (77,78) कहा, ''अच्छा तू यहाँ से निकल जा, तू तिरस्कृत है और तेरे ऊपर बदला दिए जाने के दिन तक मेरी लानत है।'' (79) वह बोला, ''ऐ मेरे रब, यह बात है तो फिर उस समय तक के लिए मुझे मुहलत दे दे जब ये लोग दोबारा उठाए जाएँगे।'' (80,81) कहा, ''अच्छा, तुझे उस दिन तक की मुहलत है जिसका समय मुझे मालूम है।'' (82) उसने कहा, ''तेरे प्रताप की क़सम, मैं इन सब लोगों को बहकाकर रहूँगा, (83) सिवाय तेरे उन बन्दों के जिन्हें तूने ख़ालिस कर लिया है।'' (84,85) कहा, ''तो सत्य यह है, और मैं सत्य ही कहा करता हूँ, कि मैं जहन्नम को तुझसे और उन सब लोगों से भर दूँगा जो इन इनसानों में से तेरा अनुसरण करेंगे।''

(86) (ऐ नबी) इनसे कह दो कि मैं इस सन्देश पहुँचाने (तबलीग) पर तुमसे कोई बदला नहीं माँगता, और न मैं बनावटी लोगों में से हूँ। (87) यह तो एक नसीहत है सारे जहानवालों के लिए। (88) और थोड़ा समय ही गुज़रेगा कि तुम्हें इसका हाल ख़ुद मालूम हो जाएगा।



39. अज़-ज़ुमर

नाम

इस सूरा का नाम आयत 71 और 73 ''वे लोग जिन्होंने इनकार किया था नरक की ओर गिरोह-के-गिरोह (ज़ुमरा) हाँके जाएँगे'' और ''और जो लोग प्रभु की अवज्ञा से बचते थे उन्हें गिरोह के गिरोह (ज़ुमरा) जन्नत की ओर ले जाया जाएगा'' से उद्धृत है। मतलब यह है कि वहा सूरा जिसमें 'ज़ुमर' शब्द आया है।

अवतरणकाल

आयत 10 (और अल्लाह की धरती विशाल है) से इस बात की ओर स्पष्ट संकेत मिलता है कि यह सूरा हबशा की हिजरत से पूर्व अवतरित हुई थी।

विषय और वार्ता

यह पूरी सूरा एक उत्तम और अत्यन्त प्रभावकारी अभिभाषण है जो हबशा की हिजरत से पहले मक्का मुअज़्ज़मा के अत्याचार व हिंसा से परिपूर्ण वातावरण में दिया गया था। इसका सम्बोधन अधिकतर क़ुरैश के काफ़िरों से है, यद्यपि कहीं-कहीं ईमानवालों को भी सम्बोधित किया गया है। इसमें हज़रत मुहम्मद (आप और आपके साथियों पर ईश-कृपा और दया हो) के आह्वान का वास्तविक उद्देश्य बताया गया है और वह यह है कि मानव अल्लाह की विशुद्ध बन्दगी अपनाए और किसी दूसरे के आज्ञापालन और उपासना से अपनी ईशभक्ति को दुषित न करे। इस आधारभूत सिद्धान्त को बार-बार विभिन्न ढंग से प्रस्तुत करते हुए अत्यन्त ज़ोरदार तरीक़े से एकेश्वरवाद की सत्यता और उसे मानने के अच्छे परिणामों, और बहुदेववाद की त्रुटि और उसपर जमे रहने के दुष्परिणामों को स्पष्ट किया गया है और लोगों को आमंत्रित किया गया है कि वे अपनी ग़लत नीति को त्यागकर अपने प्रभु की दयालुता की ओर पलट आएँ. इस सिलसिले में ईमानवालों को आदेश दिया गया है कि यदि अल्लाह की बन्दगी के लिए एक स्थान तंग हो गया है तो उसकी धरती विशाल है, अपने धर्म की रक्षा के लिए किसी और तरफ़ निकल खड़े हो, अल्लाह तुम्हारे धैर्य का प्रतिदान प्रदान करेगा। दूसरी तरफ़ नबी (सल्ल॰) से कहा गया है कि इन काफ़िरों को इस ओर से बिल्कुल निराश कर दो कि उनका अत्याचार कभी तुम्हें इस राह से फेर सकेगा।



39. सूरा अज़-ज़ुमर

(मक्का में उतरी–आयतें 75)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) इस किताब का अवतरण अल्लाह प्रभुत्वशाली और सर्वज्ञ की ओर से है।

(2) (ऐ नबी) यह किताब हमने तुम्हारी ओर सत्य के साथ अवतरित की है, अतः तुम अल्लाह ही की बन्दगी करो दीन (धर्म) को उसी के लिए ख़ालिस (विशिष्ट) करते हुए। (3) जान लो कि ख़ालिस दीन अल्लाह का हक़ है। रहे वे लोग जिन्होंने उसके सिवा दूसरे संरक्षक बना रखे हैं (और अपने इस कर्म का कारण यह बताते हैं कि) हम तो उनकी इबादत सिर्फ़ इसलिए करते हैं कि वे अल्लाह तक हमारी पहुँच करा दें, अल्लाह यक़ीनन उनके बीच उन तमाम बातों का फ़ैसला कर देगा जिनमें वे मतभेद कर रहे हैं। अल्लाह किसी ऐसे व्यक्ति को मार्ग नहीं दिखाता जो झूठा और सत्य का इनकार करनेवाला हो।

(4) अगर अल्लाह किसी को बेटा बनाना चाहता तो अपने पैदा किए हुए में से जिसको चाहता चुन लेता, पाक है वह इससे (कि कोई उसका बेटा हो), वह अल्लाह है अकेला और सब पर प्रभुत्वशाली। (5) उसने आसमानों और ज़मीन को हक़ के साथ पैदा किया है। वही दिन पर रात और रात पर दिन को लपेटता है। उसी ने सूरज और चाँद को इस तरह वशीभूत कर रखा है कि प्रत्येक एक-एक नियत समय तक चले जा रहा है। जान रखो, वह प्रभुत्वशाली है और माफ़ करनेवाला है। (6) उसी ने तुमको एक जान से पैदा किया, फिर वही है जिसने उस जान से उसका जोड़ा बनाया। और उसी ने तुम्हारे लिए चौपायों में से आठ नर और मादा पैदा किए।[1] वह तुम्हारी माओं के पेटों में तीन-तीन अन्धकारमय परदों के भीतर तुम्हें एक के बाद एक रूप देता चला जाता है।[2] यही अल्लाह (जिसके ये कार्य हैं) तुम्हारा रब है, राज उसी का है, कोई पूज्य उसके सिवा नहीं है, फिर तुम किधर से फिराए जा रहे हो?

(7) अगर तुम इनकार करो तो अल्लाह तुमसे बेपरवाह है, लेकिन वह अपने बन्दों के लिए इनकार को पसन्द नहीं करता, और अगर तुम कृतज्ञता दिखाओ तो उसे

1. चौपायों से मुराद हैं ऊँट, गाय, भेड़ और बकरी। उनके चार नर और चार मादा मिलकर आठ नर और मादा होते हैं।
2. तीन परदों से मुराद है पेट, गर्भाशय और वह झिल्ली जिसमें बच्चा लिपटा हुआ होता है।

वह तुम्हारे लिए पसन्द करता है। कोई बोझ उठानेवाला किसी दूसरे का बोझ न उठाएगा। आख़िरकार तुम सबको अपने रब की ओर पलटना है, फिर वह तुम्हें बता देगा कि तुम क्या करते रहे हो, वह तो दिलों का हाल तक जानता है।

(8) इनसान पर जब कोई विपत्ति आती है तो वह अपने रब की ओर रुजू करके उसे पुकारता है। फिर जब उसका रब उसे अपनी नेमत प्रदान कर देता है तो वह उस मुसीबत को भूल जाता है जिसपर वह पहले पुकार रहा था और दुसरों को अल्लाह का समकक्ष ठहराता है ताकि उसकी राह से भटका दे। (ऐ नबी) उससे कहो कि थोड़े दिन अपने इनकार से आनन्द ले ले, यक़ीनन तू दोज़ख़ में जानेवाला है। (9) (क्या इस व्यक्ति की नीति अच्छी है या उस व्यक्ति की) जो आज्ञाकारी है, रात की घड़ियों में खड़ा रहता और सजदे करता है, आख़िरत से डरता और अपने रब की दयालुता से आस लगाता है? इनसे पूछो, क्या जाननेवाले और न जाननेवाले दोनों कभी समान हो सकते हैं? नसीहत तो बुद्धिमान ही क़बूल करते हैं।

(10) (ऐ नबी) कहो कि ऐ मेरे बन्दो जो ईमान लाए हो, अपने रब से डरो। जिन लोगों ने इस दुनिया में अच्छी नीति अपनाई है उनके लिए भलाई है। और अल्लाह की ज़मीन विशाल है,[3] सब्र करनेवालों को तो उनका बदला बेहिसाब दिया जाएगा।

(11) (ऐ नबी) इनसे कोह, मुझे आदेश दिया गया है कि दीन (धर्म) को अल्लाह के लिए ख़ालिस (विशुद्ध) करके उसकी बन्दगी करूँ, (12) और मुझे आदेश दिया गया है कि सबसे पहले मैं ख़ुद मुसलिम (आज्ञाकारी) बनूँ। (13) कहो, अगर मैं अपने रब की अवज्ञा करूँ तो मुझे एक बड़े दिन के अज़ाब का भय है। (14) कह दो कि मैं तो अपने दीन को अल्लाह के लिए ख़ालिस करके उसी की बन्दगी करूँगा, (15) तुम उसके सिवा जिस-जिसकी बन्दगी करना चाहो करते रहो। कहो, असल दिवालिए तो वही हैं जिन्होंने क़ियामत के दिन अपने आपको और अपने लोगों और परिवारवालों को घाटे में डाल दिया। ख़ूब सुन रखो, यही खुला दिवाला है। (16) उनपर आग की छतरियाँ ऊपर से भी छाई होंगी और नीचे से भी। यह वह परिणाम है जिससे अल्लाह अपने बन्दों को डराता है, अतः ऐ मेरे बन्दो, मेरे ग़ज़ब से बचो। (17) इसके विपरीत जिन लोगों ने बढ़े हुए सरकश (ताग़ुत) की बन्दगी से मुँह फेर लिया और अल्लाह की ओर रुजू कर लिया उनके लिए शुभ-सूचना है। अतः (ऐ नबी) ख़ुशख़बरी

3. अर्थात् अगर एक शहर या क्षेत्र या देश अल्लाह की बन्दगी करनेवालों के लिए तंग हो गया है तो दूसरी जगह चले जाओ जहाँ यह कठिनाइयाँ न हों।

दे दो मेरे उन बन्दों को (18) जो बात को ध्यान से सुनते हैं और उसके अच्छे से अच्छे पहलू का अनुपालन करते हैं। ये वे लोग हैं जिनको अल्लाह ने सन्मार्ग दिखाया है और यही बुद्धिमान हैं।

(19) (ऐ नबी) उस व्यक्ति को कौन बचा सकता है जिसपर अज़ाब का फ़ैसला चस्पाँ हो चुका हो? क्या तुम उसे बचा सकते हो जो आग में गिर चुका हो? (20) अलबत्ता जो लोग अपने रब से डरकर रहें उनके लिए ऊँची इमारतें हैं मंज़िल पर मंज़िल बनी हुई, जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी। यह अल्लाह का वादा है, अल्लाह कभी अपने वादे का उल्लंघन नहीं करता।

(21) क्या तुम नहीं देखते कि अल्लाह ने आसमान से पानी बरसाया, फिर उसको स्रोतों और निर्झरों और नदियों के रूप में[4] ज़मीन में प्रवाहित किया, फिर उस पानी के द्वारा वह तरह-तरह की खेतियाँ निकालता है जिनकी क़िस्में विभिन्न हैं, फिर वे खेतियाँ पककर सूख जाती हैं, फिर तुम देखते हो कि वे पीली पड़ गई, फिर आख़िरकार अल्लाह उनको भुस बना देता है। वास्तव में इसमें एक शिक्षा है बुद्धिमानों के लिए। (22) अब क्या वह व्यक्ति जिसका सीना अल्लाह ने इस्लाम के लिए खोल दिया और वह अपने रब की ओर से एक रौशनी पर चल रहा है (उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जिसने इन बातों से कोई शिक्षा ग्रहण न की?। तबाही है उन लोगों के लिए जिनके दिल अल्लाह की नसीहत से और ज़्यादा कठोर हो गए। वे खुली गुमराही में पड़े हुए हैं।

(23) अल्लाह ने सर्वोत्तम वाणी अवतरित की है, एक ऐसी किताब जिसके सभी अंशपरस्पर मिलते-जुलते हैं और जिसमें बार-बार विषय-विवरण दोहराए गए हैं। उसे सुनकर उन लोगों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं जो अपने रब से डरनेवाले हैं, और फिर उनके शरीर और उनके दिल नरम होकर अल्लाह की याद की ओर उन्मुख हो जाते हैं। यह अल्लाह का मार्ग-प्रदर्शन है जिससे वह सन्मार्ग पर ले आता है जिसे चाहता है। और जिसे अल्लाह ही रास्ता न दिखाए उसके लिए फिर कोई मार्गदर्शन नहीं है। (24) अब उस व्यक्ति की दुर्दशा का तुम क्या अनुमान कर सकते हो जो क़ियामत के दिन अज़ाब की सख़्त मार अपने मुँह पर लेगा? ऐसे ज़ालिमों से तो कह दिया जाएगा कि अब चखो मज़ा उस कमाई का जो तुम करते रहे थे। (25) इनसे पहले भी बहुत-से लोग इसी तरह झुठला चुके हैं। आख़िर उनपर अज़ाब ऐसे रुख़ से आया जिधर उनका ख़याल भी नहीं जा सकता था। (26) फिर अल्लाह ने उनको दुनिया ही की ज़िन्दगी में रुसवाई का मज़ा

4. असल में शब्द 'यनाबीअ' इस्तेमाल हुआ है जो इन तीनों चीज़ों के लिए आता है।

चखाया, और आख़िरत (परलोक) का अज़ाब तो उससे बढ़कर है, काश! ये लोग जानते।

(27) हमने इस क़ुरआन में लोगों को तरह-तरह की मिसालें दी हैं कि ये होश में आएँ. (28) ऐसा क़ुरआन जो अरबी भाषा में है, जिसमें कोई टेढ़ नहीं है, ताकि ये बुरे परिणाम से बचें। (29) अल्लाह एक मिसाल देता है। एक व्यक्ति तो वह है जिसके मालिक होने में बहुत-से दुःशील स्वामी साझी हैं जो उसे अपनी-अपनी ओर खींचते हैं और दूसरा व्यक्ति पूरा का पूरा एक ही स्वामी का दास है। क्या इन दोनों का हाल एक-सा हो सकता है?—प्रशंसा अल्लाह के लिए है, मगर ज़्यादातर लोग नादानी में पड़े हुए[5] हैं। (30) (ऐ नबी) तुम्हें भी मरना है और इन लोगों को भी मरना है। (31) आख़िरकार क़ियामत के दिन तुम सब अपने रब के सामने अपना-अपना मुक़द्दमा पेश करोगे। (32) फिर उस व्यक्ति से बड़ा ज़ालिम कौन होगा जिसने अल्लाह पर झूठ बाँधा और जब सच्चाई उसके सामने आई तो उसे झुठला दिया। क्या ऐसे लोगों के लिए जहन्नम में कोई ठिकाना नहीं है? (33) और जो व्यक्ति सच्चाई लेकर आया और जिन्होंने उसको सच माना, वही अज़ाब से बचनेवाले हैं। (34) उन्हें अपने रब के यहाँ वह सब कुछ मिलेगा जिसकी वे इच्छा करेंगे। यह है नेकी करनेवालों का बदला, (35) ताकि जो निकृष्टतम कर्म उन्होंने किए थे उन्हें अल्लाह उनके हिसाब से निकाल दे और जो उत्तम कर्म वे करते रहे उनके अनुसार उनको बदला प्रदान करे।

(36) (ऐ नबी) क्या अल्लाह अपने बन्दे के लिए काफ़ी नहीं है? ये लोग उसके सिवा दूसरों से तुमको डराते हैं। हालाँकि अल्लाह जिसे गुमराही में डाल दे उसे कोई रास्ता दिखानेवाला नहीं है (37) और जिसे वह सन्मार्ग दिखाए उसे भटकानेवाला भी कोई नहीं। क्या अल्लाह प्रभुत्वशाली और बदला लेनेवाला नहीं है? (38) इन लोगों से अगर तुम पूछो कि ज़मीन और आसमानों को किसने पैदा किया है तो वे ख़ुद कहेंगे कि अल्लाह ने। इनसे पूछो, जब वास्तविकता यह है तो तुम्हारा क्या विचार है कि अगर अल्लाह मुझे कोई हानि पहुँचाना चाहे तो क्या तुम्हारी ये देवियाँ, जिन्हें तुम अल्लाह को छोड़कर पुकारते हो, मुझे उसकी पहुँचाई हुई हानि से बचा लेगी? या अल्लाह मुझपर दयालुता दर्शाना चाहे तो क्या ये उसकी दयालुता को रोक सकेंगी? बस इनसे कह दो कि मेरे लिए अल्लाह ही काफ़ी है, भरोसा करनेवाले उसी पर भरोसा करते हैं। (39,40) इनसे साफ़ कहो कि ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, तुम अपनी जगह अपना काम किए जाओ, मैं अपना काम करता रहूँगा, जल्द ही तुम्हें मालूम हो जाएगा कि किस पर अपमानजनक अज़ाब आता है और किसे वह सज़ा मिलती है जो कभी टलनेवाली नहीं।'' (41) (ऐ

नबी) हमने सारे इनसानों के लिए यह किताब हक़ के साथ तुमपर उतार दी है। अब जो सीधा मार्ग अपनाएगा अपने लिए अपनाएगा और जो भटकेगा उसके भटकने का वबाल उसी पर होगा, तुम उनके ज़िम्मेदार नहीं हो।

(42) वह अल्लाह ही है जो मौत के समय रूहों (प्राणों) को ग्रस्त लेता है और जो अभी नहीं मरा है उसके प्राण नींद में ग्रस्त लेता है, फिर जिसपर वह मौत का फ़ैसला लागू करता है उसे रोक लेता है और दूसरों की आत्माओं को एक नियत समय के लिए वापस भेज देता है। इसमें बड़ी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो सोच-विचार करनेवाले हैं। (43) क्या उस अल्लाह को छोड़कर इन लोगों ने दूसरों को सिफ़ारिशी बना रखा है?[6] इनसे कहो, क्या वे सिफ़ारिश करेंगे चाहे उनके अधिकार में कुछ हो न हो और वे समझते भी न हों? (44) कहो, सिफ़ारिश सारी की सारी अल्लाह के अधिकार में है।[7] आसमानों और ज़मीन की बादशाही का वही मालिक है। फिर उसी की ओर तुम पलटाए जानेवाले हो।

(45) जब अकेले अल्लाह का ज़िक्र किया जाता है तो आख़िरत को न माननेवालों के दिल कुढ़ने लगते हैं, और जब उसके सिवा दूसरों का ज़िक्र होता है तो

5. अर्थात् एक स्वामी की दासता और बहुत-से स्वामियों की दासता का अन्तर तो ख़ूब समझ लेते हैं मगर एक ईश्वर की दासता और बहुत से ईश्वरों का अनतर जब समझाने की कोशिश की जाती है तो नादान बन जाते हैं।
6. अर्थात् एक तो इन लोगों ने अपने तौर पर स्वयं ही यह कल्पना कर ली कि कुछ हस्तियाँ अल्लाह के यहाँ बड़ी शक्तिशाली हैं जिनकी सिफ़ारिश किसी तरह टल नहीं सकती, हालाँकि उनके सिफ़ारिशी होने पर न कोई प्रमाण है, न अल्लाह ने कभी यह कहा कि उनको मेरे यहाँ यह पद प्राप्त है, और न ख़ुद उन हस्तियों ने कभी यह दावा किया कि हम अपनी शक्ति से तुम्हारे सारे काम बनवा देंगे। इसपर और मूर्खता इन लोगों की यह है कि असल मालिक को छोड़कर उन काल्पनिक सिफ़ारिशियों ही को सब कुछ समझ बैठे हैं और इनके सारे भक्ति-भाव उन्हीं के लिए अर्पित हैं।
7. अर्थात् किसी का यह ज़ोर नहीं है कि अल्लाह के सामने ख़ुद सिफ़ारिशी बनकर उठ ही सके, कहाँ यह कि अपनी सिफ़ारिश मनवा लेने की ताक़त भी उसमें हो। यह बात तो बिलकुल अल्लाह के अधिकार में है कि जिसे चाहे सिफ़ारिश की अनुमति दे और जिसे चाहे न दे। और जिसके हक़ में चाहे किसी को सिफ़ारिश करने दे और जिसके हक़ में चाहे न करने दे।

अचानक वे ख़ुशी से खिल उठते हैं।[8] (46) कहो, ऐ अल्लाह, आसमानों और ज़मीन के पैदा करनेवाले, प्रत्यक्ष और परोक्ष के जाननेवाले, तू ही अपने बन्दों के बीच उस चीज़ का फ़ैसला करेगा जिसमें वे विभेद करते रहे हैं। (47) अगर इन ज़ालिमों के पास ज़मीन का सारा धन भी हो, और उतना ही और भी, तो ये क़ियामत के दिन के बुरे अज़ाब से बचने के लिए सब कुछ मुक्ति प्रतिदान (फ़िदया) के रूप में देने के लिए तैयार हो जाएँगे। वहाँ अल्लाह की तरफ़ से इनके सामने वह कुछ आएगा जिसका इन्होंने कभी अनुमान ही नहीं किया है। (48) वहाँ अपनी कमाई के सारे बुरे परिणाम इनपर खुल जाएँगे और वही चीज़ इनपर छा जाएगी जिसकी ये हँसी उड़ाते रहे हैं।

(49) यही इनसान जब ज़रा-सी मुसीबत इसे छू जाती है तो हमें पुकारता है, और जब हम इसे अपनी ओर से नेमत देकर तृप्त कर देते हैं तो कहता है कि यह तो मुझे ज्ञान के कारण दिया गया है! नहीं, बल्कि यह परीक्षा है, मगर इनमें से ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं। (50) यही बात इनसे पहले गुज़रे हुए लोग भी कह चुके हैं, मगर जो कुछ वे कमाते थे वह उनके किसी काम न आया। (51) फिर अपनी कमाई के बुरे परिणाम उन्होंने भुगते, और इन लोगों में से भी जो ज़ालिम हैं वे जल्द ही अपनी कमाई के बुरे परिणाम भुगतेंगे, ये हमें निरुपाय कर देनेवाले नहीं हैं। (52) और क्या इन्हें मालूम नहीं है कि अल्लाह जिसकी चाहता है रोज़ी कुशादा कर देता है और जिसकी चाहता है तंग कर देता है? इसमें निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो ईमान लाते हैं।

(53) (ऐ नबी) कह दो कि ऐ मेरे बन्दो,[9] जिन्होंने अपनी जानों पर ज़्यादती की है, अल्लाह की दयालुता से निराश न हो जाओ, यक़ीनन अल्लाह सारे गुनाह माफ़ कर देता है, वह तो अत्यन्त क्षमाशील, दयावान् है, (54) पलट आओ अपने रब की ओर और आज्ञाकारी बन जाओ उसके इससे पहले कि तुमपर अज़ाब आ जाए और फिर कहीं से तुम्हें सहायता न मिल सके। (55) और अनुपालन में लग जाओ अपने रब की

8. यह बात लगभग सारी दुनिया के बहुदेववादी मनोवृत्ति रखनेवालों में समान रूप से पाई जाती है, यहाँ तक कि मुसलमानों में भी जिन अभागों को यह रोग लग गया है वे भी इस दोष से बचे हुए नहीं हैं। ज़बान से कहते हैं कि हम अल्लाह को मानते हैं लेकिन हालत यह है कि अकेले अल्लाह का ज़िक्र कीजिए तो उनके चेहरे बिगड़ने लगते हैं। कहते हैं, ज़रूर यह व्यक्ति बुज़ुर्गों और औलिया को नहीं मानता, तभी तो बस अल्लाह ही अल्लाह की बातें किए जाता है। और अगर दूसरों का ज़िक्र किया जाए तो उनके दिलों की कली खिल जाती है और प्रफुल्लता से उनके चेहरे दमकने लगते हैं।

भेजी हुई किताब के सबसे अच्छे पहलू के[10] इससे पहले कि तुमपर अचानक अज़ाब आ जाए और तुमको ख़बर भी न हो। (56) कहीं ऐसा न हो कि बाद में कोई व्यक्ति कहे, ''अफ़सोस मेरी उस कोताही पर जो मैं अल्लाह के हक़ में करता रहा, बल्कि मैं तो उलटा हँसी उड़ानेवालों में शामिल था।'' (57) या कहे, ''काश! अल्लाह ने मुझे सन्मार्ग दिखाया होता तो मैं भी डर रखनेवालों में से होता। (58) या अज़ाब देखकर कहे, ''काश! मुझे एक अवसर और मिल जाए और मैं भी अच्छे कर्म करनेवालों में शामिल हो जाऊँ।'' (59) (और उस समय उसे यह जवाब मिले कि) ''क्यों नहीं, मेरी आयतें तेरे पास आ चुकी थीं, फिर तूने उन्हें झुठलाया और घमण्ड किया और तू इनकार करनेवालों में से था।'' (60) आज जिन लोगों ने अल्लाह पर झूठ बाँधे हैं क़ियामत के दिन तुम देखोगे कि उनके मुँह काले होंगे। क्या जहन्नम में अहंकारियों के लिए काफ़ी जगह नहीं है? (61) इसके विपरीत जिन लोगों ने यहाँ डर रखा है उनकी सफलता-उपक्रम के कारण अल्लाह उन्हें मुक्ति प्रदान करेगा, उनको न कोई कष्ट एवं हानि पहुँचेगी और न वे ग़मगीन होंगे।

(62) अल्लाह हर चीज़ का पैदा करनेवाला है और वही हर चीज़ पर निगहबान

9. कुछ लोगों ने इन शब्दों का यह अजीब अर्थ लिया है कि अल्लाह ने नबी (सल्ल०) को ख़ुद ''ऐ मेरे बन्दो'' कहकर लोगों को सम्बोधित करने का आदेश दिया है अतः सारे इनसान नबी (सल्ल०) के बन्दे हैं। यह वास्तव में एक ऐसा अर्थ-प्रतिपादन है जिसे अर्थ-प्रतिपादन नहीं बल्कि क़ुरआन का अर्थ से अनर्थ करने का बड़ा ही बुरा रूप और अल्लाह की वाणी के साथ खेल कहना चाहिए। यह अर्थ प्रतिपादन अगर सही हो तो फिर पूरा क़ुरआन ग़लत हुआ जाता है क्योंकि क़ुरआन तो शुरू से आख़िर तक इनसानों को सिर्फ़ अल्लाह का बन्दा ठहराता है, और उसका सारा निमंत्रण ही यह है कि तुम एक अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करो।

10. अल्लाह की किताब के अच्छे से अच्छे पहलू का अनुपालन करने का अर्थ यह है कि अल्लाह ने जिन कामों का आदेश दिया है आदमी उनका पालन करे, जिन कामों में उसने रोका है उनसे बचे, और उपमाओं और वृत्तान्तों एवं कथाओं में जो कुछ उसने कहा है उससे शिक्षा और नसीहत हासिल करे। इसके विपरीत जो व्यक्ति आदेश से मुँह मोड़ता है, अवैध घोषित कार्य करता है और अल्लाह के सदुपदेश और नसीहत से कोई प्रभाव ग्रहन नहीं करता वह अल्लाह की किताब के निकृष्टतम पहलू को अपनाता है, अर्थात् वह पहलू ग्रहण करता है जिसे अल्लाह की किताब निकृष्टतम ठहराती है।

है। (63) ज़मीन और आसमानों के ख़ज़ानों की कुंजियाँ उसी के पास हैं। और जो लोग अल्लाह की आयतों का इनकार करते हैं वही घाटे में रहनेवाले हैं। (64) (ऐ नबी) इनसे कहो, ''फिर क्या ऐ अज्ञानियो, तुम अल्लाह के सिवा किसी और की बन्दगी करने के लिए मुझसे कहते हो?'' (65) (यह बात तुम्हें उनसे साफ़ कह देनी चाहिए क्योंकि) तुम्हारी ओर और तुमसे पहले गुज़रे हुए सारे नबियों की ओर यह प्रकाशना भेजी जा चुकी है कि अगर तुमने शिर्क किया तो तुम्हारा सारा कर्म व्यर्थ हो जाएगा और तुम घाटे में रहोगे। (66) अतः (ऐ नबी) तुम बस अल्लाह ही की बन्दगी करो और कृतज्ञ बन्दों में से हो जाओ।

(67) इन लोगों ने अल्लाह की क़द्र ही न की जैसा कि उसकी क़द्र करने का हक़ है। (उसकी पूर्ण सामर्थ्य का हाल तो यह है कि) क़ियामत के दिन सारी ज़मीन उसकी मुट्ठी में होगी और आसमान उसके दाहिने हाथ में लिपटे हुए होंगे।[11] पाक और सर्वोच्च है वह उस शिर्क (बहुदेववाद) से जो ये लोग करते हैं। (68) और उस दिन सूर (नरसिंघा) फूँका जाएगा और वे सब मरकर गिर जाएँगे जो आसमानों और ज़मीन में हैं सिवाय उनके जिन्हें अल्लाह ज़िन्दा रखना चाहे। फिर एक दूसरा सूर (नरसिंघा) फूँका जाएगा और अचाानक सब के सब उठकर देखने लगेंगे। (69) ज़मीन अपने रब के नूर से चमक उठेगी, कर्म-पत्रिका लाकर रख दी जाएगी, नबियों और सारे गवाहों को उपस्थित कर दिया जाएगा, लोगों के बीच ठीक-ठीक हक़ के साथ फ़ैसला कर दिया जाएगा, उनपर कोई ज़ुल्म न होगा (70) और प्रत्येक जीव को जो कुछ भी उसने कर्म किया था उसका पूरा-पूरा बदला दे दिया जाएगा। लोग जो कुछ भी करते हैं अल्लाह उसको ख़ूब जानता है।

(71) (इस फ़ैसले के बाद) वे लोग जिन्होंने इनकार किया था जहन्नम की ओर

11. ज़मीन और आसमान पर अल्लाह के पूर्ण प्रभुत्व और अधिकार की तस्वीर खींचने के लिए मुट्ठी में होने और हाथ पर लिपटे होने का रूपक प्रयोग में लाया गया है। जिस तरह एक आदमी किसी छोटी-सी गेंद को मुट्ठी में दबा लेता है और उसके लिए यह एक साधारण काम है, या एक व्यक्ति एक रूमाल को लपेटकर हाथ में ले लेता है और उसके लिए यह कोई दुस्साध्य कार्य नहीं होता, उसी तरह क़ियामत के दिन सारे इनसान (जो आज अल्लाह की महानता और बड़ाई का अन्दाज़ा करने में असमर्थ हैं) अपनी आँखों से देख लेंगे कि ज़मीन और आसमान अल्लाह के सामर्थ्यवान हाथ मेंएक तुच्छ गेंद और एक अत्यन्त छोटे-से रूमाल की तरह हैं।

गिरोह के गिरहो हाँके जाएँगे, यहाँ तक कि जब वे वहाँ पहुँचेंगे तो उसके दरवाज़े खोले जाएँगे और उसके कार्यकर्ता उनसे कहेंगे, ''क्या तुम्हारे पास तुम्हारे अपने लोगों में से ऐसे रसूल नहीं आए थे जिन्होंने तुमको तुम्हारे रब की आयतें सुनाई हो और तुम्हें इस बात से डराया हो कि एक समय तुम्हें यह दिन भी देखना होगा?'' वे जवाब देंगे, ''हाँ, आए थे, मगर अज़ाब का फ़ैसला इनकार करनेवालों पर चिपक गया।'' (72) कहा जाएगा, दाख़िल हो जाओ जहन्नम के दरवाज़ों में, यहाँ अब तुम्हें हमेशा रहना है, बड़ा ही बुरा ठिकाना है यह अहंकारियों के लिए।

(73,74) और जो लोग अपने रब की अवज्ञा से बचते थे उन्हें गिरोह के गिरोह जन्नत की ओर ले जाया जाएगा। यहाँ तक कि जब वे वहाँ पहुँचेंगे, और उसके द्वार पहले ही खोले जा चुके होंगे, तो उनके प्रहरी उनसे कहेंगे, ''सलाम हो तुमपर, बहुत अच्छे रहे, दाख़िल हो जाओ इसमें सदा के लिए।'' और वे कहेंगे, ''शुक्र है उस अल्लाह का जिसने हमारे साथ अपना वादा सच कर दिखाया और हमको ज़मीन का वारिस बना दिया, अब हम जन्नत में जहाँ चाहे अपनी जगह बना सकते हैं।'' अतः उत्तम प्रतिदान है कर्म करनेवालों के लिए।

(75) और तुम देखोगे कि फ़रिश्ते सिंहासन के चारों ओर घेरा बनाए हुए अपने रब की स्तुति और तसबीह कर रहे होंगे। और लोगों के बीच ठीक-ठीक हक़ के साथ फ़ैसला चुका दिया जाएगा, और पुकार दिया जाएगा कि प्रशंसा है अल्लाह सारे संसार के रब के लिए।



40. अल-मोमिन

नाम

आयत 28 के वाक्यांश - ''फ़िरऔन के लोगों में से एक ईमान रखनेवाला (अल-मोमिन) व्यक्ति बोल उठा,'' से उद्धृत है अर्थात् वह सूरा जिसमें उस विशेष ईमानवाले (मोमिन) का उल्लेख हुआ है।

अवतरणकाल

इब्ने अब्बास (रज़ि॰) और जाबिर इब्ने ज़ैद (रज़ि॰) का बयान है कि यह सूरा ज़ुमर के पश्चात् संसर्गतः अवतरित हुई है और इसका जो स्थान क़ुरआन मजीद के वर्तमान क्रम में है वही क्रम अवतरण के अनुसार भी है।

अवतरण की परिस्थितियाँ

जिन परिस्थितियों में यह सूरा अवतरित हुई है, उनकी ओर स्पष्ट संकेत इसकी वार्ता में पाए जाते हैं। मक्का के काफ़िरों ने उस समय नबी (सल्ल॰) के विरुद्ध दो प्रकार की कार्रवाइयाँ शुरू कर रखी थीं। एक यह कि हर तरफ़ झगड़े और विवाद छेड़कर और नित नए मिथ्यारोपण द्वारा क़ुरआन की शिक्षा और इस्लाम के आह्वान और स्वयं नबी (सल्ल॰) के विषय में अधिक से अधिक संदेह और वसवास (बुरे विचार) लोगों के दिलों में पैदा कर दिए जाएँ। दूसरे यह कि आपको क़त्ल कर देने के लिए वातावरण बनाया जाए। अतएव वे इस उद्देश्य के लिए निरन्तर षड्यंत्र कर रहे थे।

विषय और वार्ताएँ

परिस्थिति के इन दोनों पहलुओं को अभिभाषण के आरम्भ ही में स्पष्ट कर दिया गया है और आगे का सम्पूर्ण अभिभाषण इन्हीं दोनों की एक अत्यन्त प्रभावकारी और शिक्षाप्रद समीक्षा है। क़त्ल के षड्यंत्र के जवाब में फ़िरऔनियों में से एक मोमिन व्यक्ति का वृत्तान्त प्रस्तुत किया गया है (आयत 23 से लेकर 55 तक)। और इस वृत्तान्त के रूप में तीन गिरोहों को तीन भिन्न शिक्षाएँ दी गई हैं :

(1) काफ़िरों को बताया गया कि जो कुछ तुम मुहम्मद (सल्ल॰) के साथ करना चाहते हो, यही कुछ अपनी ताक़त के भरोसे पर फ़िरऔन हज़रत मूसा (अलै॰) के साथ करना चाहता था। अब क्या ये हरकतें करके तुम भी उसी परिणाम को देखना चाहते हो, जिस परिणाम को उसे देखना पड़ा था?

(2) मुहम्मद (सल्ल॰) और उनके अनुयायियों को शिक्षा दी गई है कि (इन

ज़ालिमों की बड़ी से बड़ी भयानक धमकी) के जवाब में बस अल्लाह की पनाह माँग लो और इसके बाद बिलकुल निर्भय होकर अपने काम में लग जाओ। इस तरह अल्लाह के भरोसे ख़तरों और आशंकाओं से बेपरवाह होकर काम करोगे तो अन्ततः उसकी मदद आकर रहेगी, आज के फ़िरऔन भी वही कुछ देख लेंगे जो कल के फ़िरऔन देख चुके हैं।

(3) इन दोनों गिरोहों के अतिरिक्त एक तीसरा गिरोह भी समाज में मौजूद था और वह उन लोगों का गिरोह था जो मन में जान चुके ते कि सत्य मुहम्मद (सल्ल॰) ही के साथ है। किन्तु यह जान लेने के बावजूद वे चुपचाप सत्य और असत्य के इस संघर्ष का तमाशा देख रहे थे। अल्लाह ने इस अवसर पर उनकी अन्तरात्मा को झकझोरा है और उन्हें बताया है कि जब सत्य के शत्रु खुल्लम-खुल्ला तुम्हारी आँखों के सामने इतना बड़ा अत्याचारपूर्ण क़दम उठाने पर तुल गएहैं तो अफ़सोस है तुम पर यदि अब भी तुम बैठे तमाशा ही देखते रहो। इस हालत में जिस व्यक्ति की अन्तरात्मा बिलकुल मर न चुकी हो उसे तो उठकर वह कर्तव्य निभाना चाहिए जो फ़िरऔन के भरे दरबार में उसके अपने दरबारियों में से एक सत्यवादी व्यक्ति ने उस वक़्त निभाया था जब फ़िरऔन ने हज़रत मूसा (अलै॰) को क़त्ल करना चाहा था। अब रहा काफ़िरों का वह तर्क-वितर्क जो सत्य को नीचा दिखाने के लिए मक्का मुअज़्ज़मा में दिन-रात चल रहा था, तो उसके जवाब में एक तरफ़ प्रमाणों के द्वारा एकेश्वरवाद और परलोकवाद की उन धारणाओं का सत्य होना सिद्ध किया गया है जो मुहम्मद (सल्ल॰) और काफ़िरों के मध्य झगड़े के वास्तविक कारण थे। दूसरी तरफ़ उन वास्तविक प्रत्येक वस्तुओं को स्पष्ट रूप से सामने लाया गया है, जिसके कारण क़ुरैश के सरदार अथक प्रयास के साथ नबी (सल्ल॰) के विरुद्ध युद्धरत थे। अतएव आयत 56 में यह बात किसी लाग-लपेट के बिना उनसे साफ़ कह दी गई है कि तुम्हारे इनकार का वास्तविक कारण वह अहंकार है जो तुम्हारे मन में भरा हुआ है। तुम समझते हो कि अगर लोग मुहम्मद (सल्ल॰) की पैग़म्बरी को स्वीकार कर लेंगे तो तुम्हारी बड़ाई क़ायम न रह सकेगी। इसी सिलसिले में काफ़िरों को निरन्तर चेतावनियाँ दी गई हैं कि यदि अल्लाह की आयतों के मुक़ाबले में तर्क-वितर्क करने से बाज़ न आओगे तो तुम्हें उसी परिणाम का सामना करना पड़ेगा जिसका सामना पिछली जातियों को करना पड़ा है।



40. सूरा अल-मोमिन

(मक्का में उतरी–आयतें 85)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हा॰ मीम॰। (2) इस किताब का अवतरण अल्लाह की ओर से है जो प्रभुत्वशाली है, सब कुछ जाननेवाला है, (3) गुनाह माफ़ करनेवाला और तौबा क़बूल करनेवाला है, कठोर अज़ाब देनेवाला और बड़ा फ़ज़्लवाला है, कोई पूज्य उसके सिवा नहीं, उसी की ओर सबको पलटना है।

(4) अल्लाह की आयतों में झगड़े नहीं करते मगर सिर्फ़ वे लोग जिन्होंने इनकार किया है। इसके बाद दुनिया के मुल्कों में उनकी चलत-फिरत तुम्हें किसी धोखे में न डाले। (5) इनसे पहले नूह की क़ौम भी झुठला चुकी है, और उसके बाद बहुत-से दूसरे जत्थों ने भी यह काम किया है। हर क़ौम अपने रसूल पर झपटी ताकि उसे पकड़ ले। उन सबने असत्य के हथियारों से सत्य को नीचा दिखाने की कोशिस की, किन्तु आख़िरकार मैंने उनको पकड़ लिया, फिर देख लो कि मेरी सज़ा कैसी कठोर थी। (6) इसी प्रकार तेरे रब का यह फ़ैसला भी उन सब लोगों पर चस्पाँ हो चुका है जिन्होंने इनकार किया है कि वे जहन्नम में जानेवाले हैं।

(7) ईश-सिंहासन के उठानेवाले फ़रिश्ते, और वे जो सिंहासन के चारों तरफ़ हाज़िर रहते हैं, सब अपने रब की तारीफ़ के साथ उसकी तसबीह (महिमागान) कर रहे हैं। वे उसपर ईमान रखते है और ईमान लानेवालों के हक़ में मग़फ़िरत (मोक्ष) की दुआ करते हैं। वे कहते हैं : ऐ हमारे रब, तू अपनी दयालुता और अपने ज्ञान के साथ हर चीज़ पर छाया हुआ है, अतः माफ़ कर दे और जहन्नम के अज़ाब से बचा ले उन लोगों को जिन्होंने तौबा की है और तेरा मार्ग ग्रहण कर लिया है। (8) ऐ हमारे रब, और दाखिल कर उनको हमेशा रहनेवाली उन जन्नतों में जिनका तूने उनसे वादा किया है, और उनके माता-पिता और पतिन्यों और सन्तान में से जो नेक हों (उनको भी वहाँ उनके साथ ही पहुँचा दे)। तू यक़ीनन सर्वशक्तिमान और तत्त्वदर्शी है। (9) और बचा दे उनको बुराइयों से। जिसको तूने क़ियामत के दिन बुराइयों से बचा दिया उसपर तूने बड़ी दया की, यही बड़ी सफलता है।''

(10) जिन लोगों ने इनकार किया है, क़ियामत के दिन उनको पुकारकर कह जाएगा, ''आज तुम्हें जितना ज़्यादा ग़ुस्सा अपने ऊपर आ रहा है, अल्लाह तुमपर उससे ज़्यादा ग़ुस्सा उस समय करता था जब तुम्हें ईमान की ओर बुलाया जाता था और तुम

इनकार करते थे।'' (11) वे कहेंगे, ''ऐ हमारे रब, तूने वास्तव में हमें दो बार मौत और दो बार ज़िन्दगी दे दी[1] अब हम अपने गुनाहों को क़बूल करते हैं, क्या अब यहाँ से निकलने की भी कोई राह है?'' (12) (जवाब मिलेगा) ''यह हालत जिसमें तुम पड़े हो, इस कारण से है कि जब अकेले अल्लाह की ओर बुलाया जाता था तो तुम मानने से इनकार कर देते थे और जब उसके साथ दूसरों को मिलाया जाता तो तुम मान लेते थे। अब फ़ैसला महान और सर्वोच्च अल्लाह के हाथ है।''

(13) वही है जो तुमको अपनी निशानियाँ दिखाता है और आसमान से तुम्हारे लिए रोज़ी उतारता है,[2] मगर (इन निशानियों के निरीक्षण से) शिक्षा सिर्फ़ वही व्यक्ति ग्रहण करता है जो अल्लाह की ओर रुजू करनेवाला हो। (14) (अतः ऐ रुजू करनेवालो) अल्लाह ही को पुकारो अपने धर्म को उसी के लिए ख़ालिस (विशिष्ट) करके, चाहे तुम्हारा यह कर्म इनकार करनेवालों को कितना ही नापसंद हो।

(15) वह ऊँचे दर्जोंवाला, सिंहासन का मालिक है। अपने बन्दों में से जिसपर चाहता है अपने हुक्म से रूह उतार देता है ताकि वह मिलन के दिन से सावधान कर दे। (16) वह दिन जबकि सब लोग बेपरदा होंगे, अल्लाह से उनकी कोई बात छिपी हुई न होगी। (उस दिन पुकारकर पूछा जाएगा) आज राज किसका है? (सारी दुनिया पुकार उठेगी) अल्ला अकेले, प्रभुत्वशाली का। (17) (कहा जाएगा) आज हर जीव को उस कमाई का बदला दिया जाएगा जो उसने की थी, आज किसी पर कोई ज़ुल्म न होगा। और अल्लाह हिसाब लेने में बहुत तेज़ है। (18) ऐ नबी, डरा दो इन लोगों को उस दिन से जो क़रीब आ लगा है। (जब कलेजे मुँह को आ रहे होंगे और लोग चुपचाप ग़म के घूँट पिए खड़े होंगे। ज़ालिमों का न कोई चाहनेवाला दोस्त होगा और न कोई सिफ़ारिश करनेवाला जिसकी बात मानी जाए। (19) अल्लाह निगाहों की चोरी तक से परिचित है और वह रहस्य तक जानता है जो सीनों ने छिपा रखे हैं। (20) और अल्लाह ठीक-ठीक बेलाग फ़ैसला करेगा। रहे वे जिनको (ये बहुदेववादी) अल्लाह को छोड़कर पुकारते हैं, वे किसी चीज़ का भी फ़ैसला करनेवाले नहीं हैं। यक़ीनन अल्लाह ही सब कुछ सुनने और देखनेवाला है।

(21) क्या ये लोग कभी ज़मीन में चले फिरे नहीं हैं कि इन्हें उन लोगों का

1. दो बार मौत और दो बार ज़िन्दगी से मुराद वही चीज़ है जिसका उल्लेख सूरा 2 (बक़रा) आयत 28 में किया गया है।
2. अर्थात् वर्षा करता है जो रोज़ी का कारण है, गर्मी और ठण्डक उतारता है जिसका रोज़ी की पैदावार में बड़ा हाथ है।

परिणाम दिखाई देता जो इनसे पहले गुज़र चुके हैं? वे इनसे ज़्यादा बलशाली थे और इनसे ज़्यादा प्रबल चिह्न ज़मीन में छोड़ गए हैं। मगर अल्लाह ने उनके गुनाहों पर उन्हें पकड़ लिया और उनको अल्लाह से बचानेवाला कोई न था। (22) यह उनका परिणाम इसलिए हुआ कि उनके पास उनके रसूल प्रत्यक्ष प्रमाण[3] लेकर आए और उन्होंने मानने से इनकार कर दिया। आख़िरकार अल्लाह ने उनको पकड़ लिया। यक़ीनन वह बड़ी शक्तिवाला और सज़ा देने में बहुत सख़्त है।

(23,24) हमने मूसा को फ़िरऔन और हामान और क़ारून की ओर अपनी निशानियों और नियुक्ति के स्पष्ट प्रमाण के साथ भेजा, मगर उन्होंने कहा, ''जादूगर है, बहुत झूठा है।'' (25) फिर जब वह हमारी ओर से सत्य उनके सामने ले आयात तो उन्होंने कहा, ''जो लोग ईमान लाकर इसके साथ शामिल हुए हैं उन सबके लड़कों को क़त्ल करो और लड़कियों को ज़िन्दा छोड़ दो।'' मगर इनकार करनेवालों की चाल अकारथ ही गई।

(26) एक दिन फ़िरऔन ने अपने दरबारियों से कहा, ''छोड़ो मुझे, मैं इस मूसा को क़त्ल किए देता हूँ, और पुकार देखे यह अपने रब को। मुझे आशंका है कि यह तुम्हारा धर्म बदल डालेगा, या देश में बिगाड़ पैदा करेगा।''

(27) मूसा ने कहा, ''मैंने तो हर उस अहंकारी के मुक़ाबले में जो हिसाब के दिन पर ईमान नहीं रखता अपने रब और तुम्हारे रब की पनाह ले ली है।''

(28) इस अवसर पर फ़िरऔन के लोगों में से एक ईमान रखनेवाला व्यक्ति, जो अपना ईमान छिपाए हुए था, बोल उठा : ''क्या तुम एक व्यक्ति को सिर्फ़ इसलिए क़त्ल कर दोगे कि वह कहता है कि मेरा रब अल्लाह है? जबकि वह तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे पास स्पष्ट प्रमाण ले आया। अगर वह झूठा है तो उसका झूठ ख़ुद उसी पर पलट पड़ेगा। लेकिन अगर वह सच्चा है तो जिन भयंकर परिणामों से वह तुम्हें डराता है उनमें से कुछ तो तुमपर ज़रूर ही आ जाएँगे। अल्लाह किसी ऐसे व्यक्ति को मार्ग नहीं दिखाता

3. स्पष्ट प्रमाण 'बैयिनात' से मुराद तीन चीज़ें हैं : एक, ऐसे स्पष्ट लक्षण और निशानियाँ जो अल्लाह की ओर से उनके नियुक्त होने की साक्षी थीं। दूसरे, ऐसे खुले प्रमाण जो उनकी पेश की हुई शिक्षाओं के सत्य होने को सिद्ध कर रहे थे। तीसरे, ज़िन्दगी की समस्याओं और मामलों के सम्बन्ध में ऐसे स्पष्ट आदेश जिन्हें देखकर हर समझदार और सभ्य आदमी यह जान सकता था कि ऐसी पवित्र शिक्षा कोई झूठा स्वार्थी आदमी नहीं दे सकता।

जो मर्यादाओं का उल्लंघन करनेवाला और बड़ा झूठा हो। (29) ऐ मेरी क़ौम के लोगो, आज तुम्हें बादशाही प्राप्त है और ज़मीन में तुम प्रभुत्वशाली हो, लेकिन अगर अल्लाह का अज़ाब हमपर आ गया तो फिर कौन है जो हमारी सहायता कर सकेगा?''

फ़िरऔन ने कहा, ''मैं तो तुम लोगों को वही राय दे रहा हूँ जो मुझे उचित दीख पड़ती है और मैं उसी मार्ग की ओर तुम्हारा पथप्रदर्शन करता हूँ जो ठीक है।''

(30) वह व्यक्ति जो ईमान लाया था उसने कहा, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, मुझे डर है कि कहीं तुमपर भी वह दिन न आ जाए जो इससे पहले बहुत-से जत्थों पर आ चुका है, (31) जैसा दिन नूह और आद और समूद की क़ौम और उनके बादवाली क़ौमों पर आया था। और यह वास्तविकता है कि अल्लाह अपने बन्दों पर ज़ुल्म का कोई इरादा नहीं रखता। (32) ऐ क़ौम, मुझे डर है कि कहीं तुमपर दुहाई और अर्त्तनाद का दिन न आ जाए (33) जब तुम एक दूसरे को पुकारोगे और भागे-भागे फिरोगे, मगर उस समय अल्लाह से बचानेवाला कोई न होगा। सच यह है कि जिसे अल्लाह भटका दे उसे फिर कोई मार्ग दिखानेवाला नहीं होता। (34) इससे पहले यूसुफ़ तुम्हारे पास स्पष्ट प्रमाण लेकर आए थे मगर तुम उनकी लाई हुई शिक्षा की ओर से शक ही में बड़े रहे। फिर जब उनका देहान्त हो गया तो तुमने कहा अब उनके बाद अल्लाह कोई रसूल हरगिज़ न भेजेगा''—इसी तरह[4] अल्लाह उन सब लोगों को गुमराही में डाल देता है जो हद से गुज़रनेवाले और शक में पड़े होते हैं (35) और अल्लाह की आयतों में झगड़े करते हैं बिना इसके कि उनके पास कोई सनद या प्रमाण आया हो। यह नीति अल्लाह और ईमान लानेवालों की दृष्टि में अत्यन्त अप्रिय है। इसी तरह अल्लाह हर अहंकारी और दमनकारी के दिल पर ठप्पा लगा देता है।

(36) फ़िरऔन ने कहा, ''ऐ हामान, मेरे लिए एक ऊँचा भवन बना ताकि मैं मार्गों तक पहुँच सकूँ, (37) आसमानों के मार्गों तक, और मूसा के ख़ुदा को झाँककर देखूँ। मुझे तो यह मूसा झूठा ही मालूम होता है।''—इस प्रकार फ़िरऔन के लिए उसका दुष्कर्म ख़ुशनुमा बना दिया गया और वह सन्मार्ग से रोक दिया गया। फ़िरऔन की सारी चालबाज़ी (उसके अपने) विनाश के मार्ग ही में लगी।

(38) वह व्यक्ति जो ईमान लाया था, बोला, ''ऐ मेरी क़ौम के लोगो, मेरी बात मानो, मैं तुम्हें ठीक मार्ग बताता हूँ। (39) ऐ क़ौम, यह दुनिया की ज़िन्दगी तो थोड़े

4. प्रत्यक्षतः ऐसा लगता है कि आगे के ये कुछ वाक्य अल्लाह ने फ़िरऔनियों में के ईमानवाले व्यक्ति के कतन पर अभिवृद्धि और व्याख्या के रूप में कहे हैं।

दिनों की है, हमेशा ठहरने का स्थान तो आख़िरत ही है। (40) जो बुराई करेगा उसको उतना ही बदला मिलेगा जितनी उसने बुराई की होगी। और जो अच्छा कर्म करेगा, चाहे वह मर्द हो या औरत, शर्त यह है कि हो वह ईमानवाला, ऐसे सब लोग जन्नत में प्रवेश करेंगे जहाँ उनको बेहिसाब रोज़ी दी जाएगी। (41) ऐ क़ौमवालो, आख़िर यह क्या मामला है कि मैं तो तुम लोगों को मुक्ति की ओर बुलाता हूँ और तुम लोग मुझे आग की ओर आमंत्रित करते हो! (42) तुम मुझे इस बात का आमंत्रण देते हो कि मैं अल्लाह के साथ इनकार की नीति अपनाऊँ और उसके साथ ऐसों को साझी ठहराऊँ जिन्हें मैं नहीं जानता,[5] हालाँकि मैं तुम्हें उस प्रभुत्वशाली क्षमाशील ईश्वर की ओर बुला रहा हूँ। (43) नहीं, सत्य यह है और इसके विपरीत नहीं हो सकता कि जिनकी ओर तुम मुझे बुला रहे हो उनके लिए न दुनिया में कोई आमंत्रण है, न आख़िरत में,[6] और हम सबको पलटना अल्लाह ही की ओर है, और सीमा का उल्लंघन करनेवाले आग में जानेवाले हैं। (44) आज जो कुछ मैं कह रहा हूँ, जल्द ही वह समय आएगा जब तुम उसे याद करोगे। और अपना मामला मैं अल्लाह को सौंपता हूँ, वह बन्दों का निगाहबान है।''

(45) आख़िरकार उन लोगों ने जो बुरी से बुरी चालें उस ईमानवाले के विरुद्ध चलीं, अल्लाह ने उन सबसे उसको बचा लिया,[7] और फ़िरऔन के साथी ख़ुद अत्यन्त बुरे अज़ाब के फेर में आ गए। (46) दोज़ख़ की आग है जिसके सामने सुबह और शाम वे पेश किए जाते हैं, और जब क़ियामत की घड़ी आ जाएगी तो आदेश होगा कि

5. अर्थात् मुझे नहीं मालूम कि ईश्वरत्व में उनकी कोई साझेदारी है।

6. इस वाक्य के कई अर्थ हो सकते हैं। एक यह कि उनको न दुनिया में यह हक़ पहुँचता है और न आख़िरत में कि उनका प्रभुत्व स्वीकार करने के लिए लोगों को बुलावा दिया जाए। दूसरे यह कि उन्हें तो लोगों ने ज़बरदस्ती ईश बनाया है वरना वे ख़ुद न इस दुनिया में ईश्वरत्व के दावेदार हैं, न आख़िरत में यह दावा लेकर उठेंगे कि हम भी तो ईश्वर थे, तुमने हमें क्यों न माना। तीसरे यह कि उनको पुकारने का कोई लाभ न इस दुनिया में है न आख़िरत में, क्योंकि वे बिलकुल अधिकार नहीं रखते और उन्हें पुकारना निश्चित रूप से व्यर्थ है।

7. इससे मालूम होता है कि वह व्यक्ति फ़िरऔन के राज्य में इतने महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व का मालिक था कि भरे दरबार में फ़िरऔन के सामने यह सत्य कह जाने के बावजूद खुलेआम उसको सज़ा देने का साहस नहीं किया जा सकता था, इस कारण फ़िरऔन और उसके समर्थकों को उसे तबाह करने के लिए गुप्त उपाय करने पड़े, मगर उन उपायों को भी अल्लाह ने चलने न दिया।

फ़िरऔन के लोगों को कठोरतम अज़ाब में दाख़िल करो। (47) फिर तनिक विचार करो उस समय का जब ये लोग दोज़ख़ में एक दूसरे से झगड़ रहे होंगे। दुनिया में जो लोग कमज़ोर थे वे बड़े बननेवालों से कहेंगे कि "हम तुम्हारे अधीन थे, अब क्या यहाँ तुम जहन्नम की आग की तकलीफ़ के कुछ भाग से हमको बचा लोगे? (48) वे बड़े बननेवाले जवाब देंगे, "हम सब यहाँ एक हाल मेंहैं, और अल्लाह बन्दों के बीच फ़ैसला कर चुका है।" (49) फिर ये आग में पड़े हुए लोगजहन्नम के कार्यकर्ताओं से कहेंगे, "अपने रब से दुआ करो कि हमारे अज़ाब में बस एक दिन की कमी कर दे। (50) वे पूछेंगे, "क्या तुम्हारे पास रसूल स्पष्ट प्रमाण लेकर नहीं आते रहे थे?" वे कहेंगे, "हाँ।" जहन्नम के कार्यकर्ता बोलेंगे : "फिर तो तुम ही दुआ करो, और इनकार करनेवालों की दुआ अकारथ ही जानेवाली है।"

(51) यक़ीन जानो कि हम अपने रसूलों और ईमान लानेवालों की सहायता इस दुनिया की ज़िन्दगी में भी अवश्य करते हैं और उस दिन भी करेंगे जब गवाह खड़े होंगे, (52) जब ज़ालिमों को उनका उज्र (बहाना) पेश करना कुछ भी लाभदायक सिद्ध न होगा और उनपर फिटकार पड़ेगी और अत्यन्त बुरा ठिकाना उनके हिस्से में आएगा। (53) आख़िर देख लो कि मूसा का हमने पथ-प्रदर्शन किया और इसराईल की सन्तान को उस किताब का उत्तराधिकारी बना दिया (54) जो बुद्धि और समझ रखनेवालों के लिए मार्गदर्शन और नसीहत थी। (55) अतः ऐ नबी, सब्र से काम लो, अल्लाह का वादा सच्चा है, अपने क़ुसूर की माफ़ी चाहो[8] और सुबह और शाम को अपने रब की

8. जिस संदर्भ में यह बात कही गई है उसपर विचार करने से ऐसा लगता है कि इस स्थान पर 'क़ुसूर' से मुराद अधैर्यता की वह मनोदशा है जो घोर विरोध के उस वातावरण में, विशेष रूप से अपने साथियों की उत्पीड़ा देख-देखकर, नबी (सल्ल०) के भीतर पैदा हो रही थी। आप चाहते थे कि जल्दी से कोई चमत्कार ऐसा दिखा दिया जाए जिससे इनकार करनेवाले मान जाएँ या अल्लाह की ओर से कोई ऐसी बात शीघ्र ही प्रकट हो जाए जिससे विद्रोह का यह तूफ़ान ठण्डा हो जाए। यह इच्छा अपने में कोई गुनाह न थी जिसपर किसी तौबा या माफ़ी माँगने की आवश्यकता होती, लेकिन जिस उच्च स्थान पर अल्लाह ने नबी (सल्ल०) को आसीन किया था, और जो भारी साहस एवं निश्चय उस स्थान को अपेक्षित था, उस दृष्टि से यह थोड़ा-सा अधैर्य भी अल्लाह को आपके पद से नीचे की चीज़ दीख पड़ी, इसलिए कहा गया कि इस दुर्बलता पर अपने रब से माफ़ी माँगो और चट्टान की-सी मज़बूती के साथ अपने स्थान पर जम जाओ जैसा कि तुम जैसे महान पदाधिष्ठित व्यक्ति को होना चाहिए।

प्रशंसा के साथ उसकी तसबीह (महिमागान) करते रहो। (56) वास्तविकता यह है कि जो लोग किसी सनद और तर्क के बिना, जो उनके पास आया हो, अल्लाह की आयतों में झगड़े रहे हैं उनके मन में अहंकार भरा हुआ है, मगर वे उस बड़ाई को पहुँचनेवाले नहीं हैं जिसका वे घमण्ड रखते हैं। बस अल्लाह की पनाह माँग लो, वह सब कुछ देखता और सुनता है।

(57) आसमानों और ज़मीन का पैदा करना इनसान को पैदा करने की अपेक्षा यक़ीनन अधिक बड़ा काम है, मगर ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं। (58) और यह नहीं हो सकता कि अन्धा और आँखोंवाला समान हो जाए और ईमानदार व सदाचारी और दुराचारी बराबर ठहरें। मगर तुम लोग कम ही कुछ समझते हो। (59) यक़ीनन क़ियामत की घड़ी आनेवाली है, उसके आने में कोई शक नहीं, मगर ज़्यादातर लोग नहीं मानते।

(60) तुम्हारा रब कहता है, "मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी दुआएँ क़बूल करूँगा,[9] जो लोग घमण्ड में आकर मेरी बन्दगी से मुँह मोड़ते हैं, ज़रूर वे अपमानित होकर जहन्नम में प्रवेश करेंगे।"[10]

(61) वह अल्लाह ही तो है जिसने तुम्हारे लिए रात बनाई ताकि तुम उसमें शान्ति प्राप्त करो, और दिन को प्रकाशमान किया। वास्तविकता यह है कि अल्लाह लोगों के प्रति उदार अनुग्रहवाला है, मगर ज़्यादातर लोग शुक्र अदा नहीं करते। (62) वही अल्लाह (जिसने तुम्हारे लिए यह कुछ किया है) तुम्हारा रब है। हर चीज़ का स्रष्टा है। उसके सिवा कोई पूज्य नहीं। फिर तुम किधर से बहकाए जा रहे हो? (63) इसी तरह वे सब लोग बहकाए जाते रहे हैं जो अल्लाह की आयतों का इनकार करते थे।

9. अर्थात् दुआएँ क़बूल करने के सारे अधिकार मेरे पास हैं, अतः तुम दूसरों से दुआएँ न माँगो बल्कि मुझसे माँगो।

10. इस आयत में दो बातें विशेष रूप से ध्यान देने योग्य हैं। एक यह कि दुआ (प्रार्थना) और इबादत (उपासना, बन्दगी) को यहाँ समानार्थक शब्दों के रूप में इस्तेमाल किया गया है, क्योंकि पहले वाक्य में जिस चीज़ को दुआ की संज्ञा दी गई है उसी को दूसरे वाक्य में 'इबादत' के शब्द से व्यंजित किया गया है। इससे यह बात स्पष्ट हो गई है कि दुआ ठीक इबादत और इबादत की आत्मा है। दूसरे यह कि अल्लाह से दुआ न माँगनेवालों के लिए "घमण्ड मेंआकर मेरी इबादत से मुँह मोड़ते हैं" के शब्द इस्तेमाल किए गए हैं। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह से दुआ माँगना ठीक बन्दगी का तक़ाज़ा है, और उससे मुँह मोड़ने का अर्थ यह है कि आदमी घमण्ड में पड़ा हुआ है।

(64) वह अल्लाह ही तो है जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन को ठहरने का स्थान बनाया और ऊपर आसमान का गुंबद बना दिया। जिसने तुम्हारा रूप बनाया और बड़ा ही अच्छा बनाया। जिसने तुम्हें अच्छी स्वच्छ चीज़ों की रोज़ी दी। वही अल्लाह (जिसके ये कार्य हैं) तुम्हारा रब है। बेहिसाब बरकतवाला है वह जगत् का स्वामी। (65) वही ज़िन्दा है। उसके सिवा कोई पूज्य नहीं। उसी को तुम पुकारो अपने दीन (धर्म) को उसी के लिए ख़ालिस (विशुद्ध) करके। सारी प्रशंसा अल्लाह सारे जहान के रब ही के लिए है।

(66) ऐ नबी, इन लोगों से कह दो कि मुझे तो उन हस्तियों की बन्दगी से रोक दिया गया है जिन्हें तुम अल्लाह को छोड़कर पुकारते हो। (मैं यह काम कैसे कर सकता हूँ) जबकि मेरे पास मेरे रब की ओर से स्पष्ट प्रमाण आ चुके हैं। मुझे आदेश दिया गया है कि मैं सारे जहान के रब के आगे नतमस्तक हो जाऊँ।

(67) वही तो है जिसने तुमको मिट्टी से पैदा किया, फिर वीर्य से, फिर ख़ून के लोथड़े से, फिर वह तुम्हें बच्चे के रूप में निकालता है, फिर तुम्हें बढ़ाता है ताकि तुम अपनी पूरी शक्ति (प्रौढ़ता) को पहुँच जाओ, फिर और बढ़ाता है ताकि तुम बुढ़ापे को पहुँचो। और तुममें से कोई पहले ही वापस बुला लिया जाता है। यह सब कुछ इसलिए किया जाता है ताकि तुम अपने निश्चित समय तक पहुँच जाओ, और इसलिए कि तुम सच्चाई को समझो। (68) वही है ज़िन्दगी देनेवाला, और वही मौत देनेवाला है। वह जिस बात का भी फ़ैसला करता है, बस एक आदेश देता है कि वह हो जाए और वह हो जाती है।

(69) तुमने देखा उन लोगों को जो अल्लाह की आयतों में झगड़े करते हैं, कहाँ से वे फिराए जा रहे हैं? (70) ये लोग जो इस किताब को और उन सारी किताबों को झुठलाते हैं जो हमने अपने रसूलों के साथ भेजी थीं, जल्द ही इन्हें मालूम हो जाएगा (71,72) जब तौक़ इनकी गरदनों में होंगे, और ज़ंजीरें, जिनसे पकड़कर वे खौलते हुए पानी की ओर खींचे जाएँगे और फिर दोज़ख़ की आग में झोंक दिए जाएँगे। (73,74) फिर इनसे पूछा जाएगा कि "अब कहाँ हैं अल्लाह के सिवा वे दूसरे ख़ुदा जिनको तुम साझी ठहराते थे?" वे जवाब देंगे, "खोए गए वे हमसे, बल्कि हम इससे पहले किसी चीज़ को न पुकारते थे।" इस तरह अल्लाह इनकार करनेवालों का पथभ्रष्ट होना प्रमाणित कर देगा। (75) उनसे कहा जाएगा, "यह तुम्हारा परिणाम इसलिए हुआ है कि तुम ज़मीन में असत्य पर मग्न थे और फिर उसपर इतराते थे। (76) अब जाओ, जहन्नम के द्वारों में प्रवेश कर जाओ, हमेशा तुमको वहीं रहना है, बहुत ही बुरा

ठिकाना है अहंकारियों का।" (77) अतः ऐ नबी, सब्र से काम लो, अल्लाह का वादा सच्चा है। अब चाहे हम तुम्हारे सामने ही इनको उन बुरे परिणामों का कोई अंश दिखा दें जिनसे हम इन्हें डरा रहे हैं, या (उससे पहले) तुम्हें दुनिया से उठा लें, पलटकर आना तो इन्हें हमारी ही ओर है।

(78) ऐ नबी, तुमसे पहले हम बहुत-से रसूल भेज चुके हैं जिनमें से कुछ के हाल हमने तुमको बताए हैं और कुछ के नहीं बताए। किसी रसूल की भी य शक्ति नहीं थी कि अल्लाह की अनुमति के बिना ख़ुद कोई निशानी ले आता। फिर जब अल्लाह का आदेश आ गया तो सत्य के अनुसार फ़ैसला कर दिया गया और उस समय दुराचारी लोग घाटे में पड़ गए। (79) अल्लाह ही ने तुम्हारे लिए ये चौपाए बनाए हैं ताकि इनमें से किसी पर तुम सवार हो और किसी का गोश्त खाओ। (80) उनमें तुम्हारे लिए और भी बहुत-से लाभ हैं। वे इस काम भी आते हैं कि तुम्हारे दिलों में जहाँ जाने की ज़रूरत हो वहाँ तुम उनपर पहुँच सको। उनपर भी और नौकाओं पर भी तुम सवार किए जाते हो। (81) अल्लाह अपनी ये निशानियाँ तुम्हें दिखा रहा है, आख़िर तुम उसकी किन-किन निशानियों का इनकार करोगे।

(82) फिर क्या ये ज़मीन में चले-फिरे नहीं हैं कि इनको उन लोगों का परिणाम दिखाई देता जो इनसे पहले गुज़र चुके हैं? वे इनसे तादाद में ज़्यादा थे, इनसे बढ़कर शक्तिशाली थे, और ज़मीन में इनसे ज़्यादा भव्य स्मृति-चिह्न छोड़ गए हैं। जो कुछ कमाई उन्होंने की थी, आख़िर वह उनके किस काम आई? (83) जब उनके रसूल उनके पास स्पष्ट प्रमाण लेकर आए तो वे उसी ज्ञान में मग्न रहे जो उनके अपने पास था, और फिर उसी चीज़ के फेर में आ गए जिसकी वे हँसी उड़ाते थे। (84) जब उन्होंने हमारा अज़ाब देख लिया तो पुकार उठे कि हमने मान लिया अल्लाह को जो अकेला है जिसका कोई साझी नहीं और हम इनकार करते हैं उन सब उपास्यों का जिन्हें हम उसका साझी ठहराते थे। (85) मगर हमारा अज़ाब देख लेने के बाद उनका ईमान उनके लिए कुछ भी लाभदायक न हो सकता था, क्योंकि यही अल्लाह की नियत की हुई प्रणाली है जो हमेशा उसके बन्दों में कार्यान्वित रही है, और उस समय इनकार करनेवाले घाटे में पड़ गए।.



41. हा॰ मीम॰ अस-सजदा

नाम

इस सूरा का नाम दो शब्दों से मिलाकर बना है। एक हा॰ मीम॰, दूसरे अस-सजदा। मतलब यह है कि वह सूरा जिसका आरम्भ हा॰ मीम॰ से होता है और इसमें एक स्थान पर सजदा की आयत आई है।

अवतरणकाल

विश्वस्त उल्लेखों के अनुसार इसका अवतरणकाल हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) के ईमान लाने के बाद और हज़रत उमर (रज़ि॰) के ईमान लाने से पहले है। प्रसिद्ध ताबई मुहम्मद बिन काब अल-क़ुर्ज़ी (से उल्लिखित है कि) एक बार क़ुरैश के कुछ सरदार मस्जिदे हराम में महफ़िल जमाए बैठे थे और मस्जिद के एक दूसरे गोशे में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) अकेले मौजूद थे। उतबा बिन रबीआ ने क़ुरैश के सरदारों (के परामर्श से नबी (सल्ल॰) के पास जाकर) कहा, "भतीजे, यह काम जो तुमने शुरू किया है, इससे यदि तुम्हारा उद्देश्य धन प्राप्त करना है तो हम सब मिलकर तुम को इतना कुछ दे देते हैं कि तुम हममें सबसे अधिक धनवान हो जाओ। यदि इससे अपनी बड़ाई चाहते हो तो हम तुम्हें अपना सरदार बना लेते हैं। यदि बादशाही चाहते हो तो हम तुम्हे अपना बादशाह बना लेते हैं और यदि तुमपर कोई जिन्न आता है तो हम अपने ख़र्च पर तुम्हारा इलाज कराते हैं।" उतबा यह बाते करता रहा और नबी (सल्ल॰) चुपचाप सुनते रहे। फिर आपने कहा, "ऐ अबुल वलीद! आपको जो कुछ कहना था कह चुके?" उसने कहा, "हाँ।" आप (सल्ल॰) ने कहा, "अच्छा, अब मेरी सुनो।" इसके बाद आपने बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम (अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त कृपाशील और दयावान् है) पढ़कर इसीसूरा को पढ़ना शुरू किया और उतबा अपने दोनों हाथ पीछे ज़मीन पर टेके ध्यान से सुनता रहा। सजदा की आयत 38 पर पहुँचकर आपने सजदा किया और सिर उठाकर कहा, "ऐ अबुल वलीद! मेरा जवाब आपने सुन लिया; अब आप जाने और आपका काम।" उतबा उठकर क़ुरैश के सरदारों के पास वापस आया और उनसे उसने कहा : "अल्लाह की क़सम, मैंने ऐसी वाणी सुनी कि कभी इससे पहले नहीं सुनी थी। ईश्वर की सौगन्ध, न यह काव्य है, न जादू है, न कहानत (भविष्य-वक्ताओं की वाणी)। ऐ क़ुरैश के सरदारो! मेरी बात मानो और इस व्यक्ति को इसके हाल पर छोड़ दो। मैं समझता हूँ कि यह वाणी कुछ रंग लाकर रहेगी। क़ुरैश के सरदार उसकी

ये बात सुनते ही बोल उठे, "वलीद के पिता, आख़िर उसका जादू तुमपर भी चल गया।" (इब्नेहिशाम भाग-1, पृ॰ 313-314)

विषय और वार्ता

उतबा की इस बातचीत के जवाब में जो अभिभाषण अल्लाह की ओर से अवतरित हुआ उसमें उन अनर्गल बातों की ओर सिरे से कोई ध्यान नहीं दिया गया, जो उसने नबी (सल्ल॰) से कही थीं और केवल उस विरोध को वार्ता का विषय बनाया गया है जो क़ुरआन मजीद के आमंत्रण को नीचा दिखाने के लिए मक्का के काफ़िरों की ओर से उस समय अत्यन्त हठधर्मी और दुराचार के साथ किया जा रहा था। इस अन्धे और बहरे विरोध के उत्तर में जो कुछ कहा गया है उसका सारांश यह है :

(1) यह अल्लाह की अवतरित की हुई वाणी है और अरबी भाषा में है। अज्ञानी लोग इसमें ज्ञान या कोई प्रकाश नहीं पाते, किन्तु समझ-बूझ रखनेवाले उस प्रकाश को देख भी रहे हैं और उससे लाभ भी उठा रहे हैं।

(2) तुमने यदि अपने दिलों पर आवरण डाल रखें हैं और अपने कान बहरे कर लिए हैं तो नबी को यह काम नहीं सौंपा गया है कि (वह ज़बरदस्ती तुम्हें अपनी बात सुना और समझा दे। वह तो) सुननेवालों ही को सुना सकता है और समझनेवालों ही को समझा सकता है।

(3) तुम चाहे अपनी आँखें और कान बन्द कर लो और अपने दिलों पर परदा डाल लो, किन्तु सत्य तो यही है कि तुम्हारा ईश्वर बस एक ही है। और तुम किसी दूसरे के बन्दे नहीं हो।

(4) तुम्हें कुछ एहसास भी है कि ये बहुदेववाद और इनकार की नीति तुम किसके साथ अपना रहे हो? उस ईश्वर के साथ जो तुम्हारा और सारे जगत् का सृष्टा, मालिक और दाता है। उसका साझीदार तुम उसकी तुच्छ सृष्ट वस्तुओं को बनाते हो?

(5) अच्छा, नहीं मानते हो तो सावधान हो जाओ कि तुमपर उसी तरह यातना सहसा टूट पड़ने के लिए तैयार है जैसा कि आद और समूद जातियों पर आई थी।

(6) बड़ा ही अभागा है वह मनुष्य जिसके साथ जिन्नों और मानवों में से ऐसे शैतान लग जाएँ जो उसकी मूर्खताओं को उसके समक्ष सुन्दर बनाकर प्रस्तुत करें। इस तरह के नादान लोग आज तो यहाँ एक-दूसरे को बढ़ावे-चढ़ावे दे रहे हैं किन्तु क़ियामत के दिन इनमें से हरेक कहेगा : जिन लोगों ने मुझे बहकाया था, वह मेरे हाथ लग जाएँ तो उन्हें पाँव तले रौंद डालूँ।

(7) यह क़ुरआन एक अटल किताब है। इसे तुम अपनी घटिया चालों और झूठ के हथियारों से पराजित नहीं कर सकते।

(8) तुम कहते हो कि यह क़ुरआन किसी ग़ैर-अरबी भाषा में आना चाहिए था। किन्तु अगर ग़ैर-अरबी भाषा में इसे भेजते तो तुम्हीं लोग कहते कि यह भी विचित्र हास्य है, अरब जाति के मार्गदर्शन के लिए ग़ैर-अरबी भाषा में वार्तालाप किया जा रहा है। इसका अर्थ यह है कि तुम्हें वास्तव में मार्गदर्शन अभीष्ट ही नहीं है।

(9) कभी तुमने यह भी सोचा कि यदि वास्तव में सत्य ही सिद्ध हुआ कि यह क़ुरआन अल्लाह की ओर से है तो इसका इनकार करके तुम किस परिणाम को पहुँचोगे।

(10) आज तुम नहीं मान रहे हो, किन्तु शीघ्र ही तुम अपनी आँखों से देख लोगे कि इस क़ुरआन का आह्वान सम्पूर्ण विश्व पर छा गया है और तुम स्वयं उससे पराजित हो चुके हो।

विरोधियों को यह उत्तर देने के साथ उन समस्याओं की ओर भी ध्यान दिया गया है जो उस कठिन रुकावटों के वातावरण में ईमानवालों और स्वयं नबी (सल्ल॰) के समक्ष थीं। ईमानवालों को यह कहकर हिम्मत बँधाई गई कि तुम वास्तव में बेयार और बे-मददगार के नहीं हो, बल्कि जो व्यक्ति ईमान की राह पर जम जाता है, अल्लाह के फ़रिश्ते उसपर अवतरित होते हैं और दुनिया से लेकर आख़िरत (परलोक) तक उसका साथ देते हैं। नबी (सल्ल॰) को बताया गया कि (आह्वान की राह में आड़े आनेवाली) चट्टानें देखने में बड़ी कठोर दिखाई देती है, किन्तु सुशीलता का हथियार है जो उन्हें तोड़कर और पिघलाकर रख देगा। धैर्य के साथ उससे काम लो और जब कभी शैतान उत्तेजित करके किसी दूसरे हथियार से काम लेने पर उकसाए तो अल्लाह से पनाह माँगो।

⊖ ⊖ ⊖

41. सूरा हा॰ मीम॰ अस-सजदा

(मक्का में उतरी–आयतें 54)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हा॰ मीम॰, (2) यह करुणामय और दयावान ईश्वर की ओर से उतारी हुई चीज़ है, (3) एक ऐसी किताब जिसकी आयतें ख़ूब खोलकर बयान की गई हैं, अरबी भाषा का क़ुरआन, उन लोगों के लिए जो ज्ञानवान हैं, (4) ख़ुशख़बरी देनेवाला और डरा देनेवाला।

मगर इन लोगों में से ज़्यादातर ने उससे मुँह फेर लिया और वे सुनने को तैयार नहीं। (5) कहते हैं, ''जिस चीज़ की ओर तू हमें बुला रहा है उसके लिए हमारे दिलों पर आवरण (ग़िलाफ़) चढ़े हुए हैं, हमारे कान बहरे हो गए हैं, और हमारे और तेरे बीच एक परदा आ पड़ा है। तू अपना काम कर, हम अपना काम किए जाएँगे।''

(6,7) ऐ नबी, उनसे कहो, मैं तो एक इनसान हूँ तुम जैसा। मुझे प्रकाशना (वह्य) के द्वारा बताया जाता है कि तुम्हारा ईश तो बस एक ही ईश है, अतः तुम सीधे उसी का रुख़ अपनाओ और उससे माफ़ी चाहो। तबाही है उन मुशरिकों (बहुदेववादियों) के लिए जो ज़कात (दान) नहीं देते और आख़िरत का इनकार करते हैं। (8) रहे वे लोग जिन्होंने मान लिया और अच्छे कर्म किए, उनके लिए यक़ीनन ऐसा बदला है जिसका सिलसिला कभी टूटनेवाला नहीं है।

(9) ऐ नबी, इनसे कहो, क्या तुम उस ईश्वर के प्रति इनकार की नीति अपनाते हो और दूसरों को उसका समकक्ष ठहराते हो जिसने ज़मीन को दो दिनों में बना दिया? वही तो सारे जहानवालों का रब है। (10) उसने (ज़मीन को पैदा करने के बाद) ऊपर से उसपर पहाड़ जमा दिएऔर उसमें बरकतें रख दीं और उसके अन्दर सब माँगनेवालों के लिए[1] हर एक की माँग और जरूरत के अनुसार ठीक अन्दाज़े से ख़ुराक की सामग्री जुटा दी। यह सब काम चार दिन में हो गए। (11) फिर उसने आसमान की ओर रुख़ किया[2] जो उस समय सिर्फ़ धुआँ था। उसने आसमान और ज़मीन से कहा, ''अस्तित्व ग्रहण करो, चाहे तुम चाहो या न चाहो।'' दोनों ने कहा, ''हम आ गए आज्ञाकारियों की

1. अर्थात् उन सब प्राणियों के लिए जो ख़ुराक के इच्छुक थे।
2. यह अर्थ नहीं है कि ज़मीन बनाने के बाद और उसमें आबादी का प्रबन्ध करने के बाद उसने आसमान बनाए। यहाँ फिर का शब्द समय-क्रम के लिए नहीं बल्कि वर्णन-क्रम के लिए प्रयोग हुआ है। आगे के वाक्य से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

तरह।'' (12) तब उसने दो दिन के अन्दर सात आसमान बना दिए, और हर आसमान में उसके क़ानून की प्रकाशना कर दी। और दुनिया के आसमान को हमने दीपकों से सुसज्जित किया और उसे ख़ूब सुरक्षित कर दिया। यह सब कुछ एक प्रभुत्वशाली, सर्वज्ञ सत्ता की परियोजना है।

(13) अब अगर ये लोग मुँह मोड़ते हैं तो इनसे कह दो कि मैं तुमको उसी प्रकार के एक अचानक टूट पड़नेवाले अज़ाब से डराता हूँ जैसा आद और समूद पर उतरा था। (14) जब अल्लाह के रसूल उनके पास आगे और पीछे, हर ओर से आए और उन्हें समझाया कि अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करो तो उन्होंने कहा, ''हमारा रब चाहता तो फ़रिश्ते भेजता, अतः हम उस बात को नहीं मानते जिसके लिए तुम भेजे गए हो।''

(15) आद का हाल यह था कि वे ज़मीन में बिना किसी हक़ के बड़े बन बैठे और कहने लगे, ''कौन है हमसे ज़्यादा शक्तिशाली।'' उनको यह न सूझा कि जिस अल्लाह ने उनको पैदा किया है वह उनसे ज़्यादा शक्तिशाली है? वे हमारी आयतों का इनकार ही करते रहे, (16) आख़िरकार हमने कुछ अशुभ दिनों में प्रचण्ड तूफ़ानी हवा उनपर भेज दी ताकि उन्हें दुनिया की ज़िन्दगी में अपमानजनक अज़ाब का मज़ा चखा दें, और परलोक (आख़िरत) का अज़ाब तो उससे भी ज़्यादा अपमानजनक है, वहाँ कोई उनकी सहायता करनेवाला न होगा।

(17,18) रहे समूद, तो उनके सामने हमने सीधा रास्ता प्रस्तुत किया मगर उन्होंने मार्ग देखने के बजाय अन्धा बना रहना ही पसन्द किया। आख़िर उनकी करतूतों के कारण अपमान का अज़ाब उनपर टूट पड़ा और हमने उन लोगों को बचा लिया जो ईमान लाए थे और पथभ्रष्टता और बुरे काम से बचते थे।

(19) और तनिक उस समय को सोचो जब अल्लाह के ये दुश्मन दोज़ख़ की ओर जाने के लिए घेर लाए जाएँगे।[3] (20) उनके अगलों को पिछलों के आने तक रोक रखा जाएगा,[4] फिर जब सब वहाँ पहुँच जाएँगे तो उनके कान और उनकी आँखें और उनके ज़िस्म की खालें उनपर गवाही देंगी कि वे दुनिया में क्या कुछ करते रहे हैं। (21)

3. असल मक़सद यह कहना है कि जब वे अल्लाह की अदालत में पेश होने के लिए घेर लाए जाएँगे, लेकिन इस बात को इन शब्दों में बयान किया गया है कि दोज़ख़ की ओर जाने के लिए घेर लाए जाएँगे, क्योंकि उनका परिणाम आख़िरकार दोज़ख़ ही में जाना है।

वे अपने जिस्म की खालों से कहेंगे, ''तुमने हमारे विरुद्ध क्यो गवाही दी?'' वे जवाब देंगी, ''हमें उसी अल्लाह ने बोलने की शक्ति दीहै जिसने हर चीज़ को बोलता कर दिया है। उसी ने तुमको पहली बार पैदा किया था और अब उसी की ओर तुम वापस लाए जा रहे हो। (22) तुम दुनिया में अपराध करते समय जब छिपते थे तो तुम्हें यह ख़याल न था कि कभी तुम्हारे अपने कान और तुम्हारी आँखें और तुम्हारे जिस्म की खालें तुमपर गवाही देंगी। बल्कि तुमने तो यह समझा था कि तुम्हारे बहुत-से कामों की अल्लाह को भी ख़बर नहीं है। (23) तुम्हारा यही गुमान जो तुमने अपने रब के साथ किया था, तुम्हें ले डुबा और इसी कारण तुम घाटे में पड़ गए।'' (24) इस हालत में वे सब्र करें (या न करें) आग ही उनका ठिकाना होगी, और अगर रुजू का अवसर चाहेंगे तो कोई अवसर उन्हें न दिया जाएगा। (25) हमने उनपर ऐसे साथी तैनात कर दिए थे जो उन्हें आगे और पीछे हर चीज़ ख़ुशनुमा बनाकर दिखाते थे, आख़िरकार उनपर भी वही अज़ाब का फ़ैसला चस्पाँ होकर रहा जो उनसे पहले गुज़रे हुए जिन्नों और इनसानों के गिरोहों पर चस्पाँ हो चुका था, यक़ीनन वे घाटे में रह जानेवाले थे।

(26) ये सत्य का इनकार करनेवाले कहते हैं, ''इस क़ुरआन को हरगिज़ न सुनो और जब यह सुनाया जाए तो इसमें बाधा डालो, शायद कि इसी तरह तुम प्रभावी रहो।'' (27) इन इनकार करनेवालों को हम कठोर अज़ाब का मज़ा चखाकर रहेंगे और जो बड़ी बुरी हरकतें ये करते रहे हैं उनका पूरा-पूरा बदला इन्हें देंगे। (28) वह दोज़ख़ है जो अल्लाह के दुश्मनों को बदले में मिलेगी। उसी में हमेशा-हमेशा के लिए उनका घर होगा। यह है सज़ा इस अपराध की कि वे हमारी आयतों का इनकार करते रहे। (29) वहां ये इनकार करनेवाले कहेंगे कि ''ऐ हमारे रब, तनिक हमें दिखा दे उन जिन्नों और इनसानों को जिन्होंने हमें पथभ्रष्ट किया था, हम उन्हें पाँव तले रौंद डालेंगे ताकि वे अच्छी तरह अपमानित हों।''

(30) जिन लोगों ने कहा कि अल्लाह हमारा रब है और फिर वे इसपर जमे रहे,[5] यक़ीनन उनपर फ़रिश्ते उतरते हैं और उनसे कहते हैं कि ''न डरो, न ग़म करो, और ख़ुश हो जाओ उस जन्नत की ख़ुशख़बरी से जिसका तुमसे वादा किया गया है।

4. अर्थात् ऐसा नहीं होगा कि एक-एक नस्ल और एक-एक पीढ़ी का हिसाब करके उसका निर्णय एक के बाद दूसरे का किया जाता रहे, बल्कि सारी अगली-पिछली नस्लें एक ही समय में इकट्ठी की जाएँगी और उन सबका इकट्ठा हिसाब किया जाएगा क्योंकि हर बाद की नस्ल के अच्छे या बुरे होने में उससे पहले गुज़री हुई नस्ल की छोड़ी हुई धार्मिक और नैतिक मीरास का हिस्सा सम्मिलित होता है।

(31,32) हम इस दुनिया की ज़िन्दगी में भी तुम्हारे साथी हैं और आख़िरत में भी। वहाँ जो कुछ तुम चाहोगे तुम्हें मिलेगा और हर चीज़ जिसकी तुम कामना करोगे वह तुम्हारी होगी, यह है मेहमानी का सामान उस हस्ती की ओर से जो बड़ा ही माफ़ करनेवाला और दयावान् है।''

(33) और उस व्यक्ति की बात से अच्छी बात और किसकी होगी जिसने अल्लाह की ओर बुलाया और अच्छा कर्म किया और कहा कि मैं मुसलमान (आज्ञाकारी) हूँ।

(34) और ऐ नबी, भलाई और बुराई समान नहीं हैं। तुम बुराई को उस नेकी से दूर करो जो बेहतरीन हो। तुम देखोगे कि तुम्हारे साथ जिसका वैर पड़ा हुआ था वह जिगरी दोस्त बन गया है। (35) यह गुण प्राप्त नहीं होता मगर उन लोगों को जो सब्र करते हैं, और यह पद प्राप्त नहीं होता मगर उन लोगों को जो बड़े भाग्यवान हैं। (36) और अगर तुम शैतान की ओर से कोई उकसाहट महसूस करो तो अल्लाह की पनाह माँग[6] लो, वह सब कुछ सुनता और जानता है।

(37) अल्लाह की निशानियों में से हैं ये रात और दिन और सूरज और चाँद। सूरज और चाँद को सजदा न करो बल्कि उस अल्लाह को सजदा करो जिसने उन्हें पैदा किया है अगर वास्तव में तुम उसी की उपासना करनेवाले हो। (38) लेकिन अगर ये लोग गर्व में आकर अपनी ही बात पर अड़े रहें तो परवाह नहीं, जो फ़रिश्ते तेरे रब के निकटवर्ती हैं वे रात और दिन उसकी तसबीह (गुणगान) कर रहे हैं और कभी नहीं थकते।

---

5. अर्थात् सिर्फ़ संयोगावश कभी अल्लाह को अपना रब कहकर नहीं रह गए, और न इस ग़लती में पड़े कि अल्लाह को अपना रब कहते भी जाएँ और साथ-साथ दूसरों को अपना रब बनाते भी जाएँ, बल्कि एक बार यह धारणा ग्रहण कर लेने के बाद फिर ज़िन्दगी-भर इसपर जमे रहे, इसके विपरीत कोई दूसरी धारणा न अपनाई, न इस धारणा के साथ किसी ग़लत धारणा को मिलाया, और अपने व्यावहारिक जीवन में भी एकेश्वरवाद (तौहीद) की अपेक्षाओं को पूरा करते रहे।
6. शैतान की उकसाहट से मुराद है ग़ुस्सा दिलाना। जब आदमी यह महसूस करे कि गालियाँ देनेवाले और इलज़ाम घड़नेवाले विरोधियों की बातों पर दिल में ग़ुस्सा पैदा हो रहा है और जैसे को तैसा जवाब देने को मन चाह रहा है तो वह तुरन्त समझ ले कि यह शैतान है जो उसको अपने असभ्य विरोधियों के स्तर पर उतर आने के लिए उकसा रहा है।

(39) और अल्लाह की निशानियों में से एक यह है कि तुम देखते हो ज़मीन सूनी पड़ी हुई है, फिर ज्यों ही कि हमने उसपर पानी बरसाया, अचानक वह फबक उठती है और फूल जाती है। यक़ीनन जो अल्लाह इस मरी हुई ज़मीन को जिला उठाता है वह मुर्दों को भी जीवन प्रदान करनेवाला है। यक़ीनन उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(40) जो लोग हमारी आयतों को उलटे अर्थ पहनाते हैं वे हमसे कुछ छिपे हुए नहीं हैं। ख़ुद ही सोच लो कि क्या वह व्यक्ति अच्छा है जो आग में झोंका जानेवाला है या वह जो क़ियामत के दिन निश्चिन्तता की हालत में हाज़िर होगा? करते रहो जो कुछ तुम चाहो, तुम्हारी सारी हरकतों को अल्लाह देख रहा है। (41,42) ये वे लोग हैं जिनके सामने नसीहत भरी वाणी आई तो इन्होंने उसे मानने से इनकार कर दिया। मगर वास्तविकता यह है कि यह एक ज़बरदस्त किताब है, असत्य न सामने से इसपर आ सकता है न पीछे से,[7] यह एक तत्त्वदर्शी और प्रशंसित (ईश्वर) की उतारी हुई चीज़ है।

(43) ऐ नबी, तुमको जो कुछ कहा जा रहा है उसमें कोई चीज़ भी ऐसी नहीं हैं जो तुमसे पहले गुज़रे हुए रसूलों को न कही जा चुकी हो। बेशक तुम्हारा रब बड़ा माफ़ करनेवाला है, और इसके साथ बड़ी दर्दनाक सज़ा देनेवाला भी है।

(44) अगर हम इसको ग़ैर-अरबी (अजमी) क़ुरआन बनाकर भेजते तो ये लोग कहते, ''क्यों न इसकी आयतें खोलकर बयान की गई? क्या ही अजीब बात है कि कलाम (बात) ग़ैर-अरबी है और सुननेवाले अरबी।''[8] इनसे कहो यह क़ुरआन ईमान लानेवालों के लिए तो मार्गदर्शन और शिफ़ा (आरोग्य) है, मगर जो लोग ईमान नहीं लाते उनके लिए यह कानों की डाट और आँखों की पट्टी है। उनका हाल तो ऐसा है जैसे उनको दूर से पुकारा जा रहा हो। (45) इससे पहले हमने मूसा को किताब दी थी और

---

7. सामने से न आ सकने का अर्थ यह है कि क़ुरआन पर प्रत्यक्ष रूप से आक्रमण करके अगर कोई व्यक्ति उसकी किसी बात को ग़लत और किसी शिक्षा को असत्य और विकृत सिद्ध करना चाहे तो इसमें सफल नहीं हो सकता। पीछे से न आ सकने का अर्थ यह है कि क़ियामत तक कभी कोई तथ्य और वास्तविकता ऐसी उद्घाटित नहीं हो सकती जो क़ुरआन के पेश किए हुए तथ्यों के विपरीत हो, कोई ज्ञान ऐसा नहीं आ सकता जो वस्तुतः 'ज्ञान' हो और क़ुरआन के वर्णित ज्ञान का खण्डन करता हो, कोई अनुभव और निरीक्षण ऐसा नहीं हो सकता जो यह सिद्ध कर दे कि क़ुरआन ने धारणा, नैतिकता, क़ानून, सभ्यता और संस्कृति, अर्थ एवं समाज और राजनीति के विषय में इनसान का जो मार्ग प्रदर्शन किया है वह ग़लत है।

उसके मामले में भी यही विभेद हुआ था। अगर तेरे रब ने पहले ही एक बात निश्चित न कर दी होती तो इन विभेद करनेवालों के बीच फ़ैसला चुका दिया जाता। और वास्तविकता यह है कि ये लोग उसकी ओर से बड़ी बेचैनी पैदा करनेवाले शक में पड़े हुए हैं।

(46) जो कोई अच्छा कर्म करेगा अपने ही लिए अच्छा करेगा, जो बुराई करेगा उसका वबाल उसी पर होगा, और तेरा रब अपने बन्दों के हक़ में ज़ालिम नहीं है।

(47) उस घड़ी[9] का ज्ञान अल्लाह ही की ओर फिरता है, वही उन सारे फलों को जानता है जो अपने गाभों में से निकलते हैं, उसी को मालूम है कि कौन-सी मादा गर्भवती हुई है और किसने बच्चा जना है। फिर जिस दिन वह इन लोगों को पुकारेगा कि कहाँ हैं मेरे वे साझीदार? ये कहेंगे, "हम निवेदन कर चुके हैं, आज हममें से कोई इसकी गवाही देनेवाला नहीं है।" (48) उस समय वे सारे आराध्य इनसे गुम हो जाएँगे जिन्हें ये इससे पहले पुकारते थे, और ये लोग समझ लेंगे कि इनके लिए अब कोई पनाह लेने की जगह नहीं है।

(49,50) इनसान कभी भलाई की दुआ माँगते नहीं थकता, और जब कोई आफ़त इसपर आ जाती है तो निराश हो जाता और जी तोड़ बैठता है, मगर ज्यों ही कि कठिन समय बीत जाने के बाद हम इसे अपनी दयालुता का मज़ा चखाते हैं, यह कहता

8. यह उस हठधर्मी का एक नमूना है जिससे नबी (सल्ल॰) का मुक़ाबला किया जा रहा था। इनकार करनेवाले कहते थे कि मुहम्मद (सल्ल॰) अरब है, ये अगर अरबी में क़ुरआन पेश करते हैं तो कैसे विश्वास किया जा सकता है कि यह कलाम (वाणी) उन्होंने ख़ुद नहीं घड़ लिया है बल्कि इनपर अल्लाह ने अवतरित किया है। इस कलाम को अल्लाह का अवतरित किया हुआ कलाम तो उस समय माना जा सकता था जब ये किसी ऐसी भाषा में अचानक धुआँधार भाषण करना शुरू कर देते जिसे ये नहीं जानते, उदाहरणार्थ फ़ारसी या रूमी या यूनानी। इसपर अल्लाह कहता है कि अब इनकी अपनी भाषा में क़ुरआन भेजा गया है जिसे ये समझ सकें तो इनको यह एतिराज़ है कि एक अरब के द्वारा अरबी भाषा में यह कलाम क्यों उतारा गया? लेकिन अगर किसी दूसरी भाषा में यह भेजा जाता तो उस समय यही लोग आपत्ति करते कि यह मामला भी ख़ूब है। अरब क़ौम में एक अरब को रसूल बनाकर भेजा गया है, मगर कलाम उसपर ऐसी भाषा में उतारा गया है जिसे न रसूल समझता है न क़ौम।

9. मुराद है क़ियामत।

है कि "मैं इसी का हक़दार हूँ, और मैं नहीं समझता कि क़ियामत कभी आएगी, लेकिन अगर वास्तव में मैं अपने रब की ओर पलटाया गया तो वहाँ भी मज़े करूँगा।" हालाँकि इनकार करनेवालों को लाज़िमी तौर पर हम बताकर रहेंगे कि वे क्या करके आए हैं और उन्हें हम बड़े गन्दे अज़ाब का मज़ा चखाएँगे।

(51) इनसान को जब हम नेमत देते हैं तो वह मुँह फेरता है और अकड़ जाता है। और जब उसे कोई आफ़त छू जाती है तो बड़ी लम्बी-चौड़ी दुआएँ करने लगता है।

(52) ऐ नबी, इनसे कहो, कभी तुमने यही भी सोचा कि अगर वास्तव में यह क़ुरआन अल्लाह ही की ओर से हुआ और तुम इसका इनकार करते रहे तो उस व्यक्ति से बढ़कर भटका हुआ और कौन होगा जो इसके विरोध में दूर तक निकल गया हो?

(53) जल्द ही हम इनको अपनी निशानियाँ बाहरी दुनिया में भी दिखाएँगे और इनके अपने अन्तःकरण में भी, यहाँ तक कि इनपर यह बात खुल जाएगी कि यह क़ुरआन वास्तव में सत्य है। क्या यह बात काफ़ी नहीं है कि तेरा रब हर चीज़ का साक्षी है? (54) सावधान रहो, ये लोग अपने रब से मिलन में शक रखते हैं। सुन रखो, वह हर चीज़ को अपने घेरे में लिए हुए है।[10]



10. अर्थात् कोई चीज़ न उसकी पकड़ से बाहर है न उसके ज्ञान से छिपी हुई।

42. अश-शूरा

नाम

आयत 38 के वाक्यांश ''अपने मामले आपस के परामर्श (अश-शूरा) से चलाते हैं,'' से उद्धृत है। इस नाम का मतलब यह है कि वह सूरा जिसमें शूरा शब्द आया है।

अवतरणकाल

इसकी विषय-वस्तु पर विचार करने से साफ़ महसूस होता है कि यह सूरा 41 (हा॰ मीम॰ अस-सजदा) के पश्चात् संसर्गतः अवतरित हुई होगी, क्योंकि यह एक प्रकार से बिलकुल उसकी अनुपूरक दिखाई देती है। सूरा 41 (हा॰ मीम॰ अस-सजदा) में क़ुरैश के सरदारों के अन्धे-बहरे विरोध पर बड़ी गहरी चोटें की गई थीं, उस चेतावनी के तुरन्त पश्चात् यह सूरा अवतरित की गई जिसने समझाने-बुझाने का हक़ अदा कर दिया।

विषय और वार्ता

बात का आरम्भ इस तरह किया गया है कि (मुहम्मद (सल्ल॰) पर ईश-प्रकाशना कोई निराली बात नहीं।) ऐसी ही प्रकाशना इसी प्रकार के आदेश के साथ अल्लाह इससे पहले भी नबियों (उन पर ईश्वर की दया और कृपा हो) पर निरन्तर भेजता रहा है। इसके बाद बताया गया है कि नबी (सल्ल॰) केवल बेसुध लोगों को चौकाने और भटके हुओं को रास्ता बताने आया है। (वह ख़ुदा के पैदा किए हुए लोगों के भाग्य का मालिक नहीं बनाया गया है।) उसकी बात न माननेवालों का संप्रेक्षण और उन्हें यातना देना या न देना अल्लाह का अपना काम है। फिर इस समस्या के रहस्य को व्यक्त किया गया है कि अल्लाह ने सारे मनुष्यों को जन्मजात सत्यनिष्ठ क्यों न बना दिया और यह मतभेद की सामर्थ्य क्यों दे दी जिसके कारण लोग विचार और कर्म के हर उल्टे-सीधे रास्ते पर चल पड़ते हैं। इसके बाद यह बताया गया है कि जिस धर्म को मुहम्मद (सल्ल॰) प्रस्तु कर रहे हैं, वह वास्तव में है क्या। उसका सर्वप्रथम आधार यह है कि अल्लाह चूँकि जगत् और मानव का स्रष्टा, मालिक और वास्तविक संरक्षक मित्र है, इसलिए वही मानव का शासक भी है और उसी को यह अधिकार प्राप्त है कि मानव को दीन और शरीअत (धर्म और विधि-विधान अर्थात् धारणा और कर्म की प्रणाली) प्रदान करे। दूसरे शब्दों में नैसर्गिक प्रभुत्व की तरह विधि-विधान सम्बन्धी प्रभुत्व भी अल्लाह ही के लिए सुरक्षित है। इसी आधार पर अल्लाह ने आदिकाल से मानव के लिए धर्म निर्धारित किया है। वह एक ही धर्म था जो हरेक युग में समस्त नबियों को दिया जाता रहा। कोई

नबी भी अपने किसी अलग धर्म का प्रवर्तक नहीं था। वह धर्म सदैव इस उद्देश्य के लिए भेजा गया है कि धरती पर वही स्थापित और प्रचलित और क्रियान्वित हो। पैग़म्बर (उनपर ईश-दया और कृपा हो) इस धर्म के मात्र प्रचार पर नहीं, बल्कि उसे स्थापित करने के सेवा-कार्य पर नियुक्त किए हुए थे। मानव-जाति का दूसरा धर्म यही था, किन्तु नबियों के पश्चात् हमेशा यही होता रहा कि स्वार्थी लोग उसके अन्दर अपने स्वेच्छाचार, अहंकार और आत्म प्रदर्शन की भावना के कारण अपने व्यक्तिगत हित के लिए साम्प्रदायिकता खड़ी करके नए-नए धर्म अविष्कृत करते रहे। अब मुहम्मद (सल्ल॰) इसलिए भेजे गए हैं कि कृत्रिम पंथों और कृत्रिम धर्मों और मानव-रचित धर्मों की जगह वही वास्तविक धर्म लोगों के समक्ष प्रस्तुत करें और (पूरी दृढ़ता के साथ) उसी को स्थापित करने की कोशिश करें। तुम लोगों को एहसास नहीं है कि अल्लाह के धर्म को छोड़कर अल्लाह के अतिरिक्त दूसरों के बनाए हुए धर्म और क़ानून को ग्रहण करना अल्लाह के मुक़ाबले में कितना बड़ा दुस्साहस है। अल्लाह की दृष्टि में ये निकृष्टतम बहुदेववादी प्रथा और जघन्य अपराध है, जिसका कठोर दण्ड भुगतना पड़ेगा। इस तरह धर्म की एक साफ़ और स्पष्ट धारणा प्रस्तुत करने के पश्चात् कहा गया है कि तुम लोगों को समझाकर सीधे रास्ते पर लाने के लिए जो उत्तम-से-उत्तम उपाय सम्भव था वह प्रयोग में लाया जा चुका। इसपर भी यदि तुम मार्ग न पाओ तो फिर संसार में कोई चीज़ तुम्हें सीधे रास्ते पर नहीं ला सकती। इन यथार्थ तथ्यों को प्रस्तुत करते हुए बीच-बीच में संक्षिप्त रूप में एकेश्वरवाद और परलोकवाद के प्रमाण दिए गए हैं और सांसारिकता के परिणामों से सावधान किया गया है। फिर वार्ता को समाप्त करते हुए दो महत्त्वपूर्ण बाते कही गई हैं :

एक यह कि मुहम्मद (सल्ल॰) को अपने जीवन के आरम्भिक 40 वर्षों मे किताब की धारणा से बिलकुल रहित और ईमान की समस्याओं और वार्ताओं से नितान्त अनभिज्ञ रहना, और फिर अचानक इन दोनों चीज़ों को लेकर संसार के समक्ष आ जाना आपके नबी होने का स्पष्ट प्रमाण है। दूसरे यह कि ईश्वर ने यह शिक्षा तमाम नबियों की तरह आप (सल्ल॰) को भी तीन तरीक़ों से दी है— एक प्रकाशना, दूसरे परदे के पीछे से आवाज़ और तीसरे फ़रिश्ते के द्वारा संदेश। यह इसलिए स्पष्ट किया गया, ताकि विरोधी लोग यह मिथ्यारोपण न कर सके कि नबी (सल्ल॰) ईश्वर से उसके सम्मुख होकर बात करने का दावा कर रहे हैं।



42. सूरा अश-शूरा

(मक्का में उतरी–आयतें 53)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हा॰ मीम॰, (2) ऐन॰ सीन॰ क़ाफ़॰। (3) इसी तरह अल्लाह प्रभुत्वशाली व तत्त्वदर्शी तुम्हारी ओर और तुमसे पहले गुज़रे हुए (रसूलों) की ओर प्रकाशना (वह्य) करता रहा है।[1] (4) आसमानों और ज़मीन में जो कुछ भी है उसी का है, वह सर्वोच्च और महान है। (5) क़रीब है कि आसमान ऊपर से फट[2] पड़े। फ़रिश्ते अपने रब की प्रशंसा के साथ तसबीह (महिमागान) कर रहे हैं और ज़मीनवालों के हक़ में माफ़ीकी प्रार्थनाएँ किए जाते हैं। सावधान रहो, वास्तव में अल्लाह बड़ा ही माफ़ करनेवाला और दयावान् है। (6) जिन लोगों ने उसको छोड़कर अपने कुछ दूसरे संरक्षक[3] बना रखे हैं,

1. अर्थात् जो बातें क़ुरआन में बयान की जा रही हैं यही बातें अल्लाह ने प्रकाशना (वह्य) द्वारा रसूल (सल्ल॰) पर उतारी हैं और पहले रसूलों पर भी यही बातें उतारता रहा है।
2. अर्थात् यह कोई साधारण बात तो नहीं है कि अल्लाह के ईश्वरत्व में किसी हैसियत से भी किसी को साझी ठहराया जाए। यह ऐसी ज़्यादती की बात है कि इसपर अगर आसमान फट पड़ें तो कुछ असंभव नहीं है।
3. मूल ग्रन्थ में 'औलिया' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ अरबी भाषा में बहुत व्यापक है। झूठे उपास्यों के सम्बन्ध में गुमराह लोगों की विभिन्न धारणाएँ और बहुत-सी विभिन्न नीतियाँ हैं जिनको क़ुरआन में 'अल्लाह के सिवा दूसरों को अपना वली बनाने' से अभिहित किया गया है। क़ुरआन की दृष्टि से इनसान उस सत्ता या हस्ती को अपना वली बनाता है : (1) जिसके कहने पर वह चले, जिसके आदेशों पर अमल करे और जिसकी नियत की हुई पद्धतियों, रीतियों और क़ानूनों और व्यवस्थाओं का पालन करे, (2) जिसके मार्गदर्शन पर वह भरोसा करे और यह समझे कि वह उसे सही मार्ग बतानेवाला और ग़लती से बचानेवाला है, (3) जिसके बारे में वह यह समझे कि मैं दुनिया में चाहे कुछ करता रहूँ, वह मुझे उसके बुरे परिणामों से, और अगर अल्लाह है और 'आख़िरत' भी होनेवाली है, तो उसके अज़ाब से बचा लेगा, और (4) जिसके बारे में वह यह समझे कि वह दुनिया में अलौकिक रीति से उसकी सहायता करता है, आपदाओं और मुसीबतों से उसकी रक्षा करता है, उसे रोज़गार दिलवाता है, संतान देता है, मनोकामनाएँ पूरी करता है, और दूसरी हर तरह की ज़रूरतें पूरी करता है।

अल्लाह ही उनपर निगराँ है, तुम उनके हवालेदार नहीं हो।

(7) हाँ इसी तरह ऐ नबी, यह अरबी क़ुरआन हमने तुम्हारी ओर 'वह्य' किया है ताकि तुम बस्तियों के केन्द्र (मक्का शहर) और उसके चारों ओर रहनेवालों को सचेत कर दो, और इकट्ठा होने के दिन (क़ियामत) से डरा दो जिसके आने में कोई शक नहीं। एक गिरोह को 'जन्नत' में जाना है और दूसरे गिरोह को दोज़ख़ में।

(8) अगर अल्लाह चाहता तो इन सबको एक ही समुदाय (उम्मत) बना देता, मगर वह जिसे चाहता है अपनी दयालुता में प्रवेश कराता है, और ज़ालिमों का न कोई संरक्षक है न सहायक। (9) क्या ये (ऐसे नादान हैं कि) इन्होंने उसे छोड़कर दूसरे संरक्षक बना रखे हैं? संरक्षक तो अल्लाह ही है, वही मुर्दों को ज़िन्दा करता है, और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(10) तुम्हारे[4] बीच जिस मामले में भी विभेद हो, उसका फ़ैसला करना अल्लाह का काम है। वही अल्लाह मेरा रब है, उसी पर मैंने भरोसा किया, और उसी की ओर मैं रुजू करता हूँ। (11) आसमानों और ज़मीन का बनानेवाला, जिसने तुम्हारी अपनी जाति से तुम्हारे लिए जोड़े पैदा किए, और इसी तरह जानवरों में भी (उन्हीं के सहजातीय) जोड़े बनाए, और इस तरीक़े से वह तुम्हारी नसलें फैलाता है। संसार की कोई चीज़ उसके सदृश नहीं, वह सब कुछ सुनने और देखनेवाला है, (12) आसमान और ज़मीन के ख़ज़ानों की कुंजियाँ उसी के पास हैं, जिसे चाहता है खुली रोज़ी देता है और जिसे चाहता है नपा-तुला देता है, उसे हर चीज़ का ज्ञान है।

(13) उसने तुम्हारे लिए धर्म की वही पद्धति नियत की है जिसका आदेश उसने नूह को दिया था, और जिसे (ऐ मुहम्मद) अब तुम्हारी ओर हमने प्रकाशना (वह्य) के द्वारा भेजी है, और जिसका आदेश हम इबराहीम और मूसा और ईसा को दे चुके हैं, इस ताकीद के साथ कि क़ायम करो इस दीन (धर्म) को और इसमें अलग-अलग न हो जाओ। यही बात इन बहुदेववादियों को बहुत अप्रिय लगी है जिसकी ओर (ऐ मुहम्मद)

4. यहाँ से आयत 12 के अन्त तक पूरा वर्णय यद्यपि अल्लाह की ओर से अवतरित है लेकिन इसमें वक्ता अल्लाह नहीं है बल्कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हैं। मानो प्रतापवान अल्लाह अपने नबी को आदेश दे रहा है कि तुम यह घोषणा करो। इसका उदाहरण क़ुरआन की सूरा 1 (फ़ातिहा) है जो है तो अल्लाह की वाणी, मगर बन्दे अपनी ओर से उसको प्रार्थना के रूप में अल्लह के सामने पेश करते हैं।

तुम उन्हें आमंत्रण दे रहे हो। अल्लाह जिसे चाहता है अपना कर लेता है, और वह अपनी ओर आने का मार्ग उसी को दिखाता है जो उसकी ओर रुजू करे।

(14) लोगों में जो विभेद ज़ाहिर हुआ वह इसके बाद हुआ कि उनके पास ज्ञान आ चुका था, और इस कारण हुआ कि वे परस्पर एक-दूसरे पर ज़्यादती करना चाहते थे। अगर तेरा रब पहले ही यह न कह चुका होता कि एक नियत समय तक फ़ैसला स्थगित रखा जाएगा तो उनका झगड़ा चुका दिया गया होता. और वास्तविकता यह है कि अगलों के बाद जो लोग किताब के उत्तराधिकारी बनाए गए वे उसकी ओर से बड़े विकलताजनक सन्देह में पड़े हुए हैं।[5]

(15) (चूँकि यह हालत पैदा हो चुकी है) इसलिए ऐ नबी अब तुम उसी धर्म की ओर निमंत्रण दो, और जिस तरह तुम्हें आदेश दिया गया है उसी पर मज़बूती से जम जाओ, और इन लोगों की इच्छाओं का अनुपालन न करो, और इनसे कह दो कि : ''अल्लाह ने जो किताब भी उतारी है मैं उसपर ईमान लाया। मुझे आदेश हुआ है कि मैं तुम्हारे बीच इनसाफ़ करूँ। अल्लाह ही हमारा रब भी है और तुम्हारा रब भी। हमारे कर्म हमारे लिए हैं और तुम्हारे कर्म तुम्हारे लिए। हमारे बीच कोई झगड़ा[6] नहीं। अल्लाह एक दिन हम सबको इकट्ठा करेगा और उसी की ओर सबको जाना है।''

(16) अल्लाह की पुकार को आगे बढ़कर स्वीकार कर लेने के बाद जो लोग (स्वीकार करनेवालों से) अल्लाह के मामले में झगड़े करते हैं, उनका वाद-विवाद उनके रब की दृष्टि में ग़लत है, और उनपर उसका ग़ज़ब है और उनके लिए कठोर यातना है।

(17) वह अल्लाह ही है जिसने सत्यतापूर्वक यह किताब और तुला[7] अवतरित

5. अर्थात् बाद की नस्लों को यह भरोसा नहीं रहा है कि जो किताबें उनको पहुँची हैं वे कहाँ तक अपने वास्तविक रूप में हैं और कहाँ तक उनमें मिलावट हो चुकी है। वे यह भी विश्वास के साथ नहीं जानते कि उनके नबी क्या शिक्षा लाए थे। हर चीज़ उनके यहाँ संदिग्ध है और ज़ेहनों में उलझन पैदा कर रही है।

6. अर्थात् उचित प्रमाणों से बात समझाने का जो हक़ था वह हमने अदा कर दिया। अब अकारण तू-तू मैं-मैं करने से क्या लाभ। तुम अगर झगड़ा करो भी तो हम तुमसे झगड़ने के लिए तैयार नहीं हैं।

7. तुला से मुराद अल्लाह की 'शरीअत' (धर्म विधान) है जो तराज़ू की तरह तौलकर सही और ग़लत, सत्य और असत्य, अन्याय और न्याय और औचित्य और अनौचित्य का अन्तर स्पष्ट कर देती है।

की। और तुम्हें क्या ख़बर, शायद कि फ़ैसले की घड़ी क़रीब ही आ लगी हो। (18) जो लोग उसके आने पर ईमान नहीं रखते वे तो उसके लिए जल्दी मचाते हैं, मगर जो उसपर ईमान रखते हैं वे उससे डरते हैं और जानते हैं कि यक़ीनन वह आनेवाली है। ख़ूब सुन लो, जो लोग उस घड़ी के आने में शक डालनेवाले वाद-विवाद करते हैं वे गुमराही में बहुत दूर निकल गए हैं।

(19) अल्लाह अपने बन्दों पर बहुत दयालु है। जिसे जो चाहता है देता है, और वह बड़ी शक्तिवाला और प्रभुत्वशाली है। (20) जो कोई आख़िरत की खेती चाहता है उसकी खेती को हम बढ़ाते हैं, और जो दुनिया की खेती चाहता है उसे दुनिया ही में से देते हैं मगर आख़िरत में उसका कोई हिस्सा नहीं है।

(21) क्या ये लोग कुछ ऐसे अल्लाह के साझीदार रखते है जिन्होंने इनके लिए धर्म के प्रकार की एक ऐसी पद्धति नियत कर दी है जिसकी अल्लाह ने अनुमति नहीं दी?[8] अगर फ़ैसले की बात तय न पा गई होती तो इनका झगड़ा चुका दिया गया होता। यक़ीनन इन ज़ालिमों के लिए दर्दनाक अज़ाब है। (22) तुम देखोगे कि ये ज़ालिम उस समय अपने किए के परिणाम से डर रहे होंगे और वह इनपर आकर रहेगा। इसके विपरीत जो लोग ईमान ले आए हैं और जिन्होंने अच्छे कर्म किए हैं वे जन्नत के बाग़ों में होंगे, जो कुछ भी वे चाहेंगे अपने रब के यहाँ पाएँगे, यही बड़ा अनुग्रह है। (23) यह है वह चीज़ जिसकी ख़ुशख़बरी अल्लाह अपने उन बन्दों को देता है जिन्होंने मान लिया और अच्छे कर्म किए। ऐ नबी, इन लोगों से कह दो कि ''मैं इस काम पर तुमसे किसी

8. इस आयत में 'शुरका' (साझीदार) से मुराद विदित है कि वे साझीदार नहीं हैं जिनसे लोग दुआएँ माँगते हैं, या जिनको चढ़ावे और भेंट चढ़ाते हैं, या जिनके आगे पूजा-पाठ की रीतियाँ निभाते हैं। बल्कि अनिवार्य रूप से उनसे मुराद वे इनसान हैं जिनको लोगों ने आदेश एवं निर्णय के मामले में साझीदार ठहरा लिया है, जिनके सिखाए हुए विचार एवं धारणाओं और दर्शनों पर लोग ईमान लाते हैं, जिनके दिए हुए मानदण्डों को मानते हैं, जिनके प्रस्तुत किए हुए नैतिक सिद्धान्तों और सभ्यता एवं संस्कृति के आदर्शों को स्वीकार करते हैं, जिनके नियत किए हुए क़ानूनों और तरीक़ों और नियमों को अपनी धार्मिक रीतियों और उपासनाओं में, अपने व्यक्तिगत जीवन में, अपनी सामाजिकता में, अपनी संस्कृति में, अपने कारोबार और लेन-देन में, और अपनी राजनीति और शासन में इस तरह अंगीकार करते हैं कि मानो यही वह 'शरीअत' (धर्म विधान) है जिसका अनुपालन उनको करना चाहिए।

बदले का उम्मीदवार नहीं हूँ, अलबत्ता समीपता का प्रेम-भाव ज़रूर चाहता हूँ।''[9] जो कोई भलाई कमाएगा हम उसके लिए इस भलाई में अच्छाई की बढ़ोतरी कर देंगे। यक़ीनन अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और गुणग्राहक है।

---

9. इस आयत की तीन व्याख्याएँ की गई हैं : (1) ''मैं तुमसे इस काम पर कोई बदला नहीं माँगता, मगर यह ज़रूर चाहता हूँ कि तुम लोग (अर्थात क़ुरैशवाले) कम से कम उस नातेदारी का तो आदर करो जो मेरे और तुम्हारे बीच है। यह कैसा अन्याय है कि सबसे बढ़कर तुम ही मेरी दुश्मनी पर तुल गए हो।'' (2) ''मैं तुमसे इस काम पर कोई बदला इसके सिवा नहीं चाहता कि तुम्हारे अन्दर में अल्लाह के सामिप्य की चाहत पैदा हो जाए।'' (3) तीसरी व्याख्या जिन टीकाकारों ने की है उनमें से कुछ की दृष्टि में नातेदार से मुराद अब्दुल मुत्तलिब के तमाम वंशज हैं, और कुछ इसे सिर्फ़ हज़रत अली (रज़ि॰) और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) और उनकी सन्तान तक सीमित रखते हैं लेकिन विभिन्न कारणों से यह टीका किसी तरह भी स्वीकार करने योग्य नहीं हो सकती। एक तो जिस समय मक्का में सूरा शूरा उतरी है उस समय हज़रत अली (रज़ि॰) और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) का विवाह तक नहीं हुआ था, औलाद का क्या प्रश्न। और अब्दुल मुत्तलिब के कुल में सब के सब नबी (सल्ल॰) का साथ नहीं दे रहे थे, बल्कि उनमें से कुछ खुल्लम-खुल्ला दुश्मनों के साथी थे, और अबूलहब की शत्रुता को तो सारी दुनिया जानती है। दूसरे नबी (सल्ल॰) के रिश्तेदार सिर्फ़ अब्दुल मुत्तलिब के कुल के लोग ही न थे। आपकी माँ, आपके बाप और आपकी आदरणीया पत्नी हज़रत ख़दीज़ा (रज़ि॰) के माध्यम से क़ुरैश के सभी घरानों में आपकी रिश्तेदारियाँ थीं। उन सब घरानों में आपके अच्छे समर्थक भी थे और अत्यन्त बुरे दुश्मन भी। तीसरी बात, जो इन सबसे अधिक महत्त्व की है, वह यह है कि एक नबी जिस उच्च स्थान पर खड़ा होकर अल्लाह की ओर बुलाने की पुकार लगाता है उस स्थान से इस महान् कार्य पर यह बदला माँगना कि तुम मेरे नातेदारों से प्रेम करो, इतनी गिरी हुई बात है कि कोई सुरुचि रखनेवाला व्यक्ति इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता कि अल्लाह ने अपने नबी को यह बात सिखाई होगी और नबी ने क़ुरैश के लोगों में खड़े होकर यह बात कही होगी। फिर यह बात और भी बेमौक़ा दिखाई देती है जब हम देखते हैं कि इसका सम्बोधन ईमानवालों से नहीं बल्कि इनकार करनेवालों से है। ऊपर से सारा अभिभाषण उन्हीं को सम्बोधित करते हुए चला आ रहा है, और आगे भी वार्ता का रुख़ उन्हीं की ओर है। इस वार्ताक्रम में विरोधियों से किसी तरह का बदला माँगने का आख़िर सवाल ही कहाँ पैदा होता है। बदला तो उन लोगों से माँगा जाता है जिनकी दृष्टि में उस काम का कोई मूल्य हो जो किसी व्यक्ति ने उनके लिए किया हो।

(24) क्या ये लोग कहते हैं कि इस व्यक्ति ने अल्लाह पर झूठा आरोप घड़ लिया है? अगर अल्लाह चाहे तो तुम्हारे दिल पर ठप्पा लगा दे।[10] वह असत्य को मिटा देता है और सत्य को अपने आदेशों से सत्य कर दिखाता है। वह सीनों के छिपे हुए रहस्य जानता है। (25) वही है जो अपने बन्दों से तौबा क़बूल करता है और बुराइयों को माफ़ करता है, हालाँकि तुम लोगों के सब कर्मों का उसे ज्ञान है। (26) वह ईमान लानेवालों और अच्छे कर्म करनेवालों की दुआ को क़बूल करता है और अपने अनुग्रह से उनको और ज़्यादा देता है। रहे इनकार करनेवाले, तो उनके लिए कठोर सज़ा है।

(27) अगर अल्लाह अपने सब बन्दों को खुली रोज़ी दे देता तो वे ज़मीन में सरकशी का तूफ़ान खड़ा कर देते, मगर वह एक हिसाब से जितनी चाहता है उतारता है, यक़ीनन वह अपने बन्दों की ख़बर रखनेवाला है और उनपर निगाह रखता है। (28) वहीहै जो लोगों के निराश हो जाने के बाद मेंह बरसाता है और अपनी दयालुता फैला देता है, और वही प्रशंसा योग्य संरक्षक है। (29) उसकी निशानियों में से है यह धरती और आसमानों की रचना, और ये सजीव रचनाएँ जो उसने दोनों जगह फैला रखी हैं। वह जब चाहे उन्हें इकट्ठा कर सकता है। (30) तुम लोगों पर जो मुसीबत भी आई है, तुम्हारे अपने हाथों की कमाई से आई है,[11] और बहुत-से अपराधों को वह वैसे ही माफ़ कर जाता है। (31) तुम ज़मीन में अपने अल्लाह को निरुपाय कर देने वाले नहीं हो, और अल्लाह के मुक़ाबले में तुम कोई संरक्षक और सहायक नहीं रखते। (32) उसकी निशानियों में से हैं ये जहाज जो समुद्र में पहाड़ों की तरह दिखाई देते हैं। (33,34) अल्लाह जब चाहे हवा को ठहरा दे और ये समुद्र की पीठ पर खड़े के खड़े रह जाएँ—इसमें बड़ी निशानियाँ हैं हर उस व्यक्ति के लिए जो पूर्णतः सब्र से काम करनेवाला और कृतज्ञता दिखानेवाला हो—या (उनपर सवार होनेवालों के) बहुत-से गुनाहों को माफ़ करते हुए उनकी कुछ ही करतूतों के बदले में उनहें डुबो दे, (35) और उस समय हमारी आयतों में झगड़े करनेवालों को पता चल जाए कि उनके लिए कोई पनाह की जगह नहीं है।

---

10. मतलब यह है क ि ऐ नबी, इन लोगों ने तुम्हें भी अपने ही ढंग का आदमी समझ लिया है। जिस तरह ये ख़ुद अपने स्वार्थों के लिए हर बड़े से बड़ा झूठ बोल जाते हैं, इन्होंने सोचा कि तुम भी उसी तरह अपनी दुकान चमकाने के लिए एक झूठ घड़ लाए हो। लेकिन यह अल्लाह की कृपा है कि उसने तुम्हारे दिल पर वह ठप्पा नहीं लगाया है जो इनके दिलों पर लगा रखा है।
11. इशारा है मक्का के उस अकाल की ओर जो उस समय में पड़ा था।

(36) जो कुछ भी तुम लोगों को दिया गया है वह सिर्फ़ दुनिया की कुछ दिनों की ज़िन्दगी का सामान है और जो कुछ अल्लाह के यहाँ है वह अच्छा भी है और बाक़ी रहनेवाला भी। वह उन लोगों के लिए है जो ईमान लाए हैं और अपने रब पर भरोसा करते हैं, (37) जो बड़े-बड़े गुनाहों और अश्लील कर्मों से बचते हैं और अगर ग़ुस्सा आ जाए तो माफ़ कर जाते हैं, (38,39) जो अपने रब का आदेश मानते हैं, नमाज़ क़ायम करते हैं, अपने मामले आपस के परामर्श से चलाते हैं, हमने जो कुछ भी रोज़ी उन्हें दी है उसमें से ख़र्च करते हैं, और जब उनपर ज़्यादती की जाती है तो उसका मुक़ाबला करते हैं (40)—बुराई[12] का बदला वैसी ही बुराई है, फिर जो कोई माफ़ कर दे और सुधार करे उसका बदला अल्लाह के ज़िम्मे है, अल्लाह ज़ालिमों को पसन्द नहीं करता। (41) और जो लोग ज़ुल्म होने के बाद बदला ले तो उनकी निन्दा नहीं की जा सकती, (42) निन्दनीय तो वे हैं जो दूसरों पर ज़ुल्म करते हैं और ज़मीन में नाहक़ ज़्यादतियाँ करते हैं। ऐसे लोगों के लिए दर्दनाक अज़ाब है। (43) अलबत्ता जो व्यक्ति सब्र से काम ले और माफ़ करे, तो यह बड़े साहसपूर्ण कामों में से है।

(44) जिसको अल्लाह ही गुमराही में फेंक दे, उसका कोई संभालनेवाला अल्लाह के बाद नहीं है। तुम देखोगे कि ये ज़ालिम जब अज़ाब देखेंगे तो कहेंगे अब पलटने की भी कोई राह है? (45,46) और तुम देखोगे कि ये जहन्नम के सामने जब लाए जाएँगे तो अपमान के कारण झुके जा रहे होंगे और उसको निगाह बचा-बचाकर कनखियों से देखेंगे। उस समय वे लोग जो ईमान लाए थे कहेंगे कि वास्तव में वास्तविक घाटा उठानेवाले वही हैं जिन्होंने आज क़ियामत के दिन अपने-आपको और अपने सम्बन्धियों को घाटे में डाल दिया। सावधान रहो, ज़ालिम लोग स्थायी अज़ाब में होंगे और उनके कोई समर्थक और संरक्षक न होंगे जो अल्लाह के मुक़ाबले में उनकी सहायता को आएँ। जिसे अल्लाह गुमराही में फेंक दे उसके लिए बचाव की कोई राह नहीं।

(47) मान लो अपने रब की बात इससे पहले कि वह दिन आए जिसके टलने का कोई उपाय अल्लाह की ओर से नहीं है। उस दिन तुम्हारे लिए कोई पनाह लेने की जगह न होगी और न कोई तुम्हारी हालत को बदलने की कोशिश करनेवाला होगा।[13] (48) अब अगर ये लोग मुँह मोड़ते हैं तो ऐ नबी, हमने तुमको इनपर निगाहबान

12. यहाँ से आयत 43 के अन्त तक का बयान इससे पहले गुज़री हुई आयत की व्याख्या है।

बनाकर तो नहीं भेजा है। तुमपर तो सिर्फ़ बात पहुँचा देने की ज़िम्मेदारी है। इनसान का हाल यह है कि जब हम उसे अपनी दयालुता का मज़ा चखाते हैं तो उसपर फूल जाता है, और अगर उसके अपने हाथों का किया-धरा किसी मुसीबत के रूप में उसपर उलट पड़ता है तो बड़ा कृतघ्न बन जाता है।

(49,50) अल्लाह ज़मीन और आसमानों की बादशाही का मालिक है, जो कुछ चाहता है पैदा करता है, जिसे चाहता है लड़कियाँ देता है, जिसे चाहता है लड़के देता है, जिसे चाहता है लड़के और लड़कियाँ मिला-जुलाकर देता है, और जिसे चाहता है बाँझ कर देता है। वह सब कुछ जानता और हर चीज़ की सामर्थ्य रखता है।

(51) किसी इनसान का यह मक़ाम नहीं है कि अल्लाह उससे आमने-सामने बात करे। उसकी बात या तो वह्य (संकेत)[14] के तौर पर होती है, या पर्दे के पीछे से,[15] या फिर वह कोई सन्देशवाहक (फ़रिश्ता) भेजता है और वह उसके आदेश से जो कुछ वह चाहता है प्रकाशना (व्यक्त) करता है,[16] वह सर्वोच्च और तत्त्वदर्शी है। (52) और इसी प्रकार (ऐ नबी) हमने अपने आदेश से एक 'रूह' (प्राण एवं सारतत्व) तुम्हारी ओर प्रकाशना की है।[17] तुम्हें कुछ पता न था कि किताब क्या होती है और ईमान क्या होता है, मगर उस रूह को हमने एक प्रकाश बना दिया जिससे हम मार्ग दिखाते हैं अपने बन्दों

13. मूल शब्द हैं "मा लकुम मिन नकीर"। इस वाक्य के कई अर्थ और भी हैं। एक यह कि तुम अपनी करतूतों में से किसी का इनकार न कर सकोगे। दूसरे यह कि तुम भेस बदलकर कहीं छिप न सकोगे। तीसरे यह कि तुम्हारे साथ जो कुछ भी किया जाएगा उसपर तुम कोई विरोध प्रकाशन और क्रोध प्रदर्शन न कर सकोगे। चौथे यह कि तुम्हारे बस में न होगा कि जिस दशा में तुम ग्रस्त किए गए हो उसे बदल सको।

14. यहाँ वह्य (प्रकाशना) से मुराद है दैवी प्रेरणा, ईश्वरीय संकेत, दिल में कोई बात डाल देना, या स्वप्न में कुछ दिखा देना जैसे हज़रत इबराहीम (अलै॰) और हज़रत यूसुफ़ (अलै॰) को दिखाया गया।

15. मुराद यह है कि बन्दा एक आवाज़ सुने, मगर बोलनेवाला उसे दिखाई न दे, जिस तरह हज़रत मूसा (अलै॰) के साथ हुआ कि तूर के दामन में एक पेड़ से अचानक उन्हें आवाज़ आनी शुरू हुई मगर बोलनेवाला उनकी दृष्टि से ओझल था।

16. यह प्रकाशना के आने की वह शक्ल है जिसके द्वारा सारी आसमानी किताबें नबियों तक पहुँची हैं।

में से जिसे चाहते हैं। यक़ीनन तुम सीधे मार्ग की ओर पथप्रदर्शन कर रहे हो, (53) उस अल्लाह के मार्ग की ओर जो ज़मीन और आसमानों की हर चीज़ का मालिक है। सावधान रहो, सारे मामले अल्लाह ही की ओर रुजू करते हैं।



17. 'इसी प्रकार' से मुराद सिर्फ़ अंतिम तरीक़ा नहीं है बल्कि वे तीनों तरीक़े हैं जो ऊपर की आयतों में उल्लिखित हुए हैं, और 'रूह' (प्राण-तत्व) से मुराद 'वह्य' (प्रकाशना), या वह शिक्षा है जो प्रकाशना के द्वारा नबी (सल्ल॰) को प्रदान की गई।

43. अज़-ज़ुख़रुफ़

नाम

आयत 35 के शब्द 'वज़्ज़ुख़रुफ़न' (चाँदी और सोने के) से उद्धृत है। मतलब यह है कि यह वह सूरा है जिसमें ज़ुख़रुफ़ शब्द आया है।

अवतरणकाल

इसकी वार्ताओं पर विचार करने से साफ़ महसूस होता है कि यह सूरा भी उसी कालखण्ड में अवतरित हुई है, जिसमें सूरा 40 (अल-मोमिन),सूरा 41 (हा॰ मीम॰ अस-सजदा) और सूरा 42 (अश-शूरा) अवतरित हुई। (यह वह समय था) जब मक्का के काफ़िर नबी (सल्ल॰) की जान के पीछे पड़े हुए थे।

विषय और वार्ताएँ

इस सूरा में बड़े ज़ोर के साथ क़ुरैश और अरबवालों की उन अज्ञानपूर्ण धारणाओं और अन्धविश्वासों की अलोचना की गई है जिनपर वे दुराग्रह किए चले जा रहे थे और अत्यन्त मज़बूत और दिल में घर करनेवाले तरीक़े से उनके बुद्धिसंगत न होने को उजागर किया गया है। वार्ता का आरम्भ इस तरह किया गया है कि तुम लोग अपनी दुष्टता के बल पर यह चाहते हो कि इस किताब का अवतरण रोक दिया जाए, किन्तु अल्लाह ने दुष्टताओं के कारण नबियों को भेजना और किताबों को उतारना बन्द नहीं किया है, बल्कि उन ज़ालिमों को विनष्ट कर दिया है जो उनके मार्गदर्शन का रास्ता रोक कर खड़े हुए थे। यही कुछ वह अब भी करेगा। इसके बाद बताया गया है कि वह धर्म क्या है जिसे लोग छाती से लगाए हुए हैं, और वे प्रमाण क्या है जिसके बल-बूते पर वे मुहम्मद (सल्ल॰) का मुक़ाबला कर रहे हैं। ये स्वयं मानते हैं कि धरती और आकाश का, और इनका अपना और इनके उपास्यों का स्रष्टा (भी और इनका दाता भी) सर्वोच्च अल्लाह ही है फिर भी दूसरों को अल्लाह के साथ प्रभुत्व में शरीक करने पर हठ किए चले जा रहे हैं। बन्दों को अल्लाह की संतान घोषित करते हैं और (फ़रिश्तों के विषय में) कहते हैं कि ये अल्लाह की बेटियाँ हैं। उनकी उपासना करते हैं। आख़िर इन्हें कैसे मालूम हुआ कि फ़रिश्ते स्त्रियाँ हैं? इन अज्ञानपूर्ण बातों पर टोका जाता है तो नियति का बहाना पेश करते हैं और कहते हैं कि यदि अल्लाह हमारे इस काम को पसन्द न करता तो हम कैसे इन मूर्तियों की पूजा कर सकते थे। हालाँकि अल्लाह की पसन्द और नापसन्द मालूम होने का माध्यम उसकी किताबें हैं, न कि वे कार्य जो संसार में उसकी इच्छा (उसकी दी हुई छूट) के अन्तर्गत हो रहे हैं। (अपने बड़े बहुदेववाद की

पुष्टि में एक प्रमाण यह भी) देते हैं कि बाप-दादा से यह काम ऐसे ही होता चला आ रहा है। मानो इनकी दृष्टि में किसी धर्म के सत्य होने के लिए यह पर्याप्त प्रमाण है। हालाँकि इबराहीम (अलै०) ने जिनकी सन्तान होने पर ही इनका सारा गर्व और इनकी विशिष्टता निर्भर करती है, ऐस अंधे अनुसरण को रद्द कर दिया था जिसका साथ कोई बुद्धिसंगत प्रमाण न देता हो। फिर यदि इन लोगों को पूर्वजों का अनुसरण ही करना था तो इसके लिए भी अपने सबसे अधिक महान पूर्वज इबराहीम और इसमाईल (अलै०) को छोड़कर इन्होंने अपने अत्यन्त अज्ञानी पूर्वजों का निर्वाचन किया। मुहम्मद (सल्ल०) की पैग़म्बरी स्वीकार करने में इन्हें संकोच है तो इस कारण कि उनके पास धन-दौलत, राज्य और प्रतिष्ठा तो है ही नहीं। कहते है कि यदि ईश्वर हमारे यहाँ किसी को नबी बनाना चाहता तो हमारे दोनों नगरों (मक्का और ताइफ़) के बड़े आदमियों में से किसी को बनाता। इसी कारण फ़िरऔन ने भी हज़रत मूसा (अलै०) को हीन जाना था और कहा था कि आकाश का सम्राट अगर मुझ धरती के सम्राट के पास कोई राजदूत भेजता तो उसे सोने के कंगन पहनाकर और फ़रिश्तों की एक सेना उसकी अर्दली में देकर भेजता। यह फ़कीर कहाँ से आ खड़ा हुआ। अन्त में साफ़-साफ़ कहा गया है कि न ईश्वर की कोई सन्तान है, न आकाश और धरती के प्रभु अलग-अलग हैं, और न अल्लाह के यहाँ कोई ऐसा सिफ़ारिशी है जो जान-बूझकर गुमराही अंगीकार करनवालों को उसके दण्ड से बचा सके।



43. सूरा अज़-ज़ुख़रुफ़

(मक्का में उतरी–आयतें 89)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हा० मीम०। (2) क़सम है इस स्पष्ट किताब की (3) कि हमने इसे अरबी भाषा का क़ुरआन बनाया है ताकि तुम लोग इसे समझो।[1] (4) और वास्तव में यह मूल किताब[2] में अंकित है, हमारे यहाँ बड़ी उच्च कोटि की और तत्त्वदर्शिता से परिपूर्ण किताब।

(5) अब क्या हम तुमसे विरक्त होकर यह नसीहत का पाठ तुम्हारे यहाँ भेजना छोड़ दें सिर्फ़ इसलिए कि तुम मर्यादाहीन हो? (6) पहले गुज़री हुई क़ौमों में भी बार-बार हमने नबी भेजे हैं। (7) कभी ऐसा नहीं हुआ कि कोई नबी उनके यहाँ आया हो और उन्होंने उसकी हँसी न उड़ाई हो। (8) फिर जो लोग इनसे कई दर्जे ज़्यादा शक्तिशाली थे उन्हें हमने तबाह कर दिया, पिछली क़ौमों की मिसालें गुज़र चुकी हैं।

(9) अगर तुम इन लोगों से पूछो कि ज़मीन और आसमानों को किसने पैदा किया है तो ये ख़ुद कहेंगे कि ''उन्हें उसी प्रभुत्वशाली सर्वज्ञ सत्ता ने पैदा किया है।'' (10) वही ना जिसने तुम्हारे लिए इस ज़मीन को गहवारा बनाया और इसमें तुम्हारे लिए रास्ते बना दिए[3] ताकि तुम अपनी अभीष्ट मंज़िल की राह पा सको। (11) जिसने एक

---

1. क़ुरआन मजीद की क़सम जिस बात पर खाई गई है वह यह है कि इस किताब के रचयिता 'हम' है न कि मुहम्मद (सल्ल०)। और क़सम खाने के लिए क़ुरआन के जिस गुण को चुना गया है वह यह है कि ''यह स्पष्ट किताब'' है। इस गुण के साथ क़ुरआन के ईश-वाणी होने पर ख़ुद क़ुरआन की क़सम खाना आप से आप यह अर्थ दे रहा है कि लोगो, यह खुली किताब तुम्हारे सामने मौजूद है, इसे आँखें खोलकर देखो, इसके विषयों, इसकी शिक्षा, इसकी भाषा, सारी चीज़ें इस सच्चाई की स्पष्ट गवाही दे रही है कि इसका रचयिता जगत् के स्रष्टा के सिवा कोई दूसरा हो नहीं सकता।
2. मूल किताब (उम्मुल किताब) से मुराद है 'असल किताब' अर्थात् वह किताब जिससे तमाम नबियों पर अवतरित होनेवाली किताबें उद्धृत हैं। इसी के लिए क़ुरआन की सूरा 85 (बुरूज) में 'लौह महफ़ूज़' (सुरक्षित पट्टिका) के शब्द इस्तेमाल किए गए हैं, अर्थात् ऐसी पट्टिका जिसका लिखा मिट नहीं सकता और जो हर प्रकार के हस्तक्षेप में सुरक्षित है।

विशेष मात्रा में आसमान से पानी उतारा और उसके द्वारे मुर्दा ज़मीन को जिला उठाया, इसी तरह एक दिन तुम ज़मीन से निकालकर बाहर किए जाओगे। (12) वही जिसने ये सारे जोड़े पैदा किए, और जिसने तुम्हारे लिए नौकाओं और जानवरों को सवारी बनाया ताकि तुम उनकी पीठ पर चढ़ो (13) और जब उनपर पैठो तो अपने रब का एहसान याद करो और कहो कि ''पाक है वह जिसने हमारे लिए इन चीज़ों को वशीभूत कर दिया नहीं तो हम इन्हें क़ाबू में लाने की शक्ति नहीं रखते थे, (14) और एक दिन हमें अपने रब की ओर पलटना है।''

(15) (यह सब कुछ जानते और मानते हुए भी) इन लोगों ने उसके बन्दों में से कुछ को उसका अंश बना डाला। वास्तविकता यह है कि इनसान खुला कृतघ्न है।

(16) क्या अल्लाह ने अपने पैदा किए हुए में से अपने लिए बेटियाँ चुनी और तुम्हें बेटे प्रदान किए? (17) और हाल यह है कि जिस औलाद को ये लोग उस करुणामय ईश्वर से सम्बद्ध करते हैं उसके जन्म की ख़ुशख़बरी जब ख़ुद इनमें से किसी को दी जाती है तो उसके मुँह पर सियाही छा जाती है और वह शोक से भर जाता है। (18) क्या अल्लाह केहिस्से में वह औलाद आई जो ज़ेवरों में पाली जाती है और वाद-विवाद में अपना अभिप्राय पूर्णरूप से स्पष्ट भी नहीं कर सकती?

(19) इन्होंने फ़रिश्तों को, जो करुणामय ईश्वर के ख़ास बन्दे हैं, औरतें ठहरा लिया। क्या उनकी शारीरिक रचना इन्होंने देखी है? इनकी गवाही लिख ली जाएगी और इन्हें इसकी जवाबदेही करनी होगी।

(20) ये कहते हैं, ''अगर करुणामय ईश्वर चाहता (कि हम उनकी पूजा न करें) तो हम कभी उनको न पूजते।''[4] ये इस मामले की वास्तविकता को बिलकुल नहीं जानते, सिर्फ़ तीर-तुक्के लड़ाते हैं। (21) क्या हमने इससे पहले कोई किताब इनको दी थी जिसका प्रमाण (फ़रिश्तों के प्रति अपनी इस पूजा के लिए) ये अपने पास रखते हो?

3. पहाड़ों के बीच-बीच में दरें, और फिर पर्वतीय और मैदानी क्षेत्रों में नदियाँ वे प्राकृतिक मार्ग हैं जो अल्लाह ने धरती की पीठ पर बना दिए हैं। इनसान उन्हीं की सहायता से भूमण्डल पर फैला है। फिर अल्लाह ने और ज़्यादा अनुग्रह यह किया कि सारी ज़मीन को एक समान बनाकर नहीं रख दिया, बल्कि उसमें तरह-तरह के ऐसे विशिष्ट चिह्न स्थापित कर दिए जिनकी सहायता से इनसान विभिन्न क्षेत्रों को पहचानता है और एक क्षेत्र और दूसरे क्षेत्र का अन्तर महसूस करता है।
4. यह अपनी गुमराही पर तक़दीर से उनका तर्क था जो हमेशा से कार्य भ्रष्ट लोगों की नीति रही है।

(22) नहीं, बल्कि ये कहते हैं कि हमने अपने बाप-दादा को एक तरीक़े पर पाया है और हम उन्हीं के पद-चिह्नों पर चल रहे हैं। (23) इसी तर तुमसे पहले जिस बस्ती में भी हमने कोई डरानेवाला भेजा, उसके खाते-पीते लोगों ने यही कहा कि हमने अपने बाप-दादा को एक तरीक़े पर पाया है और हम उन्हीं के पद-चिह्नों का अनुगमन कर रहे हैं। (24) हर नबी ने उनसे पूछा, क्या तुम उसी डगर पर चले जाओगे चाहे मैं तुम्हें उस मार्ग से ज़्यादा ठीक मार्ग बताऊँ जिसपर तुमने अपने बाप-दादा को पाया है? उन्होंने सारे रसूलों को यही जवाब दिया कि जिस धर्म की ओर बुलाने के लिए तुम भेजे गए हो हम उसका इनकार करते हैं। (25) आख़िरकार हमने उनकी ख़बर ले डाली और देख लो कि झुठलानेवालों का क्या परिणाम हुआ।

(26) याद करो वह समय जब इबराहीम ने अपने बाप और अपनी क़ौम से कहा था कि ''तुम जिनकी बन्दगी करते हो मेरा उनसे कोई सम्बन्ध नहीं। (27) मेरा सम्बन्ध सिर्फ़ उससे है जिसने मुझे पैदा किया, वही मुझे राह दिखाएगा।'' (28) और इबराहीम यही शब्द अपने पीछे अपनी औलाद में छोड़ गया ताकि वे उसकी ओर रुजू करे।[5] (29) (इसपर भी जब ये लोग दूसरों की बन्दगी करने लगे तो मैंने इनको मिटा नहीं दिया) बल्कि मैं इन्हें और इनके बाप-दादा को जीवन-सामग्री देता रहा यहाँ तक कि इनके पास सत्य, और खोल-खोलकर बयान करनेवाला रसूल आ गया। (30) मगर जब वह सत्य इनके पास आया तो इनहोंने कह दिया कि यह तो जादू है और हम इसको मानने से इनकार करते हैं।

(31) कहते हैं, यह क़ुरआन दोनों शहरों के बड़े आदमियों में से किसी पर क्यों न अवतरित किया गया?[6] (32) क्या तेरे रब की दयालुता ये लोग बाँटते हैं? दुनिया की

5. अर्थात् जब भी सन्मार्ग से तनिक पग हटे तो यह वचन उनके पथप्रदर्शन के लिए मौजूद रहे और वे उसी की ओर पलट आएँ। इस घटना का जिस उद्देश्य से यहाँ उल्लेख किया गया है वह यह है कि क़ुरैश के काफ़िरों (इनकार करनेवालों) को इस बात पर शर्म दिलाई जाए कि तुमने पूर्वजों का अनुगमन ग्रहण भी किया तो इसके लिए अपने उत्तम पूर्वज इबराहीम (अलै॰) और इसमाईल (अलै॰) को छोड़कर अपने निकृष्टतम पूर्वजों को चुना।
6. दोनों शहरों से मुराद मक्का और तायफ़ हैं। इनकार करनेवालों का यह कहना था कि अगर वास्तव में अल्लाह को कोई रसूल भेजना होता और वह उसपर अपनी किताब उतारने का इरादा करता तो हमारे इन केन्द्रीय नगरों में से किसी बड़े आदमी को इस उद्देश्य के लिए चुनता।

ज़िन्दगी में इनके जीवन-यापन के साधन तो हमने इनके बीच बाँटे हैं, और इनमें से कुछ लोगों को कुछ दुसरे लोगों पर हमने कई दर्जे उच्चता दी है ताकि ये एक दूसरे से सेवा-कार्य लें। और तेरे रब की दयालुता (अथात् पैग़म्बरी) उस धन से ज़्यादा मूल्यवान है जो (इनके धनवान) समेट रहे हैं। (33) अगर यह आशंका न होती कि सारे लोग एक ही तरीक़े के हो जाएँगे तो हम करुणामय ईश्वर के प्रति इनकार की नीति अपनानेवालों के घरों की छतें, और उनकी सीढ़ियाँ जिनसे वे अपने बालाख़ानों (अटारियों) पर चढ़ते हैं, (34) और उनके दरवाज़े और उनके तख़्त जिन पर वे तकिए लगाकर बैठते हैं, (35) सब चाँदी और सोने के बना देते। यह तो दुनिया की ज़िन्दगी की सामग्री है, और आख़िरत (परलोक) तेरे रब के यहाँ सिर्फ़ डर रखनेवालों के लिए है।

(36) जो व्यक्ति रहमान के स्मरण की उपेक्षा करता है, हम उसपर एक शैतान नियुक्त कर देते हैं और वह उसका साथी बन जाता है। (37) ये शैतान ऐसे लोगों को सन्मार्ग पर आने से रोकते हैं, और वे अपनी जगह यह समझते हैं कि हम ठीक जा रहे हैं। (38) अन्ततः जब यह व्यक्ति हमारे यहाँ पहुँचेगा तो अपने शैतान से कहेगा, ''काश मेरे और तेरे बीच पूर्व और पश्चिम की दूरी होती, तू तो बहुत ही बुरा साथी निकला।'' (39) उस समय इन लोगों से कहा जाएगा कि जब तुम ज़ुल्म कर चुके तो आज यह बात तुम्हारे लिए कुछ भी लाभदायक नहीं है कि तुम और तुम्हारे शैतान अज़ाब में समभागी हैं।

(40) अब क्या ऐ नबी, तुम बहरों को सुनाओगे? या अन्धों और खुली गुमराही में पड़े हुए लोगों को राह दिखाओगे? (41) अब तो हमें इनको सज़ा देनी है चाहे हम तुम्हें दुनिया से उठा लें, (42) या तुमको आँखों से इनका वह परिणाम दिखा दें जिसका हमने इनसे वादा किया है, हमें इनपर पूरी सामर्थ्य प्राप्त है। (43) तुम हर हाल में उस किताब को मज़बूती से थामे रहो जो प्रकाशना (वह्य) के द्वारा तुम्हारे पास भेजी गई है, यक़ीनन तुम सीधे मार्ग पर हो। (44) वास्तविकता यह है कि यह किताब तुम्हारे लिए और तुम्हारी क़ौम के लिए एक बड़ा श्रेय (सम्मान) है और ज़ल्द ही तुम लोगों को इसकी जवाबदेही करनी होगी।[7] (45) तुमसे पहले हमने जितने रसूल भेजे थे उन सबसे पूछ देखो, क्या हमने करुणामय ईश्वर के सिवा कुछ दूसरे उपास्य भी ठहराए थे कि उनकी बन्दगी की जाए?[8]

(46) हमने मूसा को अपनी निशानियों के साथ फ़िरऔन और उसके राज्य-प्रमुखों के पास भेजा और उसने जाकर कहा कि मैं सारे जहान के रब का रसूल हूँ। (47) फिर जब उसने हमारी निशानियाँ उनके सामने पेश की तो वे ठट्ठे मारने लगे।

(48) हम एक पर एक ऐसी निशानी उनको दिखाते चले गए जो पहली से बढ़-चढ़कर थी, और हमने उनको यातना में धर लिया कि वे अपनी रीति से बाज़ आएँ। (49) हर यातना के अवसर पर वे कहते, ऐ जादूगर, अपने रब की ओर से जो पद तुझे प्राप्त है उसके आधार पर हमारे लिए उससे दुआ कर, हम ज़रूर सन्मार्ग पर आ जाएँगे। (50) मगर ज्यों ही कि हम उनपर से यातना हटा देते वे अपनी बात से फिर जाते थे। (51) एक दिन फ़िरऔन ने अपनी क़ौम के बीच पुकारकर कहा, ''लोगो, क्या मिस्र का राज्य मेरा नहीं है, और ये नहरे मेरे नीचे नहीं बह रही हैं? क्या तुम लोगों को दिखाई नहीं देता? (52) मैं अच्छा हूँ या यह व्यक्ति जो अपमान-ग्रस्त और हीन है और अपनी बात भी खोलकर बयान नहीं कर सकता? (53) क्यों न इसपर सोने के कंगन उतारे गए? या फ़रिश्तों का एक दल इसकी अरदली में न आया?''

(54) उसने अपनी क़ौम को हलका समझा और उन्होंने उसकी बात मानी, वास्तव में वे थे ही अवज्ञाकारी लोग।[9] (55) आख़िरकार जब उन्होंने हमें क्रुद्ध कर दिया तो हमने उनसे बदला लिया और उनको इकट्ठा डुबो दिया (56) और बादवालों के लिए आगे गुज़रे हुए और शिक्षाप्रद नमूना बनाकर रख दिया।

(57) और ज्यों ही कि मरयम के बेटे की मिसाल दी गई, तुम्हारी क़ौम के लोगों ने उसपर शोर मचा दिया। (58) और लगे कहने कि हमारे पूज्य अच्छे हैं या वह?[10] यह मिसाल वे तुम्हारे सामने सिर्फ़ कुतर्क के लिए लाए हैं, वास्तविकता यह है कि ये हैं ही झगड़ालू लोग। (59) मरयम का बेटा इसके सिवा कुछ न था कि एक बन्दा था जिसे हमने अपना कृपापात्र बनाया और इसराईल की सन्तान के लिए उसे अपने चमत्कार का एक नमूना बना दिया। (60) हम चाहें तो तुमसे फ़रिश्ते पैदा कर दें जो ज़मीन में तुम्हारे उत्तराधिकारी हों। (61) और वह (अर्थात् मरयम का बेटा) वास्तव में क़ियामत

7. अर्थात् इससे बढ़कर किसी व्यक्ति का कोई सौभाग्य नहीं हो सकता कि सारे इनसानों में से उसको अल्लाह अपनी किताब अवतरित करने के लिए चुने, और किसी क़ौम के हक़ में भी इससे बड़े किसी सौभाग्य की कल्पना नहीं की जा सकती कि दुनिया की दूसरी सब क़ौमों को छोड़कर अल्लाह उसके यहाँ अपना नबी पैदा करे और उसकी भाषा में अपनी किताब अवतरित करे और उसे दुनिया में ईश्वरीय सन्देश की वाहिका बनकर उठने का अवसर दे। इस महान श्रेय का एहसास अगर क़ुरैश और अरबवालों को नहीं है और वे इसका निरादर करना चाहते हैं तो एक समय आएगा जब उन्हें इसकी जवाबदेही करनी होगी।
8. रसूलों से पूछने का अर्थ उनकी लाई हुई किताबों से मालून करना है।

की एक निशानी है, अतः तुम उसमें शक न करो[11] और मेरी बात मान लो, यही सीधा मार्ग है, (62) ऐसा न हो शैतान तुमको उससे रोक दे कि वह तुम्हारा खुला दुश्मन है। (63) और जब ईसा स्पष्ट निशानियाँ लिए हुए आया था तो उसने कहा था कि "मैं तुम लोगों के पास तत्त्वदर्शिता लेकर आया हूँ, और इसलिए आया हूँ कि तुमपर कुछ उन बातों की वास्तविकता स्पष्ट कर दूँ जिनके सम्बन्ध में तुम विभेद कर रहे हो, अतः तुम अल्लाह से डरो और मेरी बात मानो। (64) सत्य यह है कि अल्लाह ही मेरा रब भी है और तुम्हारा रब भी। उसी की तुम बन्दगी करो, यही सीधा मार्ग है।"[12] (65) मगर (उसकी इस स्पष्ट शिक्षा के बावजूद) गिरोहों ने परस्पर विभेद किया,[13] अतः तबाही है उन लोगों के लिए जिन्होंने ज़ुल्म किया एक दुखद दिन के अज़ाब से।

(66) क्या ये लोग अब बस इसी चीज़ के इनतिज़ार में हैं कि अचानक इनपर

9. इस छोटे से वाक्य में एक बहुत बड़ी हक़ीक़त बयान की गई है। जब कोई व्यक्ति किसी देश में अपनी निरंकुशता चलाने की कोशिश करता है और इसके लिए खुल्लम-खुल्ला हर तरह की चालें चलता है, हर फ़रेब और धोखा-धडी से काम लेता है, खुले बाज़ार में अन्तरात्मा की ख़रीद-बिक्री का कारोबार चलाता है और जो बिकते नहीं उन्हें निर्दयता के साथ कुचलता और रौंदता है, तो चाहे ज़बान से वह यह बात न कहे मगर अपने व्यवहार से साफ़ ज़ाहिर कर देता है कि वह वास्तव में उस देश के निवासियों को बुद्धि और नैतिकता और पौरुष की दृष्टि से हलका समझता है, और उसने उनके बारे में यह राय क़ायम की है कि मैं इन मूर्खों, आत्माहीन और कायर लोगों को जिधर चाहूँ हाँककर ले जा सकता हूँ। फिर जब उसके ये उपाय सफल हो जाते हैं और देशवासी उसके हाथ बँधा गुलाम बन जाते हैं तो वह अपने व्यवहार से सिद्ध कर देते हैं कि उस दुष्ट ने जो कुछ उन्हें समझा था, वास्तव में वे वही कुछ हैं। और उसके इस हीन दशा में ग्रस्त होने का मूल कारण यह होता है कि वे मूलतः 'अवज्ञाकारी' होते हैं।
10. इससे पहले आयत 45 में यह बात गुज़र चुकी है कि "तुमसे पहले जो रसूल हो गुज़रे हैं उन सबसे पूछ देखो, क्या हमने करुणामय ईश्वर के सिवा कुछ दूसरे उपास्य भी ठहराए थे कि उनकी बन्दगी की जाए?" यह भाषण जब मक्कावालों के सामने हो रहा था तो एक व्यक्ति ने आपत्ति की कि क्यों साहब, ईसाई मरयम (अलै॰) के बेटे को ईश-पुत्र ठहराकर उसकी पूजा करते हैं या नहीं? फिर हमारे आराध्य क्या बुरे हैं? यह मिसाल पेश होते ही सत्य का इनकार करनेवालों के जन समूह में एक ज़ोर का क़हक़हा बुलंद हुआ और नारे लगाने शुरू हो गए कि इसका क्या जवाब है?

'क़ियामत' आ जाए और इन्हें ख़बर भी न हो? (67) वह दिन जब आएगा तो डर रखनेवालों को छोड़कर बाक़ी सब दोस्त एक-दूसरे के दुश्मन हो जाएँगे। (68,69) उस दिन उन लोगों से जो हमारी आयतों पर ईमान लाए थे और आज्ञाकारी बनकर रहे थे कहा जाएगा कि "ऐ मेरे बन्दो, आज तुम्हारे लिए कोई डर नहीं और न तुम्हें कोई चिन्ता सताएगी। (70) दाख़िल हो जाओ जन्नत में तुम और तुम्हारी पत्नियाँ, तुम्हें ख़ुश कर दिया जाएगा।" (71) उनके आगे सोने की थालिआँ और जाम-साग़र फिराए

11. यह अनुवाद भी हो सकता है कि "वह क़ियामत के ज्ञान का एक माध्यम है।" यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि उन्हें क़ियामत की निशानी या क़ियामत के ज्ञान का माध्यम किस अर्थ में कहा गया है? बहुत-से टीकाकार कहते हैं कि इससे मुराद हज़रत ईसा (अलै॰) का पुनः अवतरण है जिसकी सूचना बहुत-सी हदीसों में दी गई है। लेकिन बाद का वर्णन यह अर्थ लेने में बाधक है। उनका दोबारा आना तो क़ियामत के ज्ञान का माध्यम सिर्फ़ उन लोगों के लिए बन सकता है जो उस समय मौजूद होंगे या उसके बाद पैदा हों। मक्का के अधर्मियों के लिए आख़िर यह कैसे ज्ञान-साधन ठहराया जा सकता था कि उनको सम्बोधित करके यह कहना सही होता कि "अतः तुम इसमें सन्देह न करो?" अतः हमारी दृष्टि में ठीक व्याख्या वही है जो कुछ दूसरे टीकाकारों ने की है कि यहाँ हज़रत ईसा (अलै॰) के बे-बाप पैदा होने और उनके मिट्टी से पक्षी बनाने और मुर्दे जिलाने को क़ियामत की संभावना का एक प्रमाण ठहराया गया है, और अल्लाह के कहने का मक़सद यह है कि जो ईश्वर बाप के बिना बच्चा पैदा कर सकता है, और जिस ईश्वर का एक दास मिट्टी के पुतले में प्राण डाल सकता और मुर्दों को जीवित कर सकता है उसके लिए आख़िर तुम इस बात को क्यों असंभव समझते हो कि वह तुम्हें और सारे इनसानों को मरने के बाद दोबारा जीवित कर दे।
12. अर्थात् ईसाई चाहे कुछ करते और कहते रहें ईसा (अलै॰) ने ख़ुद कभी यह नहीं कहा था कि मैं ईश्वर हूँ या ईश्वर का पुत्र हूँ और तुम मेरी उपासना करो, बल्कि उनका निमंत्रण वही था जो दूसरे सारे नबियों का निमंत्रण था और अब जिसकी ओर मुहम्मद (सल्ल॰) तुमको बुला रहे हैं।
13. अर्थात् एक गिरोह ने उनका इनकार किया तो विरोध में इस सीमा तक पहुँच गया कि उनपर नाजाइज़ जन्म का मिथ्यारोपण किया। दूसरे गिरोह ने उन्हें माना तो श्रद्धा में बेधड़क अतिशयोक्ति से काम लेकर उनको ईश-पुत्र बना बैठा और फिर एक इनसान के ईश्वर होने की समस्या उसके लिए ऐसी गुत्थी बनी जिसे सुलझाते-सुलझाते उसमें अगणित सम्प्रदाय बन गए।

जाएँगे और हर मनभाती और निगाहों को लज़्ज़त देनेवाली चीज़ वहाँ मौजूद होगी। उनसे कहा जाएगा, ''तुम अब यहाँ हमेशा रहोगे। (72) तुम इस जन्नत के वारिस अपने उन कर्मों के कारण हुए हो जो तुम दुनिया में करते रहे। (73) तुम्हारे लिए यहाँ ढेर सारे मेवे मौजूद हैं जिन्हें तुम खाओगे।'' (74) रहे अपराधी, तो वे हमेशा जहन्नम के अज़ाब में ग्रस्त रहेंगे, (75) कभी उनके अज़ाब में कमी न होगी, और वे उसमें निराश पड़े होंगे। (76) उनपर हमने ज़ुल्म नहीं किया बल्कि वे ख़ुद ही अपने ऊपर ज़ुल्म करते रहे। (77) वे पुकारेंगे, ''ऐ मालिक,[14] तेरा रब हमारा काम ही तमाम कर दे तो अच्छा है।'' वह जवाब देगा, ''तुम यूँ ही पड़े रहोगे। (78) हम तुम्हारे पास हक़ (सत्य) लेकर आए थे मगर तुममें से ज़्यादातर को हक़ ही अप्रिय था।''[15]

(79) क्या इन लोगों ने कोई कार्रवाई करने का फ़ैसला कर लिया है?[16] अच्छा तो हम भी फिर एक फ़ैसला किए लेते हैं। (80) क्या इन्होंने यह समझ रखा है कि हम इनकी रहस्य की बातें और इनकी कानाफूसियाँ सुनते नहीं हैं? हम सब कुछ सुन रहे हैं और हमारे फ़रिश्ते इनके पास ही लिख रहे हैं।

(81) इनसे कहो, ''अगर वास्तव में रहमान (ईश्वर) की कोई सन्तान होती तो सबसे पहले उपासना करनेवाला मैं होता।'' (82) पाक है आसमानों और ज़मीन का शासक, सिंहासन का मालिक, उन सारी बातों से जो ये लोग उससे जोड़ते हैं। (83) अच्छा, इन्हें अपने तथ्यहीन विचारों में निमग्न और अपने खेल में व्यस्त रहने दो, यहाँ तक कि ये अपना वह दिन देख लें जिससे इन्हें डराया जा रहा है।

(84) वही एक आसमान में भी ईश्वर है और ज़मीन में भी ईश्वर, और वही तत्त्वदर्शी और सर्वज्ञ है। (85) बहुत उच्च और सर्वोपरि है वह जिसके अधिकार में ज़मीन और आसमानों और हर उस चीज़ की बादशाही है जो ज़मीन और आसमानों के बीच पाई जाती है। और वही क़ियामत की घड़ी का ज्ञान रखता है, और उसी की ओर

14. मालिक से मुराद है जहन्नम का दरोग़ा जैसा कि बयान से ख़ुद व्यक्त हो रहा है।
15. जहन्नम के दरोग़ा का यह क़ौल कि ''हम तुम्हारे पास हक़ लेकर आए थे'' ऐसा ही है जेसे राज्य का कोई अफ़सर सरकार की ओर से बोलते हुए 'हम' का शब्द इस्तेमाल करता है और उसका मतलब यह होता है कि हमारी हुकूमत ने यह काम किया, या यह आदेश दिया।
16. इशारा है उन बातों की ओर जो क़ुरैश के सरदार अपनी गुप्त बैठकों में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के विरुद्ध कोई निर्णायक क़दम उठाने के लिए कर रहे थे।

तुम सब पलटाए जानेवाले हो।

(86) उसको छोड़कर ये लोग जिन्हें पुकारते हैं उन्हें किसी सिफ़ारिश का अधिकार प्राप्त नहीं, सिवाय इसके कि कोई ज्ञान के आधार पर हक़ की गवाही दे।[17]

(87) और अगर तुम इनसे पूछो कि इन्हें किसने पैदा किया है तो ये ख़ुद कहेंगे कि अल्लाह ने।[18] फिर कहाँ से ये धोखा खा रहे हैं। (88) क़सम है रसूल के इस कथन की कि ऐ रब, ये वे लोग हैं जो मानते नहीं।[19]

(89) अच्छा ऐ नबी, इनसे नज़र हटा लो और कह दो कि सलाम है तुम्हें, जल्द ही इन्हें मालूम हो जाएगा।



17. अर्थात् अगर कोई व्यक्ति यह कहता है कि उसने जिन विभूतियों को उपास्य बना रखा है वे अनिवार्यतः सिफ़ारिश के अधिकार रखती हैं और उन्हें अल्लाह के यहाँ ऐसा ज़ोर हासिल है कि जिसे चाहे मुक्त करा लें तो वह बताए कि क्या वह ज्ञान के आधार पर इस बात की सच्ची गवाही दे सकता है?
18. इस आयत के दो अर्थ हैं। एक यह कि अगर तुम इनसे पूछो कि स्वयं इनको किसने पैदा किया है तो ये कहेंगे, अल्लाह ने। दूसरे यह कि अगर तुम इनसे पूछो कि तुम्हारे इन इष्ट देवों का स्रष्टा कौन है तो ये कहेंगे, अल्लाह।
19. अर्थ यह है कि सौगन्ध है रसूल के इस कथन की कि ''ऐ रब! ये वे लोग हैं जो मानते नहीं'', कैसा अजीब इन लोगों का आत्म भ्रम कि स्वयं स्वीकार करते हैं कि इनका और इनके उपास्यों का स्रष्टा अल्लाह ही है और फिर भी स्रष्टा को छोड़कर पैदा किए हुए की उपासना पर आग्रह किए जाते हैं।

44. अद-दुख़ान

नाम

आयत 10 ''जब आकाश प्रत्यक्ष दुआँ (दुख़ान) लिए हुए आएगा'' के दुख़ान शब्द को इस सूरा का शीर्षक बनाया गया है, अर्थात् यह वह सूरा है जिसमें दुख़ान शब्द आया है।

अवतरणकाल

सूरा की विषय-वस्तुओं के आन्तरिक साक्ष्य से पता चलता है कि यह भी उसी समय अवतरित हुई है जिस समय सूरा 43 (ज़ुख़रुफ़) और उससे पहले की कुछ सूरतें अवतरित हुई थीं, अलबत्ता यह उनसे कुछ बाद की है। इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (वह भयंकर अकाल है जो सम्पूर्ण क्षेत्र में पड़ा था।)

विषय और वार्ताएँ

इस सूरा की भूमिका कुछ महत्त्वपूर्ण वार्ताओं पर आधरित है :

एक यह कि यह किताब अपने आप में स्वयं इस बात का स्पष्ट सुबूत है कि यह किसी मानव की नहीं, बल्कि जगत्-प्रभु की किताब है। दूसरे यह कि तुम्हारी दृष्टि में यह एक आपदा है जो तुमपर उतरी है, हालाँकि वास्तव में वह घड़ी अत्यन्त शुभ घड़ी थी जब सर्वोच्च अल्लाह ने सर्वथा अपनी दयालुता के कारण तुम्हारे यहाँ अपना रसूल भेजने और अपनी किताब अवतरित करने का फ़ैसला किया। तीसरे यह कि इस रसूल का उठाया जाना और इस किताब का अवतरण उस विशिष्ट घड़ी में हुआ जब अल्लाह भाग्यों के फ़ैसले किया करता है और अल्लाह के फ़ैसले बोदे नहीं होते कि, जिसका जी चाहे उन्हें बदल डाले, न वे किसी अज्ञान और नादानी पर आधारित होते हैं कि उनमें ग़लती और और स्वामी की कोई आशंका हो। वे तो उस जगत्-शासक के पक्के और अटल फ़ैसले होते हैं जो सुननेवाला, सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है। उनसे लड़ना कोई खेल नहीं है। चौथे यह कि अल्लाह को तुम ख़ुद भी जगत् की हर चीज़ का मालिक और पालनकर्ता मानते हो। किन्तु इसके बावजूद तुम दूसरों को उपास्य बनाने पर आग्रह करते हो और इसके लिए तर्क तुम्हारे पास इसके सिवा कुछ नहीं है कि बाप-दादा के वक़्तों से यही काम होता चला आ रहा है। हालाँकि तुम्हारे बाप-दादा ने यदि यह मूर्खता की थी तो कोई कारण नहीं कि तुम भी आँखें बन्द करके वही (मूर्खता) करते चले जाओ। पाँचवें यह कि अल्लाह की पालन-क्रिया और दयालुता को केवल यही अपेक्षित

नहीं है कि तुम्हारा पेट पाले, बल्कि यह भी है कि तुम्हारे मार्गदर्शन का प्रबन्ध करे। इस मार्गदर्शन के लिए उसने रसूल भेजा है और किताब उतारी है। इस भूमिका के बाद उस अकाल के मामले को लिया गया है जो उस समय पड़ा हुआ था। (और बताया गया है कि यह अकाल-रूपी चेतावनी भी इन सत्य के शत्रुओं की ग़फ़लत (बेसुध अवस्था) दूर न कर सकेगी। (इस सम्बन्ध में आगे चलकर फ़िरऔन और उसकी क़ौम का हवाला दिया गया है कि उन लोगों की ठीक इसी प्रकार परीक्षा ली गई थी जो परीक्षा क़ुरैश के काफ़िर सरदारों की ली जा रही है। उनके पास भी ऐसा ही एक प्रतिष्ठित रसूल आया था। वे भी निशानी-पर-निशानी देखते चले गए, किन्तु अपने दुराग्रह को त्याग न सके। यहाँ तक कि अन्त में रसूल के प्राण लेने पर तत्पर हो गए और परिणाम वह कुछ देखा जो सदैव के लिए शिक्षाप्रद बनकर रह गया। इसके पश्चात् दूसरा विषय परलोक का लिया गया है जिससे मक्का के काफ़िरों को पूर्णतः इनकार था। इसके जवाब में परलोकवाद की धारणा के पक्ष में दो प्रमाण संक्षिप्त रूप में दिए गए हैं। एक यह कि इस धारणा का इनकार सदैव नैतिकता के लिए विनाशकारी सिद्ध होता रहा है। दूसरे यह कि जगत् किसी खिलवाड़ करनेवालों का खेल नहीं है, बल्कि यह एक तत्त्वदर्शिता पर आधारित व्यवस्था है, और तत्त्वदर्शी का कोई कार्य निरर्थक नहीं होता। फिर यह कहकर बात समाप्त कर दी गई है कि तुम लोगों को समझाने के लिए साफ़-सीधी भाषा में और तुम्हारी अपनी भाषा में सत्य अवतरित कर दिया गया है। अब तुम समझाने से नहीं समझते तो प्रतीक्षा करो, हमारा नबी भी प्रतीक्षा कर रहा है। जो कुछ होता है, वह अपने समय पर सामने आ जाएगा।



44. सूरा अद-दुख़ान

(मक्का में उतरी–आयतें 59)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हा॰ मीम॰ (2) क़सम है इस स्पष्ट किताब की (3) कि हमने इसे एक बड़ी भलाई और बरकतवाली रात में उतारा है[1] क्योंकि हम लोगों को सावधान करने का इरादा रखते थे। (4,5) यह वह रात थी जिसमें हर मामले का तत्त्वदर्शितायुक्त निर्णय हमारे आदेश से प्रचलित किया जाता है।[2] हम एक रसूल भेजनेवाले थे, (6) तेरे रब की दयालुता के रूप में, निश्चय ही वह सब कुछ सुनने और जाननेवाला है, (7) आसमानों और ज़मीन का रब और हर उस चीज़ का रब जो आसमान और ज़मीन के बीच है यदि तुम लोग वास्तव में विश्वास रखनेवाले हो। (8) कोई माबूद (आराध्य) उसके सिवा नहीं है,[3] वही जीवन प्रदान करता है और वही मृत्यु देता है। तुम्हारा रब तुम्हारे उन पूर्वजों का रब जो पहले गुज़र चुके हैं (9) किन्तु वास्तव में इन लोगों को विश्वास नहीं है) बल्कि ये अपने सन्देह में पड़े खेल रहे हैं।

(10) अच्छा, प्रतीक्षा करो उस दिन की जब आकाश प्रत्यक्ष धुआँ लिए हुए आएगा (11) और वह लोगों पर छा जाएगा, यह है दुखदायिनी यातना। (12) (अब कहते हैं कि) ''पालनहार, हम पर से यह यातना टाल दे, हम ईमान लाते हैं।''[4] (13) इनकी बेसुधी कहाँ दूर होती है? इनका हाल तो यह है कि इनके पास रसूले मुबीन[5] आ गया (14) फिर भी इन्होंने उसकी ओर ध्यान न दिया और कहा कि ''यह तो सिखाया-

1. अभिप्रेत है 'लैलतुल-क़द्र'
2. इससे मालूम हुआ कि अल्लाह के राजकीय व्यवस्था एवं प्रबन्ध में यह एक ऐसी रात है जिसमें वह व्यक्तियों, जातियों और देशों के भाग्य के निर्णय करके अपने फ़रिश्तों को सौंप देता है और फिर वे उन्हीं फ़ैसलों के अनुसार व्यवहार करते रहते हैं।
3. आराध्य (माबूद) से अभिप्रेत वास्तविक आराध्य है, जिसका हक़ है कि उसकी 'इबादत' (बन्दगी और उपासना) की जाए।
4. इन आयतों और आयत 16 में क़ियामत की यातना का उल्लेख है और आयत 15 में जिस यातना का उल्लेख है उससे अभिप्रेत यह अकाल की यातना है जिसमें मक्कावाले इस सूरा के अवतरण के समय ग्रस्त थे।
5. अर्थात् ऐसा रसूल जिसका रसूल होना प्रत्यक्षतः प्रकट था।

पढ़ाया बावला है।'' (15) हम तनिक यातना हटाए देते हैं, तुम लोग फिर वही कुछ करोगे जो पहले कर रहे थे, (16) जिस दिन हम बड़ी चोट लगाएँगे वह दिन होगा जब हम तुमसे बदला लेंगे।

(17) हम इनसे पहले फ़िरऔन की जाति को इसी परीक्षा में डाल चुके हैं। उनके पास एक अत्यन्त भला रसूल आया (18) और उसने कहा, ''अल्लाह के बन्दों को मुझे सौंप दो, मैं तुम्हारे लिए एक अमानतदार रसूल हूँ। (19) अल्लाह के मुक़ाबले में उद्दण्डता न दिखाओ। मैं तुम्हारे सामने (अपनी नियुक्ति का) स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करता हूँ। (20) और मैं अपने रब और तुम्हारे रब की शरण ले चुका हूँ, इससे कि तुम मुझपर आक्रमण करो। (21) अगर तुम मेरी बात नहीं मानते तो मुझपर हाथ डालने से बाज़ रहो।'' (22) अन्ततः उसने अपने रब को पुकारा कि ये लोग अपराधी हैं। (23) (उत्तर दिया गया) ''अच्छा तो रातों रात मेरे बन्दों को लेकर चल पड़। तुम लोगों का पीछा किया जाएगा। (24) समुद्र को उसके हाल पर खुला छोड़ दे। यह सारी सेना डूब जानेवाली है।'' (25,26) कितने ही बाग़ और स्रोत और खेत और भव्य महल थे जो वे छोड़ गए। (27) कितनी ही सुख-सामग्री जिनमें वे मज़े कर रहे थे, (28) उनके पीछे धरी रह गई। यह हुआ उनका परिणाम, और हमने दूसरों को इन चीज़ों का उत्तराधिकारी बना दिया। (29) फिर न आकाश उनपर रोया, न धरती, और तनिक-सी मुहलत भी उनको न दी गई। (30,31) इस प्रकार इसराईल की सन्तान को हमने अत्यन्त अपमानयुक्त यातना, फ़िरऔन से छुटकारा दिया जो सीमोल्लंघन करनेवालों में सचमुच उच्च श्रेणी का आदमी था, (32) और उनकी हालत जानते हुए उनको संसार की अन्य जातियों के मुक़ाबले में प्राथमिकता दी, (33) और उन्हें ऐसी निशानियाँ दिखाई जिनमें स्पष्ट परीक्षा थी।

(34) ये लोग कहते हैं, (35) ''हमारी पहली मृत्यु के सिवा और कुछ नहीं, उसके बाद हम पुनः उठाए जानेवाले नहीं हैं। (36) अगर तुम सच्चे हो तो उठा लाओ हमारे बाप-दादा को।'' (37) ये अच्छे हैं या तुब्बअ की जाति[6] और उससे पहले के लोग? हमने उनको इसी कारण विनष्ट किया कि वे अपराधी हो गए थे। (38) ये आकाशों और धरती और इनके बीच की चीज़ें हमने कुछ खेल के रूप में नहीं बना दी

6. तुब्बअ क़बीला हिमयर के बादशाहों की उपाधि थी, जैसे किसरा, क़ैसर, फ़िरऔन आदि उपाधियाँ विभिन्न देशों के सम्राटों के लिए विशिष्ट रही हैं। ये लोग सबा जाति की एक शाखा से संबंध रखते थे और शताब्दियों तक ये अरब में शासक रहे।

हैं। (39) उनको हमने हक़ के आधार पर पैदा किया है, किन्तु इनमें से अधिकतर लोग जानते नहीं हैं। (40) इन सबके उठाए जाने के लिए निश्चित समय निर्णय का दिन है, (41) वह दिन जब कोई अपना निकटतम व्यक्ति अपने किसी निकटतम के कुछ भी काम न आएगा और न कहीं से उन्हें कोई सहायता पहुँचेगी, (42) सिवाय इसके कि अल्लाह ही किसी पर दया करे, वह प्रभुत्वशाली और दयावान् है।

(43) ज़क़्क़ूम (थूहड़) का पेड़ गुनहगार का खाना होगा, (44) तेल की तलछट जैसा, (45,46) पेट में वह इस तरह जोश खाएगा जैसे खौलता हुआ पानी जोशखाता है। (47) ''पकड़ो इसे और रगेदते हुए ले आओ इसको जहन्नम के बीचो-बीच (48) और ऊंडेल दो इसके सिर पर खौलते पानी का अज़ाब (यातना)। (49) चख इसका मज़ा, बड़ा ज़बरदस्त इज़्ज़तदार आदमी है तू। (50) यह वही चीज़ है जिसके आने में तुम लोगों को सन्देह था।''

(51) अल्लाह का डर रखनेवाले निश्चिन्तता की जगह में होंगे। (52,53) बाग़ों और स्रोतों में, रेशम और कमख़ाब के वस्त्र पहने, आमने-सामने बैठे होंगे। (54) यह होगा उनका गौरव। और हम गोरी-गोरी मृगनैनी स्त्रियों से उनका विवाह कर देंगे। (55) वहाँ वे निश्चिंततापूर्वक हर प्रकार की स्वादिष्ट चीज़ें तलब करेंगे (56,57) वहाँ मृत्यु का मज़ा वे कभी न चखेंगे। बस दुनिया में जो मृत्यु आ चुकी सो आ चुकी, और अल्लाह अपने अनुग्रह से उनको नरक-यातना से बचा देगा, यही बड़ी सफलता है।

(58) ऐ नबी, हमने इस किताब को तुम्हारी भाषा में आसान बना दिया है ताकि ये लोग नसीहत हासिल करें। (59) अब तुम भी प्रतीक्षा करो, ये भी प्रतीक्षा में हैं।

● ● ●

45. अल-जासिया

नाम

आयत 28 के वाक्यांश ''उस समय तुम हर गिरोह को घुटनों के बल गिरा (जासिया) देखोगे,'' से उद्धृत है। मतलब यह है कि यह वह सूरा है जिसमें जासिया शब्द आया है।

अवतरणकाल

इसकी विषय-वस्तुओं से साफ़ महसूस होता है कि यह सूरा 44 (दुख़ान) के बाद निकटवर्ती समय में अवतरित हुई है। दोनों सूरतों की विषय-वस्तुओं में ऐसी एकरूपता पाई जाती है, जिससे ये दोनों जुड़वाँ सूरतें प्रतीत होती हैं।

विषय और वार्ताएँ

इसका विषय एकेश्वरवाद और परलोकवाद के सम्बन्ध में मक्का के काफ़िरों के सन्देहों और आक्षेपों का उत्तर देना और (उनकी विरोधात्मक) नीति पर उन्हें सचेत करना है। वार्ता का आरम्भ एकेश्वरवाद के प्रमाणों से किया गया है। इस सिलसिले में मनुष्य के अपने अस्तित्व से लेकर धरती और आकाश तक की फैली हुई अगणित निशानियों की ओर संकेत करके बताया गया है कि तुम जिधर भी निगाह उठाकर देखो, हर चीज़ उसी एकेश्वरवाद की गवाही दे रही है जिसे मानने से तुम इनकार कर रहे हो। आगे चलकर आयत 12-13 में फिर कहा गया है कि मनुष्य इस संसार में जितनी चीज़ों से काम ले रहा है और जो अगणित चीज़ें और शक्तियाँ इस जगत् में उसके हित में सेवारत् हैं (वे सबकी-सब एक ख़ुदा की प्रदान की हुई और कार्य में लगाई हुई हैं।) कोई व्यक्ति ठीक सोच-विचार से काम ले तो उसकी अपनी बुद्धि ही पुकार उठेगी कि वही अल्लाह इनसान का उपकारकर्ता और उसी का यह हक़ है कि मनुष्य उसका आभारी हो। तदन्तर मक्का के काफ़िरों को उस हठधर्मी, अहंकार, उपहास और कुफ़्र के लिए दुराग्रह पर तीक्ष्ण भर्त्सना की गई है, जिससे वे क़ुरआन के आह्वान का मुक़ाबला कर रहे थे। उन्हें सचेत किया गया है कि यह क़ुरआन (एक महान वरदान है। इसे रद्द कर देने का परिणाम अत्यन्त विनाशकारी होगा) इसी सिलसिले में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के अनुयायियों को आदेश दिया गया है कि यह ईश्वर से निर्भय लोग तुम्हारे साथ जो बेहूदगियाँ कर रहे हैं, उनपर क्षमा और सहनशीलता से काम लो। तुम धैर्य से काम लोगे तो ईश्वर स्वयं इनसे निमटेगा और तुम्हें इस धैर्य का बदला प्रदान करेगा। फिर परलोकवाद की धारणा के सम्बन्ध में काफ़िरों के अज्ञानपूर्ण विचारों की समीक्षा की गई

है। (और उनके इस दावे के खण्डन में कि मरने के) बाद फिर कोई जीवन नहीं है, अल्लाह ने निरन्तर कुछ प्रमाण प्रस्तुत किए हैं। ये प्रमाण देने के पश्चात् अल्लाह पूरे ज़ोर के साथ कहता है कि जिस तरह तुम आप-से-आप जीवित नहीं हो गए हो, बल्कि हमारे जीवित करने से जीवित हुए हो। इसी तरह तुम आप-से-आप नहीं मर जाते, बल्कि हमारे मौत देने से मरते हो और एक समय निश्चित ही ऐसा आना है जब तुम सब एक वक़्त एकत्र किए जाओगे। जब वह वक़्त आ जाएगा तो तुम स्वयं ही अपनी आँखों से देख लोगे कि अपने ईश्वर के समक्ष प्रस्तुत हो और तुम्हारा सम्पूर्ण कर्मपत्र बिना कमी-बेशी के तैयार है, जो तुम्हारे एक-एक करतूत की गवाही दे रहा है। उस समय तुमको मालूम हो जाएगा कि परलोकवाद की धारणा का यह इनकार और उसका जो उपहास तुम कर रहे हो, तुम्हें कितना अधिक महँगा पड़ा है।



45. सूरा अल-जासिया

(मक्का में उतरी—आयतें 37)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हा॰ मीम॰। (2) इस किताब का अवतरण अल्लाह की ओर से है जो प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।

(3) वास्तविकता यह है कि आसमानों और ज़मीन में अगणित निशानियाँ हैं ईमान लानेवालों के लिए। (4) और तुम्हारी अपनी पैदाइश में, और उन जानवरों में जिनको अल्लाह (ज़मीन में) फैला रहा है, बड़ी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो विश्वास करनेवाले हैं। (5) और रात और दिन के अन्तर और विभेद में, और उस आजीविका में जिसे अल्लाह आसमान से उतारता है फिर उसके द्वारा मुर्दा ज़मीन को जिला उठाता है, और हवाओं की गर्दिश में बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो बुद्धि से काम लेते हैं। (6) ये अल्लाह की निशानियाँ हैं जिन्हें हम तुम्हारे सामने ठीक-ठीक बयान कर रहे हैं। अब आख़िर अल्लाह और उसकी आयतों के बाद और कौन-सी बात है जिसपर ये लोग ईमान लाएँगे।

(7) तबाही है हर उस झूठे बुरे कर्मवाले व्यक्ति के लिए (8) जिसके सामने अल्लाह की आयतें पढ़ी जाती हैं, और वह उनको सुनाता है, फिर पूरे गर्व के साथ अपने इनकार पर इस तरह अड़ा रहता है कि मानो उसने उनको सुना ही नहीं। ऐसे व्यक्ति को दर्दनाक अज़ाब की ख़ुशख़बरी दे दो। (9) हमारी आयतों में से कोई बात जब वह जान लेता है तो वह उनकी हँसी उड़ाता है। ऐसे सब लोगों के लिए रुसवाई है। (10) उनके आगे जहन्नम है। जो कुछ भी उन्होंने दुनिया में कमाया है उसमें से कोई चीज़ उनके किसी काम न आएगी, न उनके वे संरक्षक ही उनके लिए कुछ कर सकेंगे जिन्हें अल्लाह को छोड़कर उन्होंने अपना आत्मीय (वली) बना रखा है। उनके लिए बड़ा अज़ाब है।

(11) यह क़ुरआन सर्वथा मार्गदर्शन है, और उन लोगों के लिए बड़ा ही दर्दनाक अज़ाब है जिन्होंने अपने रब की आयतों को मानने से इनकार किया।

(12) वह अल्लाह ही तो है जिसने तुम्हारे लिए समुद्र को वशीभूत किया ताकि उसके आदेश से नौकाएँ उसमें चलें और तुम उसका अनुग्रह तलाश करो और कृतज्ञ हो। (13) उसने ज़मीन और आसमानों की सारी ही चीज़ों को तुम्हारे लिए वशीभूत कर दिया, सब कुछ अपने पास से[1]—इसमें बड़ी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो सोच-

विचार करनेवाले हैं।

(14) ऐ नबी, ईमान लानेवालों से कह दो कि जो लोग अल्लाह की ओर से बुरे दिन आने की कोई आशंका नहीं रखते, उनकी हरकतों पर क्षमा से काम लें ताकि अल्लाह ख़ुद एक गिरोह को उसकी कमाई का बदला दे। (15) जो कोई अच्छा कर्म करेगा अपने ही लिए करेगा, और जो बुराई करेगा वह ख़ुद ही उसकी सज़ा भुगतेगा। फिर जाना तो सबको अपने रब ही की ओर है।

(16) इससे पहले इसराईल की सन्तान को हमने किताब और हुक्म (समझ और निर्णय-शक्ति) और नुबूवत (पैग़म्बरी) प्रदान की थी। उनको हमने अच्छी जीवन-सामग्री दी, दुनिया-भर के लोगों पर उन्हें श्रेष्ठता प्रदान की (17) और धर्म के विषय में उन्हें स्पष्ट आदेश दे दिए। फिर जो विभेद उनके बीच प्रकट हुआ वह (अज्ञान के कारण से नहीं बल्कि) ज्ञान आ जाने के बाद हुआ और इस कारण हुआ कि वे परस्पर एक दूसरे पर ज़्यादती करना चाहते थे। अल्लाह क़ियामत के दिन उन मामलों का फ़ैसला कर देगा जिनमें वे विभेद करते रहे हैं। (18) इसके बाद अब ऐ नबी, हमने तुमको धर्म के मामले में एक खुले मार्ग (शरीअत) पर क़ायम किया है। अतः तुम उसी पर चलो और उन लोगों की इच्छाओं का अनुपालन न करो जो ज्ञान नहीं रखते। (19) अल्लाह के मुक़ाबले में वे तुम्हारे कुछ भी काम नहीं आ सकते।[2] ज़ालिम लोग एक दूसरे के साथी हैं, और डर रखनेवालों का साथी अल्लाह है। (20) ये सूझ की रौशनियाँ हैं सब लोगों के लिए और मार्गदर्शन और दयालुता उन लोगों के लिए जो विश्वास करें।

(21) क्या वे लोग जिन्होंने बुराइयाँ की हैं, यह समझे बैठे हैं कि हम उन्हें और ईमान लानेवालों और अच्छे कर्म करनेवालों को एक जैसा कर देंगे कि उनका जीना और मरना समान हो जाए? बहुत बुरे हुक्म हैं जो ये लोग लगाते हैं। (22) अल्लाह ने तो

1. इसके दो अर्थ हैं। एक यह कि अल्लाह की यह देन दुनिया के सम्राटों की-सी देन नहीं है जो प्रजा से प्राप्त किया हुआ धन प्रजा ही में से कुछ लोगों को दे देते हैं, बल्कि जगत् की ये सारी नेमतें अल्लाह की अपनी पैदा की हुई हैं और उसने अपनी ओर से ये इनसान को प्रदान की हैं। दूसरे यह कि न इन नेमतों के पैदा करने में कोई अल्लाह का शरीक है न इन्हें इनसान के लिए वशीभूत करने में किसी और हस्ती का कोई हाथ। अकेला अल्लाह ही उनका स्रष्टा है और उसी ने अपनी ओर से उन्हें इनसान को प्रदान किया है।
2. अर्थात् अगर तुम उन्हें राज़ी करने के लिए ईश्वरीय धर्म में किसी तरह का परिवर्तन करोगे तो अल्लाह की पकड़ से वे तुम्हें न बचा सकेंगे।

आसमानों और ज़मीन को हक़ के साथ पैदा किया और इस लिए किया है कि प्रत्येक प्राणी को उसकी कमाई का बदला दिया जाए। लोगों पर ज़ुल्म हरगिज़ न किया जाएगा।

(23) फिर क्या तुमने कभी उस व्यक्ति की हालत पर भी विचार किया जिसने अपने मन की इच्छा को अपना ख़ुदा बना लिया और अल्लाह ने ज्ञान के होते हुए[3] उसे गुमराही में फेंक दिया और उसके दिल और कानों पर ठप्पा लगा दिया और उसकी आँखों पर परदा डाल दिया? अल्लाह के बाद अब और कौन है जो उसे मार्ग दिखाए? क्या तुम लोग कोई शिक्षा ग्रहण नहीं करते?

(24) ये लोग कहते हैं कि "ज़िन्दगी बस यही हमारी दुनिया की ज़िन्दगी है, यहीं हमारा मरना और जीना है और दिनों की गर्दिश के सिवा कोई चीज़ नहीं जो हमें विनष्ट करती हो।" वास्तव में इस मामले में इनके पास कोई ज्ञान नहीं हैं। ये सिर्फ़ अटकल के आधार पर ये बातें करते हैं। (25) और जब हमारी स्पष्ट आयतें इन्हें सुनाई जाती हैं तो इनके पास कोई तर्क इसके सिवा नहीं होता कि उठा लाओ हमारे बाप-दादा को अगर तुम सच्चे हो। (26) ऐ नबी, इनसे कहो, अल्लाह ही तुम्हें ज़िन्दगी प्रदान करता है, फिर वही तुम्हें मौत देता है, फिर वही तुमको उस क़ियामत के दिन इकट्ठा करेगा जिसके आने में कोई शक नहीं, मगर अधिकतर लोग जानते नहीं हैं। (27) ज़मीन और आसमानों का राज (बादशाही) अल्लाह ही का है, और जिस दिन क़ियामत की घड़ी आ खड़ी होगी उस दिन झूठवाले घाटे में पड़ जाएँगे।

(28) उस समय तुम हर गिरोह को घुटनों के बल गिरा देखोगे। हर गिरोह को पुकारा जाएगा कि आए और अपना कर्मपत्र देखे। उनसे कहा जाएगा : "आज तुम लोगों को उन कर्मों का बदला दिया जाएगा जो तुम करते रहे थे। (29) यह हमारा तैयार कराया हुआ कर्मपत्र है जो तुम्हारे ऊपर ठीक-ठीक गवाही दे रहा है, जो कुछ भी तुम करते थे उसे हम लिखवाते जा रहे थे।" (30) फिर जो लोग ईमान लाए थे और अच्छे कर्म करते रहे थे उन्हें उनका रब अपनी दयालुता में दाख़िल करेगा और यही खुली सफलता है। (31) और जिन लोगों ने इनकार किया था (उनसे कहा जाएगा), "क्या

3. मूल शब्द हैं : "अज़ल्लहुल्लाहु अला इल्मिन" (एक अर्थ इन शब्दों का यह हो सकता है कि वह व्यक्ति ज्ञानी होने के बावजूद अल्लाह की ओर से गुमराही में फेंका गया, क्योंकि वह अपने मन की इच्छा का दास बन गया था। दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि अल्लाह ने अपने इस ज्ञान के आधार पर कि वह अपने मन की इच्छा को अपना ख़ुदा बना बैठा है, उसे गुमराही में फेंग दिया।

मेरी आयतें तुमको नहीं सुनाई जाती थीं? मगर तुमने घमंड किया और अपराधी बन कर रहे। (32) और जब कहा जाता था कि अल्लाह का वादा सच्चा है और क़ियामत के आने में कोई शक नहीं, तो तुम कहते थे कि हम नहीं जानते क़ियामत क्या होती है, हम तो बस एक गुमान-सा रखते हैं, विश्वास हमको नहीं है।'' (33) उस समय उनपर उनके कर्मों की बुराइयाँ खुल जाएँगी और वे उसी चीज़ के फेर में आ जाएँगे जिसकी वे हँसी उड़ाया करते थे। (34) और उनसे कह दिया जाएगा कि ''आज हम भी उसी तरह तुम्हें भुलाए देते हैं जिस तरह तुम इस दिन की भेंट को भूल गए थे। तुम्हारा ठिकाना अब दोज़ख़ है और कोई तुम्हारी सहायता करनेवाला नहीं है। (35) यह तुम्हारा परिणाम इसलिए हुआ है कि तुमने अल्लाह की आयतों का मज़ाक़ बना लिया था और तुम्हें दुनिया की ज़िन्दगी ने धोखे में डाल दिया था। अतः आज न ये लोग दोज़ख़ से निकाले जाएँगे और न इनसे कहा जाएगा कि माफ़ी माँगकर अपने रब को राज़ी करो।''[4]

(36) अतः प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है जो ज़मीन और आसमानों का मालिक और सारे जहानवालों का पालनकर्ता है। (37) ज़मीन और आसमानों में बड़ाई उसी के लिए है और वही प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।



4. यह अन्तिम वाक्य इस रूप में है जैसे कोई मालिक अपने कुछ सेवकों को डाँटने के बाद दूसरों को सम्बोधित करके कहता है कि अच्छा, अब इन नालायकों को यह सज़ा है।

46. अल-अहक़ाफ़

नाम

आयत 21 के वाक्यांश ''जब कि उसने अह्क़ाफ़ में अपनी क़ौम को सावधान किया था'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

एक ऐतिहासिक घटना के अनुसार, जिसका उल्लेख आयत 29-32 में आया है कि, यह सूरा सन् 10 नबवी के अन्त में या सन् 11 नबवी के आरम्भिक काल में अवतरित हुई।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

सन् 10 नबवी नबी (सल्ल॰) के पवित्र जीवन में अत्यन्त कठिनाई का वर्ष था। तीन वर्ष से क़ुरैश के सभी क़बीलों ने मिलकर बनी हाशिम और मुसलमानों का पूर्णतः सामाजिक बहिष्कार कर रखा था और नबी (सल्ल॰) अपने घराने और अपने साथियों के साथ अबू तालिब की घाटी में घिरकर रह गए थे। क़ुरैश के लोगों ने हर तरफ़ से इस मुहल्ले की नाकाबन्दी कर रखी थी, जिससे गुज़रकर किसी प्रकार की रसद अन्दर न पहुँच सकती थी। निरन्तर तीन वर्ष के इस सामाजिक बहिष्कार ने मुसलमानों और बनी हाशिम की कमर तोड़कर रख दी थी। और उन पर ऐसे-ऐसे कठिन समय बीत गए थे जिनमें अधिकांश समय घास और पत्ते खाने की नौबत आ जाती थी। किसी तरह यह घेराव इस वर्ष टूटा ही था कि नबी (सल्ल॰) के चचा अबू तालिब का, जो दस वर्ष से आपके लिए ढाल बने हुए थे, देहान्त हो गया। और इस घटना को घटित हुए मुश्किल से एक महीना हुआ था कि आप (सल्ल॰) की जीवन संगिनी हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) का भी देहान्त हो गया, जो नुबूवत के आरम्भ से लेकर उस वक़्त तक आपके लिए शान्ति और सान्त्वना का कारण बनी रही थीं। इन निरन्तर आघातों और दुखों के कारण नबी (सल्ल॰) इस वर्ष को 'आमुल हुज़्न' (शोक का वर्ष) कहा करते थे। हज़रत ख़दीजा और अबू तालिब के देहान्त के पश्चात् मक्का के काफ़िर नबी (सल्ल॰) के मुक़ाबले में और अधिक दुस्साहसी हो गए। पहले से अधिक आपको तंग करने लगे। यहाँ तक कि आपका घर से निकलना भी मुश्किल हो गया। अनततः आप इस इरादे से ताइफ़ गए कि बनी सक़ीफ़ को इस्लाम की ओर बुलाएँ और यदि वे इस्लाम स्वीकार न करें तो उन्हें कम-से-कम इस बात पर आमादा करें कि वे आपको अपने यहाँ चैन से बैठकर काम करने का अवसर दे दें। किन्तु (वहाँ के बड़े लोगों ने) न केवल यह कि आपकी कोई

बात न मानी बल्कि आपको नोटिस दे दिया कि उनके नगर से निकल जाएँ। विवश होकर आपको ताइफ़ छोड़ देना पड़ा। जब आप वहाँ से निकलने लगे तो सक़ीफ़ के सरदारों ने अपने यहाँ के लफंगों को आपके पीछे लगा दिया। वे रास्ते के दोनों तरफ़ दूर तक आपपर व्यंग्य करते, गालियाँ देते और पत्थर मारते चले गए, यहाँ तक कि आप (सल्ल॰) ज़ख़्मों से चूर हो गए और आपकी जूतियाँ ख़ून से भर गईं। इसी हालत में आप ताइफ़ के बाहर एक बाग़ की दीवार की छाया में बैठ गए और अपने रब से (दुआ करने में लग गए।) टूटा दिल लेकर और दुखी होकर पलटे। जब आप क़र्नुल-मनाज़िल के निकट पहुँचेतो ऐसा लगा कि आकाश में एक बादल-सा छाया हुआ है। निगाह उठाकर देखा तो जिबरील (अलै॰) सामने थे। उन्होंने पुकार कर कहा ''आपकी क़ौम ने जो कुछ आपको जवाब दिया है, अल्लाह ने उसको सुन लिया। अब यह पर्वतों का प्रबन्धक फ़रिश्ता अल्लाह ने भेजा है, आप जो हुक्म देना चाहें इसे दे सकते हैं।'' फिर पहाड़ों के फ़रिश्ते ने आपको सलाम करके निवेदन किया, ''आप कहें तो दोनों तरफ़ के पहाड़ इन लोगों पर उलट दूँ।'' आपने जवाब दिया, ''नहीं, बल्कि मैं आशा रखता हूँ कि अल्लाह इनके वंश से ऐसे लोगों को पैदा करेगा, जो एक अल्लाह की, जिसका कोई साझी नहीं है, बन्दगी करेंगे।'' (हदीस : बुखारी)

इसके बाद आप कुछ दिन नख़ला के स्थान पर जाकर ठहर गए। इन्हीं दिनों में एक दिन रात को आप नमाज़ में क़ुरआन का पाठ कर रहे थे कि जिन्नों के एक गिरोह का उधर से गुज़र हुआ। उन्होंने क़ुरआन सुना, ईमान लाए, वापस जाकर अपनी क़ौम में इस्लाम का प्रचार शुरू कर दिया। और अल्लाह ने अपने नबी (सल्ल॰) को यह ख़ुशख़बरी सुनाई कि मनुष्य चाहे आपके आमंत्रण से भाग रहे हों, किन्तु बहुत-से ज्नि उसके आसक्त हो गए हैं और वे उसे अपनी जाति में फैला रहे हैं।

विषय और वार्ताएँ

सूरा का विषय काफ़िरों को उनकी गुमराहियों से सचेत करना है, जिनमें वे केवल यही नहीं कि ग्रस्त थे, बल्कि बड़ी हठधर्मी और गर्व और अहंकार के साथ उनपर जमे हुए थे। उनकी दृष्टि में दुनिया की हैसियत केवल एक निरुद्देश्य खिलौने की थी और उसके अन्दर अपने आपको वे 'अनुत्तरदायी प्राणी' समझ रहे थे। एकेश्वरवाद का बुलावा उनके विचार में असत्य था। वे क़ुरआन के सम्बन्ध में यह मानने को तैयार न थे कि यह जगत् के प्रभु की वाणी है। उनकी दृष्टि में इस्लाम के सत्य न होने का एक बड़ा प्रमाण यह था कि केवल कुछ नव-युवक, थोड़े-से निर्धन लोग और कुछ ग़ुलाम ही उसपर ईमान लाए हैं। वे क़ियामत और जीवन-मृत्यु के पश्चात् और प्रतिदान और दण्ड की

बातों को मनगढ़न्त कहानी समझते थे। इस सूरा में संक्षिप्त रूप से इन्हीं गुमराहियों में से एक-एक का तर्कयुक्त खण्डन किया गया है और काफ़िरों को सावधान किया गया है कि तुम यदि क़ुरआन के आमंत्रण को रद्द कर दोगे तो तुम स्वयं ही अपना परिणाम बिगाड़ोगे।



46. सूरा अल-अहक़ाफ़

(मक्का में उतरी—आयतें 35)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हा॰ मीम॰। (2) इस किताब का अवतरण अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी की ओर से है।

(3) हमने ज़मीन और आसमानों को और उन सारी चीज़ों को, जो उनके बीच में हैं, हक़ के साथ, और एक विशेष अवधि के निर्धारण के साथ पैदा किया है। मगर ये इनकार करनेवाले लोग उस वास्तविकता से मुँह मोड़े हुए हैं जिससे इनको सावधान किया गया है।

(4) ऐ नबी, इनसे कहो, "कभी तुमने आँखें खोलकर देखा भी कि वे हस्तियाँ है क्या जिन्हें तुम अल्लाह को छोड़कर पुकारते हो? तनिक मुझे दिखाओ तो सही कि ज़मीन में उन्होंने क्या पैदा किया है? या आसमानों की सृष्टि और व्यवस्था में उनका कोई हिस्सा है? इससे पहले आई हुई कोई किताब या ज्ञान का कोई अवशेष (इन धारणाओं के प्रमाण में) तुम्हारे पास हो तो वही ले आओ अगर तुम सच्चे हो।" (5) आख़िर उस व्यक्ति से ज़्यादा बहका हुआ इनसान और कौन होगा जो अल्लाह को छोड़कर उनको पुकारे जो 'क़ियामत' तक उसे उत्तर नहीं दे सकते[1] बल्कि इससे भी बेख़बर है कि पुकारनेवाले उनको पुकार रहे हैं, (6) और जब सभी इनसान इकट्ठा किए जाएँगे उस समय वे अपने पुकारनेवालों के दुश्मन और उनकी उपासनाओं के इनकार करनेवाले होंगे।[2]

(7) इन लोगों को जब हमारी साफ़-साफ़ आयतें सुनाई जाती हैं और सत्य इनके सामने आ जाता है तो ये इनकार करनेवाले लोग उसके बारे में कहते हैं कि यह तो खुला

1. जवाब देने से मुराद किसी के आवेदन पर अपना निर्णय देना है। मतलब यह है कि इन उपास्यों के पास वे अधिकार ही नहीं हैं जिनकी बिना पर वे इनकी दुआओं और आवेदनों पर कोई निर्णय दे सकें।
2. अर्थात् वे साफ़-साफ़ कह देंगे कि न हमने इनसे कभी यह कहा था कि तुम सहायता के लिए हमें पुकारा करो, हम तुम्हारी आवश्यकता पूरी करनेवाले हैं, और न हमें यह ख़बर कि ये लोग हमें पुकारा करते थे। इन्होंने ख़ुद ही हमें आवश्यकता पूरी करनेवाला निश्चित कर लिया है और ख़ुद ही हमें पुकारना आरंभ कर दिया।

जादू है। (8) क्या उनका कहना यह है कि रसूल ने इसे ख़ुद घड़ लिया है? इनसे कहो, "अगर मैंने इसे ख़ुद घड़ लिया है तो तुम मुझे अल्लाह की पकड़ से कुछ भी न बचा सकोगे, जो बातें तुम बनाते हो अल्लाह उनको ख़ूब जानता है, मेरे और तुम्हारे बीच वही गवाही देने के लिए काफ़ी है, और वह बड़ा माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला है।[3]

(9) इनसे कहो, "मैं कोई निराला रसूल तो नहीं हूँ,[4] मैं नहीं जानता कि कल तुम्हारे साथ क्या होना है और मेरे साथ क्या, मैं तो सिर्फ़ उस प्रकाशना (वह्य) का अनुगमन करता हूँ जो मेरे पास भेजी जाती है और मैं एक साफ़-साफ़ सावधान कर देनेवाले के सिवा और कुछ नहीं हूँ।" (10) ऐ नबी, इनसे कहो, "कभी तुमने सोचा भी कि अगर यह वाणी अल्लाह ही की ओर से हुई और तुमने इसका इनकार कर दिया (तो तुम्हारा क्या परिणाम होगा)? और इस जैसी एक वाणी पर तो इसराईल की सन्तान का एक गवाह गवाही भी दे चुका है। वह ईमान ले आया और तुम अपने घमण्ड में पड़े रहे।[5] ऐसे ज़ालिमों को अल्लाह मार्ग नहीं दिखाया करता।"

(11) जिन लोगों ने मानने से इनकार कर दिया है वे ईमान लानेवालों के सम्बन्ध

3. यहाँ यह वाक्य दो अर्थ दे रहा है। एक यह कि वास्तव में यह अल्लाह की दयालुता और उसकी क्षमा ही है जिसके कारण वे लोग ज़मीन में साँस ले रहे हैं जिन्हें अल्लाह की वाणी को मनघड़त ठहराने में कोई झिझक नहीं, वरना कोई दयाहीन और कड़ी पकड़ करनेवाला ईश्वर इस जगत का स्वामी होता तो ऐसे दुस्साहस करनेवालों को एक साँस के बाद दूसरी साँस लेना नसीब न होता। दूसरा अर्थ इस वाक्य का यह है कि ज़ालिमो, अब भी इस हठधर्मी से बाज़ आ जाओ तो ईश-दयालुता का द्वार तुम्हारे लिए खुला हुआ है, और जो कुछ तुमने अब तक किया है माफ़ हो सकता है।
4. अर्थात् जिस तरह पहले सब रसूल इनसान ही होते थे और ईश्वरीय गुणों और अधिकारों में उनका कोई हिस्सा नहीं होता था, वैसा ही रसूल मैं भी हूँ।
5. यहाँ गवाह से मुराद कोई ख़ास व्यक्ति नहीं बल्कि इसराईलियों का एक साधारण व्यक्ति है। ईश्वरीय कथन का मक़सद यह है कि क़ुरआन मजीद जो शिक्षा तुम्हारे सामने प्रस्तुत कर रहा है यह कोई अनोखी चीज़ नहीं है जो दुनिया में पहली बार तुम्हारे ही सामने पेश की गई हो और तुम यह विवशता प्रकट करो कि हम ये निराली बातें कैसे मान लें जो मानव जाति के सामने कभी आई ही न थीं। इससे पहले यही शिक्षाएँ इसी तरह 'वह्य' (प्रकाशना) के द्वारा इसराईलियों के सामने तौरात और अन्य आसमानी किताबों के रूप में आ चुकी हैं, और उनका एक सामान्य आदमी इनको मान चुका है।

में कहते हैं कि अगर इस किताब को मान लेना कोई अच्छा काम होता तो ये लोग इस मामले में हमसे आगे नहीं रह सकते थे।[6] चूँकि इन्होंने उससे मार्ग न पाया इसलिए अब ये ज़रूर कहेंगे कि यह तो पुराना झूठ है। (12) हालाँकि इससे पहले मूसा की किताब मार्गदर्शक और दयालुता बनकर आ चुकी है, और यह किताब उसकी पुष्टि करनेवाली अरबी भाषा में आई है ताकि ज़ालिमों को सावधान कर दे और उत्तम नीति अपनानेवालों को ख़ुशख़बरी दे दे। (13) यक़ीनन जिन लोगों ने कह दिया कि अल्लाह ही हमारा रब है, फिर उसपर जम गए, उनके लिए न कोई डर है और न वे शोकाकुल होंगे। (14) ऐसे लोग जन्नत (स्वर्ग) में जानेवाले हैं जहाँ वे हमेशा रहेंगे अपने उन कर्मों के बदले जो वे दुनिया में करते रहे हैं।

(15) हमने इनसान को ताकीद की कि वह अपने माँ-बाप के साथ अच्छा व्यवहार करे। उसकी माँ ने कष्ट उठाकर उसे पेट में रखा और कष्ट उठाकर ही उसे जन्म दिया, और उसके गर्भ और दूध छुड़ाने में तीस माह लग गए। यहाँ तक कि जब वह अपनी पूरी शक्ति को पहुँचा और चालीस वर्ष का हो गया तो उसने कहा, "ऐ मेरे रब, मुझे इसका सौभाग्य दे कि मैं तेरी उन नेमतों के प्रति कृतज्ञता दिखाऊँ जो तूने मुजे और मेरे माँ-बाप को प्रदान कीं, और ऐसा अच्छा कर्म करूँ जिससे तू राज़ी हो, और मेरी सन्तान को भी नेक बनाकर मुझे सुख दे, मैं तेरे सामने तौबा करता हूँ और आज्ञाकारी (मुसलिम) बन्दों में से हूँ।" (16) इस तरह के लोगों से हम उनके उत्तम कर्मों को स्वीकार करते हैं और उनकी बुराइयों को टाल जाते हैं। ये जन्नती लोगों में शामिल होंगे उस सच्चे वादे के मुताबिक़ जो उनसे किया जाता रहा है। (17) और जिस व्यक्ति ने अपने माँ-बाप से कहा : "उफ़, तंग कर दिया तुमने, क्या तुम मुझे इससे डराते हो कि मैं मरने के बाद क़ब्र से निकाला जाऊँगा? हालाँकि मुझसे पहले बहुत-सी नस्लें गुज़र चुकी है (उनमें से तो कोई उठकर न आया।" माँ और बाप अल्लाह की दुहाई देकर कहते हैं, "अरे बदनसीब, मान जा, अल्लाह का वादा सच्चा है।" मगर वह कहता है, "ये सब अगले समयों की पुरातन कहानियाँ हैं।" (18) ये लोग हैं जिनपर अज़ाब का फ़ैसला चस्पाँ हो चुका है। इनसे पहले जिन्नों और इनसानों के जो टोले (इसी आचार के) हो गुज़रे हैं उन्हीं में ये भी जा सम्मिलित होंगे। बेशक ये घाटे में रह जानेवाले लोग हैं। (19) दोनों गिरोहों में से हर एक के दर्जे उनके कर्मों के अनुसार हैं ताकि अल्लाह

6. उनका मतलब यह था कि इस क़ुरआन पर कुछ नासमझ लोग ईमान ले आए हैं, नहीं तो अगर यह कोई अच्छा काम था तो हम जैसे बुद्धिमान लोग इसे मानने में पीछे कैसे रह सकते थे।

उनके किए का पूरा-पूरा बदला उनको दे। उनपर ज़ुल्म हरगिज़ न किया जाएगा। (20) फिर जब ये इनकार करनेवाले आग के सामने ला खड़े किए जाएँगे तो इनसे कहा जाएगा : "तुम अपने हिस्से की नेमतें अपनी दुनिया की ज़िन्दगी में समाप्त कर चुके और उनका मज़ा तुम ले चुके, अब जो घमण्ड तुम ज़मीन में किसी हक़ के बिना करते रहे और जो अवज्ञाएँ तुमने की उनके बदले में आज तुमको रुसवाई का अज़ाब दिया जाएगा।

(21) तनिक इन्हें आद के भाई (हूद) का क़िस्सा सुनाओ जबकि उसने अहक़ाफ़ में अपनी क़ौम को सावधान किया था—और ऐसे सावधान करनेवाले उससे पहले भी गुज़र चुके थे और उसके बाद भी आते रहे—कि "अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करो, मुझे तुम्हारे हक़ में एक बड़े भयंकर दिन के अज़ाब का डर है।" (22) उन्होंने कहा, "क्या तू इसलिए आया है कि हमें बहकाकर हमारे उपास्यों से फेर दे? अच्छा तो ले आना अपना वह अज़ाब जिससे तू हमें डराता है अगर वास्तव में तू सच्चा है।" (23) उसने कहा, "इसका ज्ञान तो अल्लाह को है,[7] मैं सिर्फ़ वह सन्देश तुम्हें पहुँचा रहा हूँ जिसे देकर मुझे भेजा गया है। मगर मैं देख रहा हूँ कि तुम लोग अज्ञानता बरत रहे हो।" (24,25) फिर जब उन्होंने उस अज़ाब को अपनी घाटियों की ओर आते देखा तो कहने लगे, "यह बादल है जो हमें सिंचित कर देगा"—"नहीं,[8] बल्कि यह वही चीज़ है जिसके लिए तुम जल्दी मचा रहे थे। यह हवा का तूफ़ान है जिसमें दर्दनाक अज़ाब चला आ रहा है, अपने रब के आदेश से हर चीज़ को तबाह कर डालेगा।" आख़िरकार उनकी दशा यह हुई कि उनके रहने की जगहों के सिवा वहाँ कुछ दिखाई न देता था। इस तरह हम अपराधियों को बदला दिया करते हैं। (26) उनको हमने वह कुछ दिया था जो तुम लोगों को नहीं दिया है। उनको हमने कान, आँखें और दिल, सब कुछ दे रखे थे, मगर न वे कान उनके किसी काम आए, न आँखें, न दिल, क्योंकि वे अल्लाह की आयतों का इनकार करते थे, और उसी चीज़ के फेर में वे आ गए जिसकी वे हँसी उड़ाते

7. अर्थात् इस बात का ज्ञान कि तुमपर अज़ाब कब भेजा जाए और कब तक तुम्हें मुहलत दी जाए।

8. यहाँ इस बात को स्पष्ट नहीं किया गया है कि उनको यह जवाब किसने दिया। वर्णन-शैली से स्वतः प्रकट होता है कि यह वह जवाब था जो यथार्थ परिस्थिति ने व्यवहारतः उनको दिया। वे समझते थे कि यह बादल है जो उनकी घाटियों को सिंचित करने आया है, और वास्तव में था वह हवा का तूफ़ान जो उन्हें तबाह और बरबाद करने के लिए बढ़ा चला आ रहा था।

थे।

(27) तुम्हारे आस-पास के क्षेत्रों में बहुत-सी बस्तियों को हम तबाह कर चुके हैं। हमने अपनी आयतें भेजकर बार-बार तरह-तरह से उनको समझाया, शायद कि वे बाज़ आ जाएँ। (28) फिर क्यों न उन हस्तियों ने उनकी सहायता की जिन्हें अल्लाह को छोड़कर उन्होंने अल्लाह से निकट होने का माध्यम समझते हुए उपास्य बना दिया था?[9] बल्कि वे तो उनसे खोए गए, और यह था उनके झूठ और उन बनावटी धारणाओं का परिणाम जो उन्होंने घड़ रखे थे।

(29) (और वह घटना भी उल्लेखनीय है) जब हम जिन्नों के एक गिरोह को तुम्हारी ओर ले आए थे ताकि क़ुरआन सुनें।[10] जब वे उस जगह पहुँचे (जहाँ तुम क़ुरआन पढ़ रहे थे) तो उन्होंने आपस में कहा, चुप हो जाओ। फिर जब वह पढ़ा जा चुका तो वे सावधान करनेवाले बनकर अपनी क़ौम की ओर पलटे। (30) उन्होंने

9. अर्थात् उन हसतियों के साथ श्रद्धा का आरंभ तो उन्होंने इस भावना से किया था कि ये अल्लाह के मक़बूल और चहेते बन्दे हैं, इनके माध्यम से अल्लाह के यहाँ हमारी पहुँच होगी। मगर बढ़ते-बढ़ते उन्होंने ख़ुद उन्हीं हस्तियों को आराध्य बना लिया, उन्हीं को सहायता के लिए पुकारने लगे, और उन्हीं से दुआएँ माँगने लगे, और उन्हीं के सम्बन्ध में यह समझ लिया कि वे स्वयं ही आधिकारिक हैं, यही हमारी फ़रियाद सुनेंगे और कठिनाइयों को दूर करेंगे। इस गुमराही से उनको निकालने के लिए अल्लाह ने अपनी आयतें अपने रसूलों के द्वारा भेजकर तरह-तरह से उनको समझाने की कोशिश की, मगर वे अपने इन झूठे ख़ुदाओं की बन्दगी पर अड़े रहे और आग्रह करते चले गए कि हम अल्लाह की जगह इन्हीं का दामन थामे रहेंगे। अब बताओ, उन बहुदेववादियों पर जब उनकी गुमराही के कारण अल्लाह का अज़ाब आया तो उनके वे फ़रियाद सुननेवाले और कष्ट दूर करनेवाले पूज्य कहाँ मर रहे थे? क्यों न उस बुरे समय में ये उनकी सहायता को आए।

10. यह उल्लेख उस घटना का है जो तायफ़ की यात्रा के मक्का लौटते हुए रास्ते में घटित हुई थी। नमाज़ में आप (सल्ल॰) क़ुरआन का पाठ कर रहे थे कि जिन्नों के एक गिरोह का उधर से गुज़र हुआ, और वह आपका क़ुरआन पाठ (क़िरअत) सुनने के लिए ठहर गया। इस सम्बन्ध में सभी उल्लेख (रिवायतें) इस बात पर एकमत है कि इस अवसर पर जिन्न नबी (सल्ल॰) के सामने नहीं आए थे, न आपने उनके आगमन को महसूस किया था बल्कि बाद में अल्लाह ने 'वह्य' (प्रकाशना) के द्वारा आपको उनके आने और क़ुरआन सुनने की ख़बर दी।

जाकर कहा, ''ऐ हमारी क़ौम के लोगो, हमने एक किताब सुनी है जो मूसा के बाद उतारी गई है, पुष्टि करनेवाली है अपने से पहले आई हुई किताबों की, पथप्रदर्शन करती है सत्य और सीधे मार्ग की ओर।[11] (31) ऐ हमारी क़ौम के लोगो, अल्लाह की ओर बुलानेवाले का आमंत्रण स्वीकार कर लो और उसपर ईमान ले आओ, अल्लाह तुम्हारे गुनाहों को माफ़ करेगा और तुम्हें दर्दनाक अज़ाब से बचा देगा।'' (32) और जो कोई अल्लाह के आमंत्रणकर्ता (दावत देनेवाले) की बात न माने वह न ज़मीन में ख़ुद कोई बलबूता रखता है कि अल्लाह को तंग कर दे, और न उसके कोई ऐसे सहायक और संरक्षक हैं कि अल्लाह से उसको बचा लें। ऐसे लोग खुली गुमराही में पड़े हुए हैं।

(33) और क्या इन लोगों को यह सुझाई नहीं देता कि जिस अल्लाह ने ये ज़मीन और आसमान पैदा किए और इनको बनाते हुए वह न थका, वह ज़रूर इसकी सामर्थ्य रखता है कि मुर्दों को जिला उठाए? क्यों नहीं, यक़ीनन वह हर चीज़ की सामर्थ्य रखता है। (34) जिस दिन ये इनकार करनेवाले आग के सामने लाए जाएँगे, उस समय इनसे पूछा जाएगा, ''क्या यह सत्य नहीं है?'' ये कहेंगे, ''हाँ, हमारे रब की क़सम (यह वास्तव में सत्य है।'' अल्लाह कहेगा, ''अच्छा तो अब अज़ाब का मज़ा चखो अपने उस इनकार के बदले में जो तुम करते रहे थे।''

(35) अतः ऐ नबी, सब्र करो जिस तरह संकल्पवान रसूलों ने सब्र किया है, और इनके मामले में जल्दी न करो। जिस दिन ये लोग उस चीज़ को देख लेंगे जिससे इन्हें डराया जा रहा है तो इन्हें यूँ मालूम होगा कि जैसे दुनिया में दिन की एक घड़ी-भर से ज़्यादा नहीं रहे थे। बात पहुँचा दी गई, अब क्या अवज्ञाकारी लोगों के सिवा और कोई तबाह होगा?

● ● ●

11. इससे मालूम हुआ कि ये जिन्न पहले से हज़रत मूसा (अलै॰) और आसमानी किताबों पर ईमान लाए हुए थे। क़ुरआन सुनने के बाद उन्होंने महसूस किया कि यह वही शिक्षा है जो पिछले नबी देते चले आ रहे हैं, इसलिए वे इस किताब, और इसके लानेवाले रसूल (सल्ल॰) पर भी ईमान ले आए।

47. मुहम्मद

नाम

आयत 2 के वाक्यांश "उस चीज़ को मान लिया जो मुहम्मद पर अवतरित हुई है," से उद्धृत है। मतलब यह है कि यह वह सूरा है जिसमें मुहम्मद (सल्ल०) का प्रतिष्ठित नाम आया है। इसके अतिरिक्त इसका एक मशहूर नाम 'क़िताल' (युद्ध) भी है, जो आयत 20 के वाक्यांश, "जिसमें युद्ध (क़िताल) का उल्लेख था" से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसकी विषय-वस्तुएँ यह गवाही देती है कि यह हिजरत के पश्चात् मदीना में उस वक़्त अवतरित हुई थी, जब युद्ध का आदेश तो दिया जा चुका था, किन्तु अभी युद्ध व्यवहारतः आरम्भ नहीं हुआ था।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

जिस कालखण्ड में यह सूरा अवतरित हुई है, उस समय परिस्थिति यह थी कि मक्का मुअज़्ज़मा विशेष रूप से और अरब भू-भाग में सामान्यतः हर जगह मुसलमानों को ज़ुल्म और अत्याचार का निशाना बनाया जा रहा था और उनपर जीवनकाल तंग कर दिया गया था। मुसलमान हर ओर से सिमटकर मदीना तैबा के शान्तिगृह में एकत्र हो गए थे, किन्तु क़ुरैश के काफ़िर यहाँ भी उनको चैन से बैठने देने के लिए तैयार न थे। मदीने की छोटी-सी बस्ती हर तरफ़ से काफ़िरों के घेरे में थी और वे उसे मिटा देने पर तुले हुए थे। मुसलमानों के लिए इस स्थिति में दो ही उपाय शेष रह गए थे—या तो वे सत्यधर्म की ओर बुलाने और उसके प्रचार ही से नहीं, बल्कि उसके अनुपालन तक को त्याग कर अज्ञान के आगे हथियार डाल दें, या फिरमरने-मारने के लिए उठ खड़े हों और सिर-धड़ की बाज़ी लगाकर हमेशा के लिए इस बात का फ़ैसला कर दें कि अरब भू-भाग में इस्लाम को रहना है या अज्ञान को। अल्लाह ने इस अवसर पर मुसलमानों को उसी दृढ संकल्प और साहस की राह दिखाई जो ईमानवालों के लिए एक ही राह है। उसने पहले सूरा 22 (हज्ज) आयत 39 में उनको युद्ध की अनुज्ञा दी और फिर सूरा 2 (बक़रा) आयत 190 में इसका आदेश दे दिया। किन्तु उस समय हर व्यक्ति जानता था कि इन परिस्थितियों में युद्ध का अर्थ क्या है। मदीना में ईमानवालों का एक मुट्ठीभर जन-समूह था जो पूरे एक हज़ार युद्ध-योग्य पुरुष भी जुटाने की क्षमता न रखता था और उससे कहा जा रहा था कि सम्पूर्ण अरब के अज्ञान से टकरा जाने के लिए खड़ा हो जाए। फिर युद्ध के लिए जिस सामान की ज़रूरत थी, एक ऐसी बस्ती अपना पेट काटकर भी मुश्किल ही से जुटा सकती थी, जिसके अन्दर सैकड़ों बेघर मुहाजिर अभी

पूरी तरह से बसे भी न थे और चारों ओर से अरब निवासियों ने आर्थिक बहिष्कार करके उसकी कमर तोड़ रखी थी।

विषय और वार्ता

इसका विषय ईमानवालों को युद्ध के लिए तैयार करना और उनको इस सिलसिले में आरम्भिक आदेश देना है। इसी सम्पर्क से इसका नाम सूरा क़िताल भी रखा गया है। इसमें क्रमशः नीचे की ये वार्ताएँ प्रस्तुत की गई हैं :

आरम्भ में बताया गया है कि इस समय दो गिरोहों के मध्य मुक़ाबला आ पड़ा है। एक गिरोह (सत्य का इनकार करनेवालों और अल्लाह के शत्रुओं का है और दूसरा गिरोह सत्य के माननेवालों का है।) अब अल्लाह का दो टूक फ़ैसला यह है कि पहले गिरोह के सभी प्रयास और क्रिया-कलाप को उसने अकारथ कर दिया और दूसरे गिरोह की परिस्थितियाँ ठीक कर दीं। इसके बाद मुसलमानों को युद्ध-सम्बन्धी प्रारम्भिक आदेश दिए गए हैं। उनको अल्लाह की सहायता और मार्गदर्शन का विश्वास दिलाया गया है। उनको अल्लाह की राह में क़ुरबानियाँ करने पर उत्कृष्ट प्रतिपादन की आशा दिलाई गई है। फिर काफ़िरों के सम्बन्ध में बताया गया है कि वे अल्लाह के समर्थन और मार्गदर्शन से वंचित हैं। उनका कोई उपाय ईमानवालों के मुक़ाबले में सफल न होगा और वे इस लोक में भी और परलोक में भी बहुत बुरा परिणाम देखेंगे। इसके बाद वार्ता का रुख़ मुनाफ़िक़ों की ओर फिर जाता है जो बड़े मुसलमान बने फिरते थे, किन्तु यह आदेश आ जाने के बाद अपने कुशल-क्षेत्र की चिन्ता में काफ़िरों से साठ-गाँठ करने लगे थे। उनको साफ़-साफ़ ख़बरदार किया गया है कि अल्लाह और उसके धर्म के विषय में कपटाचार की नीति अपनानेवालों का कोई कर्म स्वीकृत नहीं है। फिर मुसलमानों को उभारा गया है कि वे अपनी अल्पसंख्या और बेसरो-सामान होने और काफ़िरों की अधिक संख्या और उनके साज़-सामान की अधिकता देखकर हिम्मत न हारें। उनके आगे संधि का प्रस्ताव करके कमज़ोरी न दिखाएँ, जिससे उनके दुस्साहस इस्लाम और मुसलमानों के मुक़ाबले में और अधिक बढ़ जाएँ, बल्कि अल्लाह के भरोसे पर उठें और कुफ़्र के उस पहाड़ से टकरा जाएँ, अल्लाह मुसलमानों के साथ है। अन्त में मुसलमानों को अल्लाह की राह में ख़र्च करने का आमंत्रण दिया है। यद्यपि उस समय मुसलमानों की आर्थिक दशा बहुत दयनीय थी, किन्तु सामने यह समस्य खड़ी थी कि अरब में इस्लाम और मुसलमानों को जीवित रहना है या नहीं। इसलिए मुसलमानों से कहा गया कि इस समय जो व्यक्ति भी कंजूसी से काम लेगा वह वास्तव में अल्लाह का कुछ न बिगाड़ेगा, बल्कि स्वयं अपने आप ही को तबाही के ख़तरे में डाल देगा।



47. सूरा मुहम्मद

(मदीना में उतरी–आयतें 38)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) जिन लोगों ने इनकार किया और अल्लाह के रास्ते से रोका, अल्लाह ने उनके कर्मों को अकारथ कर दिया। (2) और जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए और उस चीज़ को मान लिया जो मुहम्मद पर अवतरित हुई है—और है वह सर्वथा सत्य उनके रब की ओर से—अल्लाह ने उनकी बुराईयाँ उनसे दूर कर दीं और उनका हाल ठीक कर दिया। (3) यह इसलिए कि इनकार करनेवालों ने असत्य का अनुसरण किया और ईमान लानेवालों ने उस सत्य का अनुसरण किया जो उनके रब की ओर से आया है। इस तरह अल्लाह लोगों को उनकी ठीक-ठीक हैसियत बताए देता है।

(4) अतः जब इन काफ़िरों (इनकार करनेवालों) से तुम्हारी मुठभेड़ हो तो पहला काम गरदनें मारना है, यहाँ तक कि जब तुम उनको अच्छी तरह कुचल दो तब क़ैदियों को मज़बूत बाँधो, इसके बाद (तुम्हें अधिकार है) एहसान करो या अर्थदण्ड (फ़िदया) का मामला कर लो, यहाँ तक कि लड़ाई अपने हथियार डाल दे।[1] यह है तुम्हारे करने का काम। अल्लाह चाहता तो ख़ुद ही उनसे निपट लेता, मगर (यह तरीक़ा उसने इसलिए अपनाया है) ताकि तुम लोगों को एक-दूसरे के द्वारा आज़माए।[2] और जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे जाएँगे अल्लाह उनके कर्मों को हरगिज़ अकारथ न करेगा। (5) वह उनको मार्ग दिखाएगा,[3] उनका हाल ठीक कर देगा (6) और उनको उस जन्नत में दाख़िल करेगा जिससे वह उनको परिचित करा चुका है।

1. इस आयत के शब्दों से भी और जिस संदर्भ में यह आई है उससे भी यह बात साफ़ मालूम होती है कि यह लड़ाई का आदेश आ जाने के बाद और लड़ाई शुरू होने से पहले उतरी है। ''जब इनकार करनेवालों से तुम्हीर मुठभेड़ हो'' के शब्द इसे प्रमाणित करते हैं कि अभी मुठभेड़ हुई नहीं है और उसके होने से पहले यह आदेश दिया जा रहा है कि जब वह हो तो मुसलमानों को सबसे पहले अपना ध्यान दुश्मन की युद्ध-शक्ति अच्छी तरह तोड़ देने पर लगाना चाहिए। इसके बाद जिन लोगों को पकड़ा जाए उनके मामले में मुसलमानों को यह भी अधिकार है कि अर्थदण्ड लेकर या अपने क़ैदियों के बदले में उन्हें छोड़ दें और यह अधिकार भी है कि क़ैद में रखकर उनसे एहसान का व्यवहार करें, या उचित हो तो एहसान के रूप में उन्हें रिहा कर दें।

(7) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अगर तुम अल्लाह की सहायता करोगे तो वह तुम्हारी सहायता करेगा[4] और तुम्हारे क़दम मज़बूत जमा देगा। (8) रहे वे लोग जिन्होंने इनकार किया है, तो उनके लिए तबाही है और अल्लाह ने उनके कर्मों को भटका दिया है। (9) क्योंकि उन्होंने उस चीज़ को नापसन्द किया जिसे अल्लाह ने उतारा है, अतः अल्लाह ने उनके कर्म अकारथ कर दिए। (10) क्या वे ज़मीन में चले-फिरे न थे कि उन लोगों का अंजाम देखते जो उनसे पहले गुज़र चुके हैं? अल्लाह ने उनका सब कुछ उनपर उलट दिया, और ऐसे ही परिणाम इन इनकार करनेवालों के लिए नियत हैं।[5] (11) यह इसलिए कि ईमान लानेवालों का संरक्षक और सहायक अल्लाह है और इनकार करनेवालों का संरक्षक और सहायक कोई नहीं। (12) ईमान लानेवालों और अच्छे कर्म करनेवालों को अल्लाह उन जन्नतों में प्रवेश करेगा जिनके नीचे नहरें बहती हैं, और इनकार करनेवाले बस दुनिया की कुछ दिनों की ज़िन्दगी के मज़े लूट रहे हैं, जानवरों की तरह खा-पी रहे हैं, और उनका अन्तिम ठिकाना जहन्नम है।

(13) ऐ नबी, कितनी ही बस्तियाँ ऐसी गुज़र चुकी हैं जो तुम्हारी उस बस्ती से बहुत ज़्यादा बलशाली थीं जिसने तुम्हें निकाल दिया है।[6] उन्हें हमने इस तरह तबाह कर

2. अर्थात् अल्लाह को अगर सिर्फ़ असत्य के पुजारियों को कुचल देना ही होता तो वह इस कार्य के लिए तुम्हारा मुहताजन था। यह कार्य तो उसका एक भूकम्प या एक तूफ़ान क्षण-भर में कर सकता था। मगर उसके सामने तो यह है कि इनसानों में से जो सत्यप्रिय हों वे असत्य के पुजारियों से टकराएँ और उनके मुक़ाबले में संघर्ष (जिहाद) करें ताकि जिसके अन्दर जो कुछ गुण हैं इस परीक्षा से निखरकर पूरी तरह प्रकट हो जाएँ और हर एक अपने चरित्र के अनुसार जिस स्थान और पद के योग्य हो वह उसको दिया जाए।
3. अर्थात् जन्नत की ओर राह दिखाएगा।
4. अल्लाह की सहायता करने से मुराद अल्लाह का बोल-बाला करने और सत्य को प्रतिष्ठित एवं ऊँचा करने के कार्य में हिस्सा लेना है।
5. इसके दो अर्थहैं। एक यह कि जिस तबाही का उन इनकार करनेवालों को सामना करना पड़ा वैसी ही तबाही अब इन इनकार करनेवालों के लिए निश्चित है जो मुहम्मद (सल्ल॰) के पैग़ाम को नहीं मान रहे हैं। दूसरा अर्थ यह है कि उन लोगों की तबाही सिर्फ़ दुनिया के अज़ाब पर समाप्त नहीं हो गई है बल्कि यही तबाही उनके लिए आख़िरत में भी निश्चित है।
6. अर्थात् मक्का जहाँ से क़ुरैश ने नबी (सल्ल॰) को निकल जाने पर मजबूर कर दिया था।

दिया कि कोई उनका बचानेवाला न था। (14) भला कहीं ऐसा हो सकता है कि जो अपने रब की ओर से एक स्पष्ट और प्रत्यक्ष मार्ग पर हो, वह उन लोगों की तरह हो जाए जिनके लिए उनका बुरा कर्म सुहाना बना दिया गया है और वे अपनी इच्छाओं के अनुगामी बन गए हैं। (15) परहेज़गार लोगों के लिए जिस जन्नत का वादा किया गया है उसकी शान तो यह है कि उसमें नहरें बह रही होंगी निथरे हुए पानी की, नहरें बह रही होंगी ऐसे दूध की जिसके मज़े में तनिक फ़र्क़ न आया होगा, नहरें बह रही होंगी ऐसी शराब की जो पीनेवालों के लिए स्वादिष्ट होंगी, नहरें बह रही होंगी साफ़-सुथरे शहद की।[7] उसमें उनके लिए हर तरह के फल होंगे और उनके रब की ओर से बख़शिश। (क्या वह व्यक्ति जिसके हिस्से में यह जन्नत आनेवाली है) उन लोगों की तरह हो सकता है जो जहन्नम में हमेशा रहेंगे और जिन्हें ऐसा गर्म पानी पिलाया जाएगा जो उनकी आँतें तक काट देगा?

(16) उनमें से कुछ लोग ऐसे हैं जो कान लगाकर तुम्हारी बात सुनते हैं और फिर जब तुम्हारे पास से निकलते हैं तो उन लोगों से जिन्हें ज्ञान की नेमत प्रदान की गई है पूछते हैं कि अभी-अभी इन्होंने क्या कहा था?[8] ये वे लोग हैं जिनके दिलों पर अल्लाह ने ठप्पा लगा दिया है और ये अपनी इच्छाओं के पीछे चल रहे हैं। (17) रहे वे लोग जिन्होंने मार्ग पाया है, अल्लाह उनका और ज़्यादा पथप्रदर्शन करता है और उन्हें उनके हिस्से की परहेज़गारी देता है। (18) अब क्या ये लोग बस 'क़ियामत' ही के इनतिज़ार में हैं कि वह अचानक इनपर आ जाए? उसके लक्षण तो आ चुके हैं। जब वह ख़ुद आ जाएगी तो उनके लिए नसीहत क़बूल करने का कौन-सा अवसर बाक़ी रह जाएगा?

(19) अतः ऐ नबी, ख़ूब जान लो कि अल्लाह के सिवा कोई उपासना का पात्र

7. हदीस में इसे इस तरह स्पष्ट किया गया है कि वह दूध जानवरों के थनों से निकला हुआ न होगा, वह शराब फलों को सड़ाकर निचोड़ी हुई न होगी, वह शहद मक्खियों के पेट से निकला हुआ न होगा, बल्कि ये सारी चीज़े प्राकृतिक स्रोतों के रूप में प्रवाहित होंगी।

8. यह उन काफ़िरों, मुनाफ़िकों और किताबवालों में से इनकार करनेवालों का उल्लेख है जो नबी (सल्ल०) की मजलिस में आकर बैठते थे और आपकी बातें या क़ुरआन की आयतें सुनते थे, मगर चूँकि उसका दिल उन विषयों से दूर था जो आपके पावन मुख से व्यक्त होते थे, इसलिए सब कुछ सुनकर भी वे कुछ न सुनते थे और बाहर निकलकर मुसलमानों से पूछते थे कि अभी-अभी आप क्या कह रहे थे।

नहीं है, और माफ़ी माँगो अपने क़ुसूर के लिए भी और ईमानवाले मर्दों और औरतों के लिए भी।[9] अल्लाह तुम्हारी सरगर्मियों को भी जानता है और तुम्हारे ठिकाने से भी परिचित है।

(20) जो लोग ईमान लाए हैं[10] वे कह रहे थे कि कोई सूरा क्यों नहीं उतारी जाती (जिसमें युद्ध का आदेश दिया जाए)। मगर जब एक पक्की सूरा उतार दी गई जिसमें युद्ध का उल्लेख था तो तुमने देखा कि जिनके दिलों में रोग था वे तुम्हारी ओर इस तरह देख रहे हैं जैसे किसी पर मौत छा गई हो। अफ़सोस उनके हाल पर। (21) (उनकी ज़बान पर है) आज्ञापालन की स्वीकारोक्ति और अच्छी-अच्छी बातें। मगर जब दो टूक आदेश दे दिया गया उस समय वे अल्लाह से अपनी प्रतिज्ञा में सच्चे निकलते तो उन्हीं के लिए अच्छा था। (22) अब क्या तुम लोगों से इसके सिवा कुछ और आशा की जा सकती है कि अगर तुम उलटे मुँह फिर गए तो ज़मीन में फिर बिगाड़ पैदा करोगे और आपस में एक दूसरे के गले काटोगे?[11] (23) ये लोग हैं जिनपर अल्लाह ने लानत की और

9. इस्लाम ने जो नैतिक शिक्षाएँ मानव को सिखाई हैं, उनमें से एक यह भी है कि बन्दा अपने रब की बन्दगी और उपासना करने में, और उसके धर्म के लिए जान लड़ाने में, चाहे अपने सामर्थ्य तक कितनी ही कोशिश करता रहा हो, उसको कभी इस गुमान में न पड़ना चाहिए कि जो कुछ मुझे करना चाहिए था वह मैंने कर दिया है, बल्कि उसे हमेशा यही समझते रहना चाहिए कि मेरे मालिक का मुझपर जो हक़ था वह मैं अदा नहीं कर सका हूँ, और हर समय अपने क़ुसूर को स्वीकार करके अल्लाह से यही दुआ करते रहना चाहिए कि तेरी सेवा में जो कुछ भी कोताही मुझसे हुई है उसे माफ़ कर। यही वास्तविक भाव है अल्लाह के इस कथन का कि "ऐ नबी, अपने क़ुसूर के लिए माफ़ी माँगो।"

10. अर्थात् जो लोग सच्चे मुसलमान थे वे तो लड़ाई (जिहाद) के आदेश के लिए विकल थे, लेकिन जो लोग ईमान के बिना मुसलमानों के गिरोह में सम्मिलित हो गए थे, लड़ाई का आदेश आते ही उनकी जान पर बन गई।

11. यह कहने का अर्थ यह है कि अगर इस समय तुम इस्लाम की प्रतिरक्षा से जी चुराते हो और उस महान सुधारात्मक क्रान्ति के लिए जान और माल की बाज़ी लगाने से मुँह मोड़ते हो जिसकी कोशिश मुहम्मद (सल्ल०) और ईमानवाले कर रहे हैं, तो इसका परिणाम भला इसके अतिरिक्त और क्या हो सकता है कि तुम फिर उसी अज्ञान-प्रणाली की ओर पलट जाओ जिसमें तुम लोग शताब्दियों से एक-दूसरे के गले काटते रहे हो, अपनी औलाद तक को ज़िन्दा गाड़ते रहे हो, और अल्लाह की ज़मीन को ज़ुल्म और बिगाड़ से भरते रहे हो।

उनको अन्धा और बहरा बना दिया। (24) क्या उन लोगों ने क़ुरआन पर विचार नहीं किया, या दिलों पर उनके ताले चढ़े हुए हैं? (25) वास्तविकता यह है कि जो लोग सन्मार्ग स्पष्ट हो जाने के बाद उससे फिर गए उनके लिए शैतान ने इस नीति को सरल बना दिया है और झूठी आशाओं का सिलसिला उनके लिए लम्बा कर रखा है। (26) इसी लिए उन्होंने अल्लाह के उतारे हुए धर्म को नापसन्द करनेवालों से कह दिया कि कुछ मामलों में हम तुम्हारी मानेंगे।[12] अल्लाह उनकी ये गुप्त बातें ख़ूब जानता है। (27) फिर उस समय क्या हाल होगा जब फ़रिश्ते इनके प्राण निकालेंगे और इनके मुँह और पीठों पर मारते हुए इन्हें ले जाएँगे? (28) यह इसी लिए तो होगा कि इन्होंने उस पद्धति का अनुपालन किया जो अल्लाह को नाराज़ करनेवाली हैं और उसकी प्रसन्नता का मार्ग ग्रहण करना पसन्द न किया। इसी कारण उसने इनके सब कर्म अकारथ कर दिए।[13]

(29) क्या वे लोग जिनके दिलों में रोग है यह समझे बैठे है कि अल्लाह उनके दिलों के खोट प्रकट न करेगा? (30) हम चाहें तो उन्हें तुमको आँखों से दिखा दें और उनके चेहरों से तुम उनको पहचान लो। मगर उनकी बातचीत के ढब से तो तुम उनको जान ही लोगे। अल्लाह तुम सबके कर्मों से ख़ूब परिचित है। (31) हम ज़रूर तुम लोगों को परीक्षा में डालेंगे ताकि तुम्हारी हालतों की जाँच करें और देख लें कि तुममें 'मुजाहिद' (जान तोड़ प्रयास करनेवाले) और मज़बूती से जमे रहनेवाले कौन हैं।

(32) जिन लोगों ने इनकार किया और अल्लाह के मार्ग से रोका और रसूल से झगड़ा किया जबकि उनपर सन्मार्ग स्पष्ट हो चुका था, वास्तव में वे अल्लाह का कोई

12. अर्थात् ईमान को स्वीकार करने और मुसलमानों के गिरोह में सम्मिलित हो जाने के बावजूद वे अन्दर ही अन्दर इस्लाम के दुश्मनों से साँठ-गाँठ करते रहे और उनसे वादे करते रहे कि कुछ मामलों में हम तुम्हारा साथ देंगे।
13. कर्म से मुराद वे सभी कर्म हैं जो मुसलमान बनकर वे करते रहे। उनकी नमाज़े, उनके रोज़े, उनकी ज़कात, सारांश यह कि वे सारी इबादतें और वे सारी नेकियाँ जो अपने बाह्य रूप की दृष्टि से भले कामों में गिनी जाती हैं, इस कारण बरबाद हो गई कि उन्होंने मुसलमान होते हुए भी अल्लाह और उसके धर्म और इस्लामी समुदाय के साथ निष्ठा और वफ़ादारी की नीति न अपनाई, बल्कि सिर्फ़ अपने लौकिक हितों के लिए धर्म के दुश्मनों के साथ साँठ-गाँठ करते रहे और अल्लाह के मार्ग में 'जिहाद' का अवसर आते ही अपने आपको ख़तरों से बचाने की चिन्ता में लग गए।

नुक़सान भी नहीं कर सकते, बल्कि अल्लाह ही उनका सब किया-कराया बरबाद कर देगा। (33) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम अल्लाह की आज्ञा मानो और रसूल की आज्ञा मानो और अपने कर्मों को बरबाद न कर लो।[14] (34) इनकार करनेवालों और अल्लाह के मार्ग से रोकनेवालों और मरते समय तक इनकार (कुफ़्र) पर जमे रहनेवालों को तो अल्लाह हरगिज़माफ़ न करेगा। (35) अतः तुम बोदे न बनो और सुलह के लिए निवेदन न करो।[15] तुम ही प्रभावी रहनेवाले हो। अल्लाह तुम्हारे साथ है और तुम्हारे कर्मो को वह हरगिज़ नष्ट न करेगा। (36) यह दुनिया की ज़िन्दगी तो एक खेल और तमाशा है। अगर तुम ईमान रखो और 'तक़वा' (धर्मपरायणता) की नीति पर चलते रहो तो अल्लाह तुम्हारे कर्मों का बदला तुमको देगा और वह तुम्हारे माल तुमसे न माँगेगा।[16] (37) अगर कहीं वह तुम्हारे माल तुमसे माँग ले और सब के सब तुमसे तलब कर ले तो तुम कंजूसी करोगे और वह तुम्हारे खोट उभार लाएगा। (38) देखो, तुम लोगों को आमंत्रण दिया जा रहा है कि अल्लाह के मार्ग में माल ख़र्च करो। इसपर तुममें से कुछ लोग हैं जो कंजूसी कर रहे हैं, हालाँकि जो कंजूसी करता है वह वास्तव में अपने आप ही से कंजूसी कर रहा है। अल्लाह तो धनी है, तुम ही उसके मुहताज हो। अगर तुम मुँह मोड़ोगे तो अल्लाह तुम्हारी जगह किसी दूसरी क़ौम को ले आएगा और वे तुम जैसे न होंगे।

● ● ●

14. दूसरे शब्दों में कर्मों का लाभदायक और फलदायक होना पूर्ण रूप से अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करने पर निर्भर करता है। आज्ञापालन से विमुख हो जाने के बाद कोई कर्म भी भला कर्म नहीं रहता कि आदमी उसपर कोई बदला पाने का अधिकारी हो सके।
15. यहाँ यह बात निगाह में रहनी चाहिए कि यह बात उस समय कही गई है जब सिर्फ़ मदीना की छोटी-सी बस्ती में कुछ सौ 'मुहाजिर' और 'अनसार' का एक मुट्ठी-भर गिरोह इस्लाम का झण्डा उठाने का काम कर रहा था और उसका मुक़ाबला सिर्फ़ क़ुरैश के शक्तिशाली क़बीले ही से नहीं बल्कि पूरे अरब के काफ़िरों और बहुदेववादियों से था। इस हालत में कहा जा रहा है कि साहस छोड़कर इन दुश्मनों से सुलह की याचना न करने लगो, बल्कि जान की बाज़ी लगा देने के लिए तैयार हो जाओ।
16. अर्थात् वह धनी है, उसको अपने निज के लिए तुमसे लेने की कुछ ज़रूरत नहीं है। अगर वह अपने मार्ग में तुमसे कुछख़र्च करने को कहता है तो वह अपने लिए नहीं बल्कि तुम्हारी ही भलाई के लिए कहता है।

48. अल-फ़त्ह

नाम

पहली ही आयत के वाक्यांश ''हमने तुमको खुली विजय प्रदान कर दी'' से उद्धृत है। यह केवल इस सूरा का नाम ही नहीं है, बल्कि विषय की दृष्टि से भी उसका शीर्षक है, क्योंकि इसमें उस महान विषय पर वार्तालाप है जो हुदैबिया की सन्धि के रूप में अल्लाह ने नबी (सल्ल॰) और मुसलमानों को प्रदान किया था।

अवतरणकाल

उल्लेखों में इस पर मतैक्य है कि इसका अवतरण ज़ी-क़ादा सन् 6 हिजरी में उस समय हुआ था जब आप (सल्ल॰) मक्का के काफ़िरों से हुदैबिया की सन्धि करने के पश्चात् मदीना मुनव्वरा की तरफ़ वापस जा रहे थे।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

जिन घटनाओं के सिलसिले में यह सूरा अवतरित हुई उनका प्रारम्भ इस तरह होता है कि एक दिन अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने स्वप्न में देखा कि आप अपने सहाबा के साथ मक्का मुअज़्ज़मा गए हैं और वहाँ उमरा किया है। पैग़म्बर का स्वप्न विदित है कि मात्र स्वप्न और ख़याल नहीं हो सकता था। वह तो कई प्रकार की प्रकाशनाओं में से एक प्रकाशना है। इसलिए वास्तव में यह (स्वप्न) एक ईश्वरीय संकेत था जिसका अनुसरण करना नबी (सल्ल॰) के लिए ज़रूरी था। (अतः आप) ने बिना झिझक अपना स्वप्न आदरणीय सहाबा को सुनाकर यात्रा की तैयारी शुरू कर दी। 1400 सहाबी नबी (सल्ल॰) के साथ इस अत्यन्त ख़तरनाक सफ़र पर जाने के लिए तैयार हो गए। ज़ी-क़ादा सन् 6 हिजरी के आरम्भ में यह मुबारक क़ाफ़िला (उमरा) के लिए मदीना से चल पड़ा। क़ुरैश के लोगों को नबी (सल्ल॰) के इस आगमन ने बड़ी परेशानी में डाल दिया। ज़ी-क़ादा का महीना उन प्रतिष्ठित महीनों में से था जो सैकड़ों वर्ष से अरब में हज और दर्शन के लिए मान्य समझे जाते थे। इस महीने में जो क़ाफ़िला एहराम बांधकर हज या उमरे के लिए जा रहा हो उसको रोकने का किसी को अधिकार प्राप्त न था। क़ुरैश के लोग इस उलझन में पड़ गए कि यदि हम मदीना के इस क़ाफ़िले पर आक्रमण करके इसे मक्का मुअज़्ज़मा में प्रवेश करने से रोकते हैं तो पूरे देश में इसपर शोर मच जाएगा। लेकिन यदि मुहम्मद (सल्ल॰) को इतने बड़े क़ाफ़िले के साथ सकुशल अपने नगर में प्रवेश करने देते हैं तो पूरे देश में हमारी हवा उखड़ जाएगी और लोग कहेंगे कि हम मुहम्मद से भयभीत हो गए। अन्ततः बड़े सोच-विचार के पश्चात् उनका अज्ञानमय

पक्षपात ही उनपर प्रभावी रहा और उन्होंने अपनी नाक की ख़ातिर यह फ़ैसला किया कि किसी क़ीमत पर भी इस क़ाफ़िले को आपके नगर में प्रवेश करने नहीं देना है। जब आप उसफ़ान के स्थान पर पहुँचे (आपके गुप्तचर ने) आपको सूचना दी कि क़ुरैश के लोग पुरी तैयारी के साथ ज़ीतुवा के स्थान पर पहुँच रहे हैं और ख़ालिद बिन वलीद को उन्होंने दो सौ सवारों के साथ कुराउल ग़मीम की ओर आगे भेज दिया है, ताकि वे आपका रास्ता रोकें। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने यह सूचना पाते ही तुरन्त रास्ता बदल दिया और एक दुर्गम मार्ग से बड़ी कठिनाइयों के साथ हुदैबिया के स्थान पर पहुँच गए जो ठीक हरम की सीमा पर पड़ता था। (अब क़ुरैश ने आपके पास अपनी दूत भेजकर इस बात की कोशिश की कि आप मक्का में दाख़िल होने के इरादे से बाज़ आ जाएँ। किन्तु वे अपने इस दौत्य प्रयास में असफल रहे।) अन्ततोगत्वा नबी (सल्ल॰) ने स्वयं अपनी ओर से हज़रत उसमान (रज़ि॰) को दूत बनाकर मक्का भेजा और उनके द्वारा क़ुरैश के सरदारों को यह संदेश दिया कि हम युद्ध के लिए नहीं बल्कि दर्शन के लिए क़ुरबानी के जानवर साथ लेकर आए हैं। तवाफ़ (काबा की परिक्रमा) और क़ुरबानी करके वापस चले जाएँगे. किन्तु वे लोग न माने और हज़रत उसमान (रज़ि॰) को मक्का ही में रोक लिया। इस बीच यह ख़बर उड़ गई कि हज़रत उसमान (रज़ि॰) क़त्ल कर दिए गए हैं और उनके वापस न आने से मुसलमानों को विश्वास हो गया कि यह ख़बर सच्ची है। अब तदधिक धैर्य का कोई अवसर न था। अतएव अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने अपने सभी साथियों को एकत्र किया और उनसे इस बात पर बैअत ली (अर्थात प्रतिज्ञाबद्ध किया) कि अब यहाँ से हम मरते दम तक पीछे न हटेंगे। यह वह बैअत है जो 'बैअत-रिज़वान' के नाम से इस्लामी इतिहास में प्रसिद्ध है। तत्पश्चात् यह मालूम हुआ कि हज़रत उसमान (रज़ि॰) के मारे जाने की ख़बर ग़लत थी। हज़रत उसमान (रज़ि॰) स्वयं भी वापस आ गए और क़ुरैश की ओर से सुहैल बिन अम्र की अध्यक्षता में एक प्रतिनिधिमंडल भी सन्धि की बातचीत करने के लिए नबी (सल्ल॰) के कैम्प में पहुँच गया। दीर्घ कथोपकथन के पश्चात् जिन शर्तों पर सन्धिपत्र लिखा गया वे ये थीं :

1) दस वर्ष तक दोनों पक्षों के मध्य युद्ध बन्द रहेगा, और एक-दूसरे के विरुद्ध गुप्त या प्रत्यक्ष कोई कार्रवाई न की जाएगी।

2) इस बीच क़ुरैश का जो व्यक्ति अपने अभिभावक की अनुमति के बिना भागकर मुहम्मद (सल्ल॰) के पास जाएगा, उसे आप वापस कर देंगे और आपके साथियों में से जो व्यक्ति क़ुरैश के पास चला जाएगा उसे वे वापस न करेंगे।

3) अरब के क़बीलों में से जो क़बीला भी दोनों पक्षों में से प्रतिज्ञाबद्ध होकर किसी एक

के साथहोकर इस सन्धि में सम्मिलित होना चाहेगा, उसे इसका अधिकार प्राप्त होगा।

4) मुहम्मद (सल्ल॰) इस वर्ष वापस जाएँगे और अगले वर्ष वे उमरा (दर्शन) के लिए आकर मक्का में ठहर सकते हैं। शर्त यह है कि परतलों (पट्टों) में केवल एक-एक तलवार लेकर आएँ और युद्ध का कोई सामान साथ न लाएँ. इन तीन दिनों में मक्का निवासी उनके लिए नगर ख़ाली कर देंगे (ताकि किसी टकराव की नौबत न आए।) किन्तु वापस जाते हुए उन्हें यहाँ के किसी व्यक्ति को अपने साथ ले जाने का अधिकार प्राप्त न होगा।

जिस समय इस सन्धि की शर्तें निर्णित हो रही थीं, मुसलमानों की पूरी सेना अत्यन्त विकल थी। कोई व्यक्ति भी उन निहित उद्देश्यों को नहीं समझ रहा था जिन्हें दृष्टि में रखकर नबी (सल्ल॰) ये शर्तें स्वीकार कर रहे थे। क़ुरैश के काफ़िर इसे अपनी सफलता समझ रहे थे और मुसलमान इसपर बेचैन थे कि हम आख़िर ये हीन शर्तें क्यों स्वीकार कर लें। ठीक उस समय जब सन्धि-सम्बन्धी अनुबन्ध लिखा जा रहा था, सुहैल बिन अम्र के अपने बेटे अबू जन्दल, जो मुसलमान हो चुके थे और मक्का के काफ़िरों ने उन्हें क़ैद कर रखा था, किसी-न-किसी तरह भागकर नबी (सल्ल॰) के शिविर में पहुँच गए। उनके पाँव में बेडियाँ थीं और शरीर पर उत्पीड़न के निशान थे। उन्होंने हुज़ूर (सल्ल॰) से फ़रियाद की कि "मुझे इस अनुचित क़ैद से मुक्ति दिलाई जाए।" सहाबा के लिए यह हालत देखकर अपने को नियंत्रित रखना मुश्किल हो गया। किन्तु हुसैल बिन अम्र ने कहा "सन्धिपत्र का लेख चाहे पूर्ण रूप से लिखा न गया हो, शर्तें तो हमारे और आपेक मध्य निश्चित हो चुकी हैं। अतः इस लड़के को हमारे हवाले किया जाए।" अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उसके तर्क को स्वीकार किया और अबू जन्दल ज़ालिमों के हवाले कर दिए गए। (इस घटना ने मुसलमानों को और अधिक विकल और शोकाकुल बना दिया।) सन्धि से निवृत्त होकर नबी (सल्ल॰) ने सहाबा (रज़ि॰) से कहा कि अब यहीं क़ुरबानी करके सिर का मुंडन कर लो और इहराम समाप्त कर दो। किन्तु कोई अपने स्थान से न हिला। नबी (सल्ल॰) ने तीन बार हुक्म दिया किन्तु सहाबा पर उस समय दुख, शोक और दिल टूट जाने का एहसास ऐसा छा गया था कि वे अपने स्थान से हिले तक नहीं। (फिर जब उम्मुल मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा (रज़ि॰) के परामर्श के अनुसार नबी (सल्ल॰) ने स्वयं आगे बढ़कर अपना ऊँट ज़ब्ह किया और सिर मुड़ा लिया तब) आपके व्यवहार को देखकर लोगों ने भी क़ुरबानियाँ कर लीं, सिर मुड़ा लिए या बाल छंटवा लिए और इहराम से निकल आए। इसके बाद जब यह क़ाफ़िला हुदैबिया की संन्धि को अपनी पराजय और अपमान समझता हुआ मदीना की

ओर वापस जा रहा था, उस समय ज़जनान के स्थान पर (या कुछ लोगों के अनुसार क़ुराउल ग़मीम के स्थान पर) यह सूरा अवतरित हुई। इसमें मुसलमानों को बताया गया कि यह सन्धि जिसको वे पराजय समझ रहे हैं, वास्तव में महान विजय है। इसके अवतरित होने के पश्चात् नबी (सल्ल॰) ने मुसलमानों को एकत्र किया और कहा कि आज मुझपर वह चीज़ उतरी है जो मेरे लिए दुनिया और दुनिया की सब चीज़ों से ज़्यादा क़ीमती है। फिर यह सूरा आपने पढ़कर सुनाई और विशेष रूप से हज़रत उमर (रज़ि॰) को बुलाकर इसे सुनाया, क्योंकि वे सबसे ज़्यादा दुखी थे। यद्यपि ईमानवाले तो अल्लाह का यह वचन सुनकर ही सन्तुष्ट हो गए थे, किन्तु कुछ अधिक समय नहीं बीता था कि इस सन्धि की उपलब्धियाँ एक-एक करके सामने आती गई। यहाँ तक कि किसी को भी इस बात में सन्देह न रहा कि वास्तव में यह सन्धि एक भव्य विजय थी।




48. सूरा अल-फ़त्ह

(मदीना में उतरी–आयतें 29)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1-2) ऐ नबी, हमने तुमको खुली विजय प्रदान कर दी[1] ताकि अल्लाह तुम्हारी अगली-पिछली हर कोताही को माफ़ करे[2] और तुमपर अपनी नेमत पूरी कर दे और तुम्हें सीधा मार्ग दिखाए[3] (3) और तुमको बड़ी सहायता प्रदान करे। (4) वही है जिसने ईमानवालों के दिलों में 'सकीनत' (शान्ति) उतारी[4] ताकि अपने ईमान के साथ वे एक और ईमान बढ़ा लें। ज़मीन और आसमानों की सब सेनाएँ अल्लाह के अधिकार में हैं और वह सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है। (5) (उसने यह काम इसलिए किया है) ताकि

1. हुदैबिया के समझौते के बाद जब विजय की यह ख़ुशख़बरी दी गई तो लोग हैरान थे कि आख़िर इस सुलह (समझौते) को विजय कैसे कहा जा सकता है जिसमें देखने में तो हमने वे सभी शर्तें मान लीं जो दुश्मन (अधर्मी) हमसे मनवाना चाहते थे, लेकिन थोड़ी ही मुद्दत के बाद यह मालूम हो गया कि यह सुलह वास्तव में एक बड़ी विजय थी।
2. जिस मौक़ा और हालत में यह वाक्य कहा गया है उसे नज़र में रखा जाए तो साफ़ महसूस होता है कि यहाँ जिन कोताहियों को माफ़ करने का ज़िक्र है उनसे मुराद वे ख़ामियाँ हैं जोइस्लाम की कामयाबी और सरबुलन्दी के लिए काम करते हुए उस प्रयास और चेष्टा में रह गई थीं जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के नेतृत्व में पिछले 26 वर्ष से मुसलमान कर रहे थे। ये ख़ामियाँ किसी इनसान को मालूम नहीं हैं, बल्कि इनसानी अक़्ल तो उस कोशिश में कोई कमी खोजने में बिलकुल असमर्थ है, मगर अल्लाह की निगाह में पूर्णता (कमाल) का जो उच्चतम आदर्श (मेयार) है उसके लिहाज़ से उसमें कुछ ऐसी ख़ामियाँ थीं जिनके कारण मुसलमानों को इतनी ज्लीद अरब के बहुदेववादियों (मुशरिकों) पर निर्णायक विजय प्राप्त न हो सकती थी। अल्लाह के कथन का अर्थ यह है कि उन ख़ामियों के साथ अगर तुम कोशिश करते रहते तो अरब के वशीभूत होने में अभी बहुत लम्बे समय की ज़रूरत थी, मगर हमने उन सारी कमज़ोरियों और कोताहियों को माफ़ करके सिर्फ़ अपनी मेहरबानी से उनकी क्षतिपूर्ति कर दी और हुदैबिया के स्थान पर तुम्हारे लिए विजय का द्वार खोल दिया जो नियम के अनुसार तुम्हारी अपनी कोशिशों से प्राप्त न हो सकती थी।
3. इस जगह अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को सीधा मार्ग दिखाने का अर्थ आपको विजय और सफलता का मार्ग दिखाना है।

ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों को हमेशा रहने के लिए ऐसी जन्नतों में प्रवेश कराए जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी और उनकी बुराइयाँ उनसे दूर कर दे—अल्लाह की दृष्टि में यह बड़ी सफलता है (6)—और उन मुनाफ़िक़ (मिथ्याचारी) मर्दों और औरतों और बहुदेववादी मर्दों और औरतों को सज़ा दे जो अल्लाह के सम्बन्ध में बुरे गुमान रखते हैं। बुराई के फेर में वे ख़ुद ही आ गए, अल्लाह का प्रकोप उनपर हुआ और उसने उनपर लानत की और उनके लिए जहन्नम तैयार कर दिया जो बहुत ही बुरा ठिकाना है। (7) आसमानों और ज़मीन की सेनाएँ अल्लाह ही के अधिकार में हैं और वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।

(8) ऐ नबी, हमने तुमको गवाही देनेवाला,[5] ख़ुशख़बरी देनेवाला और सावधान कर देनेवाला बनाकर भेजा है (9) ताकि ऐ लोगो, तुम अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाओ और उसका (अर्थात् रसूल का) साथ दो, उसका आदर और सम्मान करो और सुबह और शाम अल्लाह की तसबीह (गुणगान) करते रहो।

(10) ऐ नबी, जो लोग तुमसे बैअ़त कर रहे थे[6] वे वास्तव में अल्लाह से बैअ़त कर रहे थे। उनके हाथ पर अल्लाह का हाथ था।[7] अब जो इस प्रतिज्ञा (अह्द) को भंग

4. 'सकीनत' से मुराद शान्ति और मन का परितोष (इतमीनान है। मतलब यह है कि हुदैबिया की सुलह के अवसर पर जितनी उत्तेजनाजनक परिस्थितियाँ सामने आई उन सबमें मुसलमानों का धैर्य (सब्र) से काम लेना और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के नेतृत्व पर पूरा भरोसा रखते हुए उनसे कुशलतापूर्वक गुज़र जाना अल्लाह के अनुग्रह का फल था वर्ना उस समय एक तनिक-सी भूल भी सारा काम बिगाड़ देती।
5. शाह वलीयुल्लाह साहब ने 'शाहिद' (गवाही देनेवाला) का अनुवाद "इज़हारे हक़ कुनिन्दा" किया है, अर्थात् सत्य की गवाही देनेवाला।
6. इशारा है उस 'बैअत' की ओर जो मक्का में हज़रत उसमान (रज़ि॰) के शहीद हो जाने की ख़बरसुनकर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने आदरणीय सहाबा किराम से हुदैबिया के स्थान पर ली थी। यह 'बैअत' इस बात पर ली गई थी कि हज़रत उसमान (रज़ि॰) के शहीद होने का मामला अगर सत्य सिद्ध हुआ तो मुसलमान यहीं और इसी समय क़ुरैश से निपट लेंगे भले ही परिणामस्वरूप वे सब कट ही क्यों न मरें।
7. अर्थात् जिस हाथ पर लोग उस समय 'बैअत' कर रहे थे वह सिर्फ़ एक रसूल का हाथ नहीं बल्कि अल्लाह के प्रतिनिधि का हाथ था और यह 'बैअत' रसूल के माध्यम से वास्तव में अल्लाह के साथ हो रही थी।

करेगा उसके प्रतिज्ञा भंग करने का वबाल उसके अपने ही ऊपर होगा, और जो उस प्रतिज्ञा को पूरा करेगा जो उसने अल्लाह से की है, अल्लाह जल्द ही उसको बड़ा बदला प्रदान करेगा।

(11) ऐ नबी, अरब बद्दुओं में से जो लोग पीछे छोड़ दिए गए थे[8] अब वे आकर ज़रूर तुमसे कहेंगे कि "हमें अपने मालों और बाल-बच्चों की चिन्ता ने व्यस्त कर रखा था, आप हमारे लिए माफ़ी की दुआ करें।" ये लोग अपनी ज़बानों से वे बातें कहते हैं जो इनके दिलों मेह नहीं होतीं। इनसे कहना, "अच्छा, यही बात है तो कौन तुम्हारे मामले में अल्लाह के फ़ैसले को रोक देने का कुछ भी अधिकार रखता है अगर वह तुम्हें कोई हानि पहुँचाना चाहे या लाभ पहुँचाना चाहे? तुम्हारे कर्मों की तो अल्लाह ही ख़बर रखता है। (12) (मगर सत्य बात वह नहीं है जो तुम कह रहे हो) बल्कि तुमने यूँ समझा कि रसूल और ईमानवाले अपने घरवालों में हरगिज़ पलटकर न आ सकेंगे और यह ख़याल तुम्हारे दिलों को बहुत भला लगा और तुमने बहुत बुरे गुमान किए और तुम बड़े ही बदक़िस्मत लोग हो।"

(13) अल्लाह और उसके रसूल पर जो लोग ईमान न रखते हो ऐसे इनकार करनेवालों के लिए हमने भड़कती हुई आग तैयार कर रखी है। (14) आसमानों और ज़मीन के राज का मालिक अल्लाह ही है, जिसे चाहे माफ़ करे और जिसे चाहे सज़ा दे, और वह बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(15) जब तुम ग़नीमत का माल हासिल करने के लिए जाने लगोगे तो ये पीछे छोड़े जानेवाले लोग तुमसे ज़रूर कहेंगे कि हमें भी अपने साथ चलने दो।[9] ये चाहते हैं कि अल्लाह के फ़रमान को बदल दें। इनसे साफ़-साफ़ कह देना कि "तुम कदापि हमारे

8. यह मदीना के आस-पास के उन लोगों का उल्लेख है जिन्हें 'उमरे' की तैयारी करते समय अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने साथ चलने का आमंत्रण दिया था, मगर वे ईमान का दावा रखने के बावजूद सिर्फ़ इसलिए अपने घरों से न निकले थे कि उन्हें अपनी जान प्यारी थी। वे समझ रहे थे कि इस अवसर पर क़ुरैश के ठीक घर में 'उमरे' के लिए जाना मौत के मुँह में जाना है।
9. अर्थात् जल्द ही वह समय आनेवाला है जब यही लोग, जो आज ख़तरे के अभियाान (मुहिम) पर तुम्हारे साथ जाने से जी चुरा गए थे, तुम्हें एक ऐसे अभियान पर जाते हुए देखेंगे जिसमें इनको सहज विजय और 'ग़नीमत' के बहुत-से माल के प्राप्ति की संभावना दिखाई देगी। उस समय ये ख़ुद दौड़े-दौड़े आएँगे और कहेंगे कि हमें भी अपने साथ ले चलो।

साथ नहीं चल सकते, अल्लाह पहले ही यह कह चुका है।" ये कहेंगे कि "नहीं, बल्कि तुम लोग हमसे ईर्ष्या कर रहे हो।" (हालाँकि बात ईर्ष्या की नहीं है) बल्कि ये लोग सही बात को कम ही समझते हैं। (16) इन पीछे छोड़े जानेवाले अरब बद्दुओं से कहना कि "जल्द ही तुम्हें ऐसे लोगों से लड़ने के लिए बुलाया जाएगा जो बड़े बलशाही हैं। तुमको उनसे युद्ध करना होगा या वे आज्ञाकारी हो जाएँगे। उस समय अगर तुमने जिहाद के आदेश का पालन किया तो अल्लाह तुम्हें अच्छा बदला देगा, और अगर तुम फिर उसी तरह मुँह मोड़ गए जिस तरह पहले मोड़ चुके हो तो अल्लाह तुमको दर्दनाक अज़ाब देगा। (17) हाँ, अगर अन्धा और लंगड़ा और बिमार जिहाद के लिए न आए तो कोई हरज नहीं। जो कोई अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करेगा अल्लाह उसे उन जन्नतों में प्रवेश कराएगा जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, और जो मुँह फेरेगा उसे वह दर्दनाक अज़ाब देगा।"

(18) अल्लाह ईमानवालों से ख़ुश हो गया जब वे पेड़ के नीचे बैअत कर रहे थे। उनके दिलों का हाल उसको मालूम था इसलिए उसने उनपर सकीनत (शान्ति) उतारी,[10] उनको इनाम में क़रीब की विजय प्रदान की, (19) और बुहत-सा ग़नीमत का माल उन्हें प्रदान कर दिया जिसे वे (जल्द ही) प्राप्त करेंगे।[11] अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है। (20) अल्लाह तुमसे बहुत-सी ग़नीमतों का वादा करता है जिन्हें तुम प्राप्त करोगे।[12] तात्कालिक रूप में तो यह विजय उसने तुम्हें प्रदान कर दी[13] और लोगों के हाथ तुम्हारे विरुद्ध उठने से रोक दिए,[14] ताकि यह ईमानवालों के लिए एक निशानी बन

10. यहाँ 'सकीनत' से मुराद दिल की वह हालत है जिसके कारण एक व्यक्ति किसी महान उद्देश्य के लिए ठण्डे दिल से पूरी शान्ति और इतमीनान के साथ अपने आपको ख़तरे के मुँह में झोंक देता है और किसी डर या घबराहट के बिना फ़ैसला कर लेता है कि यह काम हर हाल में करने का है चाहे अंजाम कुछ भी हो।
11. यह इशारा है ख़ैबर की विजय और उसके ग़नीमत के मालों की ओर।
12. इससे मुराद वे दूसरी विजय हैं जो ख़ैबर के बाद मुसलमानों को निरन्तर प्राप्त होती चली गई।
13. इससे मुराद है हुदैबिया की सुलह जिसको सूरा के आरंभ में स्पष्ट विजय घोषित किया गया है।
14. अर्थात क़ुरैश के काफ़िरों को यह हिम्मत उसने न दी कि वे हुदैबिया के स्थान पर तुमसे लड़ जाते, हालाँकि सारी दीख पड़नेवाली परिस्थितियों की दृष्टि से वे बहुत ज़्यादा अच्छी स्थिति में थे, और लड़ाई के दृष्टिकोण से तुम्हारा पल्ला उनके मुक़ाबले में बहुत कमज़ोर दिकाई पड़ता था।

जाए और अल्लाह तुम्हें सीधा मार्ग दिखाए। (21) इसके अलावा दूसरी और ग़नीमतों का भी वह तुमसे वादा करता है जिनपर तुम अभी क़ाबू नहीं पा सके हो और अल्लाह ने उनको घेर रखा है,[15] अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(22) ये काफ़िर लोग अगर इस समय तुमसे लड़ गए होते तो यक़ीनन पीठ फेरते और कोई संरक्षक और सहायक न पाते। (23) यह अल्लाह की रीति (सुन्नत) है जो पहले से चली आ रही है और तुम अल्लाह की रीति में कोई परिवर्तन न पाओगे। (24) वही है जिसने मक्का की घाटी में उनके हाथ तुमसे और तुम्हारे हाथ उनसे रोक दिए, हालाँकि वह उनपर तुम्हें क़ाबू दे चुका था और जो कुछ तुम कर रहे थे अल्लाह उसे देख रहा था। (25) वही लोग तो हैं जिन्होंने इनका र किया और तुमको प्रतिष्ठित मस्जिद (काबा) से रोका और क़ुरबानी के ऊँटों को उनकी क़ुरबानी की जगह न पहुँचने दिया। अगर (मक्का में) ऐसे ईमानवाले मर्द और ईमानवाली औरतें मौजूद न होती जिन्हें तुम नहीं जानते, और यह आशंका न होती कि बेख़बरी में तुम उन्हें कुचल दोगे और इससे तुम दोषी ठहरोगे (तो युद्ध न रोका जाता। रोका वह इसलिए गया) ताकि अल्लाह अपनी दयालुता में जिसे चाहे दाख़िल कर ले। वे ईमानवाले (मोमिन) अलग हो गए होते तो (मक्कावालों में से) जो काफ़िर थे उनको हम ज़रूर कठोर सज़ा देते।[16]

15. ज़्यादा संभावना इस बात की है कि यह इशारा मक्का की विजय की ओर है। अर्थात् अभी तो मक्का तुम्हारे क़ाबू में नहीं आया है, लेकिन अल्लाह ने उसे घेरे में ले लिया है और हुदैबिया की इस विजय के परिणामस्वरूप वह भी तुम्हारे अधिकार में आ जाएगा।
16. यह थी वह मसलहत जिसके कारण अल्लाह ने हुदैबिया में युद्ध न होने दिया। मक्का में उस समय बहुत-से मुसलमान ऐसे मौजूद थे जिन्होंने या तो अपना ईमान छिपा रखा था, या जिनका ईमान मालूम था, मगर वे अपनी विवशता के कारण 'हिजरत' न कर सकते थे और ज़ुल्म और अत्याचार का शिकार हो रहे थे। इस हालत में अगर युद्ध हो जाता और मुसलमान काफ़िरों को रगेदते हुए मक्का में प्रवेश करते तो काफ़िरों के साथ-साथ ये मुसलमान भी बेख़बरी में मुसलमानों के हाथों से मारे जाते। दूसरा पहलू इस मसलहत का यह था कि अल्लाह क़ुरैश को एक रक्तपातयुक्त युद्ध में परास्त कराकर मक्का को विजय कराना न चाहता था, बल्कि उसके समक्ष यह था कि दो वर्ष के भीतर हर ओर से घेरकर उनहें इस तरह बेबस कर दे कि वे किसी प्रतिरोध के बिना परास्त हो जाएँ, और पूरा का पूरा क़बीला इस्लाम क़बूल करके अल्लाह की दयालुता में दाख़िल हो जाए, जैसा कि मक्का की विजय के अवसर पर हुआ।

(26) (यही कारण है कि) जब उन काफ़िरों ने अपने दिलों में अज्ञान का पक्षपात बिठा लिया तो अल्लाह ने अपने रसूल और ईमानवालों पर 'सकीनत' (शान्ति) उतारी[17] और ईमानवालों को परहेज़गारी (तक़वा) की बात का पाबन्द रखा कि वही उसके ज़्यादा हक़दार और उसके योग्य थे। अल्लाह हर चीज़ का ज्ञान रखता है।

(27) वास्तव में अल्लाह ने अपने रसूल को सच्चा ख़्वाब (सपना) दिखाया था जो ठीक-ठीक सत्य के अनुसार था।[18] अगर अल्लाह ने चाहा तो तुम ज़रूर प्रतिष्ठित मस्जिद (काबा) में पूरे अम्न (शान्ति) के साथ प्रवेश करोगे[19] अपने सिर मुँडवाओगे और बाल कटवाओगे, और तुम्हें कोई डर न होगा। वह उस बात को जानता था जिसे तुम न जानते थे इसलिए वह ख़्वाब पूरा होने से पहले उसने यह क़रीब की विजय तुम्हें प्रदान कर दी।

(28) वह अल्लाह ही है जिसने अपने रसूल को मार्गदर्शन और सत्य धर्म के साथ भेजा है ताकि उसको पूरे के पूरे धर्म पर प्रभुत्व प्रदान कर दे और इस हक़ीक़त पर अल्लाह की गवाही काफ़ी है।[20] (29) मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं, और जो लोग उनके साथ हैं वे काफ़िरों के मुक़ाबले में कठोर[21] और आपस में दयालु हैं।[22] तुम जब देखोगे उन्हें 'रुकूअ' और सज्दों और अल्लाह के अनुग्रह और उसकी प्रसन्नता की तलब में व्यस्त पाओगे। सज्दों के प्रभाव उनके चेहरों पर मौजूद हैं जिनसे वे अलग पहचाने जाते हैं।[23] यह है उनकी विशेषता तौरात में। और इंजील में उनकी मिसाल यूँ दी गई है

17. यहाँ 'सकीनत' से मुराद धैर्य (सब्र) और गंभीरता (वक़ार) जिसके साथ नबी (सल्ल॰) और मुसलमानों ने काफ़िरों की इस अज्ञानपूर्ण पक्षपात का मुक़ाबला किया। वे उनकी इस हठधर्मी और खुली हुई ज़्यादती पर उत्तेजित होकर आपे से बाहर न हुए, और उनके जवाब में कोई बात उन्होंने ऐसी न की जो हक़ की सीमा से बाहर और सच्चाई के विरुद्ध होती या जिससे मामला पूरी तरह से सुलझने के बदले और ज़्यादा बिगड़ जाता।
18. यह उस सवाल का जवाब है जो बार-बार मुसलमानों के दिलों मे खटक रहा था। वे कहते थे कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने तो ख़्वाब में यह देखा था कि आपने प्रतिष्ठित मस्जिद (काबा) में प्रवेश किया है और अल्लाह के घर (काबा) का तवाफ़ (परीक्रमा) किया है, फिर यह क्या हुआ कि हम 'उमरा' किए बिना वापस जा रहे हैं।
19. यह वादा अगले वर्ष ज़ीक़ादा सन् 7 हि॰ में पूरा हुआ। इतिहास में यह उमरा 'उमरतुल क़ज़ाअ' के नाम से प्रसिद्ध है।

कि मानो एक खेतीहै जिसने पहले कोंपल निकाली, फिर उसको मज़बूत किया, फिर वह गदराई, फिर अपने तने पर खड़ी हो गई। खेती करनेवालों को वह ख़ुश करती है ताकि 'काफ़िर' उनके फलने-फूलने पर जलें। उस गिरोह के लोग जो ईमान लाएहैं और जिन्होंने अच्छे कर्म किए हैं अल्लाह ने उनसे माफ़ी और बड़े बदले का वादा किया है।

● ● ●

---

20. इस जगह यह बात कहने का कारण यह है कि हुदैबिया में जब सन्धि-पत्र लिखा जाने लगा था उस वक़्त मक्का के काफ़िरों ने नबी (सल्ल॰) के शुभ नाम के साथ रसूलुल्लाह (अल्लाह का रसूल) का शब्द लिखने पर आपत्ति व्यक्त की थी। इसपर कहा गया है कि रसूल का रसूल होना तो एक वास्तविकता है जिसमें किसी के मानने या न मानने से कोई अन्तर नहीं आता। इसको यदि कुछ लोग नहीं मानते तो न मानें। इसके सत्य होने पर सिर्फ़ अल्लाह की गवाही काफ़ी है।
21. अरबी भाषा में कहते हैं– ''फ़ुलानु सदीदुन अलैहि,'' अमुक व्यक्ति उसपर सख़्त है, अर्थात् उसको दबाना या क़ाबू में करना और अपने मतलब पर लाना उसके लिए कठिन है। आदरणीय सहाबा (रज़ि॰) के काफ़िरों पर सख़्त (कठोर) होने का अर्थ यह है कि वे मोम की नाक नहीं हैं कि उन्हें काफ़िर जिधर चाहें मोड़ दें। वे नर्म चारा नहीं हैं कि काफ़िर उन्हें आसानी के साथ चबा जाएँ। उन्हें किसी डर-ख़ौफ़ से दबाया नहीं जा सकता। उन्हें किसी प्रलोभन से ख़रीदा नहीं जा सकता। काफ़िरों में यह शक्ति नहीं है कि उन्हें उस महान् उद्देश्य से हटा दें जिसके लिए वे सिर-धड़ की बाज़ी लगाकर मुहम्मद (सल्ल॰) का साथ देने के लिए उठे हैं।
22. अर्थात् उसकी सख़्ती जो कुछ भी है दीन के दुश्मनों के लिए है। ईमानवालों के लिए नहीं है। ईमानवालों के मुक़ाबले में वे नर्म हैं, दयालु और ममतामय हैं, सहानुभूति रखनेवाले और संवेदनशील हैं। सिद्धान्त और उद्देश्य की एकता ने उनके अन्दर एक दूसरे के लिए प्रेम और समरसता और एकात्मता पैदा कर दी है।
23. इससे मुराद पेशानी का वह घट्टा नहीं है जो सज्दे करने के कारण कुछ नमाज़ियों के चेहरे पर पड़ जाता है, बल्कि इससे मुराद ईश-भय, उदारता, सज्जनता और सुशीलता के वे लक्षण हैं जो अल्लाह के आगे झुकने के कारण स्वभावतः आदमी के चेहरे पर स्पष्ट हो जाते हैं। अल्लाह के कहने का मक़सद यह है कि मुहम्मद (सल्ल॰) के ये साथी तो ऐसे हैं कि इनको देखते ही एक आदमी एक निगाह में यह मालूम कर सकता है कि ये लोगों में सबसे अच्छे हैं, क्योंकि ईशपरायणता (ख़ुदापरस्ती का नूर) इनके चेहरों पर चमक रहा है।

49. अल-हुजुरात

नाम

आयत 4 के वाक्यांश ''जो लोग तुम्हें कमरों (हुजुरात) के बाहर से पुकारते हैं'' से उद्धृत है। आशय यह है कि वह सूरा जिसमें अल-हुजुरात शब्द आया है।

अवतरणकाल

यह बात उल्लेखों से भी ज्ञात होती है और सूरा की वार्ताओं से भी इसकी पुष्टि होती है कि यह सूरा विभिन्न अवसरों पर अवतरित आदेशों और निर्देशों का संग्रह है, जिन्हें विषय की अनुकूलता के कारण एकत्र कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त उल्लेखों से यह भी मालूम होता है कि इसमें से अधिकतर आदेश मदीना तैबा के अन्तिम समय में अवतरित हुए हैं।

विषय और वार्ताएँ

इस सूरा का विषय मुसलमानों को उन शिष्ट नियमों की शिक्षा देना है जो ईमानवालों के गौरव के अनुकूल हैं। आरम्भिक पाँच आयतों में उनको वह नियम सिखाया गया है जिसका उन्हें अल्लाह और उसके रसूल के मामले में ध्यान रखना चाहिए। फिर यह आदेश दिया गया है कि यदि किसी व्यक्ति या गिरोह या क़ौम के विरुद्ध कोई सूचना मिले तो ध्यान से देखना चाहिए कि सूचना मिलने का माध्यम विश्वसनीय है या नहीं। भरोसे के योग्य न हो तो उसपर कार्रवाई करने से पहले जाँच-पड़ताल कर लेनी चाहिए कि सूचना सही है या नहीं, तदन्तर यह बताया गया कि यदि किसी समय मुसलमानों के दो गिरोह आपस में लड़ पड़ें तो इस स्थिति में अन्य मुसलमानों को क्या नीति अपनानी चाहिए।

फिर मुसलमानों को उन बुराइयों से बचने की ताकीद की गई है जो सामाजिक जीवन में बिगाड़ पैदा करती हैं और जिनके कारण आपस के सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं। इसके बाद उन जातीय और वंशगत भेदभाव पर चोट की गई है जो संसार में व्यापक बिगाड़ के कारणबनते हैं। (इस सिलसिले में) सर्वोच्च अल्लाह ने यह कहकर इस बुराई की जड़ काट दी है कि समस्त मानव एक ही मूल से पैदा हुए हैं और जातियों और क़बीलों में इनका विभक्त होना परिचय के लिए है न कि आपस में गर्व के लिए। और एक मनुष्य पर दूसरे मनुष्य की श्रेष्ठता के लिए नैतिक श्रेष्ठता के सिवा और कोई वैध आधार नहीं है। अन्त में लोगों को बताया गया है कि मौलिक चीज़ ईमान का मौखिक

दावा नहीं है, बल्कि सच्चे दिल से अल्लाह और उसके रसूल को मानना, व्यवहारतः आज्ञाकारी बनकर रहना और शुद्ध हृदयता के साथ अल्लाह की राह में अपनी जान और माल खपा देना है।

⊖ ⊖ ⊖

49. सूरा अल-हुजुरात

(मदीना में उतरी–आयतें 18)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह और उसके रसूल से आगे न बढ़ो[1] और अल्लाह से डरो, अल्लाह सब कुछ सुनने और जाननेवाला है।

(2) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अपनी आवाज़ नबी की आवाज़ से ऊँची न करो, और न नबी के साथ ऊँची आवाज़ से बात करो जिस तरह तुम आपस में एक दूसरे से करते हो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा किया-कराया सब नष्ट हो जाए और तुम्हें ख़बर भी न हो। (3) जो लोग अल्लाह के रसूल के सामने बात करते हुए अपनी आवाज़ दबी रखते हैं वे वास्तव में वही लोग हैं जिनके दिलों को अल्लाह ने परहेज़गारी के लिए जाँच लिया है,[2] उनके लिए माफ़ी है और बड़ा बदला।

(4) ऐ नबी, जो लोग तुम्हें कमरों के बाहर से पुकारते हैं उनमें से ज़्यादातर बुद्धिहीन हैं। (5) यदि वे तुम्हारे बाहर निकलने तक सब्र करते तो उन्हीं के लिए अच्छा था,[3] अल्लाह माफ़ करनेवाला और दयावान् है।

(6) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अगर कोई अवज्ञाकारी तुम्हारे पास कोई ख़बर लेकर आए तो छानबीन कर लिया करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम किसी गिरहो को बेख़बरी में हानि पहुँचा बैठो और फिर अपने किए पर तुम्हें पछतावा हो।[4] (7,8) ख़ूब जान रखो कि तुम्हारे बीच अल्लाह का रसूल मौजूद है। अगर तुम बहुत-से मामलों में तुम्हारी बात मान लिया करे तो तुम ख़ुद ही कठिनाइयों में ग्रस्त हो जाओ। मगर अल्लाह

---

1. अर्थात् अल्लाह और रसूल से आगे बढ़कर न चलो, पीछे चलो। अगुवा न बनो, अनुयायी बनकर रहो। अपने मामलों में आगे बढ़कर ख़ुद अपने तौर पर फ़ैसले न करने लगो। बल्कि पहले यह देखो कि अल्लाह की किताब और उसके रसूल के तरीक़े में उनके सम्बन्ध में क्या आदेश मिलते हैं।
2. अर्थात् जो लोग अल्लाह की परीक्षाओं में पूरे उतरे हैं और उन परीक्षाओं से गुज़रकर जिन्होंने सिद्ध कर दिया है कि उनके दिलों में वस्तुतः परहेज़गारी (ईशपरायणता) मौजूद है वही लोग अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के आदर और प्रतिष्ठा का ध्यान रखते हैं। इस कथन से ख़ुद ही यह बात निकलती है कि जो दिल रसूल (सल्ल०) के आदर से ख़ाली है वह वास्तव में परहेज़गारी (तक़वा) से ख़ाली है।

ने तुमको ईमान का प्रेम दिया और उसको तुम्हारे लिए प्रिय बना दिया। और कुफ़्र (इनकार) और उल्लंघन और अवज्ञा से तुमको विमुख कर दिया। ऐसे ही लोग अल्लाह के अनुग्रह और उपकार से सन्मार्ग पर हैं और अल्लाह सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है।

(9) और अगर ईमानवालों में से दो गिरोह आपस में लड़ जाएँ[5] तो उनके बीच सुलह कराओ। फिर अगर उनमें से एक गिरोह दूसरे गिरोह पर ज़्यादती करे तो ज़्यादती करनेवाले से लड़ो यहाँ तक कि वह अल्लाह के आदेश की ओर पलट आए। फिर अगर वह पलट आए तो उनके बीच इनसाफ़ के साथ सुलह करा दो। और इनसाफ़ करो कि अल्लाह इनसाफ़ करनेवालों को पसन्द करता है। (10) ईमानवाले तो एक दूसरे के भाई हैं, अतः अपने भाइयों के बीच सम्बन्धों को ठीक करो और अल्लाह से डरो,

3. अरब के आस-पास से आनेवालों में कुछ ऐसे असभ्य लोग भी होते थे जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से मिलने के लिए आते तो किसी सेवक से अन्दर सूचित कराने का कष्ट भी न उठाते थे बल्कि नबी (सल्ल॰) की पाक बीवियों के कमरों का चक्कर काटकर बाहर ही से आप (सल्ल॰) को पुकारते फिरते थे। नबी (सल्ल॰) को उन लोगों की इन हरकतों से बड़ी तकलीफ़ होती थी मगर अपनी स्वाभाविक सहनशीलता के कारण आप उन्हें सहन किए जा रहे थे। आख़िरकार अल्लाह ने इस मामले में हस्तक्षेप किया और इस असभ्य नीति की भर्त्सना करते हुए लोगों को यह ताकीद की कि जब वे आपसे मिलने के लिए आएँ और आपको मौजूद न पाएँ तो पुकार-पुकारकर आपको बुलाने की जगह सब्र के साथ बैठकर उस समय का इनतिज़ार करें जब आप ख़ुद बाहर पधारें।
4. इस आयत में मुसलमानों को यह सैद्धान्तिक आदेश दिया गया है कि जब कोई महत्त्वपूर्ण ख़बर, जो किसी बड़े परिणाम का कारण बननेवाली हो, तुम्हें मिले तो उसे स्वीकार करने से पहले यह देख लो कि ख़बर लानेवाला कैसा आदमी है। अगर वह कोई उल्लंघनकारी व्यक्ति हो, अर्थात् जिसकी प्रकट स्थिति यह बता रही हो कि उसकी बात भरोसे के लायक़ नहीं है, तो उसकी दी हुई ख़बर पर कुछ करने से पहले छान-बीन कर लो कि सही बात क्या है।
5. यह नहीं कहा कि "जब ईमानवालों में से दो गिरोह आपस में लड़ें", बल्कि कहा है कि "अगर ईमानवालों में से दो गिरोह आपस में लड़ जाएँ।" इन शब्दों से यह बात अपने आप निकलती है कि आपस में लड़ना मुसलमानों की रीति नहीं है और न होनी चाहिए। न उनसे इस बात की आशा होनी चाहिए कि वे मोमिन होते हुए आपस में लड़ा करेंगे। अलबत्ता अगर कभी ऐसा हो जाए तो ऐसी हालत में वह तरीक़ा अपनाना चाहिए जो आगे बयान किया जा रहा है।

आशा है कि तुमपर दया की जाएगी।

(11) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, न मर्द दूसरे मर्दों की हँसी उड़ाएँ, हो सकता है कि वे उनसे अच्छे हों, और न औरतें दूसरी औरतों की हँसी उड़ाएँ, हो सकता है कि वे उनसे अच्छी हों।[6] आपस में एक दूसरे पर व्यंग्य न करो[7] और न एक दूसरे को बुरी उपाधि से याद करो।[8] ईमान लाने के बाद दुराचार में नाम पैदा करना बहुत बुरी बात है। जो लोग इस नीति से बाज़ न आएँ वे ज़ालिम हैं।

(12) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, बहुत गुमान करने से बचो कि कुछ गुमान गुनाह होते हैं।[9] टोह में मत पड़ो।[10] और तुममें से कोई किसी की पीठ पीछे निन्दा (ग़ीबत) न करे।[11] क्या तुममें कोई ऐसा है जो अपने मरे हुए भाई का मांस खाना पसन्द करेगा?[12] देखो, तुम ख़ुद इससे घिन खाते हो। अल्लाह से डरो, अल्लाह बड़ा तौबा क़बूल करनेवाला और दयावान् है।

6. हँसी उड़ाने से मुराद सिर्फ़ ज़बान ही से हँसी उड़ानी नहीं है, बल्कि किसी की नक़ल उतारना, उसकी ओर इशारे करना, उसकी बात पर या उसके काम या उसके रूप या उसके वस्त्र पर हँसना या उसकी किसी कमी या ऐब की ओर लोगों का इस तरह ध्यान दिलाना कि दूसरे उसपर हँसें, ये सब भी हँसी उड़ाने में सम्मिलित हैं।
7. इसके अर्थ में चोटें करना, फ़ब्तियाँ कसना, इलज़ाम धरना, आक्षेप करना, ऐब निकालना और खुल्लम-खुल्ला या छिपे इशारों से किसी को भर्त्सना का लक्ष्य बनाना, ये सब काम सम्मिलित हैं।
8. इस आदेश का उद्देश्य यह है कि किसी व्यक्ति को ऐसे नाम से न पुकारा जाए या ऐसी उपाधि न दी जाए जिससे उसका अपमान होता हो। उदाहरणार्थ किसी को फ़ासिक़ (दुराचारी) या मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) कहना। किसी को लंगड़ा या अन्धा या काना कहना। किसी को उसके अपने या उसकी माँ या बाप या ख़ानदान के किसी दोष या खोट से उपधित करना। किसी को मुसलमान हो जाने के बाद उसके पहले धर्म के कारण यहूदी या ईसाई कहना, किसी व्यक्ति या ख़ानदान या बिरादरी या गिरोह का ऐसा नाम रख देना जिसमें उसके निन्दित और अपमानित होने का पहलू पाया जाता हो। इस आदेशसे सिर्फ़ वे उपाधियाँ अपवाद हैं जो अपने बाह्य रूप की दृष्टि से कुरूपहैं मगर उनसे निन्दा का उद्देश्य नहीं होता बल्कि वे उन लोगों की पहचान का माध्यम बन जाती हैं जिनको इन उपाधियों से याद किया जाता है। उदाहरणार्थ : हकीम नाबीना (नेत्र-हीन वैद्य) कि इससे मतलब सिर्फ़ पहचान है, बुराई मक़सद नहीं है।

(13) लोगो, हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और फिर तुम्हारी क़ौमें और बिरादरियाँ बना दीं ताकि तुम एक दूसरे को पहचानो। वास्तव में अल्लाह की दृष्टि में तुममें सबसे ज़्यादा प्रतिष्ठित वह है जो तुमें सबसे ज़्यादा परहेज़गार है।[13] यक़ीनन अल्लाह सब कुछ जाननेवाला और ख़बर रखनेवाला है।

(14) ये बद्दू कहते हैं कि "हम ईमान लाए।"[14] इनसे कहो, तुम ईमान नहीं लाए, बल्कि यूँ कहो कि "हम आज्ञाकारी हो गए।" ईमान अभी तुम्हारे दिलों में दाख़िल नहीं हुआ है। अगर तुम अल्लाह और उसके रसूल के आज्ञाकारी हो जाओ तो वह तुम्हारे कर्मों के बदले में कोई कमी न करेगा, यक़ीनन अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और दयावान् है। (15) वास्तव में तो ईमानवाले वे हैं जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाए फिर उन्होंने कोई शक न किया और अपनी जानों और मालों से अल्लाह के मार्ग में 'जिहाद' (जान तोड़ प्रयास) किया। वही सच्चे लोग हैं।

(16) ऐ नबी, इन (ईमान के दावेदारों) से कहो, क्या तुम अल्लाह को अपने दीन की सूचना दे रहे हो? हालाँकि अल्लाह ज़मीन और आसमानों की प्रत्येक चीज़ को जानता है और हर चीज़ का ज्ञान रखता है। (17) ये लोग तुमपर एहसान जताते हैं कि इन्होंने इस्लाम क़बूल कर लिया। इनसे कहो, अपने इस्लाम का एहसान मुझपर न रखो, बल्कि अल्लाह तुमपर अपना एहसान रखता है कि उसने तुम्हें ईमान की राह

9. सर्वथा गुमान करने से नहीं रोका गया है बल्कि बहुत ज़्यादा गुमान से काम लेने और हर तरह के गुमान की पैरवी करने से रोका गया है और इसका कारण यह बताया गया है कि कुछ गुमान (अटकल) गुनाह होते हैं। वास्तव में जो गुमान गुनाह है वह यह है कि आदमी किसी व्यक्ति से अकारण बदगुमानी करे, या दूसरों के प्रति मत निर्धारित करने में हमेशा बदगुमानी ही से शुरुआत किया करे, या ऐसे लोगों के मामले में बदगुमानी से काम ले जिनका ज़ाहिरी हाल यह बता रहा हो कि वे नेक और सज्जन हैं। इसी तरह यह बात भी गुनाह है कि एक व्यक्ति के गिसी कथन या कर्म में बुराई और भलाई की समान रूप से संभावना हो और हम सिर्फ़ बदगुमानी से काम लेकर उसे बुराई ही पर आरोपित करें।
10. अर्थात् लोगों के रहस्य न टटोलो। एक दूसरे के ऐब न तलाश करो। दूसरों के हालात और मामलों को टोह न लगाते फिरो। लोगों के निजी पत्र पढ़ना, दो आदमियों की बातें कान लगाकर सुनना, पड़ोसियों के घर में झाँकना, और विभिन्न ढंग से दूसरों की घरेलू ज़िन्दगी या उनके व्यक्तिगत मामलों की टटोल करना, ये सब उस टोह के अन्तर्गत आते हैं जिससे रोका गया है।

दिखा दी अगर तुम वास्तव में (अपने ईमान के दावे में) सच्चे हो। (18) अल्लाह ज़मीन और आसमानों की हर छिपी चीज़ का ज्ञान रखता है और जो कुछ तुम करते हो वह सब उसकी दृष्टि में है।

● ● ●

11. अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा गया कि ग़ीबत की परिभाषा क्या है? आपने कहा, "ग़ीबत यह है कि तू अपने भाई की चर्चा इस तरह करे जो उसे नापसन्द हो।" कहा गया कि अगर मेरे भाई में वह बात पाई जाती हो जो मैं कह रहा हूँ तो इस स्थिति में आपका क्या विचार है? कहा, "अगर उसमें वह बात पाई जाती हो तो तूने उसकी ग़ीबत की, और अगर उसमें वह मौजूद न हो तो तूने उसपर मिथ्यारोपण किया।" इस वर्जन का अपवाद सिर्फ़ वे स्थितियाँ हैं जिनमें किसी व्यक्ति के पीठ पीछे, या उसके मरने के बाद उसकी बुराई बयान करने की कोई ऐसी ज़रूरत आ पड़े जो 'शरीअत' की दृष्टि में एक सही ज़रूरत हो, और वह ज़रूरत ग़ीबत के बिना पूरी न हो सकती हो, और उसके लिए अगर ग़ीबत न की जाए तो ग़ीबत की अपेक्षा ज़्यादा बड़ी बुराई अवश्यंभावी हो जाती हो। नबी (सल्ल०) ने इस अपवाद को सिद्धन्ततः यूँ बयान किया है कि "निकृष्टतम ज़्यादती किसी मुसलमान की इज़्ज़त पर नाहक हमला करना है।" इस कथन में 'नाहक' की शर्त यह बताती है कि 'हक़' के कारण ऐसा करना जाइज़ है। उदाहरणतः ज़ालिम के विरुद्ध मज़लूम की शिकायत हर उस व्यक्ति के सामने जिससे वह आशा रखता हो कि वह ज़ुल्म को दूर करने के लिए कुछ कर सकता है। सुधार के इरादे से किसी व्यक्ति या गिरोह की बुराइयों का ज़िक्र ऐसे लोगों के सामने जिनसे यह आशा हो कि वे उन बुराइयों को दूर करने के लिए कुछ कर सकेंगे। शरीअत का फ़तवा (फ़ैसला) प्राप्त करने के उद्देश्य से किसी मुफ़्ती के सामने सही स्थिति रखनी जिसमें किसी व्यक्ति के किसी ग़लत काम का ज़िक्र आ जाए। लोगों को किसी व्यक्ति या व्यक्तियों की बुराई से सावधान करना ताकि वे उनकी हानि से बच सकें। ऐस लोगों के विरुद्ध खुल्लम-खुल्ला आवाज़ उठानी और उनकी बुराइयों पर आलोचना करना जो धर्म-विरुद्ध चीज़ों और अनाचार को पैला रहे हों, या धर्म के विपरीत नई बातों और गुमराहियों का प्रचार कर रहे हों, या लोगों को अधर्म और ज़ुल्म व अत्याचार की ख़राबियों में डाल रहे हों।
12. ग़ीबत की उपमा मरे हुए भाई का मांस खाने से इसलिए दी गई है कि जिसकी ग़ीबत की जा रही है वह बेचारा बिलकुल बेख़बर होता है कि कहाँ-कौन उसकी इज़्ज़त पर हमला कर रहा है।

13. पिछली आयतों में ईमानवालों को सम्बोधित करके वे आदेश दिए गए थे जो मुस्लिम समाज को बिगाड़ से सुरक्षित रखने के लिए ज़रूरी हैं। अब इस आयत में पूरी इनसानी बिरादरी को सम्बोधित करके उस सबसे बड़ी गुमराही का सुधार किया गया है जो दुनिया में हमेशा सार्वभौमिक बिगाड़ का कारण बनी रही है, अर्थात् नस्ल, रंग, भाषा, देश और जातीयता (क़ौमियत) सम्बन्धित पक्षपात। इस संक्षिप्त-सी आयत में अल्लाह ने सारे इनसानों को सम्बोधित करके तीन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मौलिक तथ्यों का उल्लेख किया है। एक यह कि तुम सबका मूल एक ही है, एक ही मर्द और एक ही औरत से तुम्हारी पूरी जाति का आविर्भाव हुआ है और आज तुम्हारी जितनी नस्लें भी दुनिया में पाई जाती हैं वे वास्तव में आरंभिक नस्ल की शाखाएँ हैं जो एक माँ और एक बाप से शुरू हुई थी। दूसरे यह कि अपने मूल की दृष्टि से एक होने के बावजूद तुम्हारा क़ौमों और क़बीलों में विभक्त हो जाना एक स्वाभाविक बात थी। मगर इस स्वाभाविक अन्तर और विभेद का यह हरगिज़ तक़ाज़ा न था कि इसके आधार पर ऊँच-नीच, भद्र और अभद्र, श्रेष्ठ और क्षुद्र की सीमाएँ खींची जाएँ, एक नस्ल अपने को दूसरी नस्ल से बढ़कर बताए, एक रंग के लोग दूसरे रंग के लोगों को तुच्छ और हीन जानें और एक क़ौम दूसरी क़ौम पर अपनी श्रेष्ठता जताए। स्रष्टा ने जिस कारण इनसानी गिरोहों को क़ौमों और क़बीलों का रूप दिया था वह सिर्फ़ यह था कि उनके बीच पारस्परिक सहयोग और परिचय का स्वाभाविक रूप यही था। तीसरे यह कि इनसान और इनसान के बीच श्रेष्ठता और उच्चता का आधार अगर कोई है और हो सकता है तो वह केवल नैतिक श्रेष्ठता है।
14. इससे मुराद सभी बद्दू नहीं हैं बल्कि यहाँ उल्लेख कुछ विशेष बद्दू गिरोहों का हो रहा है जो इस्लाम की बढ़ती हुई शक्ति को देखकर सिर्फ़ इस विचार से मुसलमान हो गए थे कि वे मुसलमानों की मार से सुरक्षित भी रहेंगे और इस्लामी विजय और सफलताओं से लाभ भी उठाएँगे। ये लोग वास्तव में सच्चे दिल से ईमान नहीं लाए थे, सिर्फ़ ज़बान से ईमान का इक़रार करके उन्होंने अपने हितों के लिए अपनी गिनती मुसलमानों में करा ली थी।

50. क़ाफ़॰

नाम

आरम्भ ही के अक्षर क़ाफ़॰ से उद्धृत है। मतलब यह है कि वह सूरा जिसका उद्घाटन अक्षर क़ाफ़॰ से होता है।

अवतरणकाल

किसी विश्वस्त उल्लेख से यह पता नहीं चलता कि यह ठीक किस कालखण्ड में अवतरित हुई है, किन्तु विषय-वस्तुओं पर विचार करने से यह महसूस होता है कि इसका अवतरणकाल मक्का मुअज़्ज़मा का दूसरा कालखण्ड है, जो नुबूवत के तीसरे वर्ष से आरम्भ होकर पाँचवे वर्ष तक रहा। इस कालखण्ड की विशेषताएँ हम सूरा अनआम के परिचय-सम्बन्धी लेख में बता चुके हैं।

विषय और वार्ताएँ

विश्वस्त उल्लेखों से मालूम होता है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) अधिकतर दोनों ईदों की नमाज़ों में इस सूरा को पढ़ा करते थे। कुछ और उल्लेखों में आया है कि फ़ज्र की नमाज़ में भी आप अधिकतर इसको पढ़ा करते थे। इससे यह बात स्पष्ट है कि नबी (सल्ल॰) की दृष्टि में यह एक बड़ी महत्त्वपूर्ण सूरा थी। इसलिए आप ज़्यादा-से-ज़्यादा लोगों तक बार-बार इसकी वार्ताओं को पहुँचाने का आयोजन करते थे। इसके महत्त्व का कारण सूरा को ध्यानपूर्वक पढ़ने से आसानी से समझ में आ जाता है। पूरी सूरा का विषय आख़िरत (परलोक) है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने जब मक्का मुअज़्ज़मा में अपने आह्वान का आरम्भ किया तो लोगों को सबसे ज़्यादा अचम्भा आपकी जिस बात पर हुआ, वह यह थी कि मरने के पश्चात् मनुष्य पुनः उठाए जाएँगे और उनको अपने कर्मों का हिसाब देना होगा। लोग कहते थे कि यह तो बिलकुल अनहोनी बात है, आख़िर यह कैसे सम्भव है कि जब हमारा कण-कण धरती में बिखर चुका हो तो इन बिखरे हुए अंशों को हज़ारों वर्ष बीत जाने के बाद फिर से इकट्ठा करके हमारा यह शरीर नए सिरे से बना दिया जाए और हम जीवित होकर उठ खड़े हों? इसके उत्तर में अल्लाह की ओर से यह अभिभाषण अवतरित हुआ। इसमें बड़े संक्षिप्त तरीक़े से छोटे-छोटे वाक्यों में एक तरफ़ परलोक की सम्भावना और उसके घटित होने के प्रमाण दिए गए हैं और दूसरी तरफ़ लोगों को सावधान किया गया है कि तुम चाहे आश्चर्य करो या बुद्धि से बहुत दूर समझो या झुठलाओ, इससे यथार्थ में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता।



50. सूरा क़ाफ़॰

(मक्का में उतरी–आयतें 45)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़ाफ़॰, क़सम है क़ुरआन मजीद की (2)—बल्कि इन लोगों को आश्चर्य इस बात पुर हुआ कि एक सावधान करनेवाला ख़ुद इन्हीं में से इनके पास आ गया।[1] फिर इनकार करनेवाले कहने लगे, "यह तो आश्चर्यजनक बात है, (3) क्या जब हम मर जाएँगे और मिट्टी हो जाएँगे (तो दोबारा उठाए जाएँगे)? यह वापसी तो बुद्धि से परे दूर की बात है।[2] (4) (हालाँकि) ज़मीन इनके शरीर में से जो कुछ खाती है वह सब हमको मालूम है और हमारे पास एक किताब है जिसमें सब कुछ सुरक्षित है।

(5) बल्कि इन लोगों ने तो जिस समय सत्य इनके पास आया उसी समय उसे साफ़ झुठला दिया। इसी कारण अब ये उलझन में पड़े हुए हैं।

(6) अच्छा, तो क्या इन्होंने कभी अपने ऊपर आसमान की ओर नहीं देखा? किस तरह हमने उसे बनाया और सुसज्जित किया, और उसमें कहीं कोई दरार नहीं है। (7) और ज़मीन को हमने बिछाया और उसमें पहाड़ जमाए और उसमें हर तरह की सुदृश्य वनस्पतियाँ उगा दीं। (8) ये सारी चीज़ें आँखें खोलनेवाली और शिक्षा देनेवाली हैं हर उस बन्दे के लिए जो (सत्य की ओर) रुजू करनेवाला हो। (9,10) और आकाश से हमने बरकतवाला पानी उतारा, फिर उससे बाग और फ़सल के अनाज़ और ऊँचे-ऊँचे खजूर के पेड़ पैदा कर दिए जिनपर फलों से लदे हुए गुच्छे तह पर तह लगते हैं। (11) यह प्रबन्ध है बन्दों को रोज़ी देने का। उस पानी से हम एक मुर्दा ज़मीन को जीवन प्रदान कर देते हैं। (मरे हुए इनसानों का धरती से) निकलना भी इसी तरह होगा।

1. मतलब यह है कि मक्कावालों ने मुहम्मद (सल्ल॰) की रिसालत (पैग़म्बरी) को मानने से किसी उचित आधार पर इनकार नहीं किया है, बल्कि इस सर्वथा अनुचित आधार पर इनकार किया है कि उनकी अपनी ही जिंस के एक इनसान, और उनकी अपनी ही क़ौम के एक व्यक्ति का अल्लाह की ओर से सावधान करनेवाला बनकर आ जाना उनकी दृष्टि में बड़ी आश्चर्य करने योग्य बात है।
2. यह उन लोगों का दूसरा आश्चर्य था। पहला आश्चर्य इस बात पर था कि एक इनसान रसूल (पैग़म्बर) बनकर आया। और इसपर और भी आश्चर्य उन्हें इस बात पर हुआ कि सारे इनसान मरने के बाद नए सिरे से जीवित किए जाएँगे, और उन सबको इकट्ठा करके अल्लाह की अदालत में पेश किया जाएगा।

(12) इनसे पहले नूह की क़ौम, और 'अर-रस' वाले, और समूद, (13) और आद, और फ़िरऔन और लूत के भाई, (14) और ऐकावाले, और तुब्बअ की क़ौम के लोग भी झुठला चुके हैं। हर एक ने रसूलों को झुठलाया और आख़िरकार मेरी धमकी उनपर चस्पाँ हो गई।

(15) क्या पहली बार पैदा करने से हम असमर्थ थे? मगर एक नई सृष्टि की ओर से ये लोग शक में पड़े हुए हैं।

(16) हमने इनसान को पैदा किया है और उसके दिल में उभरनेवाले वसवसों तक को हम जानते हैं। हम उसकी गरदन की रग से भी ज़्यादा उससे क़रीब हैं, (17) (और हमारे इस प्रत्यक्ष ज्ञान के अलावा) दो लिखनेवाले उसके दाएँ और बाएँ बैठे हर चीज़ अंकित कर रहे हैं। (18) कोई शब्द उसके मुख से नहीं निकलता जिसे सुरक्षित करने के लिए एक उपस्थित रहनेवाला निरीक्षक मौजूद न हो। (19) फिर देखो, वह मौत की बेहोशी सत्य लेकर आ पहुँची, यह वही चीज़ है जिससे तू भागता था। (20) और फिर सूर (नरसिंघा) फूँका गया, यह है वह दिन जिससे तुझे डराया जाता था। (21) हर व्यक्ति इस हाल में आ गया कि उसके साथ एक हाँककर लानेवाला है और एक गवाही देनेवाला। (22) इस चीज़ की ओर से तू ग़फ़लत में था, हमने वह परदा हटा दिया जो तेरे आगे पड़ा हुआ था और आज तेरी निगाह बड़ी तेज़ है।[3] (23) उसके साथी ने कहा,[4] यह जो मुझे सौंपा गया था हाज़िर है। (24) आदेश दिया गया, फेंक दो जहन्नम में हर कट्टे काफ़िर को जो सत्य से द्वेष रखता था, (25) भलाई को रोकनेवाला और सीमा का उल्लंघन करनेवाला था, सन्देह में पड़ा हुआ था (26) और अल्लाह के साथ किसी दूसरे को पूज्य बनाए बैठा था। डाल दो उसे कठोर अज़ाब में। (27) उसके साथी ने कहा,[5] "ऐ पालनहार, मैंने इसको सरकश नहीं बनाया बल्कि यह ख़ुद ही परले दरजे की गुमराही में पड़ा हुआ था।" (28) जवाब में कहा गया, "मेरे सामने झगड़ा न करो, मैं तुमको पहले ही बुरे परिणाम से सावधान कर चुका था। (29) मेरे यहाँ बात

3. अर्थात् अब तो तुझे ख़ूब दिखाई दे रहा है कि वह सब कुछ यहाँ मौजूद है जिसकी ख़बर अल्लाह के नबी तुझे देते थे।
4. साथी से मुराद हाँककर लानेवाला फ़रिश्ता है और वही अल्लाह की अदालत में पहुँचकर कहेगा कि यह व्यक्ति जो मुझे सौंपा गया था सरकार की पेशी में हाज़िर है।
5. यहाँ साथी से मुराद वह शैतान है जो उस अवज्ञाकारी व्यक्ति के साथ दुनिया में लगा हुआ था।

पलटी नहीं जाती और मैं अपने बन्दों पर ज़ुल्म तोड़नेवाला नहीं हूँ।''

(30) वह दिन जबकि हम 'जहन्नम' से पूछेंगे कि क्या तू भर गई? और वह कहेगी, क्या और कुछ है?[6] (31) और जन्नत परहेज़गारों के क़रीब लाई जाएगी, कुछ भी दूर न होगी। (32) कहा जाएगा, ''यह है वह चीज़ जिसका तुमसे वादा किया जाता था, हर उस व्यक्ति के लिए जो बहुत रुजू करनेवाला[7] और बड़ी निगरानी करनेवाला था,[8] (33) जो बिना देखे रहमान (करुणामय ईश्वर) से डरता था, और जो आसक्त हृदय लिए हुए आया है। (34) प्रवेश करो जन्नत में सलामती के साथ।'' वह दिन शाश्वत जीवन का दिन होगा। (35) वहाँ उनके लिए वह सबकुछ होगा जो वे चाहेंगे, और हमारे पास उससे ज़्यादा भी बहुत कुछ उनके लिए है।

(36) हम इनसे पहले बहुत-सी क़ौमों को तबाह कर चुके हैं जो इनसे बहुत ज़्यादा शक्तिशाली थीं और दुनिया के देशों को उन्होंने छान मारा था। फिर क्या वे कोई शरण लेने की जगह पा सके? (37) इस इतिहास में शिक्षा सामग्री है हर उस व्यक्ति के लिए जो दिल रखता हो, या जो ध्यानपूर्वक बात को सुने।

(38) हमने ज़मीन और आसमानों को और उनके बीच की सारी चीज़ों को छः दिनों में पैदा कर दिया और हमें कोई थकान न छू सकी। (39) अतः ऐ नबी, जो बातें ये लोग बनाते हैं उनपर सब्र करो, और अपने रब की प्रशंसा के साथ उसकी तसबीह (गुणगान) करते रहो, सूर्योदय और सूर्यास्त से पहले। (40) और रात के समय फिर उसकी तसबीह (गुणगान) करो और सजदा गुज़ारियों से निवृत्त होने के बाद भी।[9]

(41) और सुनो, जिस दिन पुकारनेवाला (हर व्यक्ति के) क़रीब ही से

6. इसके दो अर्थ हो सकते हैं, एक यह कि ''मेरे अन्दर अब और ज़्यादा आदमियों की गुंजाइश नहीं है।'' दूसरा यह कि ''और जितने अपराधी भी हैं उन्हें ले आइए।''
7. इससे मुराद ऐसा व्यक्ति है जिसने अवज्ञा और अपनी इच्छाओं एवं वासनाओं की पैरवी का मार्ग त्यागकर आज्ञापालन और अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्ति का मार्ग ग्रहण कर लिया हो, जो बहुत ज़्यादा अल्लाह को याद करनेवाला और अपने सभी मामलों में उसकी ओर रुजू करनेवाला हो।
8. इससे मुराद ऐसा व्यक्ति है जो अल्लाह की सीमाओं और उसके आदेशों और उसकी हुर्मतों और उसकी सौंपी हुई अमानतों की रक्षा करे, जो हर समय अपना जाइज़ा लेकर देखता रहे कि कहीं मैं अपनी कथनी या करनी में अपने रब की आज्ञा का उल्लंघन तो नहीं कर रहा हूँ।

पुकारेगा,[10] (42) जिस दिन सब लोग क़ियामत के कोलाहल को ठीक-ठीक सुन रहे होंगे, वह ज़मीन से मुर्दों के निकलने का दिन होगा। (43) हम ही जीवन प्रदान करते हैं और हम ही मौत देते हैं, और हमारी ओर ही उस दिन सबको पलटना है (44) जब ज़मीन फटेगी और लोग उसके अन्दर से निकलकर तेज़-तेज़ भागे जा रहे होंगे। यह इकट्ठा करना हमारे लिए बहुत आसान है।

(45) ऐ नबी, जो बातें ये लोग बना रहे हैं उन्हें हम ख़ूब जानते हैं, और तुम्हारा काम उनसे बलपूर्वक बात मनवाना नहीं है। बस तुम इस क़ुरआन के द्वारा हर व्यक्ति को नसीहत करो जो मेरी चेतावनी से डरे।



9. रब की प्रशंसा और उसकी तसबीह (गुणगान) से मुराद यहाँ नमाज़ है। ''सूर्योदय से पहले'' फ़ज्र की नमाज़ है। ''सूर्यास्त से पहले'' दो नमाज़ें हैं, एक ज़ुह्र, दूसरी अस्र। ''रात के समय'' मग़रिब और ईशा की नमाज़े हैं और तीसरी तहज्जुद भी रात की तसबीह में सम्मिलित है।
10. अर्थात् जो व्यक्ति जहाँ मरा पड़ा होगा, या जहाँ भी दुनिया में उसकी मौत हुई थी वहीं अल्लाह के मुनादी की आवाज़ उसको पहुँचेगी कि उठो और चलो अपने रब की तरफ़ अपना हिसाब देने के लिए। यह आवाज़ कुछ ऐसी होगी कि पूरी ज़मीन के चप्पे-चप्पे पर जो व्यक्ति भी ज़िन्दा होकर उठेगा वह महसूस करेगा कि पुकारनेवाले ने कहीं क़रीब ही से उसको पुकारा है।

51. अज़-ज़ारियात

नाम

पहले ही शब्द 'वज़्ज़ारियात' (क़सम है उन हवाओं की जो गर्द उड़ानेवाली हैं), से उद्धृत है। आशय यह है कि वह सूरा जिसका आरम्भ अज़-ज़ारियात शब्द से होता है।

अवतरणकाल

विषय-वस्तुओं और वर्णन-शैली से साफ़ मालूम होता है कि यह सूरा (भी उसी) समय में अवतरित हुई थी जिसमें सूरा 50 (क़ाफ़॰) अवतरित हुई है।

विषय और वार्ताएँ

इसका बड़ा भाग परलोक के विषय पर है और अन्त में एकेश्वरवाद की ओर बुलाया गया है। इसके साथ लोगों को इस बात पर सचेत किया गया है कि नबियों (अलै॰) की बात न मानना और अज्ञानपूर्ण धारणाओं पर आग्रह करना स्वयं उन्हीं जातियों के लिए विनाशकारी सिद्ध हुआ है जिन्होंने यह नीति अपनाई है। आख़िरत के सम्बन्ध में जो बात इस सूरा के छोटे-छोटे, किन्तु अत्यन्त अर्थमय वाक्यों में बयान की गई है, वह यह है कि मानव जीवन के परिणामों के विषय में लोगों की विभिन्न और परस्पर विरोधी धारणाएँ स्वयं इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं कि इनमें से कोई धारणा भी ज्ञान पर आधारित नहीं है, बल्कि हरेक ने अटकलें दौड़ाकर अपनी जगह जिस दृष्टिकोण की स्थापना कर ली उसी को वह अपनी धारणा बनाकर बैठ गया। इतनी बड़ी और महत्त्वपूर्ण मौलिक समस्या पर, जिसके विषय में आदमी के अभिमत का ग़लत हो जाना उसके पूरे जीवन को ग़लत करके रख देता है, ज्ञान के बिना मात्र अटकलों के आधार पर कोई धारणा बना लेना एक विनाशकारी मूर्खता है। ऐसी समस्या के विषय में ठीक अभिमत निर्धारित करने का बस एक ही रास्ता है, और वह यह है कि मनुष्य को आख़िरत (परलोक) के सम्बन्ध में जो ज्ञान ख़ुदा की ओर से उसका नबी दे रहा है उसपर वह गम्भीरतापूर्वक विचार करे और धरती और आकाश की व्यवस्था और स्वयं अपने अस्तित्व पर दृष्टिपात करके खुली आँखों से देखे कि क्या उस ज्ञान के सत्य होने की गवाही हर तरफ़ मौजूद नहीं है। इसके बाद बड़े संक्षिप्त ढंग से एकेश्वरवाद की ओर बुलाते हुए कहा गया है कि तुम्हारे स्रष्टा ने तुमको दूसरों की बन्दगी के लिए नहीं, बल्कि अपनी दासता के लिए पैदा किया है। वह तुम्हारे बनावटी उपास्यों की तरह नहीं है जो तुमसे अजीविका लेते हैं। और तुम्हारी सहायता के बिना जिनकी प्रभुता नहीं चल सकती। वह ऐसा उपास्य है जो सबको अजीविका देता है, किसी से अजीविका लेने पर

आश्रित नहीं और जिसका प्रभुत्व स्वयं उसके बल-बूते पर चल रहा है। इसी सिलसिले में यह भी बताया गया है कि नबियों (अलै॰) का मुक़ाबला जब भी किया गया है, बुद्धिसंगत आधार पर नहीं, बल्कि उसी दुराग्रह और हठधर्मी और अज्ञानपूर्ण अहंकार के आधार पर किया गया है जो आज मुहम्मद (सल्ल॰) के साथ बरता जा रहा है। फिर मुहम्मद (सल्ल॰) को निर्देश दिया गया है कि इन सरकशों की ओर ध्यान न दें और अपने आमंत्रण और याद दिलाने का कार्य करते रहें, क्योंकि वह इन लोगों के लिए चाहे लाभकारी न हो किन्तु ईमान लानेवालों के लिए लाभप्रद है।



51. सूरा अज़-ज़ारियात

(मक्का में उतरी–आयतें 60)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है उन हवाओं की जो गर्द उड़ानेवाली हैं, (2) फिर पानी से लदे हुए बादल उठानेवाली हैं, (3) फिर नर्म चाल के साथ चलनेवाली हैं, (4) फिर एक बड़े कार्य (वर्षा) का वितरण करनेवाली हैं, (5) तथ्य यह है कि जिस चीज़ से तुम्हें डराया जा रहा है वह सत्य है, (6) और कर्मों का फल ज़रूर सामने आनेवाला है।[1]

(7) क़सम है विभिन्न रूपोवाले आसमान की (8) (परलोक के विषय में) तुम्हारी बात एक दूसरे से भिन्न है।[2] (9) उससे वही विमुख होता है जोसत्य से फिरा हुआ है।

(10) मारे गए अटकल और गुमान से हुक्म लगानेवाले, (11) जो अज्ञान में डूबे हुए और ग़फलत में मदहोश हैं।[3] (12) पूछते हैं आख़िर वह बदला दिए जाने का दिन कब आएगा? (13) वह उस दिन आएगा जब ये लोग आग पर तपाए जाएँगे।

---

1. यह है वह बात जिसपर क़सम खाई गई है। इस क़सम का मतलब यह है कि जिस अनुपम व्यवस्था और नियमबद्धता के साथ वर्षा की यह महान विधि तुम्हारी आँखों के सामने चल रही है, और जो तत्त्वदर्शिता और मसलेहतें इसमें स्पष्टः क्रियान्वित दिखाई देती हैं, वे इस बात पर गवाही दे रही हैं कि यह दुनिया कोई निरुद्देश्य और निरर्थक घरौंदा नहीं है जिसमें लाखों-करोड़ों वर्ष से एक बहुत बड़ा खेल बस यूँ ही अललटप हुए जा रहा हो बल्कि यह वास्तव में एक उच्चतम श्रेणी की तत्त्वदर्शितायुक्त व्यवस्था है, जिसमें प्रत्येक काम किसी उद्देश्य और मसलेहत के अन्तर्गत हो रहा है। इस व्यवस्था में यह संभव नहीं है कि इनसान को ज़मीन में अधिकार देकर बस यूँ ही छोड़ दिया जाए और कभी उससे हिसाब न लिया जाए कि उसने ये अधिकार किस तरह इस्तेमाल किए।
2. अर्थात् जिस तरह आसमान के बादलों और तारों के झुरमुटों के रूप भिन्न हैं और उनमें कोई पारस्परिक अनुकूलता नहीं पाई जाती है, उसी तरह आख़िरत के सम्बन्ध में तुम लोग भाँति-भाँति की बोलियाँ बोल रहे हो, और हर एक की बात दूसरे से भिन्न है। यह भिन्नता ख़ुद ही इस बात का प्रमाण है कि 'वह्य' (प्रकाशना) और रिसालत से बेपरवाह होकर इनसान ने अपने और इस दुनिया के परिणाम पर जब भी कोई मत निर्धारित किया है, ज्ञान के बिना निर्धारित किया है, वरना अगर इनसान के पास इस विषय में वास्तव में प्रत्यक्ष ज्ञान का कोई साधन होता तो इतने विभिन्न और परस्पर विरोधी धारणाएँ पैदा न होतीं।

(14) (इनसे कहा जाएगा) अब चखो मज़ा अपने फ़ितने का, यह वही चीज़ है जिसके लिए तुम जल्दी मचा रहे थे।[4] (15) अलबत्ता परहेज़गार लोग उस दिन बाग़ों और स्रोतों में होंगे, (16) जो कुछ उनका रब उन्हें देगा उसे ख़ुशी-ख़ुशी ले रहे होंगे। वे उस दिन के आने से पहले सुकर्मी थे, (17) रातों को कम ही सोते थे, (18) फिर वही रात के पिछले पहरों में माफ़ी माँगा करते थे, (19) और उनके मालों में हक़ था माँगनेवालों और उनके लिए जो पाने से रह गए हों।[5]

(20) ज़मीन में बहुत-सी निशानियाँ हैं विश्वास करनेवालों के लिए, (21) और ख़ुद तुम्हारे अपने अस्तित्व में हैं। क्या तुमको सूझता नहीं? (22) आसमान ही में है तुम्हारी रोज़ी भी और वह चीज़ भी जिसका तुमसे वादा किया जा रहा है।[6] (23) अतः

---

3. अर्थात् उन्हें कुछ पता नहीं है कि अपने इन ग़लत अनुमानों के कारण वे किस परिणाम की ओर चले जा रहे हैं, हालाँकि परलोक (आख़िरत) के बारे में ग़लत मत निर्धारित करके जो मार्ग भी अपनाया गया है वह तबाही की ओर जाता है।
4. इनकार करनेवालों का यह पूछना कि "आख़िर वह बदला दिए जाने का दिन कब आएगा" अपने में ख़ुद यह अर्थ रखता था कि उसके आने में देर क्यों लग रही है? जब हम उसका इनकार कर रहे हैं और उसके झुठलाने की सज़ा हमारे लिए अनिवार्य हो चुकी है तो वह आ क्यों नहीं जाता?
5. दूसरे शब्दों में, एक ओर वे अपने रब का हक़ पहचानते और अदा करते थे, दूसरी ओर बन्दों के साथ उनका मामला यह था कि जो कुछ भी अल्लाह ने उनको दिया था, चाहे वह थोड़ा रहा हो या बहुत, उसमें वे सिर्फ़ अपना और अपने बाल-बच्चों ही का हक़ नहीं समझते थे, बल्कि उनको यह एहसास था कि हमारे इस माल में अल्लाह के हर उस बन्दे का हक़ है जिसे सहायता की ज़रूरत हो।
6. आसमान से मुराद यहाँ ऊपरी लोक है। रोज़ी से मुराद वह सब कुछ है जो दुनिया में इनसान को जीने और काम करने के लिए दिया जाता है। और जिस चीज़ का वादा किया जा रहा है उससे मुराद क़ियामत, मरने के बाद ज़िन्दा करके उठाया और इकट्ठा किया जाना, हिसाब-किताब एवं पूछगछ, प्रतिदान एवं दण्ड, और जन्नत (स्वर्ग) और दोज़ख़ (नरक) हैं जिनके सामने आने का वादा सभी आसमानी किताबों में किया गया है और क़ुरआन में किया जा रहा है। ईश्वरीय वाक्य का अर्थ यह है कि ऊपरी लोक ही से यह फ़ैसला होता है कि तुममें से किसको क्या कुछ दुनिया में दिया जाए, और वहीं से वह फ़ैसला भी होना है कि तुम्हें पूछगछ और कर्मों का बदला देने के लिए कब बुलाया जाए।

क़सम है आसमान और ज़मीन के मालिक की, यह बात सत्य है, ऐसी ही विश्वसनीय जैसे तुम बोल रहे हो।

(24) ऐ नबी, इबराहीम के आदरणीय मेहमानों का क़िस्सा भी तुम्हें पहुँचा है? (25) जब वे उसके यहाँ आए तो कहा, आपको सलाम है। उसने कहा, "आप लोगों को भी सलाम है—कुछ अपरिचित-से लोग हैं।"[7] (26) फिर वह चुपके से अपने घरवालों के पास गया, और एक (भुना हुआ) मोटा-ताज़ा बछड़ा लाकर मेहमानों के सामने पेश किया। (27) उसने कहा, आप लोग खाते नहीं? (28) फिर वह अपने दिल में उनसे डरा। उन्होंने कहा, डरिए नहीं, और उसे एक ज्ञानवान लड़के के पैदा होने की ख़ुशख़बरी[8] दी। (29) यह सुनकर उसकी बीवी चिल्लाती हुई आगे बढ़ी और उसने अपना मुँह पीट लिया और कहने लगी, बूढ़ी, बाँझ![9] (30) उन्होंने कहा, "यही कुछ कहा है तेरे रब ने, वह तत्त्वदर्शी है और सब कुछ जानता है।" (31) इबराहीम ने कहा, "ऐ अल्लाह के भेजे हुए दूत, क्या मुहिम (अभियान) आपके सामने है?" (32) उन्होंने कहा, "हम एक अपराधी क़ौम की ओर भेजे गए हैं[10] (33) ताकि उसपर पकी हुई मिट्टी के पत्थर बरसा दें (34) जो आपके रब के यहाँ सीमा से गुज़र जानेवालों के लिए निशान लगे हुए हैं।"[11] (35)—फिर हमने[12] उन सब लोगों को निकाल लिया जो

7. संदर्भ को देखते हुए इस वाक्य के दो अर्थ हो सकते हैं। एक यह कि हज़रत इबराहीम (अलै०) ने ख़ुद उन मेहमानों से कहा कि आप सज्जनों के दर्शन का कभी पहले श्रेय प्राप्त नहीं हुआ, आप शायद इस भू-भाग में नए-नए आए हैं। दूसरे यह कि उनके सलाम का जवाब देकर हज़रत इबराहीम (अलै०) ने अपने दिल में कहा, या घर में अतिथि-सत्कार का प्रबन्ध करने के लिए जाते हुए अपने सेवकों से कहा कि ये कुछ अजनबी-से लोग हैं, पहले कभी इस क्षेत्र में इस शान और सज-धज के लोग देखने में नहीं आए।
8. सूरा 11 (हूद) में स्पष्ट किया गया है कि यह हज़रत इसहाक़ (अलै०) के जन्म की ख़ुशख़बरी थी।
9. अर्थात् एक तो मैं बूढ़ी, ऊमर से बाँझ। अब मेरे यहाँ बच्चा होगा? बाइबल का बयान है कि उस समय हज़रत इबराहीम (अलै०) की उम्र सौर वर्ष और हज़रत सारा की उम्र 90 वर्ष थी। (उत्पत्ति, 18:17)
10. मुराद है हज़रत लूत (अलै०) की क़ौम। उसके अपराध इतने बढ़ चुके थे कि सिर्फ़ "अपराधी क़ौम" का शब्द ही यह बताने के लिए काफ़ी था कि इससे मुराद कौन-सी-क़ौम है।

उस बस्ती में ईमानवाले थे, (36) और वहाँ हमने एक घर के सिवा मुसलमानों का कोई घर न पाया। (37) इसके बाद हमने वहाँ बस एक निशानी उन लोगों के लिए छोड दी जो दर्दनाक अज़ाब से डरते हों।[13]

(38) और (तुम्हारे लिए निशानी है) मूसा के क़िस्से में। जब हमने उसे स्पष्ट सनद के साथ फ़िरऔन के पास भेजा[14] (39) तो वह अपने बल-बूते पर अकड़ गया और बोला यह जादूगर है या दीवाना है। (40) आख़िरकार हमने उसे और उसकी सेनाओं को पकड़ा और सबको समुद्र में फेंक दिया और वह निन्दित होकर रह गया।

(41) और (तुम्हारे लिए निशानी है) आद में, जबकि हमने उनपर एक ऐसी अशुभ हवा भेज दी (42) कि जिस चीज़ पर भी वह गुज़र गई उसे ध्वस्त करके रख दिया।

(43) और (तुम्हारे लिए निशानी है) समूद में जब उनसे कहा गया था कि एक विशेष समय तक मज़े कर लो। (44) मगर इस चेतावनी पर भी उन्होंने अपने रब के आदेश की अवहेलना की। आख़िरकार उनके देखते-देखते एक अचानक टूट पड़नेवाले अज़ाब ने उनको आ लिया, (45) फिर न उनमें उठने की शक्ति थी और न वे अपना बचाव कर सकते थे।

(46) और इन सबसे पहले हमने नूह की क़ौम को तबाह किया क्योंकि वे अवज्ञाकारी लोग थे।

(47) आसमान को हमने अपने ज़ोर से बनाया है और हमें इसकी सामर्थ्य प्राप्त है।[15] (48) ज़मीन को हमने बिछाया है और हम बड़े अच्छे समतल करनेवाले हैं।

11. अर्थात् एक-एक पत्थर पर आपके रब की ओर से निशान लगा दिया गया है कि उसे किस अपराधी को कुचलना है।
12. बीच में यह क़िस्सा छोड़ दिया गया है कि हज़रत इबराहीम (अलै०) के पास से ये फ़रिश्ते किस तरह हज़रत लूत (अलै०) के यहाँ पहुँचे और वहाँ उनके और हज़रत लूत (अलै०) की क़ौम के बीच क्या कुछ घटित हुआ।
13. इस निशानी से मुराद मृत सागर है जिसका दक्षिणी भाग आज भी एक बड़ी तबाही के लक्षण पेश कर रहा है।
14. अर्थात् ऐसे स्पष्ट चमत्कार और ऐसे खुले-खुले लक्षणों के साथ भेजा जिनसे यह बात संदिग्ध न रही थी कि आप ज़मीन और आसमान के स्रष्टा की ओर से नियुक्त होकर आए हैं।

(49) और हर चीज़ के हमने जोड़े बनाए हैं।[16] शायद कि तुम इससे शिक्षा ग्रहण करो।[17] (50) अतः दौड़ो अल्लाह की ओर, मैं तुम्हारे लिए उसकी ओर से साफ़-साफ़ सावधान करनेवाला हूँ। और न बनाओ अल्लाह के साथ कोई दूसरा उपास्य, मैं तुम्हारे लिए उसकी ओर से साफ़-साफ़ सावधान करनेवाला हूँ।[18]

(52) यूँ ही होता रहा है, इनसे पहले की क़ौमों के पास भी कोई रसूल ऐसा नहीं आया जिसे उन्होंने यह न कहा हो कि यह जादूगर है या दीवाना। (53) क्या इन सबने आपस में इसपर कोई समझौता कर लिया है? नहीं, बल्कि ये सब सरकश लोग हैं।[19] (54) अतः ऐ नबी, इनसे मुँह फेर लो, तुमपर कुछ मलामत नहीं। (55) अलबत्ता नसीहत करते रहो, क्योंकि नसीहत ईमान लानेवालों के लिए लाभदायक है।

15. मूल शब्द हैं "व इन्ना लमूसिऊन"। 'मूसि'अ' का अर्थ शक्ति और सामर्थ्यवाला भी हो सकता है और विस्तृत करनेवाला भी। पहले अर्थ की दृष्टि से इस वाक्य का मतलब यह है कि यह आसमान हमने किसी की सहायता से नहीं बल्कि अपनी शक्ति से बनाया है और इसकी रचना हमारी सामर्थ्य की परिधि से बाहर न थी। फिर यह कल्पना तुम लोगों के मस्तिष्क में आख़िर कैसे आ गई कि हम तुम्हें दोबारा पैदा न कर सकेंगे? दूसरे अर्थ की दृष्टि से मतलब यह है कि इस विशाल ब्रह्माण्ड को हम बस एक बार बनाकर नहीं रह गए हैं बल्कि निरन्तर इसमें अभिवृद्धि कर रहे हैं और हर क्षण इसमें हमारे सृजन के नए-नए चमत्कार प्रकट हो रहे हैं। ऐसी बलवान स्रष्टा सत्ता को आख़िर तुमने दोबारा पैदा करने में असमर्थ कैसे समझ रखा है?
16. अर्थात् दुनिया की तमाम चीज़ें जोड़ा-जोड़ा होने के नियम पर बनाई गई हैं। जगत का यह सारा कारख़ाना इस नियम पर चल रहा है कि कुछ चीज़ों का कुछ चीज़ों से जोड़ लगता है और फिर उनका जोड़ लगने ही से तरह-तरह की तरक़्क़ियाँ वुजूद में आती हैं। यहाँ कोई चीज़ भी ऐसी एकाकी नहीं है कि दूसरी कोई चीज़ उसका जोड़ न हो, बल्कि हर चीज़ अपने जोड़े से मिलकर ही परिणामजनक होती है।
17. अर्थात् यह शिक्षा कि दुनिया का जोड़ आख़िरत (परलोक) है जिसके बिना दुनिया की यह ज़िन्दगी निरर्थक हो जाती है।
18. ये वाक्य यद्यपि अल्लाह ही के शब्द हैं मगर इनमें सम्बोधक अल्लाह नहीं बल्कि नबी (सल्ल०) हैं। मानो बात वास्तव में यूँ है कि अल्लाह अपने नबी की ज़बान से यह कहलवा रहा है कि दौड़ो अल्लाह की ओर, मैं तुम्हें उसकी ओर से सावधान करता हूँ।

(56) मैंने जिन्न और इनसानों को इसके सिवा किसी काम के लिए पैदा नहीं किया है कि वे मेरी बन्दगी करें।[20] (57) मैं उनसे कोई रोज़ी नहीं चाहता और न यह चाहता हूँ कि वे मुझे खिलाएँ। (58) अल्लाह तो ख़ुद ही रोज़ी देनेवाला है, बड़ी शक्तिवाला और ज़बरदस्त है। (59) अतः जिन लोगों ने ज़ुल्म किया है[21] उनके हिस्से का भी वैसा ही अज़ाब तैयार है जैसा उन्हीं जैसे लोगों को उनके हिस्से का मिल चुका है, उसके लिए ये लोग मुझसे जल्दी न मचाएँ। (60) अन्त में तबाही है कुफ़्र (इनकार) करनेवालों के लिए उस दिन जिससे उन्हें डराया जा रहा है।



19. अर्थात् हज़ारों वर्ष तक हर युग में विभिन्न देशों और क़ौमों के लोगों का नबियों के आमंत्रण के मुक़ाबले में एक ही नीति अपनाना कुछ इस कारण से तो न हो सकता था कि एक सम्मेलन करके उन सब अगली और पिछली नसलों ने आपस में यह निश्चय कर लिया हो कि जब कोई नबी आकर यह निमंत्रण दे तो इसका यह जवाब दिया जाए। वास्तव में उनकी नीति की इस समानता का कोई कारण इसके सिवा कुछ नहीं है कि सीमोल्लंघन और उद्दण्डता इन सबमें सामान्य रूप से पाया जानेवाला गुण है।
20. अर्थात् मैंने इनको दूसरों की बन्दगी के लिए नहीं बल्कि अपनी बन्दगी के लिए पैदा किया है। मेरी बन्दगी तो इनको इसलिए करनी चाहिए कि मैं इनका स्रष्टा हूँ। किसी दूसरे ने जब इनको पैदा नहीं किया है तो उसको क्या हक़ पहुँचता है कि ये उसकी बन्दगी करें, और इनके लिए यह कैसे जाइज़ हो सकता है कि इनका स्रष्टा तो मैं हूँ और ये बन्दगी करते फिरें दूसरों की।
21. ज़ुल्म से तात्पर्य यहाँ वास्तविकता और सत्यता पर ज़ुल्म करना, और ख़ुद अपनी प्रकृति पर ज़ुल्म करना है।

52. अत-तूर

नाम

पहले ही शब्द 'वत्तूर' (क़सम है तूर की) से उद्धृत है। यहाँ तूर पर्वत विशेष के लिए आया है जिसपर हज़रत मूसा (अलै॰) को पैग़म्बरी प्रदान की गई थी।

अवतरणकाल

विषय-वस्तुओं के आन्तरिक प्रमाणों से अनुमान होता है कि यह भी मक्का मुअज़्ज़मा के उसी कालखण्ड में अवतरित हुई है, जिनमें सूरा 51 (अज़-ज़ारियात) अवतरित हुई थी।

विषय और वार्ताएँ

आयत 1 से लेकर आयत 28 तक का विषय आख़िरत (परलोक) है। सूरा 51 (अज़-ज़ारियात) में इसकी संभावना, अनिवार्यता और इसके घटित होने के प्रमाण दिए जा चुके हैं इसलिए यहाँ इन्हें दुहराया नहीं गया है, अलबत्ता आख़िरत की गवाही देनेवाले कुछ तथ्यों और लक्षणों की क़सम खाकर पूरे ज़ोर के साथ यह कहा गया है कि वह निश्चय ही घटित होगर रहेगी। फिर यह बताया गया है कि जब वह आ पड़ेगी तो उसके झुठलानेवालों का परिणाम क्या होगा और उसे मानकर ईशपरायणता की नीति अपनानेवाले किस तरह अल्लाह के अनुग्रह और उसकी कृपाओं से सम्मानित होंगे। इसके बाद आयत 19 से अन्त तक में क़ुरैश के सरदारों की उस नीति की आलोचना की गई है जो वे अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के आह्वान के मुक़ाबले में अपनाए हुए थे। वे आपको कभी काहिन, कभी उन्मादग्रस्त और कभी कवि घोषित करते। वे आपपर इल्ज़ाम लगाते थे कि यह क़ुरआन आप स्वयं गढ़-गढ़कर ईश्वर के नाम से प्रस्तुत कर रहे हैं। वे बार-बार व्यंग्य करते थे कि ईश्वर को पैग़म्बरी के लिए मिले भी तो बस यह साहब मिले! वे आपके आह्वान और प्रचार व प्रसार पर अत्यन्त अप्रसन्नता और खिन्नता व्यक्त करते थे। वे आपस में बैठ-बैठकर सोचते थे कि आपके विरुद्ध क्या चाल ऐसी चली जाए जिससे आपका यह आह्वान समाप्त हो जाए। अल्लाह ने उनके नीति की आलोचना करते हुए निरन्तर कुछ प्रश्न किए हैं, जिनमें से हर प्रश्न या तो उनके किसी आक्षेप का उत्तर है या उनके किसी अज्ञान की समीक्षा। फिर कहा है कि इन हठधर्म लोगों को आपकी पैग़म्बरी स्वीकार करने के लिए कोई चमत्कार दिखाना बिलकुल व्यर्थ है। आयत 28 के बाद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह आदेश दिया गया है कि इन विरोधियों और शत्रुओं के आरोपों और आक्षेपों की परवाह किए बिना अपने आह्वान

और लोगों के चेताने का काम निरन्तर जारी रखें, और अन्त में भी आपको ताकीद की गई है कि धैर्य के साथ इन रुकावटों का मुक़ाबला किए चले जाएँ यहाँ तक कि अल्लाह का फ़ैसला आ जाए। इसके साथ आपको इस ओर सन्तुष्ट किया गया है कि आपके प्रभु ने आपको सत्य के शत्रुओं के मुक़ाबले में खड़ा करके अपने हाल पर छोड़ नहीं दिया है, बल्कि वह निरन्तर आपकी देख-रेख कर रहा है। जब तक उसके फ़ैसले की घड़ी आए, आप सब कुछ सहन करते रहे और अपने प्रभु की स्तुति और उसके महिमा-गान से वह शक्ति प्राप्त करते रहे जो ऐसी परिस्थितियों में अल्लाह का काम करने के लिए अपेक्षित होती है।



52. सूरा अत-तूर

(मक्का में उतरी–आयतें 49)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है तूर की, (2,3) और एक ऐसी स्पष्ट किताब की जो पतली खाल में लिखी हुई है, (4) और बसे हुए घर की, (5) और ऊँची छत की, (6) और तरंगित समुद्र की, (7,8) कि तेरे रब का अज़ाब ज़रूर घटित होनेवाला है जिसे कोई हटानेवाला नहीं।[1] (9,10) वह उस दिन घटित होगा जब आसमान बुरी तरह डगमगाएगा और पहाड़ उड़े-उड़े फिरेंगे। (11,12) तबाही है उस दिन उन झुठलानेवालों के लिए जो आज खेल के रूप में अपनी हुज्जत बाज़ियों में लगे हुए हैं। (13) जिस दिन उन्हें धक्के मार-मारकर जहन्नम की आग की ओर ले चला जाएगा (14) उस समय उनसे कहा जाएगा कि, ''यह वही आग है जिसे तुम झुठलाया करते थे। (15) अब बताओ, यह जादू है या तुम्हे सूझ नहीं रहा है? (16) जाओ अब झुलसो इसके अन्दर, तुम चाहे सब्र करो या न करो, तुम्हारे लिए बराबर है, तुम्हें वैसा ही बदला दिया जा रहा है जैसे तुम कर्म कर रहे थे।''

---

1. रब के अज़ाब से मुराद आख़िरत है, क्योंकि इनकार करनेवालों के लिए उसका आना अज़ाब ही है। उसके आने पर पाँच चीज़ों की क़सम खाई गई है, जिनसे उसका आना सिद्ध होता है : (1) तूर जहाँ एक पीड़ित क़ौम को उठाने और एक ज़ालिम क़ौम को गिराने का फ़ैसला किया गया। यह फ़ैसला इस बात को सिद्ध करता है कि ईश्वर की यह दुनिया अंधेर नगरी नहीं है। (2) पवित्र ग्रन्थ का संग्रह प्राचीन समय में एक पतली खाल पर लिखा जाता था, और वह इसपर गवाह है कि प्रत्येक युग में ख़ुदा की ओर से आनेवाले पैग़म्बरों ने आख़िरत के आने की सूचना दी है। (3) बसा हुआ घर अर्थात् काबा जो एक निर्जन भूमि में बनाया गया और फिर अल्लाह ने उसे ऐसी आबादी प्रदान की जो दुनिया में किसी घर को नहीं प्रदान की गई। यह इस बात की खुली निशानी है कि अल्लाह के पैग़म्बर हवाई बातें नहीं किया करते। हज़रत इबराहीम (अलै॰) ने जब उसको सुनसान पहाड़ों के बीच निर्मित करके हज के लिए पुकारा था उस समय कोई अनुमान भी नहीं कर सकता था कि हज़ारों वर्ष तक दुनिया उसकी ओर खिंची चली आएगी। (4) ऊँची छत अर्थात् आकाश और (5) तरंगित समुद्र। ये अल्लाह के चमत्कार की स्पष्ट निशानियाँ हैं और गवाही दे रही हैं कि इनका बनानेवाला आख़िरत घटित करने में असमर्थ नहीं हो सकता।

(17) डर रखनेवाले लोग वहाँ बाग़ों और नेमतों में होंगे, (18) आनन्द ले रहे होंगे उन चीज़ों से जो उनका रब उन्हें देगा, और उनका रब उन्हें दोज़ख़ के अज़ाब से बचा लेगा। (19) (उनसे कहा जाएगा) खाओ और पियो मज़े से अपने उन कर्मों के बदले में जो तुम करते रहे हो। (20) वे आमने-सामने बिछे हुए तख़्तों पर तकिए लगाए बैठे होंगे और हम सुन्दर आँखोंवाली हुरों (परम रूपवती औरतों) से उनका विवाह कर देंगे। (21) जो लोग ईमान लाए हैं और उनकी सन्तान भी ईमान के किसी दरजे में उनके पदचिह्नों पर चली है उनकी उस सन्तान को भी हम (जन्नत में) उनके साथ मिला देंगे और उनके कर्म में कोई घाटा उनको न देंगे। हर व्यक्ति अपनी कमाई के बदले रेहन है।[2] (22) हम उनको हर तरह के फल और मांस, जिस चीज़ को भी उनका जी चाहेगा, ख़ूब दिए चले जाएँगे। (23) वे एक दूसरे से मदिरा-पात्र लपक-लपककर ले रहे होंगे जिसमें न बकवास होगी न दुश्चरित्रता।[3] (24) और उनकी सेवा में वे लड़के दौड़ते फिर रहे होंगे जो उन्हीं (की सेवा) के लिए ख़ास होंगे, ऐस सुन्दर जैसे छुपाकर रखे हुए मोती। (25) ये लोग आपस में एक दूसरे से (दुनिया में गुज़रे हुए) हालात पूछेंगे। (26) वे कहेंगे कि हम पहले अपने घरवालों में डरते हुए जीवन-यापन करते थे,[4] (27) आख़िरकार अल्लाह ने हमपर अनुग्रह किया और हमें झुलसा देनेवाली हवा के अज़ाब से बचा लिया। (28) हम पिछली ज़िन्दगी मे उसी से दुआएँ माँगते थे, वह वास्तव में बड़ा ही उपकारी और दयावान है।

---

2. अर्थात् जिस तरह कोई व्यक्ति क़र्ज़ चुकाए बिना रेहन नहीं छुड़ा सकता उसी तरह कोई व्यक्ति कर्तव्य पूरा किए बिना अपने आपको अल्लाह की पकड़ से नहीं बचा सकता। सन्तान अगर ख़ुद नेक नहीं है तो बाप-दादा की नेकी उसका रेहन नहीं छुड़ा सकती।
3. अर्थात् वह मदिरा नशा पैदा करनेवाली न होगी कि उसे पीकर वे बदमस्त हों और बेहूदा बकवास करने लगें, या गाली-गलोज और धौल-धप्पे पर उतर आएँ, या उसी तरह के अश्लील कार्य करने लगे जैसे दुनिया की शराब पीनेवाले करते हैं।
4. अर्थात् हम वहाँ आनन्द में लीन और अपनी दुनिया में मग्न होकर ग़फ़लत की ज़िन्दगी नहीं गुज़ार रहे थे, बल्कि हर समय हमें यह धड़का लगा रहता था कि कहीं हमसे कोई ऐसा काम न हो जाए जिसपर अल्लाह के यहाँ हमारी पकड़ हो। यहाँ विशेष रूप से अपने घरवालों के बीच डरते हुए ज़िन्दगी बसर करने का उल्लेख इसलिए किया गया है कि आदमी सबसे ज़्यादा जिस वजह से गुनाहों में पड़ता है वह अपने बाल-बच्चों को सुख का भोग कराने और उनकी दुनिया बनाने की चिन्ता होती है।

(29) अतः ऐ नबी, तुम नसीहत किए जाओ, अपने रब के अनुग्रह से न तुम 'काहिन' हो और न दीवाने।[5]

(30) क्या ये लोग कहते हैं कि यह व्यक्ति शायर है जिसके लिए हम समय पलटने का इनतिज़ार कर रहे हैं? (31) इनसे कहो अच्छा, इनतिज़ार करो, मैं भी तुम्हारे साथ इनतिज़ार करता हूँ। (32) क्या इनकी बुद्धियाँ इन्हें ऐसी ही बातें करने के लिए कहती हैं? या वास्तव में ये दुश्मनी में सीमा से आगे बढ़े हुए लोग हैं?[6]

(33) क्या ये कहते हैं कि इस व्यक्ति ने यह क़ुरआन ख़ुद घड़ लिया है? वास्तविक बात यह है कि ये ईमान नहीं लाना चाहते। (34) अगर ये अपने इस कथन में सच्चे हैं तो इसी शान का एक कलाम (वाणी) बना लाएँ।

(35) क्या ये किसी स्रष्टा के बिना ख़ुद पैदा हो गए हैं? या ये ख़ुद अपने स्रष्टा हैं? (36) या ज़मीन और आसमानों को इन्होंने पैदा किया है? वास्तविक बात यह है कि ये विश्वास नहीं रखते।[7]

---

5. आख़िरत (परलोक) का चित्र प्रस्तुत करने के बाद अब भाषण का रुख़ मक्का के अधर्मियों की उन हठधर्मियों की ओर फिर रहा है जिनसे वे अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के आह्वान का मुक़ाबला कर रहे थे। इस आयत में सम्बोधन देखने में तो नबी (सल्ल०) की ओर है मगर वास्तव में आपके माध्यम से यह बात मक्का के अधर्मियों को सुनाना है।
6. इन संक्षिप्त वाक्यों में विरोधियों के सारे प्रोपगंडे की हवा निकाल दी गई है। तर्क का सारांश यह है कि यह क़ुरैश के सरदार और बड़े-बूढ़े बहुत बुद्धिमान बने फिरते हैं, मगर क्या इनकी बुद्धि यही कहती है कि जो व्यक्ति शायर नहीं है उसे शायर कहो, जिसे सारी क़ौम एक बुद्धिमान आदमी के रूप में जानती है उसे दीवाना कहो, और जिस व्यक्ति का काहिनों के कामों से कोई दूर का सम्बन्ध भी नहीं है उसे ज़बरदस्ती 'काहिन' ठहरा दो। फिर अगर बुद्धि ही के आधार पर ये लोग फ़ैसला करते तो कोई एक फ़ैसला करते, बहुत-से परस्पर विरोधी फ़ैसले तो एक साथ घोषित नहीं कर सकते थे। एक व्यक्ति आख़िर एक ही समय में शायर, दीवाना और काहिन कैसे हो सकता है।
7. अर्थात् ज़बान से स्वीकार करते है कि इनका और सारी दुनिया का स्रष्टा अल्लाह है मगर जब कहा जाता है कि फिर बन्दगी भी उसी अल्लाह की करो तो लड़ने को तैयार हो जाते हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि इन्हें अल्लाह पर विश्वास नहीं है।

(37) क्या तेरे रब के ख़ज़ाने इनके क़ब्ज़े में हैं? या उनपर इन्हीं का हुक्म चलता है?[8]

(38) क्या इनके पास कोई सीढ़ी है जिसपर चढ़कर ये ऊपरी लोक की सुनगुन लेते हैं? इनमें से जिसने सुनगुन ली हो वह लाए कोई स्पष्ट प्रमाण। (39) क्या अल्लाह के लिए तो हैं बेटियाँ और तुम लोगों के लिए हैं बेटे?[9]

(40) क्या तुम इनसे कोई बदला माँगते हो कि ये ज़बरदस्ती पड़े हुए तावान के बोझ तले दबे जाते हैं?

(41) क्या इनके पास ग़ैब (परोक्ष) की वास्तविकताओं का ज्ञान है कि उसके आधार पर ये लिख रहे हों?[10]

---

8. यह मक्का के अधर्मियों की उस आपत्ति का जवाब है कि आख़िर अब्दुल्लाह के बेटे मुहम्मद (सल्ल०) ही क्यों रसूल बनाएगए। इस जवाब का अर्थ यह है कि इन लोगों को गुमराही से निकालने के लिए बहरहाल किसी न किसी को तो रसूल नियुक्त किया जाना ही था। अब सवाल यह है कि यह फ़ैसला करना किसका काम है कि अल्लाह अपना रसूल किसको बनाए और किसको न बनाए? अगर ये लोग ख़ुदा के बनाए हुए रसूल को मानने से इनकार करते हैं तो इसके अर्थ ये हैं कि या तो ख़ुदा की ख़ुदाई का मालिक ये अपने आपको समझ बैठे हैं, या फिर इनकी भावना यह है कि अपनी ख़ुदाई का मालिक तो अल्लाह ही हो, मगर उसमें आदेश इनका चले।
9. अर्थात् अगर तुम्हें रसूल की बात मानने से इनकार है तो तुम्हारे पास ख़ुद सत्य को जानने का आख़िर साधन क्या है? क्या तुममें से कोई व्यक्ति ऊपरी लोक में पहुँचा है और अल्लाह और उसके फ़रिश्तों से उसने प्रत्यक्ष यह मालूम कर लिया है कि वे धारणाएँ बिलकुल सत्यानुकूल है जिनपर तुम लोग अपने धर्म की आदारशिला रखे हुए हो? यह दावा अगर तुम नहीं रखते तो फिर ख़ुद ही विचार करो कि इससे ज़्यादा उपहासजनक धारणा और क्या हो सकती है कि तुम विश्व के पालनकर्ता अल्लाह के लिए औलाद ठहराते हो, और औलाद भी लड़कियाँ जिन्हें तुम ख़ुद अपने लिए लज्जाजनक समझते हो।
10. अर्थात् क्या ये लोग यह लिखकर दे सकते हैं कि परोक्ष (ग़ैब) की वास्तविकताओं के सम्बन्ध में रसूल के बयानों को ये इस आधार पर झुठला रहे हैं कि परोक्ष के परदे के पीछे झाँककर इन्होंने देख लिया है कि सत्य वह नहीं है जो रसूल बयान कर रहा है?

(42) क्या ये कोई चाल चलना चाहते हैं? अगर यह बात है तो इनकार करनेवालों पर उनकी चाल उलटी ही पड़ेगी।

(43) क्या अल्लाह के सिवा ये कोई और पूज्य रखते हैं? अल्लाह पाक है उस 'शिर्क' से जो ये लोग कर रहे हैं।

(44) ये लोग आसमान के टुकड़े भी गिरते हुए देख लें तो कहेंगे ये बादल हैं जो उमड़े चले आ रहे हैं। (45) अतः ऐ नबी, इन्हें इनके हाल पर छोड़ दो यहाँ तक कि ये अपने उस दिन को पहुँच जाएँ जिसमें ये मार गिराए जाएँगे, (46) जिस दिन न इनकी अपनी कोई चाल इनके किसी काम आएगी कोई इनकी सहायता को आएगा। (47) और उस समय के आने से पहले भी ज़ालिमों के लिए एक अज़ाब है, मगर उनमें से ज़्यादातर जानते नहीं हैं।

(48) ऐ नबी, अपने रब का फ़ैसला आने तक सब्र करो, तुम हमारी निगाह में हो। तुम जब उठो तो अपने रब की प्रशंसा के साथ उसकी तसबीह करो,[11] (49) रात को भी उसकी तसबीह किया करो और सितारे जब पलटते हैं उस समय भी।[12]

●●●

11. अर्थात् जब तुम नमाज़ के लिए खड़े हो तो अल्लाह की स्तुति और 'तसबीह' से उसका शुभारंभ करो। इसी आदेश के अनुपालन में अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने यह हुक्म दिया कि नमाज़ का आरंभ 'तकबीर तहरीमा' (अल्लाहु अकबर) के बाद इन शब्दों से किया जाए : ''सुबहा-न-क अल्लाहुम-म व बिहम्दि-क व तबा-र-कस्मु-क व तआला जद्दु-क व ला इला-ह ग़ैरुक।''

12. इसका तात्पर्य फ़ज्र की नमाज़ का समय है।

53. अन-नज्म

नाम

पहले ही शब्द 'वन-नज्म' (क़सम है तारे की) से उद्धृत है और केवल चिह्न के रूप में इसे इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से उल्लिखित है कि ''पहली सूरा जिसमें सजदा की आयत अवतरित हुई अन-नज्म है। और यह भी कि यह क़ुरआन मजीद की वह पहली सूरा है जिसे अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने क़ुरैश के एक जन समूह में (और इब्ने मरदोया के उल्लेख के अनुसार हरम में) सुनाया था। जन समूह में काफ़िर और ईमानवाले सब मौजूद थे। अन्त में जब आपने सजदा की आयत पढ़कर सजदा किया तो सभी उपस्थित लोग आपके साथ सजदे मे गिर गए और बहुदेववादियों के वे बड़े-बड़े सरदार तक जो विरोध में आगे-आगे थे, सजदा किए बिना न रह सके। इब्ने सॉद का बयान है कि इससे पहले रजब सन् 5 नबवी में सहाबा की एक छोटी-सी जमाअत हबशा की ओर हिजरत कर चुकी थी। फिर जब उसी वर्ष रमज़ान में यह घटना घटी तो हबशा के मुहाजिरों तक यह क़िस्सा इस रूप में पहुँचा कि मक्का के काफ़िर मुसलमान हो गए हैं। इस ख़बर को सुनकर उनमें से कुछ लोग शव्वाल सन् 5 नबवी में मक्का वापस आ गए। मगर यहाँ आकर मामूल हुआ कि ज़ुल्म की चक्की उसी तरह चल रही है जिस तरह पहले चल रही थी। अन्ततः हबशा की दूसरी हिजरत घटित हुई जिसमें पहली हिजरत से भी अधिक लोग मक्का छोड़कर चले गए। इस तरह यह बात लगभग निश्चयात्मक रूप से मालूम हो जाती है कि यह सूरा रमज़ान सन् 5 हिजरी में अवतरित हुई है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

अवतरणकाल के इस विस्तार से मालूम हो जाता है कि वे परिस्थितियाँ क्या थीं, जिनमें यह सूरा अवतरित हुई। (मक्का के काफ़िरों की निरन्तर यह कोशिश रहती थी कि) ईश्वरीय वाणी को न स्वयं सुनें न किसी को सुनने दें, और उसके विरुद्ध तरह-तरह की भ्रामक बातें फैलाकर केवल अपने झूठे परोपगंडे के बल पर आपके आह्वान को दबा दें। इन्हीं परिस्थितियों में एक दिन पवित्र हरम में जब यह घटना घटी कि नबी (सल्ल०) के मुख से इस सूरा नज्म को सुनकर आपके साथ क़ुरैश के काफ़िर भी सजदे में गिर गए, तो बाद में उन्हें बड़ी परेशानी हुई कि यह हमसे क्या कमज़ोरी ज़ाहिर हुई। और लोगों ने भी इसके कारण उनपर चोट करना शुरू कर दी कि दूसरों को तो इस

वाणी को सुनने से रोकते थे, आज स्वयं उसे न केवल यह कि कान लगाकर सुना, बल्कि मुहम्मद (सल्ल॰) के साथ सजदा भी कर गुज़रे। आख़िरकार उन्होंने यह बात बनाकर अपना पीछा छुड़ाया कि साहब, हमारे कानों ने तो ''अब तनिक बताओ, तुमने कभी इस 'लात' और इस 'उज़्ज़ा' और तीसरी एक देवी 'मनात' की वास्तविकता पर कुछ विचार भी किया है?'' के पश्चात् मुहम्मद के मुख से ये शब्द सुने थे, ''ये उच्चकोटि की देवियाँ हैं और इनकी सिफ़ारिश की अवश्य आशा की जा सकती है।'' इसलिए हमने समझा कि मुहम्मद हमारे तरीक़े पर वापस आ गए हैं। हालाँकि कोई पागल आदमी ही यह सोच सकता था, कि इस पूरी सूरा के सन्दर्भ में उन वाक्यों की भी कोई जगह हो सकती है, जो उनका दावा था कि उनके कानों ने सुनी हैं।

विषय और वार्ता

अभिभाषण का विषय मक्का के काफ़िरों को उस नीति की ग़लती पर सावधान करना है जो वे क़ुरआन और मुहम्मद (सल्ल॰) के सिलसिले में अपनाए हुए थे। वार्ता का आरम्भ इस तरह किया गया है कि मुहम्मद (सल्ल॰) बहके और भटके हुए आदमी नहीं हैं, जैसा कि तुम उनके विषय में प्रचार करते फिर रहे हो, और न इस्लाम की यह शिक्षा और आमंत्रण उन्होंने स्वयं अपने मन में गढ़ लिया है, जैसा कि तुम अपनी दृष्टि में समझे बैठे हो। बल्कि जो कुछ वे प्रस्तुत कर रहे हैं वह विशुद्ध प्रकाशना है, जो उनपर अवतरित की जाती है। जिन सच्चाइयों को तुम्हारे सामने बयान करते हैं वे उनकी कल्पना और अटकल की उपज नहीं है, बल्कि उनकी आँखों देखी सच्चाइयाँ हैं। इसके बाद क्रमशः तीन विषय लिए गए हैं :

प्रथम, सुननेवालों को समझाया गया है कि जिस धर्म का तुम अनुसरण कर रहे हो उसका आधार केवल अटकल और मनमानी कल्पनाओं पर स्थिर है। तुमने जिन धारणाओं को अपना रखा है, उनमें से कोई धारणा भी किसी ज्ञान और प्रमाण पर आधारित नहीं है, बल्कि कुछ इच्छाएँ हैं जिनके लिए तुम कतिपय अन्धविश्वास को यथार्थ समझ बैठे हो। यह एक बहुत बड़ी बुनियादी ग़लती है जिसमें तुम लोग पड़े हुए हो। इस ग़लती में तुम्हारे पड़ने का वास्तविक कारण यह है कि तुम्हें परलोक की कोई चिन्ता नहीं है। बस, संसार ही तुम्हारा अभीष्ट बना हुआ है। इसलिए तुम्हें सत्य के ज्ञान की कोई चाह नहीं है। द्वितीय, लोगों को यह बताया गया है कि अल्लाह ही सम्पूर्ण जगत् का मालिक और सर्वाधिकारी है। सीधी राह पर वह है जो उसके रास्ते पर हो और गुराह वह है जो उसकी राह से हटा हुआ हो। हरेक के कर्म को वह जानता है और उसके यहाँ अवश्य ही बुराई का बदला बुरा और भलाई का बदला भला मिलकर रहना है। तृतीय,

सत्यधर्म की उन कुछ आधारभूत चीज़ों को लोगों के सामने प्रस्तुत किया गया है जो क़ुरआन मजीद के अवतरण से सैकड़ों वर्ष पूर्व हज़रत इबराहीम (अलै॰) और हज़रत मूसा (अलै॰) पर अवतरित धर्मग्रंथों में बयान हो चुकी थीं, ताकि उनको मालूम हो जाए कि ये वे आधारभूत सच्चाइयाँ हैं जो हमेशा से अल्लाह के नबी बयान करते चले आए हैं। इन वार्ताओं के पश्चात् अभिभाषण को इस बात पर समाप्त किया गया है कि फ़ैसले कि घड़ी निकट आ लगी है, जिसे कोई टालनेवाला नहीं है। उस घड़ी के आने से पहले मुहम्मद (सल्ल॰) और क़ुरआन के द्वारा तुम लोगों को उसी तरह सावधान किया जा रहा है, जिस तरह पहले लोगों को सावधान किया गया था। अब क्या यही वह बात है जो तुम्हें अनोखी लगी है? जिसकी तुम हँसी उड़ाते हो?

53. सूरा अन-नज्म

(मक्का में उतरी–आयतें 62)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है तारे की जबकि वह डूबा,[1] (2) तुम्हारा साथी न भटका है, न बहका है।[2] (3) वह अपने मन की इच्छा से नहीं बोलता, (4) यह तो एक प्रकाशना है जो उसपर उतारी जाती है। (5) उसे बड़ी शक्तिवाले ने शिक्षा दी है (6,7) जो बड़ा हिकमतवाला है।[3] वह सामने आ खड़ा हुआ जब कि वह ऊपरी क्षितिज पर था,[4] (8) फिर क़रीब आया और ऊपर रुक गया, (9) यहाँ तक कि दो कमानों के बराबर या उससे कुछ कम दूरी रह गई।[5] (10) तब उसने अल्लाह के बन्दे को प्रकाशना (वह्य) पहुँचाई जो प्रकाशना भी उसे पहुँचानी थी। (11) निगाह ने जो कुछ देखा, दिल ने उसमें झूठ न मिलाया।[6] (12) अब क्या तुम उस चीज़ पर उससे झगड़ते हो जिसे वह आँखों से देखता है?

1, अर्थात् जब आख़िरी तारा डूबकर सुबह का उजाला प्रकट हुआ।
2. साथी से मुराद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हैं क्योंकि आप मक्का के इनकारियों के लिए कोई अजनबी न थे बल्कि उन्हीं के बीच पैदा हुए और बच्चे से जवान हुए और जवानी से अधेड़ उम्र को पहुँचे। मतलब यह है कि नबी (सल्ल॰) तुम्हारे जाने-पहचाने आदमी हैं। यह बात सुबह के उजाले की तरह स्पष्ट् है कि वे बहके और भटके हुए आदमी नहीं हैं।
3. इससे मुराद अल्लाह नहीं है बल्कि जिबरील (अलै॰) है जैसा कि आगे के बयान से अपने-आप स्पष्ट हो रहा है।
4. क्षितिज से मुराद है आसमान का वह पूरब का किनारा जहाँ से सूरज उदय होता है और दिन का प्रकाश फैलता है। मुराद यह है कि पहली बार जिबरी (अलै॰) जब नबी (सल्ल॰) को दिखाई दिए उस समय वे आसमान के पूरबी किनारे से प्रकट हुए थे।
5. अर्थात् आसमान के ऊपरी पूरबी किनारे से प्रकट होने के बाद जिबरील (अलै॰) ने नबी (सल्ल॰) की ओर आगे बढ़ना शुरू किया यहाँ तक कि बढ़ते-बढ़ते वे आपके ऊपर आकर वायुमण्डल में थम गए, फिर वे आपकी ओर झुके और इतना क़रीब हो गए कि आपके और उनके बीच सिर्फ़ दो कमानों के बराबर, या कुछ कम दूरी रह गई। चूँकि सारी कमानें एक समान नहीं होतीं, इसलिए दूरी का अन्दाज़ा बताने के लिए कहा कि दो कमानों के बराबर या कुछ कम दूरी रह गई।

(13,14) और एक बार फिर उसने 'सिद्रतुल मुन्तहा'[7] (परली सीमा पर बेर) के पास उसको उतरते देखा (15) जहाँ पास ही जन्नतुल मावा (ठिकानेवाली जन्नत) है। (16) उस समय उस बेर पर छा रहा था जो कुछ छा रहा था। (17) निगाह न चुंधियाई न सीमा का अतिक्रमण किया, (18) और उसने अपने रब की बड़ी-बड़ी निशानियाँ देखीं।[8]

(19,20) अब तनिक बताओ, तुमने कभी इस 'लात' और इस 'उज़्ज़ा', और तीसरी एक देवी 'मनात' की वास्तविकता पर कुछ विचार भी किया है?[9] (21) क्या बेटे

6. अर्थात् यह अवलोकन जो दिन के प्रकाश में और पूरी तरह जागने की हालत में खुली आँखों से मुहम्मद (सल्ल॰) को हुआ इसपर उनके दिल ने यह नहीं कहा कि यह नज़र का धोखा है, या यह कोई जिन्न या शैतान है जो मुझे दिखाई दे रहा है, या मेरे सामने कोई ख़याली रूप आ गया है और मैं जागते में कोई ख़्वाब देख रहा हूँ। बल्कि उनके दिन ने ठीक-ठीक वही कुछ समझा जो उनकी आँखें देख रही थीं। उन्हें इस बारे में कोई शक नहीं हुआ कि वास्तव में ये जिबरील (अलै॰) हैं और जो सन्देश ये पहुँचा रहे हैं वह वास्तव में अल्लाह की ओर से 'वह्य' (प्रकाशना) है।
7. 'सिदरह' अरबी भाषा में बेरी या बेर के पेड़ को कहते हैं और 'मुन्तहा' का अर्थ है अन्तिम सिरा। 'सिद्रतुल मुन्तहा' का शाब्दिक अर्थ है ''वह बेरी का पेड़ जो अन्तिम या आत्यन्तिक सिरे पर स्थित है।'' हमारे लिए यह जानना कठिन है कि इस भौतिक जगत की आख़िरी सरहद पर वह बेरी का पेड़ कैसा है और उसका वास्तविक आकार-प्रकार और हाल क्या है। ये ईश्वरीय जगत के वे गूढ़ रहस्य हैं जिन तक हमारी बुद्धि की पहुँच नहीं है। बहरहाल वह कोई ऐसी ही चीज़ है जिसके लिए इनसानी भाषा के शब्दों में 'सिदरह' से ज़्यादा उपयुक्त शब्द अल्लाह के नज़दीक और कोई न था।
8. यह आयत इस बात को स्पष्ट करती है कि नबी (सल्ल॰) ने अल्लाह को नहीं बल्कि उसकी बड़ी शानवाली निशानियों को देखा था। और चूँकि संदर्भ की दृष्टि से यह दूसरी भेंट भी उसी हस्ती से हुई थी जिससे पहली भेंट हुई, इसलिए अनिवार्य रूप में यह मानना पड़ेगा कि ऊपरी क्षितिज पर जिसको आपने पहली बार देखा था वह भी अल्लाह न था, और दूसरी बार 'सिद्रतुल मुन्तहा' के पास जिसको देखा वह भी अल्लाह न था। अगर आपने इन स्थितियों में से किसी स्थिती में परम तेजमय अल्लाह को देखा होता तो य इतनी बड़ी बात थी कि यहाँ ज़रूर उसे स्पष्ट कर दिया जाता।

तुम्हारे लिए हैं और बेटियाँ अल्लाह के लिए?[10] (22) यह तो फिर बड़ी धाँधली का बँटवारा हुआ! (23) वास्तव में ये कुछ नहीं हैं मगर बस कुछ नाम जो तुमने और तुम्हारे बाप-दादा ने रख लिए हैं। अल्लाह ने इनके लिए कोई सनद नहीं उतारी। वास्तविकता यह है कि लोग सिर्फ़ अटकल के पीछे चले रहे हैं और मन की इच्छाओं के भक्त बने हुए हैं। हालाँकि उनके रब की ओर से उनके पास मार्गदर्शन आ चुका है। (24) क्या इनसान जो कुछ चाहे उसके लिए वही हक़ है?[11] (25) दुनिया और आख़िरत का मालिक तो अल्लाह ही है।

(26) आसमानों में कितने ही फ़रिश्ते मौजूद हैं, उनकी सिफ़ारिश कुछ भी काम नहीं आ सकती जब तक कि अल्लाह किसी ऐसे व्यक्ति के हक़ में उसकी अनुमति न दे जिसके लिए वह कोई निवेदन सुनना चाहे और उसको पसन्द करे। (27) मगर जो लोग आख़िरत को नहीं मानते वे फ़रिश्तों को देवियों की संज्ञा देते हैं, (28) हालाँकि इस मामले का कोई ज्ञान उन्हें प्राप्त नहीं है, वे सिर्फ़ अटकल के पीछे चल रहे हैं, और अटकल सत्य की जगह कुछ भी काम नहीं दे सकती।

(29) अतः ऐ नबी, जो व्यक्ति हमारे ज़िक्र से मुँह फेरता है, और दुनिया की ज़िन्दगी के सिवा जिसे कुछ अभीष्ट नहीं है, उसे उसके हाल पर छोड़ दो[12]—(30) इन

9. मतलब यह है कि जो शिक्षा मुहम्मद (सल्ल॰) तुमको दे रहे हैं उसको तो तुम लोग गुमराही और पथभ्रष्टता ठहराते हो, हालाँकि यह ज्ञान उनको अल्लाह की ओर से दिया जा रहा है और अल्लाह उनको आँखों से वे वास्तविकताएँ दिखा चुका है जिनकी गवाही वे तुम्हारे सामने दे रहे हैं। अब तनिक तुम ख़ुद देखो कि जिन धारणाओं के अनुपालन पर तुम आग्रह किए जा रहे हो वे कितनी बुद्धि के प्रतिकूल हैं, और उनके मुकाबले में जो व्यक्ति तुम्हें सीधा मार्ग बता रहा है उसका विरोध करके आख़िर तुम किसको हानि पहुँचा रहे हो।
10. अर्थात् इन देवियों को तुमने सारे जहान के रब अल्लाह की बेटियाँ ठहरा लिया और यह अशिष्ट धारणा ईजाद करते हुए तुमने यह भी न सोचा कि अपने लिए तो तुम बेटी के पैदा होने को अपमान समझते हो और चाहते हो कि तुम्हें बेटा मिले, मगर अल्लाह के लिए तुम औलाद भी ठहराते हो तो बेटियाँ!
11. इस आयत का दूसरा अर्थ यह भी लिया जा सकता है कि क्या इनसान को यह अधिकार है कि जिसको चाहे पूज्य बना ले? और एक तीसरा अर्थ यह भी लिया जा सकता है कि क्या इनसान इन पूज्यों से अपनी मुरादें पा लेने की जो कामना करता है वह कभी पूरी हो सकती है?

लोगों के ज्ञान की पहुँच बस यहीं तक है, यह बात तेरा रब ही ज़्यादा जानता है कि उसके मार्ग से कौन भटक गया है और कौन सीधे मार्ग पर है, (31) और ज़मीन और आसमानों की हर चीज़ का मालिक अल्लाहही है—ताकि[13] अल्लाह बुराई करनेवालों को उनके कर्म का बदला दे और उन लोगों को अच्छा प्रतिदान प्रदान करे जिन्होंने अच्छी नीति अपनाई है, (32) जो बड़े-बड़े गुनाहों और खुले-खुले अश्लील कर्मों से बचते हैं, यह और बात है कि कुछ कुसूर उनसे हो जाए। बेशक तेरे रब की माफ़ी का दामन बहुत विस्तृत है। वह तुम्हें उस समय से ख़ूब जानता है जब उसने ज़मीन से तुम्हें पैदा किया और जब तुम अपनी माओं के पेटों में अभी भ्रूण अवस्था ही में थे। अतः अपने मन की पवित्रता के दावे न करो, वही अच्छी तरह जानता है कि वास्तव में डर रखनेवाला कौन है।

(33,34) फिर ऐ नबी, तुमने उस व्यक्ति को भी देखा जो अल्लाह के मार्ग से फिर गया और थोड़ा-सा देकर रुक गया?[14] (35) क्या उसके पास परोक्ष का ज्ञान है कि वह वास्तविकता को देख रहा है? (36,37) क्या उसे उन बातों की कोई ख़बर नहीं पहुँची जो मूसा की पुस्तिकाओं और उस इबराहीम की पुस्तिकाओं में बयान हुई हैं जिसने वफ़ा का हक़ अदा कर दिया?[15] (38) ''वह कि कोई बोझ उठानेवाला दूसरे का

12. यह संविष्ट वाक्य है, जो वार्ता-क्रम को बीच में तोड़कर पिछली बत के स्पष्टीकरण के रूप में वर्णन किया गया है।
13. यहाँ से फिर वही वार्ता-क्रम शुरू हो जाता है जो ऊपर से चला आ रहा था। मानो संविष्ट वाक्य को छोड़कर वार्ता-क्रम यूँ है : ''उसे उसके हाल पर छोड़ दो ताकि अल्लाह बुराई करनेवालों को उनके कर्म का बदला दे।''
14. इशारा है वलीद बिन मुग़ीरह की ओर जो क़ुरैश के बड़े सरदारों में से एक था। यह व्यक्ति पहले नबी (सल्ल॰) का आमंत्रण स्वीकार करने पर तैयार हो गया था, मगर जब उसके एक मुशरिक (बहुदेववादी) दोस्त को मालूम हुआ कि वह मुसलमान होने का इरादा कर रहा है तो उसने कहा कि तुम पैतृक धर्म को न छोड़ो, अगर तुम्हें आख़िरत के अज़ाब का ख़तरा है तो मुझे इतना धन दे दो, मैं ज़िम्मा लेता हूँ कि तुम्हारे बदले वहाँ का अज़ाब मैं भुगत लूँगा। वलीद ने यह बात मान ली और अल्लाह के मार्ग पर आते-आते उससे फिर गया, मगर जो धन उसने अपने मुशरिक दोस्त को देना तय किया था वह भी बस थोड़ा-सा दिया और बाक़ी रोक लिया।
15. आगे उन शिक्षाओं का सारांश बयान किया जा रहा है जो हज़रत मूसा (अलै॰) और हज़रत इबराहीम (अलै॰) की किताबों में अवतरित हुई थीं।

बोझ नहीं उठाएगा,[16] (39) और यह कि इनसान के लिए कुछ नहीं है मगर वह जिसके लिए उसने प्रयास किया है,[17] (40) और यह कि उसका प्रयास जल्द ही देखा जाएगा (41) फिर उसका पूरा बदला उसे दे दिया जाएगा (42) और यह कि आख़िरकार पहुँचना तेरे रब ही के पास है, (43) और यह कि उसी ने हँसाया और उसी ने रुलाया,[18] (44) और यह कि उसी ने मौत दी और उसी ने ज़िन्दगी प्रदान की, (45) और यह कि उसी ने नर और मादा का जोड़ा पैदा किया (46) एक बूंद से जब वह टपकाई जाती है, (47) और यह कि दूसरी ज़िन्दगी प्रदान करना भी उसी के ज़िम्मे है (48) और यह कि उसी ने धनी किया और संपत्ति प्रदान की, (49) और यह कि वही शिअरा (नामक तारे) का रब है,[19] (50) और यह कि उसी ने प्राचीन आद को तबाह किया, (51) और समूद को ऐसा मिटाया कि उनमें से किसी को बाक़ी न छोड़ा, (52) और उनसे पहले नूह की क़ौम को तबाह किया क्योंकि वे थे ही बड़े ज़ालिम और उद्दण्ड लोग, (53) और औंधी गिरनेवाली बस्तियों को उठा फेंका, (54) फिर छा दिया उनपर वह कुछ जो (तुम जानते ही हो कि) क्या छा दिया।[20] (55) अतः ऐ इनसान,

16. अर्थात् हर व्यक्ति ख़ुद अपने कर्म का ज़िम्मेदार है। एक व्यक्ति की ज़िम्मेदारी दूसरे पर नहीं डाली जा सकती। कोई व्यक्ति अगर चाहे भी तो किसी दूसरे व्यक्ति के कर्म की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर नहीं ले सकता, न वास्तविक अपराधी को इस आधार पर छोड़ा जा सकता है की उसकी जगह सज़ा भुगतने के लिए कोई और आदमी अपने-आप को पेश कर रहा है।
17. अर्थात् हर व्यक्ति जो कुछ भी पाएगा अपने कर्म का फल पाएगा। एक व्यक्ति के कर्म का फल दूसरे को नहीं मिल सकता। और कोई व्यक्ति प्रयास एवं कर्म के बिना कुछ नहीं पा सकता।
18. अर्थात् ख़ुशी और ग़म दोनों के उपक्रम उसी की ओर से हैं। अच्छे और बुरे भाग्य की डोर उसी के हाथ में है। कोई दूसरी सत्ता इस विश्व में ऐसी नहीं है जिसका तक़दीर के बनाने और बिगाड़ने में किसी तरह का हाथ हो।
19. 'शिअरा' आसमान का अत्यन्त प्रकाशमान तारा है। मिस्र और अरब के लोगों की यह धारणा थी कि इस तारे का इनसानों के भाग्य पर प्रभाव पड़ता है। इसी कारण यह उनके उपास्यों में सम्मिलित था।
20. औंधी गिरनेवाली बस्तियों से मुराद लूत की क़ौम की बस्तियाँ हैं। और ''छा दिया उनपर जो कुछ छा दिया'' से मुराद संभवतः मृत सागर (Dead Sea) का पानी है जो उनकी बस्तियों के ज़मीन में धँस जाने के बाद उनपर फैल गया था और आज तक वह इस इलाक़े पर छाया हुआ है।

अपने रब की किन-किन नेमतों में तू शक करेगा?''

(56) यह एक चेतावनी है पहले आई हुई चेतावनियों में से। (57) आनेवाली घड़ी क़रीब आ लगी है, (58) अल्लाह के सिवा कोई उसको हटानेवाला नहीं। (59) अब क्या यही वे बातें हैं जिनपर तुम आश्चर्य प्रकट करते हो? (60) हँसते हो और रोते नहीं हो? (61) और गा-बजाकर उन्हें टालते हो? (62) झुक जाओ अल्लाह के आगे और बन्दगी करो।



54. अल-क़मर

नाम

पहली ही आयत के वाक्य ''और चाँद (क़मर) फट गया'' से उद्धृत है। मतलब यह है कि वह सूरा जिसमें अल-क़मर शब्द आया है।

अवतरणकाल

इसमें चाँद के फटने की धारणा का उल्लेख हुआ है, जिससे इसका अवतरणकाल निश्चित हो जाता है। हदीस के ज्ञाता और क़ुरआन के टीकाकार इसपर सहमत हैं कि यह घटना हिजरत के लगभग पाँच वर्ष पूर्व मक्का मुअज़्ज़मा में मिना के स्थान पर घटित हुई थी।

विषय और वार्ता

इसमें मक्का के काफ़िरों को उस हठधर्मी पर चेतावनी दी गई है जो उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के आह्वान के मुक़ाबले में अपना रखी थी। चाँद के फटने की आश्चर्यजनक घटना इस बात का स्पष्ट प्रमाण थी कि जगत् की व्यवस्था अनादिकालिक और शाश्वत और अनश्वर नहीं है। वह छिन्न-भिन्न हो सकती है। बड़े-बड़े नक्षत्र और तारे फट सकते हैं और वह सब कुछ हो सकता है जिसका चित्रण क़ियामत के विस्तृत वर्णन में क़ुरआन ने किया है। यही नहीं, बल्कि यह इस बात का भी पता दे रहा था कि जगत्-व्यवस्था के टूट-फूट का आरम्भ हो गया है और वह समय निकट है जब क़ियामत घटित होगी। मगर काफ़िरों ने इसे जादू का चमत्कार घोषित किया और अपने इनकार पर दृढ रहे। इसी हठधर्मी पर इस सूरा में उनकी निन्दा की गई है। वार्ता का आरम्भ करते हुए कहा गया है कि ये लोग न समझाने से मानते हैं, न इतिहास से शिक्षा ग्रहण करते हैं और न आँखो से खुली निशानियाँ देखकर ईमान लाते हैं। अब ये उसी समय मानेंगे जब क़ियामत वास्तव में घटित हो जाएगी। इसके बाद उनके सामने नूह (अलै॰) की जाति, आद, समूद, लूत (अलै॰) की क़ौम और फ़िरऔनियों का वृत्तान्त संक्षिप्त शब्दों में वर्णित करके बताया गया है कि ईश्वर के भेजे हुए पैग़म्बरों की चेतावनियों को झुठलाकर इन जातियों को किस पीड़ाजनक यातना का सामना करना पड़ा और एक-एक जाति का वृत्तान्त प्रस्तुत करने के बाद बार-बार यह बात दोहराई गई है कि यह क़ुरआन शिक्षा का सहज आधार है जिससे यदि कोई जाति शिक्षा ग्रहण करके सीधे मार्ग पर आ जाए तो उन यातनाओं की नौबत नहीं आ सकती जिनमें वे जातियाँ ग्रस्त हुई। इसके बाद मक्का के काफ़िरों को सम्बोधित करके कहा गया है कि जिस नीति

पर दूसरी जातियाँ दण्डित हो चुकी हैं, वही नीति यदि तुम अपनाओगे तो आख़िर तुम दण्ड क्यों नहीं पाओगे? और यदि तुम अपने जत्थे परफूले हुए हो तो शीघ्र ही तुम्हारा यह जत्था पराजित होकर भागता दिखाई देगा और इससे अधिक कठोर मामला तुम्हारे साथ क़ियामत के दिन होगा। अन्त में काफ़िरों को यह बताया गया है कि सर्वोच्च अल्लाह को क़ियामत लाने के लिए किसी बड़ी तैयारी की आवश्यकता नहीं है। उसका बस एक हुक्म होते ही पलक झपकाते ही वह घटित हो जाएगी। किन्तु हर चीज़ की तरह जगत्-व्यवस्था और मानव-जाति की भी एक नियति है। इस नियति के अनुसार जो समय इस काम के लिए निश्चित है, उसी समय पर यह होगा। यह नहीं हो सकता कि जब कोई चुनौती दे तो उसको क़ाइल करने के लिए क़ियामत ला खड़ी की जाए।




54. सूरा अल-क़मर

(मक्का में उतरी–आयतें 55)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़ियामत की घड़ी क़रीब आ गई और चाँद फट गया।[1] (2) मगर इन लोगों का हाल यह है कि चाहे कोई निशानी देख लें, मुँह मोड़ जाते हैं और कहते हैं, यह तो चलता हुआ जादू है। (3) इन्होंने (इसको भी) झुठला दिया और अपने मन की इच्छाओं ही का अनुपालन किया। हर मामले को आख़िरकार एक परिणाम पर पहुँचकर रहना है।

(4,5) इन लोगों के सामने (पिछली क़ौमों के) वे हालात आ चुके हैं जिनमें सरकशी से बाज़ रखने के लिए काफ़ी शिक्षाप्रद सामग्री है और ऐसी तत्त्वदर्शिता जो नसीहत के उद्देश्य को व्यापक रूप से पूरा करती है। मगर चेतावनियाँ उनपर काम नहीं करती। (6) अतः ऐ नबी, इनसे मुँह फेर लो। जिस दिन पुकारनेवाला एक अत्यन्त अप्रिय चीज़ की ओर पुकारेगा, (7) लोग डरी हुई निगाहों के साथ अपनी क़ब्रों से इस तरह निकलेंगे मानो वे बिखरी हुई टिड्डियाँ हैं। (8) पुकारनेवाले की ओर दौड़े जा रहे होंगे और वही इनकार करने वाले (जो दुनिया में इसका इनकार करते थे) उस समय कहेंगे कि यह दिन तो बड़ा कठिन है।

(9) इनसे पहले नूह की क़ौम झुठला चुकी है। उन्होंने हमारे बन्दे को झूठा ठहराया और कहा कि यह दीवाना है, और वह बुरी तरह झिड़का गया। (10) आख़िरकार उसने अपने रब को पुकारा कि "मैं दबा लिया गया, अब तू इनसे बदला ले।" (11,12) तब हमने मूसलाधार बारिश से आसमान के द्वार खोल दिए और

1. अर्थात् चाँद का फट जाना इस बात की निशानी है कि क़ियामत (प्रलय) क़रीब है और उसका घटित होना हर समय संभव है। यह वाक्य और बाद की वार्ता से साफ़ पता चल रहा है कि उस समय वास्तव में चाँद फट गया था। जिन लोगों ने इस घटना को आँखों से देखा था उनका बयान है कि चौदहवीं रात (पूर्णिमा) को उदय होने के थोड़ी देर बाद अचानक चाँद फट गया और उसके दो टुकड़े सामने की पहाड़ी के दो तरफ़ दिखाई दिए, फिर एक ही क्षण के बाद दोनों जुड़ गए। 'हदीसों' की दृष्टि से कथावाचकों के इस बयान में कोई तथ्य नहीं है कि यह घटना नबी (सल्ल॰) के इशारे से घटित हुई थी या मक्का के काफ़िरों ने चमत्कार की माँग की थी और इसपर यह चमत्कार दिखाया गया।

ज़मीन को फाड़कर स्रोतों में परिवर्तन कर दिया, और यह सारा पानी उस काम को पूरा करने के लिए मिल गया जो नियत हो चुका था, (13,14) और नूह को हमने एक तख़्तों और कीलोंवाली पर[2] सवार कर दिया जो हमारी निगरानी में चल रही थी। यह था बदला उस व्यक्ति के लिए जिसकी नाक़द्री की गई थी। (15) उस नाव को हमने एक निशानी बनाकर छोड़ दिया, फिर कोई है नसीहत क़बूल करनेवाला? (16) देख लो, कैसा था मेरा अज़ाब और कैसी थीं मेरी चेतावनियाँ। (17) हमने इस क़ुरआन को नसीहत के लिए सहज साधन बना दिया है,[3] फिर क्या है कोई नसीहत क़बूल करनेवाला?

(18) आद ने झुठलाया तो देख लो कि कैसा था मेरा अज़ाब और कैसी थीं मेरी चेतावनियाँ। (19,20) हमने एक निरन्तर अशुभ के दिन सख़्त तूफ़ानी हवा उनपर भेज दी जो लोगों को उठा-उठाकर इस तरह फेंक रही थी जैसे वे जड़ से उखड़े हुए खजूर के तने हों। (21) अतः देख लो कैसा था मेरा अज़ाब और कैसी थीं मेरी चेतावनियाँ। (22) हमने इस क़ुरआन को नसीहत के लिए सहज साधन बना दिया है, फिर क्या है कोई नसीहत क़बूल करनेवाला?

(23,24) समूद ने चेतावनियों को झुठलाया और कहने लगे, "एक अकेला आदमी जो हम ही में से है क्या अब हम उसके पीछे चलें? उसका अनुपालन हम स्वीकार कर ले तो इसका अर्थ यह होगा कि हम बहक गए हैं और हमारी बुद्धि मारी गई है। (25) क्या हमारे बीच बस यही एक व्यक्ति था जिसपर अल्लाह का ज़िक्र उतारा गया? नहीं, बल्कि यह परले दरजे का झूठा और ख़ुद ही ग़लती पर है।" (26) (हमने अपने पैग़म्बर से कहा) "कल ही इन्हें मालूम हुआ जाता है कि कौन परले दरजे का झूठा और ख़ुद ग़लती पर है। (27) हम ऊँटनी को इनके लिए फ़ितना बनाकर भेज रहे हैं। अब तनिक सब्र के साथ देख कि इनका क्या परिणाम होता है। (28) इनको जता दे कि पानी इनके और ऊँटनी के बीच बाँटा जाएगा और हर एक अपनी बारी के दिन पानी पर

2. इससे मुराद वह नाव है जो तुफ़ान के आने से पहले ही अल्लाह के आदेशों के अनुसार हज़रत नूह (अलै॰) ने बना ली थी।
3. मतलब यह है कि नसीहत का एक साधन तो है वे शिक्षाप्रद अज़ाब जो सरकश क़ौमों पर उतारे, और दूसरा साधन है यह क़ुरआन जो प्रमाणों, उपदेश और दीक्षा से तुम्हें सीधा मार्ग बता रहा है। उस साधन की अपेक्षा नसीहत का यह साधन ज़्यादा आसान् है। फिर क्यों तुम इससे लाभान्वित नहीं होते और अज़ाब ही देखने पर आग्रह कर रहे हो?

आएगा।"[4] (29) आख़िरकार उन लोगों ने अपने आदमी को पुकारा और उसने इस काम का बीड़ा उठाया और ऊँटनी को मार डाला। (30) फिर देख लो कि कैसा था मेरा अज़ाब और कैसी थीं मेरी चेतावनियाँ। (31) हमने उनपर बस एक ही धमाका छोड़ा और वे बाड़ेवाले की रौंदी हुई बाड़ की तरह भुस होकर रह गए।[5] (32) हमने इस क़ुरआन को नसीहत के लिए सहज साधन बना दिया है, अब है कोई नसीहत क़बूल करनेवाला?

(33,34) लूत की क़ौम ने चेतावनियों को झुठलाया और हमने पथराव करनेवाली हवा उसपर भेज दी। केवल लूत के घरवाले उससे सुरक्षित रहे। उसको हमने अपने अनुग्रह से रात के पिछले पहर बचाकर निकाल दिया। (35) यह बदला देते हैं हम हर उस व्यक्ति को जो कृतज्ञ होता है। (36) लूत ने अपनी क़ौम के लोगों को हमारी पकड़ से सावधान किया, मगर वे सारी चेतावनियों को संदिग्ध समझकर बातों में उड़ाते रहे। (37) फिर उन्होंने उसे अपने मेहमानों की हिफ़ाज़त से बाज़ रखने की कोशिश की। आख़िरकार हमने उनकी आँखें मूँद दीं कि चखो अब मेरे अज़ाब और मेरी चेतावनियों का मज़ा। (38) सुबह सवेरे ही एक अटल अज़ाब ने उनको आ लिया। (39) चखो मज़ा अब मेरे अज़ाब का और मेरी चेतावनियों का। (40) हमने इस क़ुरआन को नसीहत के लिए सहज साधन बना दिया है, अतः है कोई नसीहत क़बूल करनेवाला?

4. यह स्पष्टीकरण है इस वाक्य का कि "हम ऊँटनी को उनके लिए आज़माइश और फ़ितना बनाकर भेज रहे हैं।" वह आज़माइश यह थी कि अचानक एक ऊँटनी लाकगर उनके सामने खड़ी कर दी गई और उनसे कह दिया गया कि एक दिन यह अकेली पानी पिएगी और दूसरे दिन तुम सब लोग अपने लिए और अपने जानवरों के लिए पानी ले सकोगे। उसकी बारी के दिन तुममें से कोई व्यक्ति किसी स्रोत और कुएँ पर न ख़ुद पानी लेने के लिए आए, न अपने जानवरों को पिलाने के लिए लाए। यह चैलेंज उस व्यक्ति की ओर से दिया गया था जिसके बारे में वे ख़ुद कहते थे कि इसके पास कोई सेना नहीं, न कोई बड़ा, जत्था इसके पीछे है।
5. जो लोग मवेशी पालते हैं वे अपने जानवरों के बाड़ों को सुरक्षित करने के लिए लकड़ियों और झाडियों की एक बाड़ बना देते हैं। इस बाड़ की झाड़ियाँ धीरे-धीरे सुखकर झड़ जाती हैं और जानवरों के आने-जाने से पददलित होकर उनका बुरादा बन जाता है। समूद की क़ौम की कुचली हुई जीर्ण-शीर्ण लाशों की मिसाल इसी बुरादे से दी गई है।

(41) और फ़िरऔनियों के पास भी चेतावनियाँ आई थीं, (42) मगर उन्होंने हमारी सारी निशानियों को झुठला दिया। आख़िरकार हमने उन्हें पकड़ा जिस तरह कोई ज़बरदस्त सामर्थ्यवान पकड़ा करता है।

(43) क्या तुम्हारे 'इनकार करनेवाले' कुछ उन लोगों से अच्छे हैं?[6] या आसमानी किताबों में तुम्हारे लिए कोई माफ़ी लिखी हुई है? (44) या इन लोगों का कहना यह है कि हम एक मज़बूत जत्था है, अपना बचाव कर लेंगे? (45) जल्द ही यह जत्था परास्त हो जाएगा, और ये सब पीठ फेरकर भागते दिखाई देंगे। (46) बल्कि इनसे निबटने के लिए वास्तविक वादे का समय तो क़ियामत है और वह बड़ी आफ़त और ज़्यादा कड़वी घड़ी है। (47) ये अपराधी लोग वास्तव में भ्रम में पड़े हुए हैं और इनकी बुद्धि मारी गई है। (48) जिस दिन ये मुँह के बल आग में घसीटे जाएँगे उस दिन इनसे कहा जाएगा कि अब चखो नरक की लपट का मज़ा।

(49) हमने हर चीज़ एक तक़दीर के साथ पैदा की है,[7] (50) और हमारा आदेश बस एक ही आदेश होता है और पलक झपकाते वह क्रियान्वित हो जाते है। (51) तुम जैसे बहुतों को हम तबाह कर चुके हैं, फिर है कोई नसीहत क़बूल करनेवाला? (52) जो कुछ इन्होंने किया है वह सब चिट्ठों (दफ़्तरों) में अंकित है (53) और हर छोटी-बड़ी बात लिखी हुई मौजूद है।

(54) अवज्ञा से बचनेवाले यक़ीनन बाग़ों और नहरों में होंगे, (55) सच्ची प्रतिष्ठा की जगह, बड़े प्रभुत्वशाली बादशाह के क़रीब।

● ● ●

6. सम्बोधन है क़ुरैश के लोगों से। मतलब यह है कि तुममें आख़िर क्या ख़ूबी है, कौन-से हीरे-जवाहरात तुम्हारे लटके हुए हैं कि जिस कुफ़्र, झुठलाने और हठधर्मी की नीति पर दूसरी क़ौमों को सज़ा दी जा चुकी है वही नीति तुम ग्रहण करो तो तुम्हें सज़ा न दी जाए?
7. अर्थात् दुनिया की कोई चीज़ भी अललटप नहीं पैदा कर दी गई है, बल्कि हर चीज़ की एक तक़दीर है जिसके अनुसार वह एक निश्चित समय पर बनती है, एक विशेष रूप धारण करती है, एक विशेष सीमा तक विकसित होती है, एक विशेष अवधि तक बाक़ी रहती है, और एक विशेष समय पर समाप्त हो जाती है।

55. अर-रहमान

नाम

पहले ही शब्द को इस सूरा का नाम दिया गया है। इसका अर्थ यह है कि यह वह सूरा है जो अर-रहमान (कृपाशील) शब्द से आरम्भ होती है। फिर भी यह नाम सूरा के विषय से भी गहरा सम्पर्क रखता है, क्योंकि इसमें आरम्भ से अन्त तक अल्लाह की दयालुता के गुण-सूचक चिह्नों और परिणामों का उल्लेख किया गया है।

अवतरणकाल

टीकाकार विद्वान् साधारणतः इस सूरा को मक्की घोषित करते हैं। यद्यपि कुछ उल्लेखों में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰), इक्रमा (रज़ि॰) और क़तादा (रज़ि॰) का यह कथन उद्धृत है कि यह सूरा मदनी है, किन्तु एक तो इन्हीं महानुभावों से कुछ दूसरे उल्लेखों में इसके विपरीत भी उद्धृत है। दूसरे इसका विषय मदनी सूरतों की अपेक्षा मक्की सूरतों के अधिक अनुरूप है, बल्कि अपने विषय की दृष्टि से यह मक्का के भी आरम्भिक काल की मालूम होती है। और इसके अतिरिक्त तदधिक विश्वस्त उल्लेखों से इस बात का प्रमाण मिलता है यह मक्का मुअज़्ज़मा में ही हिजरत से कई वर्ष पूर्व अवतरित हुई थी।

विषय और वार्ता

क़ुरआन मजीद की एकमात्र यही सूरा है जिसमें मानव के साथ धरती के दूसरे स्वतंत्र प्राणी जिन्नों को भी प्रत्यक्षतः सम्बोधित किया गया है। यद्यपि पवित्र क़ुरआन में विभिन्न स्थानों पर विवरण मौजूद हैं जिनसे मालूम होता है कि मनुष्यों की तरह जिन्न भी एक स्वतंत्र और उत्तरदायी प्राणी हैं और उनमें भी मनुष्यों ही की तरह काफ़िर और ईमानवाले और आज्ञाकारी और अवज्ञाकारी पाए जाते हैं। उनमें भी ऐसे गिरोह मौजूद हैं जो नबियों (अलै॰) और आसमानी किताबों (ईश्वरीय ग्रंथों) पर ईमान लाए हैं, लेकिन यह सूरा निश्चित रूप से इस बात को स्पष्ट करती है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) और क़ुरआन मजीद का आह्वान जिन्न और मानव दोनों के लिए है और नबी (सल्ल॰) की पैग़म्बरी केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं है। सूरा के आरम्भ में तो सम्बोधन का रुख़ मानवों की तरफ़ ही है, क्योंकि धरती में अधिपत्य उन्हीं को प्राप्त है। अल्लाह के रसूल (पैग़म्बर) उन्हीं में से आए हैं। और ईश्वरीय ग्रंथ उन्हीं की भाषाओं में अवतरित किए गए हैं। लेकिन आगे चलकर आयत 13 से मनुष्य और जिन्न दोनों को समान रूप से सम्बोधित किया गया है और एक आमंत्रण दोनों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। सूरा की

वार्ताएँ छोटे-छोटे वाक्यों में एक विशिष्ट क्रम से प्रस्तुत हुई है :

आयत 1-4 तक इस विषय का वर्णन किया गया है कि इस क़ुरआन की शिक्षा अल्लाह की ओर से है और यह ठीक उसकी दयालुता को अपेक्षित है कि वह इस शिक्षा से मानव-जाति के मार्गदर्शन का प्रबन्ध करे। आयत 5-6 में बताया गया है कि जगत् की सम्पूर्ण व्यवस्था अल्लाह के शासन के अन्तर्गत चल रही है और धरती और आकाश की हर चीज़ उसके आदेश के अधीन है। आयत 7-9 में एक दूसरा महत्त्वपूर्ण तथ्य यह वर्णित है कि अल्लाह ने जगत् की सम्पूर्ण व्यवस्था एवं प्रणाली को ठीक-ठीक संतुलन के साथ न्याय पर स्थापित किया है और इस प्रणाली की प्रकृति यह चाहती है कि इसमें रहनेवाले अपने अधिकार-सीमा में भी न्याय ही पर स्थिर हों और संतुलन न बिगाड़े। आयत 10-25 तक अल्लाह की सामर्थ्य के चमत्कार और कौशल को वर्णित करने के साथ-साथ उसके प्रसादों और प्रदान की हुई निधियों की ओर संकेत किए गए हैं, जिनसे मनुष्य और जिन्न लाभान्वित हो रहे हैं। आयत 26-30 तक मनुष्य और जिन्न दोनों को इस सत्य का स्मरण कराया गया है कि इस जगत् में एक ईश्वर के अतिरिक्त कोई अक्षय और नित्य नहीं है, और छोटे-से-बड़े तक कोई अस्तित्ववान् ऐसा नहीं जो अपने अस्तित्व और अस्तित्वगत आवश्यकताओं के लिए ईश्वर पर आश्रित न हो। आयत 31-36 तक इन दोनों गिरोहों को सावधान किया गया है कि शीघ्र ही वह समय आनेवाला है जब तुमसे कड़ी पूछगछ होगी। इस पूछगछ से बचकर तुम कहीं नहीं जा सकते। आयत 37-38 में बताया गया है कि यह कड़ी पूछगछ क़ियामत के दिन होनेवाली है। आयत 39-45 तक अपराधी मानवों और जिन्नों का परिणाम बताया गया है। और आयत 46 से सूरा के अन्त तक विस्तारपूर्वक उन पारितोषिकों और अनुग्रहदानों का उल्लेख किया गया है जो परलोक में पुण्यवान् मानवों और जिन्नों को प्रदान किए जाएँगे।



55. सूरा अर-रहमान

(मक्का में उतरी–आयतें 78)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1,2) बड़े ही मेहरबान (अल्लाह) ने इस क़ुरआन की शिक्षा दी है। (3) उसी ने इनसान को पैदा किया (4) और उसे बोलना सिखाया।

(5) सूरज और चाँद एक हिसाब के पाबन्द हैं (6) और तारे और पेड़ सब सजदे में हैं।[1] (7) आसमान को उसने ऊँचा किया और तुला स्थापित कर दी।[2] (8) इसका तक़ाज़ा यह है कि तुम तुला में विघ्न उत्पन्न न करो, (9) इनसाफ़ के साथ ठीक-ठीक तौलो और तराज़ू में डंडी न मारो।[3]

(10) ज़मीन को उसने सब ख़िलक़त (कृति) के लिए बनाया। (11) उसमें हर तरह के बहुत-से मज़ेदार फल हैं। खजूर के पेड़ हैं जिनके फल आवरणों में लिपटे हुए हैं। (12) तरह-तरह के अनाज हैं जिनमें भूसा भी होता है और दाना भी। (13) अतः ऐ जिन्न और इनसान, तुम अपने रब की किन-किन नेमतों[4] को झुठलाओगे?

(14) इनसान को उसने ठीकरी जैसे सूखे सड़े गारे से बनाया (15) और जिन्न को आग की लपट से पैदा किया (16) अतः ऐ जिन्न और इनसान, तुम अपने रब की किन-किन सामर्थ्यों को झुठलाओगे?

---

1. अर्थात् आज्ञा के अधीन हैं, अल्लाह के आदेश का बाल बराबर उल्लंघन नहीं कर सकते।
2. लगभग सभी टीकाकारों ने यहाँ तुला (तराज़ू) का अर्थ न्याय लिया है, और तुला स्थापित करने का मतलब यह बयान किया है कि अल्लाह ने विश्व की इस पूरी व्यवस्था को न्याय पर स्थापित किया है।
3. अर्थात् चूँकि तुम एक संतुलित जगत् में रहते हो जिसकी सारी व्यवस्था न्याय पर स्थापित की गई है, इसिलिए तुम्हें भी न्याय पर क़ायम होना चाहिए। जिस क्षेत्र में तुम्हें अधिकार दिया गया है उसमें अगर तुम बेइनसाफ़ी करोगे तो यह ब्रह्माण्ड की मूल प्रकृति से तुम्हारा विद्रोह होगा।
4. यहाँ मूल शब्द 'आला' प्रयुक्त हुआ है जिसे आगे की आयतों में बार-बार दोहराया गया है और हमने विभिन्न जगहों पर उसका अर्थ विभिन्न शब्दों में व्यक्त किया है। उसका अर्थ नेमतों भी हैं, सामर्थ्य की परिपूर्णताएँ भी, और प्रशंस्य गुण भी। हर जगह उसका वह अर्थ लिया जाएगा जो संदर्भ के अनुकूल हो।

(17) दोनो पूर्व और दोनो पश्चिम,[5] सबका मालिक और पालनहार वही है। (18) अतः ऐ जिन्न और इनसान, तुम अपने रब की किन-किन क़ुदरतों को झुठलाओगे?

(19) दोनों समुद्रों को उसने छोड़ दिया कि परस्पर मिल जाएँ, (20) फिर भी उनके बीच एक परदा पड़ा है जिसको वे पार नहीं करते। (21) अतः ऐ जिन्न और इनसान, तुम अपने रब की क़ुदरत के किन-किन चमत्कारों को झुठलाओगे? (22) इन समुद्रों से मोती और मूँगे निकलते हैं। (23) अतः ऐ जिन्न और इनसान,तुम अपने रब की क़ुदरत के किन-किन कमालात को झुठलाओगे?

(24) और ये जहाज़ उसी के हैं जो समुद्र में पहाड़ों की तरह ऊँचे उठे हुए हैं। (25) अतः ऐ जिन्न और इनसान, तुम अपने रब के किन-किन उपकारों को झुठलाओगे?

(26) हर चीज़ जो इस ज़मीन में है नाशवान है (27) और सिर्फ़ तेरे रब का प्रतापवान एवं उदार स्वरूप ही बाक़ी रहनेवाला है। (28) अतः ऐ जिन्न और इनसान, तुम अपने रब के किन-किन कमालात को झुठलाओगे? (29) ज़मीन और आसमानों में जो भी हैं सब अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की उसी से माँग कर रहे हैं। नित वह नई शान में है।[6] (30) अतः ऐ जिन्न और इनसान, तुम अपने रब के किन-किन प्रशंस्य गुणों को झुठलाओगे?

(31) ऐ ज़मीन के बोझो,[7] जल्द ही हम तुमसे पूछगछ के लिए निवृत्त हुए जाते हैं[8] (32) (फिर देख लेंगे कि) तुम अपने रब के किन-किन उपकारों को झुठलाते हो। (33) ऐ जिन्न और इनसान के गिरोह, अगर तुम ज़मीन और आसमानों की सीमाओं से निकलकर भाग सकते हो तो भाग देखो. नहीं भाग सकते। इसके लिए बड़ा ज़ोर

---

5. दो पूर्व और दो पश्चिम से मुराद जाड़े के छोटेसे छोटे दिन और गरमी के बड़े से बड़े दिन के पूर्व और पश्चिम भी हो सकते हैं, और ज़मीन के दोनों गोलार्द्धों के पूर्व और पश्चिम भी।
6. अर्थात् हर समय इस विश्व के कारख़ाने में उसकी क्रियाशीलता का एक अनन्त सिलसिला जारी है और वह अगणित चीज़ें नए से नए ढंग और रूप और गुणों के साथ पैदा कर रहा है। उसकी दुनिया कभी एक हाल पर नहीं रहती। हर क्षण उसकी दशाएँ बदलती रहती हैं और उसका स्रष्टा हर बार उसे एक नए रूप से क्रमबद्ध करता है जो पिछले सभी रूपों से भिन्न होती है।

चाहिए।[9] (34) अपने रब के किन-किन सामर्थ्यों को तुम झुठलाओगे? (35) (भागने की कोशिश करोगे तो) तुमपर आग का शोला और धुआँ छोड़ दिया जाएगा जिसका तुम मुक़ाबला न कर सकोगे। (36) ऐ जिन्न और इनसान, तुम अपने रब की किन-किन सामर्थ्यों का इनकार करोगे?

(37) फिर (क्या बनेगी उस समय) जब आसमान फटेगा[10] और लाल चमड़े की तरह लाल हो जाएगा? (38) ऐ जिन्न और इनसान, (उस समय) तुम अपने रब की किन-किन सामर्थ्यों को झुठलाओगे?

(39) उस दिन किसी इनसान और किसी जिन्न से उसका गुनाह पूछने की ज़रूरत न होगी, (40) फिर (देख लिया जाएगा कि) तुम दोनों गिरोह अपने रब के किन-किन उपकारों का इनकार करते हो। (41) अपराधी वहाँ अपने चेहरों से पहचान लिए जाएँगे और उन्हें माथे के बाल और पाँव पकड़-पकड़कर घसीटा जाएगा। (42)

7. मूल शब्द 'स-क़-लान' इस्तेमाल हुआ है। 'सक़ल' उस बोझ को कहते हैं जो सवारी पर लदा हुआ हो। 'स-क़-लान' का शाब्दिक अनुवाद होगा ''दो लदे हुए बोझ।'' इस जगह यह शब्द जिन्न और इनसान के लिए इस्तेमाल किया गया है क्योंकि ये दोनों ज़मीन पर लदे हुए हैं, और चूँकि सम्बोधन उन जिन्नों और इनसानों से हो रहा है जो अपने रब के आज्ञापालन और बन्दगी से हटे हुए हैं इसलिए उनको ''ऐ ज़मीन के बोझो'' कहकर सम्बोधित किया गया है, मानो स्रष्टा अपनी सृष्टि के इन दोनों नालायक़ गिरोहों से कह रहा है कि ऐ वे लोगो जो मेरी ज़मीन पर भार बने हुए हो, जल्द ही मैं तुम्हारी ख़बर लेने के लिए निवृत्त हुआ जाता हूँ।
8. इसका अर्थ यह नहीं है कि इस समय अल्लाह ऐसा व्यस्त है कि उसे इन अवज्ञाकारियों से पूछगछ करने की फ़ुरसत नहीं मिलती। बल्कि इसका अर्थ वास्तव में यह है कि अल्लाह ने एक विशेष कार्यक्रम निश्चित कर रखा है जिसके अनुसार अभी इनसानों और जिन्नों से अन्तिम पूछगछ करने का समय नहीं आया है।
9. ज़मीन और आसमानों से अभिप्रेत है ब्रह्माण्ड या दूसरे शब्दों में ईश्वर का प्रभुत्व-क्षेत्र और सृष्टि। आयत का अर्थ यह है कि ईश्वर की पकड़ से बच निकलना तुम्हारे बस में नहीं है। जिस पूछगछ की तुम्हें ख़बर दी जा रही है उसका समय आने पर तुम चाहे किसी जगह भी हो, हर हाल में पकड़ लाए जाओगे। उससे बचने के लिए तुम्हें ख़ुदा की ख़ुदाई से भाग निकलना होगा और इसका बलबूता तुममें नहीं है। अगर ऐसा घमण्ड तुम अपने दिल में रखते हो तो अपना ज़ोर लगाकर देख लो।
10. आसमान के फटने से मुराद है आसमानों के बन्धन का खुल जाना, जगत-व्यवस्था का छिन्न-भिन्न हो जाना, तारों और नक्षत्रों का बिखर जाना।

(उस समय) तुम अपने रब की किन-किन सामर्थ्यों को झुठलाओगे? (43) (उस समय कहा जाएगा) यह वही जहन्नम है जिसको अपराधी झूठ ठहराया करते थे। (44) उसी जहन्नम और खौलते हुए पानी के बीच वे चक्कर काटते रहेंगे। (45) फिर अपने रब की किन-किन सामर्थ्यों को तुम झुठलाओगे?

(46) और हर उस व्यक्ति के लिए जो अपने रब के सामने पेश होने का डर रखता हो,[11] दो बाग़ हैं। (47) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (48) हरी-भरी डालियों से भरपूर। (49) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (50) दोनों बाग़ों में दो स्रोत प्रवाहित। (51) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (52) दोनों बागों में हर फल की दो क़िस्में।[12] (53) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (54) जन्नती लोग ऐसे बिछौनो पर तकिए लगाकर बैठेंगे जिनके अस्तर दबीज़ (गाढ़े) रेशम के होंगे, और बाग़ों की डालियाँ फलों से झुकी पड़ रही होंगी। (55) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (56) इन नेमतों के बीच शरमीली निगाहोंवालियाँ होंगे[13] जिन्हें इन जन्नतवालों से पहले कभी किसी इनसान या जिन्न ने न छुआ होगा।[14] (57) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (58) ऐसी सुन्दर जैसे हीरे और मोती। (59) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे?

(60) नेकी का बदला नेकी के सिवा और क्या हो सकता है। (61) फिर ऐ जिन्न और इनसान, अपने रब के किन-किन प्रशंस्य गुणों का तुम इनकार करोगे? (62) और उन दो बाग़ों के अलावा दो बाग़ और होंगे।[15] (63) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (64) घने हरे-भरे बाग़। (65) अपने रब के किन-किन

11. अर्थात् जिसने दुनिया में अल्लाह से डरते हुए ज़िन्दगी बिताई हो और यह समझते हुए काम कियाहो कि एक दिन मुझे अपने रब के सामने खड़ा होना और अपने कर्मों का हिसाब देना है।
12. इसका एक अर्थ यह हो सकता है कि दोनों बाग़ों के फलों की शान निराली होगी। एक बाग़ में जाएगा तो एक शान के फल उसकी डालियों में लदे हुए होंगे। दूसरे बाग़ में जाएगा तो उसके फलों की शान कुछ और ही होगी। दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि उनमें से हर बाग़ में एक क़िस्म के फल जाने-पहचाने होंगे जिनसे वह सुनिया में भी परिचित था, भले ही मज़ें में वे दुनिया के फलों से कितने ही बढ़कर हो, और दूसरी क़िस्म के फल अपूर्व होंगे जो दुनिया में कभी उसके सपने और कल्पना में भी न आए थे।

इनामों को तुम झुठलाओगे? (66) दोनों बागों में दो स्रोत फ़व्वारों की तरह उबलते हुए। (67) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (68) उनमें भरपूर फल और खजूरें और अनार। (69) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (70) उन नेमतों के बीच सुचरिता और सुन्दर बीवियाँ। (71) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (72) ख़ेमों में ठहराई हुई अप्सराएँ (परम रूपवती स्त्रियाँ)।[16] (73) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (74) इन जन्नतवालों से पूर्व कभी किसी इनसान या जिन्न ने उनको न छुआ होगा? (75) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे? (76) वे जन्नतवाले हरे क़ालीनों और उत्कृष्ट एवं अपूर्व बिछौनों पर तकिए लगाकर बैठेंगे। (77) अपने रब के किन-किन इनामों को तुम झुठलाओगे?

(78) बड़ी बरकतवाला है तेरे प्रतापवान एव उदार रब का नाम।



13. यह औरत का वास्तविक गुण है कि वह बेशर्म और बेबाक न हो बल्कि निगाह में लज्जा रखती हो। इसी लिए अल्लाह ने जन्नत की नेमतों के बीच औरतों का ज़िक्र करते हुए सबसे पहले उनकी सुन्दरता की नहीं बल्कि उनकी लज्जा और सतीत्व की प्रशंसा की है। सुन्दर औरतें तो सह क्लबों और फ़िल्मों रंगशालाओं में भी इकट्ठी हो जाती हैं, और सौन्दर्य के मुक़ाबलों (प्रतियोगिताओं) में तो छाँट-छाँटकर एक से एक सुन्दर औरत लाई जाती है, मगर बुरी अभिरुचिवाला और बदकिरदार आदमी ही उनसे दिलचस्पी ले सकता है। किसी शरीफ़ आदमी को वह सौन्दर्य आकर्षित नहीं कर सकता जो प्रत्येक बुरी दृष्टि को नज़ारे के लिए आमंत्रित करे और हर गोद की शोभा बनने के लिए तैयार हो।
14. इससे मालूम हुआ कि जन्नत में नेक इनसानों की तरह नेक जिन्न भी प्रवेश करेंगे। इनसानों के लिए इनसान औरतें होंगी और जिन्नों के लिए जिन्न औरतें। और अल्लाह की सामर्थ्य से वे सब कुँवारी बना दी जाएँगी।
15. संभवतः पहले दो बाग़ निवासस्थान होंगे और दूसरे दो बाग़ विहार-स्थल।
16. ख़ेमों से मुराद संभवतः उस तरह के ख़ेमे है जैसे अमीरों और रईसों के लिए विहार-स्थलों पर लगाए जाते हैं। उन विहार-स्थलों पर जगह-जगह ख़ेमे लगे होंगे जिनमें हूरें (अप्सराएँ) उनके लिए आनन्द एवं स्वाद की सामग्री जुटाएँगी।

56. अल-वाक़िआ

नाम

पहली ही आयत के शब्द 'अल-वाक़िआ' (वह होनेवाली घटना) को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) ने सूरतों के अवतरण का जो क्रम वर्णित किया है, उसमें वे कहते हैं कि पहले सूरा 20 (ता॰ हा॰) अवतरित हुई, फिर अल-वाक़िआ और उसके पश्चात् सूरा 26 (अश-शुअरा) (अल-इतक़ान-सुयूती) यही क्रम इक्रमा ने भी बयान किया है (बैहक़ी, दलाइलुन-नुबूवत)। इसकी पुष्टि उस क़िस्से से भी होती है जो हज़रत उमर (रज़ि॰) के ईमान लाने के विषय में इब्ने-हिशाम ने इब्ने इसहाक़ से उद्धृत किया है। उसमें यह उल्लेख आता है कि जब हज़रत उमर (रज़ि॰) अपनी बहन के घर में दाख़िल हुए तो सूरा 20 (ता॰ हा॰) पढ़ी जा रही थी। और जब उन्होंने कहा था कि अच्छा मुझे वह लिखित पृष्ठ दिखाओ जिसे तुमने छिपा लिया है, तो बहन ने कहा, "आप अपने बहुदेववाद के कारण अपवित्र हैं, और इस लिखित पृष्ठ को केवळ शुद्ध व्यक्ति ही हाथ लगा सकता है।" अतएव हज़रत उमर (रज़ि॰) ने उठकर स्नान किया और फिर उस पृष्ठ को लेकर पढ़ा। इससे मालूम हुआ कि उस समय सूरा वाक़िआ अवतरित हो चुकी थी, क्योंकि उसी में आयत "इसे पवित्रों के सिवा कोई छू नहीं सकता" (आयत 79) आई है और यह इतिहास से सिद्ध है कि हज़रत उमर (रज़ि॰) हबशा की हिजरत के पश्चात् सन् 5 नबवी में ईमान लाए हैं।

विषय और वार्ता

इसका विषय परलोक, एकेश्वरवाद और क़ुरआन के सम्बन्ध में मक्का के काफ़िरों के संदेहों का खण्डन है। सबसे अधिक जिस चीज़ को वे अविश्वसनीय ठहराते थे, वह (क़ियामत और आख़िरत थी, उनका कहना) यह था कि ये सब काल्पनिक बातें हैं जिसका वास्तविक लोक में घटित होना असम्भव है। इसके जवाब में कहा कि जब वह घटना घटित होगी तो उस समय कोई यह झूठ बोलनेवाला न होगा कि वह घटित नहीं हुई है, न किसी में यह शक्ति होगी कि उसे आते-आते रोक दे या घटना को असत्य कर दिखाए। उस वक़्त अनिवार्यतः सभी मनुष्य तीन श्रेणियों में विभ्कत हो जाएँगे। एक, आगेवाले; दूसरे, सामान्य ने लोग; तीसरे वे लोग जो आख़िरत (परलोक) का इनकार करते रहे और मरते दम तक इनकार और बहुदेववाद और बड़े गुनाह पर जमे रहे। इन

तीनों श्रेणियों के लोगों के साथ जो मामला होगा उसे सविस्तार आयत 7-56 तक बयान किया गया है। इसके बाद आयत 57-74 तक इस्लाम की उन दोनों आधारभूत धारणाओं की सत्यता पर निरन्तर प्रमाण दिए गए हैं, जिनको मानने से काफ़िर इनकार कर रहे थे, अर्थात् एकेश्वरवाद और परलोकवाद। फिर आयत 75-82 तक क़ुरआन के विषय में उनके सन्देहों का खण्डन किया गया है और क़ुरआन के विषय की सत्यता पर दो संक्षिप्त वाक्यों में अतुल्य प्रमाण प्रस्तुत किया गया है कि इसपर कोई विचार करे तो इसमें ठीक वैसी ही सुदृढ़ व्यवस्था पाएगा, जैसी जगत् के तारों और नक्षत्रों की व्यवस्था सुदृढ़ है, और यही इस बात का प्रमाण है कि इसका रचयिता वही है जिसने ब्रह्माण्ड की यह व्यवस्था निर्मित की है। फिर काफ़िरों से कहा गया है कि यह किताब उस नियति-पत्र में अंकित है जो सृष्ट प्राणियों की पहुँच से परे है। तुम समझते हो कि इसे मुहम्मद (सल्ल॰) के पास शैतान लाते हैं, जबकि सुरक्षित पट्टिका से मुहम्मद (सल्ल॰) तक जिस माध्यम से यह पहुँचती है उसमें पवित्र आत्मा फ़रिश्तों के सिवा किसी को तनिक भी हस्तक्षेप की सामर्थ्य नहीं है। अन्त में मानव को बताया गया है कि तू अपनी स्वच्छन्दता के घमण्ड में कितना ही आधारभूत तथ्यों की ओर से अन्धा हो जाए, किन्तु मृत्युकाल तेरी आँखें खोल देने के लिए पर्याप्त है। (तेरे सगे-सम्बन्धी) तेरी आँखों के सामने मरते हैं और तू देखता रह जाता है। यदि कोई सर्वोच्च सत्ता तेरे ऊपर शासन नहीं कर रही है और तेरा यह दम्भ अनुचित नहीं है कि संसार में बस तू-ही-तू है, कोई ईश्वर नहीं है, तो किसी मरनेवाले के निकलते हुए प्राण को पलटा क्यों नहीं लाता? जिस तरह तू इस मामले में बेबस है उसी तरह ईश्वर की पूछगछ और उसके प्रतिदान या दण्ड को भी रोक देना तेरे वश में नहीं है, तू चाहे माने या न माने मृत्यु के पश्चात् प्रत्येक मरनेवाला अपने परिणाम को देखकर रहेगा।



56. सूरा अल-वाक़िआ

(मक्का में उतरी–आयतें 96)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) जब वह होनेवाली घटना घटित हो जाएगी (2) तो कोई उसके घटित होने को झुठलानेवाला न होगा। (3) वह तलपट कर देनेवाली आफ़त होगी, (4) ज़मीन उस समय एकाएक हिला डाली जाएगी[1] (5) और पहाड़ इस तरह चूरा-चूरा कर दिए जाएँगे (6) कि बिखरे हुए ग़ुबार बनकर रह जाएँगे। (7) तुम लोग उस समय तीन गिरोहों में बँट जाओगे (8) दाएँ बाज़ूवाले, तो दाएँ बाज़ूवालों (के सौभाग्य) का क्या कहना। (9) और बाएँ बाज़ूवाले, तो बाएँ बाज़ूवालों (के दुर्भाग्य) का क्या ठिकाना। (10) और आगेवाले तो फिर आगेवाले ही हैं। (11) वही तो निकटवर्ती लोग हैं। (12) नेमत भरी जन्नतों में रहेंगे। (13) अगलों में से बहुत होंगे (14) और पिछलों में से कम। (15,16) जड़ित एवं विभूषित तख़्तों पर तकिए लगाए आमने-सामने बैठेंगे। (17,18) उनकी मजलिसों में सार्वकालिक किशोर[2] प्रवाहित स्रोत की शराब से भरे प्याले और कंटर और साग़र लिए दौड़ते फिरते होंगे (19) जिसे पीकर न उनका सिर चकराएगा न उनकी बुद्धि में विकार आएगा। (20) और वे उनके सामने तरह-तरह के स्वादिष्ट फल पेश करेंगे कि जिसे चाहे चुन लें, (21) और पक्षियों के मांस पेश करेंगे कि जिस पक्षी का चाहें प्रयोग करें। (22) और उनके लिए सुन्दर आँखोंवाली अप्सराएँ (हूरें) होंगी, (23) ऐसी सुन्दर जैसे छुपाकर रखे हुए मोती। (24) यह सब कुछ उन कर्मों के बदले के रूप में उन्हें मिलेगा जो वे दुनिया में करते रहे थे। (25) वहां वे कोई बकवास या गुनाह की बात न सुनेंगे। (26) जो बात भी होगी ठीक-ठीक होगी।

(27) और दाएँ बाज़ूवाले, दाएँ बाज़ूवालों (के सौभाग्य) का क्या कहना। (28) वे कांटे रहित बेरियों,[3] (29) और ऊपर-तले चढ़े हुए केलों, (30) और दूर तक फैली हुई छाँव (31) और हर पल बहता पानी, (32,33) और कभी समाप्त न होनेवाले और बेरोक-टोक मिलनेवाले ढ़ेर सारे फलों, (34) और ऊँची बैठकों में होंगे। (35) उनकी बीवियों को हम विशेष रूप से नए सिरे से पैदा करेंगे (36) और उन्हें कुँवारियाँ

1. अर्थात् वह कोई स्थानीय भूकम्प न होगा बल्कि सारी ज़मीन एक साथ हिला डाली जाएगी।
2. इससे मुराद हैं ऐसे लड़के जो हमेशा लड़के ही रहेंगे, उनकी उम्र हमेशा एक ही हालत पर ठहरी रहेगी।

बना देंगे, (37) अपने शौहरों की आशिक़ और उम्र में बराबर। (38) यह कुछ दाएँ बाज़ूवालों के लिए हैं। (39) वे अगलों में से भी बहुत होंगे (40) और पिछलों में से भी बहुत।

(41) और बाएँ बाज़ूवाले, बाएँ बाज़ूवालों (के दुर्भाग्य) का क्या पूछना। (42,43) वे लू की लपट और खौलते हुए पानी और काले धुएँ की छाया में होंगे (44) जो न शीतल होगा न सुखदायक। (45) ये वे लोग होंगे जो इस परिणाम को पहुँचने से पहले सुखी-सम्पन्न थे (46) और महापाप पर आग्रह करते थे। (47) कहते थे, "क्या जब हम मरकर मिट्टी हो जाएँगे और हड्डियों का पंजर रह जाएँगे तो फिर उठा खड़े किए जाएँगे? (48) और क्या हमारे बाप-दादा भी उठाए जाएँगे जो हले गुज़र चुके हैं? (49,50) ऐ नबी, इन लोगों से कहो, यक़ीनन अगले और पिछले सब एक दिन ज़रूर इकट्ठे किए जानेवाले हैं जिसका समय नियत किया जा चुका है। (51) फिर ऐ गुमराहो औ झुठलानेवालो, (52) तुम जक़्क़ूम (थूहड़) के पेड़ का भोजन करनेवाले हो। (53) उसी से तुम पेट भरोगे (54,55) और ऊपर से खौलता हुआ पानी तौंस लगे हुए ऊँट की तरह पिओगे। (56) यह है उन (बाएँ बाज़ूवालों) के अतिथि-सत्कार की सामग्री बदला दिए जाने के दिन।

(57) हमने तुम्हें पैदा किया है फिर क्यों तसदीक़ नही करते?[4] (58) कभी तुमने विचार किया, यह वीर्य जो तुम डालते हो, (59) इससे बच्चा तुम बनाते हो या उसके बनानेवाले हम हैं? (60) हमने तुम्हारे बीच मौत को बाँटा है, और हमारे बस से यह बाहर नहीं हैं (61) कि हम तुम्हारे रूप बदल दें और किसी ऐसे रूप में तुम्हें पैदा कर दें जिसको तुम नहीं जानते (62) अपनी पहली पैदाइश को तो तुम जानते ही हो, फिर क्यों शिक्षा ग्रहण नहीं करते?

(63) कभी तुमने सोचा, यह बीज जो तुम बोते हो, (64) इनसे ख़ेतियाँ तुम उगाते हो या उनके उगानेवाले हम हैं? (65) हम चाहे तो इन खेतियों को भुस बनाकर रख दें और तुम तरह-तरह की बातें बनाते रह जाओ (66) कि हमपर तो उलटा डाँड़

---

3. अर्थात् ऐसी बेरियाँ निके पेड़ों में काँटे न होंगे। बेर जितने उच्चकोटि के होते हैं, उनके पेड़ों में काँटे उतनेही कम होते हैं। इसी लिए जन्नत के बेरों का यह गुण बताया गया है कि उनके पेड़ बिलकुल ही काँटों से ख़ाली होंगे, अर्थात् ऐसे उत्तम प्रकार के होंगे की दुनिया में नहीं पाए जाते।
4. अर्थात् इस बात की तसदीक (पुष्टि) कि हम ही तुम्हारे रब और पूज्य हैं, और हम तुम्हें दोबारा भी पैदा कर सकते हैं।

पड़ गया, (67) बल्कि हमारे तो नसीब ही फूटे हुए हैं।

(68) कभी तुमने आँखें खोलकर देखा, यह पानी जो तुम पीते हो, (69) इसे तुमने बादल से बरसाया है, या इसके बरसानेवाले हम हैं? (70) हम चाहे तो इसे अत्यन्त खारा बनाकर रख दें, फिर क्यों तुम कृतज्ञता नहीं दिखाते?

(71) कभी तुमने विचार किया, यह आग जो तुम सुलगाते हो, (72) इसका पेड़ तुमने पैदा किया है, या इसके पैदा करनेवाले हम हैं?[5] (73) हमने उसको याद दिलाने का साधन और ज़रूरतमन्दों के लिए जीवन-सामग्री बनाया है।

(74) अतः ऐ नबी, अपने महान रब के नाम की तसबीह करो।[6]

(75) अतः नहीं,[7] मैं क़सम खाता हूँ तारों की स्थितियों की, (76) और अगर तुम समझो तो यह बहुत बड़ी क़सम है, (77) कि यह एक उच्च कोटि का क़ुरआन[8] है, (78) एक सुरक्षित किताब में अंकित (79) जिसे पवित्रों के सिवा कोई छू नहीं सकता।[9] (80) यह सारे जहान के रब का उतारा हुआ है। (81) फिर क्या इस वाणी की तुम उपेक्षा करते हो, (82) और इस नेमत में अपना हिस्सा तुमने यह रखा है कि इसे झुठलाते हो?

---

5. अर्थात् जिन पेड़ों की लकड़ियों से तुम आग जलाते हो उनको तुमने पैदा किया है या हमने?
6. अर्थात् उसका शुभ नाम लेकर यह घोषित करो कि वह उन सभी दोषों और दुर्बलताओं से मुक्त है जो काफ़िर और मुशरिक (बहुदेववाद) लोग उससे जोड़ते हैं और जो कुफ़्र और 'शिर्क' (बहुदेववाद) की हर धारणा और आख़िरत (परलोक) का इनकार करनेवालों के प्रत्येक तर्क में निहित हैं।
7. अर्थात् बात वह नहीं है जो तुम समझे बैठे हो। यहाँ क़ुरआन के अल्लाह की ओर से होने पर क़सम खाने से पहले 'ला' (नहीं) शब्द का इस्तेमाल ख़ुद यह व्यक्त कर रहा है कि लोग इस पवित्र ग्रन्थ के सम्बन्ध में कुछ बातें बना रहे थे जिनका खण्डन करने के लिए यह क़सम खाई जा रही है।
8. तारों और उपग्रहों की स्थितियों से मुराद उनके स्थान, उनकी मंज़िलें और उनके भ्रमण-कक्ष हैं। और क़ुरआन के उच्च कोटि की किताब होने पर उनकी क़सम खाने का अर्थ यह है कि ऊपरी लोक में आकाशीय पिण्डों की व्यवस्था जैसी सुदृढ़ और मज़बूत है वैसी ही मज़बूत और सुदृढ़ यह वाणी भी है। जिस ईश्वर ने वह व्यवस्था बनाई है उसी ईश्वर ने यह वाणी भी उतारी है।
9. अर्थात् यह पाक फ़रिश्तों के द्वारा आया है। शैतानों का इसमें कोई दख़ल नहीं है।

(83) अब अगर तुम किसी के अधीन नहीं हो और अपने इस विचार में सच्चे हो, तो जब मरनेवाले की जान हलक़ तक पहुँच चुकी होती है, (84) और तुम आँखों देख रहे होते हो कि वह मर रहा है, (85,86,87) उस समय उसकी निकलती हुई जान को वापस क्यों नहीं ले आते? उस समय तुम्हारी अपेक्षा हम उसके ज़्यादा नज़दीक होते है मगर तुमको दिखाई नहीं देते। (88) फिर वह मरनेवाला अगर क़रीबवालों में से हो, (89) तो उसके लिए सुख और उत्तम आजीविका और नेमत भरी जन्नत है। (90) और अगर वह दाएँ पक्षवालों में से हो, (91) तो उसका स्वागत यूँ होता है कि सलाम है तुझे, तू दाएँ पक्षवालों में से है। (92) और अगर वह झुठलानेवाले गुमराह लोगों में से हो, (93) तो उसके सत्कार के लिए खौलता हुआ पानी है (94) और जहन्नम में झोंका जाना।

(95) यह सब कुछ परम सत्य है, (96) अतः ऐ नबी, अपने महान रब के नाम की तसबीह (गुणगान) करो।[10]



10. इसी आदेश के अनुसार नबी (सल्ल०) ने आदेश दिया कि रुकू में ''सुबहा-न रब्बियल अज़ीम'' (पाक है मेरा रब जो महान है) कहा जाए।

57. अल-हदीद

नाम

आयत 25 के वाक्यांश, ''और लोहा (अल-हदीद) उतारा'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसके मदनी सूरा होने में सब एक मत हैं और इसकी वार्ताओं पर विचार करने से आभासित होता है कि सम्भवतः यह उहुद के युद्ध और हुदैबिया की सन्धि के मध्य किसी समय अवतरित हुई है। यह वह समय था जब इस्लाम को अपने अनुयायियों से केवल प्राण की क़ुरबानी ही की ज़रूरत न थी बल्कि धन की क़ुरबानी की भी ज़रूरत थी, और इस सूरा में इसी क़ुरबानी के लिए ज़ोरदार अपील की गई है। इस अनुमान की आयत 10 से तदधिक पुष्टि होती है।

विषय और वार्ता

इसका विषय अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करने पर उभारना है। यह सूरा इस उद्देश्य के लिए अवतरित की गई थी कि मुसलमानों को विशेष रूप से धन की क़ुरबानियों के लिए तैयार किया जाए और यह बात उनके मन में बिठाई जाए कि ईमान (की मूल आत्मा और वास्तविकता) अल्लाह और उसके धर्म के लिए विशुद्ध-हृदय होना है। जो व्यक्ति इस आत्मा से वंचित है और ईश्वर और उसके धर्म के मुक़ाबले में अपने प्राण, धन और अपने हित को अधिक प्रिय समझे, उसके ईमान की स्वीकृति खोखली है। इस उद्देश्य के लिए सबसे पहले अल्लाह के गुण वर्णित किए गए है ताकि सुननेवालों को भली प्रकार यह एहसास हो जाए कि इस महान सत्ता की ओर से उनको सम्बोधित किया जा रहा है। इसके पश्चात् ये निम्नलिखित वार्ताएँ क्रमशः प्रस्तुत की गई हैं :

(1) ईमान को अनिवार्यतः यह अपेक्षित है कि आदमी ईश्वर के मार्ग में माल ख़र्च करने से पहलू न बचाए।

(2) ईश्वर के मार्ग में प्राण और धन की क़ुरबानी देना यद्यपि हर हाल में अपना मूल्य रखता है, किन्तु इन क़ुरबानियों का मूल्य अवसर की गम्भीरता की दृष्टि से निश्चित होता है। जो लोग इस्लाम की कमज़ोरी की स्थिति में उसे उच्च करने के लिए जाने लड़ाएँ और माल ख़र्च करें उनके दर्जे को वे लोग नहीं पहुँच सकते जो इस्लाम को प्रभुत्वशाली होने की स्थिति में उसकी तदधिक उन्नति के लिए जान और माल क़ुरबान करें।

(3) सत्यमार्ग में जो माल भी ख़र्च किया जाए वह अल्लाह के ज़िम्मा ऋण है, अल्लाह उसे न केवळ यह कि कई गुना बढ़ा-चढाकर लौटाएगा बल्कि अपनी ओर से और अधिक प्रतिदान भी प्रदान करेगा।

(4) परलोक में प्रकाश उन्हीं ईमानवालों के हिस्से में आएगा जिन्होंने ईश्वरीय मार्ग में अपना माल ख़र्च किया हो। रहे वे कपटाचारी जो संसार में अपने ही हित को देखते रहे, परलोक में उनको ईमानवालों से विलग कर दिया जाएगा, वे प्रकाश से वंचित होंगे और उनका परिणाम वही होगा जो काफ़िरों का होगा।

(5) मुसलमानों को उन किताबवालों की तरह नहीं हो जाना चाहिए जिनके हृदय दीर्घकाल की बेसुधियों के कारण पत्थर हो गए। वह ईमानवाला ही क्या जिसका हृदय ईश्वर के स्मरण से न पिघले और उसके अवतरित किए हुए सत्य के आगे न झुके।

(6) अल्लाह की दृष्टि में सत्यवान (सिद्दीक़) और सहीद केवल वे ईमानवाले हैं जो अपना धन किसी दिखावे की भावना के बिना सच्चे दिल से उसकी राह में ख़र्च करते हैं।

(7) सांसारिक जीवन केवल थोड़े दिनों की बहार और एक धोखे की सामग्री है। यहाँ की साज-सज्जा और यहाँ का धन-दौलत, जिसमें लोग एक दूसरे से बढ़ जाने की कोशिश करते हैं, सब कुछ अस्थायी है। स्थायी जीवन वास्तव में पारलौकिक जीवन है। तुम्हें एक-दूसरे से आगे निकलने का प्रयास करना तो यह प्रयास जन्नत की ओर दौड़ने में करो।

(8) संसार में सुख तथा दुख जो भी होता है अल्लाह के पहले से लिखे हुए फ़ैसले के अनुसार होता है। ईमानवालों का चरित्र यह होना चाहिए कि दुख या कष्ट आए तो साहस न छोड़ बैठें, और सुख आए तो इतराने न लगें।

(9) अल्लाह ने अपने रसूल खुली-खुली निशानियों और न्याय तुला के साथ भेजे, ताकि लोग न्याय पर स्थिर रह सकें, और इसके साथ लोहा भी उतारा ताकि सत्य को स्थापित करने और असत्य का सिर नीचा करने के लिए शक्ति का प्रयोग किया जाए। इस तरह अल्लाह यह देखना चाहता है कि मनुष्यों में से कौन लोग ऐसे निकलते हैं जो उसके धर्म के समर्थन और उसकी सहायता के लिए खड़े हो और उसके लिए जान लड़ा दें।

(10) अल्लाह की ओर से पहले पैग़म्बर आते रहे जिनके आमंत्रण से कुछ लोगों ने सीधा रास्ता अपनाया, किन्तु अधिकतर अवज्ञाकारी बने रहे। फिर ईसा (अलै०)

आए जिनकी शिक्षा से लोगों में बहुत-से नैतिक गुण पैदा हुए किन्तु उनके समुदाय ने संन्यास की नई रीती अपनाई। अब सर्वोच्च अल्लाह ने मुहम्मद (सल्ल०) को भेजा है। उनपर जो लोग ईमान लाएँगे, अल्लाह उनको अपनी दयालुता का दोहरा हिस्सा देगा और उनहें (सीधी राह दिखानेवाला) प्रकाश प्रदान करेगा। किताबवाले चाहे अपने आपको अल्लाह के उदार-दान का ठेकेदार समझते रहें, किन्तु अल्लाह का उदार-दान उसके अपने ही हाथ में है, उसे अधिकार है जिसे चाहे अपने उदार-दान से सम्पन्न करे।




57. सूरा अल-हदीद

(मदीना में उतरी–आयतें 29)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अल्लाह की तसबीह (गुणगान) की है हर उस चीज़ ने जो ज़मीन और आसमानों में है, और वही प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है। (2) ज़मीन और आसमानों के राज्य का मालिक वही है, ज़िन्दगी प्रदान करता है और मौत देता है, और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (3) वही प्रथम भी है और अन्तिम भी, और गोचर (ज़ाहिर) भी है और अगोचर (छिपा) भी,[1] और उसे हर चीज़ का ज्ञान है। (4) वही है जिसने आसमानों और ज़मीन को छह दिनों में पैदा किया और फिर सिंहासन पर विराजमान हुआ। उसके ज्ञान में है जो कुछ ज़मीन में जाता हैऔर जो कुछ उससे निकलता है और जो कुछ आसमाान से उतरता है और जो कुछ उसमें चढ़ता है।[2] वह तुम्हारे साथ है जहाँ भी तुम हो। जो काम भी तुम करते हो उसे वह देख रहा है। (5) वही ज़मीन और आसमानों के राज्य का मालिक है और सारे मामले फ़ैसले के लिए उसी की ओर रुजू किए जाते हैं। (6) वही रात को दिन मैं और दिन को रात में दाख़िल करता है, और

1. अर्थात् जब कुछ न था तो वह था और जब कुछ न रहेगा तो वह रहेगा। वह सब प्रकटों से बढ़कर प्रकट है, क्योंकि दुनिया में जो कुछ भी प्रकटन है उसी के गुणों और उसी के कर्मों और उसी के प्रकाश का प्रकटन है। और वह प्रत्येक अगोचर से बढ़कर अगोचर है, क्योंकि इन्द्रियों से उसकी सत्ता को महसूस करना तो अलग रहा, बुद्धि एवं चिन्तन और कल्पना एवं विचार तक उसके रहस्य और वास्तविकता को नहीं पा सकते।
2. दूसरे शब्दों में वह सिर्फ़ मुख्य और समवेत ही का ज्ञाता नहीं है बल्कि उसे गौण और अंशों का भी ज्ञान है। एक-एक दाना जो ज़मीन की तहों में जाता है एक-एक पत्ती और कोंपल जो ज़मीन से फूटती है, वर्षा की एक-एक बूँद जो आसमान से गिरती है, और भापों की प्रत्येक मात्रा जो समुद्रों और झीलों से उठकर आसमान की ओर जाती है, उसकी निगाह में है। उसको मालूम है कि कौन-सा दाना ज़मीन में किस जगह पड़ा है, तभी तो वह उसे फाड़कर उसमें से कोंपल निकालता है और उसे पालकर बढ़ाता है। उसे मालूम है कि भापों की कितनी-कितनी मात्रा कहाँ-कहाँ से उठी है और कहाँ पहुँची है, तभी तो वह उन सबको जमा करके बादल बनाता है और ज़मीन के विभिन्न भागो में बाँटकर हर स्थान पर एक हिसाब से वर्षा करता है।

दिलों के छुपे हुए रहस्य तक जानता है।

(7) ईमान लाओ अल्लाह और उसके रसूल पर[3] और ख़र्च करो उन चीज़ों में से जिनपर उसने तुमको ख़लीफ़ा (प्रतिनिधि) बनाया है। जो लोग तुमें से ईमान लाएँगे और माल ख़र्च करेंगे उनके लिए बड़ा बदला है। (8) तुम्हें क्या हो गया है कि तुम अल्लाह पर ईमान नहीं लाते हालाँकि रसूल तुम्हें अपने रब पर ईमान लाने का निमंत्रण दे रहा है[4] और वह तुमसे पक्का वादा ले चुका है[5] अगर तुम वास्तव में माननेवाले हो। (9) वह अल्लाह ही तो है जो अपने बन्दे पर साफ़-साफ़ आयतें उतार रहा है ताकि तुम्हें अँधेरों से निकालकर रौशनी में ले आए, और वास्तविकता यह है कि अल्लाह तुम्हारे लिए बड़ा ही करुणामय और दयावान् है। (10) आख़िर क्या कारण है कि तुम अल्लाह के मार्ग में ख़र्च नहीं करते हालाँकि ज़मीन और आसमानों की विरासत अल्लाह ही के लिए है।[6] तुममें से जो लोग विजय के बाद ख़र्च और जिहाद करेंगे वे कभी उन लोगों के बराबर नहीं हो सकते जिन्होंने विजय से पहले ख़र्च और जिहाद किया है। उनका दरजा बाद में ख़र्च करनेवालों और जिहाद करनेवालों से बढ़कर है यद्यपि अल्लाह ने दोनों ही से अच्छे वादे किए हैं।[7] जो कुछ तुम करते हो अल्लाह को उसकी ख़बर है।

3. यहाँ ईमान लाने से मुराद सिर्फ़ मौखिक रूप से इस्लाम का इक़रार नहीं है बल्कि सच्चे दिल से ईमान लाना है।
4. यहाँ भी ईमान लाने से मुराद सच्चे दिल से ईमान लाना है।
5. अर्थात् आज्ञापालन का पक्का वादा।
6. इसके दो अर्थ हैं। एक यह कि यह माल तुम्हारे पास हमेशा रहनेवाला नहीं है, एक दिन तुम्हें अनिवार्यतः इसे छोड़कर ही जाना है और अल्लाह ही इसका वारिस होनेवाला है। दूसरा अर्थ यह है कि अल्लाह की राह में माल ख़र्च करते हुए तुमको किसी मुहताजी और तंगी की आशंका नहीं होनी चाहिए, क्योंकि जिस अल्लाह के लिए तुम उसे ख़र्च करोगे वह ज़मीन और आसमान के सारे ख़ज़ानों का मालिक है, उसके पास तुम्हें देने को बस उतना ही कुछ न था जो उसने आज तुम्हें दे रखा है, बल्कि कल वह तुम्हें इससे बहुत ज़्यादा दे सकता है।
7. इससे मालूम हुआ कि जब कभी इस्लाम पर ऐसा समय आ जाए जिसमें कुफ़्र और कुफ़्र करनेवालों का पलड़ा बहुत भारी हो और देखने में इस्लाम की विजय के लक्षण दूर-दूर तक दिखाई न देतो हों, उस समय जो लोग इस्लाम की सहायता और समर्थन में जानें लड़ाएँ और माल ख़र्च करें उनके दरजे को वे लोग नहीं पहुँच सकते जो कुफ़्र और इस्लाम के संघर्ष का फ़ैसला इस्लाम के पक्ष में होने के बाद क़ुरबानियाँ दें।

(11) कौन है जो अल्लाह को क़र्ज़ दे? अच्छा क़र्ज़, ताकि अल्लाह उसे कई गुना बढ़ाकर लौटाए और उसके लिए उत्तम बदला है।[8] (12) उस दिन जबकि तुम ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों को देखोगे कि उनका प्रकाश (नूर) उनके आगे-आगे और उनकी दाई ओर दौड़ रहा होगा।[9] (उनसे कहा जाएगा कि) ''आज ख़ुशख़बरी है तुम्हेर लिए।'' जन्नतें होंगी जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, जिनमें वे हमेशा रहेंगे। यही है बड़ी सफलता। (13) उस दिन मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) मर्दों और औरतों का हाल यह होगा कि वे ईमानवालों से कहेंगे, ''तनिक हमारी ओर देखो ताकि हम तुम्हारे प्रकाश से कुछ लाभ उठाएँ।'' मगर उनसे कहा जाएगा, ''पीछे हट जाओ, अपना प्रकाश कहीं और तलाश करो।'' फिर उनके बीच एक दीवार खड़ी कर दी जाएगी जिसमें एक दरवाज़ा होगा। उस दरवाज़े के अन्दर दयालुता होगी और बाहर अज़ाब। (14) वे ईमानवालों से पुकार-पुकारकर कहेंगे, ''क्या हम तुम्हारे साथ न थे?'' ईमानवाले जवाब देंगे, ''हाँ, मगर तुमने अपने-आपको ख़ुद फ़ितने में डाला, अवसरवादिता से काम लिया, शक में पड़े रहे, और झूठी आशाएँ तुम्हें धोखा देती रहीं, यहाँ तक कि अल्लाह का फ़ैसला आ गया, और अन्तिम समय तक वह बड़ा धोखेबाज़ (शैतान) तुम्हें अल्लाह के मामले में धोखा देता रहा। (15) अतः आज न तुमसे कोई फ़िदया (मुक्ति प्रतिदान) स्वीकार किया जाएगा और न उन लोगों से जिन्होंने खुल्लम-खुल्ला कुफ़्र (इनकार) किया था। तुम्हारा ठिकाना जहन्नम है, वही तुम्हारी ख़बर लेनेवाली है, और यह बड़ा ही बुरा परिणाम है।''

(16) क्या ईमान लानेवालों[10] के लिए अभी वह समय नहीं आया कि उनके दिल

8. यह अल्लाह की महान उदारता है कि आदमी अगर उसके दिए हुए माल को उसी की राह में ख़र्च करे तो उसे वह अपने ऊपर एक क़र्ज़ घोषित करता है, शर्त यह है कि वह अच्छा क़र्ज़ हो अर्थात् ख़ालिस नीतय (शुद्ध इरादे) के साथ किसी व्यक्तिगत स्वार्थ के बिना दिया जाए। इस क़र्ज़ के बारे में अल्लाह के दो वादे हैं। एक यह कि वह उसे कई गुना बढ़ा-चढ़ाकर वापस देगा, दूसरे यह कि वह उसपर अपनी ओर से बहुत ही अच्छा बदला भी प्रदान करेगा।
9. यहाँ एक सवाल आदमी के मन में खटक पैदा कर सकता है, वह यह कि आगे-आगे प्रकाश का दौड़ना तो समझ में आता है मगर प्रकाश के सिर्फ़ दाईं ओर दौड़ने का क्या अर्थ है? क्या उनके बाईं ओर अँधकार होगा? इसका जवाब यह है कि अगर एक व्यक्ति अपने दाएँ हाथ पर प्रकाश लिए हुए चल रहा हो तो उससे प्रकाशमान तो बाईं ओर भी होगा मगर वस्तुस्थिति यही होगी कि प्रकाश उसके दाएँ हाथ पर है।

अल्लाह के ज़िक्र से पिघलें और उसके उतारे हुए सत्य के आगे झुकें और वे उन लोगों की तरह न हो जाएँ जिन्हें पहले किताब दी गई थी, फिर एक लम्बा समय उनपर गुज़र गया तो उनके दिल कठोर हो गए और आज उनमें से ज़्यादातर अवज्ञाकारी बने हुए हैं? (17) अच्छी तरह जान लो कि अल्लाह ज़मीन को उसकी मौत के बाद ज़िन्दगी प्रदान करता है,[11] हमने निशानियाँ तुमको साफ़-साफ़ दिखा दी हैं, शायद कि तुम बुद्धि से काम लो।

(18) मर्दों और औरतों में से जो लोग सदक़े (दान)[12] देनेवाले हैं और जिन्होंने अल्लाह को अच्छा क़र्ज़ दिया है, उनको वास्तव में कई गुना बढ़ाकर दिया जाएगा और उनके लिए बड़ा ही अच्छा बदला है। (19) और जो लोग अल्लाह और उसके रसूलों पर ईमान लाए हैं वही अपने रब के नज़दीक सिद्दीक़[13] (अत्यन्त सच्चे) और शहीद[14]

10. यहाँ ''ईमान लानेवालों'' से मुराद सारे मुसलमान नहीं बल्कि मुसलमानों का वह विशिष्ट गिरोह है जो ईमान का इक़रार करके अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के माननेवालों में शामिल हो गया था और इसके बावजूद इस्लाम के दर्द से उसका दिल ख़ाली था।
11. यहाँ जिस सम्बन्ध में यह बात कही गई है उसको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। क़ुरआन मजीद में अनेक स्थानों पर नुबूवत (पैग़म्बरी) और किताब के अवतरण की मिसला बारिश की बरकतों से दी गई है क्योंकि मानवता पर उसके वही प्रभाव पड़ते हैं जो धरती पर वर्षा के हुआ करते हैं। जिस ज़मीन में कुछ भी उगने की सलाहियत होती है वह लहलहा उठती है, अलबत्ता बंजर ज़मीन जैसी थी वैसी ही बंजर पड़ी रहती है।
12. 'सदक़ा' उर्दू भाषा में तो बहुत ही बुरे अर्थों में बोला जाता है, मगर इस्लाम की पारिभाषिक शब्दावली में यह उस दान को कहते हैं जो सच्चे दिल और ख़ालिस नीयत के साथ अल्लाह की ख़ुशी हासिल करने के लिए दिया जाए और जिसमें कोई दिखावा न हो, न किसी पर एहसान जताया जाए।
13. यह सिद्क़ शब्द का अत्युक्ति रूप है। सादिक़ सच्चा, और सिद्दीक़ अत्यन्त सच्चा। मुराद है ऐसा सत्यवादी व्यक्ति जिसमें कोई खोट न हो, जो कभी सत्य और ठीक मार्ग से न हटा हो, जिससे यह आशा ही न की जा सकती हो कि वह कभी अपनी अन्तरात्मा के विरुद्ध कोई बात कहेगा, जिसने किसी बात को माना हो तो दिल की पूरी सच्चाई के साथ माना हो, उसकी वफ़ादारी का हक़ अदा किया हो और अपने कर्म से सिद्ध कर दिया हो कि वह वास्तव में वैसा ही माननेवाला है जैसा एक माननेवाले को होना चाहिए।

(साक्षी) हैं, उनके लिए उनका बदला और उनका प्रकाश है और जिन लोगों ने कुफ़्र (इनकार) किया है और हमारी आयतों को झुठलाया है वे दोज़ख़ी हैं।

(20) ख़ूब जान लो कि यह दुनिया की ज़िन्दगी इसके सिवा कुछ नहीं कि एक खेल और दिल्लगी और ऊपरी टीपटाप और तुम्हारा आपस में एक दूसरों पर बड़ाई जताना और धन और सन्तान में एक दूसरे से बढ़ जाने की कोशिश करना है। इसकी मिसाल ऐसी है जैसे एक वर्षा हो गई तो उससे पैदा होनेवाली वनस्पति को देखकर किसान ख़ुश हो गए। फिर वही खेती पक जाती है और तुम देखते हो कि वह पीली हो गई। फिर वह भुस बनकर रह जाती है। इसके विपरीत आख़िरत वह स्थान है जहाँ कठोर अज़ाब है और अल्लाह का क्षमादान (माफ़ी) और उसकी प्रसन्नता है। दुनिया की ज़िन्दगी एक धोखे की टट्टी के सिवा कुछ नहीं। (21) दौड़ो और एक-दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करो अपने रब के क्षमादान और उस जन्नत की ओर जिसका विस्तार आसमान और ज़मीन जैसा है,[15] जो तैयार की गई है उन लोगों के लिए जो अल्लाह और उसके रसूलों पर ईमान लाए हों। यह अल्लाह का उदार अनुग्रह है, जिसे चाहता है प्रदान करता है, और अल्लाह बड़ा अनुग्रहवाला है।

(22) कोई मुसीबत ऐसी नहीं जो ज़मीन में या तुम्हारे अपने ऊपर उतरती हो और हमने उसको पैदा करने से पहले एक किताब (अर्थात् भाग्य-पत्रिका) में लिख न रखा हो। ऐसा करना अल्लाह के लिए बहुत आसान काम है। (23) (यह सब कुछ इसलिए है) ताकि जो कुछ भी हानि तुम्हें हो उसपर तुम्हारा दिल छोटा न हो और जो कुछ अल्लाह तुम्हें प्रदान करे उसपर फूल न जाओ। अल्लाह ऐसे लोगों को पसन्द नहीं करता जो अपने आपको बड़ी चीज़ समझते हैं और डींगें मारते हैं। (24) जो ख़ुद कंजूसी करते हैं और दूसरों को कंजूसी करने पर उकसाते हैं। अब अगर कोई मुँह मोड़ता है तो अल्लाह निस्पृह (बेनियाज़) और प्रशंसनीय है।

(25) हमने अपने रसूलों को साफ़-साफ़ निशानियों और मार्गदर्शनों के साथ भेजा, और उनके साथ किताब और तुला अवतरित की ताकि लोग इनसाफ़ पर क़ायम

14. शहीद से मुराद यहाँ वह व्यक्ति है जो अपने वचन और कर्म से सत्य की गवाही दे।
15. इस आयत को सूरा आले इमरान की आयत 133 के साथ मिलाकर पढ़ने से कुछ ऐसी कल्पना मन में आती है कि जन्नत में एक इनसान को जो बाग़ और महल मिलेंगे वे तो सिर्फ़ उसके ठहरने के लिए होंगे, मगर वास्तव में पूरा विश्व उसकी सैरगाह होगी।

हों,[16] और लोहा उतारा जिसमें बड़ा ज़ोर है और लोगों के लिए लाभ है।[17] यह इसलिए किया गया है कि अल्लाह को मालूम हो जाए कि कौन उसको देखे बिना उसकी और उसके रसूलों की सहायता करता है। यक़ीनन अल्लाह बड़ी शक्तिवाला और प्रभुत्वशाली है।

(26) हमने नूह और इबराहीम को भेजा और उन दोनों की नस्ल में नुबूवत (पैग़म्बरी) और किताब रख दी। फिर उनकी औलाद में से किसी ने सन्मार्ग अपनाया और बहुत-से अवज्ञाकारी हो गए। (27) उनके बाद हमने एक के बाद एक अपने रसूल भेजे, और उन सबके बाद मरयम के बेटे ईसा को भेजा और उसको इंजील प्रदान की, और जिन लोगों ने उसका अनुसरण किया उनके दिलों में हमने तरस और दयालुता डाल दी। और रहबानियत[18] (संन्यास) की प्रथा उन्होंने ख़ुद आविष्कृत की, हमने उसे उनके लिए अनिवार्य नहीं किया था, मगर अल्लाह की ख़ुशी की तलब में उन्होंने ख़ुद

16. इस संक्षिप्त से वाक्य में नबियों के मिशन का सारांश बयान कर दिया गया है। दुनिया में अल्लाह के जितने रसूल (पैग़म्बर) भी अल्लाह की ओर से आए वे सब तीन चीज़ें लेकर आए थे। (1) 'बैयिनात' अर्थात् खुली-खुली निशानियाँ, स्पष्ट प्रमाण और स्पष्ट मार्गदर्शन एवं आदेश। (2) किताब, जिसमें वे सारी शिक्षाएँ लिख दी गई थीं जिनकी इनसानों को संमार्ग पर लाने के लिए ज़रूरत थी ताकि लोग मार्ग पाने के लिए उसकी ओर रुजू कर सकें। (3) मीज़ान (तुला), अर्थात् सत्य और असत्य की वह कसौटी और आदर्श जो ठीक-ठीक तराज़ू की तौल तौलकर यह बता दे कि विचार, नैतिक व्यवहार और मामलों में कमी और ज़्यादती के विभिन्न अतिक्रमों के बीच इनसाफ़ की बात क्या है।
17. नबियों के मिशन को बयान करने के तुरन्त बाद यह कहना, ख़ुद ही इस बात की ओर इशारा करता है कि यहाँ लोहे से मुराद राजनीतिक और जंगी ताक़त है, और कहने का मक़सद यह है कि अल्लाह ने अपने रसूलों को न्याय-स्थापना की सिर्फ़ एक योजना प्रस्तुत कर देने के लिए नहीं भेजा था बल्कि यह बात भी उनके मिशन में शामिल थी कि उसको व्यवहारतः लागू करने की कोशिश की जाए और वह शक्ति जुटाई जाए जिससे वास्तव में न्याय की स्थापना हो सके, उसे छिन्न-भिन्न करनेवालों को सज़ा दी जा सके और उसके प्रतिरोधकों का ज़ोर तोड़ा जा सके।
18. यहाँ 'रहबानियत' शब्द इस्तेमाल हुआ है। रहबानियत का अर्थ है संसार-त्यागी बन जाना और दुनिया की ज़िन्दगी से भागकर जंगलों और पहाड़ों में शरण लेना या एकान्तवासी होकर रह जाना।

ही यह नई चीज़ निकाली और फिर इसकी पाबन्दी करने का जो हक़ था उसे अदा न किया। उनमें से जो लोग ईमान लाए हुए थे उनका प्रतिदान हमने उनको प्रदान किया, मगर उनमें से ज़्यादातर लोग अवज्ञकारी हैं।

(28) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह से डरो और उसके रसूल (मुहम्मद सल्ल॰) पर ईमान लाओ, अल्लाह तुम्हें अपनी दयालुता का दोहरा हिस्सा प्रदान करेगा और तुम्हें वह प्रकाश प्रदान करेगा जिसके उजाले में तुम चलोगे, और तुम्हारे क़ुसूर माफ़ कर देगा, अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और दयावान् है। (29) (तुमको यह नीति अपनानी चाहिए) ताकि किताबवालों को मालूम हो जाए कि अल्लाह के अनुग्रह पर उनका कोई एकाधिकार नहीं है। और यह कि अल्लाह का अनुग्रह उसके अपने ही हाथ में है, जिसे चाहता है प्रदान करता है, और वह महान अनुग्रहवाला है।

●●●

58. अल-मुजादला

नाम

इस सूरा का नाम अल-मुजादला भी है और अल-मुजादिला भी। यह नाम पहली ही आयत के शब्द 'तुजादिलु-क' (तुमसे तकरार कर रही है) से उद्धृत है।

अवतरणकाल

सूरा 33 (अहज़ाब) में अल्लाह ने मुँहबोले बेटे के सगा बेटा होने को नकारते हुए केवल यह कहकर छोड़ दिया था कि ''और अल्लाह ने तुम्हारी उन पत्नियों को, जिनसे तुम ज़िहार करते हो तुम्हारी माँ नहीं बना दिया है।'' (ज़िहार से अभिप्रेत है, पत्नी को माँ की उपमा देना।) किन्तु उसमें यह नहीं बताया गया था कि ज़िहार करना कोई पाप या अपराध है और न यह बताया गया था कि शरीअत का इस कर्म के विषय में क्या आदेश है। इसके विपरीत इस सूरा में ज़िहार का पूरा क़ानून बयान कर दिया गया है। इससे मालूम होता है कि यह विस्तृत आदेश उस संक्षिप्त आदेश के पश्चात् अवतरित हुए हैं। (इस तथ्य के अन्तर्गत यह) बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि इस सूरा का अवतरणकाल अहज़ाब के अभियान (शव्वाल सन् 5 हिजरी) के बाद का है।

विषय और वार्ताएँ

इस सूरा में मुसलमानों को उन विभिन्न समस्याओं के सम्बन्ध में आदेश दिए गए हैं, जो समस्याएँ उस समय खड़ी हो गई थीं। सूरा के आरम्भ से आयत 6 तक ज़िहार के सम्बन्ध में शरीअत के आदेश वर्णिय किए गए हैं और इसके साथ मुसलमानों को अत्यन्त कड़ाई के साथ सावधान किया गया है कि इस्लाम के बाद भी अज्ञान की रीतियों पर दृढ़ रहना और अल्लाह की निर्धारित मर्यादाओं को तोड़ना निश्चय ही ईमान के विपरीत कर्म है, जिसकी सज़ा दुनिया में भी अपमान और अपयश है और परलोक मे भी इसपर सख़्ती से पूछगछ होनी है। आयत 7 से 10 तक में कपटाचारियों की इस नीति पर पकड़ की गई है कि वे आपस में गुप्त कानाफ़ूसियाँ करके तरह-तरह की शरारतों की योजनाएँ बनाते थे और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यहूदियों की तरह ऐसे ढंग से सलाम करते थे जिससे दुआ कि जगह बददुआ का पहलू निकलता था। इस सम्बन्ध में मुसलमानों को तसल्ली दी गई है कि कपटाचारियों की ये कानाफ़ूसियाँ तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं। इसलिए तुम अल्लाह के भरोसे पर अपना कार्य करते रहो। और इसके साथ उनको यह नैतिक शिक्षा भी दी गई है कि सच्चे ईमानवालों का काम पाप और अन्याय और अत्याचार और रसूल की अवज्ञा के लिए कानाफ़ूसी करना

नहीं है। वे यदि आपस में बैठकर एकान्त में कोई बात करें भी तो यह नेकी और ईशपरायणता की बात होनी चाहिए। आयत 11-13 तक में मुसलमानों को सभा-सम्बन्धी सभ्यता के कुछ नियम सिखाए गए हैं और कुछ ऐसे सामाजिक अवगुणों को दूर करने के आदेश दिए गए हैं जो पहले भी लोगों में पाए जाते थे और आज भी पाए जाते हैं। आयत 14 से सूरा के अन्त तक मुस्लिम समाज के लोगों को जिनमें सत्यनिष्ठ ईमानवाले और कपटाचारी और दुविधाग्रस्त सब मिले-जुले थे, बिलकुल दो टूक तरीक़े से बताया गया है कि धर्म में आदमी के सत्यानिष्ठ होने का मापदण्ड क्या है। इस प्रकार से मुसलमान वे हैं जो इस्लाम के शत्रुओं से मित्रता का सम्बन्ध रखते हैं और अपने हित के लिए धर्म के साथ ग़द्दारी करने में उन्हें कोई झिझक नहीं होती। दूसरे प्रकार के मुसलमान वे हैं जो ईश्वरीय धर्म के मामले में किसी और का ध्यान रखना तो अलग रहा, स्वयं अपने बाप-भाई, सन्तान और घराने तक की उन्हें परवाह नहीं होती। अल्लाह ने इन आयतों में स्पष्टतः कह दिया है कि पहले प्रकार के लोग चाहे कितनी ही सौगन्धें खा-खाकर अपने मुसलमान होने का विश्वास दिलाएँ, वास्तव में वे शैतान के दल के लोग हैं और अल्लाह के दल में सम्मिलित होने का श्रेय केवल दूसरे प्रकार के मुसलमानों को प्राप्त है।



58. सूरा अल-मुजादला

(मदीना में उतरी–आयतें 22)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अल्लाह[1] ने सुन ली उस औरत की बात जो अपने शौहर (पति) के मामले में तुमसे तकरार कर रही है और अल्लाह से फ़रियाद किए जाती है। अल्लाह तुम दोनों की बातचीत सुन रहा है, वह सब कुछ सुनने और देखनेवाला है। (2) तुममें से जो लोग अपनी बीवियों से 'ज़िहार' करते हैं[2] उनकी बीवियाँ उनकी माएँ नहीं हैं, उनकी माएँ तो वही हैं जिन्होंने उनको जन्म दिया है। ये लोग एक अत्यन्त[3] अप्रिय और झूठी बात कहते

1. ये आयतें एक औरत ख़ोला बिन्त सालबा के मामले में अवतरित हुई थीं जिनसे उनके शौहर ने 'ज़िहार' किया था और वे नबी (सल्ल॰) से पूछने आई थी कि इस्लाम में इसके बारे में क्या आदेश है। उस समय तक चूँकि अल्लाह की ओर से इस मामले में कोई आदेश नहीं आया था इसलिए नबी (सल्ल॰) ने कहा कि मेरा विचार है कि तुम अपने शौहर पर हराम हो गई हो। इसपर वे फरियाद करने लगीं कि मेरी और मेरे बच्चों की ज़िन्दगी तबाह हो जाएगी। इसी दशा में जबकि वे रो-रोकर नबी (सल्ल॰) से निवेदन कर रही थी कि कोई उपाय ऐसा बताइए जिससे मेरा घर बिगड़ने से बच जाए, अल्लाह की ओर से 'वह्य' (प्रकाशना) उतरी और इस समस्या के सम्बन्ध में आदेश बयान किया गया।
2. अरब में अधिकतर ऐसा होता था कि शौहर और बीवी में लड़ाई होती, तो शौहर गुस्से में आकर कहता कि "तू मेरे ऊपर ऐसी है जैसे मेरी माँ की पीठ।" इसका वास्तविक अर्थ यह होता था कि "तुझसे संभोग करना मेरे लिए ऐसा है जैसे अपनी माँ से संभोग करूँ।" इस ज़माने में भी बहुत से नादान लोग बीवी से लड़-झगड़कर उसकी उपमा माँ, बहन, बेटी से दे बैठते हैं जिसका स्पष्ट अर्थ यह होता है कि आदमी मानो अब उसे बीवी नहीं बल्कि उन औरतों की तरह समझता है जो उसके लिए हराम हैं। इसी कर्म का नाम ज़िहार है। अज्ञानकाल में अरबों के यहाँ यह तलाक़, बल्कि उससे भी बढ़कर सम्बन्ध-विच्छेद की घोषणा समझी जाती थी।
3. अर्थात् यह हरकत तो ऐसी है कि इसपर आदमी को बहुत ही कठोर सजा मिलनी चाहिए, लेकिन यह अल्लाह की दया है कि उसने पहले तो ज़िहार के मामले में जाहिलियत के क़ानून को निरस्त करके तुम्हारे घरेलू जीवन को तबाही से बचा लिया, दूसरे इस कर्म के करनेवालों के लिए वह सज़ा निर्धारित की जो इस अपराध की हलकी से हलकी सज़ हो सकती थी।

हैं, और वास्तविकता यह है कि अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और क्षमाशील है। (3) जो लोग अपनी बीवियों से 'ज़िहार' करें फिर अपनी उस बात से रुजू करें जो उन्होंने कही थी,[4] तो इससे पहले कि दोनों एक दूसरे को हाथ लगाएँ, एक ग़ुलाम आज़ाद करना होगा। इससे तुमको नसीहत की जाती है, और जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उसकी ख़बर रखता है।[5] (4) और जो व्यक्ति ग़ुलाम न पाए वह दो महीने के लगातार रोज़े रखे इससे पहले कि दोनों एक दुसरे को हाथ लगाएँ।[6] और जिसे इसकी भी सामर्थ्य न हो वह साठ मुहताजों को ख़ाना खिलाए।[7]

यह आदेश इसलिए दिया जा रहा है कि तुम अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाओ।[8] ये अल्लाह की निर्धारित की हुई सीमाएँ हैं, और कुफ़्र करनेवालों के लिए दर्दनाक सज़ा है। (5) जो लोग अल्लाह और उसके रसूल का विरोध करते हैं वे उसी तरह अपमानित एवं तिरस्कृत कर दिए जाएँगे जिस तरह उनसे पहले के लोग अपमानित एवं तिरस्कृत किए जा चुके हैं। हमने साफ़-साफ़ आयतें उतार दी हैं, और कुफ़्र करनेवालों के लिए अपमानजनक अज़ाब है। (6) उस दिन (यह अपमानजनक अज़ाब होना है) जब अल्लाह उन सबको फिर से ज़िन्दा करके उठाएगा और उन्हे बता देगा कि वे क्या कुछ करके आए हैं। वे भूल गए हैं मगर अल्लाह ने उनका सब किया धरा गिन-गिनकर सुरक्षित रखा है और अल्लाह एक-एक चीज़ पर गवाह है।

---

4. इसके दो अर्थ हो सकते हैं। एक यह कि उस बात का निवारण करना चाहें जो उन्होंने कही थी। दुसरे यह कि उस चीज़ को अपने लिए हलाल (वैध) करना चाहें जिसे यह बात कहकर उन्होंने हराम करना चाहा था।
5. अर्थात् अगर आदमी घर में चुपके से बीवी के साथ 'ज़िहार' कर बैठे और फिर क़फ़्फ़ारा (प्रायश्चित दण्ड) अदा किए बिना शौहर बीवी में पहले जैसा दाम्पत्य सम्बन्ध चलते रहें, तो भले ही दुनिया में किसी को भी इसकी ख़बर न हो, अल्लाह को तो हर हाल में इसकी ख़बर होगी ही, अल्लाह की पकड़ से बच निकलना उनके लिए किसी तरह संभव नहीं है।
6. अर्थात् लगातार दो महीने के रोज़े रखे जाएँ। बीच में कोई रोज़ा न छूटे।
7. अर्थात् दो वक़्त का पेट-भर भोजन दे, चाहे पका हुआ हो या ख़ुराक के सामान के रूप में, चाहे 60 आदमियों को एक दिन खिला दिया जाए या एक आदमी को 60 दिन खिलाया जाए।
8. यहाँ 'ईमान लाने' से मुराद सच्चे और निष्ठावान ईमानवाले व्यक्ति जैसी नीति अपनानी है।

(7) क्या तुमको ख़बर नहीं है[9] कि ज़मीन और आसमानों की हर चीज़ का अल्लाह को ज्ञान है? कभी ऐसा नहीं होता कि तीन आदमियों में कोई गुप्त बातचीत हो और उनके बीच चौथा अल्लाह न हो, या पाँच आदमियों में गुप्त बातचीत हो और उनमें छठा अल्लाह न हो। गुप्त बात करनेवाले चाहे इससे कम हो या ज़्यादा, जहाँ कहीं भी वे हों, अल्लाह उनके साथ होता है। फिर क़ियामत के दिन वह उनको बता देगा कि उन्होंने क्या कुछ किया है। अल्लाह हर चीज़ का ज्ञान रखता है। (8) क्या तुमने देखा नहीं उन लोगों को जिन्हें गुप्त बातचीत करने से रोक दिया गया था फिर भी वे वही हरकत किए जाते हैं जिससे उन्हें रोका गया था? ये लोग छिप-छिपकर आपस में गुनाह और ज़्यादती और रसूल की अवज्ञा की बातें करते हैं, और जब तुम्हारे पास आते हैं तो तुम्हें उस तरीक़े से सलाम करते हैं जिस तरह अल्लाह ने तुमको सलाम नहीं किया है[10] और अपने दिलों में कहते हैं कि हमारी इन बातों पर अल्लाह हमें अज़ाब क्यों नहीं देता? उनके लिए जहन्नम ही काफ़ी है। उसी का वे ईंधन बनेंगे। बड़ा ही बुरा परिणाम है उनका।

(9) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब तुम आपस में गुप्त बात करो तो गुनाह और ज़्यादती और रसूल की अवज्ञा की बातें नहीं बल्कि नेकी और परहेज़गारी की बातें करो और उस अल्लाह से डरते रहो जिसके पास तुम्हें हश्र में पेश होना है। (10) कानाफूसी तो एक शैतानी काम है, और वह इसलिए की जाती है कि ईमान लानेवाले लोग उससे

---

9. यहाँ से आयत 10 तक लगातार मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) की उस नीति पर पकड़ की गई है जो उन्होंने उस समय मुसलिम समाज में अपना रखी थीं। वे ऊपर से तो मुसलमानों के गिरोह में सम्मिलित थे, मगर अन्दर ही अन्दर उन्होंने ईमानवालों से अलग अपना एक जत्था बना रखा था। मुसलमान जब भी उन्हें देखते, यही देखते कि वे आपस में सिर जोड़े खुसुर-फुसुर कर रहे हैं। इन्हीं गुप्त वार्ताओं में वे मुसलमानों में फूट डालने और फ़ितने पैदा करने और आतंकित करने के लिए तरह-तरह की योजनाएँ बनाते और नई-नई अफ़वाहें घड़ते थे।
10. यह यहूदियों और मुशरिकों (बहुदेववादियों) दोनों ही की नीति थी। अनेक उल्लेखों (रिवायतों) में यह बात आई है कि कुछ यहूदी नबी (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुए और उन्होंने "अस्सामु अलैक या अबुल क़ासिम" (ऐ क़ासिम के बाप तुम्हें मौत आए) कहा। अर्थात् "अस्साम अलैक" को कुछ इस ढंग से उच्चारित किया कि सुननेवाला समझे कि 'सलाम' कहा है, मगर वास्तव में उन्होंने 'साम' कहा था जिसका अर्थ है मौत।

दुखी हों, हालाँकि अल्लाह की अनुज्ञा के बिना वह उन्हें कुछ भी हानि नहीं पहुँचा सकती, और ईमानवालों को अल्लाह ही पर भरोसा रखना चाहिए।

(11) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब तुमसे कहा जाए कि अपनी मजलिसों में कुशादगी पैदा करो तो जगह कुशादा कर दिया करो, अल्लाह तुम्हें कुशादगी प्रदान करेगा।[11] और जब तुमसे कहा जाए कि उठ जाओ तो उठ जाया करो।[12] तुममें से जो लोग ईमान रखनेवाले हैं और जिनको ज्ञान प्रदान किया गया है, अल्लाह उनको ऊँचे दर्जे प्रदान करेगा, और जो कुछ तुम करते हो अल्लाह को उसकी ख़बर है।

(12) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब तुम रसूल से तनहाई में बात करो तो बात करने से पहले कुछ सदक़ा (दान) दो,[13] यह तुम्हारे लिए अच्छा और ज़्यादा पाकीज़ा है। अलबत्ता अगर तुम सदक़ा देने के लिए कुछ न पाओ तो अल्लाह माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला है।

(13) क्या तुम डर गए इस बात से कि तनहाई में बातचीत करने से पहले तुम्हें सदक़े देने होंगे? अच्छा, अगर तुम ऐसा न करो—और अल्लाह ने तुमको इससे माफ़ कर दिया—जो नमाज़ क़ायम करते रहो, 'ज़कात' देते रहो और अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करते रहो। तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उसकी ख़बर रखता है।[14]

(14) क्या तुमने देखा उन लोगों को जिन्होंने दोस्त बनाया है एक ऐस गिरोह को

11. अल्लाह और उसके रसूल ने मुसलिमों को जो शिष्ट नियम सिखाए हैं उनमें से एक बात यह भी है कि जब किसी मजलिस में पहले से कुछ लोग बैठे हों और बाद में और कुछ लोग आएँ, तो यह सभ्यता पहले से बैठे हुए लोगों में होनी चाहिए कि वे ख़ुद नए आनेवालों को जगह दें और यथासंभव कुछ सिकुड़ और सिमटकर उनके लिए कुशादगी पैदा करें और इतनी शिष्टता बाद के आनेवालों में होनी चाहिए कि वे ज़बरदस्ती उनके अन्दर न घुसें और कोई व्यक्ति किसी को उठाकर उसकी जगह बैठने की कोशिश न करे।
12. अर्थात् जब मजलिस ख़त्म करने के लिए कहा जाए तो उठ जाना चाहिए, जमकर बैठ न जाना चाहिए।
13. हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) इस आदेश का कारण यह बताते हैं कि लोग अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से बहुत अधिक और अनावश्यक रूप से तनहाई में मिलने के लिए निवेदन करने लगे थे।

जिसपर अल्लाह का प्रकोप हुआ है? वे न तुम्हारे हैं न उनके, और वे जान-बूझकर झूठी बात पर क़समें खाते हैं। (15) अल्लाह ने उनके लिए कठोर अज़ाब तैयार कर रखा है, बड़ी ही बुरी करतूत हैं जो वे कर रहे हैं। (16) उन्होंने अपनी क़समों को ढाल बना रखा है जिसकी आड़ में वे अल्लाह की राह से लोगों को रोकते हैं, इसपर उनके लिए अपमानजनक अज़ाब है। (17) अल्लाह से बचाने के लिए न उनके माल कुछ काम आएँगे न उनकी सन्तान। वे दोज़ख़ के साथी हैं, उसी में वे हमेशा रहेंगे। (18) जिस दिन अल्लाह उन सबको उठाएगा, वे उसके सामने भी उसी तरह क़समें खाएँगे जिस तरह तुम्हारे सामने खाते हैं और अपने नज़दीक यह समझेंगे कि इससे उनका कुछ काम बन जाएगा। ख़ूब जान लो, वे परले दरजे के झूठे हैं। (19) शैतान उनपर छा चुका है और उसने अललाह की याद उनके दिल से भुला दी है। वे शैतान की पार्टी के लोग हैं। सावधान रहो, शैतान की पार्टीवाले ही घाटे में रहनेवाले हैं। (20) निश्चय ही अत्यन्त अपमानित लोगों में से हैं वे लोग जो अल्लाह और उसके रसूल का मुक़ाबला करते हैं। (21) अल्लाह ने लिख दिया है कि मैं और मेरे रसूल ही विजयी होकर रहेंगे। वास्तव में अल्लाह अत्यन्त प्रभुत्वशाली और बलवान है।

(22) तुम कभी यह न पाओगे कि जो लोग अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रखनेवाले हैं वे उन लोगों से प्रेम करते हों जिन्होंने अल्लाह और उसके रसूल का विरोध किया है, चाहे वे उनके बाप हों, या उनके बेटे, या उनके भाई या उनके घरानेवाले। ये वे लोग हैं जिनके दिलों में अल्लाह ने ईमान अंकित कर दिया है और अपनी ओर से एक आत्मा प्रदान करके उनको शक्ति दी है। वह उनको ऐसी जन्नतों में दाख़िल करेगा जिनके नीचे नहरें बहती होंगी। उनमें वे हमेशा रहेंगे। अल्लाह उनसे राज़ी हुआ और वे अल्लाह से राज़ी हुए। वे अल्लाह की पार्टी के लोग हैं। सावधान रहो, अल्लाह की पार्टीवाले ही सफलता प्राप्त करनेवाले हैं।



14. यह दूसरा आदेश ऊपर के आदेश के थोड़े समय बाद ही अवतरित हो गया और इसने सदक़े के आदेश को मंसूख़ (रद्द) कर दिया। इसमें मतभेद है कि सदक़ा का यह आदेश कितनी देर रहा। क़तादह कहते हैं कि एक दिन से भी कम समय तक बाक़ी रहा फिर मंसूख़ कर दिया गया। मुक़ातिल बिन हैयान कहते है कि दस दिन तक रहा। यह अकि से अधिक इस आदेश के बाक़ी रहने की अवधि है जो किसी रिवायत (उल्लेख) में बयान हुई है।

59. अल-हश्र

नाम

दूसरी आयत के वाक्यांश ''जिसने किताबवाले काफ़िरों को पहले ही हल्ले (हश्र) में उनके घरों से निकाल बाहर किया'' से उद्धृत है। अभिप्रेत यह है कि यह वह सूरा है जिसमें अल-हश्र शब्द आया है।

अवतरणकाल

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) (कहते हैं कि सूरा हश्र) बनी नज़ीर के अभियान के विषय में अवतरित हुई थी, जिस तरह सूरा 8 (अनफ़ाल) बद्र के युद्ध के विषय में अवतरित हुई थी। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम) (विश्वस्त उल्लेखों के अनुसार इस अभियान का समय रबी-उल-अव्वल सन् 4 हिजरी है।)

ऐतिहासिक पृष्टभूमि

इस सूरा की वार्ताओं को अच्छी तरहा समझने के लिए ज़रूरी है कि यहूदियों के इतिहास पर एक दृष्टि डाल ली जाए, क्योंकि इसके बिना आदमी ठीक-ठीक यह नहीं जान सकता है कि नबी (सल्ल॰) ने अन्ततः उनके विभ्नि क़बीलों के साथ जो मामला किया, उसके वास्तविक कारण क्या थे। (यह इतिहास पहली शताब्दी ईस्वी के अन्त से शुरू होता है।) जब सन् 70 ईस्वी में रूमियों ने फ़िलिस्तीन में यहूदियों का सार्वजनिक नरसंहार किया और फिर सन् 132 ई॰ में उन्हें इस भू-भाग से बिलकुल निकाल बाहर किया। उस समय बहुत-से यहूदी क़बीलों ने भागकर हिजाज़ में शरण ली थी, क्योंकि ये क्षेत्र फ़िलिस्तीन के दक्षिण में बिलकुल मिला हुआ अवस्थित था। यहाँ आकर उन्होंने जहाँ-जहाँ जल-स्रोत और हरे-भरे स्थान देखे, कहाँ ठहर गए और फिर धीरे-धीरे अपने जोड़-तोड़ और सूदी-कारबारों के द्वारा उनपर क़ब्ज़ा जमा लिया। ऐला, मक़ना, तबूक, तैमा, वादिउल क़ुराअ, फ़दक और ख़ैबर पर उनका आधिपत्य उसी समय में स्थापित हुआ और बनी क़ुरैश, बनी नज़ीर, बनी बहदल और बनी क़ैनुक़ा ने भी उसी ज़माने में आकर यसरिब (मदीना का पुराना नाम) पर क़ब्ज़ा जमाया। यसरिब में आबाद होनेवाले क़बीलों में से बनी नज़ीर और बनी क़ुरैज़ा अधिक उभरे हुए और प्रभुत्वशाली थे, क्योंकि उनका सम्बन्ध काहिनों के वर्ग से था। उन्हें यहुदियों में उच्च वंश का माना जाता था और उन्हें अपने सम्प्रदाय में धार्मिक नेतृत्व प्राप्त था। ये लोग जब मदीना में आकर आबाद हुए उस समय कुछ दूसरे अरब क़बीले यहाँ रहते थे, जिनको इनहोंने दबा लिया

और व्यवहारतः सि हरे-भरे स्थान के मालिक बन बैठे। इसके लगभग तीन शताब्दी के पश्चात् औस और खज़रज यसरिब में जाकर आबाद हुए (और उन्होंने कुछ समय पश्चात् यहूदियों का ज़ोर तोड़कर यसरिब पर पूरा आधिपत्य प्राप्त कर लिया।) अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पदार्पण से पहले हिजरत के प्रारम्भ तक, हिजाज़ में सामान्यतः और यसरिब में विशेष रूप से यहूदियों की पोज़ीशन की स्पष्ट रूप-रेखा यह थी : भाषा, वस्त्र, सभ्यता, नागरिकता, हर दृष्टि से उन्होंने पूर्ण रूप से अरब-संस्कृति का रंग ग्रहण कर लिया था। उनके और अरबों के मध्य विवाह तक के सम्बन्ध स्थापित हो चुके थे, किन्तु इन सारी बातों के बावजूद वे अरबों में समाहित बिलकुल न हुए थे और उनहोंने सतर्कता के साथ अपने यहूदी पक्षपात को जीवित रखा था। उनमें अत्यन्त इसराईली पक्षपात और वंशगत गर्व और अहंकार पाया जाता था। अरबवालों को वे उम्मी (Gentiles) कहते थे, जिसका अर्थ केवल अनपढ़ नहीं, बल्कि असभ्य और उजड्ड होता था। उनकी धारणा यह थी कि इन उम्मियों को वे मानवीय अधिकार प्राप्त नहीं हैं जो इसराईलियों के लिए हैं और उनका धन प्रत्येक वैध और अवैध रीति से मार खाना इसराईलियों के लिए वैध और विशुद्ध है। आर्थिक दृष्टि से उनकी स्थिति अरब क़बीलों की अपेक्षा अधिक सुदृढ थी। वे बहुत-से ऐसे हुनर और कारीगरी जानते थे जो अरबों में प्रचलित न थी। और बाहर की दुनिया से उनके कारोबारी सम्बन्ध भी थे। वे अपने व्यापार में ख़ूब लाभ बटोरते थे। लेकिन उनका सबसे बड़ा कारोबार ब्याज लेने का था जिसके जाल में उन्होंने अपने आसपास की अरब आबादियों को फांस रखा था, किन्तु इसका स्वाभाविक परिणाम यह भी था कि अरबों में साधारणतया उनके विरुद्ध एक गहरी घृणा पाई जाती थी। उनके व्यापारिक और आर्थिक हितों की अपेक्षा यह थी कि अरबों में किसी के मित्र बनकर किसी से बिगाड़ पैदा न करें और न उनकी पारस्परिक लड़ाई में भाग लें। इसके अतिरिक्त तदधिक अपनी सुरक्षा के लिए उनके हर क़बीले ने किसी-न-किसी शक्तिशाली अरब क़बीले से प्रतिज्ञाबद्ध मैत्री के सम्बन्ध भी स्थापित (कर रखे थे) यसरिब में बनी क़ुरेज़ा और बनी नज़ीर, औस के प्रतिज्ञाबद्ध मित्र थे और बनी क़ैनुक़ा ख़ज़ारज के। यह स्थिती थी जब मदीने में इस्लाम पहुँचा और अन्ततः अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पदार्पण के पश्चात् वहाँ एक इस्लामी राज्य अस्तित्व में आया। आपने इस राज्य को स्थापित करते ही जो सर्वप्रथम काम किए उनमें से एक यह था कि औस और ख़ज़रज और मुहाजिरों को मिलाकर एक बिरादरी बनाई और दूसरा यह था कि मुस्लिम समाज और यहूदियों के मध्य स्पष्ट शर्तों पर एक अनुबन्ध निर्णीत किया, जिसमें इस बात की ज़मानत दी गई थी कि कोई किसी के अधिकारों पर हाथ नहीं डालेगा और बाह्य शत्रुओं के मुक़ाबले में यह सब संयुक्त प्रतिरक्षा करेंगे। इस अनुबन्ध के कुछ महत्त्वपूर्ण

वाक्य ये हैं :

"यह कि यहूदी अपना ख़र्च उठाएँगे और मुसलमान अपना ख़र्च; और यह कि इस अनुबन्ध में सम्मिलित लोग आक्रमणकारी के मुक़ाबले में एक-दूसरे की सहायता करने के पाबन्द होंगे। और यह कि वे शुद्ध-हृदयता के साथ एक-दूसरे के शुभ-चिन्तक होंगे। और उनके मध्य पारस्परिक सम्बन्ध यह होगा कि वे एक-दूसरे के साथ नेकी और न्याय करेंगे, गुनाह और अत्याचार नहीं करेंगे। और यह कि कोई उसके साथ ज़्यादती न करेगा जिसके साथ उसकी प्रतिज्ञाबद्ध मैत्री है, और यह कि उत्पीड़ित की सहायता की जाएगी, और यह कि जब तक युद्ध रहे, यहूदी मुसलमानों के साथ मिलकर उसका ख़र्च उठाएँगे। और यह कि इस अनुबन्ध में सम्मिलित होनेवालों के लिए यसरिब में किसी प्रकार का उपद्रव और बिगाड़ का कार्य वर्जित है और यह कि अनुबन्ध में सम्मिलित होनेवालों के मध्य यदि कोई विवाद या मतभेद पैदा हो, जिससे दंगा और बिगाड़ की आशंका हो तो उसका निर्णय अल्लाह के क़ानून के अनुसार अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल॰) करेंगे.... और यह कि क़ुरैश और उसके समर्थकों को शरण नहीं दी जाएगी और यह कि यसरिब पर जो आक्रमण करे, उसके मुक़ाबले में अनुबन्ध में सम्मिलित लोग एक-दूसरे की सहायता करेंगे...। हर पक्ष अपनी तरफ़ के क्षेत्र की सुरक्षा का उत्तरदायी हो।" (इब्ने हिशाम, भाग दो, पृष्ठ 147-150)

यह एक निश्चित और स्पष्ट अनुबन्ध था जिसकी शर्तें स्वयं यहूदियों ने स्वीकार की थी, किन्तु बहुत जल्द उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰), इस्लाम और मुसलमानों के विरुद्ध शत्रुतापूर्ण नीति का प्रदर्शन शुरू कर दिया और उनकी शत्रुता एवं उनका विद्वेष दिन-प्रतिदिन उग्र रूप धारण करता चला गया। उन्होंने नबी (सल्ल॰) के विरोध को अपना-जातीय लक्ष बना लिया। आपको पराजित करने के लिए कोई चाल, कोई उपाय और कोई हथकंडा इस्तेमाल करने में उनको तनिक भी संकोच न था। अनुबन्ध के विरुद्ध खुली-खुली शत्रुतापूर्ण नीति तो बद्र के युद्ध से पहले ही वे अपना चुके थे। किन्तु जब बद्र में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) और मुसलमानों को क़ुरैश पर स्पष्टतः विजय प्राप्त हुई तो वे तिलमिला उठे और उनके द्वेष की आग और अधिक भड़क उठी। बनी नज़ीर का सरदार कअब बिन अशरफ़ चीख़ उठा कि "अल्लाह की क़सम, यदि मुहम्मद ने अरब के इन सम्मानित व्यक्तियों को क़त्ल कर दिया है, तो धरती का पेट हमारे लिए उसकी पीठ से अधिक अच्छा है।" फिर वह मक्का पहुँचा और बद्र में क़ुरैश के जो सरदार मारे गए थे उनके अत्यन्त उत्तेजक मर्सिये (शोकगीत) कहकर मक्कावालों को प्रतिरोध पर उकसाया। यहूदियों का पहला क़बीला जिसने सामूहिक रूप से बद्र के युद्ध

के पश्चात् खुल्लम-खुल्ला अपना अनुबन्ध भंग कर दिया, बनी क़ैनुक़ा था जिसके बाद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने शव्वाल (और कुछ उल्लेखों के अनुसार ज़ी-क़ादा) सन् 2 हिजरी के अन्त में उनके मुहल्ले का घेराव कर दिया। केवल पन्द्रह दिन ही यह घेराव रहा कि उन्होंने हथियार डाल दिए। (और अन्त में उन्हें) अपना सब माल, हथियार और उद्योग के उपकरण और यंत्र छोड़कर मदीना से निकल जाना पड़ा (इब्ने साद, इब्ने हिशाम, तारीख़े तबरी)। इसके बाद जब शव्वाल सन् 3 हिजरी में क़ुरैश के लोग बद्र के युद्ध का बदला लेने के लिए बड़ी तैयारियों के साथ मदीना पर चढ़ आए, तो इन यहूदियों ने अनुबन्ध की पहली और स्पष्ट अवज्ञा इस तरह की कि मदीना की प्रतिरक्षा में आपके साथ सम्मिलित न हुए, हालाँकि वे इसके पाबन्द थे। फिर जब उहुद की लड़ाई में मुसलमानों को बहुत बड़ी हानि पहुँची तो उनका साहस और बढ़ गया, यहाँ तक कि बनी नज़ीर ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को मार डालने के लिए व्यवस्थित रूप से एक षड्यंत्र रचा, जो ठीक समय पर असफल हो गया। (इन घटनाओं के पश्चात्) अब उनके साथ किसी प्रकार की नर्मी का प्रश्न ही न रहा। नबी (सल्ल॰) ने उनको अविलम्ब यह अल्टीमेटम भेज दिया कि तुमने जो ग़द्दारी करनी चाही थी, वह मुझे ज्ञात हो गई है। अतः दस दिन के भीतर मदीना से निकल जाओ, इसके पश्चात् अगर तुम यहाँ ठहरे रहे तो जो व्यक्ति भी तुम्हारी बस्ती में पाया जाएगा उसकी गर्दन मार दी जाएगी। (अब्दुल्लाह बिन उबई के) झूठे भरोसे पर उन्होंने नबी (सल्ल॰) के अल्टीमेटम का यह जवाब दिया, "हम यहाँ से नहीं निकलेंगे, आपसे जो कुछ हो सके, कर लीजिए।" इसपर रबीउल अव्वल सन् 4 हिजरी में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उनका घेराव कर लिया, और केवल कुछ ही दिनों के घेराव के बाद वे इस शर्त पर मदीना छोड़ देने को राज़ी हो गए कि हथियार के अतिरिक्त जो कुछ भी वे अपने ऊँटों पर लादकर ले जा सकेंगे, ले जाएँ। इस तरह यहूदियों के इस दूसरे दुष्ट क़बीले से मदीना की ज़मीन ख़ाली करा ली गई। उनमें से केवल दो आदमी मुसलमान होकर यहाँ ठहर गए। शेष सीरिया और ख़ैबर की ओर निकल गए। यही घटना है जिसकी इस सूरा में विवेचना की गई है।

विषय और वार्ताएँ

सूरा का विषय जैसा कि ऊपर बयान हुआ, बनी नज़ीर के अभियान की समीक्षा है। इसमें सामूहिक रूप से चार विषय वर्णित हुए हैं :

(1) पहली चार आयतों में दुनिया को उसके परिणाम से शिक्षा दिलाई गई है, जो अभी-अभी बनी नज़ीर ने देखा था। अल्लाह ने बताया है कि (बनी नज़ीर का यह निर्वासन स्वीकार कर लेना) मुसलमानों की शक्ति का चमत्कार नहीं था, बल्कि इस बात का

परिणाम था कि वे अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) से लड़ गए थे और जो लोग अल्लाह की ताक़त से टकराने का दुस्साहस करें, उन्हें ऐसे ही परिणाम का सामना करना पड़ता है।

(2) आयत 5 में युद्ध के क़ानून का यह नियम बताया गया है कि युद्ध-संबंधी आवश्यकताओं के लिए शत्रु के क्षेत्र में जो ध्वंसात्मक कार्रवाई की जाए उसे धरती में बिगाड़ पैदा करने का नाम नहीं दिया जाता।

(3) आयत 6 से 10 तक यह बताया गया है कि उन देशों की ज़मीनों और सम्पत्तियों का प्रबन्ध किस तरह किया जाए जो युद्ध या सन्धि के परिणामस्वरूप इस्लामी राज्य के अधीन हो जाएँ।

(4) आयत 11 से 17 तक कपटाचारियों की उस नीति की समीक्षा की गई है जो उन्होंने बनी नज़ीर के अभियान के अवसर पर अपनाई थी।

(5) आयत 18 से सूरा के अन्त तक पूरा-का-पूरा एक उपदेश है जिसका सम्बोधन उन सभी लोगों से है जो ईमान का दावा करके मुसलमानों के गिरोह में शामिल हो गए हों, किन्तु ईमान के वास्तविक भाव से वंचित रहें। इसमें उनको बताया गया है कि वास्तव में ईमान की अपेक्षा क्या है।



59. सूरा अल-हश्र

(मदीना में उतरी—आयतें 24)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अल्लाह ही की तसबीह की है हर उस चीज़ ने जो आसमानों और ज़मीन में हैं, और वही प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है। (2) वही है जिसने किताबवाले काफ़िरों को पहले ही हल्ले में उनके घरों से निकाल बाहर किया।[1] तुम्हें हरगिज़ यह गुमान न था कि वे निकल जाएँगे, और वे भी यह समझे बैठे थे कि उनकी गढ़ियाँ उन्हें अल्लाह से बचा लेंगी। मगर अल्लाह ऐसे रुख़ से उनपर आया जिधर उनका ख़याल भी न गया था।[2] उसने उनके दिलों में रोब डाल दिया। नतीजा यह हुआ कि वे ख़ुद अपने हाथों से भी अपने घरों को बरबाद कर रहे थे और ईमानवालों के हाथों भी बरबाद करवा रहे थे। अतः शिक्षा ग्रहण करो ऐ देखनेवाली आँख रखनेवालो!

(3) यदि अल्लाह ने उनके लिए देशनिकाला न लिख दिया होता तो दुनिया ही में वह उन्हें अज़ाब दे डालता,[3] और आख़िरत में तो उनके लिए दोज़ख़ का अज़ाब है

1. किताबवाले काफ़िरों से मुराद यहाँ बनी नज़ीर का यहूदी क़बीला है जो मदीना के एक भाग में रहता था। इस क़बीले से अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सन्धि थी, लेकिन इसने बार-बार प्रतिज्ञा भंग की। आख़िरकार रबीऊल अव्वल सन् 4 हिजरी में नबी (सल्ल॰) ने उन लोगों को नोटिस दे दिया कि या तो मदीना से निकल जाओ वरना युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। उन्होंने निकलने से इनकार किया तो आपने मुसलमानों की सेना लेकर उनपर चढ़ाई की और अभी लड़ाई की नौबत भी न आई थी कि वे देश निकाला स्वीकार करने पर तैयार हो गए हालाँकि उनकी गढ़ियाँ बहुत मज़बूत थीं, उनकी संख्या भी मुसलमानों से कम न थी और लड़ाई का सामान भी उनके पास बहुत था।
2. अल्लाह का ऊनपर आना इस अर्थ में नहीं है कि अल्लाह किसी और जगह था और फिर वहीं से उनपर हमलावर हुआ। बल्कि यह उपलक्षणात्मक वर्णन-शैली है। असल मक़सद यह ध्यान दिलाना है कि मुसलमानों के हमले से पहले वे इस ख़याल में थे कि बाहर से कोई हमला होगा तो हम अपनी क़िलाबंदियों से उसको रोक लेंगे। लेकिन अल्लाह ने ऐसे मार्ग से उनपर हमला किया जिधर से किसी आफ़त के आने की वे कोई उम्मीद न रखते थे। और वह मार्ग यह था कि उसने अन्दर से उनके साहस और मुक़ाबले की शक्ति को खोखला कर दिया जिसके बाद न उनके हथियार किसी काम आ सकते थे, न उनके मज़बूत गढ़।

ही। (4) यह सब कुछ इसलिए हुआ कि उन्होंने अल्लाह और उसके रसूल का मुक़ाबला किया, और जो भी अल्लाह का मुक़ाबला करे अल्लाह उसको सज़ा देने में बहुत कठोर है।

(5) तुम लोगों ने खजूरों के जो पेड़ काटे या जिनको अपनी जड़ों पर खड़ा रहने दिया, यह सब अल्लाह ही की अनुज्ञा से था।[4] और (अल्लाह ने यह अनुमति इसलिए दी) ताकि उल्लंघनकारियों को अपमानित और रुसवा करे।[5]

(6) और[6] जो माल अल्लाह ने उनके क़ब्ज़े से निकालकर अपने रसूल की ओर

3. दुनिया के अज़ाब से मुराद है उनका नाम और निशान मिटा देना। अगर वे सुलह करके अपने प्राण बचाने के बजाय लड़ते तो उनका पूर्णतः विध्वंस एवं उन्मूलन हो जाता।
4. यह इशारा है इस मामले की ओर कि बनी नज़ीर की बस्ती के किनारों पर जो खजूरों के बाग़ थे उनके बहुत-से पेड़ों को मुसलमानों ने घेरा डालने के आरम्भ में काट डाला या जला दिया ताकि घेरा आसानी से डाला जा सके, और जो पेड़ सैनिक गतिविधि में रुकावट नहीं बनते थे उनको खड़ा रहने दिया। इसपर मदीना के मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) और यहूदियों ने शोर मचा दिया कि मुहम्मद (सल्ल॰) तो ज़मीन में बिगाड़ पैदा करने से रोकते हैं, मगर यह देख लो, हरे-भरे फलदार पेड़ काटे जा रहे हैं। यह आख़िर ज़मीन में बिगाड़ पैदा करना नहीं तो क्या है। इसपर अल्लाह ने यह हुक्म अवतरित किया कि तुम लोगों ने जो पेड़ काटे और जिनको खड़ा रहने दिया, उनमें से कोई काम भी नाजाइज़ नहीं है, बल्कि दोनों को अल्लाह की अनुमति प्राप्त है।
5. अर्थात् अल्लाह का इरादा यह था कि इन पेड़ों को काटने से भी उनका अपमान और तिरस्कार हो और न काटने से भी। काटने में उनके अपमान और ख़राबी का यह पहलू था कि जो बाग़ उन्होंने अपने हाथों से लगाए थे और जिन बाग़ों के वे दीर्घ समय से मालिक चले आ रहे थे, उनके पेड़ उनकी आँखों के सामने काटे जा रहे थे और वे काटनेवालों को किसी तरह न रोक सकते थे। रहा पेड़ों को न काटने में अपमान का पहलू तो वह यह था कि जब वे मदीना से निकले तो उनकी आँखें यह देख रही थीं कि कल तक जिन हरे-भरे बागों के वे मालिक थे वे आज मुसलमानों के अधिकार में जा रहे हैं। उनका बस चलता तो वे उनको पूरी तरह उजाड़कर जाते और एक सुरक्षित पेड़ भी मुसलमानों के अधिकार में न जाने देते। मगर विवशता के साथ वे सब कुछ ज्यों का त्यों छोड़कर एवं निराशा के साथ निकल गए।

पलटा दिए,[7] वे ऐसे माल नहीं हैं जिनके लिए तुमने अपने घोड़े और ऊँट दौड़ाए हों, बल्कि अल्लाह अपने रसूलों को जिसपर चाहता है प्रभुत्व प्रदान कर देता है, और अल्लाह को हर चीज़ पर सामर्थ्य प्राप्त है।[8] (7) जो कुछ भी अल्लाह बस्तियों के लोगों से अपने रसूल की ओर पलटा दे वह अल्लाह और रसूल और नातेदारों[9] और अनाथों और मुहताजों और मुसाफ़िरों के लिए है ताकि वह तुम्हारे मालदारों ही के बीच चक्कर न खाता रहे।[10] जो कुछ रसूल तुम्हें दे वह ले लो और जिस चीज़ से वह तुमको रोक दे उससे रुक जाओ। अल्लाह से डरो, अल्लाह कठोर सज़ा देनेवाला है।[11] (8) (और वह माल) उन ग़रीब घरबार छोड़नेवालों (मुहाजिरीन) के लिए है जो अपने घरों और सम्पत्तियों से निकाल बाहर किए गए हैं। ये लोग अल्लाह का अनुग्रह और उसकी

6. अब उन सम्पत्तियों और मालों का उल्लेख हो रहा है जिनके मालिक पहले बनी नज़ीर थे और जो उनके देश निकाला के बाद इस्लामी हुकमत के क़ब्ज़े में आए। उनके सम्बन्ध में यहाँ से आयत 10 तक अल्लाह ने बताया है कि उनका प्रबन्ध किस तरह किया जाए।
7. इन शब्दों से अपने आप यह अर्थ निकलता है कि यह ज़मीन और वे सारी चीज़ें जो यहाँ पाई जाती हैं, वास्तव में उन लोगों का हक़ नहीं हैं जो अल्लाह प्रतापवान के बाग़ी हैं। इसलिए जो माल भी एक वैध और सत्य पर आधारित युद्ध के परिणामस्वरूप काफ़िरों के क़ब्ज़े से निकलकर ईमानवालों के क़ब्ज़े में आएँ उनकी वास्तविक हैसियत यह है कि उनका मालिक उन्हें अपने ख़ियानत करनेवाले और विश्वासघाती सेवकों के अधिकार से निकालकर अपने आज्ञाकारी सेवकों की ओर पलटा लाया है। इसी लिए इन मालों को इस्लामी क़ानून की परिभाषा में 'फ़ै' (पलटाकर लाए हुए माल) घोषित किया गया है।
8. अर्थात् इन मालों और सम्पत्तियों का मुसलमानों के क़ब्ज़े में आना प्रत्यक्ष लड़नेवाली सेना के बाहुबल का परिणाम नहीं है, बल्कि यह उस सामूहिक शक्ति का परिणाम है जो अल्लाह ने अपने रसूल और उसके समुदाय (उम्मत) और उसकी स्थापित की हुई व्यवस्था को प्रदान की है। इसलिए इन मालों को 'ग़नीमत' के माल से बिलकुल भिन्न हैसियत प्राप्त है और लड़नेवाली सेना का यह हक़ नहीं है कि 'ग़नीमत' की तरह इनको भी उसमें बाँट दिया जाए। इस तरह शरीअत में 'ग़नीमत' और 'फ़ै' का आदेश अलग-अलग कर दिया गया है। 'गनीमत' वे चल सम्पत्तियाँ हैं जो युद्ध की कार्यवाहियों के बीच दुश्मन की सेनाओं से प्राप्त हों। उनके अलावा दुश्मन देश की ज़मीने, घर और दूसरी चल और अचल सम्पत्तियाँ 'ग़नीमत' की परिभाषा से बाहर और 'फ़ै' में सम्मिलित हैं।

प्रसन्नता चाहते हैं और अल्लाह और उसके रसूल की सहायता पर कटिबद्ध रहते हैं। यही सत्यवादी लोग हैं। (9) (और वह उन लोगों के लिए भी है) जो इन घर-बार छोड़कर आनेवालों से पहले ही ईमान लाकर, घर-बार त्याग करके आ बसनेवाले आवास (दारुल हिजरत) में बसे हुए थे।[12] ये उन लोगों से प्रेम करते हैं जो घरबार छोड़ करके उनके पास आए हैं और जो कुछ भी उनको दे दिया जाए उसकी कोई अपेक्षा तक

9. नातेदारों से मुराद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के नातेदार हैं, अर्थात् बनी हाशिम और बनी अल-मुत्तलिब। यह हिस्सा इसलिए निश्चित किया गया था कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) अपने और अपने घरवालों के हक़ अदा करने के साथ अपने उन नातेदारों के हक़ भी अदा कर सकें जिन्हें आपकी सहायता की ज़रूरत हो, या आप जिनकी सहायता करने की ज़रूरत महसूस करें। नबी (सल्ल॰) के स्वर्गवास के बाद यह एक अलग स्थायी हिस्से के रूप में बाक़ी नहीं रहा, बल्कि मुसलमानों के दूसरे मुहताज, अनाथ और मुसाफ़िरों के साथ बनी हाशिम और बनी अल-मुत्तलिब के मुहताज लोगों के हक़ भी बैतुलमाल (सरकारी ख़ज़ाना) के ज़िम्मे हो गए, अलबत्ता इस कारण उनका हक़ दूसरों की अपेक्षा प्रमुख समझा गया कि 'ज़कात' (दान) में उनका हिस्सा नहीं है।
10. यह क़ुरआन मजीद के महत्त्वपूर्ण मौलिक आदेशों में से है जिसमें इस्लामी समाज और राज्य की आर्थिक नीति का यह आधारभूत नियम बयान किया गया है कि दौलत की गर्दिश पूरे समाज में आम होनी चाहिए, ऐसा न हो कि माल सिर्फ़ मालदारों ही में घूमता रहे, या धनी निरन्तर और ज़्यादा धनवान और निर्धन निरन्तर और ज़्यादा निर्धन होते चले जाएँ।
11. यद्यपि यह आदेश बनी नज़ीर के माल के विभाजन के सम्बन्ध में अवतरित हुआ था मगर आदेश के शब्द आम हैं, इसलिए इसका अभिप्राय यह है कि सारे मामलों में मुसलमान अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की आज्ञाओं का पालन करें. इस अभिप्राय को यह बात और ज़्यादा स्पष्ट कर देती है कि ''जो कुछ रसूल तुम्हें दे'' के मुक़ाबले में ''जो कुछ न दे'' के शब्द इस्तेमाल नहीं किए गए हैं, बल्कि कहा यह गया है कि ''जिस चीज़ से वह तुम्हें रोक दे (या मना कर दे'' उससे रुक जाओ।
12. तात्पर्य 'अनसार' से है, अर्थात् 'फ़ै' में सिर्फ़ 'मुहाजिरों' (घर बार छोड़कर आनेवालों, हिजरत करनेवालों) ही का हक़ नहीं है, बल्कि पहले से जो मुसलमान दारुल इस्लाम (इस्लामी राज्य) में आबाद हैं वे भी इसमें हिस्सा पाने के हक़दार हैं।

ये अपने दिलों में महसूस नहीं करते और अपने मुक़ाबले में दूसरों को प्राथमिकता देते हैं चाहे अपनी जगह ख़ुद मुहताज हों। वास्तविकता यह है कि जो लोग अपने दिल की तंगी से बचा लिए गए वही सफलता प्राप्त करनेवाले हैं। (10) (और वह उन लोगों के लिए भी है) जो इन अगलों के बाद आए हैं,[13] जो कहते हैं कि ''ऐ हमारे रब, हमें और हमारे उन सब भाईयों को माफ़ कर दे जो हमसे पहले ईमान लाए हैं और हमारे दिलों में ईमानवालों के लिए कोई विद्वेष न रख। ऐ हमारे रब, तू अत्यन्त करुणामय और दयावान् है।''[14]

(11) तुमने[15] देखा नहीं उन लोगों को जिन्होंने मिथ्याचार (मुनाफ़िक़त) की नीति अपनाई है? ये अपने कुफ़्र में ग्रस्त किताबवाले भाइयों से कहते हैं, ''अगर तुम्हें निकाला गया तो हम तुम्हारे साथ निकलेंगे, और तुम्हारे मामले में हम किसी की बात हरगिज़ न मानेंगे, और अगर तुमसे युद्ध किया गया तो हम तुम्हारी सहायता करेंगे।'' मगर अल्लाह गवाह है कि ये लोग बिलकुल झूठे हैं। (12) अगर वे निकाले गए तो ये उनके साथ हरगिज़ न निकलेंगे, और अगर उनसे युद्ध किया गया तो ये उनकी हरगिज़ सहायता न करेंगे, और अगर ये उनकी सहायता करे भी तो पीठ फेर जाएँगे और फिर कहीं से कोई सहायता न पाएँगे। (13) इनके दिलों में अल्लाह से बढ़कर तुमहारा डर है, इसलिए कि ये ऐसे लोग हैं जो समझ-बूझ नहीं रखते।[16] (14) ये कभी इकट्ठे होकर

13. अर्थात् 'फ़ै' के मालों में सिर्फ़ वर्तमान नस्लों ही का हक़ नहीं है बल्कि बाद के आनेवालों का हक़ भी है।
14. इस आयत में मुसलमानों को यह महत्त्वपूर्ण नैतिक शिक्षा दी गई है कि वे किसी मुसलमान के लिए अपने दिल में द्वेष-भावना न रखें और अपने से पहले गुज़रे हुए मुसलमानों के हक़ में माफ़ी की दुआ करते रहें, न यह कि उनपर लानत भेजें और तबर्रा (विरक्ति एवं घृणा प्रकट) करें।
15. इस पूरे रुकू में मुनाफ़िकों (कपटाचारियों) की नीति पर विचार प्रकट किया गया है। जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने बनी नज़ीर को मदीना से निकल जाने के लिए दस दिन का नोटिस दिया था और उनका घेराव शुरू होने में अभी कई दिन बाक़ी थे तो मदीने के मुनाफ़िक़ लीडरों ने उनको यह कहला भेजा कि हम दो हज़ार आदमियों के साथ तुम्हारी सहायता को आएँगे और बनी क़ुरैज़ा और बनी ग़तफ़ान भी तुम्हारी सहायता में उठ खड़े होंगे। अतः तुम मुसलमानों के मुक़ाबले में डच जाओ और हरगिज़ उनके आगे हथियार न डालो। ये तुमसे लड़ेंगे तो हम तुम्हारे साथ लड़ेंगे, और तुम यहाँ से निकले गए तो हम भी निकल जाएँगे।

(खुले मैदान में) तुम्हारा मुक़ाबला न करेंगे, लड़ेंगे भी तो क़िलाबन्द बस्तियों में बैठकर या दीवारों के पीछे छुपकर। ये आपस के विरोध में बड़े कठोर हैं। तुम इन्हें इकट्ठा समझते हो मगर इनके दिल एक दूसरे से फटे हुए हैं। इनकी यह दशा इसलिए है कि ये बुद्धिहीन लोग हैं। (15) ये उन्हीं लोगों के सदृश हैं जो इनसे थोड़े ही समय पहले अपने किए का मज़ा चख चुके हैं[17] और इनके लिए दर्दनाक अज़ाब है। (16) इनकी मिसाल शैतान जैसी है कि पहले वह इनसान से कहता है कि कुफ़्र कर और जब इनसान कुफ़्र कर बैठता है तो वह कहता है कि मैं तुम्हारी ज़िम्मेदारी से बरी हूँ, मुझे तो सारे जहान के रब अल्लाह से डर लगता है। (17) फिर दोनों का परिणाम यह होना है कि हमेशा के लिए नरक में जाएँ, और ज़ालिमों का यही बदला है।

(18) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह से डरो, और प्रत्येक व्यक्ति यह देखे कि उसने कल के लिए क्या सामान किया है।[18] अल्लाह से डरते रहो, अल्लाह को यक़ीनन तुम्हारे उन सब कर्मों की ख़बर है जो तुम करते हो। (19) उन लोगों की तरह

16. इस छोटे-से वाक्य में एक बड़ा तथ्य बयान किया गया है। जो व्यक्ति समझ-बूझ रखता हो वह तो यह जानता है कि वास्तव में डरने के योग्य अल्लाह की शक्ति है न कि इनसानों की शक्ति। इसलिए वह हर ऐसे काम से बचेगा जिसपर उसे अल्लाह की पकड़ का ख़तरा हो, चाहे कोई इनसानी ताक़त पकड़नेवाली हो या न हो, और हर वह कर्तव्य पूरा करने के लिए उठ खड़ा होगा जिसको अल्लाह ने उसके लिए ज़रूरी ठहरा दिया हो, चाहे सारी दुनिया की शक्तियाँ इसमें रुकावट बन रही हों। लेकिन एक नासमझ आदमी सभी मामलों में अपनी नीति का निर्धारण अल्लाह के बजाय इनसानी ताक़तों के अनुसार करता है। किसी चीज़ से बचेगा तो इसलिए नहीं कि अल्लाह के यहाँ उसकी पकड़ होनेवाली है, बल्कि इसलिए कि सामने कोई इनसानी ताक़त उसकी ख़बर लेने के लिए मौजूद है। और किसी काम को करेगा तो वह भी इसलिए नहीं कि अल्लाह ने उसका आदेश दिया है, बल्कि सिर्फ़ इसलिए कि कोई इनसानी ताक़त उसका आदेश देनेवाली या उसको पसन्द करनेवाली है। यही समझ और नासमझी का अन्तर वास्तव में ईमानवाले और ईमान से ख़ाली व्यक्ति के चरित्र को एक दूसरे से अलग करता है।
17. इशारा है क़ुरैश के काफ़िरों और बनी क़ैनुक़ा के यहूदियों की ओर जो अपनी बहुसंख्या और अपने सारे ज़रूरी उपकरणों और साज़-सामान के बावजूद इन्हीं कमज़ोरियों के कारण मुसलमानों की मुट्ठी-भर बिना साज़-सामानवाली जमाअत से परास्त हो चुके थे।

न हो जाओ जो अल्लाह को भूल गए तो अल्लाह ने उन्हें ख़ुद उनकी अपनी आत्मा (नफ़्स) भुला दी,[19] यही लोग उल्लंघनकारी हैं। (20) दोज़ख़ में जानेवाले और जन्नत (स्वर्ग) में जानेवाले कभी समान नहीं हो सकते। जन्नत में जानेवाले ही वास्तव में सफल हैं।

(21) अगर हमने यह क़ुरआन किसी पहाड़ पर भी उतार दिया होता तो तुम देखते कि वह अल्लाह के डर से दबा जा रहा है और फटा पड़ता है।[20] ये मिसालें हम लोगों के सामने इसलिए बयान करते हैं कि वे (अपनी हालत पर) विचार करें।

(22) वह अल्लाह ही है जिसके सिवा कोई पूज्य[21] नहीं, अदृश्य और प्रकट हर चीज़ का जाननेवाला, वही सर्वोच्च करुणामय और दयावान् है। (23) वह अल्लाह ही है जिसके सिवा कोई पूज्य नहीं। वह सम्राट है बड़ा ही पवित्र,[22] सर्वथा सलामती,[23]

18. कल से मुराद आख़िरत है। मानो दुनिया की यह पूरी ज़िन्दगी 'आज', और 'कल' वह क़ियामत का दिन है जो इस आज के बाद आनेवाला है।
19. अर्थात् अल्लाह को भुला देने का अनिवार्य परिणाम ख़ुद अपने को भूल जाना है। जब आदमी यह भूल जाता है कि वह किसी का बन्दा है तो अनिवार्यतः वह दुनिया में अपनी एक ग़लत हैसियत निश्चित कर बैठता है और उसकी सारी ज़िन्दगी इसी मौलिक भ्रान्ति के कारण ग़लत होकर रह जाती है। इसी तरह जब वह यह भूल जाता है कि वह एक अल्लाह के सिवा किसी का बन्दा नहीं है तो वह उस एक की बन्दगी तो नहीं करता जिसका वह वास्तव में बन्दा है, और उन बहुतों की बन्दगी करता रहता है जिनका वह वास्तव में बन्दा नहीं है।
20. इस मिसाल का अर्थ यह है कि क़ुरआन जिस तरह अल्लाह की बड़ाई और उसके सामने बन्दे की ज़िम्मेदारी और जवाबदेही को स्पष्ट रूप से बयान कर रहा है उसकी समझ अगर पहाड़ जैसी महान सृष्टि को भी प्राप्त होती और उसे मालूम हो जाता कि उसको किसी सर्वशक्तिमान रब के सामने अपने कामों की जवाबदेही करनी है तो वह भी डर से काँप उठता।
21. अर्थात् जिसके सिवा किसी की यह हैसियत, स्थान और पद नहीं है कि उसकी बन्दगी और उपासना की जाए। जिसके सिवा कोई ईश्वरीय गुण और अधिकार रखता ही नहीं कि उसे पूज्य होने का हक़ पहुँचता हो।
22. अर्थात् वह इससे बहुत ही उच्च और महान है कि उसकी सत्ता में कोई दोष या कमी, या कोई अवगुण पाया जाए बल्कि वह एक पवित्रतम सत्ता है जिसके विषय में किसी बुराई की कल्पना तक नहीं की जा सकती।

निश्चिन्तता प्रदान करनेवाला,[24] निगहबान,[25] सबपर प्रभुत्व रखनेवाला, अपना आदेश बलपूर्वक लागू करनेवाला, और बड़ा ही होकर रहनेवाला। पाक है अल्लाह उस 'शिर्क' (बहुदेववाद के कर्म) से जो लोग कर रहे हैं। (24) वह अल्लाह ही है जो सृष्टि की योजना बनानेवाला और उसको लागू करनेवाला और उसके अनुसार रूप बनानेवाला है। उसके लिए उत्तम नाम हैं। हर चीज़ जो आसमानों और ज़मीन में है उसकी तसबीह (गुणगान) कर रही है,[26] और वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।



23. अर्थात् उसकी सत्ता इससे उच्च है कि कोई आफ़त या कोई कमज़ोरी या कमी उसमें आ सके, या कभी उसके कमाल को क्षति पहुँच सके।
24. अर्थात् उसके पैदा किए हुए लोगों को इसका कोई डर न होना चाहिए कि वह कभी उसपर ज़ुल्म करेगा, या उनका हक़ मारेगा, या उनका बदला नहीं देगा, या उनके साथ अपने किए हुए वादे के विरुद्ध जाएगा।
25. मूल शब्द 'अल मुहैमिन' इस्तेमाल हुआ है जिसके तीन अर्थ हैं। एक निगहबानी और रक्षा करनेवाला। दूसरा साक्षी, जो देख रहा है कि कौन क्या करता है। तीसरा वह सत्ता जिसने लोगों की आवश्यकताएँ और ज़रूरतें पूरी करने का ज़िम्मा ले रखा हो।
26. अर्थात् बोलनेवाली ज़बान या हाल की ज़बान से यह बयान कर रही है कि उसका स्रष्टा हर दोष कमी और दुर्बलता और ग़लती से पाक है।

60. अल-मुम्तहिना

नाम

इस सूरा की आयत 10 में आदेश दिया गया है कि जो स्त्रियाँ हिजरत करके आएँ और मुसलमान होने का दावा करें उनकी परीक्षा ली जाए। इसी सम्पर्क से इसका नाम अल-मुम्तहिना रखा गया है। इसका उच्चारण मुम्तहना भी किया जाता है और मुम्तहिना भी। पहले उच्चारण के अनुसार अर्थ है ''वह स्त्री जिसकी परीक्षा ली जाए'' और दूसरे उच्चारण के अनुसार अर्थ है, ''परीक्षा लेने वाली सूरा।''

अवतरणकाल

इसमें दो ऐसे मामलों पर वार्तालाप किया गया है जिसका समय ऐतिहासिक रूप से मालूम है। पहला मामला हज़रत हातिब बिन अबी-बल्तअह का है। और दूसरा मामला उन मुस्लिम स्त्रियों का है जो हुदैबिया की सन्धि के पश्चात् मक्का से हिजरत करके मदीना आने लगी थीं। इन दो मामलों के उल्लेख से (जिनका विस्तृत वर्णन आगे आ रहा है) यह बात बिलकुल निश्चित हो जाती है कि यह सूरा हुदैबिया की सन्धि और मक्का की विजय के बीच के समय में अवतरित हुई है।

विषय और वार्ताएँ

इस सूरा के तीन भाग हैं : पहला भाग सूरा के आरम्भ से आयत 10 तक चलता है और सूरा की समाप्ति पर आयत 13 भी इसी से सम्बद्ध है। इसमें हज़रत हातिब (रज़ि॰) बिन अबी-बल्तअह के इस कर्म पर कड़ी पकड़ की गई है कि उन्होंने केवल अपने परिवार के लोगों को बचाने के ध्येय से अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण युद्ध-सम्बन्धी रहस्य से दुश्मनों को अवगत कराने की कोशिश की थी, जिसे यदि ठीक समय पर असफल नहीं कर दिया गया होता तो मक्का की विजय के अवसर पर बड़ा रक्तपात होता। और वे समस्त उपलब्धियाँ भी प्राप्त न हो सकतीं जो मक्का पर शान्तिमय विजय प्राप्त करने की स्थिति में प्राप्त हो सकती थीं। (हज़रत हातिब रज़ि॰ की) इस संगीन ग़लती को सचेत करते हुए अल्लाह ने समस्त ईमानवालों को यह शिक्षा दी है कि किसी ईमानवाले को किसी दशा में और किसी उद्देश्य के लिए भी इस्लाम के शत्रु के साथ प्रेम और मित्रता सम्बन्ध न रखना चाहिए और कोई ऐसा कम न करना चाहिए जो कुफ़्र और इस्लाम के संघर्ष में काफ़िरों के लिए लाभकारी हो। अलबत्ता जो काफ़िर, इस्लाम और मुसलमानों के विरुद्ध व्यवहारतः शत्रुता और तकलीफ़ पहुँचाने का बर्ताव न कर रहे हों उनके साथ सद्व्यवहार की नीति अपनाने में

कोई दोष नहीं। दूसरा भाग आयत 10 और 11 पर आधारित है। इसमें एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक समस्या का फ़ैसला किया गया है जो उस समय बड़ी जटिलता उत्पन्न कर रही थी। मक्का में बहुत-सी मुस्लिम स्त्रियाँ ऐसी थीं जिनके पति काफ़िर थे और वे किसी-न-किसी तरह हिजरत करके मदीना पहुँच जाती थीं। इसी तरह मदीना में बहुत-से मुस्लिम पुरुष ऐसे थे जिनकी पत्नियाँ काफ़िर थीं और वे मक्का ही में रह गई थीं। उनके विषय में यह प्रश्न उठता था कि उनके मध्य दाम्पत्य-सम्बन्ध शेष है या नहीं। सर्वोच्च ईश्वर ने इसका सदैव के लिए यह निर्णय कर दिया कि मुस्लिम स्त्री के लिए काफ़िर पति वैध नहीं है और मुस्लिम पुरुष के लिए यह भी वैध नहीं कि वह बहुदेववादी पत्नी के साथ दाम्पत्य-सम्बन्ध बनाए रखे। तीसरा भाग आयत 12 पर आधारित है जिसमें अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को आदेश दिया गया है कि जो स्त्रियाँ इस्लाम ग्रहण करें उनसे आप बड़ी-बड़ी बुराइयों से बचने का और भलाई के सभी तरीक़ों के अनुसरण का (वचन लें)।



60. सूरा अल-मुम्तहिना

(मदीना में उतरी–आयतें 13)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ[1] लोगो जो ईमान लाए हो, अगर तुम मेरे मार्ग में जानतोड़ संघर्ष करने के लिए और मेरी ख़ुशी की तलब में (वतन छोड़कर घरों से) निकले हो तो मेरे और अपने दुश्मनों को दोस्त न बनाओ। तुम उनके साथ दोस्ती की बुनियाद डालते हो, हालाँकि जो सत्य तुम्हारे पास आया है उसको मानने से वे इनकार कर चुके हैं, और उनका व्यवहार यह है कि रसूल को और ख़ुद तुमको सिर्फ़ इस अपराध में वतन से निकालते हैं कि तुम अपने रब, अल्लाह पर ईमान लाए हो। तुम छिपाकर उनको मैत्रीपूर्ण सन्देश भेजते हो, हालाँकि जो कुछ तुम छिपाकर करते हो और जो खुल्लम-खुल्ला करते हो, हर चीज़ को मैं ख़ूब जानता हूँ। जो व्यक्ति भी तुममें से ऐसा करे वह यक़ीनन सन्मार्ग से भटक गया। (2) उनकी रीति तो यह है कि अगर तुमपर क़ाबू पा जाएँ तो तुम्हारे साथ दुश्मनी करें और हाथ और ज़बान से तुम्हें दुख दें। वे तो यह चाहते हैं कि तुम किसी तरह इनकार करनेवाले हो जाओ। (3) क़ियामत के दिन न तुम्हारी नातेदारियाँ किसी काम आएँगी न तुम्हारी संतान।[2] उस दिन अल्लाह तुम्हारे बीच जुदाई डाल देगा,[3] और वही तुम्हारे कर्मों का देखनेवाला है।

---

1. क़ुरआन के टीकाकार इस बात पर सहमत हैं कि इन आयतों का अवतरण उस समय हुआ था जब मक्का के मुशरिकों (बहुदेववादियों) के नाम हज़रत हातिब बिन अबी बल्तआ का पत्र पकड़ा गया था जिसमें उन्होंने समय से पहले ही दुश्मनों को सूचित कर दिया था कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) मक्का पर चढ़ाई करनेवाले हैं।
2. चूँकि हज़रत हातिब (रज़ि॰) ने यह काम इसलिए किया था कि मक्का में उनके जो बाल-बच्चे हैं वे युद्ध के अवसर पर सुरक्षित रहें इसलिए कहा कि जिन बाल-बच्चों के लिए तुमने यह काम किया है वे आख़िरत में काम आनेवाले नहीं हैं।
3. अर्थात् दुनिया के सारे, नाते, सम्बन्ध और सम्पर्क वहाँ तोड़ दिए जाएँगे. हर व्यक्ति अपनी निजी हैसियत में पेश होगा और हर एक को अपना ही हिसाब देना पड़ेगा। इसलिए दुनिया में किसी व्यक्ति को भी किसी नातेदारी या दोस्ती या जत्थाबन्दी के लिए कोई नाजाइज़ काम नहीं करना चाहिए, क्योंकि अपने किए की सज़ा उसको ख़ुद ही भुगतनी होगी, उसकी व्यक्तिगत ज़िम्मेदारी में कोई दूसरा शरीक न होगा।

(4) तुम लोगों के लिए इबराहीम और उसके साथियों में एक अच्छा नमूना है कि उन्होंने अपनी क़ौमवालों से सफ़ कह दिया, ''हम तुमसे और तुम्हारे उन उपास्यों से जिनको तुम अल्लाह को छोड़कर पूजते हो बिलकुल बेज़ार हैं, हमने तुमसे कुफ़्र किया[4] और हमारे और तुम्हारे बीच हमेशा के लिए दुश्मनी हो गई और वैर पड़ गया जब तक तुम इससे अलग अकेले अल्लाह पर ईमान न लाओ।'' मगर इबराहीम का अपने बाप से यह कहना (इससे अलग है) कि ''मैं आपके लिए माफ़ी की प्रार्थना ज़रूर करूँगा, और अल्लाह से आपके लिए कुछ प्राप्त कर लेना मेरे बस में नहीं है।''[5] (और इबराहीम और इबराहीम के साथियों की दुआ यह थी कि) ''ऐ हमारे रब, तेरे ही ऊपर हमने भरोसा किया और तेरी ही ओर हमने रुजू कर लिया और तेरे ही पास हमें पलटना है। (5) ऐ हमारे रब हमें इनकार करनेवालों के लिए फ़ितना न बना दे।[6] और ऐ हमारे रब, हमारी ग़लतियों को माफ़ कर दे, बेशक तू ही प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।''

(6) उन्हीं लोगों के काम करने के तरीक़े में तुम्हारे लिए और हर उस व्यक्ति के लिए अच्छा नमूना है जो अल्लाह और अन्तिम दिन का उम्मीदवार हो। इससे कोई मुँह

4. अर्थात् हम तुम्हारे काफ़िर (इनकार करनेवाले) हैं, न तुम्हें सत्य पर मानते है न तुम्हारे धर्म को।
5. दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह है कि तुम्हारे लिए हज़रत इबराहीम (अलै०) की यह बात तो अनुकरणीय है कि उन्होंने अपनी काफ़िर और मुशरिक क़ौम से स्पष्ट रूप से बेज़ारी और सम्बन्ध-विच्छेद की घोषणा कर दी, मगर उनकी यह बात अनुकरणीय नहीं है कि उन्होंने अपने मुशरिक (बहुदेववादी) बाप के लिए माफ़ी की दुआ करने का वादा किया और व्यवहारतः उसके लिए दुआ की।
6. काफ़िरों (अधर्मियों) के लिए ईमानवालों के फ़ितना बनने की बहुत-सी सूरतें हो सकती हैं। उदाहरणार्थ काफ़िरों को उनपर आधिपत्य प्राप्त हो जाए और अपने आधिपत्य को वे इस बात का प्रमाण ठहरा लें कि हम सत्य पर हैं और ईमानवाले असत्य पर। या यह कि ईमानवालों पर काफ़िरों का ज़ुल्म और अत्याचार उनकी सहन शक्ति से बढ़ जाए और आख़िरकार वे उनसे दबकर अपने धर्म और नैतिकता का सौदा करने पर उतर आएँ। या यह कि सत्य धर्म के प्रतिनिधित्व के उच्च पद पर आसीन होने के बावजूद ईमानवाले उस नैतिक श्रेष्ठता से वंचित हों जो इस पद के अनुकूल है, और दुनिया को उनके चरित्र और आचरण में भी वही दोष दिखाई दें जो अज्ञान के समाज में सामान्य रूप से फैले हुए हों। इससे काफ़िरों को यह कहने का अवसर मिलेगा कि इस धर्म में आख़िर वह क्या ख़ूबी है कि जो इसे हमारे कुफ़्र (अधर्म) के मुक़ाबले में श्रेष्ठता प्रदान करती हो।

फेरे तो अल्लाह निस्पृह और अपने-आप में ख़ुद प्रशंसनीय है।

(7) असंभव नहीं कि अल्लाह कभी तुम्हारे और उन लोगों के बीच प्रेम डाल दे जिनसे आज तुमने दुश्मनी मोल ली है।[7] अल्लाह बड़ी सामर्थ्य रखता है और वह बड़ा माफ़ करनेवाला और दयावान् है।

(8) अल्लाह तुम्हें इस बात से नहीं रोकता कि तुम उन लोगों के साथ नेकी और इनसाफ़ का बरताव करो जिन्होंने धर्म के मामले में तुमसे युद्ध नहीं किया है और तुम्हें तुम्हारे घरों से नहीं निकाला है। अल्लाह इनसाफ़ करने वालों को पसन्द करता है।[8] (9) वह तुम्हें जिस बात से रोकता है वह तो यह है कि तुम उन लोगों से दोस्ती करो जिन्होंने तुमसे धर्म के मामले में युद्ध किया है और तुम्हें तुम्हारे घरों से निकाला है और तुम्हें निकालने में एक दूसरे की सहायता की है। उनसे जो लोग दोस्ती करें वही ज़ालिम हैं।

(10) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब ईमानवाली औरतें घर-बार छोड़कर तुम्हारे पास आएँ तो (उनके ईमानवाली होने की) जाँच-पड़ताल कर लो, और उनके ईमान की वास्तविकता तो अल्लाह ही भली-भाँति जानता है। फिर जब तुम्हें मालूम हो जाए कि वे ईमानवाली हैं तो उन्हें काफ़िरों की ओर वापस न करो।[9] न वे काफ़िरों के लिए हलाल है और न काफ़िर उनके लिए हलाल। उनके काफ़िर शौहरों ने जो मह्र उनको दिए थे वे उन्हें फेर दो। और उनसे निकाह कर लेने में तुमपर कोई गुनाह नहीं जबकि तुम उनके मह्र उनको अदा कर दो।[10] और तुम ख़ुद भी काफ़िर औरतों को अपने

7. ऊपर की आयतों में मुसलमानों को अपने काफ़िर रिश्तेदारों से सम्बन्ध-विच्छेद पर प्रेरित करने के बाद यह आशा भी दिलाई गई है कि ऐसा समय भी आ सकता है जब तुम्हारे यही रिश्तेदार मुसलमान हो जाएँ और आज की दुश्मनी कल फिर दोस्ती में बदल जाए।
8. मतलब यह है कि जो व्यक्ति तुम्हारे साथ दुश्मनी नहीं करता, इनसाफ़ का तक़ाज़ा यह है कि तुम भी उसके साथ दुश्मनी न रखो। दुश्मन और ग़ैर दुश्मन को एक दरजे में रखना और दोनों में एक ही जैसा व्यवहार करना इनसाफ़ नहीं है। तुम्हें उन लोगों के साथ कड़ी नीति अपनाने का अधिकार है जिन्होंने ईमान लाने के बदले में तुमपर अत्याचार किए, और तुमको वतन से निकल जाने पर मजबूर किया, और निकालने के बाद भी तुम्हारा पीछा न छोड़ा। मगर जिन लोगों ने इस ज़ुल्म में कोई हिस्सा नहीं लिया, इनसाफ़ यह है कि तुम उनके साथ अच्छा बरताव करो और रिश्ते और बिरादरी की दृष्टि से उनके जो हक़ तुमपर होते हैं उन्हें अदा करने में कमी न करो।

निकाह में न रोके रहो। जो मह्र तुमने अपनी काफ़िर औरतों को दिए थे वे तुम वापस माँग लो और जो मह्र काफ़िरों ने अपनी मुसलिम बीवियों को दिए थे उनहें वे वापस मांग लें। यह अल्लाह का आदेश है, वह तुम्हारे बीच फ़ैसला करता है और वह बड़ा जाननेवाला और तत्त्वदर्शी है। (11) और अगर तुम्हारी काफ़िर बीवियों के मह्रों में से कुछ तुम्हें काफ़िरों से वापस न मिले और फिर तुम्हारी नौबत आए तो जिन लोगों की बीवियाँ उधर रह गई हैं उनको उतनी रक़म अदा कर दो जो उनके दिए गए मह्रों के बराबर हो। और उस अल्लाह से डरते रहो जिसपर तुम ईमान लाए हो।

(12) ऐ नबी, जब तुम्हारे पास ईमानवाली औरतें 'बैअत' करने के लिए आएँ[11] और इस बात की प्रतिज्ञा करें कि वे अल्लाह के साथ किसी चीज़ को शरीक न करेंगी, चोरी न करेंगी, व्यभिचार न करेंगी, अपनी औलाद को क़त्ल न करेंगी, अपने हाथ-

9. हुदैबिया की सन्धि के बाद शुरू-शुरू में तो मुसलमान मर्द मक्का से भाग-भागकर मदीना आते रहे और उन्हें सन्धि की शर्तों के अनुसार वापस किया जाता रहा। फिर मुसलमान औरतों के आने का सिलसिला शुरू हो गया और काफ़िरों ने सन्धि का हवाला देकर उनकी वापसी की भी माँग की। इसपर यह सवाल उठा कि क्या हुदैबिया की सन्धि औरतों पर भी लागू होती है? अल्लाह ने इसी सवाल का यहाँ जवाब दिया है कि अगर वे मुसलमान हों और यह इतमीनान कर लिया जाए कि वास्तव में वे ईमान ही के लिए घर-बार छोड़कर आई हैं, कोई और चीज़ उन्हें नहीं लाई है, तो उन्हें वापस न किया जाए। यह आदेश इस आधार पर दिया गया कि सन्धि की जो शर्तें लिखी गई थीं उनमें 'रजुलुन' (मर्द) का शब्द लिखा गया था जैसा कि बुख़ारी की रिवायत में आया है।
10. मतलब यह है कि उनके काफ़िर शौहरों को उनके जो मह्र वापस किए जाएँगे वही इन औरतों के मह्र न माने जाएँगे, बल्कि अब जो मुसलमान भी उनमें से किसी औरत से निकाह करना चाहे वह उसका मह्र अदा करे और उससे निकाह कर ले।
11. यह आयत मक्का की विजय से कुछ पहले उतरी थी। इसके बाद जब मक्का की विजय हुई तो क़ुरैश के लोग गिरोह के गिरोह नबी (सल्ल॰) से 'बैअत' करने के लिए हाज़िर होने लगे। आप (सल्ल॰) ने मर्दों से सफ़ा पहाड़ पर ख़ुद 'बैअत' ली और हजरत उमर (रज़ि॰) को अपनी ओर से नियुक्त किया कि वे औरतों से 'बैअत' लें और उन बातों का इक़रार कराएँ जो इस आयत में बयान हुई हैं। फिर मदीना में वापस लौटकर आपने एक मकान में अनसार की औरतों को इकट्ठा करने का आदेश दिया और हज़रत उमर (रज़ि॰) को उनसे 'बैअत' लेने के लिए भेजा।

पाँव के आगे कोई आरोप घड़कर न लाएँगी,[12] और किसी भले काम में तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन न करेंगी,[13] तो उनसे 'बैअत' ले लो और उनके लिए माफ़ी की दुआ करो, यक़ीनन अल्लाह माफ़ करनेवाला और दयावान् है।

(13) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, उन लोगों को दोस्त न बनाओ जिनपर अल्लाह का प्रकोप हुआ है, जो आख़िरत (परलोक) से उसी तरह निराश हैं जिस तरह क़ब्रों में पड़े हुए काफ़िर निराश हैं।

● ● ●

12. इससे मुराद दो तरह के आरोप हैं। एक यह कि कोई औरत दूसरी औरतों पर परए मर्दों से सम्बन्ध रखने के आरोप लगाए और इस तरह के क़िस्से लोगों में फैलाए। दूसरा यह कि एक औरत बच्चा तो किसी का जने और शौहर को विश्वास दिलाए कि यह तेरा ही है।
13. इस छोटे-से वाक्य में दो बड़े महत्त्वपूर्ण क़ानूनी सूत्र बयान किए गए हैं। एक यह कि नबी (सल्ल॰) के आज्ञापालन पर भी भालाई में आज्ञापालन की शर्त लगाई गई है, हालाँकि नबी (सल्ल॰) के बारे में इस बात के किसी मामूली सन्देह की गुंजाइश भी न थी कि आप कभी बुराई का आदेश भी दे सकते हैं। इससे ख़ुद यह बात स्पष्ट हो गई कि दुनिया में किसी प्राणी का आज्ञापालन अल्लाह के क़ानून की सीमाओं से बाहर जाकर नहीं किया जा सकता, क्योंकि जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का आज्ञापालन भलाई की शर्त से आबद्ध है तो फिर किसी दूसरे का यह पद कहाँ हो सकता है कि उसे बिना किसी शर्त के आज्ञापालन का अधिकार प्राप्त हो और उसके किसी ऐसे आदेश या क़ानून या व्यवस्था या रीति का पालन किया जाए जो अल्लाह के क़ानून के विरुद्ध हो। दूसरी बात जो क़ानून की हैसियत से बहुत महत्त्व रखती है यह है कि इस आयत में पाँच नकारात्मक आदेश देने के बाद स्वीकारात्मक आदेश सिर्फ़ एक ही दिया गया है और वह यह कि सभी नेक कामों में नबी (सल्ल॰) के आदेशों का पालन किया जाएगा। जहाँ तक बुराइयों का सम्बन्ध है, वे बड़ी-बड़ी बुराइयाँ गिना दी गई जिनमें अज्ञानकाल की औरतें ग्रस्त थीं और उनसे रुके रहने का वचने ले लिया गया, मगर जहाँ तक भलाइयों का सम्बन्ध है उनकी कोई सूची देकर वचन नहीं लिया गया कि तुम ये-ये कार्य करोगी बल्कि सिर्फ़ यह वचन लिया गया कि जिस नेक काम का भी नबी (सल्ल॰) आदेश देंगे उसका पालन तुम्हें करना होगा।

61. अस-सफ़्फ़

नाम

चौथी आयत के वाक्यांश ''जो उसके मार्ग में इस तरह पंक्तिबद्ध होकर (सफ़्फ़न) लड़ते हैं'' से उद्धृत है। अभिप्राय यह है कि यह वह सूरा है जिसमें 'सफ़्फ़' शब्दा आया है।

अवतरणकाल

इसकी वार्ताओं पर विचार करने पर अनुमान होता है कि यह सूरा सम्भवतः उहूद के युद्ध के सांसार्गिक समय में अवतरित हुई होगी, क्योंकि इसमें सूक्ष्मतः जिन स्थितियों की ओर संकेत का आभास होता है वे स्थितियाँ उसी कालखण्ड की हैं।

विषय और वार्ता

इसका विषय है मुसलमानों को ईमान में विशुद्धता को अंगीकार करने और अल्लाह के मार्ग में जान लड़ाने पर उभारना। इसमें कमज़ोर ईमानवाले मुसलमानों को भी सम्बोधित किया गया है, और उन लोगों को भी जो ईमान का झूठा दावा करके इस्लाम में दाख़िल हो गए थे और उनको भी जो निष्ठावान एवं निश्छल थे। वर्णन-शैली से स्वयं ज्ञात हो जाता है कि कहाँ किसको सम्बोधित किया गया है। आरम्भ में समस्त ईमानवालों को सचेत किया गया है कि अल्लाह की दृष्टि में अत्यन्त घृणित और वैरी हैं वे लोग जो कहें कुछ और करें कुछ, और अत्यन्त प्रिय हैं वे लोग जो सत्य मार्ग में लड़ने के लिए सीसा पिलाई हुई दीवार की तरह डटकर खड़े हों। फिर आयत 5-7 तक अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के समुदाय के लोगों को सावधान किया गया है कि अपने रसूल और अपने धर्म के साथ तुम्हारी नीति वह नहीं होनी चाहिए, जो मूसा (अलै॰) और ईसा (अलै॰) के साथ बनी इसराईल (इसराईल की सन्तान) ने अपनाई थी। (और जिसका) परिणाम यह हुआ कि उस जाति का मनोदशा-सांचा भी टेढ़ा होकर रह गया। और वह उस मार्गदर्शन पाने में दैवयोग से वंचित हो गया। फिरआयत 8-9 में पूरी चुनौती के साथ उद्घोषित किया गया कि यहूदी और ईसाई और उनसे साँठ-गाँठ रखनेवाले कपटाचारी अल्लाह के इस प्रकाश को बुझाने का चाहे कितना ही प्रयास कर लें, ये पूर्ण तेजस्विता के साथ संसार में फैलकर रहेगा और बहुदेववादियों को चाहे कितना ही अप्रिय हो, सच्चे रसूल (सल्ल॰) का लाया हुआ धर्म हरेक अन्य धर्म पर प्रभावी होकर रहेगा। तदन्तर आयत 10-13 तक में ईमानवालों को बताया गया है कि लोक और परलोक में सफलता का मार्ग केवल एक है और वह यह है कि अल्लाह और

उसके रसूल (सल्ल॰) पर सच्चे दिल से ईमान लाओ और अल्लाह के मार्ग में प्राण और धन से जिहाद (जान-तोड़ कोशिश) करो। अन्त में ईमानवालों को शिक्षा दी गई है कि जिस प्रकार हज़रत ईसा (अलै॰) के हवारियों ने अल्लाह की राह में उनका साथ दिया था, उसी प्रकार वे भी ''अल्लाह के सहायक बनें'' ताकि काफ़िरों के मुक़ाबले में उनको भी उसी प्रकार अल्लाह की सहायता और समर्थन प्राप्त हो जिस प्रकार पहले ईमान लानेवालों को प्राप्त हुआ था।




61. सूरा अस-सफ़्फ़

(मदीना में उतरी–आयतें 14)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अल्लाह की तसबीह की है हर उस चीज़ ने जो आसमानों और ज़मीन में है, और वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।

(2) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम क्यों वह बात कहते हो जो करते नहीं हो? (3) अल्लाह की दृष्टि में यह अत्यन्त अप्रिय काम है कि तुम कहो वह बात जो करते नहीं। (4) अल्लाह को तो पसन्द वे लोग हैं जो उसके मार्ग में इस तरह पंक्तिबद्ध होकर लड़ते हैं मानो वे एक सीसा पिलाई हुई दीवार हैं।[1]

(5) और याद करो मूसा की वह बात जो उसने अपनी क़ौम से कही थी कि "ऐ मेरी क़ौम के लोगो, तुम क्यों मुझे दुख देते हो जबकि तुम ख़ूब जानते हो कि मैं तुम्हारी ओर अल्लाह का भेजा हुआ रसूल हूँ?"[2] फिर जब उन्होंने टेढ़ अपनाई तो अल्लाह ने भी उनके दिल टेढ़े कर दिए, अल्लाह उल्लंघनकारियों को राह नहीं दिखाता।[3]

(6) और याद करो मरयम के बेटे ईसा की वह बात जो उसने कही थी कि "ऐ इसराईल के बेटो, मैं तुम्हारी ओर अल्लाह का भेजा हुआ रसूल हूँ,[4] पुष्टि करनेवाला हूँ

1. इससे पहले तो यह मालूम हुआ कि अल्लाह की प्रसन्नता वही ईमानवाले प्राप्त करते हैं जो उसकी राह में जान लड़ाने और ख़तरे सहने के लिए तैयार हों। दूसरी बात यह मालूम हुई कि अल्लाह को जो सेना पसन्द है उसमें तीन गुण पाए जाए चाहिएँ। एक यह कि वह ख़ूब सोच-समझकर अल्लाह के मार्ग में लड़े और किसी ऐसे मार्ग में न लड़े जो 'अल्लाह के मार्ग' के अन्तर्गत न आता हो। दूसरे यह कि वह अस्त-व्यस्त और बिखरी हुई न हो बल्कि मज़बूत व्यवस्था के साथ पंक्तिबद्ध होकर लड़े। तीसरे यह कि दुश्मनों के मुक़ाबले में उसकी हालत "सीसा-पिलाई हुई दीवार" की-सी हो।
2. यह बात इसलिए कही गई है कि मुसलमान अपने नबी के साथ वह नीति न अपनाएँ जो इसराईलियों ने अपने नबी के साथ अपनाई थी, वरना वे उस परिणाम से बच नहीं सकते जो परिणाम इसराईलियों का हुआ।
3. अर्थात् अल्लाह का यह तरीक़ा नहीं है कि जो लोग ख़ुद टेढ़ी राह चलना चाहें, उन्हें वह ज़बरदस्ती सीधी राह चलाए, और जो लोग उसकी अवज्ञा पर तुले हुए हों उनको ज़बरदस्ती मार्गदर्शन और सन्मार्ग पर चलने का श्रेय प्रदान करे।

उस तौरात की जो मुझसे पहले आई हुई मौजूद है, और ख़ुशख़बरी देनेवाला हूँ एक रसूल की जो मेरे बाद आएगा, जिसका नाम अहमद[5] होगा।"

(7) मगर जब वह उनके पास खुली-खुली निशानियाँ लेकर आया तो उन्होंने कहा : यह तो खुला धोखा है।[6] अब भला उस व्यक्ति से बड़ा ज़ालिम और कौन होगा जो अल्लाह पर झूठा आरोप लगाए[7] जबकि उसे इस्लाम (अल्लाह के आज्ञापालन) का निमंत्रण दिया जा रहा हो?[8] ऐसे ज़ालिमों को अल्लाह राह नहीं दिखाया करता। (8) ये लोग अपने मुँह की फूँकों से अल्लाह के प्रकाश (नूर) को बुझाना चाहते हैं, और अल्लाह का फ़ैसला यह है कि वह अपने प्रकाश को पूरा फैलाकर रहेगा चाहे इनकार

4. यह इसराईल की संतान की दूसरी अवज्ञा का उल्लेख है। एक अवज्ञा वह थी जो उन्होंने अपने उन्नति-काल के आरंभ में की। और दूसरी अवज्ञा यह है जो इस काल के अन्त और बिलकुल अन्त पर उन्होंने की जिसके बाद हमेशा-हमेशा के लिए उनपर अल्लाह की फिटकार पड़ गई। अभिप्राय इन दोनों घटनाओं के उल्लेख का यह है कि मुसलमानों को अल्लाह के रसूल के साथ इसराईलियों जैसी नीति अपनाने के परिणामों से सावधान किया जाए।
5. यह अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के सम्बन्ध में हज़रत ईसा (अलै॰) की स्पष्ट भविष्यवाणी है जिसका विस्तृत प्रमाण हमने 'तफ़हीमुल क़ुरआन' भाग पाँच (उर्दू) में इस आयत को स्पष्ट करते हुए दिया है।
6. मूल में 'सिह्र' शब्द इस्तेमाल हुआ है। 'सिह्र' यहाँ जादू के नहीं बल्कि धोखे और फ़रेब के अर्थ में इस्तेमाल हुआ है। और अरबी शब्दकोश में जादू की तरह इसका यह अर्थ भी प्रसिद्ध है। आयत का अर्थ यह है कि जब वह नबी, जिसके आने की ख़ुशख़बरी ईसा (अलै॰) ने दी थी, अपने नबी होने की स्पष्ट निशानियों के साथ आ गया तो इसराईल की सन्तान और ईसा (अलै॰) की उम्मत (समुदाय) ने उसके नबी होने की घोषणा को बिलकुल धोखा (फ़रेब) घोषित किया।
7. अर्थात् अल्लाह के भेजे हुए नबी को झूठा दावदार ठहराए, और अल्लाह की उस वाणी को जो उसके नबी पर अवतरित हो रही हो, नबी का अपना घड़ा हुआ कलाम ठहराए।
8. अर्थात् एक तो सच्चे नबी को झूठा दावेदार कहना ही अपनी जगह कुछ कम ज़ुल्म नहीं है, कहाँ इसपर और ज़्यादा ज़ुल्म यह किया जाए कि बुलानेवाला तो अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन की ओर बुला रहा हो और सुननेवाला जवाब में उसे गालियाँ दे और उसके आमंत्रण को हानि पहुँचाने के लिए झूठ, आरोप और मिथ्यारोपणों के हथकण्डों से काम ले।

करनेवालों को यह कितना ही अप्रिय हो। (9) वही तो है जिसने अपने रसूल को मार्गदर्शन और सत्य धर्म के साथ भेजा है ताकि उसे पूरे के पूरे धर्म (दीन) पर प्रभुत्व प्रदान कर दे चाहे मुशरिकों (बहुदेववादियों) को यह कितना ही अप्रिय हो।

(10) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, मैं बताऊँ तुमको वह व्यापार[9] जो तुम्हें दर्दनाक अज़ाब से बचा दे? (11) ईमान लाओ अल्लाह और उसके रसूल पर, और जिहाद करो अल्लाह के मार्ग में अपने मालों से और अपनी जानों से। यही तुम्हारे लिए अच्छा है अगर तुम जानो। (12) अल्लाह तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा, और तुमको ऐसे बाग़ों मे दाख़िल करेगा जिनके नीचे नहरें बहती होंगी, और सदैव रहने की जन्नतों में उत्तम घर तुम्हें प्रदान करेगा। यह है बड़ी सफलता। (13) और वह दूसरी चीज़ जो तुम चाहते हो, वह भी तुम्हें देगा, अल्लाह की ओर से सहायता और क़रीब ही में प्राप्त हो जानेवाली विजय। ऐ नबी, ईमानवालों को इसकी ख़ुशख़बरी दे दो।

(14) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह के सहायक बनो, जिस तरह मरयम के बेटे ईसा ने हवारियों को सम्बोधित करके कहा था : ''कौन है अल्लाह की ओर (बुलाने में) मेरा सहायक?'' और हवारियों ने उत्तर दिया था : ''हम हैं अल्लाह के सहायक।'' उस समय इसराईल की सन्तान का एक गिरोह ईमान लाया और दूसरे गिरोह ने इनकार किया। फिर हमने ईमान लानेवालों का उनके दुश्मनों के मुक़ाबले में सहयोग किया और वही प्रभावी होकर रहे।[10]



9. व्यापार वह चीज़ है जिसमें आदमी अपना माल, समय, मेहनत और बुद्धिमत्ता व योग्यता इसलिए खपाता है कि उसे लाभ प्राप्त हो। इसी पहलू से यहाँ ईमान और अल्लाह के मार्ग में जिहाद करने को व्यापार कहा गया है। मतलब यह है कि इस मार्ग में अपना सब कुछ खपाओगे तो वह लाभ तुम्हें प्राप्त होगा जो आगे बयान किया जा रहा है।

10. मसीह (अलै॰) को न माननेवाले यहूदी हैं और उनको माननेवाले ईसाई भी है और मुसलमान भी। अल्लाह ने पहले ईसाइयों को यहूदियों पर प्रभुत्व प्रदान किया, और फिर मुसलमानों ने भी उनपर प्रभुत्व प्राप्त किया। इस प्रकार मसीह (अलै॰) का इनकार करनेवाले दोनों ही से पराभूत (मग़लूब) होकर रहे। इस मामले को यहाँ इस उद्देश्य से बयान किया गया है कि मुसलमानों को यह यक़ीन हो जाए कि जिस तरह पहले हज़रत ईसा के माननेवाले उनका इनकार करनेवालों पर प्रभुत्व प्राप्त कर चुके हैं, उसी तरह अब मुहम्मद (सल्ल॰) के माननेवाले आपका इनकार करनेवालों पर प्रभुत्व प्राप्त करेंगे।

62. अल-जुमुआ

नाम

आयत 9 के वाक्यांश ''जब पुकारा जाए नमाज़ के लिए जुमुआ (जुमा) के दिन'' से उद्धृत है। यद्यपि सूरा में जुमा की नमाज़ के नियम सम्बन्ध आदेश दिया गए हैं, किन्तु समग्र रूप से जुमा इसकी वार्ताओं का शीर्षक नहीं है, बल्कि अन्य सूरतों की तरह यह नाम भी चिह्न ही की तरह है।

अवतरणकाल

आयत 1-8 तक का अवतरणकाल सन् 7 हिजरी है, और सम्भवतः ये ख़ैबर की विजय के अवसर पर या उसके निकटवर्ती समय में अवतरित हुई हैं। आयत 10 से सूरा के अन्त तक हिजरत के पश्चात् निकटवर्ती समय ही में अवतरित हुईहैं, क्योंकि नबी (सल्ल॰) ने मदीना तैबा पहुँचते ही पाँचवे दिन जुमा क़ायम कर दिया था और सूरा की अन्तिम आयत में जिस घटना की ओर संकेत किया गया है वह साफ़ बता रहा है कि वह जुमा की स्थापना का क्रम आरम्भ होने के पश्चात् अनिवार्यतः किसी ऐसे ही समय में घटित हुई होगी जब लोगों को धार्मिक सम्मेलनों के शिष्टाचार का पूर्ण प्रशिक्षण अभी प्राप्त नहीं हुआ था।

विषय और वार्ताएँ

जैसा कि हम ऊपर बयान कर चुके हैं, इस सूरा के दो भाग अलग-अलग समयों में अवतरित हुए हैं। इसी लिए दोनों के विषय अलग हैं और जिनसे सम्बोधन है वे भी अलग हैं। पहला भाग उस समय अवतरित हुआ जब यहूदियों के समस्त प्रयास असफल हो चुके थे जो इस्लाम के आह्वान का रास्ता रोकने के लिए विगत वर्षों के अन्तराल में उन्होंने किए थे। इन आयतों के अवतरण के समय (उनका सबसे बड़ा गढ़ ख़ैबर) भी बिना किसी असाधारण अवरोध के विजित हो गया। इस अन्तिम पराजय के पश्चात् अरब में यहूदी शक्ति बिलकुल समाप्त हो गई। वादि-उल-कुरआ, फ़दक, तैमा, तबूक सब एक-एक करके हथियार डालते चले गए, यहाँ तक कि अरब के सभी यहूदी इस्लामी राज्य की प्रजा बनकर रह गए। यह अवसर था जब अल्लाह ने इस सूरा में एक बार फिर उनको सम्बोधित किया और सम्भवतः यह अन्तिम सम्बोधन था जो क़ुरआन मजीद में उनसे किया गया। इसमें उन्हें सम्बोधित करके तीन बातें कही गई हैं :

(1) तुमने इस रसूल को इसलिए मानने से इनकार कर दिया कि यह उस जाति में भेजा गया था जिसे तुम हेयता के साथ ''उम्मी'' कहते हो। तुम्हारा असत्य प्रमादपूर्ण दावा यह

था कि रसूल अनिवार्यतः तुम्हारी अपनी जाति ही का होना चाहिए और (यह कि) ''उम्मियों'' में कभी कोई रसूल नहीं आ सकता। लेकिन अल्लाह ने उन्हीं ''उम्मियों'' में से एक रसूल उठाया है, जो तुम्हारी आँखों के सामने उसकी किताब सुना रहा है, आत्माओं को विकसित कर रहा है, और उन लोगों को सत्य मार्ग दिखा रहा है जिनकी पथभ्रष्टता का हाल तुम स्वयं भी जानते हो। यह अल्लाह की उदार कृपा है, जिसे चाहे उसे सम्पन्न करे।

(2) तुमको तो तौरात का वाहक बनाया था, किन्तु तुमने उसके उत्तरदायित्व को न समझा, न निबाहा (यहाँ तक कि) तुम जानते-बूझते अल्लाह की आयतों को झुठलाने से भी बाज़ नहीं रहते। इस पर भी तुम्हारा दावा यह है कि तुम अल्लाह के प्रिय हो और ईशदूतत्व (पैग़म्बरी) का वरदान सदैव के लिए तुम्हारे नाम लिख दिया गया है।

(3) तुम यदि वास्तव में अल्लाह के प्रिय होते और तुम्हें यदि विश्वास होता कि उसके यहाँ बड़े आदर और सम्मान एवं प्रतिष्ठा का स्थान सुरक्षित है, तो तुम्हें मृत्यु का ऐसा भय न होता है कि अपमानजनक जीवन स्वीकार है, किन्तु मृत्यु किसी तरह स्वीकार नहीं। तुम्हारी यह हालत स्वयं इस बात का प्रमाण है कि अपनी करतूतों से तुम स्वयं परिचित हो और तुम्हारी अन्तरात्मा भली-भाँति जानती है कि इन करतूतों के साथ मरोगे तो अल्लाह के यहाँ इससे अधिक अपमानित होगे, जितने दुनिया में हो रहे हो।

दूसरा भाग इस सूरा में लाकर इसलिए शामिल किया गया है कि अल्लाह ने यहूदियों के 'सब्त' के मुक़ाबले में मुसलमानों को जुमा प्रदान किया है, और अल्लाह मुसलमानों को सावधान करना चाहता है कि वे अपने जुमा के साथ वह मामला न करें जो यहूदियों ने 'सब्त' के साथ किया था।

⊖ ⊖ ⊖

62. सूरा अल-जुमुआ

(मदीना में उतरी–आयतें 11)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अल्लाह की तसबीह कर रही है हर वह चीज़ जो आसमानों में है और हर वह चीज़ जो ज़मीन में है—सम्राट है अत्यन्त पवित्र, प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी।

(2) वही है जिसने उम्मियों[1] के अन्दर एक रसूल ख़ुद उन्हीं में से उठाया, जो उन्हें उसकी आयतें सुनाता है, उनकी ज़िन्दगी सँवारता है, और उनको किताब और हिकमत (तत्त्वदर्शिता) की शिक्षा देता है, हालाँकि इससे पहले वे खुली गुमराही में पड़े हुए थे। (3) और (इस रसूल का भेजा जाना) उन दूसरे लोगों के लिए भी है जो अभी उनसे नहीं मिले हैं।[2] अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।[3] (4) यह उसका फ़ज़्ल है, जिसे चाहता है देता है, और वह बड़ा फ़ज़्ल करनेवाला है।

(5) जिन लोगों को तौरात का वाहक बनाया गया था मगर उन्होंने उसका भार न उठाया, उनकी मिसाल उस गधे की-सी है जिसपर किताबें लदी हुई हों। इससे भी ज़्यादा

---

1. यहाँ उम्मी का शब्द यहूदी पारिभाषिक शब्द के रूप में आया है और इसमें एक सूक्ष्म व्यंग्य निहित है। इसका अर्थ यह है कि जिन अरबों को यहूदी उपेक्षा के साथ उम्मी कहते हैं और अपने मुक़ाबले में हीन समझते हैं, उन्हीं में प्रभुत्वशाली एवं सर्वज्ञ अल्लाह ने एक रसूल उठाया है। वह ख़ुद नहीं उठ खड़ा हुआ है बल्कि उसका उठानेवाला वह है जो जगत् का सम्राट है, प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है, जिसकी शक्ति से लड़कर ये लोग अपना ही कुछ बिगाड़ेंगे, उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते।
2. अर्थात् हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की रिसालत (पैग़म्बरी) केवल अरब क़ौम तक सीमित नहीं हैं, बल्कि दुनिया-भर की उन दूसरी क़ौमों और नस्लों के लिए भी है जो अभी आकर ईमानवालों में सम्मिलित नहीं हुई है मगर आगे क़ियामत तक आनेवाली हैं।
3. अर्थात् यह उसकी सामर्थ्य और तत्त्वदर्शिता का चमत्कार है कि ऐसी अनघड़ उम्मी क़ौम में उसने ऐसा महान नबी पैदा किया जिसकी शिक्षा और मार्गदर्शन इतना क्रान्तिकारी है, और फिर ऐसे विश्वव्यापी शाश्वत सिद्धान्तों से युक्त है जिनपर सम्पूर्ण मानव जाति मिलकर एक उम्मत (समुदाय) बन सकती है और सदा-सर्वदा उन सिद्धान्तों से मार्ग प्राप्त कर सकती है।

बुरी मिसाल है उन लोगों की जिन्होंने अल्लाह की आयतों को झुठला दिया है।[4] ऐसे ज़ालिमों को अल्लाह मार्ग नहीं दिखाया करता।

(6) इनसे कहो, "ऐ लोगो जो यहूदी बन गए हो,[5] अगर तुम्हें यह घमण्ड है कि बाकी सब लोगों को छोड़कर बस तुम ही अल्लाह के चहेते हो तो मौत की कामना करो अगर तुम अपने इस दावे में सच्चे हो।"[6] (7) लेकिन ये हरगिज़ उसकी कामना न करेंगे अपनी उन करतूतों के कारण जो ये कर चुके हैं, और अल्लाह इन ज़ालिमों को ख़ूब जानता है। (8) इनसे कहो, "जिस मौत से तुम भागते हो वह तो तुम्हें आकर रहेगी। फिर तुम उसके सामने पेश किए जाओगे जो छिपे और खुले का जाननेवाला है, और वह तुम्हें बता देगा कि तुम क्या कुछ करते रहे हो।"

(9) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जब पुकारा जाए नमाज़ के लिए जुमुआके दिन

4. अर्थात् इनकी हालत गधे से भी बुरी है। वह तो समझ-बूझ नहीं रखता, इसलिए विवश है। मगर ये समझ-बूझ रखते हैं। तौरात को पढ़ते-पढ़ाते हैं। उसके अर्थ से अनभिज्ञ नहीं हैं। फिर भी ये उसके आदेशों से जानते हुए मुँह फेर रहे हैं, और उस नबी को मानने से जान-बूझकर इनकार कर रहे हैं जो तौरात के अनुसार बिलकुल सत्य पर है। ये न जानने के दोषी नहीं हैं बल्कि जान-बूझकर अल्लाह की आयतों को झुठलाने के अपराधी हैं।
5. यह नुकता भी ध्यान देने योग्य है। "ऐ यहूदियो" नहीं कहा बल्कि "ऐ वे लोगो जो यहूदी बन गए हो", या "जिन्होंने यहूदियत अपना ली है" कहा है। इसका कारण यह है कि मूल धर्म जो हज़रत मूसा (अलै॰) और उनसे पहले और बाद के नबी लाए थे वह तो इस्लाम ही था। उन नबियों में से कोई भी यहूदी न था और न उनके समय में यहूदियत पैदा हुई थी। यह धर्म इस नाम के साथ बहुत बाद की पैदावार है।
6. अरब के यहूदी अपनी संख्या और शक्ति में मुसलमानों से किसी तरह कम न थे और साधनों की दृष्टि से बहुत बढ़-चढ़कर थे। लेकिन जिस चीज़ ने इस असमानुपातिक मुक़ाबले में मुसलमानों को विजयी और यहूदियों को पराजित किया वह यह थी कि मुसलमान अल्लाह के मार्ग में मरने से डरना तो दूर, अपने दिल की गहराई से उनके अभिलाषी थे और सिर हथेली पर लिए हुए युद्ध-क्षेत्र में उतरते थे। इसके विपरीत यहूदियों का हाल यह था कि वे किसी मार्ग में प्राण देने के लिए तैयार न थे, न अल्लाह के मार्ग में, न क़ौम के मार्ग में, न ख़ुद अपने प्राण और धन और प्रतिष्ठा के मार्ग में। उन्हें सिर्फ़ जीवन अभीष्ट था, चाहे वह कैसा ही जीवन हो। इसी चीज़ ने उनको कायर बना दिया था।

तो अल्लाह के ज़िक्र की ओर दौड़ो और क्रय-विक्रय छोड़ दो,[7] यह तुम्हारे लिए ज़्यादा अच्छा है अगर तुम जानो। (10) फिर जब नमाज़ पूरी हो जाए तो ज़मीन मे फैल जाओ और अल्लाह का फ़ज़्ल तलाश करो।[8] और अल्लाह को बहुत ज़्यादा याद करते रहो, शायद कि तुम्हें सफलता प्राप्त हो जाए।[9]

7. इस आदेश में ज़िक्र से मुराद 'ख़ुतबा' (नमाज़ से पहले का भाषण) है, क्योंकि अज़ान के बाद पहला कर्म जो नबी (सल्ल॰) करते थे वह नमाज़ नहीं बल्कि ख़ुतबा था, और नमाज़ आप हमेशा ख़ुतबे के बाद अदा करते थे। "अल्लाह के ज़िक्र की ओर दौड़ो" का अर्थ यह नहीं है कि भागते हुआ आओ, बल्कि इसका अर्थ यह है कि जल्दी से जल्दी वहाँ पहुँचने की कोशिश करो। "क्रय-विक्रय छोड़ दो" अर्थ सिर्फ़ क्रय-विक्रय ही छोड़ना नहीं है बल्कि नमाज़ के लिए जाने की चिन्ता और आयोजन के सिवा हर अन्य व्यस्तता छोड़ देनी है। इस्लाम के फ़क़ीह इसपर एकमत हैं कि जुमुआ की अज़ान के बाद क्रय-विक्रय और हर तरह का कारोबार अवैध है। अलबत्ता हदीस के अनुसार बच्चों, औरतों, गुलामों, बीमारों और मुसाफ़िरों पर जुमुआ अनिवार्य नहीं किया गया है।
8. इसका अर्थ यह नहीं है कि जुमुआ की नमाज़ के बाद ज़मीन में फैल जाना और रोज़ी की तलाश में लग जाना आवश्यक है। बल्कि यह कथन इजाज़त (अनुमति) के अर्थ में है। चूँकि जुमुआ की अज़ान सुनकर सब कारोबार छोड़ देने का आदेश दिया गया था, इसलिए कहा गया कि नमाज़ समाप्त होने के बाद तुम्हें इजाज़त है कि फैल जाओ और अपने जो कारोबार भी करना चाहो, करो। यह ऐसा ही है जैसे 'इहराम' की हालत में शिकार को वर्जित करने के बाद कहा : जब तुम इहराम खोल दो तो इशकार करो (सूरा 5, माइदा, आयत 2)। इसका यह अर्थ नहीं है कि ज़रूर शिकार करो बल्कि यह है कि इसके बाद तुम शिकार कर सकते हो। अतः जो लोग इस यात से यह सिद्ध करते हैं कि क़ुरआन के अनुसार इस्लाम में जुमुआ की छुट्टी नहीं है वे ग़लत कहते हैं। सप्ताह में एक दिन छुट्टी करनी हो तो मुसलमान को जुमुआ के दिन करनी चाहिए जिस तरह यहूदी शनिवार को और ईसाई रविवार को करते हैं।
9. इसी तरह के अवसरों पर कदाचित् (शायद) का शब्द प्रयोग करने का अर्थ यह नहीं होता कि अल्लाह को (अल्लाह पनाह में रखे) कोई सन्देह हो रहा है, बल्कि यह वास्तव में बयान का शाहाना (राजसी) अन्दाज़ है। यह ऐसा ही है जैसे कोई दयालु स्वामी अपने सेवक से कहे कि तुम अमुक सेवा कार्य कर दो, शायद कि तुम्हें उन्नति मिल जाए। इसमें एक सूक्ष्म वादा निहित होता है जिसकी आशा में सेवक दिल लगाकर शौक के साथ वह कार्य पूरा करता है।

(11) और जब उन्होंने व्यापार और खेल-तमाशा होते देखा तो उसकी ओर लपक गए और तुम्हें खड़ा छोड़ दिया।[10] इनसे कहो, जो कुछ अल्लाह के पास है वह खेल-तमाशे और व्यापार से अच्छा है।[11] और अल्लाह सबसे अच्छी रोज़ी देनेवाला है।[12]

● ● ●

10. यह मदीने के आरम्भिक काल की घटना है। सीरिया से एक तिजारती क़ाफ़िला ठीक जुमुआ की नमाज़ के वक्त आया और उसने ढोल-ताशे बजाने शुरू किए ताकि बस्ती के लोगों को उसके आने की सूचना मिल जाए। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) उस समय 'ख़ुतबा' दे रहे थे। ढोल-ताशों की आवाज़ें सुनकर लोग विकल हो गए और 12 आदमियों के सिवा बाक़ी क़ाफ़िले की ओर दौड़ गए।
11. यह वाक्य बता रहा है कि 'सहाबा' (रज़ि॰) से जो ग़लती हुई थी वह किस प्रकार की थी। यदि (अल्लाह अपनी पनाह में रखे) उसका कारण ईमान की कमी और आख़िरत की अपेक्षा जानते-बूझते दुनिया को प्राथमिकता देनी होती तो अल्लाह के प्रकोप और ताड़ना का ढंग कुछ और होता, लेकिन चूँकि ऐसी कोई ख़राबी वहाँ न थी, बल्कि जो कुछ हुआ था प्रशिक्षण की कमी के कारण हुआ था, इसलिए पहले शिक्षण रूप से जुमुआ के नियम बताए गए, फिर उस ग़लती पर पकड़ करके प्रतिपालक के ढंग से समझाया कि जुमुआ का ख़ुतबा सुनने और उसकी नमाज़ अदा करने पर जो कुछ तुम्हें अल्लाह के यहाँ मिलेगा वह इस दुनिया की तिजारत और खेल-तमाशों से अच्छा है।
12. अर्थात् इस दुनिया में उपलक्ष्य रूप में जो भी रोज़ी पहुँचाने का माध्यम बनते हैं उन सबसे अच्छा रोज़ी देनेवाला अल्लाह है।

63. अल-मुनाफ़िक़ून

नाम

पहली आयत के वाक्यांश "जब ये कपटाचारी (मनाफ़िक़ून) तुम्हारे पास आते हैं" से उद्धृत है। यह इस सूरा का नाम भी है और इसके विषय का शीर्षक भी, क्योंकि इसमें कपटाचारियों ही की नीति की समीक्षा की गई है।

अवतरणकाल

यह सूरा बनी मुस्तलिक़ के अभियान (जो सन् 6 हिजरी में घटित हुआ था) से अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की वापसी पर या तो यात्रा के बीच में अवतरित हुई है या नबी (सल्ल॰) के मदीना तैबा पहुँचने के पश्चात् तुरन्त ही इसका अवतरण हुआ।

ऐतिहासिक पृष्टभूमि

जिस विशिष्ट घटना के विषय में यह सूरा अवतरित हुई है, उसका उल्लेख करने से पहले यह आवश्यक है कि मदीना के कपटाचारियों के इतिहास पर एक दृष्टि डाल ली जाए, क्योंकि जो घटना उस समय घटी थी, वह मात्र एक आकस्मिक घटना न थी, बल्कि उसके पीछे घटनाओं की एक पूरी शृंखला थी जो अन्ततः इस नौबत तक पहुँची. मदीना तैबा में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पदार्पण से पहले औस और ख़ज़रज के क़बीले आपस के घरेलू युद्धों से थककर (ख़ज़रज क़बीले के सरदार अब्दुल्लाह बिन उबई बिन सलूल के नेतृत्व और श्रेष्ठता पर लगभग सहमत हो चुके थे।) और इस बात की तैयारियाँ कर रहे थे कि उसको अपना बादशाह बनाकर विधिवत् रूप से उसकी ताजपोशी का उत्सव मनाएँ, यहाँ तक कि उसके लिए ताजभी बना लिया गया था। इस स्थिति में इस्लाम की चर्चा मदीना पहुँची और दोनों क़बीलों के प्रभावशाली व्यक्ति मुसलमान होने शुरू हो गए। जब नबी (सल्ल॰) मदीना पहुँचे तो अनसार के हर घराने में इस्लाम इतना फैल चुका था कि अब्दुल्लाह बिन उबई बेबस हो गया और उसको अपनी सरदारी बचाने का इसके सिवा कोई उपाय दिखाई न दिया कि वह ख़ुद भी मुसलमान हो जाए। हालाँकि उसको इस बात का बड़ा दुःख था कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उसकी बादशाही छीन ली है। कई वर्ष तक उसका यह कपटाचार युक्त ईमान और अपनी रियासत छीन जाने का यह ग़म तरह-तरह के रंग दिखाता रहा। बद्र के युद्ध के पश्चात् जब यहूदी बनी क़ैनुक़ा के स्पष्टतः प्रतिज्ञाभंग और बिना किसी उत्तेजना के सरकशी पर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उनपर आक्रमण किया तो यह व्यक्ति उनकी सहायता के लिए उठ खड़ा हुआ। (इब्ने हिशाम, भाग-3, पृ॰ 51-52)

उहुद के युद्ध के अवसर पर इस व्यक्ति ने खुली ग़द्दारी की और ठीक समय पर अपने 300 साथियों को लेकर रणक्षेत्र से उलटा वापस आ गया। जिस नाजुक घड़ी में उसने यह हरकत की थी, उसी गम्भीरता का अनुमान इस बात से किया जा सकता है कि क़ुरैश के लोग 3000 की सेना लेकर मदीना पर चढ़ आए थे और रसूल (सल्ल॰) उसके मुक़ाबले में केवल एक हज़ार आदमी साथ लेकर प्रतिरक्षा के लिए निकले थे। इन एक हज़ार में से भी यह कपटाचारी 300 आदमी तोड़ लाया और नबी (सल्ल॰) को सिर्फ़ 700 के जत्थे के साथ दुश्मनों का मुक़ाबला करना पड़ा। फिर सन् 4 हिजरी में बनी नज़ीर के अभियान का अवसर आया और इस अवसर पर इस व्यक्ति ने और इसके साथियों ने और भी ज्यादा खुलकर इस्लाम के विरुद्ध इस्लाम के शत्रुओं की सहायता की। (यह था वह परिप्रेक्ष्य जिसके साथ वह और उसके साथी कपटाचारी बनी मुस्तलिक़ के अभियान में सम्मिलित हुए थे। इस अवसर पर) उन्होंने एक साथ दो ऐसे बड़े उपद्रव खड़े कर दिए जो मुसलमानों के जत्थे को बिलकुल टुकड़े-टुकड़े कर सकते थे, किन्तु पवित्र क़ुरआन की शिक्षा और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की संगति से ईमानवालों को जो उत्कृष्ट प्रशिक्षण प्राप्त था उसके कारण उन दोनो उपद्रवों का ठीक समय पर अन्मूलन हो गया और ये कपटाचारी स्वयं अपमानित होकर रह गए। इसमें से एक उपद्रव तो यह था जिसका उल्लेख सूरा 24 (नूर) में गुज़र चुका है और दूसरा उपद्रव यह है जिसका इस सूरा में उल्लेख किया गया है। इस घटना का (संक्षिप्त विवरण यह है कि) बनी मुस्तलिक़ को पराजित करने के बाद अभी इस्लामी सेना उस बस्ती में ठहरी हुई थी जो मुरैसीअ नामक कुएँ पर आबाद थी कि अचानक पानी पर दो व्यक्तियों का झगड़ा हो गया। उनमें से एक का नाम जहजाह बिन मसऊद ग़फ़्फ़ारी था, जो हज़रत उमर (रज़ि॰) के सेवक थे और उनका घोड़ा सँभालने का काम करते थे और दूसरे व्यक्ति सिनान बिन दबर अल जोहनी थे जिनका क़बीला ख़ज़रज के एक क़बीले का प्रतिज्ञाबद्ध मित्र था। मौखिक कटुवचन से आगे बढ़कर नौबत हाथपाई तक पहुँची और जहजाह ने सिनान को एक लात मार दी, जिसे अपनी प्राचीन यमनी परम्पराओं के अनुसार अनसार बड़ा अपमान समझते थे। इसपर सिनान ने अनसार को मदद के लिए पुकारा और जहजाह ने मुहाजिरों को पुकारा। इब्ने उबई ने इस झगड़े की ख़बर सुनते ही औस और ख़ज़रज के लोगों को भड़काना शुरू कर दिया कि दौड़ो और अपने मित्र क़बीले की सहायता करो। उधर से कुछ मुहाजिर भी निकल आए। बहुत सम्भव था कि बात बढ़ जाती और उसी जगह अनसार और मुहाजिर आपस में लड़ पड़ते जहाँ अभी-अभी वे मिलकर एक दुश्मन क़बीले से लड़े थे और उसे पराजित करके अभी उसी के क्षेत्र में ठहरे हुए थे, किन्तु यह शोर सुनकर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) निकल आए और

आपने कहा, "यह अज्ञान की पुकार कैसी? तुम लोग कहाँ और यह अज्ञान की पुकार कहाँ? इसे छोड़ो यह बड़ी गन्दी चीज़ है।" इसपर दोनों तरफ़ के नेक लोगों ने आगे बढ़कर मामला समाप्त करा दिया और सिनान ने जहजाह को क्षमा करके सुलह कर ली। इसके बाद हर व्यक्ति जिसके दिल में कपट (निफ़ाक़) था अब्दुल्लाह बिन उबई के पास पहुँचा और इन लोगों ने एकत्र होकर उससे कहा कि "अब तक तो तुमसे आशाएँ थीं और तुम प्रतिरक्षा कर रहे थे; मगर अब मालूम होता है कि तुम हमारे मुक़ाबले में इन कंगालों के सहायक बन गए हो।" इब्ने उबई पहले ही खौल रहा था। इन बातों से वह और भी ज़्यादा भड़क उठा। कहने लगा, "यह सब कुछ तुम्हारा ही किया-धरा है। तुमने इन लोगों को अपने देश में जगह दी; इनपर अपने धन बांटे; यहाँ तक कि अब ये फल-फूलकर स्वयं हमारे ही शत्रु और विपक्षी बन गए हैं। हमारी और इन क़ुरैश के कंगालों (या मुहम्मद, के साथियों) की हालत पर यह कहावत घटित होती है कि अपने कुत्ते को खिला-पिलाकर मोटा कर, ताकि तुझी को फाड़ खाए। तुम लोग इनसे हाथ रोक लो, तो ये चलते फिरते नज़र आएँ। अल्लाह की क़सम, मदीना वापस पहुँचकर हममें जो प्रतिष्ठित है वह हीन को निकाल देगा।" नबी (सल्ल॰) को जब यह बात मालूम हुई तो आपने तुरन्त ही कूच का हुक्म दे दिया, हालाँकि नबी (सल्ल॰) के सामान्य नियम के अनुसार वह कूच का समय न था। निरन्तर 30 घंटे चलते रहे, यहाँ तक कि लोग थककर चूर हो गए। फिर आपने एक जगह पड़ाव किया और थके हुए लोग ज़मीन पर कमर टिकाते ही सो गए। यह आपने इस लिएकिया कि जो कुछ मुरैसीअ के कुएँ पर घटित हुआ था, उसका प्रभाव लोगों के मन से मिट जाए। (किन्तु) धीरे-धीरे वह बात तमाम अनसार में फैल गई और उनमें इब्ने उबई के विरुद्ध अत्यन्त रोष उत्पन्न हो गया। लोगों ने इब्ने उबई से कहा कि जाकर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से माफ़ी माँगो। किन्तु उसने बिगड़कर उत्तर दिया, "तुमने कहा कि उनपर ईमान लाओ। मैं ईमान ले आया। तुमने कहा कि अपने माल की ज़कात दो। मैंने ज़कात भी दे दी। अब बस यही काम रह गया है कि मैं मुहम्मद को सजदा करूँ।" इन बातों से उसके विरुद्ध अनसारी मुसलमानों का क्रोंध और अधिक बढ़ गया और हर ओर से उसपर फटकार पड़ने लगी। जब यह क़ाफ़िला मदीना तैबा में दाख़िल होने लगा तो अब्दुल्लाह बिन उबई के बेटे, जिनका नाम भी अब्दुल्लाह ही था, तलवार खींचकर बाप के आगे खड़े हो गए और बोले, "आपने कहा था कि मदीना वापस पहुँचकर प्रतिष्ठित; हीन को निकाल देगा, अब आपको मालूम हो जाएगा कि प्रष्ठिा आपकी है या अल्लाह या उसके रसूल (सल्ल॰) की। अल्लाह की क़सम, आप मदीना में दाख़िल नहीं हो सकते जब तक अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) आपको इजाज़त न दें।" इस पर इब्ने उबई चीख उठा, "ख़ज़रज के

लोगो, तनिक देखो, मेरा बेटा ही मुझे मदीना में दाख़िल होने से रोक रहा है।'' लोगों ने यह ख़बर नबी (सल्ल०) तक पहुँचाई और आपने कहा, ''अब्दुल्लाह से कहो कि, अपने बाप को घर आने दे।'' अब्दुल्लाह (रज़ि०) ने कहा, ''उनका आदेश है तो अब आप दाख़िल हो सकते हैं।'' ये थीं वे परिस्थितियाँ जिनमें यह सूरा, अधिक सम्भावना इसकी है कि नबी (सल्ल०) के मदीना पहुँचने के बाद अवतरित हुई।

⊖ ⊖ ⊖

63. सूरा अल-मुनाफ़िक़ून

(मदीना में उतरी–आयतें 11)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ नबी, जब ये मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) तुम्हारे पास आते हैं तो कहते हैं, ''हम गवाही देते हैं कि आप यक़ीनन अल्लाह के रसूल हैं।'' हाँ, अल्लाह जानता है कि तुम अवश्य ही उसके रसूल हो, मगर अल्लाह गवाह देता है कि ये मुनाफ़िक़ बिलकुल झूठे हैं।[1] (2) इन्होंने अपनी क़समों को ढाल बना रखा है और इस तरह ये अल्लाह के मार्ग से ख़ुद रुकते हैं और दुनिया को रोकते हैं। कैसी बुरी हरकतें हैं जो ये लोग कर रहे हैं। (3) यह सब कुछ इस कारण से है कि इन लोगों ने ईमान लाकर फिर इनकार किया इसलिए इनके दिलों पर मुहर लगा दी गई, अब ये कुछ नहीं समझते।[2]

(4) इन्हें देखो तो इनके डील-डौल तुम्हें बड़े शानदार दिखाई दें। बोले तो तुम इनकी बातें सुनते रह जाओ। मगर वास्तव में ये मानो लकड़ी के कुन्दे हैं जो दीवार के साथ चुनकर रख दिए गए हों।[3] हर ज़ोर की आवाज़ को ये अपने विरुद्ध समझते हैं। ये पक्के दुश्मन हैं, इनसे बचकर रहो, अल्लाह की मार इनपर, ये किधर उलटे फिराए जा रहे हैं।[4]

---

1. अर्थात् जो बात वे ज़बान से कह रहे हैं वह है तो अपनी जगह सच्ची, लेकिन चूँकि उनकी अपनी धारणा वह नहीं है जिसे वे ज़बान से ज़ाहिर कर रहे हैं, इसलिए अपने इस कथन में वे झूठे हैं कि वे आपके रसूल होने की गवाही देते हैं।
2. इस आयत में ईमान लाने से मुराद ईमान का इक़रार करके मुसलमानों में शामिल होना है। और कुफ़्र (इनकार) करने से मुराद दिल से ईमान न लाना और उसी कुफ़्र (इनकार) पर क़ायम रहना है जिसपर वे अपने ईमान के जाहिरी इक़रार से पहले क़ायम थे। यह आयत उन आयतों में से है जिनमें अल्लाह की ओर से किसी के दिल पर मुहर लगाने का अर्थ बिलकुल स्पष्ट ढंग से बयान कर दिया गया है। उन मुनाफ़िक़ों की यह दशा इस कारण से नहीं हुई कि अल्लाह ने उनके दिलों पर मुहर लगा दी थी इसलिए ईमान उनके अन्दर उतर ही न सका और वे विवशतापूर्वक मुनाफ़िक़ बनकर रह गए। बल्कि उसने उनके दिलों पर यह मुहर उस समय लगाई जब उन्होंने ईमान की अभिव्यक्ति के बावजूद कुफ़्र पर ही जमे रहने का फ़ैसला कर लिया। तब उनसे विशुद्ध ईमान का सौभाग्य छीन लिया गया और उसी मुनाफ़िक़त के साधन उनके लिए जुटा दिए गए जिसे उन्होंने स्वयं अपनाया था।

(5) और जब उनसे कहा जाता है कि आओ ताकि अल्लाह का रसूल तुम्हारे लिए माफ़ी की दुआ करे, तो सिर झटकते हैं और तुम देखते हो कि वे बड़े घमण्ड के साथ आने से रुकते हैं। (6) ऐ नबी, तुम चाहे उनके लिए माफ़ी की दुआ करो या न करो, उनके लिए बराबर है, अल्लाह हरगिज़ उन्हें माफ़ न करेगा, अल्लाह कपटाचारी लोगों को हरगिज़ मार्ग नहीं दिखाता।

(7) ये वही लोग हैं जो कहते हैं कि रसूल के साथियों पर ख़र्च करना बन्द कर दो ताकि ये बिखर जाएँ। हालाँकि ज़मीन और आसमानों के ख़ज़ानों का मालिक अल्लाह है, मगर ये कपटाचारी समझते नहीं हैं। (8) ये कहते हैं कि हम मदीना वापस पहुँच जाएँ तो जो इज़्ज़तवाला है वह बेइज़्ज़त को वहाँ से निकाल बाहर करेगा।[5] हालाँकि इज़्ज़त तो अल्लाह और उसके रसूल और ईमानवालों के लिए है, मगर ये कपटाचारी जानते नहीं हैं।

---

3. अर्थात् ये जो दीवारों के साथ तकिए लगाकर बैठते हैं, ये इनसान नहीं हैं बल्कि लकड़ी के कुन्दे हैं। इनको लकड़ी की उपमा देकर यह बताया गया कि ये नैतिकता की आत्मा से ख़ाली हैं जो मानवता का मूल तत्त्व है। फिर दीवार से लगे हुए कुन्दों की उपममा देकर यह बताया गया कि ये बिलकुल अयोग्य हैं। क्योंकि लकड़ी भी अगर कोई फ़ायदा देती है तो उस समय जबकि वह किसी छत में, या किसी दरवाज़े में, या किसी फ़र्नीचर में लगकर इस्तेमाल हो रही हो। दीवार से लगाकर कुन्दे के रूप में जो लकड़ी रख दी गई हो वह कोई फ़ायदा भी नहीं देती।
4. यह नहीं बताया गया कि उनको ईमान से निफ़ाक़ (कपटाचार) की ओर उल्टा फिरानेवाला कौन है। इसे स्पष्ट न करने से ख़ुद ही यह मतलब निकलता है कि उनकी इस औंधी चाल का कोई एक प्रेरक नहीं है बल्कि बहुत-से प्रेरक इसमें क्रियाशील हैं। शैतान है, बुरे मित्र हैं, उनके अपने मन के स्वार्थ हैं। किसी की पत्नी इसकी प्रेरक है, किसी के बच्चे इसके प्रेरक हैं, किसी की बिरादरी के बुरे लोग इसके प्रेरक हैं। किसी को ईर्ष्या और द्वेष और अहंकार ने इस राह पर हाँक दिया है।
5. अर्थात् सिर्फ़ इसी पर बस नहीं करते कि रसूल (सल्ल॰) के पास माफ़ी के लिए दुआ कराने न आएँ बल्कि यह बात सुनकर घमण्ड और दंभ के साथ सिर को झटका देते हैं और रसूल के पास आने और माफ़ी माँगने को अपना अपमान समझकर अपनी जगह जमे बैठे रहते हैं। यह उनके ईमानवाले न होने का स्पष्ट लक्षण है।

(9) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद तुमको अल्लाह की याद से ग़ाफ़िल न कर दें। जो लोग ऐसा करें वही घाटे में रहनेवाले हैं। (10) जो रोज़ी हमने तुम्हें दी है उसमें से ख़र्च करो इससे पहले कि तुममें से किसी की मौत का समय आ जाए और उस समय वह कहे कि ''ऐ मेरे रब, क्यों न तूने मुझे थोड़ी-सी मुहलत और दे दी कि मैं सदक़ा (दान) देता और अच्छे लोगों में शामिल हो जाता।'' (11) हालाँकि जब किसी के कर्म करने की मुहलत पूरी होने का समय आ जाता है तो अल्लाह किसी व्यक्ति को हरगिज़ और ज़्यादा मुहलत नहीं देता, और जो कुछ तुम करते हो, अल्लाह को उसकी ख़बर है।



64. अत-तग़ाबुन

नाम

आयत 9 के वाक्यांश ''वह दिन होगा एक-दूसरे के मुक़ाबले में लोगों की हार-जीत (तग़ाबुन) का'' से उद्धृत है अर्थात् वह सूरा जिसमें 'तग़ाबुन' शब्द आया है।

अवतरणकाल

मुक़ातिल और कल्बी कहते हैं कि इसका कुछ अंश मक्की है और कुछ मदनी। किन्तु अधिकतर टीकाकार पूरी सूरा को मदनी ठहराते हैं। किन्तु वार्ता की विषय-वस्तु पर विचार करने पर अनुमान होताहै कि सम्भवतः यह मदीना तैबा के आरम्भिक कालखण्ड में अवतरित हुई होगी। यही कारण है कि इसमें कुछ रंग मक्की सूरतों का और कुछ मदनी सूरतों का पाया जाता है।

विषय और वार्ता

इस सूरा का विषय ईमान और आज्ञापालन का आमंत्रण और सदाचार की शिक्षा है। वार्ता का क्रम यह है कि पहली चार आयतों में संबोधन सभी मनुष्यों से है, फिर आयत 5-10 तक उन लोगों को सम्बोधित किया गया है जो क़ुरआन के आमंत्रण को स्वीकार नहीं करते और इसके बाद आयत 11 से अन्त तक की आयतों की वार्ता का रुख़ उन लोगों की ओर है जो इस आमंत्रण को स्वीकार करते हैं। समस्त मानवों को सम्बोधित करके कुछ थोड़े-से वाक्यों में उन्हें चार मौलिक सच्चाइयों से अवगत कराया गया है : एक यह कि इस जगत् का स्रष्टा, मालिक और शासक एक ऐसा सर्वशक्तिमान ईश्वर है जिसके पूर्ण और दोषमुक्त होने की गवाही इस ब्रह्माण्ड की हर चीज़ दे रही है। दूसरे यह कि यह ब्रह्माण्ड निरुद्देश्य और तत्त्वदर्शिता से रिक्त नहीं है, बल्कि इसके स्रष्टा ने सर्वथा यथार्थतः और औचित्य के आधार पर इसकी रचना की है। यहाँ इस भ्रम में न रहो कि यह व्यर्थ तमाशा है, जो निरर्थक शुरू और निरर्थक ही समाप्त हो जाएगा। तीसरे यह कि तुम्हें जिस सुन्दरतम रूप के साथ ईश्वर ने उत्पन्न किया है और फिर जिस प्रकार यह तुमपर छोड़ दिया है कि तुम मानो या न मानो, यह कोई ऐसा कार्य नहीं है जो फल रहित और निरर्थक हो। वास्तव में ईश्वर यह देख रहा है कि तुम अपनी स्वतंत्रता को किस तरह प्रयोग में लाते हो। चौथे यह कि तुम दायित्व मुक्त और अनुत्तरदायी नहीं हो। अन्य में तुम्हें अपने स्रष्टा की ओर पलटकर जाना है, जिसपर मन में छिपे हुए विचार तक प्रकट हैं। इसके बाद वार्ता का रुख़ उन लोगों की ओर मुड़ता है जिन्होंने इनकार (कुफ़्र) की राह अपनाई है और उन्हें (विगत विनष्ट जातियों के इतिहास का ध्यान दिलाकर

बताया जाता है) उनके मौलिक कारण केवल दो थे : एक यह कि उसने जिन रसूलों को उनके मार्गदर्शन के लिए भेजा था, उनकी बात मानने से उन्होंने इनकार किया। दूसरे यह कि उन्होंने परलोक की धारणा को भी रद्द कर दिया और अपनी दंभपूर्ण भावना के अन्तर्गत यह समझ लिया कि जो कुछ है बस यही सांसारिक जीवन है। मानव इतिहास के इन दो शिक्षाप्रद तथ्यों को बयान करके सत्य के न माननेवालों को आमंत्रित किया गया है कि वे होश में आएँ और यदि विगत जातियों के जैसा परिणाम नहीं देखना चाहते तो अल्लाह और उसके रसूल और मार्गदर्शन के उस प्रकाश पर ईमान ले आएँ जो अल्लाह ने क़ुरआन मजीद के रूप में अवतरित किया है। इसके साथ उनको सचेत किया जाता है कि अन्ततः वह दिन आनेवाला है जब समस्त अगले और पिछले एक जगह एकत्र किए जाएँगे और तुममें से हरएक का ग़बन सबके सामने खुल जाएगा। फिर सदैव के लिए समस्त मनुष्यों के भाग्य का निर्णय (उनके ईमान और कर्म के आधार पर कर दिया जाएगा)। इसके पाश्चात् ईमान की राह अपनानेवालों को सम्बोधित करके कुछ महत्त्वपूर्ण आदेश उन्हें दिए जाते हैं। एक यह कि दुनिया में जो मुसीबत भी आती है, अल्लाह की अनुज्ञा से आती है। ऐसी स्थितियों में जो व्यक्ति ईमान पर जमा रहे, अल्लाह उसके दिल को राह दिखाता है, अन्यथा घबराहट या झुंझलाहट में पड़कर जो आदमी ईमान की राह से हट जाए उसका दिल अल्लाह के मार्गदर्शन से वंचित हो जाता है। दूसरे यह कि ईमानवाले व्यक्ति का काम केवळ ईमान ले आना ही नहीं है, बल्कि ईमान लाने के पाश्चात् उसे व्यवहारतः अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) की आज्ञा का पालन करना चाहिए। तीसरे यह कि ईमानवाले व्यक्ति का भरोसा अपनी शक्ति या संसार की किसी शक्ति पर नहीं, बल्कि केवल अल्लाह पर होना चाहिए। चौथे यह कि ईमानवाले व्यक्ति के लिए उसका धन और उसके बाल-बच्चे एक बहुत बड़ी परीक्षा हैं, क्योंकि अधिकतर इन्हीं का प्रेम मनुष्य को ईमान और आज्ञापालन के मार्ग से हटा देता है। इसलिए ईमानवालों को (इनके मामले में बहुत) सतर्क रहना चाहिए। पाँचवें यह कि हर मनुष्य पर उसकी अपनी सामर्थ्य ही तक दायित्व का बोझ डाला गया है। अल्लाह को यह अपेक्षित नहीं है कि मनुष्य अपनी सामर्थ्य से बढ़कर काम करे। अलबत्ता ईमानवाले व्यक्ति को जिस बात की कोशिश करनी चाहिए वह यह है कि अपनी हद तक ईश्वर से डरते हुए जीवन व्यतीत करने में कोई कमी न होने दे।



64. सूरा अत-तग़ाबुन

(मदीना में उतरी–आयतें 18)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अल्लाह की तसबीह (गुणगान) कर रही है हर वह चीज़ जो आसमानों में है और हर वह चीज़ जो ज़मीन में है। उसी की बादशाही है और उसी के लिए प्रशंसा है और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।[1] (2) वही है जिसने तुमको पैदा किया, फिर तुममें से कोई इनकार करनेवाला है और कोई ईमानवाला, और अल्लाह वह सब कुछ देख रहा है जो तुम करते हो। (3) उसने ज़मीन और आसमानों को हक़ के साथ पैदा किया है, और तुम्हारा रूप बनाया और बहुत अच्छा बनाया है, और उसी की ओर आख़िरकार तुम्हें पलटना है। (4) ज़मीन और आसमानों की हर चीज़ का उसे ज्ञान है, जो कुछ तुम छिपाते हो और जो कुछ तुम व्यक्त करते हो[2] सब उसको मालूम है, और वह दिलों का हाल तक जानता है।

(5) क्या तुम्हें उन लोगों की कोई ख़बर नहीं पहुँची जिन्होंने इससे पहले इनकार किया और फिर अपनी करतूतों के फल का मज़ा चख लिया? और आगे उनके लिए एक दर्दनाक अज़ब है। (6) इस परिणाम के भागी वे इसलिए हुए कि उनके पास उनके रसूल खुले-खुले प्रमाण और निशानियाँ लेकर आते रहे, मगर उन्होंने कहा, "क्या इनसान हमें मार्ग दिखाएँगे?" इस तरह उन्होंने मानने से इनकार कर दिया और मुँह फेर लिया, तब अल्लाह भी उनसे बेपरवाह हो गया, और अल्लाह तो है ही बेनियाज (निस्पृह) और अपने आप में ख़ुद प्रशंसनीय।

(7) इनकार करनेवालों ने बड़े दावे से कहा है कि वे मरने के बाद हरगिज़ दोबारा न उठाए जाएँगे। उनसे कहो, "नहीं, मेरे रब की क़सम तुम अवश्य उठाए जाओगे,[3] फिर ज़रूर तुम्हें बताया जाएगा कि तुमने (दुनिया में) क्या कुछ किया है, और ऐसा करना अल्लाह के लिए बहुत आसान है।"

(8) अतः ईमान लाओ अल्लाह पर, और उसके रसूल पर, और उस प्रकाश

1. अर्थात् वह सर्वशक्तिमान है। जो कुछ करना चाहे कर सकता है। कोई शक्ति उसकी सामर्थ्य को सीमित करनेवाली नहीं है।
2. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि "जो कुछ तुम छिपाकर करते हो और जो कुछ खुल्लम-खुल्ला करते हो।"

पर जो हमने उतारा है।[4] जो कुछ तु करते हो अल्लाह उसकी ख़बर रखता है। (9) (उसका पता तुम्हें उस दिन चल जाएगा) जब इकट्ठा होने के दिन वह तुम सबको इकट्ठा करेगा।[5] वह दिन होगा एक-दूसरे के मुक़ाबले में लोगों की हार-जीत का।[6] जो अल्लाह पर ईमान लाया है और अच्छा कर्म करता है, अल्लाह उसके गुनाह झाड़ देगा और उसे ऐसी जन्नतों में दाख़िल करेगा जिनके नीचे नहरें बहती होंगी। ये लोग हमेशा-हमेशा उनमें

3. यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि एक 'आख़िरत' (परलोक) के न माननेवाले के लिए आख़िर इससे क्या अन्तर पड़ता है कि आप उसे आख़िरत के आने की सूचना क़सम खाकर दें या क़सम खाए बिना दें? वह जब इस चीज़ को नहीं मानता तो सिर्फ़ इस कारण कैसे मान लेगा कि आप क़सम ख़ाकर उससे यह बात कह रहे हैं? इसका जवाब यह है कि अल्लाह के रसूल के मुख़ातब (सम्बोधित) वे लोग थे जो अपने व्यक्तिगत ज्ञान और अनुभव के आधार पर यह बात ख़ूब जानते थे कि आपने कभी उम्र-भर झूठ नहीं बोला है, इसलिए चाहे वे ज़बान से आपके विरुद्ध कैसे ही आरोप घड़ते रहे हों, अपने दिलों में वे यह कल्पना तक नहीं कर सकते थे कि ऐसा सच्चा इनसान कभी अल्लाह की क़सम खाकर वह बात कह सकता है जिसके सत्य होने का उसे ज्ञान और विश्वास न हो।
4. यहाँ संदर्भ ख़ुद बता रहा है कि अल्लाह के उतारे हुए प्रकाश का मतलब क़ुरआन है। जिस तरह प्रकाश ख़ुद प्रकट होता है और चारों तरफ़ की उन सभी चीज़ों को प्रकट कर देता है जो पहले अंधकार में छिपी हुई थीं, उसी तरह क़ुरआन एक ऐसा चिराग़ है जिसका सत्य होना अपने आपमें ख़ुद प्रकट है, और उसके प्रकाश में इनसान हर उस समस्या को समझ सकता है जिसे समझने के लिए उसके अपने ज्ञान और बुद्धि के साधन पर्याप्त नहीं।
5. इकट्ठा होने के दिन से मुराद है 'क़ियामत', और सबके इकट्ठा करने से मुराद है उन सभी इनसानों को एक ही समय में ज़िन्दा करके इकट्ठा करना जो सृष्टि के आरंभ से क़ियामत तक दुनिया में पैदा हुए हैं।
6. अर्थात् वास्तविक हार-जीत क़ियामत के दिन होगी। वहाँ जाकर पता चलेगा कि वास्तव में घाटा किसने उठाया और कौन नफ़ा कमा ले गया, वास्तव में धोखा किसने खाया और कौन समझदार निकला, वास्तव में किसने अपनी ज़िन्दगी के सारे साधन एक ग़लत कारोबार में खपाकर अपना दीवाला निकाल दिया और किसने अपनी शक्तियं और योग्यताओं और प्रयासों और धन और समय को नफ़े के सौदे पर लगाकर वे सारे लाभ लूट लिए जो पहले व्यक्ति को भी प्राप्त हो सकते थे अगर वह दुनिया की वास्तविकता को समझने में धोखा न खाता।

रहेंगे। यही बड़ी सफलता है। (10) और जिन लोगों ने इनकार किया है और हमारी आयतों को झुठलाया है वे दोज़ख के निवासी होंगे जिसमें वे हमेशा रहेंगे, और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है।

(11) कोई मुसीबत कभी नहीं आती मगर अल्लाह की अनुज्ञा ही से आती है। जो व्यक्ति अल्लाह पर ईमान रखता हो अल्लाह उसके दिल को राह दिखाता है, अल्लाह को हर चीज़ का ज्ञान है। (12) अल्लाह की आज्ञा का पालन करो और रसूल की आज्ञा का पालन करो। लेकिन अगर तुम आज्ञापालन से मुँह मोड़ते हो तो हमारे रसूल पर साफ़-साफ़ सत्य पहुँचा देने के सिवा कोई ज़िम्मेदारी नही है। (13) अल्लाह वह है जिसके सिवा कोई ईश नही, अतः ईमान लानेवालों को अल्लाह ही पर भरोसा रखना चाहिए।[7]

(14) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम्हारी बीवियों और तुम्हारी औलाद में से कुछ तुम्हारे दुश्मन हैं, उनसे सावधान रहो। और अगर तुम माफ़ करो और जाने दोतो अल्लाह बड़ा ही माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला है।[8] (15) तुम्हारे माल और

7. अर्थात् ईश्वरत्व के सारे अधिकार एक अल्लाह ही के हाथ में हैं। कोई दूसरा सिरे से यह अधिकार रखता ही नहीं है कि तुम्हारी अच्छी या बुरी तक़दीर बना सके। अच्छा समय आ सकता है तो उसी के लाए आ सकता है। और बुरा समय टल सकता है तो उसी के टाले टल सकता है। अतः जो व्यक्ति सच्चे दिल से अल्लाह को अकेला पूज्य प्रभु मानता हो उसके लिए इसके सिवा सिरे से कोई मार्ग ही नहीं है कि वह अल्लाह पर परभरोसा रखे और दुनिया में एक ईमानवाले व्यक्ति की हैसियत से अपना कर्तव्य इस विश्वास के साथ पूरा करता जाए कि भलाई हर हाल में उसी मार्ग में है जिसकी ओर पथप्रदर्शन अल्लाह ने किया है।
8. अर्थात् दुनिया के नाते-रिश्ते की दृष्टि से यद्यपि ये लोग वे हैं जो इनसान को सबसे ज़्यादा प्रिय होते हैं, लेकिन धर्म की दृष्टि से ये तुम्हारे 'दुश्मन' हैं। यह दुश्मनी चाहे इस हैसियत से हो कि वे तुम्हें नेकी से रोकते और बुराई की ओर आकृष्ट करते हों, या इस हैसियत से कि वे तुम्हें ईमान से रोकते और कुफ़्र (इनकार) की ओर खींचते हों, या इस हैसियत से कि उनकी सहानुभूतियाँ दुश्मनों के साथ हों, प्रत्येक दशा में यह है ऐसी चीज़ कि तुम्हें इससे सावधान रहना चाहिए और उनके प्रेम में ग्रस्त होकर अपनी आक़बत (अन्तिम परिणाम) बरबाद न करनी चाहिए। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि तुम उन्हें दुश्मन समझकर उनसे कठोर व्यवहार करने लगो, बल्कि मक़सद केवल यह है कि उन्हें अगर सुधार न सको तो कम से कम अपने-आपको बिगड़ने से बचाए रखो।

तुम्हारी औलाद तो एक आज़माइश हैं, और अल्लाह ही है जिसके पास बड़ा बदला है। (16) अतः जहाँ तक तुम्हारे बस में हो अल्लाह से डरते रहो, और सुनो और आज्ञा का पालन करो, और अपने माल ख़र्च करो, यह तुम्हारे ही लिए अच्छा है। जो अपने दिल की तंगी से सुरक्षित रह गए बस वही सफलता प्राप्त करनेवाले हैं। (17) अगर तुम अल्लाह को अच्छा क़र्ज़ दो तो वह तुम्हें कई गुना बढ़ाकर देगा और तुम्हारे क़ुसूरों को माफ़ करेगा, अल्लाह बड़ा गुणग्राहक और सहनशील है, (18) प्रत्यक्ष और परोक्ष हर चीज़ को जानता है, प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।



65. अत-तलाक़

नाम

इस सूरा का नाम ही अत-तलाक़ नहीं है, बल्कि यह इसकी वार्ता का शीर्षक भी है, क्योंकि इसमें तलाक़ ही के नियमों का उल्लेख हुआ है।

अवतरणकाल

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि॰) ने स्पष्टतः कहा है और सूरा के विषय के आन्तरिक साक्ष्य से भी यही स्पष्ट होता है कि इसका अवतरण अनिवार्यतः सूरा 2 (बक़रा) की उन आयतों के पश्चात् हुआ है जिनमें तलाक़ के नियम-सम्बन्धी आदेश पहली बार दिए गए हैं। उल्लेखों से मालूम होता है कि जब सूरा बक़रा के आदेशों को समझने में लोग ग़लतियाँ करने लगे और व्यवहारतः भी उनसे ग़लतियाँ होने लगीं, तब अल्लाह ने उनके सुधार के लिए ये नियम-सम्बन्धी आदेश अवतरित किए।

विषय और वार्ता

इस सूरा के नियम-सम्बन्धी आदेशों को समझने के लिए आवश्यक है कि उन निर्देशों को पुनः मन में ताज़ा कर लिया जाए जो तलाक़ और इद्दत के सम्बन्ध में इससे पहले सूरा 2 (बक़रा) आयत 228, 229, 230, 234, सूरा 33 (अहज़ाब) आयत 49 में वर्णित हो चुके हैं। इन आयतों में जो नियम निर्धारित किए गए थे, वे ये थे :

(1) एक पुरुष अपनी पत्नी को अधिक-से-अधिक तीन तलाक़ दे सकता है।

(2) एक या दो तलाक़ देने की स्थिति में इद्दत के अन्दर पति को रुजू (अर्थात् बिना निकाह के पुनः दाम्पत्य-सम्बन्ध स्थापित करने) का अधिकार होता है और इद्दत का समय समाप्त होने के पश्चात् वे पुरुष और स्त्री पुनः निकाह करना चाहें तो कर सकते हैं; इसके लिए हलाला की कोई शर्त नहीं है, किन्तु यदि पुरुष तीन तलाक़ दे दे तो इद्दत के भीतर रुजू करने का अधिकार समाप्त हो जाता है और पुनः निकाह भी उस समय तक नहीं हो सकता, जब तक स्त्री का विवाह किसी और पुरुष से न हो जाए और वह अपनी मरज़ी से उसको तलाक़ न दे दे।

(3) वह स्त्री जिसका पति से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो चुका हो और जो रजस्वला हो उसकी इद्दत यह है कि उसे तलाक़ के बाद तीन बार हैज़ (मासिक धर्म) आ जाए। एक तलाक़ या दो तलाक़ की स्थिति में इस इद्दत का अर्थ यह है कि स्त्री का अभी तक

उस व्यक्ति (पति) से पत्नीत्व का सम्बन्ध पूर्णतः समाप्त नहीं हुआ है। और वह इद्दत के भीतर उससे रुजू कर सकता है। किन्तु यदि पुरुष तीन तलाक़ दे चुका हो तो यह इद्दत रुजू की सम्भावना के लिए नहीं है, बल्कि केवल इसलिए है कि इसके समाप्त होने से पूर्व स्त्री किसी और व्यक्ति से निकाह नहीं कर सकती है।

(4) वह स्त्री जिसका पति से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित न हुआ हो, जिसके हाथ लगाने से पहले ही तलाक़ दे दी जाए, उसके लिए इद्दत नहीं है। वह चाहे तो तलाक़ के बाद तुरन्त निकाह कर सकती है।

(5) जिस स्त्री का पति मर जाए उसकी इद्दत 4 महिने 10 दिन है। अब यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि सूरा तलाक़ इन नियमों में से किसी नियम को निरस्त करने या उसमें संशोधन करने के लिए अवतरित नहीं हुई है, बल्कि दो उद्देश्य के लिए अवतरित हुई है। एक यह कि पुरुष को तलाक़ का जो अधिकार दिया गया है, उसे व्यवहार में लाने के लिए ऐसे बुद्धिमत्तापूर्ण तरीक़े बताए जाएँ जिनसे यथासम्भव विलगाव की नौबत न आने पाए, क्योंकि ईश्वरीय धर्म-विधान में तलाक़ की गुंजाइश केवल एक अवश्यम्भावी आवश्यकता के रूप में रखी गई है, अन्यथा अल्लाह को यह बात अत्यन्त अप्रिय है कि एक स्त्री और पुरुष के मध्य में जो दाम्पत्य-सम्बन्ध स्थापित हो चुका है, वह फिर कभी टूट जाए। नबी (सल्ल॰) का कथन है कि "अल्लाह ने किसी ऐसी चीज़ को वैध नहीं किया है जो तलाक़ से बढ़कर उसे अप्रिय हो।" (अबू दाऊद)। दूसरा उद्देश्य यह है कि सूरा 2 (बक़रा) के नियम-सम्बन्धी आदेशों के बाद तदधिक जो समस्याएँ ऐसी रह गई थीं, जो समाधान की प्रतीक्षा में थीं उनका समाधान प्रस्तुत करके इस्लाम के पारिवारिक क़ानून के इस विभाग को पूर्ण कर दिया।



65. सूरा अत-तलाक़

(मदीना में उतरी–आयतें 12)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ नबी, जब तुम लोग औरतों को तलाक़ दो तो उन्हें उनकी 'इद्दत' (अवधि) के लिए तलाक़ दिया करो[1] और इद्दत के समय की ठीक-ठीक गिनती करो, और अल्लाह से डरो जो तुम्हारा रब है।[2] (इद्दत के समय में) न तुम उन्हें उनके घरों से निकालो, और न वे ख़ुद निकलें,[3] सिवाय इसके कि वे कोई स्पष्ट बुराई कर बैठें।[4] ये अल्लाह की नियत की हुई सीमाएँ हैं, और जो कोई अल्लाह की सीमाओं का उल्लंघन

1. 'इद्दत' (अवधि) के लिए तलाक़ देने के दो अर्थ हैं। और मुराद यहाँ दोनों ही हैं। एक यह कि मासिक धर्म (हैज़) की हालत में औरत को तलाक़ न दो बल्कि उस समय तलाक़ दो जिससे उसकी इद्दत शुरू हो सके। दूसरे यह कि इद्दत के अन्दर रुजू की गुंजाइश रखते हुए तलाक़ दो, इस तरह तलाक़ न दे बैठो जिससे रुजू का अवसर ही बाक़ी न रहे। इस आदेश की जो व्याख्या हदीसों में मिलती है उसके अनुसार तलाक़ का नियम यह है कि मासिक धर्म (हैज़) के समय में तलाक़ न दी जाए बल्कि उस 'तुह्' (अर्थात् पाकी) की हालत में दी जाए जिसमें शौहर ने बीवी से संभोक न किया हो, या फिर उस हालत में दी जाए जबकि औरत का गर्भवती होना मालूम हो। और एक ही समय में तीन तलाक़ें न दे डाली जाएँ।
2. अर्थात् तलाक़ को खेल न समझ बैठो कि तलाक़ का महत्त्वपूर्ण मामला पेश आने के बाद यह भी याद न रखा जाए कि कब तलाक़ दी गई है, कब इद्दत शुरू हुई और कब उसको समाप्त होना है। जब तलाक़ दी जाए तो उसके समय और तिथि को याद रखना चाहिए, और यह भी याद रखना चाहिए कि किस हालत में औरत को तलाक़ दी गई है।
3. अर्थात् न मर्द क्रोध में आकर औरत को घर से निकाल दे और न औरत ख़ुद ही बिगड़कर घर छोड़ दे। इद्दत तक घर उसका है। उसी घर में दोनों को रहना चाहिए, ताकि अगर आपस में मेल-मिलाप की राह कोई निकल सकती हो तो उससे फ़ायदा उठाया जा सके। दोनों एक घर में मौजूद रहेंगे तो तीन महीने तक, या तीन हैज़ (मासिक धर्म) आने तक, या गर्भ की दशा में बच्चा पैदा होने तक इसके अवसर बार-बार आ सकते हैं।
4. अर्थात् व्यभिचार करें या 'इद्दत' की अवधि में लड़ती-झगड़ती और अपशब्द बकती हों।

करेगा वह अपने ऊपर ख़ुद ज़ुल्म करेगा। तुम नहीं जानते, शायद इसके बाद अल्लाह (मेल-मिलाप की) कोई सूरत पैदा कर दे। (2) फिर जब वे अपने (इद्दत की) अवधि के अन्त पर पहुँचें तो या तो उन्हें भले तरीक़े से (अपने निकाह में) रोक रखो, या भले तरीक़े पर उनसे अलग हो जाओ। और दो ऐसे आदमियों को गवाह बना लो जो तुममें से इनसाफ़ करनेवाले हों[5] और (ऐ गवाह बननेवालो) गवाही ठीक-ठीक अल्लाह के लिए अदा करो।

ये बातें हैं जिनकी तुम लोगों को नसीहत की जाती है, हर उस व्यक्ति को जो अल्लाह और आख़िरत (परलोक) के दिन पर ईमान पर रखता हो।[6] जो कोई अल्लाह से डरते हुए काम करेगा अल्लाह उसके लिए कठिनाइयों से निकलने का कोई मार्ग पैदा कर देगा (3) और उसे ऐसे मार्ग से रोज़ी देगा जिधर उसका गुमान भी न जाता हो। जो अल्लाह पर भरोसा करे उसके लिए वह काफ़ी है। अल्लाह अपना काम पूरा करके रहता है। अल्लाह ने हर चीज़ के लिए एक तक़दीर (अन्दाज़ा) नियत कर रखी है।

(4) और तुम्हारी औरतों में से जो मासिक-धर्म से निराश हो चुकी हों उनके मामले में अगर तुम लोगों को कोई शक हो रहा है तो (तुम्हें मालूम हो कि) उनकी इद्दत तीन महीने है।[7] और यही हुक्म उनका है जिन्हें अभी हैज़ न आया हो। और गर्भवती

5. इससे मुराद तलाक़ पर भी गवाह बनाना है और रुजू पर भी।
6. ये शब्द ख़ुद बता रहे हैं कि ऊपर जो आदेश दिये गए हैं उनकी हैसियत नसीहत की है न कि क़ानून की। आदमी ऊपर बताए हुए तरीक़े के विरुद्ध तलाक़ दे बेठे, 'इद्दत' की गणना सुरक्षित न रखे, बीवी को बिना उचित कारण के घर से निकाल दे, इद्दत के समाप्त होने पर रुजू करे तो औरत को सताने के लिए करे और विदा करे तो लड़ाई-झगड़े के साथ करे, और तलाक़, रुजू, विच्छेद, किसी चीज़ पर भी गवाह न बनाए, तो इससे तलाक़ और रुजू और विच्छेद के क़ानूनी परिणामों में कोई अन्तर न पड़ेगा। अलबत्ता अल्लाह की नसीहत के विरुद्ध चलना इस बात का प्रमाण होगा कि उसके दिल में अल्लाह और अन्तिम दिन पर सही ईमान मौजूद नहीं है जिसके कारण उसने वह ढंग अपनाया जो एक सच्चे ईमानवाले व्यक्ति को न अपनाना चाहिए।
7. हैज़ (मासिक धर्म) चाहे अल्पायु के कारण न आया हो,या इस कारण कि कुछ औरतों को बहुत देर से हैज़ आना शुरू होता है और कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी औरत को उम्र-भर नहीं आता, अतःतमाम हालतों में ऐसी औरत की इद्दत वही है जो हैज़ से निराश औरत की इद्दत है, अर्थात् तलाक़ के समय से तीन महीने।

औरतों की इद्दत की सीमा उनके बच्चा पैदा हो जाने तक है।[8] जो व्यक्ति अल्लाह से डरे उसके मामले में वह आसानी पैदा कर देता है। (5) यह अल्लाह का हुक्म है जो उसने तुम्हारी ओर उतारा है। जो अल्लाह से डरेगा अल्लाह उसकी बुराइयों को उससे दूर कर देगा और उसको बड़ा बदला देगा।

(6) उनको (इद्दत की अवधि में) उसी जगह रखो जहाँ तुम रहते हो, जैसी कुछ भी जगह तुम्हें उपलब्ध हो। और उन्हें तंग करने के लिए उनको न सताओ।

और अगर वे गर्भवती हों तो उनपर उनके बच्चा पैदा होने तक ख़र्च करते रहो। फिर अगर वे तुम्हारे लिए (बच्चे को) दूध पिलाएँ तो उनकी उजरत उन्हें दो, और भले तरीक़े से (उजरत का मामला) आपस की बातचीत से तय कर लो। लेकिन अगर तुमने (उजरत तय करने में) एक दूसरे को तंग किया तो बच्चे को कोई और औरत दूध पिला लेगी। (7) सम्पन्न व्यक्ति अपनी सम्पन्नता के अनुसार ख़र्च दे, और जिसको रोज़ी कम दी गई हो वह उसी माल में से ख़र्च करे जो अल्लाह ने उसे दिया है। अल्लाह ने जिसको जितना कुछ दिया है उससे ज़्यादा का वह उसपर ज़िम्मेदारी का बोझ नहीं डालता। दूर नहीं कि अल्लाह तंगदस्ती के बाद संपन्नता प्रदान करे।

(8) कितनी ही[9] बस्तियाँ हैं जिन्होंने अपने रब और उसके रसूलों के आदेश की अवहेलना की तो हमने उनसे कड़ा हिसाब लिया और उनको बुरी तरह सज़ा दी। (9) उन्होंने अपने किए का मज़ा चख लिया और उनका कार्य-परिणाम घाटा ही घाटा है, (10) अल्लाह ने (आख़िरत में) उनके लिए सख़्त अज़ाब तैयार कर रखा है। अतः अल्लाह से डरो ऐ बुद्धिमान लोगो जो ईमान लाए हो। अल्लाह ने तुम्हारी ओर एक नसीहत उतार दी है, (11) एक ऐसा रसूल[10] जो तुमको अल्लाह की साफ़-साफ़ हिदायत देनेवाली आयतें सुनाता है ताकि ईमान लानेवालों और अच्छे कर्म करनेवालों को अँधेरों से निकालकर प्रकाश में ले आए। जो कोई अल्लाह पर ईमान लाए और अच्छा कर्म करे, अल्लाह उसे ऐसी जन्तों में दाख़िल करेगा जिनके नीचे नहरें बहती

8. अर्थात् औरत का शिशु-प्रसव चाहे शौहर की मौत के तुरन्त बाद हो जाए या 4 महीने 10 दिन से ज़्यादा समय लगे, हर हाल में बच्चा पैदा होते ही वह इद्दत से बाहर हो जाएगी।
9. अब मुसलमानों को सावधान किया जाता है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) और उसकी किताब के द्वारा जो आदेश उनको दिए गए हैं उनकी अगर वे अवहेलना करेंगे तो दुनिया और आख़िरत में किस परिणाम का उन्हें सामना करना पड़ेगा, और अगर आज्ञापालन का मार्ग अपनाएँगे तो क्या बदला पाएँगे।

होंगी। ये लोग उनमें हमेशा-हमेशा रहेंगे। अल्लाह ने ऐसे व्यक्ति के लिए उत्तम रोज़ी रखी है।

(12) अल्लाह वह है जिसने सात आसमान बनाए और ज़मीन की क़िस्म से भी उन्हीं के सदृश।[11] उनके बीच आदेश उतरता रहता है। (यह बात तुम्हें इसलिए बताई जा रही है) ताकि तुम जान लो कि अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है, और यह कि अल्लाह का ज्ञान हर चीज़ को अपने घेरे में लिए हुए है।



10. टीकाकारों में से कुछ ने नसीहत का मतलब क़ुरआन समझा है और रसूल का मतलब मुहम्मद (सल्ल॰)। और कुछ कहते हैं कि नसीहत का मतलब ख़ुद मुहम्मद (सल्ल॰) ही हैं, अर्थात् आपका व्यक्तित्व सर्वथा नसीहत था। हमारी दृष्टि में यही दूसरी व्याख्या ज़्यादा सही है।
11. ''उन्हीं के सदृश'' का अर्थ यह नहीं है कि जितने आसमान बनाए उतनी ही ज़मीने भी बनाई, बल्कि अर्थ यह है कि जैसे कई एक आसमान उसने बनाए हैं वैसी ही कई ज़मीनें भी बनाई हैं। और ''ज़मीन की क़िस्म से'' का अर्थ यह है कि जिस तरह यह ज़मीन जिसपर इनसान रहते हैं, अपने रहनेवालों के लिए बिछौना और पालना बनी हुई है उसी तरह अल्लाह ने ब्रह्माण्ड में और ज़मीनें भी बना रखी हैं जो अपनी-अपनी आबादियों के लिए बिछौना और पालना हैं। दूसरे शब्दों में आसमान में ये जो अगणित तारे और ग्रह दिखाई देते हैं, ये सब वीरान पड़े हुए नहीं हैं बल्कि ज़मीन की तरह उनमें भी बहुत-से ऐसे हैं जिनमें दुनियाएँ आबाद हैं।

66. अत-तहरीम

नाम

पहली आयत के शब्द ''क्यों उस चीज़ को हराम (तुहर्रिमु) करते हो' से उद्धृत है। इस नाम से अभिप्रेत यह है यह वह सूरा है जिसमें 'तहरीम' (किसी चीज़ को अवैध ठहराने) की घटना का उल्लेख हुआ है। इसमें अवैध ठहराने की जिस घटना का उल्लेख किया गया है, उसके सम्बन्ध में हदीसों के उल्लेखों में दो महिलाओं की चर्चा की गई है, जो उस समय नबी (सल्ल॰) की पत्नियों में से थीं। एक हज़रत सफ़ीया (रज़ि॰), दूसरी हज़रत मारिया क़िब्तिया (रज़ि॰) (और ये दोनों ही नबी (सल्ल॰) के घर में सन् 7 हिजरी में प्रविष्ट हुई हैं। इस) से यह बात लगभग निश्चित हो जाती है कि इस सूरा का अवतरण सन् 7 हिजरी या 8 हिजरी के मध्य किसी समय हुआ था।

विषय और वार्ताएँ

इस सूरा में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की पवित्र पत्नियों के सम्बन्ध में कुछ घटनाओं की ओर संकेत करते हुए कुछ गम्भीर समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है : एक यह कि हलाल तथा हराम और वैध तथा अवैध की सीमाएँ निर्धारित करने के अधिकार निश्चित रूप से सर्वोच्च अल्लाह के हाथ में हैं, और जन सामान्य तो अलग रहे, पैग़म्बर को भी अपने तौर पर अल्लाह की ग्राह्य ठहराई हुई किसी चीज़ को हराम कर लेने का अधिकार नहीं है। दूसरे यह कि मानव-समाज में नबी (सल्ल॰) का मक़ाम बहुत ही नाज़ुक मक़ाम है। एक साधारण बात भी जो किसी दूसरे मनुष्य के जीवन में घटित हो तो कुछ अधिक महत्त्व नहीं रखती लेकिन नबी (सल्ल॰) के जीवन में घटित हो तो उसकी हैसियत क़ानून की हो जाती है। इसलिए अल्लाह की ओर से नबियों के जीवन पर ऐसी कड़ी निगरानी रखी गई है कि उनका कोई छोटे से छोटा क़दम उठाना भी ईश्वरीय इच्छा से हटा हुआ न हो, ताकि इस्लामी क़ानून और उसके सिद्धान्त अपने बिलकुल वास्तविक रूप में अल्लाह के बन्दों तक पहुँच जाएँ। तीसरी बात यह है कि तनिक-सी बात पर जब नबी (सल्ल॰) को टोक दिया गया और न केवल उसका सुधार किया गया, बल्कि उसे रिकार्ड पर भी लाया गया, तो यह चीज़ निश्चय ही हमारे दिल में यह असंशय का भाव पैदा कर देती है कि नबी (सल्ल॰) के पवित्र जीवन में जो कर्म और जो नियम-सम्बन्धी आदेश और निर्देश भी अब हमें मिलते हैं और जिसपर अल्लाह की ओर से कोई पकड़ या संशोधन रिकार्ड पर मौजूद नहीं है, वह सर्वथा विशुद्ध और ठीक है, और पूर्ण रूप से अल्लाह की इच्छा के अनुकूल है। चौथी बात (यह कि अल्लाह ने

न केवल यह कि नबी (सल्ल॰) को एक साधारण-सी बात पर टोक दिया, बल्कि ईमानवालों की माताओं को (अर्थात् नबी सल्ल॰ की पत्नियों को) उनकी कुछ ग़लतियों पर) कड़ाई के साथ सचेत किया, बल्कि (इस पकड़ और चेतावनी को अपनी किताब (क़ुरआन) में सदैव के लिए अंकित भी कर दिया। इनमें) निहित उद्देश्य इसके सिवा और क्य हो सकता है कि अल्लाह इस तरह ईमानवालों को अपने महापुरुषों के आदर-सम्मान की वास्तविक मर्यादाओं एवं सीमाओं से परिचित करना चाहता है। नबी, नबी हैं, ईश्वर नहीं है कि उससे कोई भूल-चूक न हो, नबी (सल्ल॰) इस लिए आदरणीय नहीं है कि उनसे भूल-चूक का होना असम्भव है, बल्कि वे आदरणीय इसलिए हैं कि वे ईश्वरीय इच्छा का पूर्ण प्रतिनिधि हैं, और उनकी छोटी-सी भूल को भी अल्लाह ने सुधारे बिना नहीं छोड़ा है। इसी तरह आदरणीय सहाबा हों या नबी (सल्ल॰) की पुण्यात्मा पत्नियाँ, ये सब मनुष्य थे, फ़रिश्ते या परामानव न थे। उनसे भूल-चूक हो सकती थी। उनको जो उच्च पद प्राप्त हुआ, इसलिए हुआ कि अल्लाह के मार्गदर्शन और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के प्रशिक्षण ने उनको मानवता का उत्तम आदर्श बना दिया था। उनका जो कुछ भी सम्मान है, इसी कारण है, न कि इस परिकल्पना के आधार पर कि वे कुछ ऐसी विभूतियाँ थीं जो ग़लतियों से बिलकुल पाक थीं। इसी कारण नबी (सल्ल॰) के शुभकाल में सहाबा या आपकी पुण्यात्मा पत्नियाँ से मनुष्य होने के कारण जब भी कोई भूल-चूक हुई उपसर टोका गया। उनकी कुछ ग़लतियों का सुधार नबी (सल्ल॰) ने किया, जिसका उल्लेख हदीसों में बहुत-से स्थानों पर हुआ है और कुछ ग़लतियों का उल्लेख क़ुरआन मजीद में करके अल्लाह ने स्वयं उनको सुधारा, ताकि मुसलमान कभी महापुरुषों के आदर की कोई अतिशयोक्तिपूर्ण धारणा न बना लें। पाँचवीं बात यह है कि अल्लाह का धर्म बिलकुल बेलाग है, उसमें हर व्यक्ति के लिए केवल वही कुछ है जिसका वह अपने ईमान और कर्मों की दृष्टि से पात्र है। इस मामले में विशेष रूप से नबी (सल्ल॰) की पुण्यात्मा पत्नियों के सामने तीन प्रकार की स्त्रियों को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किया गया है। एक उदाहरण हज़रत नूह (अलै॰) और हज़रत लूत (अलै॰) की काफ़िर पत्नियों का है। नबियों की पत्नियाँ होना (जिनके) कुछ काम न आया। दूसरा उदाहरण फ़िरऔन की पत्नी का है। चूँकि वे ईमान ले आईं, इसलिए फ़िरऔन जैसे सबसे बड़े काफ़िर की पत्नी होना भी उनके लिए किसी हानि का कारण न बन सका। तीसरा उदाहरण हज़रत मरयम (अलै॰) का है, जिन्हें महान पद इसलिए मिला कि अल्लाह ने किस कठिन परीक्षा में उन्हें डालने का निर्णय किया था, उसके लिए वे नतमस्तक हो गई। इन बातों के अतिरिक्त एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य जो इस सूरा की आयत 3 से हमें मालूम होता है वह यह हैं कि सर्वोच्च अल्लाह की ओर से नबी

(सल्ल॰) को केवल वही ज्ञान प्रदान नहीं किया जाता था जो क़ुरआन में अंकित हुआ है, बल्कि आपको प्रकाशना के द्वारा दूसरी बातों का ज्ञान भी प्रदान किया जाता था, जो क़ुरआन में अंकित नहीं किया गया है।

⊖ ⊖ ⊖

66. सूरा अत-तहरीम

(मदीना में उतरी–आयतें 12)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ नबी, तुम क्यों उस चीज़ को हराम करते हो जिसको अल्लाह ने तुम्हारे लिए हलाल किया है?[1] (क्या इसलिए कि) तुम अपनी बीवियों की प्रसन्नता चाहते हो?[2]—अल्लाह माफ़ करनेवाला और दया करनेवाला है। (2) अल्लाह ने तुम लोगों के लिए अपनी क़समों की पाबन्दी से निकलने का तरीक़ा निश्चित कर दिया है।[3] अल्लाह तुम्हारा संरक्षक है, और वही सर्वज्ञ और तत्त्वदर्शी है।

(3) (और यह मामला भी ध्यान देने के योग्य है कि) नबी ने एक बात अपनी

---

1. यह वास्तव में सवाल नहीं है बल्कि नापसंदी का प्रदर्शन है, अर्थात् उद्देश्य नबी (सल्ल॰) से यह पूछना नहीं है कि आपने यह काम क्यों किया, बल्कि आपको इस बात पर सावधान करना है कि अल्लाह की हलाल ठहराई हुई चीज़ को अपने लिए हराम कर लेने का जो काम आपसे हो गया है वह अल्लाह को नापसंद है। चूँकि आपकी हैसियत एक साधारण आदमी की नहीं, बल्कि अल्लाह के रसूल की थी, और आपके किसी चीज़ को अपने ऊपर हराम कर लेने से यह ख़तरा पैदा हो सकता था कि मुसलिम समुदाय भी उस चीज़ को हराम या कम से कम अप्रिय समझने लगे, इसलिए अल्लाह ने आपके इस व्यवहार पर पकड़ की और आपको इस हराम ठहराने के काम से बाज़ रहने का आदेश दिया। इससे यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को भी अपने तौर पर किसी चीज़ को हलाल या हराम कर देने का अधिकार न था।
2. इससे मालूम हुआ कि नबी (सल्ल॰) ने हराम करने का यह काम ख़ुद अपनी किसी इच्छा के कारण नहीं किया था बल्कि आपकी बीवियों ने यह चाहा था कि आप ऐसा करें और आपने सिर्फ़ उनको ख़ुश करने के लिए एक हलाल (वैध) चीज़ अपने लिए हराम (अवैध) कर ली थी। हदीस के विश्वसनीय उल्लेखों से मालूम होता है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की एक बीवी (हज़रत ज़ैनब रज़ि॰) के यहाँ कहीं से शहद आया था जो नबी (सल्ल॰) को पसन्द था। इसलिए आप सामान्य रीति के विपरीत उनके यहाँ ज़्यादा देर तक ठहरने लगे थे। इसपर कुछ दूसरी बीवियों को रश्क आया और उन्होंने एका करके आपके मन में उस शहद के प्रति ऐसी घृणा उत्पन्न की जिससे आपने उसको इस्तेमाल न करने की प्रतिज्ञा कर ली।

एक बीवी से रहस्य में कही थीं। फिर जब उस बीवी ने (किसी और पर) वह रहस्य प्रकट कर दिया और अल्लाह ने नबी को इस (रहस्योद्‌घाटन) की सूचना दे दी, तो नबी ने उसपर किसी हद तक (उस बीवी को) ख़बरदार किया और किसी हद तक उसे टाल दिया। फिर जब नबी ने उसे (रहस्योद्‌घान की) यह बात बताई तो उसने पूछा आपको इसकी किसने ख़बर दी? नबी ने कहा, ''मुझे उसने ख़बर दी जो सब कुछ जानता है और ख़ूब ख़बर रखनेवाला है।''[4]

(4) अगर तुम दोनों अल्लाह से तौबा करती हो (तो यह तुम्हारे लिए अच्छा है) क्योंकि तुम्हारे दिल सीधी राह से हट गए हैं,[5] और अगर नबी के मुक़ाबले में तुमने जत्थाबन्दी की तो जान रखो कि अल्लाह उसका संरक्षक है और उसके बाद जिबरील और सभी नेक ईमानवाले और सब फ़रिश्ते उसके साथी और सहायक है।[6] (5) असंभव नहीं कि अगर नबी तुम सब बीवियों को तलाक़ दे दे तो अल्लाह उसे ऐसी

3. मतलब यह है कि कफ़्फ़ारा अर्थात् प्रायश्चित नियम की पूर्ति करके क़समों की पाबन्दी से निकलने की जो विधि अल्लाह ने सूरा 5 (अल-माइदा), आयत 89 में निर्धारित कर दी है उसका पालन करके आप उस प्रतिज्ञा को भंग कर दें जो आपने एक हलाल चीज़ को अपने ऊपर हराम करने के लिए किया है।
4. किसी उल्लेख से निश्चित रूप से यह मालूम नहीं होता कि वह रहस्य की बात क्या थी और जिस उद्देश्य के लिए यह आयत उतरी है उसकी दृष्टि से यह प्रश्न सिरे से कोई महत्त्व भी नहीं रखता कि रह रहस्य की बात थी क्या। वास्तविक उद्देश्य जिसके लिए इस मामले को क़ुरआन मजीद में बयान किया गया है नबी (सल्ल॰) की पाक बीवियों को और अप्रत्यक्ष रूप से मुसलमानों के सभी उत्तरदायी लोगों की बीवियों को इस बात पर सचेत करना है कि वे रहस्यों की सुरक्षा में बेपरवाई से काम न लें। जो व्यक्ति जितनी बड़ी दायित्वपूर्ण हैसियत रखता हो उसके घर से रहस्योद्‌घाटन उतना ही ज़्यादा ख़तरनाक होता है। बात चाहे महत्त्वपूर्ण हो या अमहत्त्वपूर्ण, रहस्य की सुरक्षा करने में ढील की आदत पड़ जाए तो अमहत्त्वपूर्ण बातों की तरह किसी सहमय महत्त्वपूर्ण बात भी खुल सकती है।
5. इन दोनों से मुराद हज़रत उमर (रज़ि॰) के उल्लेख के अनुसार हज़रत आइशा (रज़ि॰) और हज़रत हफ़सा (रज़ि॰) हैं और सीधी राह से हट जाने का अर्थ जो हज़रत उमर (रज़ि॰) ने बयान किया है वह यह है कि ये दोनों बीवियाँ नबी (सल्ल॰) के साथ कुछ अनुचित निर्भयता से पेश आने लगी थीं जिसे अल्लाहने नापसन्द किया और उन्हें सचेत किया।

बीवियाँ तुम्हारे बदले में प्रदान कर दे जो तुमसे अच्छी हों,[7] सच्ची मुसलमान, ईमानवाली, आज्ञाकारी, तौबा करनेवाली, इबादत करनेवाली, और रोजेदार, चाहे विवाहिता हों या कुँवारियाँ हों।

(6) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, बचाओ अपने आपको और अपने घरवालों को उस आग से जिसका ईंधन इनसान और पत्थर होंगे,[8] जिसपर कठोर स्वभाव के सख़्त पकड़ करनेवाले फ़रिश्ते नियुक्त होंगे जो कभी अल्लाह के आदेश की अवहेलना नहीं करते और जो आदेश भी उन्हें दिया जाता है उसका पालन करते हैं। (7) (उस समय कहा जाएगा) ऐ इनकार करनेवालो, आज उज्र पेश न करो, तुम्हें तो वैसा ही बदला दिया जा रहा है जैसा तुम कर्म कर रहे थे।

(8) ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अल्लाह से तौबा करो, विशुद्ध तौबा, असंभव नहीं कि अल्लाह तुम्हारी बुराईयाँ दूर कर दे और तुम्हें ऐसी जन्नतों में दाख़िल कर दे जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी। यह वह दिन होगा जब अल्लाह अपने नबी को और

6. मतलब यह है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के मुक़ाबले में जत्थाबन्दी करके तुम अपना ही नुकसान करोगी, क्योंकि जिसका संरक्षक अल्लाह है और जिबरील और फ़रिश्ते और सभी नेक ईमानवाले जिसके साथ हैं उसके मुक़ाबले में जत्थाबन्दी करके कोई सफल नहीं हो सकता।
7. इससे मालूम हुआ कि क़ुसूर सिर्फ़ हज़रत आइशा (रज़ि॰) और हफ़सा (रज़ि॰) ही का न था, बल्कि दूसरी पाक बीवियाँ भी कुछ न कुछ दोषी थीं, इसी लिए इन दोनों के बाद इस आयत में बाक़ी सब बीवियों को भी सचेत किया गया। हदीसों से मालूम होता है कि उस ज़माने में नबी (सल्ल॰) बीवियों से इतना अप्रसन्न हो गए थे कि एक महीने तक आपने उनसे सम्बन्ध-विच्छेद किए रखा और सहाबा में यह मशहूर हो गया कि आपने उनको तलाक़ दे दी है।
8. यह आयत बताती है कि एक व्यक्ति की ज़िम्मेदारी केवल अपने-आप ही को अल्लाह के अज़ाब से बचाने की कोशिश तक सीमित नहीं है बल्कि उसका काम यह भी है कि प्राकृतिक व्यवस्था ने जिस परिवार की अध्यक्षता का भार उसपर डाला है उसको भी अपने सामर्थ्य की हद तक ऐसी शिक्षा-दीक्षा दे जिससे वे अल्लाह के प्रिय इनसान बनें, और अगर वे जहन्नम के मार्ग पर जा रहे हो तो जहाँ तक उसके बस में हो उनको उससे रोकने का प्रयास करे। जहन्नम का ईंधन पत्थर होंगे से मुराद संभवतः पत्थर का कोयला है। इब्न मसऊद (रज़ि॰), इब्न अब्बास (रज़ि॰), मुजाहिद (रह॰), इमाम मुहम्मद अल-बाक़र (रह॰) और सुद्दी (रह॰) कहते हैं कि ये गन्धक के पत्थर होंगे।

उन लोगों को जो उसके साथ ईमान लाए हैं रुसवा नहीं करेगा।[9] उनका प्रकाश उनके आगे-आगे और उनके दाहिनी ओर दौड़ रहा होगा और वे कह रहे होंगे कि ऐ हमारे रब, हमारा प्रकाश हमारे लिए पूर्ण कर दे और हमें माफ़ कर, तुझे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।

(9) ऐ नबी, काफ़िरों (इनकार करनेवालों) और मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) से जिहाद (संघर्ष) करो और उनके साथ सख़्ती से पेश आओ। उनका ठिकाना जहन्नम है, और वह बहुत बुरा ठिकाना है।

(10) अल्लाह इनकार करनेवालों के मामले में नूह और लूत की बीवियों को मिसाल के तौर पर पेश करता है। वे हमारे दो नेक बन्दों के निकाह में थीं, मगर उन्होंने अपने उन शौहरों के साथ विश्वासघात किया,[10] और वे अल्लाह के मुक़ाबले में उनके कुछ भी न काम आ सके। दोनों से कह दिया गया कि जाओ आग में जाने वालों के साथ तुम भी चली जाओ। (11) और ईमानवालों के मामले में अल्लाह फ़िरऔन की बीवी की मिसाल पेश करता है कि जबकि उसने प्रार्थना की, ''ऐ मेरे रब, मेरे लिए अपने यहाँ जन्नत में एक घर बना दे, और मुझे फ़िरऔन और उसके कर्म से बचा ले और मुझे ज़ालिम लोगों से छुटकारा दे।'' (12) और इमरान की बेटी मरयम[11] की मिसाल देता है जिसने अपनी शर्मगाह (सतीत्व) की रक्षा की थी,[12] फिर हमने उसके अन्दर अपनी ओर से रूह (आत्मा) फूँक दी,[13] और उसने अपने रब के बयानों और उसकी किताबों की पुष्टि की और वह आज्ञाकारी लोगों में से थी।[14]



9. अर्थात् उनके अच्छे कर्मों का बदला नष्ट न करेगा। काफ़िरों (इनकार करनेवालों) और मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) को यह कहने का अवसर हरगिज़ न देगा कि इन लोगों ने अल्लाह की उपासना भी की तो इसका क्या बदला पाया। रुसवाई विद्रोहियों और अवज्ञाकारियों के हिस्से में आएगी न कि वफ़ादारों और आज्ञाकारियों के हिस्से में।
10. यह विश्वासघात इस अर्थ में नहीं है कि उन्होंने व्यभिचार किया था, बल्कि इस अर्थ में कि उन्होंने ईमान की राह में हज़रत नूह (अलै॰) और हज़रत लूत (अलै॰) का साथ न दिया बल्कि उनके मुक़ाबले में दीन के दुश्मनों का साथ देती रहीं।
11. हो सकता है कि हज़रपत मरयम के बाप ही का नाम इमरान हो या उनको इमरान की बेटी इसलिए कहा गया हो कि वे इमरान के कुटुम्ब से थीं।

12. यह यहूदियों के इस आरोप का खण्डन है कि उनके पेट से हज़रत ईसा (अलै॰) का जन्म (अल्लाह की पनाह) किसी पाप का परिणाम था। सूरा 4 (अन-निसा), आयत 156 में इन ज़ालिमों के इसी आरोप को बहुत बड़ी तोहमत बताया गया है।
13. अर्थात् बिना इसके कि उनका किसी मर्द से सम्बन्ध होता, उनके गर्भाशय में अपनी ओर से एक जान डाल दी।
14. जिस उद्देश्य के लिए हज़रत मरयम को यहाँ मिसाल में पेश किया गया है वह यह है कि कुँवारेपन में उनको चमत्कार से गर्भवती करके अल्लाह ने उन्हें एक कठिन परीक्षा में डाल दिया था मगर उन्होंने सब्र के साथ अल्लाह की इच्छा के आगे सिर झुका दिया।

67. अल-मुल्क

नाम

पहले वाक्यांश ''अत्यन्त श्रेष्ठ और उच्च है वह जिसके हाथ में (विश्व का) राज्य है'' के शब्द 'अल-मुल्क' (राज्य) को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

विषय-वस्तुओं और वर्णन-शैली से साफ़ मालूम होता है कि यह मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

इसमें ए ओर संक्षिप्त रूप से इस्लाम की शिक्षाओं का परिचय कराया गया है और दूसरी ओर बड़ी प्रभावकारी रीति से उन लोगों को चौकाया गया है जो बेसुध पड़े हुए थे। पहली पाँच आयतों में मनुष्य को यह आभास कराया गया है कि वह जिस जगत् में रहता है वह एक अत्यन्त व्यवस्थित और सुदृढ़ राज्य है। इस राज्य को अनस्तित्व से अस्तित्व अल्लाह ही ने प्रदान किया है और इसके प्रबन्ध एवं व्यवस्था और शासन के सभी अधिकार भी नितान्त रूप से अल्लाह ही के हाथ में हैं। इसलिए मनुष्य को यह भी बताया गया है कि इस अत्यन्त तत्त्वदर्शिता पर आधारित जगत् में वह निरुद्देश्य नहीं पैदा कर दिया गया है, बल्कि उसे यहाँ परीक्षा के लिए भेजा गया है और इस परीक्षा में वह अपने अच्छे कर्म द्वारा ही सफल हो सकता है। आयत 6-11 तक कुफ़्र (इनकार) के उन भयावह परिणामों का उल्लेख किया गया है जो परलोक में सामने आनेवाले हैं। आयत 12-14 तक इस तथ्य को मन में बिठाया गया है कि स्रष्टा अपने सृष्ट जीवों से बेख़बर नहीं हो सकता। वह तुम्हारी हर ख़ुली और छिपी बात, यहाँ तक कि तुम्हारे मन के विचारों तक को जानता है। अतः नैतिकता का वास्तविक आधार यह है कि मनुष्य उस अलख ईश्वर की पूछगछ से डरकर बुराई से बचे। यह नीति जो लोग अपनाएँगे वही परलोक में कृपा और महान प्रतिदान के अधिकारी होंगे। आयत 15-23 तक सामने के उन सामान्य साधारण तथ्यों की ओर जिन्हें मनुष्य संसार की नित्य व्यवहृत वस्तुएँ समझकर उन्हें ध्यान देने योग्य नहीं समझता, निरन्तर संकेत करके उनपर सोचने के लिए आमंत्रित किया गया है। (और लोगों की इस बात पर निन्दा की गई है कि) ये सारी वस्तुएँ तुम्हें सत्य का ज्ञान कराने के लिए विद्यमान हैं, तुम पशुओं की भाँति देखते हो और सुनने और देखने की उस शक्ति और सोचने-समझनेवाले मस्तिष्क से काम नहीं लेते जो मनुष्य होने की हैसियत से ईश्वर ने तुम्हें दिए हैं, इसी कारण सीधा मार्ग तुम्हें

दिखाई नहीं देता। आयत 24-27 तक बताया गया है कि अन्त में तुम्हें अनिवार्यतः अपने ईश्वर की सेवा में उपस्थित होना है। नबी का कार्य नहीं है कि तुम्हें उसके आने का समय और तिथि बताए, (जैसा कि तुम इसकी मांग कर रहे हो)। उसका कर्तव्य बस यह है कि तुम्हें उस आनेवाले समय से पहले ही सचेत कर दे। आयत 28-29 में मक्का के काफ़िरों की उन बातों का उत्तर दिया गया है जो वे नबी (सल्ल॰) और आपके साथियों के विरुद्ध करते थे। वे नबी (सल्ल॰) को कोसते थे और आपके लिए और ईमानवालों के लिए विनाश की प्रार्थनाएँ करते थे। इसपर कहा गया है कि तुम्हें सीधे मार्ग की ओर बुलाने वाले चाहे विनष्ट हों या अल्लाह उनपर दया करे, इससे तुम्हारा भाग्य कैसे बदल जाएगा? तुम अपनी चिन्ता करो। (तुम ईमानवालों को) गुमराह समझ रहे हो, एक समय आएगा जब यह बात खुल जाएगी कि वास्तव में गुमराह कौन था? अन्त में लोगों के समक्ष यह प्रश्न रख दिया गया है कि अरब के मरुस्थलों और पर्वतीय क्षेत्रों में जहाँ तुम्हारा जीवन पूर्ण रूप से उस पानी पर निर्भर करता है जो किसी स्थान पर धरती से निकल आया है, वहाँ यदि यह जल धरती में उतरकर विलुप्त हो जाए तो ईश्वर के सिवा कौन तुम्हें यह अमृत जल लाकर दे सकता है?



67. सूरा अल-मुल्क

(मक्का में उतरी–आयतें 30)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) अत्यन्त श्रेष्ट और उच्च है वह जिसके हाथ में (विश्व का) राज्य है, और वह हर चीज़ की सामर्थ्य रखता है।[1] (2) जिसने मौत और ज़िन्दगी को आविष्कृत किया ताकि तुम लोगों को आज़माकर देखे कि तुममें से कौन अच्छा कर्म करनेवाला है,[2] और वह प्रभुत्वशाली भी है और माफ़ करनेवाला भी। (3) जिसने ऊपर-तले सात आसमान बनाए। तुम रहमान (करुणामय ईश्वर) की रचना में किसी तरह की असंगति न पाओगे।[3] फिर पलटकर देखो, कहीं तुम्हें कोई ख़लल[4] दिकाई देता है? (4) बार-बार निगाह दौड़ाओ। तुम्हारी निगाह थककर असफल पलट आएगी।

(5) हमने तुम्हारे क़रीब के आसमान[5] को भव्य प्रदीपकों से मुसज्जित किया है और उन्हें शैतानों को मार भगाने का साधन बना दिया है। इस शैतानों के लिए भड़कती हुई आग हमने तैयार कर रखी है।

(6) जिन लोगों ने अपने रब के साथ कुफ़्र (इनकार) किया है उनके लिए जहन्नम

---

1. अर्थात् जो कुछ चाहे कर सकता है। कोई चीज़ उसे मजबूर करनेवाली नहीं है कि वह कोई काम करना चाहे और न कर सके।
2. अर्थात् दुनिया में इनसानों के मरने और जीने का यह सिलसिला उसने इसलिए शुरू किया है कि उनकी परीक्षा ले और यह देखे कि किस इनसान का कर्म अधिक उत्तम है।
3. मूल ग्रन्थ में 'तफ़ावुत' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ है तारतम्य और पारस्परिक मिलान का न होना, एक चीज़ का दूसरी चीज़ से मेल न खाना, अनमेल, बेजोड़ होना।
4. मूल में 'फ़ुतूर' शब्द का इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ है दरार, शगाफ़, छेद, फटा हुआ होना, टूटा-फूटा होना। मतलब यह है कि सम्पूर्ण जगत् की संरचना ऐसी मज़बूत है और ज़मीन के एक कण से लेकर विराट आकाश गंगाओं तक हर चीज़ ऐसी सम्बद्ध है कि कहीं विश्व-व्यवस्था का क्रम नहीं टूटता। तुम चाहे जितनी ही खोज कर लो तुम्हें किसी जगह कोई गड़बड़ी नहीं मिल सकती।
5. इससे मुराद वह आसमान है जिसके तारों और ग्रहों को हम दूरबीन के बिना नंगी आँखों से देखते हैं।

का अज़ाब है और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है। (7) जब वे उसमें फेंके जाएँगे तो उसके दडाड़ ने की भयंकर आवाज़ सुनेंगे[6] और वह जोश खा रही होगी, (8) प्रकोप की भीषणता से फटी जाती होगी। हर बार जब कोई समूह उसमें डाला जाएगा, उसके कार्यकर्ता उन लोगों से पूछेंगे, ''क्या तुम्हारे पास कोई सावधान करनेवाला नहीं आया था?'' (9) वे जवाब देंगे, ''हाँ, सावधान करनेवाला हमारे पास आया था मगर हमने उसे झुठला दिया और कहा अल्लाह ने कुछ भी अवतरित नहीं किया है, तुम बड़ी गुमराही में पड़े हुएहो।'' (10) और वे कहेंगे, ''काश हम सुनते या समझते तो आज इस भड़कती हुई आग के भागियों में न शामिल होते।'' (11) इस तरह वे अपने दोष को ख़ुद स्वीकार कर लेंगे, फिटकार है इन दोज़ख़वालों पर।

(12) जो लोग बिना देखे अपने रब से डरते हैं, यक़ीनन उनके लिए माफ़ी है और बड़ा बदला। (13) तुम चाहे चुपके से बात करो या ऊँची आवाज़ से (अल्लाह के लिए समान है) वह तो दिलों का हाल तक जानता है। (14) क्या वही न जानेगा जिसने पैदा किया है?[7] हालाँकि वह सूक्ष्मदर्शी और ख़बर रखनेवाला है।

(15) वही तो है जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन को वशीभूत कर रखा है, चलो उसकी छाती पर और खाओ अल्लाह की रोज़ी, उसी के यहाँ तुम्हें पुनः जीवित होकर जाना है। (16) क्या तुम इससे निश्चिन्त हो कि वह जो आसमान में है,[8] तुम्हें ज़मीन में धँसा दे और अचानक यह ज़मीन झकोले खाने लगे? (17) क्या तुम इससे निश्चिन्त हो कि वह जो आसमान में है तुमपर पथराव करनेवाली हवा भेज दे? फिर तुम्हें मालूम हो जाएगा कि मेरी चेतावनी कैसी होती है। (18) इनसे पहले गुज़रे हुए लोग झुठला चुके हैं। फिर देख लो कि मेरी पकड़ कैसी सख़्त थी। (19) क्या ये लोग अपने ऊपर उड़नेवाले पक्षियों को पंख पैलाए और सिकोड़ते नहीं देखते? रहमान (करुणामय ईश्वर) के सिवा कोई नहीं जो उन्हें थामे हुए हो? वही हर चीज़ का निगहबान है। (20) बताओ, आख़िर वह कौन-सी सेना तुम्हारे पास है जो रहमान के मुक़ाबले में तुम्हारी सहायता कर सकती है?[9] वास्तविकता यह है कि ये इनकार करनेवाले धोखे में पड़े हुए

---

6. इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि यह ख़ुद जह्नम की आवाज़ होगी, और यह भी हो सकता है कि यह आवाज़ जहन्नम से आ रही होगी जहाँ उन लोगों से पहले गिरे हुए लोग चीख़ें मार रहे होंगे।
7. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि ''क्या वह अपने पैदा किए हुए ही को न जानेगा?''

हैं। (21) या फिर बताओ, कौन है जो तुम्हें रोज़ी दे सकता है। अगर रहमान अपनी रोज़ी रोक ले? वास्तव में ये लोग सरकशी और हक़ से मुँह मोड़ने पर अड़े हुए हैं। (22) भला सोचो, जो व्यक्ति मुँह औंधाए चल रहा हो[10] वह ज़्यादा सही राह पानेवाला है या वह जो सिर उठाए सीधा एक समतल सड़क पर चल रहा हो? (23) इनसे कहो अल्लाह ही है जिसने तुम्हें पैदा किया, तुमको सुनने और देखने की शक्तियाँ दी और सोचने-समझनेवाले दिल दिए, मगर तुम कम ही कृतज्ञता दिखाते हो।[11]

(24) इनसे कहो, अल्लाह ही है जिसने तुम्हें ज़मीन में फैलाया है और उसी की ओर तुम समेटे जाओगे। (25) ये कहते हैं, ''अगर तुम सच्चे हो तो बताओ यह वादा कब पूरा होगा? (26) कहो, ''इसका ज्ञान तो अल्लाह के पास है, मैं तो बस साफ़-साफ़ सचेत कर देनेवाला हूँ।'' (27) फिर जब ये उस चीज़ को क़रीब देख लेंगे तो उन सब लोगों के चेहरे बिगड़ जाएँगे जिन्होंने इनकार किया है, और उस समय उनसे कहा जाएगा कि यही है वह चीज़ जिसकी तुम माँग कर रहे थे।

---

8. इसका यह अर्थ नहीं है कि अल्लाह आसमान में रहता है, बल्कि यह बात इस पहलू से कही गई है कि इनसान स्वभावतः जब अल्लाह की ओर रुजू करना चाहता है तो आसमान की ओर देखता है। दुआ माँगता है तो आसमान की ओर हाथ उठाता है। किसी आफ़त के अवसर पर सब सहारों से निराश होता है तो आसमान का रुख़ करके अल्लाह से फ़रियाद करता है। कोई अचानक बला आ पड़ती है तो कहता है कि यह ऊपर से अवतरित हुई है। असाधारण रूप से प्राप्त होनेवाली चीज़ के सम्बन्ध में कहता है यह ऊपरी लोक से आई है। अल्लाह की भेजी हुई किताबों को आसमानी किताबें या आकाशीय ग्रन्थ कहा जाता है। इन सारी बातों से विदित होता है कि यह बात कुछ इनसान की प्रकृति ही में है कि वह जब अल्लाह की कल्पना करता है तो उसका ज़ेहन नीचे ज़मीन की ओर नहीं बल्कि ऊपर आसमान की ओर जाता है।
9. दूसरा अनुवाद यह भी हो सकता है कि ''रहमान के सिवा वह कौन है जो तुम्हारा लश्कर बना हुआ तुम्हारी सहायता करता हो?''
10. अर्थात् पशुओं की तरह मुँह नीचा किए हुए उसी डगर पर चला जा रहा हो जिसपर किसी ने उसे डाल दिया हो।
11. अर्थात् अल्लाह ने ज्ञान एवं बुद्धि और सुनने और देखने की नेमतें तुम्हें सत्य को पहचानने के लिए दी थीं। तुम अकृतज्ञता दिखा रहे हो कि इनसे और सारे काम तो लेते हो मगर बस वही एक काम नहीं लेते जिसके लिए ये दी गई थीं।

(28) इनसे कहो, कभी तुमने यह भी सोचा कि अल्लाह चाहे मुझे और मेरे साथियों को तबाह कर दे या हम पर दया करे, काफ़िरों (अधर्मियों) को दर्दनाक अज़ाब से कौन बचा लेगा?[12] (29) इनसे कहो, वह बड़ा दयावान् है, उसी पर हम ईमान लाए हैं, और उसी पर हमारा भरोसा है, जल्द ही तुम्हें मालूम हो जाएगा कि खुली गुमराही में पड़ा हुआ कौन है। (30) इनसे कहो, कभी तुमने यह भी सोचा कि यदि तुम्हारे कुओं का पानी ज़मीन में उतर जाए तो कौन है जो इस पानी की बहती हुई स्रोतें तुम्हें निकालकर ला देगा?



---

12. मक्का मुअज़्ज़मा में जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के आमंत्रण-कार्य का आरम्भ हुआ और क़ुरैश के विभिन्न घरानों से सम्बन्ध रखनेवाले व्यक्तियों ने इस्लाम क़बूल करना शुरू किया तो घर-घर नबी (सल्ल॰) और आपके साथियों को बददुआएँ दी जाने लगीं, जादू-टोने किए जाने लगे ताकि आप तबाह हो जाएँ। यहाँ तक कि आपको मार डालने की योजनाएँ भी सोची जाने लगीं। इसपर यह कहा गया कि इनसे कहो, चाहे हम तबाह हों या अल्लाह के अनुग्रह से ज़िन्दा रहें, इससे तुम्हें क्या प्राप्त होगा? तुम अपनी चिन्ता करो कि अल्लाह के अज़ाब से तुम कैसे बचोगे।

68. अल-क़लम

नाम

इस सूरा का नाम 'नून' भी है और 'अल-क़लम' भी। दोनों शब्द सूरा के आरम्भ ही में मौजूद हैं।

अवतरणकाल

यह मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल (में उस समय) अवतरित हुई थी जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का विरोध बड़ी हद तक उग्र रूप धारण कर चुका था।

विषय और वार्ता

इसमें तीन वार्ताएँ वर्णिय हुई हैं। विरोधियों के आक्षेपों का उत्तर, उनको चेतावनी और उपदेश और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को धैर्य और अपनी जगह जमे रहने का सूझाव। वार्ता के आरम्भ में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से कहा गया है कि ये काफ़िर तुम्हें दीवाना कहते हैं, हालाँकि जो किताब तुम प्रस्तुत कर रहे हो और नैतिकता के जिस उच्च पद पर तुम आसीन हो, वह स्वयं इनके इस झूठ के खण्डन के लिए पर्याप्त है। शीघ्र ही वह समय आनेवाला है जब सभी देख लेंगे कि दीवाना कौन था और बुद्धिमान कौन था। अतः विरोध का जो तूफ़ान तुम्हारे विरुद्ध उठाया जा रहा है, उसके दबाव में कदापि न आना। फिर जन सामान्य कीआँखें खोलने के लिए नाम लिए बिना विरोधियों में से एक प्रमुख व्यक्ति का चरित्र प्रस्तुत किया गया है, (ताकि लोग देख लें कि) अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) किस पवित्र नैतिक स्वभाव (के मालिक है और) आपके विरोध में मक्का के जो सरदार आगे-आगे हैं उनमें किस चरित्र के लोग सम्मिलित हैं। इसके पश्चात् आयत 17-33 तक एक बाग़वालों का दृष्टान्त प्रस्तुत किया गया है, जो अल्लाह से सुख-सामग्री पाकर उसके प्रति अकृतज्ञ रहे और उनमें जो व्यक्ति सबसे अच्छा था, समय पर उसकी नसीहत न मानी। अनततः वे उस कृपानिधि से वंचित होकर रह गए। ये दृष्टान्त प्रस्तुत करके मक्कावालों को सावधान किया गया है, यदि तुम अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की (बात न मानोगे तो तुम्हें भी उसी तरह विनाश का सामना करना पड़ेगा।) फिर आयत 34-47 तक निरन्तर काफ़िरों को हितोपदेश दिया गया है, जिसमें कहीं तो सम्बोधन प्रत्यक्षतः उनसे है और कहीं अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को सम्बोधित करते हुए सचेत उनको ही किया गया है। अन्त में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को आदेश दिया गया है कि अल्लाह का फ़ैसला आने तक जिन कठिनाइयों का भी धर्म-प्रसार के मार्ग में सामना करना पड़े, उनको धैर्य के साथ सहन करते चले जाएँ और उस अधैर्य से बचें, जिसके कारण यूनुस (अलै॰) आज़माइश में डाले गए थे।



68. सूरा अल-क़लम

(मक्का में उतरी–आयतें 52)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) नून॰, क़सम है क़लम की और उस चीज़ की जिसे लिखनेवाले लिख रहे हैं।[1] (2) तुम अपने रब की कृपा से मजनूँ (उन्मादी) नहीं हो।[2] (3) और यक़ीनन तुम्हारे लिए ऐसा बदला है जिसका सिलसिला कभी समाप्त होने का नहीं।[3] (4) और बेशक तुम अख़लाक़ के बड़े मरतबे पर हो।[4] (5) जल्द ही तुम भी देख लोगे और वे भी देख लेंगे (6) कि तुममें से कौन जुनून (उन्माद) में ग्रस्त है। (7) तुम्हारा रब उन लोगों को भी ख़ूब जानता है जो उसकी राह से भटके हुए हैं, और वही उनको भी अच्छी तरह जानता है जो सीधे रास्ते पर हैं। (8) अतः तुम इन झुठलानेवालों के दबाव में हरगिज़ न आओ। (9) ये तो चाहते हैं कि कुछ तुम झुको तो ये भी झुकें।[5] (10) हरगिज़ न दबो

---

1. तफ़सीर के इमाम मुजाहिद कहते हैं कि क़लम से मुराद वह क़लम है जिससे ज़िक्र, अर्थात् क़ुरआन लिखा जा रहा था। इससे ख़ुद ही यह नतीजा निकलता है कि वह जो चीज़ लिखी जा रही थी उससे मुराद क़ुरआन मजीद है।
2. यहाँ सम्बोधन ज़ाहिर में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से है मगर वास्तविक उद्देश्य मक्का के अधर्मियों को उनके इस झूठे आरोप का जवाब देना है कि वे आपको उन्मादी घोषित करते थे। मतलब यह है कि यह क़ुरआन जो प्रकाशना (वह्य) के लिपिबद्ध करनेवालों के हाथों लिखा जा रहा है अपनी जगह ख़ुद उनके इस आरोप के खण्डन के लिए काफ़ी है।
3. अर्थात् आपके लिए इस बात पर बेहिसाब और कभी ख़त्म न होनेवाला बदला है कि आप अल्लाह के पैदा किए हुए लोगों के मार्गदर्शन के लिए जो प्रयास कर रहे हैं उनके जवाब में आपको ऐसी-ऐसी कष्टदायक बातें सुननी पड़ रही हैं और फिर भी आप अपने इस कर्तव्य को पूरा किए चले जा रहे हैं।
4. अर्थात् क़ुरआन के अलावा आपके उच्च स्वभाव भी इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि अधर्मी आपपर दीवानगी का जो आरोप लगा रहे हैं वह बिलकुल झूठा है, क्योंकि शील-स्वभाव की उच्चता और उन्माद, दोनों एक जगह इकट्ठा नहीं हो सकते हैं।
5. अर्थात् तुम इस्लाम के प्रचार में कुछ ढीले पड़ जाओ तो ये भी तुम्हारे विरोध में कुछ नर्मी अपना लें, या तुम इनकी गुमताहियों की रिआयत करके अपने धर्म में कुछ संशोधन करने पर तैयार हो जाओ तो ये तुम्हारे साथ समझौता कर लें।

किसी ऐसे व्यक्ति से जो बहुत क़समें खानेवाला हीन आदमी है, (11) ताने देता है, चुग़लियाँ खाता फिरता है, (12) भलाई से रोकता है, ज़ुल्म और ज़्यादती में हद से आगे बढ़ जानेवाला है, बड़ा दुराचारी है, (13) अत्याचारी है, और इन सब दोषों के साथ अधम है, (14) इस कारण कि वह बहुत माल और संतान रखता है।[6] (15) जब हमारी आयतें उसको सुनाई जाती हैं तो कहता है कि ये अगले समयों की कहानियाँ हैं। (16) जल्द ही हम इसकी सूँड पर दाग़ लगाएँगे।[7]

(17) हमने इन (मक्कावालों) को उसी प्रकार आज़माइश में डाला है जैसे एक बाग़ के मालिकों को आज़माइश में डाला था, जब उन्होंने क़सम खाई कि सुबह सवेरे ज़रूर ही अपने बाग़ के फल तोडेंगे (18) और वे कोई छूट नहीं रख रहे थे।[8] (19) रात को वे सोए पड़े थे कि तुम्हारे रब की ओर से एक बला उस बाग़ पर फिर गई (20) और उसकी ऐसी दशा हो गई जैसे कटी हुई फ़सल हो। (21) सुबह उन लोगों ने एक दूसरे को पुकारा (22) कि अगर फल तोड़ने हैं तो सवेरे-सवेरे अपनी खेती की ओर निकल चलो। (23) अतः वे चल पड़े। और आपस में चुपके-चुपके कहते जाते थे (24) कि आज कोई मुहताज तुम्हारे पास बाग़ में न आने पाए। (25) वे कुछ न देने का फ़ैसला किए हुएसुबह सवेरे जल्दी-जल्दी इस तरह वहाँ गए जैसे कि वे (फल तोड़ने की) सामर्थ्य रखते हैं। (26) मगर जब बाग़ को देखा तो कहने लगे, ''हम रास्ता भूल

6. इस वाक्य का सम्बन्ध ऊपर के वार्ता-क्रम से भी हो सकता है और बाद के वाक्य से भी। पहली स्थिति में अर्थ यह होगा कि ऐसे आदमी की धौंस इस कारण स्वीकार न करो कि वह बहुत माल और संतान रखता है। दूसरी स्थिति में यह अर्थ होगा कि बहुत धन और सन्तानवाला होने के कारण वह घमण्डी हो गया है, जब हमारी आयतें उसको सुनाई जाती हैं तो कहता है कि ये अगले समयों की कहानियाँ हैं।
7. चूँकि वह अपने आपको बड़ी नाकवाला समझता था इसलिए उसकी नाक को सूँड कहा गया है। और नाक पर दाग़ लगाने से मुराद अपमानित करना है। अर्थात् हम दुनिया और आख़िरत में उसको ऐसा अपमानित करेंगे कि अनन्तकाल तक यह बदनामी उसका पीछा न छोड़ेगी।
8. अर्थात् उन्हें अपनी सामर्थ्य और अपने अधिकार पर ऐसा भरोसा था कि क़सम खाकर निस्संकोच कह दिया कि हम कल ज़रूर अपने बाग़ के फल तोड़ेंगे और यह कहने की कोई ज़रूरत वे महसूस नहीं करते थे कि अगर अल्लाह ने चाहा तो हम यह काम करेंगे।

गए हैं, (27)—नहीं बल्कि हम वंचित रह गए।'' (28) उनमें जोसबसे अच्छा आदमी था उसने कहा, ''मैंने तुमसे कहा न था कि तुम 'तसबीह' क्यों नहीं करते?''[9] (29) वे पुकार उठे, 'पाक है हमारा रब, वास्तव में हम गुनाहगार थे।'' (30) फिर उनमें से प्रत्येक एक-दूसरे को मलामत करने लगा। (31) आख़िर को उन्होंने कहा, ''अफ़सोस हमारे हाल पर, बेशक हम सरकश हो गए थे। (32) असंभव नहीं कि हमारा रब हमें बदले में इससे अच्छा बाग़ प्रदान करे, हम अपने रब की ओर रुजू करते हैं।'' (33) ऐसा होता है अज़ाब। और आख़िरत का अज़ाब इससे भी बड़ा है, काश ये लोग इसको जानते।

(34) यक़ीनन[10] ईश्वर से डरनेवाले लोगों के लिए उनके रब के यहाँ नेमत भरी जन्नते हैं। (35) क्या हम आज्ञाकारियों की हालत अपराधियों की-सी कर दें? (36) तुम लोगों को क्या हो गया है, तुम कैसे फ़ैसले करते हो? (37) क्या तुम्हारे पास कोई किताब है[11] जिसमें तुम यह पढ़ते हो (38) कि तुम्हारे लिए ज़रूर वहाँ वही कुछ है जो तुम अपने लिए पसन्द करते हो? (39) या फिर क्या तुम्हारे लिए क़ियामत के दिन तक हम पर कुछ प्रण एवं प्रतिज्ञाएँ सिद्ध हैं कि तुम्हें वही कुछ मिलेगा जिसका तुम फ़ैसला करो? (40) इनसे पूछो तुममें से कौन इसकी ज़मानत लेता है? (41) या फिर इनके ठहराए हुए कुछ साझीदार हैं (जिन्होंने इसका ज़िम्मा लिया हो)? यह बात है तो लाएँ अपने उन साझीदारों को अगर ये सच्चे हैं।

(42) जिस दिन कठिन समय आ पड़ेगा और लोगों को सजदा करने के लिए बुलाया जाएगा तो ये लोग सजदा न कर सकेंगे, (43) इनकी निगाहें नीची होंगी, ज़िल्लत इनापर छा रही होगी। ये जब भले-चंगे थे उस समय इन्हें सजदे के लिए बुलाया जाता था (और ये इनकार करते थे)।

9. अर्थात् अल्लाह को याद क्यों नहीं करते? क्यों यह बात भूल गए हो कि ऊपर पाक पालनहार मौजूद है?
10. मक्का के बड़े-बड़े सरदार मुसलमानों से कहते थे कि हमको ये नेमतें जो दुनिया में मिल रही हैं, ये अल्लाह के यहाँ हमारे प्रिय एवं मान्य होने के लक्षण हैं, और तुम जिस दुर्दशा में ग्रस्त हो यह इस बात का प्रमाण है कि तुमपर अल्लाह का प्रकोप है। अतः अगर कोई आख़िरत हुई भी, जैसा कि तुम कहते हो, तो हम वहाँ भी मज़े करेंगे और अज़ाब तुमपर होगा न कि हमपर। इसका जवाब इन आयतों मे दिया गया है।
11. अर्थात् अल्लाह की भेजी हुई किताब।

(44) अतः ऐ नबी, तुम इस वाणी के झुठलानेवाली का मामला मुझपर छोड़ दो। हम ऐसे तरीक़े से इनको क्रमशः तबाही की ओर ले जाएँगे कि इनको ख़बर भी न होगी। (45) मैं इनकी रस्सी ढीली कर रहा हूँ, मेरी चाल बड़ी ज़बरदस्त है।

(46) क्या तुम इनसे कुछ बदला माँग रहे हो कि ये इस चट्टी (तावान) के बोझ तले दबे जा रहे हों? (47) क्या इनके पास परोक्ष का ज्ञान है जिसे ये लिख रहे हों? (48) अच्छा, अपने रब का फ़ैसला होने तक सब्र करो और मछलीवाले (यूनुस) की तरह न हो जाओ,[12] जब उसने पुकारा था और वह ग़म से भरा हुआ थ। (49) अगर उसके रब की कृपा उसके साथ न हो जाती तो वह निन्दित होकर चटियल मैदान में फेंक दिया जाता। (50) आख़िरकार उसके रब ने उसे चुन लिया और उसे नेक बन्दों में सम्मिलित कर दिया।

(51) जब ये अधर्मी लोग नसीहत की वाणी (क़ुरआन) सुनते हैं तो तुम्हें ऐसी निगाहों सेदेखते हैं कि मानो तुम्हारे क़दम उखाड़ देंगे, और कहते हैं कि यह ज़रूर दीवाना है, (52) हालाँकि यह तो सारे जहानवालों के लिए एक नसीहत है।

● ● ●

12. अर्थात् यूनुस (अलै॰) की तरह बेसब्री से काम न लो जो अपनी बेसब्री ही के कारण मछली के पेट में पहुँचा दिए गए थे।

69. अल-हाक़्क़ा

नाम

सूरा के पहले शब्द ''अल-हाक़्क़ा'' (होकर रहनेवाली) को इस सूरा का नाम दे दिया गया है।

अवतरणकाल

इस सूरा की वार्ताओं से मालूम होता है कि यह मक्का के आरम्भिक काल में उस समय अवतरित हुई थी जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के प्रति विरोध ने अभी अधिक उग्र रूप धारण नहीं किया था।

विषय और वार्ता

आयत 1 से 36 तक परलोक का उल्लेख है और आगे सूरा के अन्त तक क़ुरआन के अल्लाह की ओर से अवतरित होने और मुहम्मद (स॰) के सच्चे रसूल होने का उल्लेख किया गया है। सूरा के पहले भाग का प्रारम्भ इस बात से हुआ है कि क़ियामत का आना और आख़िरत (परलोक) का घटित होना एक ऐसा तथ्य है जो अवश्य ही सामने आकर रहेगा। फिर आयत 4 से 12 तक यह बताया गया है कि पूर्व समय में जिन जातियों ने भी परलोक का इनकार किया है, वे अन्ततः ईश्वरीय यातना की भागी होकर रहीं। तदन्तर आयत 17 तक प्रलय (क़ियामत) का चित्रण किया गया है कि वह किस प्रकार घटित होगी। फिर आयत 18 से 27 तक यह बताया गया है कि उस दिन समस्त मनुष्य अपने प्रभु के न्यायालय में उपस्थित होंगे, जहाँ उनका कोई भेद छिपा न रह जाएगा। हरेक का कर्मपत्र उसके हाथ में दे दिया जाएगा। (सुकर्मी) अपना हिसाब दोषरहित देखकर प्रसन्न हो जाएँगे और उनके हिस्से में जन्नत (स्वर्ग) का शाश्वत सुख एवं आनन्द आएगा। इसके विपरीत जिन लोगों ने न ईश्वर के अधिकार को माना और न उसके बन्दों का हक़ अदा किया, उन्हें ईश्वर की पकड़ से बचानेवाला कोई न होगा और वे जहन्नम (नरक) की यातना में ग्रस्त हो जाएँगे. सूरा के दूसरे भाग (आयत 38 से सूरा के अन्त तक) में मक्का के काफ़िरों को सम्बोधित करते हुए कहा गया है कि तुम इस क़ुरआन को कवि और काहिन (भविष्यवक्ता) की वाणी कहते हो, हालाँकि यह अल्लाह की अवतरित की हुई वाणी है, जो एक प्रतिष्ठित सन्देशवाहक के मुख से उच्चारित हो रही है। रसूल (सन्देशवाहक) को इस वाणी में अपनी ओर से एक भी शब्द घटाने या बढ़ाने का अधिकार नहीं। यदि वह इसमें अपनी मनगढ़न्त कोई चीज़ सम्मिलित कर दे तो हम उसकी गर्दन की रग (या हृदयनाड़ी) काट दें।



69. सूरा अल-हाक़्क़ा

(मक्का में उतरी–आयतें 52)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) होकर रहनेवाली![1] (2) क्या है वह होकर रहनेवाली? (3) और तुम क्या जानो कि वह क्या है होकर रहनेवाली?

(4) समूद और आद ने उस अचानक टूट पड़नेवाली आफ़त[2] को झुठलाया। (5) तो समूद एक प्रचण्ड घटना से तबाह किए गए। (6) और आद एक बड़ी तेज़ तूफ़ानी आँधी से तबाह किए गए। (7) अल्लाह ने उसको निरन्तर सात रात और आठ दिन उनपर लगाए रखा। (तुम वहाँ होते) तो देखते कि वे वहाँ इस तरह पछड़े हुए हैं जैसे वे खजूर के जीर्ण तने हों। (8) अब क्या उनमें से कोई तुम्हें बाक़ी बचा दिखाई देता है?

(9) और इसी बड़ी ख़ता का अपराध फ़िरऔन और उससे पहले के लोगों ने और तलपट हो जानेवाली बस्तियों[3] ने किया। (10) उन सबने अपने रब के रसूल की बात न मानी तो उसने उनको बड़ी सख़्ती के साथ पकड़ा।

(11) जब पानी का तूफ़ान हद से गुज़र गया,[4] तो हमने तुमको नाव में सवार कर दिया था[5] (12) ताकि इस घटना को तुम्हारे लिए एक शिक्षाप्रद यादगार बना दें, और याद रखनेवाले कान इसकी दाय सुरक्षित रखें।

1. मूल में 'अल-हाक़्क़ा' शब्द प्रयुक्त हुआ है जिसका अर्थ है वह घटना जिसको अनिवार्यतः घटित होकर रहना है। मतलब यह है कि तुम लोक जितना चाहो उसका इनकार कर लो, वह तो घटित होकर रहनेवाली है, तुम्हारे इनकार से उसका आना रुक नहीं जाएगा।
2. क़ियामत को होकर रहनेवाली कहने के पश्चात् अब उसके लिए यह दूसरा शब्द उसकी भयंकरता की कल्पना कराने के लिए प्रयुक्त किया गया है।
3. अभिप्रेत है लूत (अलै॰) की जातिवालों की बस्तियाँ जिनको तलपट करके रख दिया गया।
4. संकेत है तूफ़ाने नूह की ओर।
5. यद्यपि नाव में सवार वे लोग किए गए थे जो हज़ारों वर्ष पहले गुज़र चुके थे, लेकिन चूँकि बाद की पूरी मानव जाति उन्हीं लोगों की सन्तान है जो उस समय तूफ़ान से बचाए गए थे इसलिए कहा कि हमने तुमको नौका में सवार करा दिया।

(13) फिर जब एक बार सूर में फूँक मार दी जाएगी (14) और ज़मीन और पहाड़ों को उठाकर एक ही चोट में चूरा-चूरा कर दिया जाएगा, (15) उस दिन वह होनेवाली घटना घटित हो जाएगी। (16) उस दिन आसमान फटेगा और उसकी बंदिश ढीली पड़ जाएगी, (17) फ़रिश्ते उसके किनारों पर होंगे और आठ फ़रिश्ते उस दिन तेरे रब का हिंहासन अपने ऊपर उठाए हुए होंगे।[6] (18) वह दिन होगा जब तुम लोग पेश किए जाओगे, तुम्हारा कोई रहस्य भी छिपा न रह जाएगा।

(19) उस समय जिसका कर्मपत्र उसके सीधे हाथ में दिया जाएगा वह कहेगा, "लो देखो, पढ़ो मेरा कर्म-पत्र, (20) मैं समझता था कि मुझे ज़रूर अपना हिसाब मिलनेवाला है।"[7] (21) अतः वह मनचाहे ऐश में होगा, (22) उच्च स्थान जन्नत में, (23) जिसके फलों के गुच्छे झुके पड़े रहे होंगे। (24) (ऐसे लोगों से कहा जाएगा) मज़े से खाओ और पियो अपने उन कर्मों के बदले जो तुमने बीते हुए दिनों में किए हैं।

(25) और जिसका कर्मपत्र उसके बाएँ हाथ में दिया जाएगा वह कहेगा, "काश, मेरा कर्मपत्र मुझे न दिया गया होता (26) और मैं न जानता कि मेरा हिसाब क्या है।[8]

6. यह आयत अस्पष्ट एवं उपलक्षित आयतों में से है जिसका अर्थ निर्धारित करना कठिन है। हम न यह जान सकते हैं कि सिंहासन (अर्श) क्या चीज़ है और न यही समझ सकते हैं कि क़ियामत के दिन आठ फ़रिश्तों के उसको उठाने की हालत क्या होगी। मगर इस बात की किसी भी हालत में कल्पना नहीं की जा सकती कि अल्लाह सिंहासन पर बैठा होगा और आठ फ़रिश्ते उसको सिंहासन सहित उठाए हुए होंगे। आयत में भी यह नहीं कहा गया है कि उस समय अल्लाह सिंहासन पर बैठा हुआ होगा और ईश्वरीय सत्ता की जो कल्पना हमको क़ुरआन मजीद में कराई गई है वह भी यह ख़याल करने में बाधक है कि वह शरीर और दिशा और स्थान से परे सत्ता किसी जगह प्रतिष्ठापित हो और कोई संरचित प्राणी उसे उठाए। इसलिए खोज-कुरेद करके इसका अर्थ निर्धारित करने का प्रयास करना अपने आपको गुमराही के ख़तरे में डालना है।
7. अर्थात् वह अपने सौभाग्य का कारण यह बताएगा कि वह संसार में परलोक से बेख़बर न था बल्कि यह समझते हुए जीवन व्यतीत करता रहा कि एक दिन उसे ईश्वर की सेवा में उपस्थित होना और अपना हिसाब देना है।
8. दूसरा अर्थ इस आयत का यह भी हो सकता है कि मैंने कभी यह न जाना था कि हिसाब क्या बला होती है। मुझे कभी यह ख़याल तक न आया था कि एक दिन मुझे अपना हिसाब भी देना होगा और मेरा सब किया-कराया मेरे सामने रख दिया जाएगा।

(27) काश, मेरी वही मौत (जो दुनिया में आई थी) निर्णायक होती। (28) आज मेरा माल मेरे कुछ काम न आया। (29) मेरा सारा प्रभुत्व समाप्त हो गया।"[9] (30) (आदेश होगा) पकड़ो इसे और इसकी गरदन में तौक़ डाल दो, (31) फिर इसे जहन्नम में झोंक दो, (32) फिर इसको सत्तर हाथ लम्बी ज़ंजीर में जकड़ दो। (33) यह न महिमावान अल्लाह पर ईमान लाता था (34) और न मुहताज को खाना खिलाने पर उभारता था।[10] (35) अतः आज न यहाँ इसका कोई हमदर्द मित्र है (36) और न घावों के धोवन के सिवा इसके लिए कोई भोजन, (37) जिसे अपराधियों के सिवा कोई नहीं खाता।

(38) अतः नहीं,[11] मैं क़सम खाता हूँ उन चीज़ों की भी जो तुम देखते हो (39) और उनकी भी जिन्हें तुम नहीं देखते, (40) यह एक प्रतिष्ठित रसूल का कथन है, (41) किसी कवि का कथन नहीं है, तुम लोग थोड़ा ही ईमान लाते हो। (42) और न यह किसी काहिन का कथन है, तुम लोग थोड़ा ही विचार करते हो। (43) यह सारी दुनिया के रब की ओर से अवतरित हुआ है। (44) और अगर इस (नबी) ने ख़ुद घड़कर कोई बात हमसे जोड़ी होती (45) तो हम इसका दायाँ हाथ पकड़ लेते (46) और इसकी गरदन की रग काट डालते, (47) फिर तुममें से कोई (हमें) इस काम से रोकनेवाला न होता।[12] (48) वास्तव में यह परहेज़गारों के लिए एक नसीहत है। (49) और हम जानते हैं कि तुममें से कुछ लोग झुठलानेवाले हैं। (50) ऐसे इनकार करनेवालों के लिए यक़ीनन यह पछतावे का कारण है। (51) और यह बिलकुल विश्वसनीय सत्य है। (52) अतः ऐ नबी, अपने महिमावान रब के नाम की तसबीह (गुणगान) करो।

●●●

9. अर्थात् दुनिया में जिस शक्ति के बल पर मैं अकड़ता था वह यहाँ समाप्त हो चुकी है। अब यहाँ कोई मेरी सेना नहीं, कोई मेरा आदेश माननेवाला नहीं, मैं एक विवश और असहाय बन्दे की हैसियत से खड़ा हूँ और अपने बचाव के लिए कुछ नहीं कर सकता।
10. अर्थात् स्वयं किसी ग़रीब को भोजन कराना तो अलग रहा, किसी से यह कहना भी पसन्द न करता था कि ख़ुदा के भूखे बन्दों को रोटी दे दो।
11. अर्थात् तुम लोगों ने जो कुछ समझ रखा है बात वह नहीं है।

12. वास्तविक उद्देश्य यह बताना है कि नबी (पैग़म्बर) को अपनी ओर से प्रकाशना (वह्य) में कोई कमी-बेशी करने का अधिकार नहीं है, और यदि वह ऐसा करे तो हम उसे कठोर दण्ड दें। किन्तु इस बात को ऐसे ढंग से बयान किया गया है जिससे आँखों के सामने यह तस्वीर खिंच जाती है कि एक सम्राट का नियुक्त किया हुआ पदाधिकारी उसके नाम से षड्यंत्र करे तो सम्राट उसका हाथ पकड़कर उसका सिर काट दे। कुछ लोगों ने इस आयत से ग़लत तौर पर यह सिद्ध करना चाहा है कि जो व्यक्ति भी नबी होने का दावा करे, उसके दिल की रग या गरदन की रग यदि अल्लाह तआला की ओर से तुरन्त न काट डाली जाए तो यह उसके नबी होने का प्रमाण है। हालाँकि इस आयत में जो बात कही गई है वह सच्चे नबी के विषय में है, नुबूवत के झूठे दावेदारों के सम्बन्ध में नहीं है। झूठे दावेदार तो पैग़म्बरी ही नहीं ख़ुदा होने तक के दावे करते हैं और धरती में लम्बे समय तक दनदनाते फिरते हैं। यह उनकी सच्चाई का कोई प्रमाण नहीं है।

70. अल-मआरिज

नाम

तीसरी आयत के शब्द ''उत्थान की सीढ़ियों का मालिक'' (ज़िल-मआरिज) से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसकी वार्ताएँ इसकी साक्षी है कि इसका अवतरण भी लगभग उन्हीं परिस्थितियों में हुआ है जिनमें सूरा 69 (अल-हाक़्क़ा) अवतरित हुई थी।

विषय और वार्ता

इसमें उन काफ़िरों (इनकार करनेवालों) को चेतावनी दी गई है और उन्हें उपदेश किया गया है जो क़ियामत और आख़िरत (प्रलय एवं परलोक) की ख़बरों का उपहास करते थे और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को चुनौती देते थे कि यदि तुम सच्चे हो तो वह क़ियामत ले आओ जिससे हमें डराते हो। इस सूरा का समग्र अभिभाषण इस चुनौती के प्रत्युत्तर में है। आरम्भ में कहा गया है कि माँगनेवाला यातना माँगता है! वह यातना इनकार करनेवालों पर अवश्य ही घटित होकर रहेगी। किन्तु वह अपने समय पर घटित होगी। अतः इसके उपहास करने पर धैर्य से काम लो। ये उसे दूर देख रहे हैं और हम उसे निकट देख रहे हैं। फिर बताया गया है कि क़ियामत, जिसके शीघ्र आने की माँग ये लोग हँसी और खेल समझकर कर रहे हैं, कैसी कष्टदायक वस्तु है और जब वह आएगी तो इन अपराधियों की कैसी बुरी गत होगी। तदन्तर लोगों को अवगत कराया गया है कि उस दिन मानवों के भाग्य का निर्णय सर्वथा उनकी धारणा और नैतिक स्वभाव और कर्म के आधार पर किया जाएगा। जिन लोगों ने संसार में सत्य की ओर से मुँह मोड़ा है, वे नरक के भागी होंगे और जो यहाँ ईश्वरीय यातना से डरे हैं, परलोक को माना है (अच्छे कर्म और अच्छे नैतिक स्वभाव से अपने को सुसज्जित रखा है,) उनका जन्नत (स्वर्ग) में प्रतिष्ठित स्थान होगा। अन्त में मक्का के उन काफ़िरों को, जो अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को देखकर आपका परिहास करने के लिए चारों ओर से टूट पड़ते थे, सावधान किया गया है कि यदि तुम न मानोंगे तो सर्वोच्च ईश्वर तुम्हारे स्थान पर दूसरे लोगों को ले आएगा और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को सुझाव दिया गया है कि परिहास की परवाह न करें। ये लोग यदि क़ियामत का अपमान देखने का हठ कर रहे हैं तो इन्हें इनके अपने अशिष्ट कार्यों में व्यस्त रहने दें, अपना बुरा परिणाम ये स्वयं देख लेंगे।



70. सूरा अल-मआरिज

(मक्का में उतरी–आयतें 44)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) माँगनेवाले ने अज़ाब (यातना) माँगा है, (वह अज़ाब) जो ज़रूर घटित होनेवाला है, (2) इनकार करनेवालों के लिए है, कोई उसे टालनेवाला नहीं, (3) उस अल्लाह की ओर से है जो उत्थान की सीढ़ियों का मालिक है। (4) फ़रिश्ते और 'रूह'[1] उसके पास चढ़कर जाते हैं[2] एक ऐसे दिन में जिसकी माप पचास हज़ार वर्ष है।[3] (5) अतः ऐ नबी, सब्र करो, शिष्ट सब्र।[4] (6) ये लोग उसे दूर समझते हैं (7) और हम उसे क़रीब देख रहे हैं। (8) (यह अज़ाब उस दिन होगा) जिस दिन आसमान पिघली हुई चाँदी की तरह हो जाएगा[5] (9) और पहाड़ रंग-बिरंग के धुनके हुए ऊन जैसे हो जाएँगे। (10) और कोई घनिष्ट मित्र अपने घनिष्ट मित्र को न पूछेगा (11) हालाँकि वे एक दूसरे को दिखाए जाएँगे। अपराधी चाहेगा कि उस दिन के अज़ाब से बचने के लिए

---

1. रूह से मुराद जिबरील नामक फ़रिश्ते हैं और फ़रिश्तों से अलग उनका उल्लेख उनकी महानता के कारण किया गया है।
2. यह विषय अस्पष्ट और उपलक्षित बातों में से है। जिसका अर्थ निश्चित रूप से नहीं बताया जा सकता। हम न फ़रिश्तों की वास्तविकता को जानते हैं, न उनके चढ़ने की कैफ़ियत को समझ सकते हैं, न यह बात हमारी बुद्धि की पकड़ में आ सकती है कि वे सीढ़ियाँ कैसी हैं जिनपर फ़रिश्ते चढ़ते हैं, और अल्लाह तआला के विषय में भी यह कल्पना नहीं की जा सकती कि वह किसी स्थान विशेष पर रहता है क्योंकि उसकी सत्ता समय और स्थान की सीमाओं से परे है।
3. सूरा 22 (अल-हज्ज), आयत 47 और सूरा 32 (अस-सजदा), आयत 5 में हज़ार वर्ष के एक दिन का उल्लेक किया गया है। और यहाँ अज़ाब की माँग के जवाब में अल्लाह के एक दिन की मिक़दार पचास हज़ार वर्ष बताई गई है। मतलब यह है कि लोग अपनी बुद्धि और अपने सोच-विचार की परिधि की तंगी के कारण अल्लाह के मामलों को अपने समय के मापदण्डों से नापते हैं और उन्हें सौ पचास वर्ष की अवधि भी बड़ी लम्बी महसूस होती है, लेकिन अल्लाह तआला के यहाँ एक-एक योजना हज़ार-हज़ार वर्ष और पचास-पचास हज़ार वर्ष की होती है और यह अवधि भी उदाहरण-स्वरूप है।
4. अर्थात् ऐसा सब्र जो एक विशाल हृदय व्यक्ति के योग्य है।
5. अर्थात् बार-बार रंग बदलेगा।

अपनी औलाद को, (12) अपनी बीवी को, अपने भाई को, (13) अपने निकटतम परिवार को जो उसे पनाह देनेवाला था, (14) और ज़मीन के सब लोगों को फ़िदया (बदले) के रूप में दे दे और यह उपाय उसे छुटकारा दिला दे। (15) हरगिज़ नहीं। वह तो भड़कती हुई आग की लपट होगी (16) जो मांस और त्वचा को चाट जाएगी, (17) पुकार-पुकारकर अपनी ओर बुलाएगी हर उस व्यक्ति को जिसने सत्य से मुँह मोड़ा और पीठ फेरी (18) और धन जमा किया और सैंत-सैंतकर रखा।

(19) मनुष्य थुड़दिला पैदा किया गया है[6] (20) जब उसपर मुसीबत आती है तो घबरा उठता है (21) और जब उसे सुख-सम्पन्नता प्राप्त होती है तो कंजूसी करने लगता है। (22) मगर वे लोग (इस ऐब से बचे हुए हैं) जो नमाज़ पढ़नेवाले हैं, (23) जो अपनी नमाज़ की सदैव पाबन्दी करते हैं, (24,25) जिनके मालों में माँगनेवालों और पाने से रह जानेवालों (महरूम) का एक निश्चित हक़ है, (26) जो बदला पाने के दिन को सत्य मानते हैं, (27) जो अपने रब के अज़ाब से डरते हैं (28) क्योंकि उनके रब का अज़ाब ऐसी चीज़ नहीं है जिससे कोई निर्भय हो, (29) जो अपनी गुप्त इंद्रियों की रक्षा करते हैं (30)—सिवाय अपनी बीवियों या अपनी अधिकृत औरतों के जिनसे सुरक्षित न रखने में उनपर कोई मलामत नहीं, (31) अलबत्ता जो इसके अलावा कुछ और चाहें वही सीमाओं का अतिक्रमण करनेवाले हैं— (32) जो अपनी अमानतों की रक्षा करते और अपनी प्रतिज्ञा का ध्यान रखते हैं, (33) जो अपनी गवाहियों में सत्यवादिता पर जमे रहते हैं (34) और जो अपनी नमाज़ की रक्षा करते हैं। (35) ये लोग सम्मानपूर्वक जन्नत के बाग़ों में रहेंगे।

(36,37) अतः ऐ नबी, क्या बात है कि ये इनकार करनेवाले दाएँ और बाएँ से गिरोह के गिरोह तुम्हारी ओर दौड़े चले आ रहे हैं?[7] (38) क्या इनमें से हर एक यह लालच रखता है कि वह नेमत भरी जन्नतों में दाख़िल कर दिया जाएगा? (39) हरगिज़ नहीं। हमने जिस चीज़ से उनको पैदा किया है उसे ये ख़ुद जानते हैं। (40) अतः नहीं,

6. जिस बात को हम अपनी भाषा में यूँ कहते हैं कि ''यह बात इनसान की प्रकृति में है'', या ''यह इनसान की स्वाभाविक दुर्बलता है'', उसी को अल्लाह इस तरह कहता है कि ''इनसान ऐसा पैदा किया गया है।''
7. यह उन लोगों का उल्लेख है जो नबी (सल्ल॰) के आमंत्रण, प्रचार और क़ुरआन-पाठ की आवाज़ सुनकर मज़ाक़ उड़ाने और चोटें करने के लिए चारों तरफ़ से दौड़ पड़ते थे।

मैं क़सम खाता हूँ पूर्वों और पश्चिमों[8] के रब की, हमें इसकी सामर्थ्य प्राप्त है (41) कि इनकी जगह इनसे अच्छे लोग ले आएँ और कोई हमसे बाज़ी ले जानेवाला नहीं है। (42) अतः इन्हें अपनी व्यर्थ बातों और अपने खेल में पड़ा रहने दो यहाँ तक कि ये अपने उस दिन को पहुँच जाएँ जिसका इनसे वादा किया जा रहा है, (43) जब ये अपनी क़ब्रों से निकलकर इस तरह दौड़े जा रहे होंगे जैसे अपनी मूर्तियों के स्थानों की ओर दौड़ रहे हों, (44) इनकी निगाहें झुकी हुई होंगी, अपमान इनपर छा रहा होगा। यह वह दिन है जिसका इनसे वादा किया जा रहा है।



8. पूर्वों और पश्चिमों का शब्द इस कारण इस्तेमाल किया गया है कि वर्ष के मध्य सूरज प्रत्येक दिन एक नए कोण से उदय और नए कोण पर अस्त होता है। इसके अलावा ज़मीन के विभिन्न भागों पर सूरज अलग-अलग समयों में निरन्तर उदय और अस्त होता चला जाता है। इन पहलुओं से पूर्व और पश्चिम एक नहीं हैं, बल्कि बहुत-से हैं।

71. नूह

नाम

"नूह" इस सूरा का नाम भी है और विषय की दृष्टि से इसका शीर्षक भी, क्योंकि इसमें प्रारम्भ से अनत तक हज़रत नूह (अलै॰) ही का क़िस्सा बयान किया गया है।

अवतरणकाल

यह भी मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है, जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के आह्वान और प्रचार के मुक़ाबले में मक्का के काफ़िरों का विरोध बड़ी हद तक प्रचण्ड रूप धारण कर चुका था।

विषय और वार्ता

इसमें हज़रत नूह (अलै॰) का क़िस्सा मात्र कथा-वाचन के लिए बयान नहीं किया गया है, बल्कि इससे अभीष्ट मक्का के काफ़िरों (इनकार करनेवालों) को सावधान करना है कि तुम मुहम्मद (सल्ल॰) के साथ वही नीति अपना रहे हो जो हज़रत नूह (अलै॰) के साथ उनकी जाति के लोगों ने अपनाई थीं। इस नीति को तुमने त्याग न दिया तो तुम्हें भी वही परिणाम देखना पड़ेगा जो उन लोगों ने देखा था। पहली आयत में बताया गया है कि हज़रत नूह (अलै॰) को जब अल्लाह ने पैग़म्बरी के पद पर आसीन किया था, उस समय क्या सेवा उन्हें सौंपी गई थी। आयत 2 से 4 तक में संक्षिप्त रूप से यह बताया गया है कि उन्होंने अपने आह्वान का आरम्भ किस तरह किया और अपनी जाति के लोगों के समक्ष क्या बात रखी। फिर दीर्घकालों तक आह्वान एवं प्रसार के कष्ट उठाने के पश्चात् जो वृत्तान्त हज़रत नूह (अलै॰) ने अपने प्रभु की सेवा में प्रस्तुत किया, वह आयत 5 से 20 तक में वर्णित है। तदन्तर हज़रत नूह (अलै॰) का अन्तिम निवेदन आयत 21 से 25 तक में अंकित है जिसमें वे अपने प्रभु से निवेदन करते हैं कि यह जाति मेरी बात निश्चित रूप से रद्द कर चुकी है। अब समय आ गया है कि इन लोगों को मार्ग पाने के दैवयोग से वंचित कर दिया जाए। यह हज़रत नूह (अलै॰) की ओर से किसी अधैर्य का प्रदर्शन न था, बल्कि सैकड़ों वर्ष तक अत्यन्त कठिन परिस्थितियों में सत्य के प्रचार के कर्तव्य का निर्वाह करने के पश्चात् जब वे अपनी जाति के लोगों से पूर्णतः निराश हो गए तो उन्होंने अपनी यह धारणा बना ली कि अब इस जाति के सीधे मार्ग पर आने की कोई सम्भावना शेष नहीं है। यह विचार ठीक-ठीक वही था जो स्वयं अल्लाह का अपना निर्णय था। अतएव संसर्गतः इसके पश्चात् आयत 25 में कहा गया है कि उस जाति पर उसकी करतूतों के कारण ईश्वरीय यातना अवतरित हुई । अन्त की

आयतों में हज़रत नूह (अलै॰) की वह प्रार्थना प्रस्तुत की गई है जो उन्होंने ठीक यातना के उतरने के समय अपने प्रभु से की थी। इसमें वे अपने लिए और सब ईमानवालों के लिए मुक्ति की प्रार्थना करते हैं, और अपनी जाति के काफ़िरों के विषय में अल्लाह से निवेदन करते हैं कि उनमें से किसी को धरती पर बसने के लिए जीवित न छोड़ा जाए, क्योंकि उनमें अब कोई भलाई शेष नहीं रही। उनके वंशज में से जो भी उठेगा, काफ़िर और दुराचारी ही उठेगा। इस सूरा का अध्ययन करते हुए हज़रत नूह (अलै॰) के क़िस्से के वे विस्तृत वर्णन दृष्टि में रहने चाहिएँ जो इससे पहले क़ुरआन मजीद में वर्णिय हो चुके हैं। (देखिए क़ुरआन—7:59-64, 10:71-73, 11:25-49, 23:23-31, 26:105-122, 29:14-15, 37:75-82, 54:9-16)

71. सूरा नूह

(मक्का में उतरी–आयतें 28)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हमने नूह को उसकी क़ौम की ओर भेजा (इस आदेश के साथ) कि अपनी क़ौम के लोगों को चेतावनी दे दे इससे पहले कि उनपर एक दर्दनाक अज़ाब आए।

(2) उसने कहा, "ऐ मेरी क़ौम के लोगो, मैं तुम्हारे लिए एक साफ़-साफ़ चेतावनी देनेवाला (पैग़म्बर) हूँ। (3) (तुमको बताता हूँ) कि अल्लाह की बन्दगी करो और उससे डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो, (4) अल्लाह तुम्हारे गुनाहों को माफ़ करेगा और तुम्हें एक निश्चित समय तक बाक़ी रखेगा।[1] सत्य यह है कि अल्लाह का नियत किया हुआ समय जब आ जाता है तो फिर टाला नहीं जाता,[2] काश तुम्हें इसका ज्ञान हो।"

(5) उसने[3] निवेदन किया, "ऐ मेरे रब, मैंने अपनी क़ौम के लोगों को रात और दिन पुकारा (6) मगर मेरी पुकार ने उनके पलायन ही में अभिवृद्धि की। (7) और जब भी मैंने उनको बुलाया ताकि तू उन्हें माफ़ कर दे, उन्होंने कानों में उँगलियाँ ठूँस लीं और अपने कपड़ों से मुँह ढाँक[4] लिए और अपनी नीति पर अड़ गए और बड़ा घमण्ड

1. अर्थात् अगर तुमने ये तीन बातें मान लीं तो तुम्हें दुनिया में उस समय तक जीने की मुहलत दे दी जाएगी जो अल्लाह तआला ने तुम्हारी प्राकृतिक मौत के लिए निश्चित की है।
2. इस दूसरे समय से मुराद वह समय है जो अल्लाह ने किसी क़ौम पर अज़ाब उतारने के लिए निश्चित कर दिया हो। इसके सम्बन्ध में विभिन्न स्थानों पर क़ुरआन मजीद में यह बात स्पष्टतः बयान की गई है कि जब किसी क़ौम के हक़ में अज़ाब उतारने का फ़ैसला लागू हो जाता है, उसके बाद वह ईमान भी ले आए तो उसे माफ़ नहीं किया जाता।
3. बीच में एक दीर्घकाल का इतिहास छोड़कर अब हज़रत नूह (अलै०) की वह दुआ उद्धृत की जा रही है जो उन्होंने अपनी पैग़म्बरी के अन्तिम दौर में अल्लाह तआला के सामने पेश की।
4. मुँह ढाँकने का उद्देश्य या तो यह था कि वे हज़रत नूह (अलै०) की बात सुनना तो अलग रहा, आपकी शक्ल भी देखना पसन्द न करते थे, या फिर य हरकत वे इसलिए करते थे कि आपके सामने से गुज़रते हुए मुँह छिपाकर निकल जाएँ और इसकी नौबत ही न आने दें कि आप उन्हें पहचानकर उनसे बात करने लगें।

किया। (8) फिर मैंने उनको हाँक-पुकारकर बुलावा दिया। (9) फिर मैंने खुल्लम-खुल्ला भी उनमें प्रचार किया और चुपके-चुपके भी समझाया। (10) मैंने कहा, "अपने रब से माफ़ी माँगो, बेशक वह बड़ा माफ़ करनेवाला है। (11) वह तुमपर आसमान से ख़ूब वर्षाएँ करेगा, (12) तुम्हें माल और संतान से अनुगृहीत करेगा, तुम्हारे लिए बाग़ पैदा करेगा और तुम्हारे लिए नहरें जारी कर देगा। (13) तुम्हें क्या हो गया है कि अल्लाह के लिए तुम किसी गौरव की आशा नहीं रखते[5] (14) हालाँकि उसने तरह-तरह से तुम्हें बनाया है।[6] (15) क्या देखते नहीं हो कि अल्लाह ने किस तरह सात आसमान ऊपर-तले बनाए (16) और उनमें चाँद को प्रकाश और सूर्य को प्रदीप बनाया? (17) और अल्लाह ने तुमको ज़मीन से अद्‌भुत रूप से उगाया,[7] (18) फिर वह तुम्हें इसी ज़मीन में वापस ले जाएगा और इससे अचानक तुमको निकाल खड़ा करेगा। (19) और अल्लाह ने ज़मीन को तुम्हारे लिए बिछौने की तरह बिछा दिया (20) ताकि तुम उसके अन्दर खुले रास्तों में चलो।"

(21) नूह ने कहा, "मेरे रब, उन्होंने मेरी बात रद्द कर दी और उन (रईसों) का अनुसरण किया जो धन और संतान पाकर और ज़्यादा असफल हो गए हैं। (22) उन लोगों ने बड़ा भारी छल-कपट का जाल फैला रखा है। (23) इन्होंने कहा हरगिज़ न छोड़ो अपने पूज्यों को, और न छोड़ो वद्द और सुवाअ को, और न यग़ूस और यऊक़ और नस्र को[8] (24) इन्होंने बहुत लोगों को पथभ्रष्ट किया है, और तू भी इन ज़ालिमों

5. मतलब यह है कि दुनिया के छोटे-छोटे रईसों और सरदारों के सम्बन्ध में तो तुम यह समझते हो कि उनकी प्रतिष्ठा के विपरीत कोई हरकत करना ख़तरनाक है, मगर अल्लाह विश्व के सम्राट के सम्बन्ध में तुम यह उम्मीद नहीं रखते कि वह भी कोई प्रतिष्ठित और गौरववान सत्ता होगा। उसके विरुद्ध तुम विद्रोह करते हो, उसके प्रभुत्व में दूसरों को साझी ठहराते हो, उसके हुक्म की अवज्ञाएँ करते हो, और उससे तुम्हें यह आशंका नहीं होती कि वह इसकी सज़ा देगा।
6. अर्थात् संरचना के विभिन्न चरणों और रूपों से गुजारता हुआ तुम्हें वर्तमान हालत पर लाया है।
7. यहाँ धरती के पदार्थों से इनसान की पैदाइश को वनस्पतियों के उगने की उपमा दी गई है। जिस तरह किसी समय इस पिंड पर वनस्पतियाँ मौजूद न थीं और फिर अल्लाह तआला ने यहाँ उनको उगाया, उसी तरह एक समय था जब ज़मीन पर इनसान का कोई अस्तित्व न था, फिर अल्लाह तआला ने यहाँ उसकी पौध लगाई।

को गुमराही के सिवा किसी चीज़ में उन्नति न दे।''[9]

(25) अपनी ख़ताओं के कारण ही वे डुबोए गए और आग में झोंक दिए गए, फिर उन्होंने अपने लिए अल्लाह से बचानेवाला कोई सहायक न पाया। (26) और नूह ने कहा, ''मेरे रब, इन इनकार करनेवालों में से कोई ज़मीन पर बसनेवाला न छोड़। (27) अगर तूने इनको छोड़ दिया तो ये तेरे बन्दों को गुमराह करेंगे और इनकी नस्ल से जो भी पैदा होगा दुराचारी और बड़ा इनकार करनेवाला ही होगा। (28) मेरे रब, मुझे और मेरे माँ-बाप को, और हर उस व्यक्ति को जिसने मेरे घर में ईमानवाले की हैसियत से प्रवेश किया है, और सब ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों को माफ़ कर दे, और ज़ालिमों के लिए तबाही के सिवा किसी चीज़ में अभिवृद्धि न कर।''



8. नूह (अलै॰) की क़ौम के पूज्यों में से यहाँ उन पूज्यों के नाम लिए गए हैं जिन्हें बाद में अरबवालों ने भी पूजना शुरू कर दिया था और इस्लाम के आरंभिक समय में अरब में जगह-जगह उनके मन्दिर बने हुए थे।
9. हज़रत नूह (अलै॰) की यह बददुआ किसी बेसब्री या अधीरता के कारण न थी बल्कि यह उस समय उनके मुख से निकली थी जब सदियों तक धर्म प्रचार का हक़ अदा करने के बाद वे अपनी क़ौम से पूर्णतः निराश हो चुके थे।

72. अल-जिन्न

नाम

''अल-जिन्न'' सूरा का नाम भी है और विषय-वस्तु की दृष्टि से इसका शीर्षक भी, क्योंकि इसमें जिन्न के क़ुरआन सुनकर जाने और अपनी जाति में इस्लाम के प्रचार करने की घटना का सविस्तर वर्णन किया गया है।

अवतरणकाल

बुख़ारी और मुस्लिम में हज़रत अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) अपने कुछ सहाबा (साथियों) के साथ उक्काज़ के बाज़र जार रहे थे। रास्ते में नख़ला के स्थान पर आपने फ़ज्र (प्रातः) की नमाज़ पढ़ाई। उस समय जिन्नों का एकगिरोह उधर से गुज़र रहा था। क़ुरआन-पाठ की आवाज़ सुनकर वह ठहर गया और ध्यानपूर्वक क़ुरआन सुनता रहा। इसी घटना का उल्लेख इससूरा में किया गया है। अधिकतर टीकाकारों ने इस उल्लेख के आधार पर यह समझा है कि यह नबी (सल्ल॰) के ताइफ़ की यात्रा की प्रसिद्ध घटना है। किन्तु यह अनुमान कई कारणों से सही नहीं है। ताइफ़ की उस यात्रा में जिन्नों के क़ुरआन सुनने की जो घटना घटी थी उसका क़िस्सा सूरा 40 (अहक़ाफ़) आयत 29 से 32 में बयान किया गया है। उन आयतों पर एक दृष्टि डालने से ही मालूम हो जाता है कि उस अवसर पर जो जिन्न क़ुरआन मजीद सुनकर ईमान लाए थे वे पहले से ही हज़रत मूसा (अलै॰) और पूर्व की आसमानी किताबों पर ईमान रखते थे। इसके विपरीत इस सूरा की आयत 2.7 से प्रत्यक्षतः स्पष्ट होता है कि इस अवसर पर क़ुरआन सुननेवाले जिन्न बहुदेववादियों और परलोक और ईशदूतत्व (पैग़म्बरी) का इनकार करनेवालों में से थे। इसलिए सही बात यह है कि सूरा 46 (अहक़ाफ़) और सूरा 72 (जिन्न) में एक ही घटना का उल्लेख नहीं किया गया है, बल्कि ये दो अलग-अलग घटनाएँ हैं। सूरा 46 (अहक़ाफ़) में जिस घटना का उल्लेख किया गया है वह सन् 10 नबवी की ताइफ़ की यात्रा में घटित हुई थी, और इस सूरा की आयतों 8 से 10 पर विचार करने से आभासित होता है कि यह (दूसरी घटना) नुबूवत के आरम्भिक कालखण्ड की ही हो सकती है।

जिन्न की असलियत

'जहाँ तक क़ुरआन का (सम्बन्ध है, उस) में एक जगह नहीं, अधिकतर स्थानों पर जिन्न और मनुष्य का उल्लेख इस हैसियत से किया गया है कि ये दो विभिन्न प्रकार के सृष्ट जीव हैं। उदाहरणार्थ देखिए, सूरा 7 (आराफ़) आयत 38, सूरा 11 (हूद) आयत

119, सूरा 41 (हा॰ मीम॰ अस-सजदा) आयत 25 और 29, सूरा 46 (अल-अहक़ाफ़) आयत 17, सूरा 51 (अज़-ज़ारियात) आयत 56, सूरा 114 (अन-नास) आयत 6 और पूरी सूरा 55 (रहमान), सूरा 7 (आराफ़) आयत 12 और सूरा 15 (हिज्र) आयत 26-27 में साफ़-साफ़ बताया गया है कि मनुष्य की सृष्टि जिस तत्व से हुई है वह मिट्टी है और जिन्नों की सृष्टि जिस तत्व से हुई है वह है अग्नि। सूरा 15 (हिज्र) आयत 27 में स्पष्ट किया गया है कि जिन्न मनुष्य से पहले पैदा किए गए थे। सूरा 7 (आराफ़) आयत 27 में स्पष्ट शब्दों मे कहा गया है कि जिन्न मनुष्यों को देखते हैं, किन्तु मनुष्य उनको नहीं देखते। सूरा 15 (हिज्र) आयत 16-17,सूरा 37 (साफ़्फ़ात) आयत 6-10, और सूरा 67 (मुल्क) आयत 5 में बताया गया है कि जिन्न यद्यपि ऊपरिलोक की ओर उड्डयन कर सकते हैं, किन्तु एक सीमा से आगे नहीं जा सकते। सूरा 2 (बक़रा) आयत 50 से मालूम होता है कि धरती की ख़िलाफ़त (शासनाधिकार) अल्लाह ने मनुष्य को प्रदान की है और मनुष्य जिन्नों से श्रेष्ठ प्राणी है। क़ुरआन यह भी बताता है कि जिन्न मनुष्य की तरह स्वतंत्र अधिकार प्राप्त सृष्ट जीव हैं और जिन्नों को आज्ञापालन और अवज्ञा तथा कुफ़्र और ईमान का वैसा ही अधिकार दिया गया है, जैसा मनुष्य को दिया गया है। (क़ुरआन मजीद में इसी तरह की और भी बहुत-सी बातें जिन्नों के विषय में बयान की गई हैं। उनके इन सभी बयानों) से यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जाती है कि जिन्न का अपना एक स्थायी बाह्य अस्तित्व होता है और वे मनुष्य से अलग एक दूसरी ही जाति के अदृश्य सृष्ट प्राणी हैं।

विषय और वार्ताएँ

इस सूरा में पहली आयत से लेकर आयत 15 तक यह बताया गया है कि जिन्न के गिरोह पर क़ुरआन मजीद सुनकर क्या प्रभाव पड़ा और फिर वापस जाकर अपनी जाति के दूसरे जिन्नों से क्या-क्या बातें कहीं। इस सिलसिले में अल्लाह ने उनकी समग्र बातचीत उद्धृत नहीं की है, बल्कि केवल उन विशेष बातों को उद्धृत किया है जो उल्लेखनीय थीं। तदन्तर आयत 16 से 17 तक लोगों को हितोपदेश दिया गया है कि वे बहुदेववाद को त्याग दें और सीधे मार्ग पर दृढ़ता के साथ चलें तो उनपर प्रसादों की वर्षा होगी अन्यथा अल्लाह की भेजी हुई नसीहत से मुँह मोड़ने का परिणाम यह होगा कि उन्हें कठोर यातना का सामना करना पड़ेगा। फिर आयत 19 से 23 तक मक्का के काफ़िरों की इस बात पर निन्दा की गई है कि जब अल्लाह का रसूल अल्लाह की ओर आमंत्रित करने के लिए आवाज़ बुलन्द करता है तो वे उसपर टूट पड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। फिर आयत 24 से 25 में काफ़िरों को चेतावनी दी गई है कि आज वे रसूल

को असहाय देखकर उसे दबा लेने की चेष्टा कर रहे हैं, किन्तु एक समय आएगा जब उन्हें मालूम हो जाएगा कि वास्तव में असहाय कौन है। अन्त में लोगों को बताया गया है कि परोक्ष का ज्ञाता केवल अल्लाह है। रसूल (सल्ल॰) को केवल वह ज्ञान प्राप्त होता है जो अल्लाह उसे देना चाहता है।



72. सूरा अल-जिन्न

(मक्का में उतरी–आयतें 28)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ नबी, कहो, मेरी ओर प्रकाशना की गई है कि जिन्नों के एक गिरोह ने ध्यान से सुना[1] फिर (जाकर अपनी क़ौम के लोगों से) कहा : ''हमने एक बड़ा अजीब क़ुरआन सुना है (2) जो सीधे मार्ग की ओर मार्गदर्शन करता है इसलिए हम उसपर ईमान ले आए हैं और अब हम हरगिज़ अपने रब के साथ किसी को सहभागी न ठहराएँगे।'' (3) और यह कि ''हमारे रब का गौरव बहुत उच्च है, उसने किसी को बीवी या बेटा नहीं बनाया है।'' (4) और यह कि ''हमारे नादान लोग[2] अल्लाह के सम्बन्ध में बहुत सत्यविरोधी बातें कहते रहे हैं।'' (5) और यह कि ''हमने समझा था कि इनसान और जिन्न कभी अल्लाह के विषय में झूठ नहीं बोल सकते।'' (6) और यह कि ''इनसानों में से कुछ लोग जिन्नों में से कुछ लोगों की पनाह माँगा करते थे, इस तरह उन्होंने जिन्नों का घमण्ड और ज़्यादा बढ़ा दिया।'' (7) और यह कि ''इनसानों ने भी वही गुमान किया जैसा तुम्हारा गुमान था कि अल्लाह किसी को रसूल बनाकर न भेजेगा।'' (8) और यह कि ''हमने आसमान को टटोला तो देखा कि वह पहरेदारो से फटा पड़ा है और उल्काओं की वर्षा हो रही है।'' (9) और यह कि ''पहले हम सुनगुन लेने के लिए आसमान में बैठने का स्थान पा लेते थे, मगर अब जो चोरी-छिपे सुनने का प्रयास करता है वह अपने लिए घात में एक उल्का लगा हुआ पाता है।'' (10) और

1. इससे मालूम होता है कि जिन्न उस समय अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को दिखाई नहीं दे रहे थे और आपको यह मालूम न था कि वे क़ुरआान सुन रहे हैं, बल्कि बाद में प्रकाशना (वह्य) द्वारा अल्लाह तआला ने आपको इस घटना की सूचना दी। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) भी इस क़िस्से को बताते हुए स्पष्ट करते हैं कि ''अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने जिन्नों के सामने क़ुरआन नहीं पढ़ा था, न आपने उनको देखा था।'' (मुसलिम, तिरमिज़ी, मुसनद अहमद, इब्ने जरीर)।
2. मूल में 'सफ़ीहुना' शब्द इस्तेमाल किया गया है जो एक व्यक्ति के लिए भी बोला जा सकता है और एक गिरोह के लिए भी। अगर इसे एक नादान व्यक्ति के अर्थ में लिया जाए तो मुराद इबलीस (शैतान) होगा। अगर गिरोह के अर्थ में लिया जाए तो मतलब यह होगा कि जिन्नों में बहुत-से मूर्ख और बुद्धिहीन लोग ऐसी बातें कहते थे।

यह कि ''हमारी समझ में नहीं आता था कि क्या ज़मीनवालों से कोई बुरा व्यवहार करने का इरादा किया गया है या उनका रब उन्हें उचित मार्ग दिखाना चाहता है।''[3] (11) और यह कि ''हममें से कुछ लोग नेक हैं और कुछ इससे अधम हैं, हम विभिन्न तरीक़ों में बँटे हुए हैं।'' (12) और यह कि ''हम समझते थे कि न ज़मीन में हम अल्लाह को बेबस कर सकते हैं और न भागकर उसे हरा सकते हैं।''[4] (13) और यह कि ''हमने जब मार्गदर्शन की बात सुनी तो हम उसपर ईमान ले आए। अब जो कोई भी अपने रब पर ईमान ले आएगा उसे किसी तरह के हक़ मारे जाने या ज़ुल्म का डर न होगा।'' (14) और यह कि ''हममें से कुछ मुसलिम (अल्लाह के आज्ञकारी) हैं और कुछ सत्य से हटे हुए। तो जिन्होंने इस्लाम (आज्ञापालन का मार्ग) ग्रहण कर लिया उन्होंने मुक्ति का मार्ग ढूँढ लिया, (15) और जो सत्य से हटे हुए हैं वे जहन्नम का ईंधन बननेवाले हैं।''[5]

(16) और (ऐ नबी, कहो, मुझपर यह प्रकाशना भी की गई है कि) लोग अगर सीधे मार्ग पर चलते तो हम उन्हें ख़ूब सिंचित करते (17) ताकि इस नेमत से उनकी आज़माइश करें। और जो अपने रब के ज़िक्र से मुँह मोड़ेगा उसका रब उसे सख़्त अज़ाब में ग्रस्त कर देगा। (18) और यह कि मसजिदें अल्लाह के लिए हैं, अतः उनमें अल्लाह के साथ किसी और को न पुकारो।[6] (19) और यह कि जब अल्लाह का बन्दा

3. इससे मालूम हुआ कि ये जिन्न आसमान की यह हालत देखकर इस तलाश में निकले थे कि ज़मीन पर ऐसा क्या मामला पेश आया है या आनेवाला है जिसकी ख़बरों को सुरक्षित रखने के लिए इतने कड़े प्रबन्ध किए गए हैं कि अब हम ऊपरी लोक में सुनगुन लेने का कोई अवसर नहीं पाते और जिधर भी जाते हैं मार भगाए जाते हैं।
4. मतलब यह है कि हमारे इसी ख़याल ने हमें मुक्ति का मार्ग दिखा दिया। हम चूँकि अल्लाह से निर्भय न थे और हमें विश्वास था कि अगर हमने उसकी अवज्ञा की तो उसकी पकड़ से किसी तरह बच न सकेंगे, इसलिए जब वह वाणी हमने सुनी जो अल्लाह की ओर से सीधा मार्ग बताने आई थी तो हम यह दुस्साहस न कर सके कि सत्य मालूम हो जाने के बाद भी उन्हीं धारणाओं पर जमे रहते जो हमारे नादान लोगों ने हममें फैला रखी थीं।
5. सवाल उठाया जा सकता है कि क़ुरआन के अनुसार जिन्न तो ख़ुद अग्निमय प्राणी हैं, फिर जहन्नम की आग से उनको क्या तकलीफ़ हो सकती है? इसका उत्तर यह है कि क़ुरआन के अनुसार तो आदमी भी मिट्टी से बना है, फिर अगर इसे मिट्टी का ढेला खींच मारा जाए तो इसको चोट क्यों लगती है?

उसको पुकारने के लिए ख़ड़ा हुआ तो लोग उसपर टूट पड़ने के लिए तैयार हो गए। (20) ऐ नबी, कहो कि "मैं तो अपने रब को पुकारता हूँ और उसके साथ किसी को शरीक नहीं करता।" (21) कहो, "मैं तुम लोगों के लिए न किसी हानि का अधिकार रखता हूँ न किसी भलाई का।" (22) कहो, "मुझे अल्लाह की पकड़ से कोई बचा नहीं सकता और न मैं उसके दामन के सिवा कोई शरण लेने की जगह पा सकता हूँ। (23) मेरा कार्य इसके सिवा कुछ नहीं है कि अल्लाह की बात और उसके सन्देश पहुँचा दूँ। अब जो भी अल्लाह और उसके रसूल की बात न मानेगा उसके लिए जहन्नम की आग है, और ऐस लोग उसमें हमेशा रहेंगे।"

(24) (ये लोग अपनी इस नीति से बाज़ न आएँगे) यहाँ तक कि जब उस चीज़ को देख लेंगे जिसका इनसे वादा किया जा रहा है तो इन्हें मालूम हो जाएगा कि किसके सहायक कमज़ोर हैं और किसका जत्था संख्या में कम है[7] (25) कहो मैं नहीं जानता कि जिस चीज़ का वादा तुमसे किया जा रहा है वह नज़दीक है या मेरा रब उसके लिए कोई लम्बी अवधि नियत करता है। (26) वह परोक्ष का जाननेवाला है, अपने परोक्ष को किसी पर प्रकट नहीं करता, (27) सिवाय उस रसूल के जिसे उसने (परोक्ष का ज्ञान देने के लिए) पसन्द कर लिया हो,[8] तो उसके आगे और पीछे वह रक्षक लगा देता है[9] (28) ताकि वह जान ले कि उन्होंने अपने रब के सन्देश पहुँचा दिए,[10] और वह उनके पूरे वातावरण (माहौल) को घेरे में लिए हुए हैं और

6. अर्थात् अल्लाह के साथ किसी और की बन्दगी न करो, किसी और से दुआ न माँगो, किसी और को सहायता के लिए न पुकारो।
7. उस समय में क़ुरैश के जो लोग अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का अल्लाह की ओर बुलावा (दावत इलल्लाह) सुनते ही आप पर टूट पड़ते थे, वे इस घमंड में पड़े थे कि उनका जत्था बड़ा प्रबल है, और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के साथ कुछ मुट्ठी-भर आदमी हैं इसलिए वे आसानी से आपको दबा लेंगे।
8. अर्थात् रसूल अपनी जगह ख़ुद परोक्ष (ग़ैब) का जाननेवाला नहीं होता बल्कि अल्लाह जब उसको पैग़म्बरी का दायित्व पूरा करने के लिए चुनता है तो परोक्ष के तथ्यों में से जिन चीज़ों का ज्ञान वह चाहता है उसे प्रदान कर देता है।
9. रक्षकों से मुराद फ़रिश्ते हैं। अर्थ यह है कि जब अल्लाह प्रकाशना के द्वारा परोक्ष के तथ्यों का ज्ञान रसूल के पास भेजता है तो उसकी निगहबानी करने के लिए हर ओर फ़रिश्ते नियुक्त कर देता है ताकि वह ज्ञान बिलकुल सुरक्षित रूप से रसूल तक पहुँच जाए और उसमें किसी तरह की मिलावट न हो पाए।

एक-एक चीज़ को उसने गिन रखा है।[11]

● ● ●

10. इससे मालूम हुआ कि रसूल को वह परोक्ष का ज्ञान दिया जाता है जो पैग़म्बरी (रिसालत) के कर्तव्य को पूरा करने के लिए उसको देना ज़रूरी होता है, और फ़रिश्ते इस बात की भी निगहबानी करते हैं कि रसूल तक यह ज्ञान सही रूप में पहुँच जाए, और इस बात की भी कि रसूल अपने रब के सन्देश उसके बन्दों तक ठीक-ठीक पहुँचा दे।
11. अर्तात् रसूल पर भी और फ़रिश्तों पर भी अल्लाह तआला की शक्ति एवं सामर्थ्य इस तरह व्याप्त है कि अगर बाल बराबर भी वे उसकी इच्छा के विपरीत हिलें तो तुरंत पकड़ में आ जाएँ। और जो सन्देश अल्लाह तआला भेजता है उनका अक्षर-अक्षर गिना हुआ है, रसूलों और फ़रिश्तों की यह मजाल नहीं है कि उनमें एक शब्द की कमी-बेशी भी कर सकें।

73. अल-मुज़्ज़म्मिल

नाम

पहली ही आयत के शब्द "अल-मुज़्ज़म्मिल" (औढ़-लपेटकर सोनेवाले) को इस सूरा का नाम दिया गआा है। यह केवल नाम है, विषय-वस्तु की दृष्टि से इसका शीर्षक नहीं है।

अवतरणकाल

इस सूरा के दो खण्ड हैं (पहला खण्ड आरम्भ से आयत 19 तक और सूरा का शेष भाग दूसरा खण्ड है।) दोनों खण्ड दो अलग-अलग समयों में अवतरित हुए हैं। पहला खण्ड सर्वसम्मति से मक्की है। रहा यह प्रश्न कि यह मक्की जीवन के किस कालखण्ड में अवतरित हुआ है, तो इस खण्ड की वार्ताओं के आन्तरिक साक्ष्य (से मालूम होता है कि) पहली बात यह कि यह नबी (सल्ल॰) की नुबूवत के प्रारम्भिक काल ही में अवतरित हुआ होगा, जबकि अल्लाह की ओर से इस पद के लिए आपको प्रशिक्षित किया जा रहा था। दूसरी बात यह कि उस समय क़ुरआन मजीद का कम से कम इतना अंश अवतरित हो चुका था कि उसका पाठ करने में अच्छा-ख़ासा समय लग सके। तीसरी बात यह कि (उस समय) अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) इस्लाम का खुले रूप में प्रचार करना आरम्भ कर चुके थे और मक्का में आपका विरोध ज़ोरों से होने लगा था। दूसरे खण्ड के सम्बन्ध में यद्यपि बहुत-से टीकाकारों ने यह विचार व्यक्त किया है कि वह भी मक्का ही में अवतरित हुआ है, किन्तु कुछ दूसरे टीकाकारों ने उसे मदनी ठहराया है।

विषय और वार्ताएँ

पहली 7 आयतों में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को आदेश दिया गया है कि जिस महान कार्य का बोझ आपपर डाला गया है, उसके दायित्वों के निर्वाह के लिए आप अपने को तैयार करें, और उसका व्यावहारिक रूप यह बताया गया है कि रातों को उठकर आप आधी-आधी रात या उससे कुछ कम-ज़्यादा नमाज़ पढ़ा करें. आयत 8 से 14 तक नबी (सल्ल॰) को यह शिक्षा दी गई हैं कि सबसे कटकर उस प्रभु के हो रहें जो सारे जगत् का मालिक है। अपने सारे मामले उसी को सौंपकर निश्चिन्त हो जाएँ। विरोधी जो बातें आपके विरुद्ध बना रहे हैं उनपर धैर्य से काम लें, उनके मुँह न लगें और उनका मामला ईश्वर पर छोड़ दें कि वही उनसे निबट लेगा। इसके बाद आयत 15 से 19 तक मक्का के उन लोगों को, जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का विरोध कर रहे थे, सावधान

किया गया है कि हमने उसी तरह तुम्हारी ओर एक रसूल भेजा है, जिस तरह फ़िरऔन की ओर भेजा था। फिर देख लो कि जब फ़िरऔन ने अल्लाह के रसूल की बात न मानी तो उसका क्या परिणा हुआ। यदि मान लो कि दुनिया में तुमपर कोई यातना नहीं आई तो क़ियामत के दिन तुम कुफ़्र (इनकार) के दण्ड से कैसे बच निकलोगे? ये पहले खण्ड की वार्ताएँ हैं। दूसरे खण्ड में तहज्जुद की नमाज़ (अनिवार्य नमाज़ों के अतिरिक्त रात में पढ़ी जानेवाली नमाज़ जो अनिवार्य तो नहीं है किन्तु ईमानवालों के जीवन में इसका महत्व कुछ कम भी नहीं है) के सम्बन्ध में उस आरम्भिक आदेश के सिलसिले में कुछ छूट दे दी गई जो पहले खण्ड के आरम्भ में दिया गया था। अब यह आदेश दिया गया कि जहाँ तक तहज्जुद की नमाज़ का सम्बन्ध है, वह तो जितनी आसानी से पढ़ी जा सके, पढ़ लिया करो, किन्तु मुसलमानों को मौलिक रूप से जिस चीज़ का पूर्ण रूप से आयोजन करना चाहिए वह यह है कि पाँच वक़्तों की अनिवार्य नमाज़ पूरी पाबन्दी के साथ क़ायम रखें, ज़कात (दान) देने के अनिवार्य कर्तव्य का ठीक-ठीक पालन करते रहें और अल्लाह के मार्ग में अपना माल शुद्धहृदयता के साथ ख़र्च करें। अन्त में मुसलमानों को यह शिक्षा दी गई है कि जो भलाई के काम तुम दुनिया में करोगे, वे विनष्ट नहीं होंगे, बल्कि अल्लाह के यहाँ तुम्हें उनका बड़ा प्रतिदान प्राप्त होगा।



73. सूरा अल-मुज़्ज़म्मिल

(मक्का में उतरी–आयतें 20)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ ओढ़-लपेटकर सोनेवाले, (2) रात को नमाज़ में खड़े रहा करो मगर कम, (3) आधी रात, या उससे कुछ कम कर लो, (4) या उससे कुछ अधिक बढ़ा दो, और क़ुरआन को भली-भांति ठहर-ठहरकर पढ़ो। (5) हम तुमपर एक भारी कलाम (वाणी) अवतरित करनेवाले हैं। (6) वास्तव में रात का उठना मन (नफ़्स) पर क़ाबू पाने के लिए बहुत प्रभावकारी और क़ुरआन ठीक पढ़ने के लिए अधिक अनुकूल है। (7) दिन के समयों में तो तुम्हारे लिए बहुत व्यस्तताएँ हैं। (8) अपने रब के नाम का ज़िक्र किया करो और सबसे कटकर उसी के हो रहो. (9) वह पूर्व और पश्चिम का रब है, उसके सिवा कोई ईश्वर नहीं, अतः उसी को अपना वकील[1] बना लो। (10) और जो बातें लोग बना रहे हैं उनपर धैर्य से काम लो और सज्जनता के साथ उनसे अलग हो जाओ।[2] (11) इन झुठलानेवाले ख़ुशहाल लोगों से निमटने का काम तुम मुझपर छोड़ दो और उन्हें तनिक देर इसी हालत पर रहने दो। (12) हमारे पास (उनके लिए) भारी बेड़ियाँ हैं और भड़कती हुई आग (13) और गले में फँसनेवाला खाना और दर्दनाक अज़ाब। (14) यह उस दिन होगा जब ज़मीन और पहाड़ काँप उठेंगे और पहाड़ों की दशा ऐसी हो जाएगी जैसे रेत के ढेर हैं जो बिखरे जा रहे हैं।

1. वकील (करता-धरता) उस व्यक्ति को कहते हैं जिसपर भरोसा करके कोई व्यक्ति अपना मामला उसे सौंप दे। लगभग इसी अर्थ में उर्दू या हिन्दी भाषा में वकील का शब्द उस व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता है जिसके हवाले अपना मुक़द्दमा करके एक आदमी सन्तुष्ट हो जाता है कि उसकी ओर से वह अच्छी तरह मुक़द्दमा लड़ेगा और उसे स्वयं अपना मुक़द्दमा लड़ने की आवश्यकता न रहेगी।
2. अलग हो जाओ का मतलब यह नहीं है कि उनसे सम्बन्ध-विच्छेद करके अपना प्रचार (तबलीग) बन्द कर दो, बल्कि इसका मतलब यह है कि उनके मुँह न लगो, उनकी बेहूदगियों को बिलकुल नज़रअंदाज़ कर दो, और उनकी किसी बदतमीज़ी और दुःशीलता का उत्तर न दो। फिर यह पहलू बचाना भी किसी ग़म और ग़ुस्से और झुंझलाहट के साथ न हो, बल्कि उसी प्रकार से पहलू बचाया जाए जिस प्रकार एक शरीफ़ आदमी किसी बाज़ारी आदमी की गाली सुनकर नज़रअंदाज़ कर देता है और दिल पर मैल तक नहीं आने देता।

(15) तुम लोगों[3] के पास हमने उसी प्रकार एक रसूल तुमपर गवाह बनाकर भेजा है जिस प्रकार हमने फ़िरऔन की ओर एक रसूल भेजा था। (16) (फिर देख लो जब) फ़िरऔन ने उस रसूल की बात न मानी तो हमने उसको बड़ी सख़्ती के साथ पकड़ लिया। (17) अगर तुम मानने से इनकार करोगे तो उस दिन कैसे बच जाओगे जो बच्चों को बूढ़ा कर देगा (18) और जिसकी सख़्ती से आसमान फटा जा रहा होगा? अल्लाह का वादा तो पूरा होकर ही रहना है। (19) यह एक नसीहत है, अब जिसका जी चाहे अपने रब की ओर जाने का मार्ग ग्रहण कर ले।

(20) ऐ नबी[4] "तुम्हारा रब जानता है कि तुम कभी दो तिहाई रात के लगभग और कभी आधी रात और कभी एक तिहाई रात (उपासना) में खड़े रहते हो, और तुम्हारे साथियों में से भी एक गिरोह यह कार्य करता है। अल्लाह ही रात और दिन का हिसाब रखता है, उसे मालूम है कि तुम लोग समयों की ठीक गणना नहीं कर कसते, अतः उसने तुमपर दया की, अब जितनी आसानी से पढ़ सको क़ुरआन पढ़ा करो।[5] उसे मालूम है कि तुममें कुछ बीमार होंगे, कुछ दूसरे लोग अल्लाह के अनुग्रह (रोज़ी) की खोज में यात्रा करते हैं, और कुछ और लोग अल्लाह के मार्ग में युद्ध करते हैं। अतः जितना क़ुरआन आसानी से पढ़ा जा सके पढ़ लिया करो, नमाज़ क़ायम करो, ज़कात दो[6] और अल्लाह को अच्छा क़र्ज़ देते रहो। जो कुछ भलाई तुम अपने लिए आगे भेजोगे उसे अल्लाह के यहाँ मौजूद पाओगे, वही ज़्यादा अच्छा है और उसका बदला बहुत बड़ा है। अल्लाह से क्षमा-याचना करते रहो, निस्सन्देह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दयावान् है।



3. अब मक्का के उन इनकार करनेवालों को सम्बोधित किया जा रहा है जो अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को झुठला रहे थे और आपके विरोध में क्रियाशील थे।
4. यह रुकूअ (अनुच्छेद) पहले अनुच्छेद के दस वर्ष के पश्चात् मदीना में अवतरित हुआ।
5. चूँकि नमाज़ में विस्तार अधिकतर क़ुरआन के लम्बे पाठ ही से होता है, इसलिए कहा कि 'तहज्जुद' की नमाज़ में जितना क़ुरआन आसानी से पढ़ सको पढ़ लिया करो, इससे नमाज़ के विस्तार में स्वतः कमी हो जाएगी।
6. टीकाकारों का इसपर इत्तिफ़ाक़ (मतैक्य) है कि इससे अभिप्रेत पाँच वक़्त की अनिवार्य नमाज़ और अनिवार्य ज़कात अदा करना है।

74. अल-मुद्दस्सिर

नाम

पहली ही आयत के शब्द "अल-मुद्दस्सिर" (ओढ़-लपेटकर लेटनेवाले) को इस सूरा का नाम दिया गया है। यह भी केवल नाम है, विषय-वस्तु की दृष्टि से वार्ताओं का शीर्षक नहीं।

अवतरणकाल

इसकी पहली सात आयतें मक्का मुअज़्ज़मा के बिलकुल आरम्भिक काल में अवतरित हुई हैं। पहली 'वह्य' (प्रकाशना) जो नबी (सल्ल॰) पर अवतरित हुई वह "पढ़ो (ऐ नबी), अपने रब के नाम के साथ, जिसने पैदा किया" से लेकर "जिसे वह न जनता था" सूरा 96 (अल-अलक़), तक है। इस पहली वह्य के बाद कुछ समय तक नबी (सल्ल॰) पर कोई वह्य अवतरित नहीं हुई। (इस) फ़तरतुल-वह्य (वह्य के बन्द रहने के समय) का उल्लेख करते हुए (अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने स्वयं कहा है कि) "एक दिन मैं रास्ते से गुज़र रहा था। अचानक मैंने आसमान से एक आवाज़ सुनी। सिर उठाया तो वही फ़रिश्ता जो हिरा की गुफा में मेरे पास आया था, आकाश और धरती के मध्य एक कुर्सी पर पैठा हुआ है। मैं यह देखकर अत्यन्त भयभीत हो गया और घर पहुँचकर मैंने कहा, "मुझे ओढ़ाओ, मुझ ओढ़ाओ।" अतएव घरवालों ने मुझपर लिहाफ़ (या कम्बल) ओढ़ा दिया। उस समय अल्लाह ने वह्य अवतरित की, "ऐ ओढ़-लपेटकर लेटनेवाले...।" फिर निरन्तर मुझपर वह्य अवतरति होनी प्रारम्भ हो गई।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम, मुस्नद अहमद, इब्ने जरीर) सूरा का शेष भागआयत 8 से अन्त तक उस समय अवतरित हुआ जब इस्लाम का खुल्लम-खुल्ला प्रचार हो जाने के पश्चात् मक्का में पहली बार हज का अवसर आया।

विषय और वार्ता

पहली वह्य (प्रकाशना) में जो सूरा 96 (अलक़) की आरम्भिक 5 आयतों पर आधारित थी, आप (सल्ल॰) को यह नहीं बताया गया था कि आप किस महान् कार्य पर नियुक्त हुए हैं और आगे क्या कुछ आपको करना है, बल्कि केवल एक प्रारम्भिक परिचय कराकर आपको कुछ समय के लिए छोड़ दिया गया था, ताकि आपके मन पर जो बड़ा बोझ इस पहले अनुभव से पड़ा है, उसका प्रभाव दूर हो जाए और आप मानसिक रूप से आगे वह्य प्रापत करने और नुबूवत के कर्तव्यों के सम्भालने के लिए तैयार हो जाएँ। इस अन्तराल के पश्चात् जब पुनः वह्य के अवतरण का सिलसिला शुरू

हुआ तो इस सूरा की आरम्भिक 7 आयतें अवतरित की गई और इनमें पहली बार आपको यह आदेश दिया गया कि आप उठें और ईश्वर के सृष्ट जीवों को उस नीति के परिणाम से डराएँ जिसपर वे चल रहे हैं और इस दुनिया में ईश्वर की महानता की उद्घोषणा करें। इसके साथ आपको आदेश दिया गया कि अब जो कार्य आपको करना है, उसे यह अपेक्षित है कि आपका जीवन हर दृष्टि से (अत्यन्त पवित्र, पूर्ण निष्ठा और पूर्ण धैर्य और ईश्वरीय निर्णय पर राज़ी रहने का नमूना हो।) इस ईश्वरीय आदेश के अनुपालन स्वरूप जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने इस्लाम का प्रचार आरम्भ किया तो मक्का में खलबली मच गई और विरोधों का एक तूफ़ान उठ खड़ा हुआ। कुछ महीने इसी दशा में व्यतीत हुए थे कि हज का समय आग गया। क़ुरैश के सरदारों ने (इस भय से कि कहीं बाहर से आनेवाले हाजी इस्लाम के प्रचार से प्रभावित न हो जाएँ) एक सम्मेलन का आयोजन किया जिसमें यह निश्चय किया कि हाजियों के आते ही उनमें अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के विरुद्ध प्रपगंडा शुरू कर दिया जाए। इसपर सहमति के पश्चात् वलीद बिन मुग़ीरा ने उपस्थित लोगों से कहा कि "यदि आप लोगों ने मुहम्मद (सल्ल॰) के सम्बन्ध में विभिन्न बातें लोगों से कही तो हम सबका विश्वास जाता रहेगा। इसलिए कोई एक बात निर्धारित कर लीजिए जिसे सब एकमत होकर कहें।" (इसपर किसी ने आपको काहिन, किसी ने दीवाना और उन्मादी, किसी ने कवि और किसी ने जादूगर कहने का प्रस्ताव रखा। लेकिन वलीद इनमें से हर प्रस्ताव को रद्द करता गया। फिर उस) ने कहा कि इन बातों में से जो बात भी तुम करोगे, लोग उसे अनुचित आरोप समझेंगे। अल्लाह की क़सम, उस वाणी में बड़ा माधुर्य है; उसकी जड़ें बड़ी गहरी और उसकी डालियाँ बहुत फलदार हैं। (अन्त में अबू जहल के आग्रह पर वह स्वयं) सोचकर बोला, "सर्वाधिक अनुकूल बात जो कही जा सकती है वह यह कि यह व्यक्ति जादूगर है। यह ऐसी वाणी प्रस्तुत कर रहा है जो आदमी को उसके बाप, भाई, पत्नी, बच्चों और सारे परिवार से विलग कर देती है।" वलीद की इस बात को सबने स्वीकार कर लिया। (और हज के अवसर पर इसके अनुसार भरपूर प्रोपगंडा किया गया।) किन्तु उसका परिणाम यह हुआ कि क़ुरैश ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का नाम स्वयं ही सम्पूर्ण अरब में प्रसिद्ध कर दिया, (सीरत इब्ने हिशाम, प्रथम भाग, पृ॰ 288-89)। यही घटना है जिसकी इस सूरा के दूसरे भाग में समीक्षा की गई है। इसकी वार्ताओं का क्रम यह है :

आयत 8 से 10 तक सत्य का इनकार करनेवालों को (उनके बुरे परिणाम से) सावधान किया गया है। आयत 11 से 26 तक वलीद-बिन-मुग़ीरा का नाम लिए बिना यह बताया गया है कि अल्लाह ने इस व्यक्ति को क्या कुछ सुख-सामग्रियाँ प्रदान की थी

और उनका प्रत्युत्तर उसने सत्य के विरोध के रूप में दिया है। अपनी इस करतूत के पश्चात् भी यह व्यक्ति चाहता है कि इसे तदधिक प्रसादों से अनुग्रहीत किया जाएगा, जबकि अब यह अनुग्रह का नहीं, बल्कि नरक का भागी हो चुका है। तदनन्तर आयत 27 से 48 तक नरक की भयावहताओं का उल्लेख किया गया है और यह बताया गया है कि किस नैतिक आधार और चरित्र के लोग उसके भागी हैं। फिर आयत 49 से 53 में काफ़िरों के रोग की मौलिक जड़ बता दी गई है कि वे चूँकि परलोक से निर्भय हैं इसलिए वे क़ुरआन से भागते हैं और ईमान के लिए तरह-तरह की अनुचित शर्तें पेश करते हैं। अन्त में साफ़-साफ़ कह दिया गया है कि ख़ुदा को किसी के ईमान की कोई ऐसी आवश्यकता नहीं पड़ गई है कि वह उसकी शर्तें पूरी करता फिरे। क़ुरआन सामान्यजन के लिए एक उपदेश है, जो सबके समक्ष प्रस्तुत कर दिया गया है। अब जिसका जी चाहे उसको स्वीकार कर ले।



74. सूरा अल-मुद्दस्सिर

(मक्का में उतरी—आयतें 56)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ऐ[1] ओढ़-लपेटकर लेटनेवाले, (2) उठो और ख़बरदार करो। (3) और अपने रब की बड़ाई का एलान करो। (4) और अपने कपड़े स्वच्छ रखो। (5) और गन्दगी से दूर रहो। (6) और एहसान न करो अधिक प्राप्त करने के लिए। (7) और अपने रब के लिए सब्र (धैर्य) करो।

(8) अच्छा, जब[2] नरसिंघा में फूँक मारी जाएगी, (9) वह दिन बड़ा ही कठिन होगा, (10) इनकार करनेवालों के लिए हलका न होगा। (11) छोड़ दो मुझे और उस व्यक्ति को जिसे मैंने अकेला पैदा किया,[3] (12) बहुत-सा धन उसको दिया (13) उसके साथ उपस्थित रहनेवाले बेटे दिए, (14) और उसके लिए रियासत का मार्ग प्रशस्त किया, (15) फिर वह लोभ रखता है कि मैं उसे और अधिक दूँ। (16) कदापि नहीं, वह हमारी आयतों से वैर रखता है। (17) मैं तो उसे शीघ्र एक कठिन चढ़ाई चढ़वाऊँगा। (18) उसने सोचा और कुछ बात बनाने की कोशिश की। (19-20) तो अल्लाह की मार उसपर, कैसी बात बनाने की कोशिश की। हाँ, अल्लाह की मार

---

1. इस सूरा की आरंभिक सात आयतें वे हैं जिनमें सबसे पहले अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को इस्लाम के प्राचर का आदेश दिया गया। यह ''इक़रा बिस्मि रब्बिकल-लज़ी ख़लक़'' (पढ़ो, अपने रब के नाम के साथ जिसने पैदा किया) के बाद दूसरी वह्य है जो नबी (सल्ल॰) पर अवतरित हुई।
2. यह अंश आरंभिक आयतों के कुछ महीनों के पश्चात् उस समय अवतरित हुआ था जब नबी (सल्ल॰) की ओर से खुल्लम-खुल्ला इस्लाम का प्रचार आरंभ हो जाने के बाद पहली बार हज का समय आया और क़ुरैश के सरदारों ने एक सम्मेलन करके यह तय किया कि बाहर से आनेवाले हाजियों को क़ुरआन और मुहम्मद (सल्ल॰) से बदगुमान करने के लिए प्रोपगंडे का एक भारी अभियान चलाया जाए।
3. इससे अभिप्रेत वलीद बिन मुग़ीरह है जो दिल में क़ुरआन के ईश्वरीय वाणी होने को स्वीकार कर चुका था मगर मक्का में अपनी सरदारी क़ायम रखने के लिए उसने उपर्युक्त सम्मेलन में काफ़िरों को यह मशविरा दिया कि नबी (सल्ल॰) को जादूगर और क़ुरआन को जादू मशहूर किया जाए।

उसपर, कैसी बात बनाने की कोशिश की। (21) फिर (लोगों की ओर) देखा। (22) फिर पेशानी सिकोड़ी और मुँह बनाया। (23) फिर पलटा और घमंड में पड़ गया। (24) अन्ततः बोला कि यह कुछ नहीं मगर एक जादू जो पहले से चला आ रहा है, (25) यह तो एक मानवीय वाणी है। (26) शीघ्र ही मैं उसे नरक में झोंक दूँगा। (27) और तुम क्या जानो कि क्या है वह नरक? (28) न बाक़ी रखे न छोड़े।[4] (29) खाल झुलस देनेवाला। (30) उन्नीस कार्यकर्ता उसपर नियुक्त हैं—(31) हमने[5] नरक के ये कार्यकर्ता फ़रिश्ते बनाए हैं, और उनकी संख्या को इनकार करनेवालों के लिए आज़माइश बना दिया है, ताकि किताबवालों को यक़ीन हो जाए और ईमानवालों का ईमान बढ़े, और किताबवाले और ईमानवाले किसी सन्देह में न रहें,[6] और दिल के बीमार और इनकार करनेवाले यह कहें कि भला अल्लाह का इस अद्भुत बात से क्या मतलब हो सकता है। इस प्रकार अल्लाह जिसे चाहता है पथभ्रष्ट कर देता है और जिसे चाहता है मार्ग दिखा देता है। और तेरे रब की सेनाओं को स्वयं उसके सिवा कोई नहीं जानता—और इस नरक का उल्लेख इसके सिवा किसी उद्देश्य से नहीं किया गया कि लोगों को इससे नसीहत हो। (32) कदापि नहीं,[7] क़सम है चाँद की, (33) और रात

4. अर्थात् वह यातना के योग्य लोगों में से किसी को बाक़ी न रहने देगा जो उसकी पकड़ में आए बिना रह जाए, और जो भी उसकी पकड़ में आएगा उसे यातना दिए बिना न छोड़ेगा।
5. यहाँ से लेकर "तेरे रब की सेनाओं को स्वयं उसके सिवा कोई नहीं जानता" तक का पूरा वार्तांश एक संविष्ट वाक्य है जो वार्ता के बीच में वाणी के क्रम को तोड़कर उन आपत्ति करनेवालों के उत्तर में कहा गया है जिन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के मुख से यह सुनकर कि नरक के कार्यकर्ताओं की संख्या केवल 19 होगी, इसकी हँसी उड़ानी शुरू कर दी थी। उनको यह बात विचित्र मालूम हुई कि एक ओर तो हमसे यह कहा जा रहा है कि आदम (अलै०) के समय से लेकर क़ियामत तक संसार में जितने मनुष्यों ने भी कुफ़्र (इनकार) और बड़े गुनाह किए हैं वे जहन्नम में डाले जाएँगे, और दूसरी ओर हमें यह सूचना दी जा रही हैं कि इतने बड़े जहन्नम में इतने बेशुमार मनुष्यों को यातना देने के लिए केवल 19 कार्यकर्ता नियुक्त होंगे।
6. चूँकि किताबवाले और ईमानवाले फ़रिश्तों की असाधारण शक्तियों से परिचित हैं इसलिए उन्हें इसमें कोई सन्देह नहीं हो सकता कि 19 फ़रिश्ते नरक का प्रबन्ध करने के लिए काफ़ी हैं।
7. अर्थात् यह कोई हवाई बात नहीं है जिसकी इस प्रकार हँसी उड़ाई जाए।

की जबकि वह पलटती है, (34) और सुबह की जबकि वह रौशन होती है, (35) यह जहन्नम (नरक) भी बड़ी चीज़ों में से एक है,[8] (36) इनसानों के लिए डरावा, (37) तुममें से हर उस व्यक्ति के लिए डरावा जो आगे बढ़ना चाहे या पीछे रह जाना चाहे।

(38) हर व्यक्ति अनी कमाई के बदले रेहन है, (39) दाएँ बाज़ूवालों के सिवा, (40-41) जो जन्नतों में होंगे। वे अपराधियों से पूछेंगे,[9] (42) "तुम्हें क्या चीज़ नरक में ले गई?" (43) वे कहेंगे : "हम नमाज़ पढ़नेवालों में से न थे, (44) और मुहताज को खाना नहीं खिलाते थे, (45) और सत्य के विरुद्ध बातें बनानेवालों के साथ मिलकर हम भी बातें बनाने लगते थे, (46) और बदला दिए जाने के दिन को झूठ ठहराते थे, (47) यहाँ तक कि हमें उस विश्वसनीय चीज़ से मामला आ पड़ा।" (48) उस समय सिफ़ारिश करनेवालों की कोई सिफ़ारिश उनके किसी काम न आएगी।

(49) आख़िर इन लोगों को क्या हो गया है कि ये इस नसीहत से मुँह मोड़ रहे हैं, (50-51) मानो ये जंगली गधे हैं जो शेर से डरकर भाग पड़े हैं।[10] (52) बल्कि इनमें से तो हर एक यह चाहता है कि उसके नाम खुले पत्र भेजे जाएँ।[11] (53) कदापि नहीं, असल बात यह है कि ये आख़िरत (परलोक) का डर नहीं रखते, (54) कदापि नहीं[12] यह तो एक नसीहत है, (55) अब जिसका जी चाहे इससे शिक्षा प्राप्त कर ले, (56) और ये कोई शिक्षा प्राप्त न करेंगे यह और बात है कि अल्लाह ही ऐसा चाहे। वह इसका हक़दार है कि उसका डर रखा जाए और वह इस योग्य है कि (डर रखनेवालों को) क्षमा कर दे।



8. अर्थात् जिस प्रकार चाँद और रात और दिन अल्लाह की सामर्थ्य के महान चिह्न हैं उसी प्रकार जहन्नम (नरक) भी महान सामर्थ्य में से एक चीज़ है।
9. अर्थात् जन्नत में बैठे-बैठे वे जहन्नम के लोगों से बात करेंगे और यह प्रश्न करेंगे।
10. यह एक अरबी मुहावरा है। जंगली गधों की यह विशेषता होती है कि ख़तरा भाँपते ही वे इतना बदहवास होकर भागते हैं कि कोई दूसरा जानवर इस तरह नहीं भागता।
11. अर्थात् ये चाहते हैं कि अल्लाह ने यदि वास्तव में मुहम्मद (सल्ल०) को नबी नियुक्त किया है तो वह मक्का के एक-एक सरदार और एक-एक शैख़ के नाम एक पत्र लिखकर भेजे कि मुहम्मद (सल्ल०) हमारे नबी हैं, तुम उनका अनुसरण स्वीकार करो।
12. यानी उनका ऐसा कोई मुतालबा हरगिज़ पूरा न किया जाएगा।

75. अल-क़ियामह

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''अल-क़ियामाह'' (प्रलय, परलोक, क़ियामत) को इस सूरा का नाम दिया गया है और यह केवल नाम ही नहीं है, बल्कि विषय-वस्तु की दृष्टि से इस सूरा का शीर्षक भी है, क्योंकि इसकी वार्ता क़ियामत के सम्बन्ध में है।

अवतरणकाल

इसकी वार्ता में एक आन्तरिक साक्ष्य ऐसा माजूद है जिससे मालूम होता है कि यह बिलकुल आरम्भिक काल में अवतरित होनेवाली सूरतों में से है। (देखें, आयत 16 से 19 तक)

विषय और वार्ता

यहाँ से ईश्वरीय वाणी (क़ुरआन मजीद) के अन्त तक जो सूरते पाई जाती हैं, उनमें से अधिकतर अपने विषय और अपनी वर्णन-शैली की दृष्टि से उस कालखण्ड की अवतरित मालूम होती है, जब सूरा 74 (अल-मुद्दस्सिर) की 7 आरम्भिक आयतों के पश्चात् क़ुरआन के अवतरण का क्रम वर्षा की तरह आरम्भ हो गया था। इस आयत में परलोक का इनकार करनेवालों को सम्बोधित करके उनके एक-एक सन्देह और एक-एक आक्षेप का उत्तर दिया गया है; बड़े सुदृढ़ प्रमाणों के साथ क़ियामत (प्रलय और परलोक) की सम्भावना और प्रकटीकरण और अवश्यम्भाविता का प्रमाण दिया गया है और यह भी साफ़-साफ़ बता दिया गया है कि जो लोग भी आख़िरत का इनकार करते हैं उनके इनकार का वास्तविक कारण यह नहीं है कि उनकी बुद्धि इसे असम्भव समझती है, बल्कि इसका वास्तविक प्रेरक यह है कि उनके मन की इच्छाएँ इसे मानना नहीं चाहती. इसके साथ ही उन लोगों को सावधान किया गया है कि जिस समय के आने का तुम इनकार कर रहे हो वह आकर रहेगा, तुम्हारा सब किया-धरा तुम्हारे सामने लाकर रख दिया जाएगा, और वास्तव में तो अपना कर्मपत्र देखने से भी पहले तुममें से हर व्यक्ति को स्वयं मालूम होगा कि वह दुनिया में क्या करके आया है।

⊖ ⊖ ⊖

75. सूरा अल-क़ियामह

(मक्का में उतरी–आयतें 40)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) नहीं,[1] मैं क़सम खाता हूँ क़ियामत के दिन की,[2] (2) और नहीं, मैं क़सम खाता हूँ मलामत करनेवाली आत्मा (नफ़्स) की,[3] (3) क्या इनसान यह समझ रहा है कि हम उसकी हड्डियों को एकत्र न कर सकेंगे? (4) क्यो नहीं? हम तो उसकी उँगलियों की पोर-पोर तक ठीक बना देने की सामर्थ्य रखते हैं। (5) मगर इनसान चाहता यह है कि आगे भी बुरे कर्म करता रहे।[4] (6) पूछता है, ''आख़िर कब आना है वह क़ियामत का दिन?'' (7) फिर जब दीदे पथरा जाएँगे (8) और चाँद प्रकाशहीन हो जाएगा (9) और चाँद-सूरज मिलकर एक कर दिए जाएँगे (10) उस समय यही इनसान कहेगा, ''कहाँ भागकर जाऊँ?'' (11) हरगिज़ नहीं, वहाँ पनाह लेने की कोई जगह न होगी, (12) उस दिन तेरे रब ही के साने जाकर ठहरना होगा। (13) उस दिन इनसान को उसका सब अगला-पिछला किया-कराया बता दिया जाएगा। (14) बल्कि इनसान ख़ुद ही अपने आपको ख़ूब जानता है (15) चाहे वह कितने ही उज्र पेश करे[5]—(16) ऐ नबी,[6] इस प्रकाशना को जल्दी-जल्दी याद करने के लिए अपनी ज़बान को हरकत न दो, (17) इसको याद करा देना और पढ़वा देना हमारे ज़िम्मे है, (18) अतः जब हम

---

1. वार्ता का आरंभ 'नहीं' से करना ख़ुद इस बात को सिद्ध करता है कि पहले से कोई बात चल रही थी जिसके खण्डन में यह सूरा अवतरित हुई है। अतः यहाँ 'नहीं' कहने का अर्थ यह है कि जो कुछ तुम समझ रहे हो वह सही नहीं है, मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि वास्तविक बात यह है।
2. क़ियामत के आने पर खुद क़ियामत की क़सम इसलिए खाई गई कि उसका आना यक़ीनी है। पूरी विश्व-व्यवस्था गवाही दे रही है कि यह व्यवस्था न अनादिकालिक है, न शाश्वत। एक समय अनस्तित्व से अस्तित्व में आई है और एक समय अवश्य समाप्त होकर रहेगी।
3. अर्थात् अन्तरात्मा की जो इनसान को बुराई पर मलामत करती है और जिसका इनसान में मौजूद होना यह गवाही देता है कि इनसान अपने कर्मों के लिए उत्तरदायी है।
4. अर्थात् क़ियामत के इनकार का वास्तविक कारण यह है कि न कोई ऐसा बौद्धिक एवं ज्ञान सम्बन्धी प्रमाण जिसके कारण आदमी यह कह सकता हो कि क़ियामत हरगिज़ घटित न होगी या उसका घटित होना असंभव है।

इसे पढ़ रहे हों उस समय तुम इसके पठन को ध्यान से सुनते रहो, (19) फिर इसका अर्थ समझा देना भी हमारे ही ज़िम्मे है—(20) हरगिज़ नहीं,[7] वास्तविक बात यह है कि तुम लोग जल्दी प्राप्त होनेवाली चीज़ (अर्थात् दुनिया) से प्रेम रखते हो (21) और आख़िरत को छोड़ देते हो। (22) उस दिन कुछ चेहरे तरो-ताज़ा होंगे, (23) अपने रब की ओर देख रहे होंगे। (24) और कुछ चेहरे उदास होंगे (25) और समझ रहे होंगे कि उनके साथ कमरतोड़ व्यवहार होनेवाला है। (26) हरगिज़ नहीं,[8] जब प्राण कंठ तक पहुँच जाएँगे, (27) और कहा जाएगा कि है कोई झाड़-फूँक करनेवाला, (28) और इनसान समझ लेगा कि यह दुनिया से जुदाई का समय है, (29) और पिंडली से पिंडली जुड़ जाएगी, (30) वह दिन होगा तेरे रब की ओर प्रस्थान का।

(31) मगर उसने न सच माना और न नमाज़ पढ़ी, (32) बल्कि झुठलाया और पलट गया, (33) फिर अकड़ता हुआ अपने घरवालों की ओर चल दिया। (34) यह नीति तेरे ही लिए उचित है और तुझ ही को शोभा देती है। (35) हाँ, यह नीति तेरे ही लिए उचित है और तुझ ही को शोभा देती है।

5. अर्थात् आदमी का कर्मपत्र उसके सामने रखने का उद्देश्य वास्तव में यह नहीं होगा कि अपराधी को उसका अपराध बताया जाए, बल्कि ऐसा करना तो इस कारण ज़रूरी होगा कि न्याय की अपेक्षाएँ न्यायालय के सामने अपराध का प्रमाण प्रस्तुत किए बिना पूरी नहीं होतीं। नहीं तो हर इनसान ख़ूब जानता है कि वह ख़ुद क्या है।
6. यहाँ से लेकर "फिर इसका अर्थ समझा देना भी हमारे ही ज़िम्मे है" तक पूरा कथन एक संविष्ट वाक्य है जो वार्ताक्रम को बीच में तोड़कर नबी (सल्ल॰) को सम्बोधित करके कहा गया है। जिबरील (अलै॰) जब यह सूरा नबी (सल्ल॰) को सुना रहे थे उस समय आप इस आशंका से कि मैं कहीं भूल न जाऊँ इसको ज़बान से दोहराने की कोशिश कर रहे थे।
7. यहाँ से वार्ताक्रम फिर उसी विषय के साथ जुड़ जाता है जो बीच के संविष्ट वाक्य से पहले चला आ रहा था। हरगिज़ नहीं का अर्थ यह है कि तुम लोगों के आख़िरत के इनकार का वास्तविक कारण यह नहीं है कि तुम जगत्-स्रष्टा को क़ियामत के घटित होने और मौत के बाद दोबारा ज़िन्दा कर देने में असमर्थ समझते हो, बल्कि वास्तविक कारण यह है।
8. इस 'हरगिज़ नहीं' का सम्बन्ध उसी वार्ताक्रम से है जो ऊपर से चला आ रहा है, अर्थात् तुम्हारा यह ख़याल ग़लत है कि तुम्हें मरकर मिट जाना है और अपने रब के पास वापस जाना नहीं है।

(36) क्या इनसान ने यह समझ रखा है कि वह यूँ ही आज़ाद[9] छोड़ दिया जाएगा? (37) क्या वह एक तुच्छ पानी का वीर्य न था जो (माँ के गर्भाशय में) टपकाया जाता है? (38) फिर वह एक लोथड़ा बना, फिर अल्लाह ने उसका शरीर बनाया और उसके अंग ठीक किए, (39) फिर उससे मर्द और औरत की दो क़िस्में बनाई। (40) क्या उसे इसकी सामर्थ्य प्राप्त नहीं है कि मरनेवालों को फिर से ज़िन्दा कर दे?

● ● ●

9. मूल में शब्द 'सुदा' इस्तेमाल हुआ है। अरबी भाषा में 'इबिलुन सुदा' उस ऊँट के लिए बोलते हैं जो यूँ ही छूटा फिर रहा हो, जिधर चाहे चरता फिरे, कोई उसकी निगरानी करनेवाला न हो। इसी अर्थ में हम अपनी भाषा में 'बेनकेल का ऊँट शब्द बोलते हैं।

76. अद-दह्र

नाम

इस सूरा का नाम ''अद-दह्र' (काल) भी है और ''अल-इनसान'' (इनसान) भी। दोनों नाम पहली ही आयत ''क्या इनसान पर अनन्त काल का एक ऐसा समय भी बीता है'' हे उद्धृत है।

अवतरणकाल

अधिकतर टीकाकार इसको मक्की ठहराते है, किनुत् कुछ अन्य टीकाकारों ने पूरी सूरा को मदनी कहा है और कुछ लोगों का कथन यह है कि सूरा है तो मक्की, किन्तु आयत 8 से 10 तक मदीना में अवतरित हुई हैं। जहाँ तक कि सूरा की वार्ताओं और वर्णन-शैली का सम्बन्ध है, मदनी सूरतों की वार्ताओं और वर्णन-शैली से अधिक भिन्न है, बल्कि उसपर विचार करने से साफ़ महसूस होता है कि यह न केवल मक्की है, बल्कि मक्का मुअज़्ज़मा के भी उस कालखण्ड में अवतरित हुई है जो सूरा 74 (अल-मुद्दस्सिर) की आरम्भिक 7 आयतों के बाद शुरू हुआ था।

विषय और वार्ता

इस सूरा का विषय मनुष्य को संसार में उसकी वास्तविक हैसियत से अवगत कराना है और यह बताना है कि यदि वह अपनी इस हैसियत को ठीक-ठीक समझकर कृतज्ञता की नीति ग्रहण करे तो उसका परिणाम क्या होगा और कुफ़्र (अकृतज्ञता) के मार्ग पर चले तो उसे किस परिणाम का सामना करना होगा। इसमें सबसे पहले मनुष्य को याद दिलाया गया है कि एक समय ऐसा था, जब वह कुछ न था। फिर एक मिश्रित वीर्य से उसका हीन-सा प्रारम्भ किया गया, जो आगे चलकर इस धरती पर सर्वश्रेष्ठ प्राणी बना। इसके बाद मनुष्य को सावधान किया गया कि हम (तुझे) संसार में रखकर तेरी परीक्षा लेना चाहते हैं। इसलिए दूसरे सृष्ट जीवों के विपरीत तुझे विवेकवान और श्रवण-शक्तिवाला बनाया गया और तेरे सामने कृतज्ञता और अकृतज्ञता के दोनों मार्ग खोलकर रख दिए गए, ताकि यहाँ कार्य करने का जो समय तुझे दिया गया है उसमें तू दिखा दे कि इस परीक्षा में तू कृतज्ञ बन्दा बनकर निकला है या अकृतज्ञ (काफ़िर) बन्दा बनकर। फिर केवल एक आयत में दो-टूक तरीक़े से बता दिया गया है कि जो इस परीक्षा से अकृतज्ञ (काफ़िर) बनकर निकलेंगे उन्हें परलोक में किस परिणाम का सामना करना पड़ेगा। इसके बाद आयत 5 से 22 तक निरन्तर उन सुख-सामग्रियों का विस्तृत वर्णन है जिनसे वे लोग अपने रब के यहाँ अनुग्रहीत होंगे, जिन्होंने यहाँ बन्दगी का हक़

अदा किया है। इन आयतों में केवल उनके उत्तम प्रतिदानों को बताने पर बस नहीं किया गया है, बल्कि संक्षेप में यह भी बता दिया गया है कि उनके वे कौन-कौन-से कर्म हैं जिनके कारण वे इस प्रतिदान के अधिकारी होंगे। इसके बाद आयत 23 से सूरा के अनत तक अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को सम्बोधित करके तीन बातें कही गई हैं :

एक यह कि वास्तव में यह हम ही हैं जो इस क़ुरआन को थोड़ा-थोड़ा करके उनपर अवतरित कर रहे हैं, और इसका उद्देश्य नबी (सल्ल॰) को नहीं, बल्कि काफ़िरों को सावधान करना है कि यह क़ुरआन मुहम्मद (सल्ल॰) स्वयं अपने मन से नहीं गढ़ रहे हैं, बल्कि इसके अवतरित करनेवाले ''हम'' हैं और हमारी तत्त्वदर्शिता ही को वह अपेक्षित है कि इसे एक बार में नहीं, बल्कि थोड़ा-थोड़ा करके अवतरित करें।

दूसरी बात यह कि धैर्य के साथ पैग़म्बरी के अपने कर्तव्य को पूरा करते चले जाओ और कभी इन दुष्कर्मी और सत्य को नकारनेवाले लोगों में से किसी के भी दबाव में न आओ।

तीसरी बात यह कि रात-दिन अल्लाह को याद करो; नमाज़ पढ़ो और रातें अल्लाह की उपासना में गुज़ारो, क्योंकि यही वह चीज़ है जिससे कुफ़्र (अधर्म) के अतिक्रमण के मुक़ाबले में अल्लाह की ओर बुलानेवालों को सुदृढ़ता प्राप्त होती है। फिर एक वाक्य में काफ़िरों की ग़लत नीति का वास्तविक कारण बताया गया है कि वे परलोक को भूलकर संसार पर मोहित हो गए हैं, और दूसरे वाक्य में उनको सचेत किया गया है कि तुम स्वयं नहीं बन गए हो, हमने तुम्हें बनाया है और यह बात हर समय हमारी सामर्थ्य में है कि जो कुछ हम तुम्हारे साथ करना चाहें, कर सकते हैं। अन्त में वार्ता इसपर समाप्त की गई है कि यह एक उपदेश-वचन है। अब जिसका जी चाहे इसे स्वीकार करके अपने प्रभु का मार्ग अपना ले। किन्तु दुनिया में मनुष्य की चाहत पूरी नहीं हो सकती, जब तक अल्लाह न चाहे, और अल्लाह की चाहत अन्धाधुन्ध नहीं है। वह जो कुछ भी चाहता है अपने ज्ञान और अपनी तत्त्वदर्शिता के आधार पर चाहता है। इस ज्ञान और तत्त्वदर्शिता के आधार पर जिसे वह अपनी दयालुता का पात्र समझता है, उसे अपनी दयालुता में प्रविष्ट कर लेता है और जिसे वह ज़ालिम पाता है उसके लिए दुखदायिनी यातना की व्यवस्था उसने कर रखी है।



76. सूरा अद-दह्र

(मक्का में उतरी–आयतें 31)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क्या इनसान पर अनन्त काल का एक ऐसा समय भी बीता है जब वह कोई उल्लेखनीय वस्तु न था?[1] (2) हमने इनसान को एक मिश्रित वीर्य से पैदा किया ताकि उसकी परीक्षा लें और इस उद्देश्य के लिए हमने उसे सुनने और देखनेवाला बनाया।[2] (3) हमने उसे मार्ग दिखा दिया, चाहे कृतज्ञता दिखानेवाला बने ा इनकार करनेवाला।[3]

(4) इनकार करनेवालों के लिए हमने ज़ंजीरें और तौक़ और भड़कती हुई आग तैयार कर रखी है।

(5) नेक लोग (जन्नत में) पेय के ऐसे जाम पिएँगे जिनमें कपूर-जल का मिश्रण होगा, (6) यह एक बहता स्रोत होगा जिसके पानी के साथ अल्लाह के बन्दे पेय पिएँगे और जहाँ चाहेंगे आसानी के साथ उसकी शाखाएँ निकाल लेंगे। (7) ये वे लोग होंगे जो (दुनिया में) नज़्र[4] पूरी करते हैं, और उस दिन से डरते हैं जिसकी आफ़त हर ओर फैली हुई होगी, (8) और अल्लाह के प्रेम में मुहताज और अनाथ और क़ैदी को खाना खिलाते हैं, (9) (और उनसे कहते हैं कि) "हम तुम्हें सिर्फ़ अल्लाह के लिए खिला रहे हैं, हम तुमसे न कोई बदला चाहते हैं न शुक्रिया, (10) हमें तो अपने रब से उस दिन के अज़ाब का डर लगा हुआ है जो सख़्त मुसीबत का अत्यन्त लम्बा दिन होगा। (11) अतः अल्लाह तआला उन्हें उस दिन की बुराई से बचा लेगा और उन्हें ताज़गी और आनन्द प्रदान करेगा (12) और उनके सब्र[5] के बदले में उन्हें जन्नत और रेशमी वस्त्र प्रदान करेगा। (13) वहाँ वे ऊँची मसनदों पर तकिए लगाए बैठे होंगे। न उन्हें धूप की गर्मी सताएगी न जाड़े की ठंड। (14) जन्नत की छाँव उनपर झुकी हुई छाया कर रही होगी, और उसके फल हर समय उनके बस में होंगे (कि जिस तरह चाहें उन्हें तोड़ लें)। (15) उनके आगे चाँदी के बरतन[6] और शीशे के प्याले गर्दिश कराए जा रहे होंगे, शीशे भी वे जो चाँदी के क़िस्म के होंगे[7] (16) और उनको (जन्नत के प्रबन्धकों ने) ठीक अन्दाज़े के अनुसार भरा होगा। (17) उनको वहाँ ऐसे पेय के प्याले पिलाए जाएँगे जिसमें सोंठ का मिश्रण होगा,[8] (18) यह जन्नत का एक स्रोत होगा जिसे सल्सबील कहा जाता है। (19) उनकी सेवा के लिए ऐसे लड़के दौड़ते फिर रहे होंगे जो हमेशा लड़के ही रहेंगे। तुम उन्हें देखो तो समझो कि मोती हैं जो बिखेर दिए गए हैं। (20) वहाँ जिधर भी तुम निगाह डालोगे नेमतें ही नेमतें और एक बड़े राज्य की सामग्री तुम्हें दिखाई देगी। (21) उनके ऊपर बारीक रेशम के हरे वस्त्र और अतलस और दीबा के कपड़े होंगे, उनको चाँदी के कंगन पहनाए जाएँगे,[9] और उनका रब उनको अत्यन्त पवित्र पेय पिलाएगा। (22) यह है तुम्हारा बदला और तुम्हारी कारगुज़ारी क़द्र के योग्य ठहरी है।

1. इसका उद्देश्य सवाल नहीं है बल्कि इनसान से यह बात स्वीकार करानी है कि हाँ, उसपर ऐसा एकसमय गुज़र चुका है और इससे बढ़कर उसे यह सोचने पर भी मजबूर करना है कि अगर पहले वह अस्तित्वहीन स्थिति से अस्तित्व में लाया जा चुका है तो उसका दोबारा पैदा होना क्यों असंभव हो।
2. अर्थात् उसे चेतनायुक्त और समझ-बूझवाला बनाया।
3. अर्थात् इनकार और कृतज्ञता का अधिकार उसे देते हुए यह बता दिया कि इनकार का मार्ग कौन-सा है और कृतज्ञता का कौन-सा?
4. नज़्र का अर्थ है ईश्वर से यह प्रतिज्ञा करनी कि इनसान उसकी प्रसन्नता के लिए अनिवार्य कर्तव्य से ज़्यादा अमुक कार्य करेगा।

5. सब्र का शब्द यहाँ इस अर्थ में इस्तेमाल किया गया है कि ईमान लाने के बाद वे मरते दम तक अल्लाह के आदेशों का पालन करते रहे और उसकी अवज्ञा से बचते रहे।
6. सूरा 43 ज़ुख़रुफ़, आयत 71 में कहा गया है कि उनके आगे सोने के बरतन गर्दिश कराए जा रहे होंगे। इससे मालूम हुआ कि कभी कहाँ सोने के बरतन प्रयोग होंगे और कभी चाँदी के।
7. अर्थात् वह होगी तो चाँदी मगर शीशे की तरह अत्यन्त साफ़ होगी।
8. अरबवाले चूँकि शराब के साथ सोंठ मिले हुए पानी के मिश्रण को पसन्द करते थे, इसलिए कहा गया कि यहाँ उनको वह पेय पिलाया जाएगा जिसमें सोंठ का मिश्रण होगा।
9. सूरा 22 (हज्ज), आयत 23, और सूरा 35 (फ़ातिर), आयत 33 में बयान हुआ है कि उन्हें वहाँ सोने के कंगन पहनाए जाएँगे। इससे मालूम हुआ कि अपनी इच्छा और पसन्द के अनुसार जब वे चाहेंगे सोने के कंगन पहनेंगे, जब चाहेंगे चाँदी के कंगन पहन लेंगे, और जब चाहेंगे दोनों को-मिलाकर इस्तेमाल करेंगे।
10. यहाँ सम्बोधन देखने में नबी (सल्ल०) से है, लेकिन वास्तव में जवाब इनकार करनेवालों की एक आपत्ति का दिया जा रहा है। वे कहते थे कि मुहम्मद (सल्ल०) यह क़ुरआन ख़ुद सोच-सोचकर बना रहे हैं, वरना अल्लाह की ओर से कोई आदेश आता तो इकट्ठा एक ही बार आ जाता।

(23) ऐ नबी, हमने ही तुमपर यह क़ुरआन थोड़ा-थोड़ा करके उतारा है,[10] (24) अतः तुम अपने रब के हुक्म पर सब्र[11] करो, और इनमें से किसी दुराचारी और सत्य का इनकार करनेवाले की बात न मानो। (25) अपने रब का नाम सुबह और शाम याद करो, (26) रात को भी उसके सामने सजदा करते रहो, और रात के लम्बे समयों में उसकी तसबीह (गुणगान) करते रहो।[12] (27) ये लोग तो जल्दी प्राप्त होनेवाली चीज़ (दुनिया) से प्रेम रखते हैं और आगे जो भारी दिन आनेवाला है उसकी उपेक्षा कर देते हैं। (28) हम ही ने इनको पैदा किया है और इनके जोड़-बन्द मज़बूत किए हैं, और हम जब चाहें इनके रूपों को बदलकर रख दें। (29) यह एक नसीहत है, अब जिसका जी चाहे अपने रब की ओर जाने का मार्ग अपना ले। (30) और तुम्हारे चाहने से कुछ नहीं होता जब तक अल्लाह न चाहे। यक़ीनन अल्लाह बड़ा ज्ञाता और तत्त्वदर्शी है, (31) अपनी दयालुता में जिसको चाहता है दाख़िल करता है, और ज़ालिमों के लिए उसने दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है।

● ● ●

11. अर्थात् तुम्हारे रब ने जिस महान् कार्य पर तुम्हें नियुक्त किया है उसकी कठिनाइयों और परेशानियों पर सब्र करो। जो कुछ भी तुमपर बीत जाए उसे साहस के साथ सहन करते चले जाओ और जमे हुए पाँव लड़खड़ाने न दो।

12. जब अल्लाह की याद का आदेश समय-निर्धारण के साथ दिया जाता है तो इससे मुराद नमाज़ होती है। इस आयत में सबसे पहले कहा ''वज़कुरिस-म रब्बि-क बुक-रतौं व असीला'' (अपने रब का नाम सुबह और शाम याद करते रहो) बुक्रह अरबी भाषा में सुबह को कहते हैं और असील का शब्द दिन ढलने (ज़वाल) के समय से सूर्यास्त तक के लिए प्रयोग किया जाता है जिसमें 'ज़ुहर' और 'अस्र' के समय आ जाते हैं। फिर कहा ''व मिनल्लैलि फ़सजुद लहू'' (रात को भी उसके सामने सजदा करते रहो)। रात का समय सूर्यास्त के बाद आरंभ हो जाता है, इसलिए रात को सजदा करने के आदेश में 'मग़रिब' और 'इशा' दोनों समयों की नमाज़ें शामिल हो जाती हैं। इसके बाद यह इरशाद कि रात के लम्बे समयों में उसकी तसबीह करते रहो 'तहज्जुद' की नमाज़ की ओर साफ़ संकेत करता है।

77. अल-मुर्सलात

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''अल-मुर्सलात'' (क़सम है उनकी जो भेजी जाती हैं) को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इस सूरा का पूरा विषय ज़ाहिर कर रहा है कि यह मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल में अवतरित हुई है।

विषय और वार्ता

इसका विषय क़ियामत और आख़िरत (प्रलय और परलोक) की पुष्टि और उन परिणामों से लोगों को सावधान करना है जो इन तथ्यों के इनकार और स्वीकार से अन्ततः सामने आएँगे। पहली सात आतयों में हवाओं की (आश्चर्यजनक एवं युक्तिपूर्ण) व्यवस्था को इस वास्तविकता पर गवाह ठहराया गया है कि क़ुरआन और मुहम्मद (सल्ल॰) जिस क़ियामत के आने की ख़बर दे रहे हैं, वह अवश्य ही घटित होकर रहेगी। मक्कावाले बार-बार कहते थे कि जिस क़ियामत से हमें डरा रहे हो, उसे लाकर दिखाओ, तब हम उसे मानेंगे। आयत 8 से 15 तक उनकी इस माँग का उल्लेख किए बिना इसका उत्तर दिया गया है कि वह कोई खेल या तमाशा तो नहीं है कि जब कोई मसख़रा उसे दिखाने की माँग करे तो उसी समय वह तुरन्त दिखा दिया जाए। वह तो सम्पूर्ण मानव-जाति और उसके सभी व्यक्तियों के मुक़द्दमे के फ़ैसले का दिन है। उसके लिए अल्लाह ने विशेष समय निश्चित कर रखा है। उसी वक़्त पर वह आएगा, और जब आएगा तो (इन इनकार करनेवालों के लिए विनाश का सन्देश ही सिद्ध होगा।) आयत 16 से 28 तक निरन्तर क़ियामत और आख़िरत के घटित होने और उसकी अवश्यम्भाविता के प्रमाण दिए गए हैं। उनमें बताया गया है कि मनुष्य का अपना इतिहास, उसका अपना जन्म और जिस धरती पर वह जीवन व्यतीत कर रहा है उसकी अपनी बनावट गवाही दे रही है कि क़ियामत का आना और परलोक का स्तापित होना सम्भव भी है और अल्लाह की तत्त्वदर्शिता को अपेक्षित भी। इसके बाद आयत 28 से 40 तक आख़िरत के इनकार करनेवालों का और 41 से 45 तक उन लोगों के परिणाम का उल्लेख किया गया है जिन्होंने उसपर ईमान लाकर दुनिया में अपना परलोक संवारने की कोशिश की है। अन्त में आख़िरत को न माननेवालों और ईश्वर की

दासता से मुँह मोड़नेवालों को सावधान किया गया है कि संसार के अल्पकालीन जीवन में जो कुछ मज़े उड़ाने हैं, उड़ा लो। अन्ततः तुम्हारा परिणाम अत्यन्त विनाशकारी होगा। और बात इसपर समाप्त की गई है कि इस क़ुरआन से भी जो व्यक्ति मार्गदर्शन न पाए, उसे फिर संसार में किसी चज़ से मार्गदर्शन प्राप्त नहीं हो सकता।



77. सूरा अल-मुर्सलात

(मक्का में उतरी–आयतें 50)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है उन (हवाओं) की जो एक के बाद एक भेजी जाती हैं, (2) फिर तूफ़ानी चाल से चलती हैं (3) और (बादलों को) उठाकर फैलती हैं, (4) फिर (उनको) फाड़कर अलग करती हैं, (5) फिर (दिलों में अल्लाह की) याद डालती हैं (6) उज्र के रूप में या चेतावनी के रूप मे,[1] (7) जिस चीज़ का तुमसे वादा किया जा रहा है वह ज़रूर घटित होनेवाली है।[2]

(8) जब सितारे माँद पड़ जाएँगे, (9) और आसमान फाड़ दिया जाएगा, (10) और पहाड़ धुनक डाले जाएँगे, (11) और रसूलों की उपस्थिति का समय आ पहुँचेगा[3] (उस दिन वह चीज़ घटित हो जाएगी)। (12) किस दिन के लिए यह काम उठा रखा गआ है? (13) फ़ैसले के दिन के लिए। (14) और तुम्हें क्या ख़बर कि वह फ़ैसले का दिन क्या है? (15) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए।

(16) क्या हमने अगलों को तबाह नहीं किया? (17) फिर उन्हीं के पीछे हम बादवालों को चलता करेंगे। (18) अपराधियों के साथ हम यही कुछ किया करते हैं। (19) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए।[4]

---

1. अर्थात् कभी तो उनके आगमन के रुकने और अकालका ख़तरा पैदा होने से दिल नर्म होते हैं और लोग अल्लाह से तौबा और माफ़ी माँगने लगते हैं। कभी उनकी दयारूपी वर्षा लाने पर लोग अल्लाह के आगे कृतज्ञता दिखलाते हैं। और कभी उनकी तूफ़ानी सख़्ती दिलों में भय पैदा करती है और तबाही के डर से लोग अल्लाह की ओर पलटते हैं।
2. अर्थात् हवाओं का यह प्रबन्ध इस बात की गवाही देता है कि एक समय क़ियामत ज़रूर घटित होगी। हवा यद्यपि प्राणियों के जीवन के लिए एक महत्त्वपूर्ण साधन है मगर अल्लाह जब चाहे उसे तबाही का साधन बना सकता है और बना देता है।
3. क़ुरआन मजीद में विभिन्न स्थानों पर यह बात बयान की गई है कि हश्र के मैदान में जब मानव जाति का मुक़दमा पेश होगा तो प्रत्येक क़ौम के रसूल को गवाही के लिए पेश किया जाएगा ताकि वह इस बात की गवाही दे कि उसने अल्लाह का सन्देश लोगों तक पहुँचा दिया था।

(25) क्या हमने ज़मीन को समेटकर रखनेवाली नहीं बनाया, (26) ज़िन्दों के लिए भी और मुर्दों के लिए भी (27) और उसमें ऊँचे-ऊँचे पहाड़ जमाए, और तुम्हें माठा पानी पिलाया? (28) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए।[6]

(29) चलो[7] अब उसी चीज़ की ओर जिसे तुम झुठलाया करते थे। (30) चलो उस छाया की ओर जो तीन शाखाओंवाली है।[8] (31) न ठंडक पहुँचानेवाली और न आग की लपट से बचानेवाली। (32) वह आग महल जैसी बड़ी-बड़ी चिंगारियाँ फेंकेगी (33) (जो उछलती हुई यूँ महसूस होंगी) मानो वे पीले ऊँट हैं। (34) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए।

(35) यह वह दिन है जिसमें वे न कुछ बोलेंगे (36) और न उन्हें अवसर दिया जाएगा कि कोई उज्र पेश करें।[9] (37) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए।

(38) यह फ़ैसले का दिन है। हमने तुम्हें और तुमसे पहले गुज़रे हुए लोगों को

4. यहाँ यह वाक्य इस अर्थ में कहा गया है कि दुनिया में उनका जो परिणाम हुआ है या आनेवाले दिनों में होगा वह उनकी वास्तविक सज़ा नहीं है, बल्कि असली तबाही तो उनपर फ़ैसले के दिन उतरेगी।
5. अर्थात् मरने के बाद की ज़िन्दगी की संभावना का यह स्पष्ट प्रमाण सामने मौजूद होते हुए भी जो लोग आज उसको झूठला रहे हैं, उन्हें उस दिन तबाही का सामना करना होगा।
6. अर्थात् जो लोग ख़ुदा की सामर्थ्य और तत्त्वदर्शिता के ये चमत्कार देखकर भी आख़िरत के संभव और बुद्धिसंगत होने का इनकार कर रहे हैं वे अपनी इस भ्रांति में मग्न रहना चाहते हैं तो रहें। जिस दिन यह सब कुछ उनकी आशाओं के विपरीत घटित होगा उस दिन उनको पता चल जाएगा कि उन्होंने यह मूर्खता दिखाकर ख़ुद अपने लिए तबाही मोल ली है।
7. आख़िरत (परलोक) के प्रमाण देने के पश्चात् अब यह बताया जा रहा है कि जब वह घटित हो जाएगी तो वहाँ इन इनकार करनेवालों का क्या बुरा हाल होगा।
8. छाया से मुराद धुएँ की छाया है। और तीन शाखाओं का अर्थ यह है कि जब कोई बहुत बड़ा धुआँ उठता है तो ऊपर जाकर वह कई शाखाओं में विभाजित हो जाता है।
9. अर्थात् इनके विरुद्ध मुक़द्दमा ऐसी मज़बूत गवाहियों से साबित कर दिया जाएगा कि वे चकित रह जाएँगे और उनके लिए उज्र में कुछ कहने की गुंजाइश बाक़ी न रहेगी।

इकट्ठा कर दिया है। (39) अब अगर कोई चाल तुम चल सकते हो तो मेरे मुक़ाबले में चल देखो। (40) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए।

(41) डर रखनेवाले लोग आज छाँवों और स्रोतों में हैं (42) और जो फल वे चाहें (उनके लिए मौजूद है)। (43) खाओ और पियो मज़े से अपने उन कर्मों के बदले में जो तुम करते रहे हो। (44) हम नेक लोगों को ऐसा ही बदला देते हैं। (45) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए।

(46) खा लो[10] और मज़े कर लो थोड़े दिन। वास्तव में तुम लोग अपराधी हो। (47) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए। (48) जब उनसे कहा जाता है कि (अल्लाह के आगे) झुको तो नहीं झुकते। (49) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए। (50) अब इस (क़ुरआन) के बाद और कौन-सी वाणी ऐसी हो सकती है जिसपर ये ईमान लाएँ?

● ● ●

10. अब वार्ता समाप्त करते हुए न सिर्फ़ मक्का के काफ़िरों को बल्कि दुनिया के सभी काफ़िरों को सम्बोधित करते हुए ये शब्द कहे जा रहे हैं।

78. अन-नबा

नाम

दूसरी आयत के वाक्यांश ''उस बड़ी ख़बर (अन-नबा) के बारे में'' के शब्द 'अन-नबा' को इसका नाम दिया गया है और यह केवल नाम ही नहीं है, बल्कि विषय-वस्तु की दृष्टि से इस सूरा की वार्ताओं का शीर्षक भी है, क्योंकि 'नबा' (ख़बर) से अभिप्रेत क़ियामत और आख़िरत (प्रलय और परलोक) की ख़बर है और सूरा में सारी वार्ता इसी पर की गई है।

अवतरणकाल

सूरा 79 (क़ियामा) से सूरा 75 (नाज़िआत) तक सभी सूरतों की विषय-वस्तु मिलती-जुलती है और ये सब मक्का मुअज़्ज़मा के प्रारम्भिक काल की अवतरित मालूम होती हैं।

विषय और वार्ता

इसका विषय है क़ियामत और आख़िरत की पुष्टि और उसको मानने या न मानने के परिणामों से लोगों को सावधान करना। मक्का मुअज़्ज़मा में जब पहले-पहल अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने इस्लाम के प्रचार का आरम्भ किया तो वह तीन चीज़ों पर आधारित था : (एकेश्वरवाद, हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की पैग़म्बरी और आख़िरत। इन तीनों चीज़ों में से पहली दो चीज़े भी) यद्यपि मक्कावालों को अत्यन्त अप्रिय (और अग्राह्य थीं, किन्तु फिर भी स्पष्ट कारणों से ये उन) के लिए उतनी ज़्यादा उलझन का कारण न थीं, जितनी तीसरी बात थी। उसको जब उनके सामने पेश किया गया तो उन्होंने सबसे ज़्यादा उसी की हँसी उड़ाई। किन्तु इस्लाम की राह पर उनको लाने के लिए यह बिलकुल अवश्यम्भावी था कि आख़िरत की धारणा उनके मन में उतारी जाए, क्योंकि इस धारणा को स्वीकार किए बिना यह सम्भव ही न था कि सत्य और असत्य के मामले में उनके सोचने के ढंग में गंभीरता आ सकती। यही कारण है कि मक्का मुअज़्ज़मा के प्रारम्भिक काल की सूरतों में ज़्यादा ज़ोर आख़िरत की धारणा को दिलों में बिठाने पर दिया गया है। इस कालखण्ड की सूरतों में आख़िरत के विषय की इस पुनरावृत्ति का कारण भली-भाँति समझ लेने के पश्चात् अब इससूरा की वार्ताओं पर एक निगाह डाल लीजिए। इसमें सबसे पहले उन चर्चाओं और अटकलबाज़ियों की ओर संकेत किया गया है जो क़ियामत की ख़बर सुनकर मक्का की हर गली और बाज़ार और मक्कावालों की हर बैठक में हो रही थीं। इसके बाद इनकार करनेवालों से पूछा गया है कि क्या तुम्हें (धरती से लेकर आकाश तक का प्रकृति का कारख़ाना और उसमें पाई

जानेवाली हिकमतें और सोद्देश्यता दिखाई नहीं देतीं? इसकी) सारी चीज़ें क्या तुम्हें यही बता रही है कि जिस सर्वशक्तिमान ने इनको पैदा किया है उसकी शक्ति क़ियामत लाने और आख़िरत को अस्तित्व प्रदान करने में असमर्थ है? और इस पूरे कारख़ाने में जो पूर्ण श्रेणी की तत्त्वदर्शिता और बुद्धिमत्ता स्पष्टतः क्रियाशील है, क्या उसको देखते हुए तुम्हारी समझ में यह आता है कि इस कारख़ाने का एक-एक अंश और इसकी एक-एक क्रिया तो सोद्देश्य है, किन्तु ख़ुद पूरे-का-पूरा कारख़ाना निरुद्देश्य है? आख़िर इससे अधिक व्यर्थ और निस्सार बात क्या हो सकती है कि कारख़ाने में मनुष्य को पेशकार (foreman) के पद पर नियुक्त करके उसे यहाँ अत्यन्त विस्तृत अधिकार तो दे दिए जाएँ, किन्तु जब वह अपना कार्य पूरा करके यहाँ से विदा हो तो उसे यूँ ही छोड़ दिया जाए, न काम बनाने पर पेंशन और इनाम, न बिगाडने पर पूछ-गछ और दण्ड? यह प्रमाण देने के पश्चात् पूरे ज़ोर के साथ कहा गया है कि फ़ैसले का दिन निश्चय ही अपने निश्चित समय पर आकर रहेगा। तुम्हारा इनकार इस घटना को घटित होने से नहीं रोक सकता। इसके बाद आयत 21 से 30 तक बताया गया है कि जो लोग हिसाब-किताब की आशा नहीं रखते और जिन्होंने हमारी आयतों को झुठला दिया है, उनकी एक-एक करतूत गिन-गिनकर हमारे यहाँ लिखी हुई है और उनकी ख़बर लेने के लिए नरक घात लगाए हुए तैयार है। फिर आयत 31 से 36 तक उन लोगों का उत्तम प्रतिदान वर्णित हुआ है जिन्होंने अपने आपको ज़िम्मेदार और उत्तरदायी समझकर संसार में अपना परलोक सुधारने की पहले ही चिन्ता कर ली है। अन्त में ईश्वरीय न्यायालय का चित्रण किया गया है कि वहाँ किसी के अड़कर बैठ जाने और अपने आश्रितों को क्षमादान दिलाकर मुक्त करने का क्या प्रश्न, वहां तो कोई बिना अनुमति के ज़बान तक न खोल सकेगा, और अनुमति भी इस शर्त के साथ मिलेगी कि जिसके हक़ में सिफ़ारिश की अनुमति हो, केवल उसी के लिए सिफ़ारिश करे और सिफ़ारिश में कोई अनुचित बात न कहे। तदधिक सिफ़ारिश की अनुमति केवल उनके हक़ में दी जाएगी जिन्होंने दुनिया में सत्य-वचन को माना और केवल गुनहगार हैं। ईश्वर के विद्रोही और सत्य से इनकार करनेवाले किसी सिफ़ारिश के पात्र न होंगे। फिर वार्ता का समापन इस चेतावनी पर किया गया है कि जिस दिन के आने की ख़बर दी जा रही है उसका आना सत्य है; उसे दूर न समझो; वह निकट ही आ लगा है; (जो आज उसके इनकार पर तुला बैठा है, कल) वह पछता-पछताकर कहेगा कि क्या ही अच्छा होता कि मैं दुनिया में पैदा ही न होता। उस समय उसका यह एहसास उसी दुनिया के प्रति होगा, जिसपर आज वह लट्टू हो रहा है।



78. सूरा अन-नबा

(मक्का में उतरी–आयतें 40)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ये लोग किस चीज़ के बारे में पूछ-गछ कर रहे हैं? (2) क्या उस बड़ी ख़बर के बारे में (3) जिसके सम्बन्ध में ये विभिन्न बातें करने में लगे हुए हैं? (4) हरगिज़ नहीं,[1] जल्द ही इन्हें मालूम हो जाएगा। (5) हाँ, हरगिज़ नहीं, जल्द ही इन्हें मालूम हो जाएगा।

(6) क्या ऐसा नहीं है कि हमने ज़मीन को बिछौना बनाया, (7) और पहाड़ों को मेख़ों (खूँटों) की तरह गाड़ दिया, (8) और तुम्हें (मर्दों और औरतों के) जोड़ों के रूप में पैदा किया, (9) और तुम्हारी नींद को सुकून का साधन बनाया, (10) और रात को आवरण (लिबास) (11) और दिन को रोज़ी (जीविका) का समय बनाया (12) और तुम्हारे ऊपर सात मज़बूत आसमान स्थापित किए, (13) और एक बहुत ही रौशन और गर्म चिराग़[2] पैदा किया, (14) और बादलों से लगातार वर्षा की, (15,16) ताकि उसके द्वारा अनाज, सब्ज़ी और घने बाग़ उगाएँ। (17) बेशक, फ़ैसले का दिन एक नियत समय है। (18) जिस दिन सूर (नरसिंघा) में फूँक मार दी जाएगी, तुम दल के दल निकल आओगे। (19) और आसमान खोल दिया जाएगा, यहाँ तक कि वह दरवाज़े ही दरवाज़े बनकर रह जाएगा, (20) और पहाड़ चलाए जाएँगे, यहाँ तक कि वे मरीचिका हो जाएँगे।

(21) वास्तव में जहन्नम एक घात है,[3] (22) सरकशों का ठिकाना, (23)

1. अर्थात् आख़िरत के बारे में जो बातें ये लोग बना रहे हैं, सब ग़लत हैं। जो कुछ इन्होंने समझ रखा है वह हरगिज़ सही नहीं है।
2. मुराद है सूरज। मूल ग्रन्थ में 'वह्हाज' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ 'बहुत गर्म' भी है और 'बहुत ज़्यादा रौशन' भी, इसलिए अनुवाद में हमने दोनों अर्थ लिख दिए हैं।
3. घात उस जगह को कहते हैं जो शिकार को फाँसने के लिए बनाई जाती है, ताकि वह बेख़बरी की हालत में आए और अचानक उसमें फँस जाए। जहन्नम के लिए यह शब्द इसलिए इस्तेमाल किया गया है कि ख़ुदा के विद्रोही उससे निडर होकर दुनिया में यह समझते हुए उछल-कूद करते फिर रहे हैं कि ख़ुदा की दुनिया उनके लिए एक खुली चरागाह है और यहाँ किसी पकड़ का ख़तरा नहीं है, लेकिन जहन्नम उनके लिए एक ऐसी छिपी हुई घात है जिसमें वे सहसा फँसेंगे और बस फँसकर ही रह जाएँगे।

जिसमें वे मुद्दतों पड़े रहेंगे।[4] (24) उसके अन्दर किसी ठंडक और पीने योग्य किसी चीज़ का मज़ा वे न चखेंगे, (25) कुछ मिलेगा तो बस गर्म पानी और घावों का धोवन, (26) (उनकी करतूतों का) भरपूर बदला। (27) वे किसी हिसाब की उम्मीद न रखते थे (28) और हमारी आयतों को उन्होंने बिकुल झुठला दिया था, (29) और हाल यह था कि हमने हर चीज़ गिन-गिनकर लिख रखी थी। (30) अब चखो मज़ा, हम तुम्हारे लिए अज़ाब के सिवा किसी चीज़ में हरगिज़ बढ़ोतरी न करेंगे।

(31) यक़ीनन डर रखनेवालों के लिए सफलता का एक स्थान है, (32) बाग़ और अंगूर, (33) और नव यौवना बराबर उम्र की लड़कियाँ, (34) और छतकते हुए जाम। (35) वहाँ कोई बेहूदा और झूठी बात वे न सुनेंगे। (36) बदला और काफ़ी इनाम[5] तुम्हारे रब की ओर से, उस बड़े ही मेहरबान ख़ुदा की ओर से (37) जो ज़मीन और आसमानों और उनके बीच की प्रत्येक चीज़ का मालिक है, जिसके सामने किसी के बोलने का साहस और बल नहीं।[6]

(38) जिस दिन रुह[7] और फ़रिश्ते पंक्तिबद्ध खड़े होंगे, कोई न बोलेगा सिवाय उसके जिसे रहमान इजाज़त दे और जो ठीक बात कहे। (39) वह दिन सत्य है, अब जिसका जी चाहे अपने रब की ओर पलटने का मार्ग अपना ले।

(40) हमने तुम लोगों को उस अज़ाब से डरा दिया है जो क़रीब आ लगा है। जिस दिन आदमी वह सब कुछ देख लेगा जो उसके हाथों ने आगे भेजा है, और इनकार करनेवाला पुकार उठेगा कि काश, मैं मिट्टी होता!

●●●

4. मूल में 'अहक़ाब' शब्द का इस्तेमाल किया गया है, जिसका अर्थ है एक के बाद एक आनेवाले दीर्घ काल, ऐसे निरन्तर युग कि एक युग ख़त्म होते ही दूसरा युग शुरू हो जाए।
5. बदले के बाद काफ़ी इनाम देने का उल्लेख यह अर्थ रखता है कि उनको सिर्फ़ वही बदला न दिया जाएगा जिसके वे अपने अच्छे कर्मों के कारण योग्य होंगे, बल्कि उसपर और इनाम और काफ़ी इनाम भी उन्हें दिया जाएगा।
6. अर्थात् हश्र के मैदान में ईश्वरीय दरबार के रोब का यह हाल होगा कि ज़मीनवाले हों या आसमानवाले किसी की भी यह मजाल न होगी कि ख़ुद से अल्लाह के सामने ज़बान खोल सके, या अदालत के काम में हस्तक्षेप कर सके।
7. रूह से मुराद जिबरील (अलै॰) है और उनका जो उच्च पद अल्लाह के यहाँ है, उसके कारण फ़रिश्तों से अलग उनका उल्लेख किया गया है।

79. अन-नाज़िआत

नाम

सूरा का नाम सूरा के पहले ही शब्द "वन-नाज़िआत' (सौगन्ध है उनकी जो डूबकर खींचते हैं) से उद्धृत है।

अवतरणकाल

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) का बयान है कि वह सूरा, सूरा 'नबा' के पश्चात् अवतरित हुई है। इसका विषय भी यही बता रहा है कि यह आरम्भिक काल की सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

इसका विषय क़ियामत और मृत्यु के पश्चात् के जीवन की पुष्टि है और साथ-साथ इस बात की चेतावनी भी कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को झुठलाने का परिणाम क्या होता है। वार्ता के आरम्भ में मृत्यु के समय प्राण निकालनेवाले और अल्लाह के आदेश का बिना किसी विलम्ब के पालन करनेवाले और ईश्वरीय आदेशों के अनुसार सम्पूर्ण जगत् का प्रबन्ध करनेवाले फ़रिश्तों की क़सम खाकर यह विश्वास दिलाया गया है कि क़ियामत अवश्य घटित होगी और मृत्यु के पश्चात् दूसरा जीवन अवश्य सामने आकर रहेगा, क्योंकि जिन फ़रिश्तों के हाथों आज प्राण निकाले जाते हैं, उन्हीं के हाथों पुनः प्राण डाले भी जा सकते हैं और जो फ़रिश्ते आज अल्लाह के आदेश का पालन बिना किसी विलम्ब के करते और जगत् का प्रबन्ध करते हैं, वही फ़रिश्ते कल उसी ईश्वर के आदेश से जगत् की वर्तमान व्यवस्था को छिन्न-भिन्न भी कर सकते हैं और एक अन्य व्यवस्था की स्थापना भी कर सकते हैं। इसके बाद लोगों को बताया गया है कि यह कार्य जिसे तुम बिलकुल असम्भव समझते हो, अल्लाह के लिए सिरे से कोई कठिन कार्य नहीं है जिसके लिए किसी बड़ी तैयारी की आवश्यकता हो। बस एक झटका संसार की इस व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर देगा और एक दूसरा झटका इसके लिए बिलकुल पर्याप्त होगा कि दूसरे लोक में सहसा तुम अपने आपको जीवित उपस्थित पाओ। फिर हज़रत मूसा (अलै॰) और फ़िरऔन का क़िस्सा संक्षिप्त रूप से वर्णित करके लोगों को सावधान किया गया है कि रसूल को झुठलाने और चालबाज़ियों से उसको पराजित करने के प्रयास का क्या परिणाम फ़िरऔन देख चुका है। उससे शिक्षा ग्रहण करके इस नीति से बाज़ न आओगे तो वही परिणाम तुम्हें भी देखना पड़ेगा। तदन्तर आयत 27 से 33 तक परलोक और मृत्यु के बाद के जीवन के प्रमाणों का उल्लेख किया गया है।

आयत 34 से 41 तक में यह बताया गया है कि जब परलोक की स्थापना होगी तो मानव के सार्वकालिक और शाश्वत भविष्य का निर्णय इस आधार पर होगा कि किसने दुनिया में दासता की सीमा का अतिक्रमण करके अपने ईश्वर से विद्रोह किया और दुनिया ही के लाभों और आस्वादनों को उद्देश्य बना लिया और किसने अपने प्रभु के सामने खड़े होने का भय रखा और कौन मन की अवैध इच्छाओं को पूरा करने से बचकर रहा। अन्त में मक्का के काफ़िरों के इस प्रश्न का जवाब दिया गया है कि व क़ियामत आएगी कब? उत्तर में कहा गया है कि उसके समय का ज्ञान अल्लाह के सिवा किसी को नहीं है। रसूल का कार्य केवल सचेत कर देना है कि वह समय आएगा अवश्य। अब जिसका जी चाहे उसके आने का भय रखकर अपनी नीति ठीक ले और जिसका जी चाहे निर्भय होकर बे-नकेल के ऊँट की तरह चलता रहे। जब वह समय आ जाएगा तो वही लोग जो इस सांसारिक जीवन पर मर-मिटते थे और उसी को सब कुछ समझते थे, उन्हें यह आभास होगा कि संसार में वे मात्र घड़ी-भर ठहरे थे। उस समय उन्हें ज्ञात होगा कि इस अल्पकालिक जीवन के लिए उन्होंने किस तरह सदैव के लिए अपना भविष्य बिगाड़ लिया।



79. सूरा अन-नाज़िआत

(मक्का में उतरी–आयतें 46)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है उन (फ़रिश्तों) की जो डूबकर खींचते हैं, (2) और धीरे से निकाल ले जाते हैं,[1] (3) और (उन फ़रिश्तों की जो वायुमण्डल में) तेज़ी से तैरते फिरते हैं,[2] (4) फिर (आदेशानुपालन में) अग्रसरता दिखाते हैं,[3] (5) फिर (ईश्वरीय आदेशों के अनुसार) मामलों का इनतिज़ाम चलाते हैं।[4] (6) जिस दिन हिला मारेगा भूकम्प का झटका (7) और उसके पीछे एक और झटका पड़ेगा, (8) कुछ दिल होंगे जो उस दिन डर से काँप रहे होंगे, (9) निगाहें उनकी सहमी हुई होंगी।

(10) ये लोग कहते हैं, "क्या वास्तव में हम पलटाकर फिर वापस लाए जाएँगे? (11) क्या जब हम खोखली जीर्ण हड्डियाँ बन चुके होंगे?" (12) कहन लगे, "यह वापसी तो फिर बड़े घाटे की होगी।"[5] (13) हालाँकि यह बस इतना काम है कि एक ज़ोर की डाँट पड़ेगी (14) और अचानक ये खुले मैदान में मौजूद होंगे।

(15) क्या तुम्हें मूसा के क़िस्से की ख़बर पहुँची है? (16) जब उसके रब ने उसे तुवा की पवित्र घाटी में पुकारा था (17) कि "फ़िरऔन के पास जा, वह उद्दण्ड (सरकश) हो गया है, (18) और उससे कह, क्या तू इसके लिए तैयार है कि पवित्रता अपनाए (19) और मैं तेरे रब की ओर तेरा मार्गदर्शन करूँ तो (उसका) डर तेरे अन्दर पैदा हो?" (20) फिर मूसा ने (फ़िरऔन के पास जाकर) उसको बड़ी निशानी

1. इससे मुराद वे फ़रिश्ते हैं, जो मौत के समय इनसान की जान को उसके शरीर की गहराइयों तक उतरकर उसकी रग-रग से खींचकर निकालते हैं।
2. अर्थात् ईश्वरीय आदेशों के पालन करने में इस तरह गतिशील रहते हैं मानो वे वायुमण्डल में तैर रहे हों।
3. अग्रसरता दिखाने से मुराद यह है कि ईश्वरीय आदेश का इशारा पाते ही उनमें से हर एक उसके अनुपालन के लिए दौड़ पड़ता है।
4. ये विश्व-राज्य के वे कार्यकर्ता हैं जिनके हाथों दुनिया का सारा इनतिज़ाम अल्लाह तआला के आदेशानुसार चल रहा है।
5. अर्थात् जब उनको जवाब दिया गया कि हाँ ऐसा ही होगा तो वे मज़ाक़ के तौर पर आपस में एक-दूसरे से कहने लगे कि यारो, अगर वास्तव में हमें पलटकर दोबारा ज़िन्दगी की हालत में वापस आना पड़ा तब तो हम मारे गए।

दिखाई,[6] (21) मगर उसने झुठला दिया और न माना, (22) फिर चालबाज़ियाँ करने के लिए पलटा (23,24) और लोगों को इकट्ठा करके, उसने पुकारकर कहा, "मैं तुम्हारा सबसे बड़ा रब हूँ।" (25) आख़िरकार अल्लाह ने उसे परलोक (आख़िरत) और दुनिया के अज़ाब में पकड़ लिया। (26) वास्तव में इसमें बड़ी शिक्षा है हर उस व्यक्ति के लिए जो डरे।[7]

(27) क्या तुम लोगों को पैदा करना ज़्यादा मुश्किल काम है या आसमान को? अल्लाह ने उसको बनाया, (28) उसकी छत ख़ूब ऊँची उठाई, फिर उसका संतुलन स्थापित किया, (29) और उसकी रात ढाँकी और उसका दिन निकाला। (30) इसके बाद ज़मीन को उसने बिछाया, (31) उसके अन्दर से उसका पानी और चारा निकाला (32) और पहाड़ उसमें गाड़ दिए (33) ज़िन्दगी के सामान के रूप में तुम्हारे लिए और तुम्हारे चौपायों के लिए।

(34) फिर जब वह बड़ा कोलाहल[8] मचेगा, (35) जिस दिन इनसान अपना सब किया-धरा याद करेगा, (36) और हर देखनेवाले के सामने दोज़ख़ खोलकर रख दी जाएगी (37) तो जिसने सरकशी की थी, (38) और दुनिया की ज़िन्दगी को प्राथमिकता दी थी, (39) दोज़ख़ ही उसका ठिकाना होगी। (40) और जिसने अपने रब के सामने खड़े होने का डर रखा था और जी को बुरी इच्छाओं से रोके रखा था, (41) जन्नत उसका ठिकाना होगी।

(42) ये लोग तुमसे पूछते हैं कि "आख़िर वह घड़ी कब आकर ठहरेगी?" (43) तुम्हारा क्या काम कि उसका समय बताओ। (44) उसका ज्ञान तो अल्लाह पर समाप्त है। (45) तुम सिर्फ़ सावधान करनेवाले हो हर उस व्यक्ति को जो उससे डरे। (46) जिस दिन ये लोग उसे देख लेंगे तो इन्हें यूँ महसूस होगा कि (दुनिया में या मौत की हालत में) ये बस एक दिन के पिछले पहर या अगले पहर तक ठहरे हैं।

● ● ●

6. बड़ी निशानी से मुराद लाठी (असा) का अज़दहा (अजगर) बन जाना है, जिसका उल्लेख क़ुरआन मजीद में विभिन्न स्थानों पर किया गया है।
7. अर्थात् अल्लाह के रसूल को झुठलाने के उस परिणाम से डरे जो फ़िरऔन देख चुका है।
8. इससे मुराद है क़ियामत (पुनरुज्जीवन)।

८०. अ-ब-स

नाम

पहले ही शब्द ''अ-ब-स'' (त्यौरी चढ़ाई) को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

टीकाकारों और हदीस-शास्त्रियों ने एकमत होकर इस सूरा के अवतरण का कारण यह बताया है कि एक बार अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सभा में मक्का मुअज़्ज़मा के कुछ बड़े सरदार बैठे हुए थे और नबी (सल्ल॰) उन्हें इस्लाम को स्वीकार करने पर तैयार करने की कोशिश कर रहे थे। इतने में इब्ने उम्मे मकतूम (रज़ि॰) नामक एक नेत्रहीन व्यक्ति नबी (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुए और उन्होंने आप (सल्ल॰) से इस्लाम के सम्बन्ध में कुछ पूछना चाहा। नबी (सल्ल॰) को उनका यह हस्तक्षेप अप्रिय लगा और आपने उनसे बेरुख़ी बरती। इसपर अल्लाह की ओर से यह सूरा अवतरित हुई। इस ऐतिहासिक घटना से इस सूरा का अवतरणकाल आसानी से निश्चित हो जाता है। प्रथम यह कि यह बात सिद्ध है कि हज़रत इब्ने उम्मे मकतूम बिलकुल आरम्भिक काल के इस्लाम लानेवालों में से हैं। दूसरे यह कि हदीस के जिन उल्लेखों में यह घटना वर्णित हुई है उनमें से कुछ से मालूम होता है कि उस समय वे इस्लाम ला चुके थे और कुछ उल्लेखों से ज़ाहिर होता है कि इस्लाम की ओर उन्मुख हो चुके थे और सत्य की खोज में नबी (सल्ल॰) के पास आए थे। तीसरे यह कि नबी (सल्ल॰) की मजलिस में जो लोग उस समय बैठे थे, विभिन्न उल्लेखों में उनके नाम भी ज़ाहिर किए गए हैं। इस सूची में हम उतबह, शैबह, अबू जह्ल, उमैया बिन ख़लफ़ और उबई बिन ख़लफ़ जैसे इस्लाम के निकृष्ट बैरियों के नाम मिलते हैं। इससे मालूम होता है कि यह घटना उस समय घटित हुई थी जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के साथ इन लोगों का मेल-जोल अभी बाक़ी था और संघर्ष इतना भी नहीं बढ़ा था कि आपके यहाँ उनके आने-जाने और आपके साथ उनकी मुलाक़ातों का सिलसिला बन्द हो गया हो। ये सब बातें प्रमाणित करती हैं कि यह सूरा अत्यन्त आरम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

देखने में इस सूरा में नबी (सल्ल॰) पर रोष प्रकट किया गया है, किन्तु पूरी सूरा पर सामूहिक रूप से विचार करने पर मालूम होता है कि वास्तव में रोष क़ुरैश के काफ़िरों के उन सरदारों पर प्रकट किया गया है जो अपने अहंकार और हठधर्मी और सत्यता से लापरवाही के कारण अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के सत्यप्रचार को उपेक्षापूर्वक रद्द कर

रहे थे, और (जहाँ तक नबी (सल्ल॰) का सम्बन्ध है, आपको केवल प्रचार का सही तरीक़ा बताया गया है। आपने नेत्रहीन से बेरुख़ी की और क़ुरैश के सरदारों की ओर उन्मुख होने की उस समय जो नीति अपनाई थी उस) का प्रेरक सर्वथा शुचिता और निस्स्वार्थता और सत्य के आह्वान को प्रचारित एवं प्रसारित करने का भाव था न कि बड़े लोगों का सम्मान और छोटे लोगों की उपेक्षा का विचार। लेकिन अल्लाह ने आपको समझाया कि इस्लामी आह्वान का सही तरीक़ा यह नहीं है, बल्कि इस आह्वान के दृष्टिकोण से आपके ध्यान देने के वास्तविक पात्र वे लोग हैं जिनमें सत्य को स्वीकार करने की तत्परता पाई जाती हो, और आप और आपके उच्च आह्वान की प्रतिष्ठा से यह बात गिरी हुई है कि आप उसे उन अहंकारी लोगों के समक्ष रखें जो अपनी बड़ाई के घमंड में यह समझते हों कि उनको आपकी नहीं बल्कि आपको उनकी ज़रूरत है। यह सूरा के आरम्भ से आयत 16 तक का विषय है। तदन्तर आयत 17 से प्रत्यक्षतः रोष का रुख़ उन काफ़िरों की ओर फिर जाता है जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के आह्वान को रद्द कर रहे थे।



80. सूरा अ-ब-स

(मक्का में उतरी–आयतें 42)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) त्योरी चढ़ाई और विमुख हुआ (2) इस बात पर कि वह अन्धा उसके पास आ गया।[1] (3) तुम्हें क्या ख़बर, शायद वह सुधर जाए (4) या नसीहत पर ध्यान दे और नसीहत करना उसके लिए लाभदायक हो? (5) जो व्यक्ति बेपरवाही करता है (6) उसकी ओर तो तुम ध्यान देते हो, (7) हालाँकि अगर वह न सुधरे तो तुमपर उसकी क्या ज़िम्मदारी है? (8) और जो ख़ुद तुम्हारे पास दौड़ा आता है (9) और डर रहा होता है, (10) उससे तुम बेरुख़ी अपनाते हो। (11) हरगिज़ नहीं,[2] यह तो एक नसीहत है, (12) जिसका जी चाहे इसे क़बूल करे। (13) यह ऐसे पन्नों में अंकित है जो प्रतिष्ठित हैं, (14) उच्च कोटि के हैं, पवित्र हैं,[3] (15,16) सम्मानित और नेक कातिबों (लिपिकों) के हाथों मे रहते हैं।[4]

---

1. बाद के वाक्यों से मालूम होता है कि यह त्योरी चढ़ाने और विमुखता से काम लेनेवाले ख़ुद नबी (सल्ल०) थे। जिन नेत्रहीन (अंधे) का यहाँ उल्लेख किया गया है वे हज़रत इब्न उम्मे मकतूम (रज़ि०) थे जो हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) के फ़ूफीज़ाद भाई थे। नबी (सल्ल०) उस समय मक्का के काफ़िरों के बड़े-बड़े सरदारों को इस्लाम धर्म का आमंत्रण देने में व्यस्थ थे कि इतने में ये नेत्रहीन हाज़िर हुए और इन्होंने कुछ प्रश्न करने चाहे। नबी (सल्ल०) को इस अवसर पर इनका यह बाधा डालना अप्रिय लगा।
2. अर्थात् ऐसा हरगिज़ न करो। अल्लाह को भूले हुए और अपनी दुनिया की प्रतिष्ठा पर फूले हुए लोगों को अनुचित महत्त्व न दो। न इस्लाम की शिक्षा ऐसी चीज़ है कि जो इससे मुँह मोड़े उसके सामने विनयपूर्वक आग्रह किया जाए और न तुम्हारी यह शान है कि इन घमण्डी लोगों को इस्लाम की ओर लाने के लिए किसी ऐसे ढंग से कोशिस करो जिससे ये इस भ्रम में पड़ जाएँ कि तुम्हारा कोई स्वार्थ इनसे अटका हुआ है, ये मान लेंगे तो तुम्हारा सन्देश फैल सकेगा वरना नाकाम हो जाएगा। सत्य इनसे उतना ही बेपरवाह है जितना ये सत्य से बेपरवाह हैं।
3. अर्थात् हर तरह की मिलावटों से पाक है। इनमें विशुद्ध सत्य की शिक्षा प्रस्तुत की गई है। किसी प्रकार के असत्य और विकृत विचारों और सिद्धान्तों का उनमें समावेश नहीं हो सका है।

(17) फिटकार[5] हो इनसान पर, सत्य का कैसा सख़्त इनकार करनेवाला है यह। (18) किस चीज़ से अल्लाह ने इसे पैदा किया है? (19) वीर्य की एक बूँद से अल्लाह ने इसे पैदा किया, फिर इसका भाग्य नियत किया; (20) फिर इसके लिए ज़िन्दगी की राह को आसान किया; (21) फिर इसे मौत दी और क़ब्र में पहुँचाया। (22) फिर जब चाहे वह इसे दोबारा उठा खड़ा कर दे। (23) हरगिज़ नहीं, इसने वह कर्तव्य नहीं निभाया जिसका अल्लाह ने इसे आदेश दिया था। (24) फिर तनिक इनसान अपने भोजन को देखे। (25) हमने ख़ूब जल लुँढाया,[6] (26) फिर ज़मीन को अजीब तरह से फाड़ा, (27) फिर उसमें उगाए अनाज (28) और अंगूर और तरकारियाँ (29) और ज़ैतून और खजूरें (30) और घने बाग़ (3) और तरह-तरह के फल और चारे (32) तुम्हारे लिए और तुम्हारे मवेशियों के लिए जीवन-सामग्री के रूप में। (33) आख़िरकार जब वह कान बहरे कर देनेवाली आवाज़ ऊँची होगी[7] (34,35,36)—उस दिन आदमी अपने भाई और अपने माँ और अपने बाप और अपनी पत्नी और अपनी औलाद से भागेगा। (37) उनमें से हर व्यक्ति पर उस दिन ऐसा समय आ पड़ेगा कि उसे अपने सिवा किसी का होश न होगा। (38) कुछ चेहरे उस दिन दमक रहे होंगे, (39) प्रभुल्लित और प्रसन्न होंगे। (40) और कुछ चेहरों पर उस दिन ख़ाक उड़ रही होगी (41) और कलौस छाई हुई होगी। (42) यही काफ़िर (इनकार करनेवाले) और दुराचारी लोग होंगे।



---

4. इनसे मुराद वे फ़रिश्ते हैं जो क़ुरआन के इन पन्नों को अल्लाह के प्रत्यक्ष आदेशानुसार लिख रहे थे, उनकी रक्षा कर रहे थे और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) तक उन्हें ज्यों का त्यों पहुँचा रहे थे।
5. यहाँ से क्रोध का रुख़ सीधे तौर पर उन काफ़िरों की ओर फिरता है जो सत्य से बेपरवाही कर रहे थे। इससे पहले सूरा के आरंभ से आयत 16 तक सम्बोधन नबी (सल्ल०) से था और क्रोध अप्रत्यक्ष रूप से काफ़िरों पर किया जा रहा था। उसकी वर्णन-शैली यह थी कि ऐ नबी, एक सत्य की खोज करनेवाले को छोड़कर आप ये किन लोगों पर अपना ध्यान लगाए हुए हैं। ये तो सत्य-सन्देश की दृष्टि से बिलकुल तुच्छ और मूल्यहीन हैं। इनकी यह हैसियत नहीं हैं कि आप जैसा महान प्रतिष्ठि पैग़म्बर क़ुरआन जैसी उच्च कोटि की चीज़ को इनके आगे प्रस्तुत करे।
6. इससे मुराद वर्षा है।
7. मुराद है अन्तिम बार सूर (नरसिंघा) में फूँक मारे जाने की प्रलयंकारी आवाज़ जिसके तेज़ होते ही सारे मरे हुए इनसान जी उठेंगे।

81. अत-तकवीर

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''कुव्विरत'' (लपेट दिया जाएगा) से उद्धृत है। 'कुव्विरत' वास्तव में 'तकवीर' से बना भूतकालिक अकर्मकवाच्य है, जिसका अर्थ है 'लपेटी गई'। इस नाम से अभिप्रेत यह है कि वह सूरा जिसमें लपेटने का उल्लेख है।

अवतरणकाल

विषय और वर्णन-शैली से साफ़ आभासित होता है कि यह मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

इसके दो विषय है : एक आख़िरत और दूसरे रिसालत (पैग़म्बरी)। पहली 6 आयतों में क़ियामत के पहले चरण का उल्लेख किया गया है। फिर 7 आयतों में दूसरे चरण का उल्लेख है। आख़िरत के इस समग्र चित्रण के पश्चात् यह कहकर मनुष्य को सोचने के लिए छोड़ दिया गया है कि उस समय हर व्यक्ति को स्वयं ही मालूम हो जाएगा कि वह क्या लेकर आया है। तदन्तर रिसालत का विषय लिया गया है। इसमें मक्कावालों को कहा गया है कि मुहम्मद (सल्ल॰) जो कुछ तुम्हारे समक्षप्रस्तुत कर रहे हैं वह किसी दीवाने की 'बड़' है, न किसी शैतान का डाला हुआ वसवसा (बुरा विचार) है, बल्कि ईश्वर के भेजे हुए एक महान, प्रतिष्ठित और विश्वसनीय सन्देशवाहक का बयान है जिसे मुहम्मद (सल्ल॰) ने खुले आकाश के उच्च क्षितिज पर दिन के प्रकाश में अपनी आँखों से देखा है। इस शिक्षा से मुँह मोड़कर आख़िर तुम किधर चले जा रहे हो?

⊖ ⊖ ⊖

81. सूरा अत-तकवीर

(मक्का में उतरी–आयतें 29)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) जब सूरज लपेट दिया जाएगा,[1] (2) और जब तारे बिखर जाएँगे, (3) और जब पहाड़ चलाए जाएँगे, (4) और जब दस महीने की गाभिन ऊँटनियाँ अपने हाल पर छोड़ दी जाएँगी,[2] (5) और जब जंगली जानवर समेटकर इकट्ठे कर दिए जाएँगे, (6) और जब समुद्र भड़का दिए जाएँगे, (7) और जब प्राण (शरीरों से) जोड़ दिए जाएँगे,[3] (8) और जब ज़िन्दा गाड़ी हुई लड़की से पूछा जाएगा (9) कि वह किस क़ुसूर में मारी गई? (10) और जब कर्म-पत्र खोले जाएँगे, (11) और जब आसमान का परदा हटा दिया जाएगा, (12) और जब जहन्नम दहकाई जाएगी, (13) और जब जन्नत क़रीब ले आई जाएगी, (14) उस समय प्रत्येक व्यक्ति को मालूम हो जाएगा कि वह क्या लेकर आया है।

(15) अतः नहीं,[4] मैं क़सम खाता हूँ पलटनेवाले (16) और छुप जानेवाले तारों की, (17) और रात की जबकि वह विदा हुई (18) और सुबह की जबकि उसने साँस लिया, (19) यह वास्तव में एक प्रतिष्ठित पैग़म्बर (संदेशवाहक) का कथन है[5] (20) जो बड़ी शक्ति रखता है, (सिंहासनवाले के यहाँ उच्च पदवाला है, (21) वहाँ उसका आदेश माना जाता है,[6] वह विश्वास-पात्र है। (22) और (ऐ मक्कावालो) तुम्हारा साथी उन्मादी (मजनूँ) नहीं है,[7] (23) उसने उस पैग़म्बर को प्रत्यक्ष क्षितिज पर

1. अर्थात् यह प्रकाश जो सूरज से निकलकर दुनिया में फ़ैलता है वह उसी पर लपेट दिया जाएगा और उसका फैलना बन्द हो जाएगा।
2. अरबवालों के लिए उस ऊँटनी से ज़्यादा मूल्यवान धन और कोई न था जो बच्चा जनने के क़रीब हो. इस हालत में उसकी अधिक सुरक्षा और देख-भाल की जाती थी। ऐसी ऊँटनियों से लोगों का असावधान हो जाना मानो यहअर्थ रखता था कि उस समय कुछ ऐसी बड़ी मुसीबत लोगों पर पड़ेगी कि उन्हें अपने सबसे ज़्यादा प्रिय धन की सुरक्षा का भी ध्यान न रहेगा।
3. अर्थात् इनसान नए सिरे से उसी रह जिन्दा किए जाएँगे जिस तरह वे दुनिया में मरने से पहले शरीर और आत्मा के साथ ज़िन्दा थे।
4. अर्थात् तुम लोगों का यह गुामन सही नहीं है कि यह जो कुछ क़ुरआन में बयान किया जा रहा है यह किसी दीवाने की बड़ है या शैतानी वसवसा (भ्रम) है।

देखा है। (24) और वह परोक्ष (के इस ज्ञान को लोगों तक पहुँछाने) के मामले में कंजूस नहीं है। (25) और यह किसी धुतकारे हुए शैतान का कथन नहीं है। (26) फिर तुम लोग किधर चले जा रहे हो? (27) यह तो सारे जहानवालों के लिए एक नसीहत है, (28) तुममें से प्रत्येक उस व्यक्ति के लिए जो सीधे मार्ग पर चलना चाहता हो। (29) और तुम्हारे चाहने से कुछ नहीं होता जब तक सारे जहान का रब अल्लाह न चाहे।



5. इस जगह प्रतिष्ठित सन्देशवाहक (पैग़म्बर) से मुराद वह्य (प्रकाशना) लानेवाला फ़रिश्ता है जैसा कि आगे की आयतों से स्पष्टतः मालूम हो रहा है। और क़ुरआन को पैग़म्बर का कथन कहने का अर्थ यह नहीं है कि यह उस फ़रिश्ते की अपनी वाणी है, बल्कि ''पैग़म्बर का कथन'' के शब्द ख़ुद ही यह स्पष्ट कर रहे हैं कि यह उस सत्ता की वाणी है जिसने उसे पैग़म्बर बनाकर भेजा है।
6. अर्थात् वह फ़रिश्तों का अफ़सर (प्रधान) है, सारे फ़रिश्ते उसके आदेश के अन्तर्गत कार्य करते हैं।
7. साथी से मुराद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हैं।

82. अल-इनफ़ितार

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''इन फ़तरत'' से उद्धृत है। इसको क्रियार्थक संज्ञा 'इनफ़ितार' है, जिनका अर्थ होता है– 'फट जाना'। इस नाम का आशय यह है कि यह वह सूरा है जिसमें आसमान के फट जाने का उल्लेख आया है।

अवतरणकाल

इसका और सूरा 'तकवीर' का विषय एक ही है और एक-दूसरे से बहुत मिलता-जुलता है। इससे मालूम होता है कि दोनों पूरते लगभग एक ही समय में अवतरित हुई हैं।

विषय और वार्ता

इसका विषय आख़िरत (परलोक) है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) कहते है कि ''जो व्यक्ति चाहता हो कि क़ियामत के दिन को इस तरह देख ले, जैसे आँखों से देखा जाता है, तो वह सूरा 'तकवीर' और सूरा 'इनफ़ितार' और सूरा 'इनशिक़ाक़' को पढ़ ले।''

(हदीस : मुस्नद अहमद, तिरमिज़ी)

इसमें सबसे पहले क़ियामत के दिन का चित्रण किया गया है और यह बताया गया है कि जब वह सामने आ जाएगा तो हर व्यक्ति के समक्ष उसका किया-धरा सब आ जाएगा। इसके पश्चात् मनुष्य को एहसास दिलाया गया है कि जिस प्रभु ने तुझे अस्तित्व प्रदान किया और जिसकी कृपा और अनुग्रह के कारण आज तू सब प्राणियों से उत्तम शरीर और अंग लिए फिरता है, उसके विषय में यह धोखा तुझे कहाँ से लग गया है कि वह केवल अनुग्रहकर्ता ही है; न्याय करनेवाला नहीं है? फिर मानव को सावधान किया गया है कि तू किसी भ्रम में ग्रस्त न रह; तेरा पूरा कर्मपत्र तैयार किया जा रहा है। अन्त में पूरे ज़ोर के साथ कहा गया है कि निश्चय ही प्रतिदान दिवस आकर रहनेवाला है, जिसमें सत्कर्मी लोगों को जन्नत का सुख और आनन्द प्राप्त होगा और बुरे लोगों के हिस्से में नरक की यातना आएगी।



82. सूरा अल-इनफ़ितार

(मक्का में उतरी–आयतें 19)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) जब आसमान फट जाएगा, (2) और जब तारे बिखर जाएँगे, (3) और जब समुद्र फाड़ दिए जाएँगे, (4) और जब क़ब्रें खोल दी जाएँगी,[1] (5) उस समय प्रत्येक व्यक्ति को उसका अगला-पिछला सब किया-धरा मालूम हो जाएगा।

(6) ऐ इनसान, किस चीज़ ने तुझे अपने उस उदार रब की ओर से धोखे में डाल दिया (7) जिसने तुझे पैदा किया, तुझे नख-शिख से दुरुस्त किया, तुझे सन्तुलित बनाया, (8) और जिस रूप में चाहा तुझको जोड़कर तैयार किया? (9) हरगिज़ नहीं,[2] बल्कि (वास्तविक बात यह है कि) तुम लोग पुरस्कार और सज़ा को झुठलाते हो,[3] (10) हालाँकि तुमपर निगरानी करनेवाले नियुक्त हैं, (11) ऐसे प्रतिष्ठावान कातिब (लिपिक) (12) जो तुम्हारे प्रत्येक कर्म को जानते हैं।

(13) यक़ीनन नेक लोग मज़े में होंगे (14) और बेशक दुराचारी लोग जहन्नम (नरक) में जाएँगे, (15) बदला पाने के दिन वे उसमें प्रवेश करेंगे (16) और उससे हरगिज़ ग़ायब न हो सकेंगे। (17) और तुम क्या जानते हो कि वह बदले का दिन क्या है? (18) हाँ, तुम्हें क्या ख़बर कि वह बदले का दिन क्या है? (19) यह वह दिन है जब किसी व्यक्ति के लिए कुछ करना किसी के बस में न होगा, फ़ैसला उस दिन बिलकुल अल्लाह के अधिकार में होगा।



1. क़ब्रों के खोले जाने से मुराद लोगों का नए सिरे से ज़िन्दा करके उठाया जाना है।
2. अर्थात् कोई बुद्धिसंगत कारण इस धोखे में पड़ने का नहीं है।
3. अर्थात् वास्तव में जिस चीज़ ने तुम लोगों को धोखे में डाला है वह कोई बुद्धिसंगत प्रमाण नहीं है, बल्कि सिर्फ़ तुम्हारा यह मूर्खतापूर्ण विचार है कि दुनिया के इस कर्मक्षेत्र के पीछे बदला पाने का कोई घर नहीं है। इसी ग़लत और निराधार गुमान ने तुम्हें अल्लाह से ग़ाफ़िल, उसके न्याय से निर्भय, और अपनी नैतिक नीति में ग़ैर ज़िम्मेदार बना दिया है।

83. अल-मुतफ़्फ़िफ़ीन

नाम

पहली ही आयत ''तबाही है डंडी मारनेवालों (अल-मुतफ़्फ़िफ़ीन) के लिए'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसकी वर्णन-शैली और वार्ताओं से साफ़ मालूम होता है कि यह मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल में अवतरित हुई है जब मक्कावालों के मन-मस्तिष्क में परलोक की धारणा बिठाने के लिए निरन्तर सूरतें अवतरित हो रही थीं, और इसका अवतरण उस समय हुआ जब मक्कावालों ने सड़कों पर, बाज़ारों में और सभाओं में मुसलमानों पर व्यंग्य करने और उनको अपमानित करने का सिलसिला आरम्भ कर दिया था, किन्तु अन्याय और अनाचार और मार-पीट का दौर अभी शुरू नहीं हुआ था।

विषय और वार्ता

इसका विषय भी परलोक है। पहली 6 आयतों में उस सामान्य बेईमानी पर पकड़ की गई है जो कारोबारी लोगों में अधिकतर फैली हुई थी। समाज की अगणित ख़राबियों में से इस एक ख़राबी को, जिसकी बुराई से कोई इनकार नहीं कर सकता था, उदाहरणार्थ लेकर यह बताया गया है कि यह आख़िरत से असावधान रहने का अपरिहार्य परिणाम है। जब तक लोगों को यह एहसास न हो कि एक दिन ईश्वर के सामने पेश होना है और कौड़ी-कौड़ी का हिसाब देना है, उस समय तक यह सम्भव नहीं है कि वे अपने मालमों में पूर्णतः सत्यवादी हो सकें। इस तरह नैतिकता के साथ परलोक की धारणा का सम्बन्ध अत्यन्त प्रभावकारी और चित्ताकर्षक ढंग से स्पष्ट करने के पश्चात् आयत 7 से 17 तक बताया गया है कि दुष्कर्मी लोग परलोक में प्रचण्ड विनाश में ग्रस्त होंगे। फिर आयत 18 से 28 तक सत्कर्मी लोगों के उत्तम परिणाम का उल्लेख किया गया है। अन्त में ईमानवालों को सान्त्वना दी गई है और इसके साथ काफ़िरों को सावधान किया गया है कि आज जो लोग ईमानवालों का अपमान कर रहे हैं क़ियामत के दिन यही अपराधी लोग अपनी इस चाल का बहुत बुरा परिणाम देखेंगे और यही ईमान लानेवाले इन अपराधियों का बुरा परिणाम देखकर अपनी आँखें ठंडी करेंगे।



83. सूरा अल-मुतफ़्फ़िफ़ीन

(मक्का में उतरी–आयतें 36)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) तबाही है डंडी मारनेवालों के लिए (2) जिनका हाल यह है कि जब लोगों से लेते हैं तो पूरा-पूरा लेते हैं, (3) और जब उनको नापकर या तौलकर देते हैं तो उन्हें घाटा देते हैं। (4,5) क्या ये लोग नहीं समझते कि एक बड़े दिन[1] ये उठाकर लाए जानेवाले हैं? (6) उस दिन जबकि सब लोग सारे जहान के रब के सामने खड़े होंगे।

(7) हरगिज़ नहीं[2] यक़ीनन दुराचारियों का कर्म-पत्र बन्दीगृह के दफ़्तर में है। (8) और तुम्हें क्या मालूम कि क्या है वह बन्दीगृह का दफ़्तर? (9) यह एक किताब है लिखी हुई। (10) तबाही है उस दिन झुठलानेवालों के लिए (11) जो बदले के दिन को झुठलाते हैं। (12) और उसे नहीं झुठलाता, मगर प्रत्येक वह व्यक्ति जो सीमा का उल्लंघन करनेवाला दुष्कर्मी है। (13) उसे जब हमारी आयतें सुनाई जाती हैं[3] तो कहता है, "ये तो पहले के समयों की कहानियाँ हैं।" (14) हरगिज़ नहीं, बल्कि वास्तव में उन लोगों के दिलों पर उनके दुष्कर्मों का ज़ंग चढ़ गया है।[4] (15) हरगिज़ नहीं, यक़ीनन उस दिन ये अपने रब के दर्शन से वंचित रखे जाएँगे। (16) फिर ये जहन्नम में जा पड़ेंगे (17) फिर उनसे कहा जाएगा कि यह वही चीज़ है जिसे तुम झुठलाया करते थे।

(18) हरगिज़ नहीं[5] बेशक नेक आदमियों का कर्म-पत्र उच्च श्रेणी के लोगों के दफ़्तर में है। (19) और तुम्हें क्या ख़बर कि क्या है वह उच्च श्रेणी के लोगों का दफ़्तर?

1. क़ियामत के दिन को बड़ा दिन इसलिए कहा गया है कि उसमें सारे इनसानों और जिन्नों का हिसाब ईश्वरीय न्यायालय में एक ही समय में लिया जाएगा और अज़ाब और प्रतिदान के महत्त्वपूर्ण फ़ैसले किए जाएँगे।
2. अर्थात् इन लोगों का यह गुमान ग़लत है कि दुनिया में इन अपराधों के करने के बाद ये यूँ ही छूट जाएँगे।
3. अर्थात् वे आयतें जिनमें बदला पाने के दिन की सूचना दी गई है।
4. अर्थात् पुरस्कार और सज़ा को झूठी कहानी घोषित करने का कोई बुद्धिसंगत कारण नहीं है, लेकिन जिस कारण ये लोग इसे झूठी कहानी कहते हैं वह यह है कि जिन गुनाहों को ये करते रहे हैं, उनका ज़ंग (मोरचा) इनके दिलों पर पूरी तरह चढ़ गया है, इसलिए जो बात सर्वथा बुद्धिसंगत है वह इनको कहानी नज़र आती है।

(20) एक लिखी हुई किताब, (21) जिसकी देख-रेख सामीप्य प्राप्त फ़रिश्ते करते हैं। (22) बेशक नेक लोग बड़े मज़े में होंगे, (23) ऊँची मसनदों पर बैठे देख रहे होंगे, (24) उनके चेहरों पर तुम्हें सुख-सम्पन्नता की प्रफुल्लता का आभास होगा। (25) उनको उत्कृष्ट एवं उत्तम मुहरबन्द शराब पलिाई जाएगी, (26) जिसपर मुश्क की मुहर लगी होगी। जो लोग दूसरों पर बाज़ी ले जाना चाहते हों, वे इस चीज़ को प्राप्त करने में बाज़ी ले जाने का प्रयास करें। (27) उस शराब में तसनीम[6] का मिश्रण होगा, (28) यह एकस्रोत है जिसके पानी के साथ सामीप्य प्राप्त लोग शराब पिएँगे।

(29) अपराधी लोग दुनिया में ईमान लानेवालों की हँसी उड़ाते थे। (30) जब उनके पास से गुज़रते तो आँखें मार-मारकर उनकी ओर इशारा करते थे, (31) अपने घरवालों की ओर पलटते तो मज़े लेते हुए पलटते थे, (32) और जब उन्हें देखते तो कहते थे कि ये बहके हुए लोग हैं, (33) हालाँकि वे उनपर निगरानी करनेवाले बनाकर नहीं भेजे गए थे. (34) आज ईमान लानेवाले इनकार करनेवालों पर हँस रहे हैं, (35) मसनदों पर बैठे हुए उनका हाल देख रहे हैं, (36) मिल गया ना इनका करनेवालों को उनकी हरकतों का बदला जो वे किया करते थे?[7]



5. अर्तात् इन लोगों का यह ख़याल ग़लत है कि कोई पुरस्कार और सज़ा मिलनेवाली नहीं है।
6. तसनीम का अर्थ है ऊँचाई, और किसी स्रोत को तसनीम कहने का आशय यह है कि वह ऊँचाई से बहता हुआ नीचे आ रहा हो।
7. इस वाक्य में एक सूक्ष्य व्यंग्य है। चूँकि वे काफ़िर पुण्यकर्म समझकर ईमानवालों को तंग करते थे, इसलिए कहा गया कि आख़िरत (परलोक) में ईमानवाले जन्नत में मज़े से बैठे हुए जहन्नम में जलनेवाले इन काफ़िरों का हाल देखेंगे और अपने मन में कहेंगे कि ख़ूब फल उन्हें इनके कर्मों का मिल गया।

84. अल-इनशिक़ाक़

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''इनशक़्क़त'' (फट जाएगा) से उद्धृत है। 'इनशिक़ाक़' क्रियार्थक संज्ञा है, जिसका अर्थ है– 'फट जाना' और इन नाम का आशय यह है कि यह वह सूरा है जिसमें आकाश के फटने का उल्लेख आया है।

अवतरणकाल

यह भी मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है। इसकी वार्ता का आन्तरिक साक्ष्य यह बता रहा है कि अभी अत्याचार और अनाचार का दौर शुरू नहीं हुआ था, अलबत्ता क़ुरआन के आमंत्रण को मक्का में खुले तौर पर झुठलाया जा रहा था और लोग यह मानने से इनकार कर रहे थे कि कभी क़ियमत घटित होगी और उन्हें अपने ईश्वर के समक्ष उत्तरदाता के रूप में उपस्थित होना पड़ेगा।

विषय और वार्ता

इसका विषय क़ियामत और आख़िरत (प्रलय और परलोक) है। पहली पाँच आयतों में यही नहीं कि क़ियामत की कैफ़ियत का वर्णन किया गयै है, बल्कि निश्चित रूप से इसके घटित होने का प्रमाण भी दे दिया गया है। तदन्तर आयत 6 से 10 तक बताया गया है कि मनुष्य को चाहे इसका पता हो या न हो, प्रत्येक स्थिति में वह उस मंज़िल की ओर बाध्यतः चला जा रहा है, जहाँ उसे अपने प्रभु के आगे उपस्थित होना है। फिर सभी मनुष्य दो भागों में विभक्त हो जाएँगे। एक, वे जिनका कर्मपत्र दाएँ हाथ में दिया जाएगा और बिना इसके कि उनसे कठिन हिसाब लिया जाए, उन्हें क्षमा कर दिया जाएगा। दूसरे, वे जिनका कर्मपत्र पीठ के पीछे से दिया जाएगा। वे चाहेंगे कि किसी तरह मौत आ जाए, किन्तु मरने के बजाय नरक में झोंक दिए जाएँगे। उनका यह परिणाम इसलिए होगा कि वे दुनिया में इस भ्रम में मग्न रहे कि कभी ईश्रर के सामने उत्तरदाता के रूप में हाज़िर होना नहीं है। हालांकि उनका सांसारिक जीवन से पारलौकिक प्रतिदान अथवा दण्ड तक क्रमागत पहुँचना उतना ही विश्वसनीय है, जितना सूर्यास्त के पश्चात् सांध्य लालिमा का प्रकट होना, दिवस के पश्चात् रात्रि का आगमन और उनमें मनुष्यों और पशुओं का अपने-अपने बसेरों की तरफ़ पलटना और दूज के चाँद से बढ़ते-बढ़ते पूर्णिमा का चाँद बन जाना बिलकुल निश्चित है। अन्त में उन क़फ़िरों को दुखदायी दण्ड की सूचना दे दी गई है जो क़ुरआन को सुनकर ईश्वर के आगे झुकने के बजाय उल्टे झुठलाते हैं और उन लोगों को अपरिमित प्रतिदान की सूचना दी गई है जो ईमान लाकर अच्छे कर्म करते हैं।



84. सूरा अल-इनशिक़ाक़

(मक्का में उतरी–आयतें 25)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) जब आसमान फट जाएगा (2) और अपने रब के आदेश का पालन करेगा और उसके लिए हक़ यही है (कि अपने रब का आदेश माने)। (3) और जब ज़मीन फैला दी जाएगी[1] (4) और जो कुछ उसके अन्दर है उसे बाहर फेककर ख़ाली हो जाएगी[2] (5) और अपने रब के आदेश का पालन करेगी और उसके लिए हक़ यही है (कि उसका पालन करे)। (6) ऐ इनसान, तू ज़बरदस्ती खिंचते हुए अपने रब की ओर चला जा रहा है और उससे मिलनेवाला है। (7) फिर जिसका कर्मपत्र उसके सीधे हाथ में दिया गया, (8) उससे हलका हिसाब लिया जाएगा[3] (9) और वह अपने लोगों की ओर ख़ुश-ख़ुश पलटेगा।[4] (10) रहा वह व्यक्ति, जिसका कर्मपत्र उसकी पीठ के पीछे दिया जाएगा[5] (11) तो वह मौत को पुकारेगा (12) और भड़कती हुई आग में जा पड़ेगा। (13) वह अपने घरवालों में मगन था। (14) उसने समझा था कि उसे कभी पलटना नहीं है। (15) पलटना कैसे न था, उसका रब उसकी करतूत देख रहा था।

(16) अतः नहीं, मैं क़सम खाता हूँ शाम की लालिमा की, (17) और रात की और जो कुछ वह समेट लेती है (18) और चाँद की जबकि वह पूर्णमास का चाँद हो

1. ज़मीन के फैला दिए जाने का अर्थ यह है कि समुद्र और दरिया पाट दिए जाएँगे, पहाड़ चूर्ण-विचूर्ण करके बिखेर दिए जाएँगे, और ज़मीन की सारी ऊँच-नीच बराबर करके उसे एक समतल मैदान बना दिया जाएगा।
2. अर्थात् जितने मरे हुए इनसान उसके अन्दर पड़े होंगे सबको निकालकर वह बाहर डाल देगी, और इसी तरह उनके कर्मों की जो गवाहियाँ उसके अन्दर मौजूद होंगी वे सब भी पूरी की पूरी बाहर आ जाएँगी, कोई चीज़ भी उसमें छिपी और दबी हुई न रह जाएगी।
3. अर्थात् उससे सख़्ती के साथ हिसाब न लिया जाएगा। उससे यह नहीं पूछा जाएगा कि अमुक कार्य तुने क्यों किए थे और तेरे पास उन कर्मों के लिए क्या उज्र है? उसकी भलाइयों के साथ उसकी बुराइयाँ भी उसके कर्मपत्र में मौजूद ज़रूर होंगी, मगर बस यह देखकर कि भलाइयों का पलड़ा बुराइयों से भारी है, उसके क़ुसूरों से निगाह हटा ली जाएगी और उसे माफ़ कर दिया जाएगा।
4. अपने लोगों से मुराद आदमी के वे परिवार के लोग, नातेदार और साथी हैं, जिनको उसी की तरह माफ़ किया गया होगा।

जाता है। (19) तुमको ज़रूर क्रमशः (दरजा-ब-दरजा) एक हालत से दूसरी हालत की ओर गुज़रते चले जाना है।[6] (20) फिर इन लोगों को क्या हो गया है कि ये ईमान नहीं लाते (21) और जब क़ुरआन इनके सामने पढ़ा जाता है तो सजदा नहीं करते? (22) बल्कि ये इनकार करनेवाले तो उलटा झुठलाते हैं, (23) हालाँकि जो कुछ ये (अपने कर्मपत्र में) जमा कर रहे हैं, अल्लाह उसे ख़ूब जानता है।[7] (24) अतः इन्हें दर्दनाक अज़ाब की ख़ुशख़बरी दे दो। (25) अलबत्ता, जो लोग ईमान ले आए हैं और जिन्होंने अच्छे कर्म किए हैं उनके लिए कभी समाप्त न होनेवाला बदला है।

● ● ●

5. सूरा 69 अल-हाक़्क़ा में कहा गया है कि जिसका कर्मपत्र उसके बाएँ हाथ में दिया जाएगा। और यहाँ कहा गया है कि उसकी पीठ के पीछे दिया जाएगा। संभवतः इसकी शक्ल यह होगी कि सारे लोगों के सामने बाएँ हाथ में कर्मपत्र लेते हुए वह लज्जित होगा, इसलिए वह अपना हाथ पीछे कर लेगा। मगर कर्मपत्र तो उसे पकड़ाया ही जाएगा, चाहे वह हाथ आगे बढ़ाकर ले या पीठ के पीछे छिपा ले।
6. अर्थात् तुम्हें एक हालत पर नहीं रहना है, बल्कि जवानी से बुढ़ापा, बुढ़ापे से मौत, मौत से बरज़ख़ (मौत और दोबारा ज़िन्दगी के बीच के अन्तराल की अवस्था), बरज़ख से दोबारा ज़िन्दगी, दोबारा ज़िन्दगी से हश्र का मैदान (लोगों के इकट्ठा होने का मैदान), फिर हिसाब-किताब और फिर पुरस्कार और सज़ा की अगणित मंज़िलों से अनिवार्यतः तुमको गुज़रना होगा। इस बात पर तीन चीज़ों की क़सम खाई गई है : (1) सूरज के डूबने के बाद शाम की लालिमा, (2) दिन के बाद रात का अँधेरा, और उसमें उन बहुत-से इनसानों और जानवरों का सिमट आना जो दिन के समय ज़मीन में फैले रहते हैं, (3) और चाँद का बारीकी से क्रमशः बढ़कर पूर्णिमा का चाँद बनना। ये मानो कुछ वे चीज़ें हैं जो इस बात की स्पष्ट रूप से गवाही दे रही हैं कि जिस विश्व में इनसान रहता है उसके अनदर कहीं ठहराव नहीं है, एक निरन्तर परिवर्तन और क्रमशः बदलाव हर ओर पाया जाता है। अतः काफ़िरों (अवज्ञाकारियों) का यह ख़याल सही नहीं है कि मौत की अन्तिम हिचकी के साथ मामला ख़त्म हो जाएगा।
7. दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि अपने सीनों में जो कुफ़्र (इनकार) और द्वेष और सत्य के प्रति बैर और बुरे इरादों और विकृत्त संकल्पो की गन्दगी इन्होंने भर रखी है अल्लाह उसे ख़ूब जानता है।

85. अल-बुरूज

नाम

पहली ही आयत के शब्द "अल-बुरूज" (मज़बूत क़िलों) को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसकी वार्ता स्वयं यह बता रही है कि यह सूरा मक्का मुअज़्ज़मा के उस कालखण्ड में अवतरीत हुई है जब अत्याचार और अनाचार प्रचण्ड रूप धारण कर चुका था और मक्का के काफ़िर मुसलमानों को कड़ी से कड़ी यातना देकर ईमान से फेर देने की कोशिश कर रहे थे।

विषय और वार्ता

इसका विषय काफ़िरों को अत्याचार और अनाचार के बुरे परिणाम से सावधान करना है, जो वे ईमानवालों के साथ कर रहे थे और ईमानवालों को यह सान्त्वना देना है कि यदि वे इन अत्याचारों के मुक़ाबले में जमे रहेंगे तो उनको इसका उत्तम प्रतिदान प्राप्त होगा और सर्वोच्च अल्लाह अत्याचारियों से बदला लेगा। इस सिलसिले में सबसे पहले असहाबुल-उख़दूद (गड़हेवालों) का क़िस्सा सुनाया गया है, जिन्होंने ईमान लानेवालों को आग से भरे गढ़ों में फेंक-फेंककर जला दिया था। इस क़िस्से के रूप में कुछ बातें ईमानवालों और काफ़िरों के मन में बिठाई गईहै। एक, यह कि जिस तरह असहाबुल-उख़दूद (गड़हेवाले) ईश्वर की फटकार और उसकी मार के भागी हुए, उसी तर मक्का के सरदार भी उसके भागी बन रहे हैं। दूसरे, यहकि जिस तरह ईमान लानेरालों ने उस समय आग के गढ़ों में गिरकर प्राण दे देना स्वीकार कर लिया था और ईमान से फिरना स्वीकार नहीं किया था, उसी तर अब भी ईमानवालों को चाहिए कि प्रत्येक कठिन से कठिन यातना भुगत लें, किन्तु ईमान की राह से न हटें। तीसरे, यह कि जिस ईश्वर को मानने पर काफ़िर क्रुद्ध होते और ईमानवाले आग्रह करते हैं, वह ईश्वर सबपर प्रभावी है, अपने आप में स्वयं प्रशंसा का अधिकारी है और वह दोनों गिरोहों की दशा को देख रहा है। इसलिए यह बात निश्चित है कि (इसमें से हरेक अपने किए का बदला पाकर रहे।) फिर काफ़िरों को सावधान किया गया है कि ईश्वर की पकड़ बड़ी कड़ी है। अगर तुम अपने जत्थे की शक्ति के दम्भ में पड़े हो, तो तुमसे बड़े जत्थे फ़िरऔन और समूद के पास थे; उनकी सेनाओं का जो परिणाम हुआ है उससे शिक्षा ग्रहण करो। ईश्वरीय शक्ति तुम्हें इस तरह अपने घेरे में लिए हुए है कि उससे तुम निकल नहीं सकते और क़ुरआन, जिसके झुठलाने पर तुम तुले हुए हो, उसकी हर बात अटल है; यह उस सुरक्षित पट्टिका (लौहे-महफ़ूज) में अंकित है, जिसका लिखा किसी के बदलने से नहीं बदल सकता।



85. सूरा अल-बुरूज

(मक्का में उतरी–आयतें 22)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है मज़बूत क़िलोंवाले आसमान की,[1] (2) और उस दिन की जिसका वादा किया गया है (अर्थात् क़ियामत) (3) और देखनेवाले की और देखी जानेवाली चीज़ की[2] (4) कि मारे गए गड़हेवाले। (5) (उस गड़हेवाले) जिसमें ख़ूब भड़कते हुए ईंधन की आग थी। (6) जबकि वे उस गड़हे के किनारे पर बैठे हुए थे। (7) और जो कुछ वे ईमान लानेवालों के साथ कर रहे थे उसे देख रहे थे।[3] (8) और उन ईमानवालों से उनकी दुश्मनी इसके सिवा किसी कारण से न थी कि वे उस अल्लाह पर ईमान ले आए थे जो प्रभुत्वशाली और अपने आप में ख़ुद प्रशंसनीय है, (9) जो आसमानों और ज़मीन की सल्तनत का मालिक है, और वह अल्लाह सब कुछ देख रहा है।

(10) जिन लोगों ने ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों पर ज़ुल्म किया और फिर उससे तौबा न की, यक़ीनन उनके लिए जहन्नम का अज़ाब है और उनके लिए जलाए जाने की सज़ा है। (11) जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, यक़ीनन उनके लिए जन्नत के बाग़ हैं जिनके नीचे नहरें बहती होंगी, यह है बड़ी सफलता।

(12) वास्तव में तुम्हारे रब की पकड़ बड़ी सख़्त है। (13) वही पहली बार बैदा करता है और वही दोबारा पैदा करेगा। (14) और वह माफ़ करनेवाला है, प्रेम करनेवाला है, (15) सिंहासन का मालिक है, गौरववाला, महान है, (16) और जो कुछ चाहे कर डालनेवाला है। (17) क्या तुम्हें सेनाओं की ख़बर पहुँची है? (18) फ़िरऔन और समूद (की सेनाओं) की? (19) मगर जिन्होंने इनकार किया है, वे

1. इनसे मुराद आसमान के विशालतम तारे और ग्रह हैं।
2. देखनेवाले से मुराद हर वह व्यक्ति है जो क़ियामत के दिन हाज़िर होगा और देखी जानेवाली चीज़ से मुराद ख़ुद क़ियामत है जिसकी भयंकर घटनाओं को सब देखनेवाले देखेंगे।
3. गड़हेवालों से मुराद वे लोग हैं जिन्होंने बड़े-बड़े गड़हों में आग भड़काकर ईमान लानेवाले लोगों को उनमें फेंका और अपनी आँखों से उनके जलने का तमाशा देखा था। मारे गए का अर्थ यह है कि उनपर अल्लाह की लानत पड़ी और वे अज़ाब के भागी हो गए।

झुठलाने में लगे हुए हैं, (20) हालाँकि अल्लाह ने उनको घेरे में ले रखा है। (21) (उनके झुठलाने से इस क़ुरआन का कुछ नहीं बिगड़ता) बल्कि यह क़ुरआन उच्च कोटि का है (22) उस पट्टिका में (अंकित है) जो सुरक्षित है।[4]

● ● ●

4. मतलब यह है कि इस क़ुरआन का लिखा अटल है, अल्लाह की उस सुरक्षित पट्टिका में अंकित है जिसमें कोई हेर-फेर नहीं हो सकता।

86. अत-तारिक़

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''अत-तारिक़'' (रात को प्रकट होनेवाला) को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसकी वार्ता की वर्णन-शैली मक्का मुअज़्ज़मा की परारम्भिक सूरतों से मिलती-जुलत है, किन्तु यह उस समय की अवतरित सूरा है जब मक्का के काफ़िर क़ुरआन और मुहम्मद (सल्ल॰) के आह्वान को क्षति पहुँचाने के लि हर तरह की चालें चल रहे थे।

विषय और वार्ता

इसमें दो विषयों का उल्लेख किया गया है। एक, यह कि मनुष्य को मरने के पश्चात् ईश्वर के समक्ष उपस्थित होना है। दूसरे, यह कि क़ुरआन एक निर्णायक सूक्ति है जिसे काफ़िरों की कोई चाल और उपाय क्षति नहीं पहुँचा सकती। सबसे पहले आकाश के तारों को इस बपात की गवाही में सामने लाया गया है कि ब्रह्माण्ड की कोई भी चीज़ ऐसी नहीं है जो एक सत्ता की देख-रेख के बिना अपनी जगह स्थिर और शेष रह सकती हो। फिर मनुष्य को स्वयं उसकी अपनी ओर ध्यान दिलाया गया है कि किस तरह वीर्य की एक बून्द से उसे अस्तित्व में लाया गया और जीता-जागता मनुष्य बना दिया गया है और इसके बाद कहा गया है कि जो ईश्वर इस तरह उसे अस्तित्व में लाया है वह निश्चय ही उसको दोबारा पैदा करने की सामर्थ्य रखता है और यह दूसरी पैदाइश इस उद्देश्य के लिए होगी कि मनुष्य के उन सभी रहस्यों की जाँच-पड़ताल की जाए जिनपर दुनिया में परदा पड़ा रह गया था। वार्ता की समाप्ति पर कहा गया है कि जिस तरह आसमान से बारिश का बरसना और ज़मीन से वृक्षों और फ़सलों का उगना कोई खेल नहीं, बल्कि एक गम्भीर कार्य है उसी तरह क़ुरआन में जिन तथ्यों का उल्लेख किया गया है, वे भी कोई हँसी-मज़ाक़ नहीं हैं, बल्कि सुदृढ़ और अटल बातें हैं। काफ़िर इस भ्रम में हैं कि उनकी चालें इस क़ुरआन के आह्वान को परास्त कर देंगी, किन्तु उन्हें ख़बर नहीं कि अल्लाह भी एक उपाय में लगा हुआ है और उसके उपाय के आगे काफ़िरों की चालें धरी-की-धरी रह जाएँगी। फिर एक वाक्य में अल्लाहके रसूल (सल्ल॰) को यह सांत्वना और निहित रूप से काफ़िरों को यह धमकी देकर बात समाप्त कर दी गई है कि आप तनिक धैर्य से काम लें और कुछ समय के लिए काफ़िरों को अपनी-सी कर लेने दें, अधिक विलम्ब न होगा कि उन्हें स्वयं मालूम हो जाएगा कि (उनका परिणाम क्या होता है।)



86. सूरा अत-तारिक़

(मक्का में उतरी–आयतें 17)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है आसमान की और रात को प्रकट होनेवाले की। (2) और तुम क्या जानो कि वह रात को प्रकट होनेवाला क्या है? (3) चमकता हुआतारा। (4) कोई चीव ऐसा नहीं है जिसके ऊपर कोई निगहबान न हो।[1] (5) फिर तनिक इनसान यही देख ले कि वह किस चीज़ से पैदा किया गया है, (6) एक उछलनेवाले पानी से पैदा किया गया है, (7) जो पीठ और छाती की हड्डियों के बीच से निकलता है।[2] (8) यक़िनन वह (स्रष्टा) उसे दोबारा पैदा करने की सामर्थ्य रखता है। (9) जिस दिन छिपे रहस्यों की जाँच-पड़ताल होगी;[3] (10) उस समय इनसान के पास न ख़ुद अपना कोई ज़ोर होगा और न कोई उसकी मदद करनेवाला होगा। (11) क़सम है वर्षा करनेवाले आसमान की (12) और (वनस्पतियों के उगते समय) फट जानेवाली ज़मीन की, (13) यह एक जँची-तुली बात है, (14) हँसी-मज़ाक़ नहीं है।[4] (15) ये लोग (अर्थात् मक्का के काफ़िर) कुछ चालें चल रहें हैं (16) और मैं भी एक चाल चल रहा हूँ। (17) अतः

---

1. निगहबान से मुराद ख़ुद अल्लाह की सत्ता है जो ज़मीन और आसमान की हर छोटी-बड़ी संरचित चीज़ों और प्राणियों की देखभाल और रक्षा कर रही है। मतलब यह है कि रात को आसमान में ये अगणित तारे और ग्रह जो चमकते हुए नज़र आते हैं उनमें से हर एक का अस्तित्व इस बात की गवाही दे रहा है कि कोई है जिसने उसे बनाया है, प्रकाशमान किया है, आसमान में टिका रखा है, और इस तरह उसकी रक्षा और निगरानी कर रहा है कि न वह अपने स्थान से गिरता है, न अगणित तारों की गर्दिश के बीच में वह किसी से टकराता है और न कोई दूसरा तारा उससे टकराता है। इसी तरह अल्लाह विश्व की हर चीज़ की निगहबानी कर रहा है।
2. चूँकि औरत और मर्द दोनों के वीर्य इनसान के उस धड़ से निकलते हैं जो पीठ और छाती के बीच अवस्थित है, इसलिए कहा गया है कि इनसान उस पानी से पैदा किया गया है जो पीठ और छाती के बीच के निकलता है।
3. छिपे रहस्य से मुराद हर व्यक्ति के वे कर्म भी हैं जो संसार में एक रहस्य बनकर रह गए, और वे मामले भी हैं जो अपने बाह्य रूप में तो दुनिया के सामने आए, मगर उनके पीछे जो नीयतें और स्वार्थ और इच्छाएँ काम कर रही थीं, उनका हाल लोगों से छिपा रह गया।

छोड़ दो ऐ नबी, इन इनकार करनेवालों को थोड़ी देर के लिए इनके हाल पर छोड़ दो।



4. अर्थात् जिस तरह आसमान से वर्षा का होना और ज़मीन का फटकर वनस्पतियाँ अपने अन्दर से उगलतना कोई मज़ाक़ नहीं है, बल्कि एक गंभीर वास्तविकता है, उसी तरह क़ुरआन जिस चीज़ की सूचना दे रहा है कि इनसान को फिर अपने ईश्वर की ओर पलटना है, यह भी कोई हँसी-मज़ाक़ की बात नहीं है बल्कि दो-टूक बात है।

87. अल-आला

नाम

पहली ही आयत ''अपने सर्वोच्च रब के नाम की तसबीह करो'' के शब्द 'अल-आला' (सर्वोच्च) को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसकी वार्ता से भी मालून होता है कि यह बिलकुल आरम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है और आयत नम्बर 6 के ये शब्द भी कि ''हम तुम्हें पढ़वा देंगे, फिर तुम नहीं भूलेंगे'' यह कहते हैं कि यह उस कालखण्ड में अवतरित हुई थी जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को अभी वह्य (प्रकाशना) ग्रहण करने का अच्छी तरह अभ्यास नहीं हुआ था और वह्य के अवतरण के समय आपको आशंका होती थी कि कहीं मैं उसके शब्द भूल न जाऊँ।

विषय और वार्ता

इस छोटी-सी सूरा के तीन विषय हैं :

एकेश्वरवाद, नबी (सल्ल॰) को निर्देश और परलोक। पहली ही आयत में एकेश्वरवाद की शिक्षा को इस एक वाक्य में समेट दिया गया है कि अल्लाह के नम की तस्बीह की जाए, अर्थात् उसको किसी ऐसे नाम से याद न किया जाए जो अपने में किसी प्रकार की कमी, दोष दुर्बलता या सृष्ट प्राणियों के समरूप होने का कोई पहलू रखता हो, क्योंकि दुनिया में जितनी भी विकृत धारणाएँ पैदा हुई हैं, उन सबके मूल में अल्लाह के सम्बन्ध में कोई-न-कोई ग़लत धारणा मौजूद है, जिसने उस पवित्र सत्ता के लिए किसी ग़लत नाम का रूप धारण किया है। अतः धारणा के विशुद्धीकरण के लिए सबसे पहली चीज़ यह है कि प्रतापवान अल्लाह को केवल उन अच्छे नामों ही से याद किया जाए जो उसके लिए अनुकूल और उचित है। इसके बाद तीन आयतों में बताया गया है कि तुम्हारा रब, जिसके नाम की तस्बीह का हुक्म दिया जा रहा है वह है जिसने जगत् की हर चीज़ को पैदा किया; उसका सन्तुलन स्थिर किया; उसकी तक़दीर बनाई; उसे वह कार्य पूरा करने की राह बताई जिसके लिए वह पैदा की गई है। फिर दो आयतों में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को आदेश दिया गया है कि आप इस चिन्ता में न पड़े कि यह क़ुरआन शब्दशः आपको याद कैसे रहेगा। इसको आपकी स्मृति में सुरक्षित कर देना हमारा काम है और इसका सुरक्षित रहना आपके किसी व्यक्तिगत कौशल का परिणाम

नहीं, बल्कि हमारी उदार कृपा का परिणाम है, अन्यथा हम चाहें तो इसे भूलवा दें। तदन्तर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से कहा गया है कि आपको हर व्यक्ति को सीधे मार्ग पर लाने का काम नहीं सौंपा गया है, बल्कि आपका काम बस सत्य को पहुँचा देना है और पहुँचाने का सीधा-सादा तरीक़ा यह है कि तुममें से जो उपदेश को सुनने और स्वीकार करने के लिए तैयार हो उसे उपदेश दिया जाए और जो इसके लिए तैयार न हो उसके पीछे न पड़ा जाए। अन्त में वार्ता इस बात पर समाप्त की गई है कि सफलता केवल उन लोगों के लिए है जो धारणा, नैतिकता और कर्मों की पवित्रता ग्रहण करे और अपने प्रभु का नाम याद करके नमाज़ पढ़े। लेकिन लोगों का हाल यह है कि उनहें सारी चिन्ता बस इस दुनिया की है, हालाँकि वास्तविक चिन्ता आख़िरत (परलोक) की होनी चाहिए।



87. सूरा अल-आला

(मक्का में उतरी–आयतें 19)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) (ऐ नबी) अपने सर्वोच्च रब के नाम की तसबीह करो (2) जिसने पैदा किया और साम्य एवं सन्तुलन स्थापित किया,[1] (3) जिसने नियति (तक़दीर)[2] बनाई, फिर राह दिखाई,[3] (4) जिसने वनस्पतियाँ उगाईं (5) फिर उनको काला कूड़ा-करकट बना दिया।

(6) हम तुम्हें पढ़वा देंगे, फिर तुम नहीं भूलोगे[4] (7) सिवाए उसके जो अल्लाह चाहे,[5] वह खुले को भी जानता है और जो कुछ छिपा है उसको भी।

---

1. अर्थात् ज़मीन से आसमानों तक ब्रह्माण्ड की हर चीज़ को पैदा किया, और जो चीज़ भी पैदा की उसे बिलकुल सही और ठीक बनाया, उसका सन्तुलन और साम्य ठीक-ठीक स्थापित किया, उसको ऐसे रूप पर पैदा किया कि उस जैसे चीज़ के लिए उससे अच्छे रूप की कल्पना नहीं की जा सकती।
2. अर्थात् हर चीज़ के पैदा करने से पहले यह निर्धारित कर दिया गया कि उसे दुनिया में क्या काम करना है और उस काम के लिए उसकी मात्रा क्या हो, उसका रूप क्या हो, उसके गुण क्या हों, उसका स्थान कहाँ हो, उसके लिए स्थायित्व और निवास और कर्म के लिए क्या अवसर और साधन जुटाए जाएँ, किस समय वह वुजूद में आए, कब तक अपने हिस्से का काम करें और कब किस तरह ख़त्म हो जाए। इस पूरी योजना का व्यापक नाम उसकी 'तक़दीर' (नियति) है।
3. अर्थात् किसी चीज़ को भी सिर्फ़ पैदा करके छोड़ नहीं दिया, बल्कि जो चीज़ भी जिस काम के लिए पैदा की उसे उस काम के पूरा करने की विधि बताई।
4. आरंभिक समय में जब प्रकाशना (वह्य) के अवतरण का सिलसिला अभी शुरू ही हुआ था तो कभी-कभी ऐसा होता था कि जिबरील (अलै॰) 'वह्य' (प्रकाशना के शब्द) सुनाकर निवृत्त न होते थे कि नबी (सल्ल॰) भूल जाने की आशंका से आरंभिक भाग दोहराने लगते थे। इसी कारण अल्लाह ने नबी (सल्ल॰) को यह इतमीनान दिलाया कि प्रकाशना के समय आप चुपचाप सुनते रहें, हम आपको उसे पढ़वा देंगे और वह हमेशा के लिए आपको याद हो जाएगी।
5. अर्थात् पूरे क़ुरआन का अक्षरशः आपको कंठस्थ हो जाना आपकी अपनी सामर्थ्य का चमत्कार नहीं है, बल्कि अल्लाह के अनुग्रह और उसकी तौफ़ीक़ (दैवयोग) का परिणाम है, वरना अल्लाह चाहे तो उसे भुला सकता है।

(8) और हम तुम्हें आसान तरीक़े की सुविधा देते हैं, (9) अतः तुम नसीहत करो यदि नसीहत लाभदायक हो।[6] (10) जो व्यक्ति डरता है वह नसीहत क़बूल कर लेगा, (11) और उससे भागेगा वह बड़ा ही दुर्भाग्यवाला (12) जो बड़ी आग में जाएगा, (13) फिर न उसमें मरेगा न जिएगा।

(14) सफल हो गया वह जिसने पवित्रता अपनाई (15) और अपने रब का नाम याद किया, फिर नमाज़ पढ़ी। (16) मगर तुम लोग दुनिया की ज़िन्दगी को प्राथमिकता देते हो, (17) हालाँकि आख़िरत ज़्यादा अच्छी और बाक़ी रहनेवाली है। (18) यही बात पहले आए हुए सहीफ़ों में भी कही गई थी, (19) इबराहीम और मूसा के सहीफ़ों में।



6. अर्थात् इस धर्म-प्रचार के मामले में तुमको किसी कठिनाई में नहीं डालना चाहते कि तुम बहरों को सुनाओ और अन्धों को राह दिखाओ, बल्कि एक आसान तरीक़ा तुम्हारे लिए उपलब्ध किए देते हैं, और वह यह है कि नसीहत करो जहाँ तुम्हें यह महसूस हो कि कोई उससे लाभ उठाने के लिए तैयार है। उन लोगों के पीछे पड़ने की कोई ज़रूरत नहीं, जिनके सम्बन्ध में तजरबे से तुम्हें मालूम हो जाए कि वे कोई नसीहत क़बूल नहीह करना चाहते.

88. अल-ग़ाशियह

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''अल-ग़ाशियह'' (छा जानेवाली) को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

सूरा का पूरा विषय इस बातको प्रमाणित करता है कि यह भी प्रारम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है, किन्तु यह वह समय था जब नबी (सल्ल०) सामान्य रूप से प्रचार-प्रसार का काम शुरू कर चुके थे और मक्का के लोग साधारणतया सुन-सुनकर उसकी उपेक्षा किए जा रहे थे।

विषय और वार्ता

इसमें सबसे पहले बेसुध पड़े हुए लोगों को चौकाने के लिए उनके सामने सहसा यह प्रश्न रखा गया है कि तुम्हें उस समय की भी कुछ ख़बर है जब सारे संसार पर छा जानवाली एक आपदा उतरेगी? तदन्तर तुरन्त ही यह विवरण प्रस्तुत करना शुरू कर दिया गया है कि उस समय समस्त मनुष्य दो गिरोहों मे विभक्त होकर दो विभिन्न परिणाम देखेंगे। एक. वे जो नरक में जाएँगे। दूसरे, वे जो उच्च जन्नत में प्रवेश करेंगे। इस प्रकार लोगों को चौंकाने के पश्चात् पूर्णतया विषय बदल जाता है और प्रश्न किया जाता है कि ये लोग जो क़ुरआन के एकेश्वरवाद की शिक्षा और आख़िरत की सूचना को सुनकर नाक-भौं चढ़ा रहे हैं, अपने सामने की उन चीज़ों को नहीं देखते जो हर समय इनके सामने आती रहती हैं? अरब के मरुस्थल में जिन ऊँटों पर इनका सारा जीवन निर्भर करता है कभी ये लोग विचार नहीं करते कि ये कैसे ठीक उन्हीं विशिष्टताओं को लिए हुए बन गए जैसी विशिष्टताओं के जानवर की आवश्यकता इनके मरुस्थलीय जीवन के लिए थी। अपनी यात्राओं में जब ये चलते हैं तो इन्हें या तो आकाश दिखाई देता है या पहाड़ या धरती। इन्हीं तीन चीज़ों पर विचार करें। ऊपर यह आकाश कैसे छा गया? सामने ये पहाड़ कैसे खड़े हो गए? नीचे ये धरती कैसे बिछ गई? क्या यह सब कुछ किसी सर्वशक्तिमान, तत्त्वदर्शी रचनाकार की कारीगरी के बिना हो गया है? यदि ये मानते हैं कि एक स्रष्टा ने बड़ी तत्त्वदर्शीता और बड़ी सामर्थ्य के साथ इन चीज़ों को बनाया है और कोई दूसरा इसकी संरचना में साझीदार नहीं है तो उसी को अकेला प्रभु मानने से इन्हें क्यों इनकार है? और यदि ये मानते हैं कि वह ईश्वर सब कुछ पैदा करने की सामर्थ्य रखता था तो आख़िर किस बुद्धिसंगत प्रमाण से इन्हें यह मानने में संकोच है

कि वही ईश्वर क़ियामत लाने की सामर्थ्य रखता है? मनुष्य को भी पुनः पैदा करने की भी उसे सामर्थ्य प्राप्त है? जन्नत और नरक बनाने की भी उसे सामर्थ्य है? तदन्त नबी (सल्ल॰) को सम्बोधित किया जाता है और आप (सल्ल॰) से कहा जाता है कि ये लोग नहीं मानते तो न मानें, आपका काम उपदेश करना है, अतः आप उपदेश किए जाएँ। इन्हें आना हमारे ही पास है।ुस समय हम इनसे पूरा-पूरा हिसाब ले लेंगे।



88. सूरा अल-ग़ाशियह

(मक्का में उतरी–आयतें 26)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क्या तुम्हें उस छा जानवाली आफ़त (अर्थात् क़ियामत) की ख़बर पहुँची है? (2) कुछ चेहरे[1] उस दिन भयभीत होंगे, (3) कठिन परिश्रम कर रहे होंगे, थके जाते होंगे, (4) तेज़ आग में झुलस रहे होंगे, (5) खौलते हुए स्रोत का पानी उन्हें पीने को दिया जाएगा, (6) काँटेदार सूखी घास के सिवा कोई खाना उनके लिए न होगा, 97) जो न मोटा करे न भूख मिटाए। (8) कुछ चेहरे उस दिन खिले हुए होंगे, (9) अपनी कारगुज़ारी पर ख़ुश होंगे, (10) उच्च स्तरीय जन्नत में होंगे, (11) कोई व्यर्थ एवं अशिष्ट बात वे वहाँ न सुनेंगे, (12) उसमें स्रोत प्रवाहित होंगे, (13) उसके अन्दर ऊँची मसनदें होंगी, (14) साग़र रखे हुए होंगे, (15) गाव-तकियों की पंक्तियाँ लगी होंगी (16) और उत्तम बिछौने बिछे हुए होंगे। (17) (ये लोग नहीं मानते) तो क्या ये ऊँटों को नहीं देखते कि कैसे बनाए गए? (18) आसमान को नहीं देखते कि कैसे उठाया गया? (19) पहाड़ों को नहीं देखते कि कैसे जमाए गए? (20) और ज़मीन को नहीं देखते कि कैसे बिछाई गई?[2] (21) अच्छा तो (ऐ नबी) नसीहत किए जाओ, तुम बस नसीहत ही करनेवाले हो, (22) कुछ इनको बाध्य करनेवाले नहीं हो। (23) अलबत्ता जो व्यक्ति मुँह मोड़ेगा और इनकार करेगा (24) तो अल्लाह उसको भारी सज़ा देगा। (25) इन लोगों को पलटना हमारी ओर ही है, (26) फिर इनका हिसाब लेना हमारे ही ज़िम्मे है।



1. चेहरों का शब्द यहाँ व्यक्तियों के अर्थ में इस्तेमाल हुआ है। चूँकि इनसान के शरीर की सबसे स्पष्ट चीज़ उसका चेहरा है, इसलिए ''कुछ लोग'' कहने के बदले ''कुछ चेहरे'' के शब्द इस्तेमाल किए गए हैं।
2. अर्थात् अगर ये लोग आख़िरत की ये बातें सुनकर कहते हैं कि आख़िर यह सब कुछ कैसे हो सकता है तो क्या ख़ुद अपने चतुर्दिक और सामने की दुनिया पर दृष्टि डालकर इन्होंने कभी न देखा और कभी न सोचा कि ये ऊँट कैसे बन गए? यह आसमान कैसे ऊँचा हो गया? ये पहाड़ कैसे खड़े हो गए? यह ज़मीन कैसे बिछ गई? ये सारी चीज़ें अगर बन सकती थीं और बनी हुई इनके सामने मौजूद हैं तो क़ियामत क्यों नहीं आ सकती? आख़िरत में एक दूसरी दुनिया क्यों नहीं बन सकती? दोज़ख़ और जन्नत क्यों नहीं हो सकती?

८९. अल-फ़ज्र

नाम

सूरा का नाम पहले ही वाक्य ''क़सम है अल-फ़ज्र (सवेरा) की'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसकी वार्ताओं से ज़ाहिर होता है कि यह उस कालखण्ड में अवतरित हुई थी जब मक्का मुअज़्ज़मा में इस्लाम स्वीकार करनेवालों के विरुद्ध ज़ुल्म की चक्की चलनी शुरू हो चुकी थी। इसी कारण मक्कावालों को आद और समूद और फ़िरऔन के परिणाम से सावधान किया गया है।

विषय और वार्ता

इसका विषय परलोक के प्रतिदान और दण्ड की पुष्टि है, जिसका मक्कावाले इनकार कर रहे थे। इस उद्देश्य के लिए सबसे पहले 'उषाकाल' और दस रातों और युग्म और अयुग्म और विदा होती रात की सौगन्ध खाकर श्रोताओं से प्रश्न किया गया है कि जिस बात का तुम इनकार कर रहे हो उसके सत्य होने की गवाही देने के लिए क्या ये चीज़ें काफ़ी नहीं हैं? इसके पश्चात् मानव-इतिहास से प्रमाण प्रस्तुत करते हुए उदाहरणस्वरूप आद और समूद और फ़िरऔन के परिणाम को सामने लाया गया है कि जब उन्होंने सीमा का अतिक्रमण किया तो ईश्वरीय यातना का कोड़ा उनपर बरस गया। इससे लक्षित होता है कि जगत् की व्यवस्था कुछ अन्धी-बहरी शक्तियाँ नहीं चला रही हैं, बल्कि एक तत्त्वदर्शी एवं सर्वज्ञ शासक इसपर शासन कर रहा है, जिसकी तत्त्वदर्शिता और न्याय की यह माँग स्वयं इस संसार में और मानव-इतिहास में निरन्तर व्यक्त होती है कि वृद्धि और नैतिक चेतना देकर जिस प्राणी को उसने यहाँ उपभोग के अधिकार दिए हैं, उसका हिसाब ले और उसे प्रतिदान या दण्ड दे। इसके बाद मानव-समाज की सामान्यनैतिक स्थिति का सर्वेक्षण किया गया है और विशेष रूप से उसके विभिन्न पहलुओं की आलोचना की गई है। एक, लोगों का भौतिकवादी दृष्टिकोण जिसके कारण वे नैतिक भलाई और बुराई की उपेक्षा करके केवल सांसारिक धन और वैभव एवं पद की उपलब्धि या अनुपलब्धि को प्रतिष्ठा और अप्रतिष्ठा का मापदण्ड निर्धारित कर बैठे थे और इस बात को भूल गए थे कि न धन का होना कोई प्रतिदान और पारितोषिक है, न आजीविका की तंगी कोई दण्ड, बल्कि अल्लाह इन दोनों दशाओं में मनुष्य की परीक्षा ले रहा है। दूसरे, लोगों का यह आचरण कि जिसका बस चलता है मुरदे की सारी मीरास समेटकर बैठ जाता है और कमज़ोर हक़दारों को टरकाता और

धता बता देता है। इस आलोचना से अभीष्ट लोगों को इस बात को स्वीकार कराना है कि सांसारिक जीवन में जिन मनुष्यों की यह नीति है उनसे पूछगछ आख़िर क्यों न हो। फिर वार्ता को इस बात पर समाप्त किया गया है कि पूछगछ होगी और अवश्य होगी। उस समय प्रतिदान और दण्ड का इनकार करनेवाला मनुष्य हाथ मलता रह जाएगा कि काश! मैंने दुनिया में इस दिन के लिए कोई सामान किया होता। किन्तु यह पश्चात्ताप उसे ईश्वरीय दण्ड से न बचा सकेगा। अलबत्ता जिन मनुष्यों ने संसार में पूर्ण शंकामुक्त हृदय के साथ सत्य को स्वीकार कर लिया होगा, ईश्वर उनसे प्रसन्न होगा और वे ईश्वर के प्रदत्त प्रतिदान से प्रसन्न और परितुष्ट होंगे। उन्हें आमंत्रित किया जाएगा कि वे अपने प्रभु के प्रिय बन्दों में सम्मिलित हों और जन्नत में प्रवेश करें।




89. सूरा अल-फ़ज्र

(मक्का में उतरी–आयतें 30)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है फ़ज्र (सवेरा) की, (2) और दस रातों की, (3) और युग्म और अयुग्म की, (4) और रात की जबकि वह बिदा हो रही हो। (5) क्या इसमें किसी बुद्धिमान के लिए कोई क़सम[1] है?

(6,7) तुमने देखा नहीं कि तुम्हारे रब ने क्या व्यवहार किया ऊँचे स्तम्भोंवाले ''आदे इरम'' के साथ (8) जिनके सदृश कोई क़ौम दुनिया के देशों में पैदा नहीं की गई थीं? (9) और समूद के साथ, जिन्होंने घाटी में चट्टानें तराशी थीं? (10) और मेख़ोंवाले फ़िरऔन के साथ? (11) ये वे लोग थे जिन्होंने दुनिया के देशों में बड़ी सरकशी की थी (12) और उनमें बहुत बिगाड़ फैलाया था। (13) आख़िरकार तुम्हारे रब ने उनपर अज़ाब का कोड़ा बरसा दिया। (14) वास्तविकता यह है कि तुम्हारा रब घात लगाए हुए है।[2]

(15) मगर इनसान का हाल यह है कि उसका रब जब उसको आज़माइश में

1. आगे की आयतों पर विचार करने पर साफ़ महसूस होता है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) और काफ़िरों के बीच आख़िरत में मिलनेवाले अच्छे और बुरे परिणामों के विषय पर वाद-विवाद हो रहा था, जिसमें नबी (सल्ल०) उसको सिद्ध कर रहे थे और काफ़िर उसका इनकार कर रहे थे। इसपर चार चीज़ों की क़सम खाकर कहा गया है कि इस सत्य बात पर गवाही देने के लिए इसके बाद क्या किसी और क़सम की ज़रूरत बाक़ी रह जाती है?
2. घात उस स्थान को कहते हैं जहाँ कोई व्यक्ति किसी की प्रतीक्षा में इस उद्देश्य से छिपा बैठा होता है कि जब वह निशाने पर आए उसी समय उसपर हमला कर दे। परिणाम से असावधान, निश्चिन्तता के साथ वह उस जगह से गुज़रता है और अचानक शिकार हो जाता है। यही स्थिति अल्लाह तआला के मुक़ाबले में उन ज़ालिमों की है जो दुनिया में फ़साद का तूफ़ान उठाए रखते हैं और उन्हें इसका कोई एहसास नहीं होता कि ईश्वर भी कोई है जो उसकी गतिविधियों को देख रहा है। वे पूरी निर्भयता के साथ दिन-ब-दिन ज़्यादा से ज़्यादा शरारतें करते चले जाते हैं यहाँ तक कि जब वह सीमा आ जाती है जिससे आगे अल्लाह उन्हें बढ़ने नहीं देना चाहता उसी समय उनपर अचानक उसके अज़ाब का कोड़ा बरस जाता है।

डालता है और उसे सम्मान और नेमत देता है तो वह कहता है कि मेरे रब ने मुझे प्रतिष्ठावान बना दिया। (16) और जब वह उसको आज़माइश में डालता है और उसकी रोज़ी उसपर तंग कर देता है तो वह कहता है मेरे रब ने मुझे अपमानित कर दिया।[3] (17) हरगिज़ नहीं, बल्कि तुम अनाथ से आदर का व्यवहार नहीं करते, (18) और मुहताज को खाना खिलाने पर एक-दूसरे को नहीं उकसाते, (19) और मीरास का सारा माल समेटकर खा जाते हो, (20) और धन के प्रेम में बुरी तर जकड़े हुए हो। (21) हरगिज़ नहीं,[4] जब ज़मीन लगातार कूट-कूटकर चूर्ण-विचूर्ण बना दी जाएगी, (22) और तुम्हारा रब प्रकट होगा इस हाल में कि फ़रिश्ते पंक्तिबद्ध खड़े होंगे, (23) और जहन्नम (नरक) उस दिन सामने ले आई जाएगी, उस दिन इनसान को समझ आएगी और उस समय उसके समझने का क्या लाभ? (24) वह कहेगा कि क्या ही अच्छा होता मैंने अपनी इस ज़िन्दगी के लिए कुछ पहले से सामान किया होता! (25) फिर उस दिन अल्लाह जो अज़ाब देगा वैसा अज़ाब देनेवाला कोई नहीं, (26) और अल्लाह जैसा बाँधेगा वैसा बाँधनेवाला कोई नहीं।

(27) (दूसरी ओर कहा जायेगा) ऐ सन्तुष्ट आत्मा,[5] (28) चल अपने रब की ओर, इस हाल में कि तू (अपने अच्छे परणाम से) ख़ुश, (और अपने रब के निकट) पसन्दीदा है। (29) सम्मिलित हो जा मेरे (नेक) बन्दों में (30) और प्रवेश कर मेरी जन्नत में।

● ● ●

3. अर्थात् यह है इनसान की भौतिकवादी जीवन-धारणा। इसी दुनिया में धन, दौलत और वैभव एवं सत्ता मिल जाने को वह सम्मान और न मिलने को अपमान समझता है, हालाँकि वास्तविक तथ्य जिसे वह नहीं समझता यह है कि अल्लाह ने जिसको दुनिया में जो कुछ भी दिया है आज़माइश के लिए दिया है। धन और सत्ता में भी आज़माइश है और निर्धनता में भी आज़माइश।
4. अर्थात् तुम्हारा यह ख़याल ग़लत है कि तुम दुनिया में जीते जी यह सब कुछ करते रहो और इसकी पूछगछ का समय कभी न आए।
5. सन्तुष्ट आत्मा से मुराद वह इनसान है जिसने किसी संशय एवं सन्देह के बिना पूरे इतमीनान और ठण्डे दिल के साथ अल्लाह को, जिसका कोई साझी नहीं, अपना रब और नबियों के लाए हुए सत्यधर्म को अपना धर्म ठहराया।

90. अल-बलद

नाम

पहली ही आयत ''नहीं, मैं क़सम खाता हूँ अल-बलद (इस शहर मक्का) की'' के शब्द 'अल-बलद' को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसका विषय और वर्णन-शैली मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल की सूरतों जैसी है, किन्तु एक संकेत इसमें ऐसा मौजूद है जो पता देता है कि इसके अवतरण का समय वह था जब मक्का के काफ़िर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की दुश्मनी पर तुल गए थे और आपके विरूद्ध हर अनाचार और अत्याचार की उन्हेंने अपने लिए वैध कर लिया था।

विषय और वार्ता

इस सूरा का विषय संसार में मनुष्य की और मनुष्य के लिए संसार की वास्तविक हैसियत समझाना और यह बताना है कि ईश्वर ने मनुष्य के लिए सौभाग्य और दुर्भाग्य के दोनों रास्ते खोलकर रख दिए हैं। उनको देखने और उनपर चलने के संसाधन भी उसके लिए जुटा दिए हैं। और अब यह मनुष्य के अपने प्रयास और परिश्रम पर निर्भर करता है कि वह सौभाग्य के मार्ग पर चलकर अच्छे परिणाम को पहुँचता है या दुर्भाग्य का मार्ग ग्रहण करके बुरे परिणाम का सामना करता है। सबसे पहले मक्का नगर और उसमें अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) पर बीतनेवाली मुसीबतें और आदम की पूरी संतान की हालत को इस तथ्य पर साक्षी के रूप में प्रस्तुत किया गया है कि, यह संसार मनुष्य के लिए विश्राम स्थान नहीं है, बल्कि यहाँ वह पैदा ही मशक़्क़त (परिश्रम) की हालत में हुआ है। इस विषय को यदि सूरा 53 (नज्म) की आयत 39 ''मनुष्य के लिए कुछ नहीं, लेकिन वह जिसके लिए उसने प्रयास किया है'' से मिलाकर देखा जाए तो बात बिलकुल स्पष्ट हो जाती है कि इस कर्मभूमि– संसार में मनुष्य का भविष्य उसकी चेष्टा, प्रयास और मेहनत - मशक़्क़त पर निर्भर करता है। इसके बाद मनुष्य की यह भ्रान्ति दूर की गई है कि उसपर कोई सर्वोच्च सत्ता नहीं है जो उसके कार्य को देख रही है और उसपर उसकी पकड़ करनेवाली है। फिर बताया गया है कि दुनिया में मनुष्य ने बड़ाई और श्रेष्ठता के कैसे ग़लत मानदण्ड निश्चित कर रखे हैं। जो व्यक्ति अपनी बड़ाई के प्रदर्शन के लिए ढेरों माल लुटाता है, लोग उसकी अधिक प्रशंसा करते है, हालाँकि जो सत्ता उसके कार्य की देख-रेख कर रही है, वह देखती है कि उसने यह माल किन तरीक़ों से प्राप्त किया और

किन रास्तों में, किस नीचता और किन उद्देश्यों के लिए ख़र्च किया। इसके बाद सर्वोच्च अल्लाह कहता है कि हमने मनुष्य को ज्ञान के साधन और सोचने-समझने की क्षमताएँ देकर उसके सामने भलाई और बुराई के दोनों रास्ते खोलकर रख दिए हैं। एक रास्ता वह है जो नैतिक पतनों की ओर जाता है और उसपर जाने के लिए कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ता, बल्कि मन को ख़ूब रस मिलता है। दूसरा रास्ता नैतिक ऊर्ध्वताओं की ओर जाता है कि उसपर चलने के लिए आदमी को अपनी इंद्रियों को बाध्य करना पड़ता है। फिर अल्लाह ने बताया है कि वह घाटी क्या है जिससे गुज़र कर आदमी ऊँचाइयों की ओर जा सकता है। इस मार्ग पर चलनेवालों का परिणाम यह है कि मनुष्य अल्लाह की दयालुताओं का पात्र हो जाए, और इसके विपरीत दूसरा मार्ग ग्रहण करनेवालों का परिणाम नरक की आग है, जिससे निकलने के सारे द्वार बन्द हैं।



90. सूरा अल-बलद

(मक्का में उतरी–आयतें 20)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) नहीं,[1] मैं क़सम खाता हूँ इस शहर (मक्का की, (2) और स्थिति यह है (ऐ नबी) इस शहर में तुमको हलाल (वैध) कर लिया गया है,[2] (3) और क़सम खाता हूँ बाप (अर्थात् आदम अलै॰) की और उस सन्तान की जो उससे पैदा हुई, (4) वास्तव में हमने इनसान को परिश्रम में पैदा किया है।[3] (5) क्या उसने यह समझ रखा है कि उसपर कोई क़ाबू न पा सकेगा? (6) कहता है कि मैंने ढेरों माल उड़ा दिया। (7) क्या वह समझता है कि किसी ने उसको नहीं देखा?[4] (8,9) क्या हमने उसे दो आँखें और एक ज़बान और दो होंठ नहीं दिए?[5] (10) और (भलाई और बुराई के) दोनों स्पष्ट मार्ग उसे (नहीं) दिखा दिए? (11) मगर उसने दुर्गम घाटी से गुज़रने का साहस न गिया। (12) और तुम क्या जानो कि क्या है वह दुर्गम घाटी? (13) किसी गरदन को ग़ुलामी से छुड़ाना, (14,15,16) या फ़ाक़े के दिन किसी निकटवर्ती अनाथ या धूल-धूसरित मुहताज को खाना खिलाना। (17) फिर (इसके साथ यह कि) आदमी उन लोगों में सम्मिलित हो जो ईमान लाए और जिन्होंने एक-दूसरे को सब्र और (सृष्टि पर) दया की ताकीद की। (18) ये लोग हैं दाएँ बाज़ूवाले। (19) और जिन्होंने हमारी आयतों को मानने से इनकार किया वे बाएँ बाज़ूवाले हैं,[6] (20) उनपर आग छाई हुई होगी।



1. अर्थात् सत्य वह नहीं है जो तुम लोग समझे बैठे हो।
2. अर्थात् जिस शहर में जानवरों तक के लिए पनाह है, वहां तुमपर अत्याचार को वैध कर लिया गया है।
3. अर्थात् यह दुनिया इनसान के लिए मज़े करने और चैन की बंसी बजाने की जगह नहीं, बल्कि मेहनत और मशक़्क़त और कठिनाई झेलने की जगह है और कोई इनसान भी इस हालत से गुज़रे बिना नहीं रह सकता।
4. अर्थात् क्या यह गर्व करनेवाला यह नहीं समझता कि ऊपर कोई ईश्वर भी है जो देख रहा है कि किन साधनों से उसने यह धन प्राप्त किया और किन कामों में उसे खपाया?
5. मतलब यह है कि क्या हमने उसे ज्ञान और बुद्धि के साधन नहीं दिए?
6. दाएँ बाज़ू और बाएँ बाज़ूवालों की व्याख्या के लिए देखें सूरा 56 (अल-वाक़िआ) आयतें 8,8,27,41।

91. अश-शम्स

नाम

पहले ही शब्द ''अश-शम्स'' (सूरज) को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

विषय और वर्णन-शैली से यह मालूम होता है कि यह सूरा भी मक्का मुअज़्ज़मा के प्रारम्भिक काल में उस समय अवतरित हुई है जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का विरोध ख़ूब ज़ोरों से होने लगा था।

विषय और वार्ता

इसका विषय भलाई और बुराई का अन्तर समझाना और उन लोगों को बुरे परिणाम से डराना है जो इस अन्तर को समझने से इनकार और बुराई की राह पर चलने का हठ करते हैं। विषय की दृष्टि से यह सूरा दो भागों पर आधारित है। पहला भाग सूरा के आरम्भ से शुरू होकर आयत 10 पर समाप्त होता है और दूसरा भाग आयत 11 से सूरा के अन्त तक चलता है। पहले भाग में तीन बातें समझाई गई हैं। एक यह कि भलाई और बुराई -एक-दूसरे से भिन्न और लक्षणों और परिणामों की दृष्टि से एक-दूसरे के नितान्त प्रतिकूल हैं। दूसरे, यह कि अल्लाह ने मानवात्मा को शरीर, इंद्रियाँ और बुद्धि की शक्तियाँ देकर संसार में बिलकुल बेख़बर नहीं छोड़ दिया है, बल्कि एक दैवी प्रेरणा के द्वारा उसके अचेतन में भलाई और बुराई का अन्तर, भले और बुरे का विभेद और भलाई के भलाई और बुराई के बुराई होने का एहसास उतार दिया है। तीसरे, यह कि मनुष्य का अच्छा या बुरा भविष्य इसपर निर्भर करता है कि उसमें विवेक, इरादे और फ़ैसले की जो शक्तियाँ अल्लाह ने रख दी हैं, उनको प्रयोग में लाकर वह अपनी व्यक्तिगत अच्छी और बुरी अभिरुचियों में से किसको उभारता और किसको दबाता है। दूसरे भाग में समूद जाति के ऐतिहासिक दृष्टान्त को प्रस्तुत करते हुए रिसालत (ईशदूतत्व, पैग़म्बरी) के महत्त्व को समझाया गया है। रसूल (पैग़म्बर) दुनिया में इसलिए भेजा जाता है कि भलाई और बुराई का जो ईश-प्ररित ज्ञान ईश्वर ने मानव की प्रकृति में रख दिया है वह अपने में स्वयं मानव के मार्गदर्शन के लिए पर्याप्त नहीं है। प्रेरणा की सहायता के लिए नबियों (अलै॰) पर स्पष्टतः और साफ़-साफ़ वह्य (प्रकाशना) अवतरित की, ताकि वे लोगों को खोलकर बताएँ कि भलाई क्या है और बुराई क्या? ऐसे ही एक नबी हज़रत सालेह (अलै॰) समूद जाति की ओर भेजे गए थे। किन्तु वह जाति अपने मन की बुराइयों में डूबकर इतनी सरकश हो गई थी कि उसने

उनको झुठला दिया। इसका परिणाम अन्ततः यह हुआ कि पूरी जाति विनष्ट करके रख दी गई। समूद का यह क़िस्सा (जिस समय सुनाया गया था, मक्का में) उस समय परिस्थितियाँ वही विद्यमान थी जो सालेह (अलै०) के मुक़ाबले में समूद जाति के दुष्टों ने पैदा कर रखी थीं। अतः उन परिस्थितियों में यह क़िस्सा सुन देना अपने आपमें मक्का-निवासियों को यह समझा देने के लिए पर्याप्त था, कि समूद का यह ऐतिहासिक दुष्टान्त उनपर किस तरह चस्पाँ हो रहा है।



91. सूरा अश-शम्स

(मक्का में उतरी–आयतें 15)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) सूरज और उसकी धूप की क़सम, (2) और चाँद की क़सम जबकि वह उसके पीछे आता है, (3) और दिन की क़सम जबकि वह (सूरज को) स्पष्ट कर देता है, (4) और रात को क़सम जबकि वह (सूरज को) ढाँक लेती है, (5) और आसमान की और उस सत्ता की क़सम जिसने उसे स्थापित किया, (6) और ज़मीन की और उस सत्ता की क़सम जिसने उसे बिछाया, (7) और मानवीय आत्मा की और उस सत्ता की क़सम जिसने उसे ठीक-ठाक किया[1], (8) फिर उसकी बुराई और परहेज़गारी उसके दिल में डाल दी[2], (9) यक़ीनन सफलता पा गया वह जिसने आत्मा को विशुद्ध एवं विकसित किया (10) और असफल हुआ वह जिसने उसको दबा दिया।[3]

(11) समूद ने अपनी सरकशी के कारण झुठलाया। (12) जब उस क़ौम का सबसे ज़्यादा अभागा व्यक्ति बिफरकर उठा (13) तो अल्लाह के रसूल ने उन लोगों से कहा कि सावधान, अल्लाह की ऊँटनी को (हाथ न लगाना) और उसके पानी पीने (में बाधक न होना)। (14) मगर उन्होंने उसकी बात को झूठा ठहराया और ऊँटनी को मार

---

1. अर्थात् उसको ऐसा शरीर और मश्तिष्क प्रदान किया, ऐसी ज्ञानेन्द्रियाँ दीं और ऐसी शक्तियाँ और क्षमताएँ दीं जिनके कारण वह दुनिया में उस काम के योग्य हुआ जो इनसान के करने का है।
2. इसके दो अर्थ हैं। एक यह कि उसके भीतर स्रष्टा ने भलाई और बुराई दोनों की अभिरुचियाँ और झुकाव रख दिए हैं। दूसरे यह कि हर इनसान की अन्तरचेतना में अल्लाह ने यह धारणाएँ रख दी है कि नैतिक दृष्टि से कोई चीज़ भलाई है और कोई चीज़ बुराई। अच्छे नैतिक गुण एवं कर्म और बुरे शीत-स्वभाव एवं कर्म समान नहीं हैं। दुराचार एक बुरी चीज़ है और परहेज़गारी (बुराइयों से बचना) एक अच्छी चीज़ है। ये धारणाएँ इनसान के लिए अजनबी नहीं हैं, बल्कि उसकी प्रकृति इनसे परिचित है और स्रष्टा ने बुरे और भले की पहचान जन्मजात रूप से उसको प्रदान की है।
3. आत्मा के शुद्धीकरण का अर्थ उसको बुराइयों से मुक्त करना और उसमें भलाइयों को विकसित करना है। और उसको दबाने का अर्थ यह है कि इनसान अपने मन के बुरे रुझानों को उभारकर अच्छे रुझानों को दबा दे।

डाला। आख़िरकार उनके गुनाह के बदले में नके रब ने उनपर ऐसी तबाही डाली कि एक साथ सबको मिट्टी में मिला दिया,[4] (15) और उसे (अपने इस कर्म के) किसी बुरे परिणाम का कोई भय नहीं है।



4. चूँकि उस अभागे व्यक्ति ने अपनी क़ौम की इच्छा, बल्कि उसकी माँग पर ऊँटनी को मार डाला था जैसा कि सूरा 54 (अल-क़मर), आयत 29 में बयान हुआ है, इसलिए पूरी क़ौम पर अज़ाब उतारा गया।

92. अल-लैल

नाम

पहले ही वाक्यांश के शब्द ''क़सम है रात (अल-लैल) की'' को सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इस सूरा का विषय सूरा 91 (शम्स) से इतना अधिक मिलता-जुलता है कि दोनों सूरतें एक-दूसरे की व्याख्या प्रतीत होती हैं। एक ही बात है जिसे सूरा 'शम्स' में एक तरीक़े से समझाया गया है और इस सूरा में दूसरे तरीक़े से। इससे अनुमान होता है कि ये दोनों सूरतें लगभग एक ही समय में अवतरित हुई हैं।

विषय और वार्ता

इसका विषय जीवन के दो विभिन्न मार्गों का अन्तर और उसके अन्त और परिणामों की भिन्नता बतलाना है। विषय की दृष्टि से यह सूरा दो भागों पर आधारित है। पहला भाग आरम्भ से आयत 11 तक है और दूसरा भाग आयत 12 से सूरा के अन्त तक है। पहले भाग में सबसे पहले यह बताया गया है कि मानव-जाति के सभी व्यक्ति, जातियाँ और गिरोह दुनिया में जो भी प्रयास और कर्म कर रहे हैं, वे निश्चय ही अपनी नैतिक जातीयता की दृष्टि से उसी तरह भिन्न है जिस प्रकार दिन, रात से और नर, मादा से भिन्न है। तदन्तर क़ुरआन की संक्षिप्त सूरतों की सामान्य वर्णन-शैली के अनुसार तीन नैतिक विशिष्टताएँ एक प्रकार की और तीन नैतिक विशिष्टताएँ दूसरे प्रकार के प्रयास एवं कर्म के एक व्यापक संग्रह में से लेकर उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत की गई हैं। पहले प्रकार की विशिष्टताएँ ये हैं कि आदमी माल दे, ईशभय और संयम अपनाए और भलाई को भलाई माने। दूसरे प्रकार की विशिष्टताएँ ये हैं कि वह कृपणता दिखाए, ईश्वर की प्रसन्नता की चिन्ता से बेपरवाह हो जाए और भली बात को झुठला दे। फिर बताया गया है कि ये दोनों नीतियाँ जो स्पष्टतः एक-दूसरे से भिन्न हैं, अपने परिणामों की दृष्टि से कदापि समान नहीं हैं, बल्कि जितनी अधिक ये जातीयता की दृष्टि से एक-दूसरे के विपरीत हैं, उतने ही अधिक इनके परिणाम भी एक-दूसरे के विपरीत हैं। पहली नीति को जो व्यक्ति या गिरोह अपनाएगा, अल्लाह उसके लिए जीवन के स्वच्छ और सीधे मार्ग को सहज कर देगा, यहाँ तक कि उसके लिए भलाई करना सरल और बुराई करना दुष्कर हो जाएगा। और दूसरी नीति को जो भी अपनाएगा, अल्लाह उसके लिए जीवन के बिकट और कठिन मार्ग को सहज कर देगा, यहाँ तक कि उसके लिए बुराई करना

सहज और भलाई करना दुष्कर हो जाएगा। सूरा के दूसरे भाग में भी इसी प्रकार संक्षिप्त रूप से तीन तथ्यों का उद्‌घाटन किया गया है। एक, यह कि अल्लाह ने दुनिया के इस परीक्षास्थल में मनुष्य को बेखबर नहीं छोड़ा है बल्कि उसने यह बता देना अपने ज़िम्मे लिया है कि जीवन विभिन्न मार्गों में से सीधा मार्ग कौन-सा है। दूसरा तथ्य, जिसका उद्‌घाटन किया गया है, यह है कि लोक और परलोक दोनों का मालिक अल्लाह ही है। दुनिया माँगोगे तो वह भी उससे ही मिलेगी और आख़िरत (परलोक) माँगोगे तो उसका देनेवाला भी वही है। यह निर्णय करना तुम्हारा अपना काम है कि तुम उससे क्या माँगते हो। तीसरा तथ्य यह उद्‌घाटित किया गया है कि जो दुर्भाग्यग्रस्त उस भलाई को झुठलाएगा, जिसे रसूल (सल्ल॰) और (ईश्वरीय) किताब के द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है उसके लिए भड़कती हुई आग तैयार है और जो ईश्वर से डरनेवाला मनुष्य पूर्णतः निस्स्वार्थता के साथ केवल अपने प्रभु की प्रशंसा के लिए अपना धन भलाई के मार्ग में ख़र्च करेगा, उसका प्रभु उससे राज़ी होगा और उसे इतना कुछ देगा कि वह प्रसन्न हो जाएगा।



92. सूरा अल-लैल

(मक्का में उतरी–आयतें 21)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है रात की जबकि वह छा जाए, (2) और दिन की जबकि वह प्रकाशमान हो, (3) और उस सत्ता की जिसने नर और मादा को पैदा किया, (4) वास्तव में तुम लोगों के प्रयास विभिन्न प्रकार के हैं।[1] (5) तो जिसने (अल्लाह के मार्ग में) धन दिया और (अल्लाह की अवज्ञा से) परहेज़ किया, (6) और भलाई को सत्य माना, (7) उसको हम सहज मार्ग के लिए सुविधा देंगे।[2] (8) और जिसने कंजूसी की और (अपने अल्लाह से) बेपरवाही बरती (9) और भलाई को झुठलाया, (10) उसको हम कठिन मार्ग के लिए सुविधा देंगे।[3] (11) और उसका धन आख़िर उसके किस काम आएगा जबकि वह तबाह हो जाए?

(12) निस्संदेह, रास्ता बताना हमारे ज़िम्मे है, (13) और वास्तव में आख़िरत और दुनिया, दोनों के हम ही मालिक हैं। (14) अतः मैंने तुमको सावधान कर दिया है भड़कती हुई आग से। (15) उसमें नहीं झुलसेगा मगर वह अत्यन्त दुराचारी (16) जिसने झुठलाया और मुँह फेरा। (17) और उससे दूर रखा जाएगा वह अत्यन्त परहेज़गार (18) जो पवित्र होने के ध्येय से अपना धन देता है। (19) उसपर किसी का कोई एहसान नहीं है जिसका बदला उसे देना हो। (20) वह तो सिर्फ़ अपने महान रब की प्रसन्नता की प्राप्ति के लिए यह काम करता है। (21) और ज़रूर वह (उससे) प्रसन्न होगा।



1. अर्थात् जिस तरह रात और दिन और नर और मादा एक-दूसरे से भिन्न हैं, और उनके लक्षण और परिणाम परस्पर विरोधी हैं, उसी तरह तुम लोग जिन राहों और उद्देश्यों में प्रयत्नशील हो वे भी अपनी क़िस्मों की दृष्टि से विभिन्न और अपने परिणाम की दृष्टि से परस्पर विरोधी हैं।
2. अर्थात् उस मार्ग पर चलना उसके लिए आसान कर देंगे जो मानव-प्रकृति के अनुकूल है।
3. अर्थात् प्रकृति के विरुद्ध चलना उसके लिए आसान कर देंगे।

93. अज़-ज़ुहा

नाम

पहले ही वाक्यांश ''क़सम है प्रकाशमान दिन (अज़-ज़ुहा) की'' के शब्द 'अज़-ज़ुहा' को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसका विषय साफ़ बता रहा है कि यह मक्का मुअज़्ज़मा के बिलकुल प्रारम्भिक काल में अवतरित हुई है। उल्लेखों से मालूम होता है कि कुछ समय तक प्रकाशना के अवतरण का सिलसिला बन्द रहा था जिससे नबी (सल्ल०) बहुत व्याकुल हो गए थे और बार-बार आपको यह आशंका हो रही थी कि कहीं मुझसे कोई ऐसा क़ुसूर (कोताही) तो नहीं हो गया जिसके कारण मेरा प्रभु मुझसे अप्रसन्न हो गया और उसने मुझे छोड़ दिया है। इसपर आपको आश्वस्त किया गया है कि प्रकाशना के अवतरण का क्रम किसी अप्रसन्नता के कारण नहीं रोका गया था, बल्कि इसमें वही अन्तर्हित क्रियाशील था जो प्रकाशमान दिन के बाद रात की शान्ति के आच्छादन में क्रियाशील होता है अर्थात् प्रकाशना का तीव्र प्रकाश यदि आपपर निरन्तर पड़ता रहता तो आपकी स्नायु उसे सहन न कर सकती। इसलिए बीच में अन्तराल रखा गया, ताकि आपको शान्ति मिल जाए। नबी (सल्ल०) की यह मनःस्थिति नुबूवत (पैग़म्बरी) के प्रारम्भिक काल में हो जाया करती थी, जबकि अभी आपको प्रकाशना के अवतरण की कठिनाई सहन करने की आदत नहीं पड़ी थी। इसलिए बीच-बीच में अन्तराल की आवश्यकता होती थी। बात में जब नबी (सल्ल०) में इस बोझ को उठाने की क्षमता उत्पन्न हो गई तो दीर्घान्तराल की आवश्यकता नहीं रही।

विषय और वार्ता

इसका विषय अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को सान्त्वना देना है और उद्देश्य उस परेशानी को दूर करना है जो प्रकाशना के अवतरण का सिलसिला रुक जाने से आपको हो रही थी। सबसे पहले प्रकाशमय दिन और रात की शान्ति की सौगन्ध खाकर आपको शंकामुक्त किया गया है कि आपके प्रभु ने आपको कदापि नहीं छोड़ा है और न वह आपसे अप्रसन्न हुआ है। इसके पश्चात् आपको शुभ-सूचना दी गई है कि इस्लामी आह्वान के प्रारम्भिक काल में जिन बड़ी कठिनाइयों का आपको सामना करना पड़ रहा है, यह थोड़े दिनों की बात है। आपके लिए हर काल अपने पहले काल की अपेक्षा बहुत अच्छा होता चला जाएगा और कुछ अधिक विलम्ब न होगा कि अलह आपपर अपने

कृपा-प्रदान की ऐसी वर्षा करेगा जिससे आप सन्तुष्ट एवं प्रसन्न हो जाएँगे। यह क़ुरआन की उन स्पष्ट भविष्यवाणियों में से एक है जो बात में अक्षरशः पूरी हुई। तदन्तर अल्लाह ने अपने प्रिय मित्र (सल्ल०) से कहा कि तुम्हें यह परेशानी कैसे हो गई कि हमने तुम्हें छोड़ दिया है और हम तुमसे अप्रसन्न हो गए हैं। हम तो तुम्हारे जन्म-दिन से निरन्तर तुमपर अनुकम्पाएँ करते चले आ रहे हैं। तुम अनाथ पैदा हुए थे, हमने तुम्हारे पालन-पोषण और देख-रेख की उत्तम व्यवस्था कर दी। तुम मार्ग से अपरिचित थे, हमने तुम्हें मार्ग दिखाया। तुम धनहीन थे, हमने तुम्हें धनवान बनाया। ये सारी बातें साफ़ बता रही हैं कि तुम आरम्भ से हमारे प्रिय हो और हमारी उदार कृपा और हमारा अनुग्रह स्थायी रूप से तुम्हारी अवस्था का पर्याय बना हुआ है। अन्त में अल्लाह ने नबी (सल्ल०) को बताया है कि जो उपकार हमने तुम पर किए हैं, उनके प्रत्युत्तर में ईश्वर के प्राणियों के साथ तुम्हारा क्या व्यवहार होना चाहिए और हमारे अनुग्रहों और प्रदत्त सुख-सामग्रियों के प्रति तुम्हें किस तरह आभार प्रकट करना चाहिए।




93. सूरा अज़-ज़ुहा

(मक्का में उतरी–आयतें 11)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है प्रकाशमान दिन की (2) और रात की जबकि वह शान्तिपूर्वक छा जाए। (3) (ऐ नबी) तुम्हारे रब ने तुमको हरगिज़ नहीं छोड़ा और न वह अप्रसन्न हुआ। (4) और यक़ीनन तुम्हारे लिए बाद का ज़माना पहले ज़माने से ज़्यादा अच्छा है, (5) और जल्द ही तुम्हारा रब तुमको इतना देगा कि तुम ख़ुश हो जाओगे। (6) क्या उसने तुमको अनाथ नहीं पाया और फिर ठिकाना दिया? (7) और तुम्हें राह से अपरिचित पाया और फिर राह दिखाई। (8) और तुम्हें निर्धन पाया और फिर धनवान कर दिया। (9) अतः अनाथ के साथ सख़्ती न करो, (10) और माँगनेवाले को न झिड़को, (11) और अपने रब की नेमत का प्रदर्शन करो।

● ● ●

94. अल-इनशिराह

नाम

सूरा का नाम पहले ही वाक्य से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसका विषय सूरा 93 (अज़-ज़ुहा) से इतना अधिक मिलता-जुलता है कि ये दोनों सूरतें लगभग एक ही काल और एक जैसी परिस्थितियों में अवतरित प्रतीत होती हैं। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) कहते हैं कि यह मक्का मुअज़्ज़मा में 'अज़-ज़ुहा' के बाद अवतरित हुई है। इसका उद्देश्य और आशय भी अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को सान्त्वना देना है। इस्लामी आह्वान का प्रारम्भ करते ही अचानक आपको (जिस परिस्थितियों का सामना करना पड़ा उन) का कोई अनुमान आपको नुबूवत से पहले के जीवन में न था। इस्लाम के प्रचार एवं प्रसार का कार्य आपने आरम्भ किया कि देखते-देखते वही समाज आपका दुश्मन हो गया जिसमें आप पहले बड़े आदर की निगाह से देखे जाते थे। यद्यपि शनैः-शनैः आपको इन परिस्थितियों का मुक़ाबला करने की आदत पड़ गई। लेकिन प्रारम्भिक काल आपके लिए अत्यन्त हृदय-विदारक था। इसी लिए आपको सान्त्वना देने के लिए पहले सूरा 93 (अज़-ज़ुहा) अवतरित की गई और फिर इस सूरा का अवतरण हुआ। इसमें अल्लाह ने सबसे पहले बताया है कि हमने आपको तीन बहुत अनमोल पदार्थ प्रदान किए हैं, जिनके होते हुए कोई कारण नहीं कि आप दुखी एवं निराश हों। एक, अनमोल देन है सीने का खुल जाना। दुसरी, यह कि आपके ऊपर से हमने वह भारी बोझ उतार दिया जो नुबूवत से पहले आपकी कमर तोड़े डाल रहा था। तीसरी, आपकी चर्चा की उच्चता एवं अधिकता। इसके बाद जगत-प्रभु ने अपने बन्दे और रसूल (सल्ल॰) को यह सान्त्वना दी है कि कठिनाइयों का यह कालखण्ड जिसका आपको सामना करना पड़ रहा है, कोई बहुत दीर्घ कालखण्ड नहीं है जो सूरा 93 (अज़-ज़ुहा) (की चौथी और पाँचवीं आयतों में कही गई थीं।) अन्त में नबी (सल्ल॰) को निर्देश दिया गया है कि प्रारम्भिक काल की इन कठिनाइयों का मुक़ाबला करने की शक्ति एक ही चीज़ से पैदा होगी, और वह यह है कि जब अपनी व्यस्तताओं से आप निवृत्त हों तो उपासना की मशक़्क़त और साधन में लग जाएँ और हर चीज़ से बेपरवाह होकर अपने प्रभु से लौ लगाएँ।



94. सूरा अल-इनशिराह

(मक्का में उतरी–आयतें 8)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) (ऐ नबी) क्या हमने तुम्हारा सीना तुम्हारे लिए खोल नहीं दिया?[1] (2) और तुमपर से वह भारी बोझ उतरा दिया (3) जो तुम्हारी कमर तोड़े डाल रहा था।[2] (4) और तुम्हारे लिए तुम्हारी ध्वनि ऊँची कर दी। (5) अतः वास्तविकता यह है कि तंगी के साथ कुशादगी भी है। (6) बेशक, तंगी के साथ कुशादगी भी है।[3] (7) अतः अब तुम निवृत्त हो तो इबादत की मेहनत में लग जाओ (8) और अपने रब ही की ओर प्रवृत्त हो।[4]

● ● ●

1. सीना खोलने का शब्द क़ुरआन मजीद में जिन संदर्भों में आया है उनपर निगाह डालने से मालूम होता है कि इसके दो अर्थ हैं : (1) यह कि हर प्रकार के मानसिक संशय और द्विविधा से मुक्त होकर इनसान इस बात पर पूर्णरूप से सन्तुष्ट हो जाए कि इस्लाम का मार्ग ही सत्य है। (2) यह कि इनसान का हौसला बढ़ गाए किसी बड़ी से बड़ी मुहिम पर जाने और किसी कठिन से कठिन काम को पूरा कर देन में भी उसे झिझक न हो, और पैग़म्बरों के महान उत्तरदायित्वों के सँभालने का साहस उसमें पैदा हो जाए।
2. इससे मुराद दुख एवं शोक और चिन्ता और परेसानी का वह बोझ है जो अपनी क़ौम की नादानी और अज्ञान को देख-देखकर आपके संवेदनशील मन पर पड़ रहा था। आप उसपर कुढ़ते थे, मगर इस बिगाड़ को दूर करने का कोई उपाय आपको दीख न पड़ता था। यही चिन्ता आपकी कमर तोड़े डाल रही थी, जिसका भारी बोझ अल्लाह तआला ने सन्मार्ग दिखाकर आपके ऊपर से उतार दिया, आपके मन का सारा बोझ हलका कर दिया और आप पूरी तरह सन्तुष्ट हो गए कि इस्लाम के द्वारा आप न सिर्फ़ अरब बल्कि पूरे इनसानी गिरोह को उन ख़राबियों से निकाल सकते हैं जिनमें उस समय अरब से बाहर की भी सारी दुनिया डूबी हुई थी।
3. इस बात को दो बार दोहराया गया है ताकि नबी (सल्ल॰) को पूरी तरह सांत्वना दे दी जाए कि जिन कठिन परिस्थितियों से आप इस समय गुज़र रहे हैं ये ज़्यादा देर रहनेवाली नहीं हैं, बल्कि इनके बाद निकट भविष्य ही में अच्छी परस्थितियाँ सामने आनेवाली है।
4. अर्थात् जब कोई और व्यस्तता न रहे तो अपना निवृत्त समय इबादत की साधना और परिश्रम में लगाओ और हर ओर से ध्यान हटाकर केवल अपने रब से लौ लगाओ।

95. अत-तीन

नाम

पहले ही शब्द ''अत-तीन'' (इंजीर) को सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

क़तादह (रह॰) कहते हैं कि यह सूरा मदनी है। इब्ने अब्बास (रज़ि॰) से दो कथन उल्लिखित हैं। एक यह कि यह मक्की है और दूसरा यह कि यह मदनी है, किन्तु सर्वसामान्य विद्वान इसे मक्की ही ठहराते हैं और इसके मक्की होने का स्पष्ट लक्षण यह है कि यदि इसका अवतरण मदीना में हुआ होता तो मक्का के लिए ''यह नगर'' कहना यथोचित नहीं हो सकता था। इसके अतिरिक्त सूरा की वार्ता पर विचार करने पर प्रतीत होता है कि यह मक्का मुअज़्ज़मा के भी आरम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

इसका विषय है प्रतिदान और दण्ड की पुष्टि। इस उद्देश्य के लिए सबसे पहले प्रतापवान नबियों के प्रकट होनेवाले स्थानों की सौगन्ध खाकर कहा गया है कि सर्वोच्च अल्लाह ने मानव को अति उत्तम प्रतिरूप का पैदा किया है। यद्यपि इस तथ्य को दूसरी ज़गहों पर क़ुरआन मजीद में विभिन्न तरीक़ों से बयान किया गया है। उदाहरणतया कहीं कहा कि मानव को ईश्वर ने धरती पर ख़लीफ़ा (सत्ताधारी) बनाया और फ़रिस्तों को उसके आगे सजदा करने का आदेश दिया (क़ुरआन, 2:30-34, 6:165, 7:11, 15:28-29, 27:62, 38:71-73)। कहीं कहा कि मनुष्य उस ईश्वरीय अमानत का वाहक हुऐ है जिसे उठाने की शक्ति धरती, आकाश और पहाड़ों में भी न थी (क़ुरआन, 33:76)। कहीं कहा कि हमने आदम की सन्तान को प्रतिष्ठित किया और अपने बहुत-से सृष्ट जीवों पर श्रेष्ठता प्रदान की (क़ुरआन, 17:70), किन्तु यहाँ विशेष रूप से नबियों के प्रकट होने के स्थानों की सौगन्ध खाकर यह कहना कि मानव को अत्युत्तम प्रतिरूप पर पैदा किया गया है, यह अर्थ रखता है कि मानव-जाति को इतना उत्तम रूप-प्रतिरूप प्रदान किया गया कि उसमें नुबूवत (पैग़म्बरी) जैसे उच्चतम पद के भारवाहक लोग पैदा हुए, जिससे ऊँचा पद ईश्वर के किसी दूसरे सृष्ट-जीव को प्राप्त नहीं हुआ। तदन्तर यह बताया गया है कि मानव में दो प्रकार के लोग पाए जाते हैं। एक, वे जो इस अत्युत्तम प्रतिरूप में पैदा होने के बाद बुराई की ओर झुक जाते हैं और गिरते-गिरते नैतिक पतन के उस अन्तिम स्तर पर पहुँच जाते हैं जहाँ उनसे अधिक नीच कोई दूसरा प्राणी नहीं होता। दूसरे, वे लोग जो ईमान और अच्छे कर्म का मार्ग

अपनाकर इस गिरावट से बच जाते हैं और उस उच्च स्थान पर स्थिर रहते हैं जो उनके उत्तम प्रतिरूप में पैदा होने को अनिवार्यतः अपेक्षित है। अन्त में, इस तथ्य से यह प्रमाणित किया गया है कि जब मनुष्यों में दो अलग-अलग और नितान्त भिन्न प्रकार के लोग पाए जाते हैं तो फिर कर्मों के प्रतिदान का कैसे नकार किया जा सकता है। परिणाम दोनों (प्रकार के मानवों) का समान हो तो इसका अर्थ यह है कि ईश्वरीय लोक में कोई न्याय नहीं है। हालाँकि मानव-प्रकृति ौर मानव की सामान्य बुद्धि को यह अपेक्षित है कि जो व्यक्ति भी शासक हो वह न्याय करे। फिर इसकी कल्पना कैसे की जा सकती है कि अल्लाह, जो सब शासकों से बड़ा शासक है, न्याय नहीं करेगा।



95. सूरा अत-तीन

(मक्का में उतरी–आयतें 8)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है इंजीर और ज़ैतून[1] की (2,3) और तूरे सीना (सीना पहाड़) और इस शान्तिपूर्ण शहर (मक्का) की, (4) हमने इनसान को सर्वोत्तम संरचना के साथ पैदा किया, (5) फिर उसे उलटा फेरकर हमने सब नीचों से नीच कर दिया, (6) सिवाए उन लोगों के जो ईमान लाए और अच्छे कर्म करते रहे कि उसके लिए कभी समाप्त न होनेवाला बदला है। (7) अतः (ऐ नबी) इसके बाद कौन अच्छे बदले और सज़ा के संबंध में तुमको झुठला सकता है? (8) क्या अल्लाह सब हाकिमों से बड़ा हाकिम नहीं है?[2]



1. अर्थात् इन फलों की पैदावार के इलाक़े (सीरिया और फ़िलस्तीन) की जहाँ बड़ी संख्या में नबी पैदा हुए।
2. अर्थात् जब दुनिया के छोटे-छोटे हाकिमों से भी तुम यह चाहते हो और यही आशा रखते हो कि वे न्या करें, अपराधियों को सज़ा दें और अच्छे काम करनेवालों को बदला और पुरस्कार दें, तो ईश्वर के बारे में तुम्हारा क्या विचार है? तुम समझते हो कि वह सब हाकिमों का हाकिम कोई न्याय न करेगा? क्या उससे तुम यह आशा रखते हो कि वह बुरे और भले को एक जैसा कर देगा? क्या उसकी दुनिया में निकृष्टतम कर्म करनेवाले और अत्यन्त अच्छे कर्म करनेवाले, दोनों मरकर ख़ाक हो जाएँगे और किसी को न दुष्कर्मी की सज़ा मिलेगी और न सुकर्म का अच्छा बदला?

96. अल-.अलक़

नाम

दूसरी आयत के ''अलक़'' (ख़ून का लोथड़ा) शब्द को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इस सूरा के दो भाग हैं। पहला आरम्भ से लेकर पाँचवीं आयत के वाक्यांश ''जिसे वह न जानता था'' पर समाप्त होता है और दूसरा भाग आयत 6 से शुरू होकर सूरा के अन्त तक चलात है। पहले भाग के सम्बन्ध में मुस्लिम समुदाय के विद्वानों की बड़ी संख्या इस बात पर सहमत है कि यह सबसे पहली प्रकाशना है जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) पर अवतरित हुई। दूसरा भाग बाद में उस समय अवतरित हुआ जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हरम (काबा की मस्जिद) में नमाज़ पढ़नी शुरू की और अबू जहल ने आपको धमकियाँ देकर इससे रोकने की कोशिश की।

वह्य (प्रकाशना) का आरम्भ

हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) पर प्रकाशना का आरम्भ सच्चे (और कुछ उल्लेखों में हैं अच्छे) सपनों के रूप में हुआ। आप जो स्वप्न भी देखते, वह ऐसा होता कि जैसे आप दिन के प्रकाश में देख रहे हैं। फिर आप एकान्त प्रिय हो गए और कई-कई रात 'हिरा' की गुफा में रहकर उपासना करने लगे। हज़रत आइशा (रज़ि॰) ने ''तहन्नुस'' का शब्द प्रयोग किया है, जिसे इमाम ज़ोहरी ने तअब्बुद (इबादत, उपासना) व्याख्यायित किया है। यह किसी प्रकार की उपासना थी जो आप करते थे, क्योंकि उस वक़्त तक अल्लाह की ओर से आपको उपासना की विधि नहीं बताई गई थी। एक दिन जब आप हिरा की गुफा में थे, सहसा आपपर प्रकाशना का अवतरण हुआ और फ़रिश्ते ने आकर आपसे कहा : ''पढ़ो।'' इसके बाद हज़रत आइशा (रज़ि॰) स्वयं अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के कथन का उल्लेख करती हैं कि ''मैंने कहा, मैं तो पढ़ा हुआ नहीं हूँ। इसपर फ़रिश्ते ने मुझे पकड़कर भींचा, यहाँ तक कि मेरी सहनशक्ति जवाब देने लगी। फिर उसने मुझे छो' दिया।'' (ऐसा तीन बार हुआ, तीसरी बार जब फ़रिश्ते ने मुझे छोड़ा तो) कहा, पढ़ो। अपने प्रभु के नाम के साथ, जिसने पैदा किया।'' यहाँ तक कि ''मालम-यालम'' (जिसे वह न जानता था) तक पहुँच गया। हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती हैं कि इसके बाद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) काँपते-लरज़ते वहाँ से पलटे और हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) के पास पहुँचकर कहा, ''मुझे

ओढ़ाओ, मुझो ओढ़ाओ।'' अतएव आपको ओढ़ा दिया गया। जब आपपर से भय की हालत दूर हो गई तो आपने कहा, ''मुझे अपने प्राण का भय है।'' उन्होंने कहा, ''कदापि नहीं, आप प्रसन्न हो जाइए, आपको अल्लाह कभी रुसवा न करेगा; आप नातेदारों से अच्छा व्यवहार करते हैं; सत्य बोलते हैं (एक उल्लेख में इतना और है कि अमानतें अदा करते हैं) बेसहारा लोगों का बोझ उठाते हैं; निर्धन लोगों को कमाकर देते हैं; अतिथि सत्कार करते हैं और अच्छे कामों में सहायता करते हैं।'' फिर वे नबी (सल्ल॰) को साथ लेकर वरक़ा बिन नौफ़ल के पास गईं, जो उनके चचेरे भाई थे, अज्ञानकाल में ईसाई हो गए थे; अरबी और इबरानी ज़बान में इंजील लिखते थे; बहुत बूढ़े और नेत्रहीन हो गए थे। हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) ने उनसे कहा, ''भाईजान! तनिक अपने भतीजे का क़िस्सा सुनिए।'' वरक़ा ने नबी (सल्ल॰) से कहा, ''भतीजे तुमको क्या दिखाई दिया?'' अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने जो कुछ देखा था, वह बयान किया। वरक़ा ने कहा, ''यह वही नामूस (वह्य लानेवाला फ़रिश्ता) है जिसे अल्लाहने मूसा (अलै॰) के पास भेजा था। काश! मैं आपकी नुबूवत के समय में बलशाली युवा होता; काश! मैं उस वक़्त जीवित रहूँ जब आपकी क़ौम आपको निकालेगी।'' अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा, ''ये लोग मुझे निकाल देंगे?'' वरक़ा ने कहा, ''हाँ, कभी ऐसा नहीं हुआ कि कोई व्यक्ति वह चीज़ लेकर आया हो, जो आप लाए हैं और उससे दुश्मनी न की गई हो। यदि मैंने आपका समय पाया तो मैं आपकी ज़ोरदार मदद करूँगा।'' किन्तु अधिक समय नहीं व्यतीत हुआ था कि वरक़ा का देहान्त हो गया। यह क़िस्सा स्वयं अपने मुँह से बोल रहा है कि फ़रिश्ते के आगमन से एक क्षण पहले तक भी अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के मस्तिष्क में यह बात नहीं थी कि आप नबी बनाए जानेवाले हैं। इस चीज़ का इच्छुक या आशावान होना तो अलग रहा, आपकी कल्पना में भी यह नहीं था कि ऐसा कोई मामला आपके सामने पेश आएगा। वह्य (प्रकाशना) का अवतरण और फ़रिश्ते का इस तरह सामने आना आपके लिए अचानक एक घटना थी, जिसका प्रथम प्रभाव आपके ऊपर वही हुआ जो एक बेख़बर मनुष्य पर इतनी बड़ी एक घटना के घटित होने से स्वभावतः हो सकता है। यही कारण है कि जब आप इस्लाम का आह्वान लेकर उठे तो मक्का के लोगों ने आपपर हर प्रकार के आक्षेप किए। किन्तु उनमें से कोई यह कहनेवाला न था कि हमको तो पहले ही यह आशंका थी कि आप कोई दावा करनेवाले हैं, क्योंकि आप एक समय से नबी बनने की तैयारियाँ कर रहे थे। इस क़िस्से से यह बात भी मालूम होती है कि नुबूवतसे पहले आपका जीवन कैसा पवित्र था और आपका चरित्र कितना उच्च था। हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) ने अपने दीर्घ दाम्पत्य जीवन में आपको इतने उच्च श्रेणी का मनुष्य पाया था कि जब नबी (सल्ल॰) ने 'हिरा' नामक गुफा में घटित

होनेवाली घटना का वर्णन किया तो निस्संकोच उन्होंने स्वीकार कर लिया कि वास्तव में अल्लाह का फ़रिश्ता ही आपके पास वह्य (प्रकाशना) लेकर आया था। इसी तरह वरक़ा बिन नैफ़ल ने भी जब इस घटना के विषय में सुना तो इसको कोई वस्वसा (भ्रम) नहीं समझा, बल्कि सुनते ही कह दिया कि यह वही नामूस (फ़रिश्ता) है जो मूसा (अलै॰) के पास आया था। इसका अर्थ यह है कि उनकी दृष्टि में भी आप इतने उच्च श्रेणी के मनुष्य थे कि आपका नुबूवत के पद पर आसीन होना कोई आश्चर्यकारक बात नहीं थी।

सूरा के दूसरे भाग के अवतरण का परिप्रेक्ष्य

इस सूरा का दूसरा भाग उस समय अवतरित हुआ जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हरम (काबा की मस्जिद) में इस्लामी तरीक़े पर नमाज़ पढ़नी शुरू की और अबू जह्ल ने आपको डरा-धमकाकर इससे रोकना चाहा। अतएव इस सम्बन्ध में कई हदीसें हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) और हज़रत अबू हुरैरा से उल्लिखित हैं, जिनमें अबू जह्ल के इन अभद्र व्यवहारों का उल्लेख किया गया है। हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि॰) का बयान है कि अबू जह्ल ने क़ुरेश के लोगों से पूछा, ''क्या मुहम्मद (सल्ल॰) तुम्हारे सामने धरती पर अपना मुँह टिकाते हैं?'' लोगों ने कहा, ''हाँ!'' उसने कहा, ''लात और उज़्ज़ा की सौगन्ध, अगर मैंने उनको इस प्रकार नमाज़ पढ़ते हुए देख लिया, तो उनकी गर्दन पर पाँव रख दूँगा और उनका मुँह ज़मीन पर रगड़ दूँगा।'' फिर ऐसा हुआ कि नबी (सल्ल॰) को नमाज़ पढ़ते देखकर वह आगे बढ़ा, ताकि आपकी गर्दन पर पाँव रखे, किन्तु अचानक लोगों ने देखा कि वह पीछे हट रहा है और अपना मुँह किसी चीज़ से बचाने की कोशिश कर रहा है। उससे पूछा गया कि यह तुझे क्या हो गया? उसने कहा, ''मेरे और उनके मध्य आग की क ख़ंदक (खाई) और क भयावह चीज़ थी और कुछ पंख थे।'' अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा कि ''यदि वह मेरे निकट आता तो फ़रिश्ते उसके चिथड़े उड़ा देते।'' *(हदीस : अहमद, मुस्लिम, नसई)*

इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) का एक और उल्लेख है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) मक़ामे-इबराहीम (हरम में एक विशेष स्थल) पर नमाज़ पढ़ रहे थे। अबू जह्ल का उधर से जाना हुआ तो उसने कहा, ''ऐ मुहम्मद! क्या मैंने तुमको इससे रोका नहीं था?'' और उसने आपको धमकियाँ देनी शुरू की। इसके उत्तर में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उसको सख़्ती के साथ झिड़क दिया। इसपर उसने कहा, ''ऐ मुहम्मद, तुम किस बल पर मुझे डराते हो? अल्लाह की क़सम, इस घाटी में मेरे समर्थक एवं सहायक सबसे अधिक हैं।'' *(हदीस : अहमद, तिरमिज़ी, नसई)*

इन्हीं घटनाओं पर इस सूरा का वह भाग अवतरित हुआ जो ''कदापि नहीं, मनुष्य उद्दण्डता से काम लेता है'' से आरम्भ होता है। स्वभावतः इस भाग का स्थान वही नहीं होना चाहिए था जो क़ुरआन की इस सूरा में रखा गया है, क्योंकि प्रथम वह्य (प्रकाशना) के अवतरित होने के पश्चात् इस्लाम का सर्वप्रथम प्रदर्शन नबी (सल्ल॰) ने नमाज़ ही से किया था और काफ़िरों (इनकार करनेवालों) से आपकी मुठभेड़ का आरम्भ भी इसी घटना से हुआ था।




96. सूरा अल-अ़लक़

(मक्का में उतरी–आयतें 19)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) पढ़ो (ऐ नबी), अपने रब के नाम के साथ जिसने पैदा किया, (2) जमे हुए ख़ून के एक लोथड़े से इनसान की रचना की। (3) पढ़ो, और तुम्हारा रब बड़ा उदार है, (4) जिसने क़लम के द्वारा ज्ञान की शिक्षा दी, (5) इनसान को वह ज्ञान दिया जिसे वह न जानता था।[1]

(6) हरगिज़ नहीं,[2] इनसान सरकशी करता है, (7) सि कारण कि वह अपने आपको स्वच्छंद देखता है, (8) (हालाँकि) पलटना यक़ीनन तेरे रब ही की ओर है। (9,10) तुमने देखा उस व्यक्ति को जो एक बन्दे को रोकता है, जबकि वह नमाज़ पढ़ता हो? (11) तुम्हारा क्या विचार है अगर (वह बन्दा) सन्मार्ग पर हो (12) या परहेज़गारी का अनुदेश देता हो? (13) तुम्हारा क्या विचार है अगर (यह रोकनेवाला व्यक्ति सत्य को) झुठलाता और मुँह मोड़ता हो? (14) क्या वह नहीं जानता कि अल्लाह देख रहा है? (15) हरगिज़ नहीं, अगर वह बाज़ न आया तो हम उसकी पेशानी के बाल पकड़कर खीचेंगे, (16) उस पेशानी को जो झूठी और बड़ी ही अपराधी है। (17) वह बुला ले अपने समर्थकों की टोली को, (18) हम भी अज़ाब के फ़रिश्तों को बुला लेंगे। (19) हरगिज़ नहीं, उसकी बात न मानो और सजदा करो और (अपने रब का) सामीप्य प्राप्त करो।

● ● ●

1. ये क़ुरआन मजीद की सबसे पहली आयतें है, जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) पर अवतरित हुई।
2. ये आयतें उस समय अवतरित हुई, जब नुबूवत (पैग़म्बरी) के पद पर प्रतिष्ठित होने के बाद आप (सल्ल॰) ने हरम (काबा) में नमाज़ पढ़नी शुरू की और अबू जह्ल ने आपको नमाज़ से रोकना चाहा।

97. अल-क़द्र

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''अल-क़द्र'' को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसके मक्की और मदनी होने में मतभेद है। सूरा की वार्ता पर विचार करने से यही प्रतीत होता है कि इसको मक्का ही में अवतरित होना चाहिए था, जैसा कि हम आगे स्पष्ट करेंगे।

विषय और वार्ता

इसका विषय लोगों को क़ुरआन के मूल्य और महत्त्व से परिचित कराना है। क़ुरआन मजीद की सूरतों के क्रम में इसे सूरा 96 (अलक़) के बाद रखने से स्वयं यह स्पष्ट होता है कि जिस पवित्र किताब के अवतरण का आरम्भ सूरा 'अ़लक़' की आरम्भिक पाँच आयतों में हुआ था, उसी के सम्बन्ध में इस सूरा में लोगों को बताया गया है कि वह किस भाग्य-निर्मात्री रात्रि में अवतरित हुई है; कैसा प्रतापवान ग्रंथ है और उसका अवतरण क्या अर्थ रखता है। सबसे पहले इसमें सर्वोच्च अल्लाह ने कहा है कि हमने इसे अवतरित किया है अर्थात् यह मुहम्मद की अपनी रचना नहीं है, बल्कि इसके अवतरित करनेवाले हम है। तदन्तर कहा कि इसका अवतरण हमारी ओर से क़द्र की रात में हुआ। क़द्र की रात के दो अर्थ है और दोनों ही यहाँ अभीष्ट हैं। एक यह कि यह वह रात है जिसमें तक़दीरों के फ़ैसले कर दिए जाते हैं, दूसरे शब्द में, इसमें इस किताब का अवतरण मात्र एक किताब का अवतरण नहीं है, बल्कि यह वह काम है जो न केवल क़ुरैश, न केवल अरब, बल्कि दुनिया की तक़दीर बदलकर रख देगा। यही बात सूरा 44 (दुख़ान) में भी कही गई है। (देखिए, सूरा 44 (दुख़ान) का परिचय सम्बन्धी लेख, आयत 3 से 5 तक) दूसरा अर्थ यह है कि यह अति उत्तम, महत्त्वपूर्ण और प्रतिष्ठित रात है और आगे इसकी व्याख्या यह की गई है कि यह हज़ार महीनों से अधिक उत्तम है। इससे मक्का के काफ़िरों को मानो सावधान किया गया है कि तुम अपनी नादानी से इस किताब को अपने लिए एक आपदा समझ रहे हो; हालाँकि जिस रात को इसके अवतरण के फ़ैसले की उद्घोषणा की गई वह शुभ और भलाई की रात थी कि कभी मानव-इतिहास के हज़ार महीनों में भी मानव-कल्याण के लिए वह कार्य नहीं हुआ था, जो इस रात में कर दिया गया। यह बात भी सूरा 44 (दुख़ान) आयत 3 में एक दूसरे ढंग से बयान की गई है। अन्त में बताया गया है कि सि रात को फ़रिश्ते और

जिबरील (अलै०) अपने प्रभु की अनुज्ञा से प्रत्येक आदेश लेकर उतरते हैं। (जिसे सूरा 44 (दुख़ान) आयत 4 में 'अम्रे-हकीम' कहा गया है) और वह संध्या से उषाकाल तक सर्वथा सलामती की रात है अर्थात् उसमें कोई बुराई प्रविष्ट नहीं होती, क्योंकि अल्लाह के सभी फ़ैसले अन्ततः भलाई के लिए होते हैं, यहाँ तक कि यदि किसी क़ौम को विनष्ट करने का फ़ैसला होता है तो भलाई के लिए होता है, न कि बुराई के लिए।

⊖ ⊖ ⊖

97. सूरा अल-क़द्र

(मक्का में उतरी–आयतें 5)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) हमने इस (क़ुरआन) को क़द्र की रात में अवतरित किया है। (2) और तुम क्या जानो कि क़द्र की रात क्या है? (3) क़द्र की रात हज़ार महीनों से ज़्यादा उत्तम है। (4) फ़रिश्ते और रूह उसमें अपने रब की अनुज्ञा से हर आदेश लेकर उतरते हैं। (5) यह रात पूरी की पूरी सलामती है उषाकाल के उदय होने तक।

● ● ●

९८. अल-बैयिनह

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''अल-बैयिनह'' (स्पष्ट प्रमाण) को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसके भी मक्की और मदनी होने में मतभेद है। कुछ टीकाकार कहते हैं कि जनसामान्य की दृष्टि में यह मक्की है और कुछ अन्य टीकाकार कहते हैं कि जनसामान्य की दृष्टि में मदनी है। इब्नुज़्ज़ुबैर और अता बिन यसार का कथन है कि यह मदनी है। इब्ने अब्बास और क़तादह के दो कथन उद्धृत हैं। एक यह कि यह मक्की है और दूसरा यह कि यह मदनी है। हज़रत आइशा (रज़ि॰) इसे मक्की ठहराती है। 'बहरुल-मुहीत' के लेखक अबू हैयान और 'अहकामुल-कुरआन' के लेखक अब्दुल मुनइम, इब्नुल-फ़रस इसके मक्की होने ही को प्राथमिकता देते हैं। जहाँ तक इसकी वार्ता का सम्बन्ध है इसमें कोई ऐसा लक्षण नहीं पाया जाता जो इसके मक्की या मदनी होने की ओर स्पष्ट संकेत करता हो।

विषय और वार्ता

क़ुरआन मजीद के क्रम में इसको सूरा 96 (अलक़) और सूरा 97 (क़द्र) के बाद रखना बहुत अर्थपूर्ण है। सूरा 'अलक़' में पहली प्रकाशना अंकित की गई है। सूरा 'क़द्र' में बताया गया है कि यह कब अवतरित हुई और इस सूरा में बताया गया है कि इस पवित्र ग्रंथ के साथ एक रसूल भेजना क्यों आवश्यक था। सबसे पहले रसूल भेजने की आवश्यकता का वर्णन किया गया है और वह यह है कि दुनिया के लोग, चाहे वे किताबवालों में से हो या बहुदेववादियों में से, जिस कुफ़्र की दशा में ग्रस्त थे, उससे उनका निकलाना इसके बिना सम्भव न था कि एक रसूल भेजा जाए, जिसका अस्तित्व स्वयं अपनी रिसालत (पैग़म्बरी) पर उज्ज्वल प्रमाण हो और वह लोगों के समक्ष अल्लाह की किताब को उसके मूल और तत्सम रूप में प्रस्तुत करे, जो असत्य की उन समस्त मिलावटों से मुक्त हो जिनसे पिछली आसमानी किताबों को प्रदूषित कर दिया गया है और जो बिलकुल सीधी और विशुद्ध शिक्षाओं पर आधारित हो, तत्पश्चात् किताबवालों की गुमराहियों के सम्बन्ध में स्पष्ट किया गया है कि उनके इन विभिन्न मार्गों में भटकने का कारण यह न था कि सर्वोच्च अल्लाह ने उनका कोई मार्गदर्शन नहीं किया था बल्कि वे इसके बाद भटके, जबकि सीधे मार्ग का स्पष्ट वर्णन उनके पास आ चुका था। इससे स्वतः यह निष्कर्ष निकलता है कि अपनी गुमराहियों के वे स्वयं उत्तरदायी हैं। और अब फिर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के द्वारा स्पष्ट बयान आ जाने के बाद भी यदि वे भटकते ही रहेंगे तो उनका उत्तरदायित्व और अधिक बढ़ जाएगा। इस सिलसिले में यह बताया गया है कि अल्लाह की ओर से जो नबी भी आए थे और जो किताबें भी आई थीं, उन्होंने इसके अतिरिक्त कोई आदेश नहीं दिया था कि सब मार्गों को छोड़कर अल्लाह की विशुद्ध बन्दगी का मार्ग अपनाया जाए। किसी और की दासता और बन्दगी तथा आज्ञापालन एवं उपासना को इसके साथ सम्मिलित न किया जाए। नमाज़ क़ायम की जाए और ज़कात दी जाए। यही सदैव से एक सत्यधर्म रहा है। इससे भी यह निष्कर्ष स्वयं निकलता है कि किताबवालों ने इस मूल धर्म से हटकर अपने धर्मों में जिन नई-नई बातों की अभिवृद्धि कर ली है, वे सब असत्य हैं। और अल्लाह का यह रसूल, जो अब आया है, उसी मूल धर्म की ओर पलटने के लिए उन्हें आमंत्रित कर रहा है। अन्त में साफ़-साफ़ कहा गया है कि जो किताबवाले और बहुदेववादी इस रसूल को मानने से इनकार करेंगे, वे समस्त प्राणियों में निकृष्टतम हैं, उनका दण्ड शाश्वत नरक है। और जो लोग ईमान लाकर अच्छे कर्म का मार्ग अपना लेंगे और संसार में ईश्वर से डरते हुए जीवन व्यतीत करेंगे, वे सब प्राणियों में उत्तम हैं। उनका प्रतिदान यह है कि वे शाश्वत जन्नत में रहेंगे, अल्लाह उनसे राज़ी हुआ वे अल्लाह से राज़ी हो गए।



98. सूरा अल-बैयिनह

(मदीना में उतरी–आयतें 8)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) किताबवालों और मुशरिकों (बहुदेववादियों) में से जो लोग काफ़िर (इनकार करनेवाले) थे, (वे अपने इनकार से) बाज़ आनेवाले न थे जब तक कि उनके पास स्पष्ट प्रमाण न आ जाए (2) (अर्थात्) अल्लाह की ओर से एक रसूल[1] जो पाक सहीफ़े (पवित्र पृष्ठ) पढ़कर सुनाए (3) जिनमें बिलकुल सीधे और ठीक लेख अंकित हों।[2]

(4) पहले जिन लोगों को किताब दी गई थी उनमें फूट नहीं पड़ी, मगर इसके बाद कि उनके पास (सन्मार्ग का) स्पष्ट बयान आ चुका था।[3] (5) और उनको इसके सिवा कोई आदेश नहीं दिया गया था कि अल्लाह की बन्दगी करें, अपने दीन (धर्म) को उसके लिए ख़ालिस करके, बिलकुल एकाग्र होकर, और नमाज़ क़ायम करें और ज़कात दें। यही अत्यन्त सही और दुरुस्त दीन (धर्म) है।

(6) किताबवालों और मुशरिकों (बहुदेववादियों) में से जिन लोगों ने कुफ़्र (इनकार) किया है[4] वे यक़ीनन जहन्नम की आग में जाएँगे और सदैव उसमें रहेंगे, ये लोग सारी सृष्टि में अत्यन्त बुरे हैं। (7) जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, वे यक़ीनन सृष्टि के सर्वोत्तम प्राणी हैं। (8) उनका बदला उनके रब के यहाँ शाश्वत निवास की जन्नतें हैं, जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, वे उनमें हमेशा-हमेशा रहेंगे। अल्लाह उनसे राज़ी हुआ और वे अल्लाह से राज़ी हुए। यह कुछ है उस व्यक्ति के लिए जिसने अपने रब का डर रखा हो।

●●●

1. यहाँ अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को ख़ुद ही एक स्पष्ट प्रमाण कहा गया है।
2. अर्थात् ऐसे सहीफ़े जिनमें किसी तरह के असत्य, किसी तरह की गुमराही और पथभ्रष्टता और किसी नैतिक गन्दगी की मिलावट न हो।
3. अर्थात् इससे पहले किताबवाले जो विभिन्न गुमराहियों में भटककर अगणत सम्प्रदायों में बँट गए उसका कारण यह न था कि अल्लाह ने अपनी ओर से उनके मार्गदर्शन के लिए स्पष्ट प्रमाण भेजने में कोई कसर उठा रखी थी, बल्कि यह नीति उन्होंने अल्लाह की ओर से मार्गदर्शन आ जाने के बाद अपनाई थी, इसलिए अपनी गुमराही के वे ख़ुद ज़िम्मेदार थे।
4. यहाँ कुफ़्र से मुराद मुहम्मद (सल्ल०) को (पैग़म्बर) मानने से इनकार है।

99. अज़-ज़िलज़ाल

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''ज़िलज़ालहा'' से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसके मक्की और मदनी होने में मतभेद हैं। किन्तु क़ुरआन को समझकर पढ़नेवाला हर व्यक्ति यही महसूस करेगा कि यह मक्की है, बल्कि इसकी वार्ता और वर्णन-शैली से उसे यह प्रतीत होगा कि यह मक्का के भी उस आरम्भिक कालखण्ड में अवतरित हुई होगी जब अत्यन्त संक्षिप्त और अत्यन्त हृदयस्पर्शी ढंग से इस्लाम की मौलिक धारणाएँ लोगों के समक्ष प्रस्तुत की जा रही थी।

विषय और वार्ता

इसका विषय है मृत्यु के पश्चात् दूसरा जीवन और उसमें उन सब कर्मों का पूरा कच्चा-चिट्ठा मनुष्य के सामने आ जाना जो उसने संसार में किए थे। सबसे पहले तीन संक्षिप्त वाक्यों में यह बताया गया है कि मृत्यु के पश्चात् दूसरा जीवन किस प्रकार अस्तित्व में आएगा और वह मनुष्य के लिए कैसा आश्चर्यजनक होगा। फिर दो वाक्यों में बताया गया है कि यही धरती जिसपर रहकर मनुष्य ने निश्चिन्त भाव के साथ हर प्रकार के कर्म किए हैं, उस दिन अल्लाह के आदेश से बोल पड़ेगी और एक-एक मनुष्य के सम्बन्ध में यह बयान कर देगी कि किस समय और कहाँ उसने क्या काम किया था। तदन्तर कहा गया है कि उस दिन धरती के कोने-कोने में मनुष्य गिरोह-के-गिरोह अपनी क़ब्रों में से निकल-निकलकर आएँगे, ताकि उनके कर्म उनको दिखाए जाएँ और कर्मों की यह प्रस्तुति ऐसी पूर्ण और विस्तृत होगी कि कोई कणभर भलाई या बुराई भी ऐसी न रह जाएगी, जो सामने न आ जाए।



99. सूरा अज़-ज़िलज़ाल

(मक्का में उतरी–आयतें 8)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) जब ज़मीन अपनी पूरी शिद्दत के साथ हिला डाली जाएगी, (2) और ज़मीन अपने अन्दर के सारे बोझ निकालकर बाहर डाल देगी, (3) और इनसान कहेगा कि यह इसको क्या हो रहा है? (4) उस दिन वह अपने (ऊपर बीते हुए) हालात बयान करेगी, (5) क्योंकि तेरे रब ने उसे (ऐसा करने का) आदेश दिया होगा। (6) उस दिन लोग विभिन्न दशा में पलटेंगे, ताकि उनके कर्म उनको दिखाए जाएँ। (7) फिर जिस किसी ने कण-भर नेकी की होगी वह उसको देख लेगा। (8) और जिसने कण-भर बुराई की होगी वह उसको देख लेगा।



100. अल-आदियात

नाम

पहले ही शब्द ''अल-आदियात'' (दौड़नेवाले) को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसके मक्की और मदनी होने में मतभेद है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि॰), जाबिर, हसन बसरी, इक्रमा और अता कहते हैं कि यह मक्की है। हज़रत अनस बिन मालिक और क़तादा कहते हैं कि यह मदनी है और हज़रत इब्ने अब्बास के दो कथन उल्लिखित हुए हैं। एक, यह कि यह मक्की है और दूसरा यह कि मदनी है। लेकिन सूरा की वार्ता और वर्णन-शैली साफ़ बता रही है कि यह न केवळ मक्की है, बल्कि मक्का के भी आरम्भिक काल में अवतरित हुई है।

विषय और वार्ता

इसका उद्देश्य लोगों को यह समझाना है कि मनुष्य परलोक का इनकार करके या उससे ग़ाफ़िल होकर कैसी नैतिक अक्षमता में गिर जाता है, और साथ-साथ लोगों को इस बात से सावधान भी करना है कि परलोक में केवल उनके बाह्यकर्मों ही की नहीं, बल्कि उनके दिलों में छिपे हुए भेदी तक की जाँच-पड़ताल होगी। इस उद्देश्य के लिए अरब में फैली हुई उस सामान्य अशान्ति को प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिससे सारा देश तंग आ चुका था। हर तरफ़ रक्तपात होता था और लूटमार का बाज़ार गर्म था। क़बीलों पर क़बीले छापे मार रहे थे और कोई व्यक्ति भी रात चैन से नहीं व्यतीत कर सकता था, क्योंकि हर समय यह खटका लगा रहता था कि कब कोई शत्रु प्रातः में उसकी बस्ती पर टूट पड़े। यह एक ऐसी स्थिति थी जिसे अरब के सारे ही लोग जानते थे और इसकी बुराई को महसूस करते थे। यद्यपि लुटनेवाला इसपर विलाप करता था और लूटनेवाला इसपर खुश होता था। लेकिन जब किसी समय लूटनेवाले की अपनी शामत आ जाती थी तो उसे भी इसकी अनुभूति हो जाती थी कि यह कैसी बुरी दया है, जिसमें हम लोग ग्रस्त हैं। सि स्थिति की ओर संकेत करके यह बताया गया है कि मृत्यु के पश्चात् दूसरा जीवन और उसमें ईश्वर के समक्ष उत्तरदायित्व से अनभिज्ञ होकर मनुष्य अपने प्रभु का कृतघ्न हो गया है। वह ईश्वर की दी हुई शक्तियों को अत्याचार और लूट तथा विनाश के लिए प्रयोग में लाए जा रहा है। वह धन-दौलत के मोह से अन्धा होकर हर तरह से उसे प्राप्त करने का प्रयास करता है, चाहे वह कैसा ही गन्दा और घिनौना तरीक़ा हो और उसकी हालत स्वयं इस बात की गवाही दे रही है कि वह अपने प्रभु की

दी हुई शक्तियों का अनुचित प्रयोग करके उसके आगे अकृतज्ञता दिखा रहा है। उसकी यह नीति कदापि न होती यदि वह उस समय को जानता होता जब क़ब्रों से जीवित होकर उठना होगा और जब वे इरादे और प्रयोजन तथा उद्देश्य तक दिलों से निकाल कर सामने रख दिए जाएँगे, जिसकी प्रेरणा से उसने संसार में तरह-तरह के कार्य किए थे। उस समय मानवों के प्रभु को भली-भांति मालूम होगा कि कौन क्या करके आया है और किसके साथ क्या बरताव किया जाना चाहिए।



100. सूरा अल-आदियात

(मक्का में उतरी–आयतें 11)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) क़सम है न (घोड़ों) की, जो फुनकार मारते हुए दौड़ते हैं, (2) फिर (अपनी टापों से) चिंगारियाँ झाड़ते हैं, (3) फिर सुबह-सवेरे छापा मारते हैं, (4) फिर उस अवसर पर गर्द-ग़ुबार उड़ाते हैं, (5) फिर इसी हालत में किसी दल में जा घुसते हैं, (6) वास्तविकता यह है कि इनसान अपने रब का बड़ा नाशुक्रा है,[1] (7) और वह ख़ुद इसपर गवाह है,[2] (8) और वह माल और धन के मोह में बुरी तरह जकड़ा हुआ है। (9) तो क्या वह उस समय को नहीं जानता जब क़ब्रों में जो कुछ (गड़ा हुआ) है उसे निकाल लिया जाएगा, (10) और सीनों में जो कुछ (छिपा) है उसे निकालकर उसकी जाँच-पड़ताल की जोगी?[3] (11) यक़ीनन उनका रब उस दिन उनकी पूरी ख़बर रखता होगा।[4]



1. अर्थात् जो शक्तियाँ अल्लाह ने उसको दी थीं उसको ज़ुल्म और अत्याचार के लिए इस्तेमाल में ला रहा है।
2. अर्थात् उसकी अन्तरात्मा इसपर गवाह है, उसके कर्म इसपर गवाह हैं, और बहुत-से काफ़िर (अधर्मी) इनसान ख़ुद अपनी ज़बान से भी खुल्लम-खुल्ला कृतघ्नता का प्रदर्शन करते हैं।
3. अर्थात् दिलों में जो इरादे, संकल्प और उद्देश्य छिपे हुए हैं, वे सब खोलकर रख दिए जाएँगे और उनकी जाँच-पड़ताल करके अच्छाई को अलग और बुराई को अलग छाँट दिया जाएगा।
4. अर्थात् उनको ख़ूब मालूम होगा कि कौन क्या है और किस सज़ा या प्रतिदान के योग्य है।

101. अल-क़ारिआ

नाम

पहले ही शब्द ''अल-क़ारिआ'' (महान दुर्घटना) को इसका नाम दिया गया है। यह केवल नाम ही नहीं है, बल्कि विषय-वस्तु की दृष्टि से इसकी वार्ता का शीर्षक भी है, क्योंकि इसमें सम्पूर्ण उल्लेख क़ियामत (प्रलय) ही का है।

अवतरणकाल

इसके मक्की होने में कोई मतभेद नहीं है, बल्कि इसकी वार्ता से स्पष्ट होता है कि यह भी मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल की अवतरित सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

इसका विषय है क़ियामत और आख़िरत (प्रलय और परलोक)। सबसे पहले लोगों को यह कहकर चौकाया गया है कि ''महान दुर्घटना! क्या है वह महान दुर्घटना? तुम क्या जानो कि वह महान घटना क्या है?'' इस तरह श्रोताओं को किसी भयंकर घटना के घटित होने की ख़बर सुनने के लिए तैयार करने के पश्चात् दो वाक्यों में उनके सामने क़ियामत का चित्र प्रस्तुत कर दिया गया है कि उस दिन लोग घबराहट की दशा में इस तरह भागे-भागे फिरेंगे, जैसे प्रकाश पर आनेवाले पतिंगे बिखरे हुए होते हैं और पहाड़ों का हाल यह होगा कि वे अपनी जगह से उखड़ जाएँगे, और उनकी बन्दिश समाप्त हो जाएगी और वे धुनके हुए ऊन की तरह होकर रह जाएँगे। फिर बताया गया है कि परलोक में फ़ैसला इस आधार पर होगा कि किस व्यक्ति के अच्छे कर्म बुरे कर्म से अधिक वज़नी हैं और किसके अच्छे कर्मों का वज़न उसके बुरे कर्मों की अपेक्षा हल्का है। पहले प्रकार के लोगों को वह सुखद जीवन प्राप्त होगा जिससे वे प्रसन्न हो जाएँगे और दूसरे प्रकार के लोगों को उस गहरी खाई में फेंक दिया जाएगा जो आग से भरी हुई होगी।



101. सूरा अल-क़ारिआ

(मक्का में उतरी–आयतें 11)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) महान् दुर्घटना! (2) क्या है वह महान् दुर्घटना? (3) तुम क्या जानो कि वह महान दुर्घटना क्या है? (4,5) वह दिन जब लोग बिखरे हुए पतिंगों की तरह और पहाड़ रंग-बिरंग के धुनके हुए ऊन की रह होंगे। (6) फिर जिसके पलड़े भारी होंगे[1] (7) वह मनभाते ऐस में होगा, (8) और जिसके पलड़े हलके होंगे (9) उसके ठहरने की जगह गहरी खाई होगी। (10) और तुम्हें क्या ख़बर कि वह क्या चीज़ है? (11) भड़कती हुई आग।



1. अर्थात् नेकी के पलड़े भारी होंगे।

102. अत-तकासुर

नाम

पहली ही आयत के शब्द "अल-तकासुर" (ज़्यादा से ज़्यादा और एक दूसरे से बढ़कर) को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

अबू हैयान (रह॰) और शौकानी (रह॰) कहते हैं कि यह समस्त टीकाकारों की दृष्टि में मक्की है और इमाम सुयूती का कथन है कि सबसे प्रसिद्ध बात यही है कि यह मक्की सूरा है, लेकिन कुछ रिवायतें ऐसी हैं जिनके आधार पर इसे मदनी कहा गया है। हमारी दृष्टि में केवल यही नहीं है कि यह मक्की सूरा है, बल्कि इसकी वार्ता और वर्णन-शैली यह बता रही है कि यह मक्का के आरम्भिक

काल में अवतरित सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

इसमें उन लोगों को उस सांसारिकता के बुरे परिणाम से सावधान किया गया है जिसके कारण वे मरते दम तक अधिकाधिक धन-दौलत, सांसारिक लाभ, रस, मान, वैभव और सत्ता प्राप्त करने और उसमें एक-दूसरे से बाज़ी ले जाने और इन्हीं चीज़ों की प्राप्ति पर गर्व करने में लगे रहते हैं। और इस एक चिन्ता ने उनको इतना अधिक व्यस्त कर रखा है कि उन्हें इससे उच्च किसी चीज़ की ओर ध्यान देने का होश नहीं है। इसके बुरे परिणाम पर सावधान करने के पश्चात् लोगों को यह बताया गया है कि ये सुख-सामग्रियाँ, जिनको तुम यहाँ निश्चिन्ततापूर्वक समेट रहे हो, यह केवल सुख-सामग्री ही नहीं है, अपितु तुम्हारी परीक्षा का साधन भी है। इसमें से हर सुख-सामग्री के विषय में तुमको परलोक में जवाब देना होगा।



102. सूरा अत-तकासुर

(मक्का में उतरी–आयतें 8)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) तुम लोगों को ज़्यादा से ज़्यादा और एक-दूसरे से बढ़कर दुनिया प्राप्त करने की धुन ने ग़फ़लत में डाल रखा है (2) यहाँ तक कि (इसी चिन्ता में) तुम क़ब्र के किनारे तक पहुँच जाते हो। (3) हरगिज़ नहीं, जल्द ही[1] तुमको मालूम हो जाएगा। (4) फिर (सुन लो कि) हरगिज़ नहीं, जल्द ही तुमको मालूम हो जाएगा। (5) हरगिज़ नहीं, अगर तुम विश्वसनीय ज्ञान के रूप में (इस नीति के परिणाम को) जानते होते (तो तुम्हारी यह नीति न होती)। (6) तुम नरक देखकर रहोगे, (7) फिर (सुन लो कि) तुम बिलकुल यक़ीन के साथ उसे देख लोगे। (8) फिर ज़रूर उस दिन तुमसे इन नेमतों के बारे में जवाब तलब किया जाएगा।



1. जल्द ही से मुराद आख़िरत भी हो सकती है और मौत भी, क्योंकि यह बात मरते ही इनसान पर स्पष्ट हो जाती है कि जिन कामों में वह अपनी सारी उम्र खपाकर आया है, वे उसके लिए शुभ और सौभाग्य का साधन थे या बुरे परिणाम और दुर्भाग्य का साधन।

103. अल-अस्र

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''अल-अस्र'' (ज़माना) को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

यद्यपि मुजाहिद (रह०), क़तादा और मुक़ातिल ने इसे मदनी कहा है, लेकिन बहुसंख्यक टीकाकारों ने इसे मक्की घोषित किया है। और इसकी वार्ता यह गवाही देती है कि यह मक्का के भी आरम्भिक काल में अवतरित हुई होगी जब इस्लाम की शिक्षा को संक्षिप्त और अत्यन्त हृदयग्राही वाक्यों में बयान किया जाता था, ताकि वे आप-से-आप लोगों की ज़बानों पर चढ़ जाएँ।

विषय और वार्ता

यह सूरा व्यापक, अर्थगर्भित और संक्षिप्त सूक्ति का अद्वितीय नमूना है। इसमें बिलकुल दो-टूक तरीक़े से बता दिया गया है कि इनसान के कल्याण का मार्ग कौन-सा है और उसके विनाश का मार्ग कौन-सा। इमाम शाफ़ई (रह०) ने बहुत ठीक कहा है कि यदि लोग इस सूरा पर विचार करें तो यही उनके मार्गदर्शन के लिए पर्याप्त है। आदरणीय सहाबा (नबी सल्ल० के साथियों) की दृष्टि में इसका महत्त्व क्या था, इसका अनुमान इस बात से किया जा सकता है कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन हिस्सनिद दारमी अबू मदीना के उल्लेख के अनुसार अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के सहाबा में से दो व्यक्ति एक-दूसरे से मिलते तो उस समय तक अलग न होते जब तक एक-दूसरे को सूरा 'अस्र' न सुना लेते। (हदीस : तबरानी)



103. सूरा अल-अस्र

(मक्का में उतरी–आयतें 3)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) ज़माने की क़सम,[1] (2) इनसान वास्तव में घाटे में है, (3) सिवाय उन लोगों के जो ईमान लाए, और अच्छे कर्म करते रहे, और एक-दूसरे को हक़ की नसीहत और सब्र की ताकीद करते रहे।



1. ज़माने से मुराद बीता हुआ ज़माना भी है और बीतता हुआ ज़माना भी। उसकी क़सम खाने का अर्थ यह है कि इतिहास भी गवाह है और जो समय अब बीत रहा है वह भी गवाही देता है कि वह बात सत्य है तो आगे बयान की जा रही है।

104. अल-हु-म-ज़ह

नाम

पहली आयत के शब्द ''हु-म-ज़ह'' (ताना मारनेवाला) को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसके मक्की होने पर समस्त टीकाकार सहमत हैं। और इसकी वार्ता और वर्णन-शैली पर विचार करने से प्रतीत होता है कि यह भी मक्का के आरम्भिक काल में अवतरित होनेवाली सूरतों में से है।

विषय और वार्ता

इसमें कुछ ऐसी नैतिक बुराइयों की न्दिा की गई है जो अज्ञानकालीन समाज में धन के लोभी मालदारों में पाई जाती थीं। इस घृणित चरित्र को प्रस्तुत करने के पश्चात् यह बताया गया है कि परलोक में उन लोगों का क्या परिणाम होगा जिनका यह चरित्र है। ये दोनों बातें ऐसे ढंग से बयान की गई है कि जिससे श्रोता की बुद्धि स्वयं इस निष्कर्ष पर पहुँच जाए कि इस तरह के चरित्र का यही परिणाम होना चाहिए और क्योंकि दुनिया में ऐसे चरित्रवालों को कोई दण्ड नहीं मिलता, बल्कि ये फलते-फूलते ही दीख पड़ते हैं, इसलिए परलोक का प्रादुर्भाव निश्चय ही अवश्यम्भावी है। इस सूरा को यदि उन सूरतों के क्रम में रखकर देखा जाए जो सूरा 99 (ज़िलज़ाल) से यहाँ तक चली आ रही हैं, तो आदमी भली-भाँति यह समझ सकता है कि मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल में किस तरीक़े से इस्लाम की धारणाओं और उसकी नैतिक शिक्षाओं को लोगों के मन में बिठाया गया था।



104. सूरा अल-हु-म-ज़ह

(मक्का में उतरी–आयतें 9)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) तबाही है हर उस व्यक्ति के लिए जो (आमने-सामने) लोगों पर ताने मारने और (पीठ पीछे) बुराइयाँ करने का अभ्यस्त है, (2) जिसने माल इकट्ठा किया और उसे गिन-गिनकर रखा। (3) वह समझता है कि उसका माल हमेशा उसके पास रहेगा।[1] (4) हरगिज़ नहीं, वह व्यक्ति तो चकनाचूर कर देनेवाली जगह में फेंक दिया जाएगा। (5) और तुम क्या जानो कि क्या है वह चकनाचूर कर देनेवाली जगह? (6) अल्लाह की आग, ख़ूब भड़काई हुई, (7) जो दिलों तक पहुँचेगी। (8) वह उनपर ढाँककर बन्द कर दी जाएगी (9) (इस हालत में कि वे) ऊँचे-ऊँचे स्तंभों में (घिरे हुए होंगे)।[2]



1. दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि वह समझता है कि उसका माल उसे अमर जीवन प्रदान कर देगा और उसे कभी यह ख़याल भी नहीं आता कि एक समय उसको यह सब कुछ छोड़कर ख़ाली हाथ दुनिया से विदा हो जाना पड़ेगा।
2. ''फ़ी अ-म-दिम मुसद्-दह'' के कई अर्थ हो सकते हैं। एक यह कि जहन्नम के द्वारों को बन्द करके उनपर ऊँचे-ऊँचे स्तंभ गाड़ दिए जाएँगे। दूसरा अर्थ यह है कि ये अपराधी ऊँचे-ऊँचे स्तंभों से बँधे हुए होंगे। तीसरा यह कि उस आग की लपटें लम्बे स्तंभों के रूप में उठ रही होंगी।

105. अल-फ़ील

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''असहाबिल-फ़ील'' (हाथीवालों) से उद्धृत है।

अवतरणकाल

इसपर मतैक्य है कि यह सूरा मक्की है और इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को यदि दृष्टि में रखकर देखा जाए तो प्रतीत होता है कि इसका अवतरण मक्का मुअज़्ज़मा के आरम्भिक काल में हुआ होगा।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

नजरान में यमन के यहूदी शासक ज़ू-नवास ने मसीह (अलै०) के अनुयायियों पर ोज अत्याचार किया था, उसका बदला लेने के लिए हबश की ईसाई हुकूमत ने यमन पर आक्मरण करके हिमयरी हुकूमत को समाप्त कर दिया था और सन् 525 ई० में इस पूरे क्षेत्र पर हबशी शासन स्थापित हो गया था। यह सारी कार्रवाई वास्तव में कुस्तनतीनिया के रोमन राज्य और हबशी हुकूमत के पारम्परिक सहयोग से हुई थी। यह सब कुछ मात्र धार्मिक भावना से नहीं हुआ था, बल्कि इसके पीछे आर्थिक और राजनीतिक उद्देश्य भी काम कर रहे थे, बल्कि सम्भवतः वही इसके मूल प्रेरक थे और उत्पीड़ित ईसाइयों के ख़ून का बदला एक बहाने से अधिक कुछ न था। रूमी हुकूमत ने जबसे मिस्र और सीरिया पर अपना अधिकार जमाया था, उसी समय से उसकी यह कोशिश थी कि पूर्वी अफ़्रीक़ा, भारत, इंडोनेशिया आदि देशों और रूमी अधिक्षेत्रों के मध्य जिस व्यापार पर सैकड़ों वर्ष से अरब का अधिकार चला आ रहा था उसे अरबों के अधिकार से निकालकर वह स्वयं अपने अधिकार में ले ले। इस उद्देश्य के लिए सन् 24 या सन् 25 पूर्व मसीह में क़ैसर ऑगस्टस ने एक बड़ी सेना रूमी जनरल ऐलियस गॉलोस (Aellus Gallus) की अध्यक्षता में अरब के पश्चिमी तट पर उतार दी थी, ताकि वह उस समुद्री मार्ग पर अधिकार जमा ले जो दक्षिण अरब से सीरिया की ओर जाता है। लेकिन अरब की दुष्कर भौगोलिक परिस्थितियों ने इस अभियान को असफल कर दिया। इसके पश्चात् रूमी अपना सामरिक बेड़ा लाल सागर में ले आए और उन्होंने अरबों के उस व्यापार को समाप्त कर दिया जो वे समुद्र के मार्ग से करते थे और केवल स्थल-मार्ग उनके लिए शेष रह गया। इसी स्थल-मार्ग को क़ब्ज़े में लेने के लिए उन्होंने हबश (Abyssinia) की ईसाई हुकूमत से गठजोड़ किया और समुद्री बेड़े से उसकी सहायता करके उसको यमन पर अधिकार दिला दिया। (जहाँ हबश के सम्राट की ओर

से अबरहा नामक एक व्यक्ति वायसराय नियुक्त हुआ।) यमन पर पूरी तरह अपना प्रभुत्व सुदृढ़ कर लेने के पश्चात् अबरहा ने उस उद्देश्य के लिए काम शुरू कर दिया जो इस अभियान के प्रारम्भ से रूमी राज्य और उन हबशी ईसाइयों के समक्ष था जिनसे उनका मैत्री अनुबन्ध था। अबरहा ने इस उद्देश्य के लिए यमन की राजधानी सनआ (San'a) में एक भव्य गिरजाघर का निर्माण कराया जिसका उल्लेख अरब इतिहासकारों ने अल-क़लीस या अल-कुलैस या अल-कुलैयस के नाम से किया है। (यह यूनानी शब्द EKKLESIA का अरबी रूप है और उर्दू का शब्द 'कलीसा' भी इसी यूनानी शब्द से निर्मित है।) मुहम्मद बिन इसहाक़ से उल्लिखित है कि इस काम के पूर्ण होने के पश्चात् उसने हबश के सम्राट को लिखा कि मैं अरबों का हज काबा से इस कलीसा की ओर मोड़े बिना न रहूँगा। इब्न कसीर ने लिखा है कि उसने यमन में खुल्लम-खुल्ला अपने इस संकल्प को व्यक्त किया और इसकी उद्घोषणा करा दी। ुसके इस अभद्र कर्म का उद्देश्य हमारी दृष्टि में यह था कि अरबों को क्रोधित करे, कि वे कोई ऐसी कार्रवाई करें जिससे उसको मक्का पर आक्रमण करने और काबा को ढा देने का बहाना मिल जाए। मुहम्मद बिन इसहाक़ का बयान है कि उसकी इस उद्घोषणा पर क्रुद्ध होकर एक अरब ने किसी न किसी तरह कलीसा में घुसकर उसे गंदा कर दिया। मुक़ातिल बिन सुलैमान से उल्लिखित है कि क़ुरैश के कुछ नव-युवकों ने जाकर उस कलीसा में आग लगा दी थी। इसमें से कोई भी घटना यदि घटी हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है, किन्तु यह भी कुछ असम्भव नहीं कि अबरहा ने स्वयं अपने किसी आदमी से गुप्त रूप से ऐसा कोई अभद्र कर्म कराया हो ताकि उसे मक्का पर चढ़ाई करने का बहाना मिल जाए और इस तरह क़ुरैश को विनष्ट और समस्त अरबवालों को आतंकित करने अपने दोनों उद्देश्य प्राप्त कर ले। अस्तु दोनों बातों में से जो बात भी हो, जब अबरहा के पास यह सूचना पहुँची कि काबा के श्रद्धालुओं ने उसके कलीसा का यह अपमान किया है तो उसने यह क़सम खाई कि मैं उस वक़्त तक चैन न लूँगा, जब तक काबा को ढा न दूँ। तत्पश्चात् उसने सन् 570 ई० या सन् 571 ई० में 60 हज़ार की सेना और 13 हाथी (कुछ उल्लेखों के अनुसार 9 हाथी) लेकर मक्का की ओर प्रस्थान किया।

मार्ग में पहले यमन के एक सरदार ज़ू-नफ़र ने अरबों की एक सेना एकत्र करके उसका प्रतिरोध किया किन्तु वह पराजित हुआ और पकड़ा गया। फिर ख़सअम के क्षेत्र में एक अरब के सरदार नुफ़ैल बिन हबीब ख़सअमी अपने क़बीले को लेकर मुक़ाबले पर आया, किन्तु वह भी पराजित हुआ और पकड़ा गया और वह अपनी जान बचाने के लिए शत्रु का मार्गदर्शन करने के लिए तैयार हो गया। ताइफ़ के निकट पहुँचा तो बनी

सक़ीफ़ ने (भी अपने में मुक़ाबले का साहस न पाकर उससे) कहा कि हम मक्का का मार्ग बताने के लिए मार्गदर्शन का प्रबन्ध किए देते हैं। अबरहा ने यह बात स्वीकार कर ली और बनी सक़ीफ़ ने अबू रिग़ाल नामक एक व्यक्ति को उसके साथ कर दिया। जब मक्का तीन कोस रह गया तो अल-मुग़म्मस (या अल-मुग़म्मिस) नामक स्थान पर पहुँचकर अबू रिग़ाल मर गया और अरब दीर्घकाल तक उसकी क़ब्र पर पत्थर बरसाते रहे।

अब्दुल मुत्तलिब (नबी सल्ल॰ के दादा), जो उस समय मक्का के सबसे बड़े सरदार थे, ने क़ुरैशवालों से कहा कि अपने बाल-बच्चों को लेकर पहाड़ों में चले जाएँ ताकि उनका क़त्ले-आम (जन सहार) न हो। (अन्ततः अबरहा और उसकी सेना पर ईश्वरीय प्रकोप हुआ। उसपर कंकड़ीले पत्थरों की वर्षा होने लगी। भगदड़ मच गई।) भगदड़ में जगह-जगह ये लोग गिर-गिरकर मरते रहे। अता बिन यसार से उल्लिखित है कि सब के सब उसी समय विनष्ट नहीं हो गए, बल्कि कुछ तो कहीं विनष्ट हुए और कुछ भागते हुए रास्ते भर गिरते चले गए। अबरहा भी ख़सअम के भूभाग में पहुँचकर मरा। यह घटना मुज़दलिफ़ा और मिना के मध्य मुहस्सब घाटी के निकट मुसस्सिर के स्थान पर घटित हुई थी। यह इतनी बड़ी घटना थी जो सम्पूर्ण अरब में प्रसिद्ध हो गई और इसपर बहुत-से कवियों ने क़सीदा (यश-वर्णन-काव्य) की रचना की। इन प्रशस्ति काव्यों में यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि सबने इसे अल्लाह की शक्ति का चमत्कार घोषित किया और कहीं संकेत रूप में भी यह नहीं कहा कि इसमें उन मूर्तियों का भी कुछ हाथ था, जो काबा में पूजी जा रही थीं। यही नहीं, बल्कि हज़रत उम्मे हानी और हज़रत ज़ुबैर बिन अव्वाम (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा, क़ुरैश ने दस वर्ष (और कुछ उल्लेखों के अनुसार सात वर्ष) तक एक अल्लाह (जिसका कोई सहभागी नहीं) के अतिरिक्त किसी की उपासना नहीं की। जिस वर्ष यह घटना घटित हुई, अरबवाले उसे आमुल-फ़ील (हाथियों का साल) कहते हैं और उसी वर्ष अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का शुभ जन्म हुआ। हदीसों के ज्ञाता और इतिहासकार लगभग इस बात पर सहमत है कि हाथीवालों की घटना मुहर्रम के महीने में घटित हुई थी और नबी (सल्ल॰) का जन्म रबीउल अव्वल के महीने में हुआ था। अधिकतर लोगों का कहना यह है कि आप (सल्ल॰) का जन्म हाथीवालों की घटना के 50 दिन के पश्चात् हुआ।

सूक्ति का उद्देश्य

जो ऐतिहासिक विवरण ऊपर दिए गए हैं उनको दृष्टि में रखकर सूरा फ़ील पर विचार किया जाए तो यह बात अच्छी तरह समझ में आ जाती है कि इस सूरा में इतने

संक्षिप्त रूप में केवल हाथीवालों पर अल्लाह की यातना का उल्लेख कर देने पर क्यों बस किया गया है। घटना कुछ बहुत पुरानी न थी। मक्का का बच्चा-बच्चा इसको जानता था। अरब के लोग साधारणतया इसे जानते थे। समस्त अरबवाले इस बात को स्वीकार करते थे कि इस आक्रमण से काबा की रक्षा किसी देवी या देवता ने नहीं, बल्कि सर्वोच्च अल्लाह ही ने की थी। अल्लाह ही से क़ुरैश के सरदारों ने सहायता के लिए प्रार्थनाएँ की थीं और कुछ वर्ष तक क़ुरैश के लोग इस घटना से इतने अधिक प्रभावित रहे थे कि उन्होंने अल्लाह के सिवा किसी और की उपासना न की। इसलिए सूरा फ़ील में इन विस्तृत तथ्यों के उल्लेख की आवश्यकता न थी, बल्कि केवल इस घटना को याद दिलाना पर्याप्त था, ताकि क़ुरैश के लोग विशेषतः और अरबवाले समान्यतः अपने मन में इस बात पर विचार करें कि मुहम्मद (सल्ल॰) जिस चीज़ की ओर बुला रहे हैं वह आख़िर सिके सिवा क्या है कि समस्त दूसरे पूज्यों को छोड़कर केवल अल्लाह की उपासना और बन्दगी की जाए जो एक है और उसका कोई सहभागी नहीं। तद्धिक वे यह भी सोच लें कि यदि इस सत्य के आह्वान को दबाने के लिए उन्होंने ज़ोर-ज़बरदस्ती से काम लिया तो जिस ईश्वर ने हाथीवालों को तहस-नहस किया था उसी के प्रकोप में वे ग्रस्त होंगे।



105. सूरा अल-फ़ील

(मक्का में उतरी–आयतें 5)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) तुमने देखा नहीं कि तुम्हारे रब ने हाथीवालों के साथ क्या किया? (2) क्या उसने उनके उपाय को अकारथ नहीं कर दिया? (3) और उनपर पक्षियों के झुंड के झुंड भेज दिए (4) जो उनके ऊपर पकी हुई मिट्टी के पत्थार फेंक रहे थे, (5) फिर उनका यह हाल कर दिया जैसे (जानवरों का) खाया हुआ भूसा।[1]

●●●

1. यह उस घटना का उल्लेख है जो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के शुभ जन्म से 50 दिन पहले घटित हुई थी। यमन की हबशी हुकूमत का ईसाई सम्राट अबरहा 60 हज़ार की सेना लेकर मक्का पर इस उद्देश्य के लिए चढ़ आया कि काबा को ढा दें। इस सेना में कई हाथी भी थे। जब वह मुज़दलिफ़ा और मिना के बीच पहुँचा तो अचानक समुद्र की ओर से पक्षियों के झुंड के झुंड अपनी चोंचों और पंजों में कंकड़ियाँ लिए हुए आए और उन्होंने इस सेना पर कंकड़ियों की वर्षा कर दी। जिस-जिसपर कोई कंकड़ी पड़ती उसका मांस गल-गलकर झड़ना शुरू हो जाता। इस तरह यह सारी सेना तबाह हो गई। अरब में यह घटना बहुत प्रसिद्ध थी और इस सूरा के अवतरण के समय मक्का में हज़ारों व्यक्ति ऐसे मौजूद थे जिनकी आँखों के सामने यह घटित हुई थी। सारे अरबवाले मानते थे कि हाथीवलों की यह तबाही सिर्फ़ अल्लाह की क़ुदरत से हुई।

106. क़ुरैश

नाम

पहली ही आयत के शब्द ''क़ुरैश'' को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

अत्यन्त बहुसंख्या में टीकाकार इसके मक्की होने पर सहमत हैं और इसके मक्की होने की पूरी गवाही इस सूरा के शब्द 'इस घर के रब' में मौजूद है। यदि यह मदीना में अवतरित होती तो 'काबा के घर' के लिए 'इस घर' के शब्द कैसे उपयुक्त हो सकते थे? बल्कि इसकी वार्ता का सूरा फ़ील की वार्ता से इतना गहरा सम्बन्ध है कि सम्भवतः इसका अवतरण इसके पश्चात् संसर्गतः ही हुआ होगा।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

इस सूरा को ठीक-ठीक समझने के लिए आवश्यक है कि उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को दृष्टि में रखा जाए जिससे इसकी वार्ता और सूरा फ़ील की वार्ता से गहरा सम्बन्ध है। क़ुरैश का क़बीला नबी (सल्ल॰) के प्रमुख पितामह क़ुसई बिन किलाब के समय तक हिजाज़ में बिखरा हुआ था। सबसे पहले क़ुसई ने उसको मक्का में एकत्र किया और बैतुल्लाह (काबा) का प्रबन्ध इस क़बीले के हाथ में आ गया। इसी कारण क़ुसई को 'मुजम्मअ' (एकत्रकर्ता) की उपाधि दी गई। क़ुसई के बाद उनके बेटे अबदे-मुनाफ़ और अब्दुद्दार के मध्य रियासत के पद विभक्त हो गए। अब्दे-मुनाफ़ के चार बेटे थे : हाशिम, अब्दे-शम्स, मुत्तलिब और नौफ़ल। इनमें से हाशिम, अब्दुल मुत्तलिब के पिता और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के परदादा के मन में सबसे पहले यह विचार आया कि उस अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में हिस्सा लिया जाए जो अरब के मार्ग से पूर्वी देशों और सीरिया और मिस्र के मध्य होता था। और साथ ही, अरबवालों की आवश्यकताओं की सामग्री भीख़रीदकर लाई जाए, ताकि रास्ते में पड़नेवाले क़बीले उनसे माल ख़रीदें और मक्का की मण्डी में देश के भीतरी भाग के व्यापारी ख़रीदारी के लिए आने लगे। दूसरे अरबी क़ाफ़िलों की अपेक्षा क़ुरैश को यह आसानी प्राप्त थी कि मार्ग के समस्त क़बीले काबा के सेवक होने की हैसियत से उनका आदर करते थे। उन्हें इस बात का कोई ख़तरा न था कि रास्ते में कहीं उनके क़ाफिलों पर डाका मारा जाएगा। रास्ते के क़बीले उनसे पथ के वह भारी कर (Heavy Road Tax) भी वुसूल न कर सकते थे जो दूसरे क़ाफ़िलों से तलब किया जाता था। हाशिम ने इन्हीं समस्त पहलुओं को देखकर व्यापार की योजना बनाई और अपनी इस योजना में अपने शेष तीनों भाइयों को भी सम्मिलित किया। सीरिया के ग़स्सानी बादशाह से हाशिम ने, हबश के

बादशाह से अब्दे-शम्स ने, यमन के सरदारों से मुत्तलिब ने और इराक़ और फ़ारस की हुकूमतों से नौफ़ल ने व्यापार सम्बन्धी छूटें प्राप्त कीं। इस प्रकार इन लोगों का व्यापार बड़ी तीव्र गति से उन्नति करता चला गया। इसी कारण ये चारों भाई 'मुत्तजरीन' (व्यापारी) के नाम से प्रसिद्ध हो गए और जो सम्पर्क उन्होंने चतुर्दिक के क़बीलों और रियासतों से स्थापित किए थे उनके कारण इनको 'असहाबुल ईलाफ़' भी कहा जाता था, जिसका शाब्दिक अर्थ है 'प्रेम पैदा करनेवाले'। इस कारोबार के कारण क़ुरैश के लोगों को सीरिया, मिस्र, इराक़, ईरान, यमन और हबश के देशों से सम्बन्ध के उत्तम अवसर प्राप्त हुए और विभिन्न देशों की संस्कृति और सभ्यता के प्रत्यक्ष रूप में सम्पर्क में आने के कारण उनके ज्ञान, बुद्धि एवं दृष्टि का मापदण्ड इतना उच्च होता चला गया कि अरब का कोई कबीला उनकी टक्कर का न रहा। धन-दौलत की दृष्टि से भी वे अरब में सबसे ऊपर हो गए और मक्का प्रायद्वीप अरब का सबसे महत्त्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र बन गया। इन अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का क बड़ा लाभ यह भी हुआ कि इराक़ से ये लोग वह लिपि लेकर आए जो आगे चलकर क़ुरआन मजीद लिखने के लिए प्रयोग में आई। अरब के किसी दूसरे क़बीले में इतने पढ़े-लिखे लोग न थे जितने क़ुरैश में थे। इन्ही कारणों से नबी (सल्ल॰) ने कहा था, "क़ुरैश लोगों के नेता हैं।" (हदीस : मुसनद अहमद अम्र बिन आस की रिवायतें) क़ुरैश इस तरह उन्नति पर उन्नति करते चले जा रहे थे कि मक्का पर अबरहा के आक्रमण की घटना घटित हुई। यदि उस समय अबरहा इस पवित्र नगर पर विजय पाने और काबा को ढा देने में सफल हो जाता तो अरब में क़ुरैश ही की नहीं, स्वयं काबा की धाक भी समाप्त हो जाती। (किन्तु ईश्वरीय प्रकोप ने जब अबरहा की लाई हुई साठ हज़ार की सेना को विनष्ट कर दिया तो) काबा के 'बैतुल्लाह' (ईशगृह) होने पर तमाम अरबवालों का ईमान पहले से कई गुना ज़्यादा मज़बूत हो गया, और इसके साथ क़ुरैश की धाक भी देश भर में पहले से अधिक जम गई।

सूक्ति का उद्देश्य

नबी (सल्ल॰) के समय में ये वृत्तान्त क्योंकि सभी को मालूम थे इसलिए इनके उल्लेख की आवश्यकता न थी। यही कारण है कि इस सूरा के चार संक्षिप्त वाक्यों में क़ुरैश से केवल इतनी बात कहने पर बस किया गाया कि जब तुम स्वयं इस घर (काबा) को प्रतिमाओं का नहीं, बल्कि अल्लाह का घर मानते हो और जब तुम्हें अच्छी तरह ज्ञात है कि वह अल्लाह ही है जिसने तुम्हें इस घर के कारण यह शान्ति और निश्चिन्तता प्रदान की, तुम्हारे व्यापार को यह उन्नति दी और तुम्हें भुखमरी से बचाकर यह सम्पन्नता प्रदान की तो तुम्हे उसी की उपासना और बन्दगी करनी चाहिए।



106. सूरा क़ुरैश

(मक्का में उतरी–आयतें 4)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) चूँकि क़ुरैश हिलमिल गए, (2) (अर्थात्) जाड़े और गर्मी की यात्राओं से हिलमिल गए,[1] (3) अतः उनको चाहिए कि इस घर[2] के रब की बन्दगी करें, (4) जिसने उन्हें भूख से बचाकर खाने को दिया और भय से बचाकर निश्चिन्तता (अमन) प्रदान की।[3]



1. गर्मी और जाड़े की यात्राओं से मुराद व्यापारिक यात्राएँ हैं। गर्मी में क़ुरैश के लोग सीरिया और फ़िलस्तीन की ओर और जाड़े में अरब के दक्षिण की ओर व्यापार के लिए जाते थे। इन्हीं यात्राओं के कारण वे मालदार हो गए थे।
2. इस घर से मुराद काबा है।
3. मक्का चूँकि 'हरम' (प्रतिष्ठित भूमि) था इसलिए क़ुरैश को यह ख़तरा न था कि उनके शहर पर अरब का कोई क़बीला हमरा कर देगा। और क़ुरैश चूँकि काबा के मुजाविर (प्रबन्धक थे, इसलिए उनके तिजारती क़ाफ़िले बेखटके अरब के सभी क्षेत्रों से गुज़रते थे और कोई उनको न छेड़ता था।

107. अल-माऊन

नाम

अंतिम आयत के अंतिम शब्द 'अल-माऊन' (साधारण ज़रूरत की चीज़ें) को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इब्ने मरदूयह ने इब्ने अब्बास (रज़ि॰) और इब्ने ज़ुबैर (रज़ि॰) का कथन उद्धृत किया है कि यह सूरा मक्की है और यही कथन अता और जाबिर का भी है। लेकिन अबू हैयान ने 'अल-बहरुल-मुहीत' में इब्ने अब्बास (रज़ि॰) ौर क़दातह (रह॰) और ज़ह्हाक का यह कथन उद्धृत किया है कि यह मदीना में अवतरित हुई है। हमारी दृष्टि में स्वयं इस सूरा में एक आन्तरिक साक्ष्य ऐसा विद्यमान है जो इसके मदनी होने की पुष्टि करता है ौर वह यह है कि इसमें उन नमाज़ पढ़नेवालों को विनष्ट होने की धमकी दी गई है जो अपनी नमाज़ों से ग़फ़लत बरतते और दिखाने के लिए नमाज़ पढ़ते हैं। इस प्रकार के मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) मदीना ही में पाए जाते थे, मक्का में नहीं।

विषय और वार्ता

इसका विषय यह बताना है कि परलोक पर ईमान न लाना मनुष्य में किस प्रकार के नैतिक आचरण पैदा करता है। आयत 2 और 3 में उन काफ़िरों की हालत बयान की गई है जो खुल्लम-खुल्ला परलोक को झुठलाते हैं और अन्तिम चार आयतों में उन कपटाचारियों की दशा पर प्रकाश डाला गया है जो देखने में तो मुसलमान हैं, परन्तु मन में परलोक और उसके प्रतिदान और दण्ड और उसके फल और बुरे बदले की कोई धारणा नहीं रखते। कुल मिलाकर दोनों प्रकार के गिरोहों की नीति को बयान करने का उद्देश्य यह तथ्य लोगों के मन में बिठाना है कि मनुष्य में सुदृढ़ और स्थायी विशुद्ध आचरण परलोक की धारणा के बिना पैदा नहीं हो सकता।



107. सूरा अल-माऊन

(मक्का में उतरी–आयतें 7)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) तुमने देखा उस व्यक्ति को जो आख़िरत के प्रतिदान और सज़ा को झुठलाता है? (2) वही तो है जो अनाथ को धक्के देता है, (3) और मुहताज को खाना देने पर नहीं उकसाता।[1] (4) फिर तबाही है उन नमाज़ पढ़नेवालों के लिए (5) जो अपनी नमाज़ से ग़फ़लत बरतते हैं,[2] (6) जो दिखावे का काम करते हैं, (7) और साधारण ज़रूरत की चीज़ें (लोगों को) देने से कतराते हैं।



1. अर्थात् न अपने-आपको इस काम पर राज़ी करता है, और न अपने घरवालों से करहात है कि मुहताज को खाना दिया करें, और न लोगों को मुहताजों की मदद पर उकसाता है।
2. इससे मुराद नमाज़ में भूलना नहीं है, बल्कि नमाज़ की तरफ़ से बेपरवाह हो जाना है।

108. अल-कौसर

नाम

''हमने तुम्हें कौसर (अल-कौसर) प्रदान कर दिया'' के शब्द 'अल-कौसर' को इसका नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इब्ने मरदूयह ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰), हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर (रज़ि॰) और हज़रत आइशा सिद्दीक़ा (रज़ि॰) से उद्धृत किया है कि यह सूरा मक्की है और सामान्यतः सभी टीकाकारों का कथन भी यही है, किन्तु हज़रत हसन बसरी, इक्रमा, मुजाहिद और क़तादह इसको मदनी घोषित करते हैं। इमाम सुयूती ने 'इतक़ान' में इसी कथन को सत्यानुकूल ठहराया है और इमाम नववी ने 'मुस्लिम' की टीका में इसी टीका को प्राथमिकता दी है। कारण इसका वह उल्लेख है जो इमाम अहमद, मुस्लिम और बैहक़ी आदि हदीसशास्त्रियों ने हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि॰) से उद्धृत किया है। (लेकिन यह कोई दृढ़ प्रमाण नहीं है। सत्य यह है कि) हज़रत अनस (रज़ि॰) का यह उल्लेख यदि सन्देह पैदा करने का कारण न हो तो सूरा 'कौसर' की पूरी वार्ता अपने आप इस बात का साक्ष्य प्रस्तुत करती है कि यह मक्का मुअज़्ज़मा में अवतरित हुई थी और उस कालखण्ड में अवतरित हुई थी जब नबी (सल्ल॰) को अत्यन्त हताश कर देनेवाली परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा था।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

इससे पहले सूरा 93 (अज़-ज़ुहा) और सूरा 94 (अल-इनशिराह) में आप देख चुके हैं कि नुबूवत के आरम्भिक काल में जब अलह के नबी (सल्ल॰) अत्यन्त कठिनाइयों से गुज़र रहे थे और दूर तक कहीं सफलता के चिह्न दिखाई नहीं दे रहे थे, उस समय आपको सांत्वना देने और आपको हिम्मत बँधाने के लिए सर्वोच्च अल्लाह ने अनेक आयतें अवतरित कीं। ऐसी ही परिस्थितियाँ थीं जिसमें सूरा 'कौसर' अवतरित करके अल्लाह ने नबी (सल्ल॰) को सांत्वना दी और आपके विरोधियों के तबाह और विनष्ट होने की भविष्यवाणी भी की। क़ुरैश के काफ़िर कहते थे कि मुहम्मद (सल्ल॰) सम्पूर्ण जाति से कट गए हैं और उनकी हैसियत एक अकेले और निस्सहाय व्यक्ति की-सी हो गई है। इक्रमा से उल्लिखित है कि जब हुज़ूर (सल्ल॰) नबी बनाए गए और आपने क़ुरैश को इस्लाम की ओर बुलाना शुरू किया तो क़ुरैश के लोग कहने लगे कि ''बति-र मुहम्मदुन मिन्ना'' (इब्ने जरीर) अर्थात् मुहम्मद अपनी क़ौम से कटकर ऐसे हो

गए हैं जैसे कोई वृक्ष अपनी जड़ से कट गया हो और सम्भावना इसी की हो कि कुछ समय पश्चात् वह सूखकर मिट्टी में मिल जाएगा। मुहम्मद बिन इसहाक़ कहते हैं कि मक्का के सरदार आस बिन वाइल सहमी के सामने जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की चर्चा की जाती तो वह कहता, ''अजी, छोड़ो उन्हें, वे तो एक अबतर (जड़ कटे) आदमी हैं। उनकी कोई नर सन्तान नहीं। मर जाएँगे तो कोई उनका नाम लेनेवाला भी नहीं होगा।'' शिमर बिन अतीया का बयान है कि उक़बा बिन अबी मुईत भी ऐसी ही बातें नबी (सल्ल॰) के सम्बन्ध में कहा करता था, (इब्ने जरीर)। अता कहते हैं कि जब नबी (सल्ल॰) के दूसरे बेटे का देहान्त हुआ तो आपका अपना चचा अबू लहब, (जिसका घर आपके घर से बिलकुल मिला हुआ था) दौड़ा हुआ, बहुदेववादियों के पास गया और उनको यह 'शुभ-सूचना' दी कि ''आज रात मुहम्मद (सल्ल॰) सन्तानहीन हो गए या उनकी जड़ कट गई।'' (यही हाल आस बिन वाईल और अबू जहल आदि क़ौम के दूसरे सरदारों का भी था।) पर सूरा कौसर अवतरित की गई। अल्लाह ने आपको इस अत्यन्त संक्षिप्त सूरा के एक वाक्य में वह शुभ-सूचना दी जिनसे बड़ी शुभ-सूचना संसार के किसी मनुष्य को कभी नहीं दी गई और साथ-साथ यह फ़ैसला भी सुना दिया कि आपका विरोध करनेवालों ही की जड़ कट जाएगी।



108. सूरा अल-कौसर

(मक्का में उतरी–आयतें 3)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) (ऐ नबी) हमने तुम्हें कौसर प्रदान कर दिया।[1] (2) अतः तुम अपने रब ही के लिए नमाज़ पढ़ो और क़ुरबानी करो। (3) तुम्हारा दुश्मन ही जड़ कटा है।[2]

●●●

1. कौसर से मुराद है दुनिया और आख़िरत की अगणित भलाइयाँ जिनमें क़ियामत में इकट्ठा होने के दिन का हौज़े कौसर और जन्नत की नहर कौसर भी सम्मिलित हैं।
2. काफ़िर लोग नबी (सल्ल॰) को 'अबतर' इस अर्थ से कहते थे कि आप अपनी क़ौम से भी कट गए हैं और आपकी औलाद में लड़के भी ज़िन्दा नहीं रहे। इसलिए ये कि आप बेनाम-निशान हो जाएँगे। इसपर कहा कि बेनाम-निशान आप नहीं आपके शत्रु होंगे।

109. अल-काफ़िरून

नाम

पहली ही आयत ''कह दो कि ऐ काफ़िरो (अल-काफ़िरून)!'' के शब्द 'अल-काफ़िरून' को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि॰) आदि कहते हैं कि यह सूरा मक्की है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर (रज़ि॰) कहते हैं कि यह मदनी है। लेकिन सामान्यतः सभी टीकाकारों की दृष्टि में यह मक्की सूरा है और इसकी वार्ता स्वयं इसके मक्की होने की पुष्टि कर रही है। मक्का मुअज़्ज़मा में एक ऐसा समय गुज़रा है जब नबी (सल्ल॰) के इस्लामी आह्वान के विरूद्ध क़ुरैश के बहुदेववादी समाज में विरोध का तुफ़ान तो उठ चुका था, किन्तु अभी क़ुरैश के सरदार इस बात से बिलकुल निराश नहीं हुए थे कि नबी (सल्ल॰) को किसी-न-सिी तरह समझौते पर तैयार किया जा सकेगा। इसलिए समय-समय पर वे आपके पास समझौते के विभिन्न प्रस्ताव ले-लेकर आते रहते थे, ताकि आप उसमें से किसी को मान लें और वह झगड़ा समाप्त हो जाए जो आप (सल्ल॰) के और उनके बीच पैदा हो चुका था। इस सम्बन्ध में कई एक उल्लेख हदीसों में उद्धृत हुए हैं:

(किसी में क़ुरैश का यह प्रस्ताव उल्लिखित है कि) ''हम आपको इतना धन दिए देते हैं कि आप मक्का के सबसे अधिक धनवान व्यक्ति बन जाएँ, आप जिस स्त्री को पसन्द करें उससे आपका विवाह किए देते हैं; हम आपके पीछे चलने के लिए तैयार हैं; आप बस हमारी यह बात मान लें कि हमारे पूज्य देवताओं का खंडन करने से बाज़ रहें।'' (किसी में उनका यह प्रस्ताव उल्लिखित है कि) एक वर्ष आप हमारे उपास्यों– लात और उज़्ज़ा की उपासना करें और एक वर्ष हम आपके उपास्य की उपासना करें। इसपर यह सूरा अवतरित हुई।

विषय और वार्ता

इस पृष्ठभूमि को दृष्टि में रखकर देखा जाए तो मालूम होता है कि यह सूरा धार्मिक उदारता के लिए नहीं उतरी थी, (अर्थात् इसलिए नहीं उतरी है कि प्रचलित समस्त धर्मों को इस बात का प्रमाणपत्र दे दिया जाए कि वे सब अपनी-अपनी जगह पर सत्य हैं।) जैसा कि आजकल के कुछ लोग समझते हैं, बल्कि इसलिए अवतरित हुई थी कि इसकी घोषणा कर दी जाए कि काफ़िरों के धर्म और उनकी पूजा-पाठ और उनके उपास्यों से

हम बिलकुल बरी और विरक्त हैं। उनसे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है और उन्हें बता दिया जाए कि कुफ़्र का धर्म और इस्लाम का धर्म दोनों एक-दूसरे से बिलकुल अलग हैं। उनके परस्पर मिल जाने का सिरे से कोई प्रश्न ही पैदा नहीं होता। यह बात यद्यपि आरम्भ में क़ुरैश के काफ़िरों को सम्बोधित करके समझौते के उनके प्रस्ताव के प्रत्युत्तर में कही गई थी, लेकिन यह उन्हीं तक सीमित नहीं है, बल्कि इसे क़ुरआन में अंकित करके समस्त मुसलमानों को क़ियामत तक के लिए यह शिक्षा दे दी गई है कि कुफ़्र का धर्म जहाँ जिस रूप में भी है, उन्हें उससे कथन और कर्म दोनों से असम्बद्धता प्रकट करनी चाहिए। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की दृष्टि में इस सूरा का क्या महत्त्व था, इसका अनुमान निम्नांकित हदीसों से किया जा सकता है :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि मैंने कितनी ही बार नबी (सल्ल॰) को फ़ज्र की नमाज़ से पहले और मग़रिब की नमाज़ के बाद की दो 'रकअतों' में सूरा 'अल-काफ़िरून' और सूरा 'अल-इख़लास' पढ़ते देखा है। हज़रत ख़ब्बाब (रज़ि॰) कहते हैं कि नबी (सल्ल॰) ने मुझसे कहा कि जब तुम सोने के लिए अपने बिस्तर पर लेटो तो सूरा 'अल-काफ़िरून' पढ़ लिया करो। और नबी (सल्ल॰) का अपना भी यही तरीक़ा था कि जब सोने के लिए लेटते तो यह सूरा पढ़ लिया करते थे। (हदीस : बज़्ज़ार, तबरानी, इब्ने मरदूयह)



109. सूरा अल-काफ़िरून

(मक्का में उतरी–आयतें 6)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) कह दो कि ऐ काफ़िरो (इनकार करनेवालो),[1] (2) मैं उनकी बन्दगी (इबादत) नहीं करता जिनकी बन्दगी तुम करते हो,[2] (3) न तुम उसकी बन्दगी करनेवाले हो जिसकी बन्दगी मैं करता हूँ।[3] (4) और न मैं उनकी बन्दीग करनेवाला हूँ जिनकी बन्दगी तुमने की है,[4] (5) और न तुम उसकी बन्दगी करनेवाले हो जिसकी बन्दगी मैं करता हूँ। (6) तुम्हारे लिए तुम्हारा धर्म है और मेरे लिए मेरा धर्म।[5]



1. अर्थात् ऐ वे लोगो जिन्होंने मेरी पैग़म्बरी और मेरी लाई हुई शिक्षा को मानने से इनकार कर दिया है।
2. यद्यपि काफ़िर (इनकार करनेवाले) दूसरे उपास्यों के साथ अल्लाह की भी उपासना करते थे, लेकिन चूँकि शिर्क (बहुदेववाद) के साथ अल्लाह की उपासना सिरे से अल्लाह की उपासना ही नहीं है, इसलिए मुशरिकों (बहुदेववादियों) के सभी उपास्यों की उपासना से इनकार किया गया।
3. अर्थात् जिन गुणों के ईश्वर की मैं बन्दगी करता हूँ तुम उन गुणों के ईश्वर की बन्दगी करनेवाले नहीं हो।
4. अर्थात् जिन उपास्यों की उपासना इससे पहले तुमने और तुम्हारे बाप-दादा ने की है, मैं उनकी उपासना करनेवाला नहीं हूँ।
5. अर्थात् धर्म के मामले में मेरा और तुम्हारा कोई मेल नहीं है। मेरा रास्ता अलग है, तुम्हारा रास्ता अलग।

110. अन-नस्र

नाम

पहली ही आयत ''जब अल्लाह की मदद (नस्र) आ जाए'' के शब्द 'नस्र' को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) का बयान है कि यह क़ुरआन मजीद की अन्तिम सूरा है अर्थात् सिके पश्चात कुछ आयतें तो अवतरित हुईं, किन्तु कोई पूर्ण सूरा नबी (सल्ल॰) पर अवतरित नहीं हुई। (हदीस : मुस्लिम, नसी, तबरानी, इब्ने अबी शैबा, इब्ने मरदूयह)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर से उल्लिखित है कि यह सूरा हिज्जतुल -विदाअ (नबी सल्ल॰ का अन्तिम हज) के अवसर पर अय्यामे-तशरीक़ (क़ुरबानी के तीन दिन) के मध्य में मिना के स्थान पर अवतरित हुई और इसके पश्चात् नबी (सल्ल॰) ने अपनी ऊँटनी पर सवार होकर अपना प्रसिद्ध अभिभाषण दिया, (हदीस : तिरमिज़ी, बज़्ज़ार, बैहक़ी)। (इस अभिभाषण में लोगों को यह याद दिलाने के बाद कि) ''यह अय्यामे-तशरीक़ के मध्य का दिन है और यह 'मशअरे हराम' (स्थान विशेष) है। नबी (सल्ल॰) ने कहा कि मैं नहीं जानता, शायद इसके बाद में तुमसे न मिल सकूँ। सावधान रहो, तुम्हारे ख़ून, तुम्हारी इज़्ज़तें एक दूसरे पर उसी तरह हराम हैं जिस तरह यह दिन और यह स्थान हराम है। यहाँ तक कि तुम अपने प्रभु के सामने उपस्थित हो और वह तुमसे तुम्हारे कर्मों के बारे में पूछगछ करे। सुनो, यह बात तुममें से निकटवाला दूरवाले तक पहुँचा दे; सुनो क्या मैंने तुम्हें पहुँचा दिया?'' इसके बाद जब हम लोग मदीना लौटे तो कुछ अधिक दिन नहीं बीते थे कि नबी (सल्ल॰) का देहान्त हो गया।''

इन दोनों रिवायतों (उल्लेखों) को मिलाकर देखा जाए तो मालूम होता है कि सूरा 'नस्र' के अवतरण और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के दुनिया से प्रस्थान करने के मध्य तीन महीने कुछ दिन का अन्तराल था, क्योंकि इतिहास की दृष्टि से हिज्जतुल विदाअ और हुज़ूर (सल्ल॰) के देहावसान के मध्य इतना ही समय गुज़रा था। इब्ने अब्बास (रज़ि॰) का बयान है कि जब यह सूरा अवतरित हुई तो नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया कि मुझे मेरी मृत्यु की ख़बर दे दी गई है और मेरा समय पुरा हुआ (मुस्नद अहमद, इब्ने ज़रीर, इब्ने मुज़िर, इब्ने मरदूयह)। दूसरे उल्लेखों, जो हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि॰) से उद्धृत हुए हैं, में बयान किया गया है कि इस सूरा के अवतरण से नबी

(सल्ल॰) ने यह समक्ष लिया था कि आपको संसार से विदा होने की सूचना दे दी गई है (हदीस : मुस्लिम, मुस्नद अहमद, इब्ने जरीर, तबरानी, नसई)।

विषय और वार्ता

जैसा कि उपर्युक्त उल्लेख से मालूम होता है, सि सूरा में अल्लाह ने अपने रसूल (सल्ल॰) को यह बताया था कि जब अरब में इस्लाम की विजय पूर्ण हो जाए और अल्लाह के दीन (धर्म) में लोग दल-के-दल प्रवेश करने लगे, तो इसका अर्थ यह है कि यह काम पूरा हो गया जिसके लिए आप संसार में भेजे गए थे। तदन्तर आपको आदेश दिया गया कि आप अल्लाह की स्तुति और उसकी महानता का वर्णन करने में लग जाएँ कि उसकी उदार कृपा से आप इतना बड़ा काम सम्प्र करने में सफल हुए और उससे प्रार्थना करें कि इस सेवा के करने में जो भूल-चूक या कोताही भी आपसे हुई हो, उसे वह क्षमा कर दे। हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) अपने देहान्त से पहले ''सुब्हा न-कल्लाहुम-म व बिहमदि-क, अस्तग़फ़िरु-क व अतूबु इलैक'' (तेरी स्तुति हो ऐ अल्लाह, मैं तुझसे क्षमा-याचना करता हूँ और तेरी ही ओर लौटता हूँ।) (कुछ उल्लेखों में ये शब्द आए हैं, ''सुब्हानल्लाहि व बिहमदिही अस्तग़फ़िरुल्लाहि व अतूबु इलैह'') बहुत अधिक पढ़ा करते थे। मैंने कहा, ''ऐ अल्लाह के रसूल! ये कैसे शब्द है जो आपने अब पढ़ने आरम्भ कर दिए हैं?'' तो कहा कि मेरे लिए एक लक्षण निश्चित कर दिया गया है। जब मैं उसे देखूँ तो ये शब्द कहा करूँ और वे हैं, ''जब अल्लाह की सहायता आ जाए और विजय प्राप्त हो जाए'' (हदीस : मुस्नद अहमद, मुस्लिम, इब्ने जरीर)। (इसके अतिरिक्त कुछ और ईश-स्मरण के शब्द भी हदीसों में उल्लिखित हैं जो आप (सल्ल॰) अपने जीवन के अन्तिम दिनों में अधिकतर उच्चारित किया करते थे।) इब्ने अब्बास (रज़ि॰) का बयान है कि इस सूरा के अवतरित होने के बाद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) परलोक के लिए परिश्रम और तस्या करने में इतनी कड़ाई के साथ व्यस्त हो गए जितने इनसे पहले कभी न हुए थे। (हदीस : नसई, तबरानी, इब्ने अबी हातिम, इब्ने मरदूयह)



110. सूरा अन-नस्र

(मदीना में उतरी–आयतें 3)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) जब[1] अल्लाह की मदद आ जाए और विजय प्राप्त हो जाए (2) और (ऐ नबी) तुम देख लो कि लोग दल के दल अलह के दीन (ईश्वरीय धर्म) में प्रवेश कर रहे हैं, (3) तो अपने रब की प्रशंसा के साथ उसकी तसबीह (गुणगान) करो, और उससे माफ़ी की दुआ माँगो।[2] बेशक वह बड़ा तौबा क़बूल करनेवाला है।



1. विश्वसनीय उल्लेखों के अनुसार यह क़ुरआन की सबसे अन्तिम सूरा है जो नबी (सल्ल॰) के देहान्त से लगभग 3 महीने पहले अवतरित हुई। इसके बहुत बाद कुछ आयतें तो अवतरित हुई मगर कोई पूरी सूरा अवतरित नहीं हुई।
2. यह भी उल्लेखों से मालूम होता है कि इस सूरा के अवतरण के बाद नबी (सल्ल॰) अपने अन्तिम दिनों में बहुत ज़्यादा स्तुति (हम्द) और तसबीह और माफ़ी की दुआ करने लगे थे।

111. अल-लहब

नाम

पहली ही आयत के शब्द 'लहब' को इस सूरा का नाम दिया गया है।

अवतरणकाल

इसके मक्की होने में तो टीकाकारों के मध्य कोई मतभेद नहीं है, किन्तु ठीक-ठीक यह निर्धारित करना कठिन है कि मक्का के किस कालखण्ड में यह अवतरित हुई थी। अलपत्ता अबू लहब का जो आचरण अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) और आपके सत्य-आह्वान के विरूद्ध था उसको देखते हुए यह अन्दाज़ा किया जा सकता है कि इस सूरा का अवतरण उस कालखण्ड में हुआ होगा जब वह नबी (सल्ल॰) की शत्रुता में सीमा से आगे निकल गया था और उसकी नीति इस्लाम की राह में एक बड़ी रुकावट बन रही थी।

परिप्रेक्ष्य

क़ुरआन मजीद में यह एक स्थान है जहाँ इस्लाम के शत्रुओं में से किसी व्यक्ति का नाम लेकर उसकी निन्दा की गई है। हालाँकि मक्का में भी और हिजरत के पश्चात् मदीना में भी बहुत-से लोग ऐसे थे जो इस्लाम और मुहम्मद (सल्ल॰) की दुश्मनी में अबू लहब से कम न थे। (इसका कारण अबू लहब का वह विशेष दुराचरण है जो उसने नबी (सल्ल॰) के विरुद्ध अपना रखा था।) अरबी समाज के नैतिक मूल्यों में नाते-रिश्ते के साथ सद्व्यवहार को बड़ा महत्त्व प्राप्त था और नाते-रिश्ते का तोड़ना बहुत बड़ा पाप समझा जाता था। अरब की इन्हीं परम्पराओं का यह प्रभाव था कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) जब इस्लाम की ओर बुलाने के लिए उठे तो क़ुरैश के दूसरे कुटुम्बों और उसके सरदारों ने तो नबी (सल्ल॰) का घोर विरोध किया, किन्तु बनी-हाशिम और बनी-मुत्तलिब (हाशिम के भाई मुत्तलिब की सन्तान) ने न केवल यह कि आपका विरोध नहीं किया, बल्कि वे खुल्लम-खुल्ला आपकी सहायता करते रहे। हालाँकि उनमें से अधिकतर लोग आपके नबी होने पर ईमान नहीं लाए थे। क़ुरैश के दूसरे कुटुम्ब स्वयं भी नबी (सल्ल॰) के इन रक्त-सम्बन्धी नातेदारों की सहायता को अरब की नैतिक परम्पराओं के नितान्त अनुकूल समझते थे। इन नैतिक सिद्धान्तों को जिसे अज्ञानकाल में भी अरब के लोग आदर के योग्य समझते थे, केवल एक व्यक्ति ने इस्लाम की दुश्मनी में तोड़ डाला और वह था अब्दुल मुत्तलिब का बेटा अबू लहब। यह अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का चचा था। इब्ने अब्बास (रज़ि॰) से कई एक सनदों के साथ यह उल्लेख

हदीसशास्त्रियों ने उद्धृत किया है कि जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को सामान्य रूप से लोगों को आमंत्रित करने का आदेश दिया गया और क़ुरआन मजीद में यह आदेश अवतरित हुआ कि आप अपने निकटतम स्वजनों को सबसे पहले ईश्वर की यातना से डराएँ, तो आप (सल्ल॰) ने सुबह-सवेरे सफ़ा पर्वत पर चढ़कर उच्च स्वर में पुकारा, ''या सबाहाह! या सबाहाह!'' (हाय, सुबह की आपदा! हाय सुबह की आपदा!)। जब सब एकत्र हो गए तो आपने क़ुरैश के एक-एक कुटुम्ब का नाम ले-लेकर पुकारा, ''ऐ हाशिम की सन्तान, ऐ अब्दुल मुत्तलिब की सन्तान, ऐ फ़िह्र की सन्तान, ऐ फ़लाँ की सन्तान, ऐ फ़लाँ की सन्तान, यदि मैं तुम्हें बताऊँ कि पर्वत के पीछे एक सेना तुमपर आक्रमण करने के लिए तैयार है तो तुम मेरी बात सच मानोगे?'' लोगों ने कहा, ''हमें कभी तुमसे झूठ सुनने का अनुभव नहीं हुआ है।'' आपने कहा, ''तो मैं तुम्हें सावधान करता हूँ कि आगे कठिन यातना आ रही है।'' इसपर इससे पहले कि कोई और बोलता, नबी (सल्ल॰) के अपने चचा अबू लहब ने कहा, ''सत्यानाश हो जाए तेरा। क्या इसी लिए तूने हमें एकत्र किया था।'' एक उल्लेख में यह भी है कि उसने पत्थर उठाया, ताकि अल्लाह के रसूल पर खींच मारे, (हदीस : मुस्नद अहमद, बुख़ारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी, इब्ने जरीर आदि)। मक्का में अबू लहब नबी (सल्ल॰) का निकटतम पड़ोसी था। इसके अतिरिक्त हकम बिन आस (मरवान का बाप), उक़बा बिन अबी मुऐत, अदी बिन हमरा और इब्नुल-असदा अल-हुज़ली भी आपके पड़ोसी थे। ये लोग घर में भी नबी (सल्ल॰) को चैन नहीं लेने देते थे। आप कभी नमाज़ पढ़ रहे होते तो ये ऊपर से बकरी का ओझ आपपर फेंक देते। कभी आँगन में खाना पक रहा होता तो ये हांडी पर गन्दगी फेंक देते। नबी (सल्ल॰) बाहर निकलकर इन लोगों से कहते, ''ऐ बनी अब्दे मुनाफ़, यह कैसा पड़ोस है?'' अबू लहब की पत्नी उम्मे जमील (अबू सुफ़ियान की बहन) ने तो यह स्थायी रीति बना रखी थी कि रातों को आपके घर के दरवाज़े पर काँटेदार झाड़ियाँ लाकर डाल देती, ताकि सुबह-सवेरे आप (सल्ल॰) या आपके बच्चे बाहर निकलें तो कोई काँटा चुभ जाए, (हदीस : बैहक़ी, इब्ने अबी हातिम, इब्ने जरीर, इब्ने असाकिर बिन हिशाम)।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) जहाँ-जहाँ भी इस्लाम का सन्देश देने के लिए जाते, यह आपके पीछे-पीछे जाता और लोगों को आपकी बात सुनने से रोकता। तारिक़ बिन अब्दुल्लाह अल-महरबी कहते हैं कि मैंने जुल्मजाज़ के बाज़ार में देखा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) लोगों से कहते जाते हैं कि ''लोगो! ला इला-ह इल्लल्लाह (अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं) कहो। सफल हो जाओगे।'' और पीछे एक व्यक्ति है जो पत्थर

मार रहा है, यहाँ तक कि आपकी एड़ियाँ ख़ून से भीग गई हैं, और वह कहता जाता है कि ''यह झूठा है, इसकी बात न मानो।'' मैंने लोगों से पूछा, ''यह कौन है?'' लोगों ने कहा, ''यह इनका चचा अबू लहब है'', (हदीस : तिरमिज़ी)। नुबूवत के सातवें वर्ष जब क़ुरैश के समस्त कुटुम्बों ने बनी हाशिम और बनी मुत्तलिब से सामाजिक और आर्थिक सम्बन्ध तोड़ लिए और ये दोनों कुटुम्ब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सहायता पर दृढ़ रहते हुए अबू तालिब की घाटी में घिरकर रह गए, तो अकेला यही अबू लहब था जिसने अपने कुटुम्ब का साथ देने की जगह क़ुरैश के काफ़िरों का साथ दिया। ये उस व्यक्ति की हरकतें थीं जिसके कारण इस सूरा में नाम लेकर उसकी निन्दा की गई। विशेषतः इसकी आवश्यकता इसलिए थी कि मक्का के बाहर (से आनेवालों पर उसका चरित्र स्पष्ट हो जाए और वे यह ख़याल करके कि कोई चचा अपने भतीजे को अकारण पत्थर नहीं मार सकता और न वह उसे बुरा-भला कह सकता है, नबी (सल्ल॰) के बारे में सन्देह में न पड़ जाया करें।) इसके अतिरिक्त नाम लेकर जब आप (सल्ल॰) के चचा की भर्त्सना की गई तो लोगों की यह आशा सदैव के लिए समाप्त हो गई कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) धर्म के मामले में किसी का लिहाज़ करके कोई नरमी बरत सकते हैं। जब खुल्लम-खुल्ला रसूल (सल्ल॰) के अपने चचा की ख़बर ले ली गई तो लोग समझ गए कि यहाँ किसी लाग-लपेट की गुंजाइश नहीं है। पराया अपना हो सकता है, यदि ईमान ले आए और पराया अपना हो जाता है, यदि कुफ़्र करे। इस मामले में रक्त-सम्बन्ध कोई चीज़ नहीं।



111. सूरा अल-लहब

(मक्का में उतरी–आयतें 5)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) टूट गए अबू लहब[1] के हाथ और असफल हो गया वह।[2] (2) उसका माल और जो कुछ उसने कमाया वह उसके किसी काम न आया। (3) ज़रूर वह भड़कती आग में डाला जाएगा (4) और (उसके साथ) उसकी जोरू भी,[3] लगाई-बुझाई करनेवाली, (5) उसकी गरदन में मूंज की रस्सी होगी।



1. यह नबी (सल्ल॰) का चचा था और अबू लहब ही के नाम से प्रसिद्ध था।
2. अर्थात् इस्लाम का रास्ता रोकने के लिए उसने जितना ज़ोर लगाया उसमें वह नाकाम और असफल हो गया। इस वाक्य में यद्यपि बाद में होनेवाली बात की पूर्व सूचना दी गई है मगर उसे इस तरह बयान किया गया है कि मानो वह हो चुकी।
3. इस औरत का नाम उम्मे जमील था। यह अबू सुफ़यान की बहन थी और इस्लाम की दुश्मनी में अपने शौहर (अबू लहब) से किसी प्रकार कम न थी।

112. अल-इख़लास

नाम

'अल-इख़लास' (कैवल्य) इस सूरा का केवल नाम ही नहीं, बल्कि विषय-वस्तु को दृष्टि से इसका शीर्षक भी है, क्योंकि इसमें विशुद्ध एकेश्वरवाद का वर्णन किया गया है। क़ुरआन मजीद की अन्य सूरतों में तो साधारणतया किसी ऐसे शब्द को उनका नाम दिया गया है जो उनमें आया हो, किन्तु इस सूरा में 'इख़लास' शब्द नहीं आया। इसको यह नाम सिके अर्थ की दृष्टि से दिया गया है।

अवतरणकाल

इसके मक्की और मदनी होने में मतभेद है और यह मतभेद उन उल्लेखों के आधार पर है जो इसके अवतरण के कारण के विषय में उद्धृत हुए हैं। उदाहरणार्थ हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि क़ुरैश के लोगों ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से कहा कि अपने प्रभु की वंशावली हमें बताइए। इसपर यह सूरा अवतरित हुई, (हदीस : तबरानी)। (इसी अर्थ के उल्लेख हज़रत उबई बिन क़अब से मुस्नद अहमद और तिरमिज़ी आदि में, और हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह से तबरानी और बैहक़ी आदि हदीस के संग्रहों में विद्यमान हैं। तत्पश्चात् क़ुरैश ही की तरह यहूदियों और ईसाइयों ने भी नबी (सल्ल॰) से ऐसे प्रश्न किए थे।) इक्रमा ने इब्ने अब्बास (रज़ि॰) से यह उद्धृत किया है कि यहूदियों का एक गिरोह अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुआ और उन्होंने कहा, "ऐ मुहम्मद हमें बताइए कि आपका वह रब कैसा है जिसने आपको भेजा है?" (इब्ने अबी हातिम, इब्ने अदी, बैहक़ी, फ़िल असमा-ए-वस्सिफ़ात)। इसपर अल्लाह ने यह सूरा अवतरित की।

इब्ने अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नजरान के ईसाइयों का एक प्रतिनिधि-मंडल सात पादरियों के साथ नबी (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुआ और उसने नबी (सल्ल॰) से कहा, "हमें बताइए कि आपका रब कैसा है? किस चीज़ से बना है?" आपने कहा, "मेरा रब किसी चीज़ से नहीं बना है। वह समस्त चीज़ों से अलग है।" इसपर अल्लाह ने यह सूरा अवतरित की। इन उल्लेखों से मालूम होता है कि विभिन्न अवसरों पर विभिन्न लोगों ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से उस पूज्य के स्वरूप और गुण के विषय में पूछताछ की थी जिसकी बन्दगी और उपासना की तरफ़ आप लोगों को बुला रहे थे, और प्रत्येक अवसर पर आपने अलह के आदेश से उनको प्रत्युत्तर में यही सूरा सुनाई थी। सबसे पहले यह प्रश्न मक्का में क़ुरैश के बहुदेववादियों ने आपसे किया

और इसके प्रत्युत्तर में यह सूरा अवतरित हुई। तदन्तर मदीना तैयबा में कभी यहूदियों ने, कभी ईसाइयों ने और कभी अरब के दूसरे लोगों ने नबी (सल्ल॰) से इसी प्रकार के प्रश्न किए और हर बार अल्लाह की ओर से संकेत हुआ कि प्रत्युत्तर में यही सूरा आप उनको सुना दें। यह सूरा वास्तव में मक्की है, बल्कि इसकी विषय-वस्तू पर विचार करने से प्रतीत होता है कि यह मक्का के आरम्भिक काल में अवतरित हुई है जब अल्लाह की सत्ता एवं गुणों के विवरण की विस्तृत आयतें अभी अवतरित नहीं हुई थीं।

विषय और वार्ता

अवतरण की पृष्ठभूमि के विषय में जो उल्लेख ऊपर दिए गए हैं उनपर एक दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) एकेश्वरवाद का आमंत्रण लेकर उठे थे तो उस समय संसार की धार्मिक धारणाएँ क्या थीं। मूर्ति पूजनेवाले बहुदेववादी उन कथित उपास्यों को पूज रहे थे जो लकड़ी, पत्थर, सोने, चाँदी आदि विभिन्न वस्तुओं के बने हुए थे; रूप-रेखा और शरीर रखते थे। देवियों और देवताओं की विधिवत नस्ल चलती थी। कोई देवी पति के बिना न थी और कोई देवता बिना पत्नी के न था। बहुदेववादियों की क बड़ी संख्या इस बात को मानती थी कि ईश्वर मानव-रूप में प्रकट होता है और कुछ लोग उसके अवतार होते हैं। ईसाई यद्यपि एक ईश्वर को मानने के दावेदार थे, किन्तु उनका ईश्वर भी कम-से-कम एक पुत्र तो रखता ही था और पिता-पुत्र के साथ प्रभुत्व में 'रूहुल क़ुदुस' (पवित्र आत्मा) को भी भागीदार होने का श्रेय प्राप्त था। यही तक कि ईश्वर की माता भी होती थी और उसकी सास भी। यहूदी भी एक ईश्वर को मानने का दावा करते थे, किन्तु उनका ईश्वर भी भौतिकता, शारीरिकता और दूसरे मानवीय गुणों सेमुक्त न था। वह टहलता था, मानव-रूप में प्रकट होता था और अपने किसी बन्दे से कुश्ती भी लड़ लेता था, और एक बेटे (उज़ैर) का पिता भी था। इन धार्मिक गिरोहों के अतिरिक्त मजूसी अग्निपूजक थे और साबिई नक्षत्रपूजक। इस परिस्थिति में जब एक अल्लाह (जिसका कोई भागीदार नहीं), को मानने के लिए लोगों को आमंत्रित किया गया, तो उनके मन में इस प्रकार के प्रश्न पैदा होना अवश्यम्भावी था कि वह प्रभु है किस प्रकार का जिसे समस्त प्रभुओ और उपास्यों को त्यागकर अकेले एक ही प्रभु और उपास्य को स्वीकार करने के लिए आमंत्रित किया जा रहा है।

उत्तमता और महत्त्व

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की दृष्टि में इस सूरा का बड़ा महत्त्व था। आप विभिन्न तरीक़ों से मुसलमानों को इसका महत्त्व महसूस कराते थे, ताकि वे अधिक से अधिक

इसको पढ़े और जनसामान्य में इसे फैलाएँ, क्योंकि यह इस्लाम की सर्वप्रथम मौलिक धारणा (एकेश्वरवाद) को चार ऐसे संक्षिप्त वाक्यों में व्यक्त कर देती है जो तुरन्त मानव के मन में बैठ जाते हैं और सरलतापूर्वक ज़बानों पर चढ़ जाते हैं। हदीसों में यह उल्लेख बहुत अधिक हुए हैं कि नबी (सल्ल॰) ने विभिन्न अवसरों पर विभिन्न तरीक़ों से लोगों को बताया कि यह सूरा एक तिहाई क़ुरआन के बराबर है, (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, नसई, तिरमिज़ी)। टीकाकारों ने नबी (सल्ल॰) के इस कथन के बहुत-से कारण बताएँ हैं, किन्तु हमारी दृष्टि में सीधी और साफ़ बात यह है कि क़ुरआन मजीद जिस धर्म को प्रस्तुत करता है वह तीन धारणाओं पर आधारित है : एक तौहीद (एकेश्वरवाद), दूसरी रिसालत (पैग़म्बरी) और तीसरी आख़िरत (परलोकवाद)। यह सूरा चूँकि विशुद्ध एकेश्वरवाद का वर्णन करती है, इसलिए अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने इसको एक तिहाई क़ुरआन के बराबर ठहरा दिया।



112. सूरा अल-इख़लास

(मक्का में उतरी–आयतें 4)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) कहो,[1] वह अल्लाह है,[2] यकता।[3] (2) अल्लाह सबसे निरपेक्ष है और सब उसके मुहताज हैं। (3) न उसकी कोई संतान है और न वह किसी की संतान। (4) और कोई उसका समकक्ष नहीं है।



1. अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से काफ़िर और मुशरिक (बहुदेववादी) पूछते थे कि आपका रब जिसे आप सब उपास्यों को छोड़कर, एक ही उपास्य मनवाना चाहते हैं, कैसा है? उसकी वंशावली क्या है? किस चीज़ से बना हुआ है? किससे उसने ब्रह्माण्ड की यह मीरास पाई है और कौन उसका उत्तराधिकारी होगा? इन सवालों के जवाब में यह सूरा अवतरित हुई।
2. अर्थात् जिस सत्ता को तुम लोग अल्लाह के नाम से जानते हो और जिसे अपना और सारी सृष्टि का स्रष्टा और रोज़ी देनेवाला मानते हो वही मेरा रब है। अरब के बहुदेववादियों की धारणा अल्लाह के बारे में क्या थी? इसे ख़ुद क़ुरआन में जगह-जगह बया किया गया है। उदाहरणार्थ देखें सूरा 10 (यूनुस) आयतें 22, 31, 33। सूरा 17 (बनी इसराईल) आयत 67। सूरा 23 (अल-मोमिनून) आयतें 84 से 89 तक। सूरा 29 (अल-अनकबूत) आयतें 61 से 63 तक। सूरा 43 (अज़-ज़ुख़रुफ़) आयत 87।
3. मूल में 'वाहिद' के स्थान पर 'अहद' का शब्द इस्तेमाल किया गया है। यद्यपि अर्थ दोनों का 'एक' है, मगर अरबी भाषा में 'वाहिद' का शब्द ऐसी समस्त चीज़ों के लिए इस्तेमाल होता है जो अपने अन्दर बहुत-सी अनेकताएँ रखती हों। उदाहरणार्थ एक आदमी, एक क़ौम, एक देश, एक संसार। इन सबको वाहिद कहते हैं। हालाँकि इनमें अनेकताएँ अगणित हैं। लेकिन 'अहद' शब्द केवल उसी के लिए इस्तेमाल होता है जो प्रत्येक दृष्टि से एक हो, जिसमें किसी प्रकार की अनेकता न पाई जाती हो। इसी लिए अरबी भाषा में यह शब्द केवल अल्लाह के लिए ख़ास है।

113. अल-फ़लक़ / 114. अन-नास] मुअव्विज़तैन

नाम

यद्यपि क़ुरआन मजीद की ये दोनों अन्तिम सूरतें अपनी जगह पर अलग-अलग हैं और मूल ग्रंथ में अलग नामों ही से लिखी हुई हैं, किन्तु इनके मध्य परस्पर इतना गहरा सम्बन्ध है और इनकी विषय-वस्तुएँ एक-दूसरे से इतना निकटतम साम्य रखती है कि इनका क संयुक्त नाम 'मुअव्विज़तैन' (पनाह माँगनेवाली दो सूरतें) रखा गया है। इमाम बैहक़ी ने 'दलायले-नुबूवत' में लिखा है कि ये अवतरित भी एक साथ ही हुई हैं। इसी कारण इसका संयुक्त नाम 'मुअव्विज़तैन' है। हमद यहाँ दोनों पर प्राक्कथन लिख रहे हैं, क्योंकि इनसे सम्बन्धित समस्याएँ और वार्ताएँ बिलकुल समरूप हैं।

अवतरणकाल

हज़रत हसन बसरी, इक्रमा, अता और जाबिर बिन ज़ैद (रह॰) कहते हैं कि ये दोनों सूरतें मक्की हैं। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर (रज़ि॰) और (क़तादा (रह॰) कहते हैं कि ये मदन हैं। लेकिन) इसकी विषय-वस्तु साफ़ बता रही है कि ये प्रारम्भ में मक्का में उस समय अवतरित हुई होंगी जब वहाँ नबी (सल्ल॰) का विरोध उग्र रूप धारण कर चुका था। तदन्तर जब मदीना तैयबा के कपटाचारी, यहूदी और बहुदेववादियों के विरोध के तूफ़ान उठे तो नबी (सल्ल॰) को फिर इन्हीं दोनों सूरतों को पढ़ने के लिए प्रेरित किया गया।

विषय और वार्ता

मक्का मुअज़्ज़मा में दोनों सूरतें जिन परिस्थितियों में अवतरित हुई थीं वे ये थीं कि इस्लाम का आह्वान प्रारम्भ होते ही ऐसा प्रतीत होने लगा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने मानो भिड़ों के छत्ते में हाथ डाल दिया है। जैसे-जैसे आपके आह्वान का विस्तार होता गया, क़ुरैश के काफ़िरों का विरोध भी उग्र रूप धारण करता चला गया। जब तक उन्हें यह आशा रही कि शायद वे किसी तरह सौदेबाज़ी करके या बहला-फुसलाकर आपको इस काम से रोक सकेंगे, ुस समय तक तो फिर भी वैर-भाव की तीव्रता में कुछ कमी रही। किन्तु जब नबी (सल्ल॰) ने उनको इस ओर से बिलकुल निराश कर दिया तो काफ़िरों की दुश्मनी अपने चरम पर पहुँच गई। विशेष रूप से जिन घरानों के व्यक्तियों (पुरुषों या स्त्रियों, लड़कों या लड़कियों) ने इस्लाम क़बूल कर लिया

था, उनके दिलों में तो नबी (सल्ल॰) के विरूद्ध निरन्तर क्रोध की भट्टियाँ सुलगती रहती थीं। घर-घर आपको कोसा जा रहा था। गुप्त परामर्श किए जा रहे थे, ताकि आपकी या तो मृत्यु हो जाए या आप अत्यन्त रोगग्रस्त या विक्षिप्त हो जाएँ। जिन्न और मनुष्य दोनों प्रकार के शैतान हर तरफ़ फैला गए थे, ताकि जनसामान्य के विरूद्ध और आपके लाए हुए धर्म और क़ुरआन के विरूद्ध कोई-न-कोई भ्रम और संशय डाल दें जिससे लोग बदगुमान होकर आपसे दूर भागने लगें। बहुत-से लोगों के दिलों में ईर्ष्या की अग्नि धधक रही थी, क्योंकि वे अपने सिवा या अपने क़बीले के किसी आदमी के सिवा दूसरे किसी व्यक्ति का चिराग़ जलते न देख सकते थे। इन परिस्थितियों में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को (अल्लाह की पनाह माँगने का आदेश दिया गया है, जो इन दोनों सूरतों में उल्लिखित है।) यह उसी तरह की बात है जैसे हज़रत मूसा (अलै॰) ने उस समय कही थी जब फ़िरऔन ने भरे दरबार में उनके क़त्ल का इरादा व्यक्त किया कि "मैंने तो प्रत्येक उस अहंकारी के मुक़ाबले में, जो हिसाब के दिन पर ईमान नहीं रखता, अपने प्रभु और तुम्हारे प्रभु की शरण ले ली है," (क़ुरआन,40:27) और "मैं अपने प्रभु और तुम्हारे प्रभु की शरण ले चुका हूँ, इससे कि तुम मुझपर आक्रमण करो," (क़ुरआन,44:20)। दोनों अवसरों पर अल्लाह के इन महानुभाव पैग़म्बरों का मुक़ाबला अत्यन्त साधनहीनता की दशा में बड़े उपकरण, सामग्री और संसाधन और बल-वैभव रखनेवालों से था। दोनों अवसरों पर वे शक्ति और शत्रुओं के आगे अपने सत्य के आह्वान पर डट गए। उन्होंने दुश्मनों की धमकियों और भयंकर उपायों और वैमनस्यपूर्ण चालों की यह कहकर उपेक्षा कर दी कि तुम्हारे मुक़ाबले में हमने जगत् के पालनकर्ता प्रभु की शरण ले ली है।

सूरा फ़ातिहा और इन सूरतों (मुअव्विज़तैन) के मध्य एकात्मकता

आख़िरी चीज़ जो पनाह माँगनेवाली इन दो सूरतों के विषय में ध्यान देने योग्य है, वह क़ुरआन के आरम्भ और अन्त के मध्य पाया जानेवाला पारम्परिक साम्य और एकात्मकता है। क़ुरआन का आरम्भ सूरा फ़ातिहा से होता है और अन्त पनाह माँगनेवाली दो सूरतों पर। अब तनिक दोनों पर एक दृष्टि डालिए। आरम्भ में अल्लाह की जो, अखिल जगत् का प्रभु है और अत्यन्त करुणामय, दयावान और बदला दिए जाने के दिन का मालिक है, प्रशंसा एवं स्तुति करके बन्दा कहता है कि आप ही की मैं बन्दगी करता हूँ और आप ही से सहायता चाहता हूँ और सबसे बड़ी सहायता जिसकी मुझे आवश्यकता है, वह यह है कि मुझे सीधा मार्ग बताइए। प्रत्युत्तर में अल्लाह की ओर से सीधा मार्ग दिखाने के लिए उसे पूरा क़ुरआन दिया जाता है और उसको समाप्त इस

बात पर किया जाता है कि बन्दा सर्वोच्च अल्लाह से, जो प्रातः काल का प्रभु, लोगों का पालनकर्ता प्रभु और लोगों का सम्राट और लोगों का पूज्य है, निवेदन करता है कि मैं प्रत्येक सृष्ट प्राणी की हर आपदा और बुराई से सुरक्षित रहने के लिए आप ही की शरण लेता हूँ और विशेष रूप से शैतानों के वसवसों (बुरे विचारों) से चाहे वे जिन्न हो या मनुष्य, आपकी पनाह माँगता हूँ क्योंकि सीधे मार्ग के अनुगमन में वही सबसे अधिक बाधक होते हैं।ुस शुभारम्भ और इस समाप्ति के मध्य जो अनुकूलता एवं एकात्मकता पाई जाती है, वह किसी दृष्टिवान से छुपी नहीं रह सकती।




113. सूरा अल-फ़लक़

(मक्का में उतरी–आयतें 5)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) कहो, मैं पनाह माँगता हूँ, सुबह के रब की,[1] (2) हर उस चीज़ की बुराई से जिसे उसने पैदा किया है, (3) और रात के अंधकार की बुराई से जबकि वह छा जाए।[2] (4) और गाँठों में फूँकनेवालों (या वालियों) को बुराई से[3] (5) और ईर्ष्या करनेवालों की बुराई से जबकि वह ईर्ष्या करे।[4]



1. अर्थात् उस रब की जो रात के अँधकार को छाँटकर प्रकाशमान सुबह निकालता है।
2. क्योंकि ज़्यादातर अपराध और अत्याचार रात ही को होते हैं और कष्टदायक जानवर भी ज़्यादातर रात ही को निकलते हैं।
3. मुराद है जादूगर मर्द और औरतें।
4. अर्थात् जब वह ईर्ष्या के कारण कोई नुक़सान पहुँचाने की कोशिस करे।

114. सूरा अन-नास

(मक्का में उतरी–आयतें 6)

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।

(1) कहो, मैं पनाह माँगता हूँ, इनसानों के रब, (2) इनसानों के बादशाह, (3) इनसानों के वास्तविक पूज्य की (4) उस वसवसे (भ्रम) डालनेवाले की बुराई से जो बार-बार पलटकर आता है,[1] (5) जो लोगों के दिलों में वसवसे डालता है, (6) चाहे वह जिन्नों में से हो या इनसानों में से।[2]



1. अर्थात् एक बार वसवसा डालकर जब बहकाने में सफल नहीं होता तो हट जाता है और फिर आकर वसवसा डालने लगता है, और यह कोशिश निरन्तर जारी रखता है।
2. अर्थात् यह वसवसे डालनेवाला चाहे इनसानों में से हो या जिन्नों (शैतानों) में से, दोनों की बुराई से बचने के लिए मैं पनाह माँगता हूँ।